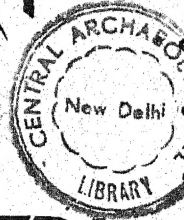


जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराज-  
विरचितयाऽऽचारचिन्तामणि-व्याख्यया समलङ्कृतं  
हिन्दीगुर्जरभाषाऽनुवादसहितम्-

# आचाराङ्गसूत्रम् ।

( प्रथमो भागः अर्धः १ )

[ प्रथमः श्रुतस्कन्धः ]



## ACHARANGA SUTRA

43768 PART 1  
CHAPTER 1

नियोजकः

संस्कृत-प्राकृतज्ञ-जैनागमनिष्णात-प्रियव्याख्यानि-  
पण्डित-मुनिश्रीकन्हैयालालजी-महाराजः

JPr 2

卐

Acā / G. K.

प्रकाशकः

अ० भा० श्वे० स्था० जैनशास्त्रोद्धारसमितिप्रमुखः

श्रेष्ठि-श्री-शान्तिलाल-मङ्गलदासभाई-महोदयः

मु० राजकोट

द्वितीय आवृत्ति  
प्रति १०००

वीर संवत्  
२४८४

विक्रम संवत्  
२०१४

ईस्वीसन  
१९५८

मूल्यम्-रु० १२-०-०



મળવાનું ઠેકાણું :  
શ્રી અ. ભા. શ્રે. સ્થાનકવાસી  
જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
કે. ગરેડિયા ફ્લારોડ, ગ્રીન લોન્  
પાસે, રાજકોટ. (સૌરાષ્ટ્ર)

★  
ખીજી આવૃત્તિ : પ્રત ૧૦૦૦  
વીર સંવત : ૨૪૮૪  
વિક્રમ સંવત : ૨૦૧૪  
ઈ સ્વી સ ન : ૧૯૫૮

★

: સુદ્રક :  
મણિલાલ જગનલાલ શાહ  
ધી નવત્રલાત પ્રિન્ટીંગ પ્રેસ  
ધીકાંટા રોડ : : અમદાવાદ.

રૂા. ૧૦,૦૦૦) આપનાર આદિ મુરબ્બી સમિતિના પ્રમુખ;  
દાનવીર શેઠશ્રી,



શેઠ શાંતિલાલ મંગળદાસભાઈ  
અમદાવાદ.



---

---

શ્રી-વર્ધમાન-શ્રમણ-સંઘના આચાર્યશ્રી

પૂજ્ય આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ

આપેલ

## સમ્મતિપત્ર

\*

ઉપરાંત

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ-રચિત

બીજા સૂત્રોની ટીકા માટે તેઓશ્રીના મંતવ્યો

\*

તેમજ

અન્ય મહાત્માઓ, મહાસતીજીઓ, અઘતન-પદ્ધતિવાળા કૌલેજના પ્રોફેસરો

તેમજ

શાસ્ત્રજ્ઞ આવકોના અભિપ્રાયો

---

---



४

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-प्रधानाचार्य-पण्डित-मुनि-  
श्रीमदात्मरामजीमहाराजानाम् आचाराङ्गसूत्रस्याचार-  
चिन्तामणिटीकायां  
सम्मतिपत्रम्

श्रीमल्लब्धसपर्य्याचार्यवर्यघासीलालजित्कृता श्रीमदाचाराङ्गसूत्र-  
प्रथमाध्ययनस्याचारचिन्तामणिवृत्तिः साकल्येनोपयोगितापूर्वकं कर्णकुह-  
रीकृता, वृत्तिरियं न्यायसिद्धान्तोपेता व्याकरणनियमोपनिबद्धा, तथा च  
प्रासङ्गिकरीत्या अन्यसिद्धान्तसङ्ग्रहोऽप्यस्यां याथातथ्येनाभासत एव,  
अपि च निखिला अपि विषयाः सम्यग् व्यक्तीकृता लेखकेन, विशेषण  
प्रौढविषयाणां स्फुटतया गीर्वाणवाण्यां प्रतिपादनम् अधिकतरं मनो-  
रञ्जकम् । अत आचार्यमहोदयो धन्यवादमर्हतीति ।

आशासे जिज्ञासुमहोदया अस्याः सम्यग् अध्ययनेन जैनागम-  
सिद्धान्तपीयूषं पायं पायं मनोमोदं विधास्यन्तीति । अस्याः परिशीलनेन  
चतुर्णामनुयोगानां परिचयं प्राप्तुवन्तु सज्जनाः । अथ आचार्यमहोदया  
एवमेवान्येषामपि जैनागमानां विशदव्याख्यानेन श्वेताम्बराणां स्थानक-  
वासिनां महोपकृतिं विधाय यशस्विनो भविष्यन्तीति ।

पञ्चनदप्रान्तान्तर्वर्ति-लुधियानामण्डल-स्थानकवास्तव्यो जैनमुनि-  
रूपाध्याय आत्मारामः ।

विक्रमाब्दः २००२, मार्गशीर्षशुक्ला प्रतिपत्, शुभमस्तु ॥

જૈનાગમવારિધિ-જૈનધર્મદિવાકર પ્રધાનાચાર્ય પશ્ચિત્-  
મુનિશ્રી આત્મારામજી મહારાજ ( પંજાબ ) ના એ  
આચારાંગસૂત્રની આચારચિંતામણિ ટીકા પર આપેલ

## સંમતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.

મેં પૂજ્ય આચાર્યવર્ય ઘાસીલાલજી (મહારાજ) ની બનાવેલ શ્રીમદ્ આચારાંગ સૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનની આચારચિંતામણિ ટીકા સમ્પૂર્ણ ઉપયોગ-પૂર્વક સાંભળી.

આ ટીકા ન્યાય સિદ્ધાંતથી યુક્ત, વ્યાકરણના નિયમથી નિબદ્ધ છે. તથા એમાં પ્રસંગે પ્રસંગે ક્રમથી અન્ય સિદ્ધાંતોનો સંગ્રહ પણ ઉચિતરૂપથી જણાઈ આવે છે.

ટીકાકારે અન્ય તમામ વિષયો સમ્યક્ પ્રકારથી સ્પષ્ટ કરેલ છે. તેમજ પ્રૌઢ વિષયોનો વિશેષરૂપથી સંસ્કૃત-ભાષામાં સ્પષ્ટતાપૂર્વક પ્રતિપાદન અતિ મનોરંજક છે. એ માટે આચાર્ય મહોદય ખરેખર ધન્યવાદને પાત્ર છે.

હું આશા રાખું છું કે જિજ્ઞાસુ મહોદયો એના સારી રીતે પઠન પાઠન દ્વારા જૈનાગમ સિદ્ધાંતરૂપ અમૃત પીય પીયને મનને આનંદિત કરે. અને તેના મનનથી દક્ષજનો ચાર અનુયોગોનું સ્વરૂપજ્ઞાન મેળવે.

તથા આચાર્યવર્ય આવી જ રીતે બીજા પણ જૈનાગમોના સ્પષ્ટતાપૂર્વક વિવેચન દ્વારા શ્વેતાંબર સ્થાનકવાસી સમાજ પર મહાન ઉપકાર કરીને યશસ્વી બને.

વિ. સં. ૨૦૦૨  
માગસર સુદી ૧

જૈનમુનિ-ઉપાધ્યાય આત્મારામ  
લુધિયાના ( પંજાબ )  
શુભમસ્તુ

जैनागमवेत्ता जैनधर्मदिवाकर उपाध्याय श्री १००८ श्री आत्मारामी  
महाराज तथा न्यायव्याकरणके ज्ञाता परम पण्डित मुनिश्री १००७  
श्री हेमचन्द्रजी महाराज, इन दोनों महात्माओंका दिया हुआ  
श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रका प्रमाण पत्र निम्न प्रकार है—

सम्मइवत्तं

सिरि-वीरनिव्वाण-संवच्छर २४५८ आसोई  
( पुण्णमासी ) १५ सुक्कवारो लुहियाणाओ ।

मए मुणिहेमचंदेण य पंडियरयणमुणिसिरि-घासीलालविणिम्मिया सिरिउवा-  
सगसुत्तस्स अगारधम्मसंजीवणीनामिया वित्ती पंडियमूलचन्दवासाओ अज्जोवंतं  
सुया, समीईणं, इयं वित्ती जहाणामं तहा गुणेवि धारेइ, सच्चं अगाराणं तु इमा  
जीवण (संजमजीवण) दाई एव अत्थि । वित्तिकत्तुणा मूलसुत्तस्स भावो उज्जु-  
सेलीओ फुडोकोओ, अहय उवासयस्स सामणविसेसधम्मो, णयसियवायवाओ,  
कम्मपुरिसद्ववाओ, समणोवासयस्स धम्मदहया य, इच्चाइविसया अस्सि फुडरीइओ  
वणिण्या, जेण कत्तुणो पडिहाए सुट्ठुप्पयारेण परिचओ होइ, तह इइहासदिट्ठिओवि  
सिरिसमणस्स भगवओ महावीरस्स समए वट्टमाणभरहवासस्स य कत्तुणा विसय-  
प्पयारेण चित्तं चित्तियं, पुणो सक्कयपाढीणं, वट्टमाणकाले हिन्दीणामियाए भासाए  
भासीणं य परमोवयारो कडो, इमेण कत्तुणो अरिहत्ता दीसइ, कत्तुणो एयं कज्जं  
परमप्पसंसणिज्जमत्थि । पत्तेयजणस्स मज्झत्थभावाओ अस्स सुत्तस्स अवलोयणमईव  
लाहप्पयं, अवि उ सावयस्स तु ( उ ) इमं सत्थं सव्वस्समेव अत्थि, अओ कत्तुणो  
अणेगकोडिसो धन्नवाओ अत्थि, जेहिं अव्वंतपरिस्समेण जइणजणतोवरि असीमो-  
वयारो कडो, अह य सावयस्स वारस नियमा उ पत्तेयजणस्स पढणिज्जा अत्थि,  
जेसिं पहावओ वा गहणाओ आया निव्वाणाहिगारी भवइ, तहा भवियव्वयावाओ  
पुरिसक्कारपरकमवाओ य अवस्समेव दंसणिज्जो, किंवहुणा इमोए वित्तीए पत्तेय-  
विसयस्स फुडसदेहिं वण्णं कयं, जइ अनोवि एवं अम्हाणं पसुत्तप्पाए समाजे विज्जं  
भवेज्जा तया नाणस्स चरित्तस्स तहा संघस्स य खिप्पं उदयो भविस्सइ, एवं हं मन्ने॥

भवईओ-

उवज्झाय-जइणमुणि-आयाराम-पंचनईओ,



## सम्मतिपत्र

(भाषान्तर)

श्रीवीरनिर्वाण सं० २४५८ आसोज

शुक्ल १५ (पूर्णिमा) शुक्रवार लुधियाना

मैंने और पंडितमुनि हेमचन्दजीने पंडितरत्नमुनिश्री घासीलाल-  
जीकी रची हुई उपासकदशांग सूत्रकी गृहस्थधर्मसंजीवनी नामक टीका  
पंडित मूलचन्द्रजी व्याससे आद्योपान्त सुनी है। यह वृत्ति यथानाम  
तथागुणवाली-अच्छी बनी-है। सच यह गृहस्थोंके तो जीवनदात्री-  
संयमरूप जीवनको देनेवाली-ही है। टीकाकार ने मूलसूत्र के भावको  
सरल रीतिसे वर्णन किया है, तथा श्रावकका सामान्य धर्म क्या है ?  
और विशेष धर्म क्या है ? इसका खुलासा इस टीकामें अच्छे ढंगसे  
बतलाया है। स्याद्वादका स्वरूप, कर्म-पुरुषार्थ-वाद और श्रावकोंको  
धर्मके अन्दर दृढ़ता किस प्रकार रखना, इत्यादि विषयोंका निरूपण  
इसमें भलीभांति किया है। इससे टीकाकारकी प्रतिभा खूब झलकती  
है। ऐतिहासिक दृष्टिसे श्रमण भगवान् महावीरके समय जैनधर्म  
किस जाहोजहाली पर था और वर्तमान समय जैनधर्म किस  
स्थितिमें पहुंचा इस विषयका तो ठीक चित्र ही चित्रित कर दिया  
है। फिर संस्कृत जाननेवालोंको तथा हिन्दीभाषाके जाननेवालोंको  
भी पूरा लाभ होगा, क्योंकि टीका संस्कृत है, उसकी सरल हिन्दी  
कर दी गई है। इसके पढ़नेसे कर्ताकी योग्यताका पता लगता है कि  
वृत्तिकारने समझानेका कैसा अच्छा प्रयत्न किया है। टीकाकारका  
यह कार्य परम प्रशंसनीय है। इस सूत्रको मध्यस्थ भावसे पढ़ने  
वालोंको परम लाभकी प्राप्ति होगी। क्या कहें ! श्रावकों (गृहस्थों) का  
तो यह सूत्र सर्वस्व ही है, अतः टीकाकारको कोटिशः धन्यवाद दिया  
जाता है, जिन्होंने अत्यन्त परिश्रमसे जैनजनताके ऊपर असीम  
उपकार किया है। इसमें श्रावक के बारह नियम प्रत्येक पुरुषके पढ़ने  
योग्य हैं, जिनके प्रभावसे अथवा यथायोग्य ग्रहण करनेसे आत्मा  
मोक्षका अधिकारी होता है, तथा भवितव्यतावाद और पुरुषकार-



पराक्रमवाद हरएकको अवश्य देखना चाहिये। कहां तक कहें, इस टीकामें प्रत्येक विषय सम्यक् प्रकारसे बताये गये हैं। हमारी सुसंप्राय (सोई हुई सी) समाजमें अगर आप जैसे योग्य विद्वान फिर भी कोई होंगे तो ज्ञान, चरित्र तथा श्रीसंघका शीघ्र उदय होगा, ऐसा मैं मानता हूँ।

आपका

उपाध्याय जैनमुनि आत्माराम पंजाबी.



इसी प्रकार लाहोरमें विराजते हुए पण्डितवर्य विद्वान् मुनिश्री १००८  
श्री भागचन्दजी महाराज तथा पं० मुनिश्री त्रिलोकचन्दजी  
महाराजके दिये हुए, श्री उपासकदशाङ्ग सूत्रके  
प्रमाणपत्रका हिन्दी सारांश निम्न प्रकार है—

श्री श्री स्वामी घासीलालजी महाराज-कृत श्री उपासकदशाङ्ग  
सूत्रकी संस्कृत टीका व भाषाका अवलोकन किया, यह टीका  
अतिरमणीय व मनोरञ्जक है, इसे आपने बड़े परिश्रम व पुरुषार्थसे  
तैयार किया है, सो आप धन्यवादके पात्र हैं। आप जैसे व्यक्ति-  
योंकी समाजमें पूर्ण आवश्यकता है। आपकी इस लेखनीसे समाजके  
विद्वान् साधुवर्ग पढ़ कर पूर्ण लाभ उठावेंगे, टीकाके पढ़नेसे हमको  
अत्यानन्द हुआ, और मनमें ऐसे विचार उत्पन्न हुए कि हमारी  
समाजमें भी ऐसे २ सुयोग्य रत्न उत्पन्न होने लगे—यह एक हमारे  
लिये बड़े गौरवकी बात है।

वि. सं. १९८९ मा. आश्विन  
कृष्णा १३ वार भौम लाहोर.



રૂ. ૬૦૦૦) આપનાર આપ સુરજીશ્રી



શેઠ હરજીવદ કાળીદાસ વારીયા  
ભાણુવડ.



श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्गसूत्र की 'अनगारधर्माऽमृतवर्षिणी' टीका पर  
जैनदिवाकर साहित्यरत्न जैनागमरत्नाकर परमपूज्य श्रद्धेय  
जैनाचार्य श्री आत्मारामजी महाराजका  
सम्मतिपत्र

लुधियाना, ता. ४-८-५१

मैंने आचार्यश्री घासीलालजी म. द्वारा निर्मित 'अनगार-धर्माऽमृत-वर्षिणी' टीका वाले श्री ज्ञाताधर्मकथाङ्ग सूत्रका मुनिश्री रत्नचन्द्रजीसे आद्योपान्त श्रवण किया।

यह निःसन्देह कहना पड़ता है कि यह टीका आचार्यश्री घासीलालजी म० ने बड़े परिश्रम से लिखी है। इसमें प्रत्येक शब्दका प्रमाणिक अर्थ और कठिन स्थलों पर सार-पूर्ण विवेचन आदि कई एक विशेषतायें हैं। मूल स्थलों को सरल बनानेमें काफी प्रयत्न किया गया है, इससे साधारण तथा असाधारण सभी संस्कृतज्ञ पाठकोंको लाभ होगा ऐसा मेरा विचार है।

मैं स्वाध्यायप्रेमी सज्जनों से यह आशा करूंगा कि वे वृत्तिकारके परिश्रम को सफल बना कर शास्त्रमें दी गई अनमोल शिक्षाओं से अपने जीवनको शिक्षित करते हुए परमसाध्य मोक्षको प्राप्त करेंगे।



श्रीमान्जी जयवीर

आपकी सेवामें पोष्टद्वारा पुस्तक भेज रहे हैं और इस पर आचार्यश्रीजी की जो सम्मति है वह इस पत्रके साथ भेज रहे हैं, पहुंचने पर समाचार दें।

श्री आचार्यश्री आत्मारामजी म० ठाने ६ सुखशान्तिसे विराजते हैं। पूज्य श्री घासीलालजी म० सा० ठाने ४ को हमारी ओरसे वन्दना अर्जकर सुखशाता पूछें।

पूज्यश्री घासीलालजी म० जीका लिखा हुआ (विपाकसूत्र) महाराजश्रीजी देखना चाहते हैं। इसलिये १ कापी आप भेजनेकी कृपा करें; फिर आपको वापिस भेज देंगे। आपके पास नहीं हो तो जहांसे मिले वहांसे १ कापी जरूर भिजवाने का कष्ट करें, उत्तर जल्द देनेकी कृपा करें। योग्य सेवा लिखते रहें।

लुधियाना ता. ४-८-५१

निवेदक

प्यारेलाल जैन



जैनागमचारिधि-जैनधर्मदिवाकर-उपाध्याय-पण्डित-मुनि  
श्रीआत्मारामजी महाराज ( पंजाब ) का आचाराङ्गसूत्र की  
आचारचिन्तामणि टीका पर

### सम्मतिपत्र

मैंने पूज्य आचार्यवर्य श्री घासीलालजी (महाराज)की बनाई  
हुई श्रीमद् आचाराङ्गसूत्रके प्रथम अध्ययन की आचारचिन्तामणि टीका  
सम्पूर्ण उपयोगपूर्वक सुनी ।

यह टीका, न्यायसिद्धान्त से युक्त, व्याकरण के नियम से निबद्ध  
है । तथा इसमें प्रसङ्ग २ पर क्रमसे अन्य सिद्धान्त का संग्रह भी उचित  
रूप से मालूम होता है ।

टीकाकारने अन्य सभी विषय सम्यक् प्रकार से स्पष्ट किये हैं,  
तथा प्रौढ विषयोंका विशेषरूप से संस्कृत भाषा में स्पष्टतापूर्वक  
प्रतिपादन अधिक मनोरंजक है, एतदर्थ आचार्य महोदय धन्यवादके  
पात्र हैं ।

मैं आशा करता हूँ कि जिज्ञासु महोदय इसका भलीभाँति  
पठन-द्वारा जैनागमसिद्धान्तरूप अमृत पी-पी कर मन को  
हर्षित करेंगे, और इसके मनन से, दक्ष जन चार अनुयोगों का  
स्वरूपज्ञान पावेंगे । तथा आचार्यवर्य इसी प्रकार दूसरे भी जैनागमोंके  
विशद विवेचन द्वारा श्वेताम्बर-स्थानकवासी समाज पर महान उप-  
कार कर यशस्वी बनेंगे ।

वि. सं. २००२

मृगसर सुदि १

जैनमुनि-उपाध्याय आत्माराम

लुधियाना (पंजाब). शुभमस्तु ॥

\*

बीकानेरवासी समाजभूषण शास्त्रज्ञ मेरुदानजी शेठियाका अभिप्राय-

\*

आप जो शास्त्रका कार्य कर रहे हैं यह बड़ा उपकारका कार्य है ।  
इससे जैनजनताको काफी लाभ पहुंचेगा ।

( ता. २८-३-५६ के पत्रमेंसे )

॥ श्रीः ॥

जैनागमवारिधि-जैनधर्मदिवाकर-जैनाचार्य-पूज्यश्री आत्मारामजी-

महाराजानां पञ्चनद-(पंजाब) स्थानामनुत्तरोपपातिकसूत्राणा-

मर्थबोधिनीनामकटीकायामिदम्-

सम्मतपत्रम्

आचार्यवर्यैः श्री घासीलालमुनिभिः सङ्कलिता अनुत्तरोपपातिकसूत्राणामर्थ-  
बोधिनीनाम्नी संस्कृतवृत्तिरूपयोगपूर्वकं सकलाऽपि स्वशिष्यमुखेनाऽश्रावि मया, इयं  
हि वृत्तिर्मुनिवरस्य वैदुष्यं प्रकटयति । श्रीमद्भिर्मुनिभिः सूत्राणामर्थान् स्पष्टयितुं  
यः प्रयत्नो व्यधायि तदर्थमनेकशो धन्यवादानर्हन्ति ते । यथा चेयं वृत्तिः  
सरला सुबोधिनी च तथा सारवत्यपि । अस्याः स्वाध्यायेन निर्वाणपदमभीप्सु-  
भिर्निर्वाणपदमनुसरद्भिर्ज्ञान-दर्शन-चारित्र्येषु प्रयतमानैर्मुनिभिः श्रावकैश्च ज्ञान-  
दर्शन-चारित्र्याणि सम्यक् सम्प्राप्याऽन्येऽप्यात्मानस्तत्र प्रवर्तयिष्यन्ते ।

आशासे श्रीमदाशुक्विर्मुनिवरो गोर्वाणवाणीजुषां विदुषां मनस्तोषाय  
जैनागमसूत्राणां सारावबोधाय च अन्येषामपि जैनागमानामित्थं सरलाः  
सुस्पष्टाश्च वृत्तिर्विधाय तांस्तान् सूत्रग्रन्थान् देवगिरा सुस्पष्टयिष्यति ।

अन्ते च “मुनिवरस्य परिश्रमं सफलयितुं सरलां सुबोधिनीं चेमां  
सूत्रवृत्तिं स्वाध्यायेन सनाथयिष्यन्त्यवश्यं सुयोग्या हंसनिभाः पाठकाः”  
इत्याशास्ते—

विक्रमाब्द २००२ }  
श्रावणकृष्णा प्रतिपदा }  
लुधियाना }

उपाध्याय आत्मारामो जैनमुनिः

( श्री दशवैकालिकसूत्रका सम्मतिपत्र )

॥ श्री वीरगौतमाय नमः ॥

### सम्मतिपत्रम्

मए पंडितमुणि-हेमचंदेण य पंडिय-मूलबन्दवासवारा पत्ता पंडिय-रयण-मुणि-वासीलालेण विरइया सक्कय-हिन्दी-भाषाहिं जुत्ता सिरि-दसवेयालिय-नामसुत्तस्स आचारमणिमंजूसा वित्ती अवलो-इया, इमा मणोहरा अत्थि, एत्थ सद्धानं अइसयजुत्तो अत्थो वणिणओ, विउजणाणं पाययजणाण य परमोवयारिया इमा वित्ती दीसइ। आचारविसए वित्तीकत्तारेण अइसयपुब्बं उल्लेहो कडो, तहा अहिंसाए सरूवं जे जहा-तहा न जाणंति तेसिं इमाए वित्तीए परमलाहो भविस्सइ, कत्तुणा पत्तेयविसयाणं फुडरूवेण वणणं कडं, तहा मुणिणो अरहत्ता इमाए वित्तीए अवलोयणाओ अइसय-जुत्ता सिज्झइ। सक्कयछाया सुत्तपयाणं पयच्छेओ य सुबोहदायगो अत्थि, पत्तेयजिण्णासुणो इमा वित्ती दडुवा। अम्हाणं समाजे एरिसविज्ज-मुणिरयणाणं सवभावो समाजस्स अहोभगं अत्थि, किं उत्तविज्जमुणिरयणाणं कारणाओ, जो अम्हाणं समाजो सुत्तप्पाओ अम्हकेरं साहिच्चं च लुत्तप्पायं अत्थि, तेसिं पुणोवि उदओ भविस्सइ ? जस्स कारणाओ भविग्गप्पा मोक्खस्स जोगो भवित्ता पुणो निव्वाणं पाविहिइ। अओहं आचारमणिमंजूसाए कत्तुणो पुणो पुणो धन्नवायं देमि- ॥

वि. सं. १९९० फाल्गुन  
शुक्लत्रयोदशी मङ्गले  
(अलवरस्टेट)

इइ-

उवज्जाय-जइण-मुणी, आचारामो  
(पंचनईओ)

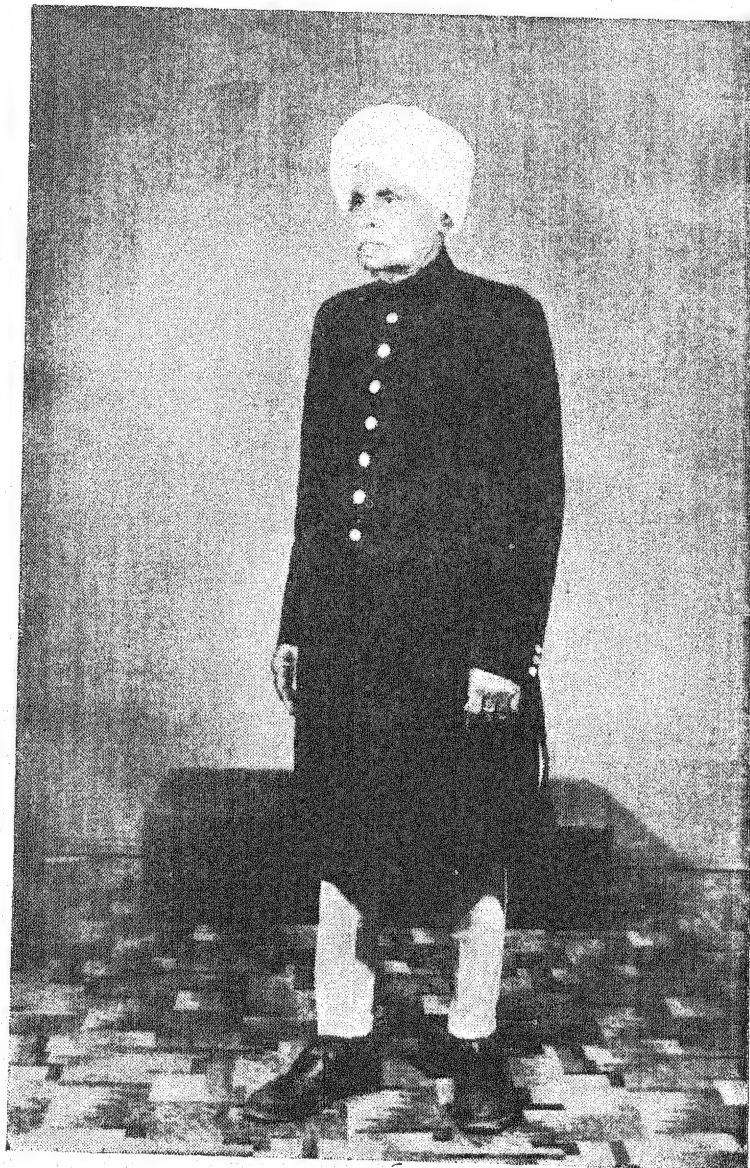
ऐसे ही :—

मध्यभारत सैलाना-निवासी श्रीमान् रतनलालजी डोसी  
श्रमणोपासक जैन लिखते हैं कि—

श्रीमान् की की हुई टीकावाला उपासकदशांग सेवक के दृष्टि-  
गत हुवा, सेवक अभी उसका मनन कर रहा है, यह ग्रन्थ सर्वाङ्ग-  
सुन्दर एवम् उच्च कोटि का उपकारक है।

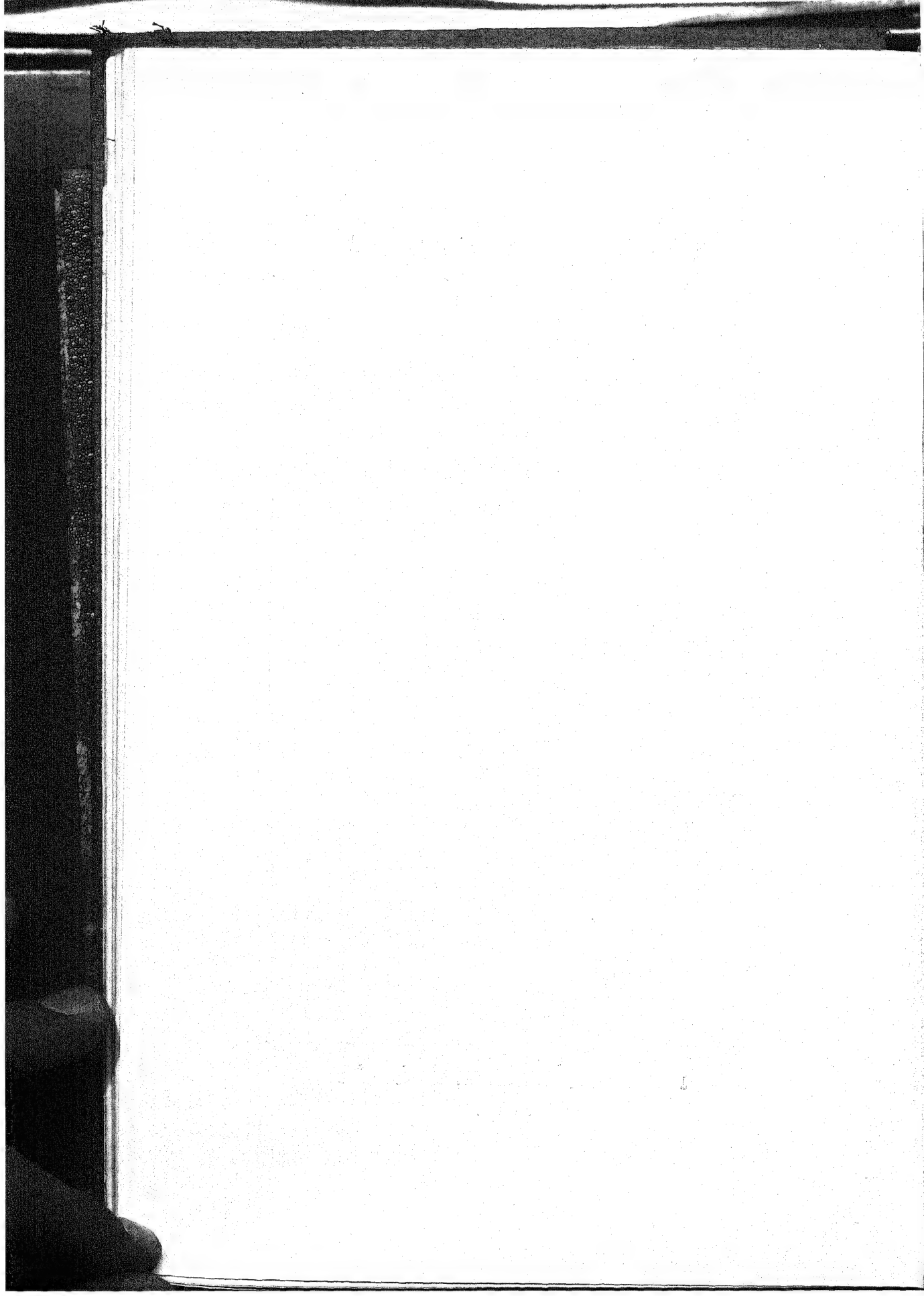


૩૧. પરપણુ આપનાર આદ્ય સુરઝીશ્રી



કોઠા રી હર ગો વિંદ ભાઈ જે ચંદ  
રાજ કોટ.





निरयावलिकासूत्रका सम्मतिपत्र  
आगमवाराधि-सर्वत्रन्त्रस्वतन्त्र-जैनाचार्य पूज्यश्री  
आत्मारामजी महाराजकी तरफका आया हुवा  
सम्मतिपत्र

लुधियाना ता. ११ नवम्बर ४८

श्रीयुत् गुलाबन्दजी पानाचंदजी ! सादर जयजिनेन्द्र ॥

पत्र आपका मिला, निरयावलिका विषय पूज्यश्रीका स्वास्थ्य ठीक न होनेसे उनके शिष्य पं. श्री हेमचन्द्रजी महाराजने सम्मतिपत्र लिख दिया है, आपको भेज रहे हैं, कृपया एक कोपी निरयावलिका की और भेज दीजिये, और कोई योग्य सेवा कार्य लिखते रहें ॥

भवदीय,

गूजरमल-बलवंतराय जैन

॥ सम्मति ॥

( लेखक जैनमुनि पण्डित श्री हेमचंद्रजी महाराज )

सुन्दरबोधिनीटीकया समलङ्कृतं हिन्दी-गुर्जर-भाषानुवादसहितं च श्रीनिरयावलिकासूत्रं मेधाविनामल्पमेधसां चोपकारकं भविष्यतीति सुदृढं मेऽभिमतम्, संस्कृतटीकेयं सरला सुबोधा सुललिता चात एव अन्वर्थनाम्नी चाप्यस्ति । सुविशदत्वात् सुगमत्वात् प्रत्येकदुर्बोधपद-व्याख्यायुतत्वाच्च टीकैषा संकृतसाधारणज्ञानवतामप्युपयोगिनी भाविनीत्यभिप्रेमि । हिन्दी-गुर्जरभाषानुवादावपि एतद्भाषाविज्ञानां महीयसे लाभाय भवेतामिति सम्यक् संभावयामि ।

जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-घासीलालजी-महाराजानां परिश्रमोऽयं प्रशंसनीयो, धन्यवादाहर्षश्च ते मुनिसत्तमाः । एवमेव श्री-समीरमल्लजी-श्रीकन्हैलालजी-मुनिवरेण्ययोर्नियोजनकार्यमपि श्लाघ्यं, तावपि च मुनिवरौ धन्यवादाहर्षौ स्तः ।

सुन्दरप्रस्तावनाविषयानुक्रमादिना समलङ्कृते सूत्ररत्नेऽस्मिन् यदि शब्दकोषोऽपि दत्तः स्यात्तर्हि वरतरं स्यात् । यतोऽस्यावश्यकतां सर्वेऽप्यन्वेषकविद्वांसोऽनुभवन्ति ।

पाठकाः सूत्रस्याध्ययनाध्यापनेन लेखकनियोजकमहोदयानां परिश्रमं सफल्यिष्यन्तीत्याशास्महे । इति ।

श्री उपासकदशाङ्ग सूत्र परत्वे जैनसमाजना अग्रगण्य जैनधर्मभूषण  
महान् विद्वान् संतोष तेमज विद्वान् श्रावकोऽसम्मतिओ समर्पी  
छे, तेमना नामो नीचे प्रमाणे छे-

- (१) लुधियाना-संवत् १९८९, आश्विन पूर्णिमाका पत्र, श्रुतज्ञान के भंडार आगमरत्नाकर जैनधर्मदिवाकर श्री १००८ श्री उपाध्याय श्री आत्मारामजी महाराज, तथा न्यायव्याकरणवेत्ता श्री १००७ तच्छिष्य श्री मुनि हेमचन्द्रजी महाराज.
- (२) लाहौर-वि० सं० १९८९ आश्विन वदि १३ का पत्र, पण्डित श्री १००८ श्री भागचन्दजी महाराज तथा तच्छिष्य पण्डितरत्न श्री १००७ श्री त्रिलोकचंदजी महाराज.
- (३) खीचन-से ता. ९-११-३६ का पत्र, क्रियापात्र स्थविर श्री १००८ श्री भारतरत्न श्री समरथमलजी महाराज.
- (४) वालाचोर-ता. १४-११-३६ का पत्र, परमप्रसिद्ध भारतरत्न श्री १००८ श्री शतावधानी श्री रत्नचंदजी महाराज.
- (५) बम्बई-ता. १६-११-३६ का पत्र, प्रसिद्ध कवीन्द्र श्री १००८ श्री कवि नानचंदजी महाराज.
- (६) आगरा-ता. १८-१२-३६, जगत्-वल्लभ श्री १००८ जैनदिवाकर श्री चौथमलजी महाराज, गुणवन्त गणीजी श्री १००७ श्री साहित्यप्रेमी श्री प्यारचन्दजी महाराज.
- (७) हैद्राबाद-(दक्षिण) ता. २५-११-३६ का पत्र, स्थविरपदभूषित भाग्यवान् पुरुष श्री ताराचंदजी महाराज, तथा प्रसिद्धवक्ता श्री १००७ श्री सोभागमलजी महाराज.
- (८) जयपुर-ता. २७-११-३६ का पत्र, संप्रदाय के गौरववर्धक शांत-स्वभावी श्री १००८ श्री खूबचन्दजी महाराज.
- (९) अम्बाला-ता. २९-११-३६ का पत्र, परमप्रतापी पंजाबकेशरी श्री १००८ श्री पूज्य श्री काशीरामजी महाराज.



(१०) सेलाना-ता. २९-११-३६ का पत्र, शास्त्रोंके ज्ञाता श्रीमान रतनलालजी डोसी.

(११) खीचन-ता. ९-११-३६ का पत्र, पंडितरत्न न्यायतीर्थ सुभ्रावक श्रीयुत् माधवलालजी.

सादर जय जिनेन्द्र

आपका भेजा हुवा उपासकदशांग सूत्र तथा पत्र मिला यहां विराजित प्रवर्तक वयोवृद्ध श्री १००८ श्री ताराचंदजी महाराज पण्डित श्री किशनलालजी महाराज आदि ठाणा १४ सुख शांति में विराजमान हैं आपके वहां विराजित जैनशास्त्राचार्य पूज्यपाद श्री १००८ श्री घासीलालजी महाराज आदि ठाणा नव से हमारी वन्दना अर्ज कर सुख शांति पूछें, आपने उपासकदशांग सूत्र के विषय में यहां विराजित मुनिवरों की सम्मति मंगाई, उसके विषय में वक्ता श्री सोभागमलजी महाराजने फरमाया है कि वर्तमानमें स्थानकवासी समाजमें अनेकानेक विद्वान् मुनि महाराज मौजूद हैं मगर जैनशास्त्र की वृत्ति रचनेका साहस जैसा घासीलालजी महाराजने किया है वैसा अन्यने किया हो ऐसा नजर नहीं आता। दूसरा यह शास्त्र अत्यन्त उपयोगी तो यों है ही, संस्कृत प्राकृत हिंदी और गुजराती भाषा होने से चारों भाषा वाले एक ही पुस्तक से लाभ उठा सकते हैं। जैनसमाज में ऐसे विद्वानों का गौरव बढे, यही शुभ कामना है। आशा है कि स्थानकवासी संघ विद्वानों की कदर करना सीखेगा।

योग्य लिखें शेष शुभ

भवदीय

जमनालाल रामलाल कीमती

आगरा से—

श्री जैनदिवाकर प्रसिद्ध वक्ता जगद्वल्लभ मुनि श्री चोथमलजी महाराज व पंडितरत्न सुव्याख्यानी गणीजी श्री प्यारचन्द जी महाराज ने इस पुस्तक को अतीव पसन्द की है।

श्रीमान् न्यायतीर्थ पण्डित

माधवलालजी खाँचनसे लिखते हैं कि—

उन पंडितरत्न महाभाग्यवंत पुरुषों के सामने उनकी अगाध-तत्त्वगवेषणा के विषय में मैं नगण्य क्या सम्मति दे सकता हूँ।

परन्तु—

मेरे दो मित्रों ने जिन्होंने इसको कुछ पढ़ा है बहुत सराहना की है, वारतव में ऐसे उत्तम व सबके समझने योग्य ग्रन्थों की बहुत आवश्यकता है, और इस समाज का तो ऐसे ग्रन्थ ही गौरव बढ़ा सकते हैं। ये दोनों ग्रन्थ वास्तव में अनुपम हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के सुप्रकाशसे यह समाज अमावास्या के घोर अन्धकारमें दीपावली का अनुभव करती हुई, महावीर के अमूल्य वचनों का पान करती हुई अपनी उन्नति में अग्रसर होती रहेगी।



ता. २९-११-३६

अम्बाला (पंजाब)

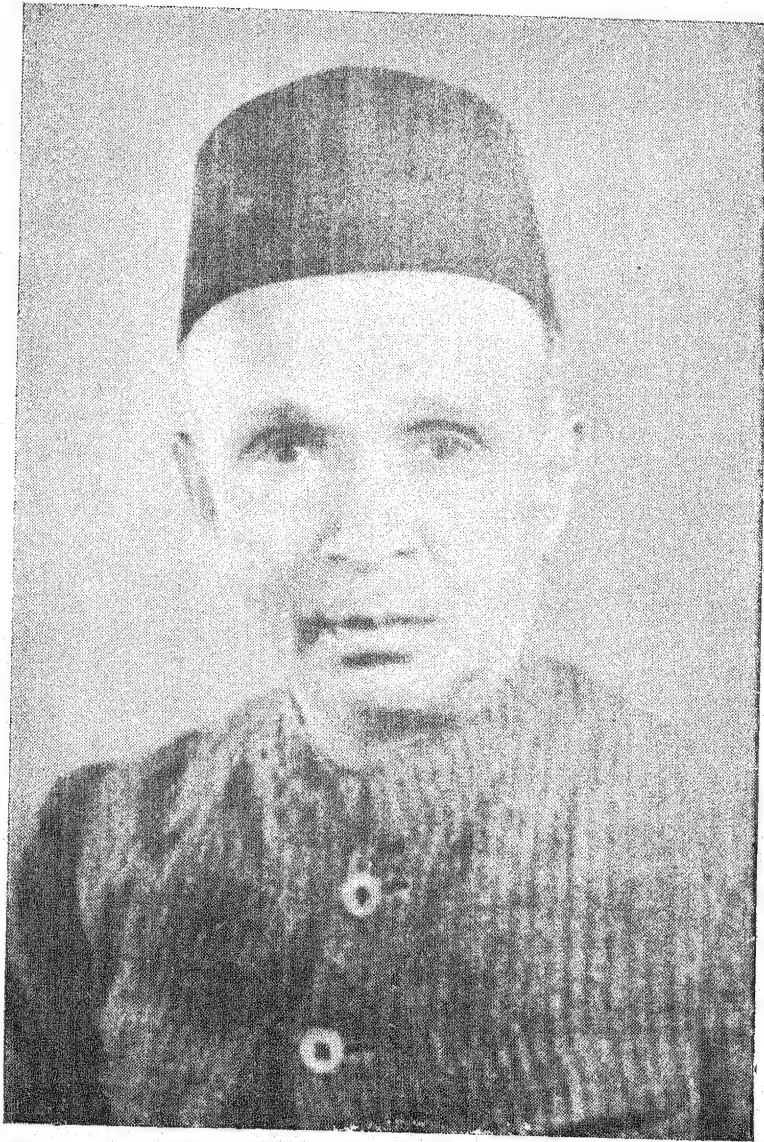
पत्र आपका मिला। श्री श्री १००८ पंजाबकेसरी पूज्य श्री काशी-रामजी महाराज की सेवा में पढ़ कर सुना दिया। आपकी भेजी हुई उपासदशाङ्गसूत्र तथा गृहिधर्मकल्पतरुकी एक २ प्रति भी प्राप्त हुई। दोनों पुस्तकें अति उपयोगी तथा अत्यधिक परिश्रम से लिखी हुई हैं। ऐसे ग्रन्थरत्नों के प्रकाशित करवानेकी बड़ी आवश्यकता है। इन पुस्तकों से जैन तथा अजैन सबका उपकार हो सकता है। आपका यह पुरुषार्थ सराहनीय है।

आपका

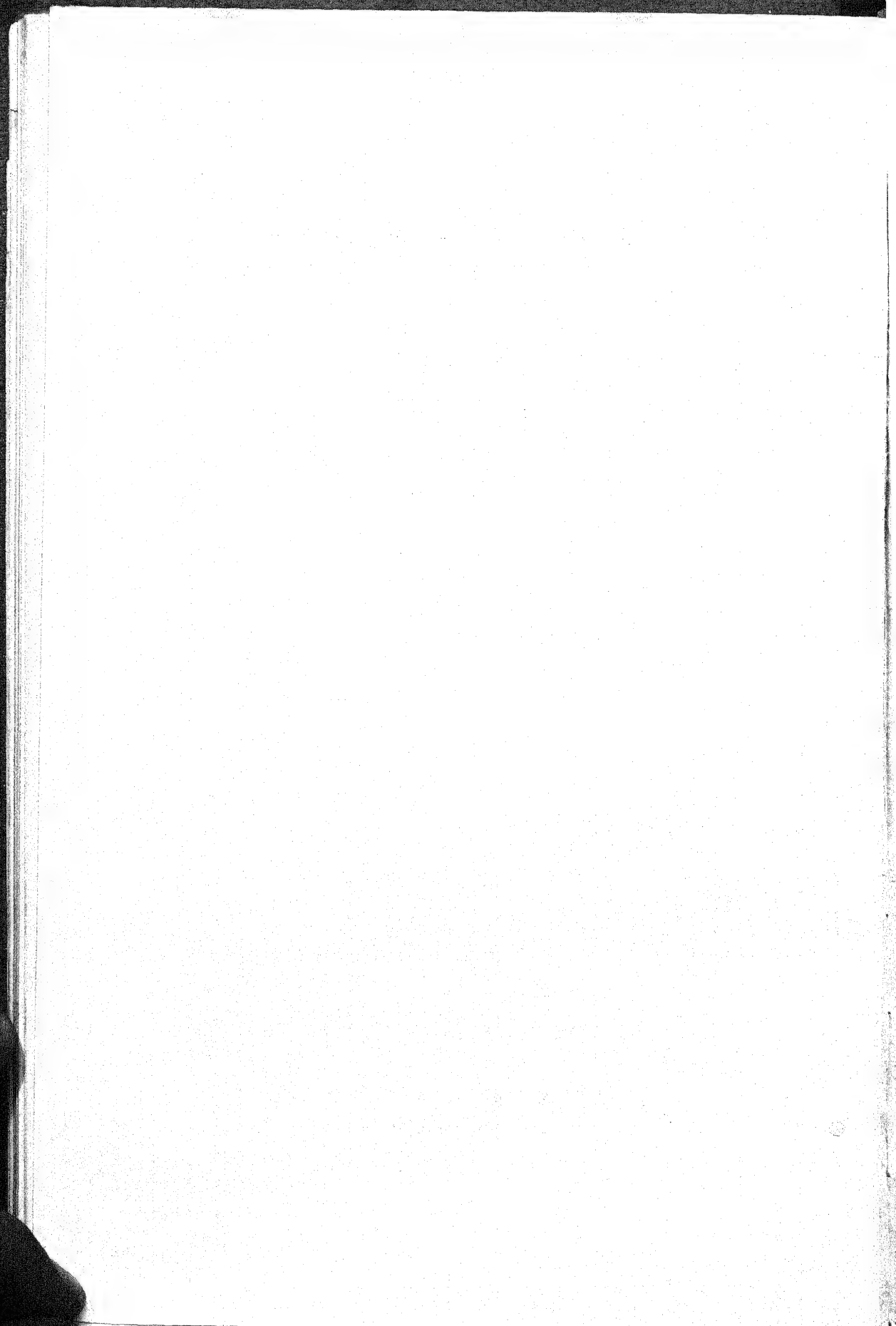
शशिभूषण शास्त्री  
अध्यापक जैन हाईस्कूल  
अम्बाला शहर



શ્રી. પદ્મ આપનાર આદ્ય સુરજભીશ્રી



(સ્વ.) શેઠ ધારસીભાઈ જીવણભાઈ  
સોલાપુર.



शान्तस्वभावी वैराग्यमूर्ति तत्त्वचारिधि, धैर्यवान श्री जैनाचार्य पूज्यवर श्री श्री १००८ श्री खूबचंदजी महाराज साहेबने सूत्र श्री उपासकदशाङ्गजी को देखा। आपने फरमाया कि पण्डित मुनि श्री घासीलालजी महाराज ने उपासक-दशाङ्ग सूत्रकी टीका लिखनेमें बड़ा ही परिश्रम किया है। इस समय इस प्रकार प्रत्येक भूत्रोंकी संशोधनपूर्वक सरल टीका और शुद्ध हिन्दी अनुवाद होनेसे भगवान निर्ग्रन्थों के प्रवचनों के अपूर्व रसका लाभ मिल सकता है।

\*

बालाचोर से भारतरत्न शतावधानी पण्डित मुनि श्री १००८ श्री रतनचन्दजी महाराज फरमाते हैं कि—

उत्तरोत्तर जोतां मूलसूत्रनी संस्कृत टीकाओ रचवामां टीकाकारे स्तुत्य प्रयास कर्यो छे, जे स्थानकवासी समाज माटे मगरूरी लेवा जेवुं छे, वळी करांचीना श्री संघे सारा कागळमां अने सारा टाईपमां पुस्तक छपावी प्रगट कर्युं छे जे एक प्रकारनी साहित्य सेवा बजावी छे.

\*

बम्बई शहरमें विराजमान कवि मुनि श्री नानचन्दजी महाराजने फरमाया है कि पुस्तक सुन्दर है प्रयास अच्छा है।

\*

खीचन से स्थविर क्रियापात्र मुनि श्री रतनचन्दजी महाराज और पंडित-रत्न मुनि श्री समर्थमलजी फरमाते हैं कि—विद्वान् महात्मा पुरुषों का प्रयत्न साराहनीय है, जैनागम श्रीमद् उपासकदशाङ्गसूत्र की टीका, एवं उसकी सरल सुबोधिनी शुद्ध हिन्दी भाषा बड़ी ही सुंदरता से लिखी है।

\*



श्री वीतरागाय नमः ।

श्री श्री श्री १००८ जैनधर्मदिवाकर जैनागमरत्नाकर श्रीमज्जै-  
नाचार्य श्री पूज्य घासीलालजी महाराज चरणबन्दन स्वीकार हो ।

अपरश्च समाचार यह है कि आपके भेजे हुए ९ शास्त्र मास्टर  
शोभालालजी के द्वारा प्राप्त हुए, एतदर्थ धन्यवाद ! आपश्रीजीने तो ऐसा  
कार्य किया है जो कि हजारों वर्षों से किसी भी स्थानकवासी जैनाचार्यने  
नहीं किया ।

आपने स्थानकवासीजैनसमाज के ऊपर जो उपकार किया है वह  
कदापि भुलाया नहीं जा सकता और नहीं भुलाया जा सकेगा ।

हम तीनों मुनि भगवान महावीर से अथवा शासनदेव से प्रार्थना  
करते हैं कि आपकी इस वज्रमयी लेखनीको उत्तरोत्तर शक्तिप्रदान  
करें ता कि आप जैनसमाज से ऊपर और भी उपकार करते रहें, और  
आप चिरंजीवी हों ।

हम हैं आपके मुनि तीन  
मुनि सत्येन्द्रदेव, मुनि लखपतराय, मुनि पद्मसेन,

## इतबारी बाजार

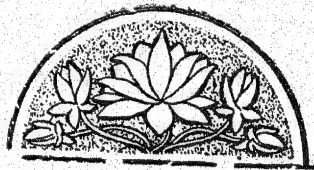
नागपुर ता. १९-१२-५६

प्रखर विद्वान् जैनाचार्य मुनिराज श्री घासीलालजी महाराजद्वारा जो आगमोद्धार हुआ और हो रहा है सचमुच महाराज श्री का यह स्तुत्य कार्य है। हमने प्रचारकजी के द्वारा नौ सूत्रोंका सेट देखा और कई मार्मिक स्थलोंको पढ़ा, पढ़ कर विद्वान् मुनिराजश्री की शुद्ध श्रद्धा तथा लेखनीके प्रति हार्दिक प्रसन्नता फूट पड़ी।

वास्तवमें मुनिराज श्री जैन समाज पर ही नहीं इतर समाज पर भी गहरा उपकार कर रहे हैं। ज्ञान किसी एक समाजका नहीं होता वह सभी समाज की अनमोल निधि है जिसे कठिन परिश्रम से तैयार कर जनता के सम्मुख रक्खा जा रहा है, जिसका एक एक सेट हर शहर गांव और घर घरमें होना आनंद्यक है।

साहित्यरत्न

मोहनमुनि सोहनमुनि जैन





## શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રનું સમ્મતિપત્ર

શ્રમણ સંઘના મહાન આચાર્ય આગમ વારિધિ સર્વતન્ત્રસ્વતંત્ર જૈનાચાર્ય પૂજ્યશ્રી આત્મારામજી મહારાજે આપેલા સમ્મતિપત્રનો ગુજરાતી અનુવાદ.

\*

મેં તથા પંડિત મુનિ હેમચંદ્રજીએ પંડિત મુલચંદ વ્યાસ (નામૌર મારવાડવાલા) દ્વારા મળેલી પંડિત રત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મુનિ વિરચિત સંસ્કૃત અને હિન્દી ભાષા સહિત શ્રી દશવૈકલિક સૂત્રની આચારમણિમંજૂષા ટીકાનું અવલોકન કર્યું. આ ટીકા સુંદર બની છે. તેમાં પ્રત્યેક શબ્દોનો અર્થ સારી રીતે વિશેષભાવ લઈને સમજાવવામાં આવેલ છે.

તેથી તે વિદ્વાનો અને સાધારણ બુદ્ધિવાળાઓ માટે ઉપકાર કરવાવાળી છે. ટીકાકારે મુનિના આચાર વિષયનો ઉલ્લેખ સારો કરેલ છે. જે આધુનિક-મતાવલંબી અહિંસાના સ્વરૂપને નથી જાણતા, દયામાં પાપ સમજે છે તેમને માટે ‘અહિંસા શું વસ્તુ છે’ તેનું સારી રીતે પ્રતિપાદન કરેલ છે. વૃત્તિકારે સૂત્રના પ્રત્યેક વિષયને સારી રીતે સમજાવેલ છે. આ વૃત્તિના અવલોકનથી વૃત્તિકારની અતિશય યોગ્યતા સિદ્ધ થાય છે.

આ વૃત્તિમાં એક બીજી વિશેષતા એ છે કે મૂલસૂત્રની સંસ્કૃત છાયા હોવાથી સૂત્ર, સૂત્રનાં પદ અને પદઅર્થ સુબોધદાયક બનેલ છે.

પ્રત્યેક જ્ઞાસુએ આ ટીકાનું અવલોકન અવશ્ય કરવું જોઈએ. વધારે શું કહેવું? અમારી સમાજમાં આવા પ્રકારના વિદ્વાન મુનિરત્નનું હોવું એ સમાજનું અહોભાગ્ય છે. આવા વિદ્વાન મુનિરત્નોના કારણે સુમપ્રાય-સુતેલો સમાજ અને હુમપ્રાય એટલે લોપ પામેલું સાહિત્ય એ બન્નેનો ફરીથી ઉદય થશે. અમે વૃત્તિકારને વારંવાર ધન્યવાદ આપીએ છીએ.

વિક્રમ સંવત ૧૯૯૦ ફાલ્ગુન શુકલ  
તેરસ મંગળવાર  
(અલ્હાબદ સ્ટેટ)

ધૃતિ  
ઉપાધ્યાયજૈનમુનિ આત્મારામ  
(પંબળી)

શ્રમણ સંઘના પ્રચારમંત્રી પંજાબકેશરી મહારાજ શ્રી પ્રેમચંદળ મહારાજ જેઓશ્રી રાજકોટમાં પધારેલ હતાં ત્યારે તેઓના તરફથી શાસ્ત્રોને માટે મળેલો અભિપ્રાય.

\*

શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ તરફથી પૂજ્યપાદ શાસ્ત્રવારિધિ પંડિતરાજ સ્વામીશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ દ્વારા શાસ્ત્રોદ્ધારનું જે કાર્ય થઈ રહ્યું છે તે કાર્ય નૈનસમાજ તેમાં ખાસ કરીને સ્થાનકવાસીનૈનસમાજને માટે મૂળભૂત મૌલિક સંસ્કૃતની જડને મજબુત કરવાવાળું છે.

એટલા ખાતર આ કાર્ય અતિ પ્રશંસનીય છે માટે દરેક વ્યક્તિએ તેમાં યથાશક્તિ ભાગ લેવાની ખાસ આવશ્યકતા છે અને તેથી એ ભગીરથ કાર્ય જદ્દીથી જદ્દી સંપૂર્ણપણે પાર પાડી શકાય અને જનતા શ્રુતજ્ઞાનનો લાભ મેળવી શકે.

\*

દરીયાપુર સંપ્રદાયના પૂજ્ય આચાર્ય શ્રી ઇશ્વરલાલજી મહારાજ સાહેબના

## સૂત્રો સંબંધે વિચારો

નમામિ વીરં ગિરિસારધીરં

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિવર શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજ તથા પંડિતશ્રી કનૈયાલાલજી મહારાજ આદિ થાણા છની સેવામાં—

અમદાવાદ શાહપુર ઉપાશ્રયથી મુનિ દયાનંદજીના ૧૦૮ પ્રશ્નિપાત.

આપ સર્વે થાણાઓ સુખ સમાધિમાં હશે નિરંતર ધર્મધ્યાન ધર્મરાધનામાં લીન હશે.

સૂત્ર પ્રકાશન કાર્ય ત્વરિત થાય એવી ભાવના છે દશવૈકાલિક તથા આચારાંગ એક એક ભાગ અહીં છે, ટીકા ખુબ સુંદર, સરળ અને અર્થ સાથે પ્રકાશન થાય તો શ્રાવકગણ તેનો વિશેષ લાભ લઈ શકે, અને પૂજ્ય આચાર્ય ગુરુદેવને આંખે મોતીયો ઉતરાવ્યો છે અને સાઈ છે એજ.

આસો સુદ ૧૦, મંગળવાર, તા. ૨૫-૧૦-૫૫

પુનઃ પુનઃ શાતા ઇચ્છતો,  
દયામુનિના પ્રશ્નિપાત.

\*

દરિયાપુર સંપ્રદાયના પંડિતરત્ન ભાઈચંદ્ર મહારાજનો અભિપ્રાય  
શ્રી

રાણપુર તા. ૧૯-૧૨-૧૯૫૫

પૂજ્યપાદ જ્ઞાનિપ્રવર પંડિતરત્ન પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આદિ મુનિવરોની સેવામાં, આપ સર્વ સુખસમાધીમાં હશે.

સૂત્રપ્રકાશનનું કામ સુંદર થઈ રહ્યું છે તે બહુ અત્યંત આનંદ. આપના પ્રકાશિત થયેલાં કેટલાંક સૂત્રો મેં જોયાં. સુંદર અને સરલ સિદ્ધાંતના ન્યાયને પુષ્ટિ કરતી ટીકા પંડિતરત્નોને સુપ્રિય થઈ પડે તેવી છે. સૂત્રપ્રકાશનનું કામ ત્વરિત પૂર્ણ થાય અને ભવિ આત્માઓને આત્મકલ્યાણ કરવામાં સાધનભૂત થાય એજ અભ્યર્થના.

લી. પંડિતરત્ન બાળપ્રદાયારી  
પૂ. શ્રી ભાઈચંદ મહારાજની  
આજ્ઞાનુસાર શાન્તિમુનીના  
પાયવંદન સ્વીકારશે.

\*

તા. ૧૧-૫-૫૬  
વિરમગામ

ગચ્છાધિપતિ પૂજ્ય મહારાજ શ્રી જ્ઞાનચંદ્રજી મહારાજના સંપ્રદાયના આત્માર્થી, ક્રિયાપાત્ર, પંડિતરત્ન, મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજનો અભિપ્રાય.

ખીચનથી આવેલ તા. ૧૨-૨-૫૬ના પત્રથી ઉદ્ભૂત.

પૂજ્ય આચાર્ય ઘાસીલાલજી મહારાજના હસ્તક જે સૂત્રોનું લખાણ સુંદર અને સરળ ભાષામાં થાય છે તે સાહિત્ય, પંડિત મુનિશ્રી સમરથમલજી મહારાજ સમય એછો મળવાને કારણે સંપૂર્ણ જોઈ શક્યા નથી. છતાં જેટલું સાહિત્ય જોયું છે, તે બહુજ સાફ અને મનન સાથે લખાયેલું છે, તે લખાણ શાસ્ત્ર-આજ્ઞાને અનુરૂપ લાગે છે. આ સાહિત્ય દરેક શ્રદ્ધાળુ જીવોને વાંચવા યોગ્ય છે. આમાં સ્થાનકવાસી સમાજની શ્રદ્ધા, પ્રરૂપણા અને ફરસણાની દૃઢતા શાસ્ત્રાનુકૂળ છે. આચાર્યશ્રી અપૂર્વ પરિશ્રમ લઈ સમાજ ઉપર મહાન ઉપકાર કરે છે.

લી. કિશનલાલ પૃથ્વીરાજ માલુ.  
મુ. ખીચન.

\*



## લીંબડી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી છોટાલાલજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શ્રી વીતરાગદેવે જ્ઞાનપ્રચારને તીર્થંકર-નામ-ગોત્ર બાંધવાનું નિમિત્ત કહેલ છે. જ્ઞાનપ્રચાર કરનાર, કરવામાં સહાય કરનાર, અને તેને અનુમોદન આપનાર, જ્ઞાનાવરણીય કર્મને ક્ષય કરી કેવળ જ્ઞાનને પ્રાપ્ત કરી પરમપદના અધિકારી બને છે. શાસ્ત્રજ્ઞ, પરમ શાન્ત અને અપ્રમાદી પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે અવિશ્રાન્તપણે જ્ઞાનની ઉપાસના અને તેની પ્રભાવના અનેક વિકટ પ્રસંગોમાં પણ કરી રહ્યા છે. તે માટે તેઓશ્રી અનેકશઃ ધન્યવાદના અધિકારી છે. વંદનીય છે. તેમની જ્ઞાનપ્રભાવનાની ધગશ ઘણા પ્રમાદિઓને અનુકરણીય છે. જેમ પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પોતે જ્ઞાન પ્રચાર માટે અવિશ્રાન્ત પ્રયત્ન કરે છે. તેમજ-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના કાર્યવાહકો પણ એમાં સહાય કરીને જે પવિત્ર સેવા કરી રહેલ છે. તે પણ ખરેખર ધન્યવાદના પૂર્ણ અધિકારી છે.

એ સમિતિના કાર્યકરોને મારી એક સુચના છે કે:-

શાસ્ત્રોદ્ધાર પ્રવર પંડિત અપ્રમાદી સંત ઘાસીલાલજી મહારાજ જે શાસ્ત્રોદ્ધારકનું કામ કરી રહેલ છે. તેમાં સહાય કરવા માટે-પંડિતો વિગેરેના માટે જે ખર્ચો થઈ રહેલ છે તેને પહોંચીવળવા માટે સાઈં સરખું ફંડ જોઈએ. એના માટે મારી એ સુચના છે કે-શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના મુખ્ય કાર્યવાહકો-જો બની શકે તો પ્રમુખ પોતે અને બીજા બે ત્રણ જણાઓ ગુજરાત, સૌરાષ્ટ્ર, અને કચ્છમાં પ્રવાસ કરી મેમ્બરો બનાવે અને આર્થિક સહાય મેળવે.

જો કે અત્યારની પરિસ્થિતિ વિષમ છે. બ્યાપારીઓ, ધંધાદારીઓને પોતાના વ્યવહાર સાચવવા પણ મુશ્કેલ બન્યા છે. છતાં જો સંભાવિત ગૃહસ્થો પ્રવાસે નીકળે તો જરૂર કાર્ય સફળ કરે એવી મને શ્રદ્ધા છે.

આર્થિક અનુકૂળતા થવાથી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પણ વધુ સરલતાથી થઈ શકે. પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જ્યાં સુધી આ તરફ વિચરે છે ત્યાં સુધીમાં એમની જ્ઞાનશક્તિનો જેટલો લાભ લેવાય તેટલો લઈ લેવો, કદાચ સૌરાષ્ટ્રમાં વધુ વખત રહેવાથી તેમને હવે બહાર વિહરવાની ઈચ્છા થતી હોય તો શાન્તિભાઈ શેઠ જેવાએ વિનંતિ કરી અમદાવાદ પધરાવવા, અને ત્યાં અનુકૂળતા મુજબ બે-ત્રણ વર્ષની સ્થિરતા કરાવીને તેમની પાસે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ પૂર્ણ કરાવી લેવું જોઈએ.

થોડા વખતમાં જામજોધપુરમાં શાસ્ત્રોદ્ધારકમીટી મળવાની છે, તે વખતે ઉપરની સૂચના વિચારાય તો ઠીક.



ફરી શાસ્ત્રોદ્ધારક પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજને એમની આ સેવા અને પરમ કલ્યાણકારક પ્રવૃત્તિને માટે વારંવાર અભિનંદન છે. શાસનનાયક દેવ તેમના શરીરાદિને સશક્ત અને દીર્ઘાયુ રાખે જેથી સમાજ ધર્મની વધુ ને વધુ સેવા કરી શકે એ અસ્તુ.

આતુર્ભાસ સ્થળ લીંબડી  
સ. ૨૦૧૦ ગ્રાવણ વદ ૧૩ શુક્ર

લી.

સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

\*

### શ્રી વર્ધમાન સંપ્રદાયના પૂજ્યશ્રી પુનમચંદ્રજી મહારાજનો અભિપ્રાય

શાસ્ત્રવિશાદ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ જૈન આગમો ઉપર જે સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચેલ છે તે માટે તેઓશ્રી ધન્યવાદને પાત્ર છે. તેમણે આગમો ઉપરની સ્વતંત્ર ટીકા રચીને સ્થાનકવાસી જૈન સમાજનું ગૌરવ વધાર્યું છે, આગમો ઉપરની તેમની સંસ્કૃત ટીકા ભાષા અને ભાવની દૃષ્ટિએ ધણી જ સુંદર છે. સંસ્કૃતરચના માધુર્ય. તેમજ અલંકાર વગેરે ગુણોથી યુક્ત છે. વિદ્વાનોએ તેમજ જૈન સમાજના આચાર્યો, ઉપાધ્યાયો વગેરે એ શાસ્ત્રો ઉપર રચેલી આ સંસ્કૃતરચનાની કદર કરવી જોઈએ. અને દરેક પ્રકારનો સહકાર આપવો જોઈએ.

આ મહાન કાર્યમાં પંડિતરત્ન પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જે પ્રયત્ન કરી રહ્યા છે તે અલૌકિક છે. તેમનું આગમ ઉપરની સંસ્કૃત ટીકા વગેરે રચવાનું ભગીરથકાર્ય શીઘ્ર સફળ થાય એજ શુભેચ્છા સાથે.

અમદાવાદ

તા. ૨૨-૪-૫૬ રવીવાર  
મહાવીર જયંતિ

મુનિ પુનમચંદ્રજી

\*

### ખંભાત સંપ્રદાયના મહાસતી શારદાબાઈ સ્વામીનો અભિપ્રાય

લખતર તા. ૨૫-૪-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાંતીલાલભાઈ મંગળદાસભાઈ.

પ્રમુખ સાહેબ અખિલ ભારત ટ્રસ્ટ સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

મુ. અમદાવાદ

અમે અત્રે દેવગુરૂની કૃપાએ સુખરૂપ છીએ. વિ. મા. આપની સમિતિદ્વારા પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ સાહેબ જે સૂત્રોનું કાર્ય કરે છે તે પૈકીનાં સૂત્રોમાંથી ઉપાસકદશાંગસૂત્ર, આચારાંગસૂત્ર, અનુત્તરોપપતિકસૂત્ર

દશવૈકલિકસૂત્ર વિગેરે સૂત્રો જોયાં તે સૂત્રો સંસ્કૃત હિન્દી અને ગુજરાતી ભાષાઓમાં હોવાને કારણે વિદ્વાન અને સામાન્ય જનોને ઘણું જ લાભદાયક છે. તે વાંચન ઘણું જ સુંદર અને મનોરંજન છે, આ કાર્યમાં પૂજ્ય આચાર્યશ્રી જે અગાધ પુરૂષાર્થ કાર્ય કરે છે તે માટે વારંવાર ધન્યવાદને પાત્ર છે. આ સૂત્રોથી સમાજને ઘણો લાભ થવા સંભવ છે.

હંસ સમાન બુદ્ધિવાળા આત્માઓ સ્વપરના ભેદથી નિખાલસ ભાવનાઓ અવલોક કરશે તો આ સાહિત્ય સ્થાનકવાસી સમાજ માટે અપૂર્વ અને ગૌરવ લેવા જેવું છે. દરેક ભવ્ય આત્માઓને સૂચન કરું છું કે આ સૂત્રો પોતા-પોતાના ઘરમાં વસાવવાની સુંદર તકને ચૂકસો નહિ. કારણ આવા શુદ્ધ પવિત્ર અને સ્વપરંપરાને પુષ્ટિરૂપ સૂત્રો મળવાં બહુ મુશ્કેલ છે. આ કાર્યમાં આપશ્રી તથા સમિતિના અન્ય કાર્યકરો જે શ્રમ લઈ રહ્યા છે તેમાં મહાન નિર્જરાનું કારણ જોવામાં આવે છે તે બદલ ધન્યવાદ. એ જ.

લી. શારદાબાઈ સ્વામી  
ખંભાત સંપ્રદાય.

\*

ખરવાળા સંપ્રદાયના વિદુષી મહાસતીજી મોંઘીબાઈ  
સ્વામીને અભિપ્રાય

ધંધુકા તા. ૨૭-૧-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ  
પ્રમુખ અં ભાં પ્રવેં સ્થાં જૈનશાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ  
મું રાજકોટ

અત્રે ખીરાજતા ગું ગુંના લંડાર મહાસતીજી વિદુષી મોંઘીબાઈ સ્વામી તથા હીરાબાઈ સ્વામી આદિઠાણાં બન્ને સુખશાતમાં ખીરાજે છે. આપને સૂચન છે કે અપ્રમત્ત અવસ્થામાં રહી નિવૃત્તિ ભાવને મેળવી ધર્મધ્યાન કરશો એજ આશા છે.

વિશેષમાં અમને પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના રચેલાં સૂત્રો ભાઈ પોપટ ધનજીભાઈ તરફથી ભેટ તરીકે મળેલાં તે સૂત્રો તમામ આઘોપાન્ત વાંચ્યાં મનન કર્યાં અને વિચાર્યાં છે તે સૂત્રો સ્થાનકવાસી સમાજને અને વીતરાગમાર્ગને ખુબ જ ઉન્નત બનાવનાર છે. તેમાં આપણી શ્રદ્ધા એટલી ન્યાયરૂપથી ભરેલી છે તે આપણા સમાજ માટે ગૌરવ લેવા જેવું છે. હંસ સમાન

આત્માઓ જ્ઞાનઝરણાઓથી આત્મરૂપવાડીને વિકસિત કરશે, ધન્ય છે આપને અને સમિતિના કાર્યકરોને જે સમાજ ઉત્થાન માટે કોઈની પણ પરવા કર્યા વગર જ્ઞાનનું દાન ભવ્ય આત્માઓને આપવા નિમિત્તરૂપ થઈ રહ્યા છે. આવા સમર્થ વિદ્વાન પાસેથી સંપૂર્ણ કાર્ય પુરું કરાવશો તેવી આશા છે.

એજ લિ. ખરવાળા સંપ્રદાયના વિદ્વધી

મહાસતીજી મોંઘીબાઈ સ્વામી

ના ફરમાનથી લી. ખોડીદાસ ગણેશભાઈ—ધંધુકા

સ્થાનકવાસી જૈન સંઘના પ્રમુખ

\*

### અદ્યતન પદ્ધતિને અપનાવનાર વડોદરા કોલેજના એક વિદ્વાન પ્રોફેસરનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ જૈનશાસ્ત્રોના સંસ્કૃત ટીકાબદ્ધ, ગુજરાતીમાં અને હિન્દીમાં ભાષાંતરો કરવાના ઘણા વિકટ કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે. શાસ્ત્રો પૈકી જે શાસ્ત્રો પ્રસિદ્ધ થયાં છે તે હું જોઈ શક્યો છું, મુનિશ્રી પોતે સંસ્કૃત, અર્ધભાગધી હિંદી ભાષાઓના નિષ્ણાત છે. એ એમનો ટુંક પરિચય કરતાં સહજ જણાઈ આવે છે. શાસ્ત્રોનું સંપાદન કરવામાં તેમને પોતાના શિષ્ય વર્ગનો અને વિશેષમાં ત્રણ પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. તે જોઈ મને આનંદ થયો. સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયના અગ્રેસરોએ પંડિતોનો સહકાર મેળવી આપી, મુનિશ્રીના કાર્યને સરળ અને શિષ્ટ બનાવ્યું છે. સ્થાનકવાસી સમાજમાં વિક્રતા; ઘણી ઓછી છે, તે દિગંબર મૂર્તિપૂજક શ્વેતાંબર વગેરે જૈનદર્શનના પ્રતિનિધિઓના ઘણા સમયથી પરિચયમાં આવતાં હું વિરોધના ભય વગર કહી શકું. પૂર્વ મહારાજનો આ પ્રયાસ સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં પ્રથમ છે એવી મારી માન્યતા છે. સંસ્કૃત સ્પષ્ટીકરણો સારાં આપવામાં આવ્યાં છે, ભાષા શુદ્ધ છે એમ ચોક્કસ કહી શકું છું. ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ શુદ્ધ અને સરળ થયેલાં છે. મને વિશ્વાસ છે કે મહારાજશ્રીના આ સ્તુત્ય પ્રયાસને જૈનસમાજ ઉત્તેજન આપશે અને શાસ્ત્રોના ભાષાંતરોને વાચનાલયમાં અને કુટુંબોમાં વસાવી શકાય તે પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરશે.

પ્રતાપગંજ, વડોદરા

કામદાર કેશવલાલ હિંમનરામ

તા. ૨૭-૨-૧૯૫૬



## મુંબઈની બે કોલેજોના પ્રોફેસરોનો અભિપ્રાય

મુંબઈ તા. ૩૧-૩-૫૬

શ્રીમાન શેઠ શાન્તિલાલ મંગળદાસ

પ્રમુખ : શ્રી અખિલ ભારત ટ્રસ્ટ. સ્થા. જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ,  
રાજકોટ.

પૂજ્યાચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, આવશ્યક, ઉપાસકદશાંગ વગેરે સૂત્રો અમે જોયાં. આ સૂત્રો ઉપર સંસ્કૃતમાં ટીકા આપવામાં આવી છે, અને સાથે હિંદી અને ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ આપવામાં આવ્યાં છે. સંસ્કૃતટીકા અને ગુજરાતી તથા હિંદી ભાષાંતરો જોતાં આચાર્યશ્રીના આ ત્રણે ભાષા પરના એક સરખા અસાધારણ પ્રભુત્વની સચોટ અને સુરેખ છાપ પડે છે. આ સૂત્ર ગ્રંથોમાં પાને પાને પ્રગટ થતી આચાર્યશ્રીની અપ્રતિમ વિદ્વત્તા મુગ્ધ કરી દે તેવી છે. ગુજરાતી તથા હિંદીમાં થયેલાં ભાષાંતરમાં ભાષાની શુદ્ધિ અને સરળતા નોંધપાત્ર છે. એથી વિદ્વદ્જન અને સાધારણ માણસ ઉભયને સંતોષ આપે એવી એમની લેખનીની પ્રતીતિ થાય છે. ૩૨ સૂત્રોમાંથી હજી ૧૩ સૂત્રો પ્રગટ થયાં છે. બીજાં ૭ સૂત્રો લખાઈને તૈયાર થઈ ગયાં છે. આ બધાં જ સૂત્રો જ્યારે એમને હાથે તૈયાર થઈને પ્રગટ થશે ત્યારે જૈન-સૂત્ર-સાહિત્યમાં અમૂલ્ય સંપત્તિરૂપ ગણાશે એમાં સંશય નથી. આચાર્યશ્રીના આ મહાન કાર્યને જૈનસમાજનો વિશેષતઃ સ્થાનકવાસી સમાજનો સંપૂર્ણ સહકાર સાંપડી રહેશે એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

પ્રો. રમણલાલ ચીમનલાલ શાહ

સેન્ટ ઝેવિયર્સ કોલેજ, મુંબઈ.

પ્રો. તારા રમણલાલ શાહ

સોફીયા, કલોજ, મુંબઈ

\*

રાજકોટ ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજના પ્રોફેસર સાહેબનો અભિપ્રાય

જયમહાલ

ભગનાથ પ્લોટ

રાજકોટ, તા. ૧૮-૪-૫૬

પૂજ્યાચાર્ય પં. મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ આજે જૈનસમાજ માટે એક એવા કાર્યમાં વ્યાપ્ત થયેલા છે કે જે સમાજ માટે બહુ ઉપયોગી થઈ પડશે. મુનિશ્રીએ તૈયાર કરેલાં આચારાંગ, દશવૈકાલિક, શ્રી વિપાકશ્રુત વિ. મેં જોયાં.



આ સૂત્રો જોતાં પહેલી જ નજરે મહારાજશ્રીનો સંસ્કૃત, અર્ધમાગધી, હિન્દી તથા ગુજરાતી ભાષાઓ ઉપરનો અસાધારણ કાબુ જણાઈ આવે છે. એક પણ ભાષા મહારાજશ્રીથી અજાણી નથી. આપણે જોઈએ છીએ કે એ સૂત્રો ઉચ્ચ અને પ્રથમ કોટીના છે. તેની વસ્તુ ગંભીર, વ્યાપક અને જીવનને તલસ્પર્શી છે, એટલા ગહન અને સર્વગ્રાહ્ય સૂત્રોનું ભાષાંતર પૂઠ ઘાસીલાલજી મહારાજ જેવા ઉચ્ચ કોટીના મુનિરાજને હાથે થાય છે તે આપણાં અહોભાગ્ય છે. યંત્રવાદ અને ભૌતિકવાદના આ જમાનામાં જ્યારે ધર્મભાવનાં ઓસરતી જાય છે એવે વખતે આવા તત્ત્વજ્ઞાન આધ્યાત્મિકતાથી ભરેલાં સૂત્રોનું સરળ ભાષામાં ભાષાંતર દરેક જિજ્ઞાસુ, મુમુક્ષુ અને સાધકને માર્ગદર્શક થઈ પડે તેમ છે. જૈન અને જૈનેતર, વિદ્વાન અને સાધારણ માણસ સાધુ અને શ્રાવક દરેકને સમજણ પડે તેવી સ્પષ્ટ. સરળ અને શુદ્ધ ભાષામાં સૂત્રો લખવામાં આવ્યાં છે. મહારાજશ્રીને જ્યારે જોઈએ ત્યારે તેમના આ કાર્યમાં સંકળાયેલા જોઈએ છીએ. એ ઉપરથી મુનિશ્રીના પરિશ્રમ અને ધગશની કદવના કરી શકાય તેમ છે. તેમનું જીવન સૂત્રોમાં વણાઈ ગયું છે.

મુનિશ્રીના આ અસાધારણ કાર્યમાં પોતાના શિષ્યોનો તથા પંડિતોનો સહકાર મળ્યો છે. અને આશા છે કે જો દરેક મુમુક્ષુ આ પુસ્તકોને પોતાના ઘરમાં વસાવશે અને પોતાના જીવનને સાચા મુખને માર્ગે વાળશે તો મહારાજશ્રીએ ઉઠાવેલો શ્રમ સંપૂર્ણપણે સફળ થશે.

પ્રો. રસીકલાલ કસ્તુરચંદ ગાંધી

એમ. એ. એલ. એલ. બી

ધર્મેન્દ્રસિંહજી કોલેજ

રાજકોટ ( સૌરાષ્ટ્ર )

\*

મુંબઈ અને ઘાટકોપરમાં મળેલી સભાએ બિનાસર કોન્ફ્રેન્સ તથા સાધુસંમેલનમાં મોકલાવેલ ઠરાવ

હાલ જે વખત શ્રી શ્રવેતાંબર સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ માટે આગમ સંશોધન અને સ્વતંત્ર ટીકાવાળા શાસ્ત્રોદ્ધારની અતિ આવશ્યકતા છે અને જે મહાનુંભાવોએ આ વાત દીર્ઘ દષ્ટિથી પહેલી પોતાના મગજમાં લઈ તે પાર પાડવા મહેનત લઈ રહ્યા છે તેવા મુનિ મહારાજ પંડિતરત્ન શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કે જેઓને સાદડી અધિવેશનમાં સર્વાનુમતે સાહિત્યમંત્રી નીમ્યા છે, તેઓશ્રીની દેખરેખ નીચે અ. ભા. શ્રવે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ જે એક મોટી વગવાળી કમિટી છે તેની મારફતે કામ થઈ રહ્યું છે. જેને પ્રધાનાચાર્યશ્રી તથા પ્રચારમંત્રીશ્રી

તથા અનેક અનુભવી મહાનુભાવોએ પોતાની પસંદગીની મહોર છાપ આપી છે. અને છેલ્લામાં છેલ્લા વડોદરા યુનિવર્સીટીના પ્રોફેસર કેશવલાલ કામદાર એમ. એ. પોતાનું સવિસ્તર પ્રમાણપત્ર આપ્યું છે. તે શાસ્ત્રોદ્ધાર કમિટીના કામને આ સંમેલન તથા કોન્ફેરન્સ હાર્દિક અભિનંદન આપે છે. અને તેમના કામને જ્યાં જ્યાં અને જે જે જરૂર પડે-પડિતોની અને નાણાંની તે તે પોતાની પાસેના ફંડમાંથી અને બહાર જનતા પાસેથી મદદ મળે તેવી ઈચ્છા ધરાવે છે.

આ શાસ્ત્રો અને ટીકાઓને જ્યારે આટલી બધી પ્રશંસાપૂર્વક પસંદગી મળી છે, ત્યારે તે કામને મદદ કરવાની આ કોન્ફેરન્સ પોતાની ફરજ માને છે અને જે કોઈ ત્રુટી હોય તે પં. ર. શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજની સાંનિધ્યમાં જઈ, બતાવીને સુધારવા પ્રયત્ન કરવો. આ કામને ટલ્લે ચઢાવવા જેવું કોઈ પણ કામ સત્તા ઉપરના અધિકારીઓના વાણી કે વર્તનથી ન થાય તે જોવા પ્રમુખ સાહેબને લલામણુ કરે છે.

(સ્થા. જૈન પત્ર તા. ૪-૫-૫૬)

\*

### સ્વતંત્રવિચારક અને નિહર લેખક ‘જૈનસિદ્ધાંત’ના તંત્રી શેઠ નગીનદાસ ગીરધરલાલનો અભિપ્રાય

શ્રી સ્થાનકવાસી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સ્થાપીને પૂ. ઘાસીલાલજી મહારાજને સૌરાષ્ટ્રમાં બોલાવી તેમની પાસે બત્રીસે સૂત્રો તૈયાર કરવાની હિલચાલ ચાલતી હતી ત્યારે તે હિલચાલ કરનાર શાસ્ત્રજ્ઞ શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ સાથે મારે પત્રવ્યવહાર ચાલેલો ત્યારે શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈએ તેમના એક પત્રમાં મને લખેલું કે—

“આપણા સૂત્રોના મૂળ પાઠતપાસી શુદ્ધ કરી સંસ્કૃત સાથે તૈયાર કરી શકે તેવા સ્થાનકવાસી સંપ્રદાયમાં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મ. સિવાય મને કોઈ વિશેષ વિદ્વાન મુનિ જોવામાં આવતા નથી. લાંબી તપાસને અંતે મેં મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીને પસંદ કરેલા છે.”

શેઠ શ્રી દામોદરદાસભાઈ પોતે વિદ્વાન હતા. શાસ્ત્રજ્ઞ હતા તેમ વિચારક પણ હતા. શ્રાવકો તેમજ મુનિઓ પણ તેમની પાસેથી શિક્ષા વાંચના લેતા, તેમ જ્ઞાનચર્યા પણ કરતા. એવા વિદ્વાન શેઠશ્રીની પસંદગી યથાર્થ જ હોય એમાં

નવાઈ નથી. અને પૂ. શ્રી ઘાસીલાલજીના બનાવેલાં સૂત્રો જોતાં સૌ કોઈને ખાત્રી થાય તેમ તે કે દામોદરદાસભાઈએ તેમજ સ્થાનકવાસી સમાજે જેવી આશા શ્રી ઘાસીલાલજી મ. પાસેથી રાખેલી તે બરાબર ફળીભૂત થયેલ છે.

શ્રી વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજે શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સૂત્રો માટે ખાસ પ્રશંસા કરી અનુમતિ આપેલ છે તે ઉપરથી જ શ્રી ઘાસીલાલજી મ. ના સૂત્રોની ઉપયોગિતાની ખાત્રી થશે.

આ સૂત્રો વિદ્યાર્થીને. અભ્યાસીને તેમજ સામાન્ય વાંચકોને સર્વને એક સરખી રીતે ઉપયોગી થઈ પડે છે. વિદ્યાર્થીને તેમજ અભ્યાસીને મૂળ તથા સંસ્કૃત ટીકા વિશેષ કરીને ઉપયોગી થાય તેમ છે. ત્યારે સામાન્ય હિંદી વાંચકને હિંદી અનુવાદ અને ગુજરાતી વાંચકને ગુજરાતી અનુવાદથી આખું સૂત્ર સરળતાથી સમજાય છે.

કેટલાકનો એવો ભ્રમ છે કે સૂત્રો વાંચવાનું કામ આપણું નહિ, સૂત્રો આપણને સમજાય નહિ. આ ભ્રમ તદ્દન ખોટો છે. બીજા કોઈ પણ શાસ્ત્રીય પુસ્તક કરતાં આ સૂત્રો સામાન્ય વાંચકને પણ ઘણી સરળતાથી સમજાઈ જાય છે. સામાન્ય માણસ પણ સમજી શકે તેટલા માટે જ લગવાન મહાવીરે તે વખતની લોકભાષામાં (અર્ધમાગધી ભાષામાં) સૂત્રો બનાવેલાં છે. એટલે સૂત્રો વાંચવા તેમજ સમજવામાં ઘણું સરળ છે.

માટે કોઈ પણ વાંચકને એનો ભ્રમ હોય તો તે કાઢી નાંખવો અને ધર્મનું તેમજ ધર્મના સિદ્ધાંતોનું સાચું જ્ઞાન મેળવવા માટે સૂત્રો વાંચવાને ચૂકવું નહિ. એટલું જ નહિ પણ જરૂરથી પહેલાં સૂત્રો જ વાંચવાં.

સ્થાનકવાસીઓમાં આ શ્રી સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ જે કામ કર્યું છે. અને કરી રહી છે તેવું કોઈ પણ સંસ્થાએ આજ સુધી કર્યું નથી. સ્થાન જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના છેલ્લા રિપોર્ટ પ્રમાણે બીજા છ સૂત્રો લખાયેલ પડ્યા છે, બે સૂત્રો-અનુયોગદ્ધાર અને ઠાણાંગ સૂત્ર-લખાય છે તે પણ થોડા વખતમાં તૈયાર થઈ જશે. તે પછી બાકીના સૂત્રો હાથ ધરવામાં આવશે.

તૈયાર સૂત્રો જલ્દી છપાઈ જાય એમ ઇચ્છીએ છીએ અને સ્થા. બંધુઓ સમિતિને ઉત્તેજન અને સહાયતા આપીને તેમનાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવે એમ ઇચ્છીએ છીએ.

‘જૈન સિદ્ધાંત’ પત્ર-મે ૧૯૫૫



## શ્રુત-લક્ષિત

( પૂઠ આચાર્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મં સાંની આજ્ઞા અનુસાર લખનાર )

દ. સ. ના જૈન મુનિ શ્રી દયાનંદજી મહારાજ

તા. ૨૩-૬-૫૬ શાહપુર, અમદાવાદ

આજે લગભગ ૨૦ વર્ષથી શ્રદ્ધેય પરમપૂજ્ય. જ્ઞાનદિવાકર પંઠ મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મં ચરમ તીર્થંકર ભગવાન મહાવીરના અનુત્તર, અનુપમ ન્યાય યુક્ત, પૂર્વાપર અવિરોધસ્વરૂપ કલ્યાણકારક, ચરમ શીતળ વાણીના દ્યોતક એવા શ્રી જિનાગમ પર પ્રકાશ પાડે છે, તેઓશ્રી પ્રાચીન, પૌર્વાત્ય સંસ્કૃતાદિ અનેક ભાષાના પ્રખર પંડિત છે, અને જિનવાણીનો પ્રકાશ સંસ્કૃત, ગુજરાતી અને હિંદીમાં મૂળ શબ્દાર્થ, ટીકા, વિસ્તૃત વિવરણ, સાથે પ્રકાશમાં લાવે છે. એ જૈન સમાજ માટે અતિ ગૌરવ અને આનંદનો વિષય છે.

ભં મહાવીર અત્યારે આપણી પાસે વિદ્યમાન નથી. પરંતુ તેમની વાણી રૂપે અક્ષરદેહ ગણધર મહારાજેએ શ્રુતપરંપરાએ સાચવી રાખ્યો શ્રુતપરંપરાથી સચવાતું જ્ઞાન ન્યારે વિસ્મૃત થવાનો સમય ઉપસ્થિત થવા લાગ્યો ત્યારે શ્રી દેવદિગ્ગણિ ક્ષમાશ્રમણે વલ્લીપુર-વળામાં તે આગમોને પુસ્તકો રૂપે આરૂઢ કર્યો. આજે આ સિદ્ધાંતો આપણી પાસે છે. તે અર્ધભાગથી ભાષામાં છે. અત્યારે આ ભાષા ભગવાનની, દેવોની તથા જનગણની ધર્મભાષા છે. તેને આપણા શ્રમણો અને શ્રમણીઓ તથા સમુદ્ધુ શ્રાવક શ્રાવિકાઓ મુખપાઠ કરે છે, પરંતુ તેનો અર્થ અને ભાવ ઘણા થોડાઓ સમજે છે.

જિનાગમ એ આપણાં શ્રદ્ધેય પવિત્ર ધર્મસૂત્રો છે. એ આપણી આંખો છે. તેનો અભ્યાસ કરવો એ આપણી સૌની-જૈન માત્રની ફરજ છે. તેને સત્ય સ્વરૂપે સમજાવવા માટે આપણા સહભાગ્યે જ્ઞાનદિવાકર શ્રી ઘાસીલાલ મહારાજે સત્ સંકલ્પ કર્યો છે અને તે લિખિત સૂત્રોને પ્રગટાવી શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિદ્વારા જ્ઞાન પરખ વહેતી કરી છે. આવા અનુપમ કાર્યમાં સકળ જૈનોનો સહકાર અવશ્ય હોવો ઘટે અને તેનો વધારેમાં વધારે પ્રચાર થાય તે માટે પ્રયત્નો કરવા ઘટે.

ભં મહાવીરને ગણધર ગૌતમ પૂછે છે કે હે ભગવાન, સૂત્રની આરાધના કરવાથી શું ફળ પ્રાપ્ત થાય ? ભગવાન તેનો પ્રતિ ઉત્તર આપે છે કે શ્રુતની આરાધનાથી જીવોના અજ્ઞાનનો નાશ થાય છે, અને તેઓ સંસારના કલેશોથી નિવૃત્તિ મેળવે છે, અને સંસાર કલેશોથી નિવૃત્તિ અને અજ્ઞાનનો નાશ થતાં મોક્ષની ફળની પ્રાપ્તિ થાય છે.

આવા જ્ઞાનકાર્યમાં મૂર્તિપૂજક જૈનો, દિગંબરો અને અન્ય ધર્મિઓ હજારો અને લાખો રૂપીયા ખર્ચે છે. હિંદુ ધર્મમાં પવિત્ર મનાતા ગ્રંથ ગીતાના સેંકડો નહિ પણ હજારો ટીકા ગ્રંથો દુનિયાની લગભગ સર્વ ભાષાઓમાં પ્રગટ થયા છે. ઇસાઈ ધર્મના પ્રચારકો તેમના પવિત્ર ધર્મગ્રંથ બાઇબલના પ્રચારાર્થે તેનું જગતની સર્વ



ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી તેને પડતર કરતાં પણ ઘણી ઓછી કિંમતે વેચી ધર્મ-સૂત્રોનો પ્રચાર કરે છે. મુસ્લિમ લોકો પણ તેમના પવિત્ર મનાતા ગ્રન્થ કુરાનનું અનેક ભાષાઓમાં ભાષાંતર કરી સમાજમાં પ્રચાર કરે છે. આપણે પૈસા પરનો મોહ ઉતારી ભગવાનના સિદ્ધાંતોનો પ્રચાર કરવા માટે તન, મન, ધન સમર્પણ કરવાં જોઈએ. અને સૂત્ર પ્રકાશનના કાર્યને વધુ ને વધુ વેગ મળે તે માટે સક્રિય પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. આવા પવિત્ર કાર્ય માં સાંપ્રદાયિક મતભેદો સૌએ ભૂલી જવા જોઈએ અને શુદ્ધ આશયથી થતા શુદ્ધ કાર્યને અપનાવી લેવું જોઈએ. સમિતિના નિયમાનુસાર રૂ. ૨૫૧૭ ભરી સમિતિના સભ્ય બનવું જોઈએ. ધાર્મિક અનેક ખાતાઓના મૂકાબલે સૂત્ર પ્રકાશનનું-જ્ઞાનપ્રચારનું આ ખાતું સર્વશ્રેષ્ઠ ગણવું જોઈએ.

આ કાર્યને વેગ આપવાની સાથે સાથે એ આગમો-ભગવાનની એ મહાવાણીનું પાન કરવા પણ આપણે હરહંમેશ તત્પર રહેવું જોઈએ. જેથી પરમ શાંતિ અને જીવનસિદ્ધિ મેળવી શકાય. (સ્થા. જૈન તા. ૫-૭-૫૬)

\*

શ્રી. અ. ભા. ૨વે. સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનાં પ્રમુખ શ્રી વગેરે. રાણપુર

પરમ પવિત્ર સૌરાષ્ટ્રની પુણ્ય ભૂમિ પર ન્યારથી શાંત-શાસ્ત્રવિશારદ અપ્રમાદિ પૂજ્ય આચાર્ય મહારાજ શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં પુનીત પગલાં થયાં છે ત્યારથી ઘણા લાંબા કાળથી લાગુ પડેલ જ્ઞાનાવરણીય કર્મનાં પડળ ઉતારવાનો શુભ પ્રયાસ થઈ રહ્યો છે. અને જે પ્રવચનની પ્રભાવના તેઓશ્રી કરી રહ્યા છે તે અનંત ઉપકારક કાર્યમાં તમે જે અપૂર્વ સહાય આપી રહ્યા છો તે માટે તમો સર્વને ધન્ય છે અને એ શુભ પ્રવૃત્તિના શુભ પરિણામોનો જનતા લાભ લે છે, મને તો સમજાય છે કે સાધુજી છટે ગુણસ્થાનકે હોય છે પણ પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ તો બહુધા સાતમે અપ્રમત્ત ગુણસ્થાનકે જ રહે છે. એવા અપ્રમત્ત માત્ર પાંચ-સાત સાધુઓ જો સ્થાનકવાસી જૈનસમાજમાં હોય તો સમાજનું શ્રેય થતાં જરાએ વાર ન લાગે સમાજ-કાશમાં સ્થા. જૈન સંપ્રદાયનો દિવ્ય પ્રભાકર જળહળી નીકળે પણ વો દિન.....

શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિને મારી એક નમ્ર સુચના છે કે-પૂજ્યશ્રીની વૃદ્ધાવસ્થા છે, અને કાર્યપ્રણાલિકા ચુવાનોને શરમાશે તેવી છે. તેમને ગામેગામ વિહાર કરવું અને શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય કરવું તેમાં ઘણાં શારીરિક માનસિક અને વ્યવહારિક મુશ્કેલી વેઠવી પડે છે, તો કોઈ યોગ્ય સ્થળ કે જ્યાંના શ્રાવકો ભક્તિ વાળા હોય. વાડાનાં રાગના વિષથી અલિપ્ત હોય. એવા કોઈ સ્થળે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય પૂર્ણ થાય ત્યાં સુધી સ્થિરતા કરી શકે એના માટે પ્રબંધ કરવો જોઈએ. બીજા કોઈ એવા સ્થળની અનુકુળતા ન મળે તો છેવટ અમદાવાદમાં યોગ્ય સ્થળે રહેવાની સગવડ કરી અપાય તો વધુ સારું. મહારી આ સુચના પર ધ્યાન આપવા ફરી યાદ આપું છું. ફરીવાર પૂજ્ય આચાર્યશ્રીને અને તેમના સત્કાર્યના સહાયકોને મારા અભિનંદન પાઠવું છું તે સ્વીકારશે. લી. સદાનંદી જૈનમુનિ છોટાલાલજી

## “જૈનસિદ્ધાંતના” તંત્રીશ્રીનો અભિપ્રાય

સ્થાનકવાસીઓમાં પ્રમાણભૂત સૂત્રો બહાર પાડનારી આ એકની એક સંસ્થા છે, અને એના આ છેલ્લા રિપોર્ટ ઉપરથી જણાય છે કે-તેણે ઘણી સારી પ્રગતી કરી છે તે જોઈ આનંદ થાય છે.

મૂળ પાઠ, ટીકા, હિંદી તથા ગુજરાતી અનુવાદ સહિત સૂત્રો બહાર પડવાં એ કાંઈ સહેલું કામ નથી એ એક મહાભારત કામ છે અને તે કામ આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ ઘણી સફળતાથી પાર પાડી રહી છે તે સ્થાનકવાસી સમાજ માટે ઘણા ગૌરવનો વિષય છે અને સમિતિ ધન્યવાદને પાત્ર છે.

સમિતિ તરફથી નવસૂત્રો બહાર પડી ચુક્યાં છે, હાલમાં ત્રણ સૂત્રો છપાય છે. નવ સૂત્રો લખાઈ ગયાં છે અને જંબૂદ્વીપપ્રસન્નિ તથા નંદીસૂત્ર તૈયાર થઈ રહ્યાં છે.

હાલમાં મંત્રી શ્રી સાંકરચંદ બાઈચંદ સમિતિના કામમાં જ તેમનો આખો વખત ગાળે છે અને સમિતિના કામકાજને ઘણો વેગ આપી રહ્યા છે. તેમના ખંત માટે ધન્યવાદ.

અને આ મહાભારત કામના મુખ્ય કાર્યકર્તા તો છે વયોવૃદ્ધ પંડિત મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ. મૂળ પાઠનું સંશોધન તથા સંસ્કૃત ટીકા તેઓશ્રી જ તૈયાર કરે છે. મુનિશ્રીનો આ ઉપકાર આખાય સ્થા. જૈન સમાજ ઉપર ઘણો મહાન છે. એ ઉપકારનો બદલો તો વાળી શકાય તેમજ નથી.

પરંતુ આ સમિતિના મેમ્બર બની તેના બહાર પડેલાં સૂત્રો ઘરમાં વસાવી તેનું અધ્યયન કરવામાં આવે તો જ મહારાજશ્રીનું થોડું ઋણ ચૂકાઈ ગયું.

ભગવાને કહ્યું છે કે પદ્મં ણાણં તત્ત્વો દયા પહેલું જ્ઞાન પછી દયા, દયા ધર્મં યથાર્થં સમજવેાં હોય તો ભગવાનની વાણીરૂપ આપણા સૂત્રો વાંચવાં જ જોઈએ તેનું અધ્યયન કરવું જોઈએ અને તેનો ભાવાર્થ સમજવો જોઈએ.

એટલા માટે શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિના સર્વ સૂત્રો દરેક સ્થા. જૈને પોતાના ઘરમાં વસાવવાં જ જોઈએ સર્વ ધર્મજ્ઞાન આપણા સૂત્રોમાંજ સમાયેલું છે અને સૂત્રો સહેલાઈથી વાંચીને સમજી શકાય છે, માટે દરેક સ્થા. જૈન આ સૂત્રો વાંચે એ ખાસ જરૂરનું છે.

“જૈનસિદ્ધાંત” ડીસેમ્બર-૫૬

### શ્રી ઉપાસકદશાંગસૂત્રને માટે અભિપ્રાય

મૂળ સૂત્ર તથા પૂજ્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજે બનાવેલ સંસ્કૃત છાયા તથા ટીકા અને હિંદી તથા ગુજરાતી-અનુવાદ સહિત.

પ્રકાશક-અ. ભા. શ્રવે. સ્થાનકવાસી જૈનશાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ, ગરેડીઆ કુવા રોડ, શ્રીન લોજ પાસે, રાજકોટ. (સૌરાષ્ટ્ર) પૃષ્ઠ ૬૧૬ ખીજી આવૃત્તિ બેવડું (મોટું) કદ. પાકું પુકું, જેકેટ સાથે સને ૧૯૫૬ કિંમત રૂ. ૮-૮-૦

આપણા મૂળ બાર અંગ સૂત્રોમાંનું ઉપાસકદશાંગ એ સાતમું અંગ સૂત્ર છે. એમાં ભગવાન મહાવીરના દશ ઉપાસકો-શ્રાવકોનાં જીવનચરિત્રો આપેલાં છે, તેમાં પહેલું ચારિત્ર આનંદ શ્રાવકનું આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે જૈનધર્મ અંગીકાર કર્યો અને બાર વ્રત ભગવાન મહાવીર પાસે અંગીકાર કરી પ્રતિજ્ઞા (પ્રત્યાખ્યાન) લીધાં તેનું સવિસ્તર વર્ણન આવે છે, તેની અંતર્ગત અનેક વિષયો જેવા કે, અભિગમ, લોકાલોકસ્વરૂપ, નવતત્ત્વ નરક, દેવલોક વગેરેનું વર્ણન પણ આવે છે.

આનંદ શ્રાવકે બાર વ્રત લીધાં તે બાર વ્રતની વિગત અતિચારની વિગત વગેરે બધું આપેલું છે. તેજ પ્રમાણે ખીજા નવ શ્રાવકોની પણ વિગત આપેલ છે.

આનંદ શ્રાવકની પ્રતિજ્ઞામાં અરિહંતચેદ્યાઈ શબ્દ આવે છે. મૂર્તિપૂજકો મૂર્તિપૂજા સિદ્ધ કરવા માટે તેનો અર્થ અરિહંતનું ચૈત્ય (પ્રતિમા) એવો કરે છે. પણ તે અર્થ તદ્દન ખોટો છે. અને તે જગ્યાએ આગળ પાછળના સંબંધ પ્રમાણે તેનો એ ખોટો અર્થ બંધ બેસતો જ નથી તે મુનિશ્રી ઘાસીલાલજીએ તેમની ટીકામાં અનેક રીતે પ્રમાણ આપી સાબિત કરેલ છે અને અરિહંતચેદ્યાઈનો અર્થ સાધુ થાય છે. તે બતાવી આપેલ છે.

આ પ્રમાણે આ સૂત્રમાંથી શ્રાવકના શુદ્ધ ધર્મની માહિતી મળે છે તે ઉપરાંત તે શ્રાવકોની ઋદ્ધિ, રહેઠાણ. નગરી વગેરેના વર્ણનો ઉપરથી તે વખતની સામાજિક સ્થિતિ, રીતરિવાજ રાજ્યવસ્થા વગેરે બાબતોની માહિતી મળે છે.

એટલે આ સૂત્ર દરેક શ્રાવકે અવશ્ય વાંચવું જોઈએ, એટલું જ નહિ પણ વારંવાર અધ્યયન કરવા માટે ઘરમાં વસાવવું જોઈએ.

પુસ્તકની શરૂઆતમાં વર્ધમાન શ્રમણસંઘના આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજનું સંમતિપત્ર તથા ખીજા સાધુઓ તેમજ શ્રાવકોના સંમતિપત્રો આપેલ છે, તે સૂત્રની પ્રમાણબૂતતાની ખાત્રી આપે છે.

“જૈનસિદ્ધાંત” જાન્યુઆરી-૫૭



એકડો સદીકેટો ઉપરાંત હાલમાં મળેલ  
કેટલાક તાલ અભિપ્રાયો

## શાસ્ત્રોદ્ધારના કાર્યને વેગ આપો

તંત્રીસ્થાનેથી (જૈનજ્યોતિ) તા. ૧૫-૬-૫૭

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ ઠાણા ૪ હાલમાં અમદાવાદ મુકામે સરસપુરના સ્થા. જૈન ઉપાશ્રયમાં ગિરાજમાન છે. તેઓ શ્રી શાસ્ત્રોદ્ધારનું કાર્ય ખૂબ જ ખંત અને ઉત્સાહથી વૃદ્ધવયે પણ કરી રહ્યા છે. તેઓશ્રી વૃદ્ધ છે છતાં પણ આખો દિવસ શાસ્ત્રની ટીકાઓ લખી રહ્યા છે. આજ સુધીમાં તેમણે લગભગ ૨૦ જેટલાં શાસ્ત્રોની ટીકાઓ લખી નાખી છે અને બાકીનાં સૂત્રોની ટીકા જેમ અને તેમ જલદી પૂર્ણ કરવી તેવા મનોરથ સેવી રહેલ છે. સ્થા. જૈન સમાજમાં શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવાનો આ પ્રથમ જ પ્રયાસ છે અને તે પ્રયાસ સંપૂર્ણ અને એવી અમે શાસનદેવ પ્રત્યે પ્રાર્થના કરીએ છીએ. આજ સુધી ઘણા મુનિવરોએ શાસ્ત્રોનું કામ શરૂ કરેલ છે પણ કોઈએ પૂર્ણ કરેલ નથી. પૂજ્યશ્રી અમુલખઋષીજી મહારાજે બત્રીસ શાસ્ત્રો ઉપર હિંદી અનુવાદ કરેલ અને સંપૂર્ણ બનેલ, ત્યારબાદ આચાર્ય શ્રી આત્મારામજી મહારાજશ્રીએ હિંદી ટીકા કેટલાક શાસ્ત્રો ઉપર લખેલ પણ ઘણાં શાસ્ત્રો બાકી રહી ગયાં. પૂજ્ય હસ્તિમલજી મહારાજે એક બે શાસ્ત્રો ઉપરની ટીકાઓના અનુવાદો કરેલ. પૂજ્ય શ્રી જવાહિરલાલ મહારાજશ્રીએ સૂયગડાંગસૂત્ર ટીકા સહિત હિન્દી અનુવાદ સાથે કરેલ. શ્રી સૌભાગ્યમલજી મહારાજે આચારાંગની હિંદી ટીકા લખેલ. પણ સંપૂર્ણ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા હજી સુધી સ્થા. જૈન સાધુઓ તરફથી થયેલ નથી. જ્યારે પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજશ્રીએ ૨૦ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા તેનો હિંદી ગુજરાતી અનુવાદ કરાવેલ છે આથી હવે આશા બંધાય છે કે તેઓશ્રી બત્રીસે બત્રીસ શાસ્ત્રો ઉપર સંસ્કૃત ટીકા લખવામાં સફળ થશે અને શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિએ આજ સુધી ૧૦ થી ૧૨ શાસ્ત્રો છપાવી પણ હીંદી છે અને હજી પણ તે શાસ્ત્રો વિશેષ જલદી છપાય તે માટે શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ સંપૂર્ણ પ્રયત્ન કરી રહેલ છે તે ધન્યવાદને પાત્ર છે.

જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિના ડૉ. રમણુ ભરીને લાઇફ મેમ્બર થનારને તમામ શાસ્ત્રો શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તરફથી ભેટ મળે છે. આ રીતે એક પંથ અને દો કાળ. બન્ને રીતે લાલ થાય તેમ છે. ડૉ. રમણુ માં ૫૦૦ રૂપિયાની કિંમતમાં શાસ્ત્રો મળે એ પણ મોટો લાલ છે અને પ્રવચનની પ્રભાવના કરવાનો ધર્મ. લાલ પણ મળે છે.



આ સાથે પૂજ્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજના સુશિષ્ય પં. સિનશ્રી કનૈયા-  
લાલજી મહારાજ મલાડ મુકામે આતુર્ભાસ બિરાજે છે અને તેઓશ્રી શાસ્ત્રોના  
મેમ્બરો કરવા માટે અથાગ પ્રયત્ન કરીને પ્રવચનની સેવા બજાવી રહ્યા છે. અને  
અત્યાર સુધીમાં મુ'બઈ તેમજ પરાઓના લગભગ ૪૦ જેટલા ગૃહસ્થો લાઇફ  
મેમ્બર બની ગયા છે અને મુ'બઈમાં લગભગ ૩૦૦ જેટલા મેમ્બરો થાય તે  
ધ્વિષ્ટવા યોગ્ય છે. શ્રીમંત ગૃહસ્થો હજારો રૂપિયા પોતાના ઘર ખર્ચમાં તેમજ  
મોજશોખના કામોમાં તેમજ વ્યવહારિક કામોમાં વાપરી રહ્યા છે તો આવા  
શાસ્ત્રોદ્ધાર જેવા પવિત્ર કાર્યમાં રૂપિયા વાપરશે તો ધર્મની સેવા કરી ગણાશે.  
અને બદલામાં ઉત્તમ આગમસાહિત્યની એક લાયબ્રેરી બની જશે. જેતું વાંચન  
કરવાથી આત્માને શાંતિ મળશે અને શાસ્ત્રાજ્ઞ પ્રમાણે વર્તવાથી જીવન સફળ થશે.

---

શતાવધાની મુનશ્રી જ્યંતિલાલજી મહારાજશ્રીનો અમદાવાદનો પત્ર “ સ્થાનકવાસી જૈન ” તા. ૫-૯-૫૭ ના અંકમાં છપાએલ છે જે નીચે મુજબ છે.

સૂત્રોના મૂળ પાઠોમાં ફેરફાર હોઈ શકે ખરો ?

તા. ૭-૮-૫૭ના રોજ અત્રે બિરાજતા શાસ્ત્રોદ્ધારક આચાર્ય મહારાજશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ પાસે, મારા ઉપર આવેલ એક પત્ર લઈને હું ગયો હતો, તે સમયે મારે પૂ. મ. સા. સાથે જે વાતચીત થઈ તે સમાજને જાણ કરાવા સારૂ લખું છું.

‘ શાસ્ત્રોત્તુ’ કામ એક ગહન વસ્તુ છે. અપ્રમાદી થઈ તેમાં અવિરત પ્રયત્નો કરવા જોઈએ. સંપૂર્ણ શાસ્ત્રોત્તુ જ્ઞાન તેમજ દરેક પ્રકારની ખાસ ભાષાઓનું જ્ઞાન હોય તોજ આગમોદ્ધારકનું કાર્ય સફળતાથી થાય છે. આ પ્રકારનો પ્રયત્ન હાલ અમદાવાદ ખાતે સરસપુર જૈન સ્થાનકમાં બિરાજતા પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ કરી રહ્યા છે. શાસ્ત્રલેખનનું આ કાર્ય થઈ રહ્યું છે, તેમાં અનેક વ્યક્તિઓને અનેક પ્રકારની શંકાઓ થાય છે તેમાં શાસ્ત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થાય છે? કરવામાં આવે છે? એવો પ્રશ્ન પણ કેટલાકને થાય છે અને તેવો પ્રશ્ન થાય ને સ્વાભાવિક છે; કેમકે અમુક મુનિરાજો તરફથી પ્રગટ થયેલ સૂત્રોના મૂળ પાઠમાં ફેરફાર થયેલા છે. જેથી આ કાર્યમાં પણ સમાજને શંકા થાય.

પણ ખરી રીતે જોતાં, અત્યારે જે શાસ્ત્રોદ્ધારનું કામ ચાલી રહ્યું છે તે વિષે સમાજને ખાત્રિ આપવામાં આવે છે કે, શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ તરફથી અત્યાર સુધીમાં પ્રગટ થયેલાં આગમોના મૂળ પાઠમાં જરાપણ ફેરફાર કરવામાં આવેલ નથી અને ભવિષ્યમાં જે સૂત્રો પ્રગટ થશે તેમાં ફેરફાર થશે નહિ તેની સમાજ નોંધ દ્યે.

લી.

શતાવધાની શ્રી જ્યંત મુનિ-અમદાવાદ



## શ્રી અખિલ ભારત શ્વેતામ્બર સ્થાનકવાસી જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિનો ટુંક પરિચય

સ્થાનકવાસી સમાજની આ એકની એક સંસ્થા છે કે જેણે અત્યાર સુધીમાં તેર સૂત્રો છપાવી બહાર પાડી દીધાં છે. સાત સૂત્રો છપાય છે અને બીજાં કેટલાક છાપવા માટે તૈયાર થઈ ચૂક્યા છે.

આ પ્રમાણે આ સંસ્થાએ મહાન્ પ્રગતિ સાધી છે તેનો ટુંક પરિચય આ પત્રિકામાં આપેલ છે તે વાંચી જઈ સર્વ સ્થા. જૈન ભાઈબહેનોએ આ સંસ્થાને યથાશક્તિ મદદ કરી તેના કાર્યને હજી વિશેષ વેગવાન બનાવવાની જરૂર છે.

ખાલી ઘડો વાગે ઘણો એમ સ્થા. કેન્દ્ર-સ જેમ ખોટાં બણ્યાં કુંકનારી સંસ્થાની કિંમત નથી, ત્યારે નક્કર કામ કરનારી આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને દરેક પ્રકારે ઉત્તેજન આપવાની દરેક સ્થાનકવાસી જૈનની અનિવાર્ય ફરજ છે.

અને આ સર્વ સૂત્રો તૈયાર કરનાર પૂજ્ય મુનિશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનો સ્થાનકવાસી સમાજ ઉપર ઘણો મહાન ઉપકાર છે. વયોવૃદ્ધ હોવા છતાં તેઓશ્રી જે મહેનત લઈ સૂત્રો તૈયાર કરાવે છે તેવું કામ હજી સુધી બીજા કોઈએ કર્યું નથી અને બીજા કોઈ કરી શકશે કે નહિ તે પણ શંકાભર્યું છે. પૂજ્ય મુનિશ્રીના આ મહાન્ ઉપકારનો કિંચિત બદલો સમાજે આ શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિને બની શકતી સહાય કરીને વાળવાનો છે. સ્થાનકવાસી સમાજ જ્ઞાનની કદર કરવામાં પાછો હોય તેમ નથી એવી અમે આશા રાખીએ છીએ.

“જૈનસિદ્ધાંત પત્ર” એક્ટોમ્બર ૧૯૫૭

\*



## શ્રી દશવૈકાલિક તથા ઉગાસકદશાંગ સૂત્રો

ગુજરાતી ભાષામાં અનુવાદ થયેલાં પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજ વિરચિત શ્રી ઉપરોક્ત બે સૂત્રો જૈન ધર્મ પાળતા દરેક ઘરમાં હોવા જ જોઈએ. તે વાંચવાથી શ્રાવક ધર્મ અને શ્રમણ ધર્મના આચારનું જ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકે છે અને શ્રાવકો પોતાની નિરવધ અને એષણિય સેવા શ્રમણ પ્રત્યે બજાવી શકે છે. વર્તમાનકાળે શ્રાવકોમાં તે જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે અંધશ્રદ્ધાએ શ્રમણ વર્ગની વૈયાવચ્ચ તો કરી રહેલ છે. પરંતુ ‘કલ્પ શુ’ અને અકલ્પ શુ’ એનું જ્ઞાન નહિ હોવાને લીધે પોતે સાવધ સેવા અર્પી પોતાના સ્વાર્થને ખાતર શ્રમણ વર્ગને પોતાને સહાયક થવામાં ઘસડી રહ્યા છે, અને શ્રમણ વર્ગની પ્રાયઃ કુસેવા કરી રહ્યા છે. તેમાંથી બચી લાભનું કારણ થાય અને શ્રમણને યથાતથ્ય સેવા અર્પી તેમને પણ જ્ઞાનદર્શન ચારિત્રની આરાધના કરવામાં સહાયક થઈ પોતાના જ્ઞાનદર્શન ચારિત્રની આરાધના કરી સુગતિ મેળવી શકે. શ્રમણની યથાતથ્ય સેવા કરવી તે અવશ્ય ગૃહસ્થની ફરજ છે.

પૂજ્ય શ્રી ઘાસીલાલજી મ. શાસ્ત્રોદ્ધારનું અનુવાદન ત્રણ ભાષામાં રૂડી રીતે કરી રહ્યા છે અને રૂપિયા ૨૫૧૭ ભરી મેમ્બર થનારે રૂ. ૪૦૦-૫૦૦ ની લગભગ કીંમતના બત્રીસે આગમો ફ્રી મળી શકે છે તો તે રૂ. ૨૫૧૭ ભરી મેમ્બર થઈ બત્રીસે આગમો દરેક શ્રાવક ઘરે મેળવવા જોઈએ. બત્રીસે શાસ્ત્રોના લગભગ ૪૮ પુસ્તકો મળશે. તો તે લાભ પોતાની નિર્જરા માટે પુન્યાનુબંધી પુન્ય માટે જરૂર મેળવે. ઉપરોક્ત બંને સૂત્રોની કીંમત સમિતિ કંઈક ઓછી રાખે તો હરકોઈ ગામમાં શ્રીમંત હોય તે સૂત્રો લાવી અરધી કીંમતે, મફત અથવા પૂરી કીંમતે લેનારની સ્થિતિ જોઈ દરેક ઘરમાં વસાવી શકે.

—એક ગૃહસ્થ

નોંધ—ઉપરની સુચનાને અમે આવકારીએ છીએ. આવાં સૂત્રો દરેક ઘરમાં વસાવવા યોગ્ય તેમજ દરેક શ્રાવકે વાંચવા યોગ્ય છે. તત્ત્રી—

“રત્નજ્યોત” પત્ર

તા. ૧-૧૦-૫૭

પૂજ્ય આચાર્યશ્રી ઘાસીલાલજી મહારાજનાં  
બનાવેલાં સૂત્રો

કાશ્મીર.....થી .....કન્યાકુમારી

તેમજ કરાંચી.....થી.....કલકત્તા

સુધી

દરેક સ્થળે હોંશથી વંચાય છે.

કારણ કે

આવી રીતે શાસ્ત્રો તૈયાર કરવાનું અનોખું કાર્ય  
હજી સુધી કોઈ કરી શક્યું નથી

\* \* \*

શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સમાજ

ઉપરાંત

શ્રી દેરાવાસી સંપ્રદાયના મહાન આચાર્યશ્રી રામવિજયસૂરીજી  
તથા અન્ય સુનિવરોએ

તેમજ

તેરાપંથી મહાસભા કલકત્તાવાળાએ આ સૂત્રો અપનાવ્યાં છે.

\* \* \*

દેશ-પરદેશના મેમ્બરો સૂત્રો વાંચી જૈન ધર્મના શ્રુતજ્ઞાનનો અણમોલો  
લાભ લઈ રહ્યા છે.

હમણાંજ લંડનની ઈન્ડિયા એક્ઝીસ લાયબ્રેરીએ આ સૂત્રો મંગાવ્યાં છે.

\* \* \*

આપ રૂપીઆ ૨૫૧-૦-૦ મોકલી મેમ્બર તરીકે નામ નોંધાવી હપ્તે હપ્તે  
લગભગ રૂપીઆ પાંચસો સુધીની કિંમતનાં શાસ્ત્રો વિના મૂલ્યે મેળવી શકો છો.

વધુ વિગત માટે લખો :

ડૉ. ગ્રીન હોલ પાસે,  
ગરેડીઆકુવા રોડ  
રાજકોટ.

}

મંત્રી  
શ્રી અખિલ ભારત પ્રવે. સ્થા. જૈન  
શાસ્ત્રોદ્ધારસમિતિ

श्री आचाराङ्गसूत्र प्रथमश्रुतस्कन्ध प्रथम अध्ययनका

विषयानुक्रम

	विषय-	पृष्ठाङ्क-
१	मङ्गलाचरण	१-३
२	अवतरणा	३-१५९
	(१) भगवान् के वचनों में कल्पवृक्ष के फूलों के पच्चीस (२५) गुणोंकी उपमा	४-१३
	(२) भगवान् की वाणी के ३५ अतिशय	१४-१९
	(३) अनुयोग (४)	२०-१५८
	(१) चरणकरणानुयोग	२०-२३
	(२) धर्मकथानुयोग	२३-२४
	(१) आक्षेपाप्यादिधर्मकथा (४)	२५-३१
	(२) धर्ममहिमा	३२-३४
	(३) गणितानुयोग	३५-५३
	प्रव्रज्यादानसमयनिर्णय	३६-५३
	(१) मासविचार	३७
	(२) पक्षविचार	३८
	(३) तिथिविचार	३८
	(४) वारविचार	३९
	(५) नक्षत्रविचार	३९
	(६) योगविचार	४१
	(७) करणविचार	४१
	(८) लग्नविचार	४६
	(९) ग्रहविचार	४६
	(१०) शीघ्रप्रव्रज्यासमयनिरूपण	४७



विषय-	पृष्ठाङ्क-
(११) केशलुञ्चन	५१
(१२) प्रथमगोचरीविचार	५२
(१३) नूतनपात्रव्यापारण	५३
(१४) आचार्यादिपदप्रदानसमय	५३
(४) द्रव्यानुयोग	५३-१५९
द्रव्यलक्षण	५४
पर्यायलक्षण	५८
द्रव्यविभाग ( भेद-६ )	६१
[१] धर्मास्तिकायस्वरूप	६३
[२] अधर्मास्तिकायस्वरूप	६७
[३] आकाशास्तिकायस्वरूप	७२
[४] कालनिरूपण	८२
कालशब्दव्युत्पत्ति	८२
कालसिद्धि	८३
काललक्षण	८४
कालस्वरूप	८८
[५] पुद्गलास्तिकाय	९६
पुद्गलशब्दार्थ	९६
पुद्गललक्षण	९७
पुद्गलप्रदेशसंख्या	९८
पुद्गलक्षेत्रस्थिति	९८
पुद्गलभेद	१०४
परमाणुस्वरूप	१०५
स्कन्धस्वरूप और उसके भेद	१०८
परमाणुबन्धकारण	११२
परमाणुबन्धव्यवस्था-कोष्टक	१२१

विषय-	पृष्ठाङ्क-
[६] जीवास्तिकाय	१२२
जीवशब्दार्थ	१२२
जीव स्वरूप भाव और	
उसके भेद-५	१२४
(१) औपशमिक भाव	१२५
(२) क्षायिक भाव	१२६
(३) क्षायोपशमिक भाव	१२७
(४) औदयिक भाव	१२७
(५) पारिणामिक भाव	१२८
जीव का स्थितिक्षेत्र	१३०
जीव की हास-वृद्धि	१३२
जीव की ऊर्ध्वगति	१३४
जीवलक्षण	१३५
इति जीवास्तिकाय	१४०
षड्द्रव्य विचार	१४१
जीवस्कन्ध विचार	१४३
षड्द्रव्यों का सक्रिय-	
निष्क्रिय विचार—	१४५
व्यवहारनय को लेकर	
षड्द्रव्य विचार—	१४७
षड्द्रव्यों के विषय में—	
कर्तृत्वाकर्तृत्वनिरूपण	१४७
व्यवहार नय-(६)	१४८
(१) शुद्धव्यवहार नय	१४८
(२) अशुद्धव्यवहार नय	१५०
(३) शुभव्यवहार नय	१५१
(४) अशुभव्यवहार नय	१५२

विषय—	पृष्ठाङ्क
(५) उपचरितव्यवहार नय	१५२
(६) अनुपचरितव्यवहार नय	१५४
जीव के स्वरूप में सदृश- विसदृश विचार	१५६
इति अवतरण सम्पूर्ण	१५९
सूत्र का उपक्रम	१५९
सूत्र प्रथम	१६०
‘भग’ शब्दार्थ	१६१
सूत्र द्वितीय ( संज्ञा )	१६४-१९६
संज्ञा के भेद (१६)	१६६
(१) आहारसंज्ञा	१६७
(२) भयसंज्ञा	१६९
(३) मैथुनसंज्ञा	१६९-१७०
(४) परिग्रहसंज्ञा	१७०
(५) क्रोधसंज्ञा	१७१
(६) मानसंज्ञा	१७१
(७) मायासंज्ञा	१७२
(८) लोभसंज्ञा	१७२
(९) लोकसंज्ञा	१७२-१७३
(१०) ओघसंज्ञा	१७३
(११) सुखसंज्ञा	१७३
(१२) दुःखसंज्ञा	१७४
(१३) मोहसंज्ञा	१७४
(१४) विचिकित्सासंज्ञा	१७४-१७५
(१५) शोकसंज्ञा	१७५
(१६) धर्मसंज्ञा	१७५-१७६
ज्ञानसंज्ञा के भेद-(५)	१७६



विषय—	पृष्ठाङ्क—
(१) मतिज्ञान	१७६
(२) श्रुतज्ञान	१७७
(३) अवधिज्ञान	१७९
(४) मनःपर्ययज्ञान	१८१
(५) केवलज्ञान	१८४
मतिज्ञान के भेद (५)	१८५-१९०
ईहा	१८५-१८६
अपोह	१८६-१८७
मीमांसा	१८७
मार्गणा	१८७
गवेषणा	१८८
संज्ञा	१८८
स्मृति	१८८-१८९
मति	१९०
प्रज्ञा	१९०
सूत्र तृतीय (संज्ञा)	१९५-२०२
तीन प्रकार का जन्म	१९८
(१) संमूर्च्छनजन्म	१९८-१९९
(२) गर्भजन्म	१९९-२००
(३) उपपातजन्म	२०१
सूत्र चतुर्थ (संज्ञा)	२०२-२०८
सूत्र पञ्चम	२०९-३९७
आत्मवादिप्रकरण	२१०-२६८
आत्मशब्दार्थ	२११
आत्मास्तित्वसिद्धि	२१३
आत्म का द्रव्यत्व	२२८
आत्माका स्वरूप (१३)	२३३

विषय-	पृष्ठाङ्क-
(१) जीवत्वनिरूपण	२३३
(२) नित्यत्वनिरूपण	२३७
(३) चेतनावच्चनिरूपण	२४३
(४) उपयोगवच्चनिरूपण	२४४
(५) परिणामित्वनिरूपण	२४७
(६) प्रभुत्वनिरूपण	२४८
(७) कर्तृत्वनिरूपण	२५०
(८) भोक्तृत्वसिद्धि	२५३
(९) शरीरपरिणामत्वसिद्धि	२५५
(१०) अमूर्त्तत्वनिरूपण	२५९
(११) प्रतिशरीरभिन्नत्वसिद्धि	२६३
(१२) पौद्गलिककर्मसयुक्तत्वसिद्धि	२६३
(१३) ऊर्ध्वगतिस्वभावत्वसिद्धि	२६८
इति आत्मवादि प्रकरण	२६८
लोकवादिप्रकरण	२६९-२९९
षड्जीवनिकाय	२७०-२७१
(१) पृथिवीकायभेद	२७१
(२) अप्कायभेद	२७३
(३) तेजस्कायभेद	२७४
(४) वायुकायभेद	२७४-२७५
(५) वनस्पतिकायभेद	२७५-२७६
(६) त्रसकायभेद	२७६
(१-४) द्वित्रिचतुरिन्द्रियभेद	२७७-२७८
(६) पञ्चेन्द्रियभेद (४)	२७९
मनुष्यभेद	२८०
अकर्मभूमि	२८२
देवनिकाय (४)	२८३

विषय	पृष्ठाङ्क
(१) भवनपतिदेवभेद	२८४
(२) व्यन्तरदेवभेद	२८६
(३) ज्योतिष्कदेवभेद	२८७
(४) वैमानिकदेवभेद	२८८
कल्पातीत	२९४
षड्जीवनिकायभेदसंकलन	२९५
जीवसंख्या	२९८
कर्मवादिप्रकरण	२९९
(१) कर्मस्वरूप	३००
(२) कर्मसिद्धि	३०१
(३) कर्म का मूर्त्तत्व	३१२
(४) जीव और कर्म का संबन्ध	३१३
(५) कर्म का अनादित्व	३१७
(६) अकर्मवादिमतनिराकरण	३१८
(७) बन्धस्वरूपनिरूपण	३२०
(८) बन्धकारणनिरूपण	३२५
(१) प्रकृतिबन्ध	३३२
आठ कर्मों के लक्षण	३३३
(२) स्थितिबन्ध	३३४
स्थितिबन्धकोष्ठक	३३६-३३७
(३) अनुभावबन्ध	३३८
पुण्यपापकर्मनिरूपण	३४४
सर्वघाति प्रकृतियाँ (२०)	३४७
देशघाति प्रकृतियाँ (२५)	३५२
अघाति प्रकृतियाँ (७५)	३५६
उत्तरप्रकृतिसंख्या (१४८)	३५८-३७४



विषय-	पृष्ठाङ्क
कर्मक्षयविचार	३७४
इति कर्मवादिप्रकरण	३८३
क्रियावादिप्रकरण	३८३-३९७
प्राणातिपातक्रिया	३८६
मृगवध में उद्यत की क्रिया	३८८
कुसूल में लोह डालने वाले की क्रिया	३८९
धनुष से बींधने वाले की क्रिया	३९०
वृष्टिज्ञान के लिये हस्तादि-	
फैलाने वाले की क्रिया	३९१
ताड़ पर चढ़ कर उसके फल तोड़नेवाले	
की क्रिया	३९२
अठारह पापस्थान	३९२-३९७
(१) प्राणातिपात	३९२
(२) मृषावाद	३९४
(३) अदत्तादान	३९४
(४) मैथुन	३९४-३९५
(५) परिग्रह	३९५
(६-१८) क्रोध से मिथ्यादर्शनशल्यतक	३९५-३९७
इति क्रियावादि प्रकरण	३९७
छठा सूत्र ( कर्मसमारम्भ )	३९७-४०१
सूत्र सप्तम ( अपरिज्ञात कर्मजीव )	४०२-४०३
सूत्र अष्टम ( जीव का योनिसंधान )	४०३-४०९
योनिभेद (९)	४०४
चोरासी लाख योनियाँ	४०७
सूत्र नवम ( परिज्ञा )	४०९
सूत्र दशम ( कर्मसमारम्भ )	४११
सूत्र एकादश ( उपसंहार )	४१५
सूत्रद्वादश ( उपसंहार )	४१६

विषय—	पृष्ठाङ्क—
प्रथम अध्ययन के प्रथम उद्देशकी समाप्ति	४१७
दूसरे उद्देशका उपक्रम	४१८
जीव के विशिष्ट ज्ञानके अभावका कारण	४२०
पृथिवीकाय की हिंसा में तदाश्रित- जीवों की हिंसा	४२३
पृथिवीकायलक्षण	४२५
पृथिवीकायप्ररूपणा	४३३
पृथिवीकायजीवपरिणाम	४३७
पृथिवीकायवधद्वार—शस्त्रद्वार	४४०
पृथिवीकाय का उपभोग	४४१
पृथिवीकायसमारम्भप्रयोजन	४४२
पृथिवीकायसमारम्भफल	४४९
दृष्टान्तद्वारा पृथिवीजीवसिद्धि	४५५
पृथिवीकायसमारम्भनिवृत्ति	४६१
उपसंहार—उद्देशसमाप्ति— तृतीय उद्देश	४६३
उपक्रम और दृष्टान्त	४६४—४६८
अनगारलक्षण	४६९
अनगारकर्तव्य	४७३
श्रद्धास्वरूप	४७४—४९८
(१) यथाप्रवृत्तिकरण	४८५
(२) अपूर्वकरण	४८९
(३) अनिवृत्तिकरण	४९२
(४) अधिगमश्रद्धा	४९४
अष्कायश्रद्धोपदेश	४९९—५०३
अष्काय की हिंसा में तदाश्रित अन्य जीवों की हिंसा	५०४
अष्कायशस्त्र	५०५
अष्कायरक्षोपदेश	५०९
अष्कायभोग—	५१२

विषय-	पृष्ठाङ्क-
अप्कायसचित्ता	५१४
अप्कायजीवलक्षण	५१९
अप्कायप्ररूपणा	५२०
अप्कायजीवपरिमाण	५२२
अप्कायशस्त्र	५२४
धावनजल-धावनपानी-(२१)	५२८
अप्कायविराधनादोष	५३०
अप्काय के विषय में अन्य- मत समीक्षा	५३२
अन्यमतागमविरोध	५३४
उपसंहार	४३७
चतुर्थोद्देशक	५३८
उपक्रम	५३८
अग्निकाय के अभ्याख्यान में	
आत्मा का अभ्याख्यान	५३९
अग्निकायलक्षण	५४१
अग्निकायसचित्ता	५४२
अग्निकायप्ररूपणा	५४३
अग्निकायजीवपरिणाम	५४६
अग्निकायापलाप	५४८
दीर्घलोकशस्त्र ( अग्निकाय ) का- खेदज्ञ	५५०
दीर्घलोकशब्दार्थ	५५३
अग्निकायशस्त्र	५५५
अग्निकायसमारम्भनिवृत्तिप्रतिज्ञा	५६०
अग्निविराधनादोष	५६२
अग्निकायोपभोग	५६७
अग्निसमारम्भदोष	५७०
अग्निसमारम्भ में उसके	
आश्रित अन्य जीवों की हिंसा	५७३
उपसंहार	५७९



विषय—	पृष्ठाङ्क—
उद्देशकसमाप्ति	५८१
पञ्चमोद्देशक ( वनस्पति )	५८२
उपक्रम	५८२
अनगारलक्षण	५८४
वनस्पतिकायसचित्ता ( लक्षणद्वार )	५८६
वनस्पतिप्ररूपणा ( भेद )	५९१
वनस्पतिपरिमाण	६०९
वनस्पतिकायोपमर्दन संसार का हेतु है—	६१२
रूपादि गुण में मूर्च्छा संसार का कारण है—	६१७
रूपादिगुणमूर्च्छादोष	६२१
वनस्पतिशस्त्रसमारम्भ में तदाश्रित अनेक जीवहिंसा—	६२२
वनस्पतिविराधक साध्वाभास	६२६
उपभोगद्वार	६३०
वनस्पतिविराधनाफल	६३२
मनुष्यशरीर के साथ वनस्पति- की सचित्ता की सिद्धि—	६३६
उपसंहार	६४१
उद्देशसमाप्ति	६४३
षष्ठोद्देश ( त्रसकाय )	६४४
उपक्रम	६४४
त्रसों के भेद	६४५
त्रसकायलक्षण	६५०
त्रसकायप्ररूपणा	६५१
त्रसकायपरिणाम	६५२
प्रत्येक त्रस जीवों के मुख दुःख अलग अलग हैं—	६५४

## विषय-

## पृष्ठाङ्क-

प्रत्येक दिशा विदिशा में	
पृथिवी आदि आश्रित	
त्रसजीवों को परिताप	
देने से संसार भ्रमण-	६५७
त्रसकाय के समारम्भ में	
अन्य प्राणियों की हिंसा	६५९
त्रसकाय की हिंसा में	
परिज्ञा ( त्रसकायसमारम्भदोष )	६६३
उपभोगद्वार	६६४
वेदनाद्वार	६६६
त्रसजीवविराधनाफल	६६७
त्रसजीवहिंसाप्रयोजन	६७०
उपसंहार	६७३
उद्देशसमाप्ति	६७५
सप्तम उद्देश ( वायुकाय )	६७६
वायुकायविराधनविवेक	६७७
वायुकायलक्षण	६८३
वायुकायप्ररूपणा	६८४
वायुकायपरिमाण	६८५
वायुकायशस्त्र	६८६
वायुकाय की हिंसा में षड्जीव-	
निकायरूप लोक की हिंसा	६८९
द्रव्यलिङ्गिकृत वायुकायविराधना	६९०
वायुकायोपभोग	६९३
वायुविराधनादोष	६९६
वायुविराधनापरिहार	७००
मुखवस्त्रिकाविचार	७०४
षड्निकायारम्भदोष	७१२
षड्जीवविराधनापरिहार	७१७
प्रथम अध्ययन समाप्ति	७२०

श्रीवीतरागाय नमः



जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-धासीलालजीमहाराजविरचिता-  
ॐचारचिन्तामणिटीकासमलङ्कृतम्

## आचाराङ्गसूत्रम् ।

[ प्रथमः श्रुतस्कन्धः ]

मङ्गलाचरणम्.

अर्थप्रदं वीरजिनं प्रणम्य,  
लब्धेर्धरं गौतम-माप्तशक्तिम् ।  
गणीश्वरं पूर्वधरं च चित्ते,  
सन्धाय जैनीं गिरमुज्ज्वलन्तीम् ॥ १ ॥

आचाराङ्गसूत्रकी

आचारचिन्तामणिटीका का हिन्दीभाषानुवाद ।

मङ्गलाचरण

( १ )

भव्य जीवोंके मनोरथ पूर्ण करते जो जुदा,  
उन वीताराम जितेन्द्र के चरणाम्बुजों में नति सदा ।



आचारसूत्रे मुनिवासिलालः,  
 प्रयत्नतः साधुजनेष्टसिद्धयै ।  
 आचारचिन्तामणिमादधेऽहं,  
 भव्याः सदनं हृदि धारयन्तु ॥ २ ॥

अनेक लब्धिग्राहि चौदह पूर्वधारक जो तथा,  
 अध्यात्मशक्ति विभूतियुक्त विराजते हैं जिन यथा ॥

( २ )

आचार्य गणधर लोक हित गौतमपदाम्बुज में नती,  
 मेरी विराजे सर्वदा देवे विमल मति शुभ गती ।  
 निर्दोषतत्त्वनिरूपिणी उनकी समुज्ज्वल भारती,  
 धरते उसे हिय में सदा जो भव्यजन को तारती ॥

( ३ )

विनीत 'घासीलाल' मुनि जनता तथा मुनि के लिये,  
 भगवत्सुभाषितरत्न 'आचाराङ्ग गुणगुंफित किये ।  
 मणिमालिका के रूपमें करते प्रकाशित हैं अभी,  
 आचारचिन्तामणि हृदयगृह में रखे जनता सभी ॥

( ४ )

जड द्रव्य चिन्तामणि हृदयपै बाहिरे जाते धरे,  
 'आचारचिन्तामणि' (टीका) हृदयमें धारिता तमको हरे ॥  
 सब भव्यजन संसार वन में घूमते इसको गहे,  
 जिससे प्रकाशित मार्ग हो निज लक्ष्य पद सत्वर लहे ॥

इह सार्द्धतृतीयद्वीपाभ्यन्तरे पञ्चदशक्षेत्रात्मकनन्दनकानने सम्यक्त्वालवालमध्ये  
आत्मरूपाः कलम्बा विशतिस्थानकपुनःपुनःसमाराधनसलिलेन संवर्द्धिताः सन्त-  
स्तीर्थङ्कस्वरूपा अभिनवकल्पपादपाः प्रादुर्भवन्ति ।

भव्यजीवों के समस्त मनोरथ पूर्ण करने वाले श्री वीर भगवान् को प्रणाम करके,  
तथा विविध प्रकार की लब्धियों के धारक चौदह १४ पूर्वों के ज्ञाता आध्यात्मिक शक्ति से सम्पन्न  
श्री गौतम गणधर को नमस्कार करके समस्त दोषों से रहित होने के कारण, तथा वास्तविक  
वस्तुस्वरूप को प्रकाशित करने के कारण उज्ज्वल जिनवाणीको हृदय में धारण करके—

मैं 'घासीलाल' मुनि प्रयत्न करके भव्य पुरुषों की तथा मुनिजनों की इष्टसिद्धि के लिये  
आचाराङ्ग रूप सूत्र (दोरे) में भगवद्भाषित विविध आचाररूप मणियां मालारूपमें पिरोता  
हूँ । भव्यजन इसे सदैव अपने हृदयमें धारण करें । जडद्रव्यरूप चिन्तामणि हृदय पर  
अर्थात् वक्षःस्थल पर धारण किया जाता है किन्तु यह आचारचिन्तामणि (टीका) हृदय में  
धारण करने योग्य है ॥ २ ॥

इस अट्टाई द्वीप के भीतर पन्द्रह कर्मभूमि रूप नन्दनवन में सम्यक्त्वरूप क्यारीमें  
आत्मारूपी कलम्ब, तीर्थङ्कर गोत्र बांधने के कारणभूत बीस स्थानों की वारंवार आराधना रूपी  
जलसे वृद्धिको प्राप्त होकर तीर्थङ्कररूप नूतन कल्पवृक्ष उत्पन्न होते हैं ।

आचारारंग सूत्रनी आचारचिन्तामणि टीकानो गुजराती अनुवाद.

भंगलाचरण.

भव्य लोवोना तमाम मनोरथ पूर्ण करवावाणा श्री वीर भगवानने प्रणाम करीने,  
तथा विविध प्रकारनी लब्धियोना धारक, चौदह पूर्वोना ज्ञाता, आध्यात्मिक शक्तिशी सम्पन्न  
श्री गौतम गणधरने नमस्कार करीने सकल दोषोशी रहित होवाना कारणे तथा वास्तविक  
वस्तुस्वरूपने प्रकाशित करवाना कारणे उज्ज्वल जिनवाणीने हृदयमां धारण करीने—

हूँ घासीलाल मुनि प्रयत्न करीने, भव्य पुरुषो-लोवोनी तथा मुनिजनोनी इष्ट  
सिद्धि भाटे, श्री आचारारंगरूप सूत्र (दोरा)मां भगवद्भाषित-विविध आचार रूप  
मणियोने मालारूपमां परोखुं छुं. भव्य मनुष्य तेने इमेशां हृदयमां धारण करे. जडद्रव्य  
रूप चिन्तामणि हृदय पर अर्थात् वक्षस्थल उपर धारण कराये छे. किन्तु आ  
आचारचिन्तामणि (टीका) हृदयमां धारण करवा योग्य छे. २.

आ अट्टाई द्वीपनी अंदर, पंदर कर्मभूमिइपी नन्दन-वनमां सम्यक्त्वइप  
क्यारीमां आत्मइपी कलम्ब-कलम (अणी), तीर्थंकरगोत्र बांधवामां कारणभूत बीस  
स्थानोनी वारंवार आराधनाइपी जलशी वृद्धि पाबीने तीर्थंकरइप नूतन-नवीन  
कल्पवृक्ष उत्पन्न थाय छे.

તદ્વચનેષુ હિ કલ્પતરુકુસુમગતસૌન્દર્યાદિગુણાઃ સમુપલભ્યન્તે । યથા—

(૧)—સૌન્દર્યમ્, (૨)—સુગન્ધઃ, (૩)—ત્રિદોષનાશકત્વમ્, (૪)—સપ્તધાતુ-  
પૌષ્ટિકત્વમ્, (૫)—ત્વગ્રોમબલકરત્વમ્, (૬)—હૃદયાહ્વાદકત્વમ્, (૭)—તાપશમનત્વમ્,  
(૮) શોભાકારિત્વમ્, (૯) ઉત્સાહકત્વમ્, (૧૦) સ્ફૂર્તિકારકત્વમ્, (૧૧) વીર્ય-  
વર્ધકત્વમ્, (૧૨)—શ્રમહારિત્વમ્, (૧૩)—મધુરત્વમ્, (૧૪)—સ્નિગ્ધત્વમ્, (૧૫)—  
બહુદલત્વમ્, (૧૬)—વિષવિનાશકત્વમ્, (૧૭)—મકરન્દધારિત્વમ્, (૧૮)—  
વ્યાધિનાશકત્વમ્, (૧૯)—વિકસનશીલત્વમ્, (૨૦)—તૃષ્ણાનિવારકત્વમ્,

જેસે કલ્પ વૃક્ષોં કે ફૂલોં મેં સૌન્દર્ય આદિ ગુણ પાચે જાતે હૈંં ઉસી પ્રકાર તીર્થક્કરોંકે  
વચનોંમેંં મીં સૌન્દર્ય આદિ સમી ગુણ પાચે જાતે હૈંંં । દોનોંમેંં સમાન રૂપસે પાચે જાને વાલે  
ગુણ ઇસ પ્રકાર હૈંં—

(૧)—સૌન્દર્ય, (૨)—સુગન્ધ, (૩)—ત્રિદોષનાશકતા, (૪)—સપ્તધાતુપુષ્ટિકરતા,  
(૫)—ત્વક્-રોમ-બલકારિત્વ, (૬) હૃદયાહ્વાદકત્વ, (૭) તાપશમનત્વ, (૮) શોભાકારિત્વ,  
(૯)—ઉત્સાહકતા, (૧૦)—સ્ફૂર્તિજનકતા, (૧૧)—વીર્યવર્ધકતા, (૧૨)—શ્રમહારિત્વ, (૧૩)—  
મધુરતા, (૧૪)—સ્નિગ્ધતા, (૧૫)—બહુદલતા, (૧૬)—વિષવિનાશકતા, (૧૭)—મકરન્દ-  
(પુષ્પરસ) ધારિત્વ, (૧૮)—વ્યાધિવિનાશકતા, (૧૯)—વિકસનશીલતા, (૨૦)—તૃષ્ણા-

ઝેવી રીતે કલ્પવૃક્ષોના કૂલોમાં સૌન્દર્ય આદિ ગુણો દેખાય છે, તે પ્રમાણે  
તીર્થક્કરોના વચનોમાં પણ સૌન્દર્ય આદિ તમામ ગુણો દેખાય છે. બન્નેમાં સમાન  
રૂપથી દેખાતા ગુણો આ પ્રકારના છે—

(૧)—સૌન્દર્ય, (૨)—સુગન્ધ, (૩)—ત્રિદોષનાશકપણું, (૪)—સાત ધાતુની પુષ્ટિ  
કરનાર, (૫)—આમડી, વાળ-બળકારીપણું, (૬)—હૃદયને આનંદકારક, (૭)—તાપનું શમન  
કરવાપણું, (૮)—શોભાકારીપણું, (૯)—ઉત્સાહકપણું, (૧૦)—સ્ફૂર્તિજનકપણું, (૧૧)—  
વીર્યવર્ધકપણું, (૧૨)—શ્રમનિવારણપણું, (૧૩)—મધુરતા (૧૪)—સ્નિગ્ધતા-ચિકણા-  
પણું, (૧૫)—બહુદલતા, (૧૬)—વિષવિનાશકપણું, (૧૭)—મકરન્દ-પુષ્પરસ-ધારકતા,  
(૧૮)—વ્યાધિવિનાશકતા, (૧૯)—વિકસનશીલતા, (૨૦)—તૃષ્ણાનિવારકતા,



(૨૧) મૂર્છાહારકત્વમ્, (૨૨) પથ્યત્વમ્, (૨૩) મેધ્યત્વમ્, (૨૪) ઉત્કૃષ્ટ-  
ભાવોત્પાદકત્વમ્, (૨૫) અવયવસન્નિવેશવિશેષત્વમ્ ।

તત્ર સૌન્દર્યાદિકં યથા કલ્પતરુકુસુમેષુ ભગવદ્વચનેષુ ચ વિદ્યતે, તથા  
પ્રદર્શયમામ :—

સં. ગુણા:	કલ્પતરુકુસુમપક્ષે	ભગવદ્વચનપક્ષે
૧ સૌન્દર્યમ્	મનોહરાકૃતિમત્ત્વમ્,	માધુર્યપ્રસાદગુણવત્ત્વમ્,
૨ સુગન્ધ:	ગ્રાણેન્દ્રિયતૃપ્તિજનકત્વમ્ ।	દિવ્યધ્વનિરૂપત્ત્વેન ભગવદ્વચન- સ્યાર્યાનાર્યદ્વિપદચતુષ્પદાદીનાં

નિવારકતા, (૨૧)—મૂર્છાહારિત્વ, (૨૨)—પથ્યતા, (૨૩) મેધ્યતા (૨૪)—ઉત્કૃષ્ટભાવો-  
ત્પાદકતા, (૨૫)—અવયવસન્નિવેશવિશેષત્વ ।

યે પચીસ ગુણ કલ્પ વૃક્ષકે ફૂલોં મેં તથા ભગવાન્ કે વચનોં મેં કિસ પ્રકાર સમાનરૂપ  
સે પાયે જાતે હેં યહ બતલતે હેં.

સં. ગુણ	કલ્પવૃક્ષકે ફૂલોંકે પક્ષમેં	ભગવાનકે વચનોંકે પક્ષમેં ।
(૧) સૌન્દર્ય,	મનોહર આકૃતિ વાળા,	માધુર્ય ઓર પ્રસાદ ગુણ વાળા
(૨) સુગન્ધ,	ગ્રાણેન્દ્રિયકો તૃપ્તકરને વાળા,	દિવ્યધ્વનિરૂપ હોને કે કારણ આર્ય, અનાર્ય, દ્વિપદ, તથા

(૨૧)—મૂર્છાનિવારકતા, (૨૨)—પથ્યતા, (૨૩)—મેધ્યતા, (૨૪)—ઉત્કૃષ્ટ ભાવોનાં  
ઉત્પાદકપણું અને (૨૫)—અવયવસન્નિવેશવિશેષપણું.

આ પચીસ ગુણો કલ્પવૃક્ષના ફૂલોનાં તથા ભગવાનના વચનોનાં કેવી રીતે  
સમાનપણે દેખાય છે તે બતાવે છે—

સં. ગુણ	કલ્પવૃક્ષના ફૂલોના પક્ષમાં	ભગવાનના વચનોના પક્ષમાં
(૧) સૌન્દર્ય,	મનોહર આકૃતિવાળા,	માધુર્ય અને મોહક શબ્દ સૌન્દર્ય.
(૨) સુગન્ધ,	નાસિકાને તૃપ્ત કરનાર,	દિવ્યધ્વનિરૂપ હોવાથી આર્ય, અનાર્ય, એ પગવાળાં તથા ચાર પગવાળાં

		स्वस्वभाषापरिणतत्वेन तृप्ति- जनकत्वम् ।
३ त्रिदोषनाशकत्वम् ,	वात-पित्त-कफ नाश- कत्वम् ,	मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीय दोषनाशकत्वम् ।
४ सप्तधातुपौष्टिक- त्वम् ,	रसासृङ्-मांसमेदोऽस्थिम- ज्जाशुक्र-वर्द्धकत्वम् ,	द्रव्यार्थिक-पर्यायार्थिक-नया- भ्यां स्यादस्त्यादिसप्तभङ्गानां पुष्टिकरत्वम् ।

		चतुष्पद आदि की अपनी २ भाषा में परिणत होजानेके कारण तृप्तिकारक ।
(३) त्रिदोषनाशकत्व,	वात पित्त और कफ इन तीन दोषों को दूर करने वाला ।	मिथ्यात्व, मिश्र और सम्यक्त्व मोहनीय इन तीन कर्मों को नष्ट करने वाला ।
(४) सप्तधातुपौष्टि- कत्व,	रस, रक्त, मांस, मेद, हड्डी और वीर्य, इन सात धातुओं को बढ़ाने वाला ।	द्रव्यार्थिक और पर्यायार्थिक नय की अपेक्षा कथंचित् अनित्यता आदि सात भंगों का पोषक ।

		शुबोने पोत पोतानी भाषाभां परिणत होवाना कारण तृप्तिकारक.
(३) त्रिदोषनाशकत्व,	वात, पित्त અને કફ, આ ત્રણ દોષોને દૂર કરવા વાળા	મિથ્યાત્વ, મિશ્ર અને સમ્ય- ક્ત્વ-મોહનીય, આ ત્રણકર્મોનો નાશ કરનાર
(૪) સાતધાતુને પુષ્ટ, કરવાપણું	રસ, રક્ત માંસ, મેદ, હાડકાં મજ્જા અને વીર્ય, આ સાત ધાતુને બલવાન કરનાર.	દ્રવ્યાર્થિક અને પર્યાયાર્થિક- નયની અપેક્ષાએ કથંચિત્ નિત્યતા કથંચિત્ અનિત્યતા આદિ સાત ભંગોના પોષક

५ त्वग्रोमबलकरत्वम्,	शारीरिकविकारहारक- त्वम्	आत्मवर्तिन आर्त्तरौद्रध्याना- त्मकविकारस्य निवारकत्वम्।
६ हृदयाह्लादकत्वम्,	दर्शनमात्रेण हृदयसुखजन- कत्वम्	श्रवणमात्रेण सर्वेषां प्राणिना- ममन्दानन्दजनकत्वम्।
७ तापशमनत्वम्,	शैत्यगुणवत्त्वेन तापहारक- त्वम्,	शान्तरसवत्त्वेन कषायानलताप- हारकत्वम्।
८ शोभाकारित्वम्,	भूषणरूपेण द्युतिवर्द्धकत्वम्,	मिथ्यात्वादिकालुष्यापहरणपू- र्वकमात्मतेजःप्रकाशकत्वम्।

(५) त्वग् रोमबलकरत्व,	शरीरसंबंधी विकार दूर करने वाला।	आत्मा के आर्त्तध्यान और रौद्रध्यानरूप विकारोंका नाशक।
(६) हृदयाह्लादकत्व,	दृष्टि पडते ही हृदयको आनन्दित करने वाला।	कानमें पडतेही प्राणिमात्र को अत्यन्त आनन्द देने वाला।
(७) तापशमनत्व,	शीतल होने से सन्ताप हरने वाला।	शान्तरसमय होने के कारण कषायजनित सन्तापको नष्ट करने वाला।
(८) शोभाकारित्व,	आभूषणरूप होने के कारण शोभा बढ़ाने वाला।	मिथ्यात्व आदि की मलीनता दूर करके आत्माका तेज चमकाने वाला।

(५) त्वग् रोमबलकरत्व,	शरीरसंबंधी विकार दूर करना।	आत्माना आर्त्तध्यान अने रौद्र ध्यानरूप विकारोंको नाश करना।
(६) हृदयने आनंदकारी,	दृष्टि पडतां ज हृदयने आनंद आपना।	कानमां पडतां ज प्राणी मात्रने अत्यन्त आनंद आपना।
(७) तापनिवारण करना,	शीतल होवाथी संताप हरेना,	शान्तरसमय होवाथी कषाय- जनित संतापको नाश करना।
(८) शोभाकारीपण,	धरेणुंरूप होवाथी शोभा बढारना।	मिथ्यात्व आदिनी मलीनता दूर करीने आत्माना तेजने प्रकाशित करना।



- ९ उत्साहकत्वम्, उत्साहजनकत्वम्, प्रमादपञ्चकनिवारकत्वेन धर्मा-  
राधने योगत्रयोत्तेजकत्वम् ।
- १० स्फूर्तिकारकत्वम्, हर्षोत्पादकत्वेन स्वेष्टला- मोक्षाय पराक्रमस्फोटनत्वम् ।  
भाय प्रवृत्तिजनकत्वम्,
- ११ वीर्यवर्द्धकत्वम्, सकलेन्द्रियशक्तिदायकत्वम्, तपःसंयमाभ्यामात्मबलोत्कर्ष-  
कत्वम् ।

- (९) उत्साहकत्व, उत्साह उत्पन्न करने वाला । पांच प्रमादों का निवारण  
करके धर्म की आराधना में  
तीनों योगों को उत्तेजित  
करने वाला ।
- (१०) स्फूर्तिकारकत्व, हर्षजनक होने के कारण मोक्ष के लिये पराक्रम फोड़ने  
अपनी इष्ट सिद्धि के लिये प्रवृत्ति की प्रेरणा करने वाला ।  
कराने वाला ।
- (११) वीर्यवर्धकत्व सब इन्द्रियों को शक्ति देने तप, और संयम द्वारा आध्या-  
वाला । मिक बल बढ़ाने वाला ।

- (९) उत्साहकपाण्डुः उत्साह उत्पन्न करनार पांच प्रमादों का निवारण  
करने धर्म की आराधना में  
तीनों योगों को उत्तेजित  
आपनार.
- (१०) स्फूर्ति उत्पन्न हर्ष उत्पन्न करनार होवार्थी मोक्ष भाटे पराक्रम करवानी  
करवापाण्डुः पोतानी ध्येयानुसार सिद्धि प्रेरणा करनार.  
भाटे प्रवृत्ति करवनार
- (११) वीर्यवर्धकपाण्डुः तमाम इन्द्रियोने शक्ति तप अने संयम द्वारा आध्या-  
आपनार मिक अण वधारनार.

१२ श्रमहारित्वम्,	सौगन्ध्यादिविविधगुणोत्कर्षेण तत्तदिन्द्रियाणां शैथिल्यनिवारकत्वम्,	चतुर्गतिपरिभ्रमणेन श्रान्तानां भवभ्रमणोपरमेण खेदात्यन्तिकविध्वंसकत्वम् ।
१३ मधुरत्वम्,	मधुररसवत्त्वम्,	अपूर्वाक्षयशिवसुखानुभवात्मकरसत्वम् ।
१४ स्निग्धत्वम्,	सुखदस्पर्शकत्वम्,	श्रवणमात्रेणाऽऽत्मनः प्रतिप्रदेशधर्मानुरागजनकत्वम् ।

(१२) श्रमहारित्व,	सुगन्ध आदि अनेक गुणों की अधिकता होनेसे उससे इन्द्रियों की शिथिलता दूर करने वाला ।	चार गतियों में भ्रमण करके थके हुए प्राणियों का भव-भ्रमण मिटाकर उनके खेदको सर्वथा नाश करने वाला ।
(१३) मधुरत्व,	मधुर रस वाला ।	अपूर्व अविनाशी मोक्षसुखकी-अनुभूति रस वाला ।
(१४) स्निग्धत्व	चिकनापन ।	कान में पड़ते ही आत्मा के प्रत्येक प्रदेश में धर्मानुराग जगाने वाला ।

(१२) श्रमनिवारणु करवायलुं.	सुगन्ध आदि अनेक गुणों की विशेषता होवाथी ते ते इन्द्रियों की शिथिलता दूर करना.	चार गतियों में भ्रमण करीने थाकी गयेला एवोना भव भ्रमणने निवारणु करीने तेना जेहनो सर्वथा नाश करना.
(१३) मधुरपाणुं.	मधुर रसवाणा.	अपूर्व, अविनाशी मोक्ष सुखना अनुभव रूप रसवाणा.
(१४) स्निग्धता.	चिकणुपाणुं.	कान में पड़तां ज आत्माना हरेक-हरेक प्रदेश में धर्मानु-राग जगाना.

१५ बहुदलत्वम्, शतपत्रसहस्रपत्रादिरूपेणा- स्वपरसमयस्वरूपप्रदर्शकबहुवि-  
ऽधिकपत्रवत्त्वम्, धप्रमाणनयनिक्षेपादिवत्त्वम् ।

१६ विषविनाशकत्वम्, स्थावरजङ्गमविषहारकत्वम्, विषयवासनाऽपहारकत्वम् ।

१७ मकरन्दधारित्वम्, परागवत्त्वम्, अनित्यादिभावनाजनितवैरा-  
ग्यवत्त्वम् । (१)

(१५) बहुदलत्व, शतपत्र, सहस्रपत्र आदि रूपसे स्वसमय और परसमय के  
बहुत पत्तोंवाला । स्वरूपका प्रकाशक होने के  
कारण भांति-भांति के प्रमाण,  
नय, निक्षेप, आदि से युक्त ।

(१६) विषविनाशकत्व, स्थावर और जङ्गम विष का नाश विषय वासनारूप विषका नाश  
करने वाला । करने वाला ।

(१७) मकरन्दधारित्व, पुष्परसवाला । अनित्य आदि बारह भावनाओं  
से उत्पन्न वैराग्यजनित शान्त  
रस वाला ।

(१५) बहुदलता. सो पत्र, हजार पत्र आदि स्वसमय अने परसमयना  
इपथी धाणुं पत्रो ( पांढडा ) स्वइपना प्रकाशक होवाना  
वाणा. कारणे जूही जूही जलतना  
प्रमाण, नय, निक्षेप आदिथी  
युक्त.

(१६) विषनाशकत्व. स्थावर अने जंगम विषनो विषयवासनाइप विषनो-अरेनो  
नाश करनार नाश करनार.

(१७) मकरन्द-धारित्व. कुसुमोना रस वाणा. अनित्य आदि बार भावना-  
ओथी उत्पन्न वैराग्यजनित  
शांतरस प्रगटावनार.

१....वैराग्यवत्त्वम्-प्रतिपाद्यप्रतिपादकभावसम्बन्धेन ।



१८ व्याधिनाशकत्वम्, क्षतक्षयादिसकलातङ्कनिवा- सर्वघातिप्रभृतिसकलकर्मनाशक-  
रकत्वम्, त्वम् ।

१९ विकसनशीलत्वम्, मुकुलितपत्रस्फुटन स्वभाव- अनन्तकालप्रसुप्तात्मगुणविका-  
त्वम्, सित्वम् ।

२० तृष्णानिवारकत्वम्, अभिलाषापहारकत्वम्, विषयाभिलाषनिवर्तकत्वम् ।

२१ मूर्च्छाहारकत्वम्, नष्टचेष्टानिवारकत्वम्, मोहविनाशकत्वम् ।

(१८) व्याधिनाशकत्व, भय आदि समस्त व्याधियोंको सर्वघाति आदि समस्त कर्मोंका  
हटानेवाला । नाश करने वाला ।

(१९) विकसनशीलत्व, क्रमशः विकसित होता जानेवाला । अनादिकालसे सोये पड़े आत्मा  
के गुणोंका विकास करनेवाला ।

(२०) तृष्णानिवारकत्व, लालसा हटानेवाला । विषयों की अभिलाषा दूर  
करने वाला ।

(२१) मूर्च्छाहारकत्व, मूर्च्छा (बेहोशी) मिटाने वाला । मोह का नाशक ।

(१८) व्याधि विनाशक- लय आदि तमाम व्याधियोंने सर्वघाति प्रकृति आदि  
पण्युं. निवारणु करनार. तमाम कर्मोंना नाश करनार.

(१९) विकासवापण्युं. क्रमशः विकास पाववावाणा. अनादि कालथी सुता पड़ेला  
आत्माना गुणुना विकास  
करनार.

(२०) तृष्णानिवारकपण्युं. लालच दूर करनार. विषयोंनी अभिलाषा दूर  
करनार.

(२१) मूर्च्छानिवारकपण्युं. बेहोशीपण्युं मटाउनार मोह नाश करनार

२२ पथ्यत्वम्	हितकरत्वम् ,	ऐहिकपारत्रिकसुखोत्पादकत्वे- नात्मनो नितान्तोपकारित्वम् ।
२३ मेध्यत्वम् ,	पवित्रत्वम् ,	मिथ्यात्वमलाभावेन नैर्मल्यम् ।
२४ उत्कृष्टभावोत्पा- दकत्वम्	दैन्यशोकादिजनितदुश्चिन्त- नापनयेन विशुद्धविचारा- ऽऽविष्कारकत्वम् ।	विभावपरिणामजन्यदुर्वासनाप- नयनेन तीर्थङ्करगोत्रोपार्जन- योग्यविशिष्टभावनाजनकत्वम् ।

(२२) पथ्यत्व,	हितकर ।	इहलोक और परलोक सम्बन्धी सुखजनक होनेसे आत्मा का अत्यन्त उपकारी ।
(२३) मेध्यत्व,	पवित्रता वाला ।	मिथ्यात्वादि पांच आस्रव रूपी मल से रहित होने के कारण निर्मल ।
(२४) उत्कृष्टभावोत्पा- दकत्व,	दैन्यशोक आदि से उत्पन्न हुई चिन्ता को दूर करके विशुद्ध विचार उत्पन्न करने वाला ।	विभाव परिणति द्वारा जनित दुर्वासना को दूर करके तीर्थङ्कर गोत्र बांधने के योग्य विशिष्ट भावनाको उत्पन्न करने वाला ।

(२२) पथ्यता.	हितकर.	आ लोक अने परलोक संबंधी सुख उत्पन्न करना होवाही आत्माने अत्यन्त उपकारी.
(२३) मेध्यता.	पवित्रता करना.	मिथ्यात्व आदि पांच आस्रव रूपी भण्डी रहित होवाना कारण निर्मल.
(२४) उत्कृष्टभावो उत्पन्न. करवायुं.	दैन्यशोक आदिसे उत्पन्न चिन्ता को दूर करके विशुद्ध विचार उत्पन्न करना	विभाव परिणति द्वारा उत्पन्न दुर्वासना को दूर करके तीर्थङ्कर गोत्र बांधवा योग्य विशिष्ट भावना उत्पन्न करना.

२५ अवयवसंनिवेश- सकलावयवपूर्णत्वम् , सकलाङ्गोपाङ्गपूर्णत्वम् ।  
विशेषवत्त्वम्

तीर्थङ्करकल्पपादपानां वचनप्रसूनानि गणधराः श्रद्धासूत्रे संग्रन्थ्य गद्य-  
पद्यात्मकविविधाङ्गोपाङ्गरूपा माला व्यरीरचन् । अथ ता माला हृदये निधाय तत्त-  
द्गतमहत्त्वं स्वात्मनि भावयन्तो भावितात्मानः सन्तो ज्ञानक्रियाभ्यां कर्मरजोऽप-  
नीय बाधापीडाऽपवर्जितमपुनरावृत्तिं सिद्धिगतिनामधेयं शिवपदं समाश्रयन्ति,  
भवभीरून् भव्यान्पि तत्पदं प्रापयन्ति ।

(२५) अवयवसंनिवेश- सब अवयवों से परिपूर्ण । सब अङ्गों और उपाङ्गोंसे युक्त ।  
विशेषवत्त्व,

तीर्थङ्कररूपी कल्पवृक्षों के वचनरूपी पुष्पों को गणधरोंने श्रद्धारूपी सूतमें गुंथकर गद्य-  
पद्यरूप विविध अङ्गउपाङ्गमय मालाएँ रचीं, उन मालाओं को धारण करके उनकी महत्ता  
का अन्तःकरण में विचार करते हुए भावितात्मा पुरुष ज्ञान और क्रिया के द्वारा कर्मरजको  
हटाते हैं । तथा सब प्रकार की बाधा और पीडासे रहित, जिहें पाकर फिर कभी आना नहीं  
पडता, ऐसे सिद्धिगतिरूप शिवपद प्राप्त करते हैं, साथ ही भवभीरु अन्य भव्य जीवों को  
भी उसी पद की प्राप्ति कराते हैं ।

(२५) अवयवसंनिवेशानुं. सर्व अवयवोधी परिपूर्णुं. सर्व अंगो अने उपांगोधीयुक्त  
विशेषपणुं.

तीर्थङ्कररूपी कल्पवृक्षोना वचनरूप पुष्पोने, गणधरोने श्रद्धारूपी सूतर-होराभां  
गुंथी करी गद्य-पद्यरूप विविध अंग-उपांगमय मालाओ रची. ते मालाओने हृदयभां  
धारण करीने, तेनी महत्तानो अन्तःकरणभां विचार करनार भावितात्मा पुरुषज्ञान अने  
क्रिया द्वारा कर्मरजकणुने हर करे छे. तथा सर्व प्रकारनी उपाधि अने पीडाधी रहित,  
जेने प्राप्त करीने इरीथी कोई वधत आववुं पडतुं नथी. अवी सिद्धिगतिरूप शिवपदने  
प्राप्त करे छे, तेमळ लवलीइ अन्य लव्य लवोने पणु ते पद ( शिवपद ) नी प्राप्ति  
करावे छे.



કલ્પપાદપા હિ એહિકમેવાધ્રુવ ક્ષણમજ્જુરં સુખં પ્રદાતુમીશતે, इमे तु लोकोत्तर-  
मक्षयं शाश्वतं सुखं वितरन्ति । लौकिकसुखं तु सुतरां सिद्धमेव, न पुनस्तत्र  
प्रदानापेक्षेति भावः ।

મગવદ્વચનેષુ પશ્ચત્રિશદ્ અતિશયા લોકોત્તરાઃ સર્વેરનુભૂયન્તે, પશ્ચત્રિશતો-  
ઽતિશયાનાં સમવાયાજ્ઞસૂત્રે નિર્દેશાત્ । તથા ચ સૂત્રમ્—“પણતીસં સચ્ચવયણાઈસેસા  
પણ્ણત્તા” ઇતિ । પશ્ચત્રિશત્ સત્યવચનાતિશેષાઃ પ્રજ્ઞપ્તાઃ, ઇતિ ચ્છાયા । સત્ય-  
વચનં — મગવદ્વચનં સકલહિતકરત્વાત્, તસ્ય અતિશેષાઃ = અતિશયાઃ પશ્ચ-  
ત્રિશત્ પ્રજ્ઞપ્તાઃ કથિતાઃ, ઇત્યર્થઃ । તત્રૈતે પશ્ચત્રિશદતિશયાઃ—પરંપરયાઽવગમ્યન્તે—

કલ્પવૃક્ષ તો इसी लोकसम्बन्धी सुख दे सकते हैं और वह सुख भी अध्रुव और  
क्षणमज्जर होता है, किन्तु तीर्थङ्कर भगवान् लोकोत्तर अक्षय और शाश्वत सुख प्रदान करते हैं ।  
लौकिक सुख तो किसान के लिये भूसे के समान स्वतः सिद्ध है ही—वह आनुषङ्गिक है ।

મગવાન્ કે વચનોં મેં પૈતીસ લોકોત્તર અતિશયોં કા સમી પ્રાણિયોં કો અનુભવ હોતા  
હૈ । શ્રી સમવાયાજ્ઞસૂત્ર મેં પૈતીસ અતિશયોં કા ઉલ્લેખ પાયા જાતા હૈ । મૂળ પાઠ ઇસ પ્રકાર  
હૈ—“પણતીસં સચ્ચવયણાઈસેસા પળ્ણત્તા ।”

અર્થાત્ સત્ય વચન કે પૈતીસ અતિશય—ગુણ કહે ગયે હૈં ।

કલ્પવૃક્ષ તો આ લોક સંબંધી સુખ આપી શકે છે અને તે સુખ પણ અધ્રુવ  
અને ક્ષણભંગુર હોય છે, પરંતુ તીર્થંકર ભગવાન લોકોત્તર અક્ષય અને શાશ્વત—નિત્ય  
સુખ આપે છે; લૌકિક સુખ તો ખેડુત માટે ભુશકા ( અનાજ વિનાનાં ફેંતરાં ) સમાન  
સ્વાભાવિક સિદ્ધજ છે.

ભગવાનના વચનોમાં પાંત્રીશ લોકોત્તર અતિશયોનો સર્વ પ્રાણીઓને અનુભવ  
થાય છે, શ્રી સમવાયાજ્ઞ સૂત્રમાં એ પાંત્રીશ અતિશયોનો ઉલ્લેખ જોવામાં આવે છે.  
મૂળ પાઠ આ પ્રકારે છે— “ પળ્ણતીસં સચ્ચવયણાઈસેસા પળ્ણત્તા ”

અર્થાત્—સત્ય વચનના પાંત્રીશ અતિશય ગુણ કહેવામાં આવ્યા છે. અહિં સત્ય-  
વચનનો અર્થ છે—ભગવાનના વચન, કેમકે તે સર્વ હિત કરનારા છે. તે વચનોનો અતિશય  
અર્થાત્ ગુણ પાંત્રીશ છે. પરંપરાના નિયમ પ્રમાણે પાંત્રીશ અતિશય આ પ્રમાણે  
માનવામાં આવ્યા છે—

(१) संस्कारवत्त्वम् = प्रकृतिप्रत्ययलिङ्गवचनादियुक्तत्वम् । (२) उदात्त-  
त्वम् = श्रोतसुवेद्यत्वम् (३) उपचारोपेतत्वम् = अप्राज्ञजनभाषावदश्लीलादि  
दोषरहितत्वम् । (४) गम्भीरध्वनित्वम् = मेघवद् गम्भीरनादवच्चम् । (५)  
अनुनादित्वम् = प्रतिशब्दोपेतत्वम् । (६) दक्षिणत्वम् = ऋजुत्वम् ।  
(७) उपनीतरागत्वम् = मालकोशरागगुणवच्चम्, यथा मालकोशरागः  
प्रस्तरानपि द्रावयति, तथा कठिनचेतसोऽपि जनान् भगवद्वचनं  
द्रावयतीति हृदयद्रावकत्वमिति भावः । (८) महार्थत्वम् = मोक्षमार्ग-

यहाँ सत्य वचन का अर्थ है—भगवान के वचन, क्योंकि वे सबके हित करने वाले  
हैं । उन वचनों के—वाणीके अतिशय अर्थात् गुण पैतीस हैं । परम्परा के अनुसार वाणीके  
पैतीस गुण इस प्रकार माने जाते हैं—

(१) संस्कारवत्त्व—प्रकृति, प्रत्यय, लिङ्ग, वचन आदि से युक्त होना (२)  
उदात्तता—श्रोताओं के लिये सुगम । (३) उपचारोपेतता—गँवारो की भाषा में पाये  
जाने वाले अश्लीलता आदि दोषों से रहित । (४) गंभीरध्वनित्व—मेघकी समान गम्भीर नाद  
होना । (५) अनुनादित्व—प्रतिध्वनिसे युक्त होना । (६) दक्षिणता—सरलता । (७)  
उपनीतरागवत्त्व—मालकोश राग सरीखा गुण होना, अर्थात् जैसे—मालकोश राग पाषाण  
को भी पिघला देता है, उसी प्रकार भगवान् के वचन कठोर हृदय को भी पिघला  
देते हैं । तात्पर्य यह है कि—भगवान के वचन बड़े ही हृदयद्रावक होते हैं ।  
(८) महार्थता—भगवान् के वचन मोक्ष-मार्ग के प्रतिपादक होने से महत्वपूर्ण और अर्थ

(१) संस्कारवत्त्व—प्रकृति, प्रत्यय, लिङ्ग, वचन आदिथी युक्त अणुवुं. (२) उदात्तता—  
श्रोताओं माटे सुगम. (३) उपचारोपेतता—भूर्ण—जंगली भाषुसोनी भाषाभां जेवाभां  
आवता अश्लील-अराग, शरभ आवे तेवा भाषाना दोषो रहित. (४) गंभीरध्वनित्व—मेघना  
जेवो गंभीर शब्द. (५) अनुनादित्व—प्रतिध्वनि युक्त होवुं (पडधाइप थवुं). (६) दक्षिणता-  
सरलता (७) उपनीतरागत्व—मालकोश राग जेवो शुष्ण होवुं. अर्थात्—जेवी रीते  
मालकोश राग पथरने पणु पिगणावी हे छे. ते प्रभाणु भगवानना वचनो कठोर हृदय-  
वाणा भाषुसने पणु पिगलावी हे छे, तात्पर्य अे छे के—भगवानना वचन भडान हृदय  
द्रावक होय छे. (८) महार्थता—भगवानना वचन मोक्षमार्गनुं प्रतिपादन करनारा छे  
तेथी महत्वपूर्ण अने अर्थथी युक्त होय छे. (९) अव्याहतपौर्वापर्य—पूर्वापर

પ્રતિપાદકત્વેન મહત્વવિશિષ્ટાર્થકત્વમ્ (૯) અવ્યાહતપૌર્વાપર્યત્વમ્ । = પૂર્વાપર-  
વિરોધરાહિત્યમ્ । (૧૦) શિષ્ટત્વમ્ = શિષ્ટાભિમતતત્ત્વબોધકત્વમ્ । (૧૧) અસં-  
દિગ્ધત્વમ્ = અભિધેયાર્થાનાં સ્ફુટતર્યા પ્રતિપાદનેન સંશયાજનકત્વમ્ । (૧૨)  
અપહતાન્યોત્તરત્વમ્ = સકલગુણપૂર્ણત્વેન પરકૃતદોષાન્વેષણાઽવિષયત્વમ્ । (૧૩)  
હૃદયગ્રાહિત્વમ્ = સર્વેષાં પ્રાણિનાં શ્રવણમાત્રેણ હૃદયગ્રાહિત્વમ્ । (૧૪) દેશકાલા-  
વ્યતીતત્વમ્ = દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવાનુકૂલત્વમ્ । (૧૫) તત્ત્વાનુરૂપત્વમ્ = વિવક્ષિત-  
વસ્તુદ્રવ્યપર્યાયસ્વરૂપપ્રકાશકત્વમ્ । (૧૬) અપ્રકીર્ણપ્રસૂતત્વમ્ = પ્રસંગં વિના-  
ન વિસ્તીર્ણત્વં નાતિસંક્ષિપ્તત્વમ્ (૧૭) અન્યોન્યપ્રગૃહીતત્વમ્ = પદાનામર્થાનાં વા

સે યુક્ત હોતે હૈં । (૯) અવ્યાહતપૌર્વાપર્ય-પૂર્વાપર વિરોધ સે રહિત હોતે હૈં । (૧૦)  
શિષ્ટતા-શિષ્ટ પુરુષોં દ્વારા સ્વીકૃત તત્ત્વ કા બોધ કરાતે હૈં । (૧૧) અસંદિગ્ધતા-અભિધેય  
અર્થ કા સ્પષ્ટ રૂપ સે પ્રતિપાદન કરને કે કારણ સંશયજનક નહીં હોતે । (૧૨) અપહતા-  
ન્યોત્તરત્વ-સમસ્ત ગુણોં સે યુક્ત હોને કે કારણ દૂસરે વાદી ડનમેં કોઈ દોષ નહીં નિકાલ  
સકતે । (૧૩) હૃદયગ્રાહિત્વ-સમસ્ત શ્રોતાગણોં કે હૃદય કો હરણ કરને વાલે । (૧૪) દેશકા-  
લાવ્યતીતત્વ-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ કે અનુકૂલ । (૧૫) તત્ત્વાનુરૂપત્વ-વિવક્ષિત  
વસ્તુકે દ્રવ્ય ઓર પર્યાય કા સ્વરૂપ પ્રકાશિત કરને વાલે (૧૬) અપ્રકીર્ણપ્રસૂતત્વ-

વિશેષથી સહિત હોય છે. (૧૦) શિષ્ટ પુરુષો દ્વારા સ્વીકારેલા તત્ત્વનો બોધ કરાવે છે.  
(૧૧) અસંદિગ્ધતા-અભિધેય-વાક્યાર્થનું સ્પષ્ટ રૂપથી પ્રતિપાદન કરવાના કારણે સંશય  
ઉત્પન્ન થતો નથી. (૧૨) અપહતાન્યોત્તરત્વ-સમસ્ત ગુણોથી યુક્ત હોવાથી બીજા પક્ષના  
વાદીઓમાં કોઈ પણ પ્રકારનો દોષ કાઢી શકતા નથી. (૧૩) હૃદયગ્રાહિત્વ-તમામ શ્રોતા-  
વર્ગના હૃદયને હરણ કરવાવાળા. (૧૪) દેશકાલાવ્યતીતત્વ-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર કાલ અને  
ભાવને અનુકૂળ. (૧૫) તત્ત્વાનુરૂપત્વ-વિવક્ષિત-વસ્તુ એટલે બોલવા માટે મનમાં નક્કી  
કરેલું, તેના દ્રવ્ય અને પર્યાયના સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાવાળા. (૧૬) અપ્રકીર્ણ-પ્રસૂતત્વ  
પ્રસંગ વિના વિસ્તાર સહિત નહિ કહેવું, તથા સંક્ષેપમાં નહિ કહેવું. (૧૭) અન્યોન્ય  
પ્રગૃહીતત્વ-પૂર્વાપર પદોની અને અર્થોની અપેક્ષા રાખવા વાળા, અર્થાત્ પ્રકરણ સંગત.



पूर्वापरसापेक्षत्वम् । (१८)-अभिजातत्वम् = सूक्ष्मस्यापि जीवादिस्वरूपस्य चाक्षुष-  
प्रत्यक्षीकरणवत्प्रतिपादकत्वम् । (१९)-अतिस्निग्धमधुरत्वम्=अमृतवत्तृप्तिजनकत्वम् ।  
(२०)-अपरमर्मवेधित्वम् = परमर्मोद्घाटनरहितत्वम् । (२१)-अर्थधर्माभ्यासान-  
पेतत्वम्=पारमार्थिकार्थधर्मबोधकत्वम् (२२)-उदारत्वम्=सर्वप्राणिकल्याणकारित्वं,  
तुच्छार्थानभिधायकत्वं वा । (२३)-परनिन्दात्मोत्कर्षविप्रयुक्तत्वम् = परोक्षेपात्म-  
प्रशंसाहीनत्वम् (२४)-उपगतश्लाघत्वम् = सकलहितकरत्वेन समादृतत्वम् (२५)-

प्रसङ्ग के बिना न कहना, न विस्तारयुक्त और न संक्षिप्त कहना, (१७) अन्योन्यप्रगृहीतत्व  
पूर्वापर पदों की और अर्थ की अपेक्षा रखनेवाले, अर्थात् प्रकरणसङ्गत, (१८) अभि-  
जातता — जीव आदि के अत्यन्त सूक्ष्मस्वरूपको भी इतना स्पष्ट निरूपण करने वाले  
जैसे कि आंखों से देख रहे हों, (१९) अतिस्निग्धमधुरता — अमृत के समान  
तृप्तिकारक, (२०) अपरमर्मवेधित्व — दूसरों के मर्म को न प्रगट करने वाले, अथवा  
प्रतिपक्षियों के मर्म (हेतुओं एवं युक्तियों) का निराकरण करने वाले, (२१) अर्थ-  
धर्माभ्यासानपेतता — परमार्थ अर्थात् मोक्ष तथा मोक्ष के साधनरूप धर्म का बोध  
कराने वाले, (२२) उदारता — प्राणिमात्र का कल्याण करने वाले अथवा तुच्छ अर्थों का  
प्रतिपादन न करने वाले, (२३) परनिन्दाऽऽत्मोत्कर्षविप्रमुक्तता — परनिन्दा और  
आत्मप्रशंसा रहित, (२४) उपगतश्लाघत्व — सर्वहितकारी होने के कारण सभी

(१८) अभिजातता—जीव आदि तत्त्वोंना अत्यन्त सूक्ष्म स्वरूपनुं पणु ओटलुं स्पष्ट  
निर्दिष्ट करवावाणा नेमडे नेत्रथी नेध रक्षा होय. (१९) अतिस्निग्धमधुरता—अमृत  
समान तृप्ति करवा वाणा. (२०) अपरमर्मवेधित्व—भीलना मर्मने प्रगट नहि  
करवा वाणा, अथवा प्रतिपक्षियोंना मर्म (हेतुओ-युक्तियों) नुं निराकरण-करवा  
वाणा. (२१) अर्थधर्माभ्यासानपेतता—परमार्थ—अर्थात् मोक्ष तथा मोक्षना साधनरूप  
धर्मना बोध करवावाणा. (२२) उदारता—प्राणीमात्रनुं कल्याण करवा करवावाणा, अथवा  
तुच्छ अर्थोंनुं प्रतिपादन नहि करवा वाणा. (२३) परनिन्दाऽऽत्मोत्कर्षविप्रमुक्तता—पर  
निन्दा अने आत्मप्रशंसाथी रहित (२४) उपगतश्लाघत्व—सर्वहितकारी होवाने

અનપનીતત્વમ્ = શ્રુતિકટુત્વાદિવચનદોષાપેતત્વમ્ (૨૬)—ઉત્પાદિતાચ્છિન્નકૌતૂ-  
હલત્વમ્ = નવનવાર્થપ્રતિપાદકત્વેન પુનઃ પુનઃ શ્રવણાભિલાષજનકત્વમ્ । (૨૭)—  
અદ્રુતત્વમ્ = શીઘ્રતારહિતત્વમ્ । (૨૮)—અનતિવિલમ્બિતત્વમ્=વાક્યાપરિસમાપ્તૌ  
વિશ્રામરહિતત્વમ્ । (૨૯)—વિભ્રમવિક્ષેપરોષાવેશાદિરાહિત્યમ્ = વિભ્રમો=ભ્રાન્તિઃ,  
વિક્ષેપઃ=વિવક્ષિતાર્થ પ્રત્યનાસક્તતા, રોષાવેશઃ=ક્રોધાવેગસ્તૈર્વિમુક્તત્વમ્ । (૩૦)—  
વિચિત્રત્વમ્ = વર્ણનીયવસ્તુસ્વરૂપપ્રકાશનેન લોકોત્તરત્વમ્ । (૩૧)—આહિતવિશેષત્વમ્  
=દ્રવ્ય-પર્યાય-વિશેષપ્રતિપાદકત્વમ્ । (૩૨)—સાકારત્વમ્=હેતુકારણાદિમિઃ સ્ફુટતયા

કે લિયે ઉપાદેય, (૨૫) અનપનીતત્વ — કર્ણકટુકતા આદિ દોષો :સે રહિત,  
(૨૬) ઉત્પાદિતાચ્છિન્નકૌતૂહલત્વ — નૂતન નૂતન અર્થ કા નિરૂપણ કરને કે કારણ વાર  
વાર સુનને કી અભિલાષા ઉત્પન્ન કરનેવાલે, અર્થાત્—ભગવાનકે વચનોકો વાર વાર સુનને કી  
ઇચ્છા હોતી હૈ । (૨૭) અદ્રુતત્વ—શીઘ્રતા સે રહિત, (૨૮) અનતિવિલમ્બિતત્વ—બહુત વિલમ્બ  
સે ઉચ્ચારણ ન કિયે જાને વાલે, અર્થાત્ વાક્ય સમાપ્ત હોને સે પહેલે વિશ્રામ લિખ વિના હી  
બોલે જાને વાલે । (૨૯) વિભ્રમ—વિક્ષેપ—રોષાઽવેશાદિરાહિત્ય, વિભ્રમ અર્થાત્ ભ્રાન્તિ, વિક્ષેપ  
અર્થાત્ પ્રતિપાદ્ય વસ્તુ કે પ્રતિ અસાવધાની, રોષ અર્થાત્ ક્રોધ, કે આવેશ સે રહિત, (૩૦)  
વિચિત્રતા વર્ણન કી જાને વાલી વસ્તુ કા સ્વરૂપ પ્રકાશિત કરને કે કારણ લોકોત્તર,  
(૩૧) આહિતવિશેષતા — દ્રવ્ય ઓર પર્યાય કી વિશેષતા કા પ્રતિપાદન કરને વાલે,

અરણ્યે સર્વને માટે ઉપાદેય—શ્રુણુ કરવા યોગ્ય. (૨૫) અનપનીતત્વ—કાનને અગ્રિય  
લાગે એવા દોષોથી રહિત. (૨૬) ઉત્પાદિતાચ્છિન્નકૌતૂહલત્વ—નવા-નવા અર્થનું નિરૂપણ  
કરવાના કારણે વારંવાર સાંભળવાની અભિલાષા ઉત્પન્ન કરવાવાળા, અર્થાત્ ભગવાનના  
વચનોને વારંવાર સાંભળવા અભિલાષા-ઇચ્છા થાય છે, (૨૭) અદ્રુતત્વ—શીઘ્રતાથી રહિત  
(૨૮) અનતિવિલમ્બિતત્વ—અહુજ વિલંબથી ઉચ્ચારણ નહિ કરવાવાળા, અર્થાત્—વાક્ય  
સમાપ્ત થયા પહેલાં વિશ્રામ લીધા વિનાજ બોલવાવાળા. (૨૯) વિભ્રમ—વિક્ષેપ—રોષા-  
વેશાદિરહિતત્વ—વિભ્રમ અર્થાત્—ભ્રાન્તિ, વિક્ષેપ—અર્થાત્ પ્રતિપાદ્ય વસ્તુ તરફ ગરબલ,  
રોષ—અર્થાત્ ક્રોધના આવેશથી રહિત (૩૦) વિચિત્રતા—વર્ણન કરવા યોગ્ય વસ્તુના  
સ્વરૂપને પ્રકાશિત કરવાના કારણે લોકોત્તર (૩૧) આહિતવિશેષતા—દ્રવ્ય અને પર્યાયની

प्रकाशनेनार्थानां साक्षात्कारजनकत्वम् । (३३)-सत्त्वपरिगृहीतत्वम्=उत्पादव्ययघ्नौव्य-  
युक्तसत्तयाऽर्थप्रकाशकत्वम् । (३४)-अपरिखेदितत्वम् = स्वपरखेदानुत्पादकत्वम् ।  
(३५)-अव्युच्छेदितत्वम् = वर्णनीयपदार्थनिर्णयं यावदविच्छिन्नत्वम् ।

वृद्धसंप्रदायविद्धिरप्युक्तम्—

(१)-सकारवत्तं, (२)-उदत्तं, (३)-उवयारोवेयत्तं (४)-गंभीरज्जुणितं,  
(५)-अणुणादितं, (६)-दक्खिणत्तं, (७)-उवणीयरगतं, (८)-महत्थत्तं, (९)-  
अव्वाहयपुव्वावज्जत्तं, (१०)-सिद्धत्तं, (११)-असंदिद्धत्तं, (१२)-अवहरियअनुत्तरत्तं,  
(१३)-हिययग्गाहितं, (१४)-देसकालअव्वईयत्तं, (१५)-तत्ताणुरूवत्तं, (१६)-  
अण्णपइण्णसरियत्तं, (१७)-अन्नुन्नप्पगहीयत्तं, (१८)-अहिजायत्तं, (१९)-अइणिद्ध-  
महुरत्तं, (२०)-अवरम्ममवेहितं, (२१)-अत्थधम्मम्भासाणवेयत्तं, (२२)-उयारत्तं,  
(२३)-परनिंदाअप्पुक्करिसविप्पजुत्तत्तं, (२४)-उवगयसिलाघत्तं, (२५)-अणवणीयत्तं,  
(२६)-उप्पाइयच्छिन्नकोउहलत्तं, (२७)-अदुयत्तं, (२८)-अणइविलंवियत्तं, (२९)-  
विब्भमविक्षेवरोसावेसाइराहिच्चं, (३०)-विचित्तं, (३१)-आहियविसेसत्तं, (३२)-  
सागारत्तं, (३३)-सत्तपरिगगहीयत्तं, (३४)-अपरिखेइयत्तं, (३५)-अव्युच्छेइत्तं ।

(३२) साकारता—हेतु कारण आदि के द्वारा स्पष्ट रूप से प्रकाशित करके पदार्थों का  
साक्षात्कार कराने वाले, (३३) सत्त्वपरिगृहीतत्व—उत्पाद व्यय और ध्रौव्यमय सत्ता  
के रूपमें अर्थ के प्रकाशक (३४) अपरिखेदितत्व—स्व को और पर को खेद न  
पहुँचाने वाले, (३५) अव्युच्छेदितत्व—प्रतिपाद्य विषय का निर्णय हुए विना न रुकने वाले,  
अर्थात् विवक्षित वस्तु का पूर्ण निर्णय करने वाले ।

विशेषतानुं प्रतिपादन करवा वाणा (उ२) साकारता—हेतु, कारण आदि वडे स्पष्ट  
रूपी प्रकाशित करीने पदार्थानो साक्षात्कार करवावा वाणा. (उ३) सत्त्वपरिगृहीतत्व—  
उत्पाद, व्यय, अने धौव्य-मय सत्ताना रूपमां अर्थाना प्रकाशक (उ४) अपरिखेदितत्व  
पोताने अने पारकाने भेद नहि पडोयाउनार (उ५) अव्युच्छेदितत्व—प्रतिपाद्य विषयनो  
निर्णय थया विना नहि अटकनारा, अर्थात् विवक्षित वस्तुनो पूर्ण निर्णय करवा वाणा.



મગવદ્વચનાનિ ચતુર્વિધેઽનુયોગે પ્રવિભક્તાનિ, સ ચેત્થમ્—

(૧)—ચરણકરણાનુયોગઃ, (૨)—ધર્મકથાનુયોગઃ, (૩)—ગણિતાનુયોગઃ, (૪)—દ્રવ્યાનુયોગશ્ચ ।

યુજ્યતે=સંબધ્યતે મગવદુક્તાર્થેન સહેતિ યોગઃ = ગણધરકથનરૂપઃ, અનુ = અનુકૂલો યોગોઽનુયોગઃ । મગવદ્વચનાનુરૂપા ગણધરોક્તિરિત્યર્થઃ । (૧)

(૧) અથ ચરણકરણાનુયોગઃ—

(૧) ચર્યતે = ગમ્યતે = પ્રાપ્યતે મગવદ્ધેઃ પરં કૂલં ચતુર્દશગુણસ્થાના-

મગવાન્ કે વચનોં મેં યે પૈતીસ અતિશય અર્થાત્ ગુણ હોતે હૈં । પ્રાચીન આચાર્યોં ને મી કહા હૈ —‘સકારવત્તં’ ઇત્યાદિ ૩૫ ।

(વાણી કે પૈતીસ ગુણ પહેલે કહ ચુકે હૈં અતઃ યહાં ઇનકા અર્થ કહને કી આવશ્યકતા નહીં ।

મગવાન્ કે વચન ચાર અનુયોગોં મેં વિભક્ત હૈં । ચાર અનુયોગ યે હૈં :—

૧ ચરણકરણાનુયોગ, ૨ ધર્મકથાનુયોગ, ૩ ગણિતાનુયોગ, ઓર ૪ દ્રવ્યાનુયોગ ।

મગવાનકે વચનોં કે અનુકૂલ ગણધરોં કા વ્યાખ્યાન અનુયોગ કહલાતા હૈ ।

(૧) ચરણકરણાનુયોગ—

જિસકે દ્વારા મગ-સાગર કા કિનારા અર્થાત્ ચૌદહવાં ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કિયા જાય

મગવાનના વચનોમાં આ પ્રમાણે પાંત્રીશ અતિશય અર્થાત્-ગુણ હોય છે. પ્રાચીન આચાર્યોએ પણ કહ્યું છે:— “સકારવત્તં” ઇત્યાદિ ૩૫. (પાંત્રીશ વાણીના ગુણો પહેલા કહી ગયા છીએ જેથી અહિં એનો અર્થ કહેવાની આવશ્યકતા નથી.)

મગવાનના વચન ચાર અનુયોગોમાં વહેંચાયેલા છે. ચાર અનુયોગ આ છે— (૧) ચરણકરણાનુયોગ, (૨) ધર્મકથાનુયોગ, (૩) ગણિતાનુયોગ અને (૪) દ્રવ્યાનુયોગ.

મગવાન-દ્વારા પ્રરૂપિત અર્થની સાથે ગણધરોના વચનનો યોગ હોય તે અનુયોગ કહેવાય છે, તાત્પર્ય એ છે કે:—મગવાનના વચનોને અનુકૂળ ગણધરોએ કહેલું વ્યાખ્યાન તે અનુયોગ કહેવાય છે.

(૧) ચરણકરણાનુયોગ—

જેનાથી ભવસાગરનો કિનારો અર્થાત્ ચૌદમું ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરી શકાય, તેને અર્થાત્ મૂલગુણને ‘ચરણ’ કહે છે, અથવા વત આદિ ચરણ કહેવાય છે. તે સિત્તેર (૩૦) છે. કહ્યું પણ છે—

વસ્થાસ્વરૂપમનેનેતિ ચરણં = મૂલગુણરૂપમ્ । યદ્વા ચરણં=વ્રતાદિ, તત્ત્વ સપ્તતિ-  
સંખ્યકમ્, ઉક્તઞ્ચ—

“ વ્યપ્ત સમણધર્મ ૧૦ સંજમ ૧૭, વૈયાવર્ચ ૧૦ ચ વંમગુત્તીઓ ૯ ।

પાણાઈતિયં ૩ તવ ૧૨ કોહનિગ્ગહાઈ ૪ ચરણમેયં ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

ક્રિયતે ચરણસ્ય પુષ્ટિરનેનેતિ કરણમ્ = ઉત્તરગુણરૂપમ્ । યદ્વા કરણં=  
પિંડવિશુદ્ધ્યાદિ, એતદપિ સપ્તતિસંખ્યકમ્, ઉક્તઞ્ચ—

ઉસે અર્થાત્ મૂલગુણકો ‘ચરણ’ કહતે હૈં । અથવા વ્રત આદિ ‘ચરણ’ કહલાતે હૈં । વે  
૭૦ સત્તર હૈં । કહા મી હૈ —

પાંચ મહાવ્રત, દશ શ્રમણધર્મ, સત્રહ સંયમ, દશ વૈયાવૃત્ય, નૌ બ્રહ્મચર્ય કી  
ગુપ્તિયાં, રત્નત્રય — (સમ્યગ્જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર), બારહ પ્રકારકા તપ, ચાર ક્રોધાદિ-  
વિજય—(ક્રોધવિજય, માયાવિજય, માનવિજય, લોભવિજય), યહ ૭૦ સત્તર પ્રકારકા ‘ચરણ’  
કહલાતા હૈ ।

ચરણ કી પુષ્ટિ કરને વાલા ‘કરણ’ કહલાતા હૈ । કરણ કા અભિપ્રાય હૈ—  
ઉત્તર ગુણ । અથવા પિંડવિશુદ્ધિ આદિકો કરણ કહતે હૈં । હસકે મી સત્તર ૭૦ ભેદ  
હૈં । કહા મી હૈ :—

પાંચ મહાવ્રત, દસ શ્રમણધર્મ, સત્તર સંયમ, દશ વૈયાવૃત્ય, નવ બ્રહ્મચર્યની  
ગુપ્તિઓ, રત્નત્રય—(સમ્યગ્જ્ઞાન, દર્શન અને ચારિત્ર) બાર પ્રકારનો તપ, ચાર  
ક્રોધાદિવિજય—(ક્રોધવિજય, માનવિજય, માયાવિજય, લોભવિજય) આ પ્રમાણે  
સિત્તર (૭૦) પ્રકારના ચરણ કહેવાય છે. ॥ ૧ ॥

ચરણની પુષ્ટિ કરવા વાળા કરણ કહેવાય છે. કરણનો અભિપ્રાય છે—ઉત્તર ગુણ,  
અથવા પિંડવિશુદ્ધિ આદિને કરણ કહે છે, તેના પણ સિત્તર ભેદ છે. કહ્યું પણ છે —

“પિંડવિસોહી૪ સમિર્ફ૫, ભાવણ૧૨ પડિમા૧૨ ચ ઇન્દ્રિયનિરોહો૫ ।

પડિલેહણ૨૫ ગુત્તીઓ૩, અભિગ્ગહા૪ ચેવ કરણં તુ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

તયોરનુયોગશ્ચરણકરણાનુયોગઃ (૧) ।

ધર્મકથાનુયોગાદયશ્ચરણકરણયોર્ભવ્યજીવાન્ પ્રવર્તયન્તીતિ તેષાં ચરણ-  
કરણાન્નતયા પ્રાધાન્યમેતસ્યાનુયોગસ્ય, અત એવાસ્ય પ્રાથમ્યમ્ । ઉક્તશ્ચ—

આત્મન્ ! જાનીહિ પૂર્વ ચરણકરણયોરાશ્રયે યન્મહત્ત્વં,

મોહં દૂરીકરોતિ પ્રકટયતિ પરં નિશ્ચયાત્મસ્વરૂપમ્ ।

“ચાર પિંડવિશુદ્ધિ, પાંચ સમિતિયાં, બારહ ભાવના, બારહ પડિમા, પાંચ ઇન્દ્રિયનિરોધ, પચીસ પ્રતિલેખના, ત્રીન ગુપ્તિયાં, ચાર અભિગ્રહ, યહ સત્તર ૭૦ પ્રકારકા કરણ કહલ્લતા હૈ ।

ઇસ તરહ ચરણ ઓર કરણ કે અનુયોગ કો, અર્થાત્ ભગવાન્ કી વાણી કે અનુકૂલ વ્યાખ્યાન કો ચરણકરણાનુયોગ કહતે હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—જિસ શાસ્ત્ર મેં ચારિત્ર સમ્બન્ધી નિરૂપણ હૈ, વહ ચરણકરણાનુયોગ સમજના ચાહિયે ।

ધર્મકથાનુયોગ આદિ શેષ ત્રીન અનુયોગ ભવ્યજીવોં કો ચરણ ઓર કરણ મેં પ્રવૃત્ત કરતે હૈં, અતઃ વે ઇસી અનુયોગ કે અન્ન હૈં । ઇસ પ્રકાર ચારોં અનુયોગો મેં ચરણકરણાનુયોગ હી પ્રધાન હૈ । પ્રધાન હોને કે કારણ હી ઇસ કી ગણના સર્વપ્રથમ કી ગઈ હૈ । કહા મી હૈ—

હે આત્મન્ ! ચરણ ઓર કરણ મેં જો મહત્ત્વ હૈ, ઉસે પહેલે સમજ લે । વહ મોહ કો નિવારણ કરતા હૈ, આત્મા કે નિશ્ચય અર્થાત્ વાસ્તવિક સ્વરૂપ કો પ્રકટ કરતા હૈ, વહ સર્વ

“ચાર પિંડવિશુદ્ધિ, પાંચ સમિતિઓ, બાર ભાવના, બાર પડિમા, પાંચ ઇન્દ્રિય નિરોધ, પચીસ પ્રતિલેખના, ત્રણ ગુપ્તિઓ, ચાર અભિગ્રહ, આ સર્વ કરણ કહેવાય છે.” ॥ ૧ ॥

આ પ્રમાણે ચરણ અને કરણના અનુયોગને અર્થાત્ ભગવાનની વાણીને અનુકૂલ વ્યાખ્યાનને ચરણકરણાનુયોગ કહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે—જે શાસ્ત્રમાં ચારિત્રસમ્બન્ધી નિરૂપણ છે તે ચરણકરણાનુયોગ સમજવું જોઈએ.

ધર્મકથાનુયોગ આદિ બાકીના ત્રણ અનુયોગ ભવ્ય જીવોને ચરણ અને કરણમાં પ્રવૃત્ત કરે છે; તેટલા માટે તે પણ એ અનુયોગનું અંગ છે. આ પ્રકારે ચારેય અનુયોગોમાં ચરણકરણાનુયોગ પ્રધાન-મુખ્ય છે.

મુખ્ય હોવાના કારણે જ તેની ગણના સૌથી પ્રથમ કરી છે. કહ્યું પણ છે:—

“હે આત્મન્ ! ચરણ અને કરણમાં જે મહત્ત્વ છે, તેને પ્રથમ સમજ લે, તે



આધારોઽયં ગુણાનામપનયતિ સદાઽનાદિમિથ્યાત્વદોષં,  
 હેતુર્યોઽયં વિશુદ્ધેર્દમયતિ નિતરામિન્દ્રિયાણિ દ્રુતં યઃ ॥ ૧ ॥  
 સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય દાતા શિવસુખજનકઃ કર્મધૂલેશ્ચ હર્તા,  
 કર્તા વિદ્યોતનસ્યાઽઽત્મનિ સકલગુણસ્યાઽદ્વિતીયઃ પ્રકાશઃ ।  
 આત્મન્નેવાત્મનીનશ્વરણકરણયોરાશ્રયઃ કાઽત્ર શંકા ?,  
 શંકારો નૈષ લોકઃ પરિણતિવિરસઃ કિં સુખાશાં કરોષિ ? ॥ ૨ ॥

(૨) અથ ધર્મકથાનુયોગઃ—

ભવજલનિર્ધૌ નિપતન્તં ભવ્યજાતં ધારયતિ=તરિરિવ તારયતિ શુભસ્થાનં  
 પ્રાપયતીતિ ધર્મઃ, તસ્ય કથા ભગવદેશનાલક્ષણો વાક્યમ્બન્ધઃ ધર્મકથા । અહિંસા-  
 દિગ્પ્રરૂપણા વા ધર્મકથા । અથવા શ્રુતચારિત્રલક્ષણધર્મપ્રધાનકથા-ધર્મકથા । યદ્વા

ગુણોં કા આધાર હૈ, ઔર અનાદિકાલીન મિથ્યાત્વ દોષ કો દૂર કરતા હૈ, વિશુદ્ધિ કા કારણ  
 હૈ, ઔર ઇન્દ્રિયોં કો શીઘ્ર હી દમન કરને વાલા હૈ ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન કા દાતા હૈ, મોક્ષસુખ ઉત્પન્ન કરને વાલા હૈ, કર્મરૂપી ધૂલકો દૂર  
 કરને વાલા હૈ, આત્મામેં ઉદ્યોત-પ્રકાશ કરને વાલા હૈ ઔર સમસ્ત ગુણોં કા અદ્વિતીય  
 પ્રકાશક હૈ, હે આત્મન્ ! ચરણ ઔર કરણ કા આશ્રય લાભકારી હૈ, ઇસ વિષયમેં શંકા કો  
 સ્થાન હી કહાં હૈ ? અર્થાત્ નિશ્ચિતરૂપસે હી વહ કલ્યાણ કરને વાલા હૈ, યહ લોક (સંસાર)  
 તો પરિણામ મેં એકદમ નીરસ હૈ, તૂ ઇસ સે સુખ કી અભિલાષા ક્યોં કરતા હૈ ॥ ૨ ॥

(૨) ધર્મકથાનુયોગ

સંસારરૂપી સાગરમેં ડૂબતે હુએ ભવ્ય જીવોં કો ધારણ કરનેવાલા—નૌકા કે સમાન

મોહનું નિવારણ કરે છે, આત્માના નિશ્ચય અર્થાત્ વાસ્તવિક સ્વરૂપને પ્રગટ કરે છે, તે  
 સર્વ શુણોનો આધાર અને અનાદિ કાલના મિથ્યાત્વ દોષને દૂર કરે છે, વિશુદ્ધિનું કારણ  
 અને ઇન્દ્રિયોના શીઘ્ર દમન માટે તે સહાયક છે ॥ ૧ ॥

સમ્યગ્જ્ઞાન દેનાર છે અને મોક્ષસુખ ઉત્પન્ન કરવાવાળું છે. કર્મરૂપી ધૂળને  
 દૂર કરવાવાળું છે. આત્મામાં ઉદ્યોત-પ્રકાશ કરવા વાળું છે. અને સમસ્ત શુણોનો  
 અદ્વિતીય પ્રકાશક છે. હે આત્મન્ ! ચરણ અને કરણનો આશ્રય કલ્યાણકારી છે,  
 આ વિષયમાં શંકાને સ્થાન જ ક્યાં છે ? અર્થાત્ નિશ્ચિત રૂપથી જ તે કલ્યાણ કરવા-  
 વાળું છે, આ લોક (સંસાર) તો પરિણામે એકદમ નીરસ-રસરહિત છે, તું તેમાં  
 સુખની અભિલાષા શા માટે કરે છે ? ॥ ૨ ॥

(૨) ધર્મકથાનુયોગ

સંસારરૂપી સાગરમાં ડુબતા ભવ્ય જીવોને ધારણ કરવાવાળી, વહાણ પ્રમાણે

શુભાશુભકર્મવિપાકોપદર્શનં ધર્મકથા । કિંચ - તીર્થઙ્કરચક્રવર્ત્યાદિચારિત્રવર્ણનં ધર્મકથા । તસ્યા અનુયોગઃ ધર્મકથાનુયોગઃ ।

ધર્મકથા ચતુર્વિધા—(૧)-આક્ષેપણી-(૨)-વિક્ષેપણી- (૩)-સંવેદની-(૪)-નિર્વેદનીભેદાત્ ।

આક્ષેપણ્યાદિધર્મકથાભિરાક્ષિપ્તાઃ વિક્ષિપ્તાઃ સંવેદિતા નિર્વેદિતાઃ સન્તો ભવ્યપ્રાણિનશ્ચારિત્રં પ્રાપ્નુવન્તિ ।

કિનારે લગાદેને વાળા, અર્થાત્ શુભસ્થાનમેં પહુંચા દેનેવાલા ધર્મ કહલાતા હૈ ।  
 उस धर्म की कथा अर्थात् भगवान की देशना जिसमें पाई जाय उसे धर्मकथा कहते हैं । अथवा  
 अहिंसा आदि की प्ररूपणा धर्मकथा कहलाती है । अथवा श्रुत और चारित्र की प्रधानता  
 वाली कथा को धर्मकथा कहते हैं । अथवा शुभ और अशुभ कर्मफल को प्रकाश करना  
 धर्मकथा है । या तीर्थङ्कर चक्रवर्ती आदि महापुरुषों का चरित्र वर्णन करना धर्मकथा है ।  
 उसके अनुयोग-व्याख्यान को धर्मकथानुयोग कहते हैं ।

ધર્મકથા ચાર પ્રકાર કી હૈ—(૧) આક્ષેપણી (૨) વિક્ષેપણી (૩) સંવેદની ઓર  
 (૪) નિર્વેદની ।

આક્ષેપણી આદિ ધર્મકથાઓ સે આક્ષિપ્ત સંવેદિત ઓર નિર્વેદિત (વિરક્ત) હુપ ભવ્ય  
 જીવ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરતે હૈ ।

કિનારે લઈ જનારી, અર્થાત્ શુભ સ્થાનમાં પહોંચાડી દેવા વાળી વસ્તુને ધર્મ કહેવામાં  
 આવે છે. તે ધર્મની કથા અર્થાત્ ભગવાનનો ઉપદેશ જેમાં જોવામાં આવે છે. તેને  
 ધર્મકથા કહે છે. અથવા અહિંસા આદિની પ્રરૂપણા તે ધર્મકથા કહેવાય છે. અથવા  
 તે શ્રુત અને ચારિત્રની પ્રધાનતાવાળી કથાને ધર્મકથા કહે છે, અથવા શુભ અને  
 અશુભ કર્મ-ફલને પ્રગટ કરવું તે ધર્મકથા છે. અથવા તીર્થંકર, ચક્રવર્તી આદિ  
 મહાપુરુષોના ચરિત્રનું વર્ણન કરવું તે ધર્મકથા છે. તેનાં અનુયોગ-વ્યાખ્યાનને  
 ધર્મકથાનુયોગ કહે છે.

ધર્મકથા ચાર પ્રકારની છે. (૧) આક્ષેપણી (૨) વિક્ષેપણી (૩) સંવેદની અને  
 (૪) નિર્વેદની.

આક્ષેપણી આદિ ધર્મકથાઓથી આક્ષિપ્ત, વિક્ષિપ્ત, સંવેદિત અને નિર્વેદિત  
 (વિરક્ત) થયેલા ભવ્ય જીવ ચારિત્ર પ્રાપ્ત કરે છે.

(૧) આક્ષેપણી—

આક્ષિપ્યતે=મોહં નિરાકૃત્ય ચારિત્રં પ્રતિ સમાકૃષ્યતે શ્રોતાઽનયેતિ-આક્ષેપણી,  
ઉક્તશ્ચ—

“સ્થાપ્યતે સત્પથે શ્રોતા, યયા સાઽક્ષેપણી કથા ।  
યથેષુકારં કમલા, -વતી ધર્મે વ્યતિષ્ઠિત્ ॥ ૧ ॥”

બાલ્યાવસ્થાતનયદ્વયસમન્વિતઃ સપત્નીકો મૃગુપુરોહિતઃ સર્વસ્વં પરિહાય દીક્ષાર્થં  
સદનાચરિયૌ । તદીયં સકલં વસુ પરિગૃહીતં પત્યેતિ વિદિત્વા કમલાવતી રાણી  
વૈરાગ્યમુપગતા સ્વપતિમિષુકારં નૃપતિં પ્રત્યબોધયત્ । ‘રાજન્ ! કિં વાન્તાશિવદ્

(૧) આક્ષેપણી

જિસ કથા કે દ્વારા શ્રોતા મોહ સે હટકર ચારિત્ર કે પ્રતિ આકર્ષિત હોતે હૈં, ત્હ  
આક્ષેપણી ધર્મકથા કહલાતી હૈ, કહા મી હૈં —

“ જિસ કે દ્વારા શ્રોતા સન્માર્ગ મેં સ્થાપિત કિયે જાતે હૈં, ઉસે આક્ષેપણી કથા કહતે  
હૈં । જૈસે કમલાવતીને ઇષુકાર કો ધર્મ મેં સ્થિર કિયા ॥ ૧ ॥ ”

છોટી ઉમ્મ વાલે અપને દો બાલકોં કે સાથ પત્નીસહિત મૃગુ પુરોહિત સર્વસ્વ ત્યાગ  
કર દીક્ષા ગ્રહણ કરને કે લિયે અપને ઘર સે નિકલ । ઉસ પુરોહિત કા સમસ્ત ધન મેરે  
પતિ (રાજા) ને લે લિયા હૈ, એસા જાન કરકે રાની કમલાવતી કો વૈરાગ્ય હો ગયા ઓર  
ઉસને અપને પતિ રાજા ઇષુકાર કો સમજાયા—“મહારાજ ! જિસ ધનકા મૃગુ પુરોહિત ને

(૧) આક્ષેપણી—

જે કથાદ્વારા શ્રોતા મોહથી હઠી બંધને ચારિત્ર તરફ આકર્ષિત થાય છે તે  
આક્ષેપણી ધર્મકથા કહેવાય છે. કહું પણ છે:—

“ જેનાથી શ્રોતાને સન્માર્ગમાં સ્થાપિત કરી શકાય છે તેને આક્ષેપણી કથા  
કહે છે, જેવી રીતે કમલાવતીએ ઇષુકારને ધર્મમાં સ્થિર કર્યો. ॥ ૧ ॥

નાની ઉમરવાળા પોતાના બે બાળકોની સાથે તથા પત્ની સહિત મૃગુ પુરોહિત  
સર્વસ્વ ત્યાગ કરીને દીક્ષા ગ્રહણ કરવા માટે પોતાના ઘેરથી નીકળ્યા, તે પુરોહિતનું  
તમામ ધન મારા પતિ (રાજા) એ લઈ લીધું છે. એણે જાણીને રાણી કમલાવતીને  
વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થઈ ગયો અને તેણે પોતાના પતિ રાજા ઇષુકારને સમજાવ્યા—



ભોગમાશંસસે ?' इत्यादि । अथ कमलावतीवचनश्रवणक्षणसंजातप्रतिबोध इषुकारः कमलावती च दीक्षार्थं सदैव निष्क्रान्ता ।

(૨) વિક્ષેપણી—

વિક્ષિપ્યતે=સમ્યગ્વાદગુણોત્કર્ષપ્રદર્શનેન મિથ્યાવાદાદપસાર્યતે શ્રોતાઽનયેતિ વિક્ષેપણી । ઉક્તઞ્ચ—

“સમ્યગ્વાદપ્રકર્ષેણ, મિથ્યાવાદસ્ય खण्डनम् ।  
यथा विक्षेपणी सैव, यथा केशी प्रदेशिनम्” ॥ ૨ ॥

મિથ્યાવાદાદપસારયમાસેતિ શેષઃ ।

વમન કર દિયા, વહ ધન ભોગોગે ? આપ વમન કા સેવન કરને વાલોં કી તરહ ભોગ કી લાલસા ક્યોં કરતે હૈં ?” इत्यादि । इषुकार को कमलावती के वचन सुनते ही वैराग्य हो आया और राजा तथा रानी दोनों साथ-साथ दीक्षा ग्रहण कर ली ॥ ૧ ॥

(૨) વિક્ષેપણી

સમ્યગ્વાદ અર્થાત્ અનેકાન્તવાદ યા સિદ્ધાન્ત કે ગુણોં કા દિગ્દર્શન કરાકર શ્રોતાઓં કો મિથ્યાવાદ અર્થાત્ એકાન્તવાદ સ હટાને વાલી કથા વિક્ષેપણી કહલાતી હૈં । કહા મી હૈ —

“મહારાજ ! જે ધનને ભૂશુ પુરોહિતે વમન કરી નાખ્યું છે તે ધનને આપ ભોગવશે ? આપ વમનનું સેવન કરવાવાળાની પેઠે ભોગની લાલસા શા માટે કરો છો ?” इत्यादि

રાજા ઇષુકાર પોતે કમલાવતીના વચન સાંભળતાં જ વૈરાગ્ય પામ્યા અને રાજા તથા રાણી બન્ને સાથે-સાથે દીક્ષા ગ્રહણ કરી. ॥ ૧ ॥

(૨) વિક્ષેપણી

સમ્યગ્વાદ અર્થાત્ અનેકાન્તવાદ, અથવા સત્યસિદ્ધાન્તના ગુણોનું દિગ્દર્શન કરાવીને શ્રોતાઓને મિથ્યાવાદ અર્થાત્ એકાન્તવાદથી દૂર કરાવનારી કથા તે વિક્ષેપણી કથા કહેવાય છે, કહ્યું પણ છે:—

કેશિશ્રમણતઃ કરુણારસપરિપૂર્ણમાસ્તિકતાવાદમાકર્ણ્ય પ્રદેશી નામ ભૂપાલો નાસ્તિકતાવાદં પરિત્યજ્ય દ્વાદશવ્રતધારી શ્રાવકો ભૂત્વા મૃત્વા ચ પ્રથમકલ્પે સૂર્યામ-  
નામા દેવો વભૂવ ।

### (૩) સંવેદની—

સંવેદયતે = સંસારાસારતાપ્રદર્શનેન મોક્ષાભિલાષ ઉત્પાદયતેઽનયેતિ સંવેદની ।

ઉક્તશ્ચ—

“યસ્યાઃ શ્રવણમાત્રેણ, મુક્તિવાઙ્છા પ્રજાયતે ।

સંવેદની યથા મલ્લી, ષડ્ નૃપાન્ પ્રત્યવોધયત્ ॥૩॥”

“સમ્યગ્વાદ કા ઉત્કર્ષ દિશ્વલા કર મિથ્યાવાદ અર્થાત્ મિથ્યામાન્યતા કા સ્વંડન કરને વાલી વિક્ષેપણી કથા હૈ । જૈસે—કેશી શ્રમણને પ્રદેશી રાજા કો મિથ્યાવાદ સે હટાયા થા” ॥ ૨ ॥

શ્રી કેશી શ્રમણ કે શ્રીમુખસે કરુણા—રસ સે પરિપૂર્ણ આસ્તિકવાદ સુન કર પ્રદેશી નામક રાજા નાસ્તિકવાદ ત્યાગ કર વારહ વ્રતધારી શ્રાવક હો કર મરકર પ્રથમ સૌધર્મ કલ્પમેં સૂર્યામ નામક દેવ હુઆ ।

### (૩) સંવેદની

જો ધર્મકથા સંસાર કી અસારતા પ્રદર્શિત કરકે મગ્ય જીવોં મેં મોક્ષકી અભિલાષા જાગૃત કરતી હૈ, વહ સંવેદની ધર્મકથા હૈ । કહા મી હૈ—

“સમ્યગ્વાદનો ઉત્કર્ષ બતાવીને મિથ્યાવાદ અર્થાત્ મિથ્યા માન્યતાનું ખંડન કરવાવાળી વિક્ષેપણી કથા છે. જેવી રીતે કેશી શ્રમણે પ્રદેશી રાજાને મિથ્યાવાદથી મુક્ત કર્યા હતા. ॥ ૨ ॥”

શ્રી કેશી શ્રમણના શ્રીમુખથી કરુણારસથી પરિપૂર્ણ આસ્તિકવાદ સાંભળીને પ્રદેશી નામના રાજાએ નાસ્તિકવાદ ત્યાગ કર્યો, ખાર વ્રતધારી શ્રાવક થઈને મરીને પ્રથમ સૌધર્મકલ્પમાં સૂર્યામ નામના દેવ થયા.

### (૩) સંવેદની

જે કથા સંસારની અસારતા બતાવીને લવ્યજીવોમાં મોક્ષની અભિલાષા જાગૃત કરે છે, તે સંવેદની ધર્મકથા છે. કહ્યું પણ છે—

મહીકુમારી ષડ્ ભૂમિપાલાન્ સ્વસ્મિન્નુરક્તાન્ વિજ્ઞાય, તેભ્યઃ સંસારા-  
સારતાં પ્રદર્શ્ય મોક્ષાભિલાષં જનયામાસ ।

#### (૪) નિર્વેદની—

નિર્વેદ્યતે=વિષયભોગેભ્યો વિરજ્યતે શ્રોતાઽનયેતિ નિર્વેદની, ઉક્તઞ્ચ—

“યદાઽઽકર્ણનમાત્રેણ, વૈરાગ્યમુપજાયતે ।

નિર્વેદની યથા શાલિ, -મદ્રો વીરેણ બોધિતઃ ” ॥ ૪ ॥

“જિસ કથા કો શ્રવણ કરને માત્ર સે હી મોક્ષ કી આકાંક્ષા ઉત્પન્ન હોતી હૈ, વહ સંવેદની ધર્મકથા હૈ । જૈસે—મહી નામક રાજકન્યાને છહ રાજાઓં કો બોધ દિયા ” ॥ ૩ ॥

છહ રાજા મેરે ઉપર અનુરક્ત હૈ, યહ જાનકર મહીકુમારીને ઉન્હેં સંસારકી નિઃસારતા સમજાઈ ઓર ઉન મેં મુક્તિ કી અભિલાષા ઉત્પન્ન કર દી । મહી કુમારી કા વહ ઉપદેશ સંવેદની ધર્મકથા હૈ ॥ ૩ ॥

#### (૪) નિર્વેદની

જો કથા શ્રોતાઓં કો વિષયભોગસે વિરક્ત બનાતી હૈ, વહ નિર્વેદની ધર્મકથા કહલાતી હૈ । કહા મી હૈ :—

“જિસકા શ્રવણ કરતે હી વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હોતા હૈ, વહ નિર્વેદની ધર્મકથા હૈ । જૈસે ભગવાન્ મહાવીરને શાલિમદ્ર કો પ્રતિબોધ દિયા ” ॥ ૪ ॥

“જે કથા સાંભળવામાત્રથી જ મોક્ષની ઈચ્છા ઉત્પન્ન થાય છે તે સંવેદની ધર્મકથા છે. જેવી રીતે મહી નામની રાજકન્યાએ છ રાજાઓને બોધ આપ્યો. ॥૩॥”

છ રાજા મારા ઉપર આસક્ત-પ્રેમવાળા છે. એવું જાણીને મહી કુમારીએ તેઓને સંસારની નિઃસારતા સમજાવી અને તેઓમાં મુક્તિની અભિલાષા ઉત્પન્ન કરી, મહીકુમારીનો તે ઉપદેશ સંવેદની ધર્મકથા છે.

#### (૪) નિર્વેદની

જે કથા શ્રોતાઓને વિષય ભોગથી વિરક્ત બનાવે છે તે નિર્વેદની કહેવાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“જેનું શ્રવણ કરતાં જ વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થાય છે, તે નિર્વેદની ધર્મકથા છે જેવી રીતે ભગવાન મહાવીરે શાલિમદ્રને પ્રતિબોધ આપ્યો. ॥ ૪ ॥”



કમલકોમલકાન્તાકારઃ શાલિભદ્રકુમારઃ શ્રીમહાવીરતીર્થઙ્કરકથિતધર્મદેશના-  
શ્રવણસમનન્તરં ત્વરયા વૈરાગ્યમુપગતચારિત્રં પ્રાપ । ઉક્તશ્ચ—

“ભવસ્ય સર્વે ક્ષણમઙ્ગુરં સુખં,  
વિદન્તિ યે ધર્મકથાનુરાગિણઃ ।  
વિહાય તે ભોગમનન્તદુઃસ્વદં,  
ચરન્તિ ચારિત્રવને વિરાગિણઃ” ॥ ૪ ॥

ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રસ્યૈકોનત્રિશેઽધ્યયને ધર્મકથાફલમાહ—

“ધમ્મકહાણે ણં મંતે ! જીવે કિં જણયઈ ? । ધમ્મકહાણે ણં જીવે નિજ્જરં  
જણયઈ । ધમ્મકહાણે ણં પવયણં પમાવેઈ । પવયણપમાવણેણં જીવે આગમેસસ્સ  
મહત્તાણે કમ્મં નિવંધઈ । ”

કમલ કે સમાન કોમલ ઓર કાન્તિમાન આકૃતિ વાલા શાલિભદ્ર કુમાર શ્રી મહાવીર  
ભગવાન કો ધર્મદેશના સુનતે હી વૈરાગ્ય કો પ્રાપ્ત હુઆ, ઓર ડસને ચારિત્ર ધારણ કર લિયા ।  
કહા મી હૈ :—

“ધર્મકથા મેં અનુરાગ રખને વાલે જો પુરુષ સંસાર કે સુખ ક્ષણમઙ્ગુર સમજા લેતે  
હૈં, વે અનન્ત દુઃસ્વ દેને વાલે ભોગકા ત્યાગ કરકે, વિરાગી હો કર ચારિત્રરૂપી બગીચે મેં  
વિહાર કરતે હૈં ” ॥ ૧ ॥

ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર કે અનતીસર્વે અધ્યયન મેં ધર્મકથા કા ફલ બતલાયા ગયા હૈ । વહ  
હસ માંતિ હૈ —

કમલના જેવા કોમલ અને કાન્તિમાન આકૃતિવાળા શાલિભદ્રકુમાર શ્રી મહાવીર  
ભગવાનની ધર્મદેશના સાંભળતાં જ વૈરાગ્યને પ્રાપ્ત થયા અને ચારિત્ર ધારણ કર્યું.  
કહ્યું પણ છે:—

“ધર્મકથામાં પ્રીતિ રાખવાવાળા જે પુરુષ સંસારના સુખને ક્ષણભંગુર સમજી  
લે છે તે અનન્ત દુઃખ આપવાવાળા ભોગનો ત્યાગ કરીને વૈરાગ્ય ધારણ કરી  
ચારિત્રરૂપી બગીચામાં વિહાર કરે છે. ॥ ૧ ॥”

ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રના ઓગણત્રીસમાં અધ્યયનમાં ધર્મકથાનું ફલ બતાવ્યું છે, તે  
આ પ્રમાણે છે:—

આક્ષેપણ્યાદિચતુર્વિધધર્મકથાસંચારોદ્ભાવિતાનન્દધારાતરંગસમુદ્ભસિતસ્વાન્તપ્ર-  
ભૂતભવ્યભાવિતાત્મા ધર્મકથા જન્મજરામરણાદિભીષણપીનપાઠીનમીનમકર-  
ગણસંક્રમણપ્રિયવિયોગાપ્રિયસંયોગવડવાનલાકુલિતાપારસંસારસાગરાત્ સ્વયં તરતિ,  
પરાનપિ તારયતિ ।

સ ચ પ્રભૂતભવ્યાન્ પ્રવાજયન્ ભવકૂપપતત્પ્રાણત્રાણસમાશ્વાસનજિનશાસન-  
મહિમાનમુપવૃંહયન્ સમસ્તમેવ જગત્ જિનશાસનરસિકં કુર્વન્ , મિથ્યાત્વમુત્થાપયન્ ,

“ ભગવન્ ! ધર્મકથા સે જીવ કો વ્યા લાભ હોતા હૈ ? ઉત્તર—ધર્મકથા સે જીવ કો  
નિર્વાણ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ધર્મકથા સે જીવ પ્રવચન કી પ્રભાવના કરતા હૈ । પ્રવચન કી  
પ્રભાવના સે આગે કે લિયે મદ્ર (શુભ) કર્મોં કા બન્ધ કરતા હૈ ” ॥ ૪ ॥

આક્ષેપણી આદિ ચાર પ્રકાર કી ધર્મકથા સે ઉત્પન્ન હોને વાલી આનન્દ કી ધારાઓ  
કી તરંગોં સે જિન કા અન્તઃકરણ ઉદ્ધાસ કો પ્રાપ્ત હુઆ હૈ, એસે અનેક ભાવિતાત્મા ભવ્ય  
ધર્મકથા કરને વાલે પુરુષ જન્મ જરા ઓર મરણ રૂપી મયાનક ઓર વિશાલ મગરમચ્છોંસે  
વ્યાપ્ત, એવં ઇષ્ટ-વિયોગ ઓર અનિષ્ટ-સંયોગ રૂપી વડવાનલ સે આકુલ-વ્યાપ્ત અપાર  
સંસાર સાગર સે સ્વયં મી પાર હોતે હૈ ઓર દૂસરોં કો મી પાર કરતે હૈ ।

વહ ધર્મકથાકાર અનેકાનેક ભવ્ય જીવોં કો દીક્ષિત કરતા હુઆ, સંસારરૂપી કૂપ મેં  
પડનેવાલે પ્રાણિયોં કો ત્રાણ કરને કા આશ્વાસન દેને વાલે જિનશાસન કી મહિમા બઢાતા  
હુઆ સમસ્ત જગત્ કો જિનશાસન કા રસિક-અનુરાગી બનાતા હુઆ મિથ્યાત્વ કી ઉત્થાપના

“ લગવન્ ! ધર્મકથાથી જીવને શું લાભ થાય છે ?

ઉત્તર—ધર્મકથાથી જીવને નિર્વાણની પ્રાપ્તિ થાય છે, ધર્મકથાથી જીવ  
પ્રવચનની પ્રભાવના કરે છે, પ્રવચનની પ્રભાવનાથી આગળ શુભ કર્મોના બંધ કરે છે.”

આક્ષેપણી આદિ ચાર પ્રકારની ધર્મકથાથી ઉત્પન્ન થનારા આનન્દની ધારાઓના  
તરંગોથી જેનું અન્તઃકરણ ઉદ્ધાસને પ્રાપ્ત થયું છે, એવા અનેક ભાવિતાત્મા ભવ્ય-  
ધર્મકથા કરવાવાળા પુરુષ જન્મ, જરા અને મરણરૂપી ભયાનક અને વિશાલ મગર-  
મચ્છોથી વ્યાપ્ત એ પ્રમાણે ઇષ્ટ-વિયોગ અને અનિષ્ટ-સંયોગરૂપી વડવાનલથી  
સંહિત અપાર સંસારસાગરથી ઘોતે પણ પાર ઉતરે છે, અને બીજાને પણ પાર  
ઉતારે છે.

સમ્યક્ત્વમુપસ્થાપયન્, કર્મકોટિં ક્ષપયતિ । ઉત્કૃષ્ટરસાયનપરિણામમસૌ લભેત  
ચેત્, ત્રૈલોક્યપવિત્રં તીર્થઙ્કરનામગોત્રં સમુપાર્જયતિ ।

અપિ ચાસૌ સ્વતઃપ્રકાશસ્વભાવસ્યાપિ જિનશાસનસ્ય મિથ્યાત્વાદિ-  
તિમિરાવૃત્તદેશકાલાદિષુ યથોચિત્પ્રચારલક્ષણારાધનતઃ પ્રભાવકપદં વિભર્તિ ।  
ઉક્તશ્ચ—

“પાવયળી ધમ્મકહી, વાઈ લઢીસરો તવસ્સી ય ।  
વિજ્ઞાસિદ્ધો ય કવી, અદ્વેવ પ્રભાવગા મળિયા ॥ ૧ ”

ઔર સમ્યક્ત્વ કી ઉપસ્થાપના કરતા હુઆ કર્મકોટિ કો ક્ષપાતા હૈ । કદાચિત્ પરિણામ મેં  
ઉત્કૃષ્ટ રસાયન આ જાય તો વહ ત્રિલોક મેં પવિત્ર તીર્થઙ્કર ગોત્ર કા મી ઉપાર્જન કરતા હૈ ।

જિન ભગવાન કા શાસન સ્વતઃ ઉજ્જ્વલ હૈ, તથાપિ જિસ દેશવિશેષ ઔર કાલ  
વિશેષ મેં મિથ્યાત્વ કા અન્ધકાર ફૈલ જાતા હૈ, વહાં ભગવાન કે શાસન કા પ્રચારરૂપ  
આરાધન કરકે ધર્મકથાકાર પ્રભાવક પદ પ્રાપ્ત કરતા હૈ । કહા મી હૈ :—

“પ્રભાવક આઠ પ્રકાર કે હૈ :— (૧) પ્રાવચનિક, (૨) ધર્મકથી, (૩) વાદી,  
(૪) લબ્ધિઓ કા સ્વામી, (૫) તપસ્વી, (૬) વિદ્યાવાન્-રોહિણી પ્રજ્ઞા આદિ વિદ્યા કે  
ધારક, (૭) સિદ્ધ-વચનસિદ્ધિ આદિ સિદ્ધિયોં વાલા, (૮) કવિ” ।

તે ધર્મકથા કહેનાર અનેક-અનેક લવ્ય જીવોને દીક્ષિત કરે છે અને સંસાર  
રૂપી કુવામાં પડવાવાળા પ્રાણીઓને રક્ષણ કરવાનું આશ્વાસન દેવાવાળા જિનશાસનનો  
મહિમા વધારતા થકા સમસ્ત જગતને જિનશાસનમાં પ્રીતિવાળા બનાવી મિથ્યાત્વ  
નિવારણ અને સમ્યક્ત્વની સ્થાપના કરી કર્મકોટીને ખપાવે છે. કદાચિત્ પરિણામમાં  
ઉત્કૃષ્ટ રસાયન આવી જાય તો ત્રિલોકમાં પવિત્ર તીર્થઙ્કર ગોત્રની પણ પ્રાપ્તિ  
કરે છે.

જિન ભગવાનનું શાસન પોતે ઉજ્જ્વલ છે તો પણ જે દેશવિશેષ અને કાલ-  
વિશેષમાં મિથ્યાત્વનો અંધકાર ફેલાઈ જાય છે, ત્યાં ભગવાનના શાસનપ્રચારરૂપ  
આરાધન કરીને ધર્મકથાકાર “પ્રભાવક”નું પદ પ્રાપ્ત કરે છે. કહ્યું પણ છે:—

“પ્રભાવક આઠ પ્રકારના છે. (૧) પ્રાવચનિક, (૨) ધર્મકથાકાર (૩) વાદી,  
(૪) લબ્ધિઓનો ધણી, (૫) તપસ્વી, (૬) વિદ્યાવાન્-રોહિણી-પ્રજ્ઞા આદિ વિદ્યાના  
ધારક, (૭) સિદ્ધ-વચનસિદ્ધિ આદિસિદ્ધિઓવાળા, (૮) કવિ” ॥ ૧ ॥



અથ ધર્મમહિમોચ્યતે—

“જન્મંતરેવિ સુલહા, પિતૃભાતુસુયાહ્યા ।  
પરંતુ સુચારિત્ત, - ધર્મો ણો સુલહો ધુવિ ॥ ૧ ॥  
વારસંગાવણે ધર્મં, ણિચ્છયવ્વહારિણો ।  
લહંતે સંજયા મન્વા, મત્તિપણ્ણેણ નન્નહા ॥ ૨ ॥

સંસ્કૃતઞ્જાયા—

જન્માન્તરેऽપિ સુલભા, - પિતૃ-ભ્રાતૃ-સુતાદયઃ ।  
પરન્તુ શ્રુતચારિત્ર, - ધર્મો ન સુલભો ધુવિ ॥ ૧ ॥  
દ્વાદશાંગાપણે ધર્મં, નિશ્ચયવ્યવહારિણઃ ।  
લભન્તે સંયતા મન્વા, -મત્તિપણ્યેન નાન્યથા ॥ ૨ ॥  
તથા-વિના સિદ્ધાઞ્જનં ભૂમિ, -નિધાનં નૈવ લભ્યતે

ધર્મ-મહિમા —

“પિતા, ભ્રાતા ઓર પુત્ર આદિ તો જન્માન્તર મેં-આગામી ભવ મેં-મી સુલભ હૈં કિન્તુ સંસાર મેં શ્રુત-ચારિત્ર ધર્મ સુલભ નહીં હૈ” ॥ ૧ ॥

“દ્વાદશાંગીરૂપી દુકાન મેં નિશ્ચયનય ઓર વ્યવહારનય કો જાનને વાલે સંયમી પુરુષ મત્તિરૂપી મૂલ્ય ચુકાકર ધર્મ પ્રાપ્ત કર સકતે હૈં, એસે કિયે વિના ધર્મ કો પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી” ॥ ૨ ॥

ધર્મમહિમા—

“પિતા ભાઈ અને પુત્ર વગેરે તો આગલા ભવમાં-હવે પછીના ભવમાં પણ સુલભ છે, પરન્તુ સંસારમાં શ્રુત-ચારિત્ર ધર્મ સુલભ નથી” ॥ ૧ ॥

“દ્વાદશાંગીરૂપી દુકાનમાં નિશ્ચયનય અને વ્યવહારનયને જાણુવાવાળા સંયમી પુરુષ મત્તિરૂપી મૂલ્ય આપીને ધર્મ પ્રાપ્ત કરી શકે છે. એમ કર્યા વિના ધર્મની પ્રાપ્તિ થતી નથી.” ॥ ૨ ॥

विणा सिद्धं जणं भूमि, - णिहाणं णेव लब्धम् ।  
 सुयचारित्तधर्मेण, विणा णो णाणमप्पणो ॥ ३ ॥  
 अप्पणाणं विणा णेव, तत्तातत्तविणिच्छओ ।  
 तं विणा णेव भव्वाणं, जायएऽमियभावणा ॥ ४ ॥  
 विसुद्धज्झाणसंपत्ती, णंतराऽमियभावणं ।  
 विणा विसुद्धज्झाणं णो, खवगस्सेणिरप्पई ॥ ५ ॥  
 अन्नोवाएण केणावि, - खवगस्सेणिणा विणा ।  
 वितीयपाओ सुक्कस्स, ज्ञाणस्स नहि लब्धम् ॥ ६ ॥

छाया—

श्रुतचारित्रधर्मेण, विना नो ज्ञानमात्मन ॥ ३ ॥  
 आत्मज्ञानं विना नैव, तत्त्वाऽतत्त्वविनिश्चयः ।  
 तं विना नैव भव्यानां, जायतेऽमृतभावना ॥ ४ ॥  
 विशुद्धध्यानसंप्राप्ति, - नान्तराऽमृतभावनाम् ।  
 विना विशुद्धध्यानं नो, क्षपकश्रेणिराप्यते ॥ ५ ॥  
 अन्योपायेन केनापि, क्षपकश्रेणिना विना ।  
 द्वितीयपादः शुक्लस्य, ध्यानस्य नहि लभ्यते ॥ ६ ॥

सिद्धअज्जन के अभाव में पृथ्वी के भीतर का खजाना नहीं प्राप्त किया जा सकता,  
 इसी प्रकार श्रुत चारित्र के विना आत्मा को सम्यग्ज्ञान नहीं होता ॥ ३ ॥

आत्मज्ञान के अभाव में तत्त्व-अतत्त्व का निश्चय नहीं हो सकता, और तत्त्व अतत्त्व  
 का निश्चय हुए विना भव्य जीवों को अमृतभावना नहीं हो सकती ॥ ४ ॥

अमृतभावना के अभाव में विशुद्ध ध्यान की प्राप्ति नहीं होती, और विशुद्ध ध्यान  
 के विना क्षपकश्रेणी पर आरोहण नहीं हो सकता ॥ ५ ॥

क्षपक श्रेणी के सिवाय किसी अन्य उपाय से शुक्ल-ध्यान का एकत्ववितर्क अविचार  
 नामक दूसरा पाया नहीं प्राप्त किया जा सकता ॥ ६ ॥

सिद्धांजन विना पृथ्वीनी अंदरने भजनो प्राप्त करी शकतो नथी. जेवी ज  
 रीते श्रुत-चारित्र विना आत्मज्ञान थतुं नथी. ॥ ३ ॥

आत्मज्ञानना अभावथी तत्त्व-अतत्त्वने निश्चय थर्ह शकतो नथी, अने तत्त्व-  
 अतत्त्वने निश्चय कर्था विना लब्ध जीवने अमृतभावना थती नथी ॥ ४ ॥

अमृतभावनाना अभावथी विशुद्ध ध्याननी प्राप्ति थती नथी; अने विशुद्ध

સુક્ષ્મજ્ઞાણસ્ત પાયં ચ, વિતીયં પપ્પ સંજમી ।  
 કેવલજ્ઞાણલાહેણ, કેવલિત્તિ ણિગજ્જઈ ॥ ૭ ॥  
 અવત્થા નહિ સેલેસી, કેવલજ્ઞાણમંતરા ।  
 ભવઈ સમણિંદસ્સ, સવ્વકમ્મકવ્વઓ તઓ ॥ ૮ ॥  
 સવ્વકમ્મકવ્વણ સિદ્ધી, -તઓ સિદ્ધો હિ સાસઓ ।  
 મોક્કવહી સુચારિત્ત, - ધમ્મં તમ્હા સમાયરે ॥ ૯ ॥

છાયા—

શુદ્ધધ્યાનસ્ય પાદં ચ, દ્વિતીયં પ્રાપ્ય સંયમી ।  
 કેવલજ્ઞાણલાભેન, કેવલીતિ નિગદ્યતે ॥ ૭ ॥  
 અવસ્થા નહિ શૈલેશી, કેવલજ્ઞાણમંતરા ।  
 ભવતિ શ્રમણેન્દ્રસ્ય, સર્વકર્મક્ષયસ્તતઃ ॥ ૮ ॥  
 સર્વકર્મક્ષયે સિદ્ધિ, - ધર્મં તસ્માત્સમાચરેત્ ।  
 મોક્ષાર્થી શ્રુતચારિત્ર, -ધર્મં તસ્માત્સમાચરેત્ ॥ ૯ ॥

સંયમી પુરુષ શુદ્ધ ધ્યાન કા દૂસરા પાયા પ્રાપ્ત કરકે, કેવલ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરતા હૈ  
 ઔર કેવલી કહલાતા હૈ । ॥ ૭ ॥

કેવલ જ્ઞાન કે વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત નહીં होती । શૈલેશી અવસ્થા જવ પ્રાપ્તિ  
 હો જાતી હૈ તો મુનિરાજ સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય કર ઢાલતા હૈ ॥ ૮ ॥

સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય હોને પર સિદ્ધિ પ્રાપ્ત होती હૈ । સિદ્ધિ લાભ હોને પર શાશ્વત  
 સિદ્ધ હોજાતા હૈ, અતઃ મોક્ષાર્થી પુરુષ કો શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મ કા આચરણ કરના ચાહિયે ॥ ૯ ॥

ધ્યાન વિના ક્ષપકશ્રેણી ઉપર આરોહણ થઈ શકતું નથી. ॥ ૫ ॥

ક્ષપકશ્રેણી વિના બીજા કોઈ ઉપાયથી શુદ્ધ ધ્યાનનો એકત્વ-વિતર્ક-અવિચાર  
 નામક બીજો પાયો પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી. ॥ ૬ ॥

સંયમી પુરુષ શુદ્ધ ધ્યાનનો બીજો પાયો પ્રાપ્ત કરીને કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરે  
 છે, અને કેવલી કહેવાય છે. ॥ ૭ ॥

કેવલજ્ઞાન વિના શૈલેશી અવસ્થા પ્રાપ્ત થતી નથી, શૈલેશી અવસ્થા બ્યારે  
 પ્રાપ્ત થઈ જાય છે, ત્યારે મુનિરાજ સકલ કર્મોનો ક્ષય કરી નાખે છે. ॥ ૮ ॥

સકલ કર્મોનો ક્ષય થયા પછી સિદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે, સિદ્ધિ લાભ થયા પછી  
 શાશ્વત સિદ્ધ થાય છે, એ માટે મુક્ષાર્થી પુરુષોએ શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મનું આચરણ  
 કરવું જોઈએ. ॥ ૯ ॥



અથ ગણિતાનુયોગ:—

ગણિતં = સંખ્યાનં તસ્યાનુયોગો-ગણિતાનુયોગ:—

જીવાઽજીવાદિષડ્દ્રવ્યતત્પર્યાયપરિગણનં ગણિતાનુયોગસાધ્યમ્ ।

તેન જિનોક્તપદાર્થાનાં યથાવસ્થિતં પરિગણનાત્ સમ્યક્ત્વશુદ્ધિસ્તત્ચારિત્રશુદ્ધિઃ ।

પૂર્વાનુપૂર્વાદીનાં મજ્જાલાદીનાં ચ પરિગણનયા ચિત્તસ્થૈર્યમ્, તત્તથ કષાયાનલપ્રશમનમ્, તેન ચારિત્રનૈર્મલ્યમ્ ।

અપિ ચ ગણિતાનુયોગેન ભગવતઃ કેવલજ્ઞાનાદિગુણપર્યાયાણામાનન્ત્યમાવેદયતિ । સંખ્યાનમતિક્રાન્તાનાં તેષાં સંખ્યાતુમશક્યતા સંખ્યાજ્ઞાનં વિના નૈવ

(૨) ગણિતાનુયોગ—

ગણિત અર્થાત્ સંખ્યાકા અનુયોગ ગણિતાનુયોગ કહલાતા હૈ ।

જીવ, પુદ્ગલ આદિ છહ દ્રવ્યોં કી ગણના કરને કે લિએ, તથા દ્રવ્યોં કી પર્યાયોં કી ગિન્તી કરને કે લિએ ગણિતાનુયોગ કી આવશ્યકતા હોતી હૈ । ગણિતાનુયોગસે જિન ભગવાન્ દ્વારા ઉપદિષ્ટ પદાર્થોં કી ઠીક-ઠીક ગણના હોને સે સમ્યક્ત્વ કી શુદ્ધિ હોતી હૈ, ઔર સમ્યક્ત્વ કી શુદ્ધિ સે ચારિત્ર કી શુદ્ધિ હોતી હૈ ।

પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી તથા અનાનુપૂર્વી આદિ સે, તથા મજ્જ-જાલોં કી ગણના કરનેસે ચિત્તમેં સ્થિરતા આતી હૈ, ઔર ચિત્તકી સ્થિરતા સે કષાયરૂપી અગ્નિ શાન્ત હોતી હૈ ઔર ઉસસે ચારિત્ર નિર્મલ હોતા હૈ ।

ગણિતાનુયોગ હી ભગવાન કે કેવલજ્ઞાન આદિ ગુણ એવં પર્યાયોંકી અનન્તતા કો પ્રગટ કરતા હૈ, ‘સંખ્યાતીત ગુણોં એવં પર્યાયોં કી સંખ્યા કા જ્ઞાન મુશ્કિલ હૈ’ યહ વાત

(૩) ગણિતાનુયોગ—

ગણિત અર્થાત્ સંખ્યાનો અનુયોગ તે ગણિતાનુયોગ કહેવાય છે. જીવ પુદ્ગલ આદિ છ દ્રવ્યોની ગણના કરવા માટે, તથા દ્રવ્યોના પર્યાયોની ગણતરી કરવા માટે ગણિતાનુયોગની આવશ્યકતા હોય છે, ગણિતાનુયોગથી જિન ભગવાન દ્વારા કહેલા પદાર્થોની ઠીક ઠીક ગણના થઈ શકતી હોવાથી સમ્યક્ત્વની શુદ્ધિ થાય છે, અને સમ્યક્ત્વની શુદ્ધિથી ચારિત્રની શુદ્ધિ થાય છે.

પૂર્વાનુપૂર્વી પશ્ચાનુપૂર્વી તથા અનાનુપૂર્વી આદિથી, અને ભગવાનોની ગણના કરવાથી ચિત્તમાં સ્થિરતા આવે છે, અને ચિત્તની સ્થિરતાથી કષાયરૂપી અગ્નિ શાન્ત થાય છે. અને તેથી ચારિત્ર નિર્મલ થાય છે.

વિજ્ઞાતું શક્યતે, તદ્વિ ગણિતાનુયોગમ્યમ્ । મગવદ્ગુણાનુસ્મરણેન મગવતઃ  
સ્તુતિઃ સંપદ્યતે, તયા ચ દર્શનશુદ્ધિસ્તત્ત્વાચારિત્રશુદ્ધિઃ ।

પ્રવ્રજ્યાપ્રદાનાદયોઽપિ શોભનતિથિનક્ષત્રાદિયુક્તસમય એવ વિધેયા ઇતિ  
તાદૃશસમયાવબોધકતયા ગણિતાનુયોગસ્યાપિ ચરણપ્રાપ્તિં પ્રતિ સાધનતા સિદ્ધયતિ ।  
તથા ચાસ્યાપિ ફલં ચારિત્રરક્ષણમેવ ।

અથ પ્રસન્નાજ્જ્યોતિષ્કવિષયઃ કિશ્ચિત્પ્રદર્શ્યતે—

તત્ર પૂર્વ પ્રવ્રજ્યાપ્રદાનસમયો નિર્ણયતે—

મી સંખ્યા કા જ્ઞાન ક્રિયે વિના જાની નહીં જા સકતી હૈ । મગવાન કે ગુણોં કા વારંવાર  
સ્મરણ કરને સે મગવાન કી સ્તુતિ હોતી હૈ, ઉસસે દર્શન-શુદ્ધિ હોતી હૈ, દર્શન-શુદ્ધિ કે  
હોને સે ચારિત્ર કી શુદ્ધિ હોતી હૈ ॥

શુભ તિથિ તથા શુભ નક્ષત્ર સે યુક્ત સમય મેં હી દીક્ષા આદિ દેના ચાહિય, ઇસ  
પ્રકાર કે સમય કા બોધ કરાને વાલા હોને સે ગણિતાનુયોગ મી ચારિત્રકી પ્રાપ્તિ કા કારણ  
હૈ, એસા સિદ્ધ હોતા હૈ, ઉસસે ગણિતાનુયોગ કા ફલ મી ચારિત્ર કી રક્ષા કરના હી હૈ ।

યહાં પ્રસન્ન હોનેસે કુછ જ્યોતિષ કા વિષય દિશ્વલાયા જાતા હૈ—

દીક્ષાદાનસમયકા નિર્ણય—

ગણિતાનુયોગ જ ભગવાનના કેવલજ્ઞાન આદિ એ શુભો એ પ્રમાણે પર્યાયોની  
અનંતતા પ્રગટ કરે છે. ‘સંખ્યાતીત શુભો અને પર્યાયોની સંખ્યા બાણી અશક્ય  
છે’ તે વાત પણ સંખ્યાનું જ્ઞાન કર્યા વિના બાણી શકાતી નથી, તે ગણિતાનુયોગ  
દ્વારા બાણી શકાય છે. ભગવાનના શુભોનું વારંવાર સ્મરણ કરવાથી ભગવાનની સ્તુતિ  
થાય છે, અને તેથી દર્શન-શુદ્ધિ થઈ શકે છે, અને દર્શન વિશુદ્ધ થવાથી ચારિત્રની  
શુદ્ધિ થાય છે.

શુભ તિથિ તથા શુભ નક્ષત્રથી યુક્ત સમયમાં જ દીક્ષા આદિ આપવી જોઈએ,  
આ પ્રકારના સમયનું જ્ઞાન કરાવવાવાળો હોવાથી ગણિતાનુયોગ પણ ચારિત્રની પ્રાપ્તિનું  
કારણ છે એમ સિદ્ધ થાય છે. તેથી ગણિતાનુયોગનું ફલ પણ ચારિત્રની રક્ષા કરવી એજ છે.

આહીં પ્રસંગથી થોડો બ્યોતિષનો વિષય બતાવવામાં આવે છે—

દીક્ષા આપવાના સમયનો નિર્ણય—

( ૧ ) તત્ર માસવિચાર :

પૌષ-ચૈત્ર-જ્યેષ્ઠા-ષાઢ-માસાન્ વિહાય શેષા માસાઃ પ્રશસ્તાઃ ।

વિશેષતો માસફલમાહ-

- |                              |  |
|------------------------------|--|
| (૧) શ્રાવણે-શુભમ્ ।          | (૭) માઘે-જ્ઞાનવૃદ્ધિઃ ।                            |
| (૨) માદ્રપદે-શિષ્યાલ્પતા ।   | (૮) ફાલ્ગુને-સુખ-સૌભાગ્ય-યશોવૃદ્ધિઃ ।              |
| (૩) આશ્વિને-સુખમ્ ।          | (૯) ચૈત્રે-અલ્પસુખમ્ ।                             |
| (૪) કાર્તિકે-વિદ્યાવૃદ્ધિઃ । | (૧૦) વૈશાખે-રત્નત્રયલાભઃ ।                         |
| (૫) માર્ગશીર્ષે-શુભમ્ ।      | (૧૧) જ્યેષ્ઠે-સામાન્યમ્ , તત્રાન્યબલસર્વથે શુભમ્ । |
| (૬) પૌષે-વિદ્યાવૃદ્ધ્યભાવઃ । | (૧૨) આષાઢે-ગુરુબન્ધુના સહ પ્રેમાલ્પતા ।            |

( ૧ ) માસ-વિચાર

પૌષ, ચૈત્ર, જ્યેષ્ઠા અને આષાઢ માસ કો છોડકર શેષ મહીનો મેં દીક્ષા દેના પ્રશસ્ત છે ।

વિશેષ માસ-વિચાર

- |                                |  |
|--------------------------------|--|
| (૧) શ્રાવણ - શુભ ।             | (૭) માઘ - જ્ઞાન કી વૃદ્ધિ  |
| (૨) માદ્રપદ - શિષ્યો કમી ।     | (૮) ફાલ્ગુન-સુખ-સૌભાગ્ય અને યશ કી વૃદ્ધિ                             |
| (૩) આશ્વિન - સુખ ।             | (૯) ચૈત્ર - અલ્પ સુખ   |
| (૪) કાર્તિક - વિદ્યાવૃદ્ધિ ।   | (૧૦) વૈશાખ - રત્નત્રય કા લાભ   |
| (૫) માર્ગશીર્ષ - શુભ ।         | (૧૧) જ્યેષ્ઠ - સાધારણ, યહ માસ દૂસરે નક્ષત્ર આદિ કા બલ હો તો શુભ છે । |
| (૬) પૌષ-વિદ્યાવૃદ્ધિ કા અભાવ । | (૧૨) આષાઢ-ગુરુભાઈયોં કે સાથ પ્રેમ કી કમી ।                           |

(૧) માસ-વિચાર-

પૌષ, ચૈત્ર, જ્યેષ્ઠ અને આષાઢ માસને ત્યજીને બાકીના બીજા મહિનાઓ દીક્ષા આપવા માટે ઉત્તમ છે.

વિશેષ માસ-વિચાર-

- |                              |  |
|------------------------------|--|
| (૧) શ્રાવણુ-શુભ.             | (૭) માઘ-જ્ઞાનની વૃદ્ધિ.  |
| (૨) ભાદ્રપદ-શિષ્યોની કમી.    | (૮) ફાલ્ગુન-સુખ સૌભાગ્ય અને યશની વૃદ્ધિ.                             |
| (૩) આસો-સુખ.                 | (૯) ચૈત્ર-અલ્પ સુખ.  |
| (૪) કાર્તિક-વિદ્યાવૃદ્ધિ.    | (૧૦) વૈશાખ-રત્નત્રયનો લાભ.   |
| (૫) માર્ગશીર્ષ-શુભ.          | (૧૧) જ્યેષ્ઠ-સાધારણ, આમાસમાં બીજા નક્ષત્ર વગેરેનું બલ હોય તો શુભ છે. |
| (૬) પૌષ-વિદ્યાવૃદ્ધિનો અભાવ. | (૧૨) આષાઢ-ગુરુભાઈઓની સાથે પ્રેમની કમી.                               |



## (૨) પક્ષ-વિચાર:—

કૃષ્ણપક્ષે-પ્રતિપદ આરમ્ભ્ય પચ્ચમીં યાવત્તિથયઃ શુભાઃ । ષષ્ઠીતઃ સમારમ્ભ્ય દશમીં યાવત્તિથયો મધ્યમાઃ । એકાદશીતઃ પ્રારમ્ભ્યામાવાસ્યાં યાવદશુભાઃ ।

શુક્રપક્ષે તુ પ્રતિપત્તિથિતઃ પચ્ચમી પર્યન્તમશુભાઃ । ષષ્ઠીતો દશમીં યાવન્મધ્યમાઃ । એકાદશીતઃ સમારમ્ભ્ય પૂર્ણિમાન્તાસ્તિથયઃ શુભાઃ ।

## (૪) તિથિ-વિચાર:—

દીક્ષાયાં પ્રતિપદ (૧), તૃતીયા (૩), પચ્ચમી (૫), સપ્તમી (૭), એકાદશી (૧૧), ત્રયોદશી (૧૩) ચ પ્રશસ્તા ।

## (૨) પક્ષ-વિચાર:—

કૃષ્ણ પક્ષ મેં પ્રતિપદા સે લેકર પચ્ચમી પર્યન્ત તિથિયાં શુભ હૈં । ષષ્ઠી સે લેકર દશમી તક કી તિથિયાં મધ્યમ હૈં, ઓર એકાદશીસે લેકર અમાવાસ્યા તક અશુભ તિથિયાં હૈં ।

શુક્ર પક્ષ મેં પ્રતિપદા સે લગાકર પચ્ચમી તક અશુભ હૈં, ષષ્ઠી સે દશમી તક મધ્યમ હૈં ઓર એકાદશી સે પૂર્ણિમા તક કી તિથિયાં શુભ હૈં ।

## (૩) તિથિ-વિચાર:—

દીક્ષા કે વિષયમેં પ્રતિપદા, તૃતીયા, પચ્ચમી, સપ્તમી, એકાદશી ઓર ત્રયોદશી પ્રશસ્ત હૈં ।

## (૨) પક્ષ-વિચાર:—

કૃષ્ણ પક્ષમાં પડવેથી પાંચમ સુધીની તિથિઓ અશુભ છે. છઠ્ઠી લઈને દશમ સુધીની તિથિઓ મધ્યમ છે, અને એકાદશી-અગીયારસથી લઈને અમાવાસ્યા સુધીની તિથિઓ અશુભ છે.

શુકલ પક્ષમાં-પડવેથી લઈને પાંચમ સુધીની તિથિઓ અશુભ છે. છઠ્ઠી દશમી સુધી મધ્યમ છે, અને એકાદશીથી પુનમ સુધીની તિથિઓ શુભ છે.

## (૩) તિથિ-વિચાર:—

દીક્ષાના વિષયમાં પડવે, ત્રીજ, પાંચમ, સાતમ, એકાદશી અને તેરસ, આ તિથિઓ ઉત્તમ છે.

नव तिथयश्च वर्जनीयाः—

(१) शुक्ला चतुर्दशी (२) अमावास्या (३) यस्यां तिथौ रविसंक्रमणं, सा ।  
(४) द्वितीया, (५) चतुर्थी, (६) षष्ठी, (७) अष्टमी, (८) नवमी, (९) द्वादशी ।

(४) वार-विचारः—

रवि - चन्द्र - बुध - गुरु - वाराः प्रशस्ताः

(५) नक्षत्र-विचारः—

दीक्षायां त्रयोदश नक्षत्राणि प्रशस्तानि— (१) अश्विनी, (२) रोहिणी, (३) मृगशिरः, (४) पुष्यम्, (५) उत्तरफाल्गुनी, (६) हस्तः (७) अनुराधा, (८) ज्येष्ठा, (९) उत्तराषाढा, (१०) अभिजित्, (११) श्रवणम्, (१२) उत्तरभाद्रपदा, (१३) रेवती ।

नौ तिथियां त्याज्ये—

(१)—शुक्ला चतुर्दशी, (२)—अमावास्या, (३)—जिस तिथि में सूर्य-संक्रमण हो वह,  
(४)—द्वितीया (५)—चतुर्थी (६)—षष्ठी (७)—अष्टमी (८)—नवमी (९)—द्वादशी ।

(४) वार-विचार—

रवि, सोम, बुध, गुरु, और शनिवार प्रशस्त हैं ।

(५) नक्षत्र-विचार—

दीक्षा के विषय में तेरह १३ नक्षत्र प्रशस्त हैं । (१)—अश्विनी, (२)—रोहिणी, (३)—मृगशीर्ष, (४)—पुष्य, (५)—उत्तराफाल्गुनी (६)—हस्त, (७)—अनुराधा, (८)—ज्येष्ठा, (९)—उत्तराषाढा, (१०)—अभिजित्, (११)—श्रवण, (१२)—उत्तरभाद्रपद, (१३)—रेवती ।

नव तिथिઓ ત્યાજ્ય છે—

(૧) શુકલ ચતુર્દશી, (૨) અમાવાસ્યા (૩) જે તિથિમાં સૂર્ય-સંક્રમણ થાય તે, (૪) દ્વિતીયા, (૫) ચતુર્થી, (૬) ષષ્ઠી, (૭) અષ્ટમી (૮) નવમી (૯) દ્વાદશી

(૪) વાર વિચાર—

રવિ, સોમ, બુધ, ગુરુ અને શનિવાર ઉત્તમ છે.

(૫) નક્ષત્ર-વિચાર—

દીક્ષાના વિષયમાં તેર નક્ષત્ર ઉત્તમ છે— (૧) અશ્વિની, (૨) રોહિણી, (૩) મૃગશીર્ષ, (૪) પુષ્ય, (૫) ઉત્તરાફાલ્ગુની, (૬) હસ્ત, (૭) અનુરાધા (૮) જ્યેષ્ઠા (૯) ઉત્તરાષાઢા, (૧૦) અભિજિત (૧૧) શ્રવણ (૧૨) ઉત્તરભાદ્રપદ, (૧૩) રેવતી.

નક્ષત્રેષુ સપ્ત દોષાઃ સન્તિ, યથા—

- (૧) સંધ્યાગતમ્—યત્ર નક્ષત્રે સૂર્યોઽનન્તરં સ્થાસ્યતિ તાદૃશં નક્ષત્રમ્ । યથા હસ્તે રવિર્વર્ત્તેતે ચેત્ તદા દૈનિકં ચિત્રાનક્ષત્રં સંધ્યાગતં બોધ્યમ્ ।
- (૨) રવિગતમ્—યત્ર રવિસ્તિષ્ઠતિ તાદૃશં દૈનિકં નક્ષત્રં રવિગતં બોધ્યમ્ ।
- (૩) દુર્ગતમ્—યત્રોન્માર્ગગામી—વક્રી ગ્રહો ભવતિ, તાદૃશં નક્ષત્રમ્ ।
- (૪) સગ્રહમ્—યત્ર ક્રૂરો ગ્રહસ્તિષ્ઠતિ, તાદૃશં નક્ષત્રમ્ ।
- (૫) વિલમ્બિતમ્—સૂર્યેણ પરિમુજ્ય મુક્તં નક્ષત્રમ્ ।
- (૬) રાહુગતમ્—યત્ર ચન્દ્ર-સૂર્યોપરાગઃ સંજાતસ્તાદૃશં નક્ષત્રમ્ । ईदृशे नक्षत्रे षणमासान् यावत् प्रव्रज्या न देया ।

નક્ષત્રોં મેં સાત દોષ

- (૧) સંધ્યાગત—જિસ નક્ષત્ર મેં સૂર્ય આગે જાને વાળા હૈ વહ નક્ષત્ર ।  
જૈસે—અગર હસ્ત નક્ષત્ર મેં સૂર્ય હો તો દૈનિક ચિત્રા નક્ષત્ર સંધ્યાગત કહલાતા હૈ ।
- (૨) રવિગત—જિસ નક્ષત્ર મેં રવિ હો, વહ દૈનિક નક્ષત્ર રવિગત જાનના ચાહિય ।
- (૩) દુર્ગત—જિસ મેં ઉન્માર્ગગામી—વક્ર ગ્રહ હો વહ નક્ષત્ર દુર્ગત કહલાતા હૈ ।
- (૪) સગ્રહ—જિસ નક્ષત્ર મેં ક્રૂર ગ્રહ હો ।
- (૫) વિલમ્બિત—સૂર્ય—દ્વારા ભોગ કર છોડા હુઆ નક્ષત્ર ।
- (૬) રાહુગત—જિસ નક્ષત્ર મેં ચન્દ્ર—ગ્રહણ યા સૂર્ય—ગ્રહણ હુઆ હો । એસે નક્ષત્ર મેં છહ માસ તક દીક્ષા દેના વર્જનીય હૈ ।

નક્ષત્રમાં સાત દોષ—

- (૧) સંધ્યાગત—જે નક્ષત્રમાં સૂર્ય આગળ આવવાવાળો છે તે નક્ષત્ર, જેવી રીતે કે હસ્ત નક્ષત્રમાં સૂર્ય હોય તો દૈનિક ચિત્રા નક્ષત્ર સંધ્યાગત કહેવાય છે.
- (૨) રવિગત—જે નક્ષત્રમાં રવિ હોય તે દૈનિક નક્ષત્ર રવિગત બાણુ બેધાયે.
- (૩) દુર્ગત—જેમાં ઉન્માર્ગગામી—વક્ર ગ્રહ હોય તે નક્ષત્ર દુર્ગત કહેવાય છે.
- (૪) સગ્રહ—જે નક્ષત્રમાં ક્રૂર ગ્રહ હોય.
- (૫) વિલમ્બિત—સૂર્ય દ્વારા ભોગવીને છુટું કરાયેલું નક્ષત્ર.
- (૬) રાહુગત—જે નક્ષત્રમાં ચંદ્રગ્રહણ અથવા સૂર્યગ્રહણ થયું હોય. એવા નક્ષત્રમાં છ માસ સુધી દીક્ષા આપવી વર્જનીય છે.



(૭) ગ્રહભિન્નમ્-યત્ર ત્રયો ગ્રહાસ્તિષ્ઠન્તિ તાદૃશં નક્ષત્રમ્ ।

(૬) યોગ-વિચાર:-

યોગાસ્તુ નામ્નૈવ શુભાશુભફલાઃ, યથા-વિષ્કમ્ભાદિષુ દૈનિકયોગેષુ પ્રીત્યાદયઃ શુભફલાઃ, વિષ્કમ્ભાદયોઽશુભફલાઃ । આનન્દાદિષુ સાંયોગિકેષુવારનક્ષત્ર-સંયોગજનિતેષુ યોગેષુ આનન્દાદયઃ શુભાઃ, કાલદણ્ડાદયોઽશુભાઃ ।

(૭) અથ કરણ-વિચાર:-

કરણાનિ એકાદશ સન્તિ; યથા-(૧) બવમ્, (૨) બાલવમ્, (૩) કૌલવમ્,

(૭) ગ્રહ-ભિન્નજિસ મેં ત્રીન ગ્રહ હોં એસા નક્ષત્ર ।

(૬) યોગ-વિચાર—

યોગો કે નામસે હી શુભ અશુભ ફલ પ્રતીત હો જાતા હૈ । જૈસે-વિષ્કમ્ભ, આદિ દૈનિક યોગો મેં સે પ્રીતિ આદિ યોગ શુભફલ વાલે, ઓર વિષ્કમ્ભ આદિ યોગ અશુભ ફલ વાલે હૈ । આનન્દ આદિ સાંયોગિક (વાર નક્ષત્ર કે સંયોગ સે બનને વાલે) યોગો મેં સે આનન્દ આદિ યોગ શુભફલદાતા હૈ, ઓર કાલદણ્ડ આદિ અશુભફલદાયક હૈ ।

(૭) કરણ-વિચાર

કરણ ૧૧ ગ્યારહ હોતે હૈ, જૈસે—(૧) બવ, (૨) બાલવ, (૩) કૌલવ,

(૭) ગ્રહભિન્ન-જેમાં ત્રણ ગ્રહો હોય, એવું નક્ષત્ર.

(૬) યોગ-વિચાર—

યોગોના નામથી જ શુભ-અશુભ ફળની પ્રતીતિ થઈ જાય છે. જેમકે:-વિષ્કંભ આદિ દૈનિક યોગોમાંથી પ્રીતિ આદિ શુભ ફળવાળાં છે, અને વિષ્કંભ આદિ યોગ તે અશુભ ફળ આપનારા છે. આનન્દ આદિક સાંયોગિક (વાર-નક્ષત્રના સંયોગથી બનવાવાળા) યોગોમાં આનન્દ આદિ યોગ શુભ ફળ દેનારા છે, અને કાલદંડ આદિ અશુભ ફળ આપનારા છે.

(૭) કરણ-વિચાર—

કરણ અગિઆર હોય છે. (૧) બવ (૨) બાલવ (૩) કૌલવ (૪) અવિદ્યોચન

(૪) સ્ત્રીવિલોચનમ્, इदं तैत्तिलमिति, केचिदाहुः, (५) गरादि, इदं गरमित्या-  
हुर्न्ये, (६) वणिजम्, (७) विष्टिः, (८) शकुनिः, (९) चतुष्पदं, (१०) नागम्,  
(११) किंस्तुन्नम्, इति ।

अत्र ववादिविष्टयन्तानि सप्त करणानि चराणि, शकुन्यादीनि चत्वारि स्थिराणि  
वेदितव्यानि ।

ववादिविष्टयन्तानां सप्तानां कस्यांश्चिदेकस्यां तिथौ नियमतः स्थित्यभावात्तानि  
सप्त चराणि, शकुन्यादीनां कृष्णपक्षीयचतुर्दश्यमावस्याशुक्लप्रतिपत्तिथिषु नियत-  
स्थित्या तानि चत्वारि स्थिराणि प्रोच्यन्ते । स्पष्टं चेदं जम्बूद्वीपप्रज्ञप्तौ सप्तमवक्ष-  
स्कारे । उक्तञ्च तत्र—“एएसिणं भंते ! एकारसण्डं करणाणं कइ करणा चरा ?

(૪) સ્ત્રીવિલોચન (કોઈ કોઈ હસે ‘તૈતિલ’ મી નહતે હૈ), (૫) ગરાદિ (‘ગર’ નામ મી હૈ),  
(૬) વણિજ, (૭) વિષ્ટિ, (૮) શકુનિ, (૯) ચતુષ્પદ, (૧૦) નાગ, (૧૧) કિંસ્તુન્ન ।

इन ग्यारह करणों में वव से लेकर विष्टि तक सात करण चर हैं, और अन्त के  
शकुनि आदि चार स्थिर हैं ।

વવ સે લેકર વિષ્ટિ તક સાત કરણ કિસી એક તિથિ મેં નિયમ સે નહીં રહતે હસ  
કારણ યે ચર કહલાતે હૈ, શકુનિ આદિ અન્તિમ ચાર કરણ કૃષ્ણ પક્ષ કી ચતુર્દશી,  
અમાવાસ્યા તથા શુક્લ પક્ષ કી પ્રતિપદા તિથિ મેં નિયમ સે હોતે હૈ, અત એવ યે સ્થિર કહલાતે  
હૈ । હસ વિષય કા જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિ કે સાતવે વક્ષસ્કાર મેં સ્પષ્ટ રૂપ સે વિવેચન કિયા

(કોઈ કોઈ એને ‘તૈતિલ’ પણ કહે છે) (૫) ગરાદિ (તેનું ‘ગર’ નામ પણ છે)  
(૬) વણિજ (૭) વિષ્ટિ (૮) શકુનિ (૯) ચતુષ્પદ (૧૦) નાગ (૧૧) કિંસ્તુન્ન.

આ અગિયાર કરણોમાં અવથી લઈને વિષ્ટિ સુધી સાત કરણ ચર છે; અને  
છેલ્લા શકુનિ આદિ ચાર સ્થિર છે.

અવથી લઈને વિષ્ટિ સુધીના સાત કરણ કોઈ એક તિથિમાં નિયમિત રહેતા  
નથી તે કરણથી તેને ચર કહે છે; શકુનિ આદિ છેલ્લાં ચાર, કૃષ્ણ પક્ષની ચૌદસ,  
અમાવાસ્યા તથા શુક્લ પક્ષની પ્રતિપદા-પરવો તિથિમાં નિયમિત રહે છે એટલે તે  
સ્થિર કહેવાય છે. આ વિષયનું વિવેચન જમ્બૂદ્વીપપ્રજ્ઞપ્તિના સાતમા વક્ષસ્કારમાં સ્પષ્ટ

કઈ કરણા સ્થિરા પળ્લતા ?, ગોયમા સત્ત કરણા ચરા, ચત્તારિ કરણા થિરા પળ્લતા ।” ઇત્યાદિ ।

તત્ર દિવાશબ્દેન તિથેઃ પૂર્વાર્ધભાગઃ, રાત્રિશબ્દેન તિથેરુત્તરાર્ધભાગો ગમ્યતે ।

एकादशसु करणेषु बवम्, बालवम्, कौलवम्, वणिजम्, एतानि चत्वारि शुभफलानि ।

વિષ્ટિકરણસ્ય નામાન્તરં ભદ્રા । ઇયં દીક્ષાદૌ વર્જનીયા । ઉક્તચ્ચ-

“यदि भद्राकृतं कार्यं, प्रमादेनापि सिद्ध्यति ।

ગયા છે । વહાં કહા છે —

“હે મદન્ત ! ઇન ગ્યારહ કરણોં મેં કિતને કરણ ચર ઓર કિતને કરણ સ્થિર કહે ગયે હેં ?, હે ગૌતમ ! સાત કરણ ચર ઓર ચાર કરણ સ્થિર કહે ગયે હેં ।” ઇત્યાદિ ।

યહાં દિન શબ્દ કા અર્થ છે—તિથિકા પૂર્વાર્ધ ભાગ ઓર રાત્રિ શબ્દ કા અર્થ છે—તિથિ કા ઉત્તરાર્ધ ભાગ ।

ઇન ગ્યારહ કરણોં મેં સે બવ, બાલવ, કૌલવ, ઓર વણિજ, યે ચાર કરણ શુભ ફલ દાયક હેં ।

વિષ્ટિ કરણ કા દૂસરા નામ ભદ્રા, છે । દીક્ષા આદિ કાર્યોં મેં યહ વર્જનીય છે । કહા મી છે —

इपथी करेछुं छे, त्यां कछुं छे:—

“હે ભદન્ત ! આ અગ્યાર કરણોંમાં કેટલા કરણ ચર અને કેટલા કરણ સ્થિર કહેવામાં આવ્યા છે ?, હે ગૌતમ ! સાત કરણ ચર અને ચાર કરણ સ્થિર કહેવામાં આવ્યા છે” ઇત્યાદિ.

આ સ્થળે દિન શબ્દનો અર્થ છે કે—તિથિનો પૂર્વાર્ધ ભાગ, અને રાત્રી શબ્દનો અર્થ છે કે—તિથિનો ઉત્તરાર્ધ ભાગ.

એ અગિયાર કરણોંમાંથી બવ, બાલવ, કૌલવ અને વણિજ, આ ચાર કરણ શુભફલદાયક છે.

વિષ્ટિકરણનું બીજું નામ ભદ્રા છે. દીક્ષા આદિ કાર્યોંમાં તે ભદ્રા ત્યજવા યોગ્ય છે. કહ્યું પણ છે—



માસે તુ ષોડશે માસે, સમૂલં તદ્વિનશ્યતિ ॥ ૧ ॥” इति ।

શુક્રપક્ષે મદ્રા ચતુર્થ્યામેકાદશ્યાં ચ તિથિપરાર્દ્ધભાગસ્થાયિની, અષ્ટમ્યાં પૂર્ણિમાયાં ચ તિથિપૂર્વાર્દ્ધભાગસ્થાયિની ભવતિ, કૃષ્ણપક્ષે તુ સા તૃતીયાયાં દશમ્યાં ચ તિથિપરાર્દ્ધભાગસ્થાયિની, સપ્તમ્યાં ચતુર્દશ્યાં ચ તિથિપૂર્વાર્દ્ધભાગસ્થાયિની ભવતિ ।

તત્ર તિથિપશ્ચાર્દ્ધભાગસ્થાયિની મદ્રા દિવસં વ્યામોતિ, તથા તિથિપૂર્વાર્દ્ધભાગસ્થાયિની રાત્રિ વ્યામોતિ ચેત્તદા ન દોષાવહા ।

મદ્રાયાત્ત્રિશર્દ્ધટિકામાનેન પશ્ચિમં ઘટિકાત્રયં પુચ્છમિત્યભિધીયતે । તદ્ મદ્રાપુચ્છં શુભમ્ ।

“મદ્રા કરણ મેં ક્રિયા હુઆ કાર્ય પ્રથમ તો સિદ્ધ હી નહીં હોતા, કદાચિત્ સિદ્ધ મી હોજાય તો સોલહવાં મહીના આને પર ઉસકા સમૂલ વિનાશ હો જાતા હૈ” ॥૧॥

મદ્રા શુક્રપક્ષ મેં ચૌથ તથા એકાદશી તિથિ કે ઉત્તરાર્ધ મેં રહતી હૈ, ઓર અષ્ટમી તથા પૂર્ણિમા કે દિન તિથિ કે પૂર્વાર્ધ મેં રહતી હૈ ।

કૃષ્ણપક્ષ મેં તૃતીયા ઓર દશમી કે દિન તિથિ કે ઉત્તરાર્ધ મેં ઓર સપ્તમી એવં ચતુર્દશી કો તિથિ કે પૂર્વાર્ધ મેં રહતી હૈ ।

તિથિ કે ઉત્તરાર્ધ મેં રહને વાલી મદ્રા દિનકો વ્યાપ્ત કરતી હો ઓર પૂર્વાર્ધભાગ મેં રહને વાલી રાત્રિકો વ્યાપ્ત કરતી હો તો કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

તીસ ઘડીકી મદ્રા કી અન્તિમ ત્રીન ઘડિયો પૂંછ કહેલાતી હૈ । મદ્રાકી યહ પૂંછ શુભ હૈ ।

“ભદ્રા કરણમાં કરેલું કામ પ્રથમ તો સિદ્ધ થતું નથી, કદાચિત્ સિદ્ધ પણ થાય તો સોળમા મહિના આવતાં તેનો સમૂળ વિનાશ થાય છે.” ॥ ૧ ॥

ભદ્રા શુકલ પક્ષમાં ચોથ તથા એકાદશી તિથિના ઉત્તરાર્ધમાં રહે છે, અને આઠમ તથા પૂનમના દિવસે તિથિના પૂર્વાર્ધમાં રહે છે.

કૃષ્ણપક્ષમાં ત્રીજ અને દશમીના દિન તિથિના ઉત્તરાર્ધમાં અને સાતમ તથા ચૌદશના દિન તિથિના પૂર્વાર્ધમાં રહે છે.

તિથિના ઉત્તરાર્ધમાં રહેવાવાળી ભદ્રા દિવસને વ્યાપ્ત કરતી હોય, અને પૂર્વાર્ધ ભાગમાં રહેવાવાળી રાત્રીને વ્યાપ્ત કરતી હોય તો કોઈ દોષ નથી. ત્રીશ ઘડીની ભદ્રાની છેલ્લી ત્રણ ઘડીઓ પૂંછ કહેવાય છે; અને ભદ્રાની તે પૂંછ શુભ છે.

શકુનિ-ચતુષ્પદ-નાગ-કિંસ્તુભ્રનામાનિ કરણાનિ તુ કૃષ્ણચતુર્દશ્યમાવાસ્યા-  
શુક્લપ્રતિપદ્યોગભાવિત્વાત્યાજ્યાનિ । અવશિષ્ટે દ્વે કરણે સ્ત્રીવિલોચનગરાદિસઙ્ગકે  
સામાન્યે, ઇતિ સામ્પ્રદાયિકાઃ ।

યત્તુ ગણિવિદ્યાપ્રકીર્ણકકૃતચતુષ્પદં નાગં ચેતિ દ્વે કરણે નિષ્ક્રમણે પ્રશંસન્તિ,  
યથા—“ નાગે ચઝપ્પણ યાવિ, સેહનિક્કલમણં કરે ” ઇતિ ।

તન્ન સમીચીનમ્, નિષ્ક્રમણેઽમાવાસ્યાયાઃ પ્રતિષિદ્ધત્વેન નિયમતસ્તદ્યોગ-  
ભાવિનોસ્તયોઃ પ્રાશસ્ત્યાઽસંભવાત્ ।

શકુનિ, ચતુષ્પદ, નાગ ઓર કિંસ્તુભ્ર નામક કરણ કૃષ્ણ પક્ષકી ચતુર્દશી, અમાવાસ્યા,  
શુક્લપક્ષકી પ્રતિપદા કે યોગસે ભાવિત હોને કે કારણ ત્યાજ્ય હો જાતે હૈં । શેષ દો કરણ  
સ્ત્રીવિલોચન ઓર ગરાદિ નામક સાધારણ હૈં । પરમ્પરા કો જાનને વાલોં કા યહ મત હૈ ।

ગણિવિદ્યાપ્રકીર્ણકકારને દીક્ષા કે વિષય મેં ચતુષ્પદ ઓર નાગ નામક દો કરણ  
પ્રશસ્ત માને હૈં, ઉન્હોં ને કહા હૈ કિ—“નાગે ચઝપ્પણ યાવિ સેહનિક્કલમણં કરે” અર્થાત્  
નાગ ઓર ચતુષ્પદ નક્ષત્ર મેં નિષ્ક્રમણ કરના ચાહિયે, અર્થાત્ શિષ્યકો દીક્ષા દેના ચાહિયે,  
ઉનકા યહ કથન સમીચીન નહીં હૈ, કારણ યહ હૈ કિ નિષ્ક્રમણ મેં અમાવાસ્યા નિષિદ્ધ  
માની ગઈ હૈ, ઇસીલિયે અમાવાસ્યા કે યોગ સે ભાવિત ઉક્ત દોનોં કરણોં કા પ્રશસ્ત હોના  
અસંભવ હૈ ।

શકુનિ, ચતુષ્પદ, નાગ અને કિંસ્તુભ્ર નામના કરણ કૃષ્ણ પક્ષની ચૌદશ,  
અમાવાસ્યા, શુક્લ પક્ષના પડવાના યોગથી ભાવિત હોવાથી ત્યાજ્ય બની જાય છે.  
બાકી બે કરણ સ્ત્રીવિલોચન અને ગરાદિ નામના સાધારણ છે. પરમ્પરા બાબુવા-  
વાળાનો આ પ્રમાણે મત છે.

ગણિવિદ્યાપ્રકીર્ણકકારે દીક્ષાના વિષયમાં ચતુષ્પદ અને નાગ નામના બે  
કરણોને ઉત્તમ માન્યા છે. તેણે કહ્યું છે કે:—“નાગે ચઝપ્પણ યાવિ સેહનિક્કલમણં કરે”  
નાગ અને ચતુષ્પદ નક્ષત્રમાં નિષ્ક્રમણ કરવું જોઈએ, અર્થાત્ શિષ્યને દીક્ષા આપવી  
જોઈએ. તેમનું આ કથન બરાબર નથી, કારણ એ છે કે—નિષ્ક્રમણમાં—દીક્ષામાં—  
અમાવાસ્યા નિષિદ્ધ માની છે, એટલા માટે અમાવાસ્યાના યોગથી ભાવિત ઉપર  
કહેલા બન્ને કરણો ઉત્તમ હોય તે વાત અસંભવ છે.

અથ લગ્નવિચાર:-

નિષ્ક્રમણે મિથુન-સિંહ-કન્યા-વૃશ્ચિક-ધનુ-મકર-કુમ્ભ-મીનાનિ લગ્નિ શુભાનિ । અન્યાનિ ચત્વારિ વર્જનીયાનિ ।

(૯) ગ્રહવિચાર:-

દીક્ષાલગ્ને શનશ્ચરં મધ્યમબલં, ગુરું બલીયાંસં, શુક્રં બલહીનં વિધાય દીક્ષા દેયા । દ્વિતીયે, પશ્ચમે, ષષ્ઠે, સપ્તમે, એકાદશે સ્થાને શનિર્મધ્યમબલી ભવતિ । ત્રિકોણે કેન્દ્રે એકાદશે ચ સ્થાનેઽવસ્થિતો ગુરુર્બલીયાન્ ભવતિ । તૃતીયે, ષષ્ઠે, નવમે, દ્વાદશે ચ સ્થાને સ્થિતઃ શુક્રો બલહીનો ભવતિ, અત એવ શુક્રાસ્તેઽપિ દીક્ષા ગ્રાહ્યેતિ સંપ્રદાયવિદઃ ।

(૮) લગ્ન-વિચાર—

દીક્ષા અક્ષીકાર કરને મેં-મિથુન, સિંહ, કન્યા, વૃશ્ચિક, ધનુ, મકર, કુમ્ભ ઓર મીન, લગ્ન શુભ હૈં । શેષ ચાર વર્જનીય હૈં ।

(૯)ગ્રહ-વિચાર—

દીક્ષાલગ્ન મેં શનૈશ્ચર મધ્યમ બલ વાલા, ગુરુ બલશાલી ઓર શુક્ર બલહીન હો તો દીક્ષા દેની ચાહિયે । દૂસરે પાંચવેં, છઠે, સાતવેં ઓર ગ્યારહવેં સ્થાન મેં શનિ મધ્યમ બલ વાલા હોતા હૈ । ત્રિકોણ મેં કેન્દ્ર મેં ઓર ગ્યારવેં સ્થાન મેં રહા હુઆ ગુરુ ( બૃહસ્પતિ ) બલશાલી સમજા જાતા હૈ । તીસરે, છઠે, નૌવેં ઓર ગ્યારહવેં સ્થાન મેં સ્થિત શુક્ર નિર્બલ હોતા હૈ । અત એવ શુક્ર કા અસ્ત હોને પર મી દીક્ષા ગ્રહણ કરના પ્રશસ્ત માના ગયા હૈ, એસા કર્કે આચાર્યોં કા કથન હૈ ।

(૮) લગ્ન-વિચાર—

દીક્ષા અંગીકાર કરવામાં મિથુન, સિંહ, કન્યા, વૃશ્ચિક, ધનુ, મકર, કુમ્ભ અને મીન-લગ્ન શુભ છે. બાકીના ચાર ત્યાજ્ય છે.

(૯) ગ્રહ-વિચાર—

દીક્ષાલગ્નમાં શનૈશ્ચર મધ્યમ બળવાળો ગુરુ બલશાળી અને શુક્ર બલહીન હોય તો દીક્ષા આપવી જોઈએ, બીજા, પાંચમા, છઠા, સાતમા અને અગિયારમા સ્થાનમાં શનિ મધ્યમ બળવાળો હોય છે, ત્રિકોણમાં કેન્દ્રમાં અને અગિયારમા સ્થાનમાં રહેલો ગુરુ ( બૃહસ્પતિ ) બળશાળી સમજવામાં આવે છે.



ચન્દ્રતો લગ્નતથા સપ્તમે સ્થાને રવિકુજભાર્ગવાસ્ત્યાજ્યાઃ, તત્ર ત્રયાણાં સંગમે દીક્ષણીયઃ પ્રતિપાતી ભવતિ । એષુ ત્રિષુ દ્વાવન્યતમો વા તત્ર તિષ્ઠતિ ચેત્તદા કુશીલઃ ક્રોધાદિવશગથ ભવતિ । યદિ સપ્તમં સ્થાનં રિક્તં, ચન્દ્રશ્ચ ગ્રહાન્તરવર્જિતસ્તદા દીક્ષા શુભા । યદિ ચન્દ્રસ્ય ગુરુ-બુધયોરન્યતરેણ સંગમસ્તર્હિ શુભમ્ ।

(૧૦) અથ ત્વરિતકર્ત્તવ્યદીક્ષાસમયનિરૂપણમ્ ।

(ક) સિદ્ધચ્છાયાલગ્નમ્ ।

ચન્દ્રમાસે તથા લગ્ન સે સાતવે સ્થાન પર સૂર્ય, કુજ (મંગલ) ભાર્ગવ, (શુક્ર) હો તોત્યાજ્ય હૈ । અગર इन तीनों का सङ्गम हो तो दीक्षा लेने वाला प्रतिपाती ( पडिवाई ) हो जाता है । अगर इन तीनों में से दो अथवा कोई भी एक वहां हो तो दीक्षा लेने वाला कुशील और क्रोध आदि दुर्गुणों का धारक होता है । अगर चन्द्र दूसरे ग्रहों से वर्जित हो तो दीक्षा शुभ समझनी चाहिए । अगर गुरु और बुध में से किसी एक के साथ चन्द्रमाका सङ्गम हो तो शुभ है ।

(૧૦) તુરન્ત દીક્ષા દેનેકા સમય—

(ક) સિદ્ધચ્છાયા-લગ્ન—

ત્રીજા, છઠા, નવમા અને અગિઆરમા સ્થાનમાં સ્થિત શુક્ર નિર્જાલ હોય છે, તેથી કરી શુક્ર અસ્ત હોય તો પણ દીક્ષા ગ્રહણ કરવી તે ઉત્તમ માનવામાં આવ્યું છે. એવો કેઈ આચાર્યનો મત છે.

ચંદ્રમાથી તથા લગ્નથી સાતમા સ્થાનમાં સૂર્ય, મંગલ શુક્ર હોય તો ત્યાજ્ય છે. અથવા એ ત્રણેયનો સંગમ હોય તો દીક્ષા લેનાર પ્રતિપાતી ( પડિવાઈ ) થઈ જાય છે, અથવા એ ત્રણમાંથી બે અથવા કેઈ પણ એક ત્યાં હોય તો દીક્ષા લેવાવાળો કુશીલ અને ક્રોધ આદિ દુર્ગુણોનો ધારણ કરનાર બને છે, અથવા ચન્દ્ર તથા લગ્નથી સાતમું સ્થાન ખાલી હોય અથવા ચંદ્રમા ખીજા ગ્રહોથી વર્જિત હોય તો દીક્ષા શુભ સમજવી જોઈએ, અથવા ગુરુ અને બુધમાંથી કેઈ પણ એકની સાથે ચંદ્રનો સંગમ હોય તો શુભ છે.

(૧૦) તુરત દીક્ષા આપવાનો સમય—

(ક) સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન—

શુભતિથિવારનક્ષત્રલગ્નાદીનામભાવે ત્વરિતકર્ત્તવ્યેષુ કાર્યેષુ સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન-  
 યુપાદેયમ્ । યદિ સમતલભૂમૌ સ્વશરીરચ્છાયા ચન્દ્ર-શુક્ર-શનિ-વાસરેષુ સાર્દ્ધાઽષ્ટપદ-  
 પ્રમાણા, ભૌમે નવપદપ્રમાણા, બુધેઽષ્ટપદપ્રમાણા, રવાવેકાદશપદપ્રમાણા, ગુરૌ સપ્ત-  
 પદપ્રમાણા ભવેત્તદા સા સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન લગ્નં પ્રોચ્યતે । તત્ર દીક્ષાદિશુભકાર્ય  
 વિધેયમ્ । અસ્મિન્ સિદ્ધચ્છાયાલગ્ને સંપ્રાપ્તે તિથિવારનક્ષત્રભદ્રાલગ્નાદિચિન્તનમનાવ-  
 શ્યકમ્ । ઉક્તચ્ચ-

શુભ તિથિ, વાર; નક્ષત્ર ઓર લગ્ન આદિ કે અભાવ મેં તુરન્ત કરને યોગ્ય કાર્યો મેં  
 સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન હી ઉપાદેય હૈ ।

સમતલ ભૂમિ પર અપને શરીર કી છાયા સોમવાર, શુક્રવાર, ઓર શનિવાર, કે દિન  
 સાઢે આઠ પૈર બરાબર હો, મંગલવાર કો નૌ પૈર બરાબર હો, બુધવાર કો આઠ પદ પ્રમાણ હો,  
 રવિવાર કો ગ્યારહ પદ પ્રમાણ હો, ઓર ગુરુવાર કો સાત પૈર છાયા હો તો ઉસે સિદ્ધચ્છાયા  
 લગ્ન કહતે હૈં, ઉસ મેં દીક્ષા આદિ શુભ કાર્ય કિયે જા સકતે હૈં । યહ સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન પ્રાપ્ત  
 હો તો તિથિ, વાર, નક્ષત્ર, ભદ્રા ઓર લગ્ન આદિ કા વિચાર કરને કી આવશ્યકતા નહીં હૈ ।  
 કહા ભી હૈ —

શુભ તિથિ, વાર, નક્ષત્ર અને લગ્ન આદિના અભાવમાં તુરત કરવા યોગ્ય  
 કાર્યોમાં સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન જ ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે.

સમતલ ભૂમિ ઉપર પોતાના શરીરની છાયા, સોમવાર શુક્રવાર અને શનિવારના  
 દિવસે સાડા આઠ પગ પ્રમાણ હોય, મંગળવારના દિવસે નવ પગ પ્રમાણ હોય,  
 બુધવારે આઠ પગ પ્રમાણ, રવિવારે અગિયાર પગ, શુક્રવારે સાત પગલાં છાયા  
 હોય તો તેને સિદ્ધ છાયાલગ્ન કહે છે. આ લગ્નમાં દીક્ષા આદિ શુભ કાર્ય  
 કરી શકાય છે. આ સિદ્ધચ્છાયાલગ્ન પ્રાપ્ત હોય તો તિથિ, વાર, નક્ષત્ર, ભદ્રા અને  
 લગ્ન આદિનો વિચાર કરવાની આવશ્યકતા નથી. કહ્યું પણ છે—

नक्षत्राणि तिथिर्वारा-स्ताराश्चन्द्रबलं ग्रहाः ।

दुष्टान्यपि शुभं भावं, भजन्ते सिद्धछायाया ॥ १ ॥

न तिथिर्न च नक्षत्रं, न वारा न च चन्द्रमाः ।

ग्रहा नोपग्रहाश्चैव, छायालग्नं प्रशस्यते ॥ २ ॥

न योगिनी न विष्टिश्च, न शूलं न च चन्द्रमाः ।

एषा वज्रमयी सिद्धिः, रभेद्या त्रिदशैरपि ॥ ३ ॥

“सिद्धच्छाया लग्न हो तो दूषित तिथि नक्षत्र, वार, तारा, चन्द्र तथा दूषित ग्रह भी शुभफलदायक हो जाते हैं, अर्थात् सिद्धच्छायालग्न की विद्यमानता में नक्षत्र आदि का दोष नहीं माना जाता है ॥ १ ॥

एक मात्र छाया लग्न ही उत्तम है, उसकी समानता न तिथि कर सकती है, न नक्षत्र कर सकता है, न वार कर सकता है, न चन्द्रमा, न ग्रह कर सकने हैं और न उपग्रह ही कर सकते हैं ॥ २ ॥

योगिनी उसके सामने कुछ नहीं है, विष्टि (भद्रा) कोई चीज नहीं है, शूल और चन्द्रमा भी उस की विद्यमानता में कुछ भी नहीं बिगाड़ सकता । सिद्धच्छाया लग्न एक ऐसी वज्रमयी सिद्धि है, जिसे देवता भी नहीं भेद सकते ॥ ३ ॥

“सिद्धछायालग्न होय तो दूषित नक्षत्र, तिथि, वार, तारा, चंद्र तथा दूषित ग्रह पणु शुल थल नय छे, अर्थात् सिद्धछायालग्ननी डानरीमां नक्षत्र आदिनो दोष मानवामां आवतो नथी. ॥ १ ॥”

એક માત્ર છાયાલગ્ન જ ઉત્તમ છે. તેનો મુકાબલો તિથિ, નક્ષત્ર, વાર, ચંદ્રમા ગ્રહ અને ઉપગ્રહ કોઈ પણ કરી શકતા નથી. ॥ ૨ ॥

યોગિનીનું તેના સામે બળ નથી. વિષ્ટિનું પણ બળ નથી, શૂળ અને ચંદ્ર પણ છાયાલગ્નની ડાનરીમાં કોઈ પ્રકારે કાંઈ પણ બગાડી શકતા નથી. સિદ્ધ-છાયાલગ્ન એક એવી વજ્રમયી સિદ્ધિ છે જેને દેવતા પણ ભેદી શકતા નથી. ॥૩॥”



(સ્વ) શકુચ્છાયાલગ્ન—

દ્વાદશાંગુલપરિમિતશકુચ્છાયા રવિ-સોમ-મૌમ-બુધ-ગુરુ-શુક્ર-શનિ-વાસરેષુ ક્રમેણ વિંશતિ-ષોડશ-પચ્ચદશ-ચતુર્દશ-ત્રયોદશ-દ્વાદશ-દ્વાદશાંગુલપરિમિતા, તથા શનિવાસરે દ્વાદશાંગુલપ્રમાણા ચેત્તર્હિ સા શકુચ્છાયાલગ્ન લગ્નં પ્રોચ્યતે । તત્ર દીક્ષાદિ કાર્યં શુભમ્ ।

(ગ) અત્યુત્કણ્ઠિતયોગ્યશિષ્યાર્થં દીક્ષાસમયઃ—

વિષયાટવીદાવદહનજ્વાલામાલાકલિતસ્થાન્તોઽનન્તજન્મજરામરણાદિભયોદ્વિગ્નિઃ સમન્તતઃ પ્રજ્વલિતે સન્નિ સુપ્તમિવાદીપ્તપ્રદીપ્તસંસારાન્તઃ સરન્તમાત્મનં રક્ષિતુમુપાયા-ન્તરમનવલોક્ય પ્રવ્રજ્યામાત્રશરણદર્શીં તીવ્રવૈરાગ્યપ્રભાભાસમાનઃ પ્રતિરોમોજ્જ્વલિતા-

(સ્વ) શકુચ્છાયાલગ્ન—

બારહ અંગુલ લમ્બી કીલી કી પરછાઈ અગર રવિવાર કો વીસ અંગુલ, સોમવાર કો સોલહ અંગુલ, મંગલવાર કો પન્દરહ અંગુલ, બુધવાર કો ચૌદહ અંગુલ, ગુરુવાર કો તેરહ અંગુલ, શુક્રવાર કો બારહ અંગુલ, તથા શનિવાર કો મી બારહ અંગુલ હો ઉસે શકુચ્છાયા લગ્ન કહતે હૈ । ઇસ લગ્ન મેં દીક્ષા આદિ કાર્યં શુભ હૈ ।

(ગ) તીવ્ર ઉત્કણ્ઠા વાલે દીક્ષાર્થીં કા દીક્ષાસમય—

વિષયવાસના કી વિષય અટવી મેં વ્યાપ્ત દાવાનલ કી વિકટ જ્વાલાઓસે જિસકા અન્તઃ-કરણ છુલ્લસ ગયા હૈ, ઔર જો અનન્ત જન્મ જરા મરણ આદિ કે ભય સે ઉદ્વિગ્ન હૈ, ચારો ઓર સે મકાન મેં આગ લગ જાને પર જિસ કા સર્વસ્વ ભસ્મ હો ગયા હૈ એસે પુરુષ કી માંતિ

(સ્વ) શકુચ્છાયાલગ્ન—

બાર આંગળ લાંબી ખીલીને પડછાયો રવિવારે વીશ આંગળ, સોમવારે સોળ આંગળ, મંગળવારે પંદર આંગળ, બુધવારે ચૌદ આંગળ, શુક્રવારે તેર આંગળ, શુક્રવારે બાર આંગળ, તથા શનિવારે પણ બાર આંગળ હોય તો તેને શકુચ્છાયા-લગ્ન કહે છે. તે લગ્નમાં દીક્ષા આદિ કાર્યં શુભ છે.

(ગ) તીવ્ર ઉત્કણ્ઠાવાલા દીક્ષાર્થીના સમય—

વિષયવાસનાની વિષય અટવી (વન)માં વ્યાપ્ત દાવાનલની વિકટ જ્વાલાઓથી જેનું અંતઃકરણ બળી ગયું છે, અને જે અનન્ત જન્મ, જરા, મરણ વગેરેના ભયથી ચિંતાતુર છે, ચારે બાજુથી મકાનમાં આગ લાગવાથી જેનું સર્વસ્વ ભસ્મ

નલવન્નિતાન્તમાતુરઃ સન્ નિસ્તરજ્ઞમહોદધિકલ્પં શાન્તરસાર્ણવં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવવિદં  
નિર્ગ્રન્થપ્રવચનમર્મજ્ઞં ગુરું દીક્ષાદાનાર્થં પ્રાર્થયતે તદા તસ્મૈ તદાનીમેવ પ્રવ્રજ્યાપ્રદાનં  
શુભમ્, નહિ તત્ર તિથિવારનક્ષત્રાદીનાં વિચારાપેક્ષા ।

(૧૧) અથ કેશલુચ્ચનમ્—

દીક્ષાગ્રહણાનન્તરં યદા કદાપિ કેશલુચ્ચનં કર્તુમિચ્છેત્તદા શનિમઙ્ગલ દિવસૌ  
ત્યાજ્યૌ, કૃત્તિકા, વિશાખા, મઘા, ભરણી, એતાનિ ચત્વારિ નક્ષત્રાણિ ચ વર્જનીયાનિ ।

આત્મરક્ષા કા અન્ય ઉપાય ન દેસકર એકમાત્ર દીક્ષા કો હી શરણ સમજને વાલા તીવ્ર  
વૈરાગ્ય કી પ્રભા સે ચમકતા હુઆ મોક્ષાભિલાષી શિષ્ય, રોમ-રોમ મેં જિસ કે આગ લગી હો  
એસે પુરુષ કી માંતિ અત્યન્ત આતુર હોકર તરજ્ઞરહિત સમુદ્ર કે સમાન, શાન્ત રસ કે સાગર  
દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ કે જ્ઞાતા ઓર નિર્ગ્રન્થ પ્રવચન કે મર્મજ્ઞ ગુરુસે દીક્ષા દેને કે લિયે  
પ્રાર્થના કરે તો ઉસકો ઉસી સમય દીક્ષા દે દેના શુભ હૈ, એસે પ્રસંગ પર તિથિ, વાર, નક્ષત્ર  
આદિ કે વિચાર કી આવશ્યકતા નહીં હૈ ।

(૧૧) કેશલોચ—

દીક્ષા ધારણ કરને કે પશ્ચાત્ કેશલોચ કરને મેં શનિવાર ઓર મંગલ વાર ત્યજ્ય હૈ,  
તથા કૃત્તિકા, વિશાખા, મઘા, ઓર ભરણી, યે ચાર નક્ષત્ર વર્જનીય હૈ ।

થઈ ગયું છે એવા પુરુષની જેમ, આત્મરક્ષાનો અન્ય કોઈ ઉપાય નહિ દેખવાથી  
એક માત્ર દીક્ષાને જ શરણુ-આશ્રય સમજવાવાળા, તીવ્ર વૈરાગ્યની પ્રભા-તેજથી  
ચમકતો મોક્ષાભિલાષી શિષ્ય રોમ-રોમમાં જેને અગ્નિ લાગી છે, એવા પુરુષની  
જેમ અત્યન્ત આતુર બનીને તરંગરહિત સમુદ્ર પ્રમાણે શાન્ત રસના સાગર,  
દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવના બાણનાર અને નિર્ગ્રન્થ પ્રવચનના મર્મજ્ઞ ગુરુથી  
દીક્ષા દેવા માટે પ્રાર્થના કરે, તો તેને તેજ વળતે દીક્ષા આપવી શુભ છે એવા  
પ્રસંગે તિથિ, વાર, નક્ષત્ર આદિનો વિચાર કરવાની જરૂર નથી.

(૧૧) કેશલોચ

દીક્ષા ધારણ કર્યા પછી કેશલોચ કરવામાં શનિવાર અને મંગળવાર ત્યાજ્ય છે  
તથા કૃત્તિકા, વિશાખા, મઘા, અને ભરણી, આ ચાર નક્ષત્ર ત્યાજવા યોગ્ય છે.

(૧૨) અથ નવદીક્ષિતસ્ય પ્રથમગોચરીવિચાર:-

પ્રથમગોચરીવિષયે તીક્ષ્ણોગ્રમિશ્રનક્ષત્રાણિ શનિમંજ્જલદિવસૌ ચ વર્જયેત્ ।

આર્દ્રા, અશ્લેષા, જ્યેષ્ઠા, મૂલમ્, એતાનિ ચત્વારિ તીક્ષ્ણનક્ષત્રાણિ । ભરણી, પૂર્વાષાઢ્યં, મઘા, એતાનિ પન્ચોગ્રનક્ષાણિ । કૃત્તિકા, વિશાખા, ર્મમે દ્વે મિશ્રનક્ષત્રે ।

રિક્તાઽમાવાસ્યાક્ષયતિથયસ્ત્યાજ્યાઃ । શનિમંજ્જલવારયોગે રિક્તાઽપિ પ્રશસ્તા વિજ્ઞેયા ।

(૧૨) નવ દીક્ષિત કી પ્રથમ ગોચરી—

પહેલી વાર ગોચરી કે વિષય મેં તીક્ષ્ણ ઉગ્ર ઓર મિશ્ર નક્ષત્ર એવં શનિ તથા મંજ્જલ વાર ત્યાજ્ય હૈં ।

આર્દ્રા, અશ્લેષા, જ્યેષ્ઠા ઓર મૂલ, યે ચાર નક્ષત્ર તીક્ષ્ણ હૈં । ભરણી, પૂર્વાષાઢ્ય— ( પૂર્વાષાઢા પૂર્વભાદ્રપદા ઓર પૂર્વાફાલ્ગુની ) ઓર મઘા, યે પાંચ ઉગ્ર નક્ષત્ર હૈં । કૃત્તિકા ઓર વિશાખા, યે દો નક્ષત્ર મિશ્ર કહલાતે હૈં ।

રિક્તા તિથિ, અમાવાસ્યા ઓર ક્ષય તિથિ ત્યાજ્ય હૈ, હૈં યદિ શનિ ઓર મંગલ વાર કા યોગ હો તો રિક્તા તિથિ મી પ્રશસ્ત હૈ ।

(૧૨) નવદીક્ષિતની પ્રથમ ગોચરી—

પહેલીવાર ગોચરીના વિષયમાં તીક્ષ્ણ, ઉગ્ર અને મિશ્ર નક્ષત્ર તથા શનિ અને મંગલવાર ત્યાજ્ય છે.

આર્દ્રા, અશ્લેષા, જ્યેષ્ઠા, અને મૂલ, આ ચાર નક્ષત્ર તીક્ષ્ણ છે, ભરણી, ત્રણ પૂર્વા ( પૂર્વાષાઢા, પૂર્વાભાદ્રપદ, અને પૂર્વાફાલ્ગુની ) અને મઘા એ પાંચ નક્ષત્ર ઉગ્ર નક્ષત્ર છે. કૃત્તિકા અને વિશાખા, આ બે નક્ષત્ર મિશ્ર કહેવાય છે.

રિક્તા તિથિ, અમાવાસ્યા અને ક્ષય તિથિ ત્યાજ્ય છે, પરંતુ જો શનિ અને મંગલવારનો યોગ હોય તો રિક્તા તિથિ પણ ઉત્તમ છે.



(૧૩) અથ નૂતનપાત્રવ્યાપૃતિ:—

ગોચર્યાદિનિમિત્તં નૂતનપાત્રવ્યાપૃતિશ્ચ, મૃગશિર:પુષ્યાશ્વિનીહસ્તાનુરાધા-  
ચિત્રારેવતીષુ, સોમગુરુવાસરયોશ્ચ શુભદા ।

(૧૪) આચાર્યાદિપદપ્રદાનસમય:—

આચાર્યાદિપદપ્રદાને—શ્રવણં, જ્યેષ્ઠા, પુષ્ય, અભિજિત્, હસ્ત:, અશ્વિની,  
રોહિણી, ઉત્તરાત્રયં, મૃગશિર:, અનુરાધા, રેવતી, એતાનિ નક્ષત્રાણિ શુભાનિ  
શોભનતિથિવારાદયોઽપિ દ્રષ્ટવ્યા: ।

અથ (૪) દ્રવ્યાનુયોગ:—

દ્રવતિ=ગચ્છતિ પ્રાપ્નોતિ મુશ્વતિ વા તાંસ્તાન્ પર્યાયાનિતિ દ્રવ્યમ્ । અથવા—

(૧૩) નૂતન પાત્ર કા પ્રયોગ

ગોચરી આદિ કે લિષ્ઠ નવીન પાત્ર કા ઉપયોગ મૃગશિર, પુષ્ય, અશ્વિની, હસ્ત,  
અનુરાધા, ચિત્રા ઓર રેવતી નક્ષત્રો મેં, તથા સોમવાર ઓર ગુરુવાર કે દિન કરના શુભ હૈ ।

(૧૪) આચાર્ય આદિ પદવીદાન કા સમય

આચાર્ય આદિ પદવી દેને મેં શ્રવણ, જ્યેષ્ઠા, પુષ્ય, અભિજિત્, અશ્વિની, રોહિણી,  
ઉત્તરાત્રય, ( ઉત્તરાષાઢા ઉત્તરાભાદ્રપદા, ઉત્તરાફાલ્ગુની ) મૃગશિર, અનુરાધા ઓર રેવતી, યે  
નક્ષત્ર શુભ હૈં । ઇસ પ્રસંગ પર શુભ તિથિ ઓર શુભ વાર આદિ મી દેખના યાહિષ્ ।

(૪) દ્રવ્યાનુયોગ—

આગે કી પર્યાય પ્રાપ્ત કરને વાલો ઓર પૂર્વ પર્યાયોં કા ત્યાગ કરને વાલો દ્રવ્ય

(૧૩) નવા પાત્રનો ઉપયોગ

ગોચરી આદિ માટે નવા પાત્રનો ઉપયોગ મૃગશીર્ષ, પુષ્ય, અશ્વિની, હસ્ત,  
અનુરાધા, ચિત્રા, અને રેવતી નક્ષત્રોમાં, તથા સોમવાર અને ગુરુવારના દિવસે કરવો  
તે શુભ છે.

(૧૪) આચાર્ય આદિ પદવીદાનનો સમય—

આચાર્ય આદિ પદવી આપવામાં શ્રવણ, જ્યેષ્ઠા, પુષ્ય, અભિજિત્, હસ્ત,  
અશ્વિની રોહિણી, ઉત્તરાત્રય ( ઉત્તરા-ષાઢા, ઉત્તરા-ભાદ્રપદ, ઉત્તરા-ફાલ્ગુની )  
મૃગશિર, અનુરાધા અને રેવતી, આ નક્ષત્રો શુભ છે. આ પ્રસંગ ઉપર શુભ તિથિ  
અને શુભ વાર વગેરે પણ જોવું જોઈએ.

(૪) દ્રવ્યાનુયોગ—

આગળની પર્યાય પ્રાપ્ત કરનારા અને પ્રથમની પર્યાયનો ત્યાગ કરવાવાળાને

દ્રૂયતે = પાપ્યતે મુચ્યતે વા તૈસ્તૈઃ પર્યાયૈરિતિ દ્રવ્યમ્ । દ્રવ્યસ્ય - અનુયોગઃ દ્રવ્યાનુયોગઃ ।

દ્રવ્યાનુયોગો હિ દ્રવ્યાણાં યથાવસ્થિતસ્વરૂપાવબોધને સમીચીનયુક્તિં પ્રદર્શયતિ । તથા દર્શનસ્ય નૈર્મલ્યમ્ । તત્તથ સમ્યક્ ચારિત્રં સંપદ્યતે । તથા ચાયમપિ ચરણકરણાનુયોગં પોષયતીતિ બોધ્યમ્ ।

### દ્રવ્યલક્ષણમ્—

અથ કિં તાવદ્ દ્રવ્યમ્ ? ઉચ્યતે- “ગુણાશ્રયો દ્રવ્યમ્” । યથા જીવે જ્ઞાનદર્શનચારિત્રમુલ્લોપયોગાદયો વિશેષગુણાઃ, અસ્તિત્વ-દ્રવ્યત્વ-જ્ઞેયત્વા કહલાતા હૈ । અથવા જો પર્યાયોં કે દ્વારા પ્રાપ્ત હો, અથવા પર્યાયોં સે મુક્ત હો ઉસે દ્રવ્ય કહતે હૈં । એસે દ્રવ્ય કે અનુયોગ કો દ્રવ્યાનુયોગ કહતે હૈં ।

દ્રવ્યાનુયોગ દ્રવ્યોં કા યથાર્થ સ્વરૂપ સમજાને કે લિદ્ સમીચીન માર્ગ પ્રદર્શિત કરતા હૈ । ઉસ સે સમ્યગ્દર્શન નિર્મલ હોતા હૈ, ઓર સમ્યગ્દર્શન કી નિર્મલતા સે સમ્યક્ ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । ઇસ પ્રકાર યહ અનુયોગ મી ચરણકરણાનુયોગ કા પોષક હૈ ।

### દ્રવ્ય કા લક્ષણ—

દ્રવ્ય કિસે કહતે હૈં ? ઇસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર ઇસ પ્રકાર હૈ—જો ગુણોં કા આધાર હો વહ દ્રવ્ય હૈ, જૈસે જીવન મેં જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર, મુલ્લોપ ઓર ઉપયોગ આદિ વિશેષ ગુણ હૈં । દ્રવ્ય કહે છે, અથવા જે પર્યાયોં દ્વારા પ્રાપ્ત હોય અથવા પર્યાયોંથી યુક્ત હોય તેને દ્રવ્ય કહે છે. એવા દ્રવ્યના અનુયોગને દ્રવ્યાનુયોગ કહે છે.

દ્રવ્યાનુયોગ દ્રવ્યોના યથાર્થ સ્વરૂપને સમજાવવા માટે બરાબર સાચો માર્ગ પ્રદર્શિત કરે છે, તેથી સમ્યગ્દર્શન નિર્મલ થાય છે, અને સમ્યગ્દર્શનની નિર્મલતાથી સમ્યક્ ચારિત્રની પ્રાપ્તિ થાય છે. એ પ્રમાણે આ અનુયોગ પણ ચરણ કરણાનુયોગનો પોષક છે.

### દ્રવ્યનું લક્ષણ—

દ્રવ્ય કેને કહે છે ? એ પ્રશ્નનો ઉત્તર આ પ્રમાણે છે—જે ગુણોના આધાર હોય તે દ્રવ્ય છે, જે પ્રમાણે જીવમાં જ્ઞાન, દર્શન, ચારિત્ર મુલ્લોપ અને ઉપયોગ આદિ વિશેષ ગુણ છે.

दयः सामान्यगुणाः सन्ति । एवं गतिहेतुत्वं धर्मे, स्थितिहेतुत्वमधर्मे, अवकाश-  
दानहेतुत्वमाकाशे, वर्तनहेतुत्वं काले, रूपादिमत्त्वं पुद्गले विशेषगुणाः सन्तीति  
द्रव्यलक्षणसमन्वयः ।

कश्चित्तु 'सद् द्रव्यलक्षणम्' इति सूत्रयित्वा 'उत्पादव्ययध्रौव्ययुक्तं  
सत्' इति सूत्रेण सच्छब्दविवरणं कुर्वन् द्रव्यसामान्यलक्षणमुक्त्वा विशेष-  
विज्ञानजननाय विशेषलक्षणमवोचत्-'गुणपर्यायवद्द्रव्यम्' इति । तदपि प्रकृत-

अस्तित्व ( जिस शक्ति के निमित्त से द्रव्य का कभी विनाश न हो ) वस्तुत्व-द्रव्यत्व  
(जिस शक्ति के निमित्त से पर्याय सदैव बदलती रहे) और प्रमेयत्व-ज्ञेयत्व (जिस शक्ति के  
निमित्त से द्रव्य किसी न किसी के ज्ञान का विषय हो) आदि सामान्य गुण हैं । इसीप्रकार  
धर्मास्तिकाय में गतिहेतुत्व (गतिकारणता) अधर्मास्तिकाय में स्थितिहेतुत्व (स्थितिकारणता)  
आकाश में अवकाशदानहेतुत्व (अवकाशदायिता) काल में वर्तनाहेतुत्व, ( नवपुराण-  
कारणता) आदि, और पुद्गल में रूपादिमत्त्व विशेष गुण हैं ? अतः इन सब में द्रव्य के लक्षण  
की संगति होजाती है ।

किसी आचार्यने 'सद् द्रव्यलक्षणम्' ऐसा सूत्र रचकर 'उत्पाद-व्यय-ध्रौव्य-युक्तं  
सत्' अर्थात् जिस में उत्पाद विनाश और ध्रौव्य युगपत् पाये जायें, वह सत् है, इस सूत्र  
के द्वारा सत् की व्याख्या करते हुए सामान्य द्रव्य का स्वरूप बतला कर विशेष बोध

अस्तित्व ( જે શક્તિના નિમિત્તથી દ્રવ્યનો કયાદેય પણ નાશ ન હોય. ) વસ્તુત્વ-  
દ્રવ્યત્વ ( જે શક્તિના નિમિત્તથી પર્યાય હંમેશાં બદલતી રહે ) અને પ્રમેયત્વ-જ્ઞેયત્વ  
( જે શક્તિના નિમિત્તથી દ્રવ્ય કોઈ ન કોઈ જ્ઞાનનો વિષય હોય ) આદિ સામાન્ય  
ગુણ છે. એ પ્રમાણે ધર્માસ્તિકાયમાં ગતિહેતુત્વ ( ગતિકારણતા ) અધર્માસ્તિકાયમાં  
સ્થિતિહેતુત્વ ( સ્થિતિકારણતા ) આકાશમાં અવકાશદાનહેતુત્વ ( અવકાશદાયિત્વ )  
કાલમાં વર્તનાહેતુત્વ ( નવપુરાણકારણતા ) આદિ, અને પુદ્ગલમાં રૂપાદિમત્ત્વ વિશેષ  
ગુણ છે. તેથી એ સર્વમાં દ્રવ્યના લક્ષણની સંગતિ થઈ જાય છે.

કોઈ આચાર્યે " સદ્ દ્રવ્યલક્ષણમ્ " એવું સૂત્ર રચીને ' ઉત્પાદવ્યય-ધ્રૌવ્યયુક્તં  
સત્ ' અર્થાત્ જેમાં ઉત્પાદ, વિનાશ અને ધ્રૌવ્ય એક કાળે જોવામાં આવે તે " સત્ " છે. આ સૂત્ર દ્વારા સત્ની વ્યાખ્યા કરતા થકા સામાન્ય દ્રવ્યનું સ્વરૂપ બતાવીને



લક્ષણે સમાવિષ્ટમેવેતિ ગુસ્તરલક્ષણં નાવશ્યકમિતિ જ્ઞેયમ્ ।

પરમાર્થતસ્તુ પર્યાયા ન ગુણતો ભિન્નાઃ કાર્યકારણયોરભેદાત્ । યથા કટકકુણ્ડલાદીનિ કનકતો ન ભિન્નાનિ, ઘટશરાવાદીનિ મૃદો નાતિરિક્તાનિ, તથા ગુણજન્મનાં પર્યાયાનાં ન ભેદો ગુણેભ્યઃ ઇતિ દ્રવ્યલક્ષણે પર્યાયશબ્દપ્રવેશો નાવશ્યક ઇત્યવસેયમ્ ।

ગુણલક્ષણમ્—

દ્રવ્યસ્યાઽઽશ્રયાશ્રયિભાવેન નિત્યસહવર્તિનો ધર્મા ગુણાઃ, તે દ્રવ્યસ્ય શક્તિવિશેષાઃ । દ્રવ્યમાત્રાશ્રિતં ગુણસ્ય લક્ષણમ્ । યથા જીવસ્ય જ્ઞાનદર્શન-

કરારને કે લિયે વિશેષ લક્ષણ યહ બતલાયા હૈ—‘ગુણપર્યાયવદ્ દ્રવ્યમ્’ યહ લક્ષણ મી પ્રકૃત લક્ષણ ‘ગુણાશ્રયો દ્રવ્યમ્’ મેં સમાવિષ્ટ હૈ, ઇસ લિયે ઁનકા બડા લક્ષણ કરને કી આવશ્યકતા નહીં હૈ ।

વાસ્તવ મેં તો પર્યાય, ગુણ સે ભિન્ન નહીં હૈ, કયોંકિ કાર્ય ઔર કારણ મેં ભેદ નહીં હોતા । જૈસે—કટક, કુણ્ડલ આદિ પર્યાય સુવર્ણ સે ભિન્ન નહીં હૈ, અતઃ ગુણો સે ઉત્પન્ન હોને વાલે ગુણો સે ભિન્ન નહીં હૈ । ઁસી અવસ્થા મેં દ્રવ્ય કે લક્ષણ મેં પર્યાય શબ્દ ઢાલના આવશ્યક નહીં હૈ ।

ગુણ કા લક્ષણ—

દ્રવ્ય કે આશ્રય આશ્રયી રૂપસે અથવા કથચ્છિત્ તાદાત્મ્યરૂપસે નિઃય સહવર્તી ધર્મ, ‘ગુણ’ કહલાતે હૈ । ‘ગુણ’ દ્રવ્ય કી શક્તિવિશેષ હૈ । સિર્ફ દ્રવ્યાશ્રિત હોના ગુણ કા

વિશેષ ઁાધ કરાવવા માટે વિશેષ લક્ષણુ ઁ બતાવ્યું છે કેઃ—“ગુણપર્યાયવદ્ દ્રવ્યમ્” આ લક્ષણુ પણ પ્રકૃત (આલૂ) લક્ષણુ (ગુણાશ્રયો દ્રવ્યમ્) માં સમાવિષ્ટ છે તેથી વિશેષ લક્ષણુ કરવાની આવશ્યકતા નથી.

વાસ્તવમાં તો પર્યાય, ગુણથી ભિન્ન નથી, કારણ કે કાર્ય અને કારણમાં ભેદ નથી, જેવી રીતે ઢાં અને કુંડલ આદિ પર્યાય સુવર્ણથી ભિન્ન નથી ઘટ અને શકેર આદિ પર્યાય મૃત્તિકા—માટીથી ભિન્ન નથી, કારણ કે ગુણથી ઉત્પન્ન થવા વાળા પર્યાય, ગુણથી ભિન્ન નથી, ઁવી અવસ્થામાં દ્રવ્યના લક્ષણમાં પર્યાય શબ્દ નાખવો તે જરૂરી નથી.

ગુણના લક્ષણ—

દ્રવ્યના આશ્રય—આશ્રયી—રૂપથી અથવા કથચ્છિત્ તાદાત્મ્યરૂપથી નિત્ય સહવર્તી ધર્મ ગુણ કહેવાય છે. ગુણ ઁ દ્રવ્યની શક્તિવિશેષ છે. માત્ર દ્રવ્યાશ્રિત

સુખવીર્યાદયઃ, પુદ્ગલસ્ય વર્ણગન્ધરસસ્પર્શદયો ગુણાઃ । ‘માત્ર’-શબ્દોપાદનં  
પર્યાયેઽતિપ્રસજ્જવારણાય ।

દ્રવ્યસ્વરૂપવિચારેણ ‘ગુણસમુદાયો દ્રવ્ય’-મિતિ પ્રતીયતે, યથા  
મૂલસ્કન્ધશાખાપ્રશાખાદીનાં સમુદાયો વૃક્ષઃ, તથૈવાસ્તિત્વ-પરિણામિત્વ-  
વસ્તુત્વ - જ્ઞેયત્વ - પ્રમેયત્વ - પ્રદેશવત્ત્વાદિસામાન્યગુણાનાં ચેતનત્વ-ગતિહેતુત્વ-  
સ્થિતિહેતુત્વા - ડવકાશદાનહેતુત્વ - વર્તનાહેતુત્વ - વર્ણ - ગન્ધ - રસ - સ્પર્શ-

લક્ષણ હૈ, જૈસે-જીવ કે ગુણ-જ્ઞાન, દર્શન, સુખ ઓર વીર્ય આદિ હૈ, તથા પુદ્ગલ કે ગુણ  
વર્ણ, ગન્ધ, રસ ઓર સ્પર્શ આદિ હૈ । ઉપર જો ‘માત્ર’ (સિર્ફ) શબ્દ કા પ્રયોગ કિયા ગયા  
હૈ; વહ પર્યાય મેં અતિપ્રસજ્જ નિવારણ કરતે કે લિખ હૈ । અર્થાત્ ગુણ કેવલ દ્રવ્ય મેં હોતે હૈ,  
પર્યાય મેં નહીં હોતે ।

દ્રવ્ય કે સ્વરૂપ પર વિચાર કરને સે પ્રતીત હોતા હૈ કિ ગુણોકા સમુદાય હી દ્રવ્ય હૈ ।  
જૈસે મૂલ, સ્કન્ધ, શાખા ઓર પ્રશાખા આદિ કા સમૂહ હી વૃક્ષ હૈ, ઉસી પ્રકાર અસ્તિત્વ,  
પરિણામિત્વ, વસ્તુત્વ, જ્ઞેયત્વ, પ્રમેયત્વ, પ્રદેશવત્ત્વ આદિ સામાન્ય ગુણો કા, તથા ચેતના,  
ગતિહેતુત્વ, સ્થિતિહેતુત્વ, અવકાશદાનહેતુત્વ, વર્તનાહેતુત્વ, વર્ણ-રસ-ગન્ધ-સ્પર્શવત્ત્વ આદિ  
વિશેષ ગુણો કા સમૂહ હી દ્રવ્ય હૈ । યહાં યહ સ્મરણ રચના ચાહિખ કિ-વિભિન્ન દ્રવ્યો કે

શ્કેવું તે ગુણવું લક્ષણ છે. જેવી રીતે જીવના ગુણ-જ્ઞાન, દર્શન, સુખ અને વીર્ય  
આદિ છે. તથા પુદ્ગલના ગુણ-વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શ આદિ છે. ઉપર જે  
‘માત્ર’ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તે પર્યાયમાં અતિપ્રસંગ નિવારણ કરવા માટે છે,  
અર્થાત્ ગુણ કેવલ દ્રવ્યમાં હોય છે, પર્યાયમાં હોય નહિ.

દ્રવ્યના સ્વરૂપ પર વિચાર કરવાથી જણાય છે કે ગુણોનો સમુદાય જ દ્રવ્ય  
છે. જે રીતે-મૂલ, સ્કન્ધ, શાખા અને પ્રશાખા આદિનો સમૂહ તે વૃક્ષ છે. એ  
પ્રમાણે અસ્તિત્વ, પરિણામિત્વ વસ્તુત્વ, જ્ઞેયત્વ, પ્રમેયત્વ, પ્રદેશવત્ત્વ આદિ સામાન્ય  
ગુણોનો, તથા ચેતના ગતિહેતુત્વ, સ્થિતિહેતુત્વ, અવકાશદાનહેતુત્વ, વર્તનાહેતુત્વ,  
વર્ણ, રસ, ગંધ, સ્પર્શવત્ત્વ આદિ વિશેષ ગુણોનો સમૂહ તે દ્રવ્ય છે. આદિ એ યાદ  
પ્ર. આ. ૮

વત્ત્વાદિવિશેષગુણાનાં ચ સમુદાયો દ્રવ્યમ્ । एवं 'द्रव्यपर्यायस्वरूपमपी'-स्यनुपदमेव वक्ष्यते ।

### પર્યાયલક્ષણમ્—

परियन्ति=उत्पादविनाशौ प्राप्नुवन्ति न सर्वदा तिष्ठन्तीति पर्यायाः । यद्वा-  
परि=सर्वथा अयन्ते=गच्छन्ति द्रव्यगुणौ समाश्रयन्तीति पर्यायाः ।

द्रव्यस्योत्पादविनाशशालिनो ધર્માઃ પર્યાયાઃ । પર્યાયા હિ દ્રવ્યં ગુણં  
ચાશ્રિત્ય વર્તન્તે । કાલભેદાદેકમેવ જ્ઞાનં જીવસ્યાન્યદન્યદ્રૂપં દધત્ પર્યાયશબ્દ-  
વાચ્યં ભવતિ, યથા કશ્ચિદષ્ટવર્ષીયો વિનયી પ્રમાદવિકથાવર્જિતો બાલમુનિ-  
ગુરુચરણસરોજં સેવમાનઃ પૂર્વમાવશ્યકમાત્રમધીત્ય સમિતિગુપ્તિજ્ઞાનં સંપાદયતિ,

વિશેષ ગુણોં કા સમૂહ નહીં બન સકતા હૈ । એસે દ્રવ્ય ઔર પર્યાય કે વિષય મેં બી સમજના  
ચાહિયે, વહ અમી આગે બતાયેંગે ।

### પર્યાય કા લક્ષણ—

जिनके निरन्तर उत्पाद और व्यय होता है, जो सदैव स्थिर नहीं रहते उन्हें पर्याय  
कहते हैं । अथवा द्रव्य और गुण का आश्रय लेने वाले पर्याय कहलाते हैं ।

દ્રવ્ય કે ઉત્પાદ ઔર વિનાશ-શીલ ધર્મ પર્યાય કહલાતે હૈં । પર્યાય, દ્રવ્ય મેં બી  
રહતે હૈં ઔર ગુણ મેં બી રહતે હૈં । જીવકા એક હી જ્ઞાનગુણ કાલ કે ભેદસે ભિન્ન-ભિન્ન  
રૂપ ધારણ કરતા હુઆ પર્યાય કહલાતા હૈ । જૈસે એક આઠ વર્ષ કા વિનયી પ્રમાદ ઔર  
વિકથા સે દૂર રહને વાલા બાલ મુનિ અપને ગુરુ કે ચરણ કમલોં કી સેવા કરતા હુઆ

સામ્યું જોધએ કે વિલિન્ન દ્રવ્યોના વિશેષ ગુણોના સમૂહ બની શકતો નથી. એવી  
રીતે દ્રવ્ય અને પર્યાયના વિષયમાં પણ સમજતું જોધએ. વિશેષ આગળ બતાવીશું.

### પર્યાયનું લક્ષણ—

જેની અંદર હમેશાં ઉત્પાદ અને વ્યય થયા કરે છે. અને જે હમેશાં-સદાકાળ  
સ્થિર રહેતું નથી તેને પર્યાય કહે છે, અથવા દ્રવ્ય અને ગુણનો આશ્રય લેનાર  
તેને પર્યાય કહેવામાં આવે છે.

દ્રવ્યનો ઉત્પાદ અને વિનાશ-શીલ ધર્મ તે પર્યાય કહેવાય છે. પર્યાય, દ્રવ્યમાં  
પણ રહે છે અને ગુણમાં પણ રહે છે. જીવનો એક જ જ્ઞાનગુણ કાલના ભેદથી  
ભિન્ન ભિન્ન રૂપ ધારણ કરીને પર્યાય કહેવાય છે. જેવી રીતે કે એક આઠ વર્ષના  
વિનયવંત, પ્રમાદ અને વિકથાથી દૂર રહેવાવાળા બાલમુનિ પોતાના ગુરુના ચરણ



ક્રમેણ દ્વાદશાઙ્ગતત્ત્વં વિજ્ઞાય જ્ઞાનધારાં પ્રવર્દ્યતિ । તત્ર તસ્ય બાલસંયમિનો જ્ઞાનં પ્રતિક્ષણં વિલક્ષણતામાપદ્યમાનમપૂર્વમપૂર્વં જાયમાનં જ્ઞાનં પર્યાયશબ્દવાચ્યતાં ભજતિ । एवं दर्शनचारित्रादीनामपि पर्याया ज्ञातव्या । जीवस्य मानुषत्वबाल्यादयोऽपि पर्यायाः । पुद्गलस्य तु एकगुणकालत्वादयो पर्याया ज्ञेयाः । एवं च द्रव्यगुणाश्रितत्वं पर्यायस्य लक्षणमिति निश्चीयते । तथा चोक्तमुत्तराध्ययने—(अ. २८)

પહલે—પહલ આવશ્યક માત્ર કા અધ્યયન કરતા હૈ, ફિર સમિતિ ઔર ગુપ્તિ કા જ્ઞાન સંપાદન કરતા હૈ । તદનન્તર ક્રમ સે દ્વાદશાઙ્ગ કા તત્ત્વ જ્ઞાન કર જ્ઞાન કી ધારા મેં વૃદ્ધિ કરતા હૈ, ઉસ બાલ મુનિ કા જ્ઞાન ક્ષણ-ક્ષણ મેં વિલક્ષણ હોકર નવીન-નવીન રૂપો મેં ઉત્પન્ન હોતા હુઆ ‘પર્યાય’ શબ્દ દ્વારા કહા જાતા હૈ । ઈસી પ્રકાર દર્શન ઔર ચારિત્ર આદિ ગુણો કે પર્યાય મી સમજ લેના ચાહિયે । મનુષ્યતા, બાલકપન આદિ જીવ કે પર્યાય હૈ ઔર એક-ગુણ-કાલાપન આદિ પુદ્ગલ કે, વર્ણ-ગુણ કે પર્યાય હૈ । ઈસ પ્રકાર યહ નિશ્ચિત હોતા હૈ કિ પર્યાય દ્રવ્ય ઔર ગુણ દોનો મેં હી રહતા હૈ । ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર મેં કહા હૈ—

“ગુણોં કા જો આશ્રય હો ઉસે દ્રવ્ય કહતે હૈ, ગુણ એક માત્ર દ્રવ્ય મેં હી રહતે હૈ । પર્યાયોં કા લક્ષણ ઉભયાશ્રિત હોના હૈ, અર્થાત્ પર્યાય, દ્રવ્ય ઔર ગુણ દોનો મેં હી પાયે જાતે હૈ” ।

કમળોની સેવા કરતા થકા પ્રથમ આવશ્યક માત્રનું અધ્યયન કરે છે, પછી સમિતિ અને ગુપ્તિનું જ્ઞાન સંપાદન કરે છે; ત્યાર પછી કમળી દ્વાદશાંગનું તત્ત્વ જાણી જ્ઞાનની ધારામાં વૃદ્ધિ કરે છે; તે બાલમુનિનું જ્ઞાન ક્ષણ-ક્ષણમાં વિલક્ષણ-તરેહવાર બની નવીન રૂપોમાં ઉત્પન્ન થાય છે તેને ‘પર્યાય’ શબ્દથી બોળાબવામાં આવે છે, એ પ્રમાણે દર્શન અને ચારિત્ર આદિ ગુણોના પર્યાય પણ સમજ લેવા જોઈએ. મનુષ્યતા, બાલકપણ આદિ જીવના પર્યાય છે, અને એકગુણકાલાપણ આદિ પુદ્ગલના વર્ણગુણોના પર્યાય છે. આ પ્રમાણે આ નિશ્ચિત થાય છે કે—પર્યાય, દ્રવ્ય અને ગુણ એ બન્નેમાં રહે છે. ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રમાં કહ્યું છે—

“ગુણોના જે આશ્રય હોય, તેને દ્રવ્ય કહે છે; ગુણ એક માત્ર દ્રવ્યમાં જ રહે છે, અને પર્યાયોનું લક્ષણ ઉભયાશ્રિત હોય છે, અર્થાત્ પર્યાય, દ્રવ્ય અને ગુણ બન્નેમાં જોવામાં આવે છે”.

“ગુણાનમાસઓ દવ્વં, એગદવ્વસ્સિયા ગુણા ।

લક્ષણં પર્યવાણં તુ, ઉભયોરાશ્રિતા ભવે ॥ ૬ ॥” ઇતિ ।

છાયા—

“ગુણાનામાશ્રયો દ્રવ્યમ્, એકદ્રવ્યાશ્રિતા ગુણા :

લક્ષણં પર્યવાણાં તુ, ઉભયોરાશ્રિતા ભવેયુઃ” ॥ ૬ ॥ ઇતિ ।

દ્રવ્યલક્ષણે પર્યાયાનુક્ત્યા કાર્યકારણયોરભેદવિવક્ષયા પર્યાયાણાં ગુણેષુ સમાવેશ ઇતિ ભગવદભિપ્રાયો ગમ્યતે । “એકદ્રવ્યાશ્રિતા ગુણાઃ” ઇતિ, એકં=કેવલં દ્રવ્યમાશ્રિત્ય ગુણા વર્તેન્ત ઇત્યર્થઃ । અનેન ગુણલક્ષણમુક્તમ્ । ‘પર્યવાણાં લક્ષણં તુ ઉભયોરાશ્રિતા ભવેયુઃ’ ઇત્યન્વયઃ । પર્યવઃ, પર્યયઃ, પર્યાયઃ, ઇતિ સમાનાર્થકાઃ । ઉભયોઃ=દ્રવ્યગુણયોરાશ્રિતાઃ પર્યાયાઃ, ઇતિ પર્યાયલક્ષણં बोध्यमित्यર્થઃ । પર્યાયાસ્તુ દ્રવ્યં ગુણં ચોભયમાશ્રિત્ય વર્તેન્ત ઇતિ ભાવઃ ।

દ્રવ્ય કે લક્ષણ મેં ‘પર્યાય’ પદ કા સમાવેશ ન કરને કે કારણ ભગવાન્ કા અભિપ્રાય યહ હૈ કિ—કાર્ય કારણ કે અભેદસે ગુણ મેં હી પર્યાય કા સમાવેશ હો જાતા હૈ । ‘એગદવ્વસ્સિયા ગુણા’ હિસ વાક્ય કા અર્થ યહ હૈ કિ—ગુણ કેવલ દ્રવ્ય મેં હી હોતે હૈ । હિસ કથનદ્વારા ગુણ કા લક્ષણ બી કહ દિયા ગયા હૈ ।

પર્યાય કા લક્ષણ ઉભયાશ્રિત હોના હૈ, દોનો મેં અર્થાત્ દ્રવ્ય મેં બી ઓર ગુણ મેં બી પર્યાય રહતે હૈ । પર્યવ, પર્યય ઓર પર્યાય ચે સમી સમાનાર્થક હૈ ।

દ્રવ્યના લક્ષણમાં ‘પર્યાય’ પદનો સમાવેશ નહિ કરવાથી ભગવાનનો અભિપ્રાય એ છે કે—કાર્ય કારણના અભેદથી ગુણમાં જ પર્યાયનો સમાવેશ થઈ જાય છે. ‘એગદવ્વસ્સિયા ગુણા’ આ વાક્યનો અર્થ એ છે કે:—ગુણ કેવલ દ્રવ્યમાં જ હોય છે. આ કથનદ્વારા ગુણનું લક્ષણ પણ કહી આપ્યું છે.

પર્યાયનું લક્ષણ ઉભયાશ્રિત હોય છે, બન્નેમાં અર્થાત્ દ્રવ્યમાં અને ગુણમાં પણ પર્યાય રહે છે. પર્યવ, પર્યય અને પર્યાય શબ્દ સમાન અર્થવાળા છે.

द्रव्यविभागः—

द्रव्यं षड्विधम्—धर्माधर्माकाशकालपुद्गलजीवभेदात् । उक्तञ्च श्रीभगवतीसूत्रे—

“कइ णं भंते ! दव्वा पणत्ता ?, गोयमा ! छ दव्वा पणत्ता, तं जहा-  
धम्मत्थिकाए, अधम्मत्थिकाए, आगासत्थिकाए, पुग्गलत्थिकाए, जीवत्थिकाए,  
अद्दासमये” ॥

उत्तराध्ययनसूत्रेऽपि—(अ. २८)

“धम्मो अहम्मो आगासं, कालो पुग्गल जंतवो ।  
एस लोगोत्ति पन्नत्तो, जिणेहिं वरदंसिहिं ॥ ७ ॥

द्रव्य के भेद—

द्रव्य छह प्रकार का है—(१) धर्म (२) अधर्म (३) आकाश (४) काल  
(५) पुद्गल और (६) जीव । श्री भगवतीसूत्र में कहा है —

“भगवान् ! द्रव्य कितने कहे गये हैं ?, गौतम ! छह द्रव्य कहे गये हैं, वे इस  
प्रकार—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, जीवास्तिकाय और  
अद्दा—समय” ।

उत्तराध्ययनसूत्र में भी कहा है—

“धर्म, अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल, और जीव को सर्वज्ञ, सर्वदर्शी जिन भगवान्  
ने लोकसंज्ञा दी है ॥ ७ ॥

द्रव्यना भेद—

द्रव्यना छ प्रकार छे—(१) धर्म (२) अधर्म (३) आकाश (४) काल (५)  
पुद्गल अने (६) जीव. श्री भगवती सूत्रमां पणु कहुं छे—

“भगवान् ! द्रव्य केटलां कहुं छे ? गौतम ! छ द्रव्य कहेला छे. ते आ  
प्रमाणे—धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय आकाशास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, जीवास्तिकाय  
अने अद्दा—समय,”

उत्तराध्ययन सूत्रमां पणु कहुं छे—

“धर्म अधर्म, आकाश, काल, पुद्गल अने जीवने सर्वज्ञ सर्वदर्शी” जिन  
भगवाने लोकसंज्ञा आपी छे” ॥ ७ ॥



ધમ્મો અહમ્મો આગાસં, દવ્વં ઇક્કિમાહિયં ।

અણંતાણિ ય દવ્વાણિ, કાલો પુગલ જંતવો ॥ ૮ ॥”

અત્ર કાલમાત્રં વિહાય ધર્માદયોઽસ્તિકાયા ઉચ્યન્તે । ‘અસ્તી’ તિ તિહન્ત-  
પ્રતિરૂપકમવ્યયં પ્રદેશવાચકમ્ । પ્રદેશઃ સ્વસ્થાનાદનપાયિ નિર્વિભાગં સ્વખંડમ્ ।  
ઇદં નિર્વિભાગં સ્વખંડં યદા પુદ્ગલસ્ય ગલનસ્વભાવાત્તદીયસ્કન્ધદેશાભ્યામવયુત્ય-  
પૃથગ્ભૂત્વા વર્ત્તતે તદા પરમાણુનામ્ના વ્યવહ્રિયતે । યાવદપૃથગ્ભૂત્વા વર્ત્તતે  
તાવત્તદેવ નિર્વિભાગં સ્વખંડં પ્રદેશ ઇત્યુચ્યતે । અનેનૈવાશયેન પુદ્ગલાસ્તિકાયસ્ય  
ચત્વારો ભેદા ભગવતા કથિતાઃ-સ્કન્ધઃ, દેશઃ, પ્રદેશઃ, પરમાણુશ્ચેતિ । કાયઃ=

ધર્મ, અધર્મ ઓર આકાશ, યે ત્રીન દ્રવ્ય એક એક હૈ, કાલ, પુદ્ગલ, જીવ, અનન્ત  
અનન્ત દ્રવ્ય હૈ” ॥ ૮ ॥

કાલ કો છોડ કર શેષ પાંચ દ્રવ્ય અસ્તિકાય કહલાતે હૈં । ‘અસ્તિ’ યહ તિહન્તરૂપ  
પ્રતીત હોને વાલા એક અવ્યય હૈ ઓર પ્રદેશ કા વાચક હૈ । જો અપને સ્થાન સે ચ્યુત ન  
હોને વાલા, અર્થાત્ જો દ્રવ્ય કે સાથ હી જુડા હુઆ નિર્વિભાગ-જિસ કા ફિર વિભાગ ન હો  
સકે વહ સ્વખંડ, પ્રદેશ કહલાતા હૈ । પુદ્ગલ ગલનસ્વભાવ વાલા હૈ અત એવ જબ યહ  
નિર્વિભાગ સ્વખંડ પુદ્ગલ કે સ્કન્ધ યા દેશ સે વિલુહ કર અલગ હો જાતા હૈ તબ વહી સ્વખંડ  
પરમાણુ કહલાતા હૈ । જબ વહી પરમાણુ પુદ્ગલ કે સ્કન્ધ યા દેશ મેં ફિર મિલજાતા હૈ તબ

ધર્મ અધર્મ અને આકાશ આ ત્રણુ દ્રવ્ય એક-એક છે, કાલ, પુદ્ગલ અને  
જીવ અનન્ત-અનન્ત દ્રવ્ય છે.” ॥ ૮ ॥

કાલ સિવાયના બાકીના પાંચ દ્રવ્ય અસ્તિકાય કહેવાય છે. ‘અસ્તિ’ એ  
તિહન્ત રૂપ જણાતું એક અવ્યય છે, અને પ્રદેશનું વાચક છે. જે પોતાના સ્થાનથી  
ચ્યુત નહિ થવા વાળા, અર્થાત્ દ્રવ્યની સાથે જ ભેડાઈ રહેલા નિર્વિભાગ-જેનો ફરી  
ભાગ ન થઈ શકે તે ખંડ, પ્રદેશ કહેવાય છે. પુદ્ગલ ગલનસ્વભાવ વાળા છે,  
તે કારણે જ્યારે તે નિર્વિભાગ ખંડ પુદ્ગલના સ્કન્ધ અથવા દેશથી છુટા થઈ જાય  
છે; ત્યારે તે ખંડ પરમાણુ કહેવાય છે. જ્યારે તે પરમાણુ પુદ્ગલના સ્કન્ધ અથવા  
દેશમાં ફરીને મળી જાય છે ત્યારે તે પરમાણુના બદલે ફરી પ્રદેશ કહેવાય છે.

સમૂહઃ । અસ્તિ=પ્રદેશાનાં કાયઃ=સમૂહો યત્ર યસ્ય ઘા સ અસ્તિકાયઃ, પ્રદેશસમૂહવાન, ધર્મશ્રાસાવસ્તિકાયશ્ચેતિ ધર્માસ્તિકાયઃ । एवं च धर्मास्तिकायः, अधर्मास्तिकायः, आकाशास्तिकायः, पुद्गलास्तिकાયः, जीवास्तिकायः, इति नामानि सन्ति तेषाम् । कालस्तु प्रदेशाभावादस्તિકાયો न भवतीत्यतः कालः कालास्तिकाय-शब्देन न व्यवह्रियते ।

### ધર્માસ્તિકાયલક્ષણમ્—

સ્વભાવતો ગતિપરિણામિનાં જીવપુદ્ગલાનાં ગતિ પ્રતિ સહકારિ કારણં ધર્માસ્તિકાયઃ । જીવાઃ પુદ્ગલાશ્ચ સ્વભાવતો ગચ્છન્તિ, તત્રોપાદાનકારણસ્વરૂપાસ્તે વહ પરમાણુ કે બદલે ફિર પ્રદેશ કહલાને લગતા હૈ, હસી અભિપ્રાય સે ભગવાન્ ને પુદ્ગલાસ્તિકાય કે ચાર ભેદ બતલાયે હૈં (૧) સ્કન્ધ (૨) દેશ (૩) પ્રદેશ ઓર (૪) પરમાણુ ।

કાય કા અર્થ હૈ સમૂહ । જિસમેં યા જિસકે પ્રદેશોં કા સમૂહ હૈ વહ અસ્તિકાય કહલાતા હૈ । અસ્તિકાય અર્થાત્ પ્રદેશોં કા સમૂહવાલા । ધર્મરૂપ અસ્તિકાય ધર્માસ્તિકાય સમજના ચાહિયે । હસી પ્રકાર અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય ઓર જીવાસ્તિકાય, યે અસ્તિકાયોં કે નામ હૈં । કાલદ્રવ્ય પ્રદેશોં કા સમૂહરૂપ ન હોને કે કારણ અસ્તિકાય નહીં હૈ અતઃ કાલ ‘કાલાસ્તિકાય’ નહીં કહલાતા હૈ ।

### ધર્માસ્તિકાયકા લક્ષણ—

સ્વાભાવ સે યા પ્રયોગ સે ગતિક્રિયામેં પરિણત હુય જીવ ઓર પુદ્ગલોં કી ગતિ મેં જો સહકારી કારણ હો ઉસે ધર્માસ્તિકાય કહતે હૈં । જીવોં ઓર પુદ્ગલોં કા ગમન કરના સ્વભાવ હી હૈ ।

આ અભિપ્રાયે લગવાને પુદ્ગલાસ્તિકાલયના આર ભેદ બતાવ્યા છે. (૧) સ્કન્ધ, (૨) દેશ, (૩) પ્રદેશ અને (૪) પરમાણુ.

કાયનો અર્થ છે—સમૂહ, જેમાં અથવા જેનાં પ્રદેશોના સમૂહ હોય તે અસ્તિકાય કહેવાય છે, અસ્તિકાય અર્થાત્ પ્રદેશોના સમૂહ વાળા, ધર્મરૂપ અસ્તિકાય ધર્માસ્તિકાય સમજવો જોઈએ. એજ પ્રમાણે અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય અને જીવાસ્તિકાય, એ અસ્તિકાયોનાં નામ છે.

કાલદ્રવ્ય—પ્રદેશોના સમૂહરૂપ નહિ હોવાથી અસ્તિકાય નથી તેથી કાલ એ ‘કાલાસ્તિકાય’ કહેવાય નહિ.

### ધર્માસ્તિકાયનું લક્ષણ—

સ્વભાવથી અથવા પ્રયોગથી ગતિક્રિયામાં પરિણત થયેલા જીવો અને પુદ્ગલોની ગતિમાં જે સહકારી કારણ હોય, તેને ધર્માસ્તિકાય કહે છે. જીવો અને

ગતિ પ્રતિ, પુનસ્તસ્યામેવ ગતિ-ક્રિયાયાં ધર્માસ્તિકાયઃ સહાયરૂપં નિમિત્તકારણં ભવતિ ।

(૧) યથા સરિત્સમુદ્રાદ્યવગાહનશીલાનાં મત્સ્યાનાં સ્વત એવ જિગમિષા ગતિશ્ચ જાયતે, તત્ર તેષાં ગમનં પ્રતિ સહાયરૂપં નિમિત્તકારણં વારિ । સ્વયં તિષ્ઠતાં તુ મત્સ્યાનાં ન તત્ પ્રેરકં ગમનાય ।

(૨) યથા વા મૃત્પરિણામભૂતસ્ય ઘટસ્ય ઢંડો નિમિત્તકારણમ્ ।

(૩) યથા વા સ્વત એવાવગાહમાનસ્ય દ્રવ્યસ્યાવગાહનં પ્રતિ ગમનમ્, ન પુનરવગાહમાનં દ્રવ્યં બલાદવગાહયતિ તત્ ।

હસ ગમનક્રિયા મેં ઉપાદાન કારણ બહ સ્વયં હી હોતે હેં, ધર્માસ્તિકાય સહાયકમાત્ર હોને સે નિમિત્ત કારણ હૈ ।

(૧) જૈસે—નદી અથવા સમુદ્રમેં અવગાહન કરનેવાલે મચ્છો મેં ગમન કરને કી ઇચ્છા સ્વયં હી ઉત્પન્ન હોતી હૈ ઓર સ્વયં હી વે ગતિ કરતે હેં, જલ ઉન કી ગતિ મેં સહાયક રૂપ નિમિત્ત કારણ હોતા હૈ । હાં, મચ્છ અગર ઠહેરે તો જલ ઉન્હેં ગમન કરને કે લિયે પ્રેરિત નહીં કરતા ।

(૨) અથવા જૈસે—મૃત્તિકા સે બનને વાલે ઘડે મેં ડંડા નિમિત્ત કારણ હોતા હૈ ।

(૩) અથવા જૈસે—સ્વયં હી અવગાહન કરને વાલે દ્રવ્ય કી અવગાહના મેં આકાશ નિમિત્ત કારણ હોતા હૈ ।

પુદ્ગલોનો ગમન કરવું તે સ્વભાવ જ છે, એ ગમન-ક્રિયામાં ઉપાદાન કારણ તે પોતે જ હોય છે; ધર્માસ્તિકાય સહાયકમાત્ર હોવાથી તે નિમિત્ત કારણ છે.

(૧) જેવી રીતે નદી અથવા સમુદ્રમાં અવગાહન કરવાવાળા મચ્છોમાં ગમન કરવાની પોતાની જ ઇચ્છા ઉત્પન્ન થાય છે, અને પોતે જ તે ગતિ કરે છે, પરંતુ જલ તેની ગતિમાં સહાયરૂપ નિમિત્ત કારણ થાય છે પરંતુ મચ્છ એ સ્થિર રહેવાની ઇચ્છા કરે તો જલ તેને ગમન કરવા માટે પ્રેરણા કરતું નથી.

(૨) અથવા જેવી રીતે—માટીથી તૈયાર થતા ઘડામાં ડંડા અને ચાક નિમિત્ત કારણ હોય છે.

(૩) અથવા જેવી રીતે—પોતે જ અવગાહન કરનારા દ્રવ્યના અવગાહનમાં આકાશ નિમિત્ત કારણ હોય છે.



(૪) યથા વા-જલવૃષ્ટૌ સત્યાં સ્વયમેવ કૃષિકર્મારમ્ભં કુર્વતાં કૃષીવલનાં કૃષિકર્મારમ્ભં પ્રતિ વૃષ્ટિઃ સહકારિ કારણં ભવતિ ।

(૫) અપરોઽપિ શાસ્ત્રીયો દૃષ્ટાન્તો દૃષ્ટિપથમવતરતિ, યથા-‘સિદ્ધસ્વરૂપોઽહમ્, અનન્તસુખભાજનોઽહમ્’ इत्यादिभावनया व्यवहारनयेन शुद्धसिद्धस्वरूप-ध्यानकर्तृणां, निश्चयनयेन निर्विकल्पध्यानपरिणामिनां स्वयं तदुपादानकारणस्वरूपाणां भव्यानां स्वयमेव जायमानां सिद्धगतिं प्रति प्रेरणारहितो निष्क्रियो मूर्तिरहितोऽपि सिद्धभगवान् सहायकः सन् सहकारि कारणं भवति, तद्वदमूर्तो निष्क्रियः प्रेरणारहितश्च धर्मास्तिकायो जीवानां पुद्गलानां च गतिरूपे परिणामे सहायकः सन्निमित्तकारणं भवति ।

(૪) અથવા જૈસે—જલ કી વર્ષા હોને પર સ્વયં હી કૃષિકાર્ય આરમ્ભ કરને વાલે કિસાનોં કે કૃષિકાર્ય કે આરમ્ભમેં વૃષ્ટિ સહકારી કારણ હોતી હૈ ।

(૫) એક શાસ્ત્રીય દૃષ્ટાન્ત ઓર મી દૃષ્ટિગોચર હોતા હૈ—‘મૈં સિદ્ધસ્વરૂપ હૂં, મૈં અનન્ત સુખ કા ભાજન હૂં’ । इस प्रकार की भावनापूर्वक व्यवहार नय से शुद्ध सिद्ध परमात्मा का ध्यान करने वालों को, और निश्चय नय से निर्विकल्प ध्यान में परिणत होने वालों को जो सिद्धगति की प्राप्ति होती है उस में उपादान कारण स्वयं ध्यान करने वाला भव्यात्मा है, और प्रेरणारहित, निष्क्रिय, तथा अमूर्तिक होते हुए भी सिद्ध भगवान् उसमें सहायक होने से निमित्त कारण हो जाते हैं । इसी प्रकार अमूर्तिक, निष्क्रिय और प्रेरणारहित धर्मास्तिकाय भी जीव और पुद्गलों के गतिरूप परिणाम में सहायक होता हुआ निमित्त कारण होता है ।

(૪) અથવા જેવી રીતે પાણી વરસવાથી જેડુત પોતે જ ખેતીના કામને આરંભ કરે છે, ખેતીનો આરંભ કરવાવાળા જેડુતોના ખેતી કાર્યના આરંભમાં વૃષ્ટિ (વરસાદ) સહકારી કારણ હોય છે.

(૫) એક શાસ્ત્રીય દૃષ્ટાન્ત બીજું પણ દૃષ્ટિગોચર થાય છે:—

“હું સિદ્ધ સ્વરૂપ છું. હું અનન્ત સુખનું ભાજન-પાત્ર છું.” આ પ્રકારની ભાવનાપૂર્વક, વ્યવહાર નયથી શુદ્ધ સિદ્ધ ભગવાન-પરમાત્માનું ધ્યાન કરવાવાળા અને નિશ્ચયનયથી નિર્વિકલ્પ ધ્યાનમાં પરિણત થવા વાળાને જે સિદ્ધ-ગતિ પ્રાપ્ત થાય છે તેમાં ઉપાદાન કારણ ધ્યાન કરવાવાળા પોતે ભવ્યાત્મા છે; અને પ્રેરણારહિત નિષ્ક્રિય તથા અમૂર્તિક હોવા છતાં પણ સિદ્ધ ભગવાન તેમાં સહાયક હોવાથી નિમિત્ત કારણ થઈ જાય છે.

એ પ્રમાણે અમૂર્તિક, નિષ્ક્રિય અને પ્રેરણારહિત ધર્માસ્તિકાય પણ જીવ અને પુદ્ગલોનાં ગતિરૂપ પરિણામમાં સહાયક હોવાથી નિમિત્ત કારણ છે.

નનુ ધર્માસ્તિકાયસ્ય દણ્ડાદિવન્નિમિત્તકારણતા નોપપદ્યતે, સવ્યાપારં હિ કારણં ભવતિ, નિર્વ્યાપારસ્ય કારણત્વે યુક્ત્યભાવાદિતિ ચેન્ન,

ધર્માસ્તિકાયસ્ય હિ સ્વાભાવિકવ્યાપારસત્ત્વાત્ કારણત્વં સૂપપાદમ્ । ઉક્તં ચ ધર્માસ્તિકાયલક્ષણં ભગવતા—

“ગઇલક્ષણો ડ ધમ્મો” ઇતિ,

‘ગતિલક્ષણસ્તુ ધર્મઃ’ ઇતિ જ્ઞાયા । (ઉત્તરાધ્યયનસૂત્રે ૨૮ અ.) ગતિકાર્યાનુમેયો ધર્માસ્તિકાય ઇતિ ભાવઃ ।

**શંકા**—ધર્માસ્તિકાય ડંડા આદિ કે સમાન નિમિત્ત કારણ નહીં હો સકતા, ક્યોકિ વહ વ્યાપાર નહીં કરતા, કાર્ય કી ઉત્પત્તિ મેં વ્યાપાર કરને વાલા હી કારણ હોતા હૈ । કાર્ય કી ઉત્પત્તિ મેં વ્યાપાર ન કરને પર મી અગર કિસી કો કારણ માન લિયા જાય તો યાહે જો વસ્તુ યાહે જિસ કાર્ય મેં કારણ હો જાયગી । યેસી દશા મેં નિયત કાર્ય—કારણ ભાવ કા અભાવ હો જાયગા ।

**સમાધાન**—યહ શંકા ઠીક નહીં હૈ; ક્યોકિ યહો હેતુ અસિદ્ધ હૈ । ગતિરૂપ કાર્ય મેં ધર્માસ્તિકાય વ્યાપારરહિત નહીં હૈ, કિન્તુ ધર્માસ્તિકાયકા સ્વાભાવિક વ્યાપાર વિદ્યમાન હોને કે કારણ ઉસે કારણ માનના યુક્તિસજ્જત હૈ । ભગવાન્ ને ધર્માસ્તિકાયકા લક્ષણ ઇસ પ્રકાર બતલાયા હૈ—

“ગઇલક્ષણો ડ ધમ્મો” ધર્માસ્તિકાય ગતિ લક્ષણ વાલા હૈ । (ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર અ૦ ૨૮) અર્થાત્ ગતિરૂપ કાર્ય સે ધર્માસ્તિકાયકા અનુમાન હોતા હૈ ।

**શંકા**—ધર્માસ્તિકાય ડંડા આદિ પ્રમાણે નિમિત્ત કારણ થઈ શકતું નથી, કેમકે તે વ્યાપાર કરતું નથી, કાર્યની ઉત્પત્તિમાં વ્યાપાર કરનાર જ કારણ હોય છે. કાર્યની ઉત્પત્તિમાં વ્યાપાર નહિ કરવા છતાં ય જો કોઈને કારણ માનવામાં આવશે તો ગમે તે વસ્તુ ગમે તે કાર્યમાં કારણ થઈ જશે. એવી દશામાં નિયત કાર્ય કારણ ભાવનો અભાવ થઈ જશે.

**સમાધાન**—આ શંકા ઠીક નથી; કારણ કે આહિં હેતુ અસિદ્ધ છે. ગતિરૂપ કાર્યમાં ધર્માસ્તિકાય વ્યાપારરહિત નથી, ધર્માસ્તિકાયનો સ્વાભાવિક વ્યાપાર વિદ્યમાન હોવાથી તેને કારણ માનવું તે યુક્તિસંગત છે. ભગવાને ધર્માસ્તિકાયનું લક્ષણ આ પ્રમાણે બતાવ્યું છે—

“ગઇલક્ષણો ડ ધમ્મો” ધર્માસ્તિકાય ગતિલક્ષણવાળું છે (ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર અ૦ ૨૮) અર્થાત્ ગતિરૂપ કાર્યથી ધર્માસ્તિકાયનું અનુમાન થાય છે.

अस्य-(१) अरूपित्वम्, (२) अचेतनत्वम्, (३) अक्रियत्वम्, (४) गतिसहायकत्वं चेति गुणाः । (१) स्कन्धः, (२) देशः, (३) प्रदेशः, (४) अगुरुलघुत्वं चेति पर्यायाः । अयं द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणभेदेन पञ्चधा ज्ञायते, यथा-द्रव्यत एको धर्मास्तिकायः, क्षेत्रतो लोकप्रमाणः, कालत आद्यन्तरहितः, भावतो रूपरहितः-वर्णगन्धरसस्पर्शवर्जित इति । गुणतश्चलनगुणः ।

### अधर्मास्तिकायस्वरूपम्—

स्वभावतः स्थितिपरिणतानां जीवपुद्गलानां स्थितिं प्रति सहकारि कारणत्वम-धर्मास्तिकायस्य लक्षणम् ।

(१) अरूपित्व, (२) अचेतनत्व (३) अक्रियत्व (४) गतिसहायकत्व, ये धर्मास्तिकाय के गुण हैं । (१) स्कन्ध (२) देश (३) प्रदेश और (४) अगुरुलघुत्व, ये उसके पर्याय हैं । धर्मास्तिकाय द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण, इस तरह पांच भेदों से जाना जाता है । जैसे-द्रव्य से धर्मास्तिकाय एक है, क्षेत्रसे लोकप्रमाण है, कालसे आदि-अन्तरहित है, भावसे रूपादिरहित है-रूप, रस, गन्ध, स्पर्श उस में नहीं है, और गुण से चलन-गुण वाला है ।

### अधर्मास्तिकायका स्वरूप—

स्वभाव से स्थितिरूप परिणत हुए जीव और पुद्गलोंकी स्थिति में सहकारी होना अधर्मास्तिकायका लक्षण है ।

(१) अरूपित्व (२) अचेतनत्व (३) अक्रियत्व (४) गतिसहायकत्व. એ સર્વ ધર્માસ્તિકાયના ગુણો છે, (૧) સ્કંધ (૨) દેશ (૩) પ્રદેશ અને (૪) અગુરુલઘુત્વ, એ તેના પર્યાય છે. ધર્માસ્તિકાય-દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ અને ગુણ, એ પાંચ ભેદોથી બાણી શકાય છે. જેવી રીતે-દ્રવ્યથી ધર્માસ્તિકાય એક છે, ક્ષેત્રથી લોકપ્રમાણ છે, કાલથી આદિ-અન્તરહિત છે, ભાવથી રૂપાદિરહિત છે—રૂપ-રસ-ગંધ-સ્પર્શ તેમાં નથી, અને ગુણથી ચલન-ગુણવાળા છે.

### અધર્માસ્તિકાયનું સ્વરૂપ—

સ્વભાવથી સ્થિતિરૂપ પરિણત થયેલા જીવો અને પુદ્ગલોની સ્થિતિમાં સહકારી થવું તે અધર્માસ્તિકાયનું લક્ષણ છે.



જીવાઃ પુદ્ગલાશ્ચ સ્વભાવતઃ સ્વયં તિષ્ઠન્તિ, તત્રોપાદાનકારણસ્વરૂપાસ્તે સ્થિતિ પ્રતિ, પુનસ્તસ્યામેવ સ્થિતિક્રિયાયામધર્માસ્તિકાયઃ સહાયરૂપં નિમિત્તકારણં ભવતિ ।

(૧) યથા—સ્વયં તિષ્ઠતાં પથિકાનાં સ્થિતૌ છાયા સહકારિ કારણં ભવતિ । અતિષ્ઠતસ્તુ સ્થાતું ન પુનઃ સા પ્રેરયતિ ।

(૨) યથા વા સ્વયં તિષ્ઠતો દેવદત્તસ્ય સ્થિતિ પ્રતિ પૃથિવી સહકારિ કારણં ભવતિ । અતિષ્ઠન્તં તુ દેવદત્તં ન પૃથિવી સ્થાપયતિ ।

(૩) યથા-સમિતિગુપ્તિધારિણો રત્નત્રયારાધિનઃ સમરસકન્દાઃ સમાહિતમતયો મહાત્માનો નિશ્ચયનયેન નિજાત્મસ્વરૂપં ચિન્તયન્તઃ ક્ષપકશ્રણિં સમારુહ્ય સમુત્પન્ન-

જીવ ઓર પુદ્ગલ જબ સ્વભાવ સે હી સ્થિત હોતે હૈં, અપની સ્થિતિ મેં ઉપાદાન કારણ તો સ્વયં વહી હૈં, પર અધર્માસ્તિકાય ઉસ મેં સહાયક હોતા હૈ, અતઃ વહ નિમિત્ત કારણ હૈ ।

(૧) જૈસે—સ્વયં ઠરને વાલે પથિકાં કી સ્થિતિ મેં છાયા સહકારી કારણ હોતી હૈ । અગર કોઈ ન ઠહેરે તો વહ ઠહેરને કી પ્રેરણા નહીં કરતી ।

(૨) અથવા જૈસે—સ્વયં ઠહેરને વાલે દેવદત્ત કી સ્થિતિ મેં પૃથિવી સહકારી કારણ હૈ । મગર દેવદત્ત કો ન ઠહેરના હો તો પૃથ્વી જબર્દસ્તી નહીં ઠહેરાતી ।

(૩) અથવા જૈસે—સમિતિ ગુપ્તિકે ધારક, રત્નત્રય કી આરાધના કરને વાલે, સમભાવ કે રસ મેં નિમગ્ન સમાધિયુક્ત મતિ વાલે મહાત્મા નિશ્ચય નય સે આત્મસ્વરૂપકા ચિન્તન કરતે

જીવ અને પુદ્ગલ બ્યારે સ્વભાવથી જ સ્થિત થાય છે તો પોતાની સ્થિતિમાં ઉપાદાન કારણ તો પોતે જ છે, પરન્તુ અધર્માસ્તિકાય તેમાં સહાયક થાય છે, તેથી તે નિમિત્ત કારણ છે.

(૧) જેવી રીતે—પોતે ઉભા રહેવા વાળા મુસાફરોની સ્થિતિમાં છાયા સહકારી કારણ હોય છે. અગર કોઈ ઉભા ન રહે તો તે ઉભા રહેવાની પ્રેરણા નથી કરતી.

(૨) અથવા—જેવી રીતે પોતે જ ઉભા ન રહેવા વાળા દેવદત્તની સ્થિતિમાં પૃથ્વી સહકારી કારણ છે, પરન્તુ જો દેવદત્તને ઉભા ન રહેવું હોય તો પૃથ્વી દેવદત્તને બળબળારીથી ઉભો રાખી શકતી નથી.

(૩) અથવા—જેવી રીતે સમિતિ-ગુપ્તિના ધારક, રત્નત્રયની આરાધના કરવા-વાળા, સમભાવના રસમાં નિમગ્ન, સમાધિયુક્ત મતિવાળા મહાત્મા નિશ્ચયનયથી

केवलज्ञान-केवलदर्शनभृतः सन्तः सकलकर्मक्षयं कृत्वा, शरीरमौदारिकमिह परि-  
त्यज्य, सिद्धिगतिनामधेयं स्थानं गतास्तिष्ठन्ति, तेषां निश्चयनयेन स्वतः स्थिति-  
परिणतानां तत्र साद्यपर्यवसितां स्थितिं प्रति तत्स्थानं सहकारि कारणं भवति। न तु  
तत् स्थानं तानवस्थातुं प्रेरयति।

(४) यथा व्यवहारनयेन सिद्धभक्त्या स्वयं समुत्पन्नसविकल्पध्यानावस्थितानां  
महात्मनां सविकल्पध्याने स्थितिं प्रति, निष्क्रियो मूर्तिरहितः प्रेरणारहितोऽपि  
सिद्धभगवान् सहायः सन् सहकारि कारणं भवति। न त्वसौ तान् तद्व्याने स्थातुं प्रेरयति।

हुए क्षपकश्रेणी पर आरूढ हो कर उत्पन्न केवलज्ञान और-केवलदर्शन को धारण करने  
वाले हो कर समस्त कर्मों का क्षय करके औदारिक शरीर को यही त्याग कर सिद्धिगति  
नामक स्थान को प्राप्त हो कर स्थिर हो जाते हैं। निश्चयनय से स्वयं स्थिति में परिणत  
हुए उन सिद्ध जीवों की सादि-अनन्त स्थिति में वह स्थान सहकारी कारण होता है,  
किन्तु वह स्थान उन्हें ठहरने के लिए प्रेरित नहीं करता।

(४) अथवा जैसे-व्यवहारनय से सिद्ध भगवान् की भक्तिसे स्वयं उत्पन्न हुए  
सविकल्प ध्यान में अवस्थित महात्मा पुरुषों की सविकल्प में जो स्थिति है, उस में अक्रिय  
अमूर्तिक और प्रेरणारहित भी सिद्ध भगवान् सहायक होने से निमित्त कारण होते हैं, किन्तु  
वे उन्हें ध्यान में स्थित होने की प्रेरणा नहीं करते।

आत्मस्वरूपतुं चिंतन करता था। क्षपकश्रेणी पर आरूढ थाने उत्पन्न केवलज्ञान  
अने केवलदर्शनने धारण करवा पाणा थाने समस्त कर्मोंको क्षय करीने औदारिक  
शरीरको अर्द्धि न त्याग करीने सिद्धिगति नामना स्थानने प्राप्त थध स्थिर थध  
नय छे. निश्चयनयथी स्वयं स्थितिमां परिणत थथेला ते सिद्ध जीवानी सादि  
अनन्त स्थितिमां ते स्थान सहकारी कारण डोय छे; परंतु ते स्थान तेने श्राववा  
भाटे प्रेरणु नथी करतुं.

(४) अथवा-जैसी रीते व्यवहारनयथी सिद्ध भगवान् की भक्तिथी स्वयं उत्पन्न  
थथेला सविकल्प ध्यानमां अवस्थित महात्मा पुरुषोनी सविकल्प ध्यानमां जे स्थिति  
छे, तेमां निष्क्रिय, अमूर्तिक अने प्रेरणारहित सिद्ध भगवान् सहायक डोवाथी  
निमित्त कारण डोय छे; पणु सिद्ध भगवान् तेने ध्यानमां स्थित थवानी प्रेरणु  
करता नथी.

इदमेवाभिप्रेत्य भगवताऽभिहितम्—

“अहम्मो ठाणलक्खणो” इति ( उत्तरा. अ. २८ )

‘अधर्मः स्थानलक्षणः’ इति ज्ञाया । लक्ष्यते=दृश्यते परिचीयते अनेनेति लक्षणं=परिचायकं ज्ञापकम् । स्थानं=स्थितिरेव लक्षणं=ज्ञापकं यस्याऽसाविति स्थानलक्षणः । स्थितिकार्यानुमेयोऽधर्मास्तिकाय इत्याशयः ।

अधर्मास्तिकायस्य—(१) अरूपित्वम् , (२) अचेतनत्वम् , (३) अक्रियत्वम् , (४) स्थितिसहायकत्वमिति गुणाः ।

(१) स्कन्धः, (२) देशः, (३) प्रदेशः, (४) अगुरुलघुत्वं चेति पर्यायाः ।

इसी अभિપ્રાય से भगवान ने कहा—“अहम्मो ठाणलक्खणो” अधर्मास्तिकाय स्थिति लक्षण बाला है । (उत्तरा० अ० २८) जिस के द्वारा कोई वस्तु लखी जाय (देखी जाय) या जो, वस्तु का परिचायक (परिचय कराने वाला) हो वह लक्षण कहलाता है । स्थान अर्थात् स्थिति ही जिस का लक्षण है, अर्थात् स्थितिरूप कार्य से जिस का अनुमान होता है उसे अधर्मास्तिकाय कहते हैं ।

अधर्मास्तिकाय के गुण—(१) अरूपित्व (२) अचेतनत्व (३) अक्रियत्व और स्थितिसहायकत्व हैं । (१) स्कन्ध, (२) देश (३) प्रदेश, और (४) अगुरुलघुत्व, अधर्मास्तिकाय के पर्याय हैं ।

એ અભિપ્રાયથી ભગવાને કહ્યું છે કે—“અહમ્મો ઠાણલક્ખણો” અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિ લક્ષણ વાળા છે. (ઉત્તરાધ્યયન. અ. ૨૮)

જેના દ્વારા કોઈ વસ્તુ લખી શકાય (દેખી શકાય) અથવા જે વસ્તુનો પરિચય કરાવનાર હોય તે લક્ષણ કહેવાય છે. સ્થાન અર્થાત્ સ્થિતિ જ જેનું લક્ષણ છે અર્થાત્ સ્થિતિરૂપ કાર્યથી જેનું અનુમાન થાય છે, તેને અધર્માસ્તિકાય કહે છે.

અધર્માકાયના ગુણ—(૧) અરૂપિત્વ (૨) અચેતનત્વ (૩) અક્રિયત્વ અને (૪) સ્થિતિસહાયકત્વ છે.

(૧) સ્કંધ, (૨) દેશ, (૩) પ્રદેશ, અને (૪) અગુરુલઘુત્વ, એ અધર્માસ્તિકાયના પર્યાય છે.



અયં દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવગુણભેદેન પશ્ચથા જ્ઞાયતે, યથા—અધર્માસ્તિકાયો દ્રવ્યત્વેન એકઃ, ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણઃ, કાલત્વેન ઓછાંતરહિતઃ, ભાવતો રૂપરહિતઃ—વર્ણ-ગન્ધ-રસ-સ્પર્શવર્જિત ઇતિ, ગુણતઃ સ્થિતિગુણઃ ।

નનુ ધર્માધર્મશબ્દાભ્યાં પુણ્યપાપરૂપૌ શુભાશુભફલદૌ ધર્માધર્મૌ કથં નાત્ર ગૃહ્યેતે ? ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—તયોર્ગુણત્વેન દ્રવ્યપ્રકરણે સમાવેશાસંભવાત્ । કિંચ તૌ ધર્માધર્મૌ પુણ્યપાપરૂપૌ પુદ્ગલત્વેનાભિમતૌ પુદ્ગલદ્રવ્યાન્તર્ભૂતૌ, તતસ્તયોર્ન ધર્માધર્માસ્તિકાયમધ્યે સમાવેશઃ ।

અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ ઓર ગુણ કે ભેદસે પાંચ પ્રકાર સે જાના જાતા હૈ । જૈસે—અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય સે એક હૈ, ક્ષેત્ર સે લોકપ્રમાણ હૈ, કાલ સે આદિ અન્ત રહિત હૈ, ભાવસે અરૂપી અર્થાત્ રૂપ, રસ, ગન્ધ, ઓર સ્પર્શ સે રહિત હૈ, ઓર ગુણ સે સ્થિતિગુણ વાળા હૈ ।

શંકા—ધર્મ શબ્દ સે શુભ ફલ દેને વાલે પુણ્ય કા ઓર અધર્મ શબ્દ સે અશુભ ફલ દેને વાલે પાપ કા ગ્રહણ ક્યો નહીં કિયા ગયા ?

સમાધાન—પુણ્ય ઓર પાપ, દ્રવ્ય નહીં, ગુણ હૈ, ઇસી લિયે ઇનકા દ્રવ્યકે પ્રકરણ મેં સમાવેશ નહીં હો સકતા । અથવા પુણ્ય—પાપ રૂપ ધર્મ ઓર અધર્મ પુદ્ગલ હૈ, અતઃ ઉનકા સમાવેશ પુદ્ગલ મેં હી હો જાતા હૈ । ધર્માસ્તિકાય ઓર અધર્માસ્તિકાય મેં ઉન્હેં ગર્ભિત નહીં કિયા જા સકતા ।

અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ભાવ અને ગુણના ભેદથી પ્રાંચ પ્રકારે બાણી શકાય છે. જેમકે—અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યથી એક છે, ક્ષેત્રથી લોકપ્રમાણ છે, કાલથી આદિ—અન્ત રહિત છે, ભાવથી અરૂપી અર્થાત્ રૂપ, રસ ગન્ધ અને સ્પર્શથી રહિત છે, અને ગુણથી સ્થિતિગુણવાળા છે.

શંકા—ધર્મ શબ્દથી શુભ ફલ આપવા વાળા પુણ્ય અને અધર્મ શબ્દથી અશુભ ફલ આપવા વાળા પાપનું ગ્રહણ શા માટે કરવામાં આવતું નથી ?

સમાધાન—પુણ્ય અને પાપ, દ્રવ્ય નથી, ગુણ છે એટલા માટે દ્રવ્યનાં પ્રકરણમાં તેનો સમાવેશ થઈ શકતો નથી અથવા પુણ્ય—પાપરૂપ ધર્મ અને અધર્મ પુદ્ગલરૂપ છે, તેથી તેનો સમાવેશ પુદ્ગલમાં જ થઈ જાય છે. ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાયમાં તેને ગર્ભિત નથી કરી શકતા.

## અથાકાશસ્વરૂપમ્—

આ-સમન્તાત્ કાશતે=અવગાહદાનેન પ્રતિભાસતે इत्याकाशम्, યદ્વા-આકા-  
શન્તે=દીપ્યન્તે ધર્માધર્મકાલપુદ્ગલજીવાઃ સ્વસ્વરૂપેણ યત્ર તત્ ।

ધર્માધર્માદિસર્વદ્રવ્યાણામાધારતયાઽવકાશં દદાતીત્યવકાશદાયિત્વં લક્ષણમા-  
કાશાસ્તિકાયસ્ય । અત્રાવકાશદાયિત્વં વ્યવહારનયેનૌપચારિકમ્ । અસ્તિકાયશબ્દઃ  
પ્રાગ્ વ્યાખ્યાતઃ । ઉક્તં ચોત્તરાધ્યયનમૂત્રે ( ૨૮ અધ્યયને )—

“ ભાયણં સવ્વદ્વ્વાણં, નહં ઓગાહલક્ષણમ્ । ” ઇતિ ।

## આકાશકા સ્વરૂપ—

‘આકાશ’ શબ્દ મેં ‘આ’ ઓર ‘કાશ’ દો હિસ્સે હૈં । ‘આ’ કા અર્થ હૈ—સમી ઓર  
સે—સર્વત્ર, ઓર ‘કાશ’ કા અર્થ હૈ—પ્રકાશિત હોને વાલા । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ અપને  
અવગાહદાનનામક ગુણસે સર્વત્ર પ્રભાસિત હોતા હૈ, વહ આકાશ હૈ । અથવા જહાં ધર્મ,  
અધર્મ, કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ અપને—અપને સ્વરૂપ સે પ્રકાશિત હોતે હૈં, ઉસે આકાશ  
કહતે હૈં ।

ધર્મ, અધર્મ, આદિ સમસ્ત દ્રવ્યોં કા આધાર હોકર જો ઉન્હેં આશ્રય દેતા હૈ, વહી  
આકાશ હૈ । અવકાશ દેને વાલા હી આકાશ કહલાતા હૈ । યહાં ‘અવકાશ દેના’ આકાશ  
કા જો લક્ષણ બતલાયા ગયા હૈ, વહ વ્યવહારનયસે ઉપચરિત કથન હૈ । ‘અસ્તિકાય’  
શબ્દ કી વ્યાખ્યા પહેલે હી કી જા ચુકી હૈ । ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર (અ. ૨૮) મેં કહા હૈ—  
“ભાયણં સવ્વદ્વ્વાણં નહં ઓગાહલક્ષણમ્” ઇતિ ।

## આકાશનું સ્વરૂપ—

‘આકાશ’ શબ્દમાં ‘આ’ અને ‘કાશ’ બે ભાગ છે. ‘આ’ નો અર્થ છે—ચારેય  
કેારથી—સર્વત્ર, અને ‘કાશ’ નો અર્થ છે પ્રકાશિત થવા વાળા, તાત્પર્ય એ છે કે—  
પોતાના અવગાહદાન (અવકાશ આપવો) નામના ગુણથી જે સર્વત્ર પ્રતિભાસિત  
હોય છે તે આકાશ છે, અથવા જ્યાં ધર્મ, અધર્મ, કાલ, પુદ્ગલ અને જીવ  
પોતપોતાના સ્વરૂપથી પ્રકાશિત હોય છે—પ્રતીત થાય છે તેને આકાશ કહે છે.

ધર્મ, અધર્મ આદિ તમામ દ્રવ્યોનો આધાર બની જે તેને આશ્રય આપે છે  
તે આકાશ છે. અવકાશ આપનાર જ આકાશ કહેવાય છે. અવકાશ આપવો તે  
આકાશનું લક્ષણ બતાવવામાં આવ્યું છે, તે વ્યવહારનયથી ઉપચારરૂપ કથન છે.  
‘અસ્તિકાય’ શબ્દની વ્યાખ્યા પ્રથમ જ કહી દીધી છે, ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર (અ. ૨૮) માં  
કહ્યું છે કે— “ભાયણં સવ્વદ્વ્વાણં નહં ઓગાહલક્ષણમ્” ઇતિ.

‘भाजनं सर्वद्रव्याणां, नभोऽवगाहलक्षणम्’ इति च्छाया ।

सर्वद्रव्याणां भाजनम् = आधारः, इति हेतुगर्भविशेषणम् । यतः सर्व-  
द्रव्याणां भाजनम्, अतः अवगाहलक्षणं नभ इति भावः ।

धर्माधर्मकालानामन्तः समावेशेन जीवपुद्गलानामौपचारिकसंयोगविभागाभ्यां  
चावगाहः । अवगाह तत्तद्देशरूपोपाधिभेदादवगाहस्य नानात्वेन संयोगविभागा  
उपपद्यन्ते ।

अवगाहोऽवकाशः, स एव लक्षणं=ज्ञापकं यस्य तद् अवगाहलक्षणं नभः=  
आकाशं कथ्यते, इत्यर्थः । अवगाहदानकार्यानुमेयमाकाशमित्याशयः ।

धर्माधर्मादिद्रव्याणामाधारान्यथाऽनुपपत्तेराकाशमस्तीति निःशङ्कं विश्व-

‘आकाश’ सब द्रव्यों का आधार है । सारांश यह है कि आकाश सब द्रव्यों का  
आधार होनेसे अवगाह-लक्षण वाला है ।

‘धर्मास्तिकाय’ ‘आधर्मास्तिकाय’ और काल का आकाश में ही समावेश होने से जीव  
और पुद्गलों के औपचारिक संयोग और विभाग के द्वारा अवगाह होता है । अवगाह होने पर  
देश के भेद से अवगाह भी भिन्न हो जाता है और संयोग तथा विभाग उत्पन्न होते हैं ।

तात्पर्य यह है कि—अवगाह या अवकाश ही जिस का लक्षण है, अर्थात् अवगाह  
से जिस का अनुमान होता है वह द्रव्य आकाश है ।

आकाश न होता तो धर्म, अधर्म आदि द्रव्यों की स्थिति कहाँ होती ? अर्थात् उनका  
कोई आधार ही नहीं रहता, अत एव आकाश का अस्तित्व, किसी प्रकार की शङ्का किये

आकाश सर्वद्रव्येभ्यो आधारः । सारांश ये छे के आकाश सर्व द्रव्येभ्यो  
आधार होवाथी अवगाहन लक्षणवाणुं छे ।

धर्मास्तिकाय अधर्मास्तिकाय अने कालेनो आकाशभां समावेश होवाथी एव  
अने पुद्गलेभ्यो औपचारिक संयोग अने विभाग द्वारा अवगाह थाय छे, अवगाह  
थवाथी देशना लेहथी अवगाह पणु भिन्न थध जय छे, अने संयोग तथा विभाग  
उत्पन्न थाय छे ।

तात्पर्यं ये छे के—अवगाह अथवा अवकाश न जेतुं लक्षण छे, अर्थात्  
अवगाहथी जेतुं अनुमान थाय छे ते द्रव्य आकाश छे । अथवा आकाश न होय  
तो धर्म, अधर्म आदि द्रव्येभ्यो स्थिति कयां होय ? अर्थात् तेनो केह आधार न



સનીયમ્, इत्यपि भगवता बोधितम् । आकाशसिद्धयर्थं ‘भायणं सव्वदव्वाणं’-  
इति, ‘ओगाहलक्खणं’ इति च विशेषणद्वयमुपात्तम् ।

आकाशं द्विविधम्-लोकालोकभेदात्, उक्तं च स्थानाङ्गसूत्रे—

“दुविहे आगासे पन्नत्ते, तंजहा-लोगागासे चेव अलोगागासे चेव” इति ।  
द्विविध आकाशः प्रज्ञप्तस्तद्यथा-लोकाकाशश्चैव अलोकाकाशश्चैव, इति च्छाया ।  
धर्मादिसर्वद्रव्याणामाधारभूतमसंख्यातप्रदेशात्मकमाकाशखण्डं लोकाकाशम् । तद्वि-  
न्नमनन्तप्रदेशात्मकमलोकाकाशम् ।

ननु धर्माधर्मद्रव્યस्वीकारे प्रयोजनं न किमपि पश्यामः, जीव-पुद्गलानां  
गतिस्थितिकार्ययोः सहायरूपं कारणं त्वाकाशमेव स्यात् ? ।

विना विश्वास करने योग्य है, यह भी भगवान् ने उक्त कथन से ध्वनित कर दिया है ।  
आकाश की सिद्धि के लिये ‘भायणं सव्वदव्वाणं’ और ‘ओगाहलक्खणं’ ये दो विशेषण  
लगाये गये हैं ।

आकाश दो प्रकार का है-लोकाकाश, और अलोकाकाश । स्थानाङ्गसૂत्र में कहा है—  
“दुविहे आगासे पन्नत्ते तं जहा-लोगागासे चेव अलोगागासे चेव”

धर्म आदि सब द्रव्यों का आधार और असंख्यातप्रदेशरूप आकाशखण्ड, लोकाकाश  
कहलाता है । लोकाकाश से भिन्न अनन्तप्रदेशी अलोकाकाश है ।

શક્તિ—જબ કિ આકાશ હી જીવ ઓર પુદ્ગલોં કી ગતિ एवं स्थिति में सहायक कारण  
हो सकता है तो फिर धर्मास्तिकाय और अधर्मास्तिकाय द्रव्यों को स्वीकार करने का कोई  
न रहेत, એટલા માટે આકાશના અસ્તિત્વ, કેઈ જાતની પણ શંકા કર્યા વગર  
વિશ્વાસ કરવા યોગ્ય છે; એ પણ ભગવાને ઉક્ત કથનથી ધ્વનિત કર્યું છે.  
આકાશની સિદ્ધિ માટે ‘ભાયણં સવ્વદવ્વાણં’ અને ‘ઓગાહલક્ખણં’ આ બે વિશેષણ  
લગાવેલા છે.

આકાશ બે પ્રકારના છે. (૧) લોકાકાશ અને (૨) અલોકાકાશ. સ્થાનાંગ  
સૂત્રમાં કહ્યું છે —“દુવિહે આગાસે પન્નત્તે, તંજહા-લોગાગાસે ચેવ અલોગાગાસે ચેવ”

ધર્મ આદિ તમામ દ્રવ્યોનો આધાર અને અસંખ્યાતપ્રદેશરૂપ આકાશખંડ  
તે લોકાકાશ કહેવાય છે. લોકાકાશથી ભિન્ન અનન્તપ્રદેશી અલોકાકાશ છે.

શંકા—જો કે આકાશ જ જીવ અને પુદ્ગલોની ગતિ અને સ્થિતિમાં સહાયક  
કારણ થઈ શકે છે તો પછી ધર્માસ્તિકાય અને અધર્માસ્તિકાય દ્રવ્યોનો સ્વીકાર

अत्रोच्यते-धर्मश्चाधर्मश्चेति द्रव्यद्वयमवश्यमङ्गीकरणीयम्, अन्यथा दोषबाहुल्यप्रसङ्गात् ।

(१) आकाशस्य गतिहेतुत्वस्वीकारे जीवपुद्गलानामलोकाकाशगमनापत्तिः ।

(२) अलोकाकाशस्यापि जीवपुद्गलपूर्णत्वे लोकत्वप्रसंगः, तथा चालोकाकाश-  
स्य नामाऽपि बन्ध्यापुत्रवदेव स्यात् ।

(३) भगवत्प्ररूपिताऽऽकाशद्वैविध्यव्यवस्थाऽपि न सिद्धयेत् ।

प्रयोजन दिखाई नहीं देता ।

**समाधान**—धर्मद्रव्य और अधर्मद्रव्य अवश्य स्वीकार करना चाहिये। उन्हें स्वीकार न करने से बहुतसे दोष आते हैं। वे इस प्रकार—

(१) आकाश को ही गति का कारण मान लिया जाय तो जीवों और पुद्गलों का अलोकाकाश में भी गमन मानना पड़ेगा, क्योंकि अलोकाकाश भी तो आखिर आकाश ही है।

(२) अलोकाकाश अगर जीवों और पुद्गलों से व्याप्त मान लिया जाय तो वह अलोकाकाश न रहकर लोकाकाश ही हो जायगा। ऐसी स्थिति में अलोकाकाश तो बन्ध्यापुत्र के समान हो जायगा, अर्थात् अलोकाकाश का अस्तित्व नहीं रहेगा।

(३) भगवान् ने दो प्रकार का आकाश बतलाया है, वह व्यवस्था भङ्ग हो जायगी।

કરવાનું કોઈ પણ પ્રયોજન જોવામાં આવતું નથી.

સમાધાન-ધર્મદ્રવ્ય અને અધર્મદ્રવ્યનો અવશ્ય સ્વીકાર કરવો જોઈએ, તેનો સ્વીકાર નહિ કરવાથી બહુ જ દોષ આવે છે, તે આ પ્રમાણે-

(૧) આકાશને જ ગતિનું કારણ મानी લેવામાં આવે તો જીવો અને પુદ્ગલોનું અલોકાકાશમાં પણ ગમન માનવું પડશે; કેમકે અલોકાકાશ પણ છેવટે તો આકાશ જ છે.

(૨) અથવા અલોકાકાશ જીવો અને પુદ્ગલોથી વ્યાપ્ત માની લેશો તો તે અલોકાકાશ નહિ રહેતાં લોકાકાશજ થઈ જશે; એવી સ્થિતિમાં અલોકાકાશ તો વાંધ્યા પુત્રના સમાન થઈ જશે, અર્થાત્ અલોકાકાશનું અસ્તિત્વ જ રહેશે નહિ.

(૩) ભગવાને જે પ્રકારના આકાશ ખતાવ્યાં છે, તે વ્યવસ્થા ભગ થઈ જશે.

(૪) અપિચ-સિદ્ધમગવાન્ ઊર્ધ્વં ગત્વા લોકાગ્રેઽવસ્થિત इति मर्यादाऽपि खपुष्पायमानैव स्यात् ।

(૫) भवन्मते गतिकारणीभूतस्याकाशस्योर्ध्वदेशे विद्यमानत्वात्तस्य (सिद्धस्य) गतेरवरोधाभावो भवेत् ।

ધર્માધર્મદ્રવ્યયોરાકાશતઃ પૃથક્ સ્વીકારે તુ લોકાકાશત ઉર્ધ્વમલોકાકાશસ્ય સત્ત્વેન તત્ર ગતિહેતોર્ધર્મસ્યાભાવાન્ન ગતિર્ભવતિ । સ્થિતિહેતોર્ધર્મદ્રવ્યસ્ય લોકાન્તર્વર્તિત્વેન લોકમધ્ય એવોપરિભાગે ગતિહેતોર્ધર્મદ્રવ્યસ્ય સાહાય્યેન ગત્વા તત્રૈવાધર્મદ્રવ્યસાહાય્યેન તિષ્ઠતિ । एवं च लोकाग्रे भगवानवस्थितो जले

(૪) સિદ્ધ મગવાન્ ઉપર જાકર લોક કે અગ્ર ભાગ મેં સ્થિત હો જાતે હૈં, યહ આગમ કી મર્યાદા મી આકાશપુષ્પ કે સમાન હો જાયગી ।

(૫) આપ કે મત કે અનુસાર ગતિકા કારણ આકાશ હૈ ઓર વહ ઉર્ધ્વ દેશ મેં લોકાકાશ કે અગ્રભાગ સે મી આગે વિદ્યામાન હૈ, અતઃ સિદ્ધોં કી ગતિ મેં રુકાવટ નહીં હોગી ।

ધર્મદ્રવ્ય ઓર અધર્મદ્રવ્ય કો આકાશ સે ભિન્ન માન લેને સે લોકાકાશ સે ઉપર અલોકાકાશ મેં ગતિ કા કારણ ધર્મદ્રવ્ય નહીં હૈ, અતઃ લોકાકાશ સં આગે ગતિ મી નહીં હોતી, તથા સ્થિતિ કા કારણ અધર્મદ્રવ્ય લોક કે અન્તર્ગત હી હૈ, અતઃ ધર્મદ્રવ્ય કી સહાયતાસે સિદ્ધ જીવ, લોક કે અન્ત તક પહુંચ કર અધર્મ કી સહાયતા સે વહીં અર્થાત્ લોકાકાશકે

(૪) સિદ્ધ ભગવાન ઉપર જઈને લોકના અગ્રભાગમાં સ્થિત થાય છે, તે આગમની મર્યાદા પણ આકાશ-પુષ્પના સમાન થઈ જશે.

(૫) આપના મત પ્રમાણે ગતિનું કારણ આકાશ છે અને તે ઉર્ધ્વ-ઉપરના દેશમાં લોકાકાશના અગ્રભાગથી પણ આગળ વિદ્યમાન-હોયોત છે, તેથી સિદ્ધોની ગતિમાં રૂકાવટ-રોકાણ નહિ થાય.

ધર્મ દ્રવ્ય અને અધર્મદ્રવ્યને આકાશથી ભિન્ન માની લેવાથી લોકાકાશથી ઉપર અલોકાકાશમાં ગતિનું કારણ ધર્મદ્રવ્ય નથી, તેથી લોકાકાશથી આગળ ગતિ પણ થતી નથી, તથા સ્થિતિનું કારણ અધર્મદ્રવ્ય લોકના અન્તર્ગતજ (અંદરજ) છે, તેથી ધર્મદ્રવ્યની સહાયતાથી સિદ્ધ લોકના અન્ત સુધી પહોંચીને અધર્મદ્રવ્યની



તુમ્બીવદિતિ મર્યાદા સુતરામુપપદ્યતે । ઉક્તં ચૌપપાતિકસૂત્રે—

“કહિં પઢિહયા સિદ્ધા, કહિં સિદ્ધા પઢિહયા ।  
કહિં બોંદિં ચઈત્તા ણં, કત્થ ગંતૂણ સિજ્ઞહ ॥ ૧ ॥  
અલોગે પઢિહયા સિદ્ધા, લોયગ્ગે ય પઢિહયા ।  
ઇહ બોંદિં ચઈત્તા ણં, તત્થ ગંતૂણ સિજ્ઞહ ॥ ૨ ॥” ઇતિ ।

છાયા—

“કુત્ર પ્રતિહતાઃ સિદ્ધાઃ, કુત્ર સિદ્ધાઃ પ્રતિષ્ઠિતાઃ ।  
કુત્ર બોન્દિં (શરીરં) ત્યક્ત્વા, કુત્ર ગત્વા સિદ્ધયતિ ॥ ૧ ॥  
અલોકે પ્રતિહતાઃ સિદ્ધાઃ, લોકાગ્રે ચ પ્રતિષ્ઠિતાઃ ।  
ઇહ બોંદિં (શરીરં) ત્યક્ત્વા, તત્ર ગત્વા સિદ્ધયતિ ॥ ૨ ॥ ઇતિ

અન્તર્ગત હી ઠહર જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જલકે અગ્રભાગ પર ઠહરે હુણ તુંવે કે સમાન સિદ્ધ ભગવાન્ લોકાકાશ કે અગ્રભાગ પર સ્થિત હૈ, યહ મર્યાદો સ્વતઃ સિદ્ધ હો જાતી હૈ ।

ઔપપાતિકસૂત્ર મેં કહા હૈ—

“સિદ્ધ ભગવાન્ કહૌં રુકજાતે હૈં ? કહૌં સ્થિત હોતે હૈં ? । કહૌં શરીર કા ત્યાગ કરકે કહૌં જાકર સિદ્ધ હોતે હૈં ? ॥ ૧ ॥

સિદ્ધ ભગવાન્ અલોક મેં રુક જાતે હૈં, લોકકે અગ્રભાગ મેં સ્થિત હોતે હૈં । યહૌં શરીર કા ત્યાગ કરકે વહૌં જાકર સિદ્ધ હો જાતે હૈં ॥ ૨ ॥”

સહાયતાથી ત્યાં જ અર્થાત્ લોકાકાશના અંદરજ થોભી જાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે જલના અગ્રભાગ ઉપર સ્થિત રહેલા તુંબડાની પેઠે સિદ્ધ ભગવાન લોકાકાશના અગ્રભાગ ઉપર સ્થિત છે. આ મર્યાદા સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જાય છે. ઔપપાતિક સૂત્રમાં પણ કહ્યું છે—

“સિદ્ધ ભગવાન ક્યાં રોકાઈ જાય છે ? ક્યાં સ્થિત થાય છે ? ક્યાં શરીરનો ત્યાગ કરીને, ક્યાં જઈને સિદ્ધ થાય છે ? ॥ ૧ ॥

સિદ્ધ ભગવાન અલોકમાં રોકાઈ જાય છે, લોકના અગ્રભાગમાં સ્થિત થાય છે, અહિં શરીરનો ત્યાગ કરીને ત્યાં જઈને સિદ્ધ થઈ જાય છે. ॥ ૨ ॥”

નન્વેવં ધર્માધર્મદ્રવ્યે એવ સમાદ્રિયેતામ્, કિમાકાશદ્રવ્યાવલમ્બનેન, આકાશ-કાર્યાવગાહસાહાય્યં ધર્માધર્મદ્રવ્યાભ્યામેવ સંપદ્યેત ?, इति चेत्, उच्यते—सिद्धान्ते तयोर्जीवादिगतिस्थितिसाधकत्वेन सिद्धान्तितत्वादवकाशं दातुं तौ न प्रभवतः । अन्यसाध्यं कार्यमन्यो न साधयति, अन्यथाऽतिप्रसंगात् । लोकेऽपि चक्षुस्साध्यं दर्शनकार्यं न श्रोत्रं साधयति ।

નનુ કેવલજ્ઞાનસ્ય યોગ્જનન્તતમો ભાગસ્તત્પ્રમાણમેવ નમોદ્રવ્યમ્, તસ્ય ચાનન્તતમભાગપરિમિતં લોકાકાશમ્, एतादृशेऽल्पतरूपे लोकाकाशे लोकाकाश-

શરૂઢા—યદિ એસા હો તો ધર્મદ્રવ્ય ઔર અધર્મદ્રવ્ય હી સ્વીકાર કરલેને ચાહિયે, ફિર આકાશ કી ક્યા આવશ્યકતા હૈ? આકાશ કા કાર્ય અવગાહ દેના હૈ સો વહ કાર્ય ધર્મદ્રવ્ય ઔર અધર્મદ્રવ્ય સે હી સંપન્ન હો જાયગા ।

સમાધાન—આગમ મેં ધર્મદ્રવ્ય ઔર અધર્મદ્રવ્ય કો ગતિ ઔર સ્થિતિ મેં હી સહાયક બતલાયા હૈ, ઇસ લિખ વહ અવકાશ દેને મેં સમર્થ નહીં હૈ, ઔર કા કાર્ય કોઈ ઔર નહીં કર સકતા । અગર એસા હોને લગે તો સર્વત્ર ગડબડ હો જાયગા । લોક મેં ચક્ષુકા દેખના કાર્ય કાન નહીં કર સકતા ।

શરૂઢા—કેવલ જ્ઞાન કા જો અનન્તવાં ભાગ હૈં ઉસી કે બરાબર આકાશદ્રવ્ય હૈ, ઔર આકાશ-દ્રવ્ય કા મી અનન્તવાં ભાગ લોકાકાશ હૈ તો ઇતને છોટે સે લોકાકાશ મેં સમસ્ત લોકવ્યાપી ઔર અસંખ્યાત પ્રદેશવાલે ધર્મદ્રવ્ય કા, અધર્મદ્રવ્ય કા, અનન્તાનન્ત જીવોં કા

શંકા—જે એ પ્રમાણે છે તો ધર્મદ્રવ્ય અને અધર્મદ્રવ્યનો સ્વીકાર કરી લેવો જોઈએ, ફરીને આકાશની શું આવશ્યકતા છે? આકાશનું કાર્ય અવગાહ—અવકાશ આપવો તે છે, તે કાર્ય ધર્મદ્રવ્ય અને અધર્મદ્રવ્યથી જ સંપન્ન થઈ જશે.

સમાધાન—આગમમાં ધર્મદ્રવ્ય અને અધર્મદ્રવ્યને ગતિ અને સ્થિતિમાં સહાયક બતાવ્યા છે, એટલા માટે તે અવકાશ આપવામાં સમર્થ નથી. બીજાનું કાર્ય કોઈ બીજે નહિ કરી શકે, જે એમ થવા લાગશે તો સર્વત્ર ગડબડ થઈ જશે. જગતમાં નેત્રથી જોવાનું કાર્ય કાન કરી શકતા નથી.

શંકા—કેવલજ્ઞાનનો જે અનંતમો ભાગ છે તેના બરાબર આકાશદ્રવ્ય છે, અને આકાશદ્રવ્યનો પણ અનંતમો ભાગ લોકાકાશ છે, તો એવડા નાના સરખા લોકાકાશમાં સમસ્ત લોકવ્યાપી અને અસંખ્યાત પ્રદેશવાળા ધર્મદ્રવ્યનો, અધર્મ-

વ્યાપિનોઃ પ્રત્યેકમસંખ્યાતપ્રદેશાત્મકયોર્ધર્માધર્માસ્તિકાયયોરનન્તજીવાનાં તેભ્યોઽ-  
પ્યનન્તગુણપુદ્ગલાનાં ચ કથં સમાવેશઃ, એકસ્ય લોકાકાશસ્ય સર્વદ્રવ્યાવકાશદાના-  
સંભવાત્?, ઇતિ ચેદુચ્યતે—

લોકાકાશસ્યાવકાશશક્તિર્હિ મહીયસી વિલક્ષણા ચિન્તયિતુમશ્કયા ચ,  
અત એવ ભગવતા—“ભાયણં સવ્વદ્વાણં નહં ઓગાહલક્ષણં” ઇત્યુક્તમ્ ।

નમસોઽવકાશશક્તિં કેવલલોકેનાવલોક્ય સર્વદ્રવ્યાણામાધારત્વં ભગવતા  
પ્રતિબોધિતમ્ । મહીયસી નમસોઽવકાશશક્તિઃ, સુકરોઽત્ર સર્વદ્રવ્યાણાં સમાવેશ  
ઇતિ તદાશયઃ ।

યથા—વતાસાનામધેયં મધુરદ્રવ્યં દુગ્ધપરિપૂરિતેઽપિ ભાજને નિહિતં સત્  
ઔર उन से भी अनन्तगुने पुद्गलोका समावेश किस प्रकार हो सकता है? एक लोकाकाश  
समस्त द्रव्यों को अवगाह दे सके, यह असम्भव है ।

સમાધાન—લોકાકાશ કો અવકાશ દેને કી શક્તિ મહાન્ હૈ, વિલક્ષણ હૈ, ઔર અચિન્ત્ય  
હૈ, इसीलिये तो भगवान् ने कहा है—“भायणं सव्वद्वमाणं नहं ओगाहलक्षणं”  
અવગાહલક્ષણ વાલા આકાશ સર્વ દ્રવ્યોં કા આધાર હૈ ।

ભગવાન્ ને અપને કેવલજ્ઞાન મેં આકાશ કી અવગાહદાનશક્તિ કો દેખકર ઉસે સર્વ  
દ્રવ્યોં કા આધાર નિરૂપણ ક્રિયા હૈ । ભગવાન્ કે કથન કા અભિપ્રાય યહી હૈ કિ આકાશ  
કી અવગાહનાશક્તિ બહુત બડી હૈ, ઉસ મેં સર્વ દ્રવ્યોં કા સમાવેશ સરલતા સે હો જાતા હૈ ।

જૈસે—દૂધ સે પરિપૂર્ણ પાત્ર મેં વતાસે ડાલ દિયે જાયેં તો વે ઉસી મેં સમાવેશ હો  
દ્રવ્યોનો, અન્તાનન્ત જીવોનો અને તેનાથી પણ અનન્તગણા પુદ્ગલોનો સમાવેશ  
કેવી રીતે થઈ શકે? એક લોકાકાશ સમસ્ત દ્રવ્યોનો અવગાહ-અવકાશ આપી  
શકે, એ અસંભવ છે.

સમાધાન—લોકાકાશની અવકાશ આપવાની શક્તિ મહાન છે, વિલક્ષણ છે  
અને અચિન્ત્ય છે એટલા માટે ભગવાને કહ્યું છે—“ભાયણં સવ્વદ્વાણં નહં  
ઓગાહલક્ષણં” અવગાહલક્ષણવાળા આકાશ સર્વ દ્રવ્યોનો આધાર છે. ભગવાને  
પોતાના કેવલ જ્ઞાનમાં આકાશની અવગાહદાન-અવકાશ આપનારી-શક્તિ જોઈને  
તેને ‘સર્વ દ્રવ્યોનો આધાર છે’ એમ નિરૂપણ કર્યું છે. ભગવાનના વચનનો  
અભિપ્રાય એ છે કે—આકાશની અવગાહનશક્તિ બહુ જ મોટી છે, અને તેમાં  
સર્વ દ્રવ્યોનો સમાવેશ સરલતાથી થઈ જાય છે.

જેવી રીતે દૂધના પરિપૂર્ણ પાત્રમાં પતાસાં નાખવામાં આવે તો તે તેમાં



તસ્મિન્ સમાવિશતિ । યથા વા ભિત્તૌ શઙ્કોઃ સમાવેશસ્તથૈવાનન્તદ્રવ્યાણાં લોકાકાશે સમાવેશ ઇતિ બોધ્યમ્ ।

નન્વલોકાકાશસ્ય કથં સિદ્ધિઃ, નાસૌ હિ દ્રવ્યાણામાધારઃ, નાપ્યવકાશદા-  
યિત્વં તસ્ય ?, ઇતિ ચેત્, ઉચ્યતે—ગતિસ્થિતિકારણયોધર્માધર્મયોરભાવાદેવ તત્ર  
વિદ્યમાનાપિ દ્રવ્યાધારતાશક્તિરવકાશદાનશક્તિશ્ચ નાભિવ્યક્તા ભવતિ । તદસ્વીકારે  
તુ જીવદ્રલાનાં કર્મનિગડવિમુક્તસિદ્ધાનાં ચોર્ધ્વગતિવિરામો ન સ્યાત્, ભગવત્પતિ-  
બોધિતલોકાલોકવ્યવસ્થાઽપિ ન તિષ્ઠેત્, એવં આગમયુક્તિપ્રમાણાભ્યામલોકાકાશં  
સિદ્ધમ્ ।

જાતે હૈં, અથવા જૈસે દીવાલ મેં કીલ કા સમાવેશ હો જાતા હૈં उसी प्रकार लोकाकाश में अनन्त द्रव्यों का समावेश हो जाता है ।

શઙ્કા—અલોકાકાશ કી સિદ્ધિ કૈસે હોતી હૈ ? ન તો વહ દ્રવ્યોં કા આધાર હૈ, ન અવકાશદાનરૂપ લક્ષણ હી उस में घटित होता है ?

સમાધાન—ગતિ ઓર સ્થિતિ કે કારણ ધર્મ ઓર અધર્મદ્રવ્ય કા અભાવ હોને કે કારણ હી અલોકાકાશકી દ્રવ્યાધારતા કી શક્તિ ઓર અવકાશદાનશક્તિ પ્રકટ નહીં હોતી હૈ । અગર અલોકાકાશ ન માના જાય તો જીવોં ઓર પુદ્ગલોં કી, તથા ધર્મરૂપી બેડી સે મુક્ત હુએ સિદ્ધ જીવોં કી ગતિ કા અન્ત હો ન હોગા, ઓર ભગવાન્ કી કહી હુઈ લોક અલોક કી વ્યવસ્થા મી કાયમ નહીં રહેગી । હસ પ્રકાર આગમ ઓર યુક્તિ પ્રમાણોં સે અલોકાકાશ કી સિદ્ધિ હોતી હૈ ।

(દ્વધમાં) સમાવિષ્ટ—ઓતપ્રોત થઈ જાય છે, અથવા જેવી રીતે દીવાલમાં કીલ-ખીલીને સમાવેશ થઈ જાય છે, તે પ્રમાણે લોકાકાશમાં અનન્ત દ્રવ્યોને સમાવેશ થઈ જાય છે.

શંકા—અલોકાકાશની સિદ્ધિ કેવી રીતે હોઈ શકે ? તે દ્રવ્યોને આધાર નથી અને અવકાશદાનરૂપ લક્ષણ તેનામાં ઘટી શકતું નથી.

સમાધાન—ગતિ અને સ્થિતિના કારણ ધર્મ અને અધર્મ દ્રવ્યોને અભાવ હોવાના કારણે જ અલોકાકાશની દ્રવ્યાધારતાની શક્તિ અને અવકાશદાન-શક્તિ પ્રગટ થતી નથી. અથવા અલોકાકાશ માનવામાં નહિ આવે તો જીવો અને પુદ્ગલોની, તથા કર્મરૂપી બેડીથી મુક્ત થયેલા સિદ્ધ જીવોની ગતિનો કયાંય અન્ત-છેડો જ નહિ આવે, અને ભગવાને કહેલી લોક-અલોકની વ્યવસ્થા પણ કાયમ નહિ રહે. એ પ્રમાણે આગમ અને યુક્તિ પ્રમાણોથી અલોકાકાશની સિદ્ધિ થાય છે,

અન્યસકલદ્રવ્યાપેક્ષયા મહત્પરિમાણમાકાશસ્ય, અનન્તપ્રદેશિત્વાત્ ।  
તેનાકાશં મહાસ્કન્ધરૂપમ્ ।

આકાશાસ્તિકાયસ્ય (૧)-અરૂપિત્વમ્, (૨)-અચેતનત્વમ્, (૩)-અક્રિયત્વમ્,  
(૪)-અવગાહદાયિત્વં ચેતિ ગુણાઃ । (૧)-સ્કન્ધઃ, (૨)-દેશઃ, (૩)-પ્રદેશઃ,  
(૪)-અગુરુલઘુત્વં ચેતિ પર્યાયાઃ ।

અયં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ગુણ-ભેદેન પञ્ચધા જ્ઞાયતે, યથા-દ્રવ્યત્વ એક  
આકાશાસ્તિકાયઃ, ક્ષેત્રતો લોકાલોકપ્રમાણઃ, કાલત્વ આદિ-અનન્તરહિતઃ, ભાવતો  
રૂપરહિતઃ-વર્ણ-ગન્ધ-રસ-સ્પર્શવર્જિત ઇતિ । ગુણતોઽવકાશદાયી ।

આકાશ કા પ્રમાણ અન્ય સર્વ દ્રવ્યોં કો અપેક્ષા બડા છે, ક્યોંકિ વહ અનન્તપ્રદેશી  
છે, અતઃ આકાશ મહાસ્કન્ધરૂપ છે ।

(૧) અરૂપિત્વ, (૨) અચેતનત્વ, (૩) અક્રિયત્વ, (૪) અવગાહદાયિત્વ, એ  
આકાશાસ્તિકાય કે ગુણ હૈં । (૧) સ્કન્ધ (૨) દેશ (૩) પ્રદેશ તથા (૪) અગુરુલઘુત્વ,  
અસકે પર્યાય હૈં ।

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ ઓર ગુણકે ભેદસે આકાશ દ્રવ્ય પાંચ પ્રકાર સે જાના જાતા  
છે । જૈસે દ્રવ્ય સે આકાશાસ્તિકાય એક છે, ક્ષેત્ર સે લોકાલોકપ્રમાણ છે, કાલ સે આદિ-  
અન્ત રહિત છે-ભાવસે અરૂપી છે, અસ મેં વર્ણ, ગન્ધ, રસ ઓર સ્પર્શ નહીં પાવે જાતે ।  
ગુણસે અવકાશ દેને વાલા છે ।

આકાશતું પરિમાણ બીજાં સર્વ દ્રવ્યોની અપેક્ષાએ મોટું છે, કેમકે તે  
અનન્તપ્રદેશી છે. એટલે કે આકાશ મહાસ્કન્ધરૂપ છે.

(૧) અરૂપિત્વ (૨) અચેતનત્વ (૩) અક્રિયત્વ (૪) અવગાહદાયિત્વ, એ  
આકાશાસ્તિકાયના ગુણ છે, અને (૧) સ્કન્ધ, (૨) દેશ, (૩) પ્રદેશ, તથા અગુરુ-  
લઘુત્વ, તેના પર્યાય છે.

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ અને ગુણના લેહથી આકાશ દ્રવ્ય પાંચ પ્રકારથી  
જાણી શકાય છે. જેમકે—દ્રવ્યથી આકાશાસ્તિકાય એક છે, ક્ષેત્રથી લોકાલોકપ્રમાણ  
છે, કાલથી આદિ-અન્તરહિત છે, ભાવથી અરૂપી છે-તેમાં વર્ણ, ગન્ધ, રસ અને  
સ્પર્શ નથી, ગુણથી અવકાશ આપવાવાળું છે.

## કાલનિરૂપણમ્—

તત્ર કાલશબ્દસ્ય વ્યુત્પત્તિઃ—

કલ્યતે=પરિચ્છિદ્યતે વસ્ત્વનેનેતિ કાલઃ । કરણે ઘઞ્ । ‘માસિકોઽયં બાલઃ, વાર્ષિકોઽયં બાલઃ, વાસન્તિકમિદં પુષ્પમ્’ ઇત્યાદિરૂપેણ વસ્તૂનાં પરિચ્છેદો=નિર્ણયઃ કાલમાશ્રિત્ય ભવતિ ।

અથવા સ્વભાવતઃ પરિણમદ્વિઃ પદાર્થજાતૈઃ, કલ્યતે=ગમ્યતે=પ્રાપ્યતે નિમિત્તત્વેનાઽસૌ, ઇતિ કાલઃ । સકલવસ્તુપરિણતિહેતુઃ કાલ ઇત્યગ્રે વક્ષ્યતે ।

## કાલનિરૂપણ—

કાલ શબ્દ કી વ્યુત્પત્તિ—

જિસ કે દ્વારા વસ્તુ કલી જાય અર્થાત્ જાની જાય વહ કાલ હૈ । યહાં કરણમેં ‘ઘઞ્’ પ્રત્યય હુઆ હૈ । યહ બાલક માસિક (એક માસકા) હૈ, યહ બાલક વાર્ષિક (વર્ષ ભરકા) હૈ, યહ ફૂલ વાસન્તિક (વસન્તઋતુસમ્બન્ધી હૈ, ઇસ રૂપમેં વસ્તુઓં કા જ્ઞાન કાલ કે દ્વારા હી હોતા હૈ ।

અથવા સ્વભાવસે પરિણત હોને વાલે પદાર્થ સમૂહોં દ્વારા નિમિત્ત રૂપમેં જો પ્રાપ્ત ક્રિયા જાય વહ કાલ કહલાતા હૈ । ‘કાલ, સમસ્ત વસ્તુઓં કે પરિણમન કા હેતુ હૈ યહ વાત આગે બતલાઈ જાયગી ।

## કાલનિરૂપણ—

કાલ શબ્દની વ્યુત્પત્તિ—

જેના દ્વારા વસ્તુ બાણી શકાય તે કાલ છે. અહિં કારણમાં ‘ઘઞ્’ પ્રત્યય થયો છે “આ બાલક માસિક-એક માસનો છે, આ બાલક વાર્ષિક-એક વર્ષનો છે, આ ફૂલ વાસન્તિક-વસન્તઋતુસંબંધી છે” એ રૂપમાં વસ્તુઓના જ્ઞાન કાલ દ્વારા જ શાય છે.

અથવા સ્વભાવથી પરિણત થવાવાળા પદાર્થસમૂહો દ્વારા નિમિત્તરૂપમાં જે પ્રાપ્ત કરી શકાય તે કાલ કહેવાય છે. “કાલ સમસ્ત વસ્તુઓના પરિણમનનું કારણ છે” એ આગળ બતાવવામાં આવશે.



कालस्य सिद्धिः—

‘पदार्थाः सन्ति, अथवा पदार्था वर्तन्ते’ इति व्यवहारो वर्तनामूलः ।  
 “अनुदात्तेतश्च हलादे”-रिति पाणिनिसूत्रेण वृत्तधातोर्युच्प्रत्ययः । वर्तनशीला  
 वर्तना । उत्पत्तिः, अप्रच्युतिः, विद्यमानतारूपा वृत्तिः=क्रिया वर्तना । इयं  
 वर्तना सर्वेषु भावेषु विद्यते । वर्तना=पदार्थानां परिणामविशेषः । पदार्थानां वर्तना-  
 रूपं कार्यं नोपपद्यते विना केनचिन्निमित्तकारणेन, तस्माद् वर्तनारूपकार्योत्पत्तौ  
 यन्निमित्तं धर्मद्रव्यमिव गतौ, स एव काल इत्युच्यते ।

काल की सिद्धि—

‘पदार्थ है, या पदार्थ वर्त रहे हैं’ इस प्रकार के व्यवहार का कारण वर्तना है ।  
 ‘अनुदात्तेतश्च हलादेः’ पाणिनि के इस सूत्र से ‘वृत्’ धातु से ‘युच्’ प्रत्यय हुआ है ।  
 वर्तनशील हो उसे वर्तना कहते हैं । उत्पत्ति, अप्रच्युति, और विद्यमानतारूप वृत्ति  
 अर्थात् क्रिया वर्तना कहलाती है । यह वर्तना सभी पदार्थों में विद्यमान है । वह पदार्थों का  
 विशेष परिणाम है । पदार्थों का वर्तनारूप कार्य किसी निमित्त कारण विना नहीं हो सकता  
 अतः वर्तनारूप कार्यकी उत्पत्ति में जो निमित्त कारण है, वही काल-द्रव्य है, जैसे गति का  
 निमित्त कारण धर्म द्रव्य है ।

કાલની સિદ્ધિ—

‘પદાર્થ છે અથવા પદાર્થ વર્ત રહેલ છે’ એ પ્રકારના વ્યવહારનું કારણ  
 વર્તના છે ‘અનુદાત્તેતશ્ચ હલાદેઃ’ પાણિનિના આ સૂત્રથી ‘વૃત’ ધાતુથી ‘યુચ્’ પ્રત્યય  
 થયો છે. જે વર્તનશીલ હોય તેને વર્તના કહે છે. ઉત્પત્તિ, અપ્રચ્યુતિ, અને  
 વિદ્યમાનતારૂપ વૃત્તિ, અર્થાત્ ક્રિયા વર્તના કહેવાય છે. વર્તના સર્વ પદાર્થોમાં વિદ્યમાન  
 છે. તે, પદાર્થોનું વિશેષ પરિણામ છે. પદાર્થોનું વર્તનારૂપ કાર્ય કોઈ નિમિત્ત કારણ  
 વિના થઈ શકતું નથી. તેથી વર્તનારૂપ કાર્યની ઉત્પત્તિમાં જે નિમિત્ત કારણ છે તે  
 કાલ દ્રવ્ય છે. જેવી રીતે ગતિનું નિમિત્ત કારણ ધર્મ-દ્રવ્ય છે.

## કાલસ્ય લક્ષણમ્—

સ્વભાવતો વિદ્યમાનાનાં પદાર્થાનાં યા વિદ્યમાનતાશ્ચા વર્તના, તાં પ્રતિ સહકારિકારણત્વં કાલસ્ય લક્ષણમ્ ।

અનેનૈવાશયેન ભગવતાઽપ્યુક્તમ્—“વટ્ટણાલક્ષણો કાલો” ઇતિ, વર્તનાલક્ષણઃ કાલઃ, ઇતિ ષ્ઠાયા । વર્તના, લક્ષણં=કાર્યત્વેન પ્રત્યાયકં, યસ્ય સ વર્તનાલક્ષણઃ, વર્તનાકાર્યાનુમેયઃ કાલ ઇત્યર્થઃ । અત્ર વર્તનેત્યુપલક્ષણં પરિણામક્રિયા-પરત્વાપરત્વાદીનામ્ ।

પરિણામો હિ વસ્તૂનાં નોપપદ્યતે કારણં નિયામકમન્તરેણ, અન્યથા નિયામકહેત્વભાવે સર્વે ભાવા યુગપદુત્પદ્યેન્ । કિંચ્ચ-કારણમન્તરેણાપિ કાર્યોત્પત્તિઃ

## કાલ કા લક્ષણ—

સ્વભાવ સે વિદ્યમાન પદાર્થોં કી વિદ્યમાનતારૂપ જો વર્તના હૈં ઉસ મેં સહકારી કારણ હોના કાલ કા લક્ષણ હૈ, હીસી અભિપ્રાય સે ભગવાન્ને મી કહા હૈ—“વટ્ટણાલક્ષણો કાલો” “કાલ વર્તનાલક્ષણ વાલો હૈ ।” વર્તના હૈ લક્ષણ અર્થાત્ જ્ઞાપક જિસ કા, અર્થાત્ વર્તનારૂપ કાર્ય સે જિસકા અનુમાન હોતા હૈં ઉસે કાલ કહતે હૈં । વહીં વર્તના ઉપલક્ષણ હૈં ઉસસે પરિણામ, ક્રિયા, પરત્વ, (પહલાપન), ઓર અપરત્વ (પીછાપન) કા મી ગ્રહણ હો જાતા હૈ ।

નિયામક કારણકે અભાવ મેં પદાર્થોં કા પરિણમન નહીં હો સકતા, અગર ઈસા ન માના જાય તો સમી પદાર્થોં કી ઈક સાથ હી ઉત્પત્તિ હોને લગેગી । તથા કારણ કે વિના મી

## કાલનું લક્ષણ—

સ્વભાવથી વિદ્યમાન પદાર્થોંની વિદ્યમાનતારૂપ જે વર્તના છે, તેમાં સહકારી કારણ થવું તે કાલનું લક્ષણ છે. આ અભિપ્રાયથી ભગવાને પણ કહ્યું છે—

“વટ્ટણાલક્ષણો કાલો” કાલ વર્તનાલક્ષણ વાળો છે વર્તના છે લક્ષણ અર્થાત્ જ્ઞાપક જેનું, અર્થાત્ વર્તનારૂપ કાર્યથી જેનું અનુમાન થાય છે. તેને કાલ કહે છે. વર્તના ઉપલક્ષણ છે તેથી પરિણામ, ક્રિયા, પરત્વ (પહેલાપણું) અને અપરત્વ (પાછાપણું)નું ગ્રહણ થઈ જાય છે.

નિયામક કારણના અભાવમાં પદાર્થનું પરિણમન થતું નથી. જે એવું માનવામાં ન આવે તો સર્વ પદાર્થોંની એક સાથે જ ઉત્પત્તિ થઈ જશે, તથા કારણ વિના પણ

प्रसज्येत, अपराधीनत्वात् परिणामानाम्, अतः परिणामाः प्रतिनियतकालभाविनः, तेषामनेकशक्तियुक्तमेकं कारणं कालाख्यमित्यवश्यमङ्गीकरणीयम् ।

तास्ताश्च शक्तयः स्वस्वकार्यकरणाय कालविशेष एव प्रवर्तन्ते, न सर्वदा, तादृशस्वभाववत्त्वात् । यथा-अङ्कुररूपेण परिणतस्य वनस्पतेर्मूल-काण्ड-त्वक्-पत्र-स्कन्ध-शाखा-विटप-पुष्प-फलरूपाः परिणामा न युगपद् भवन्ति । आसीदङ्कुरः, संप्रति स्कन्धवान्, ऐषमः पुष्पिव्यति' इति व्यवहारात् । यथा वा पुरुषस्य बाल-कुमार-युव-मध्यमाद्यवस्थारूपाः, नव-पुराण प्रनष्टरूपाश्च परिणामा न युगपद् भवन्ति,

कार्य की उत्पत्ति का प्रसङ्ग उपस्थित होगा, क्योंकि परिणाम किसी कारण पर निर्भर तो होंगे नहीं, विना कारण ही होंगे, लेकिन ऐसा नहीं होता, परिणाम नियत समय पर ही होते हैं, अतः अनेक शक्तियों से युक्त एक काल नामक कारण अङ्गीकार करना चाहिए ।

वह अनेक शक्तियाँ अपना अपना कार्य करने के लिये किसी विशेष काल में ही उद्यत होती है, सर्वदा नहीं, क्योंकि उन का स्वभाव ही ऐसा है, जैसे कि-अङ्कुररूप से परिणत वनस्पति का मूल, काण्ड, त्वचा, पत्र, स्कन्ध, शाखा, विटप, पुष्प और फल रूप परिणमन एक साथ नहीं होते हैं । पहले अंकुर था, अब स्कन्धवाला हो गया, कुछ दिनों के बाद वह फूलेगा, इस प्रकार का लोकव्यवहार प्रसिद्ध ही है । अथवा-जैसे पुरुष के बाल, कुमार, युवा, मध्यम आदि अवस्था, तथा

कार्यની ઉત્પત્તિનો પ્રસંગ ઉપસ્થિત થશે. કેમકે પરિણામ કોઈ પર નિર્ભર રહેશે નહિ, વિના કારણે જ થશે, પરંતુ એવી રીતે હોય નહિ. પરિણામ નિયત સમય પર જ હોય છે, એટલા માટે અનેક શક્તિઓથી યુક્ત એક કાલ નામનું કારણ અંગીકાર કરવું જોઈએ.

તે અનેક શક્તિઓ પોત-પોતાનું કાર્ય કરવા માટે કોઈ વિશેષ કાલમાં જ ઉદય-પ્રકાશિત થાય છે. સર્વદા થતી નથી. કેમકે તેનો સ્વભાવ જ એવો છે, જેમકે-અંકુરરૂપથી પરિણત વનસ્પતિનું મૂળ, કાંડ-કાતળી, છાલ, પત્ર, સ્કંધ, શાખા, વિટપ-કાળી, પુષ્પ, ફળ-રૂપ પરિણમન એક સાથે થતાં નથી. પ્રથમ અંકુર હતું, પછી સ્કંધવાળું થયું, અને કેટલાક દિવસો પછી તે ફૂલશે, એ પ્રમાણે લોકવ્યવહાર પણ પ્રસિદ્ધ જ છે. અથવા જેવી રીતે પુરુષને બાલ્ય, કુમાર, યુવા, મધ્યમ આદિ અવસ્થા, તથા નવાપણું અને જુનાપણું અને પ્રનષ્ટ-નાશરૂપ પરિણમન એક સાથે થતું નથી, એટલા માટે સમસ્ત પરિણામોનું નિયામક નિમિત્ત



તસ્માત્સર્વેષાં પરિણામાનાં નિયામકં નિમિત્તકારણં કાલ ઇતિ સિદ્ધમ્ । યથા કર્તૃરી વસ્ત્રકૃન્તને નિમિત્તકારણં તથા દ્રવ્યાણાં પર્યાયે નિમિત્તકારણં કાલઃ ।

ક્રિયા=દ્રવ્યપરિણામઃ । તસ્યા અપિ નિયામકં નિમિત્તકારણં કાલઃ । યથા-‘આકાશદેશે-અઙ્ગુલિરસ્તિ, આસીત્, ભવિષ્યતિ ચ’ ઇત્યયં વ્યવહારઃ કાલ-મબલમ્બ્ય સંપદ્યતે, કાલસ્યાસત્ત્વે ત્વતીત એવ વર્તમાનોઽનાગતશ્ચ સ્યાત્, ક્રિયા-નિયામકાભાવાત્, એવમતીતાદિવિભાગાભાવે વ્યવહારોચ્છેદાપત્તિઃ, તસ્માત્ “અસ્તિ કાલઃ યમાશ્રિત્યાતીતાદિવ્યવહારાઃ સુસ્પષ્ટં પ્રસિધ્ધ્યન્તિ” ઇતિ, મન્તવ્યમ્ ।

ન્યાપન, પુરાનાપન, ઔર પ્રનષ્ટરૂપ પરિણમન એક સાથ નહીં હોતે હૈં, અત એવ સમસ્ત પરિણામોં કા નિયામક નિમિત્ત કારણ કાલ હી સિદ્ધ હોતા હૈ । જૈસે કૈંચી વસ્ત્ર કાટને મેં નિમિત્ત કારણ હોતી હૈ, ઉસી પ્રકાર દ્રવ્યોં કે પરિણમન મેં કાલ નિમિત્ત કારણ હોતા હૈ ।

ક્રિયા દ્રવ્ય કા પરિણામવિશેષ હૈ । ઉસકા નિમિત્ત કારણ મી કાલ હી હૈ । જૈસે ‘આકાશ મેં અંગુલી હૈ, થી ઔર હોગી’ ઇસ પ્રકાર કા વ્યવહાર કાલ કે આશ્રિત હૈ । કાલ કી સત્તા ન માની જાય તો અતીત હી વર્તમાન ઔર અનાગત (ભવિષ્ય) હો જાયગા, ક્યોંકિ ક્રિયા કા કોઈ નિયામક નહીં હૈ । ઇસ પ્રકાર અતીત આદિ કાલોં કા વિભાગ ન રહને સે વ્યવહાર કા લોપ હો જાયગા, અતઃ “કાલ અવશ્ય હૈ, જિસ કે સહારે અતીત આદિ કે વ્યવહાર સ્પષ્ટ રૂપ સે સિદ્ધ હોતે હૈ” એસા માનના હી સમુચિત હૈ ।

કારણુ કાલ જ સિદ્ધ થાય છે જેમકે કાતર, વસ્ત્રને કાપવામાં નિમિત્ત કારણુ થાય છે, તે પ્રમાણે દ્રવ્યોના પરિણમનમાં કાલ નિમિત્ત કારણુ થાય છે.

ક્રિયા એ દ્રવ્યનું પરિણામ વિશેષ છે. તેનું નિમિત્ત કારણુ પણ કાલ જ છે. જેમ ‘આકાશમાં આંગળી છે, હટી અને હશે’ આ પ્રકારનો વ્યવહાર કાલને આશ્રિત છે. કાલની સત્તા ન માનવામાં આવે તો અતીત-ભૂતકાળ જ વર્તમાન અને ભવિષ્ય કાળ થઈ જશે, કેમકે ક્રિયાનો નિયામક કોઈ નથી, આ પ્રમાણે અતીત ભૂતકાળ આદિ કાળોનો વિભાગ નહિ રહેવાથી વ્યવહારનો લોપ થઈ જશે. એટલા માટે “કાલ અવશ્ય છે, જેની સહાયતાથી ભૂતકાળ આદિનો વ્યવહાર સ્પષ્ટરૂપથી સિદ્ધ થાય છે” એમ માનવું તે જ યોગ્ય છે.

प्रतिदिवसमुभयकालिकसकलवस्त्रपात्रादिप्रतिलेखनं, प्रत्यहोरात्रमुभयकालिक-  
मावश्यकं, चतुष्कालिकं स्वाध्यायकरणं मुनीनां कर्तव्यतया भगवतोपदिष्टं, तच्च  
कालस्यासत्त्वे तद्विभागज्ञानाभावेन यथाकालमनुष्ठातुमशक्यं मुनिभिरिति  
शास्त्रानर्थक्यमापद्येत ।

भिक्षार्थमकालवर्जनपूर्वककालानुरोधेन निष्क्रमप्रतिक्रमकर्तव्यता भगवत्प्ररूपिता  
गृहीतप्रव्रज्यानां भिक्षूणां नष्टप्राया स्यात् ।

प्रतिदिन दोनों वक्त समस्त वस्त्र पात्र आदि का प्रतिलेखन करना, प्रत्येक  
दिन और रात्रि के अन्त में आवश्यक करना, चौकालीन स्वाध्याय करना भगवान् ने  
मुनियों का कर्तव्य बतलाया है । अगर कालद्रव्य की सत्ता न मानी जाय तो दिन रात  
आदि के भेद का पता ही नहीं चलेगा और समय पर उक्त सब कार्य नहीं किये जा सकेंगे ।  
ऐसी अवस्था में शास्त्रों का यह उपदेश निरर्थक हो जायगा ।

“अकाल का त्याग कर के समुचित समय पर मुनियों को भिक्षा के लिए जाना  
और आना चाहिए ” भगवान् ने मुनियों का यह कर्तव्य बतलाया है, कालद्रव्य न  
मानने पर यह सब कर्तव्य, और उनका उपदेश भी नष्टप्राय हो जायगा ।

प्रतिदिन अन्ने वभत समस्त-तमाम वस्त्र, पात्र आदितुं प्रतिद्वेभनः करवुं,  
प्रत्येक द्विवस अने रात्रिना अन्तमां आवश्यक करवुं, चौकालीन-आरेय काल स्वाध्याय  
करवो. ते भगवाने मुनिओतुं कर्तव्य अताव्युं छे. अगर कालद्रव्यनी सत्ता नहि  
माने तो द्विवस रात वगेरे लेहनेो पत्तो भणशे नहि, अने समय पर आगण  
कहेलां सर्व कर्तो करी शकाशे नहि, ओवी अवस्थामां शास्त्रोनेो ओ उपदेश निरर्थक  
थरुं नशे.

“अकालनो-त्याग करीने योग्य समय पर मुनिओओे भिक्षाने माटे नवुं-आववुं  
ओधओे” भगवाने मुनिओतुं ओ कर्तव्य कहुं छे. कालद्रव्यने नहि मानवामां आवे  
तो ओ सर्व कर्तव्य अने तेभनेो उपदेश पणु नष्टप्राय थरुं नशे.

કિંચ્ચ—ગ્રીષ્માદિષુ સંયતાનામતાપનાદયો ધર્માઃ ભગવદુક્તાઃ કાલસત્ત્વ  
 એવોપપદ્યન્તે । અન્યથા ગ્રીષ્માદિકૃતજ્ઞાનાભાવાદ્ ભગવદુપદિષ્ટક્રિયાહાનિઃ પ્રસજ્યેત ।  
 એવં ચ વર્તના, પરિણામઃ, ક્રિયાશ્ચ દ્રવ્યસ્વભાવાઃ કાલમાશ્રિત્ય ભવન્તીતિ  
 નિરૂપિતમ્ ।

પરાપરવ્યતિકરજ્ઞાનમપિ કાલેનૈવ સંપદ્યતે । વિપ્રકૃષ્ટઃ કનિષ્ઠપર્યાયો મુનિઃ  
 ક્ષેત્રેણ પરોઽપિ કાલેનાપરઃ, સંનિકૃષ્ટો જ્યેષ્ઠપર્યાયો મુનિઃ ક્ષેત્રેણાપરોઽપિ

इसके अतिरिक्त ग्रीष्म आदि ऋतुओं में साधुओं के लिये भगवान् ने आतापना  
 आदि धर्मोंका उपदेश दिया है, काल के होने पर ही यह उपदेश बन सकता है ।  
 काल के अभाव में ग्रीष्म ऋतु का ही ज्ञान नहीं होगा और भगवान् द्वारा उपदिष्ट क्रिया  
 की हानि हो जायगी ।

यहां तक यह बतलाया जा चुका कि वर्तना, परिणाम और क्रिया, जो कि द्रव्य  
 के स्वभाव हैं, काल के सहारे ही होते हैं ।

પરત્વ ઓર અપરત્વ કા મિલા-જુલા સા જ્ઞાન મી કાલ દ્વારા હી હોતા  
 હૈ । દૂરવર્તી છોટીદીક્ષાપર્યાયવાલા મુનિ દૂર હોને કે કારણ ક્ષેત્ર સે પર હોને  
 પર મી ( દીક્ષા મેં છોટા હોને કે કારણ ) કાલ સે અપર કહલાતા હૈ । સમીપવર્તી  
 હૈ, મગર જ્યેષ્ઠદીક્ષાપર્યાયવાલા મુનિ ક્ષેત્ર સે અપર હોને પર મી કાલ સે પર  
 કહલાતા હૈ । યહાં ‘પર’ મી ‘અપર’ હો ગયા હૈ ઓર ‘અપર’ મી ‘પર’ બના ગયા હૈ ।

તે સિવાય ગ્રીષ્મ આદિ ઋતુઓમાં સાધુઓ માટે ભગવાને આતાપના આદિ  
 ધર્મોના ઉપદેશ આપ્યો છે, કાલ દ્રવ્યને માનવામાં આવે તો જ, અથવા કાલ દ્રવ્ય  
 હોય તો જ એ ઉપદેશ ઘટી શકે છે. કાલના અભાવમાં ગ્રીષ્મ ઋતુનું જ્ઞાન થશે  
 નહિ, અને ભગવાને કહેલી ક્રિયાની હાનિ થઈ જશે.

અહિં સુધી બતાવી ચૂક્યા કે વર્તના, પરિણામ અને ક્રિયા, જે કે દ્રવ્યનો  
 સ્વભાવ છે, કાલની સહાયતાથી જ થાય છે.

પરત્વ અને અપરત્વનું મિલા-જુલા જેવું જ્ઞાન પણ કાલદ્વારા જ  
 થાય છે. દૂરવર્તી, નાની દીક્ષા-પર્યાયવાળા મુનિ દૂર હોવાના કારણે ક્ષેત્રથી પર હોવા  
 છતાંય પણ (દીક્ષામાં નાના હોવાના કારણે) કાલથી અપર કહેવાય છે, સમીપવર્તી છે  
 પણ જ્યેષ્ઠ-મોટીદીક્ષાપર્યાયવાળા મુનિ ક્ષેત્રથી અપર હોવા છતાંય કાળથી પર કહેવાય  
 છે. અહિં ‘પર’ પણ ‘અપર’ થઈ ગયો છે. અને ‘અપર’ પણ ‘પર’ બની ગયો છે.



કાલેન પર ઇત્યુચ્યતે । અત્ર પરસ્યાપરત્વમ્ ; અપરસ્ય પરત્વમિતિ પરાપરવ્યતિ-  
કરઃ X કારણં વિના ન સંભવતિ, યદત્ર કારણં સ એવ કાલઃ ।

યૌગપદ્યાયૌગપદ્યપ્રત્યયેનાપિ કાલદ્રવ્યસ્યાસ્તિત્વં સિધ્યતિ । ‘આખ્યાં  
યુગપદધીતો દૃષ્ટિવાદઃ’ ‘એમિસ્તુ મુનિભિર્યુગપત્ પઠિતા દ્વાદશાઙ્ગી’ ઇતિ વાક્ય-  
તોઽધ્યયનગતયૌગપદ્યાયૌગપદ્યપ્રતીતૌ કાલમન્તરેણાન્યન્નિમિત્તં નોપલભ્યતે, યદ્વ  
નિમિત્તં સ કાલઃ ।

X ‘પરસ્પરવિષયગમનં વ્યતિકરઃ’ ।

પર ઓર અપરકા યહ વ્યતિકર+ કારણ કે વિના સંભવ નહીં હૈ, અત એવ ઇસ  
વ્યતિકર મેં જો કારણ હૈ, વસ વહી કાલ હૈ ।

યૌગપદ્ય (એક સાથ) ઓર અયૌગપદ્ય (આગે-પીછે) કા જો જ્ઞાન  
હોતા હૈ ઉસ સે મી કાલદ્રવ્ય કા અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ । “ઇન દોનો મુનિયોને  
એક સાથ દૃષ્ટિવાદ કા અધ્યયન ક્રિયા” ઓર “ઇન મુનિયોને બારહ અઙ્ગ એક સાથ નહીં  
પઢે-આગે પીછે પઢે હૈ,”-ઇસ વાક્ય સે યૌગપદ્ય ઓર અયૌગપદ્ય કા-એક સાથ કા  
ઓર આગે પીછે કા-જો જ્ઞાન હોતા હૈ ઉસમેં કાલ કે અસ્તિત્વ કે સિવાય ઓર કોઈ  
કારણ નહીં પાયા જાતા । જો કારણ હૈ વહી કાલ હૈ ।

+ ‘પરસ્પરવિષયગમનં વ્યતિકરઃ’, અર્થાત્ એક કા વિષય દૂસરે મેં ચલા જાના  
વ્યતિકર કહલાતા હૈ, જૈસે-પર કા અપર હો જાના ઓર અપર કા પર હો જાના ।

પર અને અપરનાં એ વ્યતિકર\* કારણ વિના સંભવ નથી, તેથી એ  
વ્યતિકરમાં જે કારણ છે, એવ તેજ કાળ છે.

યૌગપદ્ય-એક સાથે અને અયૌગપદ્ય-આગળ-પાછળનું જે જ્ઞાન થાય છે,  
તેમાં પણ કાલદ્રવ્યનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થાય છે. “એ બન્ને મુનિઓએ એક સાથે  
દૃષ્ટિવાદનું અધ્યયન કર્યું” અને “એ મુનિઓએ બાર અંગોનું એક સાથે અધ્યયન  
કર્યું” નથી-આગળ-પાછળ અધ્યયન કર્યું છે” આ વાક્યથી યૌગપદ્ય અને  
અયૌગપદ્યનું-એક સાથેનું અને આગળ-પાછળનું જે જ્ઞાન થાય છે. તેમાં કાલ વિના  
ખીલું કોઈ કારણ દેખાતું નથી. જે કારણ છે તે જ કાળ છે.

+પરસ્પરવિષયગમનં વ્યતિકરઃ” અર્થાત્-એકનો વિષય બીજામાં ચાલ્યો જાય  
તે વ્યતિકર કહેવાય છે. જેવી રીતે-પરનું અપર થઈ જવું અને અપરનું પર થઈ જવું.

ચિરક્ષિપ્રપત્યયોઽપિ કાલમાસાઘૈવ જાગર્તિ । યથા—‘અનેન મહાત્મના ચિરં તપશ્ચરિતમ્, ગજસુકુમાલેન ક્ષિપ્રમાત્મકલ્યાણં કૃતમ્’ ઇત્યાદિવાક્યૈસ્તપ-શ્ચરણકલ્યાણસાધનાદીનાં વિલમ્બાવિલમ્બપ્રતીતિઃ કાલાભાવે સતિ નોપપદ્યેત ।

‘હ્યઃ શ્વોઽથ પરશ્વઃ’—ઇત્યાદયઃ કાલાભિધાયિનઃ શબ્દાઃ કાલાલ્પ્યમર્થં ગમયન્તિ । સર્વજ્ઞેન ભગવતોચ્ચારિત્વાદિમે શબ્દા યથાર્થવસ્તુબોધકાઃ રૂપશબ્દવદ્ અસમસ્તપદત્વાત્, શુદ્ધૈકપદત્વાચ્ચ પ્રસિદ્ધં સદ્ભૂતમર્થમાવેદયન્તિ કાલશબ્દાદયઃ ।

વર્તનાદેતુત્વા-ઽસ્તિત્વ-જ્ઞેયત્વાદિગુણાશ્રયતયા, અતીતાનાગતવર્તમાનાદિપર્યા-

જલ્દી ઓર દેર કા જ્ઞાન મી કાલ કે કારણ હી હોતા હૈ, જૈસે—“હસ મહાત્મા ને ચિરકાલ તક તપ ક્રિયા, ગજસુકુમાલ મુનિને શીવ્ર હી આત્મકલ્યાણ કર લિયા ।” ઇત્યાદિ વાક્યોં સે તપશ્ચરણ ઓર કલ્યાણ—સાધન આદિ મેં વિલમ્બ ઓર અવિલમ્બ કા જ્ઞાન કાલ કે અભાવ મેં નહી હો સકતા ।

‘કલ, આજ, પરસોં’ ઇત્યાદિ કાલવાચક શબ્દ મી કાલનામક દ્રવ્ય કો પ્રકટ કરતે હૈં । સર્વજ્ઞ ભગવાન કે દ્વારા ઉચ્ચારણ ક્રિયે હુએ યે કાલ આદિ શબ્દ વાસ્તવિક વસ્તુ કે બોધક હૈં, ક્યોંકિ યહ સમાસરહિત પદ હૈ ઓર શુદ્ધ એક પદ હૈ । જો પદ સમાસરહિત ઓર શુદ્ધ એક પદ હોતે હૈં વે વાસ્તવિક પદાર્થ કે હી બોધક હોતે હૈં, જૈસે રૂપ આદિ ।

વર્તનાદેતુત્વ, અસ્તિત્વ, જ્ઞેયત્વ, આદિ ગુણોં કા આધાર હોને સે, તથા અતીત, અનાગત (ભવિષ્યત્) ઓર વર્તમાન આદિ પર્યાયોં કા આશ્રય હોને સે કાલ કા

જલ્દી—તુરત અને લીલનું જ્ઞાન પણ કાલના કારણથી જ થાય છે. જેમ—“આ મહાત્માએ લાંબા સમય સુધી તપ કર્યું, ગજસુકુમાલ મુનિએ તુરતમાં આત્મકલ્યાણ કરી લીધું.” ઇત્યાદિ વાક્યોથી તપશ્ચરણ અને કલ્યાણસાધન વગેરેમાં વિલમ્બ અને અવિલમ્બનું જ્ઞાન કાલના અભાવમાં થઈ શકશે નહિ.

‘ગઈ કાલ, આવતી કાલ, આજ, પરમ દિવસે,’ ઇત્યાદિ કાલવાચક શબ્દ પણ કાલ નામના દ્રવ્યને પ્રગટ કરે છે, સર્વજ્ઞ ભગવાન દ્વારા કહેવામાં આવેલા એ કાલ આદિ શબ્દ વાસ્તવિક વસ્તુના બોધક છે, કેમકે એ સમાસરહિત પદ છે અને શુદ્ધ એક પદ છે. જે પદ સમાસરહિત અને શુદ્ધ એક પદ હોય છે, તે વાસ્તવિક પદાર્થના જ બોધક હોય છે. જેમ રૂપ આદિ.

વર્તનાદેતુત્વ, અસ્તિત્વ, જ્ઞેયત્વ આદિ ગુણોનો આધાર હોવાથી, તથા ભૂતકાલ, ભવિષ્યકાલ અને વર્તમાનકાલ આદિ પર્યાયોનો આશ્રય હોવાથી કાલનું દ્રવ્યપણું

યાશ્રયતયા ચ તસ્ય દ્રવ્યત્વં સિદ્ધયતિ, તસ્માત્ ‘ષઠં દ્રવ્યં કાલઃ’ ઇતિ યુક્ત્યોપ-  
પત્ત્યા ચ સિદ્ધમ્ ।

આગમોડપ્યત્ર પ્રમાણમિતિ ચક્ષુરુદ્ઘાટય પશ્ય—

“કહ્ નં મંતે ! દઘ્વા પળ્ળત્તા ?, ગોયમા છ દઘ્વા પળ્ળત્તા, તં જહા-  
ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, પુગ્ગલત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ,  
અદ્દાસમણ, ” ઇતિ ।

કતિ રલુ ભદન્ત ! દ્રવ્યાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ ?, ગૌતમ ! પહ્ દ્રવ્યાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ,  
તાનિ યથા-ધર્માસ્તિકાયઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ, આકાશાસ્તિકાયઃ, પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ,  
જીવાસ્તિકાયઃ, અદ્દાસમયઃ । ઇતિ ઞ્છાયા ।

‘કહ્વિહા નં મંતે ! સઘ્વદઘ્વા પળ્ળત્તા ?, ગોયમા ! છઘ્વિહા સઘ્વદઘ્વા  
પળ્ળત્તા, તંજહા-ધમ્મત્થિકાણ, જાવ અદ્દાસમણ’ ઇતિ । (ભગવતી શ૦ ૨૫, ૩૦ ૪)

દ્રવ્યપન સિદ્ધ હોતા હૈ, અતएव युक्ति तथा उपपत्ति से कालनामक छठा द्रव्य  
સિદ્ધ હુઆ ।

આંસ્ર રોલ કર દેસો, ઇસ વિષય મેં આગમ-પ્રમાણ મી વિદ્યમાન હૈ—

“કહ્ નં મંતે ! દઘ્વા પળ્ળત્તા ! ગોયમા ! છ દઘ્વા પળ્ળત્તા, તંજહા-  
ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, પુગ્ગલત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ,  
અદ્દાસમણ । ”

સિદ્ધ થાય છે. એટલા કારણથી યુક્તિ તથા ઉપપત્તિ (પુરાવા-પ્રમાણ)થી કાલ  
નામનું છઠું દ્રવ્ય સિદ્ધ થાય છે.

આંખ ઉઘાડીને જુઓ, આ વિષયમાં આગમ-પ્રમાણ પણ વિદ્યમાન છે—

“કહ્ નં મંતે ! દઘ્વા પળ્ળત્તા ?, ગોયમા ! છ દઘ્વા પળ્ળત્તા, તંજહા-  
ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, આગાસત્થિકાણ, પુગ્ગલત્થિકાણ, જીવત્થિકાણ, અદ્દાસમણ ” ।

અર્થાત્-‘ભગવન્’ દ્રવ્ય કેટલાં છે ? ગૌતમ ! દ્રવ્ય છ છે-ધર્માસ્તિકાય,  
અધર્માસ્તિકાય, આકાશાસ્તિકાય, પુદ્ગલાસ્તિકાય, જીવાસ્તિકાય અને અદ્દાસમય  
અર્થાત્ કાલ.

તથા—“કહ્વિહા નં મંતે ! સઘ્વદઘ્વા પળ્ળત્તા ?, ગોયમા ! છઘ્વિહા સઘ્વદઘ્વા  
પળ્ળત્તા, તંજહા-ધમ્મત્થિકાણ, અધમ્મત્થિકાણ, જાવ અદ્દાસમણ । ”



કતિવિધાનિ સ્વલુ મદન્ત ! સર્વદ્રવ્યાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ ?, ગૌતમ !  
ષડવિધાનિ સર્વદ્રવ્યાણિ પ્રજ્ઞપ્તાનિ, તાનિ યથા-ધર્માસ્તિકાયઃ, અધર્માસ્તિકાયઃ,  
યાવત્-અદ્વાસમયઃ, ઇતિ ચ્છાયા ।

“ ધમ્મો અધમ્મો આગાસં, દવ્વં ઇક્કિમાહિયં ।

અણંતાણિ ય દવ્વાણિ, કાલો પુગ્ગલ જંતવો ” ॥૮॥ ( ઉત્ત ૦ અ ૦ ૨૮ )

ધર્મોઽધર્મઃ આકાશઃ, દ્રવ્યમેકૈકમાભ્યાતમ્

અનન્તાનિ ચ દ્રવ્યાણિ, કાલઃ પુદ્ગલ જન્તવઃ । ઇતિ ચ્છાયા ।

કાલસ્ય સ્વરૂપમ્—

અર્ધતૃતીયદ્વીપવ્યાપી, નિર્વિભાગોઽનાધપર્યવસિતઃ,

एकोवर्तमानः समयः कालपदार्थः । एकत्वादेवास्तिकायो नायम् ।

અર્થાત્—‘ભગવન્ ! સર્વ દ્રવ્ય કિતને હૈં ?’ ‘ગૌતમ ! સર્વ દ્રવ્ય છહ હૈં—  
ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય યાવત્ અદ્વા-સમય’ (ભગવતીસૂત્ર શ. ૨૫ ડ. ૪)

ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર (અ. ૨૮) મેં મી કહા હૈં— ‘ધર્મ, અધર્મ ઓર આકાશ દ્રવ્ય  
એક એક કહે ગયે હૈં । કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ અનન્ત-અનન્ત હૈં ’ ઇતિ ।

કાલ કા સ્વરૂપ—

સમયક્ષેત્રવ્યાપી, નિર્વિભાગ, આદ્યન્તરહિત, એકપ્રદેશરૂપ વર્તમાન સમય કો  
‘કાલ’ કહતે હૈં । યહ એક હોને કે કારણ અસ્તિકાય નહીં હૈં ।

અર્થાત્—‘ભગવન્ ! સર્વ દ્રવ્ય કેટલાં છે ? ગૌતમ ! સર્વ દ્રવ્ય છ છે—ધર્માસ્તિકાય  
અધર્માસ્તિકાય યાવત્ અદ્વાસમય’ (ભગવતી. શ. ૨૫. ડ. ૪). ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર  
(અ. ૨૮) માં પણ કહ્યું છે—ધર્મ, અધર્મ, અને આકાશ દ્રવ્ય એક એક કહ્યું છે,  
કાલ, પુદ્ગલ અને જીવ અનન્ત-અનન્ત છે.

કાલનું સ્વરૂપ—

સમયક્ષેત્ર (અઢીદ્વીપ) વ્યાપી, નિર્વિભાગ (જેને ભાગ ન પડે તેવું), આદ્યન્ત-  
રહિત, એકપ્રદેશરૂપ વર્તમાન સમયને કાલ કહે છે, આ એક હોવાના કારણથી  
‘અસ્તિકાય’ નથી.

સૂર્યચન્દ્રાદિજ્યોતિષ્કાણાં ગતિમાશ્રિત્ય કાલવિભાગો ભવતિ, ગતિશ્ચ મનુષ્યલોકાભ્યન્તર એવ તेषામ્ । દિવસરાત્રિમુહૂર્તપક્ષમાસઋત્વચનવર્ષયુગાદીનાં વિભાગઃ સૂર્યાદિગત્યૈવ લોકે ભવતિ । એવમતીતવર્તમાનાદયો વિભાગાઃ । યસ્તુ સંખ્યાતુમશક્ય ઉપમાનમાત્રાવગમ્યઃ કાલઃ સોઽસંખ્યેયઃ, યથા-પલ્યોપમઃ, સાગરોપમ ઇત્યાદિ । અસંખ્યેયાદિકાલજ્ઞાનમપિ ભગવતા મનુષ્યલોકપ્રસિદ્ધોપમાનપ્રદર્શનેન પ્રરૂપિતમ્ ।

સૂર્ય ચન્દ્ર આદિ જ્યોતિષ્કોં કી ગતિ કા આશ્રયણ કર કાલ કા વિભાગ હોતા હૈ । સૂર્ય ચન્દ્ર આદિ જ્યોતિષ્કોં કી ગતિ મનુષ્યલોક કે અન્દર મેં હી હોતી હૈ । દિન, રાત, મુહૂર્ત, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અચન, વર્ષ, યુગ આદિ કા વિભાગ સૂર્ય આદિ કી ગતિ સે હી લોક મેં હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર અતીત, વર્તમાન આદિકા વિભાગ મી સમજના ચાહિયે । જિસકી સંખ્યા નહીં હો સકતી, જો ઉપમાન માત્ર સે ગમ્ય હૈ, વહ કાલ અસંખ્યેય હૈ, જૈસે—પલ્યોપમ, સાગરોપમ, ઇત્યાદિ । અસંખ્યેય આદિ કાલ કા જ્ઞાન મી મનુષ્યલોકપ્રસિદ્ધ ઉપમાન કા પ્રદર્શન કરકે ભગવાન ને પ્રરૂપિત ક્રિયા હૈ, સમય આવલિકા આદિ સૂક્ષ્મ કાલ તો સૂર્યાદિજ્યોતિષ્કોં કી ગતિ સે નહીં જાના જાતા હૈ, ક્યોં કિ વહ અતિ સૂક્ષ્મ હૈ । ઇસ લિયે કાલકા વ્યવહાર સમયક્ષેત્ર કે મીતર હી હોતા હૈ । સમયક્ષેત્ર કે બાહર જીવોં કે આયુષ્ય આદિ કી ગણના મનુષ્યક્ષેત્રપ્રસિદ્ધ પ્રમાણ સે હી હોતી હૈ ।

સૂર્ય ચન્દ્ર આદિ જ્યોતિષ્કોંની ગતિના આશ્રયથી કાલનો વિભાગ થાય છે, સૂર્ય ચન્દ્ર આદિ જ્યોતિષ્કોંની ગતિ મનુષ્ય લોકમાં જ હોય છે. દિન, રાત, મુહૂર્ત, પક્ષ, માસ, ઋતુ, અચન, વર્ષ, યુગ આદિના વિભાગ સૂર્ય આદિની ગતિથી જ લોકમાં થાય છે. આ પ્રકારે અતીત (ભૂતકાળ) વર્તમાન આદિના વિભાગ પણ સમજવા બેઠએ. જેની ગણતરી ન થઈ શકે, જે ઉપમાન માત્રથી ગમ્ય (સમજી શકાય તેવું) છે, તે કાલ અસંખ્યેય છે, જેમકે—પલ્યોપમ, સાગરોપમ, ઇત્યાદિ. અસંખ્યેય આદિ કાળનું જ્ઞાન પણ ભગવાને મનુષ્યલોકપ્રસિદ્ધ ઉપમાનનું પ્રદર્શન કરી પ્રરૂપિત કર્યું છે. સમય, આવલિકા આદિ સૂક્ષ્મ કાલ તો સૂર્યાદિ જ્યોતિષ્કોંની ગતિથી પણ બાણી શકાતું નથી, કેમકે તે અતિ સૂક્ષ્મ છે. આથી કાલનો વ્યવહાર સમયક્ષેત્ર-અઢી દ્વીપની અંદર જ થાય છે, સમયક્ષેત્રથી બહાર જીવોંની આયુષ્ય આદિની ગણના થાય છે તે મનુષ્યક્ષેત્રપ્રસિદ્ધ પ્રમાણથી જ થાય છે, એમ સમજી લેવું.

સમયાવલિકાદિમૂક્તકાલસ્તુ મૂર્યાદિજ્યોતિષ્કાણાં ગત્યા નાવગમ્યઃ, અતિમૂક્તત્વાત્ । તસ્માત્ કાલવ્યવહારોઽર્ધતૃતીયદ્વીપ એવ । અર્ધતૃતીયદ્વીપાદ્વિ-જીવાનામાયુષ્કાદિગણના તુ મનુષ્યક્ષેત્રપ્રસિદ્ધપ્રમાણેનૈવ ભવતીતિ જ્ઞેયમ્ ।

एकोऽपि कालोऽतीतानागतपर्यायभेदैरनन्तः, अत एव भगवता—“अणंताणि य द्रव्वाणि कालो पुगल जंतवो” इत्युपदिष्टम् । वर्तमानसमयस्य तु पर्यायत्वेऽपि नानन्त्यम्, एकरूपत्वात् ।

નિશ્ચયનયેન તુ “લોકવ્યાપી કાલઃ” इत्यवसीयते, अत एव भगवता—“धम्मो अधम्मो आगासं कालो पुगल जंतवो । एस लोगोत्ति पन्नत्तो जिणेहि वरदंसिहि” । इत्यभिहितम् । धर्मोऽधर्म आकाशः कालः पुद्गल जन्तवः । एष लोक इति प्रज्ञप्तः, जिनर्वरदर्शिभिः । इति च्छाया ।

કાલ યદપિ એક હી હૈ, તો મી વહ ભૂત-ભવિષ્યત્પર્યાય ભેદ સે અનન્ત હૈ, ઈસીલિયે ભગવાને કહા હૈ—‘અણંતાણિ ય દ્રવ્વાણિ કાલો પુગલ જંતવો’ इति ।—કાલ, પુદ્ગલ ઓર જીવ, યે સમી અનન્ત હૈ । વર્તમાન સમય પર્યાયસહિત હોતે હુए મી અનન્ત નહીં હૈ, ક્યોંકિ વહ એક હી હૈ ।

નિશ્ચયનય સે તો કાલ લોકવ્યાપી માના જાતા હૈ, અતએવ ભગવાને કહા હૈ—

“ધમ્મો અધમ્મો આગાસં, કાલો પુગલ જંતવો ।

એસ લોગોત્તિ પન્નત્તો જિણેહિ વરદંસિહિ” ॥ ૧ ॥

જો કે કાલ એક જ છે તો પણ ભૂત ભવિષ્યના ભેદથી અનન્ત છે, તેથી ભગવાને કહ્યું છે—‘અણંતાણિ ય દ્રવ્વાણિ કાલો પુગલ જંતવો’ इति, કાલ પુદ્ગલ અને જીવ એ ત્રણે અનન્ત છે. વર્તમાન સમય પર્યાયસહિત હોવા છતાં પણ અનન્ત નથી કેમકે તે એક જ છે.

નિશ્ચયનયથી તો કાલ લોકવ્યાપી માનવામાં આવે છે આથી ભગવાને કહ્યું છે કે—“ધમ્મો અધમ્મો આગાસં કાલો પુગલ જંતવો ।

એસ લોગોત્તિ પન્નત્તો જિણેહિ વરદંસિહિ” ॥

वरदशी—લોકલોકને જોવાવાળા જિન ભગવાને ‘ધર્માસ્તિકાય, અધર્માસ્તિકાય, આકાશસ્તિકાય, કાલ, પુદ્ગલાસ્તિકાય અને જીવાસ્તિકાય, એજ લોક છે’ એમ કહ્યું છે.



एष सामान्यरूपेण प्रसिद्धो लोकः—अनन्तरोक्तद्रव्यषट्कसमुदायरूप इति भाव ।

कालस्य—(१)—अरूपित्वम्, (२)—अचेतनत्वम्, (३)—अक्रियत्वम्, (४)—वर्तनाहेतुत्वं चेति गुणाः । (१)—अतीतत्वम्, अनागतत्वम्, (२)—वर्तमानत्वं, (३)—अगुरुलघुत्वं चेति पर्यायाः ।

अयं द्रव्यक्षेत्रकालभावगुणभेदेन पञ्चधा ज्ञायते । यथा—द्रव्यत एकः कालः क्षेत्रतः—अर्द्धतृतीयद्वीपप्रमाणः, कालतः—आद्यन्तरहितः, भावतः—अरूपी—वर्णगन्धरसस्पर्शवर्जित इति, गुणतः—वर्तनालक्षणः, इति ।

वरदशी—लोकालोक को देखनेवाले जिन भगवानने धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय, आकाशास्तिकाय, काल, पुद्गलास्तिकाय और जीवास्तिकाय; इन सबको अर्थात् इनके समुदाय को लोक कहा है ।

उपरिनिर्दिष्ट छ द्रव्यों के समुदाय को भगवानने सामान्यतया लोक कहा है ।

काल के—अरूपित्व, अचेतनत्व, अक्रियत्व, वर्तनाहेतुत्व, ये चार गुण हैं । अतीतत्व, अनागतत्व, वर्तमानत्व, अगुरुलघुत्व, ये चार पर्याय हैं ।

यह काल—द्रव्य, क्षेत्र, काल, भाव और गुण के भेद से पांच प्रकार से जाना जाता है । जैसे—द्रव्य से काल एक है, क्षेत्र से समयक्षेत्रप्रमाणवाला, काल से आद्यन्तरहित, भाव से अरूपी, अर्थात् वर्ण—गन्ध—रस—स्पर्श—रहित, और गुण से वर्तनालक्षणवाला है ।

उपरि दर्शावेला छ द्रव्योंना समुदायने भगवाने सामान्य रीते लोक कहेला छे.

काणना—अरूपित्व, अचेतनत्व, अक्रियत्व अने वर्तनाहेतुत्व, अने चार गुण छे. अने अतीतत्व, अनागतत्व, वर्तमानत्व, तथा अगुरुलघुत्व अने चार पर्याय छे.

आ काण—द्रव्य, क्षेत्र, काण, भाव अने गुणना लेदथी पांच प्रकारे ज्ञाय छे, अने अर्द्ध—द्रव्यथी काण अर्द्ध, क्षेत्रथी अर्द्धद्वीप प्रमाण, कालथी आद्यन्तरहित, भावथी अरूपी—वर्ण—गन्ध—रस—स्पर्श—रहित छे, अने गुणथी वर्तनालक्षणवाला छे.

અથ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ ।

તત્ર-પુદ્ગલશબ્દાર્થઃ ।

પૂર્યતે=સંહન્યતે-પરસ્પરં સંયુજ્ય સંઘીભૂય નૂતનઘનઘટાવદેકીભવતિ,  
ગલતિ ચ=વિચ્છિન્નમુક્તાવલીમણિવદ્ વિકીર્ણો ભવતિ-ઇતિ પુદ્ગલઃ । પૂરણ-ગલન-  
ધર્મ ઇત્યર્થઃ । પુદ્ગલશ્વાસાવસ્તિકાયથેતિ પુદ્ગલાસ્તિકાયઃ ।

પુદ્ગલાસ્તિકાયસ્ય ઘટાદિકાર્યાન્યથાનુપપત્તેઃ પ્રત્યક્ષદર્શનાચ સત્તા  
સિદ્ધેવ ।

પુદ્ગલાસ્તિકાય—

‘પુદ્ગલ’ શબ્દ કા અર્થ—

આપસ મેં મિલકર ફક્ટ્રે હોકર નવીન ઘટઘટાદિ કે રૂપ મેં જો એકમેક હો  
જાતે હૈં, ઓર જો ગલ જાતે હૈં અર્થાત્ ટૂટી હુઈ મોતિયોં કી માલા કી માંતિ વિખર જાતે  
હૈં, વે પુદ્ગલ કહલાતે હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—જિસમેં પૂરણ ઓર ગલન ધર્મ હો વહ  
પુદ્ગલ હૈ, પુદ્ગલરૂપ અસ્તિકાય ‘પુદ્ગલાસ્તિકાય’ કહલાતા હૈ ।

અગર ‘પુદ્ગલાસ્તિકાય’ ન હોતા તો ઘટ આદિ કાર્ય નહીં બન સકતે થે ।  
ઇસ કારણ, તથા પ્રત્યક્ષ દિશ્વાઈ દેને કે કારણ મી પુદ્ગલાસ્તિકાય કી સત્તા મલીમાંતિ  
સિદ્ધ હૈ ।

પુદ્ગલાસ્તિકાય—

પુદ્ગલ શબ્દનો અર્થ—

પરસ્પર મળીને એકત્ર થઈને નવીન ઘન-ઘટાદિના રૂપમાં જે એક-મેક થઈ  
જાય છે, અને જે ગળી જાય છે અર્થાત્ તુટી ગયેલી મોતીઓની માળા પ્રમાણે  
વિખાઈ જાય છે, તે પુદ્ગલ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે-જેમાં પૂરણ અને  
ગલન ધર્મ હોય તે પુદ્ગલ છે, પુદ્ગલરૂપ અસ્તિકાય તે પુદ્ગલાસ્તિકાય કહેવાય છે.

અગર પુદ્ગલાસ્તિકાય ન હોત તો ઘટ આદિ કાર્ય બની શકત નહિ. આ  
કારણથી, તથા પ્રત્યક્ષ દેખી શકાય છે તે કારણથી પણ પુદ્ગલાસ્તિકાયની સત્તા  
ફી રીતે સિદ્ધ છે.

पुद्गललक्षणम्—

रूपवत्त्वं पुद्गलानां लक्षणम्, अत्र रूपं मूर्तत्ववर्णादिकम् । यद्यपि परमाणुप्रभृतयः सूक्ष्माः पुद्गलास्तेषां गुणाश्चातीन्द्रियतया नेन्द्रियैर्गृह्यन्ते तथापि बादरस्कन्धरूपे परिणामविशेषे तेषामेवेन्द्रियग्राह्यतया रूपवत्त्वं प्रतीयते ।

अतीन्द्रिये परमाणुप्रभृतिपुद्गलेऽतीन्द्रिये धर्मास्तिकायादौ चैतावान् विशेषः— धर्मास्तिकायादीनामिन्द्रियविषयत्वाभावादतीन्द्रियत्वमरूपित्वं च, परमाणुप्रभृतिपुद्गलानां त्वतीन्द्रियत्वेऽपि रूपित्वमिति ।

पुद्गल का लक्षण—

पुद्गलोका लक्षण 'रूपवत्त्व' है । जिस में रूप, रस, गन्ध, और स्पर्श पाया जाय अर्थात् जो मूर्तिक हो, वह पुद्गल है । यद्यपि परमाणु आदि पुद्गल बहुत सूक्ष्म हैं, और अतीन्द्रिय होने के कारण उनके गुण इन्द्रियों द्वारा नहीं ग्रहण किये जाते, तथापि जब उन पुद्गलों का बादर स्कन्ध के रूपमें परिणमन होता है तब वे इन्द्रियोंद्वारा ग्राह्य हो जाते हैं और उनका रूपवत्त्व प्रतीत होने लगता है ।

परमाणु आदि अतीन्द्रिय पुद्गलों में और धर्मास्तिकाय आदि अतीन्द्रिय द्रव्यों में इतना अन्तर है कि—धर्मास्तिकाय आदि अरूपी द्रव्य कभी इन्द्रियों के विषय नहीं होते, अतः वे अतीन्द्रिय और अरूपी हैं, किन्तु परमाणु आदि पुद्गल अतीन्द्रिय होने पर भी रूपी हैं ।

પુદ્ગલનું લક્ષણ—

પુદ્ગલોનાં લક્ષણ રૂપવત્ત્વ છે; જેમાં રૂપ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ જોવામાં આવે અર્થાત્ જે મૂર્તિમાન હોય તે પુદ્ગલ છે. જે કે પરમાણુ આદિ પુદ્ગલ બહુ જ સૂક્ષ્મ છે અને અતીન્દ્રિય હોવાના કારણે તેના ગુણ ઇન્દ્રિયો દ્વારા ગ્રહણ કરી શકાતા નથી; તેા પણ જ્યારે તે પુદ્ગલોનું બાદર સ્કંધના રૂપમાં પરિણમન થાય છે, ત્યારે તે ઇન્દ્રિયો દ્વારા ગ્રહણ થઈ જાય છે, અને તેનું રૂપવત્ત્વ પ્રતીત થવા લાગે છે.

પરમાણુ આદિ અતીન્દ્રિય પુદ્ગલોમાં અને ધર્માસ્તિકાય વગેરે અતીન્દ્રિય દ્રવ્યોમાં એટલું અંતર-ફેરફાર છે કે—ધર્માસ્તિકાય આદિ અરૂપી દ્રવ્ય ક્યારેય પણ ઇન્દ્રિયોનો વિષય થતા નથી, તેથી તે અતીન્દ્રિય અને અરૂપી છે, પરંતુ પરમાણુ આદિ પુદ્ગલ અતીન્દ્રિય હોવા છતાંય રૂપી છે.



### पुद्गलानां प्रदेशसंख्या—

परमाणुमारभ्याचित्तमहास्कन्धपर्यन्ताः पुद्गला विविधपरिणामा भवन्ति । तेषां प्रदेशाः संख्याता असंख्याता अनन्ताश्च यथासंभवं भवन्ति । तत्र—संख्यातपरमाणुसंयोगसंजातः स्कन्धः संख्यातप्रदेशी, असंख्यातपरमाणु-घटितः स्कन्धोऽसंख्यातप्रदेशी, अनन्तपरमाणुसंहतिसमुद्भूतश्च स्कन्धोऽनन्त-प्रदेशी भवति । परमाणोस्तु निरंशत्वान्नास्ति प्रदेश इति ।

### पुद्गलानां क्षेत्रस्थितिः—

परमाणौ विभागाभावादेकस्मिन्नेव प्रदेशे लोकाकाशस्य परमाणुरव-

### पुद्गलों की प्रदेशसंख्या—

परमाणुसे लेकर अचित्त महास्कन्ध तक सब पुद्गल विविध परिणमन वाले होते हैं । उनके प्रदेश यथासंभव संख्यात असंख्यात अथवा अनन्त होते हैं । संख्यात परमाणुओं के संयोग से बना हुआ स्कन्ध संख्यातप्रदेशी कहलाता है । असंख्यात परमाणुओं से बना हुआ स्कन्ध असंख्यातप्रदेशी और अनन्त परमाणुओं से निष्पन्न स्कन्ध अनन्त प्रदेशी कहलाता है । परमाणु निरंश होता है—उसके अनेक भाग नहीं हो सकते, अत एव वह अप्रदेशी है ।

### पुद्गलों की क्षेत्रस्थिति—

परमाणु के विभाग न होने के कारण लोकाकाश के एक ही प्रदेश में उसकी

### पुद्गलानां प्रदेशसंख्या—

परमाणुથી લઈને અચિત્ત મહાસ્કંધ સુધી સર્વ પુદ્ગલ વિવિધ પરિણમનવાળા હોય છે. તેના પ્રદેશ યથાસંભવ સંખ્યાત, અસંખ્યાત અથવા અનન્ત હોય છે. સંખ્યાત પરમાણુઓના સંયોગથી બનેલા સ્કંધ સંખ્યાતપ્રદેશી કહેવાય છે, અસંખ્યાત પરમાણુઓથી બનેલા સ્કંધ અસંખ્યાતપ્રદેશી અને અનન્ત પરમાણુઓથી નિષ્પન્ન સ્કંધ અનન્ત-પ્રદેશી કહેવાય છે. પરમાણુ નિરંશ હોય છે, તેના અनेક ભાગ થઈ શકતા નથી તેથી તે અપ્રદેશી છે.

### પુદ્ગલોની ક્ષેત્રસ્થિતિ—

પરમાણુમાં વિભાગ નહિ હોવાના કારણે લોકાકાશના એક જ પ્રદેશમાં તેની

गाहते । द्व्यणुकस्कन्धश्च तस्यैकस्मिन् प्रदेशे, द्वयोश्च प्रदेशयोरवगाहते । तथा त्र्यणुकस्कन्धो लोकाकाशस्यैकस्मिन् प्रदेशे, द्वयोः प्रदेशयोस्त्रिषु प्रदेशेषु चावगाहते । एवं चतुरणुकादीनां संख्यातप्रदेशाऽसंख्यातप्रदेशानन्तप्रदेशानां स्कन्धानामवगाहनं लोकाकाशस्यैकप्रदेशमारभ्य संख्याताऽसंख्यातप्रदेशपर्यन्तेषु भवति ।

नन्वेकस्मिन्नाकाशप्रदेशेऽल्पीयसि कथमनन्तप्रदेशिनः स्कन्धाः स्थानं लभन्ते, न हि कलशे सिन्धोः समावेशं पश्यामः ?

अवगाहना होती है । द्व्यणुक अर्थात् दो परमाणु वाला स्कन्ध लोकाकाश के एक प्रदेश में या दो प्रदेशों में अवगाहन करता है । इसी प्रकार तीन परमाणुओं वाला स्कन्ध लोकाकाश के एक प्रदेश में, दो प्रदेशों में अथवा तीन प्रदेशों में अवगाहन करता है । इसी भांति चतुरणुक ( चार अणुओं वाले ) आदि स्कन्धों की अवगाहना, तथा संख्यातप्रदेशी, असंख्यातप्रदेशी और अनन्तप्रदेशी तक के स्कन्धों की अवगाहना लोकाकाश के एक प्रदेश से लेकर संख्यात तथा असंख्यात प्रदेशों में होती है ।

शंका—आकाश के एक छोटे से प्रदेश में अनन्तप्रदेशी स्कन्ध का समावेश किस प्रकार हो सकता है, गागर में सागर का समावेश होना तो कहीं दिखाई नहीं देता ।

अवगाहना હોય છે દ્વ્યણુક અર્થાત્ એ પરમાણુવાળા સ્કન્ધ લોકાકાશના એક પ્રદેશમાં અથવા એ પ્રદેશોમાં અવગાહન કરે છે. એ પ્રમાણે ત્રણ અણુઓવાળા સ્કન્ધ લોકાકાશના એક પ્રદેશમાં, એ પ્રદેશોમાં અથવા ત્રણ પ્રદેશોમાં અવગાહન કરે છે. એ પ્રમાણે જ ચાર અણુઓવાળા આદિ સ્કન્ધોની અવગાહના, તથા સંખ્યાતપ્રદેશી, અસંખ્યાતપ્રદેશી અને અનન્તપ્રદેશી સુધીના સ્કન્ધોની અવગાહના લોકાકાશના એક પ્રદેશથી લઈને સંખ્યાત તથા અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં હોય છે.

શંકા—આકાશના એક નાના પ્રદેશમાં અનન્ત પ્રદેશી સ્કન્ધનો સમાવેશ કેવી રીતે થઈ શકે, ગાગરમાં સાગરનો સમાવેશ થયેલો કેઈ કેકાણે દેખાતો નથી ?

અત્ર બ્રૂમઃ—પુદ્ગલસ્ય પરિમનશક્તિરેવ તાદૃશી યતઃ પરમસૂક્ષ્મસ્તાદૃશઃ પરિણામો જાયતે, યેનાનન્તપ્રદેશિનઃ સ્કન્ધાઃ પ્રદેશમેકં નભસઃ પ્રવિશન્તિ । અથવા ગગનસ્ય તાદૃશી વિચિત્રાઽવગાહદાનશક્તિર્યતોઽનન્તપ્રદેશિનાં સ્કંધાનાં તસ્યૈકસ્મિન્ પ્રદેશે સમાવેશઃ સિધ્યતિ । યથા અતિઘનીભૂતલોહગોલકાવગાહનાનિરવકાશે કિલાકાશદેશે ભસ્ત્રાનિલસમુદ્ભૂતાઃ પાવકાવયવાઃ સમાવિશન્તિ । પદિ રન્ધ્રરહિતાઽયોગોલકં શીતલીકર્તું વારિ નિશ્પિપ્તે, તદા તદયોગોલકપરિપૂરિતનિરન્તરાકાશદેશે તસ્મિન્નેવ ચારિકળા અવ્યાહતં પ્રવિશન્તિ ।

સમાધાન—પુદ્ગલ મેં પરિમનશક્તિ હી એસી હૈ, જિસસે ઉસકા અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પરિમન હોતા હૈ । इसी कारण अनन्तप्रदेशी स्कन्ध भी आकाश के एक प्रदेश में समा जाते हैं । अथवा आकाश में ऐसी कुछ विचित्र अवकाशदान करने की शक्ति है कि उसके कारण अनन्तप्रदेशी स्कन्धों का भी आकाश के एक ही प्रदेश में समावेश हो जाता है । जैसे—अत्यन्त सघन लोहे के गोले के अवगाहन से निरवकाश आकाश—प्रदेश में धौकनी की वायु से वृद्धि पाये हुए अग्नि के अवयव प्रवेश कर जाते हैं । तात्पर्य यह है कि—लोहे का गोला बहुत ठोस होता है, वह आकाश के जिन प्रदेशों में मौजूद है, वहां जगह दिखाई नहीं देती, फिर भी धौकनी की वायु की प्रेरणासे उन्हीं आकाश प्रदेशों में अग्नि का प्रवेश हो जाता है, तत्पश्चात् छिद्ररहित उस लोहे के गोले को ठंडा करने के लिये उस पर पानी डाल जाय तो जिन आकाश प्रदेशों में लोहे का गोला और पावक—अग्नि है, उन्हीं में जल के कण भी बेरोकटोक प्रवेश कर जाते हैं ।

સમાધાન—પુદ્ગલોમાં પરિમનશક્તિ જ એવી છે જેથી તેનું અત્યન્ત સૂક્ષ્મ પરિમન હોય છે. એ કારણે અનન્તપ્રદેશી સ્કંધ પણ આકાશના એક પ્રદેશમાં સમાઈ જાય છે. અથવા આકાશમાં એવી કેઈ વિચિત્ર અવકાશદાન કરવાની શક્તિ છે કે—તે કારણથી અનન્તપ્રદેશી સ્કંધોનો પણ આકાશના એક જ પ્રદેશમાં સમાવેશ થઈ જાય છે. જેમકે—અત્યન્ત સઘન લોહના ગોળાના અવગાહનથી નિરવકાશ આકાશ પ્રદેશમાં ધમણના વાયુથી વૃદ્ધિ પામેલા અગ્નિના અવયવો પ્રવેશ કરી જાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—લોહનો ગોળો ખડુ જ ઠોસ ( પોલાણ વિનાનો ) હોય છે, તે આકાશના જે પ્રદેશોમાં મોબુદ છે, ત્યાં જગ્યા દેખાતી નથી. તે પણ ધમણના વાયુની પ્રેરણાથી તે આકાશ પ્રદેશોમાં અગ્નિનો પ્રવેશ કરી જાય છે. તે પછી છિદ્રરહિત તે લોહના ગોળાને ઠંડો કરવા માટે તેના ઉપર પાણી નાખવામાં આવે તો જે આકાશ-પ્રદેશોમાં લોહનો ગોળો અને અગ્નિ છે, તેમાં પાણીનાં ટીપાં પણ શક-ટોક (અટકાવ્યા) વિના પ્રવેશ કરી જાય છે.



યથા વા એકપ્રદીપપ્રભાયામનેકપ્રદીપપ્રભાસમાવેશઃ । યથા વા એકકર્ષપરિ-  
મિતપારદે શતકર્ષપરિમિતસુવર્ણસમાવેશો ભવતિ ।

અનન્તપ્રદેશીરૂપોઽચિત્તમહાસ્કન્ધઃ કેવલિસમુદ્ઘાતવત્ સકલલોકવ્યાપી  
ભવતિ । સ ચ વિસ્ત્રસાગત્યા પ્રથમસમયેઽસંખ્યાતયોજનવિસ્તરેણ દણ્ડાકારેણ  
પરિણમતિ । દ્વિતીયસમયે કપાટરૂપેણ, તૃતીયસમયે મંથાનરૂપેણ, ચતુર્થસમયે  
પ્રતરમાપૂર્ણ સકલલોકં વ્યાપ્નોતિ, પશ્ચમસમયે પ્રતરં સંહરતિ, ષષ્ઠસમયે મંથાનં  
મનક્તિ, સપ્તમસમયે કપાટં ચ, અષ્ટમસમયે દણ્ડાકારં સંહત્ય ધ્વજશઃ પ્રવિકીર્ણો  
ભવતિ ।

અથવા—એક દીપક કે પ્રકાશ મેં અનેક દીપકોં કા પ્રકાશ સમા જાતા હૈ ।

અથવા એક કર્ષ—માસા ( માપવિશેષ ) પરિમિત પારે મેં સૌ કર્ષ પરિમિત સોને કા  
સમાવેશ હો જાતા હૈ ।

અનન્તપ્રદેશી અચિત્ત મહાસ્કન્ધ કેવલિસમુદ્ઘાત કે સમાન સમસ્તલોક-  
વ્યાપી હોતા હૈ । વહ સ્વાભાવિક ગતિ સે, પ્રથમ સમય મેં અસંખ્યાતયોજનવિસ્તૃત  
દણ્ડ કે આકાર મેં પરિણત હોતા હૈ । દૂસરે સમય મેં વહ કપાટ કે રૂપ મેં પરિણત હોતા હૈ,  
ઔર તીસરે સમય મેં મંથાન કે રૂપ મેં હો જાતા હૈ, ચૌથે સમય મેં પ્રતર પૂર્ણ કરકે સમ્પૂર્ણ  
લોક મેં વ્યાપ્ત હો જાતા હૈ । ફિર પાંચવેં સમય મેં પ્રતર કો સિકોડતા હૈ, છઠે  
સમય મેં મંથાન કો, સાતવેં સમય મેં કપાટ કો, ઔર આઠવેં સમય મેં દણ્ડાકાર કો યહ  
સિકોડતા હૈ । ઉસકે અનન્તર વહ ધ્વજ ધ્વજ હોકર વિસ્તર જાતા હૈ ।

અથવા—એક દીપકના પ્રકાશમાં અનેક દીપકોના પ્રકાશ સમાઈ જાય છે.  
અથવા એક કર્ષ ( માપવિશેષ ) પરિમિત પારામાં એકસો કર્ષ પરિમિત સોનાનો  
સમાવેશ થઈ જાય છે.

અનન્તપ્રદેશી અચિત્ત મહાસ્કન્ધ, કેવલિસમુદ્ઘાતની સમાન સમસ્તલોક  
વ્યાપી હોય છે, તે સ્વાભાવિક ગતિથી, પ્રથમ સમયમાં અસંખ્યાતયોજનવિસ્તૃત  
દંડના આકારમાં પરિણત થાય છે. બીજા સમયમાં તે કપાટના રૂપમાં પરિણત  
થાય છે, અને ત્રીજા સમયમાં મંથાન ( દહીં વલોવવાનો રવૈયો ) ના રૂપમાં થાય  
છે, ચોથા સમયમાં પ્રતર પૂર્ણ કરીને લોકમાં વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. ફરી પાંચમા  
સમયમાં પ્રતરને સંકોચે છે, છઠ્ઠા સમયમાં મંથાનને, સાતમા સમયમાં કપાટને  
અને આઠમા સમયમાં દંડાકારને એ સિકોડે છે, ત્યાર પછી તે ખંડ-ખંડ થઈને  
વિખેરાઈ જાય છે.

### પુદ્ગલનામુપકાર:—

શરીરવાહ્મનઃપ્રાણાદયઃ પુદ્ગલપરિણામા ગમનાઽઽદાન-વચન-ચિન્તન-પ્રાણનાદિભાવેન જીવાનુપકુર્વન્તિ, અતઃ શરીરાધાકારેણ પુદ્ગલા જીવાનામુપકારં કુર્વન્તિ । તત્ર શરીરં પંચવિધમ્, ઔદારિકં, વૈક્રિયમ્, આહારકં, તૈજસં, કાર્મણં ચેતિ ।

અથ જીવાનાં યે સુખદુઃખજીવિતમરણરૂપાઃ પરિણામા ભવન્તિ તત્ર સુખાદિરૂપેણ જીવપરિણામે નિમિત્તં પુદ્ગલા इति સિદ્ધં જીવોપકારિત્વં પુદ્ગલનામ્ ।

### પુદ્ગલોં કા ઉપકાર—

શરીર, વચન, મન ઓર પ્રાણ આદિ પુદ્ગલોં ક્રે પરિણામવિશેષ—ગમન, આદાન, વચન, ચિન્તન ઓર પ્રાણન ( સાંસ લેના ) આદિરૂપ સે જીવોં કા ઉપકાર કરતે હૈં અતઃ શરીર આદિ ક્રે રૂપ મેં પુદ્ગલ હી જીવોં કા ઉપકાર કરતે હૈં । ઇનમેં શરીર પાંચ પ્રકાર કા હૈ— (૧) ઔદારિક (૨) વૈક્રિય (૩) આહારક (૪) તૈજસ ઓર (૫) કાર્મણ ।

પ્રાણિયોં મેં સુખ દુઃખ જીવન ઓર મરણ રૂપ જો પરિણામ હીતે હૈં, ઁન સબ પરિણામોં મેં પુદ્ગલ કારણ હૈ, અતઃ યહ સિદ્ધ હુઆ કિ પુદ્ગલ જીવોં કા ઉપકાર કરતે હૈં ।

### પુદ્ગલોના ઉપકાર—

શરીર, વચન, મન અને પ્રાણ આદિ પુદ્ગલોના પરિણામવિશેષ—ગમન, આદાન, વચન, ચિન્તન અને પ્રાણન ( શ્વાસ લેવો ) આદિ રૂપથી જીવોના ઉપકાર કરે છે, એટલે શરીર આદિના રૂપમાં પુદ્ગલ જ જીવોના ઉપકાર કરે છે, તેમાં શરીર પાંચ પ્રકારના છે—(૧) ઔદારિક, (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક, (૪) તૈજસ અને (૫) કાર્મણ.

પ્રાણીઓમાં સુખ, દુઃખ, જીવન અને મરણરૂપ જે પરિણામન થાય છે, તે સર્વ પરિણામોમાં પુદ્ગલ કારણરૂપ છે. તેથી એ સિદ્ધ થાય છે કે પુદ્ગલ જીવોના ઉપકાર કરે છે.

पुद्गलानां विशेषगुणाः—

वर्णगन्धरसस्पर्शाः पुद्गलानां विशेषगुणाः सहभाविनः परिणामाः ।  
शब्द—बन्ध—सौक्ष्म्य—स्थूल्य—संस्थान—भेद—तम—छाया—ऽऽतपो—द्योतादिभिः  
पर्यायैः पुद्गला लक्ष्यन्ते-ज्ञायन्ते, इत्याशयेन भगवता पुद्गलानां लक्षणतया  
शब्दादयः प्रोक्ताः । तथाहि—

“सहंघयार उज्जोओ, पभा छायाऽऽतवुत्ति वा

वण्णरसगंधफासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं ॥१॥” (उत्त० अ० २८)

पुद्गलों के विशेष गुण—

वर्ण, गन्ध, रस और स्पर्श पुद्गलों के विशेष (असाधारण) गुण हैं—सहभावी परिणाम हैं । शब्द, बन्ध, सूक्ष्मता, स्थूलता, संस्थान (आकार), भेद, तम, छाया, आतप, उद्योत आदि पर्यायों के द्वारा पुद्गल लखा जाता है—जाना जाता है । इस आशय से भगवान् ने शब्द आदि को पुद्गलों का लक्षण कहा है, वह इस प्रकार—  
“सहंघयार उज्जोओ, पभा-छाया-ऽऽतवुत्ति वा, वण्णरसगंधफासा, पुग्गलाणं तु लक्खणं” शब्द, अन्धकार, उद्योत, प्रभा, छाया, आतप, वर्ण, रस, गन्ध, और स्पर्श, ये सब पुद्गलों के लक्षण हैं । गाथा में ‘छायाऽऽतवुत्ति’ यहाँ ‘इति’ शब्द आदि के अर्थ में है । इस आदि शब्द से वर्ण आदि का ग्रहण हो सकता था फिर भी उन्हें अलग कहने का कारण यह है कि—वे नित्य सहभावी गुण हैं ।

पुद्गलानां विशेष गुण—

वर्ण, गंध, रस અને સ્પર્શ પુદ્ગલોનાં વિશેષ (અસાધારણ) ગુણ છે— સહભાવી પરિણામ છે શબ્દ, બંધ, સૂક્ષ્મતા, સ્થૂલતા, સંસ્થાન (આકાર) ભેદ, તમ, છાયા, આતપ, ઉદ્યોત આદિ પર્યાયોથી લખી શકાય છે—ખણી શકાય છે. તે આશયથી ભગવાને શબ્દ આદિ પુદ્ગલોનું લક્ષણ કહ્યું છે, તે આ પ્રમાણે છે—  
“સહંઘયાર ઉજ્જોઓ, પમા-છાયા-ઽઽતવુત્તિ વા, વણ્ણરસગંધફાસા; પુગ્ગલાણં તુ લક્ખણં” શબ્દ, અંધકાર, ઉદ્યોત પ્રભા, છાયા, આતપ, વર્ણ, રસ, ગંધ અને સ્પર્શ, એ પુદ્ગલોનું લક્ષણ છે. ગાથામાં—‘છાયાઽઽતવુત્તિ’ અહિં ‘इति’ શબ્દ આદિના અર્થમાં છે, એ પ્રમાણે ‘આદિ’ શબ્દથી વર્ણ વગેરેનું ગ્રહણ થઈ શકે છે તો પણ તેને અલગ કહેવાનું કારણ એ છે કે તે નિત્ય સહભાવી ગુણ છે.



शब्दोऽन्धकार उद्योतः प्रभा छाया आतप इति वा । वर्णरसगन्धस्पर्शाः पुद्गलानां तु लक्षणम् । इति च्छाया ।

“छायाऽऽतवृत्ति” इत्यत्र ‘इति’ शब्द आद्यर्थकः । तेनैव वर्णादीनां ग्रहणेऽपि पुनरुपादानं नित्यसहभावित्वबोधनार्थम् ।

तत्र वर्णः पञ्चधा, कृष्ण-नील-लोहित-पीत-शुक्ल-भेदात् । गन्धो द्विविधः-सुरभिरसुरभिश्च । रसः पञ्चविधः-तिक्त-कटु-कषाया-ऽम्ल-मधुर-भेदात् । स्पर्शोऽष्टधा-कठिन-मृदु-शूल-लघु-शीतो-ष्ण स्निग्ध-रूक्ष-भेदात् । संस्थानं पञ्चविधम्-वृत्त-त्र्यस्र-चतुरस्र-ऽऽयत-परिमण्डल-भेदात् ।

पुद्गलविभागः-

पुद्गलः संक्षेपतो द्विविधः-परमाणु-स्कन्धभेदात् ।

वर्ण पांच प्रकार का है-काला, नीला, लाल, पीला, और सफेद । सुगन्ध दुर्गन्ध के भेद से गन्ध दो प्रकार का है । रस के पांच भेद हैं-तीखा, कड़ुआ, कषैला, खट्टा, और मीठा । स्पर्श के आठ भेद हैं-कठिन, कोमल, भारी, हल्का, शीत, उष्ण, चिकना, और रूखा । संस्थान पांच प्रकार का है-वृत्त ( गोल ), त्र्यस्र ( त्रिकोना ), चतुरस्र ( चौकोर ), आयत ( लम्बा ) और परिमण्डल- ( गोल-मटोल ) ।

पुद्गल के भेद—

संक्षेप से पुद्गल के दो भेद हैं-परमाणु और स्कन्ध ।

वर्ण पांच प्रकारना छे-काणो, लीलो, लाल, पीलो અને धोળો. सुगन्ध અને दुर्गन्धना लेदથી ગન્ધ એ પ્રકારના છે. રસના પાંચ લેદ છે-તીખો, કડવો, કષાયેલો, ખાટો અને મીઠો, સ્પર્શના આઠ લેદ છે-કઠણ, કોમલ, ભારી, હલકો, શીત, ઉષ્ણ, ચિકણ અને રૂક્ષ. સંસ્થાન પાંચ પ્રકારનાં છે-વૃત્ત-ગોળ, ત્રિકોણ, ચતુષ્કોણ, લાંબું અને ગોળમટોળ.

પુદ્ગલોના લેદ

સંક્ષેપથી પુદ્ગલના એ લેદ છે-(૧) પરમાણુ અને (૨) સ્કન્ધ.

પરમાણુસ્વરૂપ—

તત્ર પરમાણુશ્ચ સકલવિભાગાન્તવર્તી નિરંશઃ પરસ્પરાસંયુક્તઃ, સૂક્ષ્મત્વાદિ-  
ન્દ્રિયવ્યાપારાતીતઃ, એકૈકવર્ણ-ગન્ધ-રસ-દ્વિસ્પર્શયુક્તઃ, દ્વચણુકસ્કન્ધાઘચિત્તમહા-  
સ્કન્ધપર્યન્તાનાં સ્થૂલ-સૂક્ષ્મ-સ્કન્ધકાર્યાણાં કારણરૂપો નિત્યથ્વેતિ ।

ઉક્તશ્ચ ભગવતા ભગવતીસૂત્રે-(શ. ૨૦ ૩૦ ૫) —

પરમાણુ કા સ્વરૂપ—

પરમાણુ, પુદ્ગલ કા અન્તિમ વિભાગ હૈ । વહ નિરંશ હૈ । પરસ્પર અસંયુક્ત હૈ ।  
સૂક્ષ્મ હોને કે કારણ ઇન્દ્રિયો કી ઉસમેં પ્રવૃત્તિ નહીં હો સકતી । એક વર્ણ, એક ગન્ધ,  
એક રસ ઓર દો સ્પર્શોસે યુક્ત હૈ । દ્વચણુક સ્કન્ધસે લેકર અન્તિમ મહાસ્કન્ધ પર્યન્ત  
સ્થૂલ એવં સૂક્ષ્મ સ્કંધરૂપ કાર્ય કા કારણ હૈ ઓર નિત્ય હૈ । ભગવાનને ભગવતીસૂત્ર  
(શ. ૨૦, ૩૦ ૫) મેં કહા હૈ—

પ્રશ્ન-ભગવન્ ! પરમાણુ પુદ્ગલ કિતને વર્ણવાલા, કિતને ગંધ વાલા, કિતને રસવાલા,  
ઓર કિતને સ્પર્શવાલા કહા ગયા હૈ ? ।

ઉત્તર-ગૌતમ ! એક વર્ણવાલા, એક ગંધ વાલા, એક રસવાલા ઓર દો સ્પર્શવાલા  
કહા ગયા હૈ ।

એક વર્ણવાલા હોતા હૈ તો કદાચિત્ કાલા, કદાચિત્ નીલા, કદાચિત્ લાલ,

પરમાણુનું સ્વરૂપ—

પરમાણુ, એ પુદ્ગલનો અતિમ વિભાગ છે. તે નિરંશ (અંશરહિત) છે.  
પરસ્પર અસંયુક્ત છે. સૂક્ષ્મ હોવાના કારણે ઇન્દ્રિયોની પ્રવૃત્તિ તેમાં થઈ શકતી  
નથી. એક વર્ણ, એક ગંધ, એક રસ અને એ સ્પર્શથી યુક્ત છે. દ્વચણુક સ્કંધથી  
લઈને અચિત્ મહાસ્કંધ પર્યન્ત સ્થૂલ અને સૂક્ષ્મસ્કંધરૂપ કાર્યાનું કારણ છે, અને  
નિત્ય છે. ભગવાને ભગવતી સૂત્ર (શ. ૨૦ ઉ. ૫.)માં કહ્યું છે:—

પ્રશ્ન-“ ભગવન્ ! પરમાણુ પુદ્ગલ કેટલા વર્ણવાળું, કેટલા ગંધવાળું, કેટલા  
રસવાળું, અને કેટલા સ્પર્શવાળું કહ્યું છે ?

ઉત્તર-ગૌતમ ! એક વર્ણવાળું, એક ગંધવાળું, એક રસવાળું, અને એ  
સ્પર્શવાળું કહ્યું છે.”

“ એક વર્ણવાળું હોય છે તો કદાચિત્ કાળું, કદાચિત્ લીલું, કદાચિત્ લાલ,  
કદાચિત્ પીળું અને કદાચિત્ શ્વેત હોય છે. એક ગંધવાળું હોય છે તો કદાચિત્

“પરમાણુપોગ્ગલે જં મંતે ! કતિવન્ને, કતિગંધે, કતિરસે, કતિફાસે પન્નત્તે ?, ગોયમા ! એગવન્ને, એગગંધે, એગરસે, દુપ્પાસે પન્નત્તે, તંજહા-જહ એગવન્ને-સિય કાલણ, સિય નીલણ, સિય લોહિણ, સિય હાલિદે, સિય સુક્કિલ્લે । જહ એગગંધે-સિય સુભિગંધે, સિય દુભિગંધે । જહ એગરસે-સિય તિત્તે સિય કહુણ સિય કસાણ, સિય અંબિલે, સિય મહુરે । જહ દુપ્પાસે-સિય સીણ ય નિદ્ધે ય ૧, સિય સીણ ય લુક્કલે ય ૨, સિય ઉસિણે ય નિદ્ધે ય ૩, સિય ઉસિણે ય લુક્કલે ય ૪ ” ઇતિ ।

પરમાણુપુદ્ગલઃ ભદન્ત ! કતિવર્ણઃ, કતિગન્ધઃ, કતિરસઃ, કતિસ્પર્શઃ પ્રજ્ઞસઃ ? ગૌતમ ! એકવર્ણઃ, એકગન્ધઃ, એકરસઃ, દ્વિસ્પર્શઃ પ્રજ્ઞસઃ । તદ્યથા-યદિ એકવર્ણઃ-સ્યાત્ કાલકઃ, સ્યાત્ નીલકઃ, સ્યાત્ લોહિતઃ, સ્યાત્ હારિદ્રઃ, સ્યાત્ શુક્લઃ । યદિ એકગન્ધઃ-સ્યાત્ સુરભિગન્ધઃ, સ્યાત્ દુરભિગન્ધઃ, યદિ એકરસઃ સ્યાત્તિત્તઃ સ્યાત્ કટુકઃ, સ્યાત્ કષાયઃ, સ્યાત્ અમ્લઃ, સ્યાત્ મધુરઃ । યદિ દ્વિસ્પર્શઃ-સ્યાત્ શીતશ્ચ સ્નિગ્ધશ્ચ ૧, સ્યાત્ શીતશ્ચ રૂક્ષશ્ચ ૨, સ્યાત્ ઉષ્ણશ્ચ સ્નિગ્ધશ્ચ ૩, સ્યાત્ ઉષ્ણશ્ચ રૂક્ષશ્ચ ૪, । ઇતિ ચ્છાયા,

કદાચિત્ પીલા, ઓર કદાચિત્ શુક્લ હોતા હૈ । એક ગન્ધવાલા હોતા હૈ તો કદાચિત્ સુરભિગંધવાલા, કદાચિત્ દુરભિગંધવાલા હોતા હૈ । યદિ એક રસવાલા હોતા હૈ તો કદાચિત્ તિત્ત, કદાચિત્ કટુક, કદાચિત્ કષાયલા, કદાચિત્ ખટ્ટા, ઓર કદાચિત્ મીઠા હોતા હૈ । યદિ દો સ્પર્શવાલા હોતા હૈ તો કદાચિત્ શીત ઓર સ્નિગ્ધ (ચિકના) ૧, કદાચિત્ શીત ઓર રૂક્ષ ૨, કદાચિત્ ઉષ્ણ ઓર સ્નિગ્ધ ૩, તથા કદાચિત્ ઉષ્ણ ઓર રૂક્ષ હોતા હૈ ૪ ।

સુરભિગંધ (સારી ગંધ) વાળું અને કદાચિત્ દુરભિગંધવાળું હોય છે. જે એક રસવાળું હોય છે તો કદાચિત્ તીખું, કદાચિત્ કટુ, કદાચિત્ કષાયલું, કદાચિત્ ખાટું અને કદાચિત્ મધુર-મીઠું-હોય છે. જે બે સ્પર્શવાળું હોય છે તો કદાચિત્ શીત અને સ્નિગ્ધ-(ચિકણ) ૧, કદાચિત્ શીત અને રૂક્ષ ૨, કદાચિત્ ઉષ્ણ અને સ્નિગ્ધ ૩, તથા કદાચિત્ ઉષ્ણ અને રૂક્ષ હોય છે, ૪”



અસૌ શસ્ત્રાદિના લતાદિવદચ્છેદઃ, સૂચ્યાદિના ચર્મવદભેદઃ, અગ્નિના કાષ્ઠવદદાહઃ, હસ્તાદિના વસ્ત્રપાત્રવદગ્રાહશ્ચ । ઉક્તશ્ચ ભગવતા ભગવતીસૂત્રે (શ. ૨૦-૨૦ ૩૦ ૫) —

“દ્રવ્યપરમાણુ ણં મંતે । કઙ્કિવિહે પળ્લન્તે?, ગોયમા ! ચતુર્વિહે પળ્લન્તે, તંજહા-અચ્છેજ્જે, અભેજ્જે, અહજ્જે, અગેજ્જે ।” ઇતિ । દ્રવ્યપરમાણુઃ સ્વલુ મદન્ત ! કતિવિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ?, ગૌતમ ! ચતુર્વિધઃ પ્રજ્ઞપ્તઃ, તદ્યથા-અચ્છેદઃ, અભેદઃ, અદાહઃ, અગ્રાહઃ । ઇતિ ચ્છાયા ।

યદ્યપિ પરમાણુઃ પુદ્ગલત્વાન્મૂર્તસ્તથાઽપ્યસૌ સ્વખંડશઃ કર્તુમશ્ક્યઃ, આકાશપ્રદેશવત્પરમાણોઃ પુદ્ગલપરમજઘન્યાંશરૂપત્વાત્, સર્વપરિમાણેભ્યોઽપકૃષ્ટં પરિમાણં પરમાણોરેવ તસ્માત્સોઽસ્વખંડ એવ ।

પરમાણુ, શસ્ત્ર કે દ્વારા લતા આદિ કી મૌતિ છેદા નહીં જા સકતા, ચમડે કી તરહ સુઈ આદિ સે મેદા નહીં જા સકતા, કાષ્ઠ કે સમાન અગ્નિ આદિ સે જલ નહીં સકતા ઓર વસ્ત્ર પાત્ર આદિ પદાર્થો કી તરહ હાથ આદિસે પકડા નહીં જા સકતા । ભગવાન્ને ભગવતીસૂત્ર (શ. ૨૦, ૩૦ ૫) મેં કહા હૈ—

પ્રશ્ન-ભગવન્ ! દ્રવ્ય પરમાણુ કિતને પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ ?

ઉત્તર-ગૌતમ ! ચાર પ્રકારકા કહા ગયા હૈ—અચ્છેદ, અભેદ, અદાહ ઓર અગ્રાહ ।

પરમાણુ, પુદ્ગલ હોને કે કારણ મૂર્તિક હૈ, ફિર મી ઉસ કે સ્વખંડ નહીં કિયે જા સકતે । જૈસે આકાશ કા એક પ્રદેશ જઘન્ય અંશરૂપ હૈ ઓર ઉસકા પરિમાણ સમી

પરમાણુ, શસ્ત્ર દ્વારા લતા આદિના પ્રમાણુ છેદી શકાતું નથી, ચામડાની જેમ સોય વગેરેથી વીંધી શકાતું નથી, કાષ્ઠની જેમ અગ્નિ આદિથી બાળી શકાતું નથી, અને વસ્ત્ર પાત્ર આદિ પદાર્થોની જેમ હાથ વગેરેથી પકડી શકાતું નથી.

ભગવાને ભગવતીસૂત્ર-(શ. ૨૦-ઉ. ૫) માં કહ્યું છે:—

પ્રશ્ન-“ભગવન્ ! દ્રવ્ય પરમાણુ કેટલા પ્રકારનું કહ્યું છે ?

ઉત્તર-ગૌતમ ! ચાર પ્રકારનું કહ્યું છે—“અચ્છેદ, અભેદ, અદાહ અને અગ્રાહ.” (છેદી શકાય નહિ, ભેદી શકાય નહિ, બાળી શકે નહિ, અને ગ્રહણ થઈ શકે નહિ).

પરમાણુ, પુદ્ગલ હોવાના કારણે મૂર્તિક છે તેા પણ તેના અંત-ભાગ થઈ શકતા નથી જેમકે:—આકાશનો એક પ્રદેશ જઘન્ય અંશરૂપ છે, અને તેનું પરિમાણ

સ ચ પ્રત્યક્ષદૃશ્યૈરનેકવિધૈર્વાદરપરિણામરૂપૈઃ સ્કન્ધૈરનુમીયતે । ઉક્તશ્ચ—

“કારણમેવ તદંતં, સુદુમો ણિજ્ઞો ય હોઽ પરમાણુ ।

એકરસગંધવર્ણો, દુષ્કાસો કઙ્ગલિંગો ય ॥૧॥” ઇતિ

છાયા—કારણમેવ તદન્ત્યં, સૂક્ષ્મો નિત્યશ્ચ ભવતિ પરમાણુઃ ।

એકરસગંધવર્ણો, દ્વિસ્પર્શઃ કાર્યલિંગશ્ચ ॥૧॥” ઇતિ ।

સ્કન્ધસ્વરૂપં તદ્વેદાશ્ચ—

પરસ્પરસંમિલિતવદ્ધરમાણુસમુદાયઃ સ્કન્ધઃ । સ્કન્ધાન્તવર્તી નિરંશોઽવયવઃ પ્રદેશ इत्युच्यते ।

પરિમાણોસે હીનતમ છે, इसी प्रकार परमाणु भी जघन्य अंशरूप है—उसके अंश नहीं हो सकते, वह अखण्ड है ।

પ્રત્યક્ષ સે દિશ્વાઈ દેનેવાલે અનેક પ્રકાર કે બાદરૂપ પરિણત સ્કન્ધો સે પરમાણુ કા અનુમાન હોતા છે । કહા મી છે—

“પરમાણુ કારણરૂપ છે, અન્તિમ અંશરૂપ છે, સૂક્ષ્મ છે ઓર નિત્ય છે । એક રસવાળા, એક ગંધવાળા, એક વર્ણવાળા ઓર દો સ્પર્શવાળા હોતા છે । સ્કંધરૂપ કાર્ય દેખને સે ઉસકા અનુમાન હોતા છે ।”

સ્કન્ધ કા સ્વરૂપ ઓર ભેદ—

પરસ્પર મિલે હુએ—આપસમેં વદ્ધ—પરમાણુ કા સમૂહ સ્કંધ કહલાતા છે । સ્કંધમેં રહા હુઆ નિરંશ અવયવ પ્રદેશ કહલાતા છે ।

સર્વ પરિમાણોથી હીનતમ છે, એ પ્રમાણે પરમાણુ પણ જઘન્ય અંશરૂપ છે, તેનાં અંશ—વિભાગ થઈ શકતા નથી, તે અખંડ છે.

પ્રત્યક્ષથી જોવામાં આવતા અનેક પ્રકારના બાદરૂપ પરિણત સ્કંધોથી પરમાણુનું અનુમાન થાય છે. કહ્યું પણ છે—

“પરમાણુ કારણરૂપ છે, અન્તિમ અંશરૂપ છે, સૂક્ષ્મ છે અને નિત્ય છે, એક રસવાળું છે, એક ગંધવાળું, એક વર્ણવાળું અને એ સ્પર્શવાળું હોય છે. સ્કંધરૂપ કાર્યના દેખાવથી તેનું અનુમાન થાય છે.

સ્કંધનું સ્વરૂપ અને ભેદ—

પરસ્પર મળેલા—અંદર અંદર બદ્ધ—પરમાણુઓનો સમૂહ તે સ્કંધ કહેવાય છે. સ્કંધમાં રહેલો નિરંશ અવયવ તે પ્રદેશ કહેવાય છે.

यद्यपि धर्माधर्माकाशजीवा अपि पुद्गलवत्स्कन्धरूपास्तथापि स्कन्ध-  
रूपपुद्गलादयं विशेषः-तेषाम्-धर्मादीनां चतुर्णां प्रदेशाः स्वस्वस्कन्धान्न खण्डशः  
पृथग् भवितुमर्हन्ति, तेषाममूर्त्तत्वात् । पुद्गलप्रदेशास्तु खण्डशः पृथग् भवन्ति,  
तेषां मूर्त्तत्वात्, आश्लेषविश्लेषाभ्यां मूर्त्तवस्तुनि संमिलन-पृथग्भाव-शक्तेः  
सर्वानुभवगोचरत्वात्, अतः स्कन्धपुद्गलानां स्थूलः सूक्ष्मो वा भागोऽवयव-  
उच्यते । अवयौति=पृथग्भवतीत्यवयवशब्दव्युत्पत्त्या विभाज्य एवांशोऽवयवशब्दार्थ-  
स्तस्मात्पुद्गलप्रदेश एवावयव इत्युच्यते ।

यद्यपि धर्म-द्रव्य अधर्म-द्रव्य आकाश और जीव भी पुद्गलके समान स्कन्धरूप हैं,  
फिर भी स्कन्धरूप पुद्गल से उनमें यह भिन्नता है-धर्म आदि चार द्रव्योंके प्रदेश अपने २  
स्कन्धसे कभी अलग नहीं हो सकते, क्योंकि धर्म आदि चार द्रव्य अमूर्त हैं । पुद्गल  
द्रव्य के प्रदेश खण्डर होकर अलग हो जाते हैं, क्योंकि पुद्गल मूर्त हैं । आश्लेष और  
विश्लेष के द्वारा मूर्त वस्तु में मिलने और बिल्लुडने की शक्ति है, यह बात सभी के अनुभव  
से सिद्ध है, अतः स्कन्ध-पुद्गलों का स्थूल या सूक्ष्म भाग अवयव कहलाता है,  
'अवयौति' इति-अवयवः अर्थात् जो पृथक् हो सके उसे अवयव कहते हैं, इस व्युत्पत्ति  
के अनुसार विभक्त हो सकने योग्य अंश को ही अवयव कहा जा सकता है, अतः पुद्गल  
का प्रदेश ही अवयव कहलाता है ।

ને કે ધર્મ-દ્રવ્ય, અધર્મ-દ્રવ્ય, આકાશ અને જીવ પણ પુદ્ગલના સમાન  
સ્કન્ધરૂપ છે, તેા પણ સ્કન્ધરૂપ પુદ્ગલથી તેમાં એ ભિન્નતા છે-ધર્મ આદિ  
ચાર દ્રવ્યોના પ્રદેશ પોત-પોતાના સ્કન્ધથી ક્યારેય પણ અલગ થઈ શકતા  
નથી. કેમકે ધર્મ આદિ ચાર દ્રવ્યો અમૂર્ત છે. પુદ્ગલ દ્રવ્યના પ્રદેશ ખંડ  
ખંડ થઈને અલગ થઈ જાય છે, કેમકે પુદ્ગલ મૂર્ત છે. આશ્લેષ (મળવું) અને  
વિશ્લેષ (જુદા થવું) દ્વારા મૂર્ત વસ્તુમાં મળવું અને છૂટા થવું તે શક્તિ છે, આ  
વાત સર્વને અનુભવથી સિદ્ધ છે. એટલા કારણથી સ્કન્ધ પુદ્ગલોનું સ્થૂલ અથવા  
સૂક્ષ્મ અવયવ કહેવાય છે 'અવયૌતિ' इति-अवयवः अर्थात् 'पृथक्' થઈ શકે તેને  
અવયવ કહે છે, એ વ્યુત્પત્તિ પ્રમાણે વિભક્ત થવા યોગ્ય અંશને જ અવયવ કહે  
છે. આ કારણથી પુદ્ગલ દ્રવ્યના પ્રદેશ જ અવયવ કહેવાય છે.



સંઘાતાદ્, મેદાત્, સંઘાતમેદાભ્યાં ચ દ્વિપ્રદેશિપ્રભૃતયઃ સ્કન્ધાઃ સમુત્પદ્યન્તે । ઉક્તશ્ચ ભગવતા સ્થાનાજ્ઞસૂત્રે—

“દોર્હિ ઠાણેર્હિ પોગ્ગલા સાહણંતિ, તંજહા-સયં વા પોગ્ગલા સાહન્નંતિ, પરેણ વા પોગ્ગલા સાહન્નંતિ । સયં વા પોગ્ગલા મિજ્જંતિ પરેણ વા પોગ્ગલા મિજ્જંતિ ” ઇતિ ।

છાયા—“દ્વાભ્યાં સ્થાનાભ્યાં પુદ્ગલાઃ સંહન્યન્તે । તદ્વથા-સ્વયં વા પુદ્ગલાઃ સંહન્યન્તે, પરેણ વા પુદ્ગલાઃ સંહન્યન્તે । સ્વયં વા પુદ્ગલા મિદ્યન્તે, પરેણ વા પુદ્ગલા મિદ્યન્તે । ઇતિ ।

‘સ્વયંવે’-તિ સ્વભાવતો વા અભ્રાદિષ્વિવ સંહન્યન્તે=સમ્બધ્યન્તે । (કમણઃ કર્તૃત્વવિવક્ષાયાં પ્રયોગોડયમ્ ) પરેણ વા=અન્યેન વા પુરુષાદિના સંહન્યન્તે=સંહતાઃ ક્રિયન્તે । (કર્મણિ વાચ્યે પ્રયોગોડયમ્) । એવં મિદ્યન્તે=વિકીર્યન્તે ।

દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ સંઘાતાદ્ દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધઃ સમુદ્ભવતિ । દ્વિપ્રદેશિનઃ

સંઘાત (મિલને) સે, મેદ (બિહુડને) સે તથા સંઘાતમેદસે દ્વિપ્રદેશી આદિ સ્કન્ધ ઉત્પન્ન હોતે હૈં ।

ભગવાનને સ્થાનાજ્ઞસૂત્રમેં કહા હૈ—

“દો સ્થાનો સે પુદ્ગલ આપસ મેં મિલતે હૈં, વહ ઇસ પ્રકાર—યા તો પુદ્ગલ સ્વયં વાદલ આદિ કી તરહ મિલ જાતે હૈં, યા દૂસરે પુરુષ આદિ કે દ્વારા મિલાયે જાતે હૈં, ઇસી પ્રકાર પુદ્ગલ સ્વયં અલગ હો જાતે હૈં, યા દૂસરે કે દ્વારા અલગ ક્રિયે જાતે હૈં ।

દો પરમાણુઓં કે સંઘાત સે દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ બનતા હૈ, દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ

સંઘાત (મેદાપ)થી ભેદ (જુદા પડવા)થી તથા સંઘાત-ભેદથી દ્વિપ્રદેશી વિગેરે સ્કંધ ઉત્પન્ન થાય છે. ભગવાને સ્થાનાજ્ઞસૂત્રમાં કહ્યું છે—

“એ સ્થાનોથી પુદ્ગલ પરસ્પર મળે છે. તે આ પ્રમાણે—પુદ્ગલ પોતે જ વાદળ આદિ પ્રમાણે મળી જાય છે, અથવા બીજા પુરુષ આદિના દ્વારા મેળવાય છે. એ પ્રમાણે પુદ્ગલ પોતે જ અલગ થઈ જાય છે, અથવા તો બીજાના દ્વારા અલગ કરી શકાય છે.

એ પરમાણુઓના સંઘાતથી (મળવાથી) દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ બને છે. દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ

स्कन्धस्य परमाणोश्च संयोगे सति त्रिप्रदेशी स्कन्धो भवति । संख्यात-  
परमाणूनां संघातात् संख्यातप्रदेशी स्कन्धः, असंख्यातपरमाणूनां संयोगाद्  
असंख्यातप्रदेशी स्कन्धः, अनन्तपरमाणूनां संघाताज्जातोऽनन्तप्रदेशी स्कन्धः,  
अनन्तप्रदेशिनां स्कन्धानां योगे त्वनन्तानन्तप्रदेशी स्कन्धो जायते । संख्यात-  
प्रदेश्यादिषु स्कंधेषु संयोगपरिणामः पूर्वोक्तरीत्या भावनीयः ।

द्रव्यणुकादिक्रमेणानन्तानन्तप्रदेशिपर्यन्ता ये स्कन्धाः संयोगपरिणाम-  
जास्तेभ्यः परमाणुः पृथग् भवति चेत्तदैकपरमाणुन्यूनः स्कन्धो जायते । एवं  
द्वित्रिचतुःपञ्चादिपरमाणुपृथग्भावक्रमेण न्यूनान्यूनो द्विप्रदेशी स्कन्धः समुत्पद्यते ।

और एक परमाणु का संयोग होने पर त्रिप्रदेशी स्कन्ध बनता है, संख्यात परमाणुओं के  
संघात से संख्यातप्रदेशी स्कन्ध बनता है और असंख्यात परमाणुओं के संयोग  
से असंख्यातप्रदेशी स्कन्ध बनता है । अनन्त परमाणुओं के मिलने से अनन्तप्रदेशी स्कन्ध  
बनता है, अनन्तप्रदेशी स्कन्धों का संयोग होने पर अनन्तानन्तप्रदेशी स्कन्ध उत्पन्न होता  
है । संख्यातप्रदेशी आदि स्कन्धों में संयोगरूप परिणामन पूर्वोक्तप्रकार से समझ लेना चाहिए ।

द्रव्यणुक आदि के क्रम से अनन्तानन्तप्रदेशी पर्यन्त जो स्कन्ध संयोगपरिणाम से  
बने हैं, उन में से अगर एक परमाणु अलग हो जाता है तो वह एक परमाणुहीन स्कंध रह  
जाता है । इसी प्रकार दो तीन चार पांच आदि परमाणुओं के अलग होने पर अन्त में  
द्विप्रदेशी स्कंध ही बचता है ।

અને એક પરમાણુનો સંયોગ થવાથી ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ બને છે, સંખ્યાત પરમાણુઓના  
સંઘાતથી (મળવાથી) સંખ્યાતપ્રદેશી સ્કંધ બને છે. અને અસંખ્યાત પરમાણુઓના  
સંયોગથી અસંખ્યાતપ્રદેશી સ્કંધ બને છે. અનન્ત પરમાણુઓના સંયોગથી અનન્ત  
પ્રદેશી સ્કંધ ઉત્પન્ન થાય છે. અનન્તપ્રદેશી સ્કંધોનો સંયોગ થાય તો અનન્તાનન્ત-  
પ્રદેશી સ્કંધ ઉત્પન્ન થાય છે. સંખ્યાતપ્રદેશી આદિ સ્કંધોમાં સંયોગરૂપ પરિણમન  
પૂર્વના પ્રકારથી સમજી લેવું જોઈએ.

દ્રવ્યણુક આદિના ક્રમથી અનન્તાનન્તપ્રદેશી પર્યન્ત જે સ્કંધ છે, તે સંયોગ  
પરિણમનથી બન્યા છે. તેમાંથી જો એક પરમાણુ અલગ થઈ જાય તો તે એક  
પરમાણુહીન સ્કંધ રહી જાય છે. એ પ્રમાણે બે, ત્રણ, ચાર, પાંચ આદિ પરમાણુઓ  
અલગ થઈ જાય તો અન્તમાં દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ જ બચે છે.

સ્કન્ધાદ્ બહિર્ગતસ્ય પરમાણોરન્યેન પરમાણુના સંયોગે દ્વચણુકસ્કન્ધ ઉત્પદ્યતે । એવં સંયોગ-વિભાગાભ્યામપિ વિવિધાઃ સ્કન્ધા ભવન્તિ ।

પરમાણૂનાં બન્ધસ્ય કારણમ્—

પરમાણુદ્વયસ્ય પરમાણૂનાં વા પરસ્પરાનુપ્રવેશો ન ભવતિ, છિદ્રાભાવાત્, કિન્તુ તયોસ્તેષાં વા વિસ્રસાગત્યા પરસ્પરં સંયોગે સતિ સ્નિગ્ધરૂક્ષત્વગુણ-સદ્ભાવે પરસ્પરં બન્ધો ભવતિ । એક્યપરિમાણો બન્ધઃ । તત્રાયં વિશેષઃ—

સ્કંધ સે અલગ હુઆ પરમાણુ જબ દૂસરે પરમાણુ કે સાથ મિલતા હૈ તો દોનો કે મેલસે નવીન દ્વચણુક ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર સંયોગ ઓર વિભાગ કે દ્વારા માંતિ-માંતિ કે સ્કન્ધ ઉત્પન્ન હોતે હી રહતે હૈ ।

પરમાણુઓં કે બન્ધ કા કારણ

દો યા અધિક પરમાણુ એક દૂસરે મેં પ્રવેશ નહીં કર સકતે, ક્યોંકિ પરમાણુઓં મેં છિદ્ર નહીં હોતા, અલબત્ત સ્વાભાવિક ગતિ સે દો યા દો સે અધિક પરમાણુઓં કા પરસ્પર મેં સંયોગ હોને પર ઊન મેં વિદ્યમાન સ્નિગ્ધતા ઓર રૂક્ષતા ગુણ કે કારણ ઊન કા આપસ મેં બન્ધ હો જાતા હૈ । એકતારૂપ પરિમન કો બન્ધ કહતે હૈ । બન્ધ કે સમ્બન્ધ મેં ઇતના વિશેષ સમજના ચાહિયે—

સ્કંધથી અલગ થયેલા પરમાણુ બ્યારે બીજા પરમાણુની સાથે મળે છે, તો બંનેના મળવાથી નવીન દ્વચણુક ઉત્પન્ન થાય છે. એ પ્રમાણે સંયોગ અને વિભાગ દ્વારા તરેહ-તરેહના સ્કંધ ઉત્પન્ન થયા કરે છે.

પરમાણુઓના બંધનું કારણ—

એ અથવા અધિક પરમાણુ એક બીજામાં પ્રવેશ કરી શકતા નથી, કેમકે પરમાણુઓમાં છિદ્ર નથી. અલબત્ત સ્વાભાવિક ગતિથી એ અથવા બેથી અધિક પરમાણુઓનો પરસ્પર સંયોગ થવાથી તેમાં વિદ્યમાન સ્નિગ્ધતા અને રૂક્ષતાના ગુણના કારણે તેનો આપસમાં બંધ થઈ જાય છે. એકતારૂપ પરિમનને બંધ કહે છે. બંધના સંબંધમાં એટલું વિશેષ સમજવું જોઈએ કે:—



जघन्यगुणस्निग्धयोर्द्वयोः, जघन्यगुणस्निग्धानां वा बहूनां परमाणुनां परस्परं बन्धो न भवति । तथा जघन्यगुणरूक्षयोः, जघन्यगुणरूक्षानां वा परस्परं बन्धो न भवति । जघन्योऽपकृष्टतमः, गुणशब्दोऽत्र संख्यार्थकः । यथा एक-गुणं, द्विगुणमित्यादिपदम्-एकसंख्यकद्विसंख्यकाद्यर्थबोधकम् । स्नेहादिगुणानां प्रकर्षापकर्षौ लोकप्रसिद्धौ । यथा-पानीयादजादुग्धं स्निग्धम्, अजादुग्धाद् गन्धं दुग्धम्, ततश्च महिषोदुग्धमित्युत्तरोत्तरं स्नेहप्रकर्षः ।

एषामेव पूर्वं पूर्वं स्नेहापकर्षः । तथा चैकगुणस्निग्धस्यैकगुणस्निग्धेन, द्वयोर्बहूनां परमाणुनां परस्परं बन्धो न भवति । एकगुणरूक्षस्यैकगुणरूक्षेण च

जघन्यगुण स्निग्ध दो परमाणुओं का, अथवा बहुत परमाणुओं का परस्परमें बन्ध नहीं होता । इसी प्रकार जघन्यगुण रूक्ष दो या बहुत परमाणुओं का भी परस्पर में बन्ध नहीं होता । जघन्य का अर्थ यहाँ हीनतम समझना चाहिए । गुणशब्द यहाँ संख्या ( डिगरी ) का वाचक है, जैसे-एकगुना, दोगुना आदि पद एकसंख्यक द्विसंख्यक आदि अर्थ के वाचक हैं । स्निग्धता ( चिकनाई ) आदि गुणों की अधिकता और न्यूनता लोक में प्रसिद्ध है । जैसे पानी की अपेक्षा बकरी का दूध चिकना होता है । बकरी के दूधसे गौ का दूध अधिक चिकना होता है, और गौ के दूध की अपेक्षा भैंस का दूध अधिक चिकना होता है । इस प्रकार पानी आदिमें उत्तरोत्तर चिकनेपन की अधिकता है । इन्ही पानी आदि में पहलेर वालों में चिकनेपनकी न्यूनता है । इस प्रकार एक गुण स्निग्ध का, एक गुण स्निग्ध के साथ, दो या अधिक परमाणुओं का

जघन्य गुण स्निग्ध એ પરમાણુઓનો અથવા બહુ પરમાણુઓનો પરસ્પર બંધ થતો નથી, જઘન્યનો અર્થ અહીં હીનતમ સમજવો જોઈએ. ગુણ શબ્દ અહીં સંખ્યા (ડિગ્રી) નો વાચક છે. જેવી રીતે એક ગણા એ ગણા આદિ પદ એક સંખ્યક, દ્વિસંખ્યક આદિ અર્થનું વાચક છે. સ્નિગ્ધતા (ચિકણપણું) આદિ ગુણોની અધિકતા અને ન્યૂનતા લોકમાં પ્રસિદ્ધ છે. જેમ પાણીની અપેક્ષાએ બકરીનું દૂધ ચિકણું હોય છે. બકરીના દૂધથી ગાયનું દૂધ અને ગાયના દૂધની અપેક્ષાએ ભેંસનું દૂધ વધારે સ્નિગ્ધ (ચિકણું) હોય છે. એ પ્રમાણે પાણી આદિમાં ઉત્તરોત્તર ચિકણાપણીની અધિકતા છે.

એ પાણી આદિમાં પહેલા-પહેલાનામાં ચિકણાપણીની ન્યૂનતા છે. એ પ્રમાણે એક ગુણ સ્નિગ્ધનો, એક ગુણ સ્નિગ્ધની સાથે, તથા એ અથવા અધિક પરમાણુઓનો

દ્રવ્યોર્વહ્નનાં વા પરમાણુનાં પરસ્પરં બન્ધો ન ભવતીતિ ફલિતમ્ ।

નનુ પરમાણુનાં સત્યપિ સંયોગે બન્ધકારણીભૂતસ્તિગ્ધત્વરૂક્ષત્વયોશ્ચ સદ્ભાવે કથં ન જાયતે પરસ્પરમેકત્વપરિણતિલક્ષણો બન્ધઃ ? ઇતિ ।

પરમાણોસ્તાદૃશપરિણમનશક્તેરભાવાત્ । પરિણામશક્તયશ્ચ દ્રવ્યાણાં વિચિત્ર-રૂપાઃ ક્ષેત્રકાલાદ્યનુરોધેન પ્રયોગવિસ્ત્રસાપેક્ષાઃ પ્રભવન્તિ । જઘન્યગુણત્વેન દૌર્બલ્યાદેવ સ્નેહો રૂક્ષો વા કશ્ચિદ્ પુદ્ગલં પરિણામયિતું ન સમર્થઃ । યથા-તુલ્યદુર્બલગુણમહ્લયોરુભયોર્મધ્યે પરસ્પરં કોઽપિ કશ્ચિદ્ભિદ્ધનું ન પ્રભવતિ, તસ્માજ્જઘન્યગુણાનાં પરસ્પરં બન્ધો ન ભવતીતિ સિદ્ધમ્ ।

પરસ્પર બન્ધ નહીં હોતા, ઓર ઇક ગુણ રૂક્ષકા ઇક ગુણ રૂક્ષ કે સાથ દો યા અધિક પરમાણુઓં કા પરસ્પર બન્ધ નહીં હોતા, યહ સિદ્ધ હુઆ ।

શંકા—પરમાણુઓં કા સંયોગ મૌજૂદ હોને પર મી, ઓર બન્ધ કે કારણભૂત સ્તિગ્ધત્વ તથા રૂક્ષત્વ કે વિદ્યમાન હોને પર મી બન્ધ—ઇકતારૂપ પરિણમન ક્યોં નહીં હોતા ?

સમાધાન—પરમાણુ મેં ઇસ પ્રકાર કે પરિણમન કી શક્તિ કા અભાવ હૈ । દ્રવ્યોં કી પરિણમન શક્તિયૌં ક્ષેત્ર ઓર કાલ કે અનુરોધ સે પ્રયત્ન તથા સ્વભાવ કી અપેક્ષા રાખતી હુઈ નાના પ્રકાર કી હોતી હૈં । જઘન્ય ગુણવાલા હોને કે કારણ નિર્બલ હોને સે સ્તિગ્ધ યા રૂક્ષ પરમાણુ કિસી પુદ્ગલ કો પરિણત કરને મેં સમર્થ નહીં હોતા; જૈસે સમાન દુર્બલતાવાલે દો મહ્લોં મેં સે કોઈ કિસી કો પરાજિત નહીં કર સકતા । અત ઇવ યહ સિદ્ધ હુઆ કિ જઘન્ય ગુણવાલોં કા પરસ્પર મેં બન્ધ નહીં હોતા ।

પરસ્પર બંધ થતો નથી, અને એકગુણુ રૂક્ષનો એકગુણુ રૂક્ષની સાથે બે અથવા અધિક પરમાણુઓનો પરસ્પર બંધ થતો નથી.

શંકા—પરમાણુઓનો સંયોગ મૌજૂદ હોવા છતાંય પણ, અને બંધના કારણભૂત સ્તિગ્ધત્વ (ચિક્ષાપણું) તથા રૂક્ષત્વ (લૂખાપણું) વિદ્યમાન હોવા છતાંય બંધ—એકતારૂપ પરિણમન કેમ થતું નથી ?

સમાધાન—પરમાણુમાં એ પ્રકારની પરિણમનની શક્તિનો અભાવ છે, દ્રવ્યની પરિણમન શક્તિઓ ક્ષેત્ર અને કાલના અનુરોધથી, પ્રયત્ન તથા સ્વભાવની અપેક્ષા રાખતી થકી નાના પ્રકારની થાય છે. જઘન્ય ગુણવાળા હોવાના કારણે, નિર્બલ હોવાથી સ્નેહ અથવા રૂક્ષ પરમાણુ કોઈ પુદ્ગલને પરિણત કરવામાં સમર્થ થતું નથી. જેવી રીતે સમાન દુર્બળતાવાળા બે મહ્લોમાંથી કોઈ કોઈને પરાજિત કરી શકતા નથી, એટલા કારણથી સિદ્ધ થયું કે—જઘન્ય ગુણવાળાઓનો પરસ્પર બંધ થતો નથી.

एवं द्विगुणतः समारभ्य यावत् संख्यातासंख्यातानन्तगुणस्निग्धस्य पुद्गलस्य द्विगुणतः समारभ्य यावत् संख्यातासंख्यातानन्तगुणस्निग्धेन सर्वेण समगुणेन पुद्गलेन परस्परं बन्धो न भवति । तथा द्विगुणादिरूक्षस्य द्विगुणादिरूक्षेण सर्वेण समगुणेन यावदनन्तगुणरूक्षेण पुद्गलेन सह परस्परं बन्धो न भवति । यथा तुल्यबलगुणमल्लयोरुभयोर्मध्ये परस्परं कोऽपि कश्चिदभिहन्तुं न प्रभवति ।

इत्थं च तुल्यसंख्यके स्निग्धत्वे सति स्निग्धस्य स्निग्धेन सह बन्धो न भवति, तुल्यसंख्यके रूक्षत्वे सति रूक्षस्य रूक्षेण सह बन्धो न भवतीति सारांशः ।

अथ जघन्यस्निग्धस्य कीदृशेन स्निग्धेन सह परस्परं बन्धो भवति ?

इसी प्रकार द्विगुण से लेकर संख्यात असंख्यात और अनन्तगुण स्निग्ध पुद्गलका द्विगुण से लेकर संख्यात असंख्यात और अनन्तगुण स्निग्धतावाले समगुण पुद्गल के साथ आपस में बन्ध नहीं होता । तथा द्विगुण आदि रूक्ष समगुणवाले किसी भी पुद्गल के साथ बन्ध नहीं होता है । जैसे—समान बलवाले दो मल्लों में से कोई किसी को पराजित नहीं कर सकता ।

इस प्रकार समान स्निग्धता होने पर स्निग्ध पुद्गलका स्निग्ध पुद्गल के साथ बन्ध नहीं होता है, और समान रूक्षता होने पर रूक्षका रूक्षके साथ भी बन्ध नहीं होता है ।

शंका—जघन्य स्निग्ध का किस प्रकार के स्निग्ध पुद्गल के साथ परस्पर बन्ध होता है ? ।

એ પ્રમાણે દ્વિગુણથી લઈને સંખ્યાત, અસંખ્યાત અને અનંતગુણ સ્નિગ્ધ પુદ્ગલનો દ્વિગુણથી લઈને સંખ્યાત, અસંખ્યાત, અને અનંતગુણ સ્નિગ્ધતાવાળા સમગુણ પુદ્ગલની સાથે આપસમાં બંધ થતો નથી. તથા દ્વિગુણ આદિ રૂક્ષ પુદ્ગલનો દ્વિગુણ આદિ રૂક્ષ સમગુણવાળા કોઈ પણ પુદ્ગલની સાથે બંધ થતો નથી. જેમ સમાન બળવાળા બે મલ્લોમાંથી કોઈ કોઈને પરાજિત કરી શકતા નથી.

એ પ્રમાણે સમાન સ્નિગ્ધતા હોવા છતાંય, સ્નિગ્ધ પુદ્ગલનો સ્નિગ્ધ પુદ્ગલની સાથે બંધ થતો નથી, અને સમાન રૂક્ષ હોવા છતાંય રૂક્ષનો રૂક્ષની સાથે પણ બંધ થતો નથી.

શંકા—જઘન્ય સ્નિગ્ધ પુદ્ગલનો કયા પ્રકારના સ્નિગ્ધ પુદ્ગલની સાથે પરસ્પર બંધ થાય છે ?



अत्रोच्यते-जघन्यस्निग्धस्य द्व्यधिकत्र्यधिकादिना स्निग्धेन बन्धो भवति, यथा एकगुणस्निग्धः । परमाणुपुद्गलस्य त्रिगुणस्निग्धेन परमाणुपुद्गलेन सह संयोगे सति बन्धो भवति । एवं एकगुणस्निग्धस्य चतुर्गुणपञ्चगुणयावत्संख्यातासंख्यातानन्तगुणस्निग्धेन सह बन्धः ।

एकगुणस्निग्धस्यैकाधिकगुणस्निग्धेन (द्विगुणस्निग्धेन) तु न बन्धः, द्व्यधिकादिगुणस्निग्धेन च स्निग्धपुद्गलस्य बन्धविधानात् । एकाधिकगुणस्निग्धस्य पुद्गलस्य प्रतिविशिष्टपरिणमनशक्तेरभावात् । एकगुणस्निग्धस्यैकाधिको द्विगुणस्निग्धः ।

**समाधान—**जघन्य स्निग्ध पुद्गल का दो गुण ( डिगरी ) या तीन गुण अधिक स्निग्धतावाले पुद्गल के साथ बन्ध होता है । जैसे एक गुण स्निग्धतावाले परमाणु का तीन गुण स्निग्धता वाले परमाणु के साथ संयोग होने पर बन्ध हो जाता है । इसी प्रकार एक गुण ( एक अंश ) स्निग्धका चार, पांच, यहाँ तक कि संख्यात, असंख्यात एवं अनन्त गुण स्निग्ध के साथ बन्ध होता है ।

एक गुण स्निग्धका एक अधिक गुण स्निग्ध अर्थात् द्विगुण स्निग्ध के साथ बन्ध नहीं होता, क्योंकि दो गुण अधिक स्निग्धका स्निग्ध पुद्गल के साथ बन्ध बतलाया गया है । एक गुण अधिक स्निग्ध पुद्गल में विशेष प्रकार के परिणमन की शक्ति नहीं है । एक गुण स्निग्धतावाले की अपेक्षा एक गुण अधिक स्निग्ध जहाँ कहा जाय वहाँ दो गुण स्निग्धतावाला पुद्गल समझ लेना चाहिये ।

**समाधान—**जघन्य स्निग्ध पुद्गलानां ये शुष्ण ( डिग्री ) अथवा त्रुष्ण शुष्ण अधिक स्निग्धतावाणां पुद्गलानां साथे बंधं थाय छे जेभके:-એક શુષ્ણ ( डिग्री ) स्निग्धतावाणां परमाणुनो त्रुष्ण शुष्ण ( डिग्री ) स्निग्धतावाणां परमाणुनी साथे संयोग થઈ જાય તે બંધ થઈ જાય છે. તેવી રીતે એક શુષ્ણ ( डिग्री ) ( अंश ) स्निग्धताना ચાર, પાંચ, ત્યાં સુધી કે સંખ્યાત અસંખ્યાત એ પ્રમાણે અનંત શુષ્ણ સ્નિગ્ધની સાથે બંધ થાય છે.

એક શુષ્ણ સ્નિગ્ધતાનો એક અધિક શુષ્ણ સ્નિગ્ધ અર્થાત્ દ્વિશુષ્ણ સ્નિગ્ધની સાથે બંધ થતો નથી, કેમકે એ શુષ્ણ અધિક સ્નિગ્ધના સ્નિગ્ધ પુદ્ગલની સાથે બંધ બતાવ્યો છે, એક શુષ્ણ અધિક સ્નિગ્ધ પુદ્ગલમાં વિશેષ પ્રકારનાં પરિણમનની શક્તિ નથી. એક શુષ્ણ ( डिग्री ) स्निग्धतावाणानी अपेक्षा એક શુષ્ણ ( डिग्री ) અધિક સ્નિગ્ધ જ્યાં કહેવાય ત્યાં એ શુષ્ણ ( डिग्री ) સ્નિગ્ધતાવાળા પુદ્ગલ સમજ લેવા જોઈએ.

एवमुक्तयुक्त्या द्विगुणादिस्निग्धस्य स्वस्वापेक्षयैकाधिकगुणस्निग्धेन सह बन्धो न भवति । द्विगुणस्निग्धस्यैकाधिकस्निग्धः त्रिगुणस्निग्धस्य चतुर्गुणस्निग्ध एकाधिकः, इति हेतोर्द्विगुणस्निग्धस्य त्रिगुणस्निग्धेन सह बन्धो न भवति । इत्थं च स्निग्धपुद्गलस्यैकाधिकगुणस्निग्धपुद्गलेन सह बन्धो न भवतीति सारः ।

द्विगुणादिस्निग्धस्य द्व्यधिकादिगुणस्निग्धेन बन्धो भवति । यथा द्विगुणस्निग्धस्य द्व्यधिकश्चतुर्गुणस्निग्धः । त्र्यधिकः पञ्चगुणस्निग्धः, चतुरधिकः

पूर्वोक्त युक्ति के अनुसार द्विगुण आदि स्निग्ध का अपनी अपनी अपेक्षा से एक गुण अधिक स्निग्ध के साथ बन्ध नहीं होता । द्विगुण स्निग्ध से एक अधिक का अर्थ है—त्रिगुण स्निग्ध, त्रिगुण स्निग्ध से एक अधिक चतुर्गुण स्निग्ध सनज्ञना चाहिये । इस रीति से अनन्त गुण स्निग्ध भी अपने से एक गुण हीन स्निग्ध की अपेक्षा एक गुण अधिक स्निग्ध है । अतः द्विगुण स्निग्ध का त्रिगुण स्निग्ध के साथ बन्ध नहीं होता । सारांश यह है कि—स्निग्ध पुद्गल का एक गुण अधिक पुद्गल के साथ बन्ध नहीं होता ।

द्विगुण स्निग्ध आदि का दो गुण अधिक अर्थात् चार गुण स्निग्ध के साथ बन्ध हो जाता है, जैसे दो गुण स्निग्ध से दो गुण अधिक स्निग्ध का

पूर्वोक्त युक्ति प्रमाणे द्विशुष्ण आदि स्निग्धेनो पोत-पोतानी अपेक्षाथी ओक शुष्ण अधिक स्निग्ध साथे बंध थतो नथी. द्विशुष्ण स्निग्धथी ओक अधिकनो अर्थ छे—त्रिशुष्ण स्निग्ध, अने त्रिशुष्ण स्निग्धथी ओक अधिक चतुर्शुष्ण स्निग्ध समजवो जेधजे. ओ प्रमाणे अनन्त शुष्ण स्निग्ध पाव, पोतानाथी ओक शुष्ण हीन स्निग्धनी अपेक्षाथी ओक शुष्ण अधिक स्निग्ध छे. तेथी द्विशुष्ण स्निग्धेनो त्रिशुष्ण स्निग्धनी साथे बंध थतो नथी. सारांश ओ छे के:-स्निग्ध पुद्गलनो ओक शुष्ण अधिक स्निग्ध पुद्गलनी साथे बंध थतो नथी.

द्विशुष्ण स्निग्ध आदिनो ओ शुष्ण अधिक अर्थात् चार शुष्ण स्निग्धनी साथे बंध थत ज्ञाय छे. जेभ-जे शुष्ण स्निग्धथी ओ शुष्ण अधिक स्निग्धनो अर्थ चार

षड्गुणस्निग्धः, इत्यादि । त्रिगुणस्निग्धस्य द्व्यधिकः पञ्चगुणस्निग्धः, त्र्यधिकः षड्गुणस्निग्धः, चतुरधिकः सप्तगुणस्निग्धः, इत्यादि । चतुर्गुणस्निग्धस्य द्व्यधिकः षड्गुणस्निग्धः, त्र्यधिकः सप्तगुणस्निग्धः चतुरधिकः— अष्टगुणस्निग्धः । एवं पञ्चगुणस्निग्धादिसंख्यातासंख्यातानन्तगुणस्निग्धपर्यन्तस्य द्व्यधिकादिगुणस्निग्धेन सह बन्धो भावनीयः ।

एवं जघन्यगुणरूक्षस्य, अजघन्यगुणरूक्षस्य च बन्धव्यवस्था बोध्या ।

विसदृशपुद्गलबन्धः—

अथ विसदृशपुद्गलयोर्बन्धे कीदृशी व्यवस्था ?

उच्यते—जघन्यगुणस्निग्धस्य, जघन्यगुणरूक्षेण सह बन्धो न भवति ।

अर्थ चार गुण स्निग्ध, तीन गुण अधिक का अर्थ पांच गुण स्निग्ध, चार गुण अधिक का अर्थ छह गुण स्निग्ध, इत्यादि समझना चाहिए । चतुर्गुण स्निग्ध से द्व्यधिक— षड्गुण स्निग्ध, त्र्यधिक—सप्तगुण स्निग्ध, चतुरधिक—अष्टगुण स्निग्ध समझना चाहिए । इस प्रकार पञ्चगुण स्निग्ध आदि से संख्यात, असंख्यात अनन्त गुण स्निग्ध का दो गुण अधिक स्निग्ध के साथ बन्ध होता है । इस प्रकार जघन्य गुण रूक्ष का अजघन्य गुण रूक्ष के साथ बन्ध की व्यवस्था जाननी चाहिए ।

विसदृश पुद्गलों का बन्ध—

प्रश्न—विसदृश अर्थात् परस्पर विरोधी पुद्गलों के बन्ध की क्या व्यवस्था है ?

उत्तर—जघन्य गुण स्निग्ध का जघन्य गुण वाले रूक्ष पुद्गलके साथ बन्ध

शुष्ण स्निग्ध, त्रिगुण शुष्ण अधिकेनो अर्थ पांच शुष्ण स्निग्ध, चार शुष्ण अधिकेनो अर्थ छ शुष्ण स्निग्ध, ये प्रमाणे समञ्जसुं न्नेधये. चतुर्गुण स्निग्धेनो द्व्यधिक षड्गुण स्निग्ध, त्र्यधिक सप्तगुण स्निग्ध चतुरधिक अष्टगुण स्निग्ध समञ्जसुं न्नेधये, ये प्रमाणे पांच शुष्ण स्निग्ध आदिनी संख्यात, असंख्यात अनन्तशुष्ण स्निग्धेनो ये शुष्ण अधिक स्निग्धेनी साथे अंध थाय छे ये प्रमाणे जघन्य शुष्ण रूक्षेनी अजघन्य शुष्ण रूक्षेनी साथे अंधनी व्यवस्था न्नाणुवी न्नेधये

विसदृश पुद्गलेनो अंध—

प्रश्न—विसदृश अर्थात् परस्परविरोधी पुद्गलेनो अंधनी शुं व्यवस्था छे ?

उत्तर—जघन्य शुष्ण स्निग्धेनो जघन्य शुष्णवाणा पुद्गलेनी साथे अंध थतो



जघन्यगुण (एकगुण) स्निग्धस्य अजघन्यगुण (द्विगुणाद्यनन्तगुणपर्यन्त)-स्निग्धस्य वा स्वस्वापेक्षयैकाधिकगुणरूक्षेण, पुनः स्वस्वापेक्षया द्व्यधिक-त्र्यधिक-चतुरधिकादि-गुणरूक्षेणापि बन्धो भवति । उक्तञ्च भगवता प्रज्ञापनासूत्रे-(१३)-त्रयोदशे परिणामपदे-“बन्धनपरिणामे णं भन्ते ! कइविहे पण्णत्ते ?, गोयमा ! दुविहे पण्णत्ते, तंजहा-णिद्धबन्धनपरिणामे य लुक्खबन्धनपरिणामे य ।”

समणिद्वयाए बन्धो, न होइ समलुक्खयाएवि ण होइ ।

वेमायणिद्धलुक्ख-त्तणेण बन्धो उ खंधाणं ॥१॥

छाया—बन्धनपरिणामो भदन्त ! कतिविधः प्रज्ञप्तः ?, गौतम !

द्विविधः प्रज्ञप्तस्तद्यथा—स्निग्धबन्धनपरिणामश्च, रूक्षबन्धनपरिणामश्च ।

समस्निग्धतायां बन्धो न भवति, समरूक्षतायामपि न भवति ।

विमात्रस्निग्धरूक्षत्वेन, बन्धस्तु स्कन्धानाम् ॥ १ ॥

नहीं होता । जघन्य गुण ( एकगुण ) स्निग्ध का अथवा अजघन्य गुण ( दो से लगाकर अनन्त गुण तक ) स्निग्ध का, अपने से एक गुण अधिक रूक्ष के साथ बन्ध होता है । और अपने अपने से दो अधिक, तीन अधिक, चार अधिक आदि रूक्ष पुद्गल के साथ भी बन्ध होता है । भगवान् ने प्रज्ञापना सूत्र के १३ वें परिणाम पदमें कहा है—

प्रश्न—“भगवान् ! बन्ध परिणाम कितने प्रकार का कहा गया है ?

उत्तर—गौतम ! दो प्रकार का कहा गया है—(१) स्निग्धबन्धनपरिणाम और (२) रूक्षबन्धनपरिणाम ।

समान स्निग्धता या समान रूक्षता होने पर बन्ध नहीं होता है, किन्तु विमात्र—अर्थात् अधिक का हीनके साथ, और हीनका अधिक के साथ, चाहे वे स्निग्ध हो या रूक्ष हो बन्ध हो जाता है ॥ १ ॥

नथी. जघन्य शुष्ण (એક શુષ્ણ) સ્નિગ્ધનો અથવા અજઘન્ય, (બેથી લઈને અનન્ત શુષ્ણ સુધી) સ્નિગ્ધનો પોતાનાથી એક શુષ્ણ અધિક રૂક્ષની સાથે બંધ થાય છે. અને પોતપોતાથી બે અધિક, ત્રણ અધિક, ચાર અધિક આદિ રૂક્ષ પુદ્ગલની સાથે પણ બંધ થાય છે, ભગવાને પ્રજ્ઞાપના સૂત્રના ૧૩મા પરિણામ પદમાં કહેલું છે—

પ્રશ્ન—“ભગવાન્ ! બન્ધન-પરિણામ કેટલા પ્રકારનાં કહ્યાં છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! બે પ્રકારનાં કહેલાં છે—(૧) સ્નિગ્ધબંધનપરિણામ અને (૧) રૂક્ષબંધનપરિણામ.”

સમાન સ્નિગ્ધતા અથવા સમાન રૂક્ષતા હોય તો બંધ થતો નથી. પરંતુ વિમાત્ર અર્થાત્ અધિકનો હીનની સાથે અને હીનનો આધિકની સાથે, ભલે તે સ્નિગ્ધ હોય કે રૂક્ષ હોય, બંધ થઈ જાય છે ॥ ૧ ॥

ગિદ્વસ્સ ગિદ્વેણ દુયાહિણ,  
 લુક્વસ્સ લુક્વેણ દુયાહિણ ।  
 ગિદ્વસ્સ લુક્વેણ ઉવેઈ બન્ધો,  
 જહ્ણવજ્જો વિસમો સમો વા ॥૨॥  
 (મજ્ઞા ૦ પદ-૧૩)

છાયા—સ્નિગ્ધસ્ય સ્નિગ્ધેન દ્વિકાધિકેન,  
 રૂક્ષસ્ય રૂક્ષેણ દ્વિકાધિકેન ।  
 સ્નિગ્ધસ્ય રૂક્ષેણ ઉપૈતિ બન્ધો,  
 જઘન્યવર્જો વિષમઃ સમો વા ॥૨॥” ઇતિ,  
 વિસદ્દશસ્ય બન્ધમાહ—“ગિદ્વસ્સ લુક્વેણ” ઇત્યાદિ ।

સ્નિગ્ધસ્ય રૂક્ષેણ સહ બંધ ઉપૈતિ=ઉપગતો ભવતિ, જાયત ઇત્યર્થઃ ।  
 યદિ પરમાણુર્જઘન્યવર્જો વિષમો સમો વા ભવેત્ । ॥૨॥  
 પરમાણુનાં બન્ધવ્યવસ્થાકોષ્ઠકમગ્રેઽવલોકનીયમ્ ।

દો ગુણ અધિક સ્નિગ્ધ કે સાથ સ્નિગ્ધ કા બન્ધ હોતા હૈ । ઓર દો ગુણ અધિક રૂક્ષ કે સાથ રૂક્ષકા બન્ધ હોતા હૈ । અબ વિસદ્દશ બન્ધકો કહતે હૈ—“ગિદ્વસ્સ લુક્વેણ” ઇત્યાદિ । જઘન્ય ગુણવાલે પરમાણુ કો છોડકર ફિર યાહે વહ વિષમ હો યા સમ હો સ્નિગ્ધ કા રૂક્ષ કે સાથ બન્ધ હોતા હૈ ।

પરમાણુઓં કી બન્ધવ્યવસ્થા કા કોષ્ઠક પૃષ્ઠ ૧૨૧ દેખ લેવેં ।

યે શુણ્ણ અધિક સ્નિગ્ધ સાથે સ્નિગ્ધનો અંધ થાય છે. અને યે શુણ્ણ અધિક રૂક્ષની સાથે રૂક્ષનો બન્ધ થાય છે. હવે વિસદ્દશ બન્ધ કહે છે—“ગિદ્વસ્સ લુક્વેણ” ઇત્યાદિ. જઘન્ય શુણ્ણવાળા પરમાણુને છોડીને બીજા ગમે તે વિષમ હોય અથવા સમ હોય તે સ્નિગ્ધનો રૂક્ષની સાથે અંધ થાય છે.

પરમાણુઓની અંધવ્યવસ્થાનું કોષ્ઠક પૃષ્ઠ ૧૨૧માં જોઈ લેવું.

॥ परमाणुबन्धव्यवस्थाकोष्ठकम् ॥

जघन्यगुण-( एकगुण )-स्निग्ध-  
रूक्षयोर्बन्धव्यवस्था ।

स्निग्धरूक्षसंख्या	सदृशानाम्		विसदृशानाम्
	स्निग्धस्य + स्निग्धेन सह	रूक्षस्य + रूक्षेण सह	स्निग्धस्य + रूक्षेण सह
जघन्यस्य (एकगुणस्य) जघन्येन (एकगुणेन) सह	बन्धाभावः	बन्धाभावः	बन्धाभावः
जघन्यस्य (एकगुणेन) + एकाधिकेन (द्विगुणेन) सह	बन्धाभावः	बन्धो भवति	बन्धो भवति
जघन्यस्य (एकगुणस्य) + द्व्यधिकादिगुणेन-(त्रिगुण- चतुर्गुणतः समारभ्य यावद् अनन्तगुणेन) सह	बन्धो भवति	बन्धो भवति	बन्धो भवति

अजघन्यगुण-( द्विगुणादि )-स्निग्धरूक्षयोर्बन्धव्यवस्था

स्निग्धरूक्ष - संख्या	सदृशानाम्		विसदृशानाम्
	स्निग्धस्य + स्निग्धेन सह	रूक्षस्य + रूक्षेण सह	स्निग्धस्य + रूक्षेण सह
द्विगुणस्य + द्विगुणेन सह	बन्धाभावः	बन्धाभावः	बन्धो भवति
द्विगुणस्य + एकाधिकेन (त्रिगुणेन) सह	बन्धाभावः	बन्धाभावः	बन्धो भवति
द्विगुणस्य + द्व्यधिकादिगुणेन (चतुर्गुणपञ्चगुणतः समारभ्य यावद् अनन्तगुणेन) सह	बन्धो भवति	बन्धो भवति	बन्धो भवति

एवम् अजघन्यगुण-(त्रिगुणचतुर्गुणतः समारभ्यानन्तगुणपर्यन्त)-स्निग्धरूक्षयोः  
समगुणेन, एकाधिकगुणेन, द्व्यधिकादिगुणेन च सह बन्धव्यवस्था भावनीया ॥



અથ જીવાસ્તિકાયઃ—

જીવશબ્દાર્થઃ—

જીવતિ પ્રાણાન્ ધારયતીતિ જીવઃ । ન ચ સિદ્ધાનાં પ્રાણસમ્બન્ધા-  
ભાવાદજીવત્વાપત્તિરિતિ વાચ્યમ્ , ‘ પ્રાણાન્ ધારયતી ’-ત્યત્ર પ્રાણસામાન્યવિવક્ષયા  
પઠ્ઠેન્દ્રિયપ્રભૃતિદશવિધદ્રવ્યપ્રાણાનામસત્ત્વેऽપિ સિદ્ધાનાં ભાવપ્રાણસદ્ભાવેન જીવત્વ-  
સિદ્ધેરવ્યાહતત્વાત્ । પ્રતિવિશિષ્ટપ્રાણસમ્બન્ધે સતિ જીવનાઽજીવશબ્દઃ પ્રવર્તતે ।

પ્રાણા દ્વિવિધાઃ—દ્રવ્યપ્રાણાઃ, ભાવપ્રાણાશ્ચ । તત્ર દ્રવ્યપ્રાણા દશવિધાઃ

જીવાસ્તિકાય—

જીવશબ્દકા અર્થ—

જો જીતા છે અર્થાત્ પ્રાણોં કો ધારણ કરતા છે, વહ જીવ કહલાતા છે । ‘ સિદ્ધો  
મેં પ્રાણોં કા અભાવ હોને સે વે અજીવ હો જાયેંગે ’ યહ કહના ઠીક નહીં છે । ‘ જો  
પ્રાણોં કો ધારણ કરતા છે ’ હસ કથન મેં પ્રાણ-સામાન્ય કી વિવક્ષા કી ગઈ છે । સિદ્ધોં  
મેં યદ્યપિ પાંચ-ઇન્દ્રિય આદિ દસ પ્રકાર કે દ્રવ્યપ્રાણ નહીં છે, તથાપિ ભાવ-પ્રાણ  
પાયે જાતે છે, ઓર હન ભાવ-પ્રાણોં કે કારણ સિદ્ધ ભગવાન્ કા જીવપન સિદ્ધ હો  
જાતા છે । વિશિષ્ટ પ્રકાર કે પ્રાણોં કા સમ્બન્ધ હોને પર જીને વાલે કો  
જીવ કહતે છે ।

પ્રાણ દો પ્રકાર કે છે—(૧) દ્રવ્યપ્રાણ ઓર (૨)—ભાવપ્રાણ । દ્રવ્યપ્રાણોં કે

જીવાસ્તિકાય—

જીવ શબ્દનો અર્થ—

જે જીવે છે અર્થાત્ પ્રાણોને ધારણ કરે છે, તે જીવ કહેવાય છે. ‘ સિદ્ધોમાં  
પ્રાણોનો અભાવ હોવાથી તે અજીવ થઈ જશે, એમ કહેવું તે ઠીક નથી. ‘ જે  
પ્રાણોને ધારણ કરે છે ’ એમ કહેવામાં પ્રાણ-સામાન્યની વિવક્ષા કહી છે. સિદ્ધોમાં  
જે કે પાંચ ઇન્દ્રિયો આદિ દસ પ્રકારના દ્રવ્ય-પ્રાણ નથી, તે પણ ભાવ-પ્રાણ  
હોય છે, અને તે ભાવ-પ્રાણોના કારણે સિદ્ધ ભગવાનનું જીવપણું સિદ્ધ થાય છે.  
વિશિષ્ટ પ્રકારના પ્રાણોનો સંબંધ હોવાના કારણે જીવવા વાળાને જીવ કહે છે.

પ્રાણ બે પ્રકારના છે—(૧) દ્રવ્ય-પ્રાણ અને (૨) ભાવ-પ્રાણ, દ્રવ્ય પ્રાણોના

इन्द्रियपंचकम् ५, मनोवाक्कायबलत्रयम् ३, आसोच्छ्वासरूपः १, आयुश्चेति १ । एते दश प्राणाः संसारिणां यथासंभवं भवन्ति । नारकतिर्यगादयः संसारिणो द्रव्यप्राणैरपि प्राणिनः । व्यपगतसमस्तकर्मसम्बन्धाः सिद्धास्तु केवलभावप्राणैरेव प्राणिनः सन्ति । भावप्राणाश्चतुर्विधाः—अनन्तज्ञानम् १, अनन्तवीर्यम् २, अनन्तसुखम् ३, अनाद्यनन्तस्थितिश्च ४ । तत्रानन्तज्ञानात् क्षयोपशमिकपञ्चेन्द्रियाणि, अनन्तवीर्यरूपभावप्राणस्यानन्तांशेन मनोवाक्कायबलत्रयम्, अनन्तसुखाच्च—आसोच्छ्वासरूपः प्राणः समुद्भवति, तथा अनाद्यनन्तस्थितिरूप—भावप्राणतः सादिसान्तरूप आयुःप्राणो जायते । एवं द्रव्यप्राणानां कारणं भावप्राणा इत्यवधेयम् ।

दशभेद हैं—पांच इन्द्रियाँ ५, तीन बल—मनोबल, वचनबल और कायबल ३, आसोच्छ्वास १ तथा आयु १, ये दश द्रव्यप्राण यथासम्भव संसारी जीवों के होते हैं । नारकी, तिर्यच आदि संसारी जीवों में भी द्रव्यप्राण पाये जाते हैं, किन्तु सब प्रकार के कर्म—संबंध से रहित सिद्धों में सिर्फ भावप्राण ही होते हैं । सिद्ध जीव भावप्राणों के कारण ही प्राणी कहलाते हैं ।

भाव प्राणके चार भेद हैं—अनन्तज्ञान १, अनन्तवीर्य २, अनन्तसुख ३, और अनादिअनन्तस्थिति ४ । क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाली पांच इन्द्रियाँ अनन्त ज्ञान का विकार ( वैभाविक परिणमन ) है, मन, वचन और काय—बल, अनन्तवीर्यरूप भावप्राणका विकार है, आसोच्छ्वास अनन्तसुखरूप भावप्राणका विकार है, और सादिसान्त आयुरूप द्रव्यप्राण अनादि—अनन्तस्थितिरूप भावप्राणका विकार है । इस प्रकार भावप्राण द्रव्यप्राणों के कारण हैं ।

दस ભેદ છે—પાંચ ઇન્દ્રિયો ૫, ત્રણ બળ અર્થાત્ મનોબલ, વચનબલ અને કાયલબ ૩, આસોચ્છ્વાસ ૧, તથા આયુ ૧, આ દસ દ્રવ્યપ્રાણુ સાધારણ રીતે સંસારી જીવોને હોય છે. નારકી તિર્યચ આદિ સંસારી જીવોમાં પણ દ્રવ્યપ્રાણુ દેખાય છે, પરંતુ સર્વ પ્રકારના કર્મ—સંબંધથી રહિત સિદ્ધોમાં માત્ર ભાવપ્રાણુ જ હોય છે, સિદ્ધ જીવ ભાવપ્રાણુના કારણથી જ પ્રાણી કહેવાય છે.

ભાવપ્રાણુના ચાર ભેદ છે—અનન્તજ્ઞાન, અનન્તવીર્ય, અનન્ત સુખ અને અનાદિ-અનન્ત સ્થિતિ, ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થવા વાળી પાંચ ઇન્દ્રિયો અનન્ત જ્ઞાનનો વિકાર (વૈભાવિક પરિણમન) છે, મન, વચન અને કાયલબ, અનન્ત વીર્યરૂપ ભાવ પ્રાણુનો વિકાર છે, આસોચ્છ્વાસ તે અનન્તસુખરૂપ ભાવપ્રાણુનો વિકાર છે; અને સાદિ-સાન્ત આયુરૂપ દ્રવ્યપ્રાણુ, અનાદિ અનન્ત સ્થિતિરૂપ ભાવપ્રાણુનો વિકાર છે. એ પ્રમાણે ભાવપ્રાણુ, દ્રવ્યપ્રાણુના કારણ છે.

અથ જીવસ્ય સ્વરૂપમ્—

ઔપશમિકાદિભાવવાન્ , અસંખ્યાતપ્રદેશી, પરિણામી, લોકાકાશવ્યાપી પ્રદીપવત્ સંકોચવિકાસશીલઃ, વ્યક્તિરૂપેણાનન્તોઽસ્વખંડઃ, ક્રિયાશીલઃ, પ્રદેશ-સમુદાયરૂપો, નિત્યો, રૂપરહિતોઽવસ્થિતોઽમૂર્તઃ સન્નપિ સંસારાવસ્થાયાં મૂર્ત ઇવ પ્રતીયમાનઃ, ઊર્ધ્વગતિશીલ આત્મા જીવઃ ।

અથ ભાવસ્તદ્વેદાશ્ચ—

‘અર્થોપશમિકાદિભાવવાન્ જીવઃ’ ઇત્યુક્તમ્, તત્ર કસ્તાવજ્ઞાવઃ ? શ્રૂયતામ્—આત્મપર્યાયાણામવસ્થૈવ ભાવાઃ । આત્મપર્યાયાશ્ચાવસ્થાભેદેન વિવિધરૂપા

જીવ કા સ્વરૂપ—

ઔપશમિક આદિ ભાવોવાળા, અસંખ્યાતપ્રદેશી, પરિણામી, પ્રદીપપ્રભાકે સમાન સંકોચ-વિકાસ સ્વભાવ વાળા, વ્યક્તિરૂપ સે અનંતસંખ્યક, ક્રિયાશીલ, પ્રદેશસમુદાયરૂપ, નિત્ય, અરૂપી, અવસ્થિત, અમૂર્ત હોને પર મી સંસારી અવસ્થા મેં મૂર્ત જૈસા પ્રતીત હોને વાળા, ઊર્ધ્વગમનસ્વભાવવાળા આત્મા જીવ કહલાતા હૈ ।

ભાવ ઔર ભાવ કે ભેદ—

પ્રશ્ન—જીવ કા સ્વરૂપ બતલાતે હુએ ઉસે ઔપશમિક આદિ ભાવો વાળા કહા હૈ સો ભાવ કયા વસ્તુ હૈ ?

ઉત્તર—મુનિયે, આત્મા કે પર્યાયો કી અવસ્થા હી ભાવ કહલાતી હૈ । આત્મા કે પર્યાય, અવસ્થાઓ કે ભેદ સે નાના પ્રકાર કે હોતે હૈ, અતઃ આત્મપર્યાયવર્તી ભાવ

જીવનું સ્વરૂપ

ઔપશમિક આદિ ભાવો વાળા, અસંખ્યાતપ્રદેશી, પરિણામી. પ્રદીપપ્રભાના સમાન સંકોચ-વિકાસ સ્વભાવવાળા, વ્યક્તિરૂપથી અનંતસંખ્યક, ક્રિયાશીલ, પ્રદેશ સમુદાયરૂપ, નિત્ય, અરૂપી, અવસ્થિત, અમૂર્ત હોવા છતાંય સંસારી અવસ્થામાં મૂર્ત જેવા દેખાવાવાળા, ઊર્ધ્વગમન સ્વભાવવાળા આત્મા જીવ કહેવાય છે.

ભાવ અને ભાવના ભેદ—

પ્રશ્ન—જીવનું સ્વરૂપ બતાવતા થકા તેને ઔપશમિક આદિ ભાવોવાળા કહેલ છે; તે ભાવ શું વસ્તુ છે ?

ઉત્તર—સાંભળો, આત્માના પર્યાયોની અવસ્થા જ ભાવ કહેવાય છે. આત્માની પર્યાય, અવસ્થાઓના ભેદથી નાના પ્રકારના હોય છે, તેથી આત્મપર્યાયવર્તી ભાવ પાંચ



भवन्ति, अत एवात्मपर्यायवर्त्ती भावः पञ्चविधो भवति—(१) औपशमिकः, (२) क्षायिकः, (३) क्षायोपशमिकः, (४) औदयिकः, (५) पारिणामिकश्चेति ।

(१) औपशमिकभावः—

(१) मोहनीयकर्मणो भस्मावच्छन्नवद्विदनुद्रेकावस्था, प्रदेशतोऽप्यु-  
दयाभावश्च उपशमः । उद्रेकरूपेण प्रदेशरूपेण च द्विविधस्याप्युदयस्य यथाशक्ति  
निरोधः । इत्थम्भूतश्चोपशमः सर्वोपशम उच्यते । उपशमेन निर्वृत औपशमिकः—  
क्रोधादिकषायोदयाभावरूपोपशमस्य फलरूपो जीवस्य परमशान्तावस्थालक्षण-  
परिणामविशेषः । स चात्मनः शुद्धिविशेषः । यथा—कतकचूर्णप्रक्षेपेण पङ्कादि-

પાંચ પ્રકારકા હૈ—(૧)—ઔપશમિક, (૨)—ક્ષાયિક, (૩)—ક્ષાયોપશમિક, (૪)—ઔદયિક  
और (५)—पारिणामिक ।

(१) औपशमिक भाव—

રાસ સે ઢેંકી હુઈ અગ્નિ કે સમાન મોહનીય કર્મ કી અનુદ્રેક અવસ્થા, એવં  
પ્રદેશ કી અપેક્ષા મી ઉદય ન હોના ઉપશમ કહલાતા હૈ । અર્થાત્ ઉદ્રેકરૂપ સે, તથા  
પ્રદેશરૂપ સે—દોનો પ્રકાર કે ઉદય કા યથાશક્તિ રુકના ઉપશમ હૈ । ઇસ પ્રકાર કા  
ઉપશમ સર્વોપશમ કહલાતા હૈ । જો ઉપશમ સે હો ઉસે ઔપશમિક કહતે હૈ ।  
અર્થાત્ ક્રોધ આદિ કષાયો કે ઉદયાભાવરૂપ ઉપશમ કા ફલરૂપ જીવ, ઉસકા પરમશાન્ત  
અવસ્થારૂપ પરિણામ ઔપશમિક કહલાતા હૈ । યહ આત્મા કી એક પ્રકાર કી શુદ્ધિ હૈ ।  
જૈસે કિ—કતકચૂર્ણ ( નિર્મલીફલ કા ચૂરા ) તથા ફિટકડી આદિ કા ચૂરા ઢાલને સે જલકા

પ્રકારના છે (૧) ઔપશમિક (૨) ક્ષાયિક (૩) ક્ષાયોપશમિક (૪) ઔદયિક અને  
(૫) પારિણામિક.

(૧) ઔપશમિક ભાવ—

રાખથી ઢાંકેલા અગ્નિ સમાન મોહનીય કર્મની અનુદ્રેક અવસ્થા, એવં  
પ્રદેશની અપેક્ષા પણ ઉદય ન હોય તે ઉપશમ કહેવાય છે. અર્થાત્ ઉદ્રેકરૂપથી  
તથા પ્રદેશરૂપથી—બંને પ્રકારના ઉદયનું યથાશક્તિ રોકવું તે ઉપશમ છે. આ  
પ્રકારનો ઉપશમ સર્વોપશમ કહેવાય છે. જે ઉપશમથી હોય તેને ઔપશમિક કહે  
છે. અર્થાત્ ક્રોધ આદિ કષાયોના ઉદયાભાવરૂપ ઉપશમના ફલરૂપ જીવ, તેના  
પરમ શાન્ત અવસ્થારૂપ પરિણામ ઔપશમિક કહેવાય છે.

એ આત્માની એક પ્રકારની શુદ્ધિ છે; જેમકે કતકચૂર્ણ ( નિર્મલીફલનું ચૂર્ણ ) તથા

મલનિવયસ્યાધોદેશે નિપાતે સતિ જલસ્ય સ્વચ્છતા । મોહનીયકર્મણ ઉપશમાદ્  
યદ્ દર્શનં શ્રદ્ધાનરૂપં, ચરણં વા વિરતિરૂપં જાયતે તદપ્યૌપશમિકશબ્દેનોચ્યતે ।

(૨) ક્ષાયિકભાવઃ—

(૨) સકલકર્મણામત્યન્તોચ્છેદઃ ક્ષયઃ, ક્ષયેણ નિર્વૃત્તઃ ક્ષાયિકઃ—  
અપ્રતિપાતિ—જ્ઞાનદર્શનચારિત્રલક્ષણો જીવસ્ય પરિણતિવિશેષઃ । સ ચાત્મનઃ  
પરમવિશુદ્ધિઃ । યથા—સર્વથા નિઃશેષપટ્ટાદિમલવ્યપગમે જલસ્ય પરમસ્વચ્છતા ।

કીચડ આદિ મૈલ નીચે વેઠ જાતા હૈ, ઔર જલ સ્વચ્છ હો જાતા હૈ । મોહનીય કર્મ કે  
ઉપશમ સે શ્રદ્ધાનરૂપ જો દર્શન ઉત્પન્ન હોતા હૈ, યા વિરતિરૂપ જો ચારિત્ર ઉત્પન્ન હોતા હૈ,  
વહ ઔપશમિક સમ્યગ્દર્શન ઔર ઔપશમિક ચારિત્ર કહલાતા હૈ ।

(૨) ક્ષાયિક ભાવ—

કર્મ કા અત્યન્ત ઉચ્છેદ હો જાના ક્ષય કહલાતા હૈ । ક્ષય સે હોને વાલા ભાવ  
ક્ષાયિક ભાવ હૈ । અર્થાત્ એક વાર ઉત્પન્ન હો કર ફિર નષ્ટ ન હોને વાલે જ્ઞાન, દર્શન  
ઔર ચારિત્ર રૂપ જીવ કે પરિણામ કો ક્ષાયિક ભાવ કહતે હૈ । ક્ષાયિક અવસ્થા જીવ કો  
પરમ વિશુદ્ધિ હૈ, જૈસે—પૂર્ણ રૂપ સે સમસ્ત કીચડ આદિ મૈલ કે હટ જાને પર જલ કો  
પરમ સ્વચ્છતા હોતી હૈ ।

ફટકડી આદિનું ચૂર્ણ નાખવાથી કચરો અને મેલ નીચે ઘેસી જાય છે, અને જલ સ્વચ્છ  
થાય છે. મોહનીય કર્મના ઉપશમથી શ્રદ્ધારૂપ જે દર્શન ઉત્પન્ન થાય છે. અથવા  
વિરતિરૂપ જે ચારિત્ર ઉત્પન્ન થાય છે, તે ઔપશમિક સમ્યગ્દર્શન અને ઔપશમિક  
ચારિત્ર કહેવાય છે.

(૨) ક્ષાયિક ભાવ—

કર્મનો અત્યન્ત ઉચ્છેદ થઈ જવો તે ક્ષય કહેવાય છે. ક્ષયથી થવાવાળો ભાવ  
ક્ષાયિક ભાવ છે. અર્થાત્ એકવાર ઉત્પન્ન થઈને ફરી નાશ નહિ થવાવાળો જ્ઞાન,  
દર્શન અને ચારિત્રરૂપ જીવના પરિણામને ક્ષાયિક ભાવ કહે છે. ક્ષાયિક અવસ્થા  
જીવની પરમ વિશુદ્ધિ છે. જેમ—પૂર્ણરૂપથી સમસ્ત કીચડ—કાદવ આદિ મેલના દૂર  
થવાથી જલની પરમ સ્વચ્છતા થાય છે.

(३) क्षायोपशमिक-भावः—

(३) मिथ्यात्वमोहनीयादिकर्मणामुदीर्णस्यांशस्य नाशः-क्षयः, अनुदीर्ण-स्यांशस्य विपाकोन्मुखत्वाभावः-उपशमः, यत्र एतद्वयं स क्षयोपशमः, स एव क्षायोपशमिकः । अस्य भावस्य 'मिश्रः' इति नामान्तरम् । ईषद्विध्यातावच्छन्न-वह्निवद् । यद् उदयावलिकाप्रविष्टं कर्म, तत् क्षीणम्, ततोऽवशिष्टं कर्म, उद्रेक-क्षयोभयरहितावस्थम्, इमामुभयीमवस्थामवलम्ब्य क्षायोपशमिको भावः प्रजायते ।

(४) औदयिकभावः—

(४) कर्मविपाकाविर्भाव उदयः । तेन निर्वृत्तो भाव औदयिकः । स

(३) क्षायोपशमिक भाव—

मिथ्यात्वमोहनीय आदि कर्मों के उदीर्ण (उदय में आये हुए) अंश का नाश होना क्षय है । और अनुदीर्ण अंश का फल देने में उन्मुख न होना उपशम है । इन्हीं दोनों अवस्थाओं को क्षायोपशमिक भाव कहते हैं । इस भाव का दूसरा नाम 'मिश्रभाव' भी है । थोड़ी बुझी हुई और ढंकी हुई अग्नि के समान जो कर्म उदयावलिका में आचुके हैं उनका क्षय होना, तथा शेष कर्मों का उद्रेक और क्षय—दोनों अवस्थाओं से रहित होना, इन दोनों के आधार पर क्षायोपशमिक भाव उत्पन्न होता है ।

(४) औदयिक भाव—

कर्म का विपाक (फल) देना उदय कहलाता है । उदय से होनेवाला

(३) क्षायोपशमिक भाव—

મિથ્યાત્વ મોહનીય આદિ કર્મોના ઉદીર્ણ (ઉદયમાં આવેલા) અંશનો નાશ થવો તે ક્ષય છે, અને અનુદીર્ણ અંશનું ફલ દેવામાં ઉન્મુખ—તે તરફ નહિ થવું તે ઉપશમ છે, એ બંને અવસ્થાઓને ક્ષાયોપશમિક ભાવ કહે છે. આ ભાવનું બીજું નામ 'મિશ્રભાવ' પણ છે. થોડી થોડી ઠંડી થયેલી અને ઢાંકેલી અગ્નિ પ્રમાણે જે કર્મ ઉદયાવલિમાં આવી ચૂક્યાં છે તેનો ક્ષય થવો, તથા શેષ કર્મોનો ઉદ્રેક અને ક્ષય, બંને અવસ્થાઓથી રહિત થવું, આ બંનેનાં આધાર ઉપર ક્ષાયોપશમિક ભાવ ઉત્પન્ન થાય છે.

(૪) ઔદયિક ભાવ—

કર્મનો વિપાક (ફલ) મળવું તે ઉદય કહેવાય છે. ઉદયથી ઉત્પન્ન થવાવાળો ભાવ તે ઔદયિક છે. ઔદયિક ભાવ આત્માની મલિનતા રૂપ છે. જેમકે કીચડ—



ચાત્મનો માલિન્યમ્, યથા પદ્મસંગાજ્જલસ્ય માલિન્યં । તથા-નરકગત્યાદિનામ-કર્મણો વિપાકાવિર્ભાવાન્નરકગત્યાદ્યાશ્ચ ઔદયિકો ભાવઃ । કષાયમાહનીયકર્મણો વિપાકાવિર્ભાવાચ્ચ 'ક્રોધી,-માની' -ત્યાદિરૌદયિકો ભાવઃ । એવં સર્વત્રૌદયિકો ભાવઃ સમાલોચનીયઃ ।

#### (૫) પરિણામિક-ભાવઃ—

(૫) પરિણમનં-સર્વથા-અપરિત્યક્તપૂર્વાવસ્થસ્ય રૂપાન્તરેણ ભવનં-પરિણામઃ, સ એવ પારિમાણિકઃ । અત્ર સ્વાર્થે ઠક્ પ્રત્યયઃ, ન તુ નિર્વૃત્ત્યર્થે, જીવસ્યાદિમત્ત્વાપત્તેઃ । યદિ 'પરિણામેન નિર્વૃત્તઃ' ઇત્યર્થે પારિણામિકો જીવ ઇતિ મન્યતે, તદા પ્રાગવસ્થા-

ભાવ ઔદયિક હૈ । ભાવ આત્મા કા માલિન્યરૂપ હૈ, જૈસે કિ કીચડ કે સંસર્ગ સે જલ મેં મલિનતા આ જાતી હૈ । નરકગતિનામકર્મ આદિ કે ઉદય સે નરક ગતિ આદિ ઔદયિક ભાવ કહલાતે હૈ । કષાયમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ક્રોધ, માન આદિ ઔદયિક ભાવ હોતે હૈ । હસી પ્રકાર સમી જગહ ઔદયિક ભાવ કા વિચાર કર લેના ચાહિયે ।

#### (૫) પારિણામિક ભાવ—

પૂર્વ અવસ્થા કા સર્વથા ત્યાગ ન કર કે રૂપાંતર મેં હોના પરિણામ હૈ, ઓર વહી પારિણામિક કહલાતા હૈ । યહાં સ્વાર્થમે ઠક્ પ્રત્યય હુઆ હૈ, ન કિ નિર્વૃત્તિ અર્થ મેં, નિર્વૃત્તિ અર્થ મેં પ્રત્યય હોનેસે જીવકા આદિમાન્ હોનેકા પ્રસન્ન આજાતા હૈ । યદિ—“પરિણામેન નિર્વૃત્તિઃ પારિણામિકઃ-જીવઃ” અર્થાત્ પરિણામસે હોનેવાલા પારિણામિક-જીવ કહલાતા હૈ, એસી વ્યુત્પત્તિ માનલી જાય તો 'કિસી પૂર્વ કાલમેં જીવ નહીં થા વહ અવ હુઆ હૈ' હસ

કાદવના સંસર્ગથી જલમાં મલિનતા આવી જાય છે. નરકગતિ નામ-કર્મ આદિના ઉદયથી નરકગતિ આદિ ઔદયિક ભાવ કહેવાય છે. કષાય-મોહનીય કર્મના ઉદયથી ક્રોધ, માન આદિ તે ઔદયિક ભાવ છે. આ પ્રમાણે તમામ સ્થળે ઔદયિક ભાવનો વિચાર કરી લેવો.

#### (૫) પારિણામિક ભાવ—

પૂર્ણ અવસ્થાનો સર્વથા ત્યાગ નહિ કરતાં રૂપાંતર થવું તે પરિણામ છે, અને પરિણામ તેજ પારિણામિક કહેવાય છે. અહીં સ્વાર્થમાં ઠક્ પ્રત્યય થયો છે પરંતુ નિર્વૃત્તિ અર્થમાં નથી થયો. નિર્વૃત્તિ અર્થમાં પ્રત્યય થવાથી જીવનો આદિમાન્ (આદિવાળો) થવાનો પ્રસંગ આવી જાય છે. જો—“પરિણામેન નિર્વૃત્તઃ પારિણામિકઃ-જીવઃ” અર્થાત્ 'પરિણામથી થવાવાળો પારિણામિક જીવ કહેવાય છે' આવી વ્યુત્પત્તિ

યામનિર્વૃત્તો જીવો નિર્વૃત્તઃ સ્યાત્ । एवं चादिमच्चप्रसंगः । कथमसन् आकाश-  
कुसुमकल्प आत्माऽऽयत्यां संभवे ?-दिति युक्तिविरोधश्च ।

ન હિ પરિણામેન વિના કશ્ચિદ્ભાવો ભવતીતિ ભાવાનાં મધ્યે પરિણામસ્યૈવ  
પ્રાધાન્યમ્ । આત્મનઃ સ્વાભાવિકં સ્વરૂપપરિણમનમેવ પારિણામિકો ભાવ ઉચ્યતે ।  
યશ્ચાત્મનઃ સત્તયા સ્વયમેવ પરિણામો ભવતિ, સ એવ પારિણામિકો ભાવઃ । ઉક્તશ્ચ-

“યઃ કર્તા કર્મભેદાનાં, ભોક્તા કર્મફલસ્ય ચ ।

સંસર્તા પરિનિર્વાતા, સ હ્યાત્મા નાન્યલક્ષણઃ ॥ ૧ ॥”

અષ્ટવિધકર્મણાં કર્તા, કર્મફલભોક્તા, ચતુર્ગતિભ્રમણકર્તા, કર્મક્ષયકરણેન  
મોક્ષગન્તા યઃ, સ એવાત્મા, અન્યરૂપો નેત્યર્થઃ ।

પ્રકાર જીવકો સાદિ (આદિવાલ) માનના પડેગા, પરંતુ એસા હો નહીં સકતા, ક્યોંકિ-  
જો આત્મા ભૂતકાલમેં નહીં થા તો આકાશપુષ્પકે સમાન ભવિષ્યત્ કાલમેં ઉસકા હોના  
કૈસે સંભવ હો સકતા હૈ ? । ઇસ પ્રકાર યુક્તિસે મી વિરોધ આતા હૈ ।

વિના પરિણામ કે કોઈ ભાવ નહીં હો સકતા અતઃ ભાવોમેં પરિણામકી  
પ્રધાનતા હૈ । આત્મા કા સ્વાભાવિક પરિણમન હી ‘પારિણામિક’ ભાવ કહલાતા હૈ, અર્થાત્  
આત્મા કા જો અનાદિપરિણમનસત્તા કા કારણ હૈ ઉસે પારિણામિક ભાવ સમજના  
ચાહિય્ । કહા મી હૈ :-

“જો કર્મ કે ભેદોં કા કર્તા હૈ, જો કર્મફલ કા ભોક્તા હૈ । સંસારભ્રમણ  
કરને વાલા હૈ, નિર્વૃત્તિ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કરને વાલા હૈ વહી આત્મા હૈ, આત્મા કા અન્ય  
લક્ષણ નહીં હૈ ॥૧॥

માનવામાં આવે તો ‘પૂર્વકાળમાં જીવ નહિ હતો તે હવે થયો છે.’ આ પ્રકારે  
જીવને સાદિ (આદિવાળો) માનવો પડશે, પરંતુ એમ થઈ શકે નહિ, કારણ કે-જે  
જીવ ભૂતકાળમાં નહીં હતો ત્યારે તેનું આકાશપુષ્પની સમાન ભવિષ્યત્ કાળમાં  
થવું કેમ સંભવે ? એમ યુક્તિથી પણ વિરોધ આવે છે.

વગર પરિણામે કોઈ પણ ભાવ નથી થઈ શકતો, એટલા માટે ભાવોમાં  
પરિણામની પ્રધાનતા છે. આત્માનું સ્વાભાવિક પરિણમન જ પારિણામિક ભાવ કહેવાય  
છે. અર્થાત્ આત્માની અનાદિપરિણમનસત્તાનું જે કારણ છે, તેને પારિણામિક ભાવ  
સમજવું જોઈએ કહ્યું પણ છે—

“જે કર્મના ભેદોના કર્તા છે, જે કર્મના ફળનો ભોક્તા છે; સંસારભ્રમણ  
કરવાવાળો છે, નિર્વૃત્તિ (મોક્ષ) પ્રાપ્ત કરવા વાળો છે તે આત્મા છે. આત્માનું  
બીજું લક્ષણ નથી.” ॥૧॥

### જીવસ્ય સ્થિતિક્ષેત્રમ્—

લોકાકાશસ્યાઽસંખ્યાતભાગતઃ સમારમ્ય, સમસ્તલોકાકાશે જીવોઽવગાહતે । જીવપ્રદેશાનાં પ્રદીપવત્ સંકોચવિસ્તારસ્વભાવત્વાત્ । આત્મનઃ પરિમાણં ન ગગન-વન્મહત્, નાપિ પરમાણુવદણુ, કિન્તુ મધ્યમમ્ ।

યદ્યપિ પ્રદેશસંખ્યાપેક્ષ્યા સમાનમેવ સર્વેષામાત્મનાં સ્વસ્વપરિમાણમ્, તથાપિ દૈર્ઘ્ય-વિસ્તારાદિ સર્વેષાં વિસદૃશમેવ । અતઃ પ્રત્યેકજીવસ્યાઽધારક્ષેત્રં જઘન્યતો લોકાકાશસ્યાઽસંખ્યાતભાગતઃ સમારમ્ય સમગ્રભાગપર્યન્તં ભવિતુમ-

### જીવ કા સ્થિતિક્ષેત્ર—

લોકાકાશ કે અસંખ્યાતવે ભાગ સે લેકર સમ્પૂર્ણ લોકાકાશ મેં જીવ કા અવગાહન હો સકતા હૈ । કારણ યહ હૈ કિ-જીવ કે પ્રદેશ દીપક કી પ્રમા કે સમાન સંકોચ-વિસ્તાર સ્વભાવ વાલે હૈ, અર્થાત્ કમી સિકુડ જાતે હૈં ઔર કમી ફૈલ જાતે હૈં । આત્મા કા પરિમાણ ન તો આકાશ કે સમાન મહાન્ (સર્વવ્યાપી) હૈ ઔર ન પરમાણુ કે બરાબર હી હૈ કિન્તુ આત્મા મધ્યમ પરિમાણ વાલો હૈ ।

પ્રદેશોં કી સંખ્યા કી અપેક્ષા સમસ્ત આત્માઓં કા પરિમાણ બરાબર હૈ, અર્થાત્ સબ આત્મા લોકાકાશ કે બરાબર અસંખ્યાતપ્રદેશ વાલે હૈં કિન્તુ પ્રાપ્ત શરીર કે અનુસાર અનેક વિસ્તાર મેં (પરિમાણ મેં) અન્તર પડજાતા હૈ, અતઃ પ્રત્યેક

### જીવનું સ્થિતિક્ષેત્ર—

લોકાકાશના અસંખ્યાતમા ભાગથી લઈને સંપૂર્ણ લોકાકાશમાં જીવનું અવગાહન થઈ શકે છે. કારણ એ છે કે—જીવના પ્રદેશ દીપકની પ્રભાની સમાન સંકોચ-વિસ્તાર સ્વભાવવાળો છે, અર્થાત્ કોઈ વખત સંકુચાઈ જાય છે અને કોઈ વખત ફેલાઈ જાય છે. આત્માનું પરિમાણ આકાશપ્રમાણે મહાન નથી. અને પરમાણુના બરાબર પણ નથી પરંતુ આત્મા મધ્યમ પરિમાણ વાળો છે.

પ્રદેશોની સંખ્યાની અપેક્ષાએ સમસ્ત આત્માનું પરિમાણ બરાબર છે. અર્થાત્ સર્વ આત્મા લોકાકાશના બરાબર અસંખ્યાત પ્રદેશવાળો છે, પરંતુ પ્રાપ્ત શરીરના અનુસાર તેના વિસ્તારમાં (પરિમાણમાં) અંતર પડી જાય છે. તેટલા કારણથી પ્રત્યેક જીવનો આધાર-ક્ષેત્ર લોકાકાશના અસંખ્યાતમા ભાગથી લઈને સંપૂર્ણ લોક સુધી થઈ શકે છે.



હતિ । યદા જીવઃ કેવલિસમુદ્ઘાતાવસ્થાં પ્રાપ્નોતિ, તદા સમસ્તલોકાકાશમેક-  
જીવસ્યાધારક્ષેત્રં ભવતિ । સકલજીવરાશ્યપેક્ષ્યા તુ જીવાનામાધારક્ષેત્રં સંપૂર્ણમેવ  
લોકાકાશમ્ ।

લોકાકાશસ્યાઽસંખ્યાતભાગે જીવસ્ય સ્થિતિરિત્યત્રાઽઽગમવચનં યથા—

“સદ્ગુણેણ લોયસ્સ અસંખેજ્જહમાગે”

સ્વસ્થાનેન લોકસ્યાસંખ્યેયમાગે । (પ્રજ્ઞા ૦ ૨ પદે જીવસ્થાનાધિકારે )

નનુ પરિમાણસ્ય ન્યૂનાધિકત્વે કિં કારણમ્ ? ઉચ્યતે—જીવસ્થાનાદિકાલતો-  
ઽનન્તાનન્તાણુપ્રચયરૂપેણ કાર્મણ-શરીરેણ સમ્બન્ધાદેકસ્યૈવ જીવસ્ય પરિમાણં

જીવ કા આધારક્ષેત્ર લોકાકાશ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ સે લેકર સમ્પૂર્ણ લોકતક  
હો સકતા હૈ । જવ જીવ કેવલિસમુદ્ઘાત કરતા હૈ ઉસ સમય વહી એક જીવ સમ્પૂર્ણ  
લોકાકાશ મેં વ્યાપ્ત હો જાતા હૈ । સમસ્ત જીવરાશિ કી અપેક્ષાસે સમ્પૂર્ણ લોકાકાશ  
જીવોં કા આધારક્ષેત્ર હૈ ।

જીવ કા અવગાહ લોકાકાશ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં હોતા હૈ; ઇસ  
વિષય મેં આગમ કા પ્રમાણ ઇસ પ્રકાર હૈ—

“સદ્ગુણેણ લોયસ્સ અસંખેજ્જહમાગે” (પ્રજ્ઞાપના ૨ પદ જીવસ્થાનાધિકાર)  
સ્વસ્થાન કી અપેક્ષા લોક કે અસંખ્યાતવેં ભાગ મેં (જીવ કી સ્થિતિ હૈ) ।

શંકા—જીવોં કે પરિમાણ કી ન્યૂનાધિકતા કા ક્યા કારણ હૈ ?

સમાધાન—અનન્તાનન્ત પરમાણુઓં કે પ્રચયરૂપ કાર્મણ શરીર કે સાથ  
ન્યારે જીવ કેવલિસમુદ્ઘાત કરે છે, તે સમય તે એક જીવ સંપૂર્ણ લોકાકાશમાં  
વ્યાપ્ત થઈ જાય છે. સમસ્ત જીવરાશિની અપેક્ષાથી સંપૂર્ણ લોકાકાશ જીવોં  
આધારક્ષેત્ર છે.

જીવનો અવગાહ લોકાકાશના અસંખ્યાતમા ભાગમાં હોય છે. આ વિષયમાં  
આગમનું પ્રમાણ આ પ્રમાણે છે—

“સદ્ગુણેણ લોયસ્સ અસંખેજ્જહમાગે” સ્વસ્થાનની અપેક્ષા લોકના અસંખ્યાતમા  
ભાગમાં (જીવની સ્થિતિ છે) પ્રજ્ઞાપના, ૨ પદ જીવસ્થાનાધિકાર )

શંકા—જીવોના પરિણામની ન્યૂનાધિકતાનું શું કારણ છે ?

સમાધાન—અનન્તાનન્ત પરમાણુઓના પ્રચય (સમૂહ) રૂપ કાર્મણ શરીર

બહુનાં વા જીવાનાં પરિમાણં વિવિધં જાયતે । કાર્મણ-શરીરં હિ સર્વદાઽનેક-  
રૂપેણાવતિષ્ઠતે । તત્સમ્બન્ધાદૌદારિકાદ્યપિ શરીરં તદનુસારિ ન્યૂનાધિક-  
પરિમાણભાગ્ ભવતિ ।

જીવસ્ય મૂર્તવદ્ હાસવૃદ્ધિઃ—

વસ્તુતો રૂપરહિતોઽપિ જીવઃ શરીરસમ્બન્ધાન્યૂનાધિકપરિમાણં  
દધન્મૂર્તે ઇવાપચયોપચયૌ પ્રાપ્નોતિ । સ હિ સ્વભાવતઃ પ્રદીપવન્નિમિત્તમાસાદ્ય  
સંકોચવિકાશશીલઃ સ્વાશ્રયમાત્રેઽવભાસતે । યથા—કલશે પ્રાસાદપ્રદેશે નિરા-

અનાદિ કાલ સે જીવ કા સમ્બન્ધ હૈ । ઇસ સમ્બન્ધ કે કારણ એક હી જીવ કા  
અનેક કાલોં મેં, ઔર અનેક જીવોં કા એક હી કાલ મેં બિન્નર પ્રકાર કા પરિમાણ  
હોતા હૈ । કાર્મણ શરીર સદા વિભિન્ન રૂપોં મેં પરિણમન કરતા રહતા હૈ । ડસકે સંયોગ સે  
ઔદારિક આદિ શરીર મી કાર્મણ શરીર કે અનુસાર ન્યૂનાધિકપરિમાણવાલે હોતે હૈ ।

જીવ કી હાસ-વૃદ્ધિ—

જીવ વાસ્તવ મેં અરૂપી હૈ, ફિર મી શરીર કે સાથ સમ્બન્ધ હોને કે કારણ  
વહ છોટે-મોટે પરિમાણ કો ધારણ કરતા હૈ, અતઃ ડસ મેં મૂર્ત પદાર્થ કી મૌતિ અપચય  
( હાસ ) ઔર ઉપચય ( વૃદ્ધિ ) હોતા હૈ । સ્વભાવ સે સંકોચ વિકાસવાલા જીવ નિમિત્ત  
પાકર દીપક કી તરહ અપને આશ્રય ( શરીર ) મેં પ્રતિભાસિત હોતા હૈ । જૈસે ઘટ મેં,

સાથે અનાદિ કાલથી જીવનો સંબંધ છે; એ સંબંધના કારણે એકજ જીવના અનેક  
કાલોમાં, અને અનેક જીવોના એકજ કાલમાં ભિન્ન ભિન્ન પ્રકારનું પરિમાણ થાય છે.  
કાર્મણ શરીર સહાય વિભિન્ન રૂપોમાં પરિણમન કરી રહે છે, તેના સંયોગથી  
ઔદારિક આદિ શરીર પણ કાર્મણ શરીર પ્રમાણે ન્યૂનાધિક પરિમાણવાળા હોય છે.

જીવની હાસ વૃદ્ધિ—

જીવ વાસ્તવમાં અરૂપી છે, તે પણ શરીરની સાથે સંબંધ હોવાના કારણે તે  
નાના-મોટા પરિમાણને ધારણ કરે છે, તે કારણથી તેમાં મૂર્ત પદાર્થની જેમ અપચય  
( હાસ ) અને ઉપચય ( વૃદ્ધિ ) થાય છે. સ્વભાવથી સંકોચ-વિકાસવાળો જીવ નિમિત્ત  
પ્રાપ્ત કરી દીપકની પ્રમાણે પોતાના આશ્રય ( શરીર )માં પ્રતિભાસિત થાય છે—( દેખાય છે ).

ઘટાકાશે ચાવસ્થિતઃ પ્રકાશપુન્નરૂપઃ પ્રદીપઃ સ્વાશ્રયમાત્રાવભાસી ક્વચિત્  
સંકુચિતઃ ક્વચિત્ વિતતશ્ચ ભવતિ । અતઃ શરીરપરિમાણાનુસારં પરિમાણં દધાન  
આત્મા મૂર્ત ઇવ વિજ્ઞાયતે । ઉક્તશ્ચ રાજપ્રશ્નીયસૂત્રે—

“પણસી ! જહાણામણ-કૂટાગારશાલા સિયા જાવ ગંભીરા, અહ ણં કેઈ  
પુરિસે જોઈં વ દીવં વ” इत्यारभ्य “एवमेव पणसी ! जीवेवि जं जारिसयं  
पुण्वकम्मनिवद्धं बौद्धिं णिवत्तेइ तं असंखेज्जेहिं जीवणएसेहिं सच्चित्तं करेइ-खुड्डियं  
वा महालियं वा” इति पर्यन्तम् । सू० ८४ ॥ इति ॥

પ્રદેશિન્ તદ્ યથાનામકમ્-કૂટાગારશાલા સ્યાત્ યાવદ્ ગમ્ભીરા, અથ  
ખલુ કોઽપિ પુરુષઃ જ્યોતિર્વા દીપં વા (इत्यारभ्य) एवमेव प्रदेशिन् ! जीवोऽपि यां  
यादृशिकां पूर्वकर्मनिबद्धां बौद्धिं निर्वर्त्तयति तामसंख्येयैर्जीवप्रदेशैः सच्चित्तां करोति  
क्षुद्रिकां वा महालयां वा ।” इति च्छाया ।

મહલ મેં ઓર ખુલે આકાશ મેં રક્ષા હુઆ પ્રકાશ કા પુન્નરૂપ દીપક અપની જગહ પર  
માલમ્ હોતા હુઆ કહીં સંકુચિત્ હોતા હૈ ઓર કહીં વિસ્તૃત્ હોતા હૈ । ઇસી પ્રકાર  
શરીર કે પરિમાણ કે અનુસાર પરિમાણવાલા આત્મા મૂર્ત જૈસા માલમ્ હોતા હૈ । રાજપ્રશ્નીય  
સૂત્ર મેં કહા હૈ :—

“હે પ્રદેશી રાજા ! જૈસે કોઈ કૂટાગાર શાલા હો ઓરે વહ ( યાવત્ )  
ગંભીર હો ઓર કોઈ પુરુષ જોત યા દીપક ઉસ મેં રક્ષે તો વહ ઉસે પૂર્ણરૂપ સે  
પ્રકાશિત કરતા હૈ, ઇસી પ્રકાર હે પ્રદેશી ! આત્મા અપને પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કે અનુસાર  
જૈસા શરીર પાતા હૈ; ઉસે અસંખ્યાત આત્મપ્રદેશોં સે સજીવ બના દેતા હૈ, ચાહે  
વહ શરીર બડા હો ચાહે ક્ષુલ્લ (છોટા) હો” ।

જેવી રીતે ઘરમાં, મહેલમાં અને ખુલ્લા આકાશમાં રાખેલો પ્રકાશ-પુન્નરૂપ દીપક,  
પોતાની જગ્યાએ દેખાતો થકો કોઈ જગ્યાએ સંકુચિત હોય છે અને કોઈ જગ્યાએ  
વિસ્તૃત હોય છે. એ પ્રમાણે શરીરના પરિમાણ અનુસાર પરિમાણ વાળો આત્મા  
મૂર્ત જેવો દેખાય છે. રાજપ્રશ્નીય સૂત્રમાં કહ્યું છે —

“હે પરદેશી રાજા ! જેમ કોઈ કૂટાગાર શાળા હોય તે ( યાવત્ ) ગંભીર હોય  
અને કોઈ પુરુષ જ્યોત અથવા દીપક તેમાં રાખે તો તે એને પૂર્ણરૂપથી પ્રકાશિત  
કરે છે, એ પ્રમાણે હે પરદેશી ! આત્મા પોતાના પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં પ્રમાણે જેવું  
શરીર પ્રાપ્ત કરે છે, તેને અસંખ્યાત આત્મપ્રદેશોથી સજીવ બનાવી દે છે, તે  
શરીર ગમે તો મોટું હોય અથવા નાનું હોય.”



### જીવસ્ય-ઊર્ધ્વગતિ:—

સકલકર્મણાં ક્ષયે સતિ સપદિ જીવો મુક્તઃ સન્નૂર્ધ્વ ગચ્છતિ, ન ચ 'જીવસ્યામૂર્તત્વાદ્ ગતેરસંભવઃ' ઇતિ વાચ્યમ્, સ્વભાવતઃ એવ પુદ્ગલદ્રવ્યવદ્ જીવસ્ય ગતિશીલત્વાત્ ।

દિયાન્ વિશેષઃ પુદ્ગલેભ્યઃ—પુદ્ગલાઃ સ્વભાવાદધોગતિશીલાઃ, જીવાસ્તુ સ્વભાવા-  
દૂર્ધ્વગતિશીલાઃ । પ્રતિબંધકદ્રવ્યસજ્ઞાદ્ ઊર્ધ્વગમનસ્વભાવા જીવા અધસ્તિર્યગ્ વા  
ગચ્છન્તિ, ગન્તુમક્ષમા વા ભવન્તિ । તચ તદ્ગતિપ્રતિબન્ધકં કર્મૈવ । યદા સકલ—

### જીવ કી ઊર્ધ્વગતિ—

સકલ કર્મોં કા ક્ષય હોને પર તત્કાલ મુક્ત હુઆ જીવ ઊપર કી ઓર  
ગમન કરતા હૈ । 'જીવ અમૂર્ત હૈ ઓર ઇસ કારણ વહ ગતિ નહીં કર સકતા' ઇસા  
કહના ઠીક નહીં હૈ, ક્યોં કિ પુદ્ગલ-દ્રવ્ય કે સમાન જીવ સ્વભાવ સે હી ગતિશીલ હૈ ।

ગતિ કે વિષય મેં જીવ ઓર પુદ્ગલ મેં ઇતના મેદ હૈ—પુદ્ગલ અધોગતિશીલ હૈ  
ઓર જીવ ઊર્ધ્વગતિશીલ હૈ, અર્થાત્ પુદ્ગલોં કા સ્વભાવ નીચે જાને કા હૈ ઓર જીવ કા  
સ્વભાવ ઊપર કી ઓર જાને કા હૈ મગર રુકાવટ ઢાલને વાલે દ્રવ્યોં કે નિમિત્ત સે  
ઊર્ધ્વગતિશીલ જીવ મી નીચે કી ઓર અથવા તિરછા ગમન કરતા હૈ । યા કમી ગમન  
કરને મેં અસમર્થ હો જાતા હૈ । જીવ કી સ્વાભાવિક ગતિ કા પ્રતિબન્ધક (રુકાવટ  
ઢાલને વાલા) કર્મ હી હૈ । જબ સમસ્ત કર્મોં કા અત્યન્ત ઉચ્છેદ હો જાતા હૈ ઓર

### જીવની ઉર્ધ્વ ગતિ—

સકલ કર્મોંનો ક્ષય થયા પછી તત્કાલ મુક્ત થયેલો જીવ ઉપર તરફ ગમન  
કરે છે. 'જીવ અમૂર્ત છે, અને એ કારણથી તે ગતિ કરી શકતો નથી'—એમ  
કહેવું તે ઠીક નથી; કેમકે પુદ્ગલનો પ્રભાણે જીવ સ્વભાવથી જ ગતિશીલ છે.

ગતિના વિષયમાં જીવ અને પુદ્ગલમાં એટલો ભેદ છે:—પુદ્ગલ અધોગતિશીલ  
છે, અને જીવ ઊર્ધ્વગતિશીલ છે. અર્થાત્ પુદ્ગલોંનો સ્વભાવ નીચે જવાનો છે, અને  
જીવનો સ્વભાવ ઉપર તરફ જવાનો છે. પરંતુ તેમાં અંતરાય નાંખવાવાળા દ્રવ્યોના  
નિમિત્તથી ઊર્ધ્વગતિશીલ જીવ પણ નીચે તરફ અથવા તિરછા ગમન કરે છે. અથવા  
કોઈ વખત ગમન કરવામાં અસમર્થ થઈ જાય છે. જીવની સ્વાભાવિક ગતિનો  
પ્રતિબંધ (અટકાયત) કરનાર કર્મ જ છે. જ્યારે સકલ કર્મોંનો અત્યન્ત ક્ષય થઈ

કર્મણામત્યન્તોચ્છેદે સતિ કર્મસંજ્ઞાભાવાત્ કર્મબન્ધનોચ્છેદાચ્ચ નાસ્ત્યેવોર્ધ્વગતિ-  
પ્રતિબન્ધકં તદા સ્વસ્વભાવાનુસારેણોર્ધ્વગમનાવસરઃ સિદ્ધાનામુપતિષ્ઠતે ।

### જીવસ્ય લક્ષણમ્—

ઉપયોગવત્ત્વં જીવસ્ય લક્ષણમ્ । ઉપયુજ્યતે વસ્તુપરિચ્છેદં પ્રતિ વ્યાપાર્યતે  
જીવોજ્જનેત્યુપયોગઃ કરણે ઘર્ । બોધરૂપો વ્યાપાર ઉપયોગઃ । જ્ઞાનં, સંવેદનં,  
પ્રત્યયઃ, ઇતિ નામાન્તરાણિ ।

સામાન્યવિશેષરૂપબોધદ્વયદર્શનાન્નિશ્ચયો ભવતિ-વિદ્યતે ચ્ચ જીવઃ,  
યસ્યેમૌ સામાન્યવિશેષાવબોધૌ, ન ચ તાદૃશઃ કશ્ચિદસ્તિ જીવો, યસ્ય સાકા-  
કર્મો કા સંસર્ગ નહીં રહતા, કર્મબન્ધન કા ઉચ્છેદ હોને સે ઊર્ધ્વગતિ કા કોઈ  
પ્રતિબન્ધક નહીં રહતા, તવ સિદ્ધ જીવો કો ઊર્ધ્વ ગમન કા અવસર પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

### જીવ કા લક્ષણ—

જીવ કા લક્ષણ ઉપયોગ હૈ । જો જીવ કો વસ્તુ કે બોધ મેં વ્યાપૃત કરતા હૈ  
ઉપયુક્ત બનાતા હૈ ઉસે ઉપયોગ કહતે હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-બોધરૂપ વ્યાપાર ઉપયોગ  
કહલાતા હૈ । જ્ઞાન, સંવેદન, પ્રત્યય, યે ઉપયોગ કે પર્યાયવાચી શબ્દ હૈ ।

સામાન્ય બોધ (દર્શન) ઔર વિશેષ બોધ (જ્ઞાન) અનુભવસિદ્ધ હૈ । ઇન  
દોનોં બોધોં સે યહ નિશ્ચય હોતા હૈ કિ જીવ અવશ્ય હૈ; જિસ મેં યહ સામાન્ય ઔર  
વિશેષ બોધ પાયા જાતા હૈ । ઇસા કોઈ જીવ નહીં હૈ જિસ મેં સામાન્ય-બોધ (નિરાકાર  
બોધ છે, અને કર્મોનો સંસર્ગ રહેતો નથી, ત્યારે કર્મબંધનનો ક્ષય થવાથી ઉર્ધ્વગતિ  
થવામાં કોઈ પ્રતિબંધક (અંતરાય કરનાર) રહેતું નથી; ત્યારે સિદ્ધ જીવોને ઉર્ધ્વ-  
ગમન કરવાનો અવસર પ્રાપ્ત થાય છે.

### જીવનું લક્ષણ—

જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ છે, તે જીવને વસ્તુના બોધમાં વ્યાપૃત-વ્યાપારયુક્ત  
કરે છે. તાત્પર્ય એ છે કે-બોધરૂપ વ્યાપાર ઉપયોગ કહેવાય છે. જ્ઞાન, સંવેદન,  
પ્રત્યય, આ સર્વ ઉપયોગના પર્યાયવાચી શબ્દો છે,

સામાન્ય બોધ (દર્શન) અને વિશેષ બોધ (જ્ઞાન) અનુભવ સિદ્ધ છે. એ બંને  
બોધોથી એમ નિશ્ચય થાય છે કે-જીવ અવશ્ય છે, જેમાં આ સામાન્ય તથા  
વિશેષ બોધ બેવામાં આવે છે એવો કોઈ જીવ નથી કે જેમાં સામાન્ય બોધ

રાનાકારોપયોગો ન સ્તઃ । અત એવોક્તં ભગવતા—“જીવો ઉવઓગલક્ષણો” ઇતિ ।

લક્ષ્યતે-જ્ઞાયતેઽનેનેતિ લક્ષણમ્ । ઉપયોગો લક્ષણં યસ્ય સ ઉપયોગલક્ષણઃ ।  
જ્ઞાનાવગમ્યો જીવ ઇત્યર્થઃ ।

પૃથિવીકાયાદિસર્વસંસારિજીવાનાં બોધસ્પાનન્તતમો ભાગઃ સર્વદા પ્રકાશમાનોઽનાવૃત્તસ્તિષ્ઠત્યેવ । નહિ સકલલોકાન્તવર્તિનઃ પુદ્ગલાઃ કર્મરૂપતયા પરિણતા અપિ કસ્યાપિ જીવસ્ય સર્વતોભાવેન જ્ઞાનમાવરીતું પ્રભવન્તિ । યથા—અતિનિવિઢઘનઘટાઽઽચ્છાદિતસ્યાપિ સૂર્યસ્ય પ્રકાશલેશઃ પ્રકાશત એવ, નચ સર્વથા ઉપયોગ) ઓર વિશેષ બોધ ( સાકાર ઉપયોગ ) વિઢમાન ન હો, ઇસી કારણ ભગવાન્ને કહા હૈ—“જીવો ઉવઓગલક્ષણો” જીવ ઉપયોગ લક્ષણ વાલા હૈ ।

જિસ કે દ્વારા વસ્તુ લક્ષી જાય-જાતી જાય વહ લક્ષણ કહલાતા હૈ । ઉપયોગ જિસ કા લક્ષણ હો ડસે ઉપયોગલક્ષણ કહતે હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-જ્ઞાન લક્ષણ કે દ્વારા જીવ માલૂમ હોતા હૈ ।

પૃથિવીકાય આદિ સમસ્ત સંસારી જીવો કે જ્ઞાન કા અનન્તવાં ભાગ સદૈવ પ્રકાશમાન ઓર આવરણરહિત બના રહતા હૈ । સમ્પૂર્ણ લોકાકાશ કે પુદ્ગલ કદાચિત્ કર્મરૂપ મેં પરિણત હો જાઈ તો મી વહ કિસી ઁક જીવ કે જ્ઞાન કો પૂર્ણરૂપ સે આવૃત્ત નહીં કર સકતે । સૂર્ય ચાહે કિતની હી સઘન ઘનઘટા સે આચ્છાદિત ક્યોં ન હો જાઈ, ડસકા થોડા બહુત પ્રકાશ બના હી રહતા હૈ, પ્રકાશ કમી પરી તરહ (નિરાકાર ઉપયોગ) અને વિશેષ બોધ (સાકાર ઉપયોગ) વિઢમાન ન હોય, એ કારણથી લગવાને કહ્યું છે કે:—“જીવો ઉવઓગલક્ષણો” એવ ઉપયોગ લક્ષણવાળો છે.

જેના દ્વારા વસ્તુ લખી શકાય-બાણી શકાય-તે લક્ષણ કહેવાય છે. ઉપયોગ જેનું લક્ષણ હોય, તેને “ઉપયોગલક્ષણ” કહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે-જ્ઞાનલક્ષણ દ્વારા એવ માલૂમ પડે છે.

પૃથિવીકાય આદિ તમામ સંસારી જીવોના જ્ઞાનનો અનન્તમો ભાગ હમેશાં પ્રકાશમાન અને આવરણરહિત બની રહે છે. સંપૂર્ણ લોકાકાશના પુદ્ગલો કદાચ કર્મરૂપમાં પરિણત થઈ બંધ તો પણ તે કોઈ એક જીવના જ્ઞાનને પૂર્ણરૂપથી આવૃત્ત કરી (ઢાંકી) શકે નહિ. સૂર્ય ગમે તેટલી ઘનઘટા-(મેઘાડંબર)માં આચ્છાદિત થઈ બંધ તો પણ સૂર્યનો થોડો-ઝાઝો પ્રકાશ તો બની જ રહે છે,



તિરોહિતો ભવતિ । તથા પૃથિવીકાયાદિજીવાનામુપયોગાંશઃ સ્ફુરત્યેવ સર્વદા ।  
યદિ લોકવ્યાપિનઃ પુદ્ગલાઃ સંઘીભૂયાપિ કર્મવર્ગણારૂપેણ સર્વતોભાવેન જ્ઞાનં  
તિરોદધ્યુસ્તર્હિં નિર્જીવતાપત્તિરાત્મનો દુર્વારા સ્યાત્ । તસ્માત્ પૃથિવ્યાદિજીવેષુ  
બોધાંશઃ સ્વભાવતોઽનાવૃતસ્તિષ્ઠત્યેવેતિ સિદ્ધમ્ । ઉક્તં ચાગમે—

“સન્વજીવાળં પિ ય ણં અક્ષરસ્સ અણંતભાગો નિચ્ચુગ્ધાહિઓ । જહ  
પુણ સોઽવિ આવરિજ્જા તો ણં જીવો અજીવત્તં પાવિજ્જા ”

“સુદ્ધુવિ મેહસમુદણ, હોહ પમા ચંદ-ભુરાણં ” ઇતિ ।

છાયા—સર્વજીવાનામપિ ચ સ્વલુ અક્ષરસ્યાનન્તભાગો નિત્યોદ્ઘાટિતઃ ।  
યદિ પુનઃ સોઽપિ આવિયેત તર્હિં સ્વલુ જીવઃ અજીવત્ત્વં પ્રાપ્નુયાત્ । “સુદ્ધુવિ  
મેહસમુદયે, ભવતિ પ્રમા ચન્દ્રસૂરયોઃ” ઇતિ ।

તિરોહિત નહીં હો સકતા, હસી પ્રકાર પૃથિવીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવો કે ઉપયોગ કા  
અંશ સદા સ્ફુરાયમાન રહતા હી હૈ । અગર લોકવ્યાપી પુદ્ગલ ઇકદ્વે હો કર્મવર્ગણા-  
રૂપ પરિણત હો કર જ્ઞાન કો પૂરી તરહ આચ્છાદિત કર ઢાલે તો જીવ અજીવ  
બન જાય, મગર ંસા હોના અસમ્ભવ હૈ, અત ંવ યહ સિદ્ધ હૈ કિ—પૃથિવીકાય આદિ  
એક ઇન્દ્રિય વાલે જીવો મેં મી જ્ઞાન કા કિંચિત્ અંશ સ્વભાવ સે અનાવૃત (આવરણ  
રહિત) રહતા હૈ । આગમ મેં મી કહા હૈ—“સન્વજીવાળં પિ ય ણં અક્ષરસ્સ  
અણંતભાગો નિચ્ચુગ્ધાહિઓ, જહ પુણ સોવિ આવરિજ્જા તો ણં જીવો અજીવત્તં  
પાવિજ્જા” “સુદ્ધુવિ મેહસમુદણ હોહ પમા ચંદ્રસૂરાણં”

પ્રકાશ કયારેય પૂર્ણપણે તિરોહિત—આચ્છાદિત થતો નથી. એ પ્રમાણે પૃથિવીકાય  
આદિ એકેન્દ્રિય જીવોના “ઉપયોગ” અંશ પણ સદા સ્ફુરાયમાન રહે છે. અગર  
લોકવ્યાપી પુદ્ગલ એકલા થઈને કર્મવર્ગણારૂપ પરિણત થઈને જ્ઞાનને પૂરી તરેહથી  
આચ્છાદિત કરી નાંખે (ઢાંકી દે) તો જીવ અજીવ બની જાય, પણ એમ બનવું  
અસંભવિત છે. એટલા કારણથી એ સિદ્ધ છે કે—પૃથિવીકાય આદિ એક ઇન્દ્રિયવાળા  
જીવોમાં પણ જ્ઞાનનો કિંચિત્ અંશ સ્વભાવથી અનાવૃત—આવરણરહિત રહે છે.  
આગમમાં પણ કહ્યું છે—“સન્વજીવાળં પિ ય ણં અક્ષરસ્સ અણંતભાગો નિચ્ચુગ્ધાહિઓ ।  
જહ પુણ સોવિ આવરિજ્જા તો ણં જીવો અજીવત્તં પાવિજ્જા ” “સુદ્ધુવિ મેહસમુદણ હોહ  
પમા ચંદ્રસૂરાણં”

તસ્માદ્ યથા યાવાનુપયોગાંશઃ સર્વસંસારિજીવેષુ યથાસંભવં સ્વભાવતોઽનાવૃતો વર્તતે, તત્ર સર્વતો જઘન્ય ઉપયોગાંશઃ પ્રમથસમયે સ્વલ્પપર્યાપ્તાનાં સૂક્ષ્મનિગોદાનામેવ ભવતિ। તતઃ પરં સ ઇવોપયોગાંશઃ અવશિષ્ટૈકેન્દ્રિય દ્વિ-ત્રિ-ચતુઃ-પચ્ચેન્દ્રિયભેદાદ્ ભિન્નમાનઃ સંભિન્નસ્રોતસ્ત્વાદિલબ્ધિસમૂહેન ચ લબ્ધિનિમિત્તકરણશરીરેન્દ્રિયવાઙ્મનાંસિ સમાશ્રિત્ય પ્રવર્ધમાનો વિવિધક્ષાયોપશમકૃતવૈચિત્ર્યવતામવગ્રહાદીનાં ભેદેન તતોઽપ્યધિકતરં વર્ધમાનઃ સકલઘાતિકર્મક્ષયં કૃત્વા, સકલજ્ઞેયગ્રાહિકાં પરાં વિશુદ્ધિં

“સર્વ જીવોં કે અક્ષર કા અનન્તવાં ભાગ જ્ઞાન સદૈવ ઉઘાડા (નિરાવરણ) બના રહતા હૈ, અગર વહ મી ઢક જાય તો જીવ અજીવ હો જાય । ”

“મેંવોં કા સ્વૂં સમુદાય હોને પર મી ચન્દ્રમા ઓર સૂર્યેં કો પ્રમા તો બની હી રહતી હૈ । ”

ઉપયોગ કા જો સર્વ જઘન્ય અંશ સમસ્ત સંસારી જીવોંમેં સર્વદા અનાવૃત બના રહતા હૈ, વહ જઘન્ય અંશ ઉત્પત્તિ કે પ્રથમ સમય મેં વર્તમાન અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ નિગોદિયા જીવોં મેં મી હોતા હૈ । તત્પશ્ચાત્ વહી ઉપયોગ કા અંશ એકેન્દ્રિય દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય ચતુરિન્દ્રિય ઓર પચ્ચેન્દ્રિય કે ભેદ સે ભિન્ન હોતા હુઆ સંભિન્નસ્રોતસ્ત્વ આદિ લબ્ધિયોં કે સમૂહ સે લબ્ધિ, નિમિત્ત, કરણ, શરીર, ઇન્દ્રિય વચન ઓર મન કા આશ્રય લેકર બઢતા જાતા હૈ । યહાં તક કિ વિવિધ પ્રકાર કે ક્ષયોપશમ કી વિચિત્રતા વાલે જીવોં કે અવગ્રહ આદિ કે ભેદ સે ઓર ઉસ સે મી અધિક બઢકર સમસ્ત ઘાતી કર્મોં કા ક્ષય હોને પર સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થોં

“સર્વ જીવોંને અક્ષરનો અનંતમો ભાગ જ્ઞાન સદૈવ ઉઘાડું (નિરાવરણ) રહે છે. અગર તે પણ જો ઢંકાઈ જાય તો જીવ અજીવ થઈ જાય.”

“ભેદનો જીવ સમુદાય હોય તો પણ ચંદ્ર અને સૂર્યની પ્રભા બની રહે છે.”

ઉપયોગનો જે સર્વ જઘન્ય અંશ તમામ સંસારી જીવોંમાં સર્વદા અનાવૃત (ઉઘાડો) બની રહે છે. તે સર્વ જઘન્ય અંશ ઉત્પત્તિના પ્રથમ સમયમાં વર્તમાન, અપર્યાપ્ત સૂક્ષ્મ નિગોદના જીવોંમાં પણ હોય છે. તે પછી તે ઉપયોગનો અંશ એકેન્દ્રિય દ્વીન્દ્રિય ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પચ્ચેન્દ્રિયના ભેદથી ભિન્ન થઈને, સંભિન્નસ્રોતસ્ત્વ આદિ લબ્ધિઓના સમૂહથી, લબ્ધિ, નિમિત્ત, કરણ, શરીર, ઇન્દ્રિય, વચન અને મનનો આશ્રય લઈને વધતો જાય છે, અહીં સુધી કે વિવિધ પ્રકારના ક્ષયોપશમની વિચિત્રતાવાળા જીવોંને અવગ્રહ આદિ ભેદથી અને તેનાથી પણ અધિક વધીને સમસ્ત ઘાતી કર્મોંનો

પ્રાપ્ય, કેવલજ્ઞાનસંજ્ઞાં પ્રાપ્નોતિ ।

જીવા દ્વિવિધાઃ—સિદ્ધા અસિદ્ધાશ્ચ । તત્ર નિર્દૂતાશેષકર્માણઃ સિદ્ધાઃ, અસિદ્ધાઃ સંસારિણઃ । દ્રવ્યભાવબન્ધઃ સંસારઃ । કર્માણ્ડકસમ્બન્ધો દ્રવ્યબન્ધઃ, રાગદ્વેષાદિપરિણામસંબન્ધો ભાવબન્ધઃ । દ્વિવિધબન્ધરૂપઃ સંસારોઽસ્તિ યેષાં તે સંસારિણઃ । સંસારિણો દ્વિવિધાઃ ત્રસસ્થાવરભેદાત્ । તત્ર પૃથિવ્યવૃનસ્પતયઃ સ્થાવરાઃ । તેજોવાયુદારાસ્ત્રસાઃ । તેજોવાયુ ગત્યૈવ ત્રસૌ, ન તુ લબ્ધ્યા । તત્રોદારાશ્ચ-તુર્વિધાઃ—દ્વિ-ત્રિ-ચતુઃ—પञ્ચેન્દ્રિયભેદાત્ । તત્ર પञ્ચેન્દ્રિયાઃ પુનર્દ્વિવિધાઃ સમનસ્કા અમનસ્કાશ્ચ ।

કો જાનને યોગ્ય વિશુદ્ધતા પ્રાપ્ત કરકે કેવલ જ્ઞાન સંજ્ઞા કો પાતા હૈ ।

જીવ દો પ્રકાર કે હૈ :—સિદ્ધ જીવ ઓર અસિદ્ધ જીવ । સકલ કર્મોં સે રહિત જીવ સિદ્ધ કહલાતે હૈ, ઓર સંસારી જીવ અસિદ્ધ કહલાતે હૈ । દ્રવ્યબન્ધ ઓર ભાવબન્ધ કો સંસાર કહતે હૈ । આઠ કર્મોંકા સમ્બન્ધ દ્રવ્યબન્ધ હૈ, ઓર રાગ દ્વેષ આદિ પરિણામોં કા સમ્બન્ધ હોના ભાવબન્ધ હૈ । યહ દો પ્રકાર કા બન્ધરૂપ સંસાર જિન કે હો વે સંસારી જીવ કહલાતે હૈ । સંસારી જીવ ત્રસ ઓર સ્થાવર કે ભેદસે દો પ્રકાર કે હૈ । પૃથ્વી જલ ઓર વનસ્પતિ, યે સ્થાવર હૈ, તેજ વાયુ ઓર ઉદાર જીવ ત્રસ હૈ । ઇન મેં તેજ ઓર વાયુ ગતિત્રસ હૈ, લબ્ધિ સે સ્થાવર હૈ ।

ઉદાર કે ચાર ભેદ હૈ—દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઓર પञ્ચેન્દ્રિય । પञ્ચેન્દ્રિય જીવોં કે સંજ્ઞી ઓર અસંજ્ઞી, યે દો ભેદ હૈ ।

ક્ષય થવાથી સમસ્ત જ્ઞેય પદાર્થોને બાણુવા યોગ્ય વિશુદ્ધતા પ્રાપ્ત કરીને કેવલજ્ઞાન સંજ્ઞા પામે છે.

જીવ બે પ્રકારના છે:—સિદ્ધ જીવ અને અસિદ્ધ જીવ, સકલ કર્મોંથી રહિત જીવ સિદ્ધ કહેવાય છે, અને સંસારી જીવ અસિદ્ધ કહેવાય છે. દ્રવ્યબંધ અને ભાવબંધને સંસાર કહે છે. આઠ કર્મોંના સંબંધ તે દ્રવ્યબંધ છે, અને રાગ-દ્વેષ આદિ પરિણામોના સંબંધ થાય તે ભાવબંધ છે. એ બે પ્રકારના બંધરૂપ સંસાર જેને હોય છે તે સંસારી જીવ કહેવાય છે. સંસારી જીવ ત્રસ અને સ્થાવરના ભેદથી બે પ્રકારના છે. પૃથ્વી, પાણી, અને વનસ્પતિ આ ત્રણ સ્થાવર છે, તેજ, વાયુ, ઉદાર જીવ ત્રસ છે. તેમાં તેજ અને વાયુ ગતિત્રસ છે, લબ્ધિથી સ્થાવર છે. ઉદારના ચાર ભેદ છે. દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પञ્ચેન્દ્રિય. પञ્ચેન્દ્રિય જીવોના સંજ્ઞી અસંજ્ઞી, એ બે ભેદ છે.



જીવાસ્તિકાયસ્ય (૧)-અનન્તજ્ઞાનમ્, (૨)-અનન્તદર્શનમ્ (૩)-અનન્ત  
સુખમ્, (૪)-અનન્તવીર્યં ચેતિ ગુણાઃ । (૧)-અવ્યાવાધવત્ત્વમ્, (૨)-અનવગાહ-  
વત્ત્વમ્, (૩)-અમૂર્તિકત્વમ્ (૪)-અગુરુલઘુવત્ત્વં ચેતિ પર્યાયાઃ ।

અયં દ્રવ્ય-ક્ષેત્ર-કાલ-ભાવ-ગુણ-ભેદેન પञ्चधा જ્ઞાયતે-(૧)-દ્રવ્યતઃ-  
અનન્તા જીવાઃ, (૨)-ક્ષેત્રતો લોકપ્રમાણાઃ, (૩)-કાલત આદ્યન્તરહિતાઃ, (૪)-  
ભાવતઃ અરૂપિણઃ-વર્ણગન્ધરસસ્પર્શવર્જિતા इति, (૫)-ગુણતશ્ચેતનાલક્ષણા इति ।

। इति जीवास्तिकायः सम्पूर्णः—

જીવાસ્તિકાય કે ગુણ યે હૈં—(૧) અનન્ત જ્ઞાન (૨) અનન્ત દર્શન  
(૩) અનન્ત સુખ ઓર (૪) અનન્ત વીર્ય ।

(૧) અવ્યાવાધવત્ત્વ (૨) અનવગાહનાવત્ત્વ (૩) અમૂર્તિકત્વ ઓર (૪) અગુરુલઘુત્વ,  
યે જીવ કી પર્યાય હૈં ।

દ્રવ્ય ક્ષેત્ર કાલ ભાવ ઓર ગુણ કે ભેદ સે પાંચ પ્રકાર સે જીવાસ્તિકાય કા  
જ્ઞાન હોતા હૈ । (૧) દ્રવ્ય સે—જીવ અનન્ત હૈ, (૨) ક્ષેત્ર સે—લોકપ્રમાણ હૈ (૩) કાલ  
સે—આદિ—અન્ત રહિત હૈ (૪) ભાવ સે—અરૂપી હૈ—રૂપ, રસ, ગન્ધ, ઓર સ્પર્શ સે  
રહિત હૈ (૫) ગુણ સે—ચેતનાલક્ષણ હૈ ।

। इति जीवास्तिकाय ।

જીવાસ્તિકાયના ગુણ આ છે—(૧) અનન્તજ્ઞાન, (૨) અનન્ત દર્શન (૩) અનન્ત  
સુખ અને (૪) અનન્ત વીર્ય.

(૧) અવ્યાવાધવત્ત્વ (૨) અનવગાહનાવત્ત્વ (૩) અમૂર્તિકત્વ અને (૪)  
અગુરુલઘુત્વ, એ જીવની પર્યાય છે.

દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ, ભાવ અને ગુણના ભેદથી પાંચ પ્રકારે જીવાસ્તિકાયનું જ્ઞાન  
થાય છે. (૧) દ્રવ્યથી—જીવ અનન્ત છે. (૨) ક્ષેત્રથી—લોકપ્રમાણ. (૩) કાલથી—આદિ  
અન્ત રહિત છે. (૪) ભાવથી—અરૂપી છે—રૂપ-રસ-ગન્ધ અને સ્પર્શથી રહિત છે  
(૫) ગુણથી—ચેતનાલક્ષણ છે.

इति जीवास्तिकाय—

અથ પદ્ધત્યવિચાર:—

પટ્સુ દ્રવ્યેષુ વિચિદ્રં દ્રવ્યં ક્ષેત્રમ્, ઇતરે ધર્માદયઃ પશ્ચ ક્ષેત્રવર્તિત્વાત્ ક્ષેત્રિણઃ । દેવકુરુત્તરકુરુક્ષેત્રવર્તિયૌગલિકૈકકેશસ્ય ચ્વણ્ડશઃ કરણે પર્યન્તતો યસ્ય ચ્વણ્ડસ્ય પુનઃ ચ્વણ્ડો ન ભવિતુમર્હતિ, તાદૃશચ્વણ્ડપરિમાણં યાવદાકાશક્ષેત્રં વ્યાપ્નોતિ, તાવતિ ભાગે વિચિતોઽસંખ્યાતપ્રદેશઃ, ધર્માસ્તિકાયસ્યાસંખ્યાતપ્રદેશઃ, અધર્માસ્તિકાયસ્ય ચા સંખ્યાતપ્રદેશઃ, અસંખ્યાતા નિગોદાનાં ગોલકાશ્ચ તિષ્ઠન્તિ ।

મૂલ્યગ્રભાગપરિમિતે નિગોદચ્વણ્ડેઽપ્યસંખ્યાતાઃ શ્રેણયઃ સન્તિ । તત્ર પ્રત્યેકશ્રેણ્યામસંખ્યાતાઃ પ્રતરાઃ, પ્રતરે ચ પ્રત્યેકમસંખ્યાતાઃ ગોલકાઃ, ગોલકે

પદ્ધત્યવિચાર—

છઠ્ઠ દ્રવ્યોં મેં સે આકાશ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર હૈ, ઔર શેષ ધર્મ આદિ પાંચ દ્રવ્ય ક્ષેત્રવર્તી હોને કે કારણ ક્ષેત્રી હૈં । દેવ કુરુ ઔર ઉત્તરકુરુ ક્ષેત્રોં કે જુગલિયાકે એક કેશ કે એસે ટુકડે કિયે જાઈં કિ ફિર ઉનકા દૂસરા ટુકડા ન હો સકે । ઇન મેં સે એક ટુકડા જિતને આકાશ ક્ષેત્ર કો વ્યાપ્ત કરતા હૈ ઉતને ભાગ મેં આકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હોતે હૈં । ડસી મેં ધર્માસ્તિકાય કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈં, અધર્માસ્તિકાય કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હૈં, ઔર નિગોદ કે અસંખ્યાત ગોલક વિદ્યમાન હૈં ।

સુઈ કી નોક બરાબર નિગોદ કે ચ્વણ્ડ મેં બી અસંખ્યાત શ્રેણિયાં વિદ્યમાન હૈં । એક ૨ શ્રેણી મેં અસંખ્યાત-અસંખ્યાત પ્રતર હૈં, એક ૨ પ્રતર મેં અસંખ્યાત ૨ ગોલક હૈં,

પદ્ધત્ય વિચાર—

છ દ્રવ્યોંમાં આકાશ દ્રવ્ય ક્ષેત્ર છે, અને બાકીના ધર્મ આદિ પાંચદ્રવ્યોં ક્ષેત્રવર્તી હોવાથી ક્ષેત્ર છે; દેવકુરુ અને ઉત્તરકુરુ ક્ષેત્રોના જુગલિયાના એક કેશ-વાળના એવા ટુકડા કરવામાં આવે કે ફરીને તેનો બીજો ટુકડો થઈ શકે નહિ, તેમાંથી એક ટુકડા જેટલા આકાશક્ષેત્રને વ્યાપ્ત કરે છે તેટલા ભાગમાં આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશ કહેવાય છે. તેમાં ધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશ છે, અધર્માસ્તિકાયના અસંખ્યાત પ્રદેશ છે, અને નિગોદના અસંખ્યાત ગોલક વિદ્યમાન છે.

સોયની આણી બરોબર નિગોદના ખંડમાં પણ અસંખ્યાત શ્રેણીઓ વિદ્યમાન છે. એક એક શ્રેણીમાં અસંખ્યાત-અસંખ્યાત-પ્રતર છે. એક એક પ્રતરમાં

ષ પ્રત્યેકમસંખ્યાતાનિ નિગોદશરીરાણિ સન્તિ । તત્ર ચ પ્રત્યેકશરીરેऽનન્તા નિગોદજીવાઃ સન્તિ ।

અથ કિયન્તોऽનન્તા જોવાસ્તત્ર સન્તી ?—ત્યુચ્યતે—અતીતકાલોऽનન્તઃ, તથા ભવિષ્યત્કાલોऽપ્યનન્તઃ, વર્તમાનકાલશ્ચૈકસમયમાત્રઃ, કાલત્રયસ્યાપિ યાવન્તઃ સમયાઃ સન્તિ, તે પુનરનન્તેન ગુણિતા યાવન્તો ભવેયુસ્તતોऽપ્યનન્ત-ગુણાધિકા એકસ્મિન્ નિગોદે નિગોદિકા જીવાઃ સન્તિ ।

તત્રૈકજીવસ્યાસંખ્યાતાઃ પ્રદેશાઃ સન્તિ । એકૈકપ્રદેશેऽનન્તાઃ કર્મવર્ગણાઃ સંલગ્નાઃ । તત્રૈકસ્યાં વર્ગણાયામનન્તાઃ પરમાણુપુદ્ગલાઃ સન્તિ ।

એક ૨ ગોલક મેં અસંખ્યાત ૨ નિગોદશરીર હૈં, ઓર એક ૨ નિગોદશરીર મેં અનન્ત ૨ નિગોદજીવ હૈં ।

શંકા—અનન્ત કે અનન્ત ભેદ હોતે હૈં, એસી સ્થિતિ મેં એક નિગોદશરીર મેં કિતને અનન્ત જીવ હોતે હૈં ?

સમાધાન—અતીત કાલ કે અનન્ત સમય હૈં, ભવિષ્ય કાલકે મી અનન્ત સમય હૈં, ઓર વર્તમાન કાલ એક સમય માત્ર હૈં । ઇન તીનોં કાલોં કે જિતને સમય હૈં ઊનકા અનન્ત સે ગુણાકાર કર દેને પર જિતને સમય હોં ઊન સે મી અનન્ત ગુણા અધિક નિગોદજીવ એક નિગોદશરીર મેં હોતે હૈં ।

એક જીવ કે અસંખ્યાત પ્રદેશ હોતે હૈં । એક ૨ પ્રદેશ મેં અનન્ત ૨ કર્મ-વર્ગણાઈ લગી હુઈ હૈં, ઓર એક ૨ વર્ગણા મેં અનન્ત ૨ પુદ્ગલપરમાણુ હૈં

અસંખ્યાત ગોલક છે. એક એક ગોલકમાં અસંખ્યાત નિગોદ શરીર છે, અને એક એક નિગોદ શરીરમાં અનંત અનંત નિગોદ જીવ છે.

શંકા—અનંતના અનંત ભેદ હોય છે, એવી સ્થિતિમાં એક નિગોદ શરીરમાં કેટલા અનંત જીવ હોય છે ?

સમાધાન—અતીતકાલ (ભૂતકાલ)ના અનન્ત સમય છે, ભવિષ્યકાલના પણ અનંત સમય છે, અને વર્તમાન કાલ એકસમયમાત્ર છે, એ ત્રણે કાલોમાં જે સમય છે, તેનો અનંતથી ગુણાકાર કરવાથી જે ગુણાકાર (સંખ્યા) થાય તેટલા સમયથી પણ અનંત ગુણા અધિક નિગોદ જીવ એક નિગોદ-શરીરમાં હોય છે.

એક જીવના અસંખ્યાત પ્રદેશ થાય છે. એક-એક પ્રદેશમાં અનંત-અનંત કર્મવર્ગણાઓ લાગી છે, અને એક-એક વર્ગણામાં અનંત અનંત પુદ્ગલપરમાણુ છે.



પરમાણુનાં દ્વૌ ભેદૌ સ્તઃ-વદ્ધા અવદ્ધાશ્ચ । તત્ર વદ્ધાઃ સ્કન્ધરૂપાઃ ।  
અવદ્ધાઃ પરસ્પરાસંયુક્તાઃ । સ્કન્ધાનાં પુનર્દ્વૌ ભેદૌ-જીવસહિતાઃ, જીવરહિતાશ્ચ ।  
તત્ર ઘટ-પટાદિરૂપા અજીવસ્કન્ધાઃ ।

અથ જીવસ્કન્ધ-વિચારઃ પ્રસ્તૂયતે—

દ્વયોઃ પરમાણ્વોઃ સંયોગે દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધઃ । ત્રયાણાં પરમાણુનાં સંયોગે  
ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધઃ । એવમસંખ્યાતાનાં પરમાણુનાં સંયોગાદસંખ્યાતપ્રદેશી સ્કન્ધો  
જાયતે । એતાવત્પર્યન્તાઃ સ્કન્ધા જીવાનાં ગ્રાહ્યા ન ભવન્તિ ।

પરમાણુ દો પ્રકાર કે હૈં— વદ્ધ ઓર અવદ્ધ । સ્કન્ધરૂપ પરમાણુ વદ્ધ કહલાતે હૈં,  
ઓર આપસ મેં અસંયુક્ત પરમાણુ અવદ્ધ કહલાતે હૈં ।

સ્કન્ધ કે મી દો ભેદ હૈં—જીવસહિત ઓર જીવરહિત, ઇન મેં ઘટ પટ  
આદિ સ્કન્ધ અજીવસ્કન્ધ કહલાતે હૈં ।

અવ જીવસ્કન્ધ કા વિચાર કરતે હૈં—

દો પરમાણુઓં કા સંયોગ હોને પર દ્વિપ્રદેશી સ્કન્ધ બનતા હૈ, ઓર ત્રીન  
પરમાણુઓં કે સંયોગસે ત્રિપ્રદેશી સ્કન્ધ । ઇસી પ્રકાર અસંખ્યાત પરમાણુઓં કે સંયોગ  
સે અસંખ્યાતપ્રદેશી સ્કન્ધ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । યહાં તક કે સ્કન્ધ જીવોં દ્વારા  
ગ્રહણ નહીં કિયે જા સકતે ।

પરમાણુ બે પ્રકારના છે—(૧) બદ્ધ અને (૨) અબદ્ધ. સ્કંધરૂપ પરમાણુ બદ્ધ  
કહેવાય છે, અને આપસમાં અસંયુક્ત પરમાણુ અબદ્ધ કહેવાય છે.

સ્કંધના પણ બે ભેદ છે—જીવસહિત અને જીવરહિત. તેમાં ઘટ પટ આદિ  
સ્કંધ અજીવસ્કંધ કહેવાય છે.

હવે જીવસ્કંધનો વિચાર કરવામાં આવે છે—

બે પરમાણુઓના સંયોગ થવાથી દ્વિપ્રદેશી સ્કંધ બને છે, અને ત્રણ પરમાણુ-  
ઓના સંયોગથી ત્રિપ્રદેશી સ્કંધ બને છે, એ પ્રમાણે અસંખ્યાત પરમાણુઓના  
સંયોગથી અસંખ્યાતપ્રદેશી સ્કંધ ઉત્પન્ન થાય છે. અહિં સુધીના સ્કંધ, જીવો  
દ્વારા ગ્રહણ કરી શકાતાં નથી.

અથ કીટશાઃ સ્કન્ધા જીવાનાં ગ્રાહ્યા ભવન્તી?—ત્યુચ્યતે—અભવ્ય-  
રાશિશ્વતુઃસન્તતિતમઃ, તદ્ગતજીવાપેક્ષયાઽનન્તગુણાધિકાઃ પરમાણવો યદિ  
સંધીભવન્તિ તદૌદારિકશરીરગ્રાહ્યવર્ગણા ભવતિ । ઔદારિકવર્ગણાપેક્ષયા-  
ઽનન્તગુણાધિકા વૈક્રિયશરીરગ્રાહ્યવર્ગણા । તતોઽનન્તગુણાધિકાઽઽહારકવર્ગણા ।  
આહારકવર્ગણાપેક્ષયાઽનન્તગુણાધિકા તૈજસશરીરગ્રાહ્યવર્ગણા । તતોઽનન્તગુણાધિકા  
એકભાષાગ્રાહ્યવર્ગણા । એકભાષાગ્રાહ્યવર્ગણાપેક્ષયાઽનન્તગુણાધિકા એકશ્વાસોચ્છ્વાસ-  
વર્ગણા । તતોઽનન્તગુણાધિકા એકમનસો વર્ગણા । તદપેક્ષયાઽનન્તગુણાધિકા કાર્મણ-  
વર્ગણા ભવતિ । તતોઽનન્તગુણાધિકાઃ પુદ્ગલપરમાણુસ્કન્ધા જ્ઞેયાઃ । કાર્મણ

કિસ પ્રકાર કે સ્કન્ધ જીવો દ્વારા ગ્રાહ્ય હોતે હૈં ? યહ બતલાતે હૈં :—અભવ્ય  
રાશિ ચૌહતરવીં હૈ । ઇસ અભવ્ય રાશિ કે જીવોં કી અપેક્ષા અનન્ત ગુણા અધિક  
પરમાણુ યદિ ઇકદ્વે હોં તો ઔદારિકશરીરગ્રાહ્ય વર્ગણા હોતી હૈ । ઔદારિકવર્ગણાકી  
અપેક્ષા અનન્તગુણી અધિક વૈક્રિયશરીરગ્રાહ્ય વર્ગણા હોતી હૈ, ઔર ઇસ સે મી  
અનન્ત ગુણી અધિક આહારકવર્ગણા હોતી હૈ । આહારકવર્ગણા સે અનન્તગુણી અધિક  
તૈજસશરીરગ્રાહ્ય વર્ગણા હોતી હૈ, ઔર ઇસ સે મી અનન્તગુણી અધિક એકભાષાગ્રાહ્ય  
વર્ગણા હોતી હૈ । એકભાષાવર્ગણ સે મી અનન્તગુણી અધિક એક શ્વાસોચ્છ્વાસવર્ગણા  
હોતી હૈ, ઔર ઇસ સે અનન્તગુણી અધિક એકમનોવર્ગણા હોતી હૈ, મનોવર્ગણા સે  
મી અનન્તગુણી અધિક કાર્મણવર્ગણા હોતી હૈ । ઇસ સે મી અનન્ત ગુણા અધિક  
પુદ્ગલ પરમાણુ કે સ્કન્ધ સમજ્ઞતે ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કાર્મણવર્ગણા કે અનન્ત પુદ્ગલ

કયા પ્રકારના સ્કન્ધ જીવોદ્વારા ગ્રહણ કરી શકાય છે ? તે બતાવે છે—અભવ્ય-  
રાશિ ચુમેતેર (૭૪) વીં છે. એ અભવ્ય રાશિના જીવોની અપેક્ષા અનન્ત ગુણુ  
અધિક પરમાણુ જો એકઠા થાય તો ઔદારિક શરીર ગ્રહણ કરી શકે તેવી વર્ગણા  
હોય છે, ઔદારિક વર્ગણાની અપેક્ષા અનન્ત ગુણુ અધિક વૈક્રિયશરીરગ્રાહ્ય વર્ગણા  
હોય છે, અને તેનાથી પણ અનન્ત ગુણુ અધિક એક આહારકવર્ગણા હોય છે.  
આહારકવર્ગણાથી અનન્ત ગુણુ અધિક તૈજસશરીરગ્રાહ્ય વર્ગણા હોય, તેનાથી પણ  
અનન્ત ગુણુ અધિક એક ભાષાગ્રાહ્ય વર્ગણા હોય છે, અને તેનાથી અનન્તગુણુ અધિક  
એક શ્વાસોચ્છ્વાસવર્ગણા હોય છે, અને તેનાથી અનન્તગુણુ અધિક એક મનોવર્ગણા હોય  
છે. મનોવર્ગણાથી પણ અનન્તગુણુ અધિક કાર્મણવર્ગણા હોય છે. તેનાથી પણ અનન્ત  
ગુણુ અધિક પુદ્ગલપરમાણુના સ્કન્ધ સમજવાં જોઈએ. એ પ્રમાણે કાર્મણવર્ગણાના

વર્ગણાગતાનન્તપુદ્ગલપરમાણુઘટિતસ્કન્ધા જીવાનાં ગ્રાહ્યા ભવન્તિ ।

રાગદ્વેષરૂપાશુદ્ધપ્રવૃત્ત્યાઽઽત્મનઃ પ્રતિપ્રદેશમનન્તાનન્તકર્મવર્ગણા અયોગો-  
લકવદ્ધિવલ્લોલીભૂતાઃ સન્તિ, અત એવાનન્તજ્ઞાનાદયો ગુણા જીવસ્ય તિરોહિતા  
ભવન્તિ । એવં ચ જીવોપેક્ષ્યાઽનન્તગુણાધિકાઃ પુદ્ગલા જ્ઞાતવ્યાઃ । તે ચ પુદ્ગલા  
રૂપિણોઽચેતનાઃ સક્રિયાઃ પૂરણગલનસ્વભાવા વેદિતવ્યાઃ ।

પદ્ધત્યવેષુ સક્રિય-નિષ્ક્રિયવિચારઃ—

પદ્ધત્યવેષુ નિશ્ચયનયેન સર્વાણિ દ્રવ્યાણિ સક્રિયાણિ । વ્યવહારનયતો  
ધર્માધર્માકાશકાલાખ્યાનિ ચત્વારિ દ્રવ્યાણિ ક્રિયારહિતાનિ । જીવપુદ્ગલૌ સક્રિયૌ  
પરમાણુઓં સે બને હુણ સ્કન્ધ જીવોં દ્વારા ગ્રહણ કરને યોગ્ય હોતે હૈં ।

રાગ ઓર દ્વેષરૂપ અશુદ્ધ પ્રવૃત્તિ કે કારણ આત્મા કે એક એક પ્રદેશ મેં અનન્તાનન્ત  
કર્મવર્ગણાઈં હસ પ્રકાર એકમેક હો રહી હૈં, જૈસે લોહે કા ગોલ ઓર અગ્નિ એકમેક  
હો જાતે હૈં, હસી કારણ જીવ કે અનન્ત જ્ઞાન આદિ ગુણ ઢંક જાતે હૈં । હસ પ્રકાર  
જીવોં કી અપેક્ષા પુદ્ગલ અનન્ત ગુણા અધિક જાનને ચાહિણ । યે પુદ્ગલ-રૂપી, અચેતન,  
સક્રિય, ઓર પૂરણગલનસ્વભાવવાલે હૈં ।

છહ દ્રવ્યોં મેં સક્રિય-નિષ્ક્રિયકા વિચાર—

નિશ્ચય નય સે છહોં દ્રવ્ય સક્રિય હૈં, કિન્તુ વ્યવહારનયસે ધર્માસ્તિકાય અધર્મા-  
સ્તિકાય આકાશ ઓર કાલ નામક ચાર દ્રવ્ય ક્રિયા રહિત હૈં, જીવ ઓર પુદ્ગલ દ્રવ્ય સક્રિય

અનન્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓથી બનેલા સ્કન્ધ જીવો દ્વારા ગ્રહણ કરવા યોગ્ય હોય છે.

રાગ અને દ્વેષ રૂપ અશુદ્ધ પ્રવૃત્તિના કારણે આત્માના એક-એક પ્રદેશમાં  
અનન્તાનન્ત કર્મવર્ગણાઓ એ પ્રમાણે એકમેક થઈ રહી છે કે-જેમ લોહનો ગોળો  
અને અગ્નિ એકમેક થઈ જાય છે, એ કારણથી જીવના અનન્ત જ્ઞાન આદિ ગુણ  
ઢંકાઈ જાય છે. એ પ્રમાણે જીવોની અપેક્ષા પુદ્ગલ અનન્તગુણા અધિક જાણવા  
જોઈએ. તે પુદ્ગલ, રૂપી, અચેતન સક્રિય અને પૂરણગલનસ્વભાવવાળા છે.

છ દ્રવ્યોમાં સક્રિય નિષ્ક્રિયનો વિચાર—

નિશ્ચયનય પ્રમાણે છ દ્રવ્યો સક્રિય છે, પરંતુ વ્યવહારનયથી ધર્માસ્તિકાય  
અધર્માસ્તિકાય આકાશ અને કાલ નામના ચાર દ્રવ્યો ક્રિયારહિત છે, જીવ અને



સ્તઃ । નિશ્ચયનયાદ્ ધર્માસ્તિકાયો ગતિપરિતાનાં જીવપુદ્ગલાનાં ગતિં પ્રતિ સહાયદાનરૂપાં ક્રિયામ્, અધર્માસ્તિકાયઃ સ્થિતિપરિણતજીવપુદ્ગલાનાં સ્થિતિં પ્રતિ સહાયદાનરૂપાં ક્રિયાં કરોતિ । તથૈવાકાશોઽવકાશદાનરૂપાં ક્રિયાં, કાલશ્ચ વર્તનારૂપક્રિયાં જીવાજીવેષુ વિધત્તે । તથૈવ નિશ્ચયેન જીવઃ સ્વસ્વરૂપરમણરૂપાં ક્રિયાં કરોતિ । યદિ નિશ્ચયનયેન શુભાશુભરૂપવિભાવદશારમણાત્મિકાં ક્રિયાં કુર્યાત્તદાઽઽત્મા કદાપ્યવિચલપદં નાપ્નુયાત્, અતઃ સ્વસ્વરૂપપરિણતિરૂપામેવ ક્રિયાં કરોતિ । નિશ્ચયનયેન પુદ્ગલોઽપ્યનાદિકાલતઃ સ્વપૂરણગલનરૂપાં ક્રિયાં સમાચરતિ । તસ્માદ્ નિશ્ચયનયેન સર્વાણિ દ્રવ્યાણિ સક્રિયાણીતિ જ્ઞાતવ્યમ્ ।

હૈ । નિશ્ચયનય સે ધર્માસ્તિકાય, ગતિપરિણત જીવોં ઓર પુદ્ગલોં કી ગતિ મેં સહાયકતા દેને કી ક્રિયા કરતા હૈ, ઓર અધર્માસ્તિકાય સ્થિતિપરિણત જીવોં એવં પુદ્ગલોંકી સ્થિતિ મેં સહાયતા દેનેકી ક્રિયા કરતા હૈ । હસી પ્રકાર આકાશ-અવગાહદાનરૂપ ક્રિયા કરતા હૈ, ઓર કાલ વર્તના આદિ મેં સહાયતા પહુંચાતા હૈ । જીવ નિશ્ચયનય સે નિજસ્વરૂપ-રમણરૂપ ક્રિયા કરતા હૈ । અગર નિશ્ચય નય સે જીવ શુભ ઓર અશુભ રૂપ વિભાવદશા મેં રમણ કરને કી ક્રિયા કરે તો ઉસે અવિચલ પદ કી કદાપિ પ્રાપ્તિ નહીં હો સકતી, અત એવ જીવ અપને સ્વભાવ મેં પરિણતિરૂપ ક્રિયા હી કરતા હૈ । નિશ્ચય નય કી અપેક્ષા પુદ્ગલ મી અનાદિ કાલ સે પૂરણ ગલન રૂપ ક્રિયા કર રહા હૈ । હસ પ્રકાર નિશ્ચય નય સે સમી દ્રવ્ય સક્રિય હૈ ।

પુદ્ગલ દ્રવ્ય સક્રિય છે. નિશ્ચયનયથી ધર્માસ્તિકાય, ગતિમાં પરિણત જીવો અને પુદ્ગલોની ગતિમાં સહાયતા કરવાની ક્રિયા કરે છે, અને અધર્માસ્તિકાય, સ્થિતિમાં પરિણત જીવો અને પુદ્ગલોની સ્થિતિમાં સહાયતા દેવાની ક્રિયા કરે છે. એ પ્રમાણે આકાશ, અવગાહદાનરૂપ ક્રિયા કરે છે, અને કાલ વર્તના આદિમાં સહાયતા પહોંચાડે છે, જીવ નિશ્ચયનયથી નિજસ્વરૂપ-રમણરૂપ ક્રિયા કરે છે. અગર નિશ્ચયનયથી જીવ શુભ અને અશુભરૂપ વિભાવદશામાં રમણ કરવાની ક્રિયા કરે તો તેને અવિચલ પદની પ્રાપ્તિ કદાપિ પણ થઈ શકે નહિ, એટલા કારણથી જીવ પોતાના સ્વભાવમાં પરિણતિરૂપ ક્રિયા જ કરે છે, નિશ્ચયનયની અપેક્ષા એ પુદ્ગલ પણ અનાદિ કાલથી પૂરણ-ગલનરૂપ ક્રિયા કરે છે, એ પ્રમાણે નિશ્ચયનયથી સર્વ દ્રવ્યો સક્રિય છે.

અધુના વ્યવહારનયમાશ્રિત્યોચ્યતે—

વ્યવહારતો ધર્માધર્માકાશકાલા નિષ્ક્રિયાઃ, જીવ-પુદ્ગલાશ્ચ સક્રિયાઃ । વ્યવહારનયતો જીવો રાગદ્વેષરૂપાશુભપરિણત્યા પ્રતિસમયમનન્તપુદ્ગલપરમાણુસ્કન્ધા-  
ડડાનક્રિયાં કરોતિ । પરમાણુપુદ્ગલા અપિ કર્મવર્ગનારૂપેણ જીવસ્ય સર્વસ્મિન્ પ્રદેશે સંલગ્ના ભવન્તિ, અતસ્તે સંશ્લેષક્રિયાં પૂરણગલ્પનાદિક્રિયાં ચ કુર્વન્તિ, તસ્માદ્ વ્યવહારનયતો જીવ-પુદ્ગલાવેવ સક્રિયૌ ।

પદ્ધત્યવિષયે કર્તૃત્વાકર્તૃત્વનિરૂપણમ્—

નિશ્ચયનયેન પદ્ધત્યવિષયો સ્વસ્વરૂપકર્તૃણિ, તસ્માત્તેષાં કર્તૃત્વમુપપદ્યતે ।

અવ વ્યવહાર નય કી અપેક્ષા સે કયન ક્રિયા જાતા હૈ—વ્યવહારનય સે ધર્મ અધર્મ આકાશ ઓર કાલ ક્રિયારહિત હૈ, તથા જીવ ઓર પુદ્ગલ સક્રિય હૈ । વ્યવહાર નય સે જીવ રાગ-દ્વેષરૂપ અશુભ પરિણતિ કે દ્વારા પ્રતિ સમય અનન્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓ કે સ્કન્ધો કો ગ્રહણ કરને કી ક્રિયા કરતા હૈ । પરમાણુ પુદ્ગલ મી કર્મવર્ગનારૂપ મેં પરિણત હો કર જીવ કે સમસ્ત પ્રદેશો મેં બદ્ધ હોતે હૈ, અતઃ વહ બન્ધનરૂપ ક્રિયા કરતે હૈ, ઓર પૂરણ ગલન આદિ ક્રિયા મી કરતે હૈ, ઇસ પ્રકાર વ્યવહાર નય સે જીવ ઓર પુદ્ગલ હી સક્રિય હૈ ।

છહ દ્રવ્યોં કા કર્તાપન ઓર અકર્તાપન—

નિશ્ચય નય સે છહોં દ્રવ્ય અપને ૨ સ્વરૂપ કે કર્તા હૈ, અતઃ સમી દ્રવ્યોં મેં

હવે વ્યવહારનયની અપેક્ષાએ કહેવાય છે—વ્યવહારનયથી ધર્મ અધર્મ આકાશ અને કાલ ક્રિયારહિત છે, તથા જીવ અને પુદ્ગલ સક્રિય છે. વ્યવહારનયથી જીવ રાગ-દ્વેષરૂપ અશુભપરિણતિદ્વારા પ્રતિસમય અનન્ત પુદ્ગલ પરમાણુઓના સ્કન્ધોને ગ્રહણ કરવાની ક્રિયા કરે છે. પરમાણુ પુદ્ગલ પણ કર્મવર્ગણરૂપમાં પરિણત થઈને જીવના સમસ્ત પ્રદેશોમાં બદ્ધ થઈ જાય છે (સર્વ પ્રદેશોને ચોંટી જાય છે) તેટલા કારણથી તે બન્ધનરૂપ ક્રિયા કરે છે, અને પૂરણ-ગલન આદિ ક્રિયા પણ કરે છે. એ પ્રમાણે વ્યવહારનયથી જીવ અને પુદ્ગલ જ સક્રિય છે.

દ્રવ્યોત્ કર્તાપિણ્ અને અકર્તાપિણ્—

નિશ્ચયનયથી છ દ્રવ્યો, પોતપોતાના સ્વરૂપમાં કર્તા છે. તેથી સર્વ દ્રવ્યોમાં

વ્યવહારનયેન જીવસ્ય કર્તૃત્વં, ધર્માદિદ્રવ્યપશ્ચકસ્યાકર્તૃત્વમિતિ ।

વ્યવહારનયઃ—

વ્યવહારનયઃ પટ્ટિધઃ—શુદ્ધાશુદ્ધશુભાશુભોપચરિતાનુપચરિતભેદાત્ । તત્ર—

(૧) શુદ્ધવ્યવહારનયઃ ।

યદિ જીવઃ કર્મમલરૂપાશુદ્ધતાં વ્યપનીયાઽનન્તજ્ઞાનાદિગુણ પશુદ્ધતા મુપાર્જયતિ તર્હિ પ્રથમશુદ્ધવ્યવહારનયેન જીવસ્ય કર્તૃત્વં ભવતિ । તથાહિ—શુદ્ધવ્યવહારનયેન જીવો યદા શુદ્ધસ્વરૂપાર્જનાય પ્રયતતે, તદા પ્રથમગુણસ્થાને કર્તાપન સિદ્ધ હોતા હૈ । વ્યવહારનયસે જીવ કર્તા હૈ ઓર શેષ ધર્મ આદિ પાંચ દ્રવ્ય અકર્તા હૈ ।

વ્યવહારનય—

વ્યવહાર નય છહ પ્રકાર કા હૈ—(૧) શુદ્ધ વ્યવહારનય, (૨) અશુદ્ધ વ્યવહારનય, (૩) શુભ વ્યવહારનય, (૪) અશુભ વ્યવહારનય, (૫) ઉપચરિત વ્યવહારનય ઓર (૬) અનુપચરિત વ્યવહારનય ।

(૧) શુદ્ધ વ્યવહારનય—

અગર જીવ કર્મમલરૂપ અશુદ્ધતા કો હટાકર અનન્તજ્ઞાનાદિગુણરૂપ શુદ્ધતા કા ઉપાર્જન કરતા હૈ તો શુદ્ધ વ્યવહારનય સે જીવ મેં કર્તૃત્વ હોતા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર શુદ્ધ વ્યવહાર નય સે જીવ જવ અપના શુદ્ધ સ્વરૂપ પ્રાપ્ત કરને કે લિયે કર્તાપણું સિદ્ધ થાય છે. વ્યવહારનયથી જીવ કર્તા છે અને બાકીના ધર્માદિ પાંચ દ્રવ્યો અકર્તા છે.

વ્યવહારનય—

વ્યવહારનય છ પ્રકાર છે. (૧) શુદ્ધ વ્યવહારનય (૨) અશુદ્ધ વ્યવહારનય, શુભ વ્યવહારનય, (૪) અશુભવ્યવહારનય, (૫) ઉપચરિત વ્યવહારનય, (૬) અનુપચરિત વ્યવહારનય.

(૧) શુદ્ધ વ્યવહારનય—

જીવ કર્મમલરૂપ અશુદ્ધતાને હટાવીને અનન્તજ્ઞાનાદિગુણરૂપ શુદ્ધતાને ઉપાર્જન કરે છે તો શુદ્ધ વ્યવહારનય પ્રમાણે જીવમાં કર્તૃત્વ-કર્તાપણું હોય છે. તે આ પ્રમાણે—શુદ્ધ વ્યવહારનયથી જીવ પોતાના શુદ્ધ સ્વરૂપને પ્રાપ્ત કરવા માટે પ્રયત્ન



અનન્તાનુબન્ધિકષાયચતુષ્ટયં ક્ષપયિત્વા ચતુર્થં ગુણસ્થાનં સમાસાદ્ય સમ્યક્ત્વગુણં  
લભતે । અપ્રત્યાશ્ચયેયકષાયચતુષ્ટયક્ષયેણ દેશવિરતિરૂપં પશ્ચમં ગુણસ્થાનં  
પ્રાપ્નોતિ । પ્રત્યાશ્ચયેયકષાયચતુષ્ટયક્ષયેણ જીવસ્ય પષ્ટસપ્તમગુણસ્થાનયોઃ સર્વ-  
વિરતિરૂપયોરુપલબ્ધિર્ભવતિ । યદ્યપ્તમગુણસ્થાનં લભ્યતે તદા તત્ર શ્રેણિદ્વયં  
સમારૂઢતે, ઉપશમશ્રેણિઃ ક્ષપકશ્રેણિશ્ચ । તત્રોપશમશ્રેણ્યાપ્તમગુણસ્થાનાદેકાદશ-  
ગુણસ્થાનં યાવદધ્યારોહતિ । ક્ષપકશ્રેણ્યા ત્વષ્ટમાદારમ્ય દશમં યાવત્ સમારૂ-  
ઢૈકાદશં વિહાય દ્વાદશં ગુણસ્થાનં સમારોહતિ । જીવસ્તત્ર રાગદ્વેષરૂપમોહનીય

પ્રયત્ન કરતા હૈ તવ પ્રથમ ગુણસ્થાન મેં અનન્તાનુબન્ધી ચાર કષાયોંકા ક્ષય કરકે ચતુર્થ  
ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરતા હૈ ઓર સમ્યક્ત્વ ગુણ પા લેતા હૈ । ચાર અપ્રત્યાશ્ચયાનાવરણ  
કષાયોં કા ક્ષય કરકે દેશવિરતિરૂપ પાંચવાં ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ઓર  
પ્રત્યાશ્ચયાનાવરણ કષાય-ચતુષ્ટય કે ક્ષય સે જીવ કો સર્વવિરતિરૂપ છઠે ઓર સાતવે  
ગુણસ્થાન કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । જીવ કો યદિ આઠવાં ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત હોતા હૈ  
તો વહાં સે દો શ્રેણિયાં આરમ્ભ હોતી હૈં ઓર જીવ ડન મેં સે કિસી ઇક શ્રેણી પર  
આરૂઢ હોતા હૈ । દો શ્રેણિયાં હૈં-ઉપશમશ્રેણી, ઓર ક્ષપકશ્રેણી । ઉપશમશ્રેણીવાળા જીવ  
ગ્યારહવેં ગુણસ્થાન તક ચઢ સકતા હૈ । ક્ષપકશ્રેણીવાળા જીવ આઠવેં સે દશવેં  
ગુણસ્થાન તક પહુંચકર ગ્યારહવેં કો છોડ કર સીધા વારહવેં ગુણસ્થાન પર આરૂઢ  
હો જાતા હૈ । જીવ દશવેં ગુણસ્થાન કે અન્ત મેં રાગદ્વેષરૂપ મોહનીય કર્મ કા સમૂલ નાશ કરકે,

કરે છે, ત્યારે પ્રથમ ગુણસ્થાનમાં અનન્તાનુબન્ધી ચાર કષાયોનો ક્ષય કરીને ચતુર્થ  
(ચોથું) ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરે છે, અને સમ્યક્ત્વ ગુણ પામી બાકી છે. ચાર  
અપ્રત્યાશ્ચયાનાવરણ કષાયોનો ક્ષય કરીને દેશવિરતિરૂપ પાંચમું ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત કરે  
છે, અને પ્રત્યાશ્ચયાનાવરણ કષાય-ચતુષ્ટયના ક્ષયથી જીવને સર્વવિરતિરૂપ છઠું અને  
સાતમા ગુણસ્થાનની પ્રાપ્તિ થાય છે. જીવને જો આઠમું ગુણસ્થાન પ્રાપ્ત થાય છે તો  
ત્યાંથી જો શ્રેણીઓનો આરંભ થાય છે, અને જીવ એ બેમાંથી કોઈ એક શ્રેણી પર આરૂઢ  
થાય છે. બે શ્રેણી આ પ્રમાણે છે-(૧) ઉપશમશ્રેણી (૨) ક્ષપકશ્રેણી. ઉપશમશ્રેણી  
વાળો જીવ અગિઆરમાં ગુણસ્થાન સુધી ચઢી શકે છે, ક્ષપકશ્રેણીવાળો જીવ  
આઠમાંથી દસમા ગુણસ્થાન સુધી પહોંચીને અગિઆરમા ગુણસ્થાનને છોડીને સીધા  
બારમાં ગુણસ્થાન પર આરૂઢ થઈ બાકી છે. જીવ દસમા ગુણસ્થાનના અંતમાં

કર્મ સમૂલમુન્મૂલ્ય ઘાતિકર્માણિ ક્ષપયિત્વા ત્રયોદશં ગુણસ્થાનમારોહતિ । ત્રયોદશે ગુણસ્થાને નિર્મલકેવલજ્ઞાનં પ્રાપ્નોતિ । તદનન્તરં પञ્ચલઘ્વક્ષરોચ્ચારણકાલસ્થિતિકં ચતુર્દશગુણસ્થાનં સંપ્રાપ્ય નિઃશેષકર્મનિચયં ક્ષપયિત્વાઽસૌ શિવપદં સંપ્રાપ્નોતિ ।  
। ઇતિ જીવસ્ય શુદ્ધસ્વરૂપનિરૂપકઃ શુદ્ધવ્યવહારનયઃ ।

### (૨) અશુદ્ધવ્યવહારનયઃ—

અશુદ્ધવ્યવહારનયેન રાગદ્વેષમિથ્યાત્વાદયોઽનાદિકાલતઃ શત્રુરૂપેણ જીવે સંલગ્નાઃ સન્તિ, તસ્માજ્જીવસ્યાશુદ્ધત્વં જ્ઞેયમ્ । અશુદ્ધત્વેન ચ પ્રતિસમય-  
ઔર વારહવેં ગુણસ્થાન મેં શેષ ત્રીન ઘાતિ કર્મોં કા ક્ષય કરકે તેરહવેં ગુણસ્થાન મેં પહુંચતા હૈ ।  
ઇસ ગુણસ્થાન મેં ( વારહવેં ગુણસ્થાન કે અન્તિમ સમય મેં ) જીવ કો નિર્મલ  
કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત હોતા હૈ । તેરહવેં ગુણસ્થાન કે વાદ પાંચ હ્રસ્વ સ્વર (અ, ઇ, ઉ, ઋ, ૠ)  
ઉચ્ચારણ કરને મેં જિતના સમય લગતા હૈ ઉતને સમય તક ચૌદહવેં ગુણસ્થાન મેં ઠહરકર  
સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષયકર કે મોક્ષ પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ ।

જીવકે શુદ્ધ સ્વરૂપ કો ગ્રહણ કરને વાલા યહ શુદ્ધ વ્યવહારનય હૈ ।

### (૨) અશુદ્ધ વ્યવહારનય—

અશુદ્ધ વ્યવહારનય સે રાગ-દ્વેષ ઔર મિથ્યાત્વ આદિ અનાદિ કાલ સે શત્રુકી  
તરહ જીવ કે સાથ લગે હુણ હૈ, ઇસી કારણ જીવ મેં અશુદ્ધતા હૈ । ઇસ અશુદ્ધતા કે  
રાગ-દ્વેષરૂપ મોહનીય કર્મોં સમૂળગો નાશ કરીને અને ખારમા શુણ્ણસ્થાનમાં શેષ  
ત્રણ ઘાતીકર્મોંનો ક્ષય કરીને તેરમા શુણ્ણસ્થાનમાં પહોંચે છે. એ શુણ્ણસ્થાનમાં  
( ખારમા શુણ્ણસ્થાનના અન્તિમ સમયમાં ) જીવને નિર્મલ કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે.  
તેરમા શુણ્ણસ્થાન પછી પાંચ હ્રસ્વ સ્વર-(અ-ઇ-ઉ-ઋ-ૠ) ઉચ્ચારણ કરતાં જોટલો  
સમય લાગે છે, તેટલો સમય ચૌદમા શુણ્ણસ્થાનમાં થોભીને સમસ્ત કર્મોંનો ક્ષય  
કરીને મોક્ષ પ્રાપ્ત કરી લે છે.

જીવના શુદ્ધ સ્વરૂપને ગ્રહણ કરવા વાળો આ શુદ્ધ વ્યવહાર નય છે.

### (૨) અશુદ્ધ વ્યવહારનય—

અશુદ્ધ વ્યવહારનયથી રાગ-દ્વેષ અને મિથ્યાત્વ આદિ અનાદિ-કાલથી શત્રુની  
માફક જીવની સાથે લાગ્યાં છે, એ કારણથી જીવમાં અશુદ્ધતા છે. એ અશુદ્ધતાના

મનન્તાનન્તકર્મવર્ગણાઃ સત્તારૂપેણાવગુણિતા ભવન્તિ । एवं चाशुद्धव्यवहारनयेन जीवस्य कर्तृत्वं सिध्यति ।

### (૩) શુભવ્યવહારનયઃ—

શુભવ્યવહારનયેનાત્મા શુભપરિણામતો દાનશીલતપોભાવચિનયમક્તિવૈયાવૃત્ત્યં, શ્રમણનિર્ગ્રન્થાનાં પ્રાસુકમેષણીયમશનપાનસ્વાદ્યસ્વસ્ત્રકમ્બલપ્રતિગ્રહપાદપ્રોચ્છન-પ્રાતિહાર્યપીઠફલકશય્યાસંસ્તારકૌષ્ધભૈષજ્યપ્રતિભામરૂપં સુપાત્રદાનં, મ્રિયમાણ-જીવરક્ષણરૂપમભયદાનં, હીનદીનનિઃસત્ત્વજીવાનાં સાહાય્યં, સાધર્મિકવાત્સલ્યં, પરહિત-ચિન્તારૂપાં મૈત્રીં, પરદુઃખનિવારણેચ્છારૂપાં કરુણાં, નિઃસ્વાર્થપરોપકારાદિકાં ચ કારણ પ્રતિસમય અનન્તાનન્ત કર્મવર્ગણે સત્તારૂપ સે બદ્ધ હોતી રહતી હૈ । ઇસ પ્રકાર અશુદ્ધ વ્યવહારનય સે જીવ કો કર્તા સમજના જાહિણ ।

### (૩) શુભ વ્યવહારનય—

શુભ વ્યવહારનય સે આત્મા શુભપરિણામદ્વારા દાન, શીલ, તપ, ભાવ, ચિનય, મક્તિ, વૈયાવૃત્ત્ય રૂપ શુભક્રિયા કરતા હૈ, શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો કો પ્રાસુક એષણીય-અશન પાન સ્વાદ્ય, સ્વાદ્ય, વસ્ત્ર, કમ્બલ, પાત્ર, પાદપ્રોચ્છન, પડિહારી પીઠ, ફલક, શય્યા, સંસ્તારક, ઔષધ, ભેષજ કા સુપાત્રદાન દેતા હૈ । મરતે હુણ જીવ કી રક્ષારૂપ અભયદાન દેતા હૈ, હીન દીન ઓર નિર્બલ જીવો કી સહાયતા કરતા હૈ । સાધર્મો કૈ પ્રતિ વાત્સલ્ય પ્રકટ કરતા હૈ, પરહિતચિન્તનરૂપ મૈત્રી ભાવના, દૂસરો કા દુઃખનિવારણરૂપ કરુણા

કારણે પ્રતિસમય અનન્તાનન્ત કર્મ વર્ગણાએ સત્તારૂપથી બદ્ધ થતી રહી છે. આ પ્રમાણે અશુદ્ધ વ્યવહારનયથી જીવને કર્તા સમજવો જોઈએ.

### (૩) શુભ વ્યવહારનય—

શુભ વ્યવહારનયથી આત્મા દાન, શીલ, તપ, ભાવ, ચિનય, ભક્તિ વૈયાવૃત્ત્ય રૂપ શુભ ક્રિયા કરે છે. શ્રમણનિર્ગ્રન્થોને પ્રાસુક એષણીય-અશન, પાન, ખાદ્ય, સ્વાદ્ય, વસ્ત્ર, કમ્બલ, પાત્ર, પાદપ્રોચ્છન, પડિહારી-પીઠ, ફલક, શય્યા, સંસ્તારક, ઔષધ, ભેષજનું સુપાત્ર દાન આપે છે, મરતા જીવની રક્ષારૂપ અભયદાન આપે છે, હીન દીન અને નિર્બલ જીવોની સહાયતા કરે છે; સાધર્મીના ઉપર વાત્સલ્ય પ્રગટ કરે છે, પરહિતચિન્તનરૂપ મૈત્રીભાવના, બીજાના દુઃખનિવારણરૂપ કરુણા તથા નિઃસ્વાર્થ



શુભક્રિયાં કરોતિ, તેન શુભવ્યવહારનયેન જીવસ્ય કર્તૃત્વં જાયતે ।

(૪) અશુભવ્યવહારનયઃ—

અશુભવ્યવહારનયેન જીવો હાસ્ય-ભય-શોક-રત્ય-રતિ-નિદ્રા-પ્રાણાતિપ્રાત-મૃષાવાદા-ડદત્તાદાન-મૈથુન-પરિગ્રહ-ક્રોધ-માન-માયા-લોભ-રાગ-દ્વેષાદિષુ પ્રવર્તતે । વિષયસુખારમ્ભાદિરૂપામશુભક્રિયાં ચ કરોતિ તેનાડશુભવ્યવહારનયતો જીવસ્ય કર્તૃત્વં સિધ્યતિ ।

(૫) ઉપચરિતવ્યવહારનયઃ—

ઉપચરિતવ્યવહારનયેન જીવો નિજમજરામરત્વમનન્તજ્ઞાનદર્શનમવ્યાવાધ-તથા નિઃસ્વાર્થ પરોપકાર આદિરૂપ શુભક્રિયા કરતા હૈ, અતઃ શુભ વ્યવહારનય સે જીવ કા કર્તાપન સિદ્ધ હોતા હૈ ।

(૪) અશુભ વ્યવહારનય—

અશુભ વ્યવહારનય સે જીવ હાસ્ય, ભય, શોક, રતિ, અરતિ, નિદ્રા, પ્રાણાતિ પાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ, દ્વેષ, આદિ અશુભ કાર્યોં એવં ભાવોં મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ, તથા વિષયસુખ એવં આરમ્ભ આદિ રૂપ અશુભ ક્રિયા કરતા હૈ, અતઃ અશુભવ્યવહારનય સે જીવ કર્તા સિદ્ધ હોતા હૈ ।

(૫) ઉપચરિત વ્યવહારનય—

ઉપચરિત વ્યવહાર નય સે જીવ અપને અજરતા અમરતા તથા અનન્ત જ્ઞાન પરોપકાર આદિરૂપ શુભ ક્રિયા કરે છે, તે કારણથી શુભ વ્યવહારનયથી જીવનું કર્તાપણું સિદ્ધ થાય છે.

(૪) અશુભ વ્યવહારનય—

અશુભ વ્યવહારનયથી જીવ હાસ્ય, ભય, શોક, રતિ, અરતિ, નિદ્રા, પ્રાણાતિપ્રાત, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન, પરિગ્રહ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, રાગ દ્વેષ આદિ અશુભ કાર્યોં એવં ભાવોંમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, વિષયસુખ એવં આરમ્ભ આદિરૂપ અશુભ ક્રિયા કરે છે, તેથી અશુભ વ્યવહારનયથી જીવ કર્તા સિદ્ધ થાય છે.

(૫) ઉપચરિત વ્યવહારનય—

ઉપચરિત વ્યવહારનયથી જીવ પોતાના અજર અમર તથા અનન્તજ્ઞાન, દર્શન

सुखादिरूपं शुद्धस्वरूपं विस्मृत्य पौद्गलिकविभावपरिणामेऽनन्तदुःखजनकेऽनन्तानन्दमनुभवति, मोहवशेन बाह्यवस्तुषु ममत्वभावं कुरुते । यथा-“इदं मम गृहम्, इमे मम पुत्राः, इमा मम दाराः, इमे मम परिवागः, इदं मम सर्वं धनजनादिकम्” । इत्थं विषरूपं विषयं पीयूषं मन्यमानो विषयकतानो क्षणमात्रसुखजनकान् बहुकालदुःखदान् कामभोगान् भुञ्जानो विषयमृगतृष्णां पुनः पुनर्धावमानो दीर्घाध्वसंसारे क्षणमपि विश्रान्तिं न लभते । ममेति कुर्वन्नयं जीवः पुत्रदारादीनां सुखेन सुखं, दुःखेन दुःखं मन्यमानस्तदर्थं व्यर्थमेव शोकमनुभवति, तदर्थं प्राणनाशमपि कर्तुं समुद्यतो भवति । अनात्मीयमपि स्वीयं मन्यमानो नानाविधपापकार्यकरणेन

दर्शक तथा अव्याबाधसुखरूप शुद्ध स्वरूप को भूल कर पौद्गलिक विभाव परिणाम में जो अनन्त दुःखों का जनक है अनन्त आनन्द मानता है । मोह के वशीभूत हो कर बाह्य वस्तुओं में ममत्व धारण करता है, जैसे- “यह मेरा घर है, ये मेरे पुत्र हैं, यह मेरी पत्नी है, ये मेरे कुटुम्बी हैं, ये सब धन-जन आदि मेरे हैं” । इस प्रकार के विषरूप विषयों को अमृत मानता हुआ, विषयों में तन्मय हो कर, क्षण भर सुख देने वाले और दीर्घकाल तक दुःख देने वाले काम-भोगों को भोगता हुआ, विषयों की मृगतृष्णा की तरफ वारंवार दौड़ता हुआ, इस दीर्घमार्गवाले संसार में क्षण भर भी विश्राम नहीं पाता है । मेरे मेरे करता हुआ यह जीव, पुत्र और पत्नी वगैरह के सुख में सुख और दुःख में दुःख मानता हुआ व्यर्थ ही उन के लिये शोक करता है, यहाँ तक की उन के लिए प्राणों का नाश तक करने को उद्यत हो जाता है । यह

तथा अव्याबाध सुखरूप शुद्ध स्वरूपने भूली જઘને પૌદ્ગલિક વિભાવ પરિણામમાં કે જે અનંત દુઃખોનો જનક (ઉત્પન્ન કરનાર) છે. તેમાં અનંત આનંદ માને છે, મોહને વશ થઇને બહારની વસ્તુઓમાં મમત્વ ધારણ કરે છે, જેમકે-“આ ઘર મારું છે; આ મારા પુત્ર છે, આ મારી સ્ત્રી છે, આ મારું કુટુંબ છે, આ સર્વ ધન-જન વગેરે મારું છે” એ પ્રમાણે વિષરૂપ-વિષયોને અમૃતરૂપ માનીને, વિષયોમાં તન્મય થઇને ક્ષણમાત્ર સુખ આપવાવાળા અને લાંબા કાલ સુધી દુઃખ આપવાવાળા ભોગોને ભોગવતો થકો, વિષયોની મૃગતૃષ્ણા તરફ વારંવાર દોડતો થકો આ લાંબા માર્ગવાળા સંસારમાં ક્ષણ માત્ર પણ વિશ્રામ પામતો નથી. મારા-મારા કરતો આ જીવ, પુત્ર અને પત્ની વગેરેના સુખમાં સુખ અને દુઃખમાં-દુઃખ માનતો થકો તેના માટે નફાનો શોક કરે છે-ત્યાં સુધી કે તેના માટે પ્રાણોનો નાશ કરવા તૈયાર થઈ જાય છે. આ જીવ પરને પોતાનું સમજીને નાના પ્રકારનાં

સ્વાત્માનં મલીનીકરોતિ । એવમુક્તરીત્યા કર્મવશેન મમત્વપાશબદ્ધસ્ય જીવસ્થોપ-  
ચરિત્વ્યવહારનયેન કર્તૃત્વમિતિ ।

#### (૬) અનુપચરિત્વ્યવહારનય:-

અનુપચરિત્વ્યવહારનયેન સ્વાત્માનઃ પ્રત્યક્ષરૂપેણાત્યન્તભિન્નં શરીરમજ્ઞાન-  
વશાત્ પારિણામિકભાવેનાત્મપ્રદેશૈરૈક્યભાવમાપદ્યમાનશ્ચ સ્વાત્માનઃ સ્વરૂપં  
મન્યમાનસ્તત્પુષ્ટિરક્ષણાદિહેતોરેકેન્દ્રિયાદિસકલપ્રાણ્યુપમર્દનજનકમહારમ્ભમૃષાવાદા -  
દત્તાદાન-મૈથુન-પરિગ્રહાદિકાનિ નાનાવિધપાપકર્માણિ જીવઃ સમાચરતિ ।  
આત્માનઃ સ્વરૂપે શરીરે ચ નિતાન્તં ભિન્નતા વર્તતે । તથાહિ-આત્મા

જીવ પર કો સ્વકીય સમજ કર નાના પ્રકાર કે પાપ કાર્ય કર કે અપને કો મલીન  
બનાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર કર્મવશ હો કર મમતા કે પાશમેં જકડા હુઆ યહ જીવ ઉપ-  
ચરિત વ્યવહારનય સે કર્તા સિદ્ધ હોતા હૈ ।

#### (૬) અનુપચરિત વ્યવહારનય—

અનુપચરિત વ્યવહારનય સે જીવ અપની આત્મા સે પ્રત્યક્ષતઃ ભિન્ન શરીર કો  
અજ્ઞાન કે વશ હો કર પારિણામિક ભાવ સે આત્મપ્રદેશોંકી એકતા સમજ કર, ઔર  
આત્મા કા એસા હી સ્વરૂપ માન કર શરીર કી પુષ્ટતા ઔર રક્ષા આદિ કે લિખ  
એકેન્દ્રિય આદિ સમસ્ત પ્રાણિયોં કી હિંસા કરને વાલે મહારમ્ભ, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન,  
મૈથુન ઔર પરિગ્રહ આદિ નાના પ્રકાર કે પાપ કર્મોં કા આચરણ કરતા હૈ । વસ્તુતઃ  
આત્મા કે સ્વરૂપ મેં ઔર શરીર મેં અત્યન્ત ભિન્નતા હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર-આત્મા ચૈતન્ય

પાપકાર્ય કરીને પોતાને મલીન બનાવે છે. આ પ્રમાણે કર્મને વશ થઈ મમતાના  
પાશમાં જકડાએલો આ જીવ ઉપચરિત વ્યવહારનયથી કર્તા સિદ્ધ થાય છે.

#### (૬) અનુપચરિત વ્યવહારનય—

અનુપચરિત વ્યવહારનયથી જીવ પોતાના આત્માથી પ્રત્યક્ષ ભિન્ન શરીરને  
અજ્ઞાનવશ થઈ પારિણામિક ભાવથી આત્મપ્રદેશોની એકતા સમજીને, અને આત્માનું  
એવું જ સ્વરૂપ માનીને શરીરની પુષ્ટતા અને રક્ષા આદિ માટે એકેન્દ્રિય આદિ  
તમામ પ્રાણીઓની હિંસા થવાવાળા, મહારમ્ભ, મૃષાવાદ, અદત્તાદાન, મૈથુન, અને  
પરિગ્રહ આદિ નાના-અનેક પ્રકારનાં પાપ કર્મોનું આચરણ કરે છે. વસ્તુતઃ આત્માના  
સ્વરૂપમાં અને શરીરમાં અત્યન્ત ભિન્નતા છે, તે આ પ્રમાણે કે:-આત્મા ચૈતન્ય



चैतन्यरूपः, शरीरमिदं जडरूपम् । आत्मा-अरूपी, शरीरमिदं रूपि । आत्मा ज्ञान-दर्शनसुखवीर्यादिरूपः, शरीरं तु निःसत्त्वं विविधव्याधियुक्तम् । आत्मा-नित्यः शाश्वतो ध्रुवरूपश्च, शरीरमिदमनित्यमशाश्वतमध्रुवम् । आत्मा-नितान्तनिर्मलः, शरीरं तु गर्भाशयस्थानतः शुक्रशोणिताख्यकारणतः, नवद्वारतो मलनिःसरणेन च नितान्ता-शुचि, मलमाण्डं च ।

यदर्थमेतादृशानि कर्माणि कुर्वन्ति, तदनन्तवारं लब्धं त्यक्तं च वपुः । ईदृशे नश्वरे शरीरेऽनुरज्य पुनः पुनस्तान्येव पापकर्माणि समाचरन् स्वीयमात्मानं कर्मभाराक्रान्तं करोति । तेन पुनः पुनरनादिदुरन्तसंसारमहागते पतितः स्वा-

स्वरूप है, शरीर जड है । आत्मा अरूपी है, शरीर रूपी है । आत्मा ज्ञान दर्शन सुख और वीर्यादिरूप है, शरीर निःसत्त्व और विविध व्याधियों से युक्त है । आत्मा नित्य है, शाश्वत है, ध्रुव है, शरीर अनित्य, अशाश्वत, और अध्रुव है । आत्मा नितान्त निर्मल है, शरीर गर्भाशय में स्थित होने से शुक्र और शोणित से बना हुआ होने के कारण, तथा नौ द्वारों से मल निकलने के कारण अत्यन्त अशुचि है, और मल का पात्र है । जिस शरीर के लिए ऐसे २ उपर्युक्त कर्म किये जाते हैं वह शरीर अनन्त बार पाया है और अनन्त बार छोड़ा है, लेकिन संसारी जीव इस नश्वर शरीर में अनुराग करके पुनः पुनः वही पापकर्म करता हुआ अपने को कर्म के भार से भारी बनाता है । इस कारण अनादि और दुरन्त संसाररूपी महागते में पुनः पुनः पड़कर अपना उद्धार करने

स्वरूप છે, શરીર જડ છે. આત્મા અરૂપી છે, શરીર રૂપી છે. આત્મા જ્ઞાન, દર્શન, સુખ, અને વીર્યરૂપ છે, શરીર નિઃસત્ત્વ અને વિવિધ વ્યાધિથી યુક્ત છે. આત્મા નિત્ય છે, શાશ્વત છે, ધ્રુવ છે, શરીર અનિત્ય અશાશ્વત અને અધ્રુવ છે. આત્મા અત્યન્ત નિર્મલ છે, શરીર ગર્ભાશયમાં સ્થિત હોવાથી શુક્ર અને શોણિતથી (વીર્ય અને લોહીથી) અને લું હોવાના કારણે, તથા નવ દ્વારોથી મલ નીકળવાના કારણે અત્યન્ત અશુચિ-અપવિત્ર છે અને મલતું પાત્ર છે. જે શરીરના માટે એવાં એવાં ઉપર કહેલાં તેવાં કર્મ કરવામાં આવે છે, તે શરીર અનંતવાર પ્રાપ્ત થયું છે અને અનંતવાર છોડી દીધું છે, પરંતુ સંસારી જીવ આ નાશવંત શરીરમાં અનુરાગ-પ્રીતિ કરીને ફરી-ફરીને તે પાપકર્મ કરીને પોતાને કર્મના ભારથી ભારે બનાવે છે. એ કારણથી અનાદિ અને દુરંત-મુશ્કેલીથી પાર પડે તેવો-સંસારરૂપી મહાગત-મોટો ખાડો તેમાં વારંવાર પડીને પોતાનો ઉદ્ધાર કરવામાં અસમર્થ બની જાય છે, પરંતુ

ત્માનમુદ્ધર્તુ ન શક્રોતિ । અવિજ્ઞાય ચ સ્વકૃતકર્મભારં દુરન્તસંસારમહાગર્તપતનં ચ મુહુર્મુહુસ્તાદ્દશાન્યેવ કર્માણિ કુર્વન્તિ સંસારિણઃ । એવમાત્મનોઽત્યન્તભિન્નં શરીરમેવ સ્વસ્વરૂપં મત્વા તત્પુષ્ટિરક્ષણાદ્યર્થં ક્રિયમાણયા ક્રિયયા જીવસ્યાનુપચરિત-વ્યવહારનયેન કર્તૃત્વં સિધ્ધયતિ । ઉક્તરીત્યા પઢવિધવ્યવહારનયેન જીવસ્ય કર્તૃત્વં વિજ્ઞેયમ્ ।

જીવસ્વરૂપે સદૃશાઽસદૃશવિચારઃ—

નનુ—સર્વેષાં જીવાનાં સ્વરૂપં લક્ષણં ચ સદૃશમેવ, તર્હિ સંસારિણો દુઃખિનઃ, સિદ્ધાસ્તુ સુખિન इति કથમ્ ? ઉચ્યતે—નિશ્ચયનયેન તુ સર્વે જીવાઃ

મેં અસમર્થ બન જાતા હૈ, મગર સંસારી જીવ અપને કિયે કર્મોં કે ભાર કો ન સમજ કર, તથા સંસારરૂપી મહાગર્ત કે પતન કો ન જાનકર ફિર-ફિર વૈસે હી કર્મ કરને લગતે હૈ । હસ પ્રકાર આત્મા સે ભિન્ન શરીર કો હી અપના સ્વરૂપ સમજ કર ઉસકે પોષણ ઓર રક્ષણકે લિપ્ કી જાનેવાલી ક્રિયાસે જીવ અનુપચરિત વ્યવહારનયકી અપેક્ષા કર્તા સિદ્ધ હોતા હૈ । હસ તરહ પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે હહ તરહ કે વ્યવહારનય સે જીવકો કર્તા સમજના ચાહિપ્ ।

જીવકે સ્વરૂપ મેં સદૃશ-વિસદૃશ વિચાર—

પ્રશ્ન—અગર સર્વ જીવોકા સ્વરૂપ ઓર લક્ષણ સમાન હી હૈ તો સંસારી જીવ દુઃખી ઓર સિદ્ધ સુખી ક્યોં હૈ ।

ઉત્તર—નિશ્ચય નયસે સર્ભી જીવ સિદ્ધોંકે સમાન હી હૈ । ઁન મેં સે જો જીવ સંસારી હવ પોતાનાં કરેલાં કર્મોંના ભારને સમજતો નથી, તથા સંસારરૂપી મહાગર્તમાં પડ્યો છે તે તેને જાણતો નથી. તેથી ફરી-ફરી તેવાં કર્મોં કરવા લાગે છે. એ પ્રમાણે આત્માથી ભિન્ન શરીરને જ પોતાનું સ્વરૂપ સમજીને તેનાં પોષણ તથા રક્ષણ માટે કરવામાં આવતી ક્રિયાથી હવ અનુપચરિત વ્યવહાર નયની અપેક્ષાએ કર્તા સિદ્ધ થાય છે. એ પ્રમાણે પૂર્વે કહેલા પ્રકારથી છ પ્રકારના વ્યવહારનયથી હવને કર્તા સમજવો જોઈએ.

હવના સ્વરૂપમાં સદૃશ-વિસદૃશ વિચાર—

પ્રશ્ન—અગર સર્વ હવોનું સ્વરૂપ ઁને લક્ષણ સમાનજ છે તો પછી સંસારી હવ દુઃખી ઁને સિદ્ધ હવ સુખી કેમ છે ?

ઉત્તર—નિશ્ચયનયથી સર્વ હવો સિદ્ધોંની સમાન છે. તેમાંથી જે હવ તમામ

સિદ્ધસદૃશા એવ, તત્ર યે સકલં કર્મ ક્ષપયન્તિ તે સર્વે જીવાઃ સિદ્ધા ભવન્તિ, તસ્માત્ સર્વેવામેકૈવ સત્તા વિદ્યતે । યદિ સર્વે સિદ્ધસદૃશાસ્તદિં કથમભવ્યજીવૈઃ સિદ્ધગતિભાગિર્ન ભૂયતે ? ઇતિ શ્રૂયતામ્—

અભવ્યજીવાનામનાઘનન્તચિક્ષણકર્મસંબન્ધાત્, પરાવર્તસ્વભાવાભાવાચ કર્મક્ષપણશક્તિર્નાસ્તિ, ભવ્યાનાં તુ તાદૃશચિક્ષણકર્માભાવાત્, પરાવર્તસ્વભાવસદ્ભાવાચ દેવગુરુધર્મસામગ્રીસત્ત્વે જ્ઞાનાદિરત્નત્રયસમારાધનેન, ગુણશ્રેણિસમારોહણેન ચ સિદ્ધપદં લબ્ધું શક્યમ્ ।

સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષય કર ડાલતે હૈં વે સબ સિદ્ધ કહલાતે હૈં । ડનકા અસલી સ્વરૂપ પ્રકટ હો જાતા હૈ । સંસારી જીવ કર્મ કે અધીન હોને કે કારણ દુઃખી હોતે હૈં । ઇસ પ્રકાર યદપિ પ્રત્યેક જીવ કી સત્તા પૃથક્-પૃથક્ હૈ, તથાપિ ડન મેં સ્વરૂપ કી સમાનતા હૈ ।

પ્રશ્ન—યદિ સમસ્ત જીવ સિદ્ધોં કે સમાન હૈં તો અભવ્ય જીવ સિદ્ધિગતિ ક્યોં પ્રાપ્ત નહીં કરતે ?

ઉત્તર—સુનિયે, અભવ્ય જીવોં મેં અનાદિ અનન્ત ચિક્ષને કર્મોં કે સંબન્ધ સે ઓર અપરિવર્તનશીલ સ્વભાવ કે કારણ કર્મોં કા ક્ષય કરને કી શક્તિ નહીં હૈ । ભવ્ય જીવોં કે વૈસે ચિક્ષને કર્મોં કે ન હોને સે, ઓર પરાવર્ત સ્વભાવ સે, દેવ ગુરુ ઓર ધર્મરૂપ સામગ્રીકે મિલને પર જ્ઞાનાદિરત્નત્રય કી આરાધના કરને સે, તથા ગુણશ્રેણી પર આરોહણ કરને સે ડનકો સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરના શક્ય હૈ ।

કર્મોંનો ક્ષય કરી નાંખે છે, તે સર્વે સિદ્ધ કહેવાય છે. તેનું અસલી સ્વરૂપ પ્રગટ થઈ જાય છે. સંસારી જીવ કર્મને આધીન હોવાના કારણે દુઃખી હોય છે. એ પ્રમાણે જો કે પ્રત્યેક જીવની સત્તા પૃથક્-પૃથક્-જૂદી જૂદી છે, તો પણ તેનામાં સ્વરૂપની સમાનતા છે.

પ્રશ્ન—જો સર્વ જીવ સિદ્ધોંની સમાન છે તો અભવ્ય જીવ સિદ્ધિગતિને કેમ પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી ?

ઉત્તર—સાંભળો, અભવ્ય જીવોંમાં અનાદિ-અનન્ત ચિક્ષણ કર્મોંનો સંબંધ હોવાથી અને અપરિવર્તનશીલ સ્વભાવના કારણે કર્મોંનો ક્ષય કરવાની શક્તિ નથી; ભવ્ય જીવોંને તેવાં ચીકણાં કર્મ ન હોવાથી અને પરાવર્ત-સ્વભાવથી દેવ, ગુરુ અને ધર્મરૂપ સામગ્રીના મળવા પર, જ્ઞાનાદિ રત્નત્રયની આરાધના કરવાથી, તથા ગુણશ્રેણી પર આરોહણ કરવાથી તેઓને સિદ્ધપદ પ્રાપ્ત કરવું શક્ય છે.



મનુષ્યમવં પ્રાપ્ય કર્માણિ ક્ષપયિત્વા જીવા મોક્ષં યાન્તિ, તદાની-  
મેવાવ્યવહારરાશિમૂક્ષમનિગોદાદકામનિર્જરયા નિઃસૃત્યાઽન્યે જીવાઃ વિકાસદશાં  
પ્રાપ્નુવન્તિ । યદિ દશ જીવા મુક્તિં ગચ્છન્તિ તદા દશ સૂક્ષ્મનિગોદાન્નિષ્ક્રાન્તા  
ભવન્તિ । કદાચિત્તોઽપ્યલ્પસંખ્યકાઃ સૂક્ષ્મનિગોદા બહિરાયાન્તિ તદા તૈઃ  
સાર્ધમેકો દ્વાવભવ્યજીવૌ નિઃસરતઃ, કિન્તુ વ્યવહારાગૌ જીવાનાં હાસવૃદ્ધી ન  
ભવતઃ । ईदृशा निगोदगोलका असंख्याता लोके सन्ति, इति ग्रन्थान्तरे ।

। इत्यवतरणा संपूर्णा ।

इत्थं भगवत्प्ररूपितमनुयोगचतुष्टयं प्रदर्शितम् । तत्र चरणकरणानुयोगस्य  
प्राधान्यात्प्राथम्यमिति च निगदितम् ।

મનુષ્ય મવ પાકર કર્મોં કા ક્ષય કરકે જીવ મોક્ષ જાતે હૈં, ઉસી સમય  
અવ્યવહારાશિ સૂક્ષ્મ નિગોદ સે અકામનિર્જરાદ્વારા દૂસરે જીવ નિકલકર વિકાસદશા કો પ્રાપ્ત  
કરતે હૈં । અગર દશ જીવ મોક્ષ મેં જાતે હૈં તો દશ જીવ સૂક્ષ્મનિગોદ સે વાહર  
નિકલ આતે હૈં । કદાચિત્ અલ્પસંખ્યક સૂક્ષ્મ નિગોદ જીવ વાહર નિકલતે હૈં તો ઉનકે  
સાથ ઇક-દો અભવ્ય જીવ વાહર આ જાતે હૈં મગર વ્યવહાર રાશિ મેં જીવોં કી ઘટતી  
વદતી નહીં હોતી । ઇસે નિગોદગોલક લોકમેં અસંખ્યાત હોતે હૈં, ઇસા ગ્રન્થાન્તર મેં કહા હૈ ।

इति अवतरणा संपूर्ण—

इस प्रकार भगवान् के द्वारा प्ररूपित चार अनुयोगों का स्वरूप बतलाया गया है ।  
यह कहा जा चुका है कि-चरणकरणानुयोग प्रधान होने के कारण उसका ग्रहण  
सर्वप्रथम किया गया है ।

મનુષ્ય ભવ પામીને, કર્મોંનો ક્ષય કરીને જીવ મોક્ષે જાય છે, તે સમયે  
અવ્યવહાર રાશિ સૂક્ષ્મ નિગોદથી, અકામ નિર્જરાદ્વારા બીજા જીવો નીકળીને  
વિકાસદશાને પ્રાપ્ત કરે છે. અગર દસ જીવ મોક્ષમાં જાય છે તો દસ જીવ સૂક્ષ્મ  
નિગોદથી બહાર નીકળી આવે છે. કદાચિત્ અલ્પસંખ્યક સૂક્ષ્મ નિગોદ-જીવ બહાર  
નીકળે છે તો, તેની સાથે એક-બે અભવ્ય જીવ બહાર આવી જાય છે. પણ વ્યવહાર  
રાશિમાં જીવોનું ઘટવું-વધવું થતું નથી. એ પ્રમાણે નિગોદગોલક લોકમાં અસંખ્યાત  
હોય છે. આ પ્રમાણે ગ્રંથાન્તરમાં કહ્યું છે.

इति अवतरणा संपूर्ण—

આ પ્રમાણે ભગવાન દ્વારા પ્રરૂપિત ચાર અનુયોગોનું સ્વરૂપ બતાવવામાં  
આવ્યું છે. એ કહી આવ્યું છે કે ચરણ-કરણાનુયોગ પ્રધાન હોવાના કારણે તેનું  
પ્રથમ સૌથી પ્રથમ કરવામાં આવ્યું છે.

તત્રાચારાઙ્ગસ્ય દ્વાદશાઙ્ગેષુ પ્રાથમ્યમ્, ચરણકરણયોર્મોક્ષોપાયતયાઽસ્યાઙ્ગસ્ય મોક્ષકારણાવબોધકતયૈતદ્વોધિતાર્થાવસ્થિતસ્યેતરાઙ્ગાધ્યયનયોગ્યતાભાચ્ચ પ્રાધાન્યાત્ ।

કિંચ-એતત્સૂત્રાધ્યયનેન ક્ષાન્ત્યાદિશ્વરણકરણરૂપો વા શ્રમણાનાં ધર્મઃ સુવિદિતો ભવતિ, આચાર્યાદિપદપ્રાપ્તિકારણભૂતાનાં સ્વસમયાદિપરિજ્ઞાનાદીનાં સર્વેષાં ધર્માણા-માચારધારિત્વમેવ પ્રધાનમસ્તિ, તેન તત્પ્રતિપાદકસ્યાસ્યાગમસ્ય પ્રથમાઙ્ગત્વં સિદ્ધમ્ ।

આચારશબ્દેન ચાત્ર પશ્ચવિધો જ્ઞાનાચારાદિર્ગૃહ્યતે । તત્પ્રતિપાદકમઙ્ગ-માચારાઙ્ગમ્, અસ્યેદમાદિસૂત્રમ્-

‘સુયં મે’ इत्यादि ।

બારહ અંગોં મેં આચારાઙ્ગ પહલા અંગ હૈ, ક્યોં કિ ચરણ ઓર કરણ મોક્ષ કે ઉપાય હૈ, અતઃ યહ અઙ્ગ મી મોક્ષ કા કારણ હૈ, આચારાઙ્ગ સૂત્ર મેં નિરૂપિત અર્થકા અનુષ્ઠાન કરને વાલા દૂસરે અઙ્ગોંકે અધ્યયન કી યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઇસ કારણ યહ અઙ્ગ પ્રધાન હૈ ।

દૂસરી વાત યહ હૈ કિ-ઇસ અઙ્ગકે અધ્યયન સે ક્ષમા આદિ, અથવા ચરણ-કરણરૂપ શ્રમણધર્મકા સમ્યક્ પ્રકાર સે જ્ઞાન હોતા હૈ । આચાર્ય આદિ પદોં કી પ્રાપ્તિ કે કારણભૂત સ્વસમય કા પરિજ્ઞાન આદિ સમસ્ત ધર્મોં મેં આચારધારિત્વ (સંયમ પાલન) હી પ્રધાન હૈ, અતઃ એવ આચાર કા પ્રતિપાદક આગમ હી પહલા અઙ્ગ હોના ચાહિય, યહ સિદ્ધ હૈ ।

યહાં ‘આચાર’ શબ્દ સે જ્ઞાનચાર આદિ પાંચ પ્રકાર કા આચાર સમજના ચાહિય । ઇસકા પ્રતિપાદન કરને વાલા અઙ્ગ ‘આચારાઙ્ગ’ કહલાતા હૈ । ઇસ આચારાઙ્ગ સૂત્ર કા પહલા સૂત્ર યહ હૈ-

‘સુયં મે’ इत्यादि ।

બાર અંગોંમાં આચારાંગ પહેલું અંગ છે, કેમકે ચરણ અને કરણ મોક્ષનો ઉપાય છે, તેથી આ અંગ પણ મોક્ષનું કારણ છે.

આચારાંગ સૂત્રમાં નિરૂપિત અર્થનું અનુષ્ઠાન કરનારા બીજા અંગોનાં અધ્યયનની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરે છે, તે કારણથી આ અંગ પ્રધાન છે.

બીજી વાત એ છે કે:-આ અંગના અધ્યયનથી ક્ષમા આદિ, અથવા ચરણ-કરણરૂપ શ્રમણ-ધર્મનું સમ્યક્ પ્રકારે જ્ઞાન થાય છે. આચાર્ય આદિ પદોની પ્રાપ્તિના કારણભૂત સ્વસમયનું પરિજ્ઞાન આદિ સમસ્ત ધર્મોમાં આચારધારિત્વ (સંયમપાલન) જ પ્રધાન છે. એ માટે આચારનું પ્રતિપાદન કરનાર આગમ જ પહેલું અંગ હોવું જોઈએ, એ સિદ્ધ છે.

અહિં ‘આચાર’ શબ્દથી જ્ઞાનાચાર આદિ પાંચ પ્રકારનો આચાર સમજવો જોઈએ. તેનું પ્રતિપાદન કરવાવાળું અંગ ‘આચારાઙ્ગ’ કહેવાય છે. આ ‘આચારાઙ્ગ’ સૂત્રનું પહેલું સૂત્ર આ છે-

‘સુયં મે’ इत्यादि.

મૂલમ્—

સુયં મે આડસં તેણં ભગવયા એવમક્વાયં, ( સૂ. ૧ )

( છાયા )

શ્રુતં મયા આયુષ્મન્ ! તેન ભગવતા એવમાલ્યાતમ્ ( સૂ. ૧ )

ટીકા—

‘સુયં મે’ इत्यादि । आयुष्मन् ! हे चिरजीविन् ! जम्बू ! ‘आयुष्म’-  
 न्निर्तिपदं शिष्यस्य जम्बूस्वामिनः कोमलवचनामन्त्रणं विनीतताख्यापनार्थम् ।  
 किञ्च-तस्याशेषश्रुतज्ञानोपदेश-श्रवण-ग्रहण - धारण - रत्नत्रयाराधन - मोक्षसाधन-  
 योग्यताप्राप्त्यर्थमेतद्वचनम् । विनाऽऽयुषा श्रुतश्रवणादिमोक्षपर्यन्तसिद्धिर्न कस्यचित्सं-  
 भवतीति भावः । एतद्वचनप्रभावादेव जम्बूस्वामी मोक्षपदं तस्मिन्नेव जन्मनि  
 प्राप ।

મૂલાર્થ—‘સુયં મે’ इत्यादि, हे आयुष्मन् ! मैंने सुना है । उन भगवान्ने ऐसा  
 कहा है ( सू० १ )

ટીકાર્થ—हे आयुष्मन् ! अर्थात् हे चिरंजीवी जम्बू !, ‘आयुष्मन्’ पद अपने शिष्य  
 जम्बू स्वामीका कोमल वचनरूप सम्बोधन है, और विनीतता प्रकट करने के लिए है ।  
 अथवा—उनके समस्त श्रुतज्ञान, उपदेश का श्रवण, ग्रहण धारण, रत्नत्रयका आराधन, तथा  
 मोक्षसाधन की योग्यता की प्राप्ति के लिए इस पद का प्रयोग किया गया है । आयुके  
 अभाव में श्रुतश्रवण से लेकर मोक्ष तक किसीकी भी सिद्धि नहीं हो सकती । इसी वचन  
 के प्रभाव से जम्बू स्वामीने उसी भव में मोक्ष प्राप्त किया था ।

‘સુયં મે’ ઈત્યાદિ .

મૂલાર્થ—હે આયુષ્મન્ ! મેં સાંભળ્યું છે, -તે ભગવાને આવી કહ્યું છે (સૂ-૧)

ટીકાર્થ—હે આયુષ્મન્ અર્થાત્ હે ચિરંજીવી જમ્બૂ !, ‘આયુષ્મન્’ પદ  
 પોતાના શિષ્ય જમ્બૂ સ્વામીનું કોમલ-વચનરૂપ સંબોધન છે, અને વિનીતપણું  
 પ્રગટ કરવા માટે છે. અથવા તેમના સમસ્ત શ્રુતજ્ઞાન, ઉપદેશનું શ્રવણ, ગ્રહણ,  
 ધારણ, રત્નત્રયનું આરાધન તથા મોક્ષસાધનની યોગ્યતાની પ્રાપ્તિ માટે આ પદનો  
 પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે, આયુના અભાવમાં શ્રુતના શ્રવણથી લઈને મોક્ષ સુધી  
 કોઈ પણ સિદ્ધિ થઈ શકતી નથી. આ વચનના પ્રભાવથી જમ્બૂ સ્વામીએ એ  
 ભવમાં મોક્ષ પ્રાપ્ત કર્યો હતો.



श्रुतं=श्रवणविषयकृतं, मया=साक्षाद् भगवन्मुखात्, न तु परम्परया, यतो गणधराणामनन्तरागमो भवति । 'मया श्रुत'—मित्यनेन गुरुकुले निवसता मयेत्यर्थः सुतरां लभ्यते । गुरुकुलनिवासं विना हि गुरुचरणसरोजस्पर्शपूर्वकाभिवादनं, तन्मुखारविन्दविनिःसृतवचनश्रवणं च नोपपद्यते ।

भगवया -भगः=(१) - ज्ञानं=सर्वार्थविषयकम्, (२) - माहात्म्यम्=अनुपममहनीयमहिमसंपन्नत्वम्, (३)-यशः=विविधानुकूलप्रतिकूलपरीषदोपसर्गसहन-समुद्भूता कीर्तिः, यद्वा-जगद्रक्षणप्रज्ञासमुत्था कीर्तिः, (४)-वैराग्यम्=सर्वथा काम-

मैंने भगवान् के मुखसे साक्षात् सुना है—परम्परा से नहीं, क्यों कि गणधरों का आगम अनन्तरागम होता है । 'मैंने सुना' इस वाक्य का 'मैंने गुरुकुल में निवास करते हुए सुना' यह अर्थ स्वतः सिद्ध है । गुरुकुल में निवास किये विना गुरु के चरण-कमलोंका स्पर्श करके अभिवादन तथा उनके मुखारविन्द से निकलने वाले वचनों का श्रवण नहीं हो सकता ।

'भगवान्' शब्द में जो 'भग' शब्द है उसके अनेक अर्थ होते हैं । वे इस प्रकार हैं—(१) सम्पूर्ण पदार्थों को जानने वाला ज्ञान (२) महात्म्य अर्थात् अनुपम और महान् महिमा, (३) यश अर्थात् नाना प्रकार के अनुकूल और प्रतिकूल परीषदों और उपसर्गों को सहन करने से फैली हुई कीर्ति, अथवा जगत् की रक्षा (उद्धार) करने की भावना से उत्पन्न हुई कीर्ति, (४) वैराग्य अर्थात् कामभोग की

में भगवान्ना मुभयथी साक्षात् सांलब्धुं छे—परम्पराथी नहि, केभके गणधरेनां आगम अनन्तरागम-होय छे. 'मे' सांलब्धुं' में शुङ्कुलमां निवास करता थका सांलब्धुं' आ अर्थ स्वतः सिद्ध छे. शुङ्कुलमां निवास कथां विना गुरुना चरणकुमदीना स्पर्श करीने अबिवादन नमस्कार तथा तेना मुभार-विहथी निकलवावाणां वचनो श्रवणु थर्ध शकतां नथी.

'भगवान्' शब्दमां ने 'भग' शब्द छे, तेना अनेक अर्थ थाय छे ते आ प्रमाणे—

(१) सम्पूर्ण पदार्थोंने ज्ञान, (२) माहात्म्य अर्थात् अनुपम अने महान् महिमाथी युक्त होय, (३) यश—अर्थात् नाना प्रकारना अनुकूल अने प्रतिकूल परीषदो अने उपसर्गोंने सहन करवाथी ईलाती कीर्ति, अथवा जगतनी रक्षा (उद्धार) करवाथी भावनाथी उत्पन्न थयेवी कीर्ति, (४) वैराग्य—

મોગામિલાષરાહિત્યમ્, યદ્વા-ક્રોધાદિકષાયનિગ્રહલક્ષણમ્, (૫)-મુક્તિઃ=સકલ-કર્મક્ષયલક્ષણો મોક્ષઃ, (૬)-રૂપમ્=સકલહૃદયહારિસૌન્દર્યમ્, (૭)-વીર્યમ્=અન્તરાયાન્તજન્યમનન્તસામર્થ્યમ્, (૮)-શ્રીઃ=ઘાતિકર્મપટલવિઘટનજનિતજ્ઞાનદર્શન સુખવીર્યરૂપાનન્તચતુષ્ટયલક્ષ્મીઃ । (૯) - ધર્મઃ=અપવર્ગદ્વારકપાટોદ્ઘાટનસાધન-શ્રુતચારિત્રલક્ષણઃ (૧૦)-ऐश्वर्यम्=લોકત્રયાધિપત્યમ્, चास्यास्तीति भगवान्, તેન ભગવતા=જ્ઞાનાદિયુક્તેન, તેન તીર્થઙ્કરેણ, વક્ષ્યમાણાર્થસ્ય તીર્થઙ્કરભાષિતત્વાત્ત-ચ્છંદેનાત્ર તીર્થઙ્કરપરામર્શઃ । ઉક્તઞ્ચ—

તનિક મી અમિલાષા ન હોના, અથવા ક્રોધ આદિ કષાયોંકા નિગ્રહ કરના, (૫) મુક્તિ સમસ્ત કર્મોંકા ક્ષય રૂપ મોક્ષ, (૬) રૂપ-સર્વ કા હૃદય હરલેનેવાલા અનુપમ સૌન્દર્ય (૭) વીર્ય-અન્તરાય કર્મકે ક્ષય સે ઉત્પન્ન અનન્તશક્તિ, (૮) શ્રી-ઘાતિ કર્મોંકે ક્ષય સે ઉત્પન્ન અનન્તજ્ઞાન, દર્શન, સુખ ઓર વીર્યરૂપ અનન્તચતુષ્ટય લક્ષ્મી (૯) ધર્મ-મોક્ષરૂપી દ્વાર કે કિવાડ ઉઘાડને કા સાધન શ્રુતચારિત્રરૂપ ધર્મ, (૧૦) ऐश्वर्य-ત્રીન લોક કા આધિપત્ય । યે દશ ગુણ જિસ મેં વિદ્યમાન હોં ઉસે 'ભગવાન' કહતે હૈં । એસે ભગવાનને કહા હૈ । આગે કહા જાને વાલા તત્ત્વ તીર્થંકરભાષિત હૈ, અત્ત એવ 'તત્' શબ્દ સે યહાં ભગવાન તીર્થંકર સમજના ચાહિયે । કહામી હૈ—

અર્થાત્ કામભોગની જરા પણ અમિલાષા નથવી, અથવી ક્રોધ કષાયોંનો નિગ્રહ કરવો, (૫) મુક્તિ-સમસ્ત કર્મોંના ક્ષયરૂપ મોક્ષ (૬) રૂપ-સર્વના હૃદયને હરી દેવાવાળું અનુપમ સૌન્દર્ય, (૭) વીર્ય-અન્તરાય કર્મના ક્ષયથી ઉત્પન્ન અનન્ત શક્તિ (૮) શ્રી-ઘાતિ કર્મોંના ક્ષયથી ઉત્પન્ન અનન્ત જ્ઞાન, દર્શન, સુખ અને વીર્યરૂપ અનન્તચતુષ્ટયલક્ષ્મી (૯) ધર્મ-મોક્ષરૂપી દ્વારનાં કમાડ ઉઘાડવાનું સાધન શ્રુત-ચારિત્રરૂપ ધર્મ (૧૦) ऐश्वर્ય-ત્રણ લોકનું આધિપતિપણું આ દસ ગુણ જેમાં હોય તેને ભગવાન કહે છે એવા ભગવાને કહ્યું છે.

આગળ કહેવાશે તે તત્ત્વ તીર્થંકરભાષિત છે, એટલા માટે 'તત્' શબ્દથી તીર્થંકર ભગવાનનો અર્થ અહિં સમજવો જોઈએ. કહ્યું પણ છે—

“अत्थं भासइ अरिहा, सुत्तं गंथंति गणधरा णिउणा” इत्यादि ।

अर्थ भाषतेऽर्हन् सूत्रं ग्रन्थन्ति गणधरा निपुणाः, इति च्छाया ।

भगवत्तीर्थङ्करोपदिष्टमर्थरूपमागममुपादाय मेधाविनो गणधरा मूलरूपमागमं निबध्नन्तीत्यर्थः ।

एवं=वक्ष्यमाणरीत्या आख्यातं=कथितं द्वादशविधपरिपत्सु ।

भगवत्तीर्थङ्करकथितार्थजातमेव बानुसृत्य वक्ष्यमाणं वाक्यमनुवदिष्यामीति वाक्यार्थः । आगमोक्तार्थस्य काल्पनिकत्वाभावाद् द्रव्यार्थिकनयेनार्थरूपोऽयमागमोऽनादिरिति भावः ।

एषा परंपरा=परिपाटी वरीवर्ति सर्वेषां गणधराणां, यद् विनीतैः स्वस्वान्ते-  
वासिभिर्मोक्षमार्गं सविनयं पृष्टा गणधराः “सुयं मे” इतिवाक्यं प्रथमं वदन्ति ।  
उक्तञ्च—

“अर्हन्त भगवन्त अर्थका निरूपण करते हैं । और गणधर उसे भलो-भौति सूत्र रूप में गूँथते हैं । अर्थात् भगवान् तीर्थंकर के द्वारा उपदिष्ट अर्थरूप आगम के आधार पर कुशल गणधर मूलरूप आगमकी रचना करते हैं ।”

उन भगवानने बारह प्रकारकी परिषद् में इस प्रकार कहा है जो आगे इस सूत्र में निरूपण किया जायगा । आगमोक्त अर्थ काल्पनिक नहीं होता, अतः द्रव्यार्थिकनय से अर्थरूप यह आगम अनादि है ।

सभी गणधरों की यह परम्परा-परिपाटी है कि-अपने २ विनीत शिष्यों द्वारा विनयपूर्वक मोक्षमार्ग पूछे जाने पर गणधर महाराज पहले-पहल ‘सुयं मे’ यह वाक्य बोलते हैं । कहा भी है—

“अर्हन्त भगवन्त अर्थानुं निरूपणु करे छे, अने गणधर तेने रुडी रीते सूत्र रूपमां गुंथे छे, अर्थात् भगवान तीर्थंकर द्वारा उपदिष्ट-उपदेशोक्त अर्थरूप आगमना आधार पर कुशल गणधर मूलरूप आगमनी रचना करे छे.”

ते भगवाने बार प्रकारनी परिषद्-सभामां आ प्रमाणे कछुं छे ने, आगम आ सूत्रमां निरूपणु करवामां आवशे. आगमोक्त-आगममां कडेवो अर्थ काल्पनिक नथी, तेथी द्रव्यार्थिक नयथी अर्थरूप आ आगम अनादि छे.

सर्व गणधरानी ये परंपरा-परिपाटी छे के:-पोत-पोताना विनीत शिष्यो द्वारा विनयपूर्वक मोक्षमार्ग पूछवाथी गणधर महाराज प्रथम ‘सुयं मे’ आ वाक्य बोले छे. कछुं पणु छे:-



( द्रुतविलम्बितं छन्दः )

“ निपुणशिष्यगणैर्विनयान्वितैः—

विमलभावयुतैः परिसेवितैः ।

गणधररत्नैः प्रथमं वचः,

खलु ‘सुयं मे’ इति प्रतिभाषितम् ” ॥१॥ इति ।

भगवता यदाख्यातं तदाह—‘इहमेगेसि’ इत्यादि ।

मूलम्

इहमेगेसि णो सण्णा भवइ, तंजहा-पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, दाहिणाओ वा दिशाओ आगओ अहमंसि, पच्चत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उच्चराओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, उड्डाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, अहोदिसाओ वा आगओ अहमंसि । अण्णयरीओ वा दिसाओ अनुदिसाओ वा आगओ अहमंसि ॥ सू. २ ॥

“विनय से युक्त निपुण शिष्यों द्वारा सेवित, तथा निर्मल भावों वाले सब गणधरों द्वारा अपने शिष्यों के प्रति सर्व प्रथम सुयं मे’ यह वाक्य कहा गया है ॥ १ ॥

भगवानन्ने जो कहा वह कहते हैं—‘इहमेगेसि’ इत्यादि ।

मूलार्थ—किन्हीं २ (जीवों) को संज्ञा नहीं होती कि-मैं पूर्व दिशा से आया हूँ, या मैं दक्षिण दिशा से आया हूँ, या मैं पश्चिम दिशा से आया हूँ, अथवा मैं उत्तर दिशा से आया हूँ । अथवा मैं उर्ध्व दिशा से आया हूँ, या अधोदिशासे मैं आया हूँ, अथवा मैं दूसरी किसी दिशा या अनुदिशा (विदिशा) से आया हूँ । ॥ २ ॥

“ विनयशी युक्त निपुण शिष्योऽपि सेवित तथा निर्मल भावोवाणा सर्व गणधरा द्वाः पोतपोताना शिष्यो प्रति सर्व प्रथम ‘सुयं मे’ अपि वाक्य कहेवाभां आण्युं छे ” ॥ १ ॥

मूलार्थ—‘इहमेगेसि’ इत्यादि. कोह-कोह (लवे)ने संज्ञा नहीं होती के हुं पूर्व दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं दक्षिण दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं पश्चिम दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं उत्तर दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं उर्ध्व दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं अधो दिशाभांथी आण्यो छुं, अथवा हुं अन्य-भी कोह दिशाभांथी अथवा अनुदिशा (विदिशा)भांथी आण्यो छुं. ॥२॥

छाया—

इह एकेषां नो संज्ञा भवति, तद्यथा-पूर्वस्या वा दिशाया आगतोऽहमस्मि, दक्षिणस्या वा दिशाया आगतोऽहमस्मि, पश्चिमाया वा दिशाया आगतोऽहमस्मि । उत्तरस्या वा दिशाया आगतोऽहमस्मि । ऊर्ध्वाया वा दिशाया आगतोऽहमस्मि, अधोदिशाया वा आगतोऽहमस्मि, अन्यतरस्या वा दिशाया अनुदिशाया वा आगतोऽहमस्मि ।

‘इहमेगेसि’ इति इह-चतुर्गतिसंसरणरूपे संसारे एकेषां ज्ञानावरणीयकर्मोदयवतां संज्ञानां जीवानां संज्ञा-स्मृतिरूपो मतिविशेषः नो भवति-न जायते ।

अन्यं प्रतिषेधवाचकं शब्दं विहाय ‘नो’ शब्दोपादानं विशिष्टसंज्ञा-प्रतिषेधबोधनार्थम् । ‘नो’ शब्दः सर्वनिषेधवाची, देशनिषेधवाची च । उक्तञ्च—

“प्रतिषेधयति समस्तं, प्रसक्तमर्थं जगति नो-शब्दः ।

स पुनस्तदवयवो वा, तस्मादर्थान्तरं वा स्यात् ॥ १ ॥”

‘नो’ शब्दः-प्रसंगादागतमर्थं संपूर्णं प्रतिषेधयति, स चार्थः प्रसक्तावयवो वा स्यात् तस्मादन्यो वाऽर्थः स्यात् तमपि प्रतिषेधयतीत्यर्थः ।

टीकार्थ—चार गति में भ्रमण करनेरूप संसार में ज्ञानावरण कर्म के उदय वाले कितनेक संज्ञी जीवों को संज्ञा अर्थात् स्मृति नहीं होती ।

निषेधवाचक दूसरे शब्द को छोड़ कर यहाँ ‘नो’ शब्द का प्रयोग किया गया है सो विशिष्ट संज्ञा का अभाव सूचित करने के लिए समझना चाहिए । ‘नो’ शब्द सर्वनिषेधवाचक भी है और देशनिषेधवाचक भी है । कहा भी है—

“नो’ शब्द प्रसङ्ग में आये हुए सम्पूर्ण अर्थ का निषेध करता है । यह अर्थ चाहे उन का एक अवयव हो या उस से भिन्न अर्थान्तर हो-उस का भी निषेध करता है” ॥ १ ॥

टीकार्थ—चार गतिमां भ्रमण करवा रूप संसारमां ज्ञानावरण कर्मना उदयवाणा डेटलाक संज्ञी जीवाने संज्ञा अर्थात् स्मृति नहीं रखेती. निषेधक-वाचक अन्य शब्दो त्यज्जने अडिं ‘नो’ शब्दने प्रयोग कथो छे, ते विशिष्ट संज्ञाने अभाव सूचयवा भाटे समज्जे जेध अे ‘नो’ शब्द सर्वनिषेधवाचक पणु छे अने देशनिषेधवाचक पणु छे. कहुं पणु छे—

“‘नो’ शब्द प्रसङ्गमां आवेला संपूर्ण अर्थने निषेध करे छे, ते अर्थ गमे ते तेनु’ अेक अवयव होय अथवा तेनाथी भिन्न अर्थान्तर होय तेना पणु निषेध करी हे छे” ॥ १ ॥

યયા સંજ્યાઽઽત્મનો ગત્યાગત્યાદિકં જીવો જાનાતિ તસ્યા એવ પ્રતિષેધો વિવક્ષિતઃ ।

અથ સંજ્ઞાભેદાઃ—

સંજ્ઞા ચ જીવાનાં બહુવિધા । તન્ન-દશવિધા ભગવતીસૂત્રે ( શતક-૭, ઉદેશ ૮ ) પ્રોક્તા—

“ કહ્ નં ભંતે ! સન્નાઓ પન્નત્તાઓ ? ગોયમા ! દસ સન્નાઓ પન્નત્તાઓ, તંજહા-(૧) આહારસન્ના, (૨) ભયસન્ના, (૩) મેહુણસન્ના, (૪) પરિગ્રહસન્ના, (૫) ક્રોધસન્ના, (૬) માણસન્ના, (૭) માયાસન્ના, (૮) લોભસન્ના, (૯) લોભસન્ના, (૧૦) ઓહસન્ના ” ઇતિ ।

જિસ સંજ્ઞા કે દ્વારા આત્મા કી ગતિ ઓર આગતિ જીવ જાનતા હૈ, યહૌ ઉસીકા નિષેધ સમજના ચાહિયે ।

સંજ્ઞા કે ભેદ—

જીવો કી સંજ્ઞા અનેક પ્રકાર કી હોતી હૈ । ભગવતીસૂત્ર ( શ૦ ૬, ઉ૦ ૮, મેં:દશ પ્રકાર કી સંજ્ઞા કહી ગઈ હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર હૈ;—

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! સંજ્ઞાઈ કિતની કહી ગઈ હૈ ।

ઉત્તર—ગૌતમ ! દશ સંજ્ઞાઈ કહી ગઈ હૈ । વે ઇસ પ્રકાર હૈ—  
(૧) આહાર-સંજ્ઞા, (૨) ભય-સંજ્ઞા, (૩) મૈથુન-સંજ્ઞા, (૪) પરિગ્રહ-સંજ્ઞા, (૫) ક્રોધ-સંજ્ઞા  
(૬) માન-સંજ્ઞા, (૭) માયા-સંજ્ઞા, (૮) લોભ-સંજ્ઞા, (૯) લોક-સંજ્ઞા ઓર (૧૦) ઓધ-સંજ્ઞા ।

જે સંજ્ઞા દ્વારા આત્માની ગતિ અને આગતિ હવ બાણે છે. અહિં એનો નિષેધ સમજવો જોઈએ.

સંજ્ઞાના ભેદ—

હવેની સંજ્ઞા અનેક પ્રકારની હોય છે. ભગવતી સૂત્ર ( શ. ૬. ઉ. ૮ )માં દસ પ્રકારની સંજ્ઞાઓ કહેવામાં આવી છે. તે આ પ્રમાણે છે:—

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! સંજ્ઞાઓ કેટલી કહી છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! દસ સંજ્ઞાઓ કહી છે તે આ પ્રમાણે છે:—

(૧) આહાર-સંજ્ઞા (૨) ભય-સંજ્ઞા (૩) મૈથુન-સંજ્ઞા, (૪) પરિગ્રહ-સંજ્ઞા.  
(૫) ક્રોધ-સંજ્ઞા (૬) માન-સંજ્ઞા (૭) માયા-સંજ્ઞા (૮) લોભ-સંજ્ઞા (૯) લોક-સંજ્ઞા અને (૧૦) ઓધ-સંજ્ઞા.



अथवा—संज्ञानं संज्ञा-चेतना, सा चाशातवेदनीयमोहनीयकर्मोदयजन्य-विकारयुक्ता आहारादिसंज्ञादित्वेन व्यपदिश्यते । सा द्विधा-अनुभवनसंज्ञा, ज्ञानसंज्ञा च । तत्रानुभवनसंज्ञा षोडशविधा । तत्र भगवतीसूत्रोक्तदशविधसंज्ञा उपादायाधिकाः षट् संज्ञाः समिलिताः षोडश भवन्ति । तत्र (१) सुखसंज्ञा, (२) दुःखसंज्ञा, (३) मोहसंज्ञा, (४) विचिकित्सासंज्ञा, (५) शोकसंज्ञा, (६) धर्मसंज्ञा चेति षट् अधिका विज्ञेयाः ।

### (१) आहारसंज्ञा—

(१) क्षुद्रेदनीयोदयात् कवलाद्याहारार्थं तथाविधपुद्गलोपादानक्रिया सम्यग् ज्ञायतेऽन्येत्याहारसंज्ञा । यद्वा—क्षुद्रेदनीयोदयसमुद्भवः आहारमि-

अथवा—संज्ञानं-संज्ञा-चेतना, अर्थात् संज्ञा चेतना को कहते हैं । यह जब अशातावेदनीय और मोहनीय कर्म के उदय से जनित विकारों से युक्त होती है तब वह आहार आदि संज्ञा कहलाने लगती है । वह दो प्रकार की है—(१) अनुभवनसंज्ञा और (२) ज्ञानसंज्ञा । इन में से अनुभवनसंज्ञा सोलह प्रकार की है । भगवतीसूत्रोक्त दश संज्ञाओं में छह संज्ञाएँ मिला देने से सोलह हो जाती हैं । छह संज्ञाएँ ये हैं—(१) सुखसंज्ञा, (२) दुःखसंज्ञा, (३) मोहसंज्ञा, (४) विचिकित्सासंज्ञा, (५) शोकसंज्ञा, और (६) धर्मसंज्ञा ।

### (१) आहारसंज्ञा

क्षुधावेदनीय के उदय से कवलाहार आदि के लिए योग्य पुद्गलों को ग्रहण करने की क्रिया जिस द्वारा सम्यक् प्रकार से जानी जाय वह आहारसंज्ञा कहलाती है ।

अथवा—संज्ञानं अष्टौ संज्ञा, ते चेतना, अर्थात् चेतनाने संज्ञा कहे छे ते न्यारे असातावेदनीय अने मोहनीय कर्मना उदयथी उत्पन्न विकारो युक्त होय छे, त्यारे ते आहार आदि संज्ञा कहेवाय छे. ते जे प्रकारनी छे—(१) अनुभवनसंज्ञा अने (२) ज्ञानसंज्ञा. तेमां अनुभवनसंज्ञा सोण प्रकारनी छे, भगवतीसूत्रोक्त दस संज्ञाओंमां छ भेजवी हेवाथी सोण थाय छे, छ संज्ञाओं आ छेः—(१) सुखसंज्ञा, (२) दुःखसंज्ञा, (३) मोहसंज्ञा, (४) विचिकित्सासंज्ञा, (५) शोकसंज्ञा अने (६) धर्मसंज्ञा.

### (१) आहारसंज्ञा—

क्षुधा (भूख) वेदनीयना उदयथी कवलाहार आदि भाटे योग्य पुद्गलोंने ग्रहण करवानी क्रिया जेना वडे सम्यक् प्रकारथी ज्ञाणी शक्य, ते आहारसंज्ञा कहेवाय छे.

લાષરૂપ આત્મનઃ પરિણામવિશેષઃ । અભિલાષશ્ચાત્ર-‘મદર્થમીદૃશં વસ્તુ પુષ્ટિકરં, યદીદં લભ્યતે તદા મમ હિતં ભવિષ્યતી’-ત્યેવં વિચારાનુબદ્ધઃ સ્વપુષ્ટિતુષ્ટિકારણી-ભૂતપ્રતિનિયતવસ્તુપ્રાપ્ત્યર્થમાત્મનઃ પરિણામઃ । રિક્તોદરત્વાદ્ ભોજનીયવસ્તુ-શ્રવણ-દર્શન-સંચિન્તનૈશ્ચાહારસંજ્ઞા જાયતે । આહારાદયઃ સંજ્ઞાઃ એકેન્દ્રિયાદિ-પञ્ચેન્દ્રિયપર્યન્તાનાં સર્વજીવાનામાસંસારં ભવન્તિ । જલાદ્યાહારોપજીવનાદ્ વનસ્પત્યાદીનામાહારસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

અથવા ક્ષુધાવેદનીય કર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન હોને વાલી આહાર કી અભિલાષારૂપ આત્મા કી પરિણતિ આહારસંજ્ઞા કહલાતી હૈ । યહાં અભિલાષા શબ્દ સે ‘ઇસ પ્રકાર કી વસ્તુ મેરે લિખ્ પુષ્ટિકર હૈ, યહ વસ્તુ મિલે તો મેરા હિત હોગા’ એસે વિચાર સે યુક્ત અપની પુષ્ટિ ઓર સન્તોષ કે કારણભૂત પદાર્થ કી પ્રાપ્તિ કે લિખ્ હોને વાલા અત્મા કા પરિણામ ગ્રહણ કરના ચાહિખ્ । ઁલી પેટ હોને પર ભોજ્ય વસ્તુ કે શ્રવણ દર્શન ઓર ચિન્તન સે આહારસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । આહાર આદિ સંજ્ઞાખ્ એકેન્દ્રિય સે લેકર પञ્ચેન્દ્રિયપર્યન્ત સમી જીવોં કો હોતી હૈ, જલ તક સંસાર કા અન્ત નહીં હોતા તલ તક બની રહતી હૈ । જલ આદિ આહાર પર જીવિત રહને કે કારણ બન-સ્પતિ આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં મેં ભી આહારસંજ્ઞા કા અસ્તિત્વ પ્રતીત હોતા હૈ ।

અથવા ક્ષુધાવેદનીય કર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન થવા વાળી આહારની અભિલાષા-રૂચિ-ઈચ્છા રૂપ આત્માની પરિણતિ તે આહારસંજ્ઞા કહેવાય છે, અહીં અભિલાષા શબ્દથી ‘આ પ્રકારની વસ્તુ મારા માટે પુષ્ટિ કરનારી છે, આ વસ્તુ મળે તો મારું હિત થશે’ એવા વિચારથી યુક્ત પોતાની પુષ્ટિ અને સંતોષના કારણભૂત પદાર્થની પ્રાપ્તિ માટે વિચાર કરનાર આત્માનું પરિણામ, થકણ કરવું જોઈએ, ખાલી પેટ હોવાના કારણે ભોજ્ય (ભોજન કરવા યોગ્ય) વસ્તુના શ્રવણ, દર્શન અને ચિન્તનથી આહારસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ એકેન્દ્રિયથી આરંભીને પંચેન્દ્રિય સુધીના સર્વ જીવોને હોય છે; અને જ્યાં સુધી સંસારનો અંત થતો નથી ત્યાં સુધી તે સંજ્ઞાઓ રહે છે. જલ વગેરેના આહાર પર જીવિત રહેવાના કારણે વનસ્પતિ આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં પણ આહારસંજ્ઞાનું અસ્તિત્વ દેખાય છે.

(૨) મયસંજ્ઞા—

(૨) સનિમિત્તમનિમિત્તં વા મયમોહનીયોદયાદ્ મયોદ્ધ્રાન્તસ્ય મોહનીયાન્તર્ગતનોકષાયરૂપા નયનવદનવિકૃતરોમાશ્ચાવિર્ભાવાદિક્રિયાલક્ષણા સ્વાત્મનઃ પરિણતિર્મયસંજ્ઞા । હીનબલત્વેન, મયવાર્તાશ્રવણભીષણદર્શનાદિ-જનિતબુદ્ધ્યા, રૂઢલોકાદિમયજનકાર્થપર્યાલોચતેન વા મયસંજ્ઞા જાયતે । હસ્તસ્પર્શાદિભીત્યા સ્વાવયવસંકોચનાદિના લજ્જાલુલ્લ્યાદીનાં મયસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

(૩) મૈથુનસંજ્ઞા—

(૩) પુરુષવેદોદયાન્મૈથુનાર્થં વનિતાલોકનપ્રસન્નવદનસંસ્તમ્ભિતગાત્ર-

(૨) મયસંજ્ઞા—

કિસી કારણ સે યા વિના હી કારણ મયમોહનીય કર્મ કે ઉદય સે મયમીત પુરુષકી મોહકે અન્તર્ગત નોકષાયરૂપ, નેત્રો મેં ઓર મુખ મેં વિકાર હોના, રોમાઞ્ચ હોના આદિ ક્રિયાએ જિસકા લક્ષણ હૈ, એસી આત્મા કી પરિણતિ મયસંજ્ઞા કહલાતી હૈ, દુર્બલતા સે, મય ઉત્પન્ન કરને વાલી વાત સુનને સે, મયઢ્ઢર વસ્તુ કે દેખને સે, તથા રૂઢલોક આદિ મેં મયજનક વસ્તુકા વિચાર કરને સે મયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । લજ્જવન્તી આદિ વનસ્પતિયાં હાથ કે સ્પર્શ કે મય સે અપને અવયવોં કો સિકોડ લેતી હૈ, અતઃ યન મેં મયસંજ્ઞા કી વિદ્યમાનતા પ્રતીત હોતી હૈ ।

(૩) મૈથુનસંજ્ઞા—

પુરુષવેદ-મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે મૈથુન કે લિખે સ્ત્રી કો દેખના, પ્રસન્નવદન

(૨) ભય સંજ્ઞા—

કોઈ કારણથી અથવા વિના કારણે ભય થવો, મોહનીય કર્મના ઉદયથી ભયભીત પુરુષની મોહને અંતર્ગત નોકષાયરૂપ, નેત્રોમાં અને ચહેરામાં વિકાર થવો, રોમાંચ થવું (રૂંવાડાં ઉભાં થવાં) વગેરે ક્રિયાઓ જેવું લક્ષણ છે, એવી આત્માની પરિણતિ તે ભયસંજ્ઞા કહેવાય છે. દુર્બલતાથી, ભય ઉત્પન્ન કરાવનારી વાત સાંભળવાથી, ભયંકર વસ્તુ દેખવાથી, તથા આ લોક વગેરેમાં ભયજનક વસ્તુનો વિચાર કરવાથી ભયસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. લજ્જાવન્તી (લજ્જાળુ) આદિ વનસ્પતિઓ હાથનો સ્પર્શ થવાથી ભય લાગ્યો હોય તેમ પોતાના અવયવોને સંકોચે છે તેથી તેમાં ભયસંજ્ઞાની વિદ્યમાનતા દેખાય છે.

(૩) મૈથુન સંજ્ઞા—

પુરુષવેદ—મોહનીકર્મના ઉદયથી મૈથુન માટે સ્ત્રી તરફ જોવું. હસવું મુખ



શૈથિલ્યોરુક્મ્પનાદિક્રિયારૂપા આત્મનઃ પરિણતિર્મૈથુનસંજ્ઞા । રુધિરમાંસોપચયેન, સ્ત્રીકથાશ્રવણાદિજનિતમત્પ્યા, મૈથુનચિન્તનેન ચ મૈથુનસંજ્ઞા જાયતે । કુરુબ-કાદિવનસ્પતીનાં કમનીયકામિનીશુજલતાવગૂહન-ચરણાઘાત-કટાક્ષવિક્ષેપાદિભ્યઃ પ્રમૂનપલ્લવાદિપ્રસવદર્શનાન્મૈથુનસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

#### (૪) પરિગ્રહસંજ્ઞા—

( ૪ ) લોભમોહનીયોદયાદ્ ધર્મસાધનવ્યતિરિક્ત-સચિત્તાઽચિત્તમિશ્ર-વસ્તૂપાદાનાદિમૂર્છારૂપા આત્મનઃ પરિણતિઃ પરિગ્રહસંજ્ઞા । સચિત્તાદિવસ્તુ-

હોના, શરીર કા સ્તમ્ભિત હો જાના, તથા ઉસ મેં શિથિલતા પૈદા હોના ઉરુ (ઘુટનોકે નીચેકા ભાગ) આદિ કા કાપના આદિ ક્રિયારૂપ આત્મા કી પરિણતિ કો મૈથુનસંજ્ઞા કહતે હૈં । રક્ત ઓર માંસ કી અધિકતા સે, સ્ત્રીકથા આદિ કે શ્રવણ સે ઉત્પન્ન હુઈ બુદ્ધિ સે, ઓર મથુન કા વિચાર કરને સે મૈથુનસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । કુરુબક આદિ વનસ્પતિયોં મેં સુન્દરી કામિની કી મુજાઓં કે આલિંગન સે, ચરણાઘાત સે, તથા કટાક્ષપાત આદિ સે ફૂલ, પત્તા આદિ ઉત્પન્ન હોતે હૈં, અતઃ વનસ્પતિ મેં મૈથુનસંજ્ઞા કા અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ ।

#### (૪) પરિગ્રહસંજ્ઞા—

લોભમોહનીય કે ઉદય સે ધર્મ કે ઉપકરણોં કે અતિરિક્ત દૂસરે સચિત્ત અચિત્ત ઓર મિશ્ર પદાર્થોં કે ગ્રહણ આદિ મૂર્છારૂપ આત્મા કી પરિણતિ પરિગ્રહસંજ્ઞા કહલાતી હૈ ।

થયું, શરીરનું સ્તંભિત થઈ જવું, તથા તેમાં શિથિલતા ઉત્પન્ન થવી, બાંગ વગેરેનું કંપનું આદિ ક્રિયારૂપ આત્માની પરિણતિને મૈથુનસંજ્ઞા કહે છે. રક્ત (લોહી) અને માંસની અધિકતાથી, સ્ત્રીકથા વગેરે સાંભળવાથી ઉત્પન્ન થયેલી બુદ્ધિથી, અને મૈથુનનો વિચાર કરવાથી મૈથુનસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. કુરુબક (એક ભાતનું વૃક્ષ) આદિ વનસ્પતિમાં સુંદરી કામિનીના હાથના આલિંગન થતાં, ચરણાઘાતથી તથા કટાક્ષપાત આદિથી ફૂલ, પત્તાં આદિ ઉત્પન્ન થાય છે, આ કારણથી વનસ્પતિમાં મૈથુનસંજ્ઞાનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થાય છે.

#### (૪) પરિગ્રહ સંજ્ઞા—

લોભમોહનીયના ઉદયથી ધર્મના ઉપકરણો સિવાય બીજા સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર પદાર્થોનું ગ્રહણ કરવું વગેરે મૂર્છારૂપ આત્માની પરિણતિ તે પરિગ્રહસંજ્ઞા

પરિગ્રહદર્શનેન, પરિગ્રહચિન્તનેન, પરિગ્રહસંગ્રહેણ ચ પરિગ્રહસંજ્ઞા જાયતે ।  
વિલ્વાદિવનસ્પતીનાં સ્વપત્રૈઃ પુષ્પફલાચ્છાદનદર્શનાત્ પરિગ્રહસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

(૫) ક્રોધસંજ્ઞા—

(૫) ક્રોધમોહનીયોદયાદ્ જીવસ્ય જાત્યાદિમદજનિતા કર્તવ્યાકર્તવ્ય-  
વિવેકાપહારિકા સ્વપરાપ્રીતિરૂપપ્રજ્વલનાત્મિકા વિભાવપરિણતિઃ ક્રોધસંજ્ઞા ।

(૬) માનસંજ્ઞા—

(૬) માનમોહનીયોદયાદ્ અંહકારરૂપા આત્મનો વિભાવપરિણતિર્માનસંજ્ઞા ।  
દેવગુરુધર્માદીનાં મહતામનાદરણાદિના માનસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

સચિત્ત આદિ વસ્તુઓં કા પરિગ્રહ દેખને સે, પરિગ્રહ કા વિચાર કરને સે, ઓર પરિગ્રહકા સંગ્રહ કરને સે પરિગ્રહસંજ્ઞા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । વિલ્વ (બેલ) આદિ વનસ્પતિયાં અપને પત્તોં સે ફૂલ ફલ વગેરહ કો ઢેંક લેતી હૈ, ઇસ સે ડનમેં પરિગ્રહસંજ્ઞા કા હોના પ્રતીત હોતા હૈ ।

(૫) ક્રોધસંજ્ઞા—

ક્રોધમોહનીય કે ઉદય સે જીવ મેં જાતિમદ આદિ સે ઉત્પન્ન, તથા કર્તવ્ય અકર્તવ્ય કા વિવેક નષ્ટ કર દેને વાલી સ્વપર કી અપ્રીતિરૂપ, તથા જલનરૂપ આત્મા કી વિભાવપરિણતિ ક્રોધસંજ્ઞા કહલાતી હૈ ।

(૬) માનસંજ્ઞા—

માનમોહનીય કે ઉદય સે અહંકારરૂપ આત્મા કી વિભાવપરિણતિ માનસંજ્ઞા કહલાતી હૈ । દેવ ગુરુ ધર્મ આદિ વડોંકા અનાદર આદિ કરને સે માનસંજ્ઞા માલુમ હોતી હૈ ।

કહેવાય છે. સચિત્ત આદિ વસ્તુઓનો પરિગ્રહ દેખાવાથી, પરિગ્રહનો વિચાર કરવાથી અને પરિગ્રહનો સંગ્રહ કરવાથી પરિગ્રહસંજ્ઞા ઉત્પન્ન થાય છે. બિલ્વ (ખીલી) આદિ વનસ્પતિઓ પોતાનાં પાંદડાથી ફુલ-ફલ વગેરેને ઢાંકી દે છે, તેથી વનસ્પતિમાં પરિગ્રહસંજ્ઞા દેખાય છે.

(૫) ક્રોધસંજ્ઞા—

ક્રોધમોહનીય કર્મના ઉદયથી, જીવને જાતિમદ વગેરેથી ઉત્પન્ન, તથા કર્તવ્ય અકર્તવ્યનો વિવેક નાશ કરવાવાળી સ્વ-પરની અપ્રીતિરૂપ તથા જલનરૂપ આત્માની વિભાવપરિણતિ તે ક્રોધસંજ્ઞા કહેવાય છે.

(૬) માનસંજ્ઞા—

માનમોહનીય કર્મના ઉદયથી અહંકારરૂપ આત્માની વિભાવપરિણતિ માનસંજ્ઞા કહેવાય છે. દેવ, ગુરુ, ધર્મ આદિ મોટાઓનો અનાદર વગેરે કરવાથી માનસંજ્ઞા માલુમ પડે છે.

## (૭) માયાસંજ્ઞા—

(૭) માયામોહનીયોદયાત્ કપટલક્ષણા પ્રવૃત્તિર્જીવસ્ય વિભાવપરિ-  
ણતિર્માયાસંજ્ઞા । પરવશ્ચનેચ્છયા વ્યામોહોત્પાદકમનોવાકાયવ્યાપારેણ સા  
વિજ્ઞાયતે ।

## (૮) લોભસંજ્ઞા—

(૮) લોભમોહનીયોદયેન સચિત્તાદિવસ્તુષ્ટદિરૂપા જીવસ્ય વિભાવ-  
પરિણતિર્લોભસંજ્ઞા । આરમ્ભપરિગ્રહાદિપ્રવૃત્ત્યા લોભસંજ્ઞા વિજ્ઞાયતે ।

## (૯) લોકસંજ્ઞા—

(૯) જ્ઞાનાવરણીયક્ષયોપશમેન મોહનીયકર્મોદયેન ચ કુબુદ્ધિજનિતતર્ક-

## (૭) માયાસંજ્ઞા—

માયામોહનીય કે ઉદય સે જીવ કો કપટરૂપ વિભાવપરિણતિ માયાસંજ્ઞા  
કહલાતી હૈ । દૂસરે કો ઠગને કી ઇચ્છા સે મોહજનક મન, વચન ઔર કાય કે વ્યાપાર સે  
ઉસ કી પ્રતીતિ હોતી હૈ ।

## (૮) લોભસંજ્ઞા—

લોભમોહનીય કે ઉદય સે સચિત્ત આદિ વસ્તુઓ મેં આસક્તિરૂપ જીવકી  
વિભાવપરિણતિ લોભસંજ્ઞા કહલાતી હૈ । આરમ્ભ પરિગ્રહ આદિ કી પ્રવૃત્તિ સે લોભસંજ્ઞા કા  
પતા ચલતા હૈ ।

## (૯) લોકસંજ્ઞા—

જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે ઔર મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે કુબુદ્ધિજનિત

## (૭) માયાસંજ્ઞા—

માયામોહનીય કર્મના ઉદયથી જીવની કપટરૂપ વિભાવપરિણતિ માયા-સંજ્ઞા  
કહેવાય છે. ધીજાને ઠગવાની ઇચ્છાથી, મોહજનક મન, વચન અને કાયાના વ્યાપારથી  
તેની પ્રતીતિ થાય છે.

## (૮) લોભસંજ્ઞા—

લોભમોહનીય કર્મના ઉદયથી સચિત્ત આદિ વસ્તુઓમાં આસક્તિરૂપ જીવની  
વિભાવપરિણતિ તે લોભસંજ્ઞા કહેવાય છે. આરંભ-પરિગ્રહ આદિની પ્રવૃત્તિથી લોભ  
સંજ્ઞાનો પતો લાગે છે.

## (૯) લોકસંજ્ઞા—

જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ક્ષયોપશમથી અને મોહનીયકર્મના ઉદયથી કુબુદ્ધિજનિત



રૂપા આત્મનો વિભાવપરિણતિલોકસંજ્ઞા । યથા—“અપુત્રસ્ય ગતિર્નાસ્તી”—ત્યાદિ ।

### (૧૦) ઓઘસંજ્ઞા—

(૧૦) જ્ઞાનાવરણીયાલ્પક્ષયોપશમસમુદ્ભૂતા, અવ્યક્તોપયોગરૂપા જીવસ્ય પરિણતિઃ ઓઘસંજ્ઞા । સા લતાદીનાં પ્રતાનારોહણાદિના જ્ઞાયતે ।

### (૧૧) સુખસંજ્ઞા—

(૧૧) સંસારિણાં સાતાવેદનીયોદયાત્ સકલેન્દ્રિયાણામનુકૂલતયા જ્ઞાયમાના આત્મનઃ પરિણતિઃ સુખસંજ્ઞા ।

તર્કરૂપ આત્મા કી વિભાવપરિણતિ લોકસંજ્ઞા કહલાતી હૈ; યથા—“નિપૂતે કો સદ્રતિ નહીં મિલતી” આદિ ।

### (૧૦) ઓઘસંજ્ઞા—

જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કે અલ્પ ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોને વાલી તથા અવ્યક્ત (અપ્રકટ) ઉપયોગરૂપ જીવ કા વિભાવપરિણમન ઓઘસંજ્ઞા કહલાતી હૈ । લતા વગેરહ કા મંડપ પર ચઢને આદિ સે ઉસકા જ્ઞાન હોતા હૈ

### (૧૧) સુખસંજ્ઞા—

સંસારી જીવોકો સાતાવેદનીય કે ઉદય સે સર્વ ઇન્દ્રિયોં કે અનુકૂલ પ્રતીત હોને વાલી આત્મા કી એક વિશિષ્ટ પરિણતિકો સુખસંજ્ઞા કહેતે હૈ ।

તર્કરૂપ આત્માની વિભાવપરિણતિ લોકસંજ્ઞા કહેવાય છે. જેમ—“અપુત્રિયાને સફળતિ મળતી નથી.”

### (૧૦) ઓઘસંજ્ઞા—

જ્ઞાનાવરણીય કર્મના અલ્પ ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થનારી અને અપ્રકટ ઉપયોગ રૂપ જીવનું વિભાવપરિણમન તે ઓઘસંજ્ઞા કહેવાય છે, વેદો વગેરેનું મંડપ ઉપર ચઢવું વગેરેથી તેનું જ્ઞાન થાય છે.

### (૧૧) સુખસંજ્ઞા—

સંસારી જીવોને સાતાવેદનીયના ઉદયથી સર્વ ઇન્દ્રિયોમાં અનુકૂલતાનું જ્ઞાન કરાવનારી આત્માની એક વિશિષ્ટ પરિણતિને સુખસંજ્ઞા કહે છે.

(૧૨) દુઃસ્વસંજ્ઞા—

(૧૨) સંસારિણામસાતવેદનીયોદયાત્ સકલેન્દ્રિયાણાં પ્રતિકૂલતયા જ્ઞાય-  
માના વિવિધતાપાનુભવરૂપા જીવસ્ય પરિણતિર્દુઃસ્વસંજ્ઞા ।

(૧૩) મોહસંજ્ઞા—

(૧૩) મોહનીયકર્મોદયાદ્ મિથ્યાદર્શનરૂપા જ્ઞાનાદિગુણરોધકસકલપાપ-  
સ્થાનહેતુરાત્મનો વિભાવપરિણતિર્મોહસંજ્ઞા । કુદેવકુગુરુકુધર્માદૌ પ્રવૃત્ત્યા મોહસંજ્ઞા  
વિજ્ઞાયતે ।

(૧૪) વિચિકિત્સાસંજ્ઞા—

(૧૪) મોહનીયોદયાદ્ જ્ઞાનાવરણીયોદયાચ્ચ સંશયરૂપા જીવસ્ય પરિણતિ-

(૧૨) દુઃસ્વસંજ્ઞા—

સંસારી જીવોં કો અસાતવેદનીય કે ઉદય સે સબ ઇન્દ્રિયોં કે પ્રતિકૂલ  
પ્રતીત હોને વાલી, વિવિધ પ્રકાર કે સંતાપોં કા અનુભવરૂપ જીવ કી પરિણતિ દુઃસ્વસંજ્ઞા  
કહલાતી હૈ ।

(૧૩) મોહસંજ્ઞા—

મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે મિથ્યાદર્શનરૂપ, તથા જ્ઞાનાદિ ગુણોં કા નિષેધ કરને  
વાલી, સમસ્ત પાપસ્થાનકોં કા કારણરૂપ આત્મા કી વિભાવપરિણતિ મોહસંજ્ઞા હૈ । કુદેવ  
કુગુરુ ઓર કુધર્મ આદિ મેં પ્રવૃત્તિ હોને સે મોહસંજ્ઞા કા જ્ઞાન હોતા હૈ ।

(૧૪) વિચિકિત્સાસંજ્ઞા—

મોહનીય ઓર જ્ઞાનાવરણ કર્મ કે ઉદય સે સંશયરૂપ આત્મા કા પરિણમન વિચિકિત્સા-

(૧૨) દુઃસ્વસંજ્ઞા—

સંસારી જીવોને અસાતવેદનીયના ઉદયથી સર્વ ઇન્દ્રિયોમાં પ્રતિકૂળતાનું ભાન  
કરવાવાળી, વિવિધ પ્રકારના સંતાપોના અનુભવરૂપ જીવની પરિણતિ તે દુઃસ્વસંજ્ઞા  
કહેવાય છે.

(૧૩) મોહસંજ્ઞા—

મોહનીય કર્મના ઉદયથી મિથ્યાદર્શનરૂપ, તથા જ્ઞાનાદિ ગુણોના નિષેધ  
કરવાવાળી, સમસ્ત પાપસ્થાનના કારણરૂપ આત્માની વિભાવપરિણતિ તે મોહસંજ્ઞા  
છે. કુદેવ, કુગુરુ અને કુધર્મ આદિમાં પ્રવૃત્તિ હોવાના કારણે મોહસંજ્ઞાનું જ્ઞાન  
થાય છે.

(૧૪) વિચિકિત્સાસંજ્ઞા—

મોહનીય અને જ્ઞાનાવરણીય કર્મના ઉદયથી સંશયરૂપ આત્માનું પરિણમન તે

વિચિકિત્સાસંજ્ઞા । યથા દાનાદિધર્મસ્ય ફલં પ્રતિ સંશયઃ । સા દ્વિધા-દેશતઃ, સર્વતશ્ચ । ‘દ્વાવિંશતિપરિષહસહનબ્રહ્મચર્યકેશોલ્લુચ્ચનાદિકલેશસહનસ્ય ફલં ભવિષ્યતિ ન વે’-તિરૂપા દેશતઃ । ‘પરલોકાદિ સત્યં ન વે’-તિરૂપા, સર્વજ્ઞપ્રરૂપિતજીવાદિતત્ત્વં યથાર્થં ન વે’-ત્યાદિરૂપા વા સર્વતઃ ।

(૧૫) શોકસંજ્ઞા—

(૧૫) મોહનીયકર્મોદયાદિષ્ટવિયોગજનિતા વિપ્રલાપ-વૈમનસ્યરૂપા આત્મનઃ પરિણતિઃ શોકસંજ્ઞા । સા ચાક્રન્દનાદિના જ્ઞાયતે ।

(૧૬) ધર્મસંજ્ઞા—

(૧૬) મોહનીયક્ષયોપશમેન સર્વવિરતિ-દેશવિરતિલક્ષણા કર્મક્ષયજનક—

સંજ્ઞા કહલાતી હૈ । જૈસે-દાન ધર્મ આદિ કે ફલ મેં સંદેહ હોના । યહ સંજ્ઞા દો પ્રકાર કી હૈ-દેશ સે ઓર સર્વ સે । ‘બાઈસ પરીષહોં કે સહને કા, બ્રહ્મચર્ય પાલને કા, કેશલોચ આદિ કલેશ સહને કા ફલ મિલેગા યા નહીં ?’ હસ પ્રકાર કા સંશય હોના દેશતઃ વિચિકિત્સાસંજ્ઞા હૈ । ‘વાસ્તવ મેં પરલોક હૈ યા નહીં, સર્વજ્ઞ કે દ્વારા પ્રરૂપિત જીવ આદિ તત્ત્વ યથાર્થ હૈ યા નહીં ?’ હસ પ્રકાર કા સંશય સર્વતઃ વિચિકિત્સાસંજ્ઞા હૈ ।

(૧૫) શોકસંજ્ઞા—

મોહનીય કર્મ કે ઉદય સે ઇષ્ટવિયોગ સે ઉત્પન્ન હોનેવાલી વિલાપ ઓર વિમનસ્કતારૂપ આત્મા કી પરિણતિ શોકસંજ્ઞા કહલાતી હૈ ।

(૧૬) ધર્મસંજ્ઞા—

મોહનીય કર્મ કે ક્ષયોપશમ સે કર્મક્ષયજનક સર્વવિરતિ, તથા દેશવિરતિ વિચિકિત્સા સંજ્ઞા કહેવાય છે. જેમકે:-દાન ધર્મ આદિના ફલમાં સંદેહ થવો. આ સંજ્ઞા બે પ્રકારની હોય છે-(૧) દેશથી, (૨) સર્વથી, ‘બાવીશ પરિષદોનું સહન કરવું’ તે, બ્રહ્મચર્ય પાલન કરવું તે, કેશનું લોચન કરવું વગેરે કલેશ સહન કરવાનું ફલ મળશે કે નહિ ?’ આ પ્રકારનો સંશય તે દેશથી વિચિકિત્સાસંજ્ઞા છે. ‘વાસ્તવમાં પરલોક છે કે નહિ, સર્વજ્ઞદ્વારા પ્રરૂપિત જીવ આદિ તત્ત્વો યથાર્થ છે કે નહિ’ આ પ્રકારનો સંશય તે સર્વથી વિચિકિત્સાસંજ્ઞા છે.

(૧૫) શોકસંજ્ઞા—

મોહનીય કર્મના ઉદયને લીધે, ઇષ્ટવિયોગથી ઉત્પન્ન થવા વાલી, વિલાપ અને વિમનસ્કતા (વ્યાકુલ ચિત્ત) રૂપ આત્માની પરિણતિ શોકસંજ્ઞા કહેવાય છે.

(૧૬) ધર્મસંજ્ઞા—

મોહનીયકર્મના ક્ષયોપશમથી કર્મક્ષયજનક સર્વવિરતિ તથા દેશવિરતિરૂપ



સર્વવિરતિદેશવિરતિરૂપાઽઽત્મનઃ સ્વભાવપરિણતિઃ ધર્મસંજ્ઞા । સા જીવરક્ષણાદિ-  
વ્યાપારેણ જ્ઞાયતે ।

જ્ઞાનસંજ્ઞાભેદાઃ—

જ્ઞાનસંજ્ઞા તુ મતિશ્રુતાદિભેદાત્ પશ્ચધા—(૧) મતિજ્ઞાનં, (૨) શ્રુતજ્ઞાનં,  
(૩) અવધિજ્ઞાનં, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનં, કેવલજ્ઞાનં, ચેતિ ।

(૧) મતિજ્ઞાનમ્—

મનનં મતિરવબોધઃ । મતિશ્ચાસૌ જ્ઞાનં ચ મતિજ્ઞાનમ્ । અત્ર જ્ઞાનશબ્દઃ  
સામાન્યજ્ઞાનવાચકઃ । ઇન્દ્રિય-નોઈન્દ્રિયજન્યં જ્ઞાનં મતિર્જ્ઞાનવિશેષઃ, અતઃ સામાન્ય-  
વિશેષયોર્જ્ઞાનયોઃ સામાનાધિકરણ્યમ્ ।

રૂપ આત્મા કી સ્વભાવપરિણતિ કો ધર્મસંજ્ઞા કહતે હૈં । જીવરક્ષા આદિ વ્યાપારો  
સે ઉસકા જ્ઞાન હોતા હૈ ।

જ્ઞાનસંજ્ઞા કે ભેદ

મતિ, શ્રુત આદિકે ભેદ સે જ્ઞાનસંજ્ઞા પાંચ પ્રકાર કી હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર—  
(૧) મતિજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન, ઓર (૫) કેવલજ્ઞાન ।

(૧) મતિજ્ઞાન

મનન કરના મતિ હૈ, અર્થાત્ બોધ । મતિરૂપ જ્ઞાન મતિજ્ઞાન કહલાતા હૈ । યહૌ જ્ઞાન  
શબ્દ સામાન્ય જ્ઞાન કા વાચક હૈ । ‘ઇન્દ્રિય ઓર મનસે હોનેવાલા જ્ઞાન મતિ હૈ’ । એસા અર્થ  
કરને સે સામાન્ય ઓર વિશેષ જ્ઞાનોં મેં સમાનાધિકરણતા હો જાતી હૈ ।

આત્માની સ્વભાવપરિણતિને ધર્મસંજ્ઞા કહે છે. જીવરક્ષા આદિ વ્યાપારથી તેનું  
જ્ઞાન થાય છે.

જ્ઞાનસંજ્ઞાના ભેદ—

મતિ, શ્રુત આદિ ભેદ વડે—કરી જ્ઞાનસંજ્ઞા પાંચ પ્રકારની કહી છે તે આ  
પ્રમાણે છે—(૧) મતિજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન, અને  
(૫) કેવલજ્ઞાન.

(૧) મતિજ્ઞાન—

મનન કરવું તે મતિ છે. અર્થાત્ બોધ છે, મતિરૂપ જ્ઞાન તે મતિજ્ઞાન કહેવાય  
છે. આહિં જ્ઞાન શબ્દ સામાન્ય જ્ઞાનનો વાચક છે. ‘ઇન્દ્રિય અને મનથી ઉત્પન્ન  
જ્ઞાન તે મતિ છે’ એવો અર્થ કરવાથી સામાન્ય અને વિશેષ જ્ઞાનોમાં સમાના-  
ધિકરણતા (સમાનપણું) થઈ જાય છે.

(૨) શ્રુતજ્ઞાનમ્—

શ્રુતં=શ્રુતિઃ શ્રવણં જ્ઞાનવિશેષઃ । તત્ત્વ કીદૃશમ્ ? ઉચ્યતે—શબ્દસ્ય શ્રવણેન, ભાષણાદિના વા યજ્ઞાનમુત્પદ્યતે તદેવ શ્રુતમ્ ।

અત્ર શ્રુતશબ્દેન જ્ઞાનં ગૃહ્યતે, જ્ઞાનપ્રભેદપ્રકરણાન્તઃપાતિત્વાત્ । ન તુ શ્રૂયતે ઇતિ વ્યુત્પત્ત્યા શબ્દાર્થકઃ શ્રુતશબ્દઃ । લઘ્વિરૂપે મતિજ્ઞાને સતિ પશ્ચાત્—શ્રુતજ્ઞાન—મુત્પદ્યતે, ન તુ મતિજ્ઞાનાભાવે, અતો મતિજ્ઞાનં કારણં શ્રુતજ્ઞાનસ્ય ।

નતુ મતિજ્ઞાનમેવ શ્રુતજ્ઞાનં સંપદ્યતે, યથા—મૃત્તિકૈવ ઘટઃ, તન્તુરેવ પટઃ,

(૨) શ્રુતજ્ઞાન—

શ્રુતિ યા શ્રવણ (સુનના), યહ એક પ્રકાર કા જ્ઞાન કહલાતા હૈ । શબ્દ કે શ્રવણ સે યા ભાષણ આદિ સે વાચ્ય—વાચકભાવ સમ્બન્ધ કે અનુસાર જો પદાર્થ કા જ્ઞાન હોતા હૈ ઉસે શ્રુતજ્ઞાન કહતે હૈ ।

યહાં ‘શ્રુત’ શબ્દ સે જ્ઞાન કા ગ્રહણ ક્રિયા જાતા હૈ, ક્યોં કિં વહ જ્ઞાન કે પ્રભેદોં કે અન્તર્ગત હૈ, કિન્તુ ‘શ્રૂયતે’ ઇસ વ્યુત્પત્તિ સે શબ્દાર્થક શ્રુત—શબ્દ નહીં હૈ । લઘ્વિરૂપ મતિજ્ઞાન કે હોને પર બાદમેં શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન હોતા હૈ, મતિજ્ઞાન કે અભાવ મેં નહીં હોતા, અત એવ મતિજ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન કા કારણ હૈ ।

શબ્દ—મતિજ્ઞાન હી શ્રુતજ્ઞાનરૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ, જૈસે મિટ્ટી ઘટરૂપ મેં પલટ જાતી હૈ, ઓર તન્તુ પટ (વસ્ત્ર) રૂપ મેં બદલ જાતે હૈ, એસી સ્થિતિ મેં ભગવાને શ્રુતજ્ઞાન કા પૃથક્ ગ્રહણ કિસ પ્રયોજન સે ક્રિયા હૈ ?

(૨) શ્રુતજ્ઞાન—

શ્રુતિ અથવા શ્રવણ—સાંભળવારૂપ એક પ્રકારનું જ્ઞાન તે શ્રુત—જ્ઞાન કહેવાય છે. શ્રુત—જ્ઞાન કેવું હોય છે ? શબ્દના સાંભળવાથી અથવા ભાષણ આદિથી, વાચ્ય—વાચક ભાવ સંબંધ પ્રમાણે જે પદાર્થનું જ્ઞાન થાય છે, તેને શ્રુતજ્ઞાન કહે છે.

અહિં શ્રુત—શબ્દથી જ્ઞાન ગ્રહણ કરી શકાય છે. કેમકે તે જ્ઞાનના પ્રભેદોની અંદર છે, પરંતુ ‘શ્રૂયતે’ આ વ્યુત્પત્તિથી શબ્દાર્થક શ્રુત—શબ્દ નથી. લઘ્વિરૂપ મતિજ્ઞાન થયા પછી શ્રુતજ્ઞાન ઉત્પન્ન થાય છે, મતિજ્ઞાનના અભાવમાં થતું નથી તે કારણથી મતિજ્ઞાન તે શ્રુતજ્ઞાનનું કારણ છે.

શંકા—મતિજ્ઞાન જ શ્રુતજ્ઞાનરૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે, જેમકે માટી ઘટ રૂપમાં ફરી જાય છે. અને તન્તુ વસ્ત્રરૂપમાં બદલાઈ જાય છે. એવી સ્થિતિમાં ભગવાને શ્રુતજ્ઞાનનું જીહ્વ ગ્રહણ શું પ્રયોજનથી કર્યું ?





તસ્મિન્ પક્ષે-શ્રુતસ્ય આત્મવચનસ્ય જ્ઞાનં, શ્રુતજ્ઞાનમિતિ ષષ્ઠીતત્પુરુષઃ । આપ્તો=રાગાદિ-  
રહિતઃ સર્વજ્ઞસ્તસ્ય વચનમ્-આપ્તવચનમ્ । તદર્થાધ્યવસાયરૂપં જ્ઞાનં શ્રુતજ્ઞાનમિતિ ।  
અધ્યવસાયો નિર્ણયઃ । શ્રુતજ્ઞાનં પ્રતિ શબ્દસ્ય નિમિત્તકારણતયા શબ્દેऽપિ શ્રુતવ્યપદેશો  
ભવતિ । જ્ઞાનભેદવ્યવસ્થાયાં તુ શ્રુતશબ્દઃ શ્રવણાર્થવાચીત્યવધેયમ્ ।

### (૩) અવધિજ્ઞાનમ્-

અવશબ્દોઽધઃશબ્દાર્થઃ, અવ=અધઃ વિસ્તૃતં વસ્તુ ધીયતે-જ્ઞાયતેઽને-  
નેત્યવધિઃ । અવધિશ્ચાસૌ તજ્ઞાનં ચેતિ વિગ્રહઃ । વિસ્તૃતવિષયકં જ્ઞાનમવધિ-

વચન કા મી ગ્રહણ હોતા હૈ । ઉસ પક્ષ મેં શ્રુત કા અર્થાત્ આત્મવચન કા જ્ઞાન  
શ્રુતજ્ઞાન હૈ, એસા ષષ્ઠીતત્પુરુષ સમાસ હોગા । આપ્ત અર્થાત્ રાગાદિસે રહિત સર્વજ્ઞ,  
ઉનકા વચન આત્મવચન કહલાતા હૈ । અધ્યવસાય અર્થાત્ નિશ્ચય । એસા અધ્યવસાયરૂપ અર્થાત્  
પદાર્થ કા નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન શ્રુતજ્ઞાન હોતા હૈ । શબ્દ, શ્રુતજ્ઞાન મેં નિમિત્ત કારણ હૈ, ઇસ  
લિખે શબ્દ મી ત કહલાતા હૈ. કિન્તુ જ્ઞાન-ભેદકી વ્યવસ્થા મેં શ્રુત-શબ્દ શ્રવણ અર્થ કા  
વાચક હૈ ।

### (૩) અવધિજ્ઞાન—

‘અવ કા અર્થ હૈ ‘અધઃ’ અર્થાત્ નીચે । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો જ્ઞાન  
અધોદિશા કી વસ્તુ કો વિસ્તાર સે જાનતા હૈ વહ અવધિજ્ઞાન કહલાતા હૈ । અવધિરૂપ  
જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન હૈ, અર્થાત્ વિસ્તૃતવિષયક જ્ઞાન । જૈસે-અનુત્તરોપપાતિક દેવ અવધિજ્ઞાન

આત્મવચનનું ગ્રહણ થઈ શકે છે. તે પક્ષમાં શ્રુતનું અર્થાત્ આત્મવચનનું જ્ઞાન તે  
શ્રુતજ્ઞાન છે. એ પ્રમાણે ષષ્ઠીતત્પુરુષ સમાસ થશે. આપ્ત અર્થાત્ રાગાદિથી રહિત,  
સર્વજ્ઞ, તેનું વચન તે આપ્તવચન કહેવાય છે અધ્યવસાય અર્થાત્ નિશ્ચય, એવા  
અધ્યવસાયરૂપ અર્થાત્ પદાર્થનું નિશ્ચયાત્મક જ્ઞાન તે શ્રુતજ્ઞાન કહેવાય છે. શબ્દ,  
શ્રુતજ્ઞાનમાં કારણ છે, એટલા માટે શબ્દ પણ શ્રુત કહેવાય છે, પરંતુ જ્ઞાન-ભેદની  
વ્યવસ્થામાં શ્રુત-શબ્દ સાંભળવું એ અર્થનો વાચક છે.

### (૩) અવધિજ્ઞાન—

‘અવ’નો અર્થ છે ‘અધઃ’ અર્થાત્ નીચે, તાત્પર્ય એ છે કે-જે જ્ઞાન અધો  
દિશાની વસ્તુઓને વિસ્તારથી જાણે છે, તે અવધિજ્ઞાન કહેવાય છે. અવધિરૂપ જ્ઞાન  
અવધિજ્ઞાન છે, અર્થાત્ વિસ્તૃતવિષયક જ્ઞાન. જેમકે:-અનુત્તરોપપાતિક દેવ અવધિ-

જ્ઞાનમ્ । યથા—અનુત્તરોપપાતિકા દેવા અવધિજ્ઞાનવલેન ભગવન્તમાપૃચ્છ્ય જીવાદિ—તત્ત્વસ્વરૂપં નિર્ધારયન્તિ ।

યદ્વા—‘અવધિના જ્ઞાનમ્’ ઇતિ તૃતીયાસમાસઃ । અવધિર્મર્યાદા-‘રૂપિદ્રવ્યાણ્યેવ વિષયીકરોતિ નેતરાણી’—તિવ્યવસ્થારૂપા, તથા ચાયમર્થઃ—અરૂપિદ્રવ્યપરિહારેણ રૂપિદ્રવ્યમાત્રવિષયકં જ્ઞાનમવધિજ્ઞાનમિતિ ।

યદ્વા—અધોઽધોઽધિકં પશ્યતિ યેન તદવધિજ્ઞાનમ્ । તત્ત્વ ચતુર્ગતિવર્તિનાં જીવાનામિન્દ્રિયમનોનિરપેક્ષં પ્રતિવિશિષ્ટક્ષયોપશમનિમિત્તકં રૂપિદ્રવ્યસાક્ષાત્કાર—જનકં ભવતિ । એતસ્ય જ્ઞાનસ્ય દેવ—મનુષ્ય—તિર્યક્—નારકા અધિકારિણઃ ।

કે બલ સે ભગવાન્ સે પ્રશ્ન પૂછ કર જીવાદિતત્ત્વોં કા સ્વરૂપ નિશ્ચિત કર લેતે હૈં ।

અથવા—અવધિ કે સાથ જો જ્ઞાન હો વહ અવધિજ્ઞાન કહલાતા હૈ । અવધિકા અર્થ હૈ મર્યાદા । અવધિજ્ઞાન, રૂપી દ્રવ્યોં કો હી જાનતા હૈ, અરૂપી કો નહીં, વહ વ્યવસ્થા હી યહાં મર્યાદા સમજની યાહિય । તાત્પર્ય યહ હુઆ કિ—અરૂપી દ્રવ્યોં કો છોડકર કેવલ રૂપી દ્રવ્યોં કો જાનને વાલા જ્ઞાન અવધિજ્ઞાન કહલાતા હૈ ।

અથવા—જિસ જ્ઞાન કે દ્વારા નીચે નીચે અધિક જાના જાય વહ અવધિજ્ઞાન હૈ । યહ જ્ઞાન ચારોં ગતિયોં કે જીવોં કો હો સકતા હૈ । યહ, સિર્ફ રૂપોં પદાર્થોં કો સાક્ષાત્ જાનતા હૈ, ઓર વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । દેવ, મનુષ્ય, તિર્યક્ ઓર નારકી, સમી ઇસ જ્ઞાન કે અધિકારી હૈ, અર્થાત્ યહ ચારોં કો હો સકતા હૈ ।

જ્ઞાનના બળથી ભગવાનને પ્રશ્ન પૂછીને જીવાદિ તત્ત્વોનો નિશ્ચય કરી લે છે. અથવા—અવધિની સાથે જે જ્ઞાન થાય છે તે અવધિજ્ઞાન કહેવાય છે. અવધિનો અર્થ છે મર્યાદા. અવધિજ્ઞાન, રૂપી દ્રવ્યોને જ જાણે છે, અરૂપી દ્રવ્યોને જાણતું નથી, આ વ્યવસ્થા જ અહીં મર્યાદા સમજવી જોઈએ. તાત્પર્ય એ થયું કે અરૂપી-દ્રવ્યોને છોડીને કેવળ રૂપી દ્રવ્યોને જાણવાવાળું જ્ઞાન તે અવધિજ્ઞાન કહેવાય છે. અથવા જે જ્ઞાન દ્વારા નીચે-નીચે વિશેષ જાણવામાં આવે, તે અવધિજ્ઞાન છે. તે જ્ઞાન ચાર ગતિઓના જીવોને થઈ શકે છે, માત્ર રૂપી પદાર્થોને સાક્ષાત્ જાણે છે, અને વિશિષ્ટ ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, દેવ, મનુષ્ય, તિર્યક અને નારકી, આ સર્વ તે જ્ઞાનના અધિકારી છે, અર્થાત્ એ ચારેયને અવધિજ્ઞાન થઈ શકે છે.

(૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્—

પર્યયનં-સર્વતઃ પરિચ્છેદનમ્-અવબોધનં પર્યયઃ । મનસઃ પર્યયો મનઃ-  
પર્યયઃ, મનોવિષયકઃ, સ ચાસૌ જ્ઞાનં ચ મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્ । યદ્વા મનઃપર્યયસ્ય જ્ઞાનં  
મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્ ।

મનો દ્વિવિધં દ્રવ્યભાવભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યમનો મનોવર્ગણાઃ । સંજ્ઞિના  
મનોવર્ગણા ગૃહીતાઃ સત્યો મન્યમાનાશ્ચિન્ત્યમાના ભાવમનોઽભિધીયતે ।

તત્રેહ ભાવમનઃ પરિગૃહ્યતે । ભાવમનસઃ પર્યયાશ્ચ પરેષાં સાર્ધતૃતીયદ્વીપા-  
મ્યન્તરવર્તિસંજ્ઞિપશ્ચેન્દ્રિયાણાં ચિન્ત્યમાનવિષયાધ્યવસાયરૂપાઃ । યથા-અન્યઃ

(૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન—

પર્યય અર્થાત્ જાનના, મન કો સર્વથા જાનના મનઃપર્યયજ્ઞાન હૈ, અર્થાત્ મનોવિષયક,  
સમ્પૂર્ણ જ્ઞાન મનઃપર્યયજ્ઞાન કહલાતા હૈ । અથવા-મનઃપર્યય (મનકે પર્યવો) કા જ્ઞાન મનઃપર્યયજ્ઞાન  
કહલાતા હૈ ।

મન દો પ્રકાર કા હૈ—દ્રવ્ય-મન ઓર ભાવ-મન । મનોવર્ગણાઓ કો દ્રવ્યમન  
કહતે હૈ । સંજ્ઞો જીવ દ્વારા પ્રહગ કી હુઈ મનોવર્ગણાઈ જવ ચિન્તન કી જાતી હૈ વે  
ભાવમન કહલાતી હૈ ।

મનઃપર્યય જ્ઞાન કે પ્રકરણ મેં ભાવમન હી લિયા જાતા હૈ । અઢાઈ દ્વીપ કે  
અન્તર્ગત સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવોં કે દ્વારા ચિન્તન ક્રિયે જાને વાલે, વિષયાધ્યવસાયરૂપ પર્યયોં  
કો મનઃપર્યય જ્ઞાન જાનતા હૈ । જૈસે-કોઈ દૂસરા જીવ ઈસા વિચાર કરે-આત્મા કૈસા

(૪) મનઃપર્યય જ્ઞાન—

પર્યય અર્થાત્ જાણુનું, મનને જાણુનું તે મનઃપર્યય જ્ઞાન છે. અર્થાત્-મન  
વિષયકનું સંપૂર્ણ જ્ઞાન મનઃપર્યય કહેવાય છે. અથવા મનઃપર્યયનું જ્ઞાન તે મનઃ-  
પર્યયજ્ઞાન કહેવાય છે.

મન બે પ્રકારનાં છે-(૧) દ્રવ્યમન અને (૨) ભાવમન. મનોવર્ગણાઓને દ્રવ્ય-  
મન કહે છે, અને સંજ્ઞી જીવ દ્વારા ગ્રહણ કરાએલી મનોવર્ગણાઓનું જ્ઞાન ચિન્તન  
કરવામાં આવે છે તેને ભાવમન કહે છે.

મનઃપર્યય જ્ઞાનના પ્રકરણમાં ભાવમન જ દેવામાં આવે છે. અઢી દ્વીપના  
સંજ્ઞી પશ્ચેન્દ્રિય જીવો દ્વારા ચિન્તન કરવામાં આવતા વિષયાધ્યવસાયરૂપ પર્યયોને  
મનઃપર્યય જ્ઞાન જાણુ છે. જેમ કે:-કોઈ બીજો જીવ એવો વિચાર કરે-આત્મા કેવો



કશ્ચિદેવં ચિન્તયેત્—‘આત્મા કીદૃશઃ ? અરૂપી, ચેતનાસ્વભાવઃ, કર્મણાં કર્તા, તત્કલભોક્તા ચેત્યાદયો યે જ્ઞાનવિશેષરૂપાસ્તસ્યાત્મનઃ પરિણામાસ્તેષાં યદ્ જ્ઞાનં તન્મનઃપર્યયજ્ઞાનમ્ ।

મનઃપર્યયજ્ઞાની ચ મનઃપર્યયાનેવ પ્રત્યક્ષીકરોતિ ન તુ બાહ્યં વસ્તુ । ન ચ—‘મનઃપર્યયજ્ઞાનિના બાહ્યં વસ્તુ ન જ્ઞાયતે’ इति वाच्यम्, અનુમાનતસ્તસ્ય બાહ્યવસ્તુ-જ્ઞાનસદ્ભાવાત્ । યથા—વિશિષ્ટક્ષાયોપશમિકપ્રતિભાશાલી પ્રેક્ષાવાન્ પ્રશાન્તઃ કસ્યચિદાકારેજ્ઞિતાદિકં વિલોક્ય તદીયમનોગતં ભાવં સામર્થ્યં ચાનુમાનતો વિજાનાતિ ।

હે ? અરૂપી, ચેતનાસ્વરૂપ, કર્મોં કા કર્તા, કર્મફલભોક્તા, इत्यादि આત્મા કે જો જ્ઞાન-વિશેષરૂપ પરિણામ હૈં; ઉન્હેં જાનના મનઃપર્યયજ્ઞાન હૈ । મનઃપર્યયજ્ઞાની જીવ, મન કે પર્યાયોં કો હી પ્રત્યક્ષ કરતા હૈ, બાહ્ય વસ્તુ કો નહીં । પરન્તુ યહ કહના ઠીક નહીં હૈ કિ—મનઃપર્યયજ્ઞાની બાહ્ય વસ્તુઓં કો જાનતા હી નહીં હૈ । મનઃપર્યયજ્ઞાની કો અનુમાન સે બાહ્ય પદાર્થોં કા જ્ઞાન હોતા હૈ । જૈસે—વિશિષ્ટક્ષયોપશમ-જન્ય પ્રતિભા બાલા બુદ્ધિમાન્ પુરુષ કિસી કે ઇશારે યા ચેષ્ટા કો દેખકર ઉસકે મનકા ભાવ ઓર ઉસકા સામર્થ્ય અનુમાન સે જાન લેતા હૈ, ઇસી પ્રકાર મનઃપર્યયજ્ઞાની દૂસરે કે ભાવરૂપ મન કો પૂર્ણતયા પ્રત્યક્ષ કરકે અનુમાન સે બાહ્ય વસ્તુ કો જાન લેતા હૈ કિ—‘ઇસને અમુક વસ્તુ કા વિચાર કિયા હૈ’ । બાહ્ય પદાર્થોં કા વિચાર કરતે સમય ઉસી પદાર્થ કે આકાર કા મન હો જાતા હૈ ।

છે ? અરૂપી, ચેતના-સ્વરૂપ, કર્મોંનો કર્તા, કર્મફલભોક્તા, इत्यादि આત્માના જ્ઞાન વિશેષરૂપ જે પરિણામ છે, તેને જાણવા તે મનઃપર્યય જ્ઞાન છે.

મનઃપર્યય જ્ઞાની જીવ મનના પર્યાયોંને જ પ્રત્યક્ષ કરે છે બહારની વસ્તુઓંને નહિ. પરન્તુ એમ કહેવું ઠીક નથી કે—મનઃપર્યયજ્ઞાની બહારની વસ્તુઓંને જાણતા જ નથી, મનઃપર્યયજ્ઞાનીઓંને અનુમાનથી બહારની વસ્તુઓંનું જ્ઞાન હોય છે. જેમકે:—વિશિષ્ટક્ષયોપશમજન્ય પ્રતિભાવાળા બુદ્ધિમાન પુરુષ કોઈના ઇશારાથી અથવા ચેષ્ટાને જોઈને તેના મનનો ભાવ અને તેનું સામર્થ્ય અનુમાનથી જાણી લે છે, એ પ્રમાણે મનઃપર્યયજ્ઞાની બીજાના ભાવરૂપ મનને પૂર્ણ રૂપમાં પ્રત્યક્ષ કરીને અનુમાનથી બહારની વસ્તુઓંને જાણી લે છે કે:—“તેણે અમુક વસ્તુનો વિચાર કર્યો છે” બહારના પદાર્થોંનો વિચાર કરવાના સમયે તેજ પદાર્થના આકારરૂપ મન થઈ જાય છે.

તથા મનઃપર્યયજ્ઞાની કસ્યચિદ્ ભાવરૂપં મનઃ સર્વતોભાવેન પ્રત્યક્ષી-  
કૃત્યાનુમાનેન બાહ્યં વિષયમવબુધ્યતે-‘ઇદં વસ્તુનેન ચિન્ત્યતે’ ઇતિ । બાહ્યપદાર્થ-  
ચિન્તનસમયે હિ બાહ્યપદાર્થાકારસદૃશાકારં મનો ભવતિ ।

ઇદં મનઃપર્યયજ્ઞાનં રૂપિવિષયત્વ-ક્ષાયોપશમિકત્વ-પ્રત્યક્ષત્વાદિસામ્યે-  
ઽવ્યવધિજ્ઞાનાદ્ ભિન્નં, સ્વામ્યાદિભેદાત્ । તથાહિ-અવધિજ્ઞાનમવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટેરપિ  
ભવતિ, તદ્ દ્રવ્યતોઽશ્વેષરૂપિદ્રવ્યવિષયં, ક્ષેત્રતો લોકવિષયમ્, કાલતોઽતીતાનાગતા-  
સંખ્યાતોત્સર્પિણ્યવસર્પિણીવિષયમ્, ભાવતઃ સકલરૂપિદ્રવ્યેષુ પ્રતિદ્રવ્યમસંખ્યાત-  
પર્યાયવિષયમ્ ।

મનઃપર્યયજ્ઞાનં તુ પ્રમાદરહિતસ્યાઽઽમર્ષાઘન્યતમલલ્બિધારિણઃ સંયતસ્ય  
ભવતિ । દ્રવ્યતઃ-સંજ્ઞિપઞ્ચેન્દ્રિયમનોદ્રવ્યવિષયં, ક્ષેત્રતઃ-સમયક્ષેત્રમાત્રવિષયમ્

મનઃપર્યયજ્ઞાન અવધિજ્ઞાન કી तरह રૂપી પદાર્થો કો વિષય કરતા હૈ;  
ક્ષયોપશમ સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ, કિન્તુ અવધિજ્ઞાન સે ભિન્ન હૈ, ક્યોં કિ સ્વામી આદિકે  
ભેદ સે દોનોં મેં ભેદ હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર—અવધિજ્ઞાન અવિરતસમ્યગ્દૃષ્ટિ કો બી  
હોતા હૈ, વહ દ્રવ્યતઃ સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોં કો જાનતા હૈ, ક્ષેત્ર સે સમસ્ત લોક કો જાનતા હૈ,  
કાલ સે અસંખ્યાત ભૂત ઓર ભાવી ઉત્સર્પિણી ઇવં અવસર્પિણી કો વિષય કરતા હૈ,  
ભાવ સે સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોં મેં સે પ્રત્યેક દ્રવ્ય કી અસંખ્યાત પર્યાયોં કો જાનતા હૈ ।

મનઃપર્યયજ્ઞાન અપ્રમત્ત સંયત કો તથા આમર્ષ આદિ કિસી લલ્બિધે કો ધારક  
કો હી હોતા હૈ । વહ દ્રવ્ય સે સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિય કો મનોદ્રવ્ય કો, ક્ષેત્ર સે સમયક્ષેત્રમાત્ર કો

મનઃપર્યયજ્ઞાન, અવધિજ્ઞાન પ્રમાણે રૂપી પદાર્થોને વિષય કરે છે-જાણે છે  
મનઃપર્યયજ્ઞાન ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન થાય છે, પરંતુ અવધિજ્ઞાનથી તે ભિન્ન છે, કેમકે  
સ્વામી આદિના ભેદથી તે બંનેમાં ભેદ છે. તે આ પ્રમાણે-અવધિજ્ઞાન અવિરત  
સમ્યગ્દૃષ્ટિને પણ થાય છે. તે દ્રવ્યથી સર્વ રૂપી જીવોને જાણે છે, ક્ષેત્રથી સમસ્ત  
લોકને જાણે છે, કાલથી અસંખ્યાત ભૂત અને ભાવી ઉત્સર્પિણી અવસર્પિણીને જાણી  
શકે છે, ભાવથી સમસ્ત રૂપી દ્રવ્યોમાંથી પ્રત્યેક દ્રવ્યની અસંખ્યાત પર્યાયોને જાણે છે.

મનઃપર્યયજ્ઞાન અપ્રમત્ત સંયતને (મુનિને) તથા આમર્ષ આદિ કોઈ લલ્બિધના  
ધારકને જ થાય છે. તે દ્રવ્યથી સંજ્ઞી પંચેન્દ્રિયનાં મનોદ્રવ્યને, ક્ષેત્રથી સમયક્ષેત્ર-

કાલતોઽતીતાનાગતપલ્યોપમાસંખ્યાતભાગવિષયમ્, ભાવતો મનોદ્રવ્યગતઅનંતપર્યાય-  
વિષયકમ્ ।

(૫) કેવલજ્ઞાનમ્ —

કેવલમ્—એકમસહાયં જ્ઞાનાવરણીયકર્માત્યન્તક્ષયસમુદ્ભૂતમ્—અતીતાના  
ગતવર્તમાનયથાવસ્થિતસકલદ્રવ્યગુણપર્યાયવિષયકમપ્રતિપાતિ જ્ઞાનં કેવલજ્ઞાનમ્ ।  
અત્ર ગ્રન્થવિસ્તરભિયા વિરમામઃ ।

જ્ઞાનપ્રસજ્ઞેન મત્યાદિભેદપશ્ચકં પ્રદર્શિતં, પ્રકૃતે તુ મતિજ્ઞાનસ્યૈવાધિકારઃ ।

(અઢાઈ દ્વીપ કો), કાલ સે પલ્યોપમા કે અસંખ્યાતવેં ભાગ—ભૂત—ભવિષ્યત્ કાલકો ઓર  
ભાવ સે મનોદ્રવ્ય કી અનંત પર્યાયો કો વિષય કરતા હૈ ।

(૫) કેવલજ્ઞાન—

કેવલજ્ઞાન, કેવલ અર્થાત્ એક હી હૈ । ડસ કૈ સાથ દૂસરા જ્ઞાન નહીં હોતા ।  
વહ અસહાય હૈ અર્થાત્ ઇન્દ્રિય મન આદિ કિસી કી સહાયતા કી ડસે અપેક્ષા નહીં હૈ ।  
વહ જ્ઞાનાવરણ કર્મ કૈ આત્યન્તિક ક્ષય સે ઉત્પન્ન હોતા હૈ । અતીત, અનાગત, વર્તમાન કાલ  
કૈ સમસ્ત દ્રવ્યો ગુણો ઓર પર્યાયો કો યથાર્થરૂપ મેં જાનતા હૈ, અપ્રતિપાતી હૈ, અર્થાત્  
એકવાર ઉત્પન્ન હો કર કમી નષ્ટ નહીં હોતા । એસા જ્ઞાન કેવલજ્ઞાન કહલાતા હૈ ।  
ગ્રન્થવિસ્તાર કૈ મય સે અધિક વિસ્તાર નહીં કરતે ।

જ્ઞાન કા પ્રકરણ હોને સે મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ ભેદ વતલાયે જા ચુકે હૈં ।

માત્રને (અઢી દ્વીપને) કાલથી પલ્યોપમના અસંખ્યાતમા ભાગે ભૂત—ભવિષ્ય કાલને  
અને ભાવથી મનોદ્રવ્યની અનંત પર્યાયોને બાણે છે.

(૫) કેવલજ્ઞાન—

કેવલજ્ઞાન, કેવલ અર્થાત્ એકજ છે. તેની સાથે બીજું જ્ઞાન થતું નથી, તે  
અસહાય છે, અર્થાત્ ઇન્દ્રિય, મન આદિ કોઈની પણ સહાયતાની તેને અપેક્ષા નથી.  
અને તે કેવલજ્ઞાન જ્ઞાનાવરણીય કર્મના આત્યન્તિક ક્ષયથી ઉત્પન્ન થાય છે. કેવલજ્ઞાન  
ભૂતકાલ, ભવિષ્યકાલ અને વર્તમાન કાલના સમસ્ત દ્રવ્યો, ગુણો અને પર્યાયોને  
યથાર્થરૂપથી બાણે છે. તે અપ્રતિપાતી છે, અર્થાત્ એક વાર ઉત્પન્ન થઈને ફરી  
કોઈ પણ વખત નાશ પામતું નથી, એવું જે જ્ઞાન તે કેવલજ્ઞાન કહેવાય છે.  
ગ્રન્થવિસ્તારના ભયથી અધિક વિસ્તાર અહિં કરતા નથી.

જ્ઞાનનું પ્રકરણ હોવાથી મતિજ્ઞાન આદિ પાંચ ભેદો બતાવ્યા છે. અહિં



મતિજ્ઞાનં ચાનેકવિધમ્ , ઈહાદિભેદાત્ । ઉક્તશ્ચ ભગવતા—

“ઈહા અપોહ વીમંસા, મગ્ગણા ય ગવેષણા ।

સંજ્ઞા સર્ઈ મર્ઈ પન્ના, સવ્વં આભિણિબોહિયં” ॥ (નન્દી મતિ-જ્ઞાનગાથા ૨૭)

છાયા-ઈહા, અપોહઃ વિમર્શઃ માર્ગણા ચ ગવેષણા ।

સંજ્ઞા સ્મૃતિઃ મતિઃ પ્રજ્ઞા સર્વમ્ આભિનિબોધિકમ્ ॥

‘આભિણિબોહિયં’ इत्यनेन त्रिकालविषयकं मतिज्ञानमुच्यते तथा-चोक्तं भगवता—“पंचविहं णाणं पण्णत्तं । तंजहा—(१) आभिणिबोहियणाणं, (२) सुयणाणं, (३) ओहिणाणं (४) मणपज्जवणाणं (५) केवलणाणं । इति (नन्दी, १)

(૧) ઈહા—

ઈહાઽપોહાદયો મતિજ્ઞાનપ્રભેદાઃ । તત્ર-ઈહનમ્-ઈહા । નામજાત્યાદિ-

यहाँ मतिज्ञान का ही प्रसङ्ग है । मतिज्ञान, ईहा आदि के भेद से अनेक प्रकार का है । भगवान् ने कहा है :—

“ઈહા, અપોહ, વિમર્શ, માર્ગણા, સંજ્ઞા, સ્મૃતિ, મતિ ઓર પ્રજ્ઞા, યહ સવ આભિનિબોધિક જ્ઞાન (મતિજ્ઞાન) હૈ” (નન્દીસૂત્ર મતિજ્ઞાન ગાથા ૨૭)

આભિનિબોધિક જ્ઞાન કા અર્થ હૈ-ત્રિકાલવિષયક મતિજ્ઞાન । ભગવાન્ને કહા હૈ:-“જ્ઞાન પાંચ પ્રકાર કા કહા ગયા હૈ, વહ ઇસ પ્રકાર-(૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન ઓર (૫) કેવલજ્ઞાન” (નન્દી-સૂ.૦૧)

(૧) ઈહા—

इहा अपोह आदि मतिज्ञान के भेद हैं । नाम और जाति आदि की विशेष

મતિજ્ઞાનનો જ પ્રસંગ છે, મતિજ્ઞાન ઇહા આદિ લેહોથી અનેક પ્રકારનું છે. ભગવાને કહ્યું છે કે:-ઈહા, અપોહ, વિમર્શ, માર્ગણા, ગવેષણા, સંજ્ઞા, સ્મૃતિ, મતિ, અને પ્રજ્ઞા, એ સર્વ આભિનિબોધક જ્ઞાન-મતિજ્ઞાન છે (નન્દીસૂત્ર મતિજ્ઞાનગાથા ૨૭) આભિનિબોધિક જ્ઞાનનો અર્થ છે-ત્રિકાલવિષયક મતિજ્ઞાન, ભગવાને કહ્યું છે કે:-“જ્ઞાન પાંચ પ્રકારનું છે, તે આ પ્રમાણે (૧) આભિનિબોધિકજ્ઞાન (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાન (નન્દી સૂ.૦૧)

(૧) ઇહા—

ઇહા તથા અપોહ વગેરે મતિજ્ઞાનના લેહ છે. નામ અને જાતિ આદિની વિશેષ

વિશેષકલ્પનારહિતસામાન્યજ્ઞાનોત્તરં વિશેષનિશ્ચયાર્થં વિચારણા-ઈહા । યથા-સ્પર્શનેન્દ્રિયેણ સ્પર્શસામાન્યે જ્ઞાતે સતિ, તદનુ કીદશોઽયં સ્પર્શઃ ?, કસ્યાયં સ્પર્શઃ ?, કિમયં કમલનાલસ્પર્શઃ ઉતાહો બુજઙ્ગમસ્પર્શઃ? इति गाढान्धकारे चक्षुष्म-તોઽપિ વિચારણા પ્રવર્તતે ।

(૨) અપોહઃ—

અપોહનમ્-અપોહઃ નિશ્ચયઃ । કોઽયમપોહઃ ? ઉચ્યતે-મતિજ્ઞાનસ્યાવગ્રહાદિ-ભેદચતુષ્ટયે તૃતીયભેદો યોઽપાયઃ સ એવાપોહશબ્દેનોચ્યતે । અવગ્રહાદિભેદ-ચતુષ્ટયં ચ નન્દીસૂત્રે ભગવતૈવ પ્રદર્શિતમસ્તિ ।

કલ્પના સે રહિત સામાન્યજ્ઞાન કે પશ્ચાત્ હોને વાલી વિચારણા ઈહા કહલાતી હૈ । જૈસે-સ્પર્શનેન્દ્રિય કે દ્વારા સ્પર્શકા સામાન્ય જ્ઞાન હોને કે પશ્ચાત્ ગાઢ અન્ધકાર હોને પર ચક્ષુવાલે કો મી યહ વિચારણા હોતી હૈ કિ યહ સ્પર્શ કૈસા હૈ ? કિસકા યહ સ્પર્શ હૈ ? યહ કમલ કે નાલ કા સ્પર્શ હૈ યા સર્પ કા સ્પર્શ હૈ ?, ઇસ પ્રકાર કી વિચારણા કો ઈહા કહતે હૈ । ૧ ।

(૨) અપોહ—

અપોહ કા અર્થ હૈ-નિશ્ચય । અપોહ ક્યા હૈ ? કહતે હૈ-મતિજ્ઞાન કે અવગ્રહ આદિ ચાર ભેદો મેં તૈસરા ભેદ જો અપાય હૈ ઊસી કો યહાં 'અપોહ' શબ્દ દ્વારા કહા હૈ । અવગ્રહ આદિ ચાર ભેદ નન્દીસૂત્ર મેં ભગવાનને કહે હૈ ।

કલ્પનાથી રહિત, સામાન્ય જ્ઞાનની પછી થવા વાળી વિચારણાને ઇહા કહે છે, જેમકે:- સ્પર્શનેન્દ્રિયના દ્વારા સ્પર્શનું સામાન્ય જ્ઞાન થયા પછી ગાઢ અન્ધકાર થાય ત્યારે નેત્રવાળાને પણ એ વિચાર થાય છે કે-આ સ્પર્શ કેવો છે ? આ કેણે સ્પર્શ કર્યો છે. શેનો સ્પર્શ છે ?, આ કમલના નાળાનો સ્પર્શ છે કે સર્પનો સ્પર્શ છે ?, આ પ્રકારની વિચારણા તેને ઇહા કહે છે.

(૨) અપોહ—

અપોહનો અર્થ છે નિશ્ચય, અપોહ એ શું છે ? કહે છે કે-મતિજ્ઞાનના અવગ્રહ આદિ ચાર ભેદો પૈકીના ત્રીજો ભેદ જે અપાય છે, તેને અહિં 'અપોહ' શબ્દથી કહેલ છે. અવગ્રહ આદિ ચાર ભેદ નન્દીસૂત્રમાં ભગવાને કહેલા છે.

सामान्यज्ञानोत्तरं कालं विशेषनिश्चयार्थं विचारणायां प्रवृत्तायां तदनु-  
गुणदोषविचारणाजनितो निश्चयः, यथा-‘किमयं कमलनालस्पर्शः, आहोस्विद्  
भुजङ्गमस्पर्शः ?’ इति विचारणायां ‘मृणालस्यैवायं स्पर्शः, अत्यन्तशीतादिगुणवत्त्वा-  
दित्यस्यैवाय’-मिति निश्चयोऽन्यं भुजङ्गमस्पर्शमपनुदति, तस्मादयं निश्चयोऽपोहोऽ-  
पनोदश्चेति निगद्यते ।

(३) मीमांसा—

मीमांसा-मातुमिच्छा, मातुं-जीवादिस्वरूपं ज्ञातुमिच्छा ।

(४) मार्गणा—

जीवादिपदार्थस्य यथावस्थितस्वरूपान्वेषणं मार्गणा ।

सामान्य ज्ञान के पश्चात् विशेष का निश्चय करने के लिए विचारणा प्रवृत्त  
होने पर पश्चात् गुण-दोष की विचारणा से उत्पन्न निश्चय अपोह कहलाता है । यथा-  
‘यह कमलनालका स्पर्श है या सर्प का स्पर्श है ?’ इस प्रकार की विचारणा होने पर “यह  
कमलनाल का ही स्पर्श है, क्यों कि इस में अत्यन्त शीतलता है” इस प्रकार का  
निश्चय होना, और यह निश्चय अन्य का अर्थात् सर्प के स्पर्श का निराकरण करदेता है,  
अत एव यह निश्चय अपोह, अपाय और अपनोद भी कहलाता है ।

(३) विमर्श—

जीव आदि के स्वरूप को जानने की इच्छा विमर्श है ।

(४) मार्गणा—

जीव आदि पदार्थों के यथार्थ स्वरूप का अन्वेषण करना मार्गणा है ।

सामान्य ज्ञान तथा पक्षी विशेषणो निश्चय करवा माटे विचारणा यथा पक्षी  
तेना शुष्ण-दोषणी विचारणाथी उत्पन्न निश्चय तेने अपोह कहे छे, जेम-‘आ  
कमलना नाणनो स्पर्श छे के सर्पनो स्पर्श छे ?’ आ प्रकारनी विचारणा यथा पक्षी  
नकडी करवामा आवे के “आ स्पर्श कमलना नाणनो न छे, केमके तेमां अत्यन्त  
शीतलता छे” ओ प्रकारनो निश्चय थाय छे अने ओ निश्चय जीननो अर्थात् सर्पना  
स्पर्शनो निराकरण करी दे छे. तेथी करी आ निश्चय ते अपोह, अपाय अने  
अपनोद पक्ष कहेवाय छे.

(३) विमर्श—

जव आदिना स्वरूपने जानवानी इच्छा ते विमर्श छे.

(४) मार्गणा—

जव आदि पदार्थोना यथार्थ स्वरूपन अन्वेषण करवु ते मार्गणा छे.



## (૫) ગવેષણા—

માર્ગાણાનન્તરમનુપલભ્યસ્ય જીવાદિપદાર્થસ્ય સર્વતઃ પરિમાત્રનં—નિર્ણયાભિ-  
મુખવિચારપરાયણતા ગવેષણા ।

## (૬) સંજ્ઞા—

ઇન્દ્રિયજન્યજ્ઞાનવિષયીભૂતસ્યાર્થસ્ય પુનર્દર્શનેન “સ એવાય”-મિતિ જાયમાનં  
જ્ઞાનં સંજ્ઞા । યથા—“સ એવાયમાહારકલબ્ધિમાન્ મહાત્મા, યો મયા કાનને દૃષ્ટઃ” ।

## (૭) સ્મૃતિઃ—

અનુભૂતાર્થવિષયકં જ્ઞાનં સ્મૃતિઃ । इदं જ્ઞાનમતીતવિષયકં ભવતિ ।  
અત્રોદાહારણં યથા—

## (૫) ગવેષણા—

માર્ગાના કે પશ્ચાત્ ઉપલબ્ધ ન હોને વાળા જીવાદિ પદાર્થોં કા પૂરી તરહ વિચાર  
કરના અર્થાત્ નિર્ણય કે અભિમુખ વિચારપરાયણતા ગવેષણા હૈ ।

## (૬) સંજ્ઞા—

ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનકે વિષયભૂત પદાર્થ કા પુનઃ દર્શન હોને પર ‘યહ વહી હૈ’  
ઇસ પ્રકાર સે ઉત્પન્ન હોને વાળા જ્ઞાન સંજ્ઞા કહલાતા હૈ । જૈસે—“યહ વહી આહારકલબ્ધિ  
વાલે મહાત્મા હૈં જિન્હેં મૈને વનમેં દેસ્વા થા” ।

## (૭) સ્મૃતિ—

પહેલે અનુભવ કિયે હુએ પદાર્થ લો વિષય કરનેવાલા જ્ઞાન સ્મૃતિ કહલાતા  
હૈ । સ્મૃતિજ્ઞાન અતીતવિષયક હી હોતા હૈ । યહાં એક ઉદાહરણ હૈ, જૈસે—

## (૫) ગવેષણા—

માર્ગાણાની પછી ઉપલબ્ધ નહિ થવા વાળા જીવાદિ પદાર્થોના પૂરી રીતે વિચાર  
કરવો અર્થાત્ નિર્ણયને અભિમુખ-વિચાર પરાયણતાને ગવેષણા કહે છે.

## (૬) સંજ્ઞા—

ઇન્દ્રિયજન્ય જ્ઞાનના વિષયભૂત પદાર્થોનું ફરી દર્શન થતાં “આ તેજ છે.”  
એ પ્રકારે ઉત્પન્ન થવા વાળું જ્ઞાન તે સંજ્ઞા કહેવાય છે. જેમ—“આ તેજ આહારક-  
લબ્ધિવાળા મહાત્મા છે જેને મેં વનમાં જોયા હતા.”

## (૭) સ્મૃતિ—

પ્રથમ અનુભવ કરેલા પદાર્થોના વિષય કરનારું જ્ઞાન સ્મૃતિ કહેવાય છે. સ્મૃતિ-જ્ઞાન  
અતીત વિષયનું જ, (વીતી ગયેલા પ્રસંગનું જ) હોય છે અહીં એક ઉદાહરણ છે, જેમકે—

चेलुणा देवी हेमन्ते भगवत्समवसरणतः प्रत्यागच्छन्ती मार्गे महारण्ये स्वप्रतिज्ञाऽविनं जिनकल्पिनं कमपि मुनिं ध्यानावस्थमालोक्य भक्त्या तद्दर्शनवन्दनादिकं विधाय स्वप्रासादमागता रात्रौ सुप्ता । निद्रावस्थायां तस्याः पाणिरावरणवस्त्राद् बहिर्भूतः शीतेन शिथिलीबभूव । अथाऽसौ जागरिता जडीभूतं स्वहस्तं विलोक्य शीतादिपरिषहपरिगतं महारण्यस्थं मुनिं स्मृतवती “कथमहो असौ मुनिर्दिदानीं बहिर्महावने शीतपरिभूतो भविष्यति” । इति कर्मणां महानिर्जरां महापर्यवसानं चकार ।

चेलना देवी हेमन्त ऋतु में भगवान् के समवसरणसे लौटती हुई, मार्ग में महा-अरण्य में, अपनी प्रतिज्ञा पालने वाले किन्हीं जिनकल्पी मुनि को ध्यान में स्थित देखकर, भक्तिपूर्वक उन का दर्शन वन्दन आदि कर के अपने महल में आई और रात्रि में सो गई । निद्रावस्था में उस का हाथ ओढ़ने के वस्त्र से बाहर निकल गया और ठंड के कारण ठर गया । रानी की नोंद खुल गई । उसने अपने हाथ को जडीभूत देख कर शीत परिषहों से आक्रान्त, महा-अरण्यवासी मुनिका स्मरण किया । कहने लगी-अहो ! महावन में, नगर के बाहर वह मुनि इस समय शीत से कैसा कष्ट पा रहे होंगे ?, ऐसा सोच कर उसने कर्म की महानिर्जरा की ।

चेलना देवी हेमन्त ऋतुमां लगवानना समवसरणमांथी पाछी इरे त्यारे मार्गमां भडावनमां, पोतानी प्रतिज्ञा पालनारा, केछि ओक जिनकल्पी मुनिने ध्यानमां स्थित जेधने, भक्तिपूर्वक तेनां दर्शन, वन्दन वगैरे करीने पोताना भडेवनमां आवी अने रात्रीओ सुध गध. निद्रावस्थामां तेना ओक हाथ ओढवाना वस्त्रमांथी अडार रही गयो, अने ठंडी होवाना कारणे ते हाथ ठरी गयो, राणीनी निद्रा उडी गध, त्यारे तेले पोताना हाथने ठरी जवाथी जड जेवो जेधने शीत आदि परिषहोथी आक्रान्त, भडा-वनवासी मुनि सांलरी आव्या; अने कहेवा लागी के-अहो ! भडावनमां नगर अडार ते मुनि आ समयमां शीतथी डेबुं कष्ट पामता डरे ?, जेवो विचार करीने कर्मनी भडानिर्जरा करी.

(८) मतिः—

वर्तमानविषयकं ज्ञानं मतिः । यथा—‘मुनिः संयमार्थं भिक्षामटति’ ।

(९) प्रज्ञा—

विशिष्टक्षयोपशमजन्यं प्रभूतपदार्थवर्ति यथावस्थितस्वरूपनिर्णयात्मकं ज्ञानं प्रज्ञा ।

आभिनिबोधिकस्वरूपस्य मतिज्ञानस्य प्रभेदा उक्ताः ।

“इहैकेषां नो संज्ञा भवती”—त्यत्र संज्ञाशब्देन मतिज्ञानान्तर्गतं स्मृतिरूपं विशिष्टं ज्ञानं भगवता नोशब्दनिर्देशेन प्रतिषेधितम्, न तु सर्वविधसंज्ञारूपं सामान्यं ज्ञानम् ।

(८) मति—

वर्तमानविषयक ज्ञान मति कहलाता है । जैसे—‘मुनि संयम पालने के अर्थ भिक्षाके लिए भ्रमण करता है ।’

(९) प्रज्ञा—

विशिष्ट क्षयोपशम से उत्पन्न होने वाला और प्रभूत पदार्थों के यथार्थ स्वरूप का निर्णयात्मक ज्ञान प्रज्ञा है ।

आभिनिबोधिकरूप मतिज्ञान के प्रभेद कहे गये ।

‘कितनेक जीवोंको संज्ञा नहीं होती’ यहाँ संज्ञा शब्द से मतिज्ञान के अन्तर्गत स्मृतिरूप विशिष्ट ज्ञान का भगवान् ने ‘नो’ शब्द का निर्देश करके निषेध किया है, किन्तु सब प्रकार की संज्ञारूप सामान्य ज्ञानका निषेध नहीं किया है ।

(८) मति—

वर्तमान विषयक ज्ञान ते मति कहेवाय छे, जेभ ‘मुनि संयम पालन भाटे भिक्षा देवा भ्रमण करे छे.’

(९) प्रज्ञा—

विशिष्ट क्षयोपशमार्थी उत्पन्न थनाइ प्रभूत पदार्थोंना यथार्थ स्वरूपनुं निर्णयात्मक ज्ञान ते प्रज्ञा छे.

आभिनिबोधिकरूप मतिज्ञानना प्रभेद कहेवाया.

‘केटलाक लुवेने संज्ञा नथी थती’ अडि संज्ञा शब्दथी मतिज्ञानना अंतर्गत स्मृतिरूप विशिष्ट ज्ञानना भगवाने ‘नो’ शब्दना निर्देश करीने निषेध कथी छे परंतु सर्व प्रकारनी संज्ञारूप सामान्य ज्ञानना निषेध कथी नथी.



સા સંજ્ઞા કિંસ્વરૂપા, યા ન ભવત્યેકેષામ્ ? इत्याकाङ्क्षायामाह-“ तंजहा ” इति । सा यथा—

“પુરત્થિમાઓ વા દિસાઓ” इत्यारभ्य-“अहोदिसाओ वा आगओ अहमंसि” इत्यन्तेनेदमुक्तं भवति-वर्तमानजन्मनः प्राक् कस्यां दिशि ममावस्थान-मासीदिति स्वगत्यागत्यवधिविशिष्टपूर्वादिषड्दिशाज्ञानं नास्ति संज्ञिनामपि कियतांचित् । यथा-मदिरामदधूर्णितनयनो मूर्छितः पथि पतितः स्वजनादिना समुत्थाप्य गृहमानीयते । अथ मूर्छापगमेऽप्यसौ न जानाति-काहं पतितः ?, कथमुत्थापितः ?, केन कया रीत्याऽत्र समानीतोऽस्मी ?-ति । तद्वद् विशिष्टसंज्ञाया

वह संज्ञा किस प्रकारकी है जो किन्हीं २ जीवों को नहीं होती ? । इस प्रकार की जिज्ञासा होने पर कहा गया है-तंजहा-अर्थात् वह इस प्रकार-

‘પુરત્થિમાઓવા વા દિશાઓ’ से लेकर ‘अहोदिशाओवा आगओ अहमंसि’ तक का आशय यह है कि-इस वर्तमान जन्म से पहले मैं कहाँ रहता था ?, इस प्रकारका अपनी गति-आगति से युक्त छह दिशाओं का ज्ञान कितनेक संज्ञी जीवोंको भी नहीं होता । जैसे-मदिरा के मद से छका हुआ, मूर्छित और रास्ते में पड़ा हुआ पुरुष स्वजन आदि के द्वारा उठाकर घर लाया जाता है, किन्तु मूर्च्छा हट जाने पर भी उसे ज्ञान नहीं होता कि-मैं कहाँ गिरा था ?, किस प्रकार उठाया गया ?, कौन किस प्रकार मुझे यहाँ लाया ?, इसी प्रकार विशिष्ट संज्ञा के अभाव के कारण जीव

તે સંજ્ઞા કેવા પ્રકારની છે, જે કોઈ-કોઈ જીવોને નથી હોતી ?, આ પ્રમાણે જિજ્ઞાસા થવાથી કહ્યું છે કે-‘તંજહા’ અર્થાત્ તે આ પ્રકારે—

“પુરત્થિમાઓવા દિસાઓ” થી લઈને “अहोदिसाओ वा आगओ अहमंसि,” સુધીનો આશય એ છે કે:-આ વર્તમાન જન્મથી પહેલાં હું ક્યાં રહેતો હતો, આ પ્રકારનું પોતાની ગતિ-આગતિથી યુક્ત છ દિશાઓનું જ્ઞાન કેટલાક સંજ્ઞી જીવોને પણ નથી થતું. જેમ મદિરાના કેદથી છકેલા મૂર્છિત-ખેલાન રસ્તામાં પડેલા પુરૂષને સ્વજનદ્વારા ઉઠાવીને પોતાના ઘર લાવવામાં આવે છે; પરંતુ મૂર્છા ઉતરી ગયા પછી પણ તેને જ્ઞાન થતું નથી કે-હું ક્યાં પડી ગયો હતો ? કેવી રીતે મને ઉઠાવ્યો ? કોણ કેવી રીતે મને અહિં લાવ્યા ?, આ પ્રકારની વિશિષ્ટ સંજ્ઞાના

અભાવાઙ્ગીવઃ પૂર્વભવં ન જાનાતિ ।

“અણયરીઓ વા દિસાઓ” ઇતિ । યાવત્યો દિશઃ સન્તિ તત્ર કસ્યાશ્ચિદેકસ્યા દિશઃ સમાગતોઽસ્મીતિ સ્વાગમનાવધિદિશં સામાન્યરૂપેનાપિ ન જાનન્તિ કતિચન સંજ્ઞિનઃ, સર્વદિગ્જ્ઞાનાભાવેનાન્યતરદિગ્જ્ઞાનાસંભવાદિતિ ભાવઃ ।

“અણુદિસાઓ વા” ઇતિ । ઈશાનાદયઃ કોણરૂપા વિદિશોઽનુદિશઃ । તાસાં મધ્યે કસ્યાશ્ચિદેકસ્યા અનુદિશઃ સમાગતોઽસ્મીતિ સામાન્યરૂપેણ, તથૈશાન્યા આગ્રેય્યા इत्यादि विशेषरूपेण च स्वागत्यवधिभूताया अनुदिशो ज्ञानं न भवती-  
ત્યભિપ્રાયઃ ।

અથ દિશઃ કતિ સન્તિ ? ઉચ્યતે—સંક્ષેપતો દ્રવ્ય-ભાવ-ભેદેન દિશા દ્વિવિધા ।

અપના પૂર્વ ભવ નહીં જાનતા ।

‘અણયરીઓ વા દિસાઓ’ અર્થાત્ જિતની દિશાઈ છે, અને કોઈની એક દિશા સે મૈં આયા હૂં, ઇસ પ્રકાર અપને આગમન કી દિશા કો સામાન્યરૂપ સે મૈં કિતનેક સંજ્ઞી નહીં જાનતે હૈં । ક્યોં કિ સમી દિશાઓં કે જ્ઞાનકે અભાવ મેં કોઈની એક દિશા કા જ્ઞાન હોના અસંભવ હી હૈ । ‘અણુદિશાઓ વા’ ઈશાન વગૈરહ કોણરૂપ વિદિશાઓં કો અનુદિશા કહતે હૈં । અને સે સામાન્યરૂપ સે કોઈની એક દિશા સે મૈં આયા હૂં, યા વિશેષરૂપ સે ઈશાન, આગ્રેય આદિ વિદિશા સે મૈં આયા હૂં, એસા જ્ઞાન નહીં હોતા ।

પ્રશ્ન—દિશાઈ કિતની હૈં ?

ઉત્તર—સંક્ષેપ સે દિશા કે દો ભેદ હૈં—દ્રવ્ય-દિશા, ઓર ભાવ-દિશા । પૂર્વ, અભાવથી જીવ પોતાના પૂર્વભવને જાણતો નથી.

‘અણયરીઓ વા દિસાઓ’ અર્થાત્ જેટલી દિશાઓ છે, તેમાંથી કોઈ પણ એક દિશાથી હું આવ્યો છું. આ પ્રમાણે પોતાના આગમનની દિશાને સામાન્ય રૂપથી પણ કેટલાંક સંજ્ઞી જાણતા નથી. કેમકે સર્વ દિશાઓના જ્ઞાનના અભાવથી કોઈ એક દિશાનું જ્ઞાન થવું તે અસંભવ છે. ‘અણુદિસાઓ વા’ ઈશાન વગેરે કોણરૂપ વિદિશાઓને અનુદિશા કહે છે. તેમાંથી સામાન્યરૂપે કોઈ પણ એક દિશાથી હું આવ્યો છું, અથવા વિશેષરૂપથી ઈશાન આગ્રેય આદિ વિદિશાઓથી હું આવ્યો છું. એવું જ્ઞાન થતું નથી.

પ્રશ્ન—દિશાઓ કેટલી છે ?

ઉત્તર—સંક્ષેપથી દિશાના બે ભેદ છે:—દ્રવ્યદિશા અને ભાવદિશા. પૂર્વ, પશ્ચિમ,

पूर्वा, दक्षिणा, पश्चिमा, उत्तरा चेति चतस्रोः दिशः, एशानी आग्नेयी, नैऋती, वायवी चेति चतस्रो विदिशः, आसामष्टानामन्तराला अष्टावन्तरदिशः, मिलित्वा षोडश । अथोर्ध्वम्, अधश्चेति द्वे इति, तयोर्योगेऽष्टादश । द्रव्यदिगेव प्रज्ञापकदिक्शब्देनाप्युच्यते ।

तथा-संमूर्च्छिममनुष्याः, गर्भजकर्मभूमिमनुष्याः, गर्भजाकर्मभूमिमनुष्याः, पट्पञ्चाशदन्तरद्वीपमनुष्याः, इति चतुर्विधा मनुष्याः, द्वित्रिचतुःपञ्चेन्द्रियभेदेन चतुर्विधास्तिर्यञ्चः,

पृथिव्यप्तेजोवायुकायभेदाच्चतुर्विधाः स्थावराः । अग्रबीज-मूलबीज-पर्वबीज-स्कन्धबीज-भेदाच्चतुर्विधा वनस्पतयः । इति मिलित्वा षोडश । नरकगति-

पश्चिम, दक्षिण और उत्तर चार दिशाएँ हैं । ईशान, अग्नेय नैऋत्य, वायव्य, ये चार विदिशाएँ हैं । इन आठों के बीच में आठ अवान्तर दिशाएँ हैं । ये सब मिलकर सोलह होती हैं । इन में ऊर्ध्वदिशा और अधोदिशा शामिल कर देने से अठारह द्रव्य-दिशाएँ होती हैं । द्रव्यदिशाको ही प्रज्ञापकदिशा भी कहते हैं ।

तथा—संमूर्च्छिम मनुष्य, गर्भज-कर्मभूमिज मनुष्य, गर्भज-अकर्मभूमिज मनुष्य, छप्पन अन्तरद्वीपों के मनुष्य, ये चार प्रकार के मनुष्य । द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, और पञ्चेन्द्रिय के भेद से चार प्रकार के तिर्यञ्च । पृथ्वीकाय, अप्काय, तेजस्काय और वायुकाय के भेद से चार प्रकार के स्थावर, और अग्रबीज, मूलबीज, पर्वबीज, तथा

दक्षिण, અને ઉત્તર. આ ચાર દિશાઓ છે. અગ્નિ, ઇશાન, નૈઋત્ય, અને વાયવ્ય, આ ચાર વિદિશાઓ છે, આ આઠની વચ્ચેમાં આઠ અવાન્તર દિશાઓ છે. આ સર્વ મળીને સોળ દિશાઓ થાય છે. તેમ ઉર્ધ્વદિશા અને અધોદિશા શામલ કરવાથી અઠાર દ્રવ્ય દિશાઓ થાય છે, દ્રવ્યદિશાને પ્રજ્ઞાપકદિશા પણ કહે છે. તથા-સંમૂર્છિમ મનુષ્ય, ગર્ભ જ કર્મભૂમિ જ મનુષ્ય, ગર્ભ જ-અકર્મભૂમિ જ મનુષ્ય, છપ્પન અન્તરદ્વીપોના મનુષ્ય, આ ચાર પ્રકારના મનુષ્ય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિયના ભેદથી ચાર પ્રકારના તિર્યંચ, પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય અને વાયુકાયના ભેદથી ચાર પ્રકારના. સ્થાવર, અને અગ્રબીજ, મૂલબીજ, પર્વબીજ



દેવગતિશ્ચેતિ દ્વે । સર્વયોગેષ્ટાદશ ભાવદિશઃ સન્તિ ।

અથ દિશાં વિદિશાં ચ પ્રવૃત્તિઃ કુતઃ સ્થાનાદ્ભવતિ ? ઉચ્યતે—

તિર્યગ્લોકસ્ય મધ્યભાગે રત્નપ્રભા ભૂમિઃ, તદુપરિ મધ્યભાગે મેરુ-  
પર્વતાભ્યન્તરે દ્વૌ લઘુતરૌ પ્રતરૌ સ્તઃ । તદુપરિ ગોસ્તનાકારાશ્ચત્વારશ્ચત્વારઃ  
પ્રદેશાઃ સન્તિ । ઈદ્રશાષ્ટપ્રદેશી ચતુષ્કોણો રુચકનામા ભાગોઽસ્તિ । તત્ત એવ દિશાં  
વિદિશાં ચ પ્રવૃત્તિર્ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“ તિર્યગ્લોકસ્ય મધ્યે યો, રુચકોઽષ્ટપ્રદેશકઃ ।

દિશામનુદિશાં ચૈવ, પ્રવૃત્તિર્જાયતે તતઃ ” ॥૧॥

સ્કન્ધવીજ કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કી વનસ્પતિ, યે સબ મિલકર સોલહ હોતે હૈં ।  
તથા નરકગતિ ઓર દેવગતિ મિલકર અઠારહ પ્રકાર કી ભાવ-દિશાઈ હૈં ।

પ્રશ્ન—દિશાઓ ઓર વિદિશાઓની પ્રવૃત્તિ કિસ સ્થાન સે હોતી હૈ ?

ઉત્તર—તિર્યગ્લોક કે મધ્યભાગ મેં રત્નપ્રભા ભૂમિ હૈ । ઉસકે ઉપર મધ્યભાગ  
મેં મેરુ પર્વત કે અન્દર દો છોટે પ્રતર હૈં । ઉનકે ઉપર ગાય કે સ્તન કે આકારવાલે  
ચાર ચાર પ્રદેશ હૈં । એસા અષ્ટપ્રદેશી ચૌકોના રુચક નામક ભાગ હૈ । વહાં સે દિશાઓ  
ઓર વિદિશાઓ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ । કહા મો હૈ—

“ તિર્લે લોક કે મધ્ય મેં આઠ પ્રદેશવાલા રુચક ભાગ હૈ । ઉસી સે સબ દિશાઓ  
ઓર અનુદિશાઓ કી પ્રવૃત્તિ હોતી હૈ ॥ ૧ ॥ ”

તથા રુચકના લેહથી ચાર પ્રકારની વનસ્પતિ, આ સર્વ મળીને સોળ થાય છે,  
તથા નરકગતિ અને દેવગતિ મળીને અઠાર પ્રકારની ભાવ-દિશાઓ છે.

પ્રશ્ન—દિશાઓ અને વિદિશાઓની પ્રવૃત્તિ કયા સ્થાનથી હોય છે ?

ઉત્તર—તિર્યગ્લોકના મધ્ય ભાગમાં રત્નપ્રભા ભૂમિ છે, તેના ઉપર મધ્ય  
ભાગમાં મેરુ પર્વતની અંદર નાના બે પ્રતર છે, તેના ઉપર ગાયના સ્તનના આકાર  
વાળા ચાર-ચાર પ્રદેશ છે. એવો આઠપ્રદેશી ચાર ખુણાવાળો રુચક નામનો ભાગ છે,  
તેનાથી દિશાઓ અને વિદિશાઓની પ્રવૃત્તિ થાય છે. કહ્યું પણ છે:—

“તિર્લો લોકના મધ્યમાં આઠ પ્રદેશવાળો રુચક ભાગ છે, ત્યાંથી સર્વ દિશાઓ  
અને અનુદિશાઓની પ્રવૃત્તિ થાય છે.” ॥ ૧ ॥

દ્રવ્યદિગ્વિષયકં જ્ઞાનં ન ભવત્યેકેવામિતિ વિવક્ષયા-“ઇમેગેસિં જો સળ્ળા ભવઈ” ઇત્યુક્તં ભગવતા । ભાવદિશાવિષયકં ચ જ્ઞાનં ન ભવત્યેકેવામિતિ વક્ષ્યતેऽનન્તરસૂત્ર એવ-“એવમેગેસિં જો જાણં ભવઈ” ઇત્યાદિના । ॥ સૂ. ૨ ॥

ભાવદિશાવિષયકં ચ જ્ઞાનં ભવતિ સંજ્ઞિનાં ક્રિયતાંચિદિત્યાહ-‘એવમેગેસિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્ ।

એવમેગેસિં જો જાણં ભવઈ-અતિથિ મે આયા ઓવવાઈએ, નતિથિ મે આયા ઓવવાઈએ, કે અહં આસી, કે વા ઇઓ ચુએ ઇહ પેચ્ચા ભવિસ્સામિ ॥ સૂ. ૩ ॥

( હાયા )

એવમેકેષાં નો જ્ઞાતં ભવતિ-અસ્તિ મે આત્મા ઔપપાત્તિકઃ, નાસ્તિ મે આત્મા ઔપપાત્તિકઃ, કોઽહમાસમ્, કો વા ઇતશ્ચ્યુત ઇહ પ્રેત્ય ભવિષ્યામિ ? ॥ સૂ. ૩ ॥

કિતનેક જીવોં કો દ્રવ્યદિશાસમ્બન્ધી જ્ઞાન નહીં હોતા, ઇસ અપેક્ષા સે ભગવાને કહા હૈ કિ-‘ઇમેગેસિં જો સળ્ળા ભવઈ’ । ભાવદિશાવિષયક જ્ઞાન કિતનેકો નહીં હોતા હૈ, યહ વાત ‘એવમેગેસિં જો જાણં ભવઈ’ ઇત્યાદિ અગલે સૂત્ર મેં કહી જાયગી ॥ સૂ. ૨ ॥

કિતનેક સંજ્ઞી જીવોંકો ભાવદિશાવિષયક જ્ઞાન નહીં હોતા યહ કહતે હૈ-‘એવમેગેસિં’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ-કિન્હી જીવોંકો યહ જ્ઞાન નહીં હોતા કિ-મેરા આત્મા ઉત્પત્તિશીલ હૈ યા મેરા આત્મા ઉત્પત્તિશીલ નહીં હૈ । મેં પહેલે કૌન થા ઓર યહીં સે મરકર પરલોક મેં કૌન હોઁગા ? ॥ સૂ. ૩ ॥

કેટલાક જીવોને દ્રવ્યદિશાસમ્બન્ધી જ્ઞાન નથી થતું. એ અપેક્ષાથી ભગવાને કહ્યું છે કે:-‘ઇમેગેસિં જો સળ્ળા ભવઈ’ ભાવદિશા વિષયનું જ્ઞાન કેટલાક જીવોને નથી. એ વાત ‘એવમેગેસિં જો જાણં ભવઈ’ ઇત્યાદિ આગલા સૂત્રમાં કહીશું. ॥ સૂ. ૨ ॥

કેટલાક સંજ્ઞી જીવોને ભાવદિશાવિષયનું જ્ઞાન નથી તે કહે છે-‘એવમેગેસિં’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ-કોઈ કોઈ જીવોને એ જ્ઞાન નથી કે મારો આત્મા ઉત્પત્તિશીલ છે, મારો આત્મા ઉત્પત્તિશીલ નથી, હું પ્રથમ કોણ હતો અને અહિંથી મૃત્યુબાદ પરલવમાં હું કોણ થઈશ ? (હું કયાં જઈશ ?) (સૂ. ૩)

## ટીકા ।

‘एवमेगेसि’ इति, एवं वक्ष्यमाणप्रकारेण एकेषां संज्ञिनां किय-  
तांचित् ज्ञातं-ज्ञानम् आत्मनि विषये वर्तमानातीतानागतजन्मविषयकं नो भवति=नो  
समुत्पद्यते ।

किंस्वरूपं ज्ञानं नोत्पद्यते तेषाम् ? इति दर्शयति-अस्ति मे आत्मा  
औपपातिक इत्यादि । औपपातिक इति । उपपत्तनम्-उपपातः, प्रादुर्भावः=  
चतुर्गतिषु जन्मतो जन्मान्तरे संक्रमणम् । उपपाते भवः-औपपातिकः । मे मम  
आत्मा-औपपातिको जन्मान्तरसंक्रान्तोऽस्तीति । तथा-नास्ति मे आत्मा औप-  
पातिक इति, ममात्मा वर्तमानजन्मनि कर्मक्षयसंभवाद् भाविजन्मान्तर-  
सम्बन्धरहितोऽस्तीति । इदं ज्ञानद्वयं वर्तमानजन्मविषयकम् ।

यद्वा - उपपातः - गर्भसंमूर्च्छनलक्षणजन्मद्वयविलक्षणो जन्मविशेषः । स च  
देवनारकाणां भवति । उक्तञ्च—

टीકાર્થ—આગે કહે અનુસાર કિતનેક સંજ્ઞી જીવોંકો અપને વિષય મેં વર્તમાન  
અતીત ઔર અનાગત જન્મ સમ્બન્ધી જ્ઞાન નહીં હોતા । ઉન્હેં કિસ પ્રકાર કા જ્ઞાન  
નહીં હોતા ? હિસ વિષય મેં કહા ગયા કિ—મેરા આત્મા ઔપપાતિક હૈ યા નહીં ? અર્થાત્  
ચાર ગતિયોં મેં, એક જન્મ સે દૂસરે જન્મ મેં ગમન કરતા હૈ યા વર્તમાન જન્મ  
મેં કર્મોં કા ક્ષય હોને સે ભાવી જન્મ કે સમ્બન્ધ સે રહિત હૈ ? , યે દોનો જ્ઞાન વર્તમાન  
જન્મસમ્બન્ધી હૈ ।

અથવા—ઉપપાતકા અર્થ હૈ—ગર્ભજન્મ ઔર સંમૂર્છનજન્મ સે વિલક્ષણ એક ત્રીસરે પ્રકાર  
કા જન્મ । વહ દેવોં ઔર નારકોં કા હોતા હૈ । કહા મી હૈ—

ટીકાર્થ—આગળ કહેવા પ્રમાણે કેટલાક સંજ્ઞી જીવોને પોતાના વિષયમાં  
વર્તમાન, ભૂતકાલ, અને ભવિષ્યકાલના જન્મ સંબંધી જ્ઞાન હોતું નથી. તેને કયા  
પ્રકારનું જ્ઞાન નથી હોતું તે વિષયમાં કહે છે કે:—મારો આત્મા ઔપપાતિક છે કે નહિ ?  
અર્થાત્ ચાર ગતિઓમાં એક જન્મથી બીજા જન્મમાં ગમન કરે છે, અથવા વર્તમાન  
જન્મમાં કર્મોનો ક્ષય થવાથી ભાવી જન્મના સંબંધથી રહિત છે ? તે બંને જ્ઞાન  
વર્તમાનજન્મસંબંધી છે.

અથવા ઉપપાતનો અર્થ છે—ગર્ભજન્મ અને સંમૂર્છન જન્મથી વિલક્ષણ એક  
ત્રીજા પ્રકારનો જન્મ છે, તે દેવો અને નારકીજીવોને થાય છે. કહ્યું છે કે:—



“दोण्हं उववाए पण्णत्ते तंजहा-देवाणां चैव पोरेइयाणं चैव”  
इति । (स्थानाङ्ग० २ स्था० ३ उ०)

द्वयोरुपपातः प्रज्ञप्तः, तद्यथा-देवानां चैव नैरयिकाणां चैव । इति च्छाया ।  
उपपातादागतः औपपातिकः । देवभवाद् नरकभवाद्वा ममायमात्मा  
समागतोऽस्तीत्यर्थः । नास्ति मे आत्मा औपपातिक इति, अत्र-नगर्थस्यौपपात्ति-  
केऽन्वयः । ममात्मा-अनौपपातिकोऽस्तीत्यर्थः । संमूर्छनभवाद् गर्भभवाद् वा  
ममात्मा समागतोऽस्तीति भावः । इममर्थं स्पष्टीकर्तुमाह-कोऽहमासम् ? इति ।

अत्र प्रसङ्गवशेन जन्मतत्प्रभेदाश्च निरूप्यन्ते—

“दो प्रकार के जीवों के उपपातजन्म कहा गया है । वह इस प्रकार-देवोंके और  
नारकों के ।” (स्था० २, उ. ३)

उपपात से उत्पन्न होनेवाला औपपातिक कहलाता है । तात्पर्य यह हुआ कि-मेरा  
आत्मा देवभव या नरकभव से आया है ? इस प्रकार का ज्ञान नहीं होता ।

‘णात्थि मे आया उववाइए’ यहां निषेध का औपपातिक के साथ अन्वय है  
अर्थात् मेरा आत्मा औपपातिक नहीं है, ऐसा अर्थ समझना चाहिए । तात्पर्य यह है कि-  
मेरा आत्मा गर्भभव से या संमूर्छनभव से आया है । इस अर्थ को स्पष्ट करने के लिए कहा  
गया है-मैं कौन था ?

प्रसङ्ग पाकर यहाँ जन्म और जन्मों के भेदों का निरूपण करते हैं—

‘એ પ્રકારના જીવોને ઉપપાત જન્મ કહેલો છે. તે આ પ્રમાણે—(૧) દેવોને  
અને (૨) નારકીઓને. (સ્થા. ૨ ઉ. ૩)

ઉપપાતથી ઉત્પન્ન થવા વાળા તે ઔપપાતિક કહેવાય છે, તાત્પર્ય એ થયું  
કે :—મારો આત્મા દેવભવ અથવા નરકભવથી આવ્યો છે ? આ પ્રકારનું જ્ઞાન થતું નથી.

“णात्थि मे आया उववाइए” अर्हि निषेधनो औपपातिकनी साथे अन्वय છે.  
અર્થાત્-મારો આત્મા ઔપપાતિક નથી. એવો અર્થ સમજવો જોઈએ. તાત્પર્ય એ  
છે કે-મારો આત્મા ગર્ભભવથી અથવા સંમૂર્છનભવથી આવ્યો છે ? આ અર્થની  
સ્પષ્ટતા કરવાને માટે કહેલ છે, કે-“હું કોણ હતો ?”

પ્રસંગ પ્રાપ્ત થવાથી અર્હિ જન્મ અને જન્મના ભેદોનું નિરૂપણ કરે છે—

પૂર્વભવસમ્બન્ધિ - સ્થૂલશરીરપરિત્યાગાનન્તરમન્તરાલગત્યા તૈજસ-  
કાર્મણશરીરમાત્રેણ સહાગતસ્ય જીવસ્ય નવીનભવયોગ્યસ્થૂલશરીરાર્થ પ્રથમ  
યોગ્યપુદ્ગલાનાં ગ્રહણં જન્મ । તત્ત્ર ત્રિવિધં-સંમૂર્છન-ગર્ભો-પપાતભેદાત્ ।

### (૧) સંમૂર્છનજન્મ-

માતાપિત્રોઃ સમ્બન્ધં વિનૈવોત્પત્તિસ્થાનાવસ્થિતાનામૌદારિકપુદ્ગલાનાં  
બાહ્યાનામાધ્યાત્મિકાનાં વા સ્વશરીરરૂપેણ જીવકર્તૃકં પરિણતિકરણં સંમૂર્છનમ્ ।  
બાહ્યપુદ્ગલનિમિત્તકં જન્મ, યથા-કાષ્ઠત્વકૂપકફલાદિઉત્પદ્યમાનાઃ ક્રીડાદયો  
જન્તવઃ કાષ્ઠફલવર્તિનો બાહ્યપુદ્ગલાન્ સ્વશરીરરૂપેણ પરિણમયન્ત ઉત્પદ્યન્તે ।

પૂર્વભવસમ્બન્ધી સ્થૂલ શરીર કા ત્યાગ કરને કે અનન્તર વિગ્રહગતિસે તૈજસ  
ઔર કાર્મણ શરીર કે સાથ આયા હુઆ જીવ નવીન ભવ કે યોગ્ય સ્થૂલ શરીર કે લિપ્  
સર્વ પ્રથમ યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતા હૈ, ત્હી જન્મ કહલાતા હૈ ।

જન્મ ત્રીન પ્રકારકા હૈ-સંમૂર્છન, ગર્ભ, ઔર ઉપપાત ।

### (૧) સંમૂર્છનજન્મ-

માતા-પિતા કે સમ્બન્ધ વિના હી, ઉત્પત્તિસ્થાન મેં રહે હુણ બાહ્ય યા આધ્યાત્મિક  
ઔદારિક પુદ્ગલોંકા અપને શરીરરૂપ સે જીવ દ્વારા પરિણત કર લેના સંમૂર્છન જન્મ કહલાતા  
હૈ । કાઠ, ત્વચા ઔર પકે ફલ આદિ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલે ક્રીડે વગરહ જન્તુ કાઠ યા  
ફલ આદિ કે બાહ્ય પુદ્ગલોં કો અપને શરીર કે રૂપ મેં પરિણત કર લેતે હૈ । યહ બાહ્ય  
પુદ્ગલનિમિત્તક જન્મ હૈ,

પૂર્વભવસંબંધી સ્થૂલ શરીરનો ત્યાગ કરીને પછી વિગ્રહગતિથી તૈજસ અને કાર્મણ  
શરીરની સાથે આવેલો જીવ નવા ભવને યોગ્ય સ્થૂલ શરીર માટે સર્વપ્રથમ યોગ્ય  
પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, તે જન્મ કહેવાય છે. જન્મ ત્રણ પ્રકારના છે-  
(૧) સંમૂર્છન (૨) ગર્ભ, અને (૩) ઉપપાત.

### (૧) સંમૂર્છનજન્મ-

માતા-પિતાના સંબંધ વિનાજ, ઉત્પત્તિસ્થાનમાં રહેલા બહારના અથવા  
આધ્યાત્મિક ઔદારિક પુદ્ગલોને, પિતાનાં શરીરરૂપથી જીવદ્વારા પરિણત કરી લેવું  
તે સંમૂર્છન જન્મ કહેવાય છે. કાષ્ઠ ત્વચા (છાલ) અને ફળ આદિમાં ઉત્પન્ન થવા  
વાળા ક્રીડા વગેરે જન્તુ કાષ્ઠ અથવા ફળ આદિમાં બહારના પુદ્ગલોને પિતાના  
શરીરના રૂપમાં પરિણત કરી લે છે. તે બહારનાં પુદ્ગલ નિમિત્તક જન્મ છે.

આધ્યાત્મિકપુદ્ગલનિમિત્તકં જન્મ, યથા - જીવિતશ્વશૃગાલાદીનાં શરીરેષુ જાયમાનાઃ કીટાદયસ્તદીયશરીરાન્તર્ગતપુદ્ગલાન્ સ્વશરીરતયા પરિણમયન્તો જાયન્તે । પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પતિ-દ્વિત્રિચતુરિન્દ્રિય-ગર્ભજવ્યતિરિક્ત-પञ્ચેન્દ્રિયતિર્યઙ્-મનુષ્યાણાં સંમૂર્છનજન્મ ભવતિ ।

### (૨) ગર્ભજન્મ-

ઉત્પત્તિસ્થાનાવસ્થિતાનામાગન્તુકશુક્રશોણિતપુદ્ગલાનાં સ્વશરીરરૂપેણ પરિણતિકરણં માતૃશુક્તાહારરસપરિપુષ્ટિસાપેક્ષં ચ ગર્ભજન્મ । જરાયુજાનામણ્ડજાનાં પોતજાનાં ચ ગર્ભજન્મ ભવતિ, જરાયુર્ગર્ભવેષ્ટનચર્મ, તત્ર જાતાઃ જરાયુજાઃ ।

જીવિત કુત્તે ઓર શૃગાલ આદિ કે શરીરોં મેં ઉત્પન્ન હોને વાલે કીડે આદિ ઉનકે શરીરકે અન્તર્ગત પુદ્ગલોં કો અપને શરીરરૂપ મેં પરિણત કરતે હૈં, વહ આધ્યાત્મિક પુદ્ગલનિમિત્તક જન્મ કહલાતા હૈ, પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, વનસ્પતિકાય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઓર ગર્ભજ કે સિવાય પञ્ચેન્દ્રિય તિર્યઙ્ચોં ઓર મનુષ્યોં કા જન્મ સંમૂર્છન હોતા હૈ ।

### (૨) ગર્ભજન્મ-

ઉત્પત્તિસ્થાન મેં સ્થિત આગન્તુક રજ-વીર્ય કે પુદ્ગલોં કો અપને શરીરરૂપ મેં પરિણત કરના, ઓર માતા દ્વારા ભોગે હુણ આહાર કે રસ સે પોષણ કી અપેક્ષા રચ્ચનેવાલા ગર્ભજન્મ હોતા હૈ । જરાયુજ, અણ્ડજ ઓર પોતજ જીવોં કા જન્મ ગર્ભજ હોતા હૈ, ગર્ભ કો લપેટ રચ્ચનેવાલી ચમડે કી થૈલી જરાયુ કહલાતી હૈ, ઉસમેં ઉત્પન્ન હોને વાલે

જીવતા કુતરા અને શિયાળ આદિનાં શરીરોમાં ઉત્પન્ન થવા વાળા કીડા આદિ તેનાં શરીરની અંદરનાં પુદ્ગલોને પોતાનાં શરીરરૂપમાં પરિણત કરે છે તે આધ્યાત્મિક પુદ્ગલનિમિત્તક જન્મ છે. પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, વનસ્પતિકાય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને ગર્ભજ સિવાય, પञ્ચેન્દ્રિય, તિર્યઙ્ચો અને મનુષ્યોનો જન્મ સંમૂર્છન હોય છે.

### (૨) ગર્ભજન્મ-

ઉત્પત્તિસ્થાનમાં સ્થિત, આગન્તુક રજ-વીર્યનાં પુદ્ગલોને પોતાનાં શરીર રૂપમાં પરિણત કરવું, અને માતાએ કરેલા આહારના રસથી પોષણની અપેક્ષા રાખવા વાળાં તે ગર્ભજન્મ કહેવાય છે. જરાયુજ, અંડજ અને પોતજ જીવોનો જન્મ ગર્ભજ હોય છે. ગર્ભને લપેટી રાખનારી ચામડાની થેલી જરાયુ કહેવાય છે. તેમાં ઉત્પન્ન થવા વાળા જીવ જરાયુજ કહેવાય છે. મનુષ્ય, ગાય, ભેંસ, બકરી.



તત્ર - મનુષ્ય - ગો - મહિષ્ય - જા - ડવિકા - ડશ્વ - સ્વરો - ષ્ટ્ર - મૃગ - ચમર - વરાહ - ગવય - સિંહ - વ્યાઘ્ર - ક્ષ - દ્વીપિ - શ્વ - શૃગાલ - માર્જારાદયો જરાયુજાઃ । સર્પ - ગોધા - કૃકલાસ - ગૃહગોધિકા - ( પહ્લી ) - મત્સ્ય - કૂર્મ - નક્ર - શિશુમારાદયઃ, પક્ષિષુ યથા - લોમપક્ષાઃ, હંસ - ચાષ - શુક - ગૃધ્ર - શ્યેન - પારાવત - કાક - મયૂર - મણ્ડ - વકાદયશ્ચા - ણ્ડજાઃ । પોતા - જ્જાતા ઇતિ પોતજાઃ શુદ્ધપ્રસવાઃ, ન તુ જરાયુજવચ્ચર્મા - દિવેષ્ટિતા ઇતિ યાવત્, યથા - શલુક - હસ્તિ - શ્વાવિહ્વાપક - શશ - શારિકા - નકુલ - મૂષિકાદયઃ, પક્ષિષુ ચ ચર્મપક્ષાઃ, જલૂકા - વલ્ગુલિ - મારણ્ડપક્ષિ - વિરાલાદયશ્ચ - પોતજાઃ ।

જીવ જરાયુજ કહલાતે હૈં । મનુષ્ય, ગૌ, મૈસ, વકરી, મેષ, ઘોડા, ગધા, ંટ, મૃગ, ચમર શૂકર, રોહ, સિંહ, વાઘ, રીછ, દ્વીપિ, કુત્તા, સિયાર, બિલાવ આદિ જરાયુજ હૈં । સર્પ, ગોહેરા, કૃકલાસ, લિપકલી, મચ્છ, કલ્લુવા, નક્ર, શિશુમાર આદિ, તથા પક્ષિયોં મેં લોમપક્ષી, હંસ, ચાષ, શુક, ગૃધ્ર, વાજ, કબૂતર, કૌવા, મોર, મણ્ડ ( એક જાતકા પક્ષી ), વગુલા આદિ અણ્ડજ હૈં । જો જરાયુજ કી મૈંતિ ચમડે સે લિપટે હુએ ઉત્પન્ન ન હોં, વે પોતજ કહલાતે હૈં, જૈસે—સેહી, હાથી, શ્વાવિહ્વાપક, શશક, શારિકા, નકુલ, મૂષિક આદિ । પક્ષિયોં મેં ચર્મપક્ષી, જલૂકા ( જૉંક ), વલ્ગુલી, મારણ્ડપક્ષી વિરાલ આદિ પોતજ હૈં ।

ઘેટાં, ઘોડા, ગધેડા, ઊંટ, મૃગલા, ચમર ( હિમાલયમાં થતી એક ગાય વિશેષ ) ભૂંડ, રોહ, સિંહ, વાઘ, રીંછ, છીપલા, કુતરા, શિયાળ, બિલાડાં, વગેરે જરાયુજ છે, સર્પ ઘાયરાં, કબ્બુસલાં, ઢેઢગરોડી, મચ્છ, કાચબા, નક્ર ( મગર ) શિશુમાર ( એક પ્રકારનું જલચર પ્રાણી ) આદિ તથા પક્ષિઓમાં લોમપક્ષી, હંસ, ચાષ ( એક જાતનું લીલી પાંખોવાળું કાબરના જેવું પંખી ) શુક - ( પોપટ ), ગીધ, બાજ, કબૂતર, કાગડો, મોર, મંડૂ ( એક પક્ષી ) બગલા વગેરે અંડજ છે. જે જરાયુજ પ્રમાણે ચામડીથી વિંટાએલાં ઉત્પન્ન ન થાય તે પોતજ કહેવાય છે. જેમકે—સેહી - ( સાહુડી ) હાથી, શ્વાવિહ્વાપક, શશક, શારિકા, નકુલ - નોળીઓ, મૂષિક - ઉંદર વગેરે પક્ષીઓમાં ચર્મપક્ષ - ( રંવાડાં વગરનાં ચામડાની પાંખોવાળાં ) જલૂકા ( જળો ) વલ્ગુલી ( વડવાંગળ ) ભારંડ - પક્ષી, વિરાલ આદિ પોતજ છે.

ઉપપાતજન્મ—

ઉપપાતક્ષેત્રપ્રાપ્તિમાત્રનિમિત્તસ્થાનસ્થિતવૈક્રિયપુદ્ગલાનાં પ્રથમં સ્વશરીરરૂપેણ પરિણતિકરણમ્ ઉપપાતજન્મ । યથા - દેવાનાં નારકાણાં ચ । તત્ર દેવસમુદ્ભાવો યથા-પ્રચ્છદપટસ્યોપરિષ્ઠાદ્ દેવદૂષ્યસ્યાધસ્તાદ્ ઉભયોરન્તરાલવર્તમાનપુદ્ગલાન્ વૈક્રિયશરીરતયા ગૃહ્ણન્ દેવ ઉત્પદ્યતે । નારકોત્પત્તિર્યથા-નરકસ્થિતાતિસંકુટમુશ્વ-કુમ્ભીષુ સ્થિતાન્ વૈક્રિયશરીરપુદ્ગલાન્ વૈક્રિયશરીરતયા ગૃહ્ણન્ નારક ઉત્પદ્યતે ।

તથા—“અહં કઃ-ચતુર્ગતિષુ પ્રાગ્જન્મનિ નારકો વા તિર્યગ્ વા નરો

ઉપપાતજન્મ—

ઉપપાતક્ષેત્ર મેં પ્રાપ્તિમાત્ર નિમિત્ત જિસ મેં હૈ એસે ઉત્પત્તિસ્થાન મેં સ્થિત વૈક્રિય પુદ્ગલોં કા પહેલે-પહેલ અપને શરીરરૂપ મેં પરિણત કરના ઉપપાત-જન્મ કહલાતા હૈ, દેવ ઓર નારકોં કો યહ જન્મ હોતા હૈ । દેવ કી ઉત્પત્તિ હસ પ્રકાર હોતી હૈ-પ્રચ્છદ પટકે ઊપર ઓર દેવદૂષ્ય વચ્ચકે નીચે અર્થાત્ દોનોં કે બીચમેં વર્તમાન પુદ્ગલોં કો વૈક્રિયશરીરરૂપ ગ્રહણ કરતા હુઆ દેવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । નારકોં કી ઉત્પત્તિ હસ પ્રકાર હોતી હૈ-નરકવર્તી અત્યન્ત સંકુટ ( સકડે ) મુશ્વવાલી કુંભિયોં મેં સ્થિત વૈક્રિય શરીરકે પુદ્ગલોં કો વૈક્રિયશરીર કે રૂપ મેં ગ્રહણ કરતા હુઆ નારકી જીવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ।

તથા—“મૈ કૌન થા ? ચાર ગતિયોં મેં સે પૂર્વભવ મેં મૈ નારક થા, તિર્યગ્ચ થા,

(૩) ઉપપાતજન્મ—

ઉપપાત ક્ષેત્રમાં પ્રાપ્તિમાત્ર જેમાં નિમિત્ત છે. એવા ઉત્પત્તિસ્થાનમાં સ્થિત વૈક્રિય પુદ્ગલોને પહેલાં-પહેલાં પોતાના શરીરરૂપમાં પરિણત કરવું તે ઉપપાતજન્મ કહેવાય છે. દેવ અને નારકીઓનો આ જન્મ હોય છે.

દેવની ઉત્પત્તિ આ પ્રમાણે થાય છે:—પ્રચ્છદપટ-ઉત્તરીય વચ્ચના ઉપર અને દેવદૂષ્ય વચ્ચની નીચે, એટલે કે અનેની વચ્ચમાં વર્તમાન પુદ્ગલોને વૈક્રિયશરીરના રૂપમાં ગ્રહણ કરતા થકા દેવ ઉત્પન્ન થાય છે. નારકીઓની ઉત્પત્તિ આ પ્રમાણે છે કે:—નરકવર્તી અત્યન્ત સંકુટ મુશ્વવાળી કુંભિઓમાં સ્થિત વૈક્રિય શરીરનાં પુદ્ગલોને વૈક્રિય શરીરના રૂપમાં ગ્રહણ કરતા થકા નારકી જીવ ઉત્પન્ન થાય છે.

તથા—“હું કોણ હતો ? ચાર ગતિઓમાંથી પૂર્વભવમાં હું નારકી હતો, તિર્યગ્

वा देवो वा आसम् ?," इति पूर्वजन्मस्मृतिरूपं ज्ञानं, तथा—"इतः=अस्माल्लोकात्  
च्युतः=विद्युक्तः प्रेत्य=जन्मान्तरे इह चतुर्गतिरूपे संसारे को भविष्यामि ? चतु-  
र्गतिषु कीदृशीं गतिं प्राप्स्यामि" इत्यागामिजन्मविषयकं निश्चयात्मकं ज्ञानं  
च न भवतीत्यर्थः । भावदिशाविषयकमपि ज्ञानं नास्ति कियतांचित् संज्ञिनाम्,  
असंज्ञिनां तु जीवानां नास्त्येव दिशाज्ञानमिति का वार्ता तेषामिति भावः  
॥ सू. ३ ॥

संसारिणां स्वगत्यागतिज्ञानं न भवतीत्युक्तम्, संप्रति तज्ज्ञानं यथा  
भवति तत् प्रदर्शयितुमाह—'से जं पुण' इत्यादि ।

मूलम् ।

से जं पुण जाणेज्जा, सहसम्मइयाए, परवागरणेणं अण्णेसि अंतिए वा  
मनुष्य था या देव था ?," इस प्रकार की पूर्व जन्म की स्मृति, और "इस भव से च्युत होकर  
अगले जन्म में चार गतियों में से कौन गति पाऊँगा ?," इस प्रकार का आगामी जन्म  
सम्बन्धी निश्चयात्मक ज्ञान नहीं होता । कितने ही संज्ञियों को भी भावदिशा-विषयक ज्ञान  
नहीं होता । असंज्ञी जीवों को तो दिशा का ज्ञान होता ही नहीं ॥ सू० ३ ॥

संसारी जीवों को अपनी गति और आगति का ज्ञान नहीं होता, यह बतलाया  
जा चुका, अब यह कथन किया जाता है कि-वह ज्ञान किस प्रकार हो सकता है ?—

—'से जं पुण' इत्यादि ।

मूलार्थ—सहसम्मति से (परोपदेश के बिना ही सहज ज्ञानसे) पर  
की वागरणा (स्पष्टीकरण) से, दूसरों के समीप से सुनकर जाने कि मैं पूर्व दिशा  
हूँ, भुज्य हूँ, अथवा देव हूँ ?" आ प्रमाणे आगला जन्मनी स्मृति अने  
"आ भवथी नीकणीने आगला हवेना जन्ममां आर गतिमांथी हुं कथं गतिमां  
ज्जश. अथवा हुं कथं गति पाभीश ?" आ प्रमाणे आगामी-हवे पछी थवावाणा  
जन्म संभंधी निश्चयात्मक ज्ञान थतुं नथी; केटलाक संज्ञीओने (संज्ञीओवोने)  
पणु भावदिशा-विषयतुं ज्ञान थतुं नथी. असंज्ञी ओवोने दिशाओ संभंधीतुं ज्ञान  
थतुं न थथी. ॥३॥

संसारी ओवोने पोतानी गति अने आगति विषेतुं ज्ञान नथी थतुं, ते  
भतापी गया छीओ हवे ते कडेवामां आवे छे के:-ते ज्ञान केवी रीते थर्ध शके छे ?—  
'से जं पुण' इत्यादि.

मूलार्थ—सहसम्मतिथी, (भीलना उपदेश बिना पणु सहज ज्ञानथी), भीलनी  
वागरणथी (स्पष्टीकरणथी), भीलनी पासेथी सांभणीने लणु के हुं



सोचा, तंजहा-पुरत्थिमाओ वा दिसाओ आगओ अहमंसि, जाव अण्णयरीओ दिसाओ अणुदिसाओ वा आगओ अहमंसि, एवमेगेसि णायं भवइ-अत्थि मे आया ओववाइए, जो इमाओ दिसाओ अणुदिसाओ वा संचरइ, सव्वाओ दिसाओ सव्वाओ अणुदिसाओ जो आगओ अणुसंचरइ सोऽहं ॥ सू० ४ ॥

(छाया)

अथ यत् पुनर्जानीयात्-सहसंमत्या, परव्याकरणेन, अन्येषामन्तिके वा श्रुत्वा, तद्यथा-पूर्वस्या दिशाया आगतोऽहमस्मि यावत् अन्यतरस्या दिशाया अनुदिशाया वा आगतोऽहमस्मि । एवमेकेषां ज्ञातं भवति-अस्ति मे आत्मा औपपातिकः, योऽस्या दिशाया अनुदिशाया वा अनुसंचरति, सर्वस्या दिशायाः सर्वस्या अनुदिशाया य आगतः अनुसंचरति सोऽहम् ॥ सू० ४ ॥

‘से जं पुण’ इति । ‘से’ इत्यव्ययं मागधीभाषायामयशब्दार्थकम् । ‘अथ’ इति, अनेन ‘नो सन्ना भवइ’ इति द्रव्यदिग्ज्ञानाभावं ‘नो णायं भवइ’ इति भावदिग्ज्ञानाभावं च प्रदर्श्य तज्ज्ञानप्रारम्भ इति द्योत्यते ।

से आया हूँ (यावत्) अन्यतर दिशा से अथवा विदिशा से मैं आया हूँ । इस प्रकार कितनेक जीवों को ज्ञान होता है कि-मेरा आत्मा औपपातिक (जन्म लेने वाला) है; जो इस दिशा से अथवा अनुदिशा से संचार करता है, सभी दिशाओं से, सभी अनुदिशाओं से आया हुआ जो आत्मा भ्रमण करता है, वह मैं हूँ । (सू० ४)

टीका-मागधी भाषा में ‘से’ अव्यय ‘अथ’ शब्द के अर्थ में है । यहाँ ‘अथ’ शब्द से यह प्रकट किया गया है कि-पहले के सूत्रों में ‘नो सन्ना भवइ’ इत्यादि कहकर द्रव्यदिशा के ज्ञानका निषेध करके, और ‘नो णायं भवइ’ इत्यादि कह कर भावदिशासम्बन्धी ज्ञान का निषेध करके अब इस ज्ञान की उत्पत्ति का प्रकार प्रदर्शित करते हैं-

पूर्व दिशाथी आओ छुं, यावत् णील दिशाओथी अथवा विदिशाओथी हुं आओ छुं, आ प्रमाणे केटवाक लवोने ज्ञान थाय छे के-माओ आत्मा औपपातिक (जन्म लेवावाणो) छे; जे आ दिशाथी अथवा अनुदिशाथी संचार करे छे. सर्व दिशाओथी, सर्व अनुदिशाओथी, आवेलो जे आत्मा भ्रमण करे छे ते हुं छुं (सू. ४)

टीका-मागधी भाषा में ‘से’ अव्यय ‘अथ’ शब्द का अर्थ में है. अहि ‘अथ’ शब्द की ओ प्रकट कथुं छे के-प्रथमना सूत्रों में ‘नो सन्ना भवइ’ इत्यादि कहीने द्रव्यदिशा ज्ञाननो निषेध करीने अने ‘नो णायं भवइ’ इत्यादि कहीने भावदिशासंबन्धी ज्ञाननो निषेध करीने छे ते ज्ञाननी उत्पत्तिनो प्रकार प्रदर्शित करे छे-

## ટીકા—

યત્=યદિ પુનર્જાનીયાત્ સ્વસ્વગત્યાગત્યાદિકં કશ્ચિત્ , તત્ ત્રિવિધેન કારણેન, તદાહ—સહસંમત્યેત્યાદિ । આત્મના સહ વર્તેતે યા સમ્યગ્મતિઃ, સા સહસંમતિઃ, પરોદેશમન્તરેણ સમુત્પન્ના જાતિસ્મરણાવધિમનઃ પર્યયકેવલજ્ઞાનરૂપા, તયા સહસંમત્યા । તત્ર જાતિસ્મરણવાન્નિયમતઃ સંખ્યાતભવાન્ જાનાતિ, અવધિજ્ઞાની સંખ્યાતભવાન્સંખ્યાતભવાન્ વેત્તિ, તથૈવ મનઃપર્યયજ્ઞાની ચ । કેવલજ્ઞાની તુ નિયમતોઽનન્તાન્ ભવાન્ વિજાનાતિ । જાતિસ્મરણજ્ઞાનવાનવાન્તરે યદ્યસંજ્ઞિભવં ન કુર્યાત્ , તર્હિ સ્વકીયસંજ્ઞિપચ્ચેન્દ્રિયભવસ્યોત્કૃષ્ટતો નવશતભવાન્ વિજ્ઞાતું શક્નુયાત્ । જાતિસ્મરણેન સ્વકીયપૂર્વભવં વિજ્ઞાતુર્દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શયતે—

અગર કોઈ અપની—અપની ગતિ ઓર આગતિ કો જાને તો ત્રીન પ્રકાર કે કારણ સે જાન સકતા હૈ, ઉસી કો કહતે હૈ—સહસંમતિ આદિ સે, આત્મા કે સાથ રહને વાલી સમ્યગ્મતિ કહલાતી હૈ, અર્થાત્ પરોપદેશ કે વિના હી ઉત્પન્ન હોનેવાલી જાતિસ્મરણ, અવધિ, મનઃપર્યય ઓર કેવલજ્ઞાન રૂપ મતિ સહસંમતિ કહલાતી હૈ, ઉનમ્ જાતિ સ્મરણવાલા નિયમ સે સંખ્યાત ભવોકો જાનતા હૈ, અવધિજ્ઞાની સંખ્યાત યા અસંખ્યાત ભવો કો જાનતા હૈ, હસી પ્રકાર મનઃપર્યયજ્ઞાની ભી જાનતા હૈ, કિન્તુ કેવલજ્ઞાની નિયમ સે અનન્ત ભવો કો જાનતા હૈ । જાતિસ્મરણ—જ્ઞાનવાલા બીચ મ્ જો અસંજ્ઞી કા ભવ ન કરે તો અપને સંજ્ઞી—પચ્ચેન્દ્રિય કે ઉત્કૃષ્ટ નૌ સૌ ભવો કો જાન સકતા હૈ । જાતિસ્મરણ સે અપના પૂર્વભવ જાનને વાલે કા દૃષ્ટાન્ત પ્રદર્શિત કિયા જાતા હૈ—

અથવા કોઈ પોતપોતાની ગતિ અને આગતિને જાણે તો ત્રણ પ્રકારના કારણથી જાણી શકે છે, તેને કહે છે—સહસંમતિ આદિથી, આત્માની સાથે રહેવા વાળી સમ્યગ્ મતિ—બુદ્ધિ અર્થાત્ પરોપદેશ વિનાજ ઉત્પન્ન થવા વાળી જાતિસ્મરણ, અવધિ, મનઃપર્યય, અને કેવલ-જ્ઞાનરૂપ મતિ તે સહસંમતિ કહેવાય છે. જાતિસ્મરણ વાળા નિયમથી સંખ્યાત ભવોને જાણે છે. અવધિજ્ઞાની સંખ્યાત અથવા અસંખ્યાત ભવોને જાણે છે. એ પ્રમાણે મનઃપર્યયજ્ઞાની પણ જાણે છે. પરંતુ કેવલજ્ઞાની નિયમથી અનન્ત ભવોને જાણે છે. જાતિસ્મરણ જ્ઞાનવાળા જીવ વચમાં જો અસંજ્ઞીનો ભવ ન કરે તો પોતાના સંજ્ઞી પચ્ચેન્દ્રિયના ઉત્કૃષ્ટ નવસો (૬૦૦) ભવોને જાણી શકે છે. જાતિસ્મરણથી પોતાના પૂર્વભવને જાણનારાનું દ્રષ્ટાંત બતાવે છે—

सुग्रीवनगरे बलभद्रनामा नृप आसीत् । तस्याग्रमहिषी मृगानाम्नी बभूव । बलभद्रवृषस्य तस्यां पुत्रो जातः । स च मातापितृभ्यां बलश्री-नाम लब्ध्वाऽपि लोके मृगापुत्र इति नाम्ना प्रसिद्धो बभूव । अथ मातापित्रोः परमप्रियः कृतयौवराज्याभिषेको मुदितचित्तो मृगापुत्रः प्रासादे दोगुन्दुगदेववत् प्रमदाभिः सह क्रीडतिस्म ।

स चैवं विलसन् मणिरत्नराजितकुट्टिमतले सर्वोपरिवर्तिनि प्रासाददेशे समुपविष्टः सकुतूहलं चतुष्क-त्रिक-चत्वर-मार्गान् विलोकमानः पथि शीलाढ्यं गुणसागरं तपोनियमसंयमधरं संयतमनिमिषदृशाऽद्राक्षीत् । तमवलोक्य शुभाध्य-

सुग्रीव नगर में बलभद्र नामक राजा था । उसकी पटरानी का नाम मृगा था इस मृगारानी से बलभद्र को पुत्र की प्राप्ति हुई । माता-पिताने उसका नाम बलश्री रक्खा, किन्तु वह लोक में मृगापुत्र के नाम से प्रसिद्ध हुआ, वह माता-पिता का परम प्रिय था । उसका युवराज पद पर अभिषेक किया गया । वह प्रसन्न-चित्त होकर दोगुन्दुग ( विलासी एक देवकी जाति ) देव के समान अपने महलमें क्रीडा करता था ।

एक वार मृगापुत्र मणियों और रत्नों से सुशोभित फर्शवाले महल के सब से ऊपर के मंजिल पर बैठा था । वह कौतूहल के साथ नगर के चौपड त्रिक तथा चत्वर मार्गों का अवलोकन कर रहा था । तब उसे मार्ग में शील से विभूषित गुणों के सागर तप, नियम और संयम धारण करने वाले एक मुनि दृष्टिगोचर हुए । उसने टकटकी लगाकर

सुग्रीव नगरमां अवलद्र नामनो राजा હતો. તેની પટરાણીનું નામ-મૃગા હતું, તે મૃગા રાણી થકી અલલદ્રને પુત્રની પ્રાપ્તિ થઈ, માતા-પિતાએ તેનું નામ અલશ્રી રાખ્યું, પરંતુ તે લોકને વિષે મૃગાપુત્ર નામથી પ્રસિદ્ધ થયો. તે માતા-પિતાને પરમપ્રિય હતો, તેનો યુવરાજ પદ પર અભિષેક કર્યો. પછી તે પ્રસન્નચિત્ત થઈને દોગુન્દુગ (વિલાસી એક દેવની જાતિ) દેવ સમાન પોતાના મહેલમાં ક્રીડા કરતો હતો.

એક વાર મૃગાપુત્ર મણિઓ અને રત્નોથી-સુશોભિત ફર્શ-સુંદર તળિયાવાળો મહેલનો સૌથી ઉપરનો ખંડ હતો, તેના ઉપર બેઠો હતો. તે કુતૂહલપૂર્વક નગરના ચોપડ ત્રિક તથા ચત્વર માર્ગોનું અવલોકન કરી રહ્યો હતો. તે વખતે એ માર્ગમાં શીલથી વિભૂષિત, શુભોના સાગર, તપ, નિયમ, સંયમ ધારણ કરવાવાળા એક મુનિ દૃષ્ટિગોચર



વસાયેન મૃગાપુત્રો મૂર્છામવાપ્ય જાતિસ્મરણં પ્રાપ । ‘પૂર્વજન્મનિ પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીત્વા પશ્ચમહાવ્રતપાલનેન સ્વર્ગસુખં લબ્ધ્વાઽહમિહ રાજકુલે સંજાતઃ’ ઇતિ । અનેન જાતિ-સ્મરણેન પુનરાત્મકલ્યાણાય પ્રયતતે સ્મ ।

અવધિજ્ઞાનિના મલ્લીનાથેન ભગવતા સંસારાવસ્થાયાં પૂર્વજન્મવૃત્તાન્તોઽવલો-કિતઃ । મનઃપર્યય-કેવલજ્ઞાનયોસ્તુ દૃષ્ટાન્તૌ સુપ્રતીતૌ ।

તથા—પરવ્યાકરણેન-પરસ્તીર્થઙ્કરસ્તસ્ય વ્યાકરણં યથાવસ્થિતાર્થસ્ય—

उनकी ओर देखा । उन्हें देख कर मृगापुत्र को मूर्छा आ गई और जातिस्मरण ज्ञान प्राप्त हो गया । उससे मादूम हुआ कि—‘पूर्व जन्म में दीक्षा धारण करके, पांचमहाव्रतों का पालन करके, पश्चात् स्वर्ग के सुख भोगकर मैं इस राजकुल में उत्पन्न हुआ हूँ ।’ इस जातिस्मरण से वह फिर आत्मकल्याण में प्रवृत्त हो गया ।

અવધિજ્ઞાની ભગવાન્ મલ્લીનાથને સંસાર-અવસ્થામાં અપના પૂર્વ જન્મ કા વૃત્તાન્ત દેખ લિયા થા । મનઃપર્યય જ્ઞાન ઔર કેવલજ્ઞાન કે દૃષ્ટાન્ત તો પ્રસિદ્ધ હી હૈ ।

તથા—પરકે વ્યાકરણ સે મી ગતિ-આગતિ કા જ્ઞાન હોતા હૈ । પર કા અર્થ હૈ—તીર્થંકર । ઉનકા વ્યાકરણ અર્થાત્ પદાર્થ કા સ્વરૂપ યથાર્થરૂપ સે જાનકર સમજાકર કહના, અથવા પરવ્યાકરણ કા અર્થ તીર્થંકર કા પ્રવચનરૂપ આગમ સમજના ચાહિય ।

થયા, તે વખતે મૃગાપુત્ર એક નજરથી તેમની સામે જોયું, અને તેને જોઈને મૃગાપુત્રને મૂર્છા આવી ગઈ અને જાતિસ્મરણ જ્ઞાન ઉત્પન્ન થયું, તેનાથી માદૂમ પડ્યું કે—“હું પૂર્વ જન્મમાં દીક્ષા ધારણ કરીને, પાંચ મહાવ્રતોનું પાલન કરી, પછી સ્વર્ગના સુખો ભોગવીને આ રાજકુલમાં ઉત્પન્ન થયો છું” આ પ્રમાણે જાતિસ્મરણ થવાથી તે કરીને આત્મકલ્યાણમાં પ્રવૃત્ત થઈ ગયો.

અવધિજ્ઞાની મલ્લીનાથ ભગવાને સંસાર-અવસ્થામાં પોતાના પૂર્વ જન્મનો વૃત્તાન્ત જોઈ લીધો હતો. મનઃપર્યયજ્ઞાન અને કેવલજ્ઞાનના દ્રષ્ટાંત તો પ્રસિદ્ધ જ છે.

તથા—પરના વ્યાકરણથી પણ ગતિ-આગતિનું જ્ઞાન થાય છે. પરનો અર્થ છે—તીર્થંકર, તેનું વ્યાકરણ—અર્થાત્ પદાર્થનું સ્વરૂપ યથાર્થરૂપથી જાણી-સમજીને કહેવું, અથવા પરવ્યાકરણનો અર્થ—તીર્થંકરના પ્રવચનરૂપ આગમ સમજવું જોઈ એ.

સાક્ષાત્કારેણ સમ્બોધ્ય કથનમ્ , તીર્થદ્વરપ્રવચનરૂપ આગમો વા, તેન ।  
પરવ્યાકરણોદાહરણં યથા—સાક્ષાત્ ભગવતો દેશનયા મેઘકુમારાદયો જાતિસ્મરણં  
પ્રાપ્તવન્તઃ ।

તથા—અન્યેષામન્તિકે વા શ્રુત્વેતિ, અન્યેષાં સમીપે, શ્રુત્વા સ્વગત્યા-  
ગત્યાદિબોધકતદ્વચનશ્રવણેન । તૃતીયોદાહરણં યથા—બહુ મિત્રભૂપાશ્ચ સ્થાવસ્થસ્ય  
મહિનાથભગવતઃ સમીપે તદ્વચનેન જાતિસ્મરણમવાપુઃ ।

અથાત્મનિ વિષયે યાદૃશં ગત્યાગત્યાદિજ્ઞાનં ભવતિ, તદેવ દર્શયતિ-  
તદ્વથા—ઇત્યાદિ ‘પૂર્વસ્યા દિશાયા આગતોઽહમસ્મિ યાવદ્ અન્યતરસ્યા દિશાયા  
અનુદિશાયા વા આગતોઽહમસ્મી’ત્યનેન સ્વગમનાવધિ-દ્રવ્યદિશાજ્ઞાનં, તથા-  
પરવ્યાકરણકા ઉદાહરણ જેસે—સાક્ષાત્ ભગવાન્ કી દેશના સે મેઘકુમાર આદિને જાતિસ્મરણ  
જ્ઞાન પ્રાપ્ત ક્રિયા થા ।

તથા—દૂસરો સે સુનકર મી ગતિ અગતિ કા જ્ઞાન હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ  
કિ—અપની ગતિ ઇવં આગતિ સમજાને વાલે દૂસરે કે વચનોં સે મી જાતિસ્મરણ હો જાતા  
હૈ । જેસે—હહ મિત્ર-રાજાઓને હ્રસ્વ-અવસ્થા વાલે ભગવાન્ મહિનાથ કે વચનોં સે  
જાતિસ્મરણ પ્રાપ્ત ક્રિયા થા ।

આત્મા કે વિષય મેં ગતિ-આગતિ આદિ કા જ્ઞાન જિસ પ્રકાર હોતા હૈ,  
ઉસે દિશાલે છે—‘મૈ પૂર્વ દિશા સે આયા હૂં ( યાવત્ ) અન્યતર દિશા સે અથવા  
અનુદિશા સે મૈ આયા હૂં ’ હસ કથન સે અપને ગમન તક કી દ્રવ્ય-દિશા કા જ્ઞાન  
સૂચિત ક્રિયા હૈ । તથા ‘ મેરા આત્મા ઔપપાતિક ’ હૈ યહાં સે લેકર ‘ ભ્રમણ કરતા હૈ,  
પરવ્યાકરણનું ઉદાહરણ, જેમકે—સાક્ષાત્ ભગવાનની દેશનાથી મેઘકુમાર આદિએ  
જાતિસ્મરણ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર્યું હતું.

તથા—બીજા પાસેથી સાંભળીને પણ ગતિ-આગતિનું જ્ઞાન થાય છે કે:-  
પોતાની ગતિ અને આગતિ સમજાવવાવાળા બીજાના વચનોથી પણ જાતિસ્મરણ જ્ઞાન  
થઈ જાય છે. જેમ-છ મિત્ર-રાજાઓએ હ્રસ્વ-અવસ્થા વાળા ભગવાન મહિનાથના  
વચનોથી જાતિ સ્મરણ પ્રાપ્ત કર્યું હતું.

આત્માના વિષયમાં ગતિ-આગતિનું જ્ઞાન જે પ્રમાણે હોય છે તેને દેખાડે  
છે—‘ હું પૂર્વ દિશાથી આવ્યો છું, ( યાવત્ ) અન્યતર દિશાથી અથવા અનુદિશાથી હું  
આવ્યો છું ’ આ કથનથી પોતાના ગમન સુધીની દ્રવ્યદિશાનું જ્ઞાન સૂચિત કર્યું છે,

‘અસ્તિ મે આત્મા ઔપપાતિકઃ’ ઇત્યારમ્બ્ય ‘અનુસંચરિત સોઽહમ્’ ઇત્યન્તેન દ્રવ્ય-  
ભાવોભયદિશાજ્ઞાનં ભગવતા પ્રદર્શિતમ્ ।

સોઽહમસ્મી’ત્યેનેનેદમાવેદિતં ભવતિ । ત્રિવિધાન્યતમેન કારણેન જ્ઞાનં  
પ્રાપ્તો જીવઃ સ્વાત્મસ્વરૂપમેવં વિશાનાતિ-યદયમાત્મા સકલકર્મક્ષયાવધિ ચતુર્ગતિ-  
ભ્રમણકર્તા પુનરપિ કસ્યાશ્ચિદેકસ્યાં દિશાયામનુદિશાયાં વા ગમિષ્યતિ નાસ્ત્યસ્ય  
ગતિવિરામસ્તાવદિતિ । એવમયમાત્મા સર્વસ્યા દિશાયા અનુદિશાયા આગતઃપુનરપિ  
સ્વકર્મવશગઃ સન્ સર્વસ્યાં દિશાયામનુદિશાટાં વા પરિભ્રમિષ્યતિ । ન કદાચિદસ્ય  
વિશ્રાન્તિલેશોઽપિ તાદૃશોઽહમસ્મીતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

વહ મૈ હૂં’ યહાં તક દ્રવ્યદિશા ઓર ભાવદિશા, દોનો કા જ્ઞાન ભગવાન્ને પ્રદર્શિત  
કિયા હૈ ।

‘વહી મૈ હૂં’ ઇસ કથન સે યહ પ્રકટ હોતા હૈ કિ—ત્રીન મૈ સે કિસી  
એક કારણ કે દ્વારા જ્ઞાન કો પ્રાપ્ત જીવ ઇસ રૂપ મૈ અપના આત્મસ્વરૂપ જાનતા હૈ,  
કિ—યહ આત્મા જબ તક સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષય નહીં કર દેતા તબ તક ચારોં ગતિયોં  
મૈ ભ્રમણ કરતા હૈ ઓર ફિર કિસી એક દિશા મૈ યા અનુદિશામૈ ગમન કરેગા  
પરંતુ કર્મોં કા ક્ષય જબ તક ન હો તબ તક ડસકી ગતિ કા અન્ત નહીં આતા હૈ । ઇસ  
પ્રકાર યહ આત્મા સબ દિશાઓં સે ઓર અનુદિશાઓં સે આયા હૈ ઓર કર્મોં કે અધીન  
હો કર ફિર સબ દિશાઓં અથવા વિદિશાઓં મૈ પરિભ્રમણ કરેગા, ઇસે લેશમાત્ર ભી કમી  
વિશ્રામ નહીં મિલ સકતા, એસા મૈ હૂં ॥ સૂ. ૪ ॥

તથા—‘મારો આત્મા ઔપપાતિક છે’ ત્યાંથી લઇને ‘બ્રમણ કરે છે’ તે હું છું;  
ત્યાં સુધી દ્રવ્યદિશા અને ભાવદિશા, એ બન્નેનું જ્ઞાન ભગવાને પ્રદર્શિત કર્યું છે.  
“તે હું છું” આ કથનથી એમ પ્રગટ થાય છે કે એ ત્રણમાંથી કોઈ કારણ દ્વારા  
જ્ઞાનને પામેલો જીવ આ રૂપમાં પોતાના આત્મસ્વરૂપને જાણે છે કે આ આત્મા  
જ્યાં સુધી સમસ્ત કર્મોંનો ક્ષય કરતો નથી, ત્યાં સુધી ચારેય ગતિઓમાં બ્રમણ  
કરતો રહે છે, અને ફરી કોઈ દિશામાં અથવા તો અનુદિશામાં ગમન કરશે. પરંતુ  
જ્યાં સુધી કર્મોંનો ક્ષય નહિ હોય ત્યાં સુધી તેની ગતિનો અંત આવતો નથી. એ  
પ્રમાણે આ આત્મા સર્વ દિશાઓથી અને અનુદિશાઓથી આવ્યો છે અને કર્મોંને  
આધીન થઇને ફરીથી સર્વ દિશાઓ અથવા વિદિશાઓમાં પરિભ્રમણ કરશે. તેને  
લેશમાત્ર પણ વિશ્રામ મળી શકતો નથી એવો હું છું, (સૂ. ૪)



આત્મવાદિપ્રકરણમ્—

યસ્તુ દ્રવ્યદિષ્ટુ ભાવદિષ્ટુ ચાત્મનો ગત્યાગતી અવગત્ય સ્વમાત્માનમેવં વિજાનાતિ—‘અયમાત્મા અસિદ્ધગતિપ્રાપ્તિચતુર્ગતિષુ ઘૂર્ણમાનો જન્માન્તરસંક્રાન્ત-  
ત્રિકાલવર્તી શરીરાદ્ ભિન્નો નિત્યપરિણામી જ્ઞાનસમ્યક્ત્વચારિત્રસુખવીર્યાદિગુણવા-  
નિતિ, સ એવાત્મવાદીત્યાહ—‘સે આયાવાદી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

સે આયાવાદી, લોગાવાદી, કમ્માવાદી, કિરિયાવાદી ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—

સ આત્મવાદી, લોકવાદી કર્મવાદી, ક્રિયાવાદી ॥ સૂ. ૫ ॥

આત્મવાદિપ્રકરણ—

જો જીવ દ્રવ્ય દિશાઓ મેં ઓર ભાવદિશાઓ મેં આત્મા કા ગમન-આગન જાન કર  
અપની આત્મા કે વિષય મેં હસ પ્રકાર જાનતા હૈ કિ-યહ આત્મા સિદ્ધગતિ કી પ્રાપ્તિરહિત  
ચાર ગતિયોં મેં ભ્રમણ કરતા હુઆ એક જન્મ સે દૂસરે જન્મ કો પ્રહણ કરતા હૈ, ત્રિકાલવર્તી  
હૈ, શરીર સે ભિન્ન હૈ, નિત્યપરિણામી હૈ, ઓર સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન, ચારિત્ર, સુખ, વીર્ય આદિ  
ગુણોં વાળા હૈ, વહી આત્મવાદી હૈ । અબ હસી વિષય કા નિરૂપણ ક્રિયા જાતા હૈ :—‘સે  
આયાવાદી’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—‘સે આયાવાદી’ ઇતિ । વહી આત્મવાદી હૈ, લોકવાદી હૈ, કર્મવાદી હૈ,  
ક્રીયાવાદી હૈ ( સૂ. ૫ )

આત્મવાદીપ્રકરણ

જે જીવ દ્રવ્યદિશાઓમાં અને ભાવદિશાઓમાં આત્માનું જવું-આવવું બાણીને  
પોતાના આત્માના વિષયમાં એ પ્રમાણે બાણ છે કે:-આ આત્મા સિદ્ધગતિની પ્રાપ્તિ  
વિના બીજી ચાર ગતિઓમાં ભ્રમણ કરતો કરતો એક જન્મથી બીજો જન્મ ગ્રહણ  
કરે છે, ત્રિકાલવર્તી છે શરીરથી ભિન્ન છે, નિત્યપરિણામી છે અને સમ્યક્ત્વ, જ્ઞાન,  
ચારિત્ર, સુખ, વીર્ય આદિ ગુણો વાળો છે, તે આત્મવાદી છે. હવે આ વિષયનું  
નિરૂપણ કરવામાં આવે છે—‘સે આયાવાદી’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—‘સે આયાવાદી’ ઇતિ. તે આત્મવાદી છે, લોકવાદી છે, કર્મવાદી છે  
અને ક્રિયાવાદી છે. ( સૂ. ૫ )

## ટીકા—

‘સે આયાવાદી’ ઇતિ । સઃ=ઈત્યમાત્માનં જ્ઞાતા, આત્મવાદી=આત્માનં વદિતું શીલમસ્યેતિ વિગ્રહે કર્તારિ ણિનિઃ, આત્મસ્વરૂપકથનસ્વભાવવાન્ । અયં ભાવઃ—આત્મસ્વરૂપં વક્તારો જગતિ બહવઃ સન્તિ, પરન્તુ સ એવાત્મવાદી વેદિતવ્યો, યઃ પૂર્વોક્તરીતિમનુસૂત્યાત્માનં વિજાનાતીતિ ।

આત્મસ્વરૂપપરિચયં વિના બન્ધસ્વરૂપં જ્ઞાતુમશક્યમ્ । તદ્ વિના ન રોચતે કસ્મૈચિદાત્મોત્કર્ષકરણમ્, તદ્વુચિમન્તરેણ ચ કસ્યચિન્મોક્ષોપાય-ભૂતનિશ્ચયવ્યવહારલક્ષણજ્ઞાનક્રિયયોઃ પ્રવૃત્તિર્ન સ્યાત્, તસ્માદત્રાત્મજ્ઞાનપ્રસન્નેન કિશ્ચિદુચ્યતે—

ટીકાર્થ—જો હસ ( પૂર્વોક્ત ) પ્રકાર સે આત્મા કો જાનતા હૈ વહી આત્મવાદી હૈ, અર્થાત્ આત્મા કે સ્વરૂપ કો કહને વાળા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—આત્મા કા સ્વરૂપ કહને વાળે સંસાર મેં બહુત હૈં કિન્તુ વાસ્તવ મેં સન્ના આત્મવાદી વહી હૈ જો પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે આત્મા કા જ્ઞાતા હૈ ।

આત્મા કા સ્વરૂપ સમજે વિના બન્ધ કા સ્વરૂપ અશક્ય હૈ । ઉસકે અભાવ મેં કિસીકો આત્મા કા ઉત્કર્ષ કરના રુચિકર નહીં હોતા, ઓર હસ રુચિ કે અભાવ મેં કિસીકી નિશ્ચય-વ્યવહારરૂપ જ્ઞાન ઓર ક્રિયા મેં—જો મોક્ષ કે કારણ હૈં—પ્રવૃત્તિ નહીં હોતી, અતઃ આત્મજ્ઞાન કા પ્રસન્ન હોને સે યહાં કુછ વિવેચન કિયા જાતા હૈ—

ટીકાર્થ—જે આ (પૂર્વોક્ત) પ્રકારથી આત્માને જાણે છે, તે આત્મવાદી છે, અર્થાત્—આત્માના સ્વરૂપને કહેવા વાળા છે; તાત્પર્ય એ છે કે—આત્માનું સ્વરૂપ કહેવા વાળા સંસારમાં ઘણા છે. પરંતુ વાસ્તવમાં સાચા આત્મવાદી તે છે કે જે પૂર્વોક્ત પ્રકારથી આત્માના જ્ઞાતા છે, અર્થાત્ પૂર્વોક્ત પ્રકારે આત્માને જાણે છે.

આત્માના સ્વરૂપને સમજ્યા વિના બંધનું સ્વરૂપ સમજવું અશક્ય છે, તેના અભાવમાં કોઈને આત્મા ઉત્કર્ષ કરવું રુચિકર થતું નથી. અને તે રુચિના અભાવમાં કોઈને નિશ્ચય-વ્યવહારરૂપ જ્ઞાન અને ક્રિયામાં જે મોક્ષનું કારણ છે તેમાં પ્રવૃત્તિ થતી નથી. તે કારણથી આત્મજ્ઞાનનો પ્રસન્ન હોવાથી અહિં થોડું વિવેચન કરવામાં આવે છે—

**આત્મશબ્દાર્થ:—**

અતતિ-નિત્ય જાનાતીતિ આત્મા । ‘અત સાતત્યગમને’ इत्यत्रात-  
धातोर्गत्यर्थकत्वाद्, गत्यर्थानां च ज्ञानार्थकतया स्वीकारादयमर्थो लभ्यते ।  
सिद्धसंसारिभेदेन द्विविधस्यापि जीवस्य सर्वदाऽवबोधसद्भावादात्मनः कस्यां  
चिदवस्थायामुपयोगवियोगो न जायते । कदाचिदप्यवबोधाभावे च जीवत्वमेव  
व्याह्रियेत । अत एव-‘जीवो उवओगलक्खणो’ इत्युक्तम् ( उत्तरा. २८ अ. १० श्लो.)  
यद्वा-अतति-सततं गच्छति, निरन्तरं प्राप्नोति स्वकीयान् पर्यायानिति-आत्मा ।

**આત્મશબ્દ કા અર્થ—**

‘અતતિ’-इति-आत्मा ‘अर्थात् जो नित्य जानता रहता है वह आत्मा कहलाता है । ‘अत’ धातु सतत गमन करने के अर्थ में है और गमनार्थक सभी धातु ज्ञानार्थक होते हैं, अतः उपर्युक्त अर्थ किया गया है । क्या सिद्ध और क्या संसारी, दोनों ही प्रकार के जीवों में सदैव ज्ञान विद्यमान रहता है, और किसी भी अवस्था में उपयोगका वियोग नहीं होता । किसी समय ज्ञान का अभाव हो जाय तो जीव में जीवत्व ही नहीं रहे । इसी कारण उत्तराध्ययन सूत्र ( अ. २८ श्लो. १० ) में कहा है :—“ जीवो उवओगलक्खणो ” जीव उपयोग लक्षण वाला है ।

अथवा—अतति अर्थात् जो अपने पर्यायों को सतत प्राप्त होता रहता है वह आत्मा है ।

**આત્મા શબ્દનો અર્થ—**

‘અતતિ’ इति आत्मा अर्थात् જે જાણતો રહે છે, તે આત્મા કહેવાય છે. ‘अत’ धातु सतत गमन करवाना अर्थमां છે. અને गमनार्थक सर्व धातु ज्ञानार्थक પણ હોય છે. ( गमन करवुं એવા અર્થવાળા તમામ ધાતુ જ્ઞાન અર્થવાળા પણ હોય છે ) એ કારણથી ઉપર કહેલો અર્થ કર્યો છે. તે શું સિદ્ધ અને સંસારી અને પ્રકારના જીવોમાં હમેશાં જ્ઞાન વિદ્યમાન રહે છે અને કોઈ પણ અવસ્થામાં ઉપયોગનો વિયોગ થતો નથી કોઈ સમય જ્ઞાનનો અભાવ થઈ જાય તો જીવમાં જીવત્વ જ ન રહે. એ કારણથી ઉત્તરાધ્યયન સૂત્ર ( અ. ૨૮ શ્લો. ૧૦ ) માં કહ્યું છે કે:— “જીવો ઉવઓગલક્ખણો” “જીવ ઉપયોગ લક્ષણવાળો છે.”

અથવા—અતતિ અર્થાત્ જે પોતાના પર્યાયોને સતત પ્રાપ્ત થતો રહે છે, તે આત્મા છે.



નન્વેવં ગગનાદીનામપિ સતતં સ્વપર્યાયપ્રાપ્ત્યા તત્રાત્મશબ્દપ્રયોગો દુર્વારઃ, કદાપિ પર્યાયાભાવે ત્વપરિણામિત્વેન તેષાં વસ્તુત્વમેવ ન સ્યાદિતિ ચેન્મૈવમ્, સતતસ્વપર્યાયપ્રાપ્તિકર્તૃત્વમિતિ વ્યુત્પત્તિનિમિત્તમાત્રમાત્મશબ્દસ્ય, ન તુ તત્ પ્રવૃત્તિનિમિત્તમ્ । પ્રવૃત્તિનિમિત્તં ચાસ્યોપયોગ એવેતિ ગગનાદિષુ નાત્મશબ્દઃ પ્રવર્તતે ।

પદ્ધા—સતતં ગચ્છતીત્યયમર્થોઽપિ ન વિકૃધ્યતે સંસારદશાયાં કર્મ-વશેન નાનાગતિષુ સતતગમનાત્, મુક્તાવસ્થાયામપિ ભૂતકાલિકસતતગમનસદ્ધાવાત્ ।

શઙ્કા—આકાશ આદિ ઢી અપને અપને પર્યાયોં કો નિરન્તર પ્રાપ્ત હોતે રહતે હૈં તો ઁનકે લિયે ઢી આત્મા શબ્દ કા પ્રયોગ કરના અનિવાર્ય હોગા । કિસી સમય ઁન મેં પર્યાય કા અભાવ હો તો વે અપરિણામી ઠહરેગે ઔર તવ ઁન મેં વસ્તુત્વ હી નહીં રહેગા ।

સમાધાન—એસા મત કહિણ । નિરન્તર અપને પર્યાયોં કો પ્રાપ્ત કરના તો આત્મા શબ્દ કા વ્યુત્પત્તિનિમિત્ત માત્ર હૈ, વહ પ્રવૃત્તિનિમિત્ત નહીં હૈ, પ્રવૃત્તિનિમિત્ત તો ઉપયોગ હી હૈ, અતઃ આકાશ આદિ મેં આત્મા શબ્દ કા પ્રયોગ નહીં હો સકતા ।

અથવા ‘નિરન્તર ગમન કરતા હૈ’ ઇસ અર્થ કા ઢી વિરોધ નહીં હૈ; ક્યોં કિ સંસાર-અવસ્થા મેં કર્મ કે અધીન હોકર આત્મા નાના ગતિયોં મેં સદૈવ ગમન કરતા રહતા હૈ, મુક્ત અવસ્થા મેં ઢી ભૂતકાલીન સતત ગમન વિધમાન હૈ ।

શંકા—આકાશ આદિ પશુ પોત પોતાના પર્યાયોંને નિરન્તર પ્રાપ્ત થતા રહે છે, તો તેને માટે પશુ આત્મા શબ્દનો પ્રયોગ કરવો અનિવાર્ય થશે. કેઇ સમય તેનામાં પર્યાયનો અભાવ હોય તો તે અપરિણામી ઇરશે ત્યારે તેનામાં વસ્તુત્વ પશુ નહિ રહે.

સમાધાન—એ પ્રમાણે ન કહો. નિરન્તર પોતાના પર્યાયોંને પ્રાપ્ત કરવું તે તો આત્મ શબ્દની વ્યુત્પત્તિનિમિત્ત માત્ર છે, પરંતુ તે પ્રવૃત્તિનિમિત્ત નથી; પ્રવૃત્તિનિમિત્ત તો ઉપયોગ જ છે, તેથી આકાશ આદિમાં આત્મ શબ્દનો પ્રયોગ થઈ શકતો નથી.

અથવા—નિરન્તર ગમન કરે છે, આ અર્થનો પશુ વિરોધ નથી. કેમકે—સંસાર અવસ્થામાં કર્મના આધીન બનીને આત્મા અનેક ગતિઓમાં હમેશાં ગમન કરતો રહે છે. મુક્ત-અવસ્થામાં પશુ ભૂતકાલીન સતત ગમન વિધમાન છે.

આત્મનોઽસ્તિત્વસિદ્ધિ:—

તાવત્ પ્રત્યક્ષપ્રમાણત એવાત્મનઃ સિદ્ધિરુચ્યતે—(૧) કિમયમાત્મા-અસ્તિ નાસ્તિ વેતિ સંશયાદિવિજ્ઞાનં સ્વસ્વાત્મનિ સ્વસંવેદનપ્રત્યક્ષેણ સિદ્ધમ્, સ એવાત્મા, સંશયાદિજ્ઞાનસ્યૈવ તદનન્યત્વેનાત્મરૂપત્વાત્ ।

(૨) તથા-આત્માનમાશ્રિત્યૈવ સુખદુઃખાદયઃ સ્વસ્વશરીર એવ પ્રત્યક્ષેણ સંવેદ્યન્તે ।

(૩) યદ્વા-કૃતવાનહં, કરોમ્યહં, કરિષ્યામ્યહમ્, ઇત્યાદિપ્રકારેણ યોઽયમ્-અહમ્પ્રત્યયઃ, એતસ્માદપિ પ્રત્યક્ષ એવાયમાત્મા । કથમસત્યાત્મનિ—

આત્માકે અસ્તિત્વકી સિદ્ધિ—

સર્વ પ્રથમ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે હી આત્મા કી સિદ્ધિ કહતે હૈ:—

(૧) આત્મા હૈ યા નહી હૈ, ઇસ પ્રકાર કા સંશય આદિ જ્ઞાન અપની અપની આત્મા મેં સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષ સે સિદ્ધ હૈ । વહી જ્ઞાન આત્મા હૈ, અર્થાત્ સંશય આદિ જ્ઞાન આત્માસે અભિન્ન હોને કે કારણ આત્મસ્વરૂપ હી હૈ ।

(૨) આત્મા કો આશ્રિત કરકે હી દુઃખ-સુખ આદિ અપનેર શરીર મેં પ્રત્યક્ષ સે જાને જાતે હૈં ।

(૩) અથવા-મૈં કર ચુકા, મૈં કરતા હૂં, મૈં કરૂંગા, ઇત્યાદિ રૂપ સે જો અહમ્પ્રત્યય હોતા હૈં ઇસસે મી આત્મા કા પ્રત્યક્ષ હોતા હૈં । આત્મા ન હોતા તો આત્મા કે વિષય મેં અહમ્પ્રત્યય (મૈં કા જ્ઞાન) કિસ પ્રકાર હો સકતા થા? આત્મરૂપ વિષય કે

આત્માના અસ્તિત્વની સિદ્ધિ—

સૌથી પ્રથમ પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી જ આત્માની સિદ્ધિ કહે છે:—(૧) આત્મા છે કે નહિ, આ પ્રકારનું સંશય આદિ જ્ઞાન પોત પોતાના આત્મામાં સ્વસંવેદન પ્રત્યક્ષથી સિદ્ધ છે, તે જ્ઞાન આત્મા છે. અર્થાત્ સંશય આદિ જ્ઞાન આત્માથી અભિન્ન હોવાના કારણે આત્મસ્વરૂપ જ છે.

(૨) આત્માના આશ્રિતપણાથી જ દુઃખ-સુખ આદિ પોત-પોતાના શરીરમાં પ્રત્યક્ષ જાણવામાં આવે છે.

(૩) અથવા-હું કરી ચૂક્યો, હું કરું છું. હું કરીશ, ઇત્યાદિરૂપથી જ અહમ્પ્રત્યય થાય છે, તેથી પણ આત્માનું પ્રત્યક્ષપણું થાય છે. આત્મા ન હોય તો આત્માના વિષયમાં અહમ્પ્રત્યય (હું પણાનું જ્ઞાન) કેવી રીતે થઈ શકે? આત્મરૂપ

અહમિતિ જ્ઞાનમ્ આત્મવિષયકં જાયતે । આત્મરૂપવિષયાભાવે વિષયિણોઽનુત્થા-  
નપ્રસંગાત્ । ન ચ દેહ એવાસ્ય જ્ઞાનસ્ય વિષય इति વાચ્યમ્ । જીવરહિતેઽપિ  
દેહે તદુત્પત્તિપ્રસંગાત્ । અસ્મિન્નહમ્પ્રત્યય આત્મવિષયકે સતિ તુ કિમહસ્મિ  
નાસ્મીતિ સંશયો નોપપદ્યતે, અહમ્પ્રત્યયવિષયસ્યાત્મનઃ સદ્ભાવાદહમસ્મીતિ  
નિશ્ચય એવ સંભવતિ । આત્માસ્તિત્વસંશયે તુ કસ્યાયમહમ્પ્રત્યયઃ સ્યાત્ ?,  
નિર્મૂલત્વેન તદનુત્થાનપ્રસંગાત્ । યદિ સંશયી જીવ એવ નાસ્તિ, તર્હિ અસ્તિ  
નાસ્તીતિ સંશયઃ કસ્ય ભવતુ । સંશયો હિ વિજ્ઞાનાખ્યો ગુણ એવ, ન ચ ગુણિનમન્તરેણ  
ગુણઃ સિદ્ધ્યતિ ।

અભાવ મેં વિષયી અર્થાત્ જ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી । શરીર હી ઇસ જ્ઞાન કા  
વિષય હૈ—અર્થાત્ ‘અહમ્’ (મૈં) કા અર્થ આત્મા નહીં વરન્ શરીર હૈ, એસા કહના  
ઉચિત નહીં, ક્યોં કિ—એસા હોતા તો મૃત શરીર મેં મી અહમ્પ્રત્યય હોને લગતા ।  
આત્મા કો વિષય કરનેવાલે ઇસ અહમ્પ્રત્યય કી વિદ્યમાનતા મેં ‘મૈં હૂં યા નહીં હૂં’, ઇસ  
પ્રકાર કા સંશય હી નહીં હોતા હૈ, અહમ્પ્રત્યય કે વિષયભૂત આત્મા કા સદ્ભાવ  
હોને સે ‘મૈં હૂં’ ઇસ પ્રકાર કા નિશ્ચય હી હો સકતા હૈ । આત્મા કે અસ્તિત્વ કે  
વિષય મેં સંશય ક્રિયા જાય તો પ્રશ્ન ઉપસ્થિત હોતા હૈ કિ યહ અહમ્પ્રત્યય કિસે  
હોતા હૈ । વિના કારણ કે હી તો ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી । યદિ સંશય કરને વાલા  
જીવ હી નહીં હૈ તો ‘હૈ યા નહીં ?’ ઇસ પ્રકાર કા સંશય કરતા કૌન હૈ ? સંશય એક  
પ્રકાર કા જ્ઞાન—ગુણ હૈ ઔર ગુણ, ગુણી કે અભાવ મેં નહીં હો સકતા ।

વિષયના અભાવમાં વિષયી અર્થાત્ જ્ઞાનની ઉત્પત્તિ નથી થઈ શકતી. શરીર જ આ  
જ્ઞાનનો વિષય છે, અર્થાત્ ‘અહમ્,’ (હું) નો અર્થ આત્મા નથી બલકે શરીર છે,  
એમ કહેવું તે ઉચિત નથી, કેમકે જો એમ હોય તો મૃત શરીરમાં અહમ્પ્રત્યય  
થઈ શકશે. આત્માને વિષય કરવા વાળો આ-અહમ્પ્રત્યયની વિદ્યમાનતામાં “હું છું”  
કે નથી” આ પ્રકારનો સંશય જ થતો નથી અહમ્પ્રત્યયના વિષયભૂત  
આત્માનો સદ્ભાવ હોવાથી “હું છું” આ પ્રકારનો નિશ્ચય જ થઈ શકે છે.  
આત્માના અસ્તિત્વના વિષયમાં સંશય કરવામાં આવે તો પ્રશ્ન ઉપસ્થિત થાય છે કે  
આ અહમ્પ્રત્યય કોને થાય છે? કારણ વિના તો તેની ઉત્પત્તિ થઈ શકતી નથી જો  
સંશય કરવા વાળો જીવ નથી તો “હું છું” કે નહિ” એ પ્રકારનો સંશય કરનાર  
કોણ છે? સંશય એક પ્રકારનો જ્ઞાન—ગુણ છે, અને ગુણ ગુણીના અભાવમાં થઈ  
શકતો નથી.



ન ચ દેહોઽઞ્ ગુણીતિ વાચ્યમ્, દેહસ્ય મૂર્તત્વાદ્ જડત્વાચ્ચ જ્ઞાનસ્ય ચામૂર્તત્વાદ્ બોધરૂપત્વાચ્ચ । અહં નાહં વેતિગદતો ‘માતા મે વન્ધ્યા’ ઇત્યાદિવત્ સ્વવચનવ્યાધાતઃ ।

(૪) યદ્વા-આત્મા ગુણી પ્રત્યક્ષ એવ, સ્મૃતિ-જિજ્ઞાસા-ચિકીર્ષા-જિગમિષા-સંશયાદિજ્ઞાનવિશેષાણાં તદ્ગુણાનાં સ્વાત્મનિ સ્વસંવેદનપ્રત્યક્ષ-સિદ્ધત્વાત્, ઇહ યસ્ય ગુણાઃ પ્રત્યક્ષાઃ સ પ્રત્યક્ષો દૃષ્ટઃ, યથા ઘટઃ, પ્રત્યક્ષગુણશ્ચાત્મા, તસ્માત્ પ્રત્યક્ષઃ । યથા ઘટોઽપિ ગુણી રૂપાદિગુણપ્રત્યક્ષત્વાદેવ પ્રત્યક્ષઃ, તથા વિજ્ઞાનાદિગુણપ્રત્યક્ષત્વાદાત્માપીતિ ।

યહૌં યહ કહના ઠીક નહીં હૈ કિ-‘દેહ ગુણી હૈ’, ક્યૌં કિ દેહ મૂર્ત હૈ ઔર જડ હૈ જબ કિ જ્ઞાન અમૂર્ત હૈ ઔર ચેતનરૂપ હૈ । મૂર્ત ગુણી કા અમૂર્ત ગુણ નહીં હો સકતા ઔર ન જડ કા ગુણ ચેતના હો સકતા હૈ । ઇસ કારણ ‘મૈં હૂં યા નહીં’ ઇસ પ્રકાર કહને વાલે કો ‘મેરી માતા વન્ધ્યા હૈ’ એસા કહને વાલે કે સમાન સ્વવચનબાધા દોષ આતા હૈ ।

(૪) અથવા આત્મા ગુણી પ્રત્યક્ષ સે હી સિદ્ધ હૈ, ક્યૌંકિ સ્મૃતિ, જિજ્ઞાસા, કરને કી ઇચ્છા, ગમન કી ઇચ્છા, સંશય આદિ જ્ઞાન-જો આત્મા કે ગુણ હૈ-અપની આત્મા મૈં પ્રત્યક્ષ સે સિદ્ધ હૈ, જિસ પદાર્થ કે ગુણ પ્રત્યક્ષ સે પ્રતીત હોતે હૈ વહ પદાર્થ મી પ્રત્યક્ષ માના જાતા હૈ, જૈસે ઘટ, આત્માકે ગુણ મી પ્રત્યક્ષ સે પ્રતીત હોતે હૈ ઇસ કારણ આત્મા પ્રત્યક્ષ હૈ । ઘટ કે રૂપ આદિ ગુણોં કા પ્રત્યક્ષ હોને સે હી ગુણી ઘટ કા પ્રત્યક્ષ હોના દેખા જાતા હૈ, ઇસી પ્રકાર વિજ્ઞાન આદિ ગુણોં કા પ્રત્યક્ષ હોને સે આત્મા મી પ્રત્યક્ષ હૈ ।

અહીં ‘દેહ ગુણી છે’ એમ કહેવું તે ઠીક નથી, કારણ કે દેહ મૂર્ત છે અને જડ છે. જ્યારે જ્ઞાન અમૂર્ત છે અને ચેતનરૂપ છે. મૂર્ત ગુણીને અમૂર્ત ગુણ હોઈ શકે નહિ. અને જડનો ગુણ ચેતન થઈ શકે નહિ. આ કારણથી. “હું છું કે નહિ” એ પ્રમાણે કહેવાવાળાને “મારી માતા વન્ધ્યા છે” એ પ્રમાણે કહેનારના જેવો સ્વવચનબાધા નામનો દોષ આવે છે.

(૪) અથવા-આત્મા ગુણી પ્રત્યક્ષથી જ સિદ્ધ છે, કેમકે-સ્મૃતિ, જિજ્ઞાસા, કરવાની ઇચ્છા, ગમનની ઇચ્છા, સંશય આદિજ્ઞાન વગેરે જે આત્માના ગુણ છે તે પોતાના આત્મામાં પ્રત્યક્ષથી સિદ્ધ છે. જે પદાર્થનો ગુણ પ્રત્યક્ષથી પ્રતીત થાય છે તે પદાર્થ પણ પ્રત્યક્ષ માનવામાં આવે છે. જેમ-ઘટ, આત્માનો ગુણ પ્રત્યક્ષથી પ્રતીત થાય છે. તે કારણથી આત્મા પ્રત્યક્ષ છે. ઘટના રૂપ આદિ ગુણો પ્રત્યક્ષ હોવાથી જ ગુણી ઘટનું પ્રત્યક્ષ હોવું જોવામાં આવે છે. તે પ્રમાણે વિજ્ઞાન આદિ ગુણો પ્રત્યક્ષ હોવાથી આત્મા પણ પ્રત્યક્ષ છે.

ન ચાજ્ઞૈકાન્તિકોઽયં હેતુઃ, યસ્માદાકાશગુણઃ શબ્દઃ પ્રત્યક્ષોઽસ્તિ, ન પુનરાકાશમિતિ વાચ્યમ્, શબ્દસ્યાકાશગુણત્વાભાવાત્ । શબ્દો હિ પુદ્ગલગુણઃ ન્દ્રિય-કત્વાદ્ રૂપાદિવદિતિ ।

અસ્તુ, ગુણાઃ પ્રત્યક્ષાઃ, ગુણિનસ્તુ પ્રત્યક્ષત્વે કિં માનમ્ ? ઉચ્યતે—ગુણે-મ્યોઽનન્યો ગુણીતિ જ્ઞાનાદિગુણાનાં પ્રત્યક્ષત્વાદેવાત્માઽપિ ગુણી પ્રત્યક્ષેણ જ્ઞાયતે । યદિ ગુણેમ્યોઽન્યો ગુણી સ્યાત્, તદા ઘટાદયોપિ ગુણિનઃ પ્રત્યક્ષા ન ભવેયુઃ,

શઙ્કા—આપ કા દિયા હુઆ હેતુ અનૈકાન્તિક હૈ, ક્યોં કિ આકાશ કે ગુણ શબ્દ કા તો પ્રત્યક્ષ હોતા હૈ કિન્તુ આકાશ કા પ્રત્યક્ષ નહીં હોતા ।

સમાધાન—પેસા ન કહિય, ક્યોં કિ શબ્દ આકાશ કા ગુણ નહીં હૈ । શબ્દ પુદ્ગલ કા ગુણ હૈ, ક્યોં કિ વહ ઇન્દ્રિય (શ્રોત્રેન્દ્રિય) કા વિષય હૈ, જો ઇન્દ્રિય કા વિષય હોતા હૈ વહ પૌદ્ગલિક હી હોતા હૈ, જૈસે—રૂપ આદિ

શઙ્કા—ગુણોં કો પ્રત્યક્ષ માન લેં કિન્તુ ગુણી કે પ્રત્યક્ષ હોને મેં ક્યા પ્રમાણ હૈ ?

સમાધાન—ગુણ ઓર ગુણી કા કથંચિત્ તાદાત્મ્ય સંબન્ધ હૈ—ગુણી, ગુણોં સે અભિન્ન હોતા હૈ, અતઃ એવ ગુણોં કા પ્રત્યક્ષ હોને સે આત્મા ગુણી મી પ્રત્યક્ષ સે પ્રતીત હોતા હૈ । અગર ગુણી, ગુણોં સે ભિન્ન હોતા તો ગુણી ઘટ આદિકા મી પ્રત્યક્ષ ન હોતા, ક્યોંકિ સિર્ફ રૂપાદિ ગુણોં સે ભિન્ન ઘટ કા કમી પ્રત્યક્ષ નહીં હોતા ।

શંકા—આપે જે હેતુ અહિં આપ્યો છે તે અનૈકાન્તિક છે; કેમકે આકાશનો શુષ્ક શબ્દ તે તો પ્રત્યક્ષ થાય છે, પરંતુ આકાશ પ્રત્યક્ષ થતું નથી.

સમાધાન—એ પ્રમાણે ન કહો, કેમકે શબ્દ તે આકાશનો શુષ્ક નથી પણ શબ્દ તે પુદ્ગલનો શુષ્ક છે. કેમકે તે ઇન્દ્રિય (શ્રોત્રેન્દ્રિય)નો વિષય છે. જે ઇન્દ્રિયનો વિષય હોય છે તે પૌદ્ગલિક જ હોય છે, જેમ—રૂપ આદિ.

શંકા—શુષ્કોને પ્રત્યક્ષ માની લઈએ. પરંતુ શુષ્કીના પ્રત્યક્ષપણામાં શું પ્રમાણ છે ?

સમાધાન—શુષ્ક અને શુષ્કીનો કંથંચિત્ તાદાત્મ્ય સંબંધ છે—શુષ્કી, શુષ્કોથી અભિન્ન હોય છે, એટલે શુષ્કોના પ્રત્યક્ષપણાથી આત્મા શુષ્કી પણ પ્રત્યક્ષ પ્રતીત થાય છે. અગર જે શુષ્કી, શુષ્કોથી ભિન્ન હોત તો શુષ્કી ઘટ આદિ પણ પ્રત્યક્ષ થઈ શકત નહિ. કેમકે માત્ર રૂપાદિ શુષ્કોજ પ્રત્યક્ષ હોય છે, રૂપાદિ શુષ્કોથી ભિન્ન

रूपादिगुणमात्रस्यैव प्रत्यक्षत्वात् । अन्यस्मिन् ज्ञातेऽन्यज्ज्ञातं न भवति, यथा घटे ज्ञाते पटो न ज्ञायते । गुणाः कदापि द्रव्याद् भिन्नतया सत्तां न लभन्ते, एवं द्रव्यमपि गुणेश्चो भिन्नतया न सत्तां लभते । अयं गुणः अयं गुणीति नाममात्रतो भेदसत्त्वेऽपि न तत्त्वतो भेदः । यथा-अग्निगुणी स्वकीयादुष्णत्वगुणादत्यन्तभिन्नः स्यात्तर्हि दाहकार्यं कर्तुमसौ न शक्नुयात् ।

तथा-यद्यात्मा ज्ञानगुणादत्यन्तभिन्नो भवेत् तदा तस्य जडत्वापत्तिः स्यात् । तस्माद् द्रव्यगुणयोर्भेदो न कदाचिदासीत्, नाप्यस्ति, न च भविष्यतीति सिद्धम् ।

तुष्यतु दुर्जनन्यायेन तव मते गुणेश्चो भिन्नत्वाङ्गीकारेऽप्यात्मा प्रत्यक्षो मा

अन्य का ज्ञान होने से अन्य का बोध नहीं हो जाता । जैसे-घट के जाननेसे पट मालूम नहीं होता । गुण द्रव्य से भिन्न कदापि नहीं रह सकते, और द्रव्य भी गुणों से भिन्न कदापि नहीं रह सकता । 'यह गुण है, यह गुणी है' इस प्रकारका भेद नाममात्रका है, वास्तव में गुण-गुणी में भेद नहीं है । अगर अग्नि गुणी अपने उष्णतागुण से अत्यन्त भिन्न होता तो वह दाह-कार्य (जलाने का कार्य) करने में असमर्थ होता ।

दूसरी बात यह है कि-आत्मा यदि अपने ज्ञानगुण से भिन्न होता तो आत्मा में जडता आ जाती । अत एव द्रव्य और गुण का भेद न कभी था, न है, और न होगा ।

दुर्जनसन्तोषन्याय से, तुम्हारे मत के अनुसार कदाचित् यह मान लिया जाय कि आत्मा गुणों से भिन्न है और इस कारण आत्मा का प्रत्यक्ष भले ही न हो

घट क्यारेच प्रत्यक्ष नथी થતો. અન્યનું જ્ઞાન થવાથી અન્યનો બોધ થતો નથી, જેમકે ઘટના જ્ઞાનથી પટ માલૂમ થતો નથી (પટનું જ્ઞાન થતું નથી). ગુણ, દ્રવ્યથી ભિન્ન કદાપિ રહી શકતો નથી. 'આ ગુણ છે અને આ ગુણી છે' એ પ્રકારનો ભેદ નામમાત્રનો છે વાસ્તવિક રીતે ગુણ-ગુણીમાં ભેદ નથી. અગર અગ્નિ ગુણી પોતાના ઉષ્ણતાગુણથી અત્યન્ત ભિન્ન થઈ જાય તો તે દાહકાર્ય (બાળવાનું કાર્ય) કરવામાં અસમર્થ થઈ જાય છે.

બીજી વાત એ છે કે-આત્મા ભે પોતાના જ્ઞાનગુણથી ભિન્ન હોય તો આત્મામાં જડતા આવી જાય. એટલા માટે દ્રવ્ય અને ગુણનો ભેદ કોઈ પણ વખતે હોતો નહિ, છે નહિ અને થશે પણ નહિ.

દુર્જનસંતોષ ન્યાયથી તમારા મત પ્રમાણે કદાચિત્ એમ માની લઈએ કે આત્મા ગુણથી ભિન્ન છે, અને તે કારણે આત્મા પ્રત્યક્ષ ભલે ન થાય તો પણ



મવતુ, અસ્તિત્વં ચ તસ્ય નિર્વાધમેવ । જ્ઞાનાદિગુણાઃ સન્તિ યસ્ય સ ગુણિરૂપ આત્મા કથમપલભ્યેત ।

નતુ દેહ એવ જ્ઞાનાદિગુણાઃ ઉપલભ્યન્તે તદાશ્રયતયા દેહ એવ રૂપાદીનાં ઘટ ઇવ ગુણી સિદ્ધયતિ, ન સ્વાત્મા । પ્રયોગશ્ચેવમ્-દેહગુણા એવ જ્ઞાનાદયઃ, તત્રૈવોપલભ્યમાનત્વાદ્, ગૌરકૃશસ્થૂલતાદિવદિતિ ચેન્ન, જ્ઞાનાદયો ગુણા ન દેહ-સમ્બન્ધિનઃ, અમૂર્તત્વાદ્, અચાક્ષુષત્વાદ્ વા, ગમનવત્ । દ્રવ્યવિરહિતો ગુણો ન ભવતિ ।

તથાપિ ઉસકે અસ્તિત્વ મેં કોઈ વાધા નહીં આતી । જિસ કે જ્ઞાનાદિ ગુણ મૌજુદ હૈં ઉસ ગુણિરૂપ આત્મા કા અપલાપ કિસ પ્રકાર કિયા જા સકતા હૈં ? ।

શરૂઆત—દેહ મેં હી જ્ઞાનાદિ ગુણ પાચે જાતે હૈં, અતઃ ઇન ગુણોં કા આધાર ગુણી દેહ હી હૈ, જૈસે-રૂપાદિ ગુણોં કા આધાર ઘટ હૈ । આત્મા જ્ઞાનાદિ ગુણોં કા આશ્રયભૂત ગુણી નહીં હૈ । અનુમાન ઇસ પ્રકાર હૈ—જ્ઞાન આદિ દેહ કે ગુણ હૈં, કયોં કિં વે દેહ મેં હી ઉપલબ્ધ હોતે, જૈસે-ગૌરપન, દુબલાપન ઔર સ્થૂલતા આદિ ।

સમાધાન—યહ કહના ઠીક નહીં, જ્ઞાન આદિ ગુણ દેહ કે નહીં હૈં, કયોં કિં વે અમૂર્ત હૈં ઔર અચાક્ષુષ (જો આંખસે નહીં દીક્ષતા) હૈં, જો અમૂર્ત ઔર અચાક્ષુષ હોતે હૈં વે દેહકે ગુણ નહીં હોતે, જૈસે આકાશ ।

ગુણ, દ્રવ્ય કે વિના રહ નહીં સકતે અતઃ જ્ઞાન આદિ ગુણોંકા આધારભૂત કોઈ દ્રવ્ય અવશ્ય હોના ચાહિયે । જ્ઞાનાદિ ગુણોંકે અનુરૂપ જો અરૂપી એવં અચાક્ષુષ ગુણી હૈં વહ દેહ સે ભિન્ન આત્મા હી હૈ ।

આત્માના અસ્તિત્વમાં કોઈ પ્રકારની હરકત આવતી નથી. જેના જ્ઞાનાદિ ગુણ હોવાત છે, તે ગુણીરૂપ આત્માનો અપલાપ- (છતી વસ્તુને નથી એમ કહેવું તે) કેમ કરવામાં આવે ?

શરૂઆત—દેહમાં જ જ્ઞાનાદિ ગુણ દેખાય છે, તે કારણથી એ ગુણોનો-આધાર ગુણી દેહ જ છે, જેમ રૂપાદિ ગુણોનો આધાર ઘટ છે. આત્મા જ્ઞાનાદિ ગુણોનો આશ્રયભૂત ગુણી નથી. અનુમાન આ પ્રમાણે છે-જ્ઞાન આદિ દેહના ગુણ છે, કેમકે તે દેહમાં જ ઉપલબ્ધ જણાય છે, જેમકે ગોરાપણું, દુબલાપણું અને સ્થૂળતા-બડાપણું વગેરે.

સમાધાન—એ પ્રમાણે કહેવું તે યોગ્ય નથી; જ્ઞાન આદિ ગુણ તે દેહના ગુણ નથી, કેમકે તે અમૂર્ત છે, અને અચાક્ષુષ છે. (જે નેત્રથી દેખાતા નથી). જે અમૂર્ત અને અચાક્ષુષ હોય છે તે દેહના ગુણ થઈ શકતા નથી, જેમ આકાશ. ગુણ, દ્રવ્ય વિના રહી શકતા નથી, તે કારણથી જ્ઞાન આદિ ગુણોનો આધારભૂત કોઈ દ્રવ્ય હોવું જોઈએ. એટલા માટે જ્ઞાનાદિ ગુણોને અનુરૂપ જે અરૂપી અને અચાક્ષુષ ગુણી છે, તે દેહથી ભિન્ન આત્મા જ છે.

તસ્માદ્ જ્ઞાનાદિગુણાનામનુરૂપો યો રૂપરહિતોઽચાક્ષુષશ્ચ ગુણી સ દેહાદ્ મિન્ન આત્માઽસ્તીતિ વિજ્ઞેયઃ ।

ન ચ જ્ઞાનાદયો ગુણા ન દેહસમ્બન્ધિન इत्यनुમાને પ્રત્યક્ષવાધિતમ્, જ્ઞાનાદિગુણાનાં દેહ એવ પ્રત્યક્ષેણ જ્ઞાનસજ્ઞાવાદિતિ વાચ્યમ્, અસ્ય પ્રત્યક્ષસ્યા-નુમાનેવાધિતત્વાત્ । શરીરેન્દ્રિયમિન્ને જ્ઞાનાદિગુણવસ્તુમનુમાનેન સિધ્યતિ । તથાહિ—શરીરેન્દ્રિયમિન્નો જ્ઞાનાદિગુણવાન, તદુપરમેઽપિ તદુપલબ્ધાર્થાનુસ્મરણાત્ । યો હિ યદુપરમેઽપિ યદુપલબ્ધમર્થમનુસ્મરતિ, સ તસ્માદન્યો દૃષ્ટઃ, યથા—પશ્ચ-વાતાયનોપલબ્ધાર્થાનુસ્મર્તા દેવદત્તઃ, इत्यादि । કેનચિત્ કારણેન દૃષ્ટિશક્તિ-વિષ્ણાતેઽપિ પૂર્વદૃષ્ટપદાર્થાનુસ્મરણં ભવતીત્યતો દેહેન્દ્રિયાદિભિન્ન આત્મા ગુણી સિધ્યતિ ।

જ્ઞાનાદિ ગુણ દેહસમ્બન્ધી નહીં હૈં, યહ અનુમાને, પ્રત્યક્ષ સે વાધિત હૈ, ક્યોં કિ—પ્રત્યક્ષપ્રમાણ સે વે દેહ મેં હી પ્રતીત હોતે હૈં, યહ કથન ઠીક જહીં હૈ, ક્યોં કિ યહ પ્રત્યક્ષ હી અનુમાને સે વાધિત હૈ । અનુમાને સે યહ સિદ્ધ હૈ કિ—જ્ઞાને આદિ ગુણોં કા આધાર શરીર ઔર ઇન્દ્રિયોં સે કોઈ મિન્ન પદાર્થ (આત્મા) હી હૈ । અનુમાને ઇસ પ્રકાર હૈ—જ્ઞાનાદિ ગુણોં કા આધાર શરીર ઔર ઇન્દ્રિયોં સે મિન્ન હૈ, ક્યોં કિ ડનકે નષ્ટ હો જાને પર મી ડનકે દ્વારા જાને હુએ પદાર્થ કા સ્મરણ હોતા હૈ । જિસકે નષ્ટ હો જાને પર મી, જિસકે દ્વારા જાને હુએ પદાર્થ કા જો સ્મરણ કરતા હૈ વહ ડસ સે મિન્ન હોતા હૈ । જૈસે—પાંચ સિડકિયોં દ્વારા જાને હુએ પદાર્થોં કો સ્મરણ કરને વાલા દેવદત્ત હૈ, ડસકો કિસી કારણ સે દેસને કી શક્તિ નષ્ટ હો જાને પર મી પહલે દેસે હુએ પદાર્થ કા સ્મરણ હોતા હૈ । ઇસ સે મલીમૈતિ સિદ્ધ હૈ કિ—દેહ ઔર ઇન્દ્રિય આદિ સે મિન્ન આત્મા હી ગુણી હૈ ।

જ્ઞાનાદિ ગુણ દેહસમ્બન્ધી નથી, કારણ કે તે અનુમાને પ્રત્યક્ષથી વાધિત છે, કેમકે પ્રત્યક્ષ પ્રમાણથી તે દેહમાં જ પ્રતીત થાય છે; તે કથન ઠીક નથી. કેમકે તે પ્રત્યક્ષ અનુમાનેથી વાધિત છે. અનુમાનેથી એ સિદ્ધ છે કે જ્ઞાને આદિ ગુણોનો આધાર શરીર અને ઇન્દ્રિયોથી કોઈ ભિન્ન પદાર્થ (આત્મા) જ છે. અનુમાને આ પ્રમાણે છે—જ્ઞાનાદિ ગુણોનો આધાર શરીર અને ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન છે, કેમકે તેના નષ્ટ થવા છતાંય તેના દ્વારા જાણેલા પદાર્થનું સ્મરણ હોય છે. જેના નષ્ટ થવા પછી પણ, જેના દ્વારા જાણેલો પદાર્થ તેનું જ સ્મરણ કરે છે તે તેનાથી ભિન્ન હોય છે. જેમ પાંચ ખડકીઓ દ્વારા જેવા વાંજા પદાર્થનું સ્મરણ કરવા માગો. દેવદત્ત છે. તેને કોઈ કારણથી દેખવાની શક્તિ નષ્ટ થઇ જવા છતાંય પ્રથમ દેખેલા પદાર્થોનું



एवं च प्रत्यक्षप्रमाणेनात्मनोऽस्तित्वं निरूपितम् ।

અથ જ્ઞાનાદિગુણોનાં સ્વાત્મનિ પ્રત્યક્ષતયા તદનન્યભૂતઃ સ્વાત્માઽપિ પ્રત્યક્ષો ભવતુ, પરશરીરે તુ કથમાત્મનોઽસ્તિત્વં વિજાનીયાત્ ? ઇતિ, ઉચ્યતે—યથા સ્વદેહે પ્રત્યક્ષેણાત્મા વિજાન્યતે, તથા પરદેહેઽપ્યનુમાનતો વિજ્ઞેયઃ ।

(૧૨) પરશરીરં સાત્મકમ્ ઇષ્ટાનિષ્ટયોઃ પ્રવૃત્તિનિવૃત્તિર્દર્શનાત્, યત્રેષ્ટા-નિષ્ટયોઃ પ્રવૃત્તિનિવૃત્તી દૃશ્યંતે, તત્ સાત્મકં દૃષ્ટં યથા—સ્વશરીરમ્, તથા યત્

इस प्रकार प्रत्यक्ष प्रमाण से आत्मा का अस्तित्व निरूपण किया गया ।

अनुमान से आत्मा की सिद्धि—

શંકા—જ્ઞાન આદિ ગુણોં કા અપની આત્મા મેં પ્રત્યક્ષ હોને સે ઉન ગુણોં સે અભિન્ન અપની આત્મા કો પ્રત્યક્ષ માન લિયા જાય કિન્તુ દૂસરે કે શરીર મેં આત્મા કા અસ્તિત્વ કૈસે જાન સકતે હૈ ?

સમાધાન—જૈસે—અપને શરીર મેં પ્રત્યક્ષ પ્રમાણ સે આત્મા પ્રતીત હોતા હૈ, ઉસી પ્રકાર દૂસરે કે શરીર મેં અનુમાનપ્રમાણ સે આત્મા સમજના ચાહિયે ।

अनुमान प्रमाण इस प्रकार है—

(૧) દૂસરે કા શરીર સાત્મક (આત્મા સે યુક્ત) હૈ, ક્યોં કિ ઉસ કી ઇષ્ટ મેં પ્રવૃત્તિ ઓર અનિષ્ટ મેં નિવૃત્તિ દેખી જાતી હૈ । જહાં ઇષ્ટ-અનિષ્ટ મેં પ્રવૃત્તિ ઓર નિવૃત્તિ દેખી જાતી હૈ, વહ સાત્મક હોતા હૈ, જૈસે—અપના શરીર । તથા જો સાત્મક સ્મરણ રહે છે તેથી બરાબર સિદ્ધ છે કે દેહ અને ઇન્દ્રિય આદિથી ભિન્ન આત્મા જ ગુણી છે.

આ પ્રમાણે પ્રત્યક્ષપ્રમાણથી આત્માના અસ્તિત્વનું નિરૂપણ કર્યું છે.

अनुमानથી આત્માની सिद्धि—

શંકા—જ્ઞાન આદિ ગુણો પોતાના આત્મામાં હોવાથી, તે ગુણોથી અભિન્ન પોતાના આત્માને તે પ્રત્યક્ષ માની લેવામાં આવે, પરંતુ બીજાના શરીરમાં આત્માનું અસ્તિત્વ કેવી રીતે જાણી શકાય ?

સમાધાન—જેવી રીતે પોતાના શરીરમાં પ્રત્યક્ષપ્રમાણથી આત્મા પ્રતીત થાય છે તે પ્રમાણે બીજાના શરીરમાં અનુમાનપ્રમાણથી આત્મા સમજવો જોઈએ. અનુમાનપ્રમાણ આ પ્રમાણે છે—

(૧) બીજાનું શરીર સાત્મક (આત્માથીયુક્ત) છે, કેમકે તેની ઇષ્ટમાં પ્રવૃત્તિ અને અનિષ્ટમાં નિવૃત્તિ જોવામાં આવે છે. જ્યાં ઇષ્ટ-અનિષ્ટમાં પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ જોવામાં આવે છે તે સાત્મક હોય છે. જેમ પોતાનું શરીર તથા જે સાત્મક



સાત્મકં ન ભવતિ તદ્વેષ્ટાનિષ્ટપ્રવૃત્તિનિવૃત્તી ન ભવતિ, યથા ઘટ-ઇતિ કથમતથા ચ પરશરીરે પ્રવૃત્તિનિવૃત્તી દૃશ્યેતે તસ્માત્ તત્ સાત્મકમ્, ઇતિ।

યદ્વા-શરીરં સકર્તૃકં, આદિમત્પ્રતિનિયતાકારત્વાત્, યત્ પુનઃસકર્તૃકં તદ્ આદિમત્પ્રતિનિયતાકારમપિ ન ભવતિ, યથા-અધ્રવિકારઃ। યથ્વ કર્તા શરીરસ્ય, સ આત્મા। મેર્વાદાવનૈકાન્તિકત્વવારણાયાદિમત્ત્વવિશેષણમ્।

યદ્વા-અસ્તીન્દ્રિયાણામધિષ્ટાતા-આત્મા, તન્નાનુમાનપયોગશ્ચેત્થમ્—

નહીં હોતા ઉસમેં ઇષ્ટ-અનિષ્ટ કી પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ મી નહીં હોતી, જૈસે ઘટ। દૂસરે કે શરીર મેં મી પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ દેખી જાતી હૈ અતઃ વહ સાત્મક હૈ।

(૨) શરીર સકર્તૃક (કર્તા સે યુક્ત) હૈ, ક્યોં કિ વહ આદિવાલા ઔર નિયત આકાર વાલા હૈ, જૈસે ઘટ। જો સકર્તૃક નહીં હોતા વહ આદિ વાલા ઔર નિયત આકાર વાલા નહીં હોતા, જૈસે મેઘોં કા વિકાર (બનાવટ)। શરીર કા જો કર્તા હૈ વહી આત્મા હૈ। યહાં નિયત આકાર વાલેં સુમેરુ આદિ સે વ્યભિચાર (હેતુ હો ઔર સાધ્ય ન હો) નિવારણ કરેને કે લિપ્ 'આદિ વાલા' વિશેષણ લગાયા ગયા હૈ।

અથવા ઇન્દ્રિયોંકા અધિષ્ટાતા આત્મા હૈ, ઇસ વિષય મેં અનુમાન કા પ્રયોગ ઇસ પ્રકાર કરનાં ચાહિપ્ :-

(આત્માથીયુક્ત) નથી, તેમાં ઇષ્ટ-અનિષ્ટની પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ પણ થતી નથી, જેમકે-ઘટ, બીજના શરીરમાં પણ પ્રવૃત્તિ-નિવૃત્તિ જોવામાં આવે છે, તેથી તે-સાત્મક છે.

(૨) શરીર સકર્તૃક (કર્તાથી યુક્ત) છે. જેમકે તે આદિવાળું અને નિયત આકાર વાળું છે; જેમ ઘટ. જે સકર્તૃક નથી હોતાં તે આદિવાળાં અને નિયત આકાર વાળાં નથી હોતાં જેમ મેઘોના વિકાર (બનાવટ). શરીરનો જે કર્તા છે તે આત્મા છે. આદિ નિયત આકારવાળા સુમેરુ આદિથી વ્યભિચાર (હેતુ હોય અને સાધ્ય ન હોય) નિવારણ કરવા માટે 'આદિવાળા' વિશેષણ લગાવ્યું છે.

અથવા-ઇન્દ્રિયોંનો અધિષ્ટાતા આત્મા છે. આ વિષયમાં અનુમાનનો પ્રયોગ આ પ્રમાણે કરવો જોઈ એ-

(૩) इन्द्रियं साधिष्ठातृकं, करणत्वात्, यथा चक्रचीवरमृत्सूत्रदण्डादयः, अस्ति हि चक्रचीवरादीनामधिष्ठाता कुलालः। यच्च निरधिष्ठातृकं तत् करणमपि न भवति, यथा-आकाशम्, यश्चेन्द्रियाणामधिष्ठाता स आत्मेति।

(૪) यद्वा-इन्द्रियविषयाणामादाता संभवति, इन्द्रियविषया शब्दादय आदातृसहिताः आदानादेयभावसद्भावात्, संदंशकलोहवत्। यथा लोके संदं-शकलोहानामयस्कार आदाताऽस्ति। इन्द्रियविषयाणां चादानादेयभावो विद्यते, अतस्तेषामप्यादाताऽस्तीत्यनुमीयते। यत्र तु आदाता नास्ति, तत्रादानादेयभावोऽपि न विद्यते, यथा-आकाशे।

(૩) इन्द्रियों किसी सधिष्ठाता से युक्त हैं, क्यों कि-वे करण हैं, जैसे चक्र, चीवर, मृत्तिका, सूत और दण्ड आदि। चक्र, चीवर आदि का अधिष्ठाता कुंभार है, जिस का कोई अधिष्ठाता नहीं होता वह करण भी नहीं होता, जैसे—आकाश। इन्द्रियों का जो अधिष्ठाता है, वही आत्मा है।

(૪) અથવા ઇન્દ્રિયોં કે વિષય શબ્દ આદિ આદાતાયુક્ત (પ્રહણ કરને વાળે સે યુક્ત) છે, ક્યોં કિં ઉન મેં આદાન આદેયભાવ મૌજૂદ છે, જૈસે સંઢાસી ઔર લોહે મેં, તાત્પર્ય યહ છે કિ—લોક મેં સંઢાસી ઔર લોહે મેં આદાન (લેના) આદેયભાવ (જો લિયા જાય) પ્રસિદ્ધ છે ઔર ઉન કા આદાતા હુહાર છે, ઇસી પ્રકાર ઇન્દ્રિયોં તથા વિષયોં કા મી આદાન-આદેયભાવ છે, અતઃ ઉનકા મી કોઈ આદાતા હોના યાહિય. જહોં આદાતા નહીં હોતાં વહોં આદાન-આદેયભાવ મી નહીં હોતા, જૈસે-આકાશ મેં।

(૩) ઇન્દ્રિયો કોઈ પણ અધિષ્ઠાતાથી યુક્ત છે, કેમકે તે કરણ છે; જેમકે ચક્ર, ચીવર, મૃત્તિકા, સૂત અને ઢંડ આદિ. ચક્ર, ચીવર વગેરેનો અધિષ્ઠાતા કુંભાર છે, જેનો કોઈ અધિષ્ઠાતા હોય નહિ, તે કરણ પણ હોય નહિ; જેમકે-આકાશ. ઇન્દ્રિયોનો જે અધિષ્ઠાતા છે, તે આત્મા છે.

(૪) અથવા-ઇન્દ્રિયોના વિષય શબ્દ આદિ આદાનયુક્ત-(પ્રહણ કરવાવાળા-યુક્ત) છે, કેમકે તેમાં આદાન-આદેય ભાવ મોજૂદ છે. જેમ સાણસી અને લોહમાં તાત્પર્ય એ છે કે લોકમાં સાણસી અને લોહમાં આદાન-આદેય ભાવ પ્રસિદ્ધ છે. અને તેના આદાતા હુહાર છે; આ પ્રમાણે ઇન્દ્રિયો તથા વિષયોનો પણ આદાન-આદેય ભાવ છે તેથી તેનો પણ કોઈ આદાતા હોવો જોઈએ જ્યાં આદાતા નથી, ત્યાં આદાન-આદેય ભાવ પણ હોય નહિ, જેમ આકાશમાં.

( ५ ) यद्वा-देहादिकं विद्यमानभोक्तृकम्, भोग्यत्वात्, यथा-अन्नवस्त्रादिकम् । अन्नवस्त्रादीनां भोक्ता मनुष्योऽस्ति । यस्य च भोक्ता नास्ति तद् भोग्यमपि न भवति, यथा खरविषाणम्, भोग्यं च शरीरादिकं, तस्माद् विद्यमानभोक्तृकम् ।

( ६ ) यद्वा-अस्ति देहादिकं सस्वामिकं, संघातरूपत्वात्, मूर्तिमत्त्वात्, ऐन्द्रियत्वात्, चाक्षुषत्वात्, यथा-गृहादिकम् । गृहादीनां स्वामिनः देवदत्तादयः सन्ति । यत् पुनरस्वामिकं तत् संघातरूपं न भवति, मूर्तिमन्न भवति, ऐन्द्रियं न भवति, चाक्षुषं च न भवति, यथा-गगनकुसुमम् । देहादिकं, चास्ति संघातादिरूपम्, तस्माद् विद्यमानस्वामिकम् । यश्च देहादीनां स्वामी स चात्मेति ।

( ५ ) अथवा-देह आदि का भोक्ता कोई अवश्य है, क्यों कि वे भोग्य हैं, जो भोग्य होते हैं उन का भोक्ता भी होता है, जैसे—अन्न, वस्त्र आदि का । अन्न-वस्त्र आदिका भोक्ता मनुष्य है । जिसका भोक्ता नहीं होता वह भोग्य भी नहीं होता, जैसे गधे का सींग । शरीर आदि भोग्य हैं अतः उनका भोक्ता अवश्य है ।

( ६ ) अथवा-देह आदि का कोई स्वामी है, क्यों कि वे संघातरूप हैं, मूर्तिमान् हैं, इन्द्रियों के विषय हैं और चाक्षुष हैं, घर आदि के समान । घर आदि के स्वामी देवदत्त आदि हैं । जिसका कोई स्वामी नहीं होता वह संघातरूप नहीं होता, मूर्तिमान् नहीं होता, इन्द्रिय का विषय नहीं होता, और चाक्षुष ( आंख से देखने वाला ) भी नहीं होता, जैसे—आकाशपुष्प । देह आदि संघातरूप हैं, अतः उन का स्वामी अवश्य है । देह आदि का जो स्वामी है वही आत्मा है ।

( ५ ) अथवा-देह आदिना भोक्ता कोई अवश्य છે, કેમકે તે ભોગ્ય છે, જે ભોગ્ય હોય છે, તેનો ભોક્તા પણ હોય છે. જેમકે અન્ન, વસ્ત્ર આદિનો. અન્ન-વસ્ત્ર આદિનો ભોક્તા મનુષ્ય છે. જેનો ભોક્તા નથી તે ભોગ્ય પણ નથી, જેમ ગધેડાના સીંગ. શરીર આદિ ભોગ્ય છે, તેથી તેનો ભોક્તા અવશ્ય છે.

( ૬ ) અથવા દેહ આદિનો કોઈ સ્વામી છે, કેમકે-તે સંઘાતરૂપ છે, મૂર્તિમાન છે, ઇન્દ્રિયોનો વિષય છે. અને આક્ષુષ છે, ઘર આદિ પ્રમાણે. ઘર આદિનો સ્વામી દેવદત્ત આદિ છે. જેનો કોઈ સ્વામી નથી તે સંઘાતરૂપ પણ નથી, અને તે મૂર્તિમાન પણ હોય નહિ, ઇન્દ્રિયોનો વિષય પણ હોય નહિ અને આક્ષુષ ( નેત્રથી જોઈ શકાય તેવો ) પણ હોય નહિ, જેમકે આકાશપુષ્પ. દેહ આદિ સંઘાતરૂપ છે, તેથી તેનો સ્વામી અવશ્ય છે, દેહ આદિનો સ્વામી છે, તે આત્મા છે.



न च—आदिमत्प्रतिनियताकारत्वादिहेतुभिः शरीरादीनां कर्त्रादय एव सिध्यन्ति, न तु प्रस्तुत आहमेति वाच्यम् । अन्यस्येश्वरादेर्युक्त्यसहत्वेन कर्तृत्वाद्यसंभवाद् देहादीनां कर्ता, अधिष्ठाता, आदाता, भोक्ता, स्वामी चायमात्मैवेति निश्चयात् ।

ननु—घटादीनां कर्त्रादिरूपाः कुलालादयो मूर्तिमन्तः संघातरूपा अनित्यादिस्वभावाश्च दृष्टाः, इत्यतो जीवोऽप्येतादृश एव सिध्यति, एतद्विपरीतश्चास्माकं साधनीयः, इत्येवं साध्यविरुद्धसाधकतया हेतूनां विरुद्धत्वापत्तिरिति चेन्नैवम्, संसारिणमात्मानं साधयितुं प्रवृत्तानामस्माकमेतदोपासंभवात् । संसारी चात्माऽष्टविधकर्म-

पूर्वोक्त—‘आदिमान होते हुए नियत आकार वाले होने से’ इत्यादि हेतुओं से शरीर आदि के कर्ता आदि ही सिद्ध होते हैं, प्रस्तुत आत्मा सिद्ध नहीं होता, ऐसा नहीं कहना चाहिये क्यों कि—आत्मा से भिन्न ईश्वर आदिका कर्तापन युक्तिसङ्गत नहीं ठहरता, अतः देह आदिका कर्ता, अधिष्ठाता, आदाता, भोक्ता और स्वामी आत्मा ही है, ऐसा निश्चय हो जाता है ।

शङ्का—घट आदि के कर्ता कुंभार वगैरह मूर्तिक, संघातरूप और अनित्य आदि स्वभाव वाले देखे जाते हैं, अतः जीव भी ऐसा ही सिद्ध होता है, मगर आपको इस से विपरीत धर्मोवाला आत्मा सिद्ध करने के कारण पूर्वोक्त हेतुओं में विरुद्ध दोष आता है ।

समाधान—ऐसा मत कहो । हम संसारी आत्मा सिद्ध करने के लिए उद्यत

पूर्वोक्त—‘आदिमान होवा छताय नियत आकारवाणा होवाथी’ इत्यादि हेतुओंकी शरीर आदिना कर्ता आदि न सिद्ध होय छे. प्रस्तुत आत्मा सिद्ध थतो नथी. अयेम नहि कडेवुं जेध अये, केभके आत्माथी भिन्न धर्मर आदितुं कर्तापाणुं युक्ति संगत थतुं नथी, तेथी देह आदिनो कर्ता, अधिष्ठाता, आदाता, भोक्ता अने स्वामी आत्मा न छे. अयेम निश्चय थध जय छे.

शंका—घट आदिना कर्ता कुंभार वगैरे मूर्तिक, संघातरूप अने अनित्य आदि स्वभाववाणा जेवामां आवे छे, तेथी एव पाणुं जेवो न सिद्ध थाय छे परंतु तमने तेनाथी विपरीत धर्मोवाणा आत्मा सिद्ध करवो छे, अयेवी स्थितिमां साध्यथी विरुद्ध सिद्ध करवाना कारणे पूर्वोक्त हेतुओंमां विरुद्धता दोष आवे छे.

समाधान—अये प्रमाणे न कडे, अये संसारी आत्मा सिद्ध करवा भाटे तैयार अया

पुद्गलसंघातोपगूढत्वात्, सशरीरत्वाच्च कथंचिन्मूर्तत्वादिधर्मयुक्त एवास्तीति ।

( ७ ) यद्वा—‘ जीव ’ इति पदं सार्थकं, व्युत्पत्तिमत्त्वे सति असमासपदत्वाद् एकपदत्वाद् घटादिपदवत् । घटादिपदं व्युत्पत्तिमत् असमासपदमेकपदं लोके दृष्टम्, तथा च जीवपदं, तस्मात् सार्थकम् । यत्तु सार्थकं नास्ति तद् व्युत्पत्तिमत् असमासपदमेकपदं च नास्ति, यथा—स्वरविषाणादिकं, डित्थादिकं च पदम् । जीवपदं च न तथा, तस्मात् सार्थकम् ।

यद् व्युत्पत्तिमन्न भवति तदेकपदमपि सद् न सार्थकम्, यथा डित्थादिपदम्, इति हेतोरनैकान्तिकत्वापत्तिस्तद्धारणाय व्युत्पत्तिमत्त्वविशेषणमुपात्तम् ।

हुए हैं, इस लिए कोई दोष नहीं आता । संसारी आत्मा आठ कर्मों के समूह से युक्त होने के कारण तथा सशरीर होने के कारण मूर्तत्व आदि धर्मों से युक्त ही है ।

( ७ ) अथवा—‘ जीव ’ पद का वाच्य अवश्य है, क्यों कि यह पद व्युत्पत्ति वाला होते हुए समासरहित है, एक पद है, घट आदि पदों के समान । घट वगैरह पद व्युत्पत्तिवाले, असमासपद, एक पद लोक में देखे जाते हैं अतः उनके वाच्य भी अवश्य हैं । ‘ जीव ’ पद भी ऐसा ही है, अतः वह भी सार्थक है । जो पद सार्थक नहीं होता वह व्युत्पत्तिवाला असमासपद, एक पद भी नहीं होता, जैसे—‘ स्वरविषाण ’ पद, अथवा ‘ डित्थ ’ पद, जीव पद ऐसा नहीं है, अतः वह सार्थक है ।

जो व्युत्पत्ति वाला नहीं होता वह एक पद होते हुए भी सार्थक नहीं होता, जैसे ‘ डित्थ ’ आदि पद । इस हेतु में अनैकान्तिकता निवारण करने के लिए ‘ व्युत्पत्ति

છીએ, એટલા માટે કોઈ દોષ આવતો નથી, સંસારી આત્મા આઠ કર્મોના સમૂહથી યુક્ત હોવાના કારણે તથા સશરીર હોવાના કારણે મૂર્તત્વ આદિ ધર્મોથી યુક્ત જ છે.

( ૭ ) અથવા ‘ જીવ ’ પદનો વાચ્ય અવશ્ય છે, કારણ કે આ પદ વ્યુત્પત્તિવાળું હોવા છતાંય સમાસરહિત છે, એક પદ છે, ઘટ આદિ પદોના સમાન. ‘ ઘટ ’ એ વ્યુત્પત્તિવાળું અસમાસ પદ એક પદ લોકમાં જોવામાં આવે છે, તે કારણથી તેનું વાચ્ય પણ અવશ્ય છે. ‘ જીવ ’ પદ, પણ એવું જ છે, તેથી તે પણ સાર્થક છે. જે પદ સાર્થક નથી થતું તે વ્યુત્પત્તિવાળા અસમાસ પદ એક પદ પણ થતું નથી. જેમકે અરવિષાણ ( ગદ્યેશના શીંગ ) પદ, અથવા ‘ ડિત્થ ’ પદ. જીવ-પદ એવું નથી. તેથી તે સાર્થક છે.

જે વ્યુત્પત્તિવાળું થતું નથી તે એક પદ હોવા છતાંય પણ સાર્થક નથી થતું, જેમ ‘ ડિત્થ ’ આદિ પદ.

આ હેતુમાં અનૈકાન્તિકતા નિવારણ કરવા માટે, ‘ વ્યુત્પત્તિવાળું ’ વિશેષણ પ્ર. આ-૨૯

યચ્ચૈકપદં નાસ્તિ કિન્તુ સામાસિકમ્, તદપિ વ્યુત્પત્તિમત્ત્વે સત્યપિ સાર્થકં નાસ્તિ, યથા સ્વરવિષાણાદિકમિતિ । તત્રનૈકાન્તિકત્ત્વાપત્તિદોષસ્તત્પરિહારાર્થમેકપદત્વમિતિ ।

નનુ દેહ એવ જીવપદસ્યાર્થોઽસ્તુ કથં પુનરાત્મા વિજ્ઞાયેત । દેહરૂપેઽર્થે જીવશબ્દપ્રયોગોઽપિ દૃષ્ટઃ, યથા—‘અયં જીવઃ, તસ્માન્ન હન્તવ્યઃ’ ઇતિ । અતો દેહ એવ જીવશબ્દાર્થતયા ગ્રહીતવ્યઃ, ઇતિ ચેન્ન, પર્યાયશબ્દભેદાદ્ દેહજીવ-શબ્દયોરર્થો ભિન્ન એવેતિ बोधनात्, યથા ઘટાકાશયોઃ, તત્ર-ઘટકુમ્ભકલશાદયો ઘટશબ્દસ્ય પર્યાયાઃ, આકાશનભોવ્યોમાદયસ્ત્વાકાશશબ્દપર્યાયાઃ, અતસ્તયોરર્થે

વાલા ’ વિશેષણ લગાયા છે । તથા જો એક પદ નહીં છે કિન્તુ સમાસયુક્ત પદ છે તો વ્યુત્પત્તિવાળા હોતે હુણે મો સાર્થક નહીં હોતો । જૈસે સ્વરવિષાણ આદિ પદ । ઇસ મેં અનેકાન્તિકતા હટાને કે લિણે ‘એકપદ’કા પ્રયોગ કિયા ગયા છે ।

શંકા—જીવ પદકા અર્થ દેહ હી ક્યોં ન માન લિયા જાય ? આત્મા અર્થ કૈસે સમજા જાય ? દેહ કે અર્થ મેં જીવ શબ્દકા પ્રયોગ દેસા મી જાતા છે, જૈસે ‘યહ જીવ છે, અતઃ હનન કરને યોગ્ય નહીં છે’ । ઇસ લિણે જીવ શબ્દ કા અર્થ શરીર હી લેના ઇચ્છિય ।

સમાધાન—દેહકે ઓર જીવ કે પર્યાયવાચી શબ્દ અલગ અલગ છે, અતઃ દાનોં કા અર્થ અલગ—અલગ હી માનના ઇચ્છિય । જૈસે ઘટકે પર્યાયવાચી કુમ્ભ, કલશ આદિ શબ્દ અલગ છે, ઓર આકાશ કે પર્યાયવાચી શબ્દ નભ, વ્યોમ, ગગન આદિ આપ્યું છે. તથા જે એક પદ નથી. પરંતુ સમાસયુક્ત પદ છે તે વ્યુત્પત્તિવાળું હોવા છતાંય સાર્થક થતું નથી. જેમ સ્વરવિષાણુ આદિ પદ, તેમાં અનેકાન્તિકતા હોવામા માટે—‘એક પદ’નો પ્રયોગ કરેલો છે.

શંકા—‘જીવ’ પદનો અર્થ દેહ શા માટે માનવામાં નથી આવતો ? આત્મા અર્થ જેમ સમજાય છે ? દેહના અર્થમાં જીવ શબ્દનો પ્રયોગ જોવામાં પણ આવે છે. જેમ—‘આ જીવ છે, તેથી હણવા યોગ્ય નથી’ એટલા માટે જીવ શબ્દનો અર્થ શરીર જ લેવો જોઈએ.

સમાધાન—દેહ અને જીવના પર્યાયવાચી શબ્દ જૂદા જૂદા છે તેથી એ બંનેનો ભોધ જૂદો-જૂદો માનવો જોઈએ. જેમ ઘટના પર્યાયવાચી કુમ્ભ, કલશ આદિ શબ્દ અલગ છે, અને આકાશના પર્યાયવાચી શબ્દ-નભ, વ્યોમ, ગગન આદિ શબ્દ અલગ છે. એ કારણથી ઘટનો અર્થ અને આકાશનો અર્થ અલગ છે. એ



भिन्नता प्रतीयते । प्रकृतेऽपि प्राणी, भूतः, जीवः, सत्त्वः, इत्यादयो जीवशब्दस्य पर्यायाः, शरीरं वपुः, कायो, देहः, गात्रमित्यादयस्तु शरीरशब्दपर्याया 'अयं जीवस्तस्मान्न हन्तव्यः' इत्यनेनापि देहस्थितस्य प्राणिन एव हिंसा निषिध्यते ।

आप्तागमस्तु समस्त एवात्मानं बोधयति, आत्मतत्त्वस्यैव सम्यग्दर्शनज्ञान-चारित्रार्थं तस्य प्रवृत्तत्वात् । तथापि कानिचिदागमवचनानि प्रमाणतया प्रदर्शयामः-

‘से आयावादी’ इति प्रस्तुतमेव वचनं तावद् गृहाण । ‘से जं पुण’ शब्द अलग हैं, इस लिए घटका अर्थ और आकाश का अर्थ अलग-अलग है । इसी प्रकार जीव के पर्यायवाचक प्राणी, भूत, जीव, सत्त्व आदि शब्द अलग हैं और देह के पर्यायवाचक शरीर, वपु, काय, गात्र आदि भिन्न हैं, अतः इन दोनों का अर्थ भी अलग होना चाहिए । ‘यह जीव है अतः हनन करने योग्य नहीं है’ इस वाक्य द्वारा देह में स्थित प्राणी की ही हिंसा का निषेध किया जाता है ।

### आगम से आत्मा की सिद्धि-

आप्त पुरुष द्वारा प्रणीत सम्पूर्ण आगम आत्मा का बोधक है । आत्मतत्त्व के सम्यग् दर्शन, ज्ञान, और चारित्र के लिए ही आगम की प्रवृत्ति होती है फिर भी आगम के कतिपय वाक्य प्रमाणरूप में प्रदर्शित करते हैं:-

सब से पहले-‘से आयावादी’, इस प्रस्तुत वाक्य को ही लीजिए प्रमाणों जवनां पर्यायवाचक-प्राणी, भूत, एवं सत्त्व आदि शब्द अलग थे. अने देहना पर्यायवाचक-शरीर, वपु, काय, गात्र आदि भिन्न थे. ते भाटे ओ अनेना अर्थ पण अलग थेवा लोभये. “आ एवं छे तेथी हुनन करवा योग्य नथी” आ वाक्य द्वारा देहमां रहैवा प्राणीनी न हिंसानो निषेध करवामां आये छे.

### आगमधी आत्मानी सिद्धि-

आप्त पुरुष द्वारा प्रणीत सम्पूर्ण आगम आत्मानुं बोधक छे. आत्मतत्त्वना सम्यग्दर्शन, ज्ञान अने चारित्र भाटे न आगमनी प्रवृत्ति होय छे. तो पण आगमना केवलक वाक्य प्रमाणरूपमां प्रदर्शित करे छे-

सौथी प्रथम ‘से आयावादी’ आ प्रस्तुत-आहु वाक्यने न लोभये ‘से जं पुण

‘જાણેજ્જા’ ઇત્યાદિ-‘સોડહં’ ઇત્યન્તં પ્રાગ્વ્યાખ્યાતં ચ (આચા. ૧ અ. ૧ ઉ. ૩૦) ।  
 ‘અત્થિ આયા’ (અસ્ત્યાત્મા) ઇતિ । ‘અત્થિ જીવા’ (સન્તિ જીવાઃ) ઇતિ ।  
 ‘એગે આયા’ (એક આત્મા) (સ્થા. ૧ સ્થા. ૧ ઉ. ૩૦) ઇતિ ।

“કઙ્ઘિહા ણં મંતે ! દવ્વા પણ્ણત્તા ? ગોયમા ! દુવિહા પણ્ણત્તા, તંજહા-  
 જીવદવ્વા ય, અજીવદવ્વા ય” (અનુ. સૂ. ૧૪૧)

ઇત્યાદીન્યનુસન્ધેયાનિ । અન્યેઽપિ સાંખ્યાદયઃ પ્રાયશઃ સ્વીકુર્વન્ત્યેવ  
 શરીરાદિભ્રતયાઽઽત્મનોઽસ્તિત્વમિતિ ।

### આત્મનો દ્રવ્યત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા દ્રવ્યમસ્તિ, ચેતનાદ્યનન્તગુણવત્ત્વાત્, જ્ઞાનદર્શનલક્ષણવિવિ-  
 ધોપયોગાદ્યનન્તપર્યાયવત્ત્વાત્ચ । ચેતનાદ્વારેણાત્મા નાનારૂપોપયોગરૂપેણ પરિણમતે ।  
 ‘સે જં પુણ જાણેજ્જા’ સે લેકર ‘સોડહં’ તક પહેલે વ્યાખ્યાન ક્રિયા જા ચુકા  
 હૈ । (આચા. ૧ અ. ૧ ઉ.) તથા ‘અત્થિ આયા’ ‘અત્થિ જીવા’ ‘એગે આયા’  
 (સ્થા. ૧ સ્થા. ૧ ઉ.) તથા ‘કઙ્ઘિહા ણં મંતે દવ્વા પણ્ણત્તા ? ગોયમા ! દુવિહા  
 પણ્ણત્તા, તંજહા-જીવદવ્વા ય અજીવદવ્વા ય, (અનુ. સૂ. ૧૪૧) ઇત્યાદિ અનેક  
 આગમવાક્ય સમજ લેને चाहिए । દૂસરે સાંખ્ય વગેરેહી પ્રાયઃ શરીર સે ભિન્ન આત્મા  
 કા અસ્તિત્વ સ્વીકાર કરતે હૈ ।

### આત્માકા દ્રવ્યત્વનિરૂપણ—

આત્મા દ્રવ્ય હૈ, ક્યોં કિ વહ ચેતના આદિ અનન્ત ગુણો સે યુક્ત હૈ  
 ઔર વહ જ્ઞાનોપયોગ તથા દર્શનોપયોગ આદિ અનન્ત પર્યાયોં વાલા હૈ । ચેતના  
 જાણેજ્જા’ થી લઈને ‘સોડહં’ સુધી પહેલા વ્યાખ્યાન કરી દીધું છે (આચા. ૧-અ.  
 ૧-ઉ) તથા ‘અત્થિ આયા’ ‘અત્થિ જીવા’ ‘એગે આયા’ (સ્થા. ૧ સ્થા. ૧ ઉ.) ‘કઙ્ઘિહા ણં  
 મંતે ! દવ્વા પણ્ણત્તા ? ગોયમા ! દુવિહા પણ્ણત્તા, તંજહા-જીવદવ્વા ય અજીવદવ્વા ય’  
 (અનુ. સૂ. ૧૪૧) ઇત્યાદિ અનેક આગમ-વાક્ય સમજ લેવાં જોઈએ. બીજા સાંખ્ય  
 શાસ્ત્ર વગેરે પણ પ્રાયઃ શરીરથી ભિન્ન આત્માના અસ્તિત્વનો સ્વીકાર કરે છે.

### આત્માનું દ્રવ્યત્વનિરૂપણ—

આત્મા દ્રવ્ય છે, કેમકે તે ચેતના આદિ અનન્ત ગુણોથી યુક્ત છે, અને તે  
 જ્ઞાનોપયોગ તથા દર્શનોપયોગ આદિ અનન્ત પર્યાયો વાળો પણ છે. ચેતનાદ્વારા  
 આત્મા નાના પ્રકારના રૂપમાં પરિણત થાય છે. પરંતુ ચેતના આત્મદ્રવ્યના રૂપમાં

ચેતના ચાત્મદ્રવ્યાદાત્મગતાન્યસુખાદિગુણતશ્ચાનપાયિનો । તામેવાશ્રિત્ય જ્ઞાનદર્શના-  
દિવિવિધોપયોગાનાં મિન્નમિન્નસમયવર્તિનાં ત્રૈકાલિકઃ પ્રવાહો ભવતિ । તસ્યાચેત-  
નાયાઃ કાર્યરૂપઃ પર્યાયપ્રવાહઃ સ્વરૂપેણોપયોગ એવ ।

ઉપયોગાત્મકપર્યાયપ્રવાહ ઇવ સુખદુઃસ્વવેદનાત્મકપર્યાયપ્રવાહસ્તથા પ્રવૃત્ત્યા-  
ત્મકપર્યાયપ્રવાહાદયોઽનન્તપર્યાયપ્રવાહાઃ સહ-યુગપત્ પ્રવર્તન્તે । અતઃચેતનાગુણ  
ઈવાત્મનિ આનન્દવીર્યપ્રભૃત્યેકૈકગુણસ્વીકરણીયતયાઽનન્તગુણાઃ સિદ્ધ્યન્તિ ।

આત્મનિ ચેતનાઽનન્દવીર્યાદિગુણાનાં મિન્નમિન્ના વિવિધપર્યાયા  
એકસ્મિન્ સમયે સમુપલભ્યન્તે પરન્ત્વેકસ્ય ચેતનાગુણસ્ય વિવિધાઉપયોગપર્યાયા

કે દ્વારા આત્મા નાના પ્રકાર કે ઉપયોગો કે રૂપ મેં પરિણત હોતા હૈ કિન્તુ ચેતના,  
આત્મદ્રવ્ય કે રૂપ મેં, તથા આત્મા મેં રહેને વાલે સુખ આદિ ગુણો કે રૂપ મેં  
સદા વિદ્યમાન રહતી હૈ-કમી નષ્ટ નહીં હોતી, ઉસ કે આધાર પર જ્ઞાન દર્શન આદિ  
મિન્ન મિન્ન સમયો મેં હોને વાલે અનેક ઉપયોગો કા પ્રવાહ વહતા હૈ । ઉસ ચેતના  
કા કાર્યરૂપ પર્યાય-પ્રવાહ સ્વરૂપસે ઉપયોગ હી હૈ ।

ઉપયોગાત્મક પર્યાય-પ્રવાહ કે સમાન સુખ-દુઃસ્વસંવેદનરૂપ પર્યાય કા  
પ્રવાહ હૈ; તથા પ્રવૃત્ત્યાત્મક પર્યાયપ્રવાહ આદિ અનન્ત પર્યાય-પ્રવાહ એક સાથે જારી  
રહતે હૈ; અતઃ ચેતનાગુણ કે સમાન આત્મા મેં આનન્દ, વીર્ય આદિ એક એક ગુણ  
સ્વીકાર કરને યોગ્ય હોને સે અનન્ત ગુણ સિદ્ધ હોતે હૈ ।

આત્મા મેં ચેતના સુખ વીર્ય આદિ ગુણો કી મિન્નર વિવિધ પર્યાયો એક હી  
સમય મેં ઉપલબ્ધ હોતી હૈ, કિન્તુ એક હી સમય મેં એકલે ચેતનાગુણ કી વિવિધ  
તથા આત્મામાં રહેવવાળા સુખ આદિ ગુણોના રૂપમાં હુમેશાં વિદ્યમાન રહે છે.  
કોઈ વખત પણ નાશ પામતી નથી. તેના આધાર પર જ્ઞાન, દર્શન આદિ મિન્ન  
મિન્ન સમયોમાં થવાવાળા અનેક ઉપયોગોનો પ્રવાહ વહેતો રહે છે. તે ચેતનાના  
કાર્યરૂપ પર્યાયપ્રવાહ સ્વરૂપથી ઉપયોગ જ છે.

ઉપયોગાત્મક પર્યાય-પ્રવાહના સમાન સુખ-દુઃસ્વસંવેદનરૂપ પર્યાયનો પ્રવાહ  
છે. તથા પ્રવૃત્ત્યાત્મક પર્યાય-પ્રવાહ આદિ અનન્ત પર્યાયપ્રવાહ એક સાથે જારી રહે  
છે. તેથી ચેતનાગુણ સમાન આત્મામાં આનન્દ વીર્ય આદિ. એક-એક ગુણ સ્વીકાર  
કરવા યોગ્ય હોવાથી અનન્ત ગુણ સિદ્ધ થાય છે.

આત્મામાં ચેતના, સુખ, વીર્ય, આદિ ગુણોની મિન્ન-મિન્ન વિવિધ પર્યાયો  
એકજ સમયમાં ઉપલબ્ધ થાય છે, પરંતુ એકજ સમયમાં એકલા ચેતનાગુણની



ઁકસ્મિન્ સમયે ન સમુપલભ્યન્તે, તથૈકસ્યાનન્દગુણસ્ય વા વિવિધા વેદનપર્યાયા ઁકસ્મિન્ સમયે નોપલભ્યન્તે ।

પ્રત્યેકગુણસ્યૈકસ્મિન્ સમયે ઁક ઁવ પર્યાયઃ પ્રકટીભવતિ । યથા—જલાવસ્થિતસ્યાપિ નરસ્ય શીતોષ્ણોપયોગૌ ન યુગપદ્ ભવતઃ । ઉષ્ણોપયોગસમયે શીતોપયોગો નોપલભ્યન્તે, શીતોપયોગસમયે ંષ્ણોપયોગોપિ નૈવૈતિ ।

આત્મા નિત્યઃ । તસ્ય ચેતનાદિગુણા અપિ નિત્યાઃ । પરન્તુ ચેતનાજન્ય ઉપયોગપર્યાયો ન નિત્યઃ, સતુ સદૈવોત્પાદવિનાશશાલિતયા વ્યક્તિરૂપેણાનિત્યઃ । ઉપયોગપર્યાયપ્રવાહસ્તુ ત્રૈકાલિકતયા નિત્ય ઇતિ ।

ઉપયોગરૂપ પર્યાયે ઉપલબ્ધ નહીં હોતી । ઁસી પ્રકાર ઁક હી સમયમેં ઁકેલે આનન્દગુણકી ભી વિવિધ વેદનરૂપ પર્યાયે ઉપલબ્ધ નહીં હોતી ।

પ્રત્યેક ગુણ કી ઁક સમય મેં ઁક હી પર્યાય પ્રકટ હોતી હૈ, પરન્તુ જૈસે—જલ મેં સ્થિત પુરુષ કે શીત ઁર ઉષ્ણ, દોનોં ઉપયોગ ઁક સાથ નહીં હો તે । ઉષ્ણોપયોગ કે સમય શીતોપયોગ નહીં પાયા જાતા, ઁર શીતોપયોગ કે સમય ઉષ્ણોપયોગ નહીં પાયા જાતા ।

આત્મા નિત્ય હૈ, ઁસકે ચેતના આદિ ગુણ ભી નિત્ય હૈં, પરન્તુ ચેતના—જન્ય ઉપયોગ—પર્યાય નિત્ય નહીં હૈ, વહ સદૈવ ઉત્પન્ન ઁર વિનષ્ટ હોતી રહતી હૈ, અતઃ વ્યક્તિરૂપસે અનિત્ય હૈ, ઉપયોગ—પર્યાય કા પ્રવાહ ત્રિકાલવર્તી હોનેકે કારણ નિત્ય હૈ ।

વિવિધ ઉપયોગરૂપ પર્યાયો ઉપલબ્ધ થતી નથી. ઁજ પ્રમાણે ઁક જ સમયમાં ઁકલા આનન્દ ગુણની પણ વિવિધ વેદનરૂપ પર્યાયો ઉપલબ્ધ થતી નથી.

પ્રત્યેક ગુણની ઁક સમયમાં ઁકજ પર્યાય પ્રગટ થાય છે, જેમ જલમાં ઉભા રહેલા પુરુષને શીત અને ઉષ્ણ, ઁ બંને ઉપયોગ ઁક સાથે થશે નહિ, ઉષ્ણોપયોગના સમયે શીતોપયોગ થશે નહિ અને શીતોપયોગના સમયે ઉષ્ણોપયોગ જણશે નહીં.

આત્મા નિત્ય છે, તેના ચેતના આદિ ગુણ પણ નિત્ય છે, પરંતુ ચેતનાજન્ય ઉપયોગ—પર્યાય નિત્ય નથી, તે હમેશાં ઉત્પન્ન અને નાશ થતી રહે છે, તેથી વ્યક્તિરૂપથી અનિત્ય છે, તેા પણ ઉપયોગ—પર્યાયનો પ્રવાહ ત્રિકાલવર્તી હોવાથી નિત્ય છે.

अनन्तगुणानामखण्डसमुदाय एव द्रव्यम्, तथाप्यात्मनश्चेतनाऽऽनन्द-  
चारित्रवीर्यादयो गुणाः परिमिता एव साधारणधियां छद्मस्थानां ज्ञेया भवन्ति,  
न तु सर्वे गुणाः । इदमत्र कारणम्-विशिष्टज्ञानमन्तरेणात्मनः सर्वे पर्यायप्रवाहा  
विज्ञातुमशक्याः भवन्ति । यो यः पर्यायप्रवाहः साधारणबुद्ध्या ज्ञातुं शक्यते  
तत्कारणीभूतानां गुणानां व्यवहारः क्रियते, अतस्ते गुणा व्यवहार्या भवन्ति ।  
यथा-आत्मनश्चेतनाऽऽनन्दचारित्रवीर्यादयो गुणा व्यवहार्याः सन्ति । शेषास्तु  
सर्वे केवलिगम्या इति ।

त्रैकालिकानामनन्तपर्यायाणामेकैकप्रवाहस्य कारणीभूतकैस्यैकगुणोऽस्ति,  
तादृशानन्तगुणानां समुदायो द्रव्यम् । एतदपि कथञ्चिद् भेदविवक्षया । अभेद-

अनन्त गुणों का अखण्ड समुदाय ही द्रव्य है फिर भी आत्मा के चेतना  
सुख, चारित्र, वीर्य आदि गुण साधारणबुद्धि वाले छद्मस्थों के द्वारा परिमित ही जाने  
जाते हैं, सब गुण नहीं जाने जाते । इस का कारण यह है कि-विशिष्ट ज्ञान के बिना  
आत्मा के समस्त पर्याय-प्रवाहों को जानना अशक्य है । जो जो पर्याय-प्रवाह  
साधारण बुद्धि के द्वारा जाना जा सकता है, उसके कारणभूत गुणों का व्यवहार किया  
जाता है, अत एव वे गुण व्यवहार्य होते हैं, जैसे-आत्मा के चेतना, सुख, चारित्र, और  
वीर्य आदि गुण व्यवहार्य होते हैं । शेष सब केवलिगम्य हैं ।

तीन काल सम्बन्धी अनन्त पर्यायों के एक-एक प्रवाह का कारण एक-एक  
गुण है, और ऐसे अनन्त गुणों का समुदाय द्रव्य है । यह कथन क्वचित् भेद-

अनन्त गुણોનો અખંડ સમુદાય જ દ્રવ્ય છે, તે પણ આત્માના ચેતના, સુખ  
ચારિત્ર, વીર્ય આદિ ગુણ સાધારણ બુદ્ધિવાળા છદ્મસ્થોદ્વારા પરિમિત-મર્યાદિત જ  
ભણવામાં આવે છે, પરંતુ સર્વ ગુણ ભણવામાં આવતા નથી. તેનું કારણ એ છે  
કે-વિશિષ્ટ જ્ઞાન વિના આત્માના સમસ્ત પર્યાય-પ્રવાહોને ભણવા અશક્ય છે. જે જે  
પર્યાય-પ્રવાહ સાધારણ બુદ્ધિવાળા દ્વારા ભણી શકાય છે, તેના કારણભૂત ગુણોનો  
વ્યવહાર કરવામાં આવે છે, એ કારણથી તે ગુણ વ્યવહાર્ય થાય છે, જેમ આત્માનો  
ચેતના, સુખ, ચારિત્ર અને વીર્ય આદિ ગુણ વ્યવહાર્ય થાય છે, બાકી સર્વ  
કેવલિગમ્ય છે.

ત્રણ કાલ સંબંધી અનન્ત પર્યાયોના એક-એક પ્રવાહનું કારણ એક-એક  
ગુણ છે. અને એવા અનન્ત ગુણોનો સમુદાય તે દ્રવ્ય છે. આ કથન કંથચિત્

દૃષ્ટ્યા તુ પર્યાયાઃ સ્વસ્વકારણીભૂતસ્ય ગુણસ્ય સ્વરૂપાઃ, ગુણા અપિ દ્રવ્યસ્વરૂપા इति ગુણપર્યાયાત્મકમેવ દ્રવ્યમિત્યુચ્યતે ।

દ્રવ્યેષુ સર્વે ગુણા એકરૂપા ન સન્તિ । તત્ર કતિચન સાધારણાઃ અનેક-દ્રવ્યવર્તિનઃ સર્વદ્રવ્યવર્તિનશ્ચ । યથા-અસ્તિત્વ-પ્રદેશવત્ત્વ-જ્ઞેયત્વાદયઃ સર્વદ્રવ્યવર્તિનઃ, નિષ્ક્રિયત્વાઽચેતનત્વાઽરૂપિત્વાદયોઽનેકદ્રવ્યવર્તિનઃ । કતિચિદસાધારણા ગુણા એકદ્રવ્યમાત્રવર્તિનઃ સન્તિ । યથા-આત્મનશ્ચેતનાઽઽનન્દચારિત્રવીર્યાદયઃ । સ્વસ્વાઽસાધારણગુણાનાં તજ્જન્યપર્યાયાણાં ચાપેક્ષયા પ્રત્યેકદ્રવ્યમન્યદ્રવ્યાદ્ મિન્નમસ્તીતિ બોધ્યમ્ ।

વિવિક્ષા સે હી હૈ । અભેદ-વિવિક્ષા સે તો પર્યાયેં અપને કારણભૂત ગુણ સે અભિન્ન હૈં ઔર ગુણ, દ્રવ્ય સે અભિન્ન હૈં, અતઃ ગુણપર્યાયરૂપ હી દ્રવ્ય કહલાતા હૈ ।

દ્રવ્ય મેં સમી ગુણ એકરૂપ નહીં હૈં । કોઈ-કોઈ ગુણ સાધારણ હૈં, અર્થાત્ સામાન્ય રૂપ સે અનેક દ્રવ્યોં મેં પાયે જાતે હૈં, યા સમસ્ત દ્રવ્યોં મેં પાયે જાતે હૈં । જૈસે-અસ્તિત્વ, વસ્તુત્વ, પ્રદેશવત્ત્વ, ઔર જ્ઞેયત્વ, યે ગુણ સમસ્ત દ્રવ્યોં મેં પાયે જાતે હૈં ।

નિષ્ક્રિયત્વ, અચેતનત્વ, ઔર અરૂપિત્વ આદિ ગુણ અનેક દ્રવ્યવર્તીં હૈં । કોઈ-કોઈ ગુણ અસાધારણ હૈં-સિર્ફ એક દ્રવ્ય મેં રહતે હૈં, જૈસે-આત્મા કે ચૈતન્ય, સુખ, ચારિત્ર, વીર્ય આદિ ગુણ । અપને-અપને અસાધારણ ગુણોં ઔર ગુણોં સે ઉત્પન્ન પયાયોં કી અપેક્ષા પ્રત્યેક દ્રવ્ય દૂસરે દ્રવ્ય સે મિન્ન હૈ, ઐસા જાનના ચાહિયે ।

ભેદવિવિક્ષાથી જ છે. અભેદવિવિક્ષાથી તો પર્યાયો પોતાના કારણભૂત ગુણથી અભિન્ન છે, અને ગુણ દ્રવ્યથી અભિન્ન છે તેથી ગુણપર્યાયરૂપ જ દ્રવ્ય કહેવાય છે.

દ્રવ્યમાં સર્વ ગુણ એકરૂપ નથી, કોઈ કોઈ ગુણ સાધારણ છે, અર્થાત્-સામાન્ય રૂપથી અનેક દ્રવ્યોમાં જોવામાં આવે છે. અથવા સમસ્ત દ્રવ્યોમાં જોવામાં આવે છે. જેમ-અસ્તિત્વ, વસ્તુત્વ, પ્રદેશવત્ત્વ અને જ્ઞેયત્વ, એ ગુણ સમસ્ત દ્રવ્યોમાં જોવામાં આવે છે. નિષ્ક્રિયત્વ, અચેતનત્વ, અને અરૂપિત્વ આદિ ગુણ અનેક દ્રવ્યવર્તીં છે. કોઈ કોઈ ગુણ અસાધારણ છે-માત્ર એક દ્રવ્યમાં રહે છે. જેવી રીતે આત્માના ચૈતન્ય, સુખ, ચારિત્ર, વીર્ય આદિ ગુણ. પોત-પોતાના સાધારણ ગુણો અને ગુણોથી ઉત્પન્ન પરાયોની અપેક્ષા પ્રત્યેક દ્રવ્ય થીજ દ્રવ્યથી ભિન્ન છે, એમ સમજવું જોઈએ.



આત્મનઃ સ્વરૂપમ્—  
આત્મનઃ સ્વરૂપં તાવદુચ્યતે—

આત્મા—(૧)–જીવઃ (૨)–નિત્યઃ (૩)–ચેતનાવાન્, (૪)–ઉપયોગવાન્, (૫)–પરિણામી, (૬)–પ્રમુઃ, (૭)–કર્તા, (૮)–સાક્ષાદ્ભોક્તા, (૯)–સ્વશરીર-પરિમાણઃ, (૧૦)–અમૂર્તઃ, (૧૧)–પ્રતિશરીરં ભિન્નઃ, (૧૨)–પૌદ્ગલિકકર્મસંયુક્તઃ, (૧૩)–ઊર્ધ્વગતિશીલશ્ચ ।

તત્રાઽઽત્મનો જીવત્વાદિસ્વરૂપં નિરૂપ્યતે—

(૧) જીવત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા નિશ્ચયન સત્તા-ચૈતન્ય-જ્ઞાનાદિરૂપૈઃ શુદ્ધપ્રાણૈઃ, તથા

આત્મા કા સ્વરૂપ—

અબ આત્મા કા સ્વરૂપ કહતે હૈઃ—

આત્મા—(૧)–જીવ હૈ, (૨)–નિત્ય હૈ, (૩)–ચેતનાવાન્ હૈ, (૪)–ઉપયોગવાન્ હૈ, (૫)–પરિણામી હૈ, (૬)–પ્રમુ હૈ, (૭)–કર્તા હૈ, (૮)–સાક્ષાત્ ભોક્તા હૈ, (૯)–અપને શરીર કે બરાબર હૈ, (૧૦)–અમૂર્ત હૈ, (૧૧)–પ્રત્યેક શરીર સે ભિન્ન હૈ, (૧૨)–પૌદ્ગલિક કર્મો સે યુક્ત હૈ, ઓર (૧૩)–ઊર્ધ્વગમન સ્વભાવવાળા હૈ ।

उन में अब आत्मा के जीवत्वादि स्वरूप का निरूपण करते हैं—

(૧) જીવત્વ કા નિરૂપણ—

આત્મા નિશ્ચયનય સે સત્તા ચૈતન્ય ઓર જ્ઞાન આદિરૂપ શુદ્ધ પ્રાણો સે, તથા

આત્માનું સ્વરૂપ—

હવે આત્માનું સ્વરૂપ કહે છે—

આત્મા—(૧) જીવ છે, (૨) નિત્ય છે, (૩) ચેતનાવાન્ છે, (૪) ઉપયોગવાન્ છે, (૫) પરિણામી છે, (૬) પ્રમુ છે, (૭) કર્તા છે, (૮) સાક્ષાત્ ભોક્તા છે, (૯) પોતાના શરીર બરાબર છે, (૧૦) અમૂર્ત છે, (૧૧) પ્રત્યેક શરીરમાં ભિન્ન ભિન્ન છે, (૧૨) પૌદ્ગલિક કર્મોથી યુક્ત છે, અને (૧૩) ઉર્ધ્વગમન સ્વભાવવાળો છે.

તેમાં આત્માના જીવત્વાદિ સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે—

(૧) જીવત્વનું નિરૂપણ—

આત્મા નિશ્ચયનયથી સત્તા, ચૈતન્ય અને જ્ઞાન આદિરૂપ શુદ્ધ પ્રાણોથી, તથા

વ્યવહારનયતો યથાસંભવં ક્ષાયોપશમિકૈરિન્દ્રિયાદિદ્રવ્યપ્રાણૈશ્ચ જીવતિ, જીવિષ્યતિ, જીવિતવાશ્ચિત્યતોઽયમાત્મા 'જીવઃ' ઇત્યુચ્યતે ।

“અયમાત્મા ન દેહાદન્યઃ, નાપિ જન્માન્તરસંક્રાન્તઃ” ઇતિ નાસ્તિકમતં નિરાકર્તુમુક્તમ્—‘અયમાત્મા જીવઃ’ ઇતિ । પૂર્વભવસંસ્કારં વિના કથમિહ પ્રમૂત એવ બાલો માતુઃ સ્તન્યપાને પ્રવર્તતે । પ્રવૃત્તિં પ્રતિ સ્વકૃતિસાધ્યત્વસ્યેષ્ટસાધનતાજ્ઞાનસ્ય ચ કારણતયા બાલસ્ય તજ્ઞાનજનકપૂર્વભવીયસંસ્કારોઽસ્તીતિ વિજ્ઞાયતે । તસ્માદાત્મનઃ પૂર્વભવસમ્બન્ધોઽવધાર્યતે । તેન ચ દેહમિન્નત્વમપિ જ્ઞાયતે ।

અયમાત્મા યદિ પાશ્ચભૌતિકદેહરૂપઃ સ્યાત્, તર્હિ મૃન્મયભાણ્ડ—સલિલ—વ્યવહારનય સે યથાસંભવ ક્ષયોપશમ—જન્ય ઇન્દ્રિયાદિ દ્રવ્યપ્રાણો સે જીવિત હૈ, જીવિત રહેગા ઓર જીવિત થા, હિસ કારણ આત્મા ‘જીવ’ કહલાતા હૈ ।

“આત્મા શરીર સે ભિન્ન નહીં હૈ ઓર ન એક જન્મ સે દૂસરે જન્મ મેં જાતા હૈ” નાસ્તિકોં કે હિસ મત કા નિરાકરણ કરને કે લિપ્ કહા ગયા હૈ કિ—“આત્મા જીવ હૈ” । પૂર્વભવ કે સંસ્કાર કે વિના હિસ ભવ મેં તત્કાલ જન્મા હુઆ શિશુ માતા કે સ્તન—પાન મેં કૈસે પ્રવૃત્ત હો સકતા હૈ ?, શિશુ કી હિસ પ્રવૃત્તિ સે સિદ્ધ હોતા હૈ કિ હિસ મેં પૂર્વ ભવ કા સંસ્કાર વિદ્યમાન હૈ । હિસ સે નિશ્ચિત્ત હો જાતા હૈ કિ—આત્મા પૂર્વ ભવ મેં ભી થા, ઓર હિસ કારણ વહ શરીર સે ભિન્ન ભી માલૂમ હોતા હૈ ।

પાંચ ભૂતોં સે બના હુઆ શરીર હી યદિ આત્મા હૈ તો મિટ્ટી કા પાત્ર, પાની, પાવક—(અગ્નિ), પવન ઓર આકાશ રૂપ પાંચોં ભૂતોં કા ચૂલે કે ઊપર જબ સંયોગ વ્યવહારનયથી યથાસંભવ ક્ષયોપશમજન્ય ઇન્દ્રિયાદિ દ્રવ્યપ્રાણોથી જીવિત છે, જીવિત રહેશે અને જીવિત હોતો, તેથી આત્મા ‘જીવ’ કહેવાય છે. “આત્મા શરીરથી ભિન્ન નથી, અને એક જન્મથી બીજા જન્મમાં જતો નથી” નાસ્તિકોના એ પ્રમાણે જે મત છે, તેનું નિરાકરણ કરવા માટે કહ્યું છે કે “આત્મા જીવ છે.” પૂર્વ ભવના સંસ્કાર વિના આ ભવમાં તત્કાલ જન્મ પામેલું બાળક માતાના સ્તનપાનમાં (ધાવવામાં) પ્રવૃત્તિ કેવી રીતે કરી શકે છે ?, બાળકની આ પ્રવૃત્તિથી સિદ્ધ થાય છે કે—તેનામાં પૂર્વ ભવના સંસ્કાર વિદ્યમાન છે. આ કારણથી નિશ્ચય થાય છે કે આત્મા પૂર્વભવમાં પણ હોતો, અને તે કારણથી આત્મા શરીરથી ભિન્ન માલૂમ પડે છે.

પાંચ ભૂતોથી બનેલું શરીર જ જે આત્મા છે તો માટીનું પાત્ર, પાણી, અગ્નિ, આકાશ, પવન વગેરે પાંચ ભૂતોના ચુલા ઉપર જ્યારે સંયોગ થાય છે, તો તે વખતે .

દહન-પવન-ગગનરૂપપશ્ચભૂતેષુ ચુલ્હુપરિ મિલિતેષુ ચેતનાલક્ષણ આત્મા કથં નોપલભ્યતે ? ।

યદ્વા-મૃતશરીરે પશ્ચભૂતસદ્ભાવેઽપિ ચેતનાલક્ષણ આત્મા નોપલભ્યતે ।  
અતોઽયમાત્મા જડરૂપપાશ્ચભૌતિકદેહાદ્ ભિન્નો નિશ્ચીયતે ।

અપરશ્ચ-આત્મનો દેહરૂપત્વસ્વીકારે કૃતનાશોઽકૃતાભ્યાગમશ્ચાપદ્યેત ।  
કૃતસ્ય કર્મણઃ ફલપ્રાપ્તિં વિનૈવ નાશઃ સ્યાત્, અકૃતસ્ય કર્મણઃ ફલપ્રાપ્તિશ્ચ ।  
અર્કતુઃ ફલપ્રાપ્તિઃ, કર્તુશ્ચ નેતિ દ્વયમયુક્તમ્ । તસ્માત્-આત્મા દેહાદ્ ભિન્નો  
જન્માન્તરસંક્રાન્તોઽપીતિ નિશ્ચેયમ્ ।

હોતા હૈ તો ચેતનારૂપ આત્મા ક્યાં નહીં પૈદા હો જાતા ?, વહી પાંચોં ભૂતોં કા સંયોગ વિદ્યમાન હૈ ઓર ઉસીસે આત્મા કી ઉત્પત્તિ માનતે હો ?

અથવા-મૃત શરીર મેં પાંચોં ભૂતોં કા સદ્ભાવ હોને પર મી ચેતનસ્વરૂપ આત્મા ક્યાં ઉપલબ્ધ નહીં હોતા ?, ઇસ સે નિશ્ચિત્ત હોતા હૈ કિ આત્મા જડરૂપ પાંચ ભૂતોં સે ભિન્ન હૈ ઓર નિત્ય હૈ ।

ઓર મી આત્મા કો દેહરૂપ સ્વીકાર કરને સે કૃતનાશ ઓર અકૃતાભ્યાગમ દોષ કી પ્રાપ્તિ હોગી । કિણ હુણ કર્મ, ફલ દિણ વિના હી નાશ હો જાયગા, ઓર અકૃત કર્મ કે ફલ કો ભોગના પડેગા । કર્મ ન કરને વાલા ફલ ભોગે ઓર કરને વાલા ફલ સે વચ જાય, યહ દોનોં વાતેં અનુચિત્ત હૈ, અતઃ અવ યહ નિશ્ચય કર લેના ચાહિણ કિ-આત્મા શરીર સે ભિન્ન હૈ ઓર જન્માન્તર મેં ગમન કરતા હૈ ।

ચેતનારૂપ આત્મા કેમ પેદા થતો નથી ?, અહિં પાંચ ભૂતોનો સંયોગ વિદ્યમાન છે અને તેમાંથી તમે (નાસ્તિકો) આત્માની ઉત્પત્તિ માનો છો ?

અથવા-મૃત્યુ પામેલા શરીરમાં પાંચ ભૂતોનો સદ્ભાવ હોવા છતાંય ચેતનસ્વરૂપ આત્મા કેમ ઉપલબ્ધ થતો નથી ?, એ કારણથી નિશ્ચય થાય છે કે:-આત્મા જડ સ્વરૂપ પાંચભૂતોથી ભિન્ન છે અને નિત્ય છે.

અને બીજું એ પણ છે કે-આત્માને દેહરૂપ સ્વીકાર કરવાથી કૃતનાશ અને અકૃતાભ્યાગમ દોષની પ્રાપ્તિ થશે, કરેલા કર્મ, ફળ આપ્યા વિના જ નાશ થઈ જશે. અને અકૃત-નહિ કરેલા કર્મનું ફળ ભોગવવું પડશે. કર્મ નહિ કરવાવાળાને કર્મનું ફળ ભોગવવું પડે, અને કર્મ કરનાર ફળ ભોગવવામાંથી બચી જાય. આ બંને વાત અનુચિત છે. એ કારણે એ નિશ્ચય કરી લેવો જોઈએ કે આત્મા શરીરથી ભિન્ન છે, અને જન્માન્તર ગમન કરે છે.



આત્મા દેહે કદાચિત્તિષ્ઠતિ, કદાચિન્ન તિષ્ઠતિ, અતઃ તસ્યાભાવસ્તત્ર નિયતો નાસ્તિ । તસ્માદ્ દેહાદન્ય ઇતિ મન્તવ્યમ્ । એવમનુમાનપ્રયોગઃ—

આત્મા—દેહાદન્યઃ, તદ્ભાવેઽપિ તત્ર તસ્યાનિયમેનાભાવાત્, ઉપાશ્રયગતસાધુ-શ્રાવકવત્ । નનુ દેહે જીવસ્ય ગમનાગમનં ન દૃશ્યતે, તથા ચ જીવસ્ય દેહે સદા સદ્ભાવસત્ત્વેનાભાવરૂપો હેતુરપ્રસિદ્ધ ઇતિ ચેન્ન, મૃતશરીરે તસ્યાદર્શનાત્ ।

યદ્વા—આત્મા દેહેન્દ્રિયભિન્નઃ. તદ્વિગમેઽપિ તદુપલબ્ધાર્થાનુસ્મરણાત્ ।

આત્મા શરીર મેં કમી રહતા હૈ, કમી નહીં રહતા, અતઃ उसका अभाव वहाँ नियत नहीं है । अत एव मानना चाहिए कि—आत्मा देह से भिन्न है । अनुमान का प्रयोग इस प्रकार करना चाहिए :—

આત્મા શરીર સે ભિન્ન હૈ, ક્યોં કિ દેહ કે હોને પર મી આત્મા વહાં નિયમ સે નહીં રહતા, ઉપાશ્રય મેં સ્થિત સાધુ શ્રાવક કે સમાન ।

શંકા—શરીર મેં જીવ કા ગમન ઓર આગમન દિખાઈ નહીં દેતા અતઃ वह देह में सदैव विद्यमान रहता है । ऐसी अवस्था में आप का यह अभाव सिद्ध करने वाला हेतु असिद्ध है ।

સમાધાન—એસા કહના સમીચીન નહીં હૈ, ક્યોં કિ મૃત શરીર મેં આત્મા માલૂમ નહીં હોતા ।

અથવા—આત્મા દેહ ઓર ઇન્દ્રિયો સે ભિન્ન હૈ, ક્યોં કિ उनके नष्ट हो जाने पर भी उनके द्वारा जाने हुए पदार्थ का स्मरण होता है । जैसे जातिस्मरण

આત્મા શરીરમાં કોઈ વખત રહે છે, કોઈ વખત નથી રહેતો તેથી તેનો અભાવ ત્યાં ચોક્કસ રૂપથી નથી. તેથી માનવું જોઈએ કે—આત્મા દેહથી ભિન્ન છે. અનુમાનનો પ્રયોગ આ પ્રમાણે કરવો જોઈએ:—

આત્મા શરીરથી ભિન્ન છે, કેમકે દેહ હોવા છતાંય આત્મા ત્યાં નિયમથી રહેતો નથી, ઉપાશ્રયમાં રહેલા સાધુ શ્રાવક પ્રમાણે.

શંકા—શરીરમાં જીવનું ગમન-જવું, અને આગમન-આવવું તે નજરે જોવામાં આવતું નથી, તેથી તે દેહમાં સદૈવ વિદ્યમાન રહે છે. એવી અવસ્થામાં આપનો એ અભાવ સિદ્ધ કરવાનો હેતુ અસિદ્ધ છે. એમ કહેવું તે ખરાબર નથી, કેમકે મૃત શરીરમાં આત્મા માલૂમ પડતો નથી.

અથવા—આત્મા દેહ અને ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન છે, કારણ કે—તેનો નાશ થયા પછી પણ તેના દ્વારા જાણવામાં આવેલા પદાર્થનું સ્મરણ થાય છે. જેમ જાતિસ્મરણ

યથા-જાતિસ્મરણશક્ત્યા મૃગાપુત્રવત્ સંયમી પૂર્વભવં સ્મરતિ, વ્યાધ્યાદિકારણેન નષ્ટદૃષ્ટિઃ પૂર્વાનુભૂતં રક્તપીતાદિવર્ણં, નષ્ટશ્રવણશ્ચ શબ્દં સ્મરતિ । યથા ગેહગવાથૈઃ પૂર્વદૃષ્ટસ્ય પૂર્વશ્રુતસ્યાન્યત્રાનુસ્મર્તા દેવદત્તઃ ।

### (૨) નિત્યત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા નિત્યત્વાદમૂર્ત્ત્વં ઇતિ વિજ્ઞાયતે । અમૂર્ત્ત્વાચ્ચ દેહાદન્ય ઇતિ નિશ્ચીયતે । તથાહિ-આત્માઽનુત્પત્તૌ સત્યામવિનાશી, તથા સર્વકાલાવસ્થાયી । તથા-આત્મા ક્ષણાપેક્ષ્યાપિ ન નિરન્વયનાશવાન્ ; વસ્તુત્વે સતિ ઉત્પત્તેરભાવાત્ ,

જ્ઞાન સે મૃગાપુત્ર કો પૂર્વ ભવ કા સ્મરણ હુઆ થા । કોઈ-કોઈ સંયમી અપને પૂર્વભવ કા સ્મરણ કરતા હૈ । રોગ આદિ કિસી કારણ સે જિસ કી દૃષ્ટિ નષ્ટ હો ગઈ હૈ, વહ પુરુષ પહેલે અનુભવ કિહ હુએ લાલ પીલે આદિ રંગોં કો સ્મરણ કરતા હૈ, ઓર જિસકે કાન નષ્ટ હો ગયે હૈં વહ શબ્દ કા સ્મરણ કરતા હૈ । કિસી ઘર કી ટિલકિયોં કે દ્વારા પહેલે દેલે હુએ પદાર્થોં કા યા સુને હુએ શબ્દોં કા દેવદત્ત કો અન્યત્ર સ્મરણ હોતા હૈ, અત એવ દેવદત્ત ટિલકિયોં સે મિન્ન હૈ । ઁસી પ્રકાર આત્મા, ઇન્દ્રિયોં સે મિન્ન હૈ ।

### (૨) આત્માકી નિત્યતા—

આત્મા નિત્ય હોને કે કારણ અમૂર્ત્ત પ્રતીત હાતા હૈ ઓર અમૂર્ત્ત હોને કે કારણ દેહ સે મિન્ન હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર-આત્મા ઉત્પત્તિરહિત ઓર અવિનાશી હૈ, તથા સર્વકાલ મેં સ્થાયી હૈ, તથા આત્મા ક્ષણ કી અપેક્ષા મી નિરન્વય ( સમૂલ ) નાશવાન્ નહીં હૈ, ક્યોં કિ વસ્તુ હોને પર મી ઁસ કી ઉત્પત્તિ નહીં હોતી; જૈસે આકાશ ।

જ્ઞાનર્થી મૃગાપુત્રને પૂર્વભવનું સ્મરણ થયું હતું. કોઈ કોઈ સંયમીને પોતાના પૂર્વ ભવનું સ્મરણ થાય છે. રોગ આદિ કોઈ કારણથી જેની દૃષ્ટિ ( નેત્રથી જોવાની શક્તિ ) નાશ પામી ગઈ છે તે પુરુષ પ્રથમ અનુભવેલા લાલ, પીળા આદિ રંગોનું સ્મરણ કરે છે. અને જેના કાન નષ્ટ થઈ ગયા હોય ( સાંભળવાની શક્તિ નાશ પામી હોય ) તે શબ્દનું સ્મરણ કરે છે. કોઈ ઘરની ખડકીઓ દ્વારા પ્રથમ જોયેલા પદાર્થોનું અથવા તે સાંભળેલા શબ્દનું દેવદત્તને અન્યત્ર-ખીજા સ્થળે સ્મરણ થાય છે. એ કારણથી દેવદત્ત ખડકીઓથી ભિન્ન છે. તે પ્રમાણે આત્મા ઇન્દ્રિયોથી ભિન્ન છે.

### (૨) આત્માની નિત્યતા—

આત્મા નિત્ય હોવાના કારણે અમૂર્ત્ત જણાય છે અને અમૂર્ત્ત હોવાના કારણે, દેહથી ભિન્ન છે. તે આ પ્રમાણે-આત્મા ઉત્પત્તિરહિત અને અવિનાશી છે, તથા સર્વ કાલમાં સ્થાયી છે, અને ક્ષણની અપેક્ષા પણ નિરન્વય ( સમૂલ ) નાશવાન્ નથી,

યથા ગગનમ્ । અનુત્પત્તૌ સત્યામવિનાશિત્વેન, તથા સર્વકાલાવસ્થાયિત્વેન, તથા ક્ષણાપેક્ષ્યાઽપિ નિરન્વયનાશાભાવસ્ત્વેન ચાત્મનો નિત્યત્વં સિદ્ધ્યતિ । દેહાત્મવાદિના પરિમિતકાલાવસ્થાયિત્વમાત્મનો મન્યતે, તથા ક્ષણિકવાદિનાપિ નિરન્વય-ક્ષણિકપરિણામપ્રવાહસ્ય નિત્યત્વં સ્વીક્રિયતે । તૌ ચૈવંવિધનિત્યત્વસાધનેન નિરાકૃતૌ । શશશૃંગાદાવપિ જન્માભાવસ્ત્વેન હેતૌ સાધ્યવ્યાપ્તિર્ન સ્યાદતો વસ્તુત્વે સતીત્યુક્તમ્ ।

ન ચામૂર્તત્વસ્ય પરમાણૌ વ્યભિચાર આશંકનીયઃ, આર્હતમતે નિત્ય-

ઉત્પત્તિરહિત ઓર અવિનાશી હોને કે કારણ, તથા સર્વકાલ મેં વિદ્યમાન રહેને કે કારણ ઓર ક્ષણ કી અપેક્ષા મી સમૂલ નાશવાન્ ન હોને કે કારણ આત્મા કી નિત્યતા સિદ્ધ હોતી હૈ । દેહ કો હી આત્મા માનને વાલા કહતા હૈ કિ-આત્મા પરિમિત કાલ તક ઠહરતા હૈ । તથા ક્ષણિકવાદી મી નિરન્વય ક્ષણિક પરિણામ-પ્રવાહ કો નિત્ય માનતા હૈ । ઇસ પ્રકાર આત્મા કી નિત્યતા સિદ્ધ કરકે ઇન દોનોં કે મત કા નિરાકરણ ક્રિયા ગયા હૈ । પ્રસ્તુત હેતુ મેં ‘વસ્તુ હોતે હુણ મી’ યહ વિશેષણ ઇસ લિયે લગાયા હૈ કિ શશ-વિષાળ આદિ સે વ્યભિચાર (હેતુ હો ઓર સાધ્ય ન હો) ન હો, ક્યોં કિ ઉત્પત્તિ કા અભાવ તો ઇન મેં મી હૈ કિન્તુ વસ્તુત્વ ઇન મેં નહીં હૈ ।

અમૂર્તત્વ, પરમાણુ મેં નહીં હૈ ઓર વહાં નિત્યત્વ હેતુ હૈ, ઇસ લિયે પરમાણુ

કેમકે વસ્તુ છતાંય તેની ઉત્પત્તિ નથી હોતી, જેમકે આકાશ. ઉત્પત્તિરહિત અને અવિનાશી હોવાના કારણે, તથા સર્વકાલમાં વિદ્યમાન રહેવાના કારણે, અને ક્ષણની અપેક્ષાએ પણ સમૂળગો નાશવાન નહિ હોવાના કારણે આત્માની નિત્યતા સિદ્ધ થાય છે. દેહને જ આત્મા માનવાવાળા કહે છે કે:-આત્મા પરિમિત કાલ સુધી થોભે છે, તથા ક્ષણિકવાદી પણ નિરન્વય ક્ષણિક-પરિણામપ્રવાહને નિત્ય માને છે. આ પ્રમાણે આત્માની નિત્યતા સિદ્ધ કરીને એ બંને (દેહવાદી અને ક્ષણિકવાદી)ના મતનું નિરાકરણ કર્યું છે. પ્રસ્તુત હેતુમાં “વસ્તુ હોવા છતાંય પણ” એ વિશેષણ એ કારણથી આપ્યું છે કે:-શશ-વિષાળ-(સસલાનાં શિંગડાં) આદિથી વ્યભિચાર (હેતુ હોય અને સાધ્ય ન હોય) ન થાય, કારણ કે ઉત્પત્તિનો અભાવ તો તેમાં પણ છે, પરંતુ વસ્તુત્વ તેમાં નથી.

અમૂર્તત્વ, પરમાણુમાં નથી, અને ત્યાં નિત્યત્વ હેતુ છે, એ કારણથી પરમાણુમાં



ત્વામૂર્ત્યવયોરાત્મન્યેકાન્તતોઽનગ્નીકારાત્ ।

યદ્વા-આત્મા નિત્યઃ સંસારાત્, ત્રિકાલવિષયકક્રિયાપર્યાલોચકત્વાત્, 'સ એષ' इति प्रत्यभिज्ञावत्त्वात् । अनेन हेतुत्रयेण क्षणिकवादो निरस्तः ।

यत्तु-आत्मा-एकान्तनित्यः 'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि' इत्यादिवचनप्रामाण्यात्, 'स एष अक्षयोऽजः' इत्यादिश्रुतिप्रामाण्याच्च, इति, तन्न युक्तम्, आत्मन एकस्वभावत्वे संसर्णादिव्यवहारोच्छेदापत्तिः स्यात् तस्मात् कथञ्चिन्नित्यः कथञ्चिदनित्य इति

में व्यभिचार की आशङ्का नहीं करना, क्योंकि आत्मा में नित्यत्व और अमूर्तत्व एकान्त रूप से नहीं माना गया है ।

अथवा-आत्मा नित्य है, क्योंकि वह एक गति से दूसरी गति में जाता है, क्योंकि वह त्रिकालविषयक क्रियाका आलोचक है, और वह प्रत्यभिज्ञान ( यह वही है इस प्रकार का जोड़रूप ज्ञान ) वाला है । इन तीन हेतुओं से क्षणिकवादका निराकरण हो गया ।

'नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि' इत्यादि वचन से और 'स एषः अक्षयोऽजः' इत्यादि श्रुति के प्रमाण से आत्मा एकान्त नित्य सिद्ध होता है । ऐसा कहना भी युक्त नहीं है, क्योंकि आत्मा को एकान्त नित्य स्वभाव वाला मानने से संसर्ग ( एक जन्म से दूसरे जन्म में जाना ) आदि व्यवहारों का नाश हो जायगा । अत एव कथञ्चित् नित्य और कथञ्चित् अनित्य आत्मा स्वीकार करना चाहिए ।

વ્યભિચારની આશંકા કરવી નહિ. કારણ કે આત્મામાં નિત્યત્વ અને અમૂર્તત્વ એકાન્તરૂપથી માનવામાં આવ્યું નથી.

અથવા—આત્મા નિત્ય છે, કારણ કે તે એક ગતિથી બીજી ગતિમાં જાય છે, કારણ કે—તે ત્રિકાળવિષયક ક્રિયાનો આલોચક (વિચાર કરનાર) છે, અને તે પ્રત્યભિજ્ઞાન ('આ તેજ છે' એ પ્રકારનું જોડરૂપ જ્ઞાન) વાળો છે. આ ત્રણ હેતુઓ વડે કરી ક્ષણિકવાદનું નિરાકરણ થઈ ગયું છે.

"નૈનં છિન્દન્તિ શસ્ત્રાણિ" ઇત્યાદિ વચનથી અને 'સ એષ અક્ષયોઽજઃ' ઇત્યાદિ શ્રુતિના પ્રમાણથી આત્મા એકાન્ત નિત્ય સિદ્ધ થાય છે. એમ કહેવું તે પણ યુક્ત નથી, કારણ કે આત્માને એકાન્ત નિત્ય સ્વભાવ વાળો માનવાથી સંસરણ (એક જન્મથી બીજા જન્મમાં જવું તે) આદિ વ્યવહારોનો નાશ થઈ જશે, એ કારણથી કથંચિત્ નિત્ય અને કથંચિત્ અનિત્ય આત્મા છે. એ પ્રમાણે સ્વીકાર કરવો જોઈએ.

સ્વીકર્તવ્યમ્ । દ્રવ્યાર્થિકનયેન નિત્યઃ, પર્યાયાર્થિકનયેન-અનિત્ય ઇતિ ।  
 એવમનજ્ઞીકારે હિ 'સંસારા'—દિવ્યાદ્યુક્તહેતૂનામસંગતિઃ સ્યાત્ । આત્મન  
 એકસ્વભાવસ્વીકારે સ્વભાવાન્તરાનાપત્યા વર્તમાનકાલિકભાવાતિરિક્તં ભાવાન્તરં ન  
 લબ્ધુર્મર્હેત્ । એવમનિત્યત્વામૂર્તત્વયોરપિ સ્યાદ્વાદ આલમ્બનીયઃ, અન્યથા વ્યવહારોચ્છેદ-  
 પ્રસંગઃ સ્યાત્, એકાન્તામૂર્તસ્ય, તથૈકાન્તતો દેહભિન્નસ્ય ચાતિપાતાદિપ્રસંગાભાવે  
 સતિ હિંસાદિનિવૃત્તિદેશનાદિપરકચરણકરણાદિબોધકસકલશાસ્ત્રાનર્થક્યં, તથાઽઽત્મનઃ  
 સંસારગર્તાદિનુદ્ધારશ્ચ સ્યાત્ ।

આત્મા દ્રવ્યાર્થિકનય સે નિત્ય હૈ ઓર પર્યાયાર્થિકનય સે અનિત્ય હૈ । એસા  
 સ્વીકાર ન કરને પર 'સંસરણ કરને સે' ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત હેતુ અસંજ્ઞત હો જાયેંગે ।  
 એક સ્વભાવ વાલા આત્મા સ્વીકાર ક્રિયા જાય તો ઉસ મેં દૂસરે સ્વભાવ કી ઉત્પત્તિ  
 નહીં હોગી, ઓર વર્તમાનકાલીન ભાવ કે અતિરિક્ત દૂસરા ભાવ કમી પ્રાપ્ત નહીં હોગા ।  
 હસી પ્રકાર અનિત્યત્વ ઓર અમૂર્તત્વ કે વિષય મેં મી સ્યાદ્વાદકા હી આશ્રય લેના ચાહિયે,  
 અન્યથા વ્યવહાર કે અભાવ કા પ્રસંગ આવેગા । આત્મા કો એકાન્ત અમૂર્ત માનને સે,  
 તથા દેહ સે એકાન્ત ભિન્ન માનને સે ઉસ કા ઘાત હોના અસંભવ હૈ, ઓર હસ દિશા મેં  
 હિંસા આદિ સે નિવૃત્ત હોને કા ઉપદેશ દેને વાલે ચરણ-કરણ આદિ કે બોધક સબ  
 શાસ્ત્ર વ્યર્થ હો જાયેંગે । હસ કે અતિરિક્ત આત્મા કા સંસારરૂપી સ્વડુંડે સે કમી ઉદ્ધાર  
 મી નહીં હોગા ।

આત્મા દ્રવ્યાર્થિક નયથી નિત્ય છે, અને પર્યાયાર્થિક નયથી અનિત્ય છે. એ  
 પ્રમાણે સ્વીકાર નહિ કરવાથી 'સંસરણ કરવાથી' ઇત્યાદિ પૂર્વોક્ત હેતુ અસંગત  
 થઈ જશે. એક સ્વભાવવાળો આત્મા સ્વીકાર કરવામાં આવશે તો તેમાં બીજા  
 સ્વભાવની ઉત્પત્તિ નહિ થાય, અને વર્તમાનકાલીન ભાવ વિના બીજો ભાવ કોઈ પણ  
 વખત પ્રાપ્ત નહિ થાય, એ પ્રમાણે અનિત્યત્વ અમૂર્તત્વના વિષયમાં પણ સ્યાદ્વાદનો જ  
 આશ્રય લેવો જોઈએ. અન્યથા વ્યવહારના અભાવનો પ્રસંગ આવશે. આત્માને એકાન્ત  
 અમૂર્ત માનવાથી તથા દેહથી એકાન્ત ભિન્ન માનવાથી તેનો ઘાત થવો અસંભવ  
 છે, અને એ દશામાં હિંસા આદિથી નિવૃત્ત થવાનો ઉપદેશ દેવાવાળા ચરણ-કરણ  
 આદિના બોધક તમામ શાસ્ત્રો વ્યર્થ થઈ જશે. તે સિવાય આત્માનો સંસારરૂપી  
 ખાડાથી કોઈ વખત પણ ઉદ્ધાર નહિ થાય.

यद्वा-आत्मा नित्यः स्वकारणविभागाभावाद् आकाशवत् । आकाशस्य कारणाभावादेव कारणविभागो नास्ति । यस्तु न नित्यः, स न स्वकारणविभागाभाववान्, यथा पटः । दृश्यते हि पटस्तन्तूनां विभागो भवतीति ।

किञ्च-आत्मा नित्यः कारणविनाशाभावाद् आकाशवदेव । कारणाभावादेव हि कारणस्य विनाशाभावः, यथा गगनमेव । यो न नित्यः, स न कारणविनाशाभाववान् अर्थात् कारणविनाशवानेव, यथा पटः । दृश्यते हि पटकारणीभूतस्य तन्तोर्विनाशो भवतीति । अयं चात्मा स्वकारणाभावेन कारणविनाशाभाववान्, तस्मान्नित्य इति । नित्यत्वादयममूर्तः, अमूर्तत्वाच्च शरीराद् भिन्न इति निश्चीयते ।

अथवा-आत्मा नित्य है, क्यों कि उस के कारणों का विभाग नहीं है, जैसे आकाश । आकाश के कारणों का अभाव है, इसी कारण उसके कारणों का विभाग भी नहीं है । जो नित्य नहीं है, वह अपने कारणों के विभाग का अभाव वाला भी नहीं होता जैसे-पट । पट से तन्तुओं का विभाग होता दिखाई देता है ।

और भी-आत्मा नित्य है, क्यों कि उसके कारणों के विनाश का अभाव है, जैसे-आकाश । कारणों का अभाव होने से ही कारणों के विनाश का अभाव है जैसे आकाश । जो नित्य नहीं होता वह कारण-विनाशभाव वाला भी नहीं होता, जैसे पट, देखा जाता है कि-पट के कारणभूत तन्तुओं का नाश हो जाता है । आत्मा के जनक कारणों का अभाव है अतः वह कारणों के विनाशका अभाव वाला है, अर्थात् आत्मा के कारण ही नहीं हैं तो उसके कारणों का अभाव क्या होगा ?

अथवा-आत्मा नित्य છે, કેમકે તેના કારણોનો વિભાગ નથી, જેમ આકાશ. આકાશને કારણોનો અભાવ છે તેથી જ તેના કારણોનો વિભાગ પણ નથી. જે નિત્ય નથી તે પોતાના કારણોના વિભાગના અભાવવાળો પણ નહિ થાય, જેમ પટ. પટથી તંતુઓનો વિભાગ થતો જોવામાં આવે છે.

ફરી પણ-આત્મા નિત્ય છે. કારણ કે તેના કારણોના વિનાશનો અભાવ છે, જેમ આકાશ. કારણોનો અભાવ હોવાથી જ કારણોના વિનાશનો અભાવ છે. જેમ આકાશ જે નિત્ય નથી તે કારણવિનાશભાવવાળું પણ નથી, જેમ પટ. જોવામાં આવે છે કે-પટના કારણભૂત તંતુઓનો નાશ થાય છે. પણ આત્માના જનક કારણોનો અભાવ છે, તેથી તે કારણોના વિનાશનો અભાવવાળો છે, અર્થાત્ આત્માને



પરન્ત્વેકાન્તનિત્યત્વે, એકસ્યાત્મનો નારકતિર્યઙ્મનુષ્યદેવગતિપરિણામા નોપપદ્યેત્ । એકાન્તક્ષણિકત્વેઽપિ સ્વાધ્યાયાધ્યયનધ્યાનાદિપરિશ્રમપ્રત્યભિજ્ઞાનં નોપપદ્યેત્ । તસ્માદાત્મા કથશ્ચિન્નિત્યઃ, કથશ્ચિદનિત્યઃ, इत्यवश्यं स्वीकरणीयम् ।

યત્તુ—“દ્રવ્યક્ષેત્રકાલભાવૈરેકાન્તેનૈવ નિત્યઃ, અવિચલિતસ્વભાવ આત્મે”—તિ વદન્તિ તત્સર્વમયુક્તમ્ । તથા સતિ સુખદુઃખસંસારમોક્ષાણામનુપપત્તિરાપદ્યેત્ । તત્ર હિ આહ્વાદાનુભવરૂપં ક્ષણં સુખં, તાપાનુભવરૂપં દુઃખમ્, તિર્યઙ્મનુષ્યનારક-દેવભવસંસરણરૂપઃ સંસારઃ, અષ્ટવિધકર્મબન્ધવિયોગો મોક્ષઃ । એકાન્તવાદ-  
હસ લિખે આત્મા નિત્ય છે । આત્મા નિત્ય હોને કે કારણ અમૂર્ત છે, ઓર અમૂર્ત હોને કે કારણ શરીર સે ભિન્ન છે ।

કિન્તુ આત્મા કો એકાન્ત નિત્ય માનને પર એક હી આત્મા નરક તિર્યઙ્, મનુષ્ય ઓર દેવગતિરૂપ નાના પર્યાયોં કો પ્રાપ્ત નહીં હોગા । ઓર એકાન્ત ક્ષણિક માનને પર મી સ્વાધ્યાય, અધ્યયન; ધ્યાન આદિ કા પરિશ્રમ વૃથા હો જાયગા, ઓર પ્રત્યભિજ્ઞાન કા અભાવ હો જાયગા । અતઃ એવ આત્મા કથંચિત્ નિત્ય ઓર કથંચિત્ અનિત્ય છે, એસા અવશ્ય સ્વીકાર કરના ચાહિયે ।

જો લોગ દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ ઓર ભાવ સે આત્મા કો એકાન્ત નિત્ય અવિચલ સ્વભાવ વાળા માનતે હૈ, વહ સર્વ અયુક્ત છે । એસા માનને સે સુખ, દુઃખ, સંસાર ઓર મોક્ષ નહીં બન સકતે । આહ્વાદ કા અનુભવ કરનારૂપ ક્ષણ સુખ કહલાતા છે । સંતાપ કા અનુભવ કરના દુઃખ છે । તિર્યઙ્, મનુષ્ય, નારક ઓર દેવ ભવ મેં જાના સંસાર છે । આઠ પ્રકાર કે કર્મબન્ધ કા વિયોગ હોના મોક્ષ છે । એકાન્તવાદ

કારણ જ નથી તે પછી તેના કારણોનો અભાવ શું થશે? એ કારણથી આત્મા નિત્ય છે. આત્મા નિત્ય હોવાના કારણે અમૂર્ત છે. અને અમૂર્ત હોવાના કારણે શરીરથી ભિન્ન છે.

પરંતુ આત્માને એકાન્ત નિત્ય માનવાથી એક જ આત્મા નરક, તિર્યંચ, મનુષ્ય અને દેવગતિરૂપ નાના પર્યાયોને પ્રાપ્ત નહિ થાય, અને એકાન્ત ક્ષણિક માનવાથી પણ સ્વાધ્યાય, અધ્યયન, ધ્યાન આદિનો પરિશ્રમ વૃથા થઈ જશે, અને પ્રત્યભિજ્ઞાનનો અભાવ થઈ જશે, એ કારણથી આત્મા કંથચિત્ નિત્ય અને કંથચિત્ અનિત્ય છે. એ પ્રમાણે જરૂર સ્વીકારવું જોઈએ.

જે માણસો દ્રવ્ય, ક્ષેત્ર, કાલ અને ભાવથી આત્માને એકાન્ત નિત્ય, અવિચલ સ્વભાવ વાળો માને છે, તે સર્વ અયુક્ત છે. એ પ્રમાણે માનવાથી સુખ, દુઃખ સંસાર અને મોક્ષ બની શકશે નહિ. આહ્વાદનો અનુભવ કરવારૂપ ક્ષણ સુખ કહેવાય છે. સંતાપનો અનુભવ કરવો તે દુઃખ છે. તિર્યંચ, મનુષ્ય, નારકી અને દેવભવમાં જવું તે સંસાર છે, આઠ પ્રકારના કર્મ બંધનો વિયોગ થવો તે મોક્ષ છે. એકાન્તવાદ

समालम्बने तु सुखदुःखादयः सर्वे आत्मनोऽप्रच्युतानुत्पन्नस्थिरैकस्वभावतयाऽ-  
न्यथात्वरूपपरिणामासंभवान्नोपपद्येरन्, नारकत्वादिभावो यस्य यादृशो विद्यते,  
तदन्यरूपतां नासौ प्रपद्येत ।

भावतोऽप्रसन्नस्यात्मनः पूर्वरूपापरित्यागे सति पुनः प्रसन्नरूपताया  
असंभवः स्यात् । दृश्यते पुनरप्रसन्नस्य कदाचित् प्रसन्नताऽपि, सा नोपपद्येत ।  
तस्मादेकान्तवादं परित्यज्यानेकान्तवादः समालम्बनीयः ।

### (३) चेतनावत्त्वरूपणम्—

अयमात्मा निश्चयनयेन शुद्धचेतनासहितः, व्यवहारनयेन च कर्मादि  
स्वीकार करने पर आत्मा अप्रच्युत, अनुत्पन्न और स्थिर एकरूप तथा एक स्वभाव  
वाला होने के कारण, और उसमें रूपान्तर होना असंभव होने से सुख दुःखादि नहीं  
होंगे, अतः विभिन्न अवस्थाएँ भी नहीं हो सकेंगी, फिर जो आत्मा नारकत्वादि  
जिस रूप में है वह सर्वदा उसी रूप में रहेगी—एक भव से दूसरे भव में नहीं जा  
सकेगी । जो आत्मा अप्रसन्न है, मगर अप्रसन्न का भी कभी प्रसन्न होना दिखाई देता है,  
फिर ऐसा न हो सकेगा । अत एव एकान्तवाद का त्याग करके अनेकान्तवाद का आश्रय  
लेना चाहिए ।

### ( ३ ) चेतनावत्त्व—

यह आत्मा निश्चयनय से शुद्ध चेतना से युक्त है और व्यवहारनय से  
स्वीकार करवाती आत्मा अप्रच्युत, अनुत्पन्न अने स्थिर ऐकरूप तथा एक स्वभाव  
वाला होवाना कारणे तेमां रूपान्तर भवुं असंभवित होवाती सुख-दुःखादि नहि  
होय. ते कारण्वा विभिन्न अवस्थाओ पणु थर्ध शकशे नहि. इरी जे आत्मा  
नारकत्वादि जे रूपमां छे, ते सर्वदा ते रूपमां ज रहेशे. ओटले ओक लवमांथी  
भील लवमां जर्ध शकशे नहि. वणी जे आत्मा अप्रसन्न छे ते पोताना पूर्वरूपनो  
परित्याग न करे तो तेने इरी प्रसन्नतामां आववुं ते असंभव छे, परंतु अप्रसन्न  
पणु कोठ वणत प्रसन्न होय ओम हेभाय छे; इरी ओम नहि थर्ध शकशे. ओ  
कारण्वा अनेकान्तवादनो त्याग करीने अनेकान्तवादनो आश्रय लेवो जेधओ.

### (३) चेतनावत्त्व—

आ आत्मा निश्चयनयथी शुद्ध चेतनाथी युक्त छे अने व्यवहारनयथी 'आत्माने

પીડયત્યાત્માનમિતિ જ્ઞાનરૂપાશુદ્ધચેતનયા સહિતચેતનાવાનિત્યુચ્યતે । ચેતનાવાનિતિ કથશ્ચિદુચ્યતે; આત્મા વસ્તુતથેતનાસ્વરૂપ એવાસ્તિ । આત્મનો ગુણચેતનેતિ સર્વેષાં મતં, તદભિપ્રાયેણ ચેતનાવાનિત્યુક્તમ્ । ચેતના દ્વિવિધા—શુદ્ધા, અશુદ્ધા ચેતિ । જ્ઞાનચેતનૈવ શુદ્ધચેતના । કર્મચેતના, તથા કર્મફલચેતના ચાશુદ્ધચેતનોચ્યતે ।

#### (૪) ઉપયોગવત્ત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા નિશ્ચયનયેન કેવલજ્ઞાનકેવલદર્શનરૂપાભ્યાં શુદ્ધોપયોગાભ્યાં સહિતો વ્યવહારનયેન મતિજ્ઞાનાદુપયોગયુક્તશ્ચેત્યતોડયમુપયોગવાનિત્યુચ્યતે ।

‘આત્મા કો કર્મ પીડિત કરતે હૈં’ इस प्रकार के ज्ञानरूप अशुद्ध चेतना से युक्त है, अत एव आत्मा चेतनावान् कहलाता है । आत्मा को किसी अपेक्षा से ही चेतनावान् कहते हैं, वास्तव में तो आत्मा चेतनारूप ही है । ‘चेतना आत्मा का गुण है’ ऐसा सबका मत है, इसी अभिप्राय से उसे चेतनावान् कह दिया है । चेतना दो प्रकार की है—शुद्ध चेतना और अशुद्ध चेतना । ज्ञान चेतना ही शुद्ध है । कर्मचेतना और कर्म-फलचेतना अशुद्ध चेतना है ।

#### ( ૪ ) ઉપયોગવત્ત્વ—

यह आत्मा निश्चयनय से केवलज्ञान और केवलदर्शनरूप शुद्ध उपयोगों से युक्त है । व्यवहारनय से मतिज्ञान आदि उपयोगों से युक्त है, अत एव आत्मा उपयोगवान् कहलाता है ।

કર્મો પીડિત કરે છે’ એ પ્રકારના જ્ઞાનરૂપ અશુદ્ધ ચેતનાથી યુક્ત છે એટલા માટે આત્મા ચેતનવાન્ કહેવાય છે. આત્માને કેઈ અપેક્ષાથી જ ચેતનવાન્ કહે છે, વાસ્તવમાં તો આત્મા ચેતનારૂપ જ છે. ‘ચેતના આત્માનો ગુણ છે’ એ પ્રમાણે સર્વનો મત છે. એ અભિપ્રાયથી તેને ચેતનાવાન્ કહી દીધો છે. ચેતના બે પ્રકારની છે. (૧) શુદ્ધ-ચેતના અને (૨) અશુદ્ધ-ચેતના. જ્ઞાનચેતના જ શુદ્ધ છે, કર્મચેતના અને કર્મફલચેતના તે અશુદ્ધ-ચેતના છે.

#### (૪) ઉપયોગવત્ત્વ—

આ આત્મા નિશ્ચયનયથી કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શનરૂપ શુદ્ધ ઉપયોગોથી યુક્ત છે. વ્યવહારનયથી મતિજ્ઞાન આદિ ઉપયોગોથી યુક્ત છે. એ કારણે આત્મા ઉપયોગવાન્ કહેવાય છે.



अयमात्मा ज्ञानदर्शनोपयोगाम्यां न भिन्न इति बोधयितुमुपयोगवानिति, इदं च ज्ञानात्मनोरेकान्तभेद इति नैयायिकमतं निराकर्तुमुक्तम् । सर्वज्ञ-सिद्धान्ते तु द्रव्यं वस्तुतो गुणपर्यायेभ्यो न भिन्नम्, अतः कथञ्चित् भेद-विवक्षयाऽऽश्रयिभावं परिकल्प्य-उपयोगवानिति निगदितम् ।

उपयोगो द्विधा-ज्ञानदर्शनभेदात् । सविकल्प उपयोग एव ज्ञानोपयोगः, । निर्विकल्प उपयोगो दर्शनोपयोगः । तत्र ज्ञानोपयोगोऽष्टविधः-मतिश्रुतावधिमनःपर्यय-केवलानि पञ्च सम्यग्ज्ञानानि, मति-श्रुत-विभंग-भेदेन त्रीण्यज्ञानानि चेति । अज्ञानान्यपि ज्ञानरूपतया ज्ञानवर्गे निक्षिप्तानि । अत्रैकमेव केवलज्ञानं क्षायिकं सर्वा-

‘आत्मा ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग से भिन्न नहीं है’ यह बतलाने के लिए उसे उपयोगवान् कहा है । ‘ज्ञान और आत्मा का एकान्त भेद है’ ऐसा नैयायिकों का मत है । इस मत का निराकरण करने के लिए यह कथन किया गया है । सर्वज्ञ के सिद्धान्त में द्रव्य वास्तव में गुण और पर्यायों से भिन्न नहीं है, अतः कथञ्चित् भेद की विवक्षा करके आधाराधेय भाव की कल्पना से उपयोगवान् कहा है ।

उपयोग के दो भेद हैं—ज्ञानोपयोग और दर्शनोपयोग । सविकल्प उपयोग को ज्ञानोपयोग कहते हैं और निर्विकल्प उपयोग दर्शनोपयोग कहलाता है । इनमें से ज्ञानोपयोग आठ प्रकार का है—(१) मतिज्ञान, (२) श्रुतज्ञान, (३) अवधिज्ञान, (४) मनःपर्ययज्ञान, (५) केवलज्ञान, (६) कुमतिज्ञान, (७) कुश्रुतज्ञान और (८) विभङ्गज्ञान, अन्तर्गत तीन अज्ञान कहलाते हैं । ये विपरीतज्ञानरूप होने के कारण इन्हें ज्ञान की कोटि में रखा है । इनमें

आत्मा ज्ञानोपयोग અને દર્શનોપયોગથી ભિન્ન નથી, એ બતાવવા માટે જ તેને ઉપયોગવાનું કહ્યો છે. ‘જ્ઞાન અને આત્માનો એકાન્ત ભેદ છે’ એવો નૈયાયિકોનો મત છે, એ મતનું નિરાકરણ કરવા માટે એ કથન કરવામાં આવ્યું છે. સર્વજ્ઞના સિદ્ધાન્તમાં દ્રવ્ય એ વાસ્તવમાં ગુણ અને પર્યાયોથી ભિન્ન નથી, તેથી કંઈકિત્ ભેદની વિવક્ષા કરીને આધારાધેય ભાવની કલ્પનાથી ઉપયોગવાનું કહ્યો છે.

ઉપયોગના બે ભેદ છે—(૧) જ્ઞાનોપયોગ અને (૨) દર્શનોપયોગ, સવિકલ્પ ઉપયોગને જ્ઞાનોપયોગ કહે છે, અને નિર્વિકલ્પ ઉપયોગ તે દર્શનોપયોગ કહેવાય છે. તેમાં જ્ઞાનોપયોગ આઠ પ્રકારનો છે. (૧) મતિજ્ઞાન, (૨) શ્રુતજ્ઞાન, (૩) અવધિજ્ઞાન, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાન, (૫) કેવલજ્ઞાન, તથા (૬) કુમતિજ્ઞાન, (૭) કુશ્રુતજ્ઞાન અને (૮) વિભંગજ્ઞાન. તેમાં છેવટના ત્રણ અજ્ઞાન કહેવાય છે. પરંતુ વિપરીતજ્ઞાનરૂપ હોવાના કારણે તેને જ્ઞાનની કોટિમાં રાખ્યા છે. એમાં એક

વરણરહિતં સર્વતઃ શુદ્ધમસ્તિ । અન્યાનિ મતિજ્ઞાનાદિકાનિ ચત્વારિ જ્ઞાનાનિ ક્ષાયો-  
પશમિકાનિ દેશતઃ આવરણરહિતાનિ દેશતઃ શુદ્ધાનિ । ત્રીણ્યજ્ઞાનાન્યશુદ્ધાનિ ।  
દર્શનોપયોગસ્ય ચત્વારો ભેદાઃ— (૧) ચક્ષુર્દર્શનમ્, (૨) અચક્ષુર્દર્શનમ્, (૩)  
અવધિદર્શનમ્, (૪) કેવલદર્શનં ચ । તત્રૈકં કેવલદર્શનં ક્ષાયિકં સર્વતોઽનાવરણં  
સર્વતઃ શુદ્ધં ચ । ચક્ષુર્દર્શનાદીનિ ત્રીણિ ક્ષાયોપશમિકાનિ દેશતોઽનાવરણાનિ  
દેશતઃ શુદ્ધાનિ ચ સન્તિ ।

‘જ્ઞાનાદિગુણતઃ સર્વથા ભિન્ન આત્મે’ તિ નૈયાયિકાઘભિમતં તુ ન યુક્તમ્,  
જ્ઞાનાદિગુણસમ્બન્ધાત્ પ્રાક્ કદાચિદ્ જ્ઞાનાદિગુણહીનોઽપ્યાસીદિતિ તસ્ય મતે  
એક માત્ર કેવલજ્ઞાન ક્ષાયિક હૈ, સમ્પૂર્ણ આવરણ સે રહિત ઓર પૂર્ણ શુદ્ધ હૈ । શેષ મતિજ્ઞાન  
આદિ ચાર જ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક હૈ, દેશતઃ આવરણરહિત હૈ ઓર દેશતઃ શુદ્ધ હૈ । તીનો  
કુજ્ઞાન અશુદ્ધ હૈ ।

દર્શનોપયોગ કે ચાર ભેદ હૈ—(૧) ચક્ષુર્દર્શન, (૨) અચક્ષુર્દર્શન, (૩) અવધિદર્શન  
ઓર (૪) કેવલદર્શન । ઇનમેં સે અકેલા કેવલદર્શન ક્ષાયિક હૈ, પૂર્ણ રૂપ સે આવરણરહિત હૈ  
ઓર પૂર્ણરૂપ સે શુદ્ધ હૈ । ચક્ષુર્દર્શન આદિ ત્રીન ક્ષાયોપશમિક હૈ, દેશતઃ નિરાવરણ  
હૈ, ઓર દેશતઃ શુદ્ધ હૈ ।

‘આત્મા જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે સર્વથા ભિન્ન હૈ’ એસા નૈયાયિક આદિ કા મત યુક્ત  
નહીં હૈ, ક્યોં કિ જ્ઞાનાદિ ગુણોં કા સમ્બન્ધ હોને સે પહેલે કિસી સમય આત્મા કો  
જ્ઞાનાદિ ગુણોં સે રહિત ભી જ્ઞાનના પડેગા ઓર ઇસ પ્રકાર ઊન કે મત મેં આત્મા જડ  
માત્ર કેવલજ્ઞાન ક્ષાયિક છે, સંપૂર્ણ આવરણથી રહિત અને પૂર્ણ શુદ્ધ છે. બાકીનાં  
મતિજ્ઞાન આદિ ચાર જ્ઞાન ક્ષાયોપશમિક છે, દેશ થકી આવરણરહિત છે. અને દેશ  
થકી શુદ્ધ છે, ત્રણ કુજ્ઞાન અશુદ્ધ છે.

દર્શનોપયોગના ચાર ભેદ છે—(૧) ચક્ષુર્દર્શન, (૨) અચક્ષુર્દર્શન, (૩) અવધિ-  
દર્શન અને (૪) કેવલદર્શન. તેમાંથી એક કેવલદર્શન ક્ષાયિક છે. પૂર્ણરૂપથી આવરણ-  
રહિત છે, અને પૂર્ણરૂપથી શુદ્ધ છે. ચક્ષુર્દર્શન આદિ ત્રણ ક્ષાયોપશમિક છે, દેશ  
થકી નિરાવરણ છે અને દેશ થકી શુદ્ધ છે.

“આત્મા જ્ઞાનાદિ ગુણોથી સર્વથા ભિન્ન છે.” એવો નૈયાયિક આદિનો મત  
યુક્ત નથી—ઉચિત નથી, કારણ કે જ્ઞાનાદિ ગુણોનો સંબંધ થયા પહેલાં કોઈ સમય  
આત્માને જ્ઞાનાદિ ગુણોથી રહિત પણ માનવો પડશે, અને એ પ્રમાણે તેના મતમાં

जडरूपत्वापत्तिः । आत्मनि ज्ञानस्य नित्यानादिसम्बन्धस्वीकारेऽपि पदार्थद्वय-  
कल्पनायां पुनस्तत्सम्बन्धरूपसमवायस्य कल्पनायां महद् गौरवम्, तस्माद्  
गुणगुणिनोर्वस्तुतस्तादात्म्यस्वीकार एवौचित्यमर्हति । यदि गुणगुणिनोरभेद  
एव समवायोऽपीत्युच्येत तर्हि नास्ति काऽपि क्षतिः । उक्तञ्च—

“ गुणपर्ययतादात्म्यः—विशिष्टं द्रव्यमुच्यते ।

उत्पत्तिव्ययनैयत्व, —पर्यायास्तस्य शाश्वताः ॥ १ ॥ ” इति ।

(५) परिणामित्वनिरूपणम्—

अयमात्मा परिणामी । प्रतिसमयमपरापरपर्यायेषु गमनं परिणामः,

हो जायगा । आत्मा में ज्ञान का नित्य-अनादि सम्बन्ध स्वीकार किया जाय तो दो  
पदार्थ मानने पड़ेंगे, और उन दोनों अर्थात् आत्मा और ज्ञान को सम्बद्ध करने के लिए  
तीसरा समवाय सम्बन्ध मानना होगा, यह बड़ा गौरव होगा । अत एव गुण और गुणीका  
वास्तव में तादात्म्य सम्बन्ध स्वीकार करना ही उचित है । अगर गुण और गुणी के  
अभेद को ही समवाय सम्बन्ध कहते हो तो उसे स्वीकार करने में कोई हानि नहीं है ।  
कहा भी है :—

“ जो गुण और पर्याय के तादात्म्य से युक्त हो वह द्रव्य कहलाता है । उस द्रव्य  
की पर्यायें सदा उत्पत्ति और विनाशवाली हैं, और वे अनादिप्रवाहरूप हैं ” ॥ १ ॥

( ५ ) आत्मा का परिणामीपन—

आत्मा परिणामी है । प्रत्येक समय एक पर्याय को छोड़कर दूसरा पर्याय

आत्मा જડ થઈ જશે. આત્માને વિષે જ્ઞાનનો નિત્ય-અનાદિ સંબંધ સ્વીકાર કરવામાં  
આવે તો બે પદાર્થ માનવા પડશે, અને તે બંને અર્થોત્ આત્મા અને જ્ઞાન તે  
બંને ને સમબદ્ધ કરવા માટે ત્રીજો કોઈ સમવાય સંબંધ માનવો પડશે. એ ભારે  
ગૌરવ થશે. તે કારણથી ગુણ અને ગુણીનો વાસ્તવમાં તાદાત્મ્ય સંબંધ સ્વીકાર  
કરવો એજ ઉચિત છે. અથવા ગુણ-ગુણીના અભેદને જ સમવાય સંબંધ કહો તો  
તેનો સ્વીકાર કરવામાં કોઈ પ્રકારે હાનિ નથી. કહ્યું પણ છે :—

‘ જે ગુણ અને પર્યાયના તાદાત્મ્યથી યુક્ત હોય તે દ્રવ્ય કહેવાય છે તે દ્રવ્યની  
પર્યાયો સદાય ઉત્પત્તિ અને વિનાશ વાળી છે, અને તે અનાદિપ્રવાહરૂપ છે. ’ ॥ ૧ ॥

( ૫ ) આત્માનું પરિણામીપણું—

આત્મા પરિણામી છે. પ્રત્યેક સમય એક પર્યાયને છોડી બીજો પર્યાય ધારણ  
કરવો તે પરિણામ કહેવાય છે. તે પરિણામ જેમાં હોય તે પરિણામી કહેવાય છે.



સોડસ્યાસ્તીતિ પરિણામી । અનેન 'આત્મા કૂટસ્થનિત્યઃ' ઇતિ મતં નિરાકૃતમ્ । 'આત્મા કૂટસ્થનિત્યઃ' ઇતિ સ્વીકારે પૂર્વદશાયાં યથાવિધ આત્મા, તથાવિધ એવ જ્ઞાનોત્પત્તિસમયેડપિ ભવેત્, તદા પૂર્વમવિજ્ઞાતાત્મા કથં પદાર્થવિજ્ઞાતા સ્યાત્, પ્રતિનિયતસ્વરૂપસ્યાપ્રચ્યુતિરૂપતા કૌટસ્થ્યમિતિ સ્વીકારાત્ । યદિ તદા પદાર્થ-વિજ્ઞાતૃત્વં સ્વીક્રિયતે તદા પૂર્વમવિજ્ઞાતુર્વિજ્ઞાતૃરૂપત્વે પરિણામાપત્ત્યા તન્મતે કૌટસ્થ્ય-ભજ્ઞઃ । તસ્માદાત્મનઃ પરિણામિત્વમવશ્યં સ્વીકરણીયમ્ ।

### (૬) પ્રભુત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા નિશ્ચયનયેન મોક્ષતત્કારણરૂપશુદ્ધપરિણામાર્થ પરિણમન-

ધારણ કરના પરિણામ કહણતા હૈ । યહ પરિણામ જિસ મેં હો વહ પરિણામી । હિસ વિશેષણ સે આત્મા કી કૂટસ્થનિત્યતા કા નિરાકરણ ક્રિયા ગયા હૈ । આત્મા કૂટસ્થ નિત્ય હૈ, ઇસા સ્વીકાર કરને પર આત્મા જૈસા પહેલે અજ્ઞાતા થા વૈસા હી જ્ઞાન કી ઉત્પત્તિ કે સમય મી રહેગા । ઇસી દશા મેં આત્મા પહેલે અજ્ઞાતા થા તો બાદ મેં પદાર્થોં કા જ્ઞાતા કૈસે હોગા ?, ક્યોં કિ આપ કે મત કે અનુસાર પ્રતિનિયત સ્વરૂપ સે ચ્યુત ન હોના—જૈસા કા તૈસા હી બના રહના—કૂટસ્થતા હૈ । અગર બાદ મેં આત્મા કો પદાર્થોં કા જ્ઞાતા સ્વીકાર કરતે હો તો પહેલે જો અજ્ઞાતા થા, ઉસ કા જ્ઞાતા કે રૂપ મેં પરિણમન હો ગયા અતઃ કૂટસ્થનિત્યતા નષ્ટ હો ગઈ । અત એવ આત્મા કો પરિણામી અવશ્ય માનના યાહિયે । આત્મા કૂટસ્થ નિત્ય નહીં વરન્ પરિણામી નિત્ય હૈ ।

### (૬) આત્મા કા પ્રભુત્વ—

નિશ્ચયનય સે આત્મા મોક્ષ ઓર મોક્ષ કે કારણરૂપ શુદ્ધ પરિણામોં કે હિયે

આ વિશેષણથી આત્માની કૂટસ્થનિત્યતાનું નિરાકરણ કયું છે. “આત્મા કૂટસ્થ નિત્ય છે” એવો સ્વીકાર કરવાથી આત્મા એવો પહેલાં હતો તેવો જ જ્ઞાનની ઉત્પત્તિના સમયમાં પણ રહેશે, એવી દશામાં આત્મા પહેલાં અજ્ઞાતા હતો તો પછી પદાર્થોના જ્ઞાતા કેવી રીતે થશે?, કેમકે—આપના મત પ્રમાણે પ્રતિનિયત સ્વરૂપથી ચ્યુત નહિ થતાં એવો છે તેવો જ બની રહે તે કૂટસ્થતા છે. અગર તો પછીથી આત્માને પદાર્થોના જ્ઞાતા સ્વીકાર કરે છે તો પ્રથમ જે અજ્ઞાતા હતો તેનું જ્ઞાતાના રૂપમાં પરિણમન થઈ ગયું, તેથી કૂટસ્થરૂપ નિત્યતા નાશ પામી ગઈ, આ કારણથી આત્માને પરિણામી અવશ્ય માનવો જોઈએ. આત્મા કૂટસ્થ નિત્ય નથી પરંતુ પરિણામી નિત્ય છે.

### (૬) આત્માનું પ્રભુત્વ—

નિશ્ચય નય પ્રમાણે આત્મા મોક્ષ અને મોક્ષના કારણરૂપ શુદ્ધ પરિણામો

સામર્થ્યાત્, તથા વ્યવહારનયતઃ સંસારતત્કારણરૂપાશુદ્ધપરિણામાર્થ પરિણમન-શક્તિમત્ત્વાચ્ચ પ્રમુરિત્યુચ્યતે ।

અયમાત્મા મોક્ષમાર્ગોપદેશકતયા, રત્નત્રયેણ મોક્ષસાધકતયા, સર્વજ્ઞત્વપ્રાપ્તિ-શક્તિમત્તયા ચ પ્રમુરિત્યુચ્યતે । “સર્વજ્ઞો નાસ્તિ કશ્ચિ”-દિતિ નાસ્તિકમતં નિરાકર્તુ સર્વજ્ઞતયાઽપ્યાત્મનઃ પ્રમુત્વમસ્તીતિ સંવેદ્યતે । યથા-અભ્રપટલમલાચ્છન્નં રવિચન્દ્ર-ઝ્યોતિઃ, સુવર્ણં રજતં વા ક્રમશો નૈર્મલ્યં પ્રાપ્નુવત્, સર્વથાઽભ્રપટલમલાદિ-વ્યપગમે સર્વતો ભાવેનાપિ શુદ્ધિ પ્રાપ્નોતિ, તથા રાગદ્વેષાદિભિરશુદ્ધ આત્મા ક્રમશઃ શુદ્ધિ લભમાનઃ પૂર્ણશુદ્ધિમપિ પ્રાપ્નોતિ સ एવાત્મા ‘સર્વજ્ઞઃ’ इत्युच्यते ।

પરિણમન-સામર્થ્યવાળા છે, તથા વ્યવહાર નય સે સંસાર ઔર સંસાર કે કારણરૂપ અશુદ્ધ પરિણામોં કે લિષ પરિણત હોને કી શક્તિ સે યુક્ત છે । ઇસ કારણ આત્મા પ્રમુ કહલાતા છે ।

યહ આત્મા મોક્ષમાર્ગ કા ઉપદેશ દેને કી, રત્નત્રય કે દ્વારા મોક્ષસાધન કી ઔર સર્વજ્ઞતાપ્રાપ્તિ કી શક્તિ સે યુક્ત હોને કે કારણ પ્રમુ છે, ‘કોઈ સર્વજ્ઞ નહીં છે’ ઇસે નાસ્તિકમત કા નિરાકરણ કરને કે લિષ સર્વજ્ઞરૂપ મેં મી આત્મા કા પ્રમુત્વ સૂચિત ક્રિયા ગયા છે । જૈસે-મેઘપટલ તથા મલ સે આચ્છાદિત સૂર્ય, ચન્દ્રમા કી ઝ્યોતિ, સુવર્ણ યા ચાંદી, ક્રમ સે નિર્મલ હોતે-હોતે, અભ્રપટલ યા મલ કે સર્વથા હટ જાને પર પૂર્ણરૂપ સે શુદ્ધ હો જાને હૈં, ઁસી પ્રકાર રાગદ્વેષ આદિ સે અશુદ્ધ આત્મા ધીરે-ધીરે શુદ્ધ હોતા હુઆ પૂર્ણ શુદ્ધતા પ્રાપ્ત કર લેતા છે । ઇસ પ્રકાર પૂર્ણ શુદ્ધ આત્મા હી સર્વજ્ઞ કહલાતા છે ।

માટે પરિણમન-સામર્થ્ય વાળો છે. તથા વ્યવહાર નયથી સંસાર અને સંસારના કારણરૂપ અશુદ્ધ પરિણામો માટે પરિણત થવાની શક્તિથી યુક્ત છે. આ કારણથી આત્મા પ્રમુ કહેવાય છે.

આ આત્મા મોક્ષમાર્ગનો ઉપદેશ દેવાની, રત્નત્રયના દ્વારા મોક્ષસાધનની અને સર્વજ્ઞતાપ્રાપ્તિની શક્તિથી યુક્ત હોવાના કારણે પ્રમુ છે. “કોઈ સર્વજ્ઞ નથી” એવો જે નાસ્તિકમત છે તેનું નિરાકરણ કરવા માટે સર્વજ્ઞરૂપમાં પણ આત્માનું પ્રમુત્વ સૂચિત કયું છે. જેમ-મેઘસમૂહ તથા મળથી આચ્છાદિત સૂર્ય, ચંદ્રમાની જ્યોતિ, સુવર્ણ અથવા ચાંદી વગેરે કમથી નિર્મલ થતાં થતાં મેઘસમૂહ અથવા મળના ખસી જવાથી પૂર્ણ શુદ્ધ રૂપમાં આવી જાય છે-શુદ્ધ થઈ જાય છે, તે પ્રમાણે રાગ-દ્વેષ આદિથી અશુદ્ધ આત્મા ધીરે ધીરે શુદ્ધ થઈને પૂર્ણ શુદ્ધતા પ્રાપ્ત કરી લે છે. એ પ્રમાણે પૂર્ણ શુદ્ધ આત્મા જ સર્વજ્ઞ કહેવાય છે.

કિશ્ચ-આત્મા સ્વસ્ય હિતં કર્તુમન્યં નાપેક્ષતે; સ્વયમેવ સ્વહિતસાધને ક્ષમઃ, અતઃ એવાત્મનઃ પ્રભુત્વં સિધ્યતિ, તસ્માત્ સ્વહિતમિચ્છુના મોક્ષપ્રાપ્તિકારણી-ભૂતે તપઃસંયમારાધને પ્રવર્તિતવ્યમ્ ।

### (૭) કર્તૃત્વનિરૂપણમ્—

અયમાત્મા-અદૃષ્ટાદિકર્મકરણાત્, નિશ્ચયનયેન શુદ્ધભાવકર્તૃત્વાત્, વ્યવહાર-નયતો દ્રવ્યભાવકર્મણાં નોકર્મબાહ્યશરીરાદીનાં કર્તૃત્વાચ્ચ, કર્તૈત્યુચ્યતે । આત્મે-કાન્તરૂપેનાઽકર્તૈતિ સાંખ્યમતમપાકર્તુમુક્તમ્-‘આત્મા કર્તૈતિ ।

દૂસરી વાત યહ હૈ કિ-આત્મા અપના કલ્યાણ કરને મેં અન્ય કી અપેક્ષા નહીં રક્ષતા । વહ સ્વકીય કલ્યાણ-સાધન મેં સ્વયં સમર્થ હૈ । હસી સે આત્મા કા પ્રભુત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ । અતઃ આત્મહિત કે અમિલાષી પુરુષ કો મોક્ષકારણભૂત તપ ઓર સંયમ કી આરાધના મેં પ્રવૃત્ત હોના યાહિયે ।

### (૭) આત્માકા કર્તૃત્વ—

યહ આત્મા અદૃષ્ટ આદિ કર્મ કરને સે, નિશ્ચયનય કી અપેક્ષા શુદ્ધ ભાવોં કાં કર્તા હોને સે; તથા વ્યવહારનય સે દ્રવ્યકર્મ, ભાવકર્મ તથા નોકર્મ-બાહ્યશરીર આદિકા કર્તા હોને સે કર્તા કહલાતા હૈ,

‘આત્મા એકાન્તરૂપ સે અકર્તા હૈ’ સાંખ્ય કે હસ મત કા નિરાકરણ કરને કે લિયે આત્મા કો કર્તા વિશેષણ લગાયા હૈ ।

બીજી વાત એ છે કે:-આત્મા પોતાનું કલ્યાણ કરવામાં બીજાની અપેક્ષા રાખતો નથી, તે પોતાના કલ્યાણસાધનમાં પોતે જ સમર્થ છે. તે કારણથી આત્માનું પ્રભુત્વ સિદ્ધ થાય છે. એ કારણથી આત્મહિતના અભિલાષી પુરુષોએ મોક્ષના કારણભૂત તપ અને સંયમની આરાધનામાં પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ.

### (૬) આત્માનું કર્તૃત્વ—

આ આત્મા અદૃષ્ટ આદિ કર્મો કરવાથી, નિશ્ચયનયની અપેક્ષાએ શુદ્ધ ભાવોના કર્તા હોવાથી તથા વ્યવહારનયથી દ્રવ્યકર્મ, ભાવકર્મ તથા નોકર્મ-બાહ્યશરીર આદિને કર્તા હોવાથી કર્તા કહેવાય છે.

“આત્મા એકાન્તરૂપથી અકર્તા છે.” સાંખ્યના આ મતનું નિરાકરણ કરવા માટે આત્માને કર્તા વિશેષણ આપ્યું છે.



ઔદારિકાદિશરીરસ્ય કર્તાઽસ્તિ, આદિમત્પ્રતિનિયતાકારિત્વાત્, કુમ્ભસ્ય યથા કુલાલઃ । યત્પુનરકર્તૃકં તદાદિમત્પ્રતિનિયતાકારમપિ ન ભવતિ, યથાઽન્નવિકારઃ । યથ્ચ શરીરસ્ય કર્તા સ આત્મા, इत्येवमात्मनः कर्तृत्वं सिध्यति । अत्रादि-  
मत्त्वविशेषणं मेवादीनुपादाय हेतोरनैकान्तिकत्ववारणाय ।

यद्वा-आत्मा कर्ता, स्वकर्मफलभोक्तृत्वात् वणिक्कृषीवलादिवत् ।  
आत्मा स्वकृतकर्मफलभोक्ता तस्मात् कर्ता, यथा वणिक्कृषीवलादयोऽकृतकर्मणः  
फलं न प्राप्नुवन्ति ।

इस औदारिकादि शरीर का कोई कर्ता है, क्यों कि औदारिकादि शरीर आदिमान् और प्रतिनियत आकारवाला है, जैसे-घड़ेका कर्ता कुंभार । जो वस्तु बिना कर्ता की होती है वह आदिमान् और नियत आकार वाली नहीं होती, जैसे-बादल का विकार । जो शरीर का कर्ता है, वह आत्मा है । इस प्रकार आत्मा का कर्तृत्व सिद्ध होता है । यहाँ ‘आदिमत्’ विशेषण से मेरु आदि से होने वाले अनेकान्तिक दोषका निवारण किया गया है, क्यों कि वे आदिमान् नहीं है ।

अथवा आत्मा कर्ता है, क्यों कि वह अपने कर्मों का भोक्ता है, जैसे वणिक् या किसान । आत्मा अपने कर्मों के फलका भोक्ता है इस कारण कर्ता है । जैसे-वणिक् या किसान आदि बिना किये कर्म का फल नहीं भोगते, इसी प्रकार आत्मा बिना किये कर्म का फल नहीं भोगता ।

આ ઔદારિકાદિ શરીરનો કોઈ કર્તા છે, કારણ કે ઔદારિકાદિ શરીર, આદિમાન્ અને પ્રતિનિયત આકાર વાળું છે, જેમ ઘડાનો કર્તા કુંભાર. જે વસ્તુ કર્તા બિનાની હોય છે, તે આદિમાન્ અને નિયત આકાર વાળી હોય નહિ, જેમ વાદળનો વિકાર. જે શરીરનો કર્તા છે તે આત્મા છે. એ પ્રકારે આત્માનું કર્તૃત્વ સિદ્ધ થાય છે. અહીં ‘આદિમત્’ વિશેષણથી મેરુ આદિથી થવા વાળા અનૈકાન્તિક દોષનું નિવારણ થયું છે, કારણ કે તે ‘આદિમાન્’ નથી.

अथवा—आत्मा कर्ता છે, કારણ કે તે પોતાના કર્મોનો ભોક્તા છે. જેમ વણિક અથવા ખેડુત. આત્મા પોતાના કર્મોના ફલનો ભોક્તા છે, તે કારણથી કર્તા છે, જેમ વણિક અથવા ખેડુત આદિ, કર્મ કર્યા બિના કર્મનું ફળ ભોગવતા નથી. તે પ્રમાણે આત્મા કર્મ કર્યા બિના તેનું ફળ ભોગવતો નથી.

યદ્વા—આત્મા સુકૃતદુષ્કૃતકર્મણામકર્તા ન ભવતિ, સુકૃતદુષ્કૃતકર્મ-  
ફલરૂપસુખદુઃસ્વાનુભવાત્ । અકર્તુરાત્મનઃ સુખદુઃસ્વાનુભવો ન યુજ્યતે, તથા  
સતિ અતિપ્રસંગાત્ । મુક્તાનામપિ સાંસારિકસુખદુઃસ્વાનુભવાપત્તેઃ, અકર્તૃત્વાઽ-  
વિશેષાત્ ।

અનુભવિત્વેન ભોક્તૃત્વસિદ્ધિઃ, ભોક્તૃત્વેન ચ કર્તૃત્વસિદ્ધિઃ । યદ્યપ-  
માત્મા કર્તા ન ભવેત્તદાઽનુભવિતાઽપિ ન ભવેત્ । ન ચાનુભવિતુઃ કર્તૃત્વસ્વીકારે  
મુક્તસ્યાપિ કર્તૃત્વપ્રસન્નઃ, ઇતિ વાચ્યમ્, મુક્તાત્મનઃ સાક્ષીરૂપેણાનુભવસત્ત્વેઽપિ  
દ્રવ્યભાવકર્મરહિતત્વાદેવ સાંસારિકવિષયસુખાદિજનકર્મકર્તૃત્વાસંભવેનાકર્તૃત્વાત્,

અથવા—આત્મા સુકૃત ઓર દુષ્કૃતરૂપ કર્મોંં કા અકર્તા નહીં હૈ, ક્યોંં કિ વહ અપને  
સુકૃત ઓર દુષ્કૃત કર્મોંં કૈ ફલસ્વરૂપ સુખ—દુઃખ કા અનુભવ કરતા હૈ । આત્મા અકર્તા  
હોતા તો ઉસે સુખ—દુઃખ કા અનુભવ નહીં હોના ચાહિં થા । કર્તા ન હોને પર મી ફલ કા  
મોક્તા માનને સે ગડબડી મચ જાયગી । ફિર તો મુક્ત જીવોંં કો મી સાંસારિક સુખ ઓર  
દુઃખ મોગના પડેગા, ક્યોંં કિ વે મી અકર્તા હૈં ।

આત્મા અનુભવ કરને વાળા હોને કૈ કારણ મોક્તા સિદ્ધ હોતા હૈ ઓર મોક્તા  
હોને કૈ કારણ કર્તા સિદ્ધ હોતા હૈ । આત્મા કર્તા ન હોતા તો અનુભવિતા (અનુભવ  
કરનેવાળા) મી ન હોતા । ‘અનુભવ કરનેવાળે કો કર્તા માનને પર મુક્તાત્મા કો મી  
કર્તાપન કા પ્રસન્ન આયગા’ ઇસા કહના ઉચિત નહીં હૈ, ક્યોંં કિ મુક્તાત્માઓં કો  
સાક્ષીરૂપસે અનુભવ હોને પર મી, દ્રવ્ય—ભાવ કો સે રહિત હોને કૈ કારણ વે સાંસારિક

અથવા આત્મા સુકૃત અને દુષ્કૃત-રૂપ કર્મોંનો અકર્તા નથી, કારણ કે તે  
પોતાના સુકૃત અને દુષ્કૃત રૂપ કર્મોંના ફલસ્વરૂપ સુખ—દુઃખનો અનુભવ કરે છે.  
આત્મા અકર્તા હોત તો તેને સુખ—દુઃખનો અનુભવ નહિ થવો જોઈએ. કર્તા ન  
હોવા છતાંય પણ ફલનો ભોક્તા હોવાથી ગડબડ થઈ જશે. ફરી તો મુક્ત હોવાને  
પણ ‘સંસારનું’ સુખ અને દુઃખ ભોગવવું પડશે; કારણ કે તે પણ અકર્તા છે.

આત્મા અનુભવ કરવા વાળો હોવાથી ભોક્તા સિદ્ધ થાય છે, અને ભોક્તા  
હોવાના કારણે કર્તા સિદ્ધ થાય છે. આત્મા કર્તા ન હોય તો અનુભવિતા (અનુભવ  
કરવા વાળો) ન હોય. ‘અનુભવ કરવા વાળાને કર્તા માનવાથી મુક્તાત્માને પણ  
કર્તાપણનો પ્રસંગ આવશે,’ એમ કહેવું તે ઉચિત નથી. કારણ કે મુક્તાત્માઓને  
સાક્ષીરૂપ અનુભવથી હોવા છતાંય દ્રવ્ય, ભાવ કર્મથી રહિત હોવાના કારણે તે

अकर्तृत्वाच्च तस्य सांसारिकविषयसुखानामभोक्तृत्वं च सिध्यति । प्रकृते हि कर्तृशब्देनादृष्टादिजनककर्मण एव कर्तृत्वं विवक्षितम्, तेन मुक्तात्मनि नातिप्रसंगः । तथा च यः सांसारिकसुखदुःखाद्यनुभविता स एव तत्कारणीभूतकर्मणः कर्ता, अकर्तृर्भोक्तृत्वानुपपत्तेः ।

### (८) भोक्तृत्वसिद्धिः—

अयमेवात्मा मोहोदयेन शुद्धमात्मस्वभावं विस्मृत्य परवस्तुनि मोहितः सन् रागद्वेषं करोति, रागद्वेषवशोऽहर्निशं नवनवविषयसंग्रहार्थं प्रयतमानस्तद्वियोगे सति चिन्ताव्याकुलचितचेता आर्त्तरौद्रध्यानमुपगतः स्वात्मनि कर्मरजः

विषयसुख आदि के जनक कर्मों के कर्ता नहीं हैं, इस कारण वे अकर्ता हैं । और अकर्ता होने के कारण वे सांसारिक विषयसुखों के भोक्ता भी नहीं हैं । यहाँ 'कर्ता' शब्द से अदृष्ट आदि के जनक कर्मों का कर्ता ही विवक्षित है, अतः मुक्त आत्मा में अति-प्रसङ्ग नहीं आता, अत एव सिद्ध हुआ कि जो सांसारिक सुख-दुःख आदि का भोक्ता होता है, वही उन के कारणभूत कर्म का कर्ता भी होता है । जो कर्ता नहीं है वह भोक्ता भी नहीं है ।

### (८) आत्मा का भोक्तृत्व

आत्मा मोह के उदय से शुद्ध आत्मस्वरूप को भूलकर पर-पदार्थों में मोहित होता हुआ राग-द्वेष करता है । राग-द्वेष के वश हो कर रात-दिन नवीन नवीन विषयों का संग्रह करने के लिए प्रयत्नशील होता हुआ, और उनका वियोग होने पर चिन्ता से व्याकुलचित हो कर आर्त्तध्यान और रौद्रध्यान को प्राप्त होता है, और इस संसारना विषय-सुख वगैरेने उत्पन्न करना कर्मोंना कर्ता नथी. ये कारणथी ते आत्मा अकर्ता छे, अने अकर्ता होवाना कारणे ते संसारना विषयसुखेना लोकता पणु नथी. अहिं 'कर्ता' शब्दथी अदृष्ट आदिना जनक कर्मोंना कर्ता न विवक्षित छे. तेथी मुक्त आत्माभां अतिप्रसंग आवतो नथी. ये कारणथी अने सिद्ध थयुं के ने संसारना सुख-दुःख वगैरेना लोकता छे, ते अने कारणभूत कर्मोंना कर्ता पणु होय छे, ने कर्ता नथी ते लोकता पणु नथी.

### (८) आत्माभुं लोकतत्त्व—

आत्मा मोहना उदयथी शुद्ध आत्मस्वरूपने भूली नधने पर-पदार्थोंभां मोहित थधने राग-द्वेष करे छे, राग-द्वेषने वश थधने रात्री अने द्विवस नवा-नवा विषयेने संग्रह करवा भाटे प्रयत्नशील रहते थके, अने तेना वियोग थतां चिन्ताथी व्याकुल-चित् थधने आर्त्तध्यान अने रौद्रध्यान ने प्राप्त थाय छे, अने ते कारणथी पोताना



સમુપાદત્તે । યથા કોઽપ્યજ્ઞાની વ્યાધિનિદાનભૂતમપથ્યમશ્નન્અવાઙ્છિતમપિ જ્વરાદિકં સ્વયમુત્પાદયતિ, તથાઽયમાત્મા કર્મબન્ધનમવાઙ્છન્નપ્યાર્તરૌદ્રધ્યાનવશેન કર્મબન્ધનં પ્રાપ્નોતિ । યથા કર્મબન્ધનં સ્વયમેવાદત્તે, તથા તત્ફલમપિ બાહ્યં કિશ્ચિન્નિમિત્ત-મપેક્ષ્ય સ્વયમેવોપશુઙ્કતે । एवं चात्मनो भोक्तृत्वं सिध्यति । भोक्तृत्वाच्च कर्तृ-त्वमपि तस्य निर्वाधम् ।

સાંખ્યસિદ્ધાન્તે પ્રકૃતેઃ કર્તૃત્વં, ન તુ જીવસ્ય, ભોક્તૃત્વં ચાપિ જીવસ્યોપચરિતમેવ । દર્પણાકારાયાં બુદ્ધૌ સંક્રાન્તાનાં સુખદુઃખાદીનાં સ્વાત્મનિ

કારણ અપની આત્મા મેં કર્મ-રજ ફકટ્ટી કર લેતા હૈ । જૈસે અજ્ઞાની મનુષ્ય રોગ કે કારણભૂત અપથ્ય કા સેવન કરતા હુઆ ન ચાહતે હુએ મી જ્વર આદિ કો ઉત્પન્ન કર લેતા હૈ, ઉસી પ્રકાર આત્મા કર્મબન્ધન કી ઇચ્છા ન કર કે મી આર્ત-રૌદ્રધ્યાન કે અધીન હોકર કર્મબન્ધ કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ । જૈસે કર્મબન્ધ કો આત્મા સ્વયં પ્રહણ કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર કિસી બાહ્ય નિમિત્ત કી અપેક્ષા સે ઉસકા ફલ મી સ્વયં હી ભોગતા હૈ । ઇસી પ્રકાર આત્મા મેં ભોક્તાપન સિદ્ધ હોતા હૈ, ઓર ભોક્તા હોને સે ઉસ મેં કર્તાપન મી વિના કિસી બાધા કે સિદ્ધ હો જાતા હૈ ।

સાંખ્યમત સે પ્રકૃતિ કર્તા હૈ, જીવ નહીં, ઓર ભોક્તાપન જીવ મેં ઉપચાર સે હૈ । દર્પણાકાર બુદ્ધિ મેં પ્રતિબિમ્બિત હોને વાલે સુખ-દુઃખ આદિ કા આત્મા મેં પ્રતિબિમ્બ

આત્માને વિષે કર્મ-રજ (કર્મના રજકણ) એકઠી કરી લે છે, જેમ અજ્ઞાની મનુષ્ય રોગના કારણભૂત અપથ્યનું (રોગ ઉત્પન્ન કરે તેવું) સેવન કરીને, પોતે ઇચ્છતો નથી તો પણ જ્વર (તાવ) આદિને ઉત્પન્ન કરી લે છે. તે પ્રમાણે આત્મા કર્મબન્ધનની ઇચ્છા નહિ કરવા છતાંય પણ આર્ત-રૌદ્ર ધ્યાનને આધીન થઈને કર્મ બન્ધનને પ્રાપ્ત થાય છે. જેવી રીતે કર્મબન્ધનને આત્મા પોતે જ શ્રદ્ધણ કરે છે, તે પ્રમાણે કોઈ બાહ્ય નિમિત્તની અપેક્ષાથી તેનું ફલ પણ પોતે જ ભોગવે છે. એ પ્રમાણે આત્મામાં ભોક્તાપણું સિદ્ધ થાય છે. અને ભોક્તા હોવાથી તેમાં કોઈ પ્રકારની બાધા વિના કર્તાપણું પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે.

સાંખ્યમત પ્રમાણે પ્રકૃતિ કર્તા છે, જીવ કર્તા નથી. ભોક્તાપણું તે પણ જીવમાં ઉપચારથી છે. દર્પણાકાર બુદ્ધિમાં પ્રતિબિમ્બિત (પ્રતિબિંબરૂપે) થવાવાળા (દેખાવવાવાળા) સુખ-દુઃખ આદિનું પ્રતિબિંબ આત્મામાં પડી શકતું નથી, સ્ફટિક

પ્રતિબિમ્બોદયાસંભવાત્ । સ્ફટિકદર્પણાદાવપિ પરિણામેનૈવ પ્રતિબિમ્બોદય-  
સમર્થનાત્ । તાદૃશપરિણામાઙ્ગીકારે ચ જીવસ્ય કર્તૃત્વં, સ્વતઃ એવ મોક્તૃત્વં  
ચ સિદ્ધમ્ ।

### (૯) આત્મનઃ સ્વશરીરપરિમાણત્વમ્—

અયમાત્મા સ્વશરીરપરિમાણઃ । નિશ્ચયનયેન લોકાકાશપરિમાણોઽ-  
સંખ્યાતપ્રદેશી ચ । વ્યવહારનયતઃ શરીરનામકર્મોદયાજ્ઞાતેન સૂક્ષ્મશરીરેણ  
સ્થૂળશરીરેણ વા સમાનપરિમાણો ભવતિ, તસ્માદયં સ્વશરીરપરિમાણમિત્યુચ્યતે ।

નહીં પડ સકતા । સ્ફટિક તથા દર્પણ આદિ મેં જો પ્રતિબિમ્બ પડતા હૈ સો પરિણામી  
હોને કે કારણ હી પડતા હૈ । સ્ફટિક આદિ એકાન્ત અપરિણામી હોતે તો उन મેં  
કિસી મી વસ્તુ કા પ્રતિબિમ્બ નહીં પડ સકતા થા । ઇસ પ્રકાર કા પરિણામ સ્વીકાર  
કર લેને પર જીવ મેં કર્તાપન સિદ્ધ હો જાયગા ઓર ફિર મોક્તાપન મી સ્વતઃ સિદ્ધ  
હો જાયગા ।

### (૯) આત્માકા શરીરપરિમાણ—

આત્મા પ્રાપ્ત શરીર કે બરાબર હૈ, અર્થાત્ શરીર કા જો પરિમાણ હૈ । વહી  
આત્મા કા મી પરિમાણ હૈ । આત્મા નિશ્ચયનય સે લોકાકાશ કે બરાબર અસંખ્યાત  
પ્રદેશી હૈ । વ્યવહારનય સે શરીરનામકર્મ કે ઉદય સે પ્રાપ્ત હુણ સૂક્ષ્મ યા સ્થૂળ શરીર  
કા જો પરિમાણ હૈ ઁસી પરિમાણવાલા આત્મા હૈ, અતઃ એવ આત્મા શરીર પરિમાણ  
કહલાતા હૈ ।

તથા દર્પણ આદિમાં જે પ્રતિબિમ્બ પડે છે, તે પરિણામી હોવાના કારણે પડે છે.  
સ્ફટિક આદિ જે એકાન્ત અપરિણામી હોત તો તેમાં કોઈ પણ વસ્તુનું પ્રતિબિંબ  
પડી શકત નહીં. આ પ્રમાણે પરિણામ સ્વીકાર કરી લેવાથી જીવમાં કર્તાપણું સિદ્ધ  
થઈ જશે, અને લોકતાપણું પણ સ્વતઃ સિદ્ધ થઈ જશે.

### (૯) આત્માનું શરીરપ્રમાણ—

આત્મા પ્રાપ્ત શરીરની બરાબર છે, અર્થાત્ શરીરનું જે પરિમાણ છે તે  
આત્માનું પણ પરિમાણ છે. આત્મા નિશ્ચયનયથી લોકાકાશની બરાબર અસંખ્યાતપ્રદેશી  
છે. વ્યવહારનયથી શરીર-નામકર્મના ઉદયથી પ્રાપ્ત થએલ સૂક્ષ્મ અથવા સ્થૂળ  
શરીરનું જે પરિમાણ છે. તે પરિમાણ વાળો આત્મા છે. એટલા માટે આત્મા  
શરીરપરિમાણ કહેવાય છે.

આત્મા સર્વવ્યાપીતિ વેદાન્તિકાદિમતં, તથાઽઽત્મા-અણુરિતિ કસ્યચિન્મતં ચ નિરાકર્તું શરીરપરિમાણ ઇત્યુક્તમ્ । આત્મનઃ સર્વવ્યાપિત્વે નિષ્ક્રિયત્વાદ્ ભવાન્તરસંક્રાન્તેરસંભવાપત્તિરાકાશવત્ ।

આત્મા શરીરમાત્રવ્યાપી, શરીર એવ તદ્ગુણોપલબ્ધેઃ, અન્યૌણ્યવત્, અથવા ઘટાદિગુણવત્ । યથા ઘટાદેર્વર્ણાદયો ગુણા યત્રવ દેશે દૃશ્યન્તે તત્રૈવ તસ્યાસ્તિત્વં પ્રતીયતે, નાન્યત્ર । એવમાત્મનોઽપિ ગુણાશ્ચૈતન્યાદયો શરીર એવ દૃશ્યન્તે, ન વહિઃ, તસ્માદ્ દેહપ્રમાણ એવાવમાત્મેતિ । ન ચ પુષ્પાદીનાં

‘આત્મા સર્વવ્યાપક છે’ એસા વેદાન્તિક આદિ કા મત છે । કોઈ-કોઈ યહ મી માનતે હૈં કિ-‘આત્મા અણુ-પરિમાણવાળા છે’ ઇન સવ મતોં કા નિરાકરણ કરને કે લિષ્ આત્મા કો શરીર-પરિમાણ વિશેષણ લગાયા છે । આત્મા કો સર્વવ્યાપક માને તો વહ નિષ્ક્રિય ઠહેરેગા ઓર ભવાન્તર મેં નહીં જા સકેગા, જૈસે આકાશ ।

આત્મા શરીરમાત્રવ્યાપી છે, ક્યોં કિ શરીર મેં હી ઉસકે ગુણ ઉપલબ્ધ હોતે હૈં, જૈસે અગ્નિ કી ઉષ્ણતા અથવા ઘટ આદિ । જૈસે ઘટ આદિ કે ગુણ રૂપ વગૈરહ જિસ જગહ દેખે જાતે હૈં ઉસી જગહ ઉસકા અસ્તિત્વ પ્રતીત હોતા છે, અન્યત્ર નહીં । ઇસ પ્રકાર આત્મા કે ગુણ ચૈતન્ય આદિ જહાં પાયે જાઈ વહીં ઉસકા અસ્તિત્વ માનના ચાહિય । આત્મા કે ગુણ શરીર મેં હી પાયે જાતે હૈં અતઃ શરીર મેં હી આત્મા કા અસ્તિત્વ સ્વીકાર કરના ઉચિત છે, અતઃ આત્મા શરીરપરિમાણ હી છે ।

‘આત્મા સર્વવ્યાપક છે.’ એવો વેદાન્તિક આદિનો મત છે કેઈ કેઈ એમ પશુ માને છે કે:-“આત્મા અણુ-પરિમાણવાળો છે.” તે સર્વ મતોનું નિરાકરણ કરવા માટે આત્માને શરીર-પરિમાણ વિશેષણ લગાડયું છે. આત્માને સર્વવ્યાપક માનશે તો તે નિષ્ક્રિય કરશે અને ભવાન્તરમાં જઈ શકશે નહિ, એમ આકાશ.

આત્મા શરીરમાત્રવ્યાપી છે કારણ કે શરીરમાં જ તેના ગુણ ઉપલબ્ધ થાય છે. એમ અગ્નિની ઉષ્ણતા અથવા ઘટ આદિના ગુણ રૂપ વગેરે જે જગ્યામાં જોવામાં આવે છે, તે જ જગ્યામાં તેનું અસ્તિત્વ પ્રતીત થાય છે, અન્યત્ર (બીજા સ્થળે) નહિ. એ પ્રમાણે આત્માનાં ચૈતન્ય આદિ ગુણ જોવામાં આવે, ત્યાં જ તેનું અસ્તિત્વ માનવું જોઈએ. આત્માનો ગુણ શરીરમાં જ જોવામાં આવે છે તે કારણથી શરીરમાં જ આત્માના અસ્તિત્વનો સ્વીકાર કરવો તે ઉચિત છે. તેથી આત્મા શરીર



गन्धादिगुणः पुष्पाद्यवस्थितिदेशादन्यत्राप्युपलभ्यते, तथा च हेतोरनैकान्तिकत्वा-  
पत्तिरिति वाच्यम्, पुष्पाद्याश्रितगन्धादिपुद्गलानां वैस्रसिक्या प्रायोगिक्या वा  
गत्या गतिमत्त्वेन तदुपलम्भकघ्राणादिदेशपर्यन्तगमनोपपत्तेरिति ।

आत्मा सर्वगतो न भवति, तद्गुणस्य सर्वत्रानुपलभ्यमानत्वात् । यस्य  
यस्य गुणः सर्वत्रानुपलभ्यमानः स स सर्वगतो न भवति, यथा घटः । अयं चात्मा  
सर्वत्रानुपलभ्यमानगुणवान्, तस्मात् सर्वगतो न भवतीति । व्यतिरेक्युदाहरणं  
तु व्योमादि । न चासिद्धोऽयं हेतुरिति वाच्यम्, देहव्यतिरिक्तदेशे बुद्ध्यादीनां

यह कहना ठीक नहीं है कि—‘फूल आदि का गुण—गन्धः वगैरह फूल की जगह से  
दूसरी जगह भी पाये जाते हैं, इस कारण आपका हेतु अनेकान्तिक है’ क्यों कि गन्ध के  
आधारभूत पुद्गल स्वाभाविक गति से या प्रयत्नजन्य गति से गतिमान होने के कारण,  
गन्ध को ग्रहण करने वाले घ्राण—देश तक आते हैं । तात्पर्य यह है कि जहां फूलकी  
गन्ध है वहाँ उस गन्ध के आधारभूत गन्ध—पुद्गल भी होते हैं, इस कारण हेतु में  
व्यभिचार नहीं आता ।

आत्मा सर्वव्यापक नहीं है, क्यों कि आत्मा के गुण  
सर्वत्र नहीं पाये जाते । जिस—जिस के गुण सर्वत्र उपलब्ध नहीं  
होते, वह पदार्थ सर्वव्यापक नहीं होता, जैसे घट । आत्मा के गुण  
सर्वत्र नहीं पाये जाते, अतः वह सर्वव्यापक नहीं है । ‘आकाश यहां व्यतिरेकी  
उदाहरण है । ‘यह हेतु असिद्ध है,’ ऐसा नहीं कह सकते, क्यों कि देह से अति-

परिमाणु छे. “कूल आदिनो शुष्ण-गंध वगेरे कुलनी जग्या विना भीष्ण जग्या  
पणु जेवाभां आवे छे ते कारणुथी आपनो हेतु अनैकान्तिक छे.” जेम कडेवुं ते  
ठीक नथी. कारणु के गंधना आधारभूत पुद्गल स्वाभाविक गतिथी अथवा  
प्रयत्नजन्य गतिथी गतिमान होवाना कारणु, गंधने ग्रहणु करवा वाणा घ्राणुदेश  
सुधी आवे छे. तात्पर्य जे छे के:-ज्यां कूलनी गंध छे त्यां ते गंधना आधारभूत  
गंधपुद्गल पणु होय छे, आ कारणु हेतुमां व्यभिचार आवतो नथी.

आत्मा सर्वव्यापक नथी. केमके आत्मानो शुष्ण सर्वत्र जेवाभां आवतो नथी,  
जेनो शुष्ण सर्वत्र उपलब्ध थतो नथी, ते पदार्थ सर्वव्यापक होय नहि, जेम घट.  
आत्मानो शुष्ण सर्वत्र जेवाभां आवतो नथी, जे कारणुथी ते सर्वव्यापक नथी.  
आकाश अहि व्यतिरेकतुं उदाहरणु छे. “ते हेतु असिद्ध छे.” जेम कही शकाशे

ગુણાનામસદ્ભાવ इति सर्वैः स्वीकारात् । शरीरे तद्गुणसत्त्वे हेतोर्नाप्रसिद्धता, इत्थं च देहाद् बहिर्देशेऽपि आत्माऽस्तीति वादं परित्यज्य स्वदेह एवात्माऽस्तीति मन्तव्यम् ।

यद्वा—आत्मा व्यापको न भवति चेतनत्वात्, यत्तु व्यापकं तन्न चेतनम्, यथा गगनम् । चेतनं चात्मा, तस्मान्न व्यापकः । इत्थमव्यापकत्वे सिद्धे तस्य तत्रैवोपलभ्यमानगुणत्वे कायप्रमाणताऽपि सिद्धा । यत् पुनरष्टसमयसाध्य-  
केवलिसमुद्घातावस्थायामार्हतानामपि चतुर्दशरज्ज्वात्मकलोकव्यापित्वेनात्मनः

રિક્ત દેશ મેં બુદ્ધિ આદિ ગુણોં કા સદ્ભાવ નહીં હૈ, એસા સમી ને સ્વીકાર કિયા હૈ । શરીર મેં આત્મા કૈ ગુણોં કા અસ્તિત્વ હૈ હી, અતઃ એવ હેતુ અસિદ્ધ નહીં હૈ । ઇસ પ્રકાર શરીર સે બાહર આત્મા કા અસ્તિત્વ માનના છોડ કર સ્વદેહ મેં હી અસ્તિત્વ માનના ચાહિયૈ.

અથવા—આત્મા વ્યાપક નહીં હૈ, કયાં કિ વહ ચેતન હૈ । જો વ્યાપક હોતા હૈ વહ ચેતન નહીં હોતા, જૈસે આકાશ । આત્મા ચેતન હૈ; અતઃ વ્યાપક નહીં હૈ ।

इस से आत्मा की अव्यापकता सिद्ध हो जाने पर पूर्वोक्त हेतु से (क्यों कि शरीर में ही उस के गुण पाये जाते हैं, इस हेतु से) आत्मा की शरीरप्रमाणता भी सिद्ध हो जाती है । आठ समय में सम्पन्न होने वाले केवलिसमुद्घात की अवस्था में चौदहराजू लोक में आत्मा का व्याप्त हो जाना जो यहाँ माना है, वह

નહિ. કારણ કે દેહથી અતિરિક્ત (દેહ સિવાય) દેશમાં બુદ્ધિ આદિ ગુણોના સદ્ભાવ નથી. એ પ્રમાણે સૌએ સ્વીકારેલું છે. શરીરમાં આત્માના ગુણોનું અસ્તિત્વ છે જ, એ કારણથી હેતુ અસિદ્ધ નથી. આ પ્રમાણે શરીરની બહાર આત્માનું અસ્તિત્વ માનવું ત્યજીને પોતાના દેહમાં જ અસ્તિત્વ માનવું જોઈએ.

અથવા—આત્મા વ્યાપક નથી, કારણ કે તે ચેતન છે. જે વ્યાપક હોય છે તે ચેતન હોય નહિ, જેમ આકાશ. આત્મા ચેતન છે તે કારણથી વ્યાપક નથી.

આ હેતુથી આત્માની અવ્યાપકતા સિદ્ધ થવાથી પૂર્વોક્ત હેતુથી (કેમકે શરીરમાં જ તેના ગુણ જોવામાં આવે છે એ હેતુથી) આત્માની શરીરપ્રમાણતા પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે. આઠ સમયમાં સંપન્ન થવા વાળા કેવલિસમુદ્ઘાતની અવસ્થામાં ચૌદ રાજ્યલોકમાં આત્માનું વ્યાપ્ત થઈ જવાનું અહિં જે માન્યું છે, તે કાદાચિત્ક



સર્વવ્યાપિત્વં, તત્ કાદાચિત્કમિતિ ન તેન વ્યભિચારઃ ।

આત્મા શ્યામાકતણ્ડુલમાત્રો ન ભવતિ, અદ્વિષ્ટપર્વમાત્રો વા ન ભવતિ, તાવન્માત્રસ્યોપાત્તશરીરવ્યાપિત્વાત્, તિલે તૈલવત્ ત્વક્પર્યન્તશરીરવ્યાપિત્વેન ચોપલભ્યમાનગુણત્વાત્, તસ્માદુપાત્તશરોરે ત્વક્પર્યન્તશરીરવ્યાપીતિ સિદ્ધમ્ ।

(૧૦) અમૂર્તત્વનિરૂપણમ્—

આત્મા અમૂર્તઃ, ઇન્દ્રિયૈર્ગ્રાહ્યત્વાત્, સ્વજ્ઞાદિભિરચ્છેદ્યત્વાત્, શૂલાદિભિરભેદ્ય-  
ત્વાત્, રૂપરહિતત્વાત્, અનાદ્યમૂર્તપરિણામત્વાત્, નિત્યત્વાત્ ।

કાદાચિત્ક (કમી-કમી હોનેવાળા) હૈ, ઉસ સે વ્યભિચાર નહી આતા ।

આત્મા શ્યામાક ધાન્યકળ બરાબર નહીં હૈ, ન અંગૂઠે કે પર્વ (પોર) કે બરાબર હી હૈ, ઇતના સા આત્મા એક સાથ સમસ્ત શરીર મેં વ્યાપક નહીં હો સકતા, મગર આત્મા કે ગુણ તો સંપૂર્ણ શરીર મેં ઉપલબ્ધ હોતે હૈં, જૈસે તિલોં મેં તેલ સર્વત્ર પાયા જાતા હૈ, અત એવ સિદ્ધ હુઆ કિ આત્મા પ્રાપ્ત શરીર મેં ત્વચાપર્યન્તવ્યાપી હૈ ।

(૧૦) આત્મા કા અમૂર્તત્વ—

આત્મા અમૂર્ત હૈ, ક્યોં કિ વહ ઇન્દ્રિયોં કે દ્વારા ગ્રહણ નહીં ક્રિયા જાતા, વહ સ્વજ્ઞ આદિ સે છેદા નહીં જા સકતા, શૂલ આદિ સે ભેદા નહીં જા સકતા, વહ અરૂપી હૈ, અનાદિ કાલ સે અમૂર્ત પરિણામવાળા હૈ ઓર વહ નિત્ય હૈ ।

(કદાચિત થવાવાળું) છે, તેમાં વ્યભિચાર આવતો નથી.

આત્મા શ્યામાક ધાન્યના કણ બરાબર નથી; તેમજ અંગૂઠાના પર્વ (પોર) બરાબર પણ નથી. એટલો આત્મા એક સાથે સમસ્ત શરીરમાં વ્યાપક થઈ શકતો નથી, પરંતુ આત્માના ગુણ તો સંપૂર્ણ શરીરમાં ઉપલબ્ધ થાય છે, જેમ તલમાં તેલ સર્વત્ર હોય છે. એ કારણથી એ સિદ્ધ થયું કે આત્મા આ પ્રાપ્ત શરીરમાં ત્વચા-આમડી સુધી વ્યાપી રહેલો છે.

(૧૦) આત્માનું અમૂર્તત્વ

આત્મા અમૂર્ત છે. કારણ કે તે ઇન્દ્રિયો દ્વારા ગ્રહણ કરી શકાતો નથી, ખડગ (તલવાર) આદિથી છેદી શકાતો નથી, શૂલ આદિથી ભેદી શકાતો નથી, અરૂપી છે, અનાદિ કાલથી અમૂર્ત પરિણામવાળો છે. અને તે નિત્ય છે.



અનેન-“આત્મા નાતીન્દ્રિયો નાપિ જડાદ્ ભિન્નઃ” ઇતિ નાસ્તિકમતં નિરસ્તમ્ ।

નિન્વમૂર્તોઽયમાત્મા નેત્રાદિભિરિન્દ્રિયૈસ્તુ ન વિજ્ઞેયસ્તર્હિ કથમિમં જનો જાનીયાત્-‘અસ્ત્યત્રાત્મે’-તિ ।

શ્રૂયતામ્-કસ્યચિત્ સમક્ષમષ્ટવર્ષીયો બાલસ્તિષ્ઠતિ; તત્સમાનાકૃતિ-મૃન્મયી પુત્તલિકાઽપિ તિષ્ઠતિ । તત્રાસૌ દ્રષ્ટા પશ્યતિ-ઇયં પુત્તલિકા ચક્ષુર્ગ્રાણ-કર્ણયુક્તાઽપિ દ્રષ્ટું ગ્રાતું શ્રોતું વા ન શક્નોતિ, પુનરયં બાલશ્ચક્ષુર્મ્યાં પશ્યતિ, પુષ્પમાગ્રાતિ, કસ્યચિદ્ભાષિતં શૃણોતિ ચ ।

ઇસ કથન સે નાસ્તિક કે ઇસ મત કા નિરાકરણ હો ગયા કિ-‘આત્મા ન અતીન્દ્રિય હૈ ઓર ન જડ સે ભિન્ન હૈ’ ।

શંકા-આત્મા અમૂર્ત હૈ, નેત્ર આદિ ઇન્દ્રિયો સે જાના નહીં જા સકતા તો મનુષ્ય કૈસે સમજે કિ આત્મા કા અસ્તિત્વ હૈ ? ।

સમાધાન-સુનિયે । માન લીજિએ કિસી કે સામને આઠ વર્ષ કા બાલક સ્વડા હૈ, ડસી કે સમાન આકૃતિવાલી મિટ્ટી કી એક પુતલી મી રક્ષી હૈ । દોનો કો દેખને વાલા દેખતા હૈ કિ-યહ પુતલી નેત્ર, નાક ઓર કાન સે યુક્ત તો હૈ કિન્તુ દેખને મેં સૂંઘને મેં ઓર સુનને મેં સમર્થ નહીં હૈ, ઓર યહ બાલક આંખો સે દેખતા હૈ, ફૂલ સૂંઘતા હૈ, ઓર કિસી કા ભાષણ સુનતા હૈ ।

આ ઓથનથી નાસ્તિકના એ મતનું નિરાકરણ થઈ ગયું કે “આત્મા અતીન્દ્રિય નથી, અને જડથી ભિન્ન નથી.”

શંકા-આત્મા અમૂર્ત છે, નેત્ર આદિ ઇન્દ્રિયોથી બાહ્યી શકાતો નથી; તો પછી માણસો કેવી રીતે સમજી શકશે કે આત્માનું અસ્તિત્વ છે.

સમાધાન-સાંભળો ? માની લો કે કોઈ (માણસ)ના સામે એક આઠ વર્ષનો બાળક ઉભો છે. તેની બાજુમાં તેના જેવી સમાન આકૃતિવાલી માટીની એક પુતળી પણ રાખી છે. આ બન્નેને જોવાવાળાં જીવે છે કે-આ પુતળી નેત્ર, નાક, કાનથી યુક્ત તો છે; પરંતુ જોવામાં, સૂંઘવામાં અને સાંભળવામાં સમર્થ નથી. અને આ બાળક નેત્રથી જીવે છે, ફૂલ સૂંઘે છે અને કોઈનું ભાષણ સાંભળે છે.

इयं च पुत्तलिका न किञ्चिदिच्छति, पुनरयं बालः सकलेन्द्रियैर्विषय-  
मुपभुज्य सुखीभवितुमिच्छति । यदि कोऽपि खड्गमुत्थाप्येमावभिधावेत् तदा  
पुत्तलिका पूर्ववदेवावस्थिता भविष्यति, बालस्तु खड्गाभिघातजनितदुःखादुद्विज्य  
पलायिष्यते । असौ बालः कमपि बुभुक्षितं बालमुपकरिष्यति भोजनीयवस्तु-  
प्रदानेन, कमपि चान्यं बालं चपेटादिप्रहारेण क्रन्दयिष्यति । पुत्तलिका तु  
हितमहितं वाऽपि किञ्चिन्नैव कर्तुं प्रभविष्यति । यदि मिष्टाशनाय बाल आहूतो  
भवेत् तदानीं सत्वरमागतो बालो भोक्तुं प्रवर्तेत, तज्जन्यसुखानुभवोऽपि तस्य  
जायेत । पुत्तलिका तु नागमिष्यति न किञ्चिद् भोक्ष्यते, का वार्ता सुखानुभवस्य ? ।

यह पुतली कुछ भी इच्छा नहीं करती मगर बालक सभी इन्द्रियों के विषयों का  
भोग करके सुखी होने की इच्छा करता है । अगर कोई तलवार उठाकर इन्हें मारने  
दांडे तो पुतली ज्यों की त्यों खड़ी रहेगी मगर बालक तलवार के आघात के दुःख  
से उद्विग्न हो कर या आघात की आशङ्का से भाग जायगा । वह बालक किसी  
भूखे बालक को भोजन देकर उसका उपकार भी करेगा और किसी बालक को थप्पड़  
आदि मारकर रुलाएगा, मगर पुतली किसीका हित या अहित करने में समर्थ नहीं  
है । अगर बालक को मिठाई खाने के लिए बुलाया जाय तो उसी समय आकर वह  
मिठाई पर दूट पड़ेगा और उसे मिठाई खाने के सुख का अनुभव भी होगा ।  
पुतली न मिठाई के लिए आएगी न खाएगी, सुख का अनुभव करने की तो बात  
ही अलग रही । अत एव यह निश्चय होता है कि बालक में जीव का लक्षण ज्ञान

आ पुतली કાંઈ પણ ઇચ્છા કરતી નથી. પરંતુ બાળક સર્વ ઇન્દ્રિયોના  
વિષયોનો ભોગ કરીને સુખી થવાની ઇચ્છા કરે છે. અથવા કોઈ તલવાર ઉઠાવીને  
તેને મારવા દોડે તો પુતલી તો જમ છે તેમ ત્યાં ઉભી રહેશે. પરંતુ બાળક  
તલવાર મારવાના દુઃખથી ઉદ્વિગ્ન-ચિંતાતુર બનીને અથવા તો મારવાની આશંકાથી  
ભાગી જશે.

એ બાળક કોઈ ભૂખ્યા બાળકને ભોજન આપીને તેનો ઉપકાર પણ કરશે અને  
કોઈ બાળકને થપડ આદિ મારીને તેને રાવરાવશે, પરંતુ પુતલી કોઈનું હિત કે  
અથવા અહિત કરવા સમર્થ નથી. અથવા બાળકને મિઠાઈ ખાવા માટે બોલાવવામાં  
આવે તો તેજ સમયે આવીને મિઠાઈ પર તૂટી પડશે અને તેને મિઠાઈ ખાવાનો  
સુખનો અનુભવ પણ થશે. પુતલી મિઠાઈ માટે આવશે નહીં. અને ખાશે પણ નહીં.  
તો સુખના અનુભવની તો વાત જ જૂઠી રહી. એ કારણથી નિશ્ચય થાય છે કે

તથા ચાયં નિશ્ચયઃ—બાલે જીવલક્ષણસ્ય જ્ઞાનસ્ય સદ્ભાવાદ્ બાલશરીરે જીવોઽસ્તીતિ ।  
 એવમન્યત્રાપિ સજીવશરીરે જીવસ્ય સત્તા નિશ્ચેતું શક્યતે । વસ્તુતોઽયમાત્મૈવ કર્તા  
 ભોક્તા નાનાવિધશુભપરિણતિકર્તા ચેતિ । અયમાત્મા સંસારાવસ્થાયાં સ્વજ્ઞાનવશેન  
 દુઃખમર્જયતિ । ઉક્તઞ્ચ—

“સંસારે પર્યટન્ જન્તુ, —વૃહુયોનિસમાકુલે,  
 શારીરં માનસં દુઃખં, પ્રાપ્નોતિ વત દારુણમ્ ॥૧॥  
 આર્તધ્યાનરતો મૂઢો, ન કરોત્યાત્મનો હિતમ્,  
 તેનાસૌ સુમહત્ ક્લેશં, પરત્રેહ ચ ગચ્છતિ ” ॥૨॥

વિદ્યમાન છે, હાલે ઉસ મેં જીવ છે । હસી પ્રકાર અન્યત્ર મી સજીવ શરીર મેં  
 જીવ કી સત્તા કા નિશ્ચય કિયા જા સકતા છે । વાસ્તવ મેં યહી આત્મા કર્તા, ભોક્તા  
 ઓર નાના પ્રકાર કી શુભ ઓર અશુભ પરિણતિયોં કા કર્તા છે । આત્મા સંસાર—  
 અવસ્થા મેં અપને અજ્ઞાન કે આધીન હો કર દુઃખ ઉપાર્જન કરતા છે, કહા મી છે :—

“નાના પ્રકાર કી યોનિયોં સે યુક્ત હસ સંસાર મેં ભ્રમણ કરતા હુઆ જીવ  
 અનેક ઓર મયાનક શારીરિક એવં માનસિક દુઃખ પ્રાપ્ત કરતા છે ॥ ૧ ॥

આર્તધ્યાન ઓર રૌદ્રધ્યાન મેં લીન રહેને વાલા મૂઢ જીવ આત્મા કા હિત  
 નહીં કરતા । હસી કારણ વહ હસ લોક ઓર પર લોક મેં મહાન્ ક્લેશ પાતા છે ” ॥૨॥

ખાલકમાં જીવનું લક્ષણ—જે જ્ઞાન તે વિદ્યમાન છે, તે કારણથી તેમાં જીવ છે. એ  
 પ્રમાણે અન્યત્ર પણ સજીવ શરીરમાં જીવની સત્તાનો નિશ્ચય કરી શકાય છે.  
 વાસ્તવમાં આ આત્મા કર્તા, ભોક્તા અને નાના પ્રકારની શુભ અને અશુભ  
 પરિણતિઓનો કર્તા છે. આત્મા સંસાર અવસ્થામાં પોતાના અજ્ઞાનને આધીન થઈને  
 દુઃખ ઉપાર્જન કરે છે. કહ્યું પણ છે કે:—

“નાના પ્રકારની યોનિયોથી યુક્ત આ સંસારમાં ભ્રમણ કરતો થકો જીવ  
 અનેક ભયાનક શારીરિક અને માનસિક દુઃખ પ્રાપ્ત કરે છે. ॥૧॥

આર્તધ્યાન અને રૌદ્રધ્યાનમાં લીન રહેવા વાળો મૂઢ જીવ આત્માનું હિત  
 કરતો નથી. આ કારણથી તે આ ભોક્તા અને પરભોક્તામાં મહાન્ ક્લેશ પામે છે. ॥૨॥



(११) आत्मनः प्रतिशरीरं भिन्नत्वम्—

आत्मा-प्रतिशरीरं भिन्नः । एकस्यैवात्मनः प्रतिशरीरसत्त्वे तु जन्ममरणबन्ध-  
मोक्षव्यवस्था नोपपद्येरन् । अन्यो जातः, अन्यो मृतः । अन्यो बद्धः, अन्यस्तु मुक्त  
इति व्यवस्था कथमुपपद्येत, तस्मात् प्रतिशरीरं भिन्न इति सिद्धम् । तथा चानन्ता  
आत्मान इति मन्तव्यम् । अनेनाऽद्वैतवादो निराकृतः ।

(१२) आत्मनः पौद्गलिककर्मसंयुक्तत्वम्—

अयमात्मा—पौद्गलिककर्मसंयुक्तः । निश्चयनयेन कर्मरहितोऽपि व्यवहार-  
नयतोऽनादिकालतः पौद्गलिककर्मसंबद्धोऽस्ति, तस्मादयं पौद्गलिककर्मसंयुक्त  
इति कथ्यते ।

(११) आत्मा का प्रतिशरीरभिन्नत्व—

आत्मा अलग-अलग शरीरों में अलग-अलग है । समस्त शरीरों में  
एक ही आत्मा का अस्तित्व माना जाय तो जन्म, मरण, बन्ध और मोक्ष  
की व्यवस्था नहीं हो सकेगी । अर्थात् कोई जनमा, कोई मरा, कोई बद्ध हुआ  
और कोई मुक्त हुआ, ऐसी व्यवस्था कैसे बन सकेगी ? अतः आत्मा प्रत्येक  
शरीर में अलग ही सिद्ध होता है । आत्माएँ अनन्त हैं; ऐसा मानना चाहिए ।  
इस से अद्वैतवाद का निराकरण हो गया ।

(१२) आत्मा का पौद्गलिक कर्मसंयोग—

यह आत्मा पौद्गलिक कर्मों से संयुक्त है । निश्चयनय से कर्मरहित होने पर  
भी व्यवहारनयकी अपेक्षा अनादिकाल से पौद्गलिक कर्मों के साथ आत्मा

(११) आत्मानुं प्रतिशरीरभिन्नत्व

आत्मा जूढ़ा-जूढ़ा शरीरिमां जूढ़ो-जूढ़ो छे. समस्त शरीरिमां अेक ज आत्मानुं  
अस्तित्व मानवामां आवे तो जन्म, मरण, बंध अने मोक्षनी व्यवस्था थर्छ शकशे  
नही. अर्थात्, केधनुं जन्म, केधनुं मरण, केध अद्ध थाय अने केध मुक्त थाय  
अेवी व्यवस्था केवी रीते अनी शकशे ? आ कारणुथी 'आत्मा प्रत्येक शरीरमां अलग  
छे.' अेम सिद्ध थाय छे आत्मा अनंत छे अेम मानवुं जेध अे, आथी अद्वैतवादनुं  
निराकरणु थर्छ गयुं.

(१२) आत्मानो पौद्गलिक कर्मसंयोग

आ आत्मा पौद्गलिक कर्मोथी संयुक्त (कर्मो साथे जेडाअेले) छे निश्चय-  
नयथी कर्मरहित होवा छतांय पणु व्यवहारनयनी अपेक्षा अनादिकालथी पौद्गलिक

આત્મનો મિથ્યાત્વેન સહાનાદિઃ સમ્બન્ધઃ । અનાદિમિથ્યાત્વજનિત-  
વિભાવપરિણામરૂપરાગદ્વેષપરિણત્યાઽઽત્મા સંતપ્તાયોગોલક ઇવ સલિલં સર્વતોભાવેન  
જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મદલં સમાકૃષ્ય સ્વસ્મિન્ સંયોજયતિ । તતોઽસૌ વહ્નિનાઽયોગોલક  
ઇવ, નીરેણ ક્ષીરમિવ તેન કર્મદલેનૈક્યભાવં પ્રાપ્ય મૂર્ત ઇવ ભવતિ, અત એવ  
નિશ્ચયનયેનાઽમૂર્તોઽપિ વ્યવહારનયેનાત્મા મૂર્ત ઇત્યુચ્યતે । કર્મસમ્બન્ધોઽયમાત્મનો  
વ્યવહારનયત એવ ।

કા સંયોગ છે । અત એવ ઉસે પૌદ્ગલિક કર્મો સે સંયુક્ત કહતે હૈં । મિથ્યાત્વ  
કે સાથ આત્મા કા અનાદિ સમ્બન્ધ છે । અનાદિકાલીનમિથ્યાત્વજનિત  
વિભાવ-પરિણતિરૂપ રાગ-દ્વેષ સે આત્મા અપને સમસ્ત પ્રદેશો સે જ્ઞાનાવરણ આદિ  
કે કર્મદલિકોં કો ઉસી પ્રકાર ગ્રહણ કરતા છે, જૈસે યૂવ તપા હુઆ લોહે કા  
ગોળા જલ કો ગ્રહણ કરતા છે । અતઃ જૈસે અગ્નિ ઓર લોહગોલક એકમેક  
સે હો જાતે હૈં, ઓર દૂધ-પાણી એક-મેક હોયા હુઆ પ્રતીત હોતા છે, ઇસી  
પ્રકાર કર્મદલિકોં કે સાથ આત્મા એકમેક હોકર મૂર્ત-સા હો જાતા છે । ઇસ  
પ્રકાર નિશ્ચયનય સે અમૂર્ત હોને પર મી વ્યવહારનય સે આત્મા મૂર્ત છે । આત્મા  
ઓર કર્મ કા વહ સમ્બન્ધ વ્યવહારનય સે હી સમજના ચાહિએ ।

કર્મોની સાથે આત્માનો સંયોગ છે. એ કારણથી તેને પૌદ્ગલિક કર્મોથી સંયુક્ત  
કહે છે.

મિથ્યાત્વની સાથે આત્માનો અનાદિ સંબંધ છે. અનાદિકાલીન મિથ્યાત્વથી  
ઉત્પન્ન વિભાવ-પરિણતિરૂપ રાગ-દ્વેષથી આત્મા પોતાના સમસ્ત પ્રદેશોથી જ્ઞાનાવરણ  
આદિના કર્મદળોને એવી રીતે ગ્રહણ કરે છે કે જેવી રીતે ખૂબ તપેલા લોહનો  
ગોળો જલનું ગ્રહણ કરે છે. એટલે કે જેમ અગ્નિ અને લોહનો ગોળો એકમેક  
થઈ જાય છે, અને દૂધ-પાણી એકમેક થયેલા પ્રતીત થાય છે. તે પ્રમાણે કર્મ-  
દલિકોની સાથે આત્મા એક-મેક થઈને મૂર્ત જેવો થઈ જાય છે. આ પ્રમાણે  
નિશ્ચયનયથી અમૂર્ત હોવા છતાંય પણ વ્યવહારનયથી આત્મા મૂર્ત છે. આત્મા  
અને કર્મનો આ સંબંધ વ્યવહારનયથી જ સમજવો જોઈએ.

કર્મબન્ધાપેક્ષયાઽઽત્મના સહ પુદ્ગલસ્યૈક્યરૂપઃ સંબન્ધઃ, પરન્તુ લક્ષણા-  
પેક્ષયા દ્વયોર્મિન્નતા પ્રતીયતે । તસ્માદાત્મન એકાન્તેનાઽમૂર્તત્વં નાસ્તિ । इदमत्र  
तत्त्वम्-बन्धस्तु वस्तुतः पुद्गलस्य पुद्गलेन सह भवति; यथा पृथक् पृथक् पुद्गला  
रूक्षस्निग्धगुणाभ्यां परस्परं बन्धं प्राप्नुवन्ति तद्वत्-आत्मना सह पूर्ववद्भैः कर्मपुद्गलैः  
सह नूतनकर्मपुद्गला निबध्यन्ते । आत्मनोऽसंख्यातप्रदेशेष्वेपां कर्मपुद्गलानामवगाहनं  
भवति । आत्मन एकैकप्रदेशेऽनन्तकर्मपुद्गलास्तिष्ठन्ति । आत्मप्रदेशानां कर्मपुद्गलानां  
चैकक्षेत्रेऽवगाहनरूप एव बन्धः । ईदृशोऽयं बन्धो नास्ति ।

કર્મબન્ધ કી અપેક્ષા આત્મા કે સાથ પુદ્ગલ કા એકત્વ-રૂપ-સમ્બન્ધ છે, કિન્તુ લક્ષણો  
સે દોનો મિત્ર-મિત્ર પ્રતીત હોતે હૈં, ઇસ લિએ આત્મા મેં એકાન્ત અમૂર્તતા નહીં છે । તાત્પર્ય  
યહ છે કિ-વાસ્તવ મેં પુદ્ગલકા બન્ધ તો પુદ્ગલ કે સાથ હી હોતા હૈ, જૈસે પૃથક્ પૃથક્ પુદ્ગલ  
રૂક્ષતા ઔરે સ્નિગ્ધતા ગુણોં કે કારણ પરસ્પર બદ્ધ હો જાતે હૈં, ઇસ પ્રકાર આત્મા કે સાથ  
પહેલે સે બંધે હુએ કર્મપુદ્ગલ કે સાથ નવીન કર્મપુદ્ગલોં કા બન્ધ હોતા હૈ, ઇન પુદ્ગલોં  
કી અવગાહના આત્મા કે અસંખ્યાત પ્રદેશોં મેં હોતી હૈ । આત્મા કે એક-એક પ્રદેશ મેં  
અનન્ત પુદ્ગલ રહતે હૈં । આત્મપ્રદેશોં કા ઔર કર્મ-પુદ્ગલોં કા બન્ધ એકક્ષેત્રાવગાહન  
રૂપ હી હૈ, જૈસે એક પુદ્ગલ દુસરે પુદ્ગલ કે સાથ સ્નિગ્ધતા ઔર રૂક્ષતા ગુણ કે કારણ  
મિલ કર સ્કન્ધ બન જાતા હૈ, વૈસા આત્મા ઔર પુદ્ગલ કા બન્ધ નહીં હોતા । કર્મ-

કર્મ બંધની અપેક્ષા આત્માની સાથે પુદ્ગલનો એકત્વરૂપ સંબંધ છે, પરંતુ  
લક્ષણોથી બંને ભિન્ન ભિન્ન પ્રતીત થાય છે. એ કારણથી એકાન્ત ભૂર્તતા નથી.  
તાત્પર્ય એ છે કે:—વાસ્તવમાં પુદ્ગલનો બંધ તો પુદ્ગલની સાથે જ થાય છે.  
પૃથક્-પૃથક્ પુદ્ગલ રૂક્ષતા અને સ્નિગ્ધતા ગુણોના કારણે પરસ્પર બદ્ધ થઈ જાય  
છે. એ પ્રમાણે આત્માની સાથે પ્રથમથી બદ્ધ થયેલા (આત્માને પ્રથમ ચોટેલા)  
કર્મપુદ્ગલોની સાથે નવીન કર્મપુદ્ગલોનો બંધ થાય છે. તે પુદ્ગલોની અવગાહના  
આત્માના અસંખ્યાત પ્રદેશોમાં થાય છે. આત્માના એક એક પ્રદેશમાં અનન્ત પુદ્ગલ  
રહે છે. આત્માના પ્રદેશો અને કર્મપુદ્ગલોનો બંધ એકક્ષેત્રાવગાહનરૂપ જ છે. જેવી  
રીતે એક પુદ્ગલ બીજા પુદ્ગલની સાથે સ્નિગ્ધતા અને રૂક્ષતા ગુણોના કારણે  
મળીને સ્કન્ધ બની જાય છે, તેવી રીતે આત્મા અને પુદ્ગલનો બંધ થતો નથી.  
કર્મપુદ્ગલોની અવગાહના આત્માની સાથે આ પ્રકારે અનાદિકાલથી ચાલી આવે છે



યથા—પુદ્ગલસ્ય પુદ્ગલેન સહ સ્નિગ્ધરૂક્ષગુણસદ્ભાવે સતિ સ્કન્ધભાવરૂપો બન્ધો ભવતિ । કર્મપુદ્ગલાનામવગાહનાઽઽત્મના સહેત્યમનાદિકાલતઃ પ્રવૃત્તા, યત્—એકપિણ્ડરૂપં કાર્મણશરીરમેવ સંજાયતે । તત્ત્વ શરીરમાત્મનઃ પ્રદેશમેકમપિ ન મુશ્વતિ । આત્મનઃ સર્વપ્રદેશમભિવ્યાપ્ય તિલે તૈલમિવ કાર્મણશરીરં તિષ્ઠતિ, કિન્તુ—અક્ષર—સ્યાનન્તતમો ભાગો વર્તતે એવ, મેઘપટલાચ્છાદિતસૂર્યરશ્મિવત્ । इदं कर्मणं शरीरं तैजसं चेति द्वयं शरीरमति सूक्ष्मं सदाऽऽत्मना सह वर्तते । यत्र सूक्ष्मशरीरे स्थूलशरीरे वाऽयमात्मा गच्छति तत्प्रमाणो भवन् संकुचितो विस्तृतो वा भवति । तदानीमिदं द्वयं शरीरमपि सूक्ष्मस्थूलशरीरानुसारेण संकुचितं विस्तृतं वा भवति ।

યથા—અકૃત્રિમપર્વતાદૌ સ્કન્ધરચના વિદ્યમાનૈવ, તથાપિ તસ્માત્

પુદ્ગલો કી અવગાહના આત્મા કે સાથે આ પ્રકારે અનાદિકાલ સે ચલી આતી હૈ કિ એક પિણ્ડરૂપ કાર્મણ શરીર હી ઉત્પન્ન હોતા હૈ । યહ કાર્મણ શરીર આત્મા કે એક મી પ્રદેશકો નહીં છોડતા । આત્મા કે સમસ્ત પ્રદેશો કો વ્યાપ્ત કરકે, તિલ મેં તેલ કી તરહ કાર્મણ શરીર રહતા હૈ, કિન્તુ જ્ઞાન કા અનન્તવાં ભાગ બાદલો સે આચ્છાદિત સૂર્ય કી પ્રભા કે સમાન ખુલા રહતા હી હૈ ।

યહ કાર્મણ શરીર ઔર તૈજસ શરીર અત્યન્ત સૂક્ષ્મ હૈ ઔર આત્મા કે સાથે સદૈવ રહતે હૈ । જિસ સૂક્ષ્મ યા સ્થૂલ શરીર મેં આત્મા જાતા હૈ યહી શરીરપ્રમાણ સંકુચિત યા વિસ્તૃત હો જાતા હૈ, ઔર યહ સમય યે દોનો શરીર મી સૂક્ષ્મ અથવા સ્થૂલ શરીર કે અનુસાર સંકુચિત અથવા વિસ્તૃત હો જાતે હૈ ।

જૈસે અકૃત્રિમ પર્વત આદિ મેં સ્કન્ધ કી રચના તો જ્યો કી લ્યો વિદ્યમાન રહતી હૈ કે એકપિણ્ડરૂપ કાર્મણ શરીર જ ઉત્પન્ન થાય છે તે કાર્મણ શરીર આત્માના એક પણ પ્રદેશને છોડતો નથી. આત્માના તમામ પ્રદેશોને વ્યાપ્ત (ચારેય તરફ ઘેરાયેલું) કરીને તલમાં તેલ રહે છે તે પ્રમાણે કાર્મણ શરીર રહે છે.

પરંતુ જ્ઞાનનો અનન્તમો ભાગ, વાદળાઓથી ઢંકાયેલી સૂર્યની પ્રભા પ્રમાણે ખુલ્લો રહે જ છે ? તે કાર્મણ શરીર અને તૈજસ શરીર અત્યન્ત સૂક્ષ્મ છે. અને આત્માની સાથે તે હંમેશાં રહે છે. જે સૂક્ષ્મ કે સ્થૂલ શરીરમાં આત્મા જાય છે તે શરીર પ્રમાણે સંકુચિત અથવા વિસ્તૃત થઈ જાય છે. અને તે સમય આ અન્ને શરીર પણ સૂક્ષ્મ અથવા સ્થૂલ શરીરના અનુસાર સંકુચિત અથવા વિસ્તૃત થઈ જાય છે.

જેવી રીતે અકૃત્રિમ પર્વત આદિના સ્કન્ધની રચના તો જેવી છે તેવી જ

स्कन्धात् पुरातनाः पुद्गलाः क्षरन्ति नूतनास्तु तत्रागत्य मिलन्ति, तथाऽनयो-  
स्तैजस-कर्मण-शरीरयोः स्वरूपं न कदाचिद् विनश्यति, परन्तु तत्रत्याः  
पुरातनाः कर्मपुद्गलाः स्वस्वफलप्रदानपुरस्सरं स्वावस्थितिसमयं समाप्याप-  
गच्छन्ति, नूतनाः पुनः कर्मपुद्गला आत्मप्रदेशेषु मिलित्वा संबद्धा भवन्ति ।  
एवामात्मप्रदेशैः सहानादिकालतः प्रवाहरूपोऽयं समायातः कर्मणां सम्बन्धः ।

अयं च कर्मसम्बन्धस्तदैव विनश्यत्यति, यदाऽयमात्मा मुक्तिं लभेत् । आभ्यां  
तैजसकर्मणशरीराभ्यां वियोग एव मुक्तिरुच्यते । यद्यनादिकालतः कर्मण-  
शरीरं संसारिणो न स्यात् तदा कदाचिदपि नवीनकर्मणवर्गणाभिर्बन्धो न  
भवेत् । कर्मणशरीराभावादेव सिद्धानां कर्मणवर्गणापरिपूर्णेऽपि सिद्धक्षेत्रे  
कर्मबन्धो न भवति ।

फिर भी उस स्कन्ध से पुराने पुद्गल खिरते रहते हैं और नवीन पुद्गल आकर उसमें मिल जाते  
हैं, इसी प्रकार तैजस और कर्मण शरीर का स्वरूप कभी नष्ट नहीं होता, किन्तु उसमें के  
पुराने कर्म-पुद्गल अपना-अपना फल देकर, अपनी स्थिति का काल समाप्त करके हट जाते  
हैं और नवीन पुद्गल आत्मप्रदेशों में मिलकर बद्ध हो जाते हैं । इस प्रकार आत्मप्रदेशों के साथ  
कर्मों का सम्बन्ध अनादिकाल से प्रवाहरूप में चला आता है ।

यह कर्म-सम्बन्ध उसी समय नष्ट होगा, जब आत्मा मुक्त हो जायगा । तैजस और  
कर्मण शरीर से सर्वथा वियोग हो जाना ही आत्मा की मुक्ति है । संसारी जीव के साथ  
अनादि काल से कर्मण शरीर का सम्बन्ध न होता तो नवीन कर्मवर्गणाओं का सम्बन्ध  
कभी न होता । यद्यपि सिद्धक्षेत्र कर्मणवर्गणा से भरा हुआ है, फिर भी सिद्धों में कर्मण  
शरीर न होने से उन्हें कर्मबन्ध नहीं होता ।

વિદ્યમાન રહે છે, તે પણુ તે સ્કંધમાંથી પુરાણા પુદ્ગલ ખરતાં રહે છે. અને  
નવીન પુદ્ગલ આવીને તેમાં મળી જાય છે. એ પ્રમાણે તૈજસ અને કાર્મણ  
શરીરનું સ્વરૂપ કોઈ વખત પણ નાશ થતું નથી, પરંતુ તેમાં પુરાણા કર્મપુદ્ગલ  
પોત-પોતાનું ફળ આપીને પોતાની સ્થિતિનો સમય સમાપ્ત કરીને હટી જાય છે,  
અને નવીન પુદ્ગલ આત્મપ્રદેશોમાં મળીને બદ્ધ થઈ જાય છે. આ પ્રમાણે આત્મ-  
પ્રદેશોની સાથે ક્રમોનો સંબંધ અનાદિ કાળથી પ્રવાહરૂપમાં ચાલ્યો આવે છે.

આ કર્મ-સંબંધ તે સમયે નાશ થશે કે જ્યારે આત્મા મુક્ત થઈ જશે  
તૈજસ અને કાર્મણ શરીરની સર્વથા વિયોગ થઈ જવો તેજ આત્માની મુક્તિ છે.  
સંસારી જીવની સાથે અનાદિ કાલથી કાર્મણ શરીરનો સંબંધ જો ન હોત તો  
નવીન કર્મવર્ગણાઓનો સંબંધ પણ કોઈ વખત નહીં થતે, જો કે (સિદ્ધક્ષેત્ર

## (૧૩) આત્મન ઋધ્વગતિસ્વભાવત્વમ્—

અયમાત્મા-ઋધ્વગતિશીલઃ, અગુરુલઘુત્વાત્ । યદેવં તર્હિ કથમધો ગચ્છતિ ? । અલાબુર્યથા સ્વભાવતઃ ઋધ્વગમનશીલોપિ મૂલેપાજ્જલેઽધો ગચ્છતિ; તદપગમાદૂધ્વ-માજલાન્તાદ્ ગચ્છતિ, એવમાત્માપિ કર્મલેપાદધો ગચ્છતિ તદપગમાદૂધ્વમાલો-કાન્તાદ્ ગચ્છતિ । યથા વા-एण्डवीजमपि बन्धनमुक्तं सदूध्वं गच्छति ।

## (૧૩) આત્માકા ઋધ્વગતિસ્વભાવ—

યહ આત્મા ઋધ્વગમન સ્વભાવ વાળા હૈ; ક્યોં કિ વહ અગુરુલઘુ હૈ । પ્રશ્ન કિયા જા સકતા હૈ કિ અગર એસી વાત હૈ તો આત્મા અધોગમન ક્યોં કરતા હૈ ? હિસ પ્રશ્ન કા ઉત્તર યહ હૈ કિ જૈસે પાની મેં ઊપર કી ઓર ગમન કરને કા તુંવેકા સ્વભાવ હૈ, ફિર મી મિટ્ટી કા લેપ કર દેને સે વહ અધોગમન કરતા હૈ ઓર લેપ હટ જાને પર જલ કી સતહ તક ઊપર કી ઓર ઉઠતા હૈ । હિસી પ્રકાર આત્મા કર્મલેપ કે કારણ નીચે જાતા હૈ ઓર કર્મલેપ હટ જાને સે લોક કે અગ્રભાગ તક ઊપર કી ઓર જાતા હૈ । અથવા જૈસે-एण्ड का बीज बन्धन से मुक्त होकर उपर जाता है उसी प्रकार आत्मा भी कर्मबन्धन का नाश होने पर उपर जाता है ।

કાર્મણ્યવર્ગણ્યાએથી ભરેલો છે, તો પણ સિદ્ધોમાં કાર્મણ્ય શરીર નહિ હોવાથી તેને કર્મબંધ થતો નથી.

## (૧૩) આત્માનો ઋધ્વગતિસ્વભાવ—

આ આત્મા ઋધ્વ-ગતિ-ગમન-સ્વભાવ વાળો છે, કારણ કે તે અગુરુ-લઘુ છે. તો પ્રશ્ન કરી શકાય છે કે અગર જો એ પ્રમાણે છે તો આત્મા અધોગમન કેમ કરે છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એ છે કે:-તુંબડાનો સ્વભાવ જેમ પાણીમાં ઉપરની તરફ આવવાનો છે તો પણ તેને માટીનો લેપ કરી દેવાથી તે પાણીમાં નીચે જાય છે. અને માટીનો લેપ દૂર થતાં જલની સપાટી સુધી ઉપરના ભાગમાં આવે છે. એ પ્રમાણે આત્મા કર્મલેપના કારણે નીચે જાય છે, અને કર્મલેપ દૂર થવાથી લોકના અગ્રભાગ સુધી ઉપરના ભાગમાં જાય છે. અથવા જેવી રીતે એરંડાનું બીજ બંધનથી મુક્ત થતાં ઉપર જાય છે. તે પ્રમાણે આત્મા પણ કર્મબંધન નાશ થતાં ઉપર જાય છે.



### લોકવાદિપ્રકરણમ્—

યઃ પુનરેવંરૂપમાત્માનં સર્વથા વિજ્ઞાયાત્મસ્વરૂપનિરૂપણપરઃ સ એવ વસ્તુતો લોકવાદીત્યાહ—‘લોકવાદી’ ઇતિ । લોક્યતે સર્વજ્ઞૈરિતિ લોકઃ— ષડ્જીવનિકાયરૂપઃ । અત્ર લોકશબ્દેન ષડ્જીવનિકાયો ગૃહ્યતે, ભગવતાઽઽત્મજ્ઞાન-મેવ પુરસ્કૃત્ય લોકવાદિપ્રતિબોધનાત્ । યઃ ષડ્જીવનિકાયરૂપં લોકં વિજાનાતિ સ એવ લોકવાદી=લોકસ્વરૂપકથનસ્વભાવવાન્, ન તુ ષડ્જીવનિકાયાનભિજ્ઞ ઇત્યર્થઃ ।

ષડ્જીવનિકાયરક્ષણેનૈવાત્મસ્વરૂપં પ્રકટીભવતિ । તચ્ચ ષડ્જીવ-

### લોકવાદિપ્રકરણ—

જો હાસ પ્રકાર આત્મા કે સ્વરૂપ કો જાન કર આત્મા કે નિરૂપણ મેં તત્પર હોતા હૈ વહી વાસ્તવ મેં લોકવાદી હૈ ।

સર્વજ્ઞો દ્વારા જો લોકા જાય—અવલોકન કિયા જાય વહ લોક હૈ, અર્થાત્ ષડ્જીવનિકાય કો લોક કહતે હૈ । ‘લોક’ શબ્દ સે યહાં ષડ્જીવનિકાય કા હી ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, ક્યોં કિ ભગવાન્ ને આત્મજ્ઞાન કો હી આગે રાખકર લોકવાદી કા કથન કિયા હૈ । જો ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક કો જાનતા હૈ વહી લોકવાદી હૈ, અર્થાત્ લોક કે સ્વરૂપ કા કથન કરને વાલા હૈ, કિન્તુ ષડ્જીવનિકાય સે અનભિજ્ઞ નહીં ।

ષડ્જીવનિકાય કી રક્ષા કરને સે હી આત્મા કા સ્વરૂપ પ્રકટ હોતા હૈ । ષડ્જીવ-

### લોકવાદીપ્રકરણ

જો આ પ્રમાણે આત્માના સ્વરૂપને જાણી કરીને આત્માના નિરૂપણમાં તત્પર થાય છે તે વાસ્તવિક રીતે લોકવાદી છે.

સર્વજ્ઞો દ્વારા જે લોકાવાય—અવલોકન કરાય,—અર્થાત્ સર્વજ્ઞો જેને જોઈ શકે છે તે લોક છે. અર્થાત્ ષડ્જીવનિકાયને લોક કહે છે. ‘લોક’ શબ્દથી ષડ્જીવનિકાયનું જ ગ્રહણ કર્યું છે, કારણ કે ભગવાને આત્મજ્ઞાનને જ આગળ રાખીને લોકવાદીનું કથન કર્યું છે. જે ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકને જાણે છે, તે લોકવાદી છે, અર્થાત્ લોકના સ્વરૂપનું કથન કરવા વાળા છે ષડ્જીવનિકાયથી અનભિજ્ઞ હોય તે નહિ.

ષડ્જીવનિકાયની રક્ષા કરવાથી જ આત્માનું સ્વરૂપ પ્રગટ થાય છે. ષડ્

નિકાયજ્ઞાનં વિના તદ્રક્ષણં ન સંભવતિ । અતઃ ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપં નિરૂપ્યતે—

જીવાસ્તાવત્ સંક્ષેપતો દ્વિવિધાઃ—સિદ્ધા અસિદ્ધાશ્ચેતિ । તત્ર મુક્તિ પ્રાપ્તાઃ સિદ્ધાઃ, સંસારિણોઽસિદ્ધાઃ । સંસારિણઃ પુનર્દ્વિવિધાઃ—ત્રસ—સ્થાવરભેદાત્ । તત્ર પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુવનસ્પતયઃ સ્થાવરાઃ । ત્રસાશ્ચતુર્વિધાઃ—દ્વીન્દ્રિય—ત્રીન્દ્રિય—ચતુરિન્દ્રિય—પञ્ચેન્દ્રિયભેદાત્ । તત્રેન્દ્રિયાણિ પञ્ચ શ્રોત્ર—ચક્ષુ—ઘ્રાણ—રસન—સ્પર્શનાસ્થાનિ । પૃથિવીકાયોઽપ્કાયસ્તેજસ્કાયો વાયુકાયો વનસ્પતિકાયશ્ચેતિ પञ્ચવિધા જીવા એકેન્દ્રિયાઃ । કૃમ્યાદયો દ્વીન્દ્રિયાઃ, । પિપોલિકાદયસ્ત્રીન્દ્રિયાઃ, અમરાદયશ્ચતુરિન્દ્રિયાઃ । મનુષ્યાદયઃપञ્ચેન્દ્રિયાઃ ।

નિકાય કી રક્ષા ઉસકે જ્ઞાન કે અભાવ મેં નહીં હો સકતી, અતઃ ષડ્જીવનિકાય કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ—

સંક્ષેપ મેં જીવોં કે દો ભેદ હૈ—સિદ્ધ જીવ ઓર અસિદ્ધ જીવ । મુક્ત જીવ સિદ્ધ કહલાતે હૈં ઓર સંસારી જીવ અસિદ્ધ કહલાતે હૈં । સંસારી જીવ મી દો પ્રકાર કે હૈં—ત્રસ ઓર સ્થાવર । પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, ઓર વનસ્પતિકાય સ્થાવર હૈં । ત્રસ જીવ ચાર પ્રકાર કે હૈં—દ્વિન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઓર પञ્ચેન્દ્રિય । શ્રોત્ર, ચક્ષુ, ઘ્રાણ (નાક), રસના ઓર સ્પર્શન, યે પાંચ ઇન્દ્રિયાં હૈં । પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય ઓર વનસ્પતિકાય, યે પાંચ સ્થાવર જીવ એકેન્દ્રિય હૈં । કૃમિ આદિ દ્વીન્દ્રિય હૈં । પિપીલિકા (ચિંટી) આદિ ત્રીન્દ્રિય હૈં । મૈરા આદિ ચૌશ્દ્રિય હૈં । મનુષ્ય આદિ પञ્ચેન્દ્રિય હૈં ।

જીવનિકાયની રક્ષા તેના જ્ઞાનના અભાવમાં થઈ શકતી નથી, તે કારણથી ષડ્-જીવનિકાયનાં સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે:—

સંક્ષેપમાં જીવના બે ભેદ છે.—(૧) સિદ્ધજીવ અને (૨) અસિદ્ધજીવ. મુક્તજીવ તે સિદ્ધ કહેવાય છે અને અસિદ્ધ તે સંસારી જીવ કહેવાય છે. સંસારી જીવ પણ બે પ્રકારના છે. (૧) ત્રસ અને (૨) સ્થાવર. પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય, અને વનસ્પતિકાય તે સ્થાવર છે. ત્રસ જીવ ચાર પ્રકારના છે. દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પञ્ચેન્દ્રિય. શ્રોત્ર (કાન) ચક્ષુ (નેત્ર), ઘ્રાણ (નાક), રસના (જીભ), અને સ્પર્શન (ચામડી), આ પાંચ ઇન્દ્રિયા છે. પૃથિવીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, વાયુકાય અને વનસ્પતિકાય, આ પાંચ સ્થાવરજીવ એકેન્દ્રિય છે, કૃમિ આદિ દ્વીન્દ્રિય છે. કીડી આદિ ત્રીન્દ્રિય છે, ભમરા વગેરે ચૌશ્દ્રિય

અત્ર પશ્ચ સ્થાવરા એકસ્રસથેતિ મિલિત્વા ષ જીવનિકાયા ભવન્તિ  
 એવાં પ્રત્યેકં ભેદાન્ પ્રદર્શયામઃ—

### (૧) પૃથિવીકાયભેદાઃ—

પૃથિવીકાયસ્તાવદુચ્યતે—પૃથિવ્યેવ કાયો યસ્ય સ પૃથિવીકાયઃ ।  
 પૃથિવીકાયાદયઃ પશ્ચ સ્થાવરનામકર્મોદયાત્ સમુત્પન્નાસ્તસ્માદિમે સ્થાવરા ઇતિ  
 કથ્યન્તે । પૃથિવીકાયોઽનેકવિધઃ, શુદ્ધપૃથિવીશર્કરા-વાલ્કાદિભેદાત્ । તત્ર  
 શર્કરાદિભેદરહિતા મૃત્તિકારૂપા, તથા ગોમયકચવરાદિરહિતા વા પૃથિવી—

પાંચ સ્થાવર ઓર એક ત્રસ મિલકર ષજીવનિકાય હૈં । ઇન સબકે  
 ભેદ દિસલાતે હૈં—

### (૧) પૃથિવીકાય કે ભેદ—

પૃથિવી હી જિસ કા શરીર હો, વહ પૃથ્વીકાય કહલાતા હૈ । પૃથ્વીકાય આદિ પાંચો  
 સ્થાવરનાકર્મ કે ઉદય સે ઉત્પન્ન હોને કે કારણ સ્થાવર કહલાતે હૈં । પૃથિવીકાય  
 અનેક પ્રકાર કા હૈં—શુદ્ધ પૃથિવી, શર્કરા, વાલ્ક આદિ । ઊનમ્ શર્કરા આદિ  
 ભેદો સે રહિત મૃત્તિકારૂપ, તથા ગોવર યા કચરા આદિ સે રહિત પૃથિવી શુદ્ધપૃથિવી  
 કહલાતી હૈ । પથ્થર કે છોટે-છોટે સ્ખન્ડો સે મિલી હુઈ મૃત્તિકા શર્કરા પૃથિવી હૈ ।

છે, મનુષ્ય આદિ પાંચેન્દ્રિય છે

પાંચ સ્થાવર અને એક ત્રસ મળીને ષજીવનિકાય છે. એ તમામના ભેદો  
 બતાવે છે:—

### (૧) પૃથિવીકાયના ભેદ—

પૃથિવી જેનું શરીર હોય, તે પૃથિવીકાય કહેવાય છે. પૃથ્વીકાય આદિ પાંચેય  
 સ્થાવરનામકર્મના ઉદયથી ઉત્પન્ન હોવાના કારણે સ્થાવર કહેવાય છે. પૃથ્વીકાય અનેક  
 પ્રકારે છે, શુદ્ધપૃથ્વી, શર્કરા, વાલ્ક (રેતી) આદિ. તેમાં શર્કરા આદિ ભેદોથી રહિત  
 મૃત્તિકારૂપ, અને છાણ અગર કચરા આદિથી રહિત પૃથ્વી શુદ્ધપૃથ્વી કહેવાય છે.  
 પથ્થરના નાના-નાના કકડાઓથી મળેલી માટી તે શર્કરા પૃથિવી છે. વાલ્ક (રેતી)



શુદ્ધપૃથિવી । અશ્મલધુલ્ખણ્ડમિશ્રિતા મૃત્તિકા-શર્કરાપૃથિવી । વાલુકાવ્યતિમિશ્રા મૃત્તિકા-વાલુકાપૃથિવી । एवं बहुविधाः पृथिवीकायाः, तथाहि-

ઉપલ - શિલા - લવણો-ષર - લોહ - ત્રપુ - તામ્ર - સીસક - રજત-સુવર્ણ-હરિતાલ-  
હિંગુલક-મનઃશિલા-સસ્યકાંજન-પ્રવાલા-ભ્રકપટલા-ભ્રવાલુકા-ગોમેદ-રુચકા-ઙ્ક-  
સ્ફટિક - લોહિતાક્ષ - મરકત-મસારગલ્લ-ભુજગે-ન્દ્રનીલ-ગોપીચન્દન-ગૈરિક - હંસગર્ભ-  
પુલક-સૌગન્ધિક-ચન્દ્રકાન્ત-સૂર્યકાન્ત-વૈદૂર્ય-જલકાન્તાદયઃ સર્વે વાદરપૃથિવીકાય-  
ભેદાઃ । एते च शुद्धपृथिव्यादयः स्वस्वनिस्थिता एव चेतनावन्तः । गोमय-  
कचवरादिरूपशस्त्रोपहता रविवह्नितापरूपशस्त्रोपहताश्च गतचेतना भवन्ति ।

વાલુ મિલી મૃત્તિકા વાલુકા પૃથિવી કહલાતી હૈ । ઇસ પ્રકાર પૃથિવીકાય કે અનેક ભેદ હૈ,  
વે ઇસ પ્રકાર :—

પથ્થર, શિલા, નમક, ઉષર, લોહા, રાંગા, તાંબા, શીશા, ચાંદી, સોના, હડતાલ, હિંગલ, મૈનસિલ, સસ્યકાંજન, મૂંગા, અભ્રક અભ્રવાલુકા ગોમેદ, રુચક, અઙ્ક, સ્ફટિક, લોહિતાક્ષ, મરકત, મસારગલ્લ, ભુજગ, ઇન્દ્રનીલ, ગોપીચન્દન, ગેરુ, હંસગર્ભ, પુલક, સૌગન્ધિક, ચન્દ્રકાન્ત સૂર્યકાન્ત, વૈદૂર્ય, જલકાન્ત, આદિ વાદર પૃથિવીકાય કે ભેદ હૈ । વે શુદ્ધ પૃથિવી આદિ જબ અપની સ્થાન મેં સ્થિત હોતે હૈ તમી સચેતન હોતે હૈ । ગોવર, કચરા આદિ શસ્ત્રો સે ઉપહત હોકર યા સૂર્ય કી ધૂપ ઓર અગ્નિ કે તાપરૂપ શસ્ત્ર સે અચેતન હો જાતે હૈ ।

મળેલી માટી વાલુકાપૃથિવી કહેવાય છે. એ પ્રમાણે પૃથિવી કાયના અનેક ભેદ છે.

પથ્થર, શિલા, મીઠું, ઉષર-ખારો, લોહું, રાંગો, (કલધ), ત્રાંબું, સીસું, ચાંદી, સોનું, હડતાલ, હિંગલો, મનશિલ, સુરમો, મૂંગા-પરવાળાં, અભ્રક, અભ્રવાલુકા, ગોમેદ, રુચક, અંક, સ્ફટિક, લોહિતાક્ષ, મરકત, મસારગલ્લ, ભુજંગ, ઇન્દ્રનીલ, ગોપીચન્દન, ગેરુ, હંસગર્ભ, પુલક, સૌગન્ધિક, ચન્દ્રકાન્ત, સૂર્યકાન્ત, વૈદૂર્ય, જલકાન્ત આદિ વાદરપૃથિવીકાયના ભેદ છે. (આ ખર વાદર પૃથિવીકાય છે). એ શુદ્ધ પૃથિવી આદિ જ્યારે પોતાની ખાણમાં સ્થિત હોય છે, ત્યારે તે સચેતન હોય છે. છાણ-કચરો આદિ શસ્ત્રોથી ઉપહત (હણાએલા) થઈને, અથવા તેો સૂર્ય અને અગ્નિના તાપરૂપ શસ્ત્રોથી અચેતન થઈ જાય છે.

उक्तवादरपृथिवीकायानां यत्रैको जीवस्तत्र नियमतोऽसंख्याताः पृथिवीकाया जीवाः सन्ति । स्थानमप्येषां पृथिवी-पाताल-भवन-नरक-प्रस्तर-विमानादिकं ज्ञेयम् । सूक्ष्मपृथिवीकायजीवास्तु सर्वलोकव्यापिनः । उभयेषां भेदप्रभेदाः सर्वज्ञप्रणीतादागमादवगन्तव्याः ।

( २ ) अप्कायभेदाः—

अप्कायाऽनेकविधः—अवश्याय—मिहिका—करक—हरतनु—शुद्ध—शीतो—ष्ण—क्षारा—ऽम्ल—लवण—क्षीरोदक—घृतोदकादिभेदात् । एको यत्राप्कायस्तत्रासंख्याता अप्कायाः सन्ति । बादराप्कायानां समुद्र—हृद—नदी—वापी—कूपादिः स्थानम् । सूक्ष्माप्कायस्तु सर्वलोकव्यापकः । अस्यापि भेदप्रभेदा आगततो विज्ञेयाः ।

उक्त बादर पृथिवीकाय आदि का जहाँ एक जीव है वहाँ नियम से असंख्यात पृथिवीकाय के जीव हैं । पृथिवी, पाताल, भवन, नरक—प्रस्तर, विमान आदि इनके स्थान हैं । सूक्ष्म पृथिवीकाय के जीव समस्त लोक में व्याप्त हैं । दोनों के भेद—प्रभेद सर्वज्ञोक्त आगम से समझ लेने चाहिए ।

( २ ) अप्काय के भेद—

अप्काय अनेक प्रकार का है—ओस, मिहिका, ओले, हरतनु, शुद्धजल, शीतजल, उष्णजल, क्षार, अम्ल लवणजल (खारा पानी) क्षीरोदक, और घृतोदक आदि । जहाँ एक अप्काय है वहाँ असंख्यात अप्काय हैं । बादर अप्कायका स्थान समुद्र, तलाव, नदी, वावड़ी, कूप आदि हैं, और सूक्ष्म अप्काय समस्त लोक में व्याप्त है । इसके भी भेद—प्रभेद आगम से समझना चाहिए ।

ઉપર કહેલા બાદર પૃથિવીકાય આદિનાં જ્યાં એક જીવ છે. ત્યાં નિયમથી અસંખ્યાત પૃથિવીકાય જીવ છે. પૃથિવી, પાતાલ, ભવન, નરક—પ્રસ્તર, વિમાન આદિ તેનાં સ્થાન છે. સૂક્ષ્મ પૃથિવી કાયનાં જીવ સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત છે. એ બંનેના ભેદ—પ્રભેદ સર્વજ્ઞના આગમથી સમજી લેવા જોઈએ.

( ૨ ) અપ્કાયના ભેદ—

અપ્કાયના અनेક પ્રકાર છે—ઓસ, મિહિકા (નિહાર), ઓળો, હરતનુ—( પૃથ્વીને ભેદીને તુણુના અગ્રભાગ વગેરે ઉપર રહેનારું પાણી ) શુદ્ધ જલ ( અંતરિક્ષથી પડેલું અથવા નદીનું પાણી ) શીતલજલ, ઉષ્ણજલ ( સ્વભાવથી ગરમ પાણીના કુટોનું પાણી ), ખાટું જલ, ખારું જલ, ક્ષીરોદક અને ઘૃતોદક આદિ, ( લવણ, વાણુ, ક્ષીર, ધક્ષિરસ અને પુષ્કરવર સમુદ્રનાં પાણી ) જ્યાં એક અપ્કાય છે, ત્યાં અસંખ્યાત અપ્કાય છે. બાદર અપ્કાયના સ્થાન સમુદ્ર, તળાવ, નદી, વાવડી, કૂવા આદિ છે, અને સૂક્ષ્મ અપ્કાય સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત છે. તેના ભેદ—પ્રભેદ પણ આગમથી સમજવા જોઈએ.

## (૩) તેજસ્કાયભેદાઃ—

તેજસ્કાયોઽનેકવિધઃ—અઙ્ગારાચિરલાતશુદ્ધાગ્ન્યાદિભેદાત્ । ઇમે તેજસ્કાયા જીવા બાદરાઃ । યત્રૈકસ્તેજસ્કાયસ્તત્રાઽસંખ્યાતાસ્તેજસ્કાયાઃ સન્તિ । તેષાં સ્થાનં સાર્ધતૃતીયદ્વીપરૂપસમયક્ષેત્રમેવ, ન તતો વહિઃ । સૂક્ષ્માસ્તુ સર્વલોકવ્યાપિનઃ । एषां ભેદ-પ્રભેદાઃ પૂર્વવદ્ વિજ્ઞેયાઃ

## (૪) વાયુકાયભેદાઃ—

વાયુકાયઃ પૌરસ્ત્ય-પાશ્ચાત્યાદ્યુત્કલિમણ્ડલિકાદિભેદાદનેકવિધઃ । બાદર-વાયુકાયનાં સ્થાનં ઘનવાત-તનુવાત-તદ્વલયાધોલોકપાતાલભવનાદિકમ્ । સૂક્ષ્મા વાયુકાયા સર્વલોકવ્યાપિનઃ । एषां ભેદપ્રભેદાઃ પૂર્વવદ્ વેદિતવ્યાઃ ।

## (૩) તેજસ્કાય કે ભેદ—

તેજસ્કાય અનેક પ્રકાર કા હૈ, જૈસે—અંગાર, જ્વાલા, અલાત, શુદ્ધ-અગ્નિ આદિ । જહાં ઇક બાદર તેજસ્કાય કા જીવ હોતા હૈ વહાં અસંખ્યાત તેજસ્કાય હોતે હૈ । ઇન કા સ્થાન અઢાઈદ્વીપરૂપ સમય ક્ષેત્ર હી હૈ, ડસ સે બાહર યે નહીં હોતે । સૂક્ષ્મ તેજસ્કાય કે જીવ લોકવ્યાપી હૈ । ઇન કે બી ભેદ-પ્રભેદ આગમ સે સમજાને ઇહિય ।

## (૪) વાયુકાય કે ભેદ—

વાયુ કે બી પૂર્વા ઓર પશ્ચિમી આદિ કે ભેદ સે ઓર ઉત્કલિક મણ્ડલિક આદિ કે ભેદ સે અનેક પ્રકાર હૈ । ઘનવાત, તનુવાત, વલય, અધોલોક ઓર પાતાલ, ભવન આદિ બાદર વાયુકાય કે સ્થાન હૈ । સૂક્ષ્મ વાયુકાય સર્વલોકવ્યાપી હૈ ।

## (૩) તેજસ્કાયના ભેદ—

તેજસ્કાય અનેક પ્રકારના છે; જેમ કે અંગાર, જ્વાલા, અલાત, શુદ્ધ અગ્નિ, આદિ, જ્યાં એક બાદર તેજસ્કાયનો જીવ હોય છે ત્યાં અસંખ્યાત તેજસ્કાય હોય છે. તેનું સ્થાન અઢીદ્વીપરૂપ સમયક્ષેત્ર જ છે, તેનાથી બહાર તે નથી. સૂક્ષ્મ તેજસ્કાયના જીવ લોકવ્યાપી છે. તેના પણ ભેદ-પ્રભેદ આગમથી બહુ દેવા ભેદ છે.

## (૪) વાયુકાયના ભેદ—

વાયુકાય પણ પૂર્વ અને પશ્ચિમ આદિના ભેદથી, અને ઉત્કલિક (જેમ સમુદ્રમાં કલ્લોલો) મંડલિક, (મૂળમાંથી જે ગોળ ફરતો વાતો હોય તે વાયુ) આદિ ભેદથી અનેક પ્રકારનો છે, ઘનવાત, તનુવાત, વલય, અધોલોક, અને પાતાલ, ભવન આદિ બાદર વાયુકાયના સ્થાન છે, અને સૂક્ષ્મ વાયુકાય સર્વલોકવ્યાપી છે.



इमौ तेजस्काय-वायुकायौ गतिस्वभावतया त्रसावपि निगद्येते ।

### ( ૫ ) વનસ્પતિકાયભેદાઃ—

वनस्पतिकायोऽनेकविधः—शैवाल - पनक - हरिद्रा - ऽऽर्द्रक-मूलका - लूक-सूरण-पलाण्डु-लशुन-कन्दादिभेदात् । इमे वनस्पतिकायाः साधारणा उच्यन्ते । वृक्षगुच्छगुल्मलतादयः प्रत्येकशरीरा उच्यन्ते । साधारणवनस्पतिकायस्यैकस्मिन्

इनके भेद-प्रभेद पूर्ववत् आगम से जानने चाहिए । तेजस्काय और वायुकाय गतिशील होने के कारण त्रस भी कहे जाते हैं ।

### (૫) વનસ્પતિકાય કે ભેદ-

वनस्पतिकाय अनेक प्रकार का है । जैसे-शैवाल, पनक, हरिद्रा, ( हल्दी ), आर्द्रक ( अदरक ) मूलक, अलूक ( आलू ), सूरण, प्याज, लहसुन, और कन्द आदि । ये वनस्पतियाँ साधारण कहलाती हैं । तथा वृक्ष, गुच्छ, गुल्म, लता आदि प्रत्येकशरीर कहलाती हैं । साधारण वनस्पतिकाय के एक शरीर में अनन्त जीव होते हैं । इनका

તેના ભેદ-પ્રભેદ પૂર્વ પ્રમાણે આગમથી સમજી લેવા જોઈએ. તેજસ્કાય અને વાયુકાય ગતિશીલ હોવાના કારણે ત્રસ પણ કહેવામાં આવે છે.

### (૫) વનસ્પતિકાયના ભેદ-

वनस्पति काय अनेक प्रकारे છે, જેમકે-શૈવાલ, પનક, હરિદ્રા, આદુ, મૂલક, આલૂ, સૂરણ, ડુંગળી, લસણ અને કન્દ આદિ. આ વનસ્પતિઓ સાધારણ કહેવાય છે, ( જેમાં અનંત જીવો હોય તેને સાધારણ કહે છે ) તથા વૃક્ષ, ( ભગવતી સૂત્રમાં વૃક્ષોના ત્રણ ભેદો પાડેલા છે. (૧) શૃંગબેર (આદુ)ની પેઠે અનંત જીવોવાળાં ઝાડો, (૨) આંબાની માફક અસંખ્ય જીવોવાળાં ઝાડો, (૩) અને તાડ-તમાલ વગેરે પ્રમાણે સંખ્યાત જીવોવાળાં ઝાડો ). ગુચ્છ, ગુલ્મ ( નવમાલિકા બાઈ વગેરે ) લતા આદિ પ્રત્યેક શરીર કહેવાય છે. સાધારણ વનસ્પતિ કાયના એક શરીરમાં અનન્ત જીવ હોય છે. તેનું સ્થાન ઘનોદધિ આદિ છે. સૂક્ષ્મ વનસ્પતિકાય સર્વ લોકવ્યાપી છે.

શરીરેઽનન્તા जीवाः सन्ति । एषां स्थानं घनोदध्यादि । सूक्ष्मास्तु वनस्पतिकाया सर्वलोकव्यापिनः । एषां भेदप्रभेदाश्च शास्त्रतोऽवसेयाः । एते पञ्च स्थावराः स्पर्शन-  
रूपैकेन्द्रियाः ।

પન્ચ જીવનિકાયા ઉક્તાઃ, હિદાનીં વળ્ઠસાધિકારઃ કથ્યતે—

(૬) ત્રસકાયભેદાઃ—

ત્રસસ્ત્વં દ્વિવિધં, ક્રિયાતો લબ્ધિતશ્ચ । તત્ર ક્રિયા = કર્મ-ચલન-દેશાન્તર-પ્રાપ્તિઃ । અતઃ ક્રિયયૈવ તેજસ્કાયો વાયુકાયશ્ચ ત્રસો ભવતિ । લબ્ધ્યા તૂમૌ સ્થાવરૌ । દ્વીન્દ્રિયાદયસ્તુ ક્રિયયા લબ્ધ્યાપિ ત્રસા ભવન્તિ । લબ્ધિર્હિં ત્રસનામકર્મો-દયઃ, દેશાન્તરપ્રાપ્તિલક્ષણા ક્રિયાઽપિ દ્વીન્દ્રિયાદીનામ્ । સ્થાવરનામકર્મોદયરૂપયા સ્થાન ઘનોદધિ આદિ હૈ । સૂક્ષ્મ વનસ્પતિકાય સર્વલોકવ્યાપી હૈ । ઇનકે ભેદ-પ્રભેદ શાસ્ત્ર સે સમજ લેને ચાહિપ્ । ઇન પાંચ સ્થાવરોં કો ઇકમાત્ર સ્પર્શનઇન્દ્રિય હોતી હૈ ।

પાંચ જીવનિકાયોં કા કથન કિયા જા ચુકા હૈ । અવ છટે ત્રસકાય કા પ્રરૂપણ કિયા જાતા હૈ—

(૬) ત્રસકાય—

ત્રસપન દો પ્રકાર કા હૈ—ક્રિયા સે ઔર લબ્ધિ સે । કાર્ય કરના, ચલના, ઇક જગહ સે દૂસરી જગહ જાના ક્રિયા હૈ । ઇસ ક્રિયા સે હી તેજસ્કાય ઔર વાયુકાય ત્રસ કહલાતે હૈ । લબ્ધિકી અપેક્ષા યે દોનોં સ્થાવર હી હૈ । દ્વીન્દ્રિય આદિ, ક્રિયા સે મી ત્રસ હૈ ઔર લબ્ધિ સે મી । યહોં ત્રસનામકર્મ કા ઉદય લબ્ધિ હૈ, ઔર દેશાન્તર મેં તેના ભેદ-પ્રભેદ શાસ્ત્રથી સમજ લેવા ભેઈએ, આ પાંચ સ્થાવરોને એક માત્ર સ્પર્શન ઇન્દ્રિય હોય છે.

આ પાંચ જીવનિકાયોં કથન કરી ચૂકયા છીએ. હવે છઠ્ઠા ત્રસ કાયનું પ્રરૂપણ કરવામાં આવે છે—

(૬) ત્રસકાય—

ત્રસપણું એ પ્રકારનું છે—ક્રિયાથી અને લબ્ધિથી. કાર્ય કરવું, ચાલવું, એક જગ્યાથી બીજી જગ્યાએ જવું તે ક્રિયા છે. આ ક્રિયાથી જ તેજસ્કાય અને વાયુકાય ત્રસ કહેવાય છે, લબ્ધિની અપેક્ષાએ આ બન્ને સ્થાવર જ છે. દ્વીન્દ્રિય આદિ ક્રિયાથી પણ ત્રસ છે અને લબ્ધિથી પણ ત્રસ છે. અહિં ત્રસનામકર્મનો ઉદય તે લબ્ધિ છે, અને દેશાન્તરમાં ગમન કરવું તે ક્રિયા છે. દ્વીન્દ્રિય આદિમાં એ બંને ભેદોમાં

લઘ્યા પૃથિવ્યપૃતેજોવાયુવનસ્પતયઃ સર્વે સ્થાવરા એવ । એવં ચ ત્રસઃ પૃથ્વીધઃ  
તેજસ્કાય-વાયુકાય-દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિય-પચ્ચેન્દ્રિય-મેદાત્ । તત્ર  
તેજસ્કાયો વાયુકાયશ્ચ પ્રાગુક્તઃ ।

દ્વીન્દ્રિયાદિષુ ચતુર્વિધેષુ ત્રસજીવેષુ દ્વીન્દ્રિયાસ્તાવદુચ્યન્તે—

(૧) દ્વીન્દ્રિયઃ—

શરીરકાષ્ઠાદિજાઃ—કૃમયઃ, ફલાદિજાઃ—નીલઙ્ગપ્રભૃતયઃ, ગોમયા-  
દિજાઃ—ગન્દોલકાદયઃ, જલજાઃ—શઙ્ખશુક્તિશમ્બૂકજલૌકાપ્રભૃતયો દ્વીન્દ્રિયાઃ ।

ગમન કરના ક્રિયા છે, દ્વીન્દ્રિય આદિ મેં યે દોનો પાઈ જાતી હૈં । સ્થાવરનામકર્મો-  
દયરૂપ લઘ્વિ કી અપેક્ષા પૃથ્વી, અપ્, તેજ, વાયુ, ઔર વનસ્પતિ, યે સવ સ્થાવર હૈં ।  
ઇસ પ્રકાર ત્રસજીવ છહ પ્રકાર કે હૈં—તેજસ્કાય, વાયુકાય, દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય,  
ઔર પચ્ચેન્દ્રિય । ઇન મેં સે તેજસ્કાય ઔર વાયુકાય કા વર્ણન પહેલે ક્રિયા જા ચુકા હૈં ।

દ્વીન્દ્રિય આદિ ચાર પ્રકાર કે ત્રસજીવો મેં સે પ્રથમ દ્વીન્દ્રિય કા સ્વરૂપ બતલાતે હૈં—

(૧) દ્વીન્દ્રિય—

શરીર ઔર કાઠ આદિ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલી કૃમિ, ફલ આદિ મેં ઉત્પન્ન  
હોને વાલે નીલંબુ વગૈરહ, ગોવર મેં ઉત્પન્ન હોને વાલે ગિંડોલા વગૈરહ, જલ મેં પૈદા  
હોને વાલે શઙ્ખ, સીપ, જોક આદિ દ્વીન્દ્રિય જીવ હૈં । ઇન કે સ્પર્શન ઔર રસના, યે દો  
આવે.છે. સ્થાવરનામકર્મોદય લઘ્વિની અપેક્ષા-પૃથ્વી, અપ્, તેજ, વાયુ, વનસ્પતિ,  
આ સર્વ સ્થાવર છે. આ પ્રમાણે ત્રસ ઔવ છ પ્રકારના છે—તેજસ્કાય, વાયુકાય,  
દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પચ્ચેન્દ્રિય. આમાંથી તેજસ્કાય અને વાયુકાયનું  
વર્ણન પહેલાં કરવામાં આવ્યું છે.

દ્વીન્દ્રિય આદિ ચાર પ્રકારના ત્રસ ઔવમાંથી દ્વીન્દ્રિય આદિનું સ્વરૂપ  
બતાવે છે.

(૧) દ્વીન્દ્રિય—

શરીર અને કાઠ આદિમાં ઉત્પન્ન થવા વાળા કૃમિ, ફળ આદિમાં ઉત્પન્ન  
થવા વાળા નીલંબુ વગેરે. છાણમાં ઉત્પન્ન થવા વાળા ગિંડોલા વગેરે. જલમાં  
ઉત્પન્ન થવા વાળા શંખ, સીપ, જળો વગેરે દ્વીન્દ્રિય ઔવ છે. તેને સ્પર્શન અને



इमे स्पर्शन-रसनोभयेन्द्रियाः द्वीन्द्रिया जीवा असंख्याताः ।

( २ ) त्रीन्द्रियाः—

त्रीन्द्रियाः पिपीलिकादयः—पिपीलिका—रोहिणिका—कुन्थु—यूक—लिख—मत्कुण-  
मत्कोटक—शुलशुल—गोपदिका—खर्जूरा—कर्णशूलादयः प्रसिद्धाः । इमे स्पर्शन—रसन—  
घ्राणेन्द्रियाः । त्रीन्द्रिया असंख्याताः ।

( ३ ) चतुरिन्द्रियाः—

चतुरिन्द्रियाः भ्रमरादयः—भ्रमर—वटर—मक्षिका—दंश—मशक—वृश्चिक—कीट—  
कंसारी—पतङ्गादयः प्रसिद्धाः । इमे स्पर्शन—रसन—घ्राण—चक्षु—रिन्द्रियाः । चतुरि-  
न्द्रिया अपि असंख्याताः ।

इन्द्रियां होती हैं । द्वीन्द्रिय जीव असंख्यात हैं ।

( २ ) त्रीन्द्रिय—

પિપીલિકા ( કીડી ), રોહિણિકા, કુન્થુવા, જૂં, લીલ, સ્વટમલ, મકોડા, શુલશુલ, ગોપદિકા, સ્વજૂરા, કર્ણશૂલ, આદિ ત્રીન્દ્રિય જીવ પ્રસિદ્ધ છે । इनके स्पर्शन रसना और घ्राण, ये तीन इन्द्रियां होती हैं । त्रीन्द्रिय जीव असंख्यात हैं ।

( ३ ) चतुरिन्द्रिय—

ભ્રમર, વટર, મક્ષી, ડાંસ, મચ્છર, વિચ્છૂ, કીટ, પતંગ, કંસારી, આદિ ચૌદ્વિન્દ્રિય જીવ પ્રસિદ્ધ છે । इनके स्पर्शन, रसना, घ्राण, और चक्षु, ये चार इन्द्रियां होती हैं । ये जीव असंख्यात हैं ।

રસના એ બે ઇન્દ્રિયો વાળા જીવો અસંખ્યાત છે.

( ૨ ) ત્રીન્દ્રિય—

કીડી, રોહિણિકા, કંથુવા, જૂં, લીલ, માંકડ, મંકોડા, શુલશુલ, ગોપદિકા, કાનખજૂરા, કર્ણશૂલ આદિ ત્રીન્દ્રિય જીવ પ્રસિદ્ધ છે. તેને સ્પર્શન, રસના, અને ઘ્રાણ. આ ત્રણ ઇન્દ્રિયો હોય છે. ત્રીન્દ્રિય જીવ અસંખ્યાત છે.

( ૩ ) ચતુરિન્દ્રિય—

ભ્રમરા, વટર, માંખી, ડાંસ, મચ્છર, વીંછી, કીટ, પતંગ, કંસારી આદિ ચાર ઇન્દ્રિયવાળા જીવ પ્રસિદ્ધ છે. તેમને સ્પર્શન રસના, ઘ્રાણ અને નેત્ર આ ચાર ઇન્દ્રિયો હોય છે. એ જીવ અસંખ્યાત છે.

( ૪ ) પઞ્ચેન્દ્રિયજીવાઃ—

પઞ્ચેન્દ્રિયજીવાશ્વતુર્ધા—નારક-તિર્યઙ્-મનુષ્ય-દેવ-ભેદાત્, નારકાઃ સપ્ત-વિધાઃ, સપ્તનરકેષુ સમુદ્ભવાત્ । રત્ન(૧)-શર્કરા(૨)-વાલુકા(૩)-પંક(૪)-ધૂમ(૫)-તમો(૬)-મહાતમો(૭)-નામ્ન્યઃ સપ્ત પૃથિવ્યસ્તત્ર સપ્ત નરકભૂમયઃ, તત્ર યે નિવસન્તિ તે નારકાઃ સપ્તવિધા इति । નારકતિર્યઙ્મનુષ્યદેવાનાં સ્પર્શન-રસન-ગ્રાણ-ચક્ષુઃ-શ્રોત્રાણિ પઞ્ચેન્દ્રિયાણિ ભવન્તિ ।

પઞ્ચેન્દ્રિય-તિર્યઙ્ચો દ્વિવિધાઃ— ગર્ભજ-સંમૂર્છિમભેદાત્ । તત્ર-ગર્ભજાઃ પશ્ચધા-જલચર-સ્થલચર-સ્થલચરો-રઃપરિસર્પ-ભુજપરિસર્પભેદાત્ । સંમૂર્છિમા અપિ

( ૪ ) પઞ્ચેન્દ્રિયજીવ—

પઞ્ચેન્દ્રિય જીવ ચાર પ્રકાર કે હૈ—( ૧ ) નારક, ( ૨ ) તિર્યઙ્ચ, ( ૩ ) મનુષ્ય, ઓર ( ૪ ) દેવ ।

નારક સાત પ્રકાર કે હૈ, ક્યોં કિ સાત નરકોં મેંં ઉનકી ઉત્પત્તિ હોતી હૈ । ( ૧ ) રત્નપ્રમા ( ૨ ) શર્કરાપ્રમા ( ૩ ) વાલુકાપ્રમા, ( ૪ ) પંકપ્રમા, ( ૫ ) ધૂમપ્રમા, ( ૬ ) તમઃપ્રમા ઓર ( ૭ ) તમસ્તમઃપ્રમા નામક સાત પૃથિવી હૈં । વહૈં સાત નરકભૂમિયૌં હૈં । ઇન ભૂમિયોં મેંં નિવાસ કરને વાલે નારકીં મીં સાત પ્રકાર કે કહલાતે હૈં । નારક, પઞ્ચેન્દ્રિય તિર્યઙ્ચ, મનુષ્ય ઓર દેવોં કે સ્પર્શન, રસના, ગ્રાણ, ચક્ષુ, ઓર શ્રોત્ર, યે પાંચ ઇન્દ્રિયૌં હોતી હૈં ।

પઞ્ચેન્દ્રિય તિર્યઙ્ચ દો પ્રકાર કે હૈં—ગર્ભજ ઓર સંમૂર્છિમ । ઇન મેંં ગર્ભજ કે પાંચ ભેદ હૈં—(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર, (૬) સ્થલચર, (૪) ઊરઃપરિસર્પ ઓર (૫) ભુજપરિસર્પ ।

( ૪ ) પંચેન્દ્રિય—

પાંચ ઇન્દ્રિયો વાળા જીવ ચાર પ્રકારના છે—(૧) નારકી, (૨) તિર્યંચ, (૩) મનુષ્ય, અને (૪) દેવ. નારકીના સાત પ્રકાર છે, કારણ કે સાત નરકોમાં તેની ઉત્પત્તિ હોય છે. (૧) રત્નપ્રમા, (૨) શર્કરાપ્રમા, (૩) વાલુકાપ્રમા, (૪) પંકપ્રમા, (૫) ધૂમપ્રમા, (૬) તમઃપ્રમા અને (૭) તમસ્તમઃપ્રમા નામની સાત પૃથિવી છે. ત્યાં સાત નરકભૂમિઓ છે. તે નરકભૂમિઓમાં નિવાસ કરવા વાળા નારકી પાંચ સાત પ્રકારના કહેવાય છે. નારકી, પંચેન્દ્રિય-તિર્યંચ, મનુષ્ય, અને દેવોને સ્પર્શન, રસના ગ્રાણ, ચક્ષુ અને શ્રોત્ર, આ પાંચ ઇન્દ્રિયો હોય છે.

પંચેન્દ્રિય તિર્યંચ બે પ્રકારના છે—(૧) ગર્ભજ, (૨) સંમૂર્છિમ. તેમાં ગર્ભજના પાંચ ભેદ છે—(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર, (૩) ખેચર, (૪) ઊરઃપરિસર્પ, અને

પશ્ચધા-જલચર(૧)-સ્થલચર(૨)-ચેચરો(૩)-રઃપરિસર્પ(૪)-ભુજપરિસર્પભેદાત્ । તત્ર જલચરા મત્સ્યમકરાદયઃ, સ્થલચરા ગોમહિષ્યાદયઃ, ચેચરાઃ મયૂરાદયઃ, ઊરઃપરિસર્પાઃ સર્પાદયઃ, ભુજપરિસર્પાઃ ગોધાદયઃ ।

મનુષ્યા દ્વિવિધાઃ—કર્મભૂમિજાઃ, અકર્મભૂમિજાઃ । યત્ર જાતા મનુષ્યાઃ સિધ્યન્તિ; બુધ્યન્તે, પરિનિર્વાન્તિ; સર્વદુઃખાનામન્તં કુર્વન્તિ સા કર્મભૂમિઃ । અત્રેવ સંસારાન્તપ્રાપ્તિકારકસ્ય રત્નત્રયરૂપમોક્ષમાર્ગસ્ય વિજ્ઞાતારઃ કર્તાર ઉપદેષ્ટારશ્ચ ભગવન્તસ્તીર્થઙ્કરા અવતરન્તિ । તે ચ સ્વયં સંસારાર્ણવં તરન્તિ, પરાન્ ભવ્યાનપિ તારયન્તિ । અર્ધતૃતીયદ્વીપાભ્યન્તરે કર્મભૂમયઃ પશ્ચદશક્ષેત્રરૂપા ભવન્તિ—પશ્ચ

સંમૂર્છિતમ કે ભી પાંચ ભેદ હૈ—(૧) જલચર, (૨) સ્થલચર, (૩) ચેચર, (૪) ઊરઃ—પરિસર્પ ઓર (૫) ભુજપરિસર્પ । મચ્છ, મકર, આદિ જલ કે જીવ જલચર કહલાતે હૈ । ગાય, મૈસ આદિ સ્થલચર કહલાતે હૈ । મયૂર આદિ ચેચર કહલાતે હૈ । સર્પ આદિ ઊરઃપરિસર્પ, ઓર ગુહેરા ( ગોહ ) આદિ ભુજપરિસર્પ કહલાતે હૈ ।

મનુષ્ય દો પ્રકાર કે હૈ—કર્મભૂમિજ ઓર અકર્મભૂમિજ । જહોં ઉત્પન્ન હોકર જીવ સિદ્ધ બુદ્ધ હોતે હૈ, નિર્વાણ પ્રાપ્ત કરતે હૈ ઓર સબ દુઃખોં કા અન્ત કરતે હૈ, ઉસે કર્મભૂમિ કહતે હૈ । સંસાર કા અન્ત કરતે વાલે, રત્નત્રયરૂપ મોક્ષમાર્ગ કે જ્ઞાતા, કર્તા ઓર ઉપદેશક તીર્થઙ્કર ભગવાન કર્મભૂમિ મેં હી ઉત્પન્ન હોતે હૈ । વે સ્વયં સંસાર સમુદ્ર તરતે હૈ ઓર દૂસરે ભવ્ય જીવોં કો ભી તારતે હૈ । અઢાઈ દ્વીપ મેં પન્દર કર્મ-ભૂમિયોં હૈ—પાંચ ભરત ક્ષેત્ર મેં, પાંચ પેરવત ક્ષેત્ર મેં, ઓર પાંચ મહાવિદેહ મેં । પાંચ

(૫) ભુજપરિસર્પ. મચ્છ, મકર (મગર) આદિ જલના જીવ જલચર કહેવાય છે. ગાય, ભેંસ આદિ સ્થલચર કહેવાય છે મયૂર (મોર) આદિ ખેચર કહેવાય છે. સર્પ આદિ ઉરપરિસર્પ, અને ઘોયરા આદિ ભુજપરિસર્પ છે.

મનુષ્ય બે પ્રકારના છે—(૧) કર્મભૂમિજ, (૨) અકર્મભૂમિજ, જ્યાં ઉત્પન્ન થઈને જીવ સિદ્ધ બુદ્ધ હોય છે, નિર્વાણ પ્રાપ્ત કરે છે, અને સર્વ દુઃખોને અન્ત કરે છે તેને કર્મભૂમિ કહે છે. સંસારને અન્ત કરવાવાળા, રત્નત્રયરૂપ મોક્ષમાર્ગના જ્ઞાતા કર્તા, અને ઉપદેશક તીર્થંકર ભગવાન કર્મભૂમિમાં જ ઉત્પન્ન થાય છે. તે સ્વયં સંસાર સમુદ્રને તરે છે અને બીજા ભવ્ય જીવોને પણ તારે છે. અઢી દ્વીપમાં પંદર કર્મભૂમિઓ છે—પાંચ ભરતક્ષેત્રમાં, પાંચ ઔરવત ક્ષેત્રમાં, અને



भरतानि, पञ्चैश्वरतानि, पञ्च महाविदेहाः । तत्र पञ्चसु महाविदेहेषु पञ्च देव-  
कुरुक्षेत्राणि पञ्चोत्तरकुरुक्षेत्राणि अन्तर्गतानि; तानि विहाय पञ्च महाविदेहा  
कर्मभूमयो भवन्ति । एषु पञ्चदशसु क्षेत्रेषु जाता एव ज्ञानावरणीयादिसकल-  
कर्मतस्करेभ्यः संसारमहारण्ये परिमुक्ता मोक्षधामाभिधावन्ति । एतत्पञ्चदश-  
व्यतिरिक्तेषु क्षेत्रेषु जन्म प्राप्ताः पुनः सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र्यलक्षणमोक्षमार्गं  
लब्धुं न प्रभवन्ति ।

अहो भव्यप्राणिनः ! स्वनिः यसाय शीघ्रं प्रयतन्ताम्, अनन्तकालतः  
षड्जीवनिकायानां भवस्थिति-कायस्थितिषु-अनन्तजन्म-जरा-मरणाद्यनन्तदुःखमनु-  
भूय पूर्वपुण्योदयेन दुर्लभमिदं मनुष्यजन्म कर्मभूमौ लब्धम् । देशविरति-सर्वविरति-  
महाविदेहों में पांच देवकुरु और पांच उत्तरकुरु क्षेत्र भी अन्तर्गत हैं, उन्हें छोड़कर  
पांच महाविदेह कर्मभूमि हैं । इन पन्द्रह कर्मभूमियों में उत्पन्न होने वाले मनुष्य ही  
ज्ञानावरणीय आदि समस्त कर्मरूपी चोरों से संसाररूपी महा अरण्यो में छूटकर मोक्षधाम  
जाते हैं । इन पन्द्रह क्षेत्रों से भिन्न क्षेत्रों में जन्म लेने वाले, सम्यग्, दर्शन, ज्ञान, चारित्र्य  
स्वरूप मोक्षमार्ग प्राप्त करने में समर्थ नहीं होते ।

अहो भव्य जीवो ! अपने श्रेय (कल्याण) के लिए शीघ्र प्रयत्न करो । अनादि  
काल से षड्जीवनिकाय की भवस्थिति और कायस्थिति में अनन्त जन्म, जरा, मरण  
आदि का दुःख भोगकर पूर्वपुण्य के उदय से कर्मभूमि में दुर्लभ मनुष्य भव मिला है ।  
देशविरति और सर्वविरतिके रूप सुधा से परिपूर्ण मनुष्यायु रूप कटोरको

पांच महाविदेहोમાં पाંચ દેવકુરૂ, અને ઉત્તરકુરૂ ક્ષેત્ર પણ અન્તર્ગત  
છે. તેને છોડીને પાંચ મહાવિદેહ કર્મભૂમિ છે. આ પંદર કર્મભૂમિમાં ઉત્પન્ન થવા  
વાળા મનુષ્ય જ જ્ઞાનાવરણીય આદિ તમામ કર્મરૂપી ચોરોથી સંસારરૂપી મહા-  
અરણ્યમાંથી છુટીને મોક્ષધામ જાય છે. આ પંદર ક્ષેત્રોથી ભિન્ન ક્ષેત્રોમાં જન્મ  
લેવાવાળા સમ્યગ્દર્શન, જ્ઞાન, ચારિત્ર્ય સ્વરૂપ મોક્ષમાર્ગને પ્રાપ્ત કરવા સમર્થ થતા નથી.

અહો ભવ્ય જીવો ! પોતાના કલ્યાણ માટે શીઘ્ર-જલદી પ્રયત્ન કરો !  
અનાદિ કાળથી ષડ્જીવનિકાયની ભવસ્થિતિ અને કાયસ્થિતિમાં અનન્ત જન્મ, જરા,  
મરણ આદિનું દુઃખ ભોગવીને પૂર્વપુણ્યના ઉદયથી કર્મભૂમિમાં દુર્લભ મનુષ્ય  
ભવ મળ્યો છે. દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ અમૃતથી પરિપૂર્ણ મનુષ્યાયુરૂપ આ

પીયૂષપૂર્ણમેતન્મનુષ્યાયુઃકટોરકં મૃત્યુરપહર્તું પુરોજ્વતિષ્ઠતે । તદત્ર વિરતિસુધાસ્વાદ-  
સુખવશ્ચિતા ભવન્તો મા ભવન્તુ ।

અકર્મભૂમયઃ કથ્યન્તે—

પશ્ચ હૈમવતાનિ, પશ્ચ હરિવર્ષાણિ, પશ્ચ રમ્યકવર્ષાણિ, પશ્ચૈરણ્યવતવર્ષાણિ,  
પશ્ચ દેવકુરવઃ પશ્ચોત્તરકુરવઃ, ઇતિ ત્રિંશત્, ષટ્પશ્ચાશદન્તરદ્વીપાઃ । અન્તરદ્વીપા  
અપિ યુગલક્ષેત્રત્વાદકર્મભૂમયો ભવન્તિ । એતાઃ સર્વા અકર્મભૂમયઃ,  
તીર્થકુરજન્માદિરહિતત્વાત્ ।

જમ્બૂદ્વીપે ભરતક્ષેત્રમર્યાદાકારકહિમવત્પર્વતસ્ય પૂર્વપશ્ચિમાન્તભાગદ્વયાત્  
વક્રાકારે દ્વે દ્વે દંષ્ટ્રે નિઃસૃતે સ્તઃ । એવમ્ એરવતક્ષેત્રમર્યાદાકારકશિખરિ-  
છીનને કે લિપ્ મૃત્યુ સ્થામને સ્વડા હૈ, અતઃ આપ વિરતિરૂપી સુધા કે આસ્વાદ કે સુખ સે  
વન્ચિત મત રહો ।

અકર્મભૂમિકા કથન—

પાંચ હૈમવત, પાંચ હરિવર્ષ, પાંચ રમ્યકવર્ષ, પાંચ એરણ્યવત, પાંચ દેવકુર  
ઔર પાંચ ઉત્તરકુર, યે ત્રીસ, ઔર છપ્પન અન્તર દ્વીપ, યે સર્વ અકર્મભૂમિ હૈં । અન્તરદ્વીપ  
મી યુગલિયાક્ષેત્ર હોને કે કારણ અકર્મભૂમિ હી હૈં । ઇન મેં કમી મી તીર્થકર કા  
જન્મ આદિ નહીં હોતા ।

જમ્બૂદ્વીપ મેં ભરત ક્ષેત્ર કી મર્યાદા કરને વાલે હિમવત્પર્વત કે પૂર્વભાગ ઔર  
પશ્ચિમભાગ સે વક્ર આકાર કી દો-દો ઢાઢાઈ નિકલી હૈં । ઇસી પ્રકાર એરવત ક્ષેત્ર કી  
મર્યાદા કરને વાલે શિખરિપર્વત કે પૂર્વ ઔર પશ્ચિમ ભાગોં સે દો દો વક્રાકાર ઢાઢાઈ  
કટોરાને છીનવી હેવા માટે મૃત્યુ સામેજ ઉભેલો છે. એ કારણથી તમે વિરતિરૂપી  
અમૃતના સ્વાદના સુખથી વન્ચિત રહેશો નહિ.

અકર્મભૂમિત્વં કથન—

પાંચ હૈમવત, પાંચ હરિવર્ષ, પાંચ રમ્યક વર્ષ, પાંચ એરણ્યવત, પાંચ  
દેવકુર, અને પાંચ ઉત્તરકુર, આ ત્રીસ, અને છપ્પન અન્તરદ્વીપ, આ સર્વ અકર્મ-  
ભૂમિ છે. અન્તર દ્વીપ પણ યુગળીયા ક્ષેત્ર હોવાના કારણે અકર્મભૂમિ જ છે, તેમાં  
કેઈ પણ સ્થળે તીર્થકરનો જન્મ આદિ થતો નથી.

જમ્બૂદ્વીપમાં ભરત ક્ષેત્રની મર્યાદા કરવાવાળા હિમવત પર્વતના પૂર્વભાગ અને  
પશ્ચિમ ભાગથી વક્ર આકારની બે-બે ઢાઢો નીકળી છે. એ પ્રકારે એરવત ક્ષેત્રની  
મર્યાદા કરવાવાળા શિખરી પર્વતના પૂર્વ અને પશ્ચિમ ભાગથી બે-બે વક્રાકાર  
ઢાઢો નીકળી છે.

पर्वतस्य, पूर्व-पश्चिमान्तभागद्वयाद् वक्राकारे द्वे द्वे दंष्ट्रे निःसृते स्तः । अष्टासु दंष्ट्रासुर्ध्वभागे सप्त सप्तान्तरद्वीपाः सन्ति । एवं षट्पञ्चाशदन्तरद्वीपा भवन्ति । अन्तरद्वीपजा अप्यकर्मभूमिजाः । तत्रोभयेषां मनुष्याणामुच्चारदिषु संमूर्च्छिमा मनुष्या उभयविधासु भूमिषु जायन्ते ।

तत्र गर्भजा मनुष्या एकोत्तरशतम् (१०१), पर्याप्तापर्याप्तभेदाद् द्व्यधिकशतद्वयम् (२०२), संमूर्च्छिममनुष्या अपर्याप्तमात्रतया-एकोत्तरशतमेव (१०१), सर्वेषु संमिलितेषु त्र्युत्तरशतत्रयं (३०३) मनुष्याणां भेदाः भवन्ति ।

देवनिकायः-

देवाश्चतुर्विधाः-भवनपति१-व्यन्तर२-ज्योतिष्क३-वैमानिक४-भेदात् ।

निकली हैं । इन आठ दाढ़ों पर सात-सात अन्तरद्वीप हैं । इस प्रकार छप्पन अन्तरद्वीप हैं । अन्तरद्वीपज (अन्तरद्वीप में उत्पन्न हुए) जीव भी अकर्मभूमिज (अकर्मभूमि में उत्पन्न हुए) कहलाते हैं । इन दोनों प्रकार के मनुष्यों के मूल आदि में, दोनों भूमियों में संमूर्च्छिम मनुष्य उत्पन्न होते हैं ।

गर्भज मनुष्य एक सौ एक (१०१) प्रकार के हैं । इनके पर्याप्त और अपर्याप्त भेद करने से दो सौ दो (२०२) भेद होते हैं । संमूर्च्छिम मनुष्य अपर्याप्त ही होते हैं, अतः उनके एक सौ एक (१०१) भेद मिला देने से मनुष्यों के कुल भेद तीन सौ तीन (३०३) हो जाते हैं ।

देवनिकाय-

देव चार प्रकार के हैं-(१)भवनपति, (२) व्यन्तर, (३) ज्योतिष्क और (४) वैमानिक ।

આ આઠ દાઢો પર સાત-સાત અન્તરદ્વીપ છે. આ પ્રમાણે છપ્પન અન્તરદ્વીપ છે. અન્તરદ્વીપજ (અન્તરદ્વીપમાં ઉત્પન્ન થનારા) જીવ પણ અકર્મભૂમિજ (અકર્મ-ભૂમિમાં ઉત્પન્ન થનારા) કહેવાય છે. આ બંને પ્રકારના મનુષ્યોનાં મળ આદિમાં એ બંને ભૂમિઓમાં સંમૂર્ચ્ચિમ મનુષ્ય ઉત્પન્ન થાય છે.

ગર્ભજ મનુષ્ય એકસો એક (૧૦૧) પ્રકારના છે. તેના પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ કરવાથી બસો બે (૨૦૨) ભેદ થાય છે. સંમૂર્ચ્ચિમ મનુષ્ય અપર્યાપ્ત જ હોય છે તે કારણથી તેના એકસો એક (૧૦૧) ભેદ તેમાં મેળવવાથી મનુષ્યોના કુલ ત્રણસો ત્રણ (૩૦૩) ભેદ થાય છે.

देवनिकाय-

देव चार प्रकारના છે-(૧) ભવનપતિ, (૨) વ્યન્તર, (૩) જ્યોતિષ્ક અને (૪) વૈમાનિક.



## (૧) ભવનપતિદેવભેદા:—

તત્ર ભવનપતયો દશવિધા:—(૧) અસુરકુમારા:, (૨) નાગકુમારા:, (૩) સુવર્ણકુમારા:, (૪) વિદ્યુત્કુમારા:, (૫) અગ્નિકુમારા:, (૬) દ્વીપકુમારા:, (૭) ઉદધિકુમારા:, (૮) દિશાકુમારા:, (૯) વાયુકુમારા:, (૧૦) સ્તનિતકુમારાશ્ચ । કુમારા ઇવ સુકુમારા મનોહરા મૃદુમધુરલલિતગતયઃ કુમારવદભિવ્યક્તરાગાઃ કેલિવિલોલિતચેતસઃ કુમારવચ્છોદ્ધતરૂપવેષભાષાભરણપ્રહરણાવરણયાનવાહનાશ્ચેત્યતઃ 'કુમારા' ઇત્યુચ્યન્તે । જમ્બૂદ્વીપે સુમેરુપર્વતસ્પાદસ્તાદક્ષિણોત્તરભાગયોસ્તિર્યગ્-ભાગેઽનેકકોટિકોટિલક્ષયોજનં યાવદ્ ભવનપતયો નિવસન્તિ ।

## (૧) ભવનપતિદેવ—

ભવનપતિ દેવ દશ પ્રકાર કે હૈં—(૧) અસુરકુમાર, (૨) નાગકુમાર, (૩) સુવર્ણકુમાર, (૪) વિદ્યુત્કુમાર, (૫) અગ્નિકુમાર, (૬) દ્વીપકુમાર, (૭) ઉદધિકુમાર, (૮) દિશાકુમાર, (૯) વાયુકુમાર ઓર (૧૦) સ્તનિતકુમાર ।

કુમાર કે સમાન સુકુમાર, મનોહર, મૃદુ, મધુર, લલિત ગતિવાલે, કુમાર કે સમાન રાગ વ્યક્ત કરને વાલે, ક્રોડા મેં ચિત્ત લગાને વાલે, કુમાર કે સમાન હી ઉદ્ધત રૂપ, વેષ, ભાષા, આભૂષણ, આયુધ, યાન, વાહન આદિ ધારણ કરને વાલે હોને સે યે દેવ, કુમાર કહલાતે હૈં । જમ્બૂ દ્વીપ મેં સુમેરુ પર્વત કે નીચે દક્ષિણ ભાગ ઓર ઉત્તર ભાગ કે તિરછે ભાગ મેં અનેક કોડા—કોડી લાખ યોજન તક ભવનપતિ દેવ નિવાસ કરતે હૈં ।

## (૧) ભવનપતિદેવ—

ભવનપતિ દેવ દસ પ્રકારના છે—(૧) અસુરકુમાર, (૨) નાગકુમાર, (૩) સુવર્ણ-કુમાર, (૪) વિદ્યુત્કુમાર, (૫) અગ્નિકુમાર, (૬) દ્વીપકુમાર, (૭) ઉદધિકુમાર, (૮) દિશાકુમાર (૯) વાયુકુમાર, અને (૧૦) સ્તનિતકુમાર.

કુમાર પ્રમાણે, સુકુમાર, મનોહર, મૃદુ, મધુર, લલિતગતિવાળા, કુમારના સમાન રાગ વ્યક્ત કરવા વાળા, ક્રોડામાં ચિત્ત લગાવવા વાળા, કુમારના પ્રમાણે ઉદ્ધત-રૂપ, વેષ, ભાષા આભૂષણ, આયુધ, યાન, વાહન આદિ ધારણ કરવા વાળા હોવાથી તે દેવ, કુમાર કહેવાય છે. જમ્બૂદ્વીપમાં સુમેરુ પર્વતની નીચે દક્ષિણભાગ અને ઉત્તર ભાગના તિછી ભાગમાં અનેક કોડા—કોડી લાખ યોજન સુધી ભવનપતિ દેવ નિવાસ કરે છે.

तत्र बहवोऽसुरकुमारा आवासेषु, तथा कदाचिद् भवनेषु च निवसन्ति । तथा नागकुमारादयः सर्वे प्रायशो भवनेष्वेव प्रतिवसन्ति । रत्नप्रभापृथ्वी-पिण्डादूर्ध्वमधश्चैकैकसहस्रयोजनं विहायैकलक्षाष्टसप्ततिसहस्रयोजनानि तु रत्न-प्रभातोऽधस्तान्नवतिसहस्रयोजनपरिमाणभाग एव भवन्ति, तत्र भवनानि दक्षिणा-र्धाधिपतीनां चमरेन्द्रादीनाम्, उत्तरार्धाधिपतीनां बलीन्द्रादीनाम् । महामण्डप-वदावासाः, भवनानि नगरसदृशानि भवन्ति, परन्तु तानि भवनानि बहिर्वृत्तानि, अभ्यन्तरे समचतुष्कोणानि, तलभागे तु पुष्करकर्णिकावद् भवन्ति । अम्बादयः परमाधार्मिका अपि असुरकुमारजातीयाः पञ्चदश सन्ति—१ अम्बा २ म्बरीष—

वहीं बहुत से असुरकुमार आवासों में और कभी-कभी भवनों में निवास करते हैं । नागकुमार सब प्रायः भवनों में ही रहते हैं । रत्नप्रभा पृथ्वी के पिण्ड से ऊपर और नीचे एक-एक हजार योजन छोड़कर एक लाख अठहत्तर हजार योजन परिमाण में मध्य भाग में सभी जगह असुरकुमार देवों के आवास हैं, किन्तु भवन रत्नप्रभा पृथ्वी के नीचे नव्वे हजार योजन परिमित भाग में ही हैं । वहाँ दक्षिणार्धाधिपति चमरेन्द्र आदि के और उत्तरार्धाधिपति बलीन्द्र आदि के भवन हैं । महामण्डप के समान आवास हैं । नगर के समान भवन हैं, किन्तु वे बाहर गोलाकार और भीतर समचतुष्कोण हैं । उनका तलभाग कमल की कर्णिका के समान होता है । अम्ब आदि पन्द्रह परमाधार्मिक भी असुरकुमार जाति के हैं । उनके नाम—(१) अम्ब, (२) अम्बरीष, (३) श्याम, (४) शबल,

त्यां ઘણા અસુર કુમારો, આવાસોમાં અને કોઈ કોઈ વખત ભવનોમાં નિવાસ કરે છે. નાગકુમાર સર્વ પ્રાયઃ ભવનોમાંજ નિવાસ કરે છે. રત્નપ્રભા પૃથ્વીના પિંડથી ઉપર અને નીચે એક-એક હજાર યોજન છોડીને, એક લાખ અઠ્યોત્તર હજાર યોજન પરિમાણમાં મધ્યભાગમાં સર્વ જગ્યાએ અસુરકુમાર દેવોના આવાસ છે. પરન્તુ ભવન; રત્નપ્રભા પૃથ્વીની નીચે (૯૦૦૦૦) નેવું હજાર યોજન પરિમિત ભાગમાં જ છે. ત્યાં દક્ષિણાર્ધાધિપતિ ચમરેન્દ્ર આદિના અને ઉત્તરાર્ધાધિપતિ બલીન્દ્ર આદિના ભવન છે. મહામંડપની સમાન આવાસ છે. નગરના સમાન ભવન છે. પરંતુ તે ભવનો બહારથી ગોળાકાર અને અંદરથી સમચતુષ્કોણ છે. તેનો તળીઆનો ભાગ કમલની કર્ણિકાસમાન હોય છે. અમ્બ આદિ પંદર પરમાધાર્મિક પણ અસુરકુમાર જાતિના છે. તેઓના નામ જેમકે—(૧) અમ્બ, (૨) અમ્બરીષ, (૩) શ્યામ, (૪)

૩શ્યામ૪શબલ૫રુદ્ર૬વૈરુદ્ર૭કાલ૮મહાકાલ૯અસિપત્ર૧૦ધનુઃ૧૧કુમ્ભ૧૨વાલુક૧૩  
વૈતરણી૧૪ચરસ્વર૧૫મહાઘોષ-મેદાત્ ।

(૨) વ્યન્તરદેવાઃ—

રત્નપ્રમાકાણ્ડસ્ય સહસ્રયોજનપરિમાણયુક્તસ્યાધસ્તાદેકશતયોજનમૂર્ધ્વં ચ  
તથૈકશતયોજનં વિહાયાષ્ટશતયોજનપરિમાણયુક્તરત્નપ્રમાકાણ્ડે વ્યન્તરદેવાના-  
મસંખ્યાતાનિ નગરાણિ સન્તિ । તથૈવ ભવનાનિ તેષામાવાસાશ્ચ સન્તિ । તત્ર  
બાલવત્ સ્વેચ્છયા શક્રાદિદેવેન્દ્રાજ્ઞયા વા ચક્રવર્ત્યાદિપુરુષાજ્ઞયા વા પ્રાયેણા-  
નિયતગતિપ્રચારા ભવન્તિ । મનુષ્યાનપિ કેચિદ્ ભૃત્યવદુપચરન્તિ । વિવિધેષુ ચ  
શૈલકન્દરાન્તરવનવિવરાદિષુ પ્રતિવસન્તિ; અતો વ્યન્તરા इत्युच्यन्ते ।

(૫) રુદ્ર, (૬) વૈરુદ્ર, (૭) કાલ, (૮) મહાકાલ, (૯) અસિપત્ર, (૧૦) ધનુષ, (૧૧) કુમ્ભ, (૧૨) વાલુક, (૧૩) વૈતરણી, (૧૪) ચરસ્વર, (૧૫) મહાઘોષ ।

(૨) વ્યન્તર દેવ—

एक हजार योजन परिमाण वाले रत्नप्रमाकाण्ड के नीचे और एक सौ योजन  
ऊपर तथा एक सौ योजन छोड़कर आठ सौ योजन परिमाण युक्त रत्नप्रमाकाण्ड में  
व्यन्तर देवों के असंख्यात नगर हैं । उसी प्रकार भवन और उनके आवास हैं ।  
बालकों के समान अपनी इच्छासे, शक्र आदि देवों की आज्ञा से, या चक्रवर्ती आदि की आज्ञासे  
प्रायः अनियतगति वाले होते हैं । ये देव किन्हीं—किन्हीं मनुष्यों की दास के समान सेवा  
करते हैं । ये विविध प्रकार के पर्वतों की गुफाओं में और वनविवर आदि में निवास करते  
हैं अतः इन्हें व्यन्तर कहते हैं ।

શબલ, (૫) રુદ્ર, (૬) વૈરુદ્ર, (૭) કાલ, (૮) મહાકાલ, (૯) અસિપત્ર, (૧૦)  
ધનુષ, (૧૧) કુમ્ભ, (૧૨) વાલુક, (૧૩) વૈતરણી, (૧૪) ચરસ્વર, (૧૫) મહાઘોષ.

(૨) વ્યન્તરદેવ—

એક હજાર યોજન પરિમાણવાળા રત્નપ્રમાકાંડની નીચે અને એકસો યોજન  
ઉપર તથા એકસો યોજન છોડીને આઠસો યોજન પરિમાણયુક્ત રત્નપ્રમાકાંડમાં  
વ્યન્તર દેવાના અસંખ્યાત નગર છે. તે પ્રમાણે ભવન અને તેના આવાસો છે.  
બાળકોની જેમ પોતાની ઇચ્છાથી, ઇશ્વર આદિ દેવોની આજ્ઞાથી. અથવા ચક્રવર્તી  
આદિની આજ્ઞાથી પ્રાયઃ અનિયત ગતિવાળા હોય છે. આ દેવ કોઈ કોઈ મનુષ્યની  
દાસની સમાન સેવા કરે છે. તે વિવિધ પ્રકારના પર્વતોની શુકાઓમાં અને વન-  
શુકાઓ આદિમાં નિવાસ કરે છે.



व्यन्तराः षोडशविधाः— १ पिशाच-२ भूत-३ यक्ष-४ राक्षस-५ किन्नर  
६ किंपुरुष-७ महोरग-८ गन्धर्वा-९ प्रज्ञप्तिक-१० पञ्चप्रज्ञप्तिक-११ ऋषिवादिक-१२ भूत-  
वादिक-१३ क्रन्दित-१४ महाक्रन्दित-१५ कूष्माण्ड-१६ पतंग भेदात् । (स्था.  
स्था. २ उ ३)

जृम्भका अपि व्यन्तरदेवा दश सन्ति । यथा-(१) अन्नजृम्भकाः  
(२) पानजृम्भकाः, (३) वस्त्रजृम्भकाः, (४) लयनजृम्भकाः, (५) शयनजृम्भकाः,  
(६) पुष्पजृम्भकाः, (७) फलजृम्भकाः, (८) पुष्पफलजृम्भकाः, (९) विद्याजृम्भकाः,  
(१०) अव्यक्तजृम्भकाः ।

(६) ज्योतिष्कदेवाः—

ज्योतींषि-प्रभापुञ्जस्वरूपाणि समुज्ज्वलानि विमानानि, तत्र भवाः

व्यन्तर देव सोलह हैं—(१) पिशाच, (२) भूत, (३) यक्ष, (४) राक्षस, (५) किन्नर,  
(६) किंपुरुष, (७) महोरग, (८) गन्धर्व, (९) अप्रज्ञप्तिक, (१०) पञ्चप्रज्ञप्तिक, (११)  
ऋषिवादिक, (१२) भूतवादिक, (१३) क्रन्दित, (१४) महाक्रन्दित, (१५) कूष्माण्ड, और  
(१६) पतङ्ग (स्था. स्था. २ उ. ३)

जृम्भक व्यन्तर देव भी दश प्रकार के हैं । जैसे—

(१) अन्नजृम्भक, (२) पानजृम्भक, (३) वस्त्रजृम्भक, (४) लयनजृम्भक, (५) शयनजृम्भक,  
(६) पुष्पजृम्भक, (७) फलजृम्भक, (८) पुष्पफलजृम्भक, (९) विद्याजृम्भक और (१०) अव्यक्त-  
जृम्भक ।

(३) ज्योतिष्क देव

प्रभा के पुञ्ज के समान अत्यन्त उज्ज्वल विमानों में उत्पन्न होने वाले

व्यन्तर देव सोलह छे (१) पिशाच, (२) भूत (३) यक्ष, (४) राक्षस (५)  
किन्नर, (६) किंपुरुष, (७) महोरग, (८) गन्धर्व, (९) अप्रज्ञप्तिक, (१०) पञ्चप्रज्ञप्तिक,  
(११) ऋषिवादिक, (१२) भूतवादिक, (१३) क्रन्दित, (१४) महाक्रन्दित, (१५)  
कूष्माण्ड और (१६) पतङ्ग, (स्था. स्था. २ उ. ३)

भूतलक व्यन्तर देव पञ्च दस प्रकारना छे, जेभ—(१) अन्नभूतलक, (२)  
पान भूतलक, (३) वस्त्रभूतलक, (४) लयनभूतलक, (५) शयनभूतलक, (६) पुष्प भूतलक,  
(७) फलभूतलक (८) पुष्पफलभूतलक, (९) विद्याभूतलक, और (१०) अव्यक्तभूतलक.

(३) ज्योतिष्कदेवो—

प्रभाणा पुञ्ज समान अत्यन्त उज्ज्वल विमानांमां उत्पन्न थवा वाणा देव

જ્યોતિષ્કાઃ । જ્યોતિષ્કદેવાસ્તિર્યગ્લોકે જ્યોતિઃપ્રકાશં કુર્વન્તિ । જ્યોતિષ્કદેવાઃ પશ્ચવિધાઃ—(૧) ચન્દ્ર—(૨) સૂર્ય—(૩) ગ્રહ—(૪) નક્ષત્ર—(૫) તારા—ભેદાત્ । इमे पञ्च समयक्षेत्रान्तर्वर्तिनश्चरस्वभावाः सन्ति । अपरे पञ्च चन्द्रादयः समयक्षेत्राद् बहिः स्थिरा एव तिष्ठन्ति ।

#### (૪) વૈમાનિકદેવાઃ—

ऊर्ध्वलोके विमानेषु वसन्तीति वैमानिकाः । यद्वा-विशेषेण मानयन्ति=विशंति यत्र विशिष्टसुकृतिन इति विमानानि, तत्र भवा वैमानिकाः । यद्वा-वि=विशिष्टं मानं=ज्ञानं यत्र, समदर्शितया, अन्यदेवापेक्षया च हेयोपादेयज्ञान-विशिष्टा भवन्ति यत्र तानि विमानानि, तत्र भवा वैमानिकाः ।

દેવ જ્યોતિષ્ક કહલાતે હૈં । જ્યોતિષ્ક દેવ મધ્યમ લોક મેં પ્રકાશ કરતે હૈં । જ્યોતિષ્ક દેવ પાંચ પ્રકાર કે હૈં—

૧ ચન્દ્ર, ૨ સૂર્ય, ૩ ગ્રહ, ૪ નક્ષત્ર, ઓર ૫ તારાગણ । યે પાંચો સમયક્ષેત્ર ( અઢાઈ દ્વીપ ) મેં ચલતે હૈં ઓર સમયક્ષેત્ર સે બાહર સ્થિર સ્વભાવ વાલે હૈં ।

#### (૪) વૈમાનિક દેવ—

ऊर्ध्व लोक में विमानों में वास करने वाले वैमानिक कहलाते हैं । अथवा जहां विशिष्ट पुण्यात्मा प्रवेश करते हैं उन्हें विमान कहते हैं, और विमानों में वास करने वाले वैमानिक कहलाते हैं । अथवा समदर्शी होने के कारण जहां विशिष्ट ज्ञान हो, या अन्य देवों की अपेक्षा जहां हेय उपादेय का विशिष्ट ज्ञान हो, वे विमान हैं और उन में होने वाले वैमानिक हैं ।

જ્યોતિષ્ક કહેવાય છે. જ્યોતિષ્ક દેવ મધ્ય લોકમાં પ્રકાશ કરે છે. જ્યોતિષ્ક દેવ પાંચ પ્રકારના છે. (૧) ચન્દ્ર, (૨) સૂર્ય, (૩) ગ્રહ, (૪) નક્ષત્ર અને (૫) તારાગણ. આ પાંચ સમયક્ષેત્ર (અઢીદ્વીપ)માં ચાલે છે અને સમયક્ષેત્રની બહાર સ્થિર સ્વભાવવાળા છે.

#### (૪) વૈમાનિક દેવ—

ऊर्ध्वलोकમાં विमानोंમાં वास કરવા वाળા वैमानिक કહેવાય છે, અથવા જ્યાં વિશિષ્ટ પુણ્યાત્મા પ્રવેશ કરે છે તેને વિમાન કહે છે. અને વિમાનોમાં વાસ કરવા વાળા વૈમાનિક કહેવાય છે, અથવા—સમદર્શી હોવાના કારણે જ્યાં વિશિષ્ટ જ્ઞાન હોય, અથવા અન્ય દેવોની અપેક્ષાએ, જ્યાં હેય-ઉપાદેયનું વિશિષ્ટ જ્ઞાન હોય તે વિમાન છે, અને તેમાં થવા વાળા વૈમાનિક છે.

वैमानिकदेवानां द्वौ भेदौ-कल्पोपपन्नाः कल्पातीताश्च । कल्पः=आचारः  
स चेहेन्द्रसामानिकत्रायस्त्रिंशदिव्यवहाररूपस्तमुपगताः कल्पोपपन्नाः=सौधर्मादि-  
देवलोकनिवासिनो वैमानिका देवाः । यद्वा-कल्पेषु सौधर्मादिषु उपपन्नाः सौधर्मादि-  
देवलोकोत्पन्ना वैमानिकदेवाः कल्पोपपन्नाः । यद्वा-कल्पेन=नियमेन इन्द्रसामा-  
निकादिस्वामिसेवकादिभावरूपमर्यादयोपपन्नाः=युक्ताः=कल्पोपपन्नाः ।

१ इन्द्र- २ सामानिक - ३ त्रायस्त्रिंश - ४ लोकपाल - ५ पारिषद्या - ६ नीका -  
७ आत्मरक्षका - ८ ऽऽभियोगिक - ९ प्रकीर्णाः, किल्बिषिकाश्च १० स्वस्वमर्यादापालकतया  
कल्पोपपन्ना इत्युच्यन्ते । तत्रेन्द्राः - सामानिकादिदेवानामधिपतयः ।  
इन्द्रसमानाः-सामानिकाः । मन्त्रिपुरोहितस्थानीयास्त्रायस्त्रिंशः । सीमारक्षका

वैमानिक देव दो प्रकार के हैं-कल्पोपपन्न और कल्पातीत । कल्प का अर्थ  
है-आचार । यहां इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश आदि का व्यवहार कल्प माना गया है,  
और यह कल्प जिन में पाया जाय वे कल्पोपपन्न कहलाते हैं । सौधर्म आदि देवलोकों  
में निवास करने वाले वैमानिक देव कल्पोपपन्न हैं । अथवा कल्प से अर्थात् नियम से  
अर्थात् इन्द्र, सामानिक आदि, या स्वामी-सेवक आदिभावरूप मर्यादा से युक्त देव  
कल्पोपपन्न कहलाते हैं ।

इन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, लोकपाल, पारिषद्य, आनीक. आत्मरक्षक,  
आभियोग्य, प्रकीर्णक और किल्बिषिक, ये दश अपनी-अपनी मर्यादा का पालन  
करते हुए कल्पोपपन्न कहलाते हैं ।

सामानिक आदि देवों के अधिपति इन्द्र कहलाते हैं । इन्द्र के समान

वैमानिक देव दो प्रकारના છે-(૧) કલ્પોપપન્ન અને (૨) કલ્પાતીત. કલ્પનો  
અર્થ છે-આચાર. અહિં ઇન્દ્ર, સામાનિક, ત્રાયસ્ત્રિંશ આદિનો વ્યવહાર કલ્પ માન્યો  
છે, અને આ કલ્પ જોનામાં જોવામાં આવે છે તે કલ્પોપપન્ન કહેવાય છે. સૌધર્મ  
આદિ દેવલોકોમાં નિવાસ કરવાવાળા વૈમાનિક દેવ કલ્પોપપન્ન છે. અથવા કલ્પથી  
અર્થાત્, નિયમથી અર્થાત્ ઇન્દ્ર સામાનિક આદિ, અથવા સ્વામી-સેવક આદિ  
ભાવરૂપ મર્યાદાથી યુક્ત દેવ કલ્પોપપન્ન કહેવાય છે.

ઇન્દ્ર, સામાનિક, ત્રાયસ્ત્રિંશ, લોકપાલ, પારિષદ, આનીક, આત્મરક્ષક, આભિયોગ્ય,  
પ્રકીર્ણક અને કિલ્બિષિક, પોત-પોતાની મર્યાદાનું પાલન કરતા થકા કલ્પોપપન્ન  
કહેવાય છે.

સામાનિક આદિ દેવોના અધિપતિ ઇન્દ્ર કહેવાય છે. ઇન્દ્રના સમાન સામાનિક



લોકપાલાઃ । મિત્રસ્થાનીયાઃ પારિષદ્યાઃ । સૈનિકાઃ સેનાધિપતિરૂપાશ્ચ-આનીકાઃ ।  
 ઇન્દ્રશરીરરક્ષાકારકા આત્મરક્ષકાઃ । દાસસ્થાનીયાઃ સેવકા આભિયોગ્યાઃ ।  
 નાગરિક-પૌરજનસમાનાઃ પ્રકીર્ણકાઃ । અન્યજસમાનાઃ કલ્વિષિકાઃ । સૌધર્માદિ-  
 દ્વાદશકલ્પેષુ દશવિધા ઇન્દ્રસામાનિકાદયો દેવાઃ ભવન્તિ । વ્યન્તરજ્યોતિષ્કદેવેષુ  
 ત્રાયસ્ત્રિંશા લોકપાલાશ્ચ ન ભવન્તિ ।

કલ્પોપપન્નદેવાનાં નિવાસસ્થાનાનિ દ્વાદશ સન્તિ-૧સૌધર્મ-૨શાન-૩સન-  
 ત્કુમાર-૪માહેન્દ્ર-૫બ્રહ્મલોક-૬લાન્તક-૭મહાશુક્ર-૮સહસ્રાર-૯ડડનત-૧૦પ્રાણતા-  
 ૧૧ડડરણા-૧૨ડચ્યુતાઃ । ઇમે દ્વાદશ દેવલોકાઃ કલ્પવિમાનાનિ । તત્ર સૌધર્મસ્ય  
 સામાનિક હોતે હૈં । મન્ત્રી ઓર પુરોહિત જંસે ત્રાયસ્ત્રિંશ દેવ હૈં । સીમા કી રક્ષા કરને વાલે  
 લોકપાલ હૈં । મિત્ર કે સમાન પારિષદ હૈં । સૈનિક ઓર સેનાધિપતિરૂપ આનીક હૈં । ઇન્દ્ર  
 કે શરીર કી રક્ષા કરને વાલે આત્મરક્ષક કહલાતે હૈં । નાગરિક-પૌરજનકે સમાન પ્રકીર્ણક  
 દેવ હૈં । દાસ કે સમાન દેવ આભિયોગિક કહલાતે હૈં, ઓર અન્યજોં કે સમાન કલ્વિષિક  
 હૈં । યે ઇન્દ્ર સામાનિક આદિ દશપ્રકારકે દેવ સૌધર્મ આદિ સમી કલ્પોં મેં હોતે હૈં । વ્યંતરો  
 ઓર જ્યોતિષ્ક દેવોં મેં ત્રાયસ્ત્રિંશ ઓર લોકપાલ નહીં હોતે ।

કલ્પોપપન્ન દેવોં કે નિવસસ્થાન બારહ હૈં—

૧ સૌધર્મ, ૨ ઇશાન, ૩ સનત્કુમાર, ૪ માહેન્દ્ર, ૫ બ્રહ્મલોક, ૬ લાન્તક,  
 ૭ મહાશુક્ર, ૮ સહસ્રાર, ૯ આનત, ૧૦ પ્રાણત, ૧૧ આરણ, ૧૨ અચ્યુત । યે  
 બારહ દેવલોક કલ્પવિમાન હૈં । સૌધર્મ કલ્પ કી બરાબરી પર ઇશાન કલ્પ હૈં । ઇશાન  
 હોય છે. મંત્રી અને પુરોહિત જેવા ત્રાયસ્ત્રિંશ દેવ છે. સીમાની રક્ષા કરનારા તે લોકપાલ છે  
 મિત્રની સમાન પારિષદ છે, સૈનિક અને સેનાધિપતિરૂપ આનીક છે. ઇન્દ્રના શરીરની  
 રક્ષા કરવાવાળા આત્મરક્ષક કહેવાય છે. નાગરિક-પૌરજનની સમાન પ્રકીર્ણક દેવ છે.  
 દાસના સમાન સેવક દેવ આભિયોગિક કહેવાય છે, અન્યજોની સમાન કલ્વિષિક છે.  
 આ ઇન્દ્ર, સામાનિક આદિ દેવ સૌધર્મ આદિ સર્વ કલ્પોમાં હોય છે. વ્યંતરો  
 અને જ્યોતિષ્ક દેવોમાં ત્રાયસ્ત્રિંશ અને લોકપાલ હોતા નથી.

કલ્પોપપન્ન દેવોના નિવાસસ્થાન બાર છે. (૧) સૌધર્મ, (૨) ઐશાન (૩)  
 સનત્કુમાર (૪) માહેન્દ્ર (૫) બ્રહ્મલોક (૬) લાન્તક, (૭) મહાશુક્ર, (૮) સહસ્રાર,  
 (૯) આનત, (૧૦) પ્રાણુત, (૧૧) આરણુ, (૧૨) અચ્યુત.

આ બાર દેવલોક કલ્પ વિમાન છે. સૌધર્મ કલ્પની બરાબરી પર ઐશાન કલ્પ છે.

કલ્પસ્ય સમાનદેશે ऐशानः कल्पः । ऐशानस्योपरि सनत्कुमारः कल्पः । सनत्कुमार-  
स्योपरि माहेन्द्रः कल्पः । एवमुपर्युपरि सर्वे कल्पाः सन्ति ।

ત્રજ્યોતિષ્કલોકાદૃર્ધ્વમ સંખ્યાતયોજનકોટિકોટિષુમાર્ગમાસ્ત્વ રૂપલક્ષિત-  
ક્ષિણભાગે ગગનપ્રદેશે સૌધર્મકલ્પસ્તથૈશાનકલ્પશ્ચાઽસ્તિ । સૌધર્મકલ્પઃ પૂર્વ  
પશ્ચિમદીર્ઘઃ, ઉત્તરદક્ષિણવિસ્તીર્ણોઽર્ધચન્દ્રાકારઃ સૂર્યવદ્ભાસ્વરઃ, આયામવિષ્કમ્ભાભ્યાં-  
પરિક્ષેપતશ્ચાઽસંખ્યેયયોજનકોટિકોટયઃ, સર્વરત્નમયઃ લોકાન્તવિસ્તારોઽસ્તિ ।  
તત્ર મધ્યભાગે સર્વરત્નમયાશોક-સપ્તવર્ણ-ચમ્પકા-ઽઽન્ન-સૌધર્માવતંસકસુશોભિતઃ  
શક્રાવાસઃ । તત્ર સુધર્મા નામ શક્રસ્ય દેવેન્દ્રસ્ય સભા તસ્મિન્ કલ્પેઽસ્તીતિ  
સૌધર્મઃ કલ્પઃ ।

કે ઉપર સનત્કુમાર કલ્પ છે । સનત્કુમાર કે ઉપર માહેન્દ્ર કલ્પ છે । इसीप्रकार ऊपर-ऊपर  
सभी कल्प समझने चाहिए ।

જ્યોતિષ્ક મળ્ડલ સે ઉપર અસંખ્યાત કોડાકોડી યોજન ઉપર જાકર મેરુ સે ઉપલક્ષિત  
દક્ષિણ ભાગ મેં આકાશ-પ્રદેશ મેં સૌધર્મકલ્પ ઓર ऐशान કલ્પ હૈં । સૌધર્મકલ્પ પૂર્વ પશ્ચિમ  
મેં લમ્બા, ઉત્તર-દક્ષિણ મેં વિસ્તીર્ણ ઓર અર્ધચન્દ્ર કે આકાર કા હૈ । સૂર્ય કે સમાન ચમક-  
દાર, લમ્બાઈ, ચૌડાઈ ઓર પરિધિ સે અસંખ્યાત કોડાકોડી યોજન, સર્વરત્નમય ઓર લોક કે  
અન્તતક વિસ્તૃત હૈ । ઉસકે મધ્ય ભાગ મેં સર્વરત્નમય અશોક, સપ્તવર્ણ, ચમ્પક, આન્ન, ઇવં  
સૌધર્માવતંસક સે શોભિત શક્ર કા આવાસ હૈ । શક્ર દેવેન્દ્ર કી સુધર્માનામક સભા જિસ  
કલ્પ મેં હોં, વહ સૌધર્મકલ્પ કહલાતા હૈ ।

ऐशानना उपर सनत्कुमार कल्प छे, सनत्कुमारना उपर माहेन्द्र कल्प छे. ये  
प्रमाणे उपर उपर तमाम कल्प समझवा जेईये.

જ્યોતિષ્કમંડળની ઉપર, અસંખ્યાત કોડા-કોડી યોજન ઉપર જઈને મેરુથી  
ઉપલક્ષિત દક્ષિણ ભાગમાં આકાશ-પ્રદેશમાં સૌધર્મ કલ્પ અને ऐशान કલ્પ છે. સૌધર્મકલ્પ  
પૂર્વ પશ્ચિમમાં લાંબો, ઉત્તર-દક્ષિણમાં વિસ્તીર્ણ અને અર્ધચન્દ્રકારે છે. સૂર્યના સમાન  
ચમકદાર લાંબાઈ, ચૌડાઈ અને પરિધિથી અસંખ્યાત કોડાકોડી યોજન, સર્વરત્નમય  
છે, અને લોકના અંત સુધી વિસ્તૃત છે. તેના મધ્ય ભાગમાં સર્વ રત્નમય અશોક,  
સપ્તવર્ણ, ચમ્પક, આન્ન, એવં સૌધર્માવતંસથી શોભિત ઇન્દ્રનો આવાસ છે. શક્ર  
દેવેન્દ્રની સુધર્મા નામની સભા જે કલ્પમાં હોય, તે સૌધર્મ કલ્પ કહેવાય છે.

તથૈશાનકલ્પોઽપ્યર્ધચન્દ્રાકારોઽસ્તિ । ઉમૌ મિલિતૌ પૂર્ણચન્દ્રાકારેણ-  
વસ્થિતૌ સ્તઃ તતોઽસંખ્યાતયોજનકોટિકોટિષ્ઠપરિ સમાનપ્રદેશે સનત્કુમાર-  
માહેન્દ્રૌ કલ્પૌ વર્તેતે । અર્ધચન્દ્રાકાર ઇવ સનત્કુમારસ્તથૈવ માહેન્દ્રોઽપિ ।  
ઉમૌ મિલિત્વા પૂર્ણચન્દ્રસદૃશાકારેણ સ્તઃ । તતોઽસંખ્યાતયોજનકોટિકોટિયુપરિ  
બ્રહ્મલોકઃ પૂર્ણચન્દ્રાકારોઽસ્તિ । એવમેવ લાન્તક-મહાશુક્ર-સહરાસ્ત્રાસ્તાવત્તાવ-  
યોજનોર્ધ્વમુપર્યુપરિ પ્રત્યેકં પૂર્ણચન્દ્રાકારાઃ સન્તિ તતોઽપ્યસંખ્યાતયોજનકોટિ-  
કોટિયુપરિ સમાનગગનપ્રદેશે આનત-પ્રાણતલોકૌ પ્રત્યેકમર્ધચન્દ્રાકારૌ  
સ્તઃ । ઉમૌ મિલિત્વા પૂર્ણચન્દ્રાકારેણ ભવતઃ । તતોઽપ્યસંખ્યાતયોજનકોટિ  
કોટિયુપરિ-આરણાચ્યુતલોકૌ પ્રત્યેકમર્ધચન્દ્રાકારૌ સ્તઃ । ઉમૌ મિલિત્વા  
પૂર્ણચન્દ્રાકારં ભજતઃ ।

ऐशानकल्प भी अर्धचन्द्राकार है । दोनों कल्प मिलकर पूर्ण चन्द्रमा के समान हैं ।  
इन से असंख्यात कोडाकोडी योजन ऊपर समान देश में सनत्कुमार और माहेन्द्र कल्प हैं ।  
सनत्कुमार कल्प अर्धचन्द्राकार है और माहेन्द्र कल्प भी इसी प्रकार का है । दोनों मिलकर  
पूर्णचन्द्रमा के सदृश आकार वाले हैं । इन से असंख्यात कोडाकोडी योजन ऊपर ब्रह्मलोक  
पूर्णचन्द्राकार है । इसी प्रकार लान्तक, महाशुक्र, और सहस्रार उतने-उतने योजन ऊपर-ऊपर  
प्रत्येक पूर्णचन्द्रमा के समान अवस्थित हैं । उन से असंख्यात कोडाकोडी योजन ऊपर  
आकाश प्रदेश में आनत और प्राणत बराबरी पर प्रत्येक अर्धचन्द्राकार है । ये दोनों मिलकर  
पूर्णचन्द्रके आकार के हो जाते हैं । उन से असंख्यात कोडाकोडी योजन ऊपर आरण और  
अच्युत लोक प्रत्येक अर्धचन्द्राकार है । ये दोनों मिलकर पूर्णचन्द्र के आकार के जैसे  
हो जाते हैं ।

ऐशान કલ્પ પણ અર્ધચન્દ્રાકાર છે. બન્ને કલ્પો મળીને પૂર્ણ ચન્દ્રમાની સમાન  
છે. તેનાથી અસંખ્યાત કોડા-કોડી યોજન ઉપર સમાન દેશમાં સનત્કુમાર અને માહેન્દ્ર  
કલ્પ છે. સનત્કુમાર કલ્પ અર્ધચન્દ્રાકાર છે અને માહેન્દ્ર કલ્પ પણ એ પ્રકારનો છે.  
બન્ને મળીને પૂર્ણચન્દ્રમાની બરાબર આકારવાળા છે. તેનાથી અસંખ્યાત કોડા-કોડી  
યોજન ઉપર બ્રહ્મલોક પૂર્ણચન્દ્રાકાર છે. એ પ્રમાણે લાન્તક, મહાશુક્ર અને સહસ્રાર તેટલા-  
તેટલા યોજન ઉપર-ઉપર પ્રત્યેક, પૂર્ણચન્દ્રમાસમાન અવસ્થિત છે. તેથી અસંખ્યાત  
કોડા-કોડી યોજન ઉપર આકાશપ્રદેશમાં આનત અને પ્રાણત બરાબરી પર પ્રત્યેક  
અર્ધચન્દ્રાકાર છે. એ બન્ને કલ્પો મળીને પૂર્ણ ચન્દ્રમાના આકારના થઈ જાય છે.  
તેથી અસંખ્યાત કોડા-કોડી યોજન ઉપર આરણ અને અચ્યુત લોક પ્રત્યેક અર્ધ-  
ચન્દ્રાકાર છે. એ બન્ને મળીને પણ પૂર્ણચન્દ્રાકાર જેવાં થઈ જાય છે.



द्वादशकल्पनिवासिनामिन्द्राणां नामानि यथा-सौधर्मकल्पस्य शक्रः १, ऐशानस्येशानः २, सनत्कुमारस्य सनत्कुमारः ३, माहेन्द्रस्य महेन्द्रः ४, ब्रह्मलोकस्य ब्रह्मेन्द्रः ५, लान्तकस्य-लन्तकः ६, महाशुक्रस्य महाशुक्रः ७, सहस्रारस्य सहस्रारः ८, आनत-प्राणतयोः कल्पयोः एक-एव प्राणतनामा सुरपतिः ९, आरणाच्युतयोरपि तथैवैकोऽच्युतनामा देवराजोऽस्ति १० ।

एषु नव लोकांतिकाः सारस्वता १-ऽऽदित्य २-वह्नि ३-वरुण ४-गर्दतोय ५-तुषिता ६-ऽव्याबाधा ७-ऽऽग्नेय ८-रिष्ट ९-नामानः सन्ति । ब्रह्मलोके लोकान्तिका निवसन्ति । ईशानकोणे सारस्वताः १, पूर्वस्यामादित्याः २, आग्नेयकोणे वह्नयः ३, दक्षिणस्यां वरुणाः ४, नैऋत्ये गर्दतोयाः ५, पश्चिमायां तुषिताः ६, वायव्यकोणे-अव्याबाधाः ७, उत्तरस्याम् अग्निच्चा (आग्नेयाः) ८, मध्ये रिष्टाः ९ निवसन्ति ।

बारह कल्पवासी इन्द्रों के नाम इस प्रकार हैं-सौधर्म कल्प का शक्र १, ऐशान का ईशान २, सनत्कुमार का सनत्कुमार ३, माहेन्द्र का महेन्द्र ४, ब्रह्मलोकका ब्रह्मेन्द्र ५, लान्तक का लन्तक ६, महाशुक्र का महाशुक्र ७, सहस्रार का सहस्रार ८ और आनत-प्राणत कल्पों का एक प्राणतनामक इन्द्र है ९ । आरण और अच्युत कल्पों का अच्युत नामक एक ही इन्द्र है १० ।

इन में नौ लोकान्तिक देव हैं-(१) सारस्वत, (२) आदित्य, (३) वह्नि, (४) वरुण, (५) गर्दतोय, (६) तुषित, (७) अव्याबाध, (८) आग्नेय और, (९) रिष्ट । ये लोकान्तिक देव ब्रह्मलोक में निवास करते हैं । ईशान कोण में सारस्वत, पूर्व में आदित्य, आग्नेय कोण में वह्नि, दक्षिण में वरुण, नैऋत्य में गर्दतोय, पश्चिम में तुषित, वायव्य में अव्याबाध, उत्तर में अग्निच्चा (आग्नेय) और मध्य में रिष्ट निवास करते हैं ।

बारह कल्पवासी इन्द्रोंनां नामो आ प्रमाणे छे-सौधर्मकल्पना शक्र; (१) ऐशानना ऐशान (२) सनत्कुमारना सनत्कुमार (३) माहेन्द्रना महेन्द्र, (४) ब्रह्मलोकना ब्रह्मेन्द्र, (५) लान्तकना लन्तक, (६) महाशुक्रना महाशुक्र, (७) सहस्रारना सहस्रार अने आनत-प्राणत कल्पोना एक प्राणत नामना इन्द्र छे, आरण अने अच्युत कल्पोना अच्युत नामना एक इन्द्र छे. (१०) तेमां नव लोकान्तिक देव छे—(१) सारस्वत, (२) आदित्य, (३) वह्नि, (४) वरुण, (५) गर्दतोय, (६) तुषित, (७) अव्याबाध, (८) आग्नेय, अने (९) रिष्ट. आ लोकान्तिक देव ब्रह्मलोकमां निवास करे छे. ऐशानकोणमां सारस्वत, पूर्वमां आदित्य, आग्नेयकोणमां वह्नि, दक्षिणमां वरुण, नैऋत्यमां गर्दतोय पश्चिममां तुषित, वायव्यमां अव्याबाध, उत्तरमां अग्निच्चा (आग्नेय) अने मध्यमां रिष्ट निवास करे छे.

## કલ્પાતીતા:-

કલ્પમતીતા:-અતિક્રાન્તા: કલ્પાતીતા: । સૌધર્માદિદ્વાદશકલ્પબહિર્ભૂતા: સ્વામિસેવકાદ્યાચારવર્જિતા:, સ્વાતન્ત્ર્યાદહમિન્દ્રનામ્ના પ્રસિદ્ધા:, ભદ્રાદિનવગ્રૈવેયક-વિમાન-વિજયાદિપશ્ચાનુત્તરવિમાનાધિવાસિનો દેવા: કલ્પાતીતા: ।

સૌધર્માદિદ્વાદશકલ્પતથોર્ધ્વમસંખ્યાતયોજનકોટિકોટિષ્ઠપરિ નવગ્રૈવેય-કાનિ વિમાનાન્યુપર્યુપરિ સન્તિ । પુરુષાકારલોકસ્ય ગ્રીવાસ્થાનીયતયા વિમાનાનિ ગ્રૈવેયકાન્યુચ્યન્તે । તદ્વાસિનો દેવા અપિ ગ્રૈવેયકા ઉચ્યન્તે । સર્વોપરિતનગ્રૈવેયક-વિમાનાદૂર્ધ્વમસંખ્યાતયોજનકોટિકોટ્યુપરિ પશ્ચાનુત્તરવિમાનાનિ સન્તિ । તત્રૈકં મધ્યભાગે, ચતુર્દિશુ ચત્વારિ । અનુત્તરવિમાનવાસિનો દેવા અનુત્તરા ઉચ્યન્તે ।

## કલ્પાતીત—

જો દેવ કલ્પ સે પરે હૈં વે કલ્પાતીત કહલાતે હૈં, અર્થાત્ સૌધર્મ આદિ કલ્પો સે બાહર, સ્વામી, સેવક આદિ મર્યાદા સે રહિત—સ્વતંત્ર હોને કે કારણ અહમિન્દ્ર નામ સે પ્રસિદ્ધ ભદ્ર આદિ નૌ ગ્રૈવેયકોં મેં તથા વિજય આદિ પાંચ અનુત્તર વિમાનોં મેં નિવાસ કરને વાલે દેવ કલ્પાતીત કહલાતે હૈં ।

સૌધર્મ આદિ બારહ કલ્પોં સે ઉપર અસંખ્યાત કોડાકોડી યોજન જાકર નૌ ગ્રૈવેયક વિમાન એક દૂસરે કે ઉપર અવસ્થિત હૈં । પુરુષાકાર લોક કી ગ્રીવા કે સ્થાન પર જો વિમાન હૈં, વે ગ્રૈવેયક વિમાન કહલાતે હૈં । સબ સે ઉપર કે ગ્રૈવેયક વિમાન સે ઉપર અસંખ્યાત કોડાકોડી યોજન જાકર પાંચ અનુત્તર વિમાન હૈં । ઊન મેં સે એક મધ્ય ભાગ મેં હૈં ઓર ચાર ચારોં દિશાઓં મેં હૈં । અનુત્તરવિમાનવાસી દેવ અનુત્તર કહલાતે હૈં ।

## કલ્પાતીત—

જે દેવો કલ્પથી બહાર છે તે કલ્પાતીત કહેવાય છે. અર્થાત્ સૌધર્મ આદિ કલ્પથી બહાર સ્વામી-સેવક આદિ મર્યાદાથી રહિત, સ્વતંત્ર હોવાના કારણે અહમિન્દ્ર નામથી પ્રસિદ્ધ છે. ભદ્ર આદિ નવગ્રૈવેયકમાં, તથા વિજય આદિ પાંચ અનુત્તર વિમાનોમાં નિવાસ કરવા વાળા દેવ તે કલ્પાતીત કહેવાય છે.

સૌધર્મ આદિ બાર કલ્પથી ઉપર અસંખ્યાત કોડા-કોડી યોજન જઈને નવ ગ્રૈવેયક વિમાન એક બીજાની ઉપર અવસ્થિત છે. પુરુષાકાર લોકની ગ્રીવા (કોડ) ના સ્થાન પર જે વિમાન છે. તે ગ્રૈવેયક વિમાન કહેવાય છે.

સૌથી ઉપરના ગ્રૈવેયક વિમાન ઉપર અસંખ્યાત કોડા-કોડી યોજન જઈને પાંચ અનુત્તર વિમાન છે. તેમાંથી એક મધ્ય ભાગમાં છે, ચાર ચારેય દિશાઓમાં છે. અનુત્તરવિમાનવાસી દેવ અનુત્તર કહેવાય છે.

નવગ્રૈવેયકનામાનિ યથા - ૧ ભદ્ર - ૨ સુભદ્ર - ૩ સુજાત - ૪ સુમાનસ - ૫ સુદર્શન - ૬ પ્રિયદર્શના - ૭ અમોઘ - ૮ સુપ્રતિભદ્ર - ૯ યશોધરાણિ ।

પશ્ચાન્નુત્તરવિમાનાનિ યથા-૧ વિજય-૨ વૈજયન્ત-૩ જયન્તા-૪ અપરાજિત-૫ સર્વાર્થસિદ્ધાશ્ચાનિ । અવિઘમાનમુત્તર-મુત્કૃષ્ટં વિમાનાદિ યેભ્યસ્તાન્યનુત્તરાણિ । તાનિ ચ વિમાનાનિ-અનુત્તરવિમાનાનિ ।

તીર્થઙ્કરાદીનાં સમવસરણાદૌ કલ્પોપપન્નદેવા ગમનાગમનં કુર્વન્તિ । કલ્પાતીતદેવાસ્તુ સ્વસ્થાનાદન્યત્ર ન ગચ્છન્તિ ।

### ૫ જીવનિકાયભેદ-સંકલનમ્

૫૬ જીવનિકાયનાં ત્રિષષ્ટ્યુત્તરપશ્ચશતાનિ (૫૬૩) ભેદાઃ । તથાહિ-પૃથિવ્યપ્તેજોવાયુકાયનાં પ્રત્યેકં બાદર-સૂક્ષ્મ-ભેદાદ્ દ્વિવિધ્યેષ્ટધા । તેષાં

નૌ ગ્રૈવેયકોં કે નામ-(૧) ભદ્ર, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુજાત, (૪) સુમાનસ, (૫) સુદર્શન, (૬) પ્રિયદર્શન, (૭) અમોઘ, (૮) સુપ્રતિભદ્ર, ઓર (૯) યશોધર હૈં ।

પાંચ અનુત્તર વિમાન-(૧) વિજય, (૨) વૈજયન્ત, (૩) જયન્ત, (૪) અપરાજિત ઓર (૫) સર્વાર્થસિદ્ધ । જિન સે ડૂપર અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ ઓર કોઈ વિમાન નહીં વે અનુત્તર વિમાન કહલાતે હૈં । તીર્થંકર આદિ કે સમવસરણ આદિ મેં કલ્પોપપન્ન દેવ ગમનાગમન કરતે હૈં । કલ્પાતીત દેવ અપને સ્થાન સે અન્ય જગહ નહીં જાતે ।

### ૫૬ જીવનિકાય કે ભેદોં કા સંકલન-

૫૬ જીવનિકાયોં કે કુલ પાંચસો ત્રેસઠ (૫૬૩) ભેદ હૈં । વે ઇસ પ્રકાર હૈં-પૃથિવી, અપ્, તેજ, ઓર વાયુકાય કે બાદર ઓર સૂક્ષ્મ કે ભેદ સે આઠ ભેદ હુણ ।

નવગ્રૈવેયકના નામ—(૧) ભદ્ર, (૨) સુભદ્ર, (૩) સુજાત, (૪) સુમાનસ, (૫) સુદર્શન, (૬) પ્રિયદર્શન, (૭) અમોઘ, (૮) સુપ્રતિભદ્ર અને (૯) યશોધર છે.

પાંચ અનુત્તર વિમાન-(૧) વિજય, (૨) વૈજયન્ત, (૩) જયન્ત, (૪) અપરાજિત અને (૫) સર્વાર્થસિદ્ધ. જેનાથી ઉત્તર અર્થાત્ ઉત્કૃષ્ટ કોઈ વિમાન ન હોય તે અનુત્તર વિમાન કહેવાય છે. તીર્થંકર આદિના સમવસરણ આદિમાં કલ્પોપપન્ન દેવ ગમનાગમન કરે છે. કલ્પાતીત દેવ પોતાના સ્થાનથી અન્ય જગ્યાએ જતા નથી.

### ૫૬ જીવનિકાયના ભેદોના યોગ

૫૬ જીવનિકાયોના કુલ પાંચસો ત્રેસઠ (૫૬૩) ભેદ છે. તે આ પ્રકારે છે—પૃથ્વી, અપ્, તેજ અને વાયુકાય, તેના બાદર અને સૂક્ષ્મના ભેદથી આઠ ભેદ થયા.



પર્યાપ્તાપર્યાપ્તભેદાદ્ દ્વૈવિધ્યે ષોડશ (૧૬) ભેદાઃ । વનસ્પતિકાયસ્ય સૂક્ષ્મ-  
સાધારણપ્રત્યેકભેદાત્ ત્રૈવિધ્યમ્, ત્રિવિધસ્ય વનસ્પતિકાયસ્ય પર્યાપ્તાપર્યાપ્ત-  
ભેદેન પ્રત્યેકં દ્વૈવિધ્યે તસ્ય ષઢ્ ભેદાઃ, इत्थं (૨૨) દ્વાવિંશતિર્ભેદાઃ સ્થાવર-  
પञ्चकस्यैकेन्द्रियजीवस्य भवन्ति ।

દ્વીન્દ્રિય-ત્રીન્દ્રિય-ચતુરિન્દ્રિયાણાં પર્યાપ્તાપર્યાપ્તભેદેન પ્રત્યેકં દ્વૈવિધ્યે  
ષઢ્ ભેદાઃ । सर्वसंकलनयाऽष्टाविंशति (૨૮) ભેદાઃ ।

તિર્યક્પञ्चेन्द्रियाः-जलचर-स्थलचर-खेचरो-रःपरिसर्पभुजपरिसर्प-भेदात्-  
पञ्चविधाः । तेषां पञ्चानां संज्ञ्यसंज्ञिभेदेन द्वैविध्ये दश भेदाः । तेषां पर्याप्ता-  
पर्याप्तभेदेन विंशति(२०)भेदाः । पूर्वोक्ताष्टाविंशतिसंकलनतोऽष्टचत्वारिंशद्  
(४८) भेदास्तिरश्वाम् ।

इन आठों के पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से सोलह भेद होते हैं । वनस्पतिकाय-सूक्ष्म,  
साधारण और प्रत्येक के भेद से-तीन प्रकार का है । इन तीनों के पर्याप्त और अपर्याप्त भेद  
करने से छह भेद हुए । इस प्रकार पांच एकेन्द्रिय स्थावर जीवों के बाईस (२२)भेद हैं ।

દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય और चतुरिन्द्रिय के पर्याप्त अपर्याप्त भेद से छह भेद । सबको  
जोड़ देते पर अट्ठाईस (२८) भेद हुए ।

તિર્યક્ પञ્ચેન્દ્રિય-જલચર, સ્થલચર, ખેચર, ર:પરિસર્પ और भुजपरिसर्प के भेद से  
પાંચ પ્રકાર के हैं । पांचों के संज्ञी, असंज्ञी के भेद से दश हुए, इन के पर्याप्त, अपर्याप्त भेद  
करने से बीस (२०) भेद हुए । इन बीस में पूर्वोक्त अट्ठाईस और मिलाने से तिर्यक्चों के  
अड़तालीस (४८) भेद होते हैं ।

તે આઠના પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્તના ભેદથી સોળ ભેદ થાય છે. વનસ્પતિકાય સૂક્ષ્મ,  
સાધારણ અને પ્રત્યેકના ભેદથી ત્રણ પ્રકારના છે. એ ત્રણેના પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત  
ભેદ કરવાથી છ ભેદ થયા. આ પ્રમાણે પાંચ એકેન્દ્રિય સ્થાવર જીવોના બાવીસ ભેદ છે.

બેઘન્દ્રિય, ત્રણ-ઇન્દ્રિય અને ચૌઘન્દ્રિયના પર્યાપ્ત અપર્યાપ્તના ભેદથી છ ભેદ  
થયા તે સર્વને એક કરવાથી અઠાવીસ (૨૮) ભેદ થયા.

તિર્યચ પંચેન્દ્રિય-જલચર, સ્થલચર, ખેચર, ર:પરિસર્પ અને ભુજપરિસર્પના  
ભેદથી પાંચ પ્રકારના છે. તે પાંચના સંજ્ઞી અને અસંજ્ઞીના ભેદથી દસ થયા, તેના  
પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ કરવાથી વીસ (૨૦) ભેદ થયા, તે વીસમાં પૂર્વોક્ત અઠાવીસ  
એકવવાથી તિર્યચોના અઠતાલીસ (૪૮) ભેદ થાય છે.

रत्नप्रभादयः सप्त नरकभूमयः । तत्र भवा नारकाः सप्तविधाः, तेषां पर्याप्तापर्याप्तभेदेन द्वैविध्ये चतुर्दश भेदाः

मनुष्याणां त्र्युत्तरशतत्रयं (३०३) भेदाः पूर्वमेव तत्प्रकरणे सुस्पष्टं कथिताः ।

देवानामष्टनवत्युत्तरशत (१९८) भेदाः । तत्र भवनपतीनां दश भेदाः असुरकुमारादयः । परमाधार्मिकाः पञ्चदश । एवं (२५) पञ्चविंशतिर्भेदाः । व्यन्तराणां षड्विंशतिर्भेदाः । तत्र पिशाचादयः षोडश, अन्नजृम्भकादयो दश (२६) । ज्योतिष्कानां दश भेदाः । तत्र चन्द्रादयः पञ्च । तेषां पञ्चानां चर-स्थिरभेदेन द्वैविध्ये दश भेदाः (१०) सन्ति । वैमानिकानामष्टत्रिंशद् भेदाः । तत्र सुधर्मादयो द्वादश, सारस्वतादयो नव, किल्बिषिकास्त्रयः, प्रैवेयकाः-भद्रादयो

रत्नप्रभा आदि सात नरकभूमियों में सात प्रकार के नारकी हैं । उनके पर्याप्त, अपर्याप्त भेद करने से चौदह भेद होते हैं ।

मनुष्यों के तीनसौ तीन ( ३०३ ) भेद पहले स्पष्ट कहे जा चुके हैं ।

देवों के एकसौ अट्ठानवे ( १९८ ) भेद हैं । वे इस प्रकार-भवनपतियों के असुर-कुमार आदि दस, परमाधार्मिक पन्द्रह, सब पच्चीस ( २५ ) भेद हुए । व्यन्तरों के छवीस भेद हैं-सोलह पिशाच आदि और दस अन्नजृम्भक आदि ( २६ ) । चन्द्रमा आदि पांच के चर और अचर भेद होने से ज्योतिष्क देवों के दश ( १० ) भेद हैं । वैमानिकों के अड़तीस भेद हैं-सुधर्म आदि बारह, सारस्वत आदि नौ, किल्बिषिक आदि तीन, भद्र आदि प्रैवेयक नौ, विजय आदि पांच अनुत्तर विमान ( ३८ ) । इन सब का योग करने से

रत्नप्रभा आदि सात नरकभूमियों में सात प्रकार की नारकी हैं । तेना पर्याप्त अने अपर्याप्त भेद करवायी चौदह भेद थाये हैं ।

मनुष्यों की त्रयसोत्रय ( ३०३ ) भेद प्रथम स्पष्ट कही चुकी थी । देवाना अष्टसो अष्टाष्ट ( १९८ ) भेद हैं । भवनपतियों की असुरकुमार आदि दस, परमाधार्मी पंद्रह, सब पच्चीस भेद थाये । व्यन्तरों की छवीस भेद हैं-सोण पिशाच आदि, अने दस अन्नजृम्भक आदि । चंद्रमा आदि पांच की चर अने अचर भेद होवायी ज्योतिष्क देवाना दश ( १० ) भेद हैं । वैमानिक देवाना अड़तीस ( ३८ ) भेद हैं-सुधर्म आदि बारह, सारस्वत आदि नौ, किल्बिषिक आदि त्रय, भद्र आदि प्रैवेयक नौ, विजय आदि पांच अनुत्तर विमान, आ सबने अष्ट प्र. आ.-३८

નવ, વિજયાદયઃ પશ્ચાનુત્તરવિમાનાઃ (૩૮) । સર્વેષાં સંકલનેન (૯૯) નવ-  
નવતિર્ભેદાઃ । તેષાં પર્યાપ્તાપર્યાપ્તભેદેન દ્વૈવિધ્યે સત્યઘ્નવત્યુત્તરશતં (૧૯૮) ભેદાઃ  
દેવાનાં ભવન્તિ । इत्थं सकलभेदसंकलनया षड्जीवनिकायानां त्रिषष्ट्युत्तर-  
पञ्चशतानि (૫૬૩) ભેદાઃ સન્તિ ।

જીવાનાં સંખ્યા—

જીવા અનન્તાઃ સન્તિ । તથાહિ—

- |  |                                  |
|--|----------------------------------|
| (૧) સંજ્ઞિનો મનુષ્યાઃ સંખ્યાતાઃ ।        | (૨) અસંજ્ઞિનો મનુષ્યા અસંખ્યાતાઃ |
| (૩) નારકિણોઽપ્યસંખ્યાતાઃ ।               | (૪) દેવાઃ સંખ્યાતાઃ ।            |
| (૫) તિર્યઞ્ચઃ પञ्चेन्द्रिया असंख्याताः । | (૬) દ્વીન્દ્રિયા અસંખ્યાતાઃ ।    |
| (૭) ત્રીન્દ્રિયા અસંખ્યાતાઃ ।            | (૮) ચતુરિન્દ્રિયા અસંખ્યાતાઃ ।   |

નિન્યાનવે (૯૯) ભેદ હોતે હૈં, ઔર ઇન કે પર્યાપ્ત અપર્યાપ્ત કે ભેદ સે ંકસૌ અઢ્ઢાનવે  
( ૧૯૮ ) ભેદ દેવોં કે હૈં । ઇસ પ્રકાર સવ ભેદોં કા જોડ કરને સે પાંચસૌ ત્રેસઠ ( ૫૬૩ )  
ષડ્જીવનિકાય કે ભેદ હોતે હૈં ।

જીવોં કી સંખ્યા—

જીવ અનન્ત હૈં । વે ઇસ પ્રકાર—

- |                                      |                               |
|--------------------------------------|-------------------------------|
| (૧) સંજ્ઞી મનુષ્ય સંખ્યાત ।          | (૨) અસંજ્ઞી મનુષ્ય અસંખ્યાત । |
| (૩) નારકી અસંખ્યાત ।                 | (૪) દેવ અસંખ્યાત ।            |
| (૫) તિર્યઞ્ચ પञ्चेन्द्रिय असंख्यात । | (૬) દ્વીન્દ્રિય અસંખ્યાત ।    |
| (૭) ત્રીન્દ્રિય અસંખ્યાત ।           | (૮) ચતુરિન્દ્રિય અસંખ્યાત ।   |

કરવાથી નવાણું (૯૯) લેદ થાય છે. અને તેના પર્યાપ્ત અપર્યાપ્ત લેદ કરવાથી ંકસૌ  
અઢ્ઢાણું (૧૯૮) લેદ દેવોના છે. આ પ્રમાણે ઉપર કહેલા સર્વ લેદોને ંકઠા કરવાથી  
પાંચસૌ ત્રેસઠ (૫૬૩) ષડ્જીવનિકાયના લેદ થાય છે.

જીવોની સંખ્યા—

જીવ અનન્ત છે, તે આ પ્રકારે છે:—

- |                                      |                                 |
|--------------------------------------|---------------------------------|
| (૧) સંજ્ઞી મનુષ્ય સંખ્યાત છે.        | (૨) અસંજ્ઞી મનુષ્ય અસંખ્યાત છે. |
| (૩) નારકી અસંખ્યાત છે.               | (૪) દેવ અસંખ્યાત છે.            |
| (૫) તિર્યંચ પંચેન્દ્રિય અસંખ્યાત છે. | (૬) દ્વિન્દ્રિય અસંખ્યાત છે.    |
| (૭) ત્રીન્દ્રિય અસંખ્યાત છે.         | (૮) ચતુરિન્દ્રિય અસંખ્યાત છે.   |



- (૯) પૃથ્વીકાયા અસંખ્યાતાઃ । (૧૦) અપૂકાયા અસંખ્યાતાઃ ।  
 (૧૧) તેજસ્કાયા અસંખ્યાતાઃ । (૧૨) વાયુકાયા અસંખ્યાતાઃ ।  
 ૧૩) પ્રત્યેક-વનસ્પતિકાયા અસંખ્યાતાઃ । (૧૪) તદપેક્ષયા સિદ્ધજીવા અનન્તાઃ ।  
 (૧૫) તેભ્યોઽપિ કન્દમૂલાદિરૂપા (૧૬) સૂક્ષ્મનિગોદજીવાઃ  
 વાદરનિગોદજીવા અનન્તગુણાઃ । સર્વતોઽનન્તગુણાઃ ।

### કર્મવાદિપ્રકરણમ્—

યઃ પુનરેવં ષડ્જીવનિકાયસ્વરૂપનિરૂપણપરઃ સ એવ લોકવાદી વસ્તુતઃ કર્મવાદીત્યાહ—‘કર્મવાદી’ इति । કર્મ=જ્ઞાનાવરણીયાદિ, તદ્ વદિતું શીલમસ્યેતિ કર્મવાદી—કર્મસ્વરૂપકથનશીલઃ । ષડ્જીવનિકાયતત્ત્વજ્ઞઃ સ્વલુ લોકવાદી જ્ઞાના-

- (૯) પૃથ્વીકાય અસંખ્યાત । (૧૦) અપૂકાય અસંખ્યાત ।  
 (૧૧) તેજસ્કાય અસંખ્યાત । (૧૨) વાયુકાય અસંખ્યાત ।  
 (૧૩) પ્રત્યેકવનસ્પતિકાય અસંખ્યાત । (૧૪) હસ સે સિદ્ધ જીવ અનન્ત ।  
 (૧૫) વાદરનિગોદજીવ કન્દમૂલ આદિ સિદ્ધો સે (૧૬) સૂક્ષ્મ નિગોદજીવ સર્વ સે  
 મી અનન્તગુણા । અનન્ત ગુણા ।

### કર્મવાદિપ્રકરણ—

જો હસ પ્રકાર ષડ્જીવનિકાય કા સ્વરૂપ નિરૂપણ કરને વાલા હૈ, વહી લોકવાદી વાસ્તવ મેં કર્તવાદી હૈ । જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મો કા કથન કરના જિસ કા સ્વભાવ હો, વહ કર્મવાદી હૈ । ષડ્જીવનિકાય કા તત્ત્વ સમજને વાલા લોકવાદી જ્ઞાનાવરણ

- (૯) પૃથ્વીકાય અસંખ્યાત છે. (૧૦) અપૂકાય અસંખ્યાત છે.  
 (૧૧) તેજસ્કાય અસંખ્યાત છે. (૧૨) વાયુકાય અસંખ્યાત છે.  
 (૧૩) પ્રત્યેકવનસ્પતિકાય અસંખ્યાત છે. (૧૪) તેનાથી સિદ્ધજીવ અનન્ત છે.  
 (૧૫) વાદર નિગોદ જીવ કન્દમૂળ આદિ (૧૬) સૂક્ષ્મ નિગોદ જીવ સર્વથી  
 સિદ્ધોથી પણ અનન્ત છે. અનન્તગણા છે.

### કર્મવાદીપ્રકરણ—

જે આ પ્રમાણે ષડ્જીવનિકાયના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવાવાળા છે તે લોકવાદી વાસ્તવિક રીતે કર્મવાદી છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોનું કથન કરવું તે જેનો સ્વભાવ હોય, તે કર્મવાદી છે. ષડ્જીવનિકાયના તત્ત્વને સમજવાવાળા લોકવાદી જ્ઞાનાવરણ

વરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મૈવ નરકાદિચતુર્ગતિભ્રમણકારણતયા વિજાનાતિ । જ્ઞાના-  
વરણીયાદિકર્મબન્ધાદેવ હિ જીવાશ્ચતુર્વિધાસુ ગતિષુ પરિભ્રમન્તઃ સમ્યગ્જ્ઞાનચારિત્ર-  
પ્રાપ્તિમન્તરેણ સંસારદાવાગ્નિપતિતમાત્માનં સમુદ્ધતું ન પ્રભવન્તિ । એવં કર્મબન્ધવેદી  
ભવ્યઃ કર્મવાદી બોદ્ધવ્ય ઇત્યર્થઃ ।

### (૧) કર્મસ્વરૂપમ્—

અત્ર કર્મપ્રસન્નેન તત્સ્વરૂપં નિરૂપ્યતે—

જીવેન મિથ્યાત્વાદિહેતુભિઃ ક્રિયતે યત્, તત્ કર્મ । યથા તપ્તાયો-  
ગોલકઃ સલિલે નિક્ષિપ્તઃ સન્ સર્વતઃ સલિલમાકર્ષતિ તથાઽનાદિમિથ્યાત્વા-

આદિ આઠ કર્મોં કો હી નરક આદિ ચાર ગતિયોં મેં ભ્રમણ કા કારણ જાનતા હૈ ।  
જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કે બન્ધ કે કારણ હી જીવ ચાર ગતિયોં મેં પરિભ્રમણ કરતે  
હુણ સમ્યગ્જ્ઞાન ઓર ચારિત્ર કી પ્રાપ્તિ કે વિના સંસારરૂપી દાવાનલ મેં પડે હુણ આત્મા  
કા ઉદ્ધાર કરને મેં સમર્થ નહીં હોતે । ઇસ પ્રકાર કર્મબન્ધ કે વેત્તા ( જાનનેવાલે ) ભવ્યજીવ  
કર્મવાદી કહલાતે હૈં ।

### (૧) કર્મકા સ્વરૂપ—

કર્મ કા પ્રસન્ન હોને સે ઉસકે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કરતે હૈ :—

જીવ કે દ્વારા મિથ્યાત્વ આદિ કારણોં સે જો ક્રિયાજાય વહ કર્મ હૈ । જૈસે-  
તપા હુઆ લોહૈ કા ગોલા જલ મેં ડાલ દિયા જાય તો વહ સ્થમી તરફ સે જલ કો  
સ્ત્રીચતા હૈ, ઊસી પ્રકાર અનાદિકાલીન મિથ્યાત્વ આદિ કારણોં સે આત્મા નિરન્તર

આદિ આઠ કર્મોંનેજ નરક આદિ ચાર ગતિઓમાં ભ્રમણતું કારણ બાણું છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ  
કર્મોના બંધના કારણથીજ જીવ ચાર ગતિઓમાં પરિભ્રમણ કરતો થકો. સમ્યગ્જ્ઞાન અને  
ચારિત્રની પ્રાપ્તિ વિના સંસારરૂપી દાવાનલમાં પડેલા આત્માને ઉદ્ધાર કરવામાં  
સમર્થ થતો નથી. આ પ્રકારે કર્મબંધને બાણનાર ભવ્યજીવ કર્મવાદી કહેવાય છે.

### (૧) કર્મનું સ્વરૂપ—

કર્મનો પ્રસંગ હોવાથી તેના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરે છે :—

જીવદ્વારા મિથ્યાત્વ આદિ કારણોથી જે કરવામાં આવે તે કર્મ છે. જેવી  
રીતે અગ્નિથી તપાવેલો લોહનો ગોળો પાણીમાં નાખવામાં આવે તો તે ચારેય  
તરફથી પાણીને ખેંચે છે, તે પ્રમાણે અનાદિકાલીન મિથ્યાત્વ આદિ કારણોથી આત્મા

દિહેતુભિર્નિરન્તરમયમાત્મા રાગદ્વેષપરિણત્યા સ્વસ્મિન્ સકલપ્રદેશેષુ કર્મવર્ગના-  
રૂપં પુદ્ગલં સમાકર્ષન્ ક્ષીરનીરન્યાયેન તાદાત્મ્યસમાપન્નં કરોતિ તદેવ કર્મોચ્યતે ।

(૨) કર્મણઃ સિદ્ધિઃ—

આત્મત્વધર્મેણ સર્વેષામાત્મનામેકરૂપત્વેऽપિ દેવનારકમનુષ્યતિર્યગાદિ-  
રૂપં સુખિ-દુઃખિ-સધન-નિર્ધન-સુરૂપ-કુરૂપ-સબલ-ઽબલ-નીરોગ-સરોગાદિરૂપં વા  
યદ્ વૈચિત્ર્યં તન્ન નિર્હેતુકં ભવિતુમર્હતિ, સદા ભવાઽભાવદોષપ્રસંગાત્ ।  
નિર્હેતુકત્વે દેવનારકાદિભવઃ શાશ્વતિકઃ સ્યાત્, તથા દેવનારકાદિભવા

રાગદ્વેષરૂપ પરિણામોં સે અપને સમસ્ત આત્મપ્રદેશોં મેં કર્મવર્ગના કે પુદ્ગલોં કો સ્વોચ્છતા હૈ  
ઔર ક્ષીર-નીર કી તરહ તદ્રૂપ બના લેતા હૈ ઉન્હોં કો કર્મ કહતે હૈં ।

(૨) કર્મકી સિદ્ધિ—

સવ આત્માઓં મેં આત્મત્વ સમાન હોને પર મી કોઈ દેવ હૈ, કોઈ નારક  
કોઈ મનુષ્ય હૈ, કોઈ તિર્યચ્ચ, કોઈ સુખી હૈ, કોઈ દુઃખી, કોઈ સધન, કોઈ નિર્ધન,  
કોઈ સુરૂપ, કોઈ કુરૂપ, કોઈ સબલ, કોઈ નિર્બલ, કોઈ રોગી હૈ, કોઈ નીરોગી હૈ,  
યહ સવ વિચિત્રતા નિષ્કારણ નહીં હો સકતી, અગર હસકા કોઈ કારણ ન હોતા તો  
યા તો યહ વિચિત્રતા હોતી હી નહીં, અગર હોતી મી તો સદૈવ કે લિપ્ હોતી । નિષ્કારણ  
હી દેવગતિ યા નરકગતિ હોતી તો વહ નિત્ય હોતી । તથા દેવ નરક આદિ ભવકા

નિરંતર રાગદ્વેષરૂપ પરિણુભોથી પોતાના સમસ્ત આત્મપ્રદેશોમાં કર્મવર્ગણના પુદ્-  
ગલોને ખેંચે છે, અને ક્ષીર-નીર પ્રમાણે તદ્દરૂપ બનાવી લે છે, તેને કર્મ કહે છે.

(૨) કર્મની સિદ્ધિ—

સર્વ આત્માઓમાં આત્મત્વ સમાન હોવા છતાંય પણ કોઈ દેવ છે, કોઈ નારકી;  
કોઈ મનુષ્ય છે; કોઈ તિર્યચ્ચ, કોઈ સુખી છે, કોઈ દુઃખી છે. કોઈ ધનવાન છે, કોઈ  
નિર્ધન છે; કોઈ સ્વરૂપવાન છે, કોઈ કુરૂપ છે, કોઈ સબલ છે, કોઈ નિર્બલ છે. કોઈ  
રોગી છે, કોઈ નિરોગી છે. આ સર્વ વિચિત્રતા કોઈ કારણ વિના હોઈ શકે નહીં. તેનું  
કોઈ કારણ ન હોય તો આવી વિચિત્રતા પણ હોય નહીં. અને હોય તો પછી તે હમેશાં  
ભાટે રહી શકતે. કોઈ પણ કારણ વિના દેવગતિ અથવા નરકગતિ હોય તો તે નિત્ય  
હોય, તથા દેવ અને નારક આદિ લખના અભાવ પણ નિત્ય હોત. એ પ્રમાણે



ભાવોઽપિ શાશ્વતિકઃ સ્યાત્, એવં યઃ સુખી, તસ્ય સર્વદા સુખમેવ સ્યાત્,  
યથ દુઃખી, તસ્ય સર્વદા દુઃખમેવ સ્યાત્-સર્વદા સુખાભાવસ્તસ્ય સ્યાત્ ।

અત એવ-“નિત્યં સત્ત્વં વા હેતોરન્યાનપેક્ષણાત્” ઇત્યાહુઃ । સહેતુ-  
ક્ત્વસ્વીકારે ચ ય એવાસ્ય હેતુઃ સ એવાસ્માકં કર્મેતિ । ઉક્તશ્ચ—

“આત્મત્વેન વિશિષ્ટસ્ય, વૈચિત્ર્યં તસ્ય યદ્વશાત્ ।

નરાદિરૂપં તચ્ચિત્રમદૃષ્ટં કર્મસંજ્ઞિતમ્” ॥ ૧ ॥

અભાવ હી શાશ્વતિક હોતા । ઇસી પ્રકાર જો સુખી હૈ વહ સદા કે લિખ સુખી હોતા ।  
જો દુઃખી હૈ ઉસે સદૈવ દુઃખ હી હોતા—ઉસ કે લિખ સદૈવ સુખ કા અભાવ હોતા ।  
ઇસી લિખ કહા ગયા હૈ કિ—“જો વસ્તુ કિસી કારણકી અપેક્ષા નહીં રખતી વહ,  
યા તો આકાશ કી ભાંતિ સદૈવ વિદ્યમાન રહતી અથવા સ્વરવિષાળ કી તરહ કદાપિ  
નહીં હોતી ।” અગર ઇસ વિચિત્રતા કા જો કારણ હૈ ઇસી કારણ કો હમ કર્મ કહતે  
હૈ । કહા ભી હૈ—

“આત્મત્વ કી સમાનતા હોને પર ભી જિસ કારણ સે મનુષ્યાદિરૂપ વિચિત્રતા હોતી હૈ  
વહી અદૃષ્ટ હૈ । ઇસી કો કર્મ કહતે હૈ, વહ નાના પ્રકાર કા હૈ ॥ ૧ ॥”

જે સુખી છે તે હંમેશાં માટે સુખીજ હોત. અને જે દુઃખી છે તે હંમેશાં દુઃખીજ  
રહેત, તેને હંમેશા માટે સુખનો અભાવ રહેત. એ કારણથી કહ્યું છે કે:—“જે વસ્તુ  
કોઈ કારણની અપેક્ષા રાખતી નથી તે આકાશ પ્રમાણે સદૈવ વિદ્યમાન રહે છે, અથવા  
ખર-વિષાળ (ગધેડાના શિંગડા)ની પ્રમાણે કદાપિ હોય નહીં” અગર આ વિચિત્રતાનુ,  
કોઈ કારણ માનવામાં આવે તો તે કારણને અમે કર્મ કહીએ છીએ, કહ્યું છે:—

“આત્મત્વ—(આત્માપણ)ની સમાનતા હોવા છતાં પણ જે કારણથી મનુષ્યા-  
દિરૂપ વિચિત્રતા હોય છે—દેખાય છે. તે અદૃષ્ટ છે. તેને કર્મ કહે છે. અને તે નાના  
પ્રકારના છે—અર્થાત્ ઘણા પ્રકારના છે.” ॥ ૧ ॥

एतत् कर्म पुद्गलस्वरूपं, नामूर्तमस्ति, अमूर्तत्वे हि कर्मणः सकाशा-  
दात्मनामनुग्रहोपघातासंभवात्, गगनादिवत् । उक्तञ्च—

“ तुल्यप्रतापोद्यमसाहसानां,

केचिद्विभन्ते निजकार्यसिद्धिम् ।

परे न तां मित्र ! निगद्यतां मे,

कर्मास्ति हित्वा यदि कोऽपि हेतुः ? ॥१॥ ”

अपरञ्च—

“ निबध्य मासान्नव गर्भमध्ये,

बहुप्रकारैः कललादिभावैः ।

उद्वर्त्य निष्काशयते सवित्र्याः,

को गर्भतः कर्म विहाय पूर्वम् ? ” इति ।

यह कर्म, पुद्गलस्वरूप है, अमूर्त नहीं । अगर कर्म अमूर्त माना जाय तो उस से आत्मा का अनुग्रह और उपघात होना असंभव है, जैसे आकाश से नहीं होता । कहा भी है :—

“ समान प्रताप, उद्यम और साहस वालों में से कोई कोई अपना कार्य सिद्ध करलेते हैं और दूसरे नहीं करपाते । मित्र ! कर्म के सिवाय इस का और कोई कारण हो तो कहो ? अर्थात् कर्म ही इस का एकमात्र कारण है ” ॥ १ ॥

और भी कहा है :—

“ गर्भ में नौ महीने तक कलल आदि अनेक रूपों में बढ़ाकर माता के गर्भ से पूर्वकर्म के सिवाय और कोन बाहर निकालता है ? ” ॥ १ ॥

એ કર્મ, પુદ્ગલસ્વરૂપ છે, અમૂર્ત નથી. અથવા કર્મને અમૂર્ત માનવામાં આવે તો તેનાથી આત્માનો અનુગ્રહ અને ઉપઘાત થવો અસંભવ છે, જેમ આકાશથી થતો નથી. કહ્યું પણુ છે:—

“સમાન પરાક્રમ, ઉદ્યમ, અને સાહસવાળી વ્યક્તિઓમાં કોઈ-કોઈ પોતાનું કાર્ય સિદ્ધ કરી લે છે; અને કોઈ કોઈ નથી કરી શકતી. મિત્ર ! આ બાબતમાં કર્મ વિના બીજું કોઈ કારણ હોય તો કહો ? અર્થાત્ કર્મજ એનું એક માત્ર કારણ છે.” ॥૧॥

બીજું પણુ કહ્યું છે—“ગર્ભમાં નવ માસ સુધી કલલ (ગર્ભનું પ્રથમ સ્વરૂપ) આદિ અनेક રૂપોમાં વૃદ્ધિ પામીને માતાના ગર્ભમાંથી પૂર્વકર્મ સિવાય બીજું કોણ બહાર કાઢે છે ? ” ॥૧॥

નનુ યથા કર્મ વિનાઽપિ વિચિત્રા અમ્રાદિવિકારા દૃશ્યન્તે તથા સંસારિણાં સુખદુઃસ્વાદિભાવેન વૈચિત્ર્યં યદિ વિનાઽપિ કર્મ ભવેત્, તર્હિ કા હાનિઃ ? इति चेत्, उच्यते—

અમ્રવિકારા ગન્ધર્વનગરશક્રધનુરાદયો ગૃહપ્રાકારવૃક્ષરક્તનીલપીતાદિ-  
ભાવેન વૈચિત્ર્યં વિભ્રતિ તત્ર વિસ્તસાપરિણતેન્દ્રધનુરાદિપુદ્ગલપરિણામવૈચિત્ર્યં  
દૃશ્યતે, તદપેક્ષયા વિશિષ્ટં પરિણામવૈચિત્ર્યં પ્રાયેણ ચિત્રન્યસ્તાનાં ચિત્રકારાદિ-  
શિલ્પપરિગૃહીતાનાં લેપ્યકાષ્ઠકર્માનુગતપુદ્ગલાનામુપલભ્યતે, તર્હિ જીવપરિ-  
ગૃહીતાનામાન્તરકર્મપુદ્ગલાનાં સુખદુઃસ્વાદિનાનારૂપતયા કથં ન વિશિષ્ટતરં  
પરિણામવૈચિત્ર્યં સંભવેત્ ? ।

શંકા—જૈસે કર્મ કે વિના મી માંતિ—માંતિકે મેઘ આદિ કે વિકાર દેખે જાતે હૈ, ડસી પ્રકાર કર્મ કે અમાવ મેં મી સંસારી જીવોં મેં સુખ—દુઃસ્વ આદિ કી વિચિત્રતા હો તો કયા હાનિ હૈ ? ।

સમાધાન—મેઘવિકાર—ગન્ધર્વનગર, ઇન્દ્રધનુષ આદિ, ગૃહ, પ્રાકાર, વૃક્ષ, રક્ત, નીલ, પીત, આદિ રૂપ મેં વિચિત્રતા ધારણ કરતે હૈં વહાં સ્વભાવ સે પરિણત ઇન્દ્રધનુષ આદિ, પુદ્ગલ કે પરિણામોં કી વિચિત્રતા દેખી જાતી હૈ, લેકિન ચિત્રકાર આદિ કિસી શિલ્પી કે દ્વારા ગૃહીત ચિત્ર મેં અઢ્કિત, લેપ્ય કાષ્ઠ આદિ પુદ્ગલોં મેં ડસ સે મી અધિક વિશિષ્ટતા દિખાઈ દેતી હૈ તો ફિર જીવદ્વારા ગ્રહણ કિયે હુએ આન્તરિક કર્મપુદ્ગલોં કી સુખ—દુઃસ્વ આદિ નાના રૂપોં મેં પરિણમન કી વિશિષ્ટતર વિચિત્રતા કયોં ન હોગી ? ।

શંકા—જેવી રીતે કર્મ વિના પણ ભાત—ભાતના મેઘ આદિના વિકારો જોવામાં આવે છે, તે પ્રમાણે કર્મના અભાવમાં પણ સંસારી જીવોમાં સુખ—દુઃખ આદિની વિચિત્રતા હોય છે. એમ માનવામાં શું હાનિ છે ?

સમાધાન—મેઘવિકાર—ગન્ધર્વનગર, ઇન્દ્રધનુષ આદિ, ગૃહ, પ્રાકાર, વૃક્ષ, રક્ત નીલ, પીત આદિ રૂપમાં વિચિત્રતા ધારણ કરે છે. ત્યાં સ્વભાવથી પરિણત ઇન્દ્રધનુષ આદિ પુદ્ગલના પરિણામોની વિચિત્રતા જોવામાં આવે છે. પરંતુ ચિત્રકાર આદિ કોઈ શિલ્પીદ્વારા ગૃહીત ચિત્રમાં અઢ્કિત, લેપ્ય, કાષ્ઠ આદિ પુદ્ગલોમાં તેનાથી પણ અધિક વિશિષ્ટતા જોવામાં આવે છે તો પછી જીવદ્વારા ગ્રહણ કરેલા આન્તરિક કર્મપુદ્ગલોની સુખ—દુઃખ આદિ નાના (જૂદા—જૂદા) રૂપોમાં પરિણમનની વિશિષ્ટતર વિચિત્રતા કેમ ન હોય ?



નનુ અમ્રાદિવત્ કર્મપુદ્ગલાનાં વિચિત્રપરિણતિસ્વીકારે બાહ્યમિદં શરીર-  
મેવ સુખદુઃસ્વાદિનાનારૂપતયા વિચિત્રપરિણામં કરોતોત્યેવ મન્યતાં, કિં પુનસ્તદ્-  
વૈચિત્ર્યહેતુભૂતસ્ય કર્મણઃ પરિકલ્પનયા, સ્વભાવાત એવ સર્વસ્યાપિ પુદ્ગલપરિણામ-  
વૈચિત્ર્યસ્ય સિદ્ધત્વાદિતિ ચેત્, અવધેહિ—

અમ્રાદેરિવ શરીરસ્ય સુખદુઃસ્વાદિવિચિત્રપરિણામાઙ્ગીકારે યદિ પરિતોષ-  
મેષિ, તર્હિ કર્માપિ નનુ તનુરેવ, સેયં કર્મતનુસ્તનુતે વિચિત્રપરિણામમિત્યવેહિ ।  
જીવેન સહાતિસંશ્લિષ્ટત્વાદતીન્દ્રિયત્વાચ્ચામ્યન્તરં સૂક્ષ્મં ચ કાર્મણં શરીરમ્ ,  
ઔદારિકં તુ બાહ્યં સ્થૂલમિત્યેતાવાનેવ દ્વયોઃ શરીરયોર્વિશેષો દૃશ્યતે ।

શંકા—અમ્ર-મેધ આદિ કે સમાન કર્મપુદ્ગલોં કા વિચિત્ર પરિણમન સ્વીકાર કરતે  
હો તો યહ ક્યોં નહીં માન લેતે કિ બાહ્ય શરીર હી સુખ—દુઃખ આદિ નાના રૂપોં મેં વિચિત્ર  
પરિણમન કરતા હૈ, કર્મ કોં હિસ વિચિત્રતા કા કારણ માનને સે ક્યા લાભ હૈ ?, પુદ્ગલોં કી  
સારી વિચિત્રતા સ્વભાવ સે હી સિદ્ધ હૈ ।

સમાધાન—અમ્ર આદિ કે સમાન શરીર કા હી સુખ—દુઃખ આદિ વિચિત્ર  
પરિણમન અઙ્ગીકાર કરને મેં આપ કો સન્તોષ મિલતા હૈ તો કર્મ મી તો શરીર હી હૈ,  
ઔર વહી કર્મશરીર વિચિત્ર પરિણમન કરતા હૈ, એસા સમજ લીજિયે । જીવ કે સાથ  
ઘનિષ્ઠ સમ્બન્ધ હોને કે કારણ ઔર અતીન્દ્રિય હોને કે કારણ કર્મશરીર આમ્યન્તર  
ઔર સૂક્ષ્મ કહેલાતા હૈ, તથા ઔદારિક શરીર બાહ્ય ઔર સ્થૂલ હૈ । બસ હિતના હી દાનોં  
શરીરોં મેં અન્તર હૈ ।

શંકા—અમ્ર (મેધ) આદિના સમાન કર્મપુદ્ગલોં વિચિત્ર પરિણમન સ્વીકાર  
કરે છે તો પછી, ‘બાહ્ય શરીરજ સુખ—દુઃખ આદિ નાના રૂપોંમાં વિચિત્ર પરિણમન  
કરે છે’ એમ શા માટે માનતા નથી ? કર્મને એ વિચિત્રતાનું કારણ માનવાથી શું  
લાભ છે ?, પુદ્ગલોંની પરિણમનની તમામ વિચિત્રતા સ્વભાવથીજ સિદ્ધ છે.

સમાધાન—મેધ આદિના સમાન શરીરનું પણ સુખ દુઃખ આદિ વિચિત્ર પરિણમન  
અંગીકાર કરવામાં આપને સંતોષ મળે છે તો કર્મ તે શરીરજ છે, અને તે કર્મ—શરીર  
વિચિત્ર પરિણમન કરે છે, એ પ્રમાણે સમજ લેયો. જીવની સાથે ઘનિષ્ઠ સંબંધ હોવાના  
કારણે અને અતીન્દ્રિય હોવાના કારણે કર્મ—શરીર આમ્યન્તર અને સૂક્ષ્મ કહેવાય છે,  
તથા ઔદારિક શરીર બાહ્ય અને—સ્થૂલ છે. એટલું જ એ બે શરીરોંમાં અન્તર છે.

નનુ બાહ્યશરીરસ્ય સ્થૂલત્વાત્ પ્રત્યક્ષદૃષ્ટત્વાચ્ચાત્રાદિસાદૃશ્યેન બાહ્ય-  
શરીરસ્યૈવ સુખદુઃસ્વાદિવિચિત્રપરિણામોઽસ્તુ કિં પુનરપ્રત્યક્ષભૂતસ્ય કર્મરૂ-  
પાતીન્દ્રિયશરીરસ્ય કલ્પનેન, કાર્મણશરીરાનક્રીકારે યદિ કોઽપિ દોષ આપ-  
તતિ, તતોઽર્થાપત્તેરેવ કર્મવૈચિત્ર્યમક્રીકરિષ્યામઃ ? ઇતિ । અત્રોચ્યતે—

મરણસમયે પ્રત્યક્ષદૃષ્ટબાહ્યસ્થૂલશરીરાદ્ વિમુક્તસ્ય જીવસ્ય ભવાન્ત-  
રીયબાહ્યસ્થૂલશરીરગ્રહણે કારણભૂતં સૂક્ષ્મં કાર્મણશરીરં વિનાઽગ્રિમદેહગ્રહણા-  
ભાવરૂપો દોષઃ સમાપદ્યતે, તત્તથ દેહાન્તરગ્રહણાનુપપત્તેર્મરણાનન્તરં સર્વસ્યાપિ  
જીવસ્ય શરીરાભાવાત્ સંસારોચ્છેદઃ સ્યાત્ । ન ચ દૃશ્યતે સંસારસમુચ્છેદઃ ।

શંકા—બાહ્ય શરીર સ્થૂલ છે અને પ્રત્યક્ષ દિશ્વાઈ દેતા છે, અતઃ એવ બાહ્ય  
શરીર કે સાથ હી અત્ર આદિ કી સમાનતા છે, એવી સ્થિતિ મેં બાહ્ય શરીર કા હી સુખ  
દુઃખ આદિરૂપ પરિણમન માનના ચાહિયે । કમી પ્રત્યક્ષ દિશ્વાઈ ન દેને વાલે કર્મરૂપ  
અતીન્દ્રિય શરીર કી કલ્પના કરને કા કષ્ટ ક્યોં ઉઠાતે હૈં ? હૈં !, કર્મણશરીર કી સ્વીકાર  
ન કરને સે અગર કોઈ દોષ આયા તો ફિર અર્થાપત્તિ પ્રમાણ સે હી કર્મ કી વિચિત્રતા  
સ્વીકાર કર લેંગે ? ।

સમાધાન—મૃત્યુ કે સમય પ્રત્યક્ષ દીક્ષને વાલે બાહ્ય સ્થૂલ શરીર કો ગ્રહણ  
કરને કા કારણભૂત સૂક્ષ્મ શરીર ન હો તો જીવ આગામી શરીર કો ગ્રહણ હી નહીં કર  
સકેગા । સૂક્ષ્મ શરીર ન માનને સે યહ દોષ આતા છે । જીવ અગર અગલે શરીર કો ગ્રહણ  
ન કરે તો મૃત્યુ કે પશ્ચાત્ અશરીર હોને કે કારણ સમી જીવ મુક્ત હો જાઈંગે, ઓર

શંકા—બાહ્ય શરીર સ્થૂલ છે અને પ્રત્યક્ષ દેખાય છે, એ કારણથી બાહ્ય શરીરની  
સાથેજ મેઘ આદિની સમાનતા છે એવી સ્થિતિમાં બાહ્ય શરીરનુંજ સુખ-દુઃખ  
આદિ રૂપ પરિણમન માની લેવું જોઈએ. કેઈ વખત પ્રત્યક્ષ નહિ દેખાતા એવા  
કર્મરૂપ અતીન્દ્રિય શરીરની કલ્પના કરવાનું કષ્ટ શા માટે ઉઠાવો છે ? હા ! કાર્મણ  
શરીરનો સ્વીકાર નહિ કરવાથી જો કેઈ દોષ આવશે તો પછી અર્થાપત્તિ પ્રમાણથીજ  
કર્મની વિચિત્રતા સ્વીકારી લઈશું.

સમાધાન—મૃત્યુના સમયે પ્રત્યક્ષ દેખાતાં બાહ્ય સ્થૂલ શરીરથી જીવ અલગ થઈ  
જાય છે. આગલા જીવમાં બાહ્ય સ્થૂલ શરીરને ગ્રહણ કરવાના કારણભૂત સૂક્ષ્મ શરીર  
નહિ હોય તો જીવ આગામી શરીરને ગ્રહણ કરી શકશે નહિ. સૂક્ષ્મ શરીર નહિ  
માનવાથી આ દોષ આવે છે. જીવ જો મૃત્યુ પછી બીજાં શરીરને ગ્રહણ ન કરે તો મૃત્યુ  
પછી અશરીર હોવાને કારણે સર્વ જીવો મુક્ત થઈ જશે અને સંસાર બંધ થઈ જશે.

शरीरान्तरग्रहणं च निष्कारणं न संभवति । तस्मात् । स्थूलशरीकारणभूतं सूक्ष्म-  
कार्मणशरीरमस्तीत्यवश्यमङ्गीकर्तव्यम् ।

ननु कर्मरहितः शुद्धजीवो नानाविधशरीरादीनां कर्ताऽस्तु, तथेश्वरः,  
स्वभावो यदृच्छा वा विविधशरीरादिकं करोतीत्येव मन्यते, किं कर्मकल्पनेन ?  
अत्रोच्यते—

अयं जीवेश्वरादिरकर्मा न शरीरसुखदुःखादीनां कर्ता, उपकरणाभावात्,  
दण्डाद्युपकरणरहितकुम्भकारवत् । कर्म विनाऽन्यदुपकरणं शरीराद्यारम्भकं  
जीवेश्वरादीनां न संभवति, गर्भाद्यवस्थास्वन्योपकरणासंभवात्, कर्म विना  
शुक्रशोणितादिग्रहणस्याप्यनुपपत्तेः ।

संसार मिट जायगा, मगर संसार का मिटना दिखाई नहीं देता, और विना कारण के  
शरीर का ग्रहण नहीं हो सकता, अत एव स्थूल शरीर का कारण सूक्ष्म कार्मणशरीर का  
अस्तित्व अङ्गीकार करना चाहिए ।

शंका—कर्मरहित शुद्ध जीव को नाना प्रकार के शरीरों का कर्ता मान लिया जाय,  
या ईश्वर; स्वभाव अथवा यदृच्छा को कर्ता स्वीकार कर लिया जाय, कर्म की कल्पना  
से क्या लाभ है ? ।

समाधान—कर्मरहित जीव या ईश्वर आदि, शरीर, सुख—दुःख आदि का कर्ता  
नहीं है, क्यों कि उसके पास उपकरण नहीं हैं, दण्ड आदि उपकरणों से रहित कुम्भार  
के समान । कर्म के सिवाय, शरीर आदि रचने में ईश्वर आदि को और कोई भी उपकरण  
नहीं हो सकता । कर्म के अतिरिक्त और कोई उपकरण न होने के कारण गर्भ आदि अवस्थाओं  
में शुक्र शोणित आदिका ग्रहण भी नहीं हो सकता ।

परन्तु संसार अंध थयो तेवुं जेवामां आवतुं नथी. अने कारणे विना शरीरतुं अहणु  
छोछे शके नही अने कारणेथी स्थूल शरीरतुं कारणे सूक्ष्म-कार्मण शरीरना अस्तित्वनो  
अंगीकार करवे. जेछे अने.

शंका—कर्मरहित शुद्ध जीवने नाना प्रकारना शरीरना कर्ता भानी छे, अथवा  
ईश्वर स्वभाव या यदृच्छाने कर्ता भानी छे तो पछी कर्मनी कल्पना करवाथी शुं लाभ ? ।

समाधान—कर्मरहित जीव अथवा तो ईश्वर आदि, शरीर, सुख, दुःखना कर्ता नथी.  
कारण के तेनी पासे उपकरणे—( सुख साधन ) नथी, दंड आदि प्रधान साधनो विनानो  
जेम कुंभार, ते प्रमाणे, कर्म विना शरीर आदि रचवामां ईश्वर वगेरेने भीणुं कोछे  
पणु उपकरणे छोछे शके नछि. कर्मना विना भीणुं कोछे प्रधान साधन नछि. होवाने  
कारणे गर्भ आदि अवस्थाओमां शुक्र शोणित वगेरेतुं अहणु पणु अछे शके नछी.



યદ્વા—અકર્મા શરીરાદિકં નારમ્ભતે, નિશ્ચેષ્ટત્વાત્, અમૂર્તત્વાત્, આકાશવત્ । તથા—એકત્વાત્ એકપરમાણુવત્ ।

યદિ શરીરવાનીશ્વરઃ કરોતિ વિવિધશરીરાદિકમિત્યુચ્યતે તદાનવસ્થા-  
દોષઃ સમાપદ્યતે । તથાહિ—શરીરસ્યેશ્વરસ્ય જગદ્વૈચિત્ર્યકર્તૃત્વસ્વીકારે સ્વશરીર-  
કર્તૃત્વમકર્મણસ્તસ્યેશ્વરસ્ય ન સંભવતિ, નિરુપકરણત્વાત્, દણ્ડાદિરહિતકુમ્ભકારવત્ ।  
અથાન્યઃ કોઽપીશ્વરસ્તદીયશરીરકરણાય પ્રવર્તતે તતઃ સોઽપિ શરીરવાન્ અશરીરો  
વા ? યદ્યશરીરસ્તર્હિ નાસૌ શરીરકર્તા નિરુપકરણત્વાત્ । શરીરવાંશ્ચેત્—તર્હિ

અથવા—જો કર્મરહિત હૈ વહ શરીર આદિ કા ઉત્પાદક નહીં હો સકતા, ક્યોં કિ  
વહ ચેષ્ટારહિત હૈ, અથવા અમૂર્ત હૈ । જો ચેષ્ટાહીન યા અમૂર્ત હોતા હૈ વહ શરીર આદિ કા  
જનક નહીં હોતા, જૈસે આકાશ । તથા વહ એક હોને કે કારણ મી શરીર આદિકા જનક  
નહીં હો સકતા, જૈસે એક પરમાણુ ।

કદાચિત્ યહ કહા જાય કિ સશરીર ઈશ્વર વિવિધ શરીર આદિકા કર્તા હૈ તો  
અનવસ્થા દોષ આતા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર—જબ સશરીર ઈશ્વર જગત્ કી વિચિત્રતા કા  
કારણ હૈ તો વહ વિના શરીર કે અપના શરીર મી નહીં બના સકેગા, ક્યોં કિ વહ  
ઉપકરણહીન હૈ, દણ્ડઆદિ સે રહિત કુંભાર કે સમાન । અબ યહ કહા જાય કિ કોઈ  
દૂસરા ઈશ્વર, પહેલે ઈશ્વર કા શરીર બનાને કે લિષ્ પ્રવૃત્ત હોતા હૈ તો ઉસકે  
વિષય મેં મી વહી પ્રશ્ન ઉપસ્થિત હોતા હૈ કિ—વહ સશરીર હૈ અથવા અશરીર હૈ ?,  
અગર વહ અશરીર હૈ તો ઉપકરણહીન હોને કે કારણ શરીર કા કર્તા

અથવા—જે કર્મરહિત છે તે શરીર આદિના ઉત્પાદક થઈ શકે નહિ, કારણ કે  
તે ચેષ્ટારહિત છે. અથવા અમૂર્ત છે. જે ચેષ્ટાહીન અથવા અમૂર્ત હોય છે, તે શરીર  
આદિના ઉત્પન્ન કરનાર હોય નહિ. જેવી રીતે—આકાશ, તથા તે એક હોવાના કારણે  
પણ શરીર આદિના ઉત્પન્ન કરનાર હોય નહિ. જેવી રીતે એક પરમાણુ.

કદાચિત્ એમ કહેવામાં આવે કે—સશરીર ઈશ્વર વિવિધ શરીર આદિના કર્તા છે.  
તો અનવસ્થા દોષ આવે છે. તે આ પ્રમાણે કે—જ્યારે સશરીર ઈશ્વર જગતની વિચિત્રતાનું  
કારણ છે તો તે, શરીર વિના પોતાનું શરીર પણ બનાવી શકશે નહીં; કારણ કે તે ઉપકરણહીન  
છે, જેમ દંડ આદિથી રહિત કુંભાર. હવે જો એમ કહેવામાં આવે કે કોઈ બીજો ઈશ્વર  
પ્રથમના ઈશ્વરનું શરીર બનાવવામાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તો તે વિષયમાં પણ એ પ્રશ્ન ઉભો  
થાય છે કે—તે સશરીર છે અથવા અશરીર છે ? અગર જો અશરીર છે તો ઉપકરણહીન

तच्छरीरारम्भेऽपि तुल्यता प्रश्नस्य । सोऽप्यकर्मा निजशरीरं नारभते निरूपकरण-  
त्वात् । यदि तच्छरीरकर्ताऽन्यः कोऽपि, तर्हि सोऽपि शरीरवान् अशरीरो वा ?  
इत्थं चानवस्था । अनिष्टं च सर्वमेतत् । तस्मान्नेश्वरो देहादीनां कर्ता, किन्तु  
कर्मसहितो जीव एव स्वकीयं देहादिकं करोति ।

किञ्च-ईश्वरस्य देहादिकरणं निष्प्रयोजनमिति तदोन्मत्ततुल्यता स्यात् ।  
सप्रयोजनकर्तृत्वे तु तस्यानीश्वरत्वप्रसङ्गः । किञ्चानादिशुद्धस्य तस्येश्वरस्य  
देहादिकरणेच्छा नोपपद्यते, इच्छाया रागरूपत्वात् ।

नहीं हो सकता । अगर सशरीर है तो उसका शरीर बनाने वाला कोई तीसरा ईश्वर मानना  
पड़ेगा । वह तीसरा ईश्वर भी अशरीर है या सशरीर है ?, इत्यादि विकल्प फिर उपस्थित  
होनेके कारण अनवस्था दोष आता है ।

यह सब अभीष्ट नहीं है । अतः देह आदिका कर्ता ईश्वर नहीं हो सकता, वरन्  
कर्मसहित जीव ही अपने शरीर आदि का कर्ता है ।

दूसरी बात यह है कि ईश्वर, बिना किसी प्रयोजन के ही अगर शरीर आदि की  
रचना करता है तो वह उन्मत्त के समान होगा । अगर उसका कोई प्रयोजन है तो वह  
ईश्वर नहीं रहेगा ।

एक बात और-अनादि काल से शुद्ध ईश्वर की देह आदि रचने में इच्छा  
ही नहीं हो सकती, क्यों कि इच्छा एक प्रकार का राग है और रागी ईश्वर नहीं हो सकता ।

હોવાના કારણે શરીરકર્તા થઈ શકતો નથી. અગર સશરીર છે તો તેનું શરીર બના-  
વવાવાળો કોઈ ત્રીજો ઈશ્વર માનવો પડશે. તે ત્રીજા ઈશ્વર પણ સશરીર છે અથવા  
સશરીર છે ?, ઇત્યાદિ વિકલ્પ ફરીને ઉપસ્થિત હોવાના કારણે અનવસ્થા દોષ આવે  
છે, તે સર્વ અભીષ્ટ નથી, તે કારણથી દેહ આદિના કર્તા ઈશ્વર થઈ શકતા નથી.  
પરંતુ કર્મસહિત જીવજીવોતાના શરીર આદિનો કર્તા છે.

બીજી વાત એ છે કે-ઈશ્વર કોઈ પ્રયોજન વિના જો શરીર આદિની રચના  
કરે છે તો તે ઉન્મત્તની સમાન ગણાશે. અથવા તો તેને કોઈ પ્રયોજન છે, તો તે  
ઈશ્વર નહીં રહે. એક બીજી વાત એ છે કે-અનાદિ કાળથી શુદ્ધ ઈશ્વરની, દેહ  
આદિ રચનામાં ઇચ્છાજ રહેતી નથી, કારણ કે ઇચ્છા એક પ્રકારનો રાગ છે, અને  
રાગી ઈશ્વર થઈ શકતા નથી.

નાપિ સ્વભાવો દેહાદીનાં કર્તા ભવિતુમર્હતિ । સ સ્વભાવઃ કિં વસ્તુ-  
વિશેષો વા ? અકારણતા વા ? વસ્તુધર્મો વા ? , તત્ર ન તાવદ્ વસ્તુવિશેષઃ, તસ્ય  
વસ્તુવિશેષરૂપત્વે પ્રમાણાભાવાત્ । પ્રમાણરહિતસ્યાપિ વસ્તુત્વસ્વીકારે કર્માપિ  
કથં નાઙ્ગીકરોષિ ? , ત્વન્મતે કર્મણોઽપિ પ્રમાણરહિતત્વાત્ ।

કિંચ-વસ્તુવિશેષરૂપઃ સ સ્વભાવો મૂર્ત્યો વા સ્યાદમૂર્ત્યો વા ? , યદિ  
મૂર્ત્યસ્તર્હિ સ્વભાવ ઇતિ નામાન્તરેણ કર્મૈવ સિધ્યતિ । યદિ પુનરમૂર્ત્યસ્તર્હિ નાસૌ  
સ્વભાવો દેહાદીનાં કર્તા ભવિતુમર્હતિ, અમૂર્તત્વાત્ નિરુપકરણત્વાચ્ચ, ગગનવત્ ।

સ્વભાવ મી દેહ આદિ કા કર્તા નહીં હો સકતા । આખિર સ્વભાવ કા અર્થ  
કયા હૈ ? સ્વભાવ કોઈ વસ્તુ હૈ ? અથવા કોઈ મી કારણ ન હોના સ્વભાવ હૈ ? યા  
કિસી વસ્તુ કા ધર્મ હૈ ? । સ્વભાવ કોઈ વસ્તુ તો હૈ નહીં, ક્યો કિ ઉસે વસ્તુ માનને મેં  
કોઈ પ્રમાણ નહીં હૈ । પ્રમાણ કે અભાવમેં મી સ્વભાવ કો વસ્તુ માન લિયા જાય  
તો કર્મ માનને મેં કયા આપત્તિ હૈ ? તુમ્હારે મત કે અનુસાર કર્મ માનને મેં મી કોઈ  
પ્રમાણ નહીં હૈ ।

સ્વભાવ અગર કોઈ વસ્તુ હૈ તો વહ મૂર્ત હૈ યા અમૂર્ત ? , અગર મૂર્ત હૈ  
તો સ્વભાવ ઔર કર્મ ઇક હી વસ્તુ હૈ । આપ કર્મ કો હી સ્વભાવ-શબ્દ  
સે કહતે હૈં તો કહ લીજિયે । સ્વભાવ કો અમૂર્ત માનતે હૈં તો વહ દેહ  
આદિકા કર્તા નહીં હો સકતા, ક્યો કિ વહ અમૂર્ત હૈ ઔર ઉપકરણરહિત  
હૈ, જૈસે આકાશ । મૂર્ત શરીર કા અનુરૂપ કારણ મૂર્ત હી હોના ચાહિયે,

સ્વભાવ પણ દેહ આદિનો કર્તા થઈ શકતો નથી. છેવટ સ્વભાવનો અર્થ શું છે ?  
સ્વભાવ કોઈ વસ્તુ છે ? અથવા કોઈપણ કારણ નહીં હોવું તે સ્વભાવ છે ? અથવા કોઈ  
વસ્તુનો ધર્મ છે ? સ્વભાવ કોઈ વસ્તુ તો છે નહીં, કારણ કે તેને વસ્તુ માનવામાં કોઈ  
પ્રમાણ નથી, પ્રમાણના અભાવમાં પણ સ્વભાવને વસ્તુ માની લેવામાં આવે તો કર્મ  
માનવામાં શું આપત્તિ છે ? તમારા મત પ્રમાણે કર્મ માનવામાં પણ કોઈ પ્રમાણ નથી.

સ્વભાવ અગર કોઈ પણ વસ્તુ છે તો તે મૂર્ત છે અથવા અમૂર્ત છે ? જો મૂર્ત  
છે તો સ્વભાવ અને કર્મ એકજ વસ્તુ છે, તમે કર્મનેજ સ્વભાવ-શબ્દથી કહો છો તો  
ખુશીથી કહો. જો સ્વભાવને અમૂર્ત માનશો તો તે દેહ આદિનો કર્તા થઈ શકશે નહીં,  
કારણ કે તે અમૂર્ત છે. અને ઉપકરણ (પ્રધાન સાધનો) રહિત છે જેવી રીતે આકાશ.



मूर्तस्य शरीरादिकार्यस्यानुरूपं कारणं मूर्तमेव संभवति, यथा मृत्पिण्डो घटस्य ।

अकारणतारूपः स्वभावः ? इति चेत्, एवं सति शरीरादिकमकारण-  
मेवोत्पद्यते, इत्ययमर्थः स्यात्, तथा सति कारणाभावस्य समानत्वादेकस्मिन्नेव  
समये सकलशरीरोत्पत्तिप्रसंगः ।

यदि स्वभावो वस्तुधर्म इत्युच्यते, तथापि यदि विज्ञानादिवदात्मनो  
धर्मस्तर्हि नासौ स्वभावः शरीरकारणं भवितुमर्हति, अमूर्तत्वात्, आकाशवदित्युक्तं  
प्रागेव । यदि स स्वभावो मूर्तवस्तुधर्मस्तर्हि सिद्धसाधनम्, कर्मापि पुद्गलरूप-  
मेवेति वयं ब्रूमः । तस्मात् कर्मैव जगद्वैचित्र्यकारणमिति सिद्धम् ।

जैसे घट का कारण मिट्टी का पिण्ड है ।

अगर कोई भी कारण न होना ही स्वभाव है तो इसका अर्थ यह हुआ कि शरीर  
आदि निष्कारण ही उत्पन्न हो जाते हैं । अगर निष्कारण ही शरीर की उत्पत्ति होती है तो  
फिर संसार के समस्त शरीर एक साथ क्यों नहीं हो जाते ? ।

स्वभाव किसी वस्तु का धर्म है, यह कहना भी युक्तिसंगत नहीं है ।  
अगर वह ज्ञान आदि के समान आत्मा का धर्म है तो आकाश की तरह अमूर्त होने के  
कारण शरीर का कर्ता नहीं हो सकता, यह पहले ही कहा जा चुका है । स्वभाव  
अगर किसी मूर्त वस्तु का धर्म है तो यह हमें भी इष्ट है, क्योंकि हमारे कथनानुसार  
कर्म भी पुद्गल का क्रमभावी धर्म है, अत एव यह सिद्ध हुआ कि कर्म ही जगत् की  
विचित्रता का कारण है ।

मूर्त शरीरનું અનુરૂપ કારણ મૂર્ત જ હોવું જોઈએ, જેમ ઘટનું કારણ માટીનો પિંડ છે.

અથવા કોઈ જ કારણ ન હોય એવો જ સ્વભાવ છે તો તેનો અર્થ એ થયો  
કે શરીર આદિ નિષ્કારણ જ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, અને નિષ્કારણ જ શરીરની ઉત્પત્તિ  
થાય છે તો પછી સંસારના સમસ્ત શરીર એક સાથે કેમ થઈ નથી જતાં ?

‘સ્વભાવ કોઈ વસ્તુનો ધર્મ છે’ એ પ્રમાણે કહેવું તે પણ યુક્તિસંગત નથી.  
અથવા તો તે જ્ઞાન આદિના સમાન આત્માનો ધર્મ છે. તો આકાશની માફક અમૂર્ત  
હોવાના કારણે શરીરના કર્તા થઈ શકશે નહીં, આ હકીકત પ્રથમથી જ કહી આપી  
છે. સ્વભાવ એ કોઈ મૂર્ત વસ્તુનો ધર્મ છે, તો તે વાત અમારે પણ માન્ય છે,  
કારણ કે અમારા કહેવા પ્રમાણે કર્મ પણ પુદ્ગલરૂપ જ છે, એ માટે એમ સિદ્ધ થયું  
કે કર્મ જ જગતની વિચિત્રતાનું કારણ છે.

## (૩) કર્મણો મૂર્તત્વમ્—

નન્વતીન્દ્રિયસ્ય કાર્મણશરીરસ્ય મૂર્તત્વે કિં માનમ્ ? અત્રોચ્યતે—  
શરીરાદિકાર્યદર્શનાત્તત્કારણમૂર્તં કર્મ સિધ્યતિ ચેત્ તર્હિ કાર્યાનુરૂપમેવ  
કારણં ભવિતુમર્હતીતિ શરીરાદિકાર્યાણાં મૂર્તત્વાત્તત્કારણં કર્માપિ મૂર્તમેવ । યથા  
મૂર્તસ્ય ઘટાદિકાર્યસ્ય કારણં પરમાણુપુદ્ગલાસ્તે મૂર્તા એવ સન્તિ । યચ્ચ પુનરમૂર્તં  
કાર્યં તસ્ય કારણમપિ—અમૂર્તમ્ , યથા જ્ઞાનસ્યાત્મેતિ ।

નનુ સુખદુઃસ્વાદયોઽપિ કર્મણઃ કાર્યં તર્હિ તેષામમૂર્તત્વાત્ કર્મણોઽ  
મૂર્તત્વમપિ પ્રાપ્નોતિ, નહિ મૂર્તાદમૂર્તોત્પત્તિઃ સંભવતિ, યથા પુદ્ગલાદ્ જ્ઞાનપર્યાયઃ,

## (૩) કર્મ કા મૂર્તપન—

શંકા—અતીન્દ્રિય કાર્મણ શરીર કે મૂર્ત હોને મેં ક્યા પ્રમાણ હૈ ?

સમાધાન—શરીર આદિ કાર્યોં કે દેખને સે અનેક કારણમૂર્ત કર્મ કી સિદ્ધિ હોતી  
હૈ, ઓર કારણ, કાર્ય કે અનુરૂપ હી હોતા હૈ, અત એવ જબ શરીર આદિ કાર્ય મૂર્ત હૈં તો  
અને કા કારણ કર્મ મી મૂર્ત હી હોના ચાહિયે । જૈસે મૂર્ત ઘટ આદિ કાર્યોં કે કારણમૂર્ત  
પુદ્ગલ પરમાણુ મી મૂર્ત હી હૈં, જો કાર્ય અમૂર્ત હોતા હૈ, અસકા કારણ મી અમૂર્ત હી હોતા હૈ;  
જૈસે જ્ઞાન કા કારણ આત્મા ।

શંકા—સુખ ઓર દુઃખ આદિ કા કારણ મી કર્મ હૈ, ઓર સુખ  
દુઃખ આદિ અમૂર્ત હૈં; અતઃ અને કા કારણ કર્મ અમૂર્ત મી હોના ચાહિયે । મૂર્ત સે  
અમૂર્ત કી ઉત્પત્તિ નહીં હો સકતી, જૈસે પુદ્ગલ સે જ્ઞાનપર્યાય કી ઉત્પત્તિ નહીં હો

## (૩) કર્મનું મૂર્તપણું—

શંકા—અતીન્દ્રિય કાર્મણ શરીરમાં મૂર્તપણું હોવામાં શું પ્રમાણ છે ?

સમાધાન—શરીર આદિ કાર્યોના દેખવાથી તેના કારણમૂર્ત કર્મની સિદ્ધિ થાય  
છે, અને કારણ, કાર્યના અનુરૂપજ હોય છે. એ કારણથી જ્યારે શરીર આદિ કાર્ય  
મૂર્ત છે, તો તેનું કારણ કર્મ પણ મૂર્તજ હોવું જોઈએ. જેવી રીતે મૂર્ત ઘટ આદિ  
કાર્યોના કારણમૂર્ત પુદ્ગલપરમાણુ પણ મૂર્ત છે. જે કાર્ય અમૂર્ત હોય છે તેનું કારણ  
પણ અમૂર્ત જ હોય છે, જેમકે જ્ઞાનનું કારણ આત્મા.

શંકા—સુખ અને દુઃખ આદિનું કારણ કર્મ છે, અને સુખ દુઃખ આદિ અમૂર્ત  
છે, તેથી તેનું કારણ કર્મ પણ અમૂર્તજ હોવું જોઈએ. મૂર્તથી અમૂર્તની ઉત્પત્તિ થઈ  
શકતી નથી; જેવી રીતે પુદ્ગલથી જ્ઞાનપર્યાયની ઉત્પત્તિ થઈ શકતી નથી, અને એકજ

નાપ્યેકસ્યૈવ કર્મણો મૂર્તત્વમમૂર્તત્વં ચ યુજ્યતે, વિરુદ્ધત્વાદિતિ ચેત્ ? ઉચ્યતે—

અત્ર કારણશબ્દેનોપાદાનકારણં પરિગૃહ્યતે; ન તુ નિમિત્તકારણમ્, સુખદુઃસ્વાદીનાં નિમિત્તકારણમેવ કર્મ, યથાઽન્નપાનાદયો વિષાદયા વા સુખ-દુઃસ્વાદીનાં નિમિત્તકારણમસ્તિ । ઉપદાનકારણં તુ તેષામાત્મેવ સુખદુઃસ્વાદીના-માત્મધર્મત્વાદિતિ નાસ્તિ દોષલેશોઽપિ ।

(૪) જીવકર્મણોઃ સમ્બન્ધઃ ।

નનુ કર્મ મૂર્તમસ્તીત્યુક્તં પરન્તુ મૂર્તસ્ય કર્મણોઽમૂર્તેન જીવેન સહ કથં સંયોગલક્ષણઃ સમ્બન્ધઃ ? इति चेन्मैवम्, यथा मूर्तस्य घटस्यामूर्तं गगनेन संयोगलक्षणः सम्बन्धस्तथाऽत्रापि जीवकर्मणोः सम्बन्धोऽस्तीति । उक्तञ्च—

સકતી । ઔર ઇક હી કર્મ મૂર્ત મી હો ઔર અમૂર્ત મી હો, યહ કૈસે હો સકતા હૈ ?; યે દોનો ધર્મ વિરોધી હૈ, ઇક જગહ નહીં રહ સકતે ।

સમાધાન—યહાં કારણ-શબ્દ સે ઉપાદાન કારણ ગ્રહણ કિયા ગયા હૈ, નિમિત્ત કારણ નહીં । કર્મ સુખ-દુઃખ કે પ્રતિ નિમિત્ત કારણ હી હૈ, જૈસે અન્ન, પાન, વિષ આદિ સુખ-દુઃખ કે નિમિત્ત કારણ હૈ । સુખ દુઃખ કા ઉપાદાન કારણ તો આત્મા હી હૈ, કયોં કિ વે આત્મા કે ધર્મ હૈ, અતઃ યહાં દોષ કા લેશ મી નહીં હૈ ।

(૪) જીવ ઔર કર્મ કા સમ્બન્ધ—

શબ્દાઃ—આપને કર્મ કો મૂર્ત સિદ્ધ કિયા, મગર મૂર્ત કર્મ કા અમૂર્ત જીવ કે સાથ સમ્બન્ધ કિસ પ્રકાર હો સકતા હૈ ? ।

સમાધાન—ઐસા ન કહિણ । જૈસે મૂર્ત ઘટ કા અમૂર્ત આકાશ કે સાથ સંયોગ-સમ્બન્ધ હૈ, ઁસી પ્રકાર જીવ ઔર કર્મ કા મી સમ્બન્ધ હૈ । કહા મી હૈ :—

કર્મ મૂર્ત પણ હોય અને અમૂર્ત પણ હોય, એ કેવી રીતે હોઈ શકે ? આ બન્ને ધર્મ વિરોધી છે તેથી એક જગ્યાએ રહી શકતા નથી.

સમાધાન—અહિં કારણ-શબ્દથી ઉપાદાન કારણ ગ્રહણ કરવામાં આવે છે, નિમિત્ત કારણ નહિ. કર્મ, સુખ-દુઃખ થવામાં નિમિત્ત કારણજ છે, જેવી રીતે અન્ન, પાન, વિષ આદિ સુખ-દુઃખના નિમિત્ત કારણ છે, પરન્તુ સુખ-દુઃખનું ઉપાદાન કારણ તો આત્માજ છે, કારણ કે તે આત્માનો ધર્મ છે તેથી તેમાં લેશ પણ દોષ નથી.

(૪) જીવ અને કર્મનો સમ્બન્ધ—

શંકા—આપે કર્મને ‘મૂર્ત’ છે’ એમ સિદ્ધ કર્યું તો પછી મૂર્ત કર્મનો અમૂર્ત જીવની સાથે સમ્બન્ધ કેવી રીતે હોઈ શકે છે ?

સમાધાન—આ પ્રમાણે નહિ કહો ? જેમ મૂર્ત ઘટનો અમૂર્ત આકાશની સાથે સંયોગસમ્બન્ધ છે, તે પ્રમાણે જીવ અને કર્મનો પણ સમ્બન્ધ છે. કહ્યું પણ છે:—



“યથા હારૂપમાકાશં, રૂપિદ્રવ્યાદિભાજનમ્ ।  
તથા હારૂપ આત્માપિ, રૂપિકર્માદિભાજનમ્ ॥૧૧॥”

યથા વા - અમૂર્તયાઽઽકુચ્ચનાદિક્રિયયા સહ મૂર્તદ્રવ્યસ્યાઽઽગુલ્યાદેઃ  
સમ્બન્ધસ્તથાઽત્રાપિ જીવકર્મણોઃ સમ્બન્ધ ઇતિ બોધ્યમ્ ।

યદ્વા-યથા બાહ્યશરીરમિદં જીવેન સહ સમ્બદ્ધં પ્રત્યક્ષદૃષ્ટમેવાસ્તિ,  
એવં ભવાન્તરં ગચ્છતા જીવેન સહ કાર્મણશરીરં સમ્બદ્ધમેવેતિ ।

યદિ બાહ્યશરીરસ્ય જીવેન સહ સમ્બન્ધે ધર્માધર્મયોઃ કારણતાઽસ્તી-  
ત્યુચ્યતે તર્હિ તાવપિ ધર્માધર્મૌ મૂર્તૌ સ્યાતામમૂર્તૌ વા ? । યદિ મૂર્તૌ તર્હિ

“જેસે અરૂપી આકાશ રૂપી દ્રવ્ય આદિ કા આધાર હૈ, उसी प्रकार अरूपी आत्मा  
कर्मों का आधार है ” ॥ १ ॥

અથવા જેસે-આકુચ્ચન ( સિકોડના ) આદિ અમૂર્ત ક્રિયા કે સાથ અંગુલી આદિ  
મૂર્ત દ્રવ્ય કા સમ્બન્ધ હોતા હૈ, उसी प्रकार यहां जीव और कर्म का सम्बन्ध समझ  
लेना चाहिए ।

અથવા જેસે બાહ્ય શરીરકા જીવ કે સાથ સમ્બન્ધ હૈ, वह प्रत्यक्ष सिद्ध है, उसी  
प्रकार भवान्तर में जाते जीव के साथ कर्मण शरीर का सम्बन्ध है ।

અગર કહા જાય કિ જીવ કે સાથ બાહ્ય શરીર કા સમ્બન્ધ હોને મેં ધર્મ  
और अधर्म कारण है तो प्रश्न खड़ा होता है कि-धर्म अधर्म मूर्त हैं या अमूर्त है ?

“જેવી રીતે અરૂપી આકાશ, રૂપી દ્રવ્ય આદિનો આધાર છે. તે પ્રમાણે અરૂપી  
આત્મા, રૂપી કર્મોનો આધાર છે. ” ॥૧૧॥

અથવા-જેવી રીતે-સંકોચવું આદિ અમૂર્ત ક્રિયાની સાથે આંગલી આદિ મૂર્ત  
દ્રવ્યનો સમ્બન્ધ હોય છે તે પ્રમાણે જીવ અને કર્મનો સમ્બન્ધ સમજી લેવો જોઈએ.

અથવા જેવી રીતે આ બાહ્ય શરીર જીવની સાથે સંબંધ છે. તે પ્રત્યક્ષથી સિદ્ધ  
છે. તે પ્રમાણે ભાવાન્તરમાં જતા જીવની સાથે કાર્મણ શરીરનો સંબંધ છે.

અથવા તો એમ કહેવામાં આવે કે જીવની સાથે બાહ્ય શરીરનો સમ્બન્ધ હોવામાં  
ધર્મ અને અધર્મ કારણ છે. તો પ્રશ્ન ઉભો થાય છે. કે-ધર્મ અધર્મ મૂર્ત છે કે અમૂર્ત  
છે ? જો તે મૂર્ત છે એમ કહો તો અમૂર્ત જીવની સાથે તેનો સંબંધ કેવી રીતે થયો ?

तयोरप्यमूर्तेन जीवेन कथं सम्बन्धः ?, यदि कथञ्चित् सम्बन्धस्तर्हि कर्मणोऽपि जीवेन सह सम्बन्धः कुतो न स्यात् । यद्यमूर्त्तौ धर्माधर्मौ तर्हि बाह्येन स्थूल-शरीरेण मूर्तेन सह तयोः कथं सम्बन्धः ? तवमते मुर्तामूर्तयोः सम्बन्धासंभवात् । यद्यमूर्तयोरपि धर्माधर्मयोर्बाह्यशरीरेण मूर्तेन सह सम्बन्धोऽङ्गीक्रियते तर्हि जीवेन सह कर्मणः सम्बन्धे कथं दोषः ? ।

नन्वमूर्तस्य जीवस्य मूर्तेन कर्मणा कथं सुखदुःखाद्यनुग्रहोपघातौ स्याताम्, न ह्यमूर्तस्याकाशस्य मूर्तेः स्तम्बचन्दनाग्निज्वालादिभिरनुग्रहोपघातौ जायेते ? ।

अगर वे मूर्त हैं तो अमूर्त जीव के साथ उनका सम्बन्ध कैसे हुआ ?, अगर किसी प्रकार उनका सम्बन्ध हो गया तो कर्म का सम्बन्ध क्यों नहीं हो सकता ? । अगर धर्म अधर्म अमूर्त हैं तो बाह्य स्थूल और मूर्त शरीर के साथ उनका सम्बन्ध कैसे हो गया ?, आपके मत से मूर्त और अमूर्त का तो सम्बन्ध हो नहीं सकता । अगर अमूर्त धर्म अधर्म का मूर्त शरीर के साथ सम्बन्ध होना स्वीकार करते हो तो जीव के साथ कर्म का सम्बन्ध मानने में क्या दोष है ? ।

शङ्का—अमूर्त जीव का मूर्त कर्म के द्वारा सुख दुःख आदिरूप अनुग्रह और उपघात कैसे हो सकता है, मूर्त माला, चन्दन, अग्नि, ज्वाला आदि से अमूर्त आकाश का अनुग्रह और उपघात नहीं होता ?

अथवा केवल प्रकारे तेनो सम्बन्ध थल गयो तो कर्मनो सम्बन्ध शा भाटे नलि थल शके ? अगर धर्म अधर्म अमूर्त छे तो बाह्य स्थूल अने मूर्त शरीरनी साथे तेनो सम्बन्ध केवी रीते थल गयो ? आपना मत प्रमाणे तो मूर्त अने अमूर्तनो सम्बन्ध-न होल शके नली. परन्तु जे अमूर्त धर्म-अधर्मनो मूर्त शरीरनी साथे सम्बन्ध थयो ते स्वीकार करता छे तो जवनी साथे कर्मनो सम्बन्ध मानवाभां दोष शुं छे ?

शङ्का—अमूर्त जवनो, मूर्त कर्मद्वारा सुख-दुःख आदिरूप अनुग्रह अने उपघात कल रीते थल शके ? मूर्त माला चन्दन, अग्नि, ज्वाला आदिथी अमूर्त आकाशनो अनुग्रह अने उपघात थल शकतो नथी.

શૃણુ—યથામદિરાપાનૈર્વિષપિપીલિકાદિભિર્મક્ષિતૈર્મૂર્તાનામપિધૃતિસ્મૃતિ—મેધા-  
 દીનામાત્મગુણાનામુપધાતો જાયતે, “મેધાં પિપીલિકા હન્તિ” ઇત્યાદિ-  
 વચનાત્, તથા પયઃશર્કરાઘૃતાદિભિશ્ચાનુગ્રહઃ ક્રિયતે તથૈવામૂર્તસ્યાત્મનો મુર્તેન  
 કર્મણાનુગ્રહોપધાતૌ જાયતે. इदं च जीवस्यामूर्तत्वमङ्गीकृत्य समाहितम्,  
 न ह्येकान्तरूपेणाऽमूर्त एवात्मा किन्तु बह्वययोगोलकवत् क्षीरनीरवच्च कर्मणशरीरा-  
 भेदरूपतां प्राप्तः कथञ्चिन्मूर्तोऽपीति । तस्य मूर्तेन कर्मणानुग्रहोपधातौ भवत  
 एव । आकाशस्य तु तौ न भवतः, तस्यैकान्तरूपेणामूर्तत्वादचेतनत्वाच्च ।

સમાધાન—પુનિયે એસે—મદિરા કા પાન કરને સે, વિષમક્ષણ સે ઓર કોડી  
 આદિ કે સ્વાયે જાને સે અમૂર્ત ધૈર્ય, સ્મૃતિ ઓર બુદ્ધિ આદિ આત્મિક ગુણો કા ઉપધાત  
 હોતા હૈ, “મેધાં પિપીલિકા હન્તિ” ઇત્યાદિ વચન સે, તથા દૂધ, શર્કર ઓર ઘૃત  
 આદિ સે અનુગ્રહ હોતા હૈ, ઊસી પ્રકાર અમૂર્ત આત્મા કા મૂર્ત કર્મ દ્વારા અનુગ્રહ ઓર  
 ઉપધાત હોતા હૈ. જીવ કો અમૂર્ત અઙ્ગીકાર કરકે યહ સમાધાન ક્રિયા હૈ, કિન્તુ જીવ  
 એકાન્તરૂપ સે અમૂર્ત નહીં હૈ. ક્ષીર—નીર કી તરહ અથવા અગ્નિ ઓર લોહે કે ગોળે કી  
 તરહ આત્મા કાર્મણશરીર સે કથંચિત્ અભિન્ન હૈ, અત એવ મૂર્ત મી હૈ. કર્મ-  
 લિપ્ત આત્મા મૂર્ત હોને કે કારણ મૂર્તે કર્મો સે ઊસકા અનુગ્રહ ઓર ઉપધાત હોતા હી હૈ.  
 હૌં ! આકાશ કા અનુગ્રહ ઓર ઉપધાત નહીં હોતા, ક્યોં કિં વહ એકાન્તતઃ અમૂર્ત ઓર  
 અચેતન હૈ.

સમાધાન—સાંભળો ! જેમ મદિરાનું પાન કરવાથી, વિષમક્ષણથી, અથવા કોડી  
 આદિ પેટમાં ખાઈ જવામાં આવવાથી અમૂર્ત ધૈર્ય, અને બુદ્ધિ આદિ આધ્યાત્મિક  
 ગુણોનો ઉપધાત થાય છે. “મેધાં પિપીલિકા હન્તિ” ઇત્યાદિ વચનોથી, તથા દૂધ,  
 શર્કર અને ઘી આદિથી અનુગ્રહ થાય છે, તે પ્રમાણે અમૂર્ત આત્માનો મૂર્ત કર્મ  
 અનુગ્રહ અને ઉપધાત થાય છે.

જીવને અમૂર્ત અંગીકાર કરીને આ સમાધાન કર્યું છે, પરંતુ જીવ એકાન્તથી  
 અમૂર્ત નથી. ક્ષીર—નીરની પ્રમાણે અથવા અગ્નિ અને લોહના ગોળાની માફક  
 આત્મા કાર્મણશરીરથી કથંચિત્ અભિન્ન છે. આ કારણથી મૂર્ત પણ છે. કર્મલિપ્ત  
 આત્મા મૂર્ત હોવાના કારણે મૂર્ત કર્મોથી તેનો અનુગ્રહ અને ઉપધાત થાયજ છે.  
 હા ! આકાશનો અનુગ્રહ અને ઉપધાત થતો નથી, કારણ કે તે એકાન્તથી અમૂર્ત  
 અને અચેતન છે.



(૫) કર્મણોઽનાદિત્વમ્—

અનાદિઃ કર્મણઃ પ્રવાહઃ । શરીરકર્મણોઃ પરસ્પરં કાર્યકારણ ભાવાત્ ,  
વીજાઙ્કુરવત્ । યથા વીજાદઙ્કુરો જાયતે, અઙ્કુરાદપિ ક્રમેણ વીજમુપજાયતે । एवं  
શરીરાત્ કર્મ જાયતે કર્મતસ્તુ શરીરમિત્યેવં પુનઃ પુનરપિ પરસ્પરમનાદિકાલતઃ  
કાર્યકારણભાવસદ્ભાવોઽસ્તિ । इह ययोः परस्परं कार्यकारणभावस्तयोरनादि  
प्रवाहो दृश्यते यथा वीजाङ्कुरयोः, यथा वा कुकुटाण्डयोः, तथा शरीरकर्मणो-  
रनादिप्रवाह इति ।

(૫) કર્મોં કા અનાદિપન—

કર્મોં કી પરમ્પરા અનાદિકાલીન છે, ક્યોં કિ શરીર ઓર કર્મ કા પરસ્પર કાર્ય-  
કારણભાવ છે, જૈસે વીજ ઓર અંકુર કા । તાત્પર્ય છે કિ જૈસે વીજ સે અંકુર ઉત્પન્ન હોતા છે,  
ઓર અંકુર સે ક્રમશઃ વીજ કી ઉત્પત્તિ હોતી છે, ઈસી પ્રકાર શરીર સે કર્મ ઓર કર્મ સે  
શરીર ઉત્પન્ન હોતા છે । યહ પારસ્પરિક કાર્યકારણભાવ અનાદિ કાલ સે ચચ્ચ આતા છે ।  
જિન દો પદાર્થોં મેં પરસ્પર કાર્ય-કારણભાવ હોતા છે ઉનકા પ્રવાહ અનાદિકાલીન દેખા જાતા  
છે, જૈસે પૂર્વોક્ત વીજ ઓર અંકુર કા, અથવા મુર્ગી ઓર અળદે કા । ઈસ પ્રકાર શરીર ઓર  
કર્મ કા પ્રવાહ અનાદિકાલીન છે ।

(૫) કર્મોંનું અનાદિપણુ—

કર્મોંની પરંપરા અનાદિકાલીન છે. કારણ કે-શરીર અને કર્મોંના પરસ્પર કાર્ય-  
કારણભાવ છે, જેવી રીતે બીજ અને અંકુરનો. તાત્પર્ય એ છે કે-જેવી રીતે બીજથી  
અંકુર ઉત્પન્ન થાય છે, અને અંકુરથી ક્રમશઃ (ક્રમે-ક્રમે) બીજની ઉત્પત્તિ થાય છે.  
તે પ્રમાણે શરીરથી કર્મ અને કર્મથી શરીર ઉત્પન્ન થાય છે. આ પરસ્પરનો કાર્ય-  
કારણ ભાવ અનાદિ કાલથી ચાલ્યો આવે છે. જે બે પદાર્થોંમાં પરસ્પર કાર્ય-કારણભાવ  
હોય છે તેનો પ્રવાહ અનાદિકાલીન જોવામાં આવે છે. જેવી રીતે પૂર્વ કહેલ બીજ  
અને અંકુરનો, અથવા મરઘી અને ઈંડાનો, એ પ્રમાણે શરીર અને કર્મનો પ્રવાહ  
અનાદિકાલીન છે.

## (६) अकर्मवादमतनिराकरणम्—

यः पुनरदृष्टं कर्म नास्तीति मन्यते स च नास्तिकः प्रष्टव्यः—अयम-  
दृष्टाभावः किम् अप्रत्यक्षत्वात्, विचाराक्षमत्वात्, साधकाभावाद् वा मन्यसे ?

अप्रत्यक्षत्वान्नादृष्टाभावः सिध्यति, यतस्तव यदप्रत्यक्षं तच्चास्तीति  
स्वीकारे त्वदीयपितामहादेरप्यभावः स्यात्, तस्य त्वज्जन्मतः पूर्वमेवातीतत्वेन  
तवाप्रत्यक्षत्वात् । तथा च भवन्मते पितामहादेरतीतकालिकसत्ताया अभावेन  
भवतोऽपि सत्ता कथमुपपद्येत ? ।

## (६) अकर्मवादी के मत का निराकरण—

जो नास्तिक यह मानता है कि—अदृष्ट कर्म का सद्भाव नहीं है,  
उससे पूछना चाहिए कि—तुम अदृष्ट के अभाव को क्यों मानते हो ? प्रत्यक्ष न होने से,  
विचार को सहन न करने से अर्थात् विचारके योग्य नहीं होने से, या साधक प्रमाणों  
का अभाव होने से अदृष्ट का अभाव कहते हो ?

प्रत्यक्ष न होने मात्र से अदृष्ट का अभाव सिद्ध नहीं हो सकता । जो  
तुम्हें प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देता वह होता ही नहीं है, ऐसा मान लिया जाय तो  
तुम्हारे पितामह आदि का भी अभाव हो जायगा । वह तुम्हारे जन्म से पहले  
ही गुजर चुके हैं, अतः तुम्हें प्रत्यक्ष दिखाई नहीं दे सकते । ऐसी अवस्था में  
तुम्हारे पितामह आदि की भूतकालीन सत्ता का अभाव होजाने के कारण तुम्हारी सत्ता भी  
स्वतरे में पड़ जायगी ।

## (६) अकर्मवादीना मतनु निराकरणम्—

जे नास्तिक जेवुं माने छे के—अदृष्ट कर्मनो सद्भाव (अस्तित्व) नथी, तेमने  
पूछवुं जेधं जे के—तमे अदृष्टनो अभाव शा माटे माने छे ? प्रत्यक्ष नही होवाथी, विचारने  
सहन नही करवाथी अर्थात्—विचारवायोग्य नहि होवाथी, अथवा साधक प्रमाणोनो  
अभाव होवाथी अदृष्टनो अभाव कहो छे ?

प्रत्यक्ष नही होवा मात्रथी अदृष्टनो अभाव सिद्ध थर्ध शकतो नथी, जे वस्तु  
तमने प्रत्यक्ष जेवामां न आवे ते वस्तु होयज नही, जे प्रमाणे जे मानी बेशे  
तो तमारा पितामह (आपनो आप) आदिनो अभाव थर्ध जशे, कारण के ते तमारा  
जन्मता पड़ेलाज शुरी गया छे तेथी तमने ते प्रत्यक्ष जेवामां आवता नथी,  
जेवी अवस्थां तमारा पितामह आदिनी भूतकालीन सत्तानो अभाव थर्ध जवाथी  
तमारी सत्ता पथु अतरां (अंतरां) पडी जशे.

અથ સર્વપ્રમાતૃણાં યદપ્રત્યક્ષં તન્નાસ્તીત્યપિ ન સંભવતિ । યતઃ સર્વ-  
મતીન્દ્રિયં વસ્તુ સર્વપ્રમાતૃણાં પ્રત્યક્ષં ન ભવતિ, તાદૃશજ્ઞાનશક્તેરભાવાત્ । અસ્મા-  
ભિસ્તુ સમસ્તભાવાવભાસનભાસ્કરઃ સર્વજ્ઞઃ સ્વીક્રિયતે ।

વિચારાઽક્ષમત્વમપિ ન યુક્તં, કર્કશ(દુર્ધર્ષ)તર્કૈસ્તર્ક્યમાણસ્ય કર્મણઃ  
સદ્ભાવસંભવાત્ ।

સાધકાભાવાદપિ નાદૃષ્ટાભાવઃ, પૂર્વોક્તાગમાનુમાનયોસ્તત્સાધકયોઃ  
સત્ત્વાત્ । યથા ચ-શુભઃ પુણ્યસ્ય, અશુભઃ પાપસ્યેત્યાગમઃ । શુભયોગઃ પુણ્યસ્ય,  
અશુભયોગઃ પાપસ્ય કારણમિત્યર્થઃ ।

અગર કહા જાય કિ એક-દો કે અપ્રત્યક્ષ હોને સે કિસીકા અભાવ નહીં હોતા વરન્  
જો વસ્તુ સમી કે અપ્રત્યક્ષ હૈ, ઉસકા અભાવ હોતા હૈ । યહ કથન મી ઠીક નહીં હૈ,  
ક્યોં કિ સબ અતીન્દ્રિય વસ્તુએં સબ પ્રમાતાઓં કે પ્રત્યક્ષ નહીં હોતી, ઇસકા કારણ વિશિષ્ટ  
જ્ઞાનશક્તિ કા અભાવ હૈ । મગર હમ લોગ તો સમસ્ત પદાર્થોં કો પ્રકાશિત કરને મેં સૂર્ય કે  
સમાન સર્વજ્ઞ સ્વીકાર કરતે હૈં ।

અદૃષ્ટ, વિચાર કો સહન નહીં કરતા અર્થાત્ વિચારને કે યોગ્ય નહીં હૈ, યહ કથન મી  
યુક્ત નહીં, કઠોર તકોં દ્વારા વિચાર કરને સે કર્મ કા અસ્તિત્વ સિદ્ધ હો હી જાતા હૈ ।

સાધક પ્રમાણોં કા અભાવ હોને સે કર્મ કા અભાવ બતલાના મી ઠીક નહીં,  
ક્યોં કિ પૂર્વોક્ત આગમ ઓર અનુમાન પ્રમાણ ઉસકા સદ્ભાવ સિદ્ધ કરતે હૈં ।  
'શુભઃ પુણ્યસ્ય અશુભઃ પાપસ્ય' યહ આગમપ્રમાણ હૈ । અર્થાત્ શુભયોગ પુણ્ય કા  
ઓર અશુભ યોગ પાપ કા કારણ હોતા હૈ ।

અથવા કહેશે કે એક-બેના અપ્રત્યક્ષ હોવાથી કેઈને અભાવ થતો નથી.  
પરન્તુ જે વસ્તુ સર્વને અપ્રત્યક્ષ છે તેનો અભાવ હોય છે. એમ કહેવું તે પણ ઠીક  
નથી, કારણ કે સર્વ અતીન્દ્રિય વસ્તુઓ પ્રમાતાઓને પ્રત્યક્ષ થતી નથી. તેનું કારણ  
વિશિષ્ટ જ્ઞાનશક્તિનો અભાવ છે. અથવા એમે તો સમસ્ત પદાર્થોને પ્રકાશિત કરવામાં  
સૂર્યના સમાન સર્વજ્ઞનો સ્વીકાર કરીએ છીએ.

અદૃષ્ટ, વિચારને સહન કરતા નથી અર્થાત્ વિચારવા યોગ્ય નથી, એમ કહેવું  
તે પણ યુક્ત નથી, કઠિન તર્કો દ્વારા વિચાર કરવાથી કર્મનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થઈ  
જાય છે.

સાધક પ્રમાણોનો અભાવ હોવાથી કર્મોનો અભાવ બતાવવો તે પણ ઠીક નથી;  
કારણ કે પૂર્વોક્ત આગમ અને અનુમાન પ્રમાણ તેનો સદ્ભાવ (અસ્તિત્વ-હોવાપણું)  
સિદ્ધ કરે છે. શુભઃ પુણ્યસ્ય અશુભઃ પાપસ્ય' એ આગમપ્રાણ છે, અર્થાત્ શુભ યોગ  
પુણ્યનું અશુભ યોગ પાપનું કારણ હોય છે.



કાર્યવિશેષેણ કારણસ્યાનુમાનં ભવતિ યથા કાર્યવિશેષઃ સકારણકઃ, કાર્યત્વાત્, કુમ્ભવત્ । ઉક્તશ્ચ—

“ તુલ્યાકૃત્યોશ્ચ યમયોઃ,—દૃશ્યતે મહદન્તરમ્ ।

ચારિત્ર-વીર્ય-વિજ્ઞાન,—વૈરાગ્ય-રોગ્ય-સંપદામ્ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

અદૃષ્ટરૂપકારણમન્તરેણેદં મહદન્તરં ન સંભવતિ, તસ્માદવશ્યં સ્વી-  
કરણીયં કર્મ ।

#### (૭) બન્ધસ્વરૂપનિરૂપણમ્—

અત્ર બન્ધશબ્દેન ભાવબન્ધો ગૃહ્યતે, ન તુ નિગડાદિબન્ધરૂપો દ્રવ્યબન્ધઃ ।  
બન્ધનં બન્ધઃ । કર્મવર્ગણાયોગ્યપુદ્ગલસ્કન્ધાનામાત્મપ્રદેશાનાં ચ પરસ્પરં ક્ષીર-

કાર્યવિશેષ સે કારણ કા અનુમાન હોતા હૈ । જૈસે—હસ કાર્ય કા કોઈ કારણ હૈ,  
વયોં કિ કાર્ય હૈ, જૈસે—ઘટ, કહા મી હૈ—

“ સમાન આકૃતિ વાલે યમલ ( જોડલો સન્તાન ) મેં ચારિત્ર, વીર્ય, વિજ્ઞાન, વૈરાગ્ય,  
ઔર સમ્પત્તિ કા મહાન્ અન્તર દિસાઈ દેતા હૈ ” ॥ ૧ ॥

અદૃષ્ટરૂપ કારણ કે વિના યહ મહાન્ અન્તર નહીં હો સકતા, અતઃ ઇવ કર્મ અવશ્ય  
સ્વીકાર કરના યાહિયે ।

#### (૭) બન્ધ કે સ્વરૂપકા નિરૂપણ—

બન્ધ—શબ્દ સે યહાં ભાવબન્ધ કા પ્રહણ કરના યાહિયે । બેડી આદિ દ્રવ્યબન્ધકા  
નહીં । કર્મવર્ગણા કે યોગ્ય પુદ્ગલસ્કન્ધોં કા ઔર આત્મપ્રદેશોં કા આપસ મેં દૂધ

કાર્ય—વિશેષથી કારણનું અનુમાન થાય છે જેવી રીતે આ કાર્યનું કોઈ કારણ  
છે, કારણ કે કાર્ય છે, જેવી રીતે ઘટ. કહ્યું પણ છે—

‘સમાન આકૃતિ વાળાં યમલ—જોડલાં સંતાનમાં ચારિત્ર, વીર્ય, વિજ્ઞાન, વૈરાગ્ય,  
આરોગ્ય અને સમ્પત્તિનું મહાન અંતર જેવામાં આવે છે’ ॥૧॥

અદૃષ્ટરૂપ કારણ વિના આ મહાન અન્તર કોઈ શકે નહિ, એ કારણથી કર્મનો  
અવશ્ય સ્વીકાર કરી લેવો જોઈએ.

#### (૭) બંધસ્વરૂપનું નિરૂપણ—

બંધ—શબ્દથી અહિં ભાવ—બંધનું મહણ કરવું જોઈએ, બેડી આદિ દ્રવ્યબંધનું  
નહિ, કર્મવર્ગણાને યોગ્ય પુદ્ગલસ્કન્ધોના અને આત્મ-પ્રદેશોના પરસ્પર દૂધ અને

નીરવત્ સમ્બન્ધો બન્ધઃ । યદ્વા-બધ્યતે=અસ્વાતન્ત્ર્યમાપદ્યતે આત્મા યેન, સમ્બન્ધઃ । જ્ઞાનાવરણીયાઘટવિધકર્મપુદ્ગલાનામવસ્થાનં હિ જીવસ્યાનનન્તજ્ઞાનદર્શનસુખવીર્ય-રૂપસામર્થ્યપ્રતિબન્ધકતયા સ્વાતન્ત્ર્યવિઘાતકં ભવતિ ।

યદ્યપિ નિશ્ચયનયેન રાગદ્વેષરહિતોઽયમાત્મા, તથાપ્યસૌ વ્યવહારનયેન રાગદ્વેષરૂપભાવકર્મણાં જ્ઞાનાવરણીયાદિદ્રવ્યકર્મણાં ચ કર્તા ભવતિ । આત્મસંલગ્ન-શરીરાવગાહનક્ષેત્રાવસ્થિતકર્મવર્ગણાયોગ્યપુદ્ગલસ્કન્ધાઃ સ્વકીયોપાદાનકારણશક્ત્યૈવ કર્મરૂપામવસ્થાં પ્રાપ્નુવન્તિ । તે ચ કર્મપુદ્ગલા આત્મપ્રદેશૈઃ સહ પરસ્પર-મેકક્ષેત્રાવગાહરૂપં બન્ધં ક્ષીરનીરવત્ પ્રાપ્નોતિ । યથા સમુદ્દીયમાનાનિ રજાંસિ

और पानी की तरह सम्बन्ध हो जाना बन्ध है । आत्मा-जीव जिस के द्वारा बाँधा जाय=पराधीन किया जाय, वह बन्ध है । ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों की स्थिति, जीव के अनन्त ज्ञान, दर्शन, सुख और वीर्यरूप सामर्थ्य में बाधक होने के कारण स्वतन्त्रता का घात करने वाली है ।

યદ્યપિ નિશ્ચયનય સે આત્મા રાગ-દ્વેષ સે રહિત છે, કિન્તુ વ્યવહારનય સે રાગ-દ્વેષરૂપ ભાવકર્મોં કા, તથા જ્ઞાનાવરણ આદિ દ્રવ્યકર્મોં કા કર્તા છે । જિસ આકાશ-ક્ષેત્ર મેં આત્મા સે સંબદ્ધ શરીર છે, હસી આકાશક્ષેત્ર મેં સ્થિત કર્મવર્ગણા કે યોગ્ય પુદ્ગલસ્કન્ધ, અપની ઉપાદાનકારણ-શક્તિ સે હી કર્મરૂપ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કરતે હૈં । વે કર્મપુદ્ગલ આત્મપ્રદેશોં કે સાથ પરસ્પર એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બન્ધ કો ક્ષીર-નીર કી નાઈ પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જૈસે-ઉડતી હુઈ રજ, તેલ સે ચિકને ઘડે આદિ પર ચિપક જાતી છે,

પાણીની પ્રમાણે સમ્બન્ધ થઈ જવો તે બંધ છે. આત્મા-જીવ જેના દ્વારા બંધાઈ જાય-પરાધીન થઈ જાય. તે બંધ છે. જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોની સ્થિતિ, જીવના અનન્ત જ્ઞાન, દર્શન સુખ અને વીર્યરૂપ સામર્થ્યમાં બાધક હોવાના કારણે સ્વતંત્રતાનો ઘાત કરવા વાળી છે.

જે કે નિશ્ચયનયથી આત્મા રાગ-દ્વેષથી રહિત છે, પરન્તુ વ્યવહારનયથી રાગ-દ્વેષરૂપ ભાવકર્મોનો, તથા જ્ઞાનાવરણ આદિ દ્રવ્યકર્મોનો કર્તા છે. જે આકાશક્ષેત્રમાં આત્માથી સંબદ્ધ શરીર છે, તે આકાશક્ષેત્રમાં સ્થિત (રહેલા) કર્મ-વર્ગણાના યોગ્ય પુદ્ગલસ્કન્ધ, પોતાની ઉપાદાન કારણ-શક્તિથી જ કર્મરૂપ અવસ્થા પ્રાપ્ત કરે છે, તે કર્મપુદ્ગલ આત્મપ્રદેશોની સાથે પરસ્પર એકક્ષેત્રાવગાહરૂપ બંધને ક્ષીર-નીરના ન્યાય પ્રમાણે પ્રાપ્ત થાય છે; જેવી રીતે ઉડતી રજ. તેલના ચિકણા ઘડા આદિને

તૈલસ્નિગ્ધે ઘટાદૌ સંશ્લિષ્ટાનિ ભવન્તિ, તથા રાગદ્વેષરૂપતૈલસ્નિગ્ધમલિનાત્મ-  
પ્રદેશેષુ કર્મવર્ગણાયોગ્યપુદ્ગલાઃ સ્વકીયોપાદાનશક્ત્યા જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મરૂપા-  
મવસ્થાં પ્રાપ્ય સંશ્લિષ્ટા ભવન્તિ ।

પરમાણુરૂપા દ્વિપ્રદેશિમૃતિસ્કન્ધરૂપાશ્ચ પુદ્ગલા ઔદારિક-વૈક્રિયા-  
-હારક-તૈજસ-ભાષા-શ્વાસોચ્છ્વાસ-મનઃ-કાર્મણ-ભેદાદષ્ટવિધાઃ । તત્ર કર્મ-  
વર્ગણાપુદ્ગલા અપિ સમસ્તલોકં વ્યાપ્ય વર્તન્તે, યત્ર સંસારિણાં શરીરાણિ  
સન્તિ, તત્રાપિ તદ્બહિશ્ચાપિ સર્વત્ર તે વર્તન્તે, તત્ર કર્મયોગ્યપુદ્ગલા આત્મના પરિ-  
ગૃહીતાઃ કર્મરૂપેણ પરિણતા ભવન્તિ ।

રાગદ્વેષપરિણત્યાઽઽર્દ્રીકૃતસ્યાત્મનો

મનોવાકકાયરૂપકરણસાહાય્યેન

ઉસીપ્રકાર રાગ-દ્વેષરૂપી તેલ સે ચિકને મલિન આત્મપ્રદેશો મેં, કર્મવર્ગણા કે યોગ્ય  
પુદ્ગલ, અપની-અપની ઉપાદાનશક્તિ સે જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ-રૂપ અવસ્થા કો પ્રાપ્ત કર કે  
ચિપક જાતે હૈં ।

પરમાણુરૂપ ઔર દ્વિપ્રદેશી વૌરહ સ્કન્ધરૂપ પુદ્ગલ ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક,  
તૈજસ, ભાષા, શ્વાસોચ્છ્વાસ, મન ઔર કાર્મણ કે ભેદ સે આઠ પ્રકાર કે હોતે હૈં । ઇન મેં  
સે કાર્મણવર્ગણા કે પુદ્ગલ મી સમ્પૂર્ણ લોક મેં વ્યાપ્ત હૈં । જહાં સંસારી જીવોં કે શરીર હૈં,  
વહાં મી હૈં, ઔર બાહર મી સર્વત્ર હૈં । યે કર્મયોગ્ય પુદ્ગલ આત્માદ્વારા જબ ગ્રહણ કિયે જાતે  
હૈં તબ કર્મરૂપ મેં પરિણત હો જાતે હૈં ।

રાગ-દ્વેષરૂપ પરિણતિ સે યુક્ત આત્મા કા, મન, વચન, કાય, કી સહાયતા સે

ચોંટી બય છે, તે પ્રમાણે રાગ-દ્વેષ રૂપી તેલથી ચિકણા અને મલિન આત્મપ્રદેશોમાં  
કર્મવર્ગણાયોગ્ય પુદ્ગલ પોત-પોતાની ઉપાદાનશક્તિથી જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ-રૂપ  
અવસ્થા પ્રાપ્ત કરીને ચોંટી બય છે.

પરમાણુરૂપ અને દ્વિ-પ્રદેશી વગેરે સ્કન્ધરૂપ પુદ્ગલ ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક,  
તૈજસ, ભાષા, શ્વાસોચ્છ્વાસ, મન અને કાર્મણના ભેદથી આઠ પ્રકારના હોય છે. તેમાંથી  
કાર્મણવર્ગણાના પુદ્ગલ પણ સંપૂર્ણ લોકમાં વ્યાપ્ત છે. જ્યાં સંસારી જીવોનાં શરીર  
છે ત્યાં પણ છે અને બહાર સર્વત્ર પણ છે. તે કર્મયોગ્ય પુદ્ગલ આત્માદ્વારા  
જ્યારે ગ્રહણ કરવામાં આવે છે ત્યારે તે કર્મરૂપમાં પરિણત થઈ બય છે.

રાગ-દ્વેષરૂપ પરિણતિયુક્ત આત્માની મન, વચન અને કાયની સહાયતાથી



वीर्यगुणपरिणामात्मिका शुभाशुभक्रिया भवति । इयं क्रिया चात्मनः प्रदेशानां परिस्पन्दः, कम्पनं, व्यापारो, योग इति चोच्यते । इयमेव मनोवाक्काययोग इति च कथ्यते । इयमात्मनो ज्ञानावरणाद्यष्टकर्मसम्बन्धरूपे बन्धे हेतुश्च ।

आत्मनः शुभाशुभक्रियायां सत्यामात्मसंलग्नानादिकर्मणशरीरेणात्माऽनन्तानन्तप्रदेशिस्कन्धरूपांश्चतुःस्पर्शान् कर्मयोग्यपुद्गलानादाय कर्मणशरीरतया परिणमयति । आत्मसंलग्नं यदनादि कर्मणशरीरं, तद्धि आत्मैक्यात् कर्मयोग्यपुद्गलानां ग्रहणे स्वाधीनकरणे स्वस्मिन्नेकत्वपरिणामकरणे च समर्थं भवति । अनादिकर्मणशरीरसम्बन्धादेव संसारी जीवो मूर्तोऽस्ति । मूर्तत्वादेव च तस्य पौद्गलिककर्मसम्बन्धो भवति ।

वीर्यगुण के परिणमनरूप शुभा-शुभ क्रिया होती है । इस क्रिया को आत्मा के प्रदेशों का परिस्पन्दन, कम्पन, व्यापार या योग कहते हैं । यही मन, वचन और काय का योग कहलाता है । यही क्रिया ज्ञानावरण आदि आठ कर्मों के बन्ध का कारण है ।

आत्मा की जब शुभ या अशुभ क्रिया होती है तो आत्मा के साथ पहले से बंधे हुए कर्मणशरीर के द्वारा आत्मा, अनन्तानन्तप्रदेशी-स्कन्धरूप; चौस्पर्शी कर्मयोग्य पुद्गलों को ग्रहण कर के कर्मणशरीर के रूप में परिणत करता है । आत्मा से सम्बद्ध अनादिकालीन कर्मणशरीर आत्मा के साथ एकमेक होने के कारण कर्मयोग्यपुद्गलों को ग्रहण करने में, अपने अधीन करने में और अपने साथ एकमेक करलेने में समर्थ होता है । अनादिकालीन कर्मणशरीर के सम्बन्ध से ही संसारी जीव मूर्त है, और मूर्त होने के कारण ही उसका पौद्गलिक कर्मों के साथ सम्बन्ध होता है ।

वीर्यगुणના પરિણમનરૂપ શુભાશુભ ક્રિયા થાય છે. તે ક્રિયાને આત્માના પ્રદેશોનાં પરિસ્પન્દન, કમ્પન, વ્યાપાર અથવા યોગ કહે છે. આજ મન વચન અને કાયાનો યોગ કહેવાય છે. આ ક્રિયા જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોના બંધનું કારણ છે.

આત્માની જ્યારે શુભ અથવા અશુભ ક્રિયા થાય છે તો આત્માની સાથે પહેલાથી બાંધેલા કાર્મણશરીરદ્વારા આત્મા અનંતાનન્તપ્રદેશી-સ્કંધરૂપ, ચૌસ્પર્શી કર્મયોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરીને કાર્મણશરીરના રૂપમાં પરિણત કરે છે. આત્માથી સંબંધ અનાદિકાલીન કાર્મણશરીર આત્માની સાથે એકમેક હોવાના કારણે કર્મયોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરવામાં, પોતાના આધીન કરવામાં અને પોતાની સાથે એકમેક કરી દેવામાં સમર્થ થાય છે. અનાદિકાલીન કાર્મણશરીરના સંબંધથી જ સંસારી જીવ મૂર્ત હોવાના કારણે જ તેનો પૌદ્ગલિક કર્મોની સાથે સમ્બન્ધ થાય છે.

યથા દીપક ઉષ્મગુણયોગાદ્ વર્તિદ્વારા તૈલમાદાય જ્વાલારૂપેણ પરિણમ-  
યતિ તથા રાગદ્વેષોષ્મગુણસમ્બન્ધાન્મનોવાગાદિયોગવર્ત્યાઽઽત્મદીપઃ કર્મયોગ્યપુદ્ગલ-  
સ્કન્ધતૈલમાદાય કર્મજ્વાલારૂપેણ પરિણતં કરોતિ । મનોવાગાદિરૂપકરણસંયોગાદા-  
ત્મનો વીર્યપરિણામો ભવતિ, અતો મનોવાગાદિવ્યાપારોયોગશબ્દેનોચ્યતે । યથા મૃન્મય-  
ઘટસ્યાગ્નિસંયોગાદ્ રક્તત્વાદિપરિણતિર્ઘટસ્યૈવ ભવતિ તથા મનોવાગાદિસંયોગાત્  
શુભાશુભક્રિયારૂપા વીર્યપરિણતિરાત્મન એવ ભવતિ, ન તુ પુદ્ગલરૂપમનોવાગાદેઃ ।

યથા ચ તૈલાભ્યક્તે શરીરે જ્વાલાર્દે વસ્ત્રે વા ધૂલિરાશ્લિષ્ટા ભવતિ, તથા

જૈસે—દીપક ઉષ્માગુણ કે કારણ બત્તીદ્વારા તૈલ ગ્રહણ કર કે જ્વાલા કે રૂપ મેં  
પરિણત કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર રાગ—દ્વેષ રૂપ ઉષ્માગુણકે સમ્બન્ધ સે મન, વચન આદિ યોગોં  
કી બત્તી દ્વારા આત્મરૂપી દીપક કર્મયોગ્યપુદ્ગલસ્કન્ધરૂપ તૈલ કો ગ્રહણ કર કે કર્મરૂપ  
જ્વાલા મેં પરિણત કર લેતા હૈ । મન, વચન ઓર કાયરૂપ કરણ કે દ્વારા આત્મા કા વીર્ય-  
રૂપ પરિણમન હોતા હૈ । ઈસીલિપ્ મન, વચન, આદિ કા વ્યાપાર યોગ કહલાતા હૈ । જૈસે  
—અગ્નિ કે સંયોગ સે મિટ્ટી કે ઘડે કી લલાઈ આદિરૂપ પરિણતિ હોતી હૈ, ઓર વહ ઘડે કી  
હી કહલાતી હૈ, ઉસીપ્રકાર મન, વચન આદિ કે સંયોગ સે શુભા—શુભક્રિયારૂપ વીર્ય કી  
પરિણતિ આત્મા કી હી હોતી હૈ, પુદ્ગલરૂપ મન, વચન આદિ કી નહીં ।

જૈસે તેલ સે લિપ્ત શરીર પર યા મીંગે હુપ્ વસ્ત્ર પર ધૂલ લગ જાતી હૈ,

જેવી રીતે દીપક ઉષ્માગુણના કારણે બત્તીદ્વારા તેલને ગ્રહણ કરીને જ્વાલાના  
રૂપમાં પરિણત કરે છે તે પ્રમાણે રાગ—દ્વેષરૂપ ઉષ્માગુણના સમ્બન્ધથી મન  
વચન આદિ યોગોની બત્તી દ્વારા આત્મારૂપી દીપક કર્મયોગ્ય—પુદ્ગલસ્કન્ધરૂપ  
તેલને ગ્રહણ કરીને કર્મરૂપ જ્વાલામાં પરિણત કરી લે છે. મન, વચન અને  
કાયરૂપ કરણદ્વારા આત્માનું વીર્યરૂપ પરિણમન થાય છે; એ કારણથી મન, વચન  
આદિના વ્યાપાર યોગ કહેવાય છે. જેવી રીતે અગ્નિના સંયોગથી માટીના ઘડાની જ  
લાલી (રાતાશપણું) રૂપ પરિણતિ થાય છે, અને તે ઘડાની જ કહેવાય છે. તે પ્રમાણે  
મન, વચન આદિના સંયોગથી શુભા—શુભક્રિયારૂપ વીર્યની પરિણતિ આત્માની જ  
થાય છે. પુદ્ગલરૂપ મન, વચન આદિની નહિ.

જેવી રીતે તેલથી લિપ્ત શરીર પર, અથવા લિજ્જએલા વસ્ત્ર પર  
ધૂળ લાગી જાય છે. તે પ્રમાણે રાગ—દ્વેષરૂપી તેલથી યુક્ત આત્માના કર્મણુશરીરરૂપ

रागादिरूपतैलाभ्यक्तस्यात्मनः कर्मणशरीरपरिणामो नवीनकर्मग्रहणे योग्यतां संपादयति । आत्मशरीरयोरैक्ये सति सम्यग्ज्ञानाभावरूपानामोगवीर्यतः कर्मबन्धो भवति । इत्थं कर्मवर्गणायोग्यपुद्गलानां ज्ञानावरणीयादिकर्मतया परिणतानां कषायस्यात्मनः सकलप्रदेशेषु लोलीभावो बन्ध इति बोध्यम् ।

#### (८) बन्धकारणनिरूपणम्-

बन्धस्य पञ्च साधारणकारणानि मिथ्यात्वा-विरति-प्रमाद-कषाय-योग-भेदात् ।

तत्रातत्त्वे तत्त्वाध्यवसायरूपो विपरीतावबोधो मोहकर्मोदयजनित आत्म-परिणामो मिथ्यात्वम् । यद्वा-कुदेव-कुगुरु-कुधर्मेष्वभिरुचिरूपमतत्त्वार्थश्रद्धानं

उसी प्रकार राग-द्वेषरूपी तेल से युक्त आत्मा का कर्मणशरीररूप परिणाम नवीन कर्मों को ग्रहण करने में योग्य हो जाता है । आत्मा और शरीर के एकमेक होने पर सम्यग्ज्ञान के अभावरूप अनामोग वीर्य से कर्मबन्ध होता है । इस प्रकार ज्ञानावरण आदि कर्मरूप में परिणत कर्मणवर्गणाओं के योग्य पुद्गलों का कषाययुक्त-आत्मा के समस्त प्रदेशों में एकमेक हो जाना बन्ध है ।

#### (९) बन्धके कारण-

बन्ध के साधारण कारण पांच हैं-(१) मिथ्यात्व, (२) अविरति, (३) प्रमाद, (४) कषाय, और (५) योग ।

अतत्त्व को तत्त्व समझनेरूप मोहनीयकर्मजन्य विपरीतज्ञानरूप आत्मपरिणाम को मिथ्यात्व कहते हैं, अथवा कुदेव, कुगुरु और कुधर्म में रुचिरूप अतत्त्व का

परिणाम नवीन कर्मों ग्रहण करवाभां योज्य થઈ જાય છે. આત્મા અને શરીરના એકમેક થવાથી સમ્યગ્જ્ઞાનના અભાવરૂપ અનામોગ વીર્યથી કર્મબંધ થાય છે.

એ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મરૂપમાં પરિણત કાર્મણવર્ગણનાં યોગ્ય પુદ્ગલોતું કષાયયુક્ત આત્માના સમસ્ત પ્રદેશોમાં એકમેક થઈ જવું તે બંધ છે.

#### (૮) બંધનું કારણ-

બંધના સાધારણ કારણો પાંચ છે.—(૧) મિથ્યાત્વ, (૨) અવિરતિ, (૩) પ્રમાદ, (૪) કષાય અને (૫) યોગ.

અતત્ત્વને તત્ત્વ સમજવા રૂપ મોહનીયકર્મજન્ય, વિપરીતજ્ઞાનરૂપ આત્મ-પરિણામને મિથ્યાત્વ કહે છે. અથવા કુદેવ કુગુરુ, અને કુધર્મમાં રુચિરૂપ અતત્ત્વની



મિથ્યાત્વમ્ ૧ । સાવધયોગેષુ પ્રવૃત્તિરવિરતિઃ ૨ । સદુપયોગાભાવઃ પ્રમાદઃ, મોક્ષમાર્ગ  
પ્રતિ શૈથિલ્યં વા પ્રમાદઃ ૩ । કષ્યતે=પુનઃપુનર્જન્મમરણાદિક્લેશોઽનુભૂયતે યેન  
સ કષાયઃ, મોહનીયકર્મોદયજનિત આત્મપરિણતિવિશેષઃ, યદ્વા-કષ્યતે યત્ર  
શારીરિકમાનસિકદુઃખૈઃ, સ કષઃ-સંસારઃ, તસ્ય આયઃ-પ્રાપ્તિકારણં કષાયઃ=  
ક્રોધાદિઃ ૪ । યુજ્યતે-આત્માઽનેનેતિ યોગઃ=મનોવાકાયવ્યાપારરૂપઃ ૫ । ઉક્તશ્ચ-

“પંચ આસવદારા પળ્ણત્તા, તંજહા-મિચ્છત્તં ૧, અવિરઈ ૨, પમાયા ૩,  
કસાયા ૪, જોગા ૫ ” । (સમવા ૦ સમવાય ૫ ) ‘આસવદારા’ ઇતિ-આશ્રવો બન્ધ-  
કારણમ્ ।

શ્રદ્ધાન મિથ્યાત્વ કહલાતા હૈ ? । સાવધ યોગોં મેં પ્રવૃત્તિ કરના અવિરતિ હૈ ૨ । સમ્યક્  
ઉપયોગ (યતના) કા અભાવ પ્રમાદ કહલાતા હૈ, યા મોક્ષમાર્ગ કે વિષય મેં શિથિલતા  
હોના પ્રમાદ હૈ ૩ । જિસ કે દ્વારા આત્મા કષા જાય અર્થાત્ વારંવાર જન્મ-મરણ કા  
ક્લેશ ભોગા જાય ઉસે કષાય કહતે હૈ । કષાય, મોહકર્મ સે ઉત્પન્ન આત્મા કી એક  
પરિણતિ હૈ । અથવા - જહાં શારીરિક એવં માનસિક દુઃખોં સે જીવ કષા જાય (યુક્ત હો)  
ઉસે કષ અર્થાત્ સંસાર કહતે હૈ ઓર ઉસ કષ (સંસાર) કી આય-પ્રાપ્તિ જિસ સે હો  
વહ કષાય કહલાતા હૈ ૪ । જિસ સે આત્મા વ્યાપ્ત હો, એસા મન, વચન ઓર કાય કા  
વ્યાપાર યોગ કહલાતા હૈ ૫ । કહા હૈ—

“પંચ આસવદારા પળ્ણત્તા, તં જહા-મિચ્છત્તં, અવિરઈ, પમાયા, કસાયા,  
જોગા ” । (સમવાયાજ્ઞ, સમવાય ૫ ) યહાં ‘આસવદારા’ કા અર્થ હૈ-આશ્રવ કે દ્વાર  
અર્થાત્ બન્ધકે કારણ ।

શ્રદ્ધા તેને મિથ્યાત્વ કહે છે (૧). સાવધ યોગોમાં પ્રવૃત્તિ કરવી તે અવિરતિ  
છે (૨). સમ્યક્ ઉપયોગનો અભાવ તે પ્રમાદ કહેવાય છે, અથવા મોક્ષમાર્ગના  
વિષયમાં શિથિલતા થવી તે પ્રમાદ છે (૩). જેના દ્વારા આત્મા કષાય અર્થાત્ વારંવાર  
જન્મ મરણનો ક્લેશ ભોગવવાય તેને કષાય કહે છે. કષાય, મોહકર્મથી ઉત્પન્ન  
આત્માની એક પરિણતિ છે. અથવા—જ્યાં શારીરિક અને માનસિક દુઃખોથી જીવ  
કષાય અર્થાત્ પીડાય તેને કષ અર્થાત્ સંસાર કહે છે, અને તે સંસારની આય-પ્રાપ્તિ  
જેનાથી હોય તે કષાય કહેવાય છે (૪). જેનાથી આત્મા વ્યાપ્ત હોય એવા મન,  
વચન અને કાયાના વ્યાપાર તે યોગ કહેવાય છે. (૫), કહ્યું છે કે :—

“પંચ આસવદારા પળ્ણત્તા, તંજહા-મિચ્છત્તં, અવિરઈ, પમાયા, કસાયા જોગા.”  
(સમવાયાંગ, સમવાય ૫,) અહિં “આસવદારા” નો અર્થ એ છે કે—આશ્રવના  
દ્વાર, અર્થાત્ બંધના કારણ.

एषु पञ्चसु कारणेषु कषायः प्रधानम् । स च क्रोधमानमायालोभ-  
भेदाच्चतुर्विधः । चतुर्विधोऽप्ययं कषायो रागद्वेषान्तर्गत एवास्ति । उक्तञ्च—

“दोहिं ठाणेहिं पावकम्मा बंधति, तंजहा-रागेण य, दोसेण य । रागे  
दुविहे पणत्ते, तंजहा-माया य लोभे य । दोसे दुविहे पणत्ते, तंजहा-कोहे य  
माणे य ” (स्था० स्थान ૨ ઉ૦ )

बन्धश्चतुर्विधः-प्रकृति-स्थित्य-नुभाव-प्रदेशभेदात् । उक्तञ्च—

“चउच्चिहे बंधे पणत्ते, તંજહા-પગડ્ઘે૧, ઠિડ્ઘે૨, અણુભાવબંધે૩,  
પણસબંધે૪ । ” ( સમવાયાજ્ઞ. સમવાય૪ )

इन पांच कारणों में कषाय प्रधान है । क्रोध, मान, माया और लोभ के  
भेदसे वह चार प्रकार का है । कषाय के ये चारों भेद राग और द्वेष में ही अन्तर्गत हो  
जाते हैं । कहा भी है—

“दो स्थानों से पाप कर्मों का बन्ध होता है । वह इस प्रकार-राग से  
और द्वेष से । राग दो प्रकार का है-माया और लोभ । द्वेष भी दो प्रकार का है-क्रोध  
और मान” । (स्था० स्थान ૨ ઉ. ૨ )

बन्ध चार प्रकार का है-(१) प्रकृति-बन्ध, (२) स्थिति बन्ध, (३) अनुभाव-बन्ध;  
और (४) प्रदेश-बन्ध । कहा भी है—

“बन्ध चार प्रकार का कहा गया है, वह इस प्रकार-(१) प्रकृतिबन्ध, (२)  
स्थितिबन्ध, (३) अनुभावबन्ध, (४) प्रदेशबन्ध” । (सम. स. ૪)

આ પાંચ કારણોમાં કષાય પ્રધાન છે:- મુખ્ય છે. ક્રોધ, માન, માયા અને  
લોભના લેહથી તે ચાર પ્રકારના છે. કષાયના તે ચારેય ભેદ રાગ-અને દ્વેષમાં  
સમાઈ જાય છે. કહ્યું છે કે:-

“બે સ્થાનોથી પાપકર્મોના બંધ થાય છે. તે આ પ્રમાણે છે-રાગથી અને  
દ્વેષથી. રાગ બે પ્રકારનો છે-માયા અને લોભ. દ્વેષ પણ બે પ્રકારનો છે-ક્રોધ અને  
માન” (સ્થા. સ્થાન ૨-ઉ. ૨).

બંધ ચાર પ્રકારના છે-(૧) પ્રકૃતિબંધ, (૨) સ્થિતિબંધ, (૩) અનુભાવબંધ  
(૪) પ્રદેશબંધ. કહ્યું પણ છે-

“બંધ ચાર પ્રકારના છે. (૧) પ્રકૃતિબંધ, (૨) સ્થિતિબંધ, (૩) અનુભાવબંધ,  
(૪) પ્રદેશબંધ,” (સમ૦ સ. ૪)

તત્ર પ્રકૃતિઃ-સ્વભાવઃ । આત્મપરિગૃહીતકર્મપુદ્ગલાનાં તચ્છક્તિરુપેણ પરિણ-  
મનમ્ । યથા નિમ્બસ્ય તિક્તલમ્, ગુહસ્ય મધુરત્વમ્ । પ્રકૃતિર્દ્વિવિધા-મૂલપ્રકૃતિઃ,  
ઉત્તરપ્રકૃતિશ્ચ । મૂલરૂપઃ કર્મણઃ સ્વભાવો મૂલપ્રકૃતિઃ । મૂલપ્રકૃતિરષ્ટધા-જ્ઞાના-  
વરણીય ૧ - દર્શનાવરણીય ૨ - વેદનીય ૩ - મોહનીયા ૪ - યુગ્ય ૫ - નામ ૬ - ગોત્રા ૭ -  
અન્તરાય ૮ - ભેદાત્ । ઉક્તશ્ચ—

“અટ્ઠ કમ્મપગહીઓ પણ્ણત્તાઓ, તંજહા-ળાળાવરણિજ્જં ૧, દંસળાવરણિજ્જં ૨,  
વેયણિજ્જં ૩ મોહણિજ્જં ૪, આયં ૫, નામં ૬, ગોયં ૭, અંતરાયં ૮” । (પ્રજ્ઞાપના ૦  
પદ-૨૧ ઉ. ૧ સૂ. ૨૮૮)

પ્રકૃતિ અર્થાત્ સ્વભાવ । આત્મા કે દ્વારા પ્રહણ કિંદ્રુ હુદ્ કર્મપુદ્ગલોં મેં અમુક-  
અમુક પ્રકાર કી શક્તિ (સ્વભાવ) ઉત્પન્ન હો જાના પ્રકૃતિબન્ધ હૈ । જૈસે-નીમ મેં કદુકતા  
ઔર ગુહ મેં મધુરતા હોતી હૈ ।

પ્રકૃતિ દો પ્રકાર કી હૈ-મૂલપ્રકૃતિ ઔર ઉત્તરપ્રકૃતિ । કર્મ કા મૂલ સ્વભાવ  
મૂલપ્રકૃતિ કહલાતી હૈ । મૂલપ્રકૃતિ કે આઠ ભેદ હૈ—(૧) જ્ઞાનાવરણીય, (૨) દર્શનાવરણીય,  
(૩) વેદનીય, (૪) મોહનીય, (૫) આયુ, (૬) નામ, (૭) ગોત્ર, ઔર (૮) અન્તરાય ।  
કહા મી હૈ:—

“આઠ કર્મપ્રકૃતિયાં હૈ, વેં હિસ પ્રકાર—(૧) જ્ઞાનાવરણીય, (૨) દર્શનાવરણીય,  
(૩) વેદનીય, (૪) મોહનીય, (૫) આયુષ્ય, (૬) નામ, (૭) ગોત્ર, (૮) અન્તરાય ।”  
(પ્રજ્ઞા. પદ ૨૧ ઉ. ૧ સૂ. ૨૮૮)

પ્રકૃતિ અર્થાત્ સ્વભાવ,—આત્માદ્વારા પ્રહણ કરેલા કર્મપુદ્ગલોમાં અમુક-  
અમુક પ્રકારની શક્તિ (સ્વભાવ) નું ઉત્પન્ન થઈ જવું તે પ્રકૃતિબંધ છે. જેવી રીતે  
લીંબમાં કડવાશ અને ગોળમાં મધુરતા હોય છે.

પ્રકૃતિ બે પ્રકારની છે— (૧) મૂલપ્રકૃતિ અને (૨) ઉત્તરપ્રકૃતિ. કર્મના મૂલ  
સ્વભાવ તે મૂલપ્રકૃતિ કહેવાય છે. તે મૂલ પ્રકૃતિના આઠ ભેદ છે— (૧) જ્ઞાનાવરણીય,  
(૨) દર્શનાવરણીય, (૩) વેદનીય, (૪) મોહનીય, (૫) આયુ, (૬) નામ, (૭) ગોત્ર  
અને (૮) અંતરાય. કહ્યું છે કે:—

“આઠ કર્મપ્રકૃતિઓ છે, તે આ પ્રમાણે—જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય,  
મોહનીય, આયુષ્ય, નામ, ગોત્ર, અંતરાય.” (પ્રજ્ઞા. પદ ૨૧ ઉ. ૧ સૂ. ૨૮૮)



જ્ઞાનાવરણીયં કર્મ, જીવસ્ય જ્ઞાનગુણમાવૃણોતિ ૧ । દર્શનાવરણીયં કર્મ દર્શનગુણમ્ ૨ । વેદનીયકર્મ જીવસ્યાવ્યાબાધગુણં સંરુણદ્ધિ ૩ । મોહનીયકર્મ જીવસ્યાવિરતિં તત્ત્વાનભિરુચિં ચ જનયતિ ૪ । આયુષ્યકર્મ જીવસ્યામરત્વં પ્રતિહન્તિ ૫ । નામકર્મ જીવસ્યાઽમૂર્તત્વં પ્રતિવધ્નાતિ ૬ । ગોત્રકર્મ તસ્યાગુરુલઘુગુણં વ્યાહન્તિ ૭ । અન્તરાયકર્મ જીવસ્યાનન્તવીર્યગુણં રુણદ્ધિ ૮ ।

યથા-ગવાદિભક્ષિતતૃણાદયો દુગ્ધરૂપેણ પરિણતા ભવન્તિ, માધુર્ય-સ્વભાવઃ સહૈવ જાયતે, સ ચૈતાવત્કાલપર્યન્તસ્થાયીત સ્થિતિસમયમર્યાદાઽપિ જાયતે માધુર્યે તીવ્રમન્દભાવાદિવિશેષોઽપિ ભવતિ, તસ્ય દુગ્ધસ્ય પૌદ્ગલિક-

(૧) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જીવ કે જ્ઞાનગુણો દાંકતા છે, (૨) દર્શનાવરણીયકર્મ દર્શનગુણો । (૩) વેદનીયકર્મ જીવ કે અવ્યાબાધગુણો રોકતા છે અને (૪) મોહનીય-કર્મ જીવ મેં અવિરતિ અને તત્ત્વ કે પ્રતિ અરુચિ ઉત્પન્ન કરતા છે । (૫) આયુકર્મ જીવ કી અમરતા કો રોકતા છે અને (૬) નામકર્મ જીવ કે અમૂર્તત્વ ગુણ કો રોકતા છે । (૭) ગોત્રકર્મ અગુરુ-લઘુત્વ ગુણ કો નષ્ટ કરતા છે અને (૮) અન્તરાયકર્મ જીવ કે અનન્ત વીર્ય કા ઘાત કરતા છે ।

જેસે ગાયદ્વારા ખાચે હુણ તૃણ આદિ દૂધ રૂપ મેં પરિણત હોતે હૈ, અને ઉન મેં મધુરતા કા સ્વભાવ મી સાથ હી ઉત્પન્ન હો જાતા છે । ઉસ મેં અમુક કાલપર્યન્ત ઠહરને કી સ્થિતિ-મર્યાદા મી ઉત્પન્ન હો જાતી છે, અને મધુરતા મેં તીવ્રતા યા મન્દતા કી વિશેષતા મી આજાતી છે । ઉસ દૂધ કા પૌદ્ગલિક પરિણામ મી સાથ હી ઉત્પન્ન હોતા છે ।

(૧) જ્ઞાનાવરણીય કર્મ જીવના જ્ઞાન-ગુણને ઢાંકી દે છે; (૨) દર્શનાવરણીય કર્મ દર્શનગુણને ઢાંકે છે. (૩) વેદનીય કર્મ જીવના અવ્યાબાધ ગુણને, રોકી દે છે (૪) મોહનીય કર્મ જીવમાં અવિરતિ અને તત્ત્વપ્રતિ અરુચિ ઉત્પન્ન કરાવે છે. (૫) આયુ કર્મ જીવની અમરતાને રોકે છે. (૬) નામ-કર્મ જીવના અમૂર્તત્વ ગુણને રોકે છે. (૭) ગોત્ર-કર્મ અગુરુલઘુત્વ ગુણનો નાશ કરે છે અને (૮) અન્તરાય કર્મ જીવના અનન્તવીર્યનો ઘાત કરે છે.

જેવી રીતે ગાયે ખાધેલું ઘાસ આદિ દૂધ રૂપમાં પરિણત થાય છે અને તેમાં મધુરતાનો સ્વભાવ પણ સાથે જ ઉત્પન્ન થાય છે. તેમાં અમુકકાલપર્યન્ત સ્થિર રહેવાની સ્થિતિ-મર્યાદા પણ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે. અને મધુરતામાં તીવ્રતા અથવા મન્દતાની વિશેષતા પણ આવી જાય છે. તે દૂધનું પૌદ્ગલિક પરિણામ પણ સાથે જ

પરિણામશ્ચાપિ સહૈવ પ્રાદુર્ભવતિ તથા જીવેન પરિગૃહીતાનાં કર્મવર્ગણાયોગ્ય-પુદ્ગલાનાં કર્મરૂપેણ પરિણમને ચતુર્વિધા અંશાઃ સહૈવ ભવન્તિ । ત એવાંશાઃ બન્ધભેદાઃ પ્રકૃત્યાદયઃ સન્તિ ।

કળિકાગુડઘૃતકટુકાદિદ્રવ્યાણામૌષધમોદકરૂપેણ પરિણમને સહૈવા-નેકાકારપરિણામો ભવતિ । યથા મોદકો હિ કશ્ચિદ્ વાતપિત્તહરણશીલઃ, કશ્ચિદ્ બુદ્ધિવર્ધનઃ, કશ્ચિત્ સંમોહકારી, કશ્ચિન્મારકઃ, इत्यनेकाकारेण પરિણમતે જીવસંયોગાત્, તથા કર્મવર્ગણાયોગ્યપુદ્ગલાનામાત્મસમ્બન્ધાત્કર્મરૂપેણ પરિણામે કશ્ચિત્કર્મપુદ્ગલઃ જ્ઞાનમાવૃણોતિ, કશ્ચિદર્શનમાવૃણોતિ; અપરઃ સુખદુઃસ્વાનુભવં જનયતી ત્યાદિ યોજનીયમ્ ।

इस प्रकार जीव द्वारा ग्रहण किए हुए कर्मवर्गणा के योग्यपुद्गोका कर्मरूप परिणमन होने पर चार प्रकार के अंश उन में साथ ही उत्पन्न होते हैं । वही अंश बन्ध के प्रकृति आदि भेद कहलाते हैं ।

આટા, ગુડ, ઘી ઓર કટુક આદિ દ્રવ્યોં સે બને હુણ લડહૂં મેં એક સાથ અનેક પ્રકાર કે પરિણમન હોતે હૈં । કોઈ લાડહૂં વાત-પિત્ત કા નાશક હોતા હૈ, કોઈ બુદ્ધિવર્ધક હોતા હૈ, કોઈ સમ્મોહજનક હોતા હૈ, ઓર કોઈ ઘાતક હોતા હૈ, इस प्रकार जीव के संयोग से लड्डू અનેક આકારોં મેં પરિણત હોતા હૈ । इसी प्रकार कर्मवर्गणा-योग्य पुद्गलों का आत्मा के निमित्त से कर्मरूप परिणमन होने पर कोई कर्म, ज्ञान को आच्छादित करता है, कोई दर्शनको कोई कर्म, सुख-दुःख का अनुभव कराता है । इत्यादि सब घटा लेना चाहिए ।

ઉત્પન્ન થાય છે એ પ્રમાણે જીવદ્વારા ગ્રહણ કરેલા કર્મવર્ગણાયોગ્ય પુદ્ગલોનું કર્મરૂપ પરિણમન થવાની સાથે ચાર પ્રકારના અંશ તેમાં સાથે જ ઉત્પન્ન થાય છે તે અંશ, બંધના પ્રકૃતિ આદિ ભેદ કહેવાય છે.

હોટ, ગોળ, ઘી અને કટુક આદિ દ્રવ્યો નાંખીને બનાવેલા લાડુમાં એક સાથે અનેક પ્રકારનું પરિણમન થાય છે, કોઈ લાડુ વાત-પિત્તનો નાશ કરનાર હોય છે. કોઈ બુદ્ધિવર્ધક હોય છે. કોઈ સંમોહ ઉત્પન્ન કરનાર હોય છે. અને કોઈ ઘાતક હોય છે. એ પ્રમાણે જીવના સંયોગથી લાડુ અનેક આકારોમાં પરિણત થાય છે. તે પ્રમાણે કર્મવર્ગણાયોગ્ય પુદ્ગલોનું આત્માના નિમિત્તથી કર્મરૂપ પરિણમન થાય ત્યારે કોઈ કર્મ જ્ઞાનને આચ્છાદિત કરે છે કોઈ દર્શનને, કોઈ કર્મ સુખ-દુઃખનો અનુભવ કરાવે છે. એ પ્રમાણે સર્વ બાબતમાં ઘટાવી લેવું જોઈએ.



યથા વા-વાતહારિદ્રવ્યનિર્મિતો મોદકઃ પ્રકૃત્યા વાતં હરતિ, પિત્તોપશમ-  
કદ્રવ્યનિર્મિતો મોદકઃ પ્રકૃત્યા પિત્તં નાશયતિ, કફાપહારકદ્રવ્યનિર્મિતઃ કફં  
હરતિ । इत्येवं मोदकस्य नानाविधा प्रकृतिः । तस्यैव मोदकस्य स्थितिस्तु  
कस्यचिदेकदिनव्यापिनी, अपरस्य दिनद्वयस्थायिनी, अन्यस्य कस्यचिन्मासादि-  
कालं व्याप्य स्थितिर्भवति, ततः परं तत्तन्मोदकस्य विनाशात् । एवं मोदकस्यानु-  
भावो मधुरकटुकषायादिरूपः । रसस्तीव्रमन्दभावेन कस्यचिन्मोदकस्यैकगुणः,  
कस्यचिद् द्विगुणः, कस्यचित् त्रिगुणो भवति । प्रदेशोऽपि मोदकस्य कस्यचिदेक-  
कर्षमितः, कस्यचिद् द्विकर्षपरिमितः, कस्यचित्त्रिकर्षपरिमितो भवति ।

અથવા જૈસે-વાતહારક દ્રવ્યોં સે બના મોદક સ્વભાવ સે વાત કા નાશ કરતા હૈં,  
પિત્તકા નાશ કરને વાલે દ્રવ્યોં સે બના મોદક પિત્તકા નાશ કરતા હૈ, કફહારી દ્રવ્યોં સે બના  
મોદક કફકો દૂર કરતા હૈ, ઇસ પ્રકાર મોદક કી પ્રકૃતિ નાના પ્રકાર કી હૈ । કોઈ મોદક  
એકદિન તક હીં ઠહર સકતા હૈ, કોઈ દો દિન તક ઓર કોઈ મહીને ભરતક ઠહર સકતા હૈ,  
ઉસકે પશ્ચાત્ મોદક મેં વહ શક્તિ નહીં રહતી હૈ । ઇસી પ્રકાર કિસી મોદક કા મધુર યા  
કટુક રસ તીવ્ર હોતા હૈ કિસી કા મન્દ હોતા હૈ, કિસી મોદક મેં એકગુણ રસ હોતા હૈ,  
કિસી મેં દ્વિગુણ ઓર કિસી મેં ત્રીન ગુણ, કિસી મોદક કા પ્રદેશસમૂહ એક કર્ષ  
પરિમિત હોતા હૈ, કિસીકા દો કર્ષ પરિમિત હોતા હૈ, ઓર કિસીકા ત્રીન કર્ષ પરિમિત  
હોતા હૈ ।

અથવા-જેમ વાયુનાશક દ્રવ્યોથી બનેલા લાડુ સ્વભાવથી વાયુનો નાશ કરે છે;  
પિત્તને શાન્ત કરવા વાળા દ્રવ્યોથી બનેલા લાડુ પિત્તનો નાશ કરે છે. કફ નાશ કરનારા  
દ્રવ્યોથી બનેલા લાડુ કફને દૂર કરે છે, એ પ્રમાણે લાડુની પ્રકૃતિ જૂદા-જૂદા પ્રકારની  
છે. કોઈ લાડુ એક દિવસ સુધી રહી શકે છે, કોઈ બે દિવસ અને કોઈ મહિના સુધી  
રહી શકે છે. તે પછી લાડુમાં તે પ્રથમના જેવી શક્તિ રહેતી નથી. એ પ્રમાણે કોઈ  
લાડુનો મધુર અથવા કટુક રસ તીવ્ર હોય છે. કોઈનો મન્દ હોય છે, કોઈ લાડુમાં એક  
શુષ્ક રસ હોય છે, કોઈમાં દ્વિશુષ્ક અને કોઈમાં ત્રણ શુષ્ક રસ હોય છે. કોઈ લાડુના  
પ્રદેશસમૂહ એક કર્ષ (બે તોલા) પરિમિત હોય છે. કોઈના બે કર્ષ (ચાર તોલા)  
પરિમિત હોય છે, અને કોઈના ત્રણ કર્ષ (છ તોલા) પરિમિત હોય છે.



एवं कर्मणोऽपि कस्यचिद् ज्ञानावरणस्वभावा प्रकृतिः, अपरस्य दर्शना-  
वरणरूपा, कस्यचित् सम्यग्दर्शनादिविघातस्वभावा ।

કર્મણઃ સ્થિતિશ્ચ કસ્યચિત્ ત્રિશત્સાગરોપમકોટીકોટીરૂપા, અપરસ્ય  
કસ્યચિત્ કર્મણઃ સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટીરૂપેત્યાદિ । રસસ્તુ કસ્યચિત્  
કર્મણસ્તીવ્રઃ, કસ્યચિત્તીવ્રતરઃ, કસ્યચિત્તીવ્રતમઃ, કસ્યચિન્મન્દઃ, કસ્યચિન્મ-  
ન્દતર ઇત્યાદિ બોધ્યમ્ ।

(૧) પ્રકૃતિબન્ધ:-

॥ અષ્ટવિધ-મૂલપ્રકૃતિબન્ધ-લક્ષણમ્-

(૧) જ્ઞાનસ્ય ( વિશેષબોધસ્ય ) આવરકં કર્મ જ્ઞાનાવરણીયમ્ ।

इसी प्रकार किसी कर्म की ज्ञानको आच्छादित करने की प्रकृति है, किसीका दर्शन  
को ढँकने की है, किसी की सुख-दुःख का अनुभव कराने की प्रकृति है, और किसी की  
सम्यग्दर्शन का घात करने की है । किसी कर्म की तीस कोड़ाकोड़ी सागरोपमकी स्थिति है,  
किसी की सत्तर (७०) कोड़ाकोड़ी सागरोपम की है ।

इसी प्रकार किसी कर्म का रस तीव्र है, किसी का तीव्रतर है, किसी का तीव्रतम है ।  
किसी का रस मन्द है, किसी का मन्दतर है । इत्यादि समझ लेना चाहिए ।

(૧) પ્રકૃતિબન્ધ

(૧) જ્ઞાન અર્થાત્ વિશેષ ધર્મો કે બાધકો આચ્છાદિત કરને વાળા કર્મ જ્ઞાનાવરણ  
કહલાતા હૈ ।

આ પ્રમાણે કેઈ કર્મની જ્ઞાનને આચ્છાદિત કરવાની પ્રકૃતિ છે, કેઈની દર્શનને  
ઢાંકી દેવાની છે, કેઈની સુખ-દુઃખનો અનુભવ કરાવવાની પ્રકૃતિ છે, અને કેઈની  
સમ્યક્દર્શનનો ઘાત કરવાની પ્રકૃતિ છે.

કેઈ કર્મની ત્રીશ કોડાકોડી સાગરોપમની સ્થિતિ છે. કેઈની સીતેર (૭૦)  
કોડાકોડી-સાગરોપમની છે.

આ પ્રમાણે કેઈ કર્મનો રસ તીવ્ર છે. કેઈનો તીવ્રતર છે, અને કેઈનો  
તીવ્રતમ છે. કેઈનો રસ મંદ છે, કેઈનો મદંતર છે, ઇત્યાદિ સમજ લેવું જોઈએ.

(૧) પ્રકૃતિબન્ધ

(૧) જ્ઞાન અર્થાત્ વિશેષ ધર્મોના બોધને જે આચ્છાદિત કરવાવાળું કર્મ તે જ્ઞાના-  
વરણીય કહેવાય છે.

- (२) दर्शनस्य (सामान्यबोधस्य) आवरकं कर्म दर्शनावरणीयम् ।
- (३) सुखदुःखानुभवजनकं कर्म वेदनीयम् ।
- (४) मदिरावन्मोहजनकं कर्म मोहनीयम् ।
- (५) भवधारणकारणं कर्म आयुष्कम् ।
- (६) विशिष्टगतिजात्यादिप्राप्तिकारणं कर्म नाम ।
- (७) उत्कर्षापकर्षप्राप्तिकारणं कर्म गोत्रम् ।
- (८) दानलाभादिविघातकं कर्म अन्तरायः ।

मूलरूपः कर्मणः स्वभावोऽष्टविध इति मूलप्रकृतिरष्टविधा संक्षेपतः कथिता । अष्टानां मूलप्रकृतीनां प्रत्येकमवान्तरभेद एवोत्तरप्रकृतिः । सा च

(२) दर्शन अर्थात् सामान्य बोधको आच्छादित करने वाला कर्म दर्शनावरण है ।

- (३) सुख-दुःखको वेदन कराने वाला कर्म वेदनीय कहलाता है ।
- (४) मदिरा के समान मोह उत्पन्न करने वाला कर्म मोहनीय कहलाता है ।
- (५) भवधारणा का कारण कर्म आयुष्क कहलाता है ।
- (६) विशेष प्रकार की गति, जाति आदि की प्राप्ति का कारण नामकर्म है ।
- (७) उत्कर्ष और अपकर्ष की प्राप्ति का कारण गोत्रकर्म कहलाता है ।
- (८) दान लाभ आदि में विघ्न डालने वाला अन्तराय कर्म कहलाता है ।

कर्म का मूल स्वभाव आठ प्रकार का ही है, अतः आठ प्रकृतियों का संक्षिप्त कथन किया गया है, इन आठ प्रकृतियों के अवान्तर भेदों को उत्तर-प्रकृति कहते हैं ।

- (२) दर्शन अर्थात् सामान्य बोधने के आच्छादित करवावाणुं कर्म ते दर्शनावरणे छे.
- (३) सुख-दुःखनुं वेदन करवावावाणुं कर्म ते वेदनीयकर्म कडेवाय छे.
- (४) मदिराना समान मोह उत्पन्न करवावावाणुं कर्म ते मोहनीय कडेवाय छे.
- (५) भव-धारण करवानुं के कारण कर्म ते आयुष्य कडेवाय छे.
- (६) विशेष प्रकारनी गति-जाति आदिनी प्राप्तिनुं कारण ते नामकर्म कडेवाय छे.
- (७) उत्कर्ष अने अपकर्षनी प्राप्तिनुं कारण ते गोत्रकर्म कडेवाय छे.
- (८) दान-लाभ आदिमां विघ्न नाभववावाणुं ते अन्तराय कर्म कडेवाय छे.

कर्मना मूल स्वभाव आठ प्रकारना छे. तेथी आठ प्रकृतिओनुं संक्षिप्तमां कथन कयुं छे. ओ आठ प्रकृतिओना अवान्तर भेदोने उत्तरप्रकृति कडे छे. उदासु पुत्रोने

વિસ્તરતો જિજ્ઞાસુનાં બોધાય શાસ્ત્રે નિર્દિષ્ટા । જ્ઞાનાવરણીયાદિમૂલપ્રકૃતી-  
નામષ્ટાનામવાન્તરભેદા યથાક્રમમ્-(૧) પાંચ, (૨) નવ, (૩) દ્વૌ, (૪) અષ્ટાવિંશતિઃ,  
(૫) ચત્વારઃ, (૬) દ્વિચત્વારિંશત્, (૭) દ્વૌ, (૮) પાંચ સન્તિ । એતત્સર્વમાગમતોઽવ-  
વગન્તવ્યમ્ ।

### (૨) સ્થિતિબન્ધ:-

આત્મસંલગ્નનાં કર્મપુદ્ગલાનાં યથા જઘન્યમધ્યમોત્કૃષ્ટકાલમર્યા-  
દયાઽઽત્મપ્રદેશેષ્વવસ્થાનાં સા કાલમર્યાદા સ્થિતિબન્ધઃ । કિંચ-અધ્યસાયવિશેષ-  
ગૃહીતસ્ય કર્મદલિકસ્ય સ્થિતિકાલનિયમનં સ્થિતિબન્ધઃ ।

વેદનીયકર્મણો જઘન્યસ્થિતિર્દ્વાદશમુહૂર્તપ્રમાણા । નામ-ગોત્રકર્મણો-

વિસ્તાર સે જિજ્ઞાસુ પરુષો કી જાનકારી કે લિપે શાસ્ત્ર મેં વર્ણન કિયા ગયા હૈ । જ્ઞાનાવરણીય  
આદિ મૂલ પ્રકૃતિયોં કે અવાન્તર ભેદો કી સંખ્યા ક્રમ સે પાંચ, નૌ, દો, અઠાઈસ, ચાર,  
બચાલીસ, દો ઓરે પાંચ હૈ । ઇન સબકો આગમ સે સમજ લેના ચાહિયે ।

### (૨) સ્થિતિબન્ધ

આત્મા કે સાથ લગે હુએ કર્મપુદ્ગલ જિસ જઘન્ય મધ્યમ યા ઉત્કૃષ્ટ કાલમર્યાદા સે  
આત્મપ્રદેશોં મેં સ્થિર હૈ, ઉસ કાલમર્યાદાકો સ્થિતિબન્ધ કહતે હૈ । અથવા યોં કહિયે કિ-  
અધ્યવસાયવિશેષ દ્વારા ગ્રહણ કિયે હુએ કર્મદલિયોં કે આત્મા મેં ઠહરને કે કાલસમ્બન્ધી નિયમન  
કો સ્થિતિબન્ધ કહતે હૈ ।

વેદનીય કર્મ કી જઘન્ય સ્થિતિ બારહ મુહૂર્ત કી, તથા નામ ઓર ગોત્રકર્મ કી

જાણવા માટે શાસ્ત્રમાં વિસ્તારથી વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે. જ્ઞાનાવરણીય આદિ મૂલ  
પ્રકૃતિના અવાન્તર ભેદોની સંખ્યા ક્રમથી-પાંચ, નૌ, દો, અઠાવીસ, ચાર, બેતાલીસ,  
બે, અને પાંચ છે, આ સર્વને આગમથી સમજ લેવું જોઈએ.

### (૨) સ્થિતિબંધ

આત્માની સાથે લાગેલા કર્મપુદ્ગલ જે જઘન્ય, મધ્યમ, અને ઉત્કૃષ્ટ કાલ  
મર્યાદાથી આત્મપ્રદેશોમાં સ્થિતિ છે, તે કાલમર્યાદાને સ્થિતિબંધ કહે છે. અથવા એમ  
કહીએ કે-અધ્યવસાયવિશેષદ્વારા ગ્રહણ કરેલા કર્મદલિકોને આત્મામાં ટકી શકવાના  
કાલસંબંધી નિયમનને સ્થિતિબંધ કહે છે.

વેદનીય કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ બાર મુહૂર્તની, તથા નામ અને ગોત્ર કર્મની



જઘન્ય-સ્થિતિરુષ્ટમુહૂર્તપ્રમાણા । જ્ઞાનાવરણીય-દર્શનાવરણીય-મોહનીયા-સ્યુષ્યા-  
અન્તરાયકર્મણાં જઘન્યસ્થિતિરુષ્ટમુહૂર્તપ્રમાણા ।

જ્ઞાનાવરણીય - દર્શનાવરણીય - વેદનીયાઽ - અન્તરાયકર્મણામુત્કૃષ્ટસ્થિતિઃ  
ત્રિંશત્સાગરોપમકોટીકોટયઃ, મોહનીયકર્મણઃ સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટયઃ  
સ્થિતિરુત્કૃષ્ટા । નામ-ગોત્ર-કર્મણોર્વિંશતિસાગરોપમકોટીકોટયઃ સ્થિતિરુત્કૃષ્ટા ।  
આયુષ્યકર્મણસ્ત્રયસ્ત્રિંશત્સાગરોપમપ્રમાણા સ્થિતિરુત્કૃષ્ટા । મધ્યમા સ્થિતિસ્ત્વ-  
સંખ્યાતપ્રકારા, કષાયપરિણામતારતમ્યેન તસ્યા અસંખ્યાતમેદાત્ ।

આઠ મુહૂર્ત કી હૈ, જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય, આયુ ઓર અન્તરાય કર્મ કી  
જઘન્ય સ્થિતિ અન્તમુહૂર્ત કી હૈ ।

જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય, ઓર અન્તરાય કર્મો કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ  
કોડા-કોડી સાગરોપમ કી મોહનીય કર્મ કી સત્તર કોડા-કોડી સાગરોપમ કી, નામ ઓર  
ગોત્ર કર્મ કી વીસ કોડા-કોડી સાગરોપમ કી હૈ । આયુષ્ય કર્મ કી તેત્રીસ સાગરોપમ કી  
હૈ । મધ્યમ સ્થિતિ અસંખ્યાત પ્રકાર કી હૈ, કષાયરૂપ પરિણામો કી હીનતા ઓર અધિકતા  
કે કારણ ઉસકે અસંખ્ય પ્રકાર હોતે હૈ ।

સ્થિતિબંધકા કોષ્ટક ટીકા કે અનુસાર પૃષ્ઠ ૩૩૬ સે સમજ લેના ચાહિયે ।

આઠ મુહૂર્તની છે. જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, મોહનીય, આયુ અને અન્તરાય  
કર્મની જઘન્ય સ્થિતિ અન્તમુહૂર્તની છે.

જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય, અને અન્તરાય કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ  
કોડા-કોડી સાગરોપમની, મોહનીય કર્મની સીતેર (૭૦) કોડા-કોડી સાગરોપમની,  
નામ અને ગોત્ર કર્મની વીસ કોડા-કોડી સાગરોપમની, આયુષ્ય કર્મની તેત્રીસ  
સાગરોપમની છે. મધ્યમ સ્થિતિ અસંખ્યાત પ્રકારની છે. કષાયરૂપ પરિણામોની  
હીનતા અને અધિકતાના કારણે તેના અસંખ્ય પ્રકાર થાય છે,

સ્થિતિબંધનું કોષ્ટક ટીકાના અનુસાર પૃષ્ઠ ૩૩૬થી સમજ લેવું જોઈએ.

## स्थितिबन्ध-कोष्टकम् ।

कर्मणां नाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अबाधा- कालः	जघन्यः अबाधा- कालः	उत्कृष्टः बाधाकालः (कर्मनिषेकः)	जघन्यः बाधाकालः (कर्मनिषेकः)
(१) ज्ञाना- वरणीय- कर्मणः	३० त्रिशत्साग- रोपमकोटी- कोटयः	अन्तर्मुहूर्तः	३००० त्रिसहस्र- वर्षाणि	अन्तर्मुहूर्तः	३००० त्रिसहस्रवर्षो- न- त्रिशत्साग- रोपमकोटी- कोटयः	अन्तर्मुहूर्त- न्यूनोऽन्त- र्मुहूर्तः
(२) दर्शना- वरणीय- कर्मणः	"	"	"	"	"	"
(३) वेदनीय- कर्मणः	"	द्वादश १२ मुहूर्ताः	"	"	"	अन्तर्मुहूर्त- न्यूनः एकादश ११ मुहूर्ताः
(४) अन्तराय- कर्मणः	"	अन्तर्मुहूर्तः	"	"	"	अन्तर्मुहूर्त- न्यूनोऽन्त- र्मुहूर्तः
(५) मोहनीय- कर्मणः	७० सप्ततिसाग- रोपमकोटी- कोटयः	"	७००० सप्तसहस्र- वर्षाणि	"	सप्तसहस्र- वर्षोऽनसप्तति- सागरोपम- कोटीकोटयः ।	"

कर्मणां नाम	उत्कृष्टा स्थितिः	जघन्या स्थितिः	उत्कृष्टः अबाधा- कालः	जघन्यः अबाधा- कालः	उत्कृष्टः बाधाकालः (कर्मनिषेकः)	जघन्यः बाधाकालः (कर्मनिषेकः)
(६) नाम- कर्मणः	२० विंशति- सागरोपम- कोटीकोट्यः	अष्टौ सूहर्ताः	२००० द्विसहस्र- वर्षाणि	"	२००० द्विसहस्रवर्षेण विंशतिसाग- रोपमकोटी- कोट्यः	अन्तर्मुहूर्त- न्यूनाः सप्त सूहर्ताः
(७) गोत्र- कर्मणः	"	"	"	"	"	"
(८) आयुष्य- कर्मणः	पूर्वकोटि त्रि- भागाधिका- नि ३३ त्रय- सहस्रसाग- रोपमाणि ।	अन्त- र्मुहूर्तः	पूर्वकोटि- त्रिभागः	"	पूर्वकोटि- त्रिभागो न- त्रयस्त्रिंशत्- सागरोपमाणि	अन्तर्मुहूर्त- न्यूनोऽन्त- र्मुहूर्तः

पूर्वकोटित्रिभागः-३३ लक्षाणि, ३३ सहस्राणि; ३ शतानि, ३३ पूर्वाणि,  
२३ लक्षाणि, ५२ सहस्रकोटिवर्षाणि । अन्तर्मुहूर्तस्यासंख्यभेदाः सन्ति, तेनान्त-  
र्मुहूर्तरूपाया जघन्यस्थितेरन्तर्मुहूर्त एवाबाधाकालः, तथाऽन्तर्मुहूर्तन्यूनोऽन्तर्मु-  
हूर्तश्च बाधाकाल इति विज्ञेयम् ।



कर्मपुद्गलानामेव शुभोऽशुभो वा घात्यघाती वा यो रसो विपाकः  
सोऽनुभावबन्धः । कर्मणां विशिष्टो विविधो वा पाको विपाकः । कर्मबन्धस्य  
फलं विपाकस्तस्योदयोऽनुभाव इति बोध्यम् । किञ्च-कर्मणां विविधफलदानशक्ति-  
र्विपाकः सोऽनुभावः ।

बन्धकारणस्य कषायपरिणामस्य तीव्रमन्दभावानुसारेण प्रत्येककर्मणि तीव्रमन्दफलदानशक्तिः प्रादुर्भवति । इदं च फलोत्पादनसामर्थ्यम्-अनुभवः, तत्तत्फलानुभवनं चेति ।

कर्मपुद्गलों का शुभ या अशुभ अथवा घाती या अघाती रूप जो रस है वही अनुभाव कहलता है। गृहीत कर्मपुद्गलों में यह रस उत्पन्न हो जाना अनुभाव या अनुभाग बन्ध है। कर्मों का विशिष्ट या विविध प्रकार का पाक विपाक कहलाता है। तात्पर्य यह है कि—कर्म का फल विपाक है, और उसका उदय अनुभाव कहा जाता है। अथवा कर्मों की भौति-भौतिकी फल देने की शक्ति को विपाक कहते हैं, और वही अनुभाव है, और तत्तत्फल का अनुभव भी अनुभाव है।

बन्ध के कारण कषायरूप परिणाम की तीव्रता और मन्दता के अनुसार प्रत्येक कर्म में तीव्र या मन्द फल देने की शक्ति उत्पन्न हो जाती है, इस फल को उत्पन्न करने का सामर्थ्य अनुभाव है ।

કર્મપુફગલોનો શુભ અથવા અશુભ, અથવા-ઘાતી કે અઘાતીરૂપ જે રસ છે તે અનુભાવ કહેવાય છે ગૃહીત કર્મપુફગલોમાં એ રસનું ઉત્પન્ન થવું તે અનુભાવ, અથવા અનુભાગ ખંધ છે. કર્મોનો વિશિષ્ટ અથવા વિવિધ પ્રકારનો પાક તે વિપાક કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે:-કર્મનું ફલ તે વિપાક છે, અને તેનો ઉદય તે અનુભાવ કહેવાય છે, અથવા કર્મોની તરેહ-તરેહની રૂપ દેવાની શક્તિ તેને વિપાક કહે છે અને તેજ અનુભાવ છે અને તે તે રૂપનો અનુભવ પણ અનુભાવ છે. \*

બંધનાં કારણ કષાયરૂપ પરિણામની તીવ્રતા અને મન્દતાના પ્રમાણે પ્રત્યેક કર્મોમાં તીવ્ર અથવા મંદ ફલ દેવાની શક્તિ ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, તે ફળને ઉત્પન્ન કરવાનું સામર્થ્ય તે અનુભાવ છે.

\* “अणुभागे, अणुभावे, विवागे, रसे-त्ति एगद्धा” अनुभागोऽनुभावो, विपाको रसः, इत्येकार्थकाः । अनुभावा, अनुभाव, विपाकं च रसं ये मधा येकार्थकं छे.

કર્મણઃ ફલપ્રદાનશક્તિરુપોડ્યમનુભાવો યત્કર્મનિષ્ઠસ્તત્કર્મસ્વભાવાનુસારં ફલં પ્રયચ્છતિ, ન ત્વન્યકર્મસ્વભાવાનુસારમ્ । યથા-જ્ઞાનાવરણીયકર્મણોડ્યુભાવ-સ્તત્કર્મસ્વભાવાનુરૂપં જ્ઞાનાવરણમેવ તીવ્રં મન્દં વા ફલં સમુત્પાદયતિ, ન તુ દર્શનાવરણીય-વેદનીયાદિ-કર્મપ્રકૃત્યનુસારં દર્શનાવરણં સુખદુઃખાનુભવાદિરૂપં ફલમ્ । એવં દર્શનાવરણીયકર્મણોડ્યુભાવસ્તીવ્રમન્દાદિરૂપેણ દર્શનાવરણમેવ ફલં દદાતિ, ન તુ જ્ઞાનાવરણાદિરૂપમન્યકર્મપ્રકૃત્યનુસારમ્ ।

અનુભાવબન્ધસ્ય ચાયં કર્મપ્રકૃત્યનુરૂપેણૈવ ફલદાનનિયમોડપિ જ્ઞાના-

કર્મ કા ફલદાન-શક્તિરૂપ અનુભાવ જિસ કર્મ મેં રહતા હૈ વહ કર્મ અપને સ્વભાવ કે અનુસાર હી ફલ દેતા હૈ-દૂસરે કર્મ કે સ્વભાવ કે અનુસાર નહીં । જૈસે જ્ઞાનાવરણીય કર્મ કા અનુભાવ જ્ઞાનાવરણીય કે સ્વભાવ કે અનુસાર હી હોતા હૈ અર્થાત્ વહ તીવ્ર યા મન્દ રૂપ મેં જ્ઞાન કા આચ્છાદન હી કરતા હૈ । ડસ સે દર્શનાવરણીય યા વેદનીય કર્મ કી પ્રકૃતિ કે અનુસાર દર્શન કા આવરણ અથવા સુખ-દુઃખ કા વેદન નહીં હોતા । ઇસી પ્રકાર દર્શનાવરણીય કર્મ કા અનુભાવ તીવ્ર યા મન્દ રૂપ મેં દર્શન કા આવરણ કરના હી હૈ, જ્ઞાન કા આવરણ કરના યા અન્ય કર્મપ્રકૃતિ કે અનુસાર ફલ દેના નહીં ।

અનુભાવબન્ધ કા અપની કર્મપ્રકૃતિ કે અનુસાર ફલ દેને કા યહ નિયમ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ મૂલપ્રકૃતિયોં મેં હી લાગૂ હોતા હૈ; ઉત્તરપ્રકૃતિયોં કે લિપ્

કર્મના ફલદાનશક્તિરૂપ અનુભાવ જે કર્મમાં રહે છે, તે કર્મ પોતાના સ્વભાવ પ્રમાણેજ ફલ આપે છે, બીજા કર્મના સ્વભાવ પ્રમાણે નહિ. જેવી રીતે કે-જ્ઞાનાવરણીય કર્મના અનુભાવ જ્ઞાનાવરણીયના સ્વભાવના પ્રમાણેજ હોય છે, અર્થાત્-તે તીવ્ર અથવા મંદરૂપમાં જ્ઞાનનુંજ અચ્છાદન કરે છે, તેનાથી દર્શનાવરણીય અથવા વેદનીય કર્મની પ્રકૃતિ અનુસાર દર્શનનું આવરણ અથવા સુખ-દુઃખનું વેદન થતું નથી. એ પ્રમાણે દર્શનાવરણીય કર્મનો અનુભાવ તીવ્ર અથવા મંદરૂપમાં દર્શનનું આવરણ કરતું તેજ છે, પરંતુ જ્ઞાનનું આવરણ કરતું અથવા અન્ય કર્મપ્રકૃતિ અનુસાર ફળ આપતું તે નથી.

અનુભાવ બંધનો પોતાની કર્મપ્રકૃતિના અનુસાર ફળ આપવાનો આ નિયમ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ મૂલપ્રકૃતિઓમાંજ લાગુ થાય છે, પરંતુ ઉત્તર પ્રકૃતિઓ માટે

વરણીયાઘ્ણવિધમૂલપ્રકૃતિષ્વેવ પ્રવર્તે, નતૂત્તરપ્રકૃતિષુ । કસ્યાપિ મૂલ-  
પ્રકૃતિરૂપકર્મવન્ધસ્ય કાચિદુત્તરપ્રકૃતિસ્તદીયેતરોત્તરપ્રકૃતિરૂપેણ વિપરિણતા  
ભવતિ, કર્મપુદ્ગલસ્ય તાદૃશપરિણમનસામર્થ્યાત્ । તત્ર પ્રાક્તનોત્તરપ્રકૃતિગતાનુ  
ભાવઃ પરિવર્તિતોત્તરપ્રકૃતિસ્વભાવાનુરૂપં તીવ્રં મન્દં વા ફલં પ્રદત્તે ।

યથા—મતિજ્ઞાનાવરણીયં યદા શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયાદિસજાતીયોત્તર-  
પ્રકૃતિરૂપં પ્રાપ્નોતિ તદા મતિજ્ઞાનાવરણીયાનુભવોઽપિ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયાદિસ્વભા-  
વાનુરૂપમેવ શ્રુતજ્ઞાનાદીનામાવરણં વિધત્તે ।

ઉત્તરપ્રકૃતિષુ કતિચિત્ સજાતીયા અપિ પ્રકૃતયો નાન્યરૂપેણ પરિણતા  
ભવન્તિ । યથા-દર્શનમોહચારિત્રમોહરૂપેણ ન પરિણમતિ; તથા ચારિત્રમોહોઽપિ ન  
યદ્ નિયમ નહીં હૈ । કિસી મી મૂલપ્રકૃતિ કી કોઈ ઉત્તરપ્રકૃતિ ઉસી મૂલપ્રકૃતિ  
કી કિસી દૂસરી ઉત્તરપ્રકૃતિ કે રૂપ મેં મી પરિણત હો સકતી હૈ, ક્યોં કિ કર્મપુદ્ગલ  
મેં હિસ પ્રકાર કે પરિણમન કી શક્તિ વિદ્યમાન હૈ । વહાં પહેલે વાલી ઉત્તરપ્રકૃતિ મેં  
રહા હુઆ અનુભાવ બદલી હુઈ ઉત્તરપ્રકૃતિ કે સ્વભાવ કે અનુસાર તીવ્ર યા મન્દ ફલ  
દેતા હૈ ।

જૈસે—મતિજ્ઞાનાવરણીય જબ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયસજાતીય ઉત્તરપ્રકૃતિ કે રૂપ મેં પલટતા  
હૈ તબ મતિજ્ઞાનાવરણીય કા અનુભાવ મી શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય કે સ્વભાવ કે અનુસાર શ્રુતજ્ઞાન  
કા આવરણ કરતા હૈ ।

ઉત્તરપ્રકૃતિયોં મેં કુછ ઁસી મી પ્રકૃતિયાં હૈં જો સજાતીય હોતે હુઁ મી  
અન્યરૂપ મેં પલટતી નહીં હૈં, જૈસે—દર્શનમોહનીય, કમી ચારિત્રમોહનીય કે રૂપ મેં નહીં

આ નિયમ નથી. કોઈ પણ મૂલપ્રકૃતિની કોઈ ઉત્તરપ્રકૃતિ તે મૂલપ્રકૃતિની કોઈ  
બીજી ઉત્તર પ્રકૃતિના રૂપમાં પણ પરિણત થઈ શકે છે, કારણકે કર્મપુદ્ગલમાં એ પ્રમાણે  
પરિણમનની શક્તિ વિદ્યમાન છે. ત્યાં પ્રથમ વાળી ઉત્તરપ્રકૃતિમાં રહેલો અનુભાવ  
બદલી ગયેલી ઉત્તર પ્રકૃતિના સ્વભાવ અનુસાર તીવ્ર અથવા મંદ ફલ આપે છે.

જેમ—મતિજ્ઞાનાવરણીય ત્યારે શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય—સજાતીય ઉત્તર પ્રકૃતિના  
રૂપમાં પલટાય છે, ત્યારે મતિજ્ઞાનાવરણીયનો અનુભાવ પણ શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયના સ્વભાવ  
પ્રમાણે શ્રુતજ્ઞાનનું આવરણ કરે છે.

ઉત્તરપ્રકૃતિઓમાં કેટલીક એવી પણ પ્રકૃતિઓ છે કે જે સજાતીય હોવા છતાંય  
પણ અન્યરૂપમાં પલટતી નથી. જેવી રીતે—દર્શનમોહનીય કોઈ વખત ચારિત્રમોહનીયના



दर्शनमोहरूपेण, एवं यथा नारकायुष्यं तिर्यगायुष्यरूपेण न परिणमति तथा तदा-  
युष्यमपि न पुनरन्यायुष्यरूपेण ।

एतत्सर्वं प्रकृतिबन्धविषये परिवर्तनं यथा भवति तथाऽध्यवसाय-  
सामर्थ्यात् स्थितिरसयोरपि परिवर्तनं भवति । तीव्रादिर्मन्दादिभावेन परिण-  
मति, मन्दादिरपि तीव्रादिभावेन परिणमति । एवमुत्कृष्टा स्थितिर्जघन्यरूपेण  
परिणमति, जघन्या चोत्कृष्टरूपेण ।

अनुभावानुसारं तीव्रं मन्दं वा यस्य कर्मणः फलमनुभूतं भवति चेत्  
तदा तत्कर्मप्रदेशा आत्मप्रदेशेभ्योऽपगता भवन्ति, न पुनस्ते कर्मपुद्गलाः संलग्ना  
भवन्ति ।

बदलता, और चारित्रमोहनीय दर्शनमोहनीय के रूप में नहीं पलटता । उसी प्रकार  
नरकायु कभी तिर्यचायु के रूप में नहीं पलटती और तिर्यचायु किसी अन्य आयुके रूप  
में नहीं बदलती ।

यह सब परिवर्तन जैसे प्रकृतिबन्ध के विषय में होता है उसी प्रकार  
अध्यवसाय की शक्ति से स्थिति और रस में भी होता है । कभी तीव्र रस, मंद रस के  
रूप में बदल जाता है, और कभी मन्द रस, तीव्र रस के रूप में परिवर्तित हो जाता  
है । इसी प्रकार उत्कृष्ट स्थिति जघन्यरूप में और जघन्य स्थिति उत्कृष्टरूप में  
बदल जाती है ।

अनुभाव के अनुसार जिस कर्म का तीव्र या मन्द फल भोग लिया जाता है,  
उस कर्म के प्रदेश आत्मप्रदेशों से हट जाते हैं—फिर वे आत्मा के साथ नहीं  
लगे रहते हैं ।

इपમાં બદલાતી નથી, અને ચારિત્રમોહનીય દર્શનમોહનીયનાં ઇપમાં બદલાતી નથી.  
એ પ્રમાણે નરકાયુ કોઈ વખત પણ તિર્યચ આયુનાં ઇપમાં પલટાતું નથી, અને તિર્યચાયુ  
બીજા કોઈ આયુનાં ઇપમાં પલટાતું નથી.

આ તમામ પરિવર્તન જેવી રીતે પ્રકૃતિબંધના વિષયમાં થાય છે, તે પ્રમાણે  
અધ્યવસાયની શક્તિથી સ્થિતિ અને રસમાં પણ થાય છે—ક્યારેક તીવ્રરસ, મંદરસના  
ઇપમાં બદલાઈ જાય છે, અને ક્યારેક મંદરસ, તીવ્રરસના ઇપમાં પરિવર્તિત થઈ જાય  
છે. એ પ્રમાણે ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ જઘન્ય ઇપમાં અને જઘન્ય સ્થિતિ ઉત્કૃષ્ટ ઇપમાં  
બદલાઈ જાય છે.

અનુભાવપ્રમાણે કોઈ કર્મનું તીવ્ર અથવા મંદ ફલ ભોગવી લેવાય તો તે કર્મના  
પ્રદેશ આત્મપ્રદેશોથી હટી જાય છે—પછી તે આત્માની સાથે લાગેલા રહેતા નથી.

इदमत्र तत्त्वम्-कर्मणां फलं विविधं भवति । कर्मैव मूलप्रकृतिः । सर्वासां-  
मूलप्रकृतीनां फलविविधत्वं तथाऽन्यथा चेति प्रकारद्वयेन भवति ।

येनाध्यवसायप्रकारेण यादृक्स्वभावं कर्म बद्धं, तत् तथा=तेनैव प्रकारेण  
अन्यथा च=प्रकारान्तरेणापि विपच्यते=तस्य विपाको भवति । स च तीव्र-  
मन्दाद्यवस्थाभेदेन शुभस्तथाऽशुभोऽपि । तत्र कदाचिच्छुभमप्यशुभरसतयाऽनु-  
भूतये कर्म, अशुभं च शुभरसतयेति बोध्यम् ।

सकषायजीवेन मनोवागादिद्वारेण क्रियाविशेषस्य कर्ता भिन्नभिन्नस्वभा-  
वानां कर्मपुद्गलानां स्वभावानुसारं तत्तत्परिमाणविभागेन सम्बन्धः प्रदेशबन्धः ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ કર્મોં કા ફલ વિવિધ પ્રકાર કા હોતા હૈ । કર્મ હી મૂલ  
પ્રકૃતિ હૈ । સમસ્ત મૂલપ્રકૃતિયોં કા ફલ ઉસી રૂપ મેં યા અન્યથા રૂપ મેં દો પ્રકાર  
સે હોતા હૈ ।

જિસ પ્રકાર કે અધ્યવસાય સે જિસ સ્વભાવ વાલા કર્મ બંધા હૈ વહ ઉસી રૂપ મેં  
યા અન્યથા રૂપ મેં ફલ દેતા હૈ । વહ ફલ તીવ્ર યા મન્દ અવસ્થા-ભેદ સે શુભ મી હોતા હૈ  
ઔર અશુભ મી હોતા હૈ । કમી શુભ મી અશુભ રસ કે રૂપ મેં ઔર કમી અશુભ શુભ રસ કે  
રૂપ મેં ભોગા જાતા હૈ ।

#### (૪) પ્રદેશબન્ધ—

મન વચન આદિ કે દ્વારા ક્રિયાવિશેષ કરને વાલે કષાયયુક્ત જીવ કે સાથ ભિન્ન-ભિન્ન  
સ્વભાવ વાલે કર્મપુદ્ગલોં કા સ્વભાવ કે અનુસાર અમુક-અમુક પરિમાણ વિભાગ કે સાથ  
સમ્બન્ધ હોના પ્રદેશબન્ધ હૈ ।

તાત્પર્ય એ છે કે:- કર્મોંનાં ફલ વિવિધ પ્રકારના હોય છે. કર્મજ મૂલપ્રકૃતિ  
છે. તમામ મૂળપ્રકૃતિઓનું ફલ તે રૂપમાં અથવા બીજાંરૂપમાં, એમ બે પ્રકારથી હોય છે.

બે પ્રકારના અધ્યવસાયથી બે સ્વભાવવાળાં કર્મ બાંધ્યાં છે તે એજ રૂપમાં  
અથવા બીજા રૂપમાં ફલ આપે છે. તે ફલ તીવ્ર અથવા મંદ અવસ્થા-લેદથી શુભ  
પણ હોય છે, અને અશુભ પણ હોય છે, કેઈ વખત શુભ પણ અશુભ રસના રૂપમાં  
અને કેઈ વખત અશુભ તે શુભ રસના રૂપમાં ભોગવવામાં આવે છે.

#### (૪) પ્રદેશબન્ધ—

મન, વચન આદિ દ્વારા ક્રિયા-વિશેષ કરવા વાળા કષાયયુક્ત જીવની સાથે ભિન્ન-  
ભિન્ન સ્વભાવ વાળા કર્મપુદ્ગલોના સ્વભાવ અનુસાર અમુક-અમુક પરિમાણવિભાગની  
સાથે સમ્બન્ધ થવો તે પ્રદેશબન્ધ છે.

(१) ज्ञानावरणीयादिकर्मणां कारणीभूताः, (२) सर्वदिक्ष्ववस्थिताः, (३) तीव्रमन्दादिभेदाद् मनोवाक्कायक्रियाविशेषसंयोगात् कर्मवर्गणायोग्याः पुद्गलाः सर्वात्मप्रदेशेषु बद्धा भवन्ति । (४) औदारिक-वैक्रिया-ऽऽहारक-तैजस-भाषा-श्वासोच्छ्वास-मनोवर्गणाऽपेक्षयाऽपि सूक्ष्मपरिणतिरूपा एव कर्मवर्गणा-योग्याः बद्धाः भवन्ति, न तु बादराः । (५) तत्रापि त एव पुद्गला बद्धा भवन्ति, ये खलु यत्राकाशे जीवोऽवगाढस्तत्रैव वर्तमानाः, न तु तद्बहिःक्षेत्रवर्तिनः ।

(६) तथाविधा अपि पुद्गलाः स्थिता एव बद्धा भवन्ति, न तु गतिपरिणताः, प्रचलितस्वभावत्वेन बन्धानर्हत्वात् । (७) असंख्यातप्रदेशिनो जीवस्यैकैकः

(१) ज्ञानावरणीय आदि कर्मों के कारणभूत, (२) समस्त दिशाओं में स्थित, (३) तीव्र मन्द आदि के भेद से मन, वचन और काय की क्रियाविशेष के संयोग से कर्मवर्गणा के योग्य पुद्गल समस्त आत्मप्रदेशों में बद्ध हो जाते हैं । (४) औदारिक वैक्रिय, आहारक, तैजस, भाषा, श्वासोच्छ्वास, और मनोवर्गणा की अपेक्षा भी सूक्ष्म परिणतिरूप कर्मवर्गणा के योग्य पुद्गल ही बंधते हैं, बादर नहीं बंधते । (५) उन में भी वही पुद्गल बंधते हैं जो एकक्षेत्रावगाढ हों, अर्थात् जिन आकाशप्रदेशों में जीव है उन्हीं आकाशप्रदेशों में विद्यमान हों, बाहर के क्षेत्र में अगवाहन करने वाले नहीं बंधते । (६) ऐसे पुद्गल भी स्थित ही बंधते हैं चलते-फिरते हुए पुद्गल नहीं बंधते, चलित स्वभाव वाले होने के कारण वे बन्ध के योग्य नहीं हैं, (७) असंख्यातप्रदेशी जीव का

(१) ज्ञानावरणीय आदि कर्मोंना कारणभूत, (२) समस्त दिशाओंमां स्थित, (३) तीव्र, मंद आदिना भेदशी मन, वचन अने कायानी क्रिया-विशेषना संयोगशी कर्मवर्गणाना योग्य पुद्गल समस्त आत्मप्रदेशोंमां बद्ध थछ जाय छे, (४) औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, भाषा, श्वासोच्छ्वास, अने मनोवर्गणानी अपेक्षाअ पणु सूक्ष्मपरिणतिरूप कर्मवर्गणाना योग्य पुद्गलअ बांधे छे; बादर बांधता नथी, (५) ओमां पणु ते पुद्गल बांधे छे के अे ओक क्षेत्रावगाढ होय, अर्थात्-अे आकाशप्रदेशोंमां अव छे तेअ आकाशप्रदेशोंमां विद्यमान होय. अहारना क्षेत्रमां अवगाढन करवावाणा बांधता नथी. (६) ओवा पुद्गल पणु अे स्थिर होय तो बांधाय छे, पणु चलता करतां पुद्गलओ बांधता नथी, कारण के चलित स्वभाववाणा होवाना कारणे ते बांधने योग्य नथी. (७) असंख्यात प्रदेशी अवने



પ્રદેશોઽનન્તર્જ્ઞાનાવરણીયકર્મસ્કન્ધૈર્વદ્ધઃ । એવમનન્તૈર્દર્શનાવરણીયાદિકર્મસ્કન્ધૈર્વદ્ધઃ ।  
(૮) તત્ર તે સ્કન્ધા અપિ પ્રત્યેકમનન્તાનન્તપ્રદેશિનઃ સન્તિ । ઇતિ પ્રદેશબન્ધેઽષ્ટ  
હેતવઃ ।

### પુણ્યપાપકર્મનિરૂપણમ્—

જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધં પૌદ્ગલિકં કર્મ પ્રત્યેકં દ્વિવિધમ્—પુણ્યપાપભેદાત્ ।  
શુભંકર્મ—પુણ્યમ્ । અશુભં કર્મ—પાપમ્ । નનુ વિનાઽપિ પુણ્યપાપાભ્યાં સ્વભાવતઃ  
એવ જગદ્વૈચિત્ર્યં જાયતે કિં પુનસ્તત્કલ્પનયા ? ઉચ્યતે—શૃણુ—સ્વભાવાદેવ હિ  
ત્રયો વિકલ્પાઃ સમુત્પદ્યન્તે યથા—(૧) સ્વભાવઃ કિં વસ્તુરૂપઃ ? (૨) કારણાભાવો  
એક—એક પ્રદેશ અનન્ત જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મસ્કન્ધોં કે સાથ બંધતા હૈ, ઉસી પ્રકાર  
અનન્તદર્શનાવરણીય આદિ કર્મસ્કન્ધોં કે સાથ મી બંધતા હૈ । (૮) કર્મ કે વે સ્કન્ધ મી  
અનન્તાનન્તપ્રદેશી હોતે હૈ । પ્રદેશબન્ધ મેં યે આઠ હેતુ હૈ ।

### પુણ્યકર્મ ઓર પાપકર્મ—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ પ્રત્યેક પૌદ્ગલિક કર્મ દો-દો પ્રકાર કા હૈ, પુણ્યરૂપ ઓર  
પાપરૂપ । શુભ કર્મ પુણ્ય ઓર અશુભ પાપ કહલાતા હૈ ।

શુદ્ધા—પુણ્ય ઓર પાપ કે વિના હી સ્વભાવસે જગત્ કી વિચિત્રતા હો સકતી હૈ, ફિર  
પુણ્ય પાપ કી કલ્પના કરને સે ક્યા લાભ હૈ ? ।

સમાધાન—સ્વભાવવાદ મેં ત્રીન વિકલ્પ હો સકતે હૈ, જૈસે સ્વભાવ કોઈ  
વસ્તુ હૈ ?, યા કારણ કા અભાવ હી સ્વભાવ કહલાતા હૈ ?, અથવા સ્વભાવ કિસી

એક એક પ્રદેશ અનન્ત જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મસ્કન્ધોની સાથે પણ બંધાય છે. એ  
પ્રમાણે દર્શનાવરણીય આદિ કર્મસ્કન્ધોની સાથે પણ બંધાય છે. (૮) કર્મના તે સ્કન્ધ  
પણ અનન્તાનન્તપ્રદેશી હોય છે. પ્રદેશ બંધમાં આ આઠ હેતુ છે.

### પુણ્યકર્મ અને પાપકર્મ—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ પ્રત્યેક પૌદ્ગલિક કર્મ બે-બે પ્રકારના છે—(૧) પુણ્યરૂપ અને  
(૨) પાપરૂપ શુભ કર્મ—પુણ્ય અને અશુભ કર્મ પાપ કહેવાય છે.

શંકા—પુણ્ય અને પાપ વિનાજ, સ્વભાવથી જગતની વિચિત્રતા હોઈ શકે છે,  
તો પછી પુણ્ય પાપની કલ્પના કરવાથી શું લાભ છે ?

સમાધાન:—સ્વભાવવાદમાં ત્રણ વિકલ્પ (તર્ક—વિતર્ક) થઈ શકે છે; જેમકે સ્વભાવ  
શું કોઈ વસ્તુ છે ? અથવા કારણનો અભાવજ સ્વભાવ કહેવાય છે ? અથવા સ્વભાવ કોઈ

वा स्वभावः ? अथवा (३) स्वभावः कोऽपि वस्तुधर्मः ? । इति विकल्पत्रयगत-  
दोषाणां कथनं पूर्वं कृतमासीदतो विरम्यते, तस्मात् पुण्यपापे कर्मणी पौद्गलिके  
विद्येते, इत्यवश्यं स्वीकरणीयम् ।

पुण्यपापसद्भावे युक्तीस्तावत् प्रदर्शयामः—

पुण्यपापे द्वे अपि भिन्ने स्वतन्त्रे स्तः, तत्कार्यभूतयोः सुखदुःखयो-  
यौगपद्येनानुभवाभावात्, अतोऽनेनैव भिन्नकार्यदर्शनेन तत्कारणभूतयोः  
पुण्यपापयोर्भिन्नताऽनुमीयते । जीवकर्मणोः परिणामरूपे पुण्यपापे कारणतः  
कार्यतश्चानुमीयते ।

दानादिक्रियाणां हिंसादिक्रियाणां च कारणरूपत्वात् तत्कार्यरूपपुण्य-

वस्तु का धर्म है ? इन तीनों विकल्पों में आने वाले दोषों का कथन पहले किया जा चुका  
है, अत एव यहाँ पुनरुक्ति नहीं की जाती । अत एव पुण्य और पाप को पौद्गलिक कर्म ही  
स्वीकार करना चाहिए ।

पुण्य और पाप के सद्भाव में युक्तियाँ दिखलाते हैं—

पुण्य और पाप दोनों भिन्न और स्वतन्त्र हैं, क्यों कि उनका फल सुख और दुःख  
एक साथ नहीं भोगा जाता । कार्य की यह भिन्नता देखने से उनके कारणभूत पुण्य और  
पाप की भिन्नता का अनुमान होता है । जीव और कर्म के परिणामरूप पुण्य और पाप का  
अनुमान कारण से और कार्य से होता है ।

दानादि क्रियाएँ और हिंसा आदि क्रियाएँ कारण हैं, अत एव उनका कार्य

वस्तुनो धर्म छे ? आ त्रल्लेय विकल्पोमां आववावाणा दोषोनु कथन प्रथम कही यूक्या  
छीअ, अटला कारणथी अहि पुनरुक्ति करता नथी. अे भाटे पुण्य अने पापने  
पौद्गलिक कर्मज स्वीकार करवे. जेधअे.

पुण्य अने पापना सद्भावमां युक्तियो अतावे छे—

पुण्य अने पाप अन्ने जूदा अने स्वतंत्र छे, कारण छे तेनुं इण सुख अने  
दुःख अेक साथे लोगववामां आवतुं नथी. कार्यनी आ भिन्नता जेवाथी तेना कारणभूत  
पुण्य अने पापनी भिन्नतानुं अनुमान थाय छे. एव अने कर्मना परिणामरूप पुण्य  
अने पापनुं अनुमान कारणथी अने कार्यथी थाय छे.

दान आदि क्रियाओ अने हिंसा आदि क्रियाओ कारण छे, ते भाटे तेनुं कार्य

પાપાત્મકો જીવકર્મપરિણામોઽસ્તિ । યથા-કૃષ્યાદિક્રિયાણાં શાલિ-યવ-ગોધૂમા-  
દિકં નિયમેન ફલં ભવતિ । ઇદમનુમાનં કારણતો ભવતિ ।

एवं कार्यतोऽपि कारणस्यानुमानं भवति । यथा-अस्ति शरीरादीनां  
कारणं, तेषां कार्यरूपत्वात् । यथा-घटस्य मृदण्डचक्रादिसामग्रीसहितः  
कुम्भकारः कारणम् ।

न च, दृष्ट एव मातापितादिकः शरीरादीनां कारणमस्तु, इति वाच्यम्,  
दृष्टकारणस्य समानत्वेऽपि मुरूपकुरूपादिभावेन शरीरादीनां वैचित्र्यदर्शनात्तस्य

भी અવશ્ય હોના યાહિય, ઔર વહી કાર્ય જીવ ઔર કર્મ કા પરિણામરૂપ પુણ્ય ઔર પાપ  
હૈ । જૈસે કૃષિ આદિ ક્રિયાઓં કા શાલિ, જૌ, ગેહૂં આદિ ફલ નિયમ સે હોતા હૈ । યહ  
કારણ સે અનુમાન હૈ ।

इसी प्रकार कार्य से भी कारण का अनुमान होता है, जैसे शरीर आदि का कारण  
अवश्य है, क्यों कि वह कार्य है, जैसे घटका कारण मिट्टी; दण्ड, चक्र आदि सामग्री से युक्त  
कुंभार होता है ।

શક્ટા-શરીર આદિ કા કારણ પ્રત્યક્ષ સે પ્રતીત હોને વાલે માતા-પિતા આદિ હી  
માનના યાહિય ।

समाधान-दिखाई देने वाले कारण की समानता होने पर भी शरीर में सुरुपता  
कुरूपता आदि की विचित्रता देखी जाती है. अतः उन्हें कारण नहीं माना जा सकता,

પણ અવશ્ય હોયું જોઈએ, અને તે કાર્ય જીવ અને કર્મના પરિણામરૂપ પુણ્ય અને  
પાપ છે; જેવી રીતે ખેતી આદિ ક્રિયાઓમાં શાલિ-ડાંગર, જવ, ઘઉં આદિ ફલ  
નિયમથી થાય છે. આ કારણથી અનુમાન છે.

આ પ્રમાણે કાર્યથી પણ કારણનું અનુમાન થાય છે. જેમ શરીર આદિનું કારણ  
જરૂર છે; કારણ કે તે કાર્ય છે, જેવી રીતે ઘટનું કારણ માટી, ઢંડ, ચક્ર-ચાકળો,  
આદિ સામગ્રીથી યુક્ત કુંભાર હોય છે.

શંકા-શરીર આદિનું કારણ પ્રત્યક્ષથી જણાતા માતા-પિતા આદિ માનવા જોઈએ.

સમાધાન:-દેખાવાવાળા કારણની સમાનતા હોવા છતાંય પણ શરીરમાં સુરૂપતા  
કુરૂપતા આદિની વિચિત્રતા જોવામાં આવે છે, તેથી તેમને કારણ માની શકાશે નહિ.



તત્કારણત્વાસિદ્ધેઃ । તદ્વૈચિત્ર્યસ્ય ચાદૃષ્ટકર્મારવ્યહેતું વિનાઽભાવાત્ । શુભ-  
શરીરાદીનાં પુણ્યકાર્યત્વાત્ , અશુભશરીરાદીનાં પાપકાર્યત્વાच्च पुण्यपापभेदेन  
तस्य कर्मणो द्वैविध्यं सिद्धम् ।

પુણ્યં પાપં ચેતિ દ્વે કર્મણી ભિન્ને સ્વતન્ત્રરूपे स्तः, इत्यत्रागमोऽपि  
प्रमाणम् । उक्तञ्च स्थानाङ्गसूत्रे-“ एणे पुण्णे । एणे पावे ” इति । एवमेव  
समवायाङ्गेऽपि ।

सर्वधातिप्रकृतयः—

(૧) કેવલજ્ઞાનાવરણીયમ્ । (૨) કેવલદર્શનાવરણીયમ્ । (૩) નિદ્રા,  
(૪) નિદ્રાનિદ્રા, (૫) પ્રચલા, (૬) પ્રચલાપ્રચલા, (૭) સ્ત્યાનર્દિઃ,  
(૮-૧૧) અનન્તાનુબન્ધિક્રવાયચતુષ્ટયમ્, (૧૨-૧૫) અપ્રત્યાખ્યાનકવાયચતુષ્ટયમ્,

यह विचित्रता अदृष्ट कारण—कर्म के बिना नहीं हो सकती, शुभ शरीर आदि पुण्य का  
कार्य है और अशुभ शरीर आदि पाप का कार्य है । अतः पुण्य और पाप के भेद से  
कर्म दो प्रकार का सिद्ध होता है ।

પુણ્યકર્મ ઔર પાપકર્મ દોનો સ્વતન્ત્ર-ભિન્ન હૈ, इस विषय में आगम भी प्रमाण है ।  
स्थानाङ्ग सूत्र में कहा है-‘ पुण्य एक है पाप एक है ’ । इसी प्रकार समवायाङ्गसूत्र में  
भी कहा है ।

सर्वधाती प्रकृतियाँ—

(૧) કેવલજ્ઞાનાવરણીય, (૨) કેવલદર્શનાવરણીય, (૩) નિદ્રા, (૪) નિદ્રાનિદ્રા,  
(૫) પ્રચલા, (૬) પ્રચલાપ્રચલા, (૭) સ્ત્યાનર્દિઃ, (૮-૧૧) અનન્તાનુબન્ધી-ક્રોધ, માન,  
માયા, લોભ, (૧૨-૧૫) અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, (૧૬-૧૯) પ્રત્યાખ્યાના-

આ વિચિત્રતા અદૃષ્ટ કારણ-કર્મના વિના હોઈ શકે નહિ. શુભ શરીર આદિ પુણ્યનું  
કાર્ય છે. અને અશુભ શરીર આદિ પાપનું કાર્ય છે. તે કારણથી પુણ્ય અને પાપના  
ભેદથી કર્મ બે પ્રકારનાં સિદ્ધ થાય છે.

પુણ્યકર્મ અને પાપકર્મ બન્ને સ્વતન્ત્ર-ભિન્ન છે. આ વિષયમાં આગમ પણ  
પ્રમાણ છે, સ્થાનાંગ સૂત્રમાં કહ્યું છે-“ પુણ્ય એક છે, પાપ એક છે.” એ જ  
પ્રમાણે સમવાયાજ્ઞ-સૂત્રમાં પણ કહ્યું છે.

सर्वधाती प्रकृतियाँ—

(૧) કેવલજ્ઞાનાવરણીય, (૨) કેવલદર્શનાવરણીય, (૩) નિદ્રા, (૪) નિદ્રાનિદ્રા  
(૫) પ્રચલા, (૬) પ્રચલાપ્રચલા, (૭) સત્યાનર્દિઃ, (૮-૧૧) અનન્તાનુબન્ધી-ક્રોધ, માન,  
માયા, લોભ, (૧૨-૧૫) અપ્રત્યાખ્યાનાવરણ-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, (૧૬-૧૯) પ્રત્યાખ્યાનાવરણ

(૧૬-૧૯) પ્રત્યાખ્યાનકષાયચતુષ્ટયમ્, (૨૦) મિથ્યાત્વં ચ, એતા વિંશતિઃ પ્રકૃતયઃ સર્વઘાતિન્યઃ ।

સમસ્તાવરણક્ષયાદાવિર્ભૂતં સકલદ્રવ્યપર્યાયગ્રાહિ કેવલજ્ઞાનં, તદાચ્છા-  
દનકૃત્ કેવલજ્ઞાનાવરણીયમ્ । इदं हि केवलज्ञानोपघातेन सर्वमेव द्रव्यपर्याय-  
ज्ञानं प्रतिहन्ति, तस्मात् सर्वघातीत्यच्यते ।

નનુ-સર્વજીવાનાં કેવલજ્ઞાનસ્યાનન્તભાગોઽનાદૃત એવાવતિષ્ઠતે, તસ્યા-  
પ્યાવરણે તુ જીવસ્યાજીવત્વમાપદ્યેત તર્હિ કથં કેવલજ્ઞાનાવરણીયસ્ય સર્વઘાતિત્વ-  
સંભવઃ ? इति चेत्, उच्यते—

यथा घनीभूतघनपटलेन सूर्यचन्द्रमसोर्वहुतरप्रभासमावरणे सर्वाऽपि प्रभा

વરણ, ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, (૨૦) મિથ્યાત્વ । ये वीस प्रकृतियाँ सर्वघाती हैं ।

કેવલજ્ઞાન સમસ્ત આવરણોં કે ક્ષય સે પ્રકટ હોને વાલા તથા સમસ્ત દ્રવ્યોં ઔર  
પર્યાયોં કો ગ્રહણ કરને વાલા હૈ । इसे आच्छादित करने वाला कर्म केवलज्ञानावरणीय कहलाता  
है । यह कर्म केवलज्ञान का घात करके समस्त द्रव्य पर्यायों के ज्ञान का घात करता है,  
अत एव यह सर्वघाती कहलाता है ।

શુદ્ધા-સવ જીવોં કે કેવલજ્ઞાન કા અનન્તવાં ભાગ પ્રકટ રહતા હૈ, અગર ઉતના  
મી પ્રકટ ન રહે તો જીવ અજીવ હો : जायगा । ऐसी स्थिति में केवलज्ञानावरणीय सर्वघाती  
कैसे हो सकता है ?

સમાધાન-જૈસે અત્યન્ત સઘન મેઘપટલ કે દ્વારા સૂર્ય યા ચન્દ્રમા કી બહુત  
સી પ્રમા છિપ જાને કે કારણ લોક મેં કહા જાતા હૈ કિ સૂર્ય-ચન્દ્ર કી સારી પ્રમા છિપ  
-ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, (૨૦) મિથ્યાત્વ. આ વીસ પ્રકૃતિઓ સર્વઘાતી છે.

કેવલજ્ઞાન સમસ્ત આવરણોનાં ક્ષયથી પ્રગટ થવાવાળું, તથા સમસ્ત દ્રવ્યો અને  
પર્યાયોને ગ્રહણ કરવા વાળું છે, તેને આચ્છાદિત કરવાવાળું કર્મ કેવલજ્ઞાનાવરણીય  
કહેવાય છે. એ કર્મ કેવલ જ્ઞાનનો ઘાત કરીને સમસ્ત દ્રવ્ય-પર્યાયોના જ્ઞાનનો ઘાત  
કરે છે. એટલા માટે તે સર્વઘાતી કહેવાય છે.

શંકા-સર્વ જીવોને કેવલજ્ઞાનનો અનન્તમો ભાગ પ્રગટ રહે છે. પણ જો એટલો  
પણ પ્રગટ ન રહે તો જીવ; અજીવ થઈ જશે. આવી સ્થિતિમાં કેવલજ્ઞાનાવરણીય  
સર્વઘાતી કેવી રીતે થઈ શકે છે ?

સમાધાન:-જેવી રીતે અત્યન્ત, સઘન મેઘપટલ (ઘનધોર વાદલ) દ્વારા સૂર્ય  
અથવા ચન્દ્રમાની ઘણીખરી પ્રભા-કાંતિ ઢંકાઈ જવાથી લોકમાં કહેવાય છે કે સૂર્ય-ચંદ્રની

તયોરાટ્ટેતિ લોકવ્યવહારવત્ જીવસ્ય સર્વજ્ઞાનાવરણં કેવલજ્ઞાનાવરણીયપ્રકૃત્યા ક્રિયતે, इति व्यपदिश्यते ।

મતિજ્ઞાનાદિવિષયાન્ અર્થાન્ ન જાનાતિ જીવસ્ત્ર મતિજ્ઞાનાવરણીયાદિ-  
પ્રકૃત્યુદય એવ મતિજ્ઞાનાદિકમાટ્ટનોતિ, ન તુ કેવલજ્ઞાનાવરણીયોદયસ્ત્ર  
કારણં ભવતીતિ બોધ્યમ્ । એવં કેવલદર્શનસ્યાનન્તભાગોઽપ્યનાટ્ટ એવ, તત્રાપિ  
મેઘદૃષ્ટાન્તાનુસારેણાવરણવ્યવહારસાદાય કેવલદર્શનાવરણીયસ્ય સર્વઘાતિત્વમુપપદ્યતે ।  
તત્રાપિ ચક્ષુર્દર્શનાવરણીયાદિપ્રકૃત્યુદયાદેવ જીવશ્ચક્ષુર્દર્શનાદિવિષયાનર્થાન્ જ્ઞાતું ન  
શક્નોતિ, ન તુ કેવલદર્શનાવરણીયોદયસ્ત્ર કારણમિતિ બોધ્યમ્ ।

ગઈ । इसी प्रकार 'केवलज्ञानावरण प्रकृति जीव के समस्त ज्ञानका आवरण करती है' ऐसा कहा जाता है ।

જીવ મતિજ્ઞાન કે વિષયભૂત પદાર્થોં કો નહીં જાનતા, इस में मतिज्ञानावरणीय प्रकृति का उदय ही कारण है, वही मतिज्ञान को रोकता है । इस में केवलज्ञानावरणीय का उदय कारण नहीं है । इसी प्रकार केवलदर्शन का अनन्तवाँ भाग उघाडा रहता है । वहाँ भी मेघ के दृष्टान्त के अनुसार आवरण का व्यवहार समझ कर केवलदर्शनावरणीय को सर्वघाती प्रकृति समझना चाहिए । यहां भी चक्षुर्दर्शन आदि के विषयभूत पदार्थों को जीव चक्षुर्दर्शनावरणीय आदि के उदय से ही नहीं जानता । वहाँ केवलदर्शनावरणीय कारण नहीं समझना चाहिए ।

તમામ ક્રાંતિ-પ્રકાશ ઠંકાઈ ગઈ. એ પ્રમાણે કેવલજ્ઞાનાવરણ પ્રકૃતિ જીવના સમસ્ત જ્ઞાનનું આવરણ કરે છે, એમ કહેવાય છે.

જીવ મતિજ્ઞાનના વિષયભૂત પદાર્થોને જાણતો નથી; તેમાં મતિજ્ઞાનાવરણીય પ્રકૃતિ-કર્મનો ઉદયજ કારણરૂપ છે. તેજ મતિજ્ઞાનને રોકે છે એમાં કેવલજ્ઞાનાવરણીયનો ઉદય કારણ રૂપ નથી. એ પ્રમાણે કેવલદર્શનનો અનન્તમો ભાગ ઉઘાડો રહે છે. ત્યાં પણ મેઘના દૃષ્ટાન્ત પ્રમાણે આવરણનો વ્યવહાર સમજી લઈને કેવલદર્શનાવરણીયને સર્વઘાતી પ્રકૃતિ સમજવું જોઈએ, અહીં પણ ચક્ષુર્દર્શન આદિના વિષયભૂત પદાર્થોને જીવ ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય આદિના ઉદયથી જાણતો નથી, ત્યાં કેવલદર્શનાવરણીય કારણ નહિ સમજવું જોઈએ.



નનુ કેવલજ્ઞાનાવરણીયસ્ય કેવલદર્શનાવરણીયસ્ય ચ ક્ષયે સત્યપિ મતિજ્ઞાનાદીનાં ચક્ષુર્દર્શનાદીનાં ચ વિષયા જ્ઞાતુમશક્યાઃ સ્યુઃ, તેષાં કેવલજ્ઞાનાવરણીય-કેવલદર્શનાવરણીય-પ્રકૃત્યોર્વિષયાભાવાત્, મતિજ્ઞાનાવરણીયાદીનાં ચ ક્ષયાભાવાત્તાભિર્મતિજ્ઞાનાદીનાં સમાવૃતત્વાદિતિ ચેત્ ? ઉચ્યતે—

કેવલજ્ઞાનલાભે શેષાવબોધલાભસ્ય તદન્તર્ગતત્વાત્ । યથા-ગ્રામલાભે ક્ષેત્રલાભો ગ્રામલાભાન્તર્ભૂત એવ ભવતિ ।

નિદ્રાદિપશ્ચક્રમપિ સકલપદાર્થાવબોધં પ્રતિહન્તીતિ સર્વઘાતિ ભવતિ । યદિ પુનઃ સ્વાપદશાયામપિ કિંચિદ્ જ્ઞાનમસ્તીતિ સંભાવ્યતે, તર્હિ તત્રાપિ જલધરદૃષ્ટાન્તમાશ્રિત્ય સમાધેયમ્ ।

શંકા—કેવલજ્ઞાનાવરણીય ઓર કેવલદર્શનાવરણીય કા ક્ષય હોને પર મી મતિજ્ઞાન આદિ ઓર ચક્ષુર્દર્શન આદિ કે વિષયભૂત પદાર્થો કા જાનના અશક્ય હોના યાહિય, કયોં કિ વે કેવલજ્ઞાનાવરણીય, ઓર કેવલદર્શનાવરણીય પ્રકૃતિયોં કે વિષય નહીં હૈં, ઓર મતિજ્ઞાનાવરણીય આદિ પ્રકૃતિયોં કા ક્ષય નહીં હુઆ હૈ, ઉન્હોં સે મતિજ્ઞાન આદિ આવૃત્ત હોતે હૈં ।

સમાધાન—કેવલજ્ઞાન કી પ્રાપ્તિ હોને પર શેષ જ્ઞાનોં કી પ્રાપ્તિ ડસી મેં અન્તર્ગત હો જાતી હૈ । જૈસે ગ્રામ મિલને પર ચેત આપ હી મિલ જાતા હૈ ।

નિદ્રા આદિ પાંચ પ્રકૃતિયોં મી સકલ પદાર્થોં કે જ્ઞાન કા ઘાત કરતી હૈં, અત્ એવ સર્વઘાતી હૈં । અગર નિદ્રા-અવસ્થા મેં મી કિંચિત્ જ્ઞાન કી સંભાવના કી જા સકતી હૈ તો વહોં મી મેઘ કા દૃષ્ટાન્ત લેકર સમાધાન કરના યાહિય ।

શંકા—કેવલજ્ઞાનાવરણીય અને કેવલદર્શનાવરણીયનો ક્ષય થવા છતાંય પણ મતિજ્ઞાન આદિ અને ચક્ષુર્દર્શન આદિના વિષયભૂત પદાર્થોને બાણુવું તે અશક્ય હોવું બોધ્યે; કારણ કે તે કેવલજ્ઞાનાવરણીય અને કેવલદર્શનાવરણીય પ્રકૃતિઓનો વિષય નથી. અને મતિજ્ઞાનાવરણીય આદિ પ્રકૃતિઓનો ક્ષય થયો નથી, તેનાથી મતિજ્ઞાન આદિ આવૃત્ત થાય છે.

સમાધાન—કેવલ જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થવાથી શેષ જ્ઞાનોની પ્રાપ્તિ તેમાં અન્તર્ગત થઈ જાય છે. જેવી રીતે ગામ મળવાથી ખેતર પોતેજ મલી જાય છે.

નિદ્રા આદિ પાંચ પ્રકૃતિઓ પણ તમામ પદાર્થોના જ્ઞાનનો ઘાત કરે છે, એ માટે તે સર્વઘાતી છે. અથવા નિદ્રા અવસ્થામાં પણ કિંચિત્ જ્ઞાનની સંભાવના કરાય છે. તો ત્યાં પણ મેઘનું દૃષ્ટાંત લઈને સમાધાન કરી લેવું બોધ્યે.

અનન્તાનુબન્ધ્યાદયો દ્વાદશ કષાયાઃ પ્રત્યેકં યથાક્રમં સમ્યક્ત્વં દેશવિરતિ-  
ચારિત્રં સર્વવિરતિચારિત્રં ચ સર્વમેવ વ્રન્તિ, તસ્માદેતે દ્વાદશ કષાયાઃ સર્વઘાતિન  
ઇત્યુચ્યન્તે । તેષાં પ્રબલોદયેઽપિ કુલાચારપ્રભૃતિકારણવશાદશુદ્ધાહારાદિવિરમણ-  
દર્શનાત્ સર્વઘાતિત્વં ન સંભવતીતિ નાશઙ્કનીયમ્, નવીનઘનઘટાદૃષ્ટાન્તા-  
શ્રયણેન તસ્યાપિ સમાધેયત્વાત્ । મિથ્યાત્વં તુ સમ્યક્ત્વં તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપં  
સર્વમપિ પ્રતિહન્તિ, તસ્માત્ સર્વઘાતીત્યુચ્યતે । યદિ મિથ્યાત્વસ્ય પ્રબલોદયેઽપિ  
મનુષ્યપશ્વાદિવસ્તુવિષયકં સમ્યક્ત્વમસ્તિ, કથં તર્હિ સર્વઘાતિત્વં મિથ્યાત્વસ્યેતિ  
સંભવ્યતે, તદાઽત્રાપ્યુક્તજલદાવલીદૃષ્ટાન્તઃ શરણીકરણીયઃ ।

અનન્તાનુબન્ધી આદિ બારહ કષાય ક્રમશઃ સમ્યક્ત્વ કા દેશવિરતિ કા, ઓર  
સર્વવિરતિકા પૂર્ણરૂપ સે ઘાત કરતે હૈં, અતઃ યે બારહ કષાય મી સર્વઘાતી કહલાતે હૈં । યહ  
શઙ્કા નહીં કરની યાહિએ કિ-ઇન કષાયોં કા પ્રબલ ઉદય હોને પર મી કુલાચાર આદિ  
કારણોં સે અશુદ્ધ આહાર આદિ કા ત્યાગ દેસ્વા જાતા હૈ અત એવ ઇન્હેં સર્વઘાતી નહીં કહા  
જા સકતા, ક્યોં કિ નવીન મેઘઘટાકા દૃષ્ટાન્ત લેકર ઇસ શઙ્કા કા મી સમાધાન ક્રિયા જા  
સકતા હૈ ।

મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ તો તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વ કા પૂર્ણરૂપ સે ઘાત કરતી  
હી હૈ, અતઃ વહ સર્વઘાતી હૈ । યદિ મિથ્યાત્વ કા પ્રબલ ઉદય હોને પર મી મનુષ્ય  
પશુ આદિ વસ્તુઓં સમ્બન્ધી સમ્યક્ત્વ રહતા હૈ તો મિથ્યાત્વ કો સર્વઘાતી કૈસે કહા  
જા સકતા હૈ ? ઇસ શઙ્કા કે સમાધાન કે લિએ મી ઉક્ત મેઘપટલ કે હી દૃષ્ટાન્ત કા આશ્રય  
લેના યાહિએ ।

અનન્તાનુબન્ધી આદિ બાર કષાય ક્રમશઃ સમ્યક્ત્વનો દેશવિરતિનો અને સર્વ  
વિરતિનો પૂર્ણરૂપથી ઘાત કરે છે, તેથી એ બાર કષાય પણ સર્વઘાતી કહેવાય છે. એવી  
શંકા નહિ કરવી જોઈએ કે:-એ કષાયોના પ્રબલ ઉદય વખતે પણ કુલાચાર આદિ  
કારણોથી અશુદ્ધ આહાર આદિનો ત્યાગ જોવામાં આવે છે. તે માટે તેને સર્વઘાતી કહી  
શકાશે નહિ; કારણ કે નવીન મેઘ ઘટાનું દ્રષ્ટાંત લઈને આ શંકાનું સમાધાન કરી શકાય છે.

મિથ્યાત્વ પ્રકૃતિ તો તત્ત્વાર્થશ્રદ્ધાનરૂપ સમ્યક્ત્વનો પૂર્ણરૂપથી ઘાત કરે છેજ,  
તેથી તે સર્વઘાતી છે. જો મિથ્યાત્વનો પ્રબલ ઉદય હોય તે વખતે પણ-મનુષ્ય, પશુ આદિ  
વસ્તુઓસંબન્ધી સમ્યક્ત્વ રહે છે તો મિથ્યાત્વને સર્વઘાતી કેવી રીતે કહી શકશે ? એ  
શંકાના સમાધાન માટે પણ આગળ કહેલ મેઘપટલનાં દ્રષ્ટાંતનો આશ્રય લેવો જોઈએ.

### દેશઘાતિપ્રકૃતયઃ—

અથ દેશઘાતિપ્રકૃતયઃ કથ્યન્તે— (૧) મતિજ્ઞાનાવરણીયમ્, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીયમ્, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણીયમ્, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીયમ્, એતાનિ ચત્વારિ જ્ઞાનાવરણીયાનિ ૪ । (૧) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીયમ્, (૨) અચક્ષુર્દર્શનાવરણીયમ્, (૩) અવધિદર્શનાવરણીયમ્, इति त्रीणि दर्शनावरणीयानि ७ । संज्वलन-रूपाः क्रोधमानमायालोभाश्चत्वारः कषायाः ११ । हास्य-रत्य-रति-भय-शोक-जुगुप्सा-स्त्रीवेद-पुंवेद-नपुंसकवेदभेदतो नवसंख्यका नोकषायाः २० । तथा दान-लाभ-भोगो-पभोग-वीर्यभेदात् पञ्चविंशतिः २५ प्रकृतयो देशघातिन्यः सन्ति ।

મતિજ્ઞાનાવરણીયાદિચતુષ્ટયી પ્રકૃતિઃ કેવલજ્ઞાનાવરણીયાદૃતં દૈશિકં જ્ઞાનં હન્તિ, તસ્માદેશઘાતિનીયમુચ્યતે ।

### દેશઘાતી પ્રકૃતિયાં—

અવ દેશઘાતી પ્રકૃતિયોં કા કથન ક્રિયા જાતા હૈઃ—(૧) મતિજ્ઞાનાવરણીય, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણીય, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય, એ ચાર જ્ઞાનાવરણીય ૪ । તથા (૧) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૨) અચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૩) અવધિદર્શનાવરણીય, એ ત્રીણ દર્શનાવરણીય ૭ । તથા સંજ્વલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, એ ચાર કષાય ૧૧ । હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ, નપુંસકવેદ કે ભેદ સે નૌ નોકષાય ૨૦ । તથા દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય, ઉપમાગાન્તરાય ઓર વીર્યાન્તરાય, એ પાંચ અન્તરાય ૨૫ । સબ મિલકર પચ્ચીસ દેશઘાતી પ્રકૃતિયાં હૈં ।

મતિજ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર પ્રકૃતિયાં કેવલજ્ઞાનાવરણીયદ્વારા આવૃત્ત એક દેશ જ્ઞાનકા ઘાત કરતી હૈં; અતઃ એવં ઉન્હેં દેશઘાતી પ્રકૃતિયાં કહતે હૈં,

### દેશઘાતી પ્રકૃતિઓ—

હવે દેશઘાતી પ્રકૃતિઓનું કથન—નિરૂપણ—કરવામાં આવે છે—(૧) મતિજ્ઞાનાવરણીય, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય, (૩) અવધિજ્ઞાનાવરણીય, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય, આ ચાર જ્ઞાનાવરણીય છે ૪, તથા (૧) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૨) અચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૩) અવધિદર્શનાવરણીય, આ ત્રણ દર્શનાવરણીય, ૭, તથા સંજ્વલન—ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, એ ચાર કષાય, ૧૧, હાસ્ય, રતિ, અરતિ, ભય, શોક, જુગુપ્સા, સ્ત્રીવેદ, પુરુષવેદ, નપુંસકવેદના ભેદથી નવ નોકષાય, ૨૦, તથા દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય, ઉપમાગાન્તરાય, અને વીર્યાન્તરાય. આ પાંચ અન્તરાય ૨૫, બધી મળીને પચ્ચીસ દેશઘાતી પ્રકૃતિઓ છે.

મતિજ્ઞાનાવરણીય આદિ ચાર પ્રકૃતિઓ કેવલજ્ઞાનાવરણીયદ્વારા આવૃત્ત એક દેશ જ્ઞાનનો ઘાત કરે છે, તેટલા માટે તેને દેશઘાતી પ્રકૃતિ કહે છે.



મતિજ્ઞાનાદિવિષયાણામર્થાનામવબોધો યન્ન ભવતિ, તચ્ચ મતિજ્ઞાનાવર-  
ણીયાદિચતુષ્ટયપ્રકૃત્યુદયાદેવ । યત્તુ મતિજ્ઞાનાદ્યવિષયાણામનન્તપદાર્થાનાં જ્ઞાનં  
ન ભવતિ તત્ કેવલજ્ઞાનાવરણીયપ્રકૃત્યુદયાદેવ ।

ચક્ષુર્દર્શનાવરણીયાદિત્રયી પ્રકૃતિઃ કેવલદર્શનાવરણીયાનાવૃત્તં કેવલ-  
દર્શનૈકદેશં જ્ઞાનં હન્તીતિ દેશઘાતિત્વં સિદ્ધમ્ । ચક્ષુરાદિદર્શનવિષયભૂતાનામ-  
ર્થાનાં દર્શનં યન્ન ભવતિ, તત્ ચક્ષુરાદિદર્શનાવરણીયપ્રકૃત્યુદયાદેવ; યચ્ચ  
તદ્વિષયભૂતાનઅનન્તગુણાન્ ન પશ્યતિ, તત્ કેવલદર્શનાવરણીયોદયાદેવ ।

તથા-સંજ્વલનાશ્ચત્વારઃ કષાયાસ્તથા નવ નોકષાયાશ્ચ લબ્ધસ્ય

મતિજ્ઞાન આદિ કે વિષયભૂત પદાર્થોં કા જો જ્ઞાન નહીં હોતા સો મતિજ્ઞાના-  
વરણીય આદિ પ્રકૃતિયોં કે ઉદય સે હી સમજના યાહિએ । ઓર જો પદાર્થ મતિજ્ઞાન  
આદિ કે વિષય નહીં હૈં, ઉનકે જ્ઞાનકા અભાવ કેવલજ્ઞાનાવરણીય પ્રકૃતિ કે ઉદય સે  
હોતા હૈ ।

ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય આદિ ત્રીન પ્રકૃતિયોં કેવલદર્શનાવરણીયદ્વારા અનાવૃત્ત કેવલદર્શન  
કે એકદેશ જ્ઞાનકા ઘાત કરતી હૈં, અતઃ વે દેશઘાતી હૈં । ચક્ષુર્દર્શન આદિ કે વિષયભૂત  
પદાર્થોં કા જો જ્ઞાન નહીં હોતા સો ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય આદિ પ્રકૃતિયોં કે ઉદય સે સમજના  
યાહિએ ઓર કેવલદર્શન કે વિષયભૂત અનન્ત ગુણોં કે જ્ઞાનકા જો અભાવ હોતા હૈ સો  
કેવલદર્શનાવરણીય કે ઉદય સે હી સમજના યાહિએ ।

ચાર સંજ્વલન કષાય ઓર નૌ નોકષાય પ્રાપ્ત હુએ ચારિત્ર કે એક દેશ કા

મતિજ્ઞાન આદિના વિષયભૂત પદાર્થોંનું જે જ્ઞાન થતું નથી તે મતિજ્ઞાનાવરણીય  
આદિ પ્રકૃતિઓના ઉદયથીજ સમજ લેવું જોઈએ. અને જે પદાર્થ મતિજ્ઞાનાદિનો  
વિષય નથી તેના જ્ઞાનનો અભાવ કેવલજ્ઞાનાવરણીય પ્રકૃતિના ઉદયથી હોય છે.

ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય આદિ ત્રણ પ્રકૃતિઓ કેવલદર્શનાવરણીય દ્વારા અનાવૃત્ત  
કેવલદર્શનના એકદેશ જ્ઞાનનો ઘાત કરે છે. એ કારણથી તે દેશઘાતી છે ચક્ષુર્દર્શન  
આદિના વિષયભૂત પદાર્થોંનું જે જ્ઞાન થતું નથી તે ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય આદિ પ્રકૃતિઓના  
ઉદયથી સમજવું જોઈએ, અને કેવલદર્શનના વિષયભૂત અનન્ત ગુણોના જ્ઞાનનો જે  
અભાવ થાય છે તે કેવલદર્શનાવરણીયના ઉદયથીજ સમજવું જોઈએ.

ચાર સંજ્વલન કષાય અને નવ નોકષાય પ્રાપ્ત થયેલા ચારિત્રના એક દેશનોજ  
પ્ર. આ-૪૫.

ચારિત્રસ્ય દેશમેવ ઘ્નિતિ, તેષાં મૂલોત્તરગુણાતીચારજનકત્વાત્ । તસ્માદેતા-  
સ્ત્રયોદશ પ્રકૃતયો દેશઘાતિન્ય ઇતિ બોધ્યમ્ ।

તથા-દાનાન્તરાયાદિપશ્ચાન્તરાયરૂપાઃ પ્રકૃતયોઽપિ દેશઘાતિન્ય એવ ।  
દાનલાભભોગોપભોગાનાં ચતુર્ણાં વિષયસ્તાવદ્ ગ્રહણધારણયોગ્યાન્યેવ દ્રવ્યાણિ  
સન્તિ । તાનિ ચ સકલપુદ્ગલાસ્તિકાયસ્યાનન્તભાગરૂપે દેશ એવ વર્તન્તે, અતો  
યાસાં પ્રકૃતીનામુદયાત્ પુદ્ગલાસ્તિકાયદેશવર્તીનિ દ્રવ્યાણિ દાતું લબ્ધું ભોક્તુમુપભોક્તું  
ચ ન શક્નોતિ તાઃ પ્રકૃતયો દાનલાભભોગોપભોગાન્તરાયરૂપાસ્તાવદેશઘાતિન્ય એવ ।

યત્તુ-સમસ્તલોકાન્તર્ગતાનિ દ્રવ્યાણિ દાતું લબ્ધું ભોક્તુમુપભોક્તું ચ ન  
પ્રભવતિ તદાનાન્તરાયાદિપ્રકૃત્યુદયતો ન ભવતિ, કિન્તુ તેષામેવ ગ્રહણધારણ-

હી ઘાત કરતે હૈં, ક્યોં કિં વે મૂલગુણોં ઓર ઉત્તરગુણોં મેં અતિચાર ઉત્પન્ન કરતે હૈં, ઇસ  
કારણ યે તેરહ પ્રકૃતિયોં દેશઘાતી હૈં, એસા સમજનાં ચાહિયે ।

અન્તરાય કર્મ કી પાંચ પ્રકૃતિયાં મી દેશઘાતી હી હૈં । દાન, લાભ, ભોગ ઓર  
ઉપભોગ, ઇન ચાર કે વિષય ગ્રહણ ઓર ધારણ કરને યોગ્ય દ્રવ્ય હી હૈં, ઓર એસે દ્રવ્ય  
સમસ્ત પુદ્ગલાસ્તિકાય કે અનન્તર્વે ભાગ હૈં, અતઃ જિન પ્રકૃતિયોં કે ઉદય સે પુદ્ગલાસ્તિકાય  
કે એકદેશવર્તી દ્રવ્યોં કા દાન, લાભ, ભોગ યા ઉપભોગ ન હો સકે વે દાનાન્તરાય આદિ  
પ્રકૃતિયોં મી દેશઘાતી હી હૈં ।

સમસ્ત લોક કે અન્તર્ગત દ્રવ્યોં કા દાન, લાભ, ભોગ ઓર ઉપભોગ નહીં  
હો સકતા, સો યહ દાનાન્તરાય આદિ પ્રકૃતિયોં કે ઉદય સે નહીં, પરન્તુ ઇન દ્રવ્યોં કો

ઘાત કરે છે કારણ કે તે મૂલગુણોં અને ઉત્તરગુણોંમાં અતિચાર ઉત્પન્ન કરે છે, આ  
કારણથી તે તેર પ્રકૃતિઓ દેશઘાતી છે. એ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ.

અન્તરાય કર્મની પાંચ પ્રકૃતિઓ પણ દેશઘાતીજ છે. દાન, લાભ, ભોગ અને  
ઉપભોગ, એ ચારના વિષય ગ્રહણ અને ધારણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યજ છે, અને એવા  
દ્રવ્ય સમસ્ત પુદ્ગલાસ્તિકાયના અનન્તર્ભાગ ભાગ છે, તેથી જે પ્રકૃતિઓના ઉદયથી  
પુદ્ગલાસ્તિકાયના એકદેશવર્તી દ્રવ્યોંને દાન, લાભ, ભોગ અને ઉપભોગ ન થઈ  
શકે, તે દાનાન્તરાય આદિ પ્રકૃતિઓ પણ દેશઘાતી છે.

સમસ્ત લોકના અન્તર્ગત દ્રવ્યોંને દાન, લાભ, ભોગ અને ઉપભોગ થઈ શકતો  
નથી. તે આ દાનાન્તરાય આદિ પ્રકૃતિઓના ઉદયથી નહિ; પરન્તુ તે દ્રવ્યોંને ગ્રહણ અને



યોગ્યતાયા અભાવાદશક્યાનુષ્ઠાનત્વાદિતિ મન્તવ્યમ્ ।

વીર્યાન્તરાયપ્રકૃતિરપિ સર્વં વીર્યં ન હન્તીતિ દેશઘાતિન્યેવ । તથાહિ-  
સૂક્ષ્મનિગોદજીવાત્ પ્રભૃતિ આક્ષીણમોહનીયજીવં વીર્યાન્તરાયસ્ય ક્ષયોપશમ-  
વિશેષાદ્ વીર્યં કસ્યચિદલ્પં, કસ્યચિદ્ बहु, कस्यचिद् बहुतरं, कस्यचिद् बहुतमं  
भवति, वीर्यान्तरायकर्मणोऽभ्युदये सूक्ष्मनिगोदस्यापि आहारपरिणमनकर्मदलिक-  
ग्रहणगत्यन्तरगमनादिकं विद्यते । एतच्च वीर्यं विना न संभवति । तस्माद्देशत  
एव वीर्यं वीर्यान्तरायप्रकृत्या हन्यते, न तु सर्वतः । यदि पुनरियं सर्वघातिनी

પ્રહણ ઔર ધારણ કરને કી યોગ્યતા ન હોને કે કારણ અશક્યાનુષ્ઠાન સે સમજના યાહિયુ ।

વીર્યાન્તરાય પ્રકૃતિ મી સમસ્ત વીર્યં કા ઘાત નહીં કરતી અતઃ દેશઘાતી હૈ ।  
સૂક્ષ્મ નિગોદિયા જીવ સે લેકર ક્ષીણમોહ-ગુણસ્થાન પર્યન્ત કે જીવોં મેં વીર્યાન્તરાય કે  
ક્ષયોપશમ સે કિસી જીવ મેં અલ્પ વીર્યં (શક્તિ) હોતા હૈ, કિસી મેં બહુત વીર્યં હોતા  
હૈ, કિસી મેં બહુત અધિક વીર્યં હોતા હૈ ઔર કિસી મેં અત્યન્ત અધિક વીર્યં હોતા  
હૈ । વીર્યાન્તરાય કર્મકા ઉદય હોને પર મી સૂક્ષ્મ નિગોદ કા જીવ આહાર કા પરિણમન  
કરતા હૈ, કર્મદલિયોં કો પ્રહણ કરતા હૈ ઔર દૂસરી ગતિ મેં જાતા હૈ । યે સ્વ  
કાર્ય વીર્યં કે વિના નહીં હો સકતે । હસ સે યહ સિદ્ધ હુઆ કિ વીર્યાન્તરાય કર્મ વીર્ય  
કો એકદેશ સે હો ઘાત કરતા હૈ, સર્વદેશ સે નહીં । અગર યહ પ્રકૃતિ સર્વઘાતી માની જાય  
તો જૈસે સર્વઘાતી મિથ્યાત્વ કે ઉદય મેં સમ્યક્દર્શન લેશમાત્ર નહીં હોતા, ઔર

ધારણુ કરવાની યોગ્યતા નહિ હોવાના કારણે અશક્યાનુષ્ઠાનથી સમજવું બેઠએ.

વીર્યાન્તરાય પ્રકૃતિ પણ સમસ્ત વીર્યનો ઘાત કરતી નથી, તેથી તે દેશઘાતી છે.  
સૂક્ષ્મનિગોદના જીવથી લઈને ક્ષીણમોહજીવસ્થાન સુધીના જીવોમાં વીર્યાન્તરાયના ક્ષયોપ-  
શમથી કોઈ જીવમાં અલ્પવીર્ય (થોડી શક્તિ) હોય છે, કોઈ જીવમાં બહુ વીર્ય હોય છે;  
કોઈ જીવમાં બહુજ અધિક વીર્ય હોય છે, અને કોઈમાં અત્યન્ત અધિક વીર્ય હોય છે.  
વીર્યાન્તરાય કર્મનો ઉદય હોય ત્યારે પણ સૂક્ષ્મ નિગોદના જીવ આહારનું પરિણમન કરે  
છે, કર્મદલિકોને પ્રહણ કરે છે, અને બીજી ગતિમાં જાય છે. આ તમામ કાર્ય વીર્ય વિના  
થઈ શકે નહીં, તેથી એ સિદ્ધ થયું કે:- વીર્યાન્તરાય કર્મ વીર્યના એક દેશનોજ ઘાત  
કરે છે, સર્વદેશનો નહીં. અથવા તો આ પ્રકૃતિને સર્વઘાતી માનવામાં આવે તો જેવી રીતે  
સર્વઘાતી મિથ્યાત્વના ઉદયમાં સમ્યક્દર્શન લેશમાત્ર પણ હોય નહીં, અને જેમ



સ્યાત્ તદા સર્વઘાતિનો મિથ્યાત્વસ્ય કષાયદ્વાદશકસ્ય ચામ્બુદયે યથા જઘન્યમપિ સમ્યક્ત્વં દેશસંયમઃ સર્વસંયમશ્ચ નોપલભ્યતે, તથા વીર્યાન્તરાયસ્યોદયેઽપિ જઘન્યમપિ વીર્યગુણં નોપલભ્યેત, ન ચૈવં ભવતિ, તસ્માત્ વીર્યાન્તરાયપ્રકૃતિરપિ દેશઘાતિનીતિ સિદ્ધમ્ ।

અઘાતિપ્રકૃતયઃ—

અઘાતિન્યઃ પ્રકૃતયઃ પશ્ચસપ્તતિઃ સન્તિ । તથાહિ—પ્રત્યેકં પ્રકૃતયઃ પરાઘાતો૧-ઉચ્છ્વાસા૨-ઽઽતપો૩-ઉઘોતા૪-ઽગુરુલઘુ૫-તીર્થકર૬-નિર્માણો૭-ઉપઘાત૮-રૂપા અઘૌ સન્તિ । (૧) ઔદારિકં, (૨) વૈક્રિયમ્, (૩) આહારકં, (૪) તૈજસં, (૫) કાર્મણં ચેતિ પશ્ચ શરીરાણિ ૫ । ત્રીણ્યુપાજ્ઞાનિ૩ । ષટ્ સંસ્થાનાનિ૬ । ષટ્ સંહન-

જૈસે બારહ કષાયોં કા ઉદય હોને પર દેશવિરતિ ઔર સર્વવિરતિ, ઇક દેશ સે મી નહીં હોતી ઉસી પ્રકાર વીર્યાન્તરાય કર્મ કા ઉદય હોને પર લેશમાત્ર મી વીર્યગુણ પ્રકટ નહીં હોને ચાહિણ, મગર ઇસા નહીં હોતા, અતઃ યહ સિદ્ધ હુઆ કિ વીર્યાન્તરાય પ્રકૃતિ મી દેશઘાતી હી હૈ ।

અઘાતી પ્રકૃતિયાં—

અઘાતિ પ્રકૃતિયાં પચહત્તર ૭૫ હૈં, વે ઇસ પ્રકાર—(૧) પરાઘાત, (૨) ઉચ્છ્વાસ, (૩) આતપ, (૪) ઉઘોત, (૫) અગુરુલઘુ, (૬) તીર્થકર, (૭) નિર્માણ, (૮) ઉપઘાત, યે આઠ પ્રત્યેક પ્રકૃતિયાં અઘાતી હૈં ૮ । ઔદારિક, વૈક્રિય, આહારક, તૈજસ, ઔર કાર્મણ શરીર, યે પાંચ શરીર અઘાતી પ્રકૃતિયાં હૈં ૧૩ । ત્રીણ ઉપાજ્ઞ૧૬, છહ સંસ્થાન૨૨,

બાર કષાયોનો ઉદય થવા સમયે દેવવિરતિ અને સર્વવિરતિ એકદેશથી પણ હોય નહીં; તે પ્રમાણે વીર્યાન્તરાય કર્મનો ઉદય થતાં લેશમાત્ર પણ વીર્યગુણ પ્રગટ થવો નહીં જોઈએ, પરંતુ એ પ્રમાણે થતું નથી, એ કારણથી સિદ્ધ થયું કે—વીર્યાન્તરાય પ્રકૃતિ પણ દેશઘાતીજ છે.

અઘાતી પ્રકૃતિઓ—

અઘાતી પ્રકૃતિઓ પંચોતેર (૭૫) છે. તે આ પ્રમાણે છે:—(૧) પરાઘાત, (૨) ઉચ્છ્વાસ, (૩) આતપ, (૪) ઉઘોત, (૫) અગુરુલઘુ, (૬) તીર્થકર, (૭) નિર્માણ, (૮) ઉપઘાત, આ આઠ પ્રત્યેક પ્રકૃતિઓ અઘાતી છે. (૧) ઔદારિક, (૨) વૈક્રિય, (૩) આહારક, (૪) તૈજસ અને (૫) કાર્મણ શરીર, આ પાંચ શરીર અઘાતી પ્રકૃતિઓ છે; (૧૩) ત્રણ ઉપાંગ, (૧૬) છહ સંસ્થાન, (૨૨) છહ સંહનન, (૨૮) પાંચ ભૂતિઓ, (૩૩) ચાર ગતિ, ૩૭ બે વિહાયો-

નાનિદ્ । પશ્ચ જાતયઃ ૫ । ચતસ્રો ગતયઃ ૪ । દ્વે સ્વગતીર । ચતસ્રઃ આનુ-  
પૂર્વ્યઃ ૪ । આયૂર્વિ ચત્વારિઃ ૪ । ત્રસદશક્રમ્ ૧૦ । સ્થાવરદશક્રમ્ ૧૦ । ઉચ્ચૈર્ગોત્રમ્ ૧ ।  
નીચૈર્ગોત્રમ્ ૧ । સાતાવેદનીયમ્ ૧ । અસાતાવેદનીયમ્ ૧ । વર્ગ-ગન્ધ-રસ-સ્પર્શાહ્યા-  
શ્ચતસ્રઃ પ્રકૃતયઃ ૪ । ૭૫ ॥

एताः प्रकृतयः कमपि ज्ञानादिगुणं न हन्तीत्यघातिन्य उच्यन्ते ।  
इमाः सर्वघातिप्रकृतिभिः सह वेद्यमानाः स्वयमघातिन्योऽपि सर्वघातिफलं  
प्रदर्शयन्ति । देशघातिप्रकृतिभिः सह पुनर्वेद्यमानाः स्वयमघातिन्योऽपि देशघातिरसं  
दर्शयन्ति । यथा-स्वयमचौरश्चौरैः सह वर्तमानश्चौर इवावभासते तद्वत् ।

છહ સંહનન૨૮, પાંચ જાતિયાँ૩૩, ચાર ગતિયાँ૩૭, દો વિહાયોગતિયાँ૩૯, ચાર  
આનુપૂર્વી૪૩, ચાર આયુ૪૭, ત્રસદશક૫૭, સ્થાવરદશક૬૭; ઉચ્ચગોત્ર૬૮, નીચગોત્ર૬૯,  
સાતાવેદનીય૭૦, અસાતાવેદનીય૭૧, તથા વર્ણ, રસ, ગન્ધ, ઔર સ્પર્શનામક ચાર  
પ્રકૃતિયાँ૭૫ ।

ये प्रकृतियाँ ज्ञान आदि किसी गुणका घात नहीं करती हैं । इसी लिये ये अघाती  
कहलाती हैं । जब इनका सर्वघाता प्रकृतियों के साथ वेदन होता है तब ये स्वयं अघाती  
होते हुए भी सर्वघाता रसकों प्रकट करती हैं, और देशघाती प्रकृतियों  
के साथ इनका वेदन हो तो स्वयं अघाती होने पर भी देशघाती रस को प्रकट करती हैं ।  
जैसे कोई पुरुष चोर न हो किन्तु चोरों के साथ हो तो वह भी चोर जैसा ही प्रतीत होता है ।  
यही हाल इन अघाती प्रकृतियों का है ।

ગતિ, (૩૯) ચાર અનુપૂર્વી, (૪૩) ચાર આયુ, (૪૭) ત્રસદશક, (૫૭) સ્થાવરદશક,  
(૬૭) ઉચ્ચગોત્ર, (૬૮) નીચગોત્ર, (૬૯) સાતાવેદનીય, (૭૦) અસાતાવેદનીય, (૭૧)  
તથા વર્ણ રસ, ગન્ધ, અને સ્પર્શ નામની ચાર પ્રકૃતિઓ (૭૫).

આ પ્રકૃતિઓ જ્ઞાન આદિ કોઈ શુભનો ઘાત કરતી નથી. એટલા માટે તેને  
અઘાતી પ્રકૃતિ કહે છે, પરંતુ સર્વઘાતી પ્રકૃતિઓની સાથે જ્યારે તેનું વેદન થાય છે  
તો પોતે અઘાતી હોવા છતાંય પણ એ સર્વઘાતીનું કૃણ પ્રદર્શિત કરે છે. અથવા  
દેશઘાતી પ્રકૃતિઓની સાથે તેનું વેદન હોય તો પોતે અઘાતી હોવા છતાંય પણ  
દેશઘાતી રસને પ્રગટ કરે છે. જેવી રીતે કોઈ પુરુષ ચોર ન હોય પરંતુ ચોરોની સાથે હોય  
તો તે પણ ચોર જેવો જ દેખાય છે. એ પ્રમાણેજ આ અઘાતી પ્રકૃતિઓ વિષે સમજવું.

### ઉત્તરપ્રકૃતિસંખ્યા—

જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મણામુત્તરપ્રકૃતિસંખ્યા અષ્ટચત્વારિંશદધિકશતં ૧૪૮  
ભવન્તિ । તથાહિ—

(૧) જ્ઞાનાવરણીયસ્ય—મતિ—શ્રુતા—ઽવધિ—મનઃપર્યય—કેવલજ્ઞાનાવરણીય—  
ભેદાત્ પશ્ચ ।

(૨) દર્શનાવરણીયસ્ય—ચક્ષુર્દર્શના—ઽચક્ષુર્દર્શના—ઽવધિદર્શન—કેવલદર્શનાવર-  
ણીયાનિ ચત્વારિ, તથા—નિદ્રા—નિદ્રાનિદ્રા—પ્રચલા—પ્રચલાપ્રચલા—સ્ત્યાનર્દ્ધિભેદાત્  
પશ્ચ મિલિત્વા નવ ભવન્તિ ।

(૩) વેદનીયસ્ય શાતાશાતભેદેન દ્વૌ ભેદૌ સ્તઃ ।

### ઉત્તરપ્રકૃતિયોંકી સંખ્યા—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોંકી ઉત્તર પ્રકૃતિયોંકી સંખ્યાઈ (મધ્યમવિવક્ષા સે )  
૧૪૮ હૈં । વે હસ પ્રકાર—

(૧) જ્ઞાનાવરણીય કી પાંચ—(૧) મતિજ્ઞાનાવરણીય, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય, (૩)  
અવધિજ્ઞાનાવરણીય, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય, (૫) કેવલજ્ઞાનાવરણીય ।

(૨) દર્શનાવરણીય કી નૌ—(૧) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૨) અચક્ષુર્દર્શનાવરણીય,  
(૩) અવધિદર્શનાવરણીય, (૪) કેવલદર્શનાવરણીય, તથા (૫) નિદ્રા, (૬) નિદ્રાનિદ્રા,  
(૭) પ્રચલા, (૮) પ્રચલા-પ્રચલા, (૯) સ્ત્યાનર્દ્ધિ, યે પાંચ નિદ્રાઈ મિલકર કુલ નૌ  
પ્રકૃતિયાં હૈં ।

(૩) વેદનીય કી દો—સાતાવેદનીય ઓર અસાતાવેદનીય ।

### ઉત્તરપ્રકૃતિઓની સંખ્યા—

જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોંની ઉત્તરપ્રકૃતિઓની સંખ્યા (મધ્યમ વિવક્ષાથી)  
એકસોને અડતાલીસ (૧૪૮) છે. તે આ પ્રમાણે—

(૧) જ્ઞાનાવરણીયની પાંચ — (૧) મતિજ્ઞાનાવરણીય, (૨) શ્રુતજ્ઞાનાવરણીય,  
(૩) અવધિજ્ઞાનાવરણીય, (૪) મનઃપર્યયજ્ઞાનાવરણીય, (૫) કેવલજ્ઞાનાવરણીય.

(૨) દર્શનાવરણીયની નવ છે. (૧) ચક્ષુર્દર્શનાવરણીય, (૨) અચક્ષુર્દર્શનાવરણીય,  
(૩) અવધિદર્શનાવરણીય, (૪) કેવલદર્શનાવરણીય, તથા (૫) નિદ્રા, (૬) નિદ્રા-નિદ્રા  
(૭) પ્રચલા, (૮) પ્રચલા-પ્રચલા, (૯) સ્ત્યાનર્દ્ધિ, આ પાંચ નિદ્રાઓ મળીને કુલ  
નવ પ્રકૃતિઓ થાય છે.

(૩) વેદનીયની બે (૧) સાતાવેદનીય અને અસાતાવેદનીય.



(४) मोहनीयस्य-अष्टाविंशतिर्भेदा भवन्ति । तथाहि-सम्यक्त्वमोहनीय-  
मिथ्यात्वमोहनीय-मिश्रमोहनीय-भेदेन त्रीणि दर्शनमोहनीयानि । पञ्चविंशति-  
चारित्रमोहनीयानि मिलित्वाऽष्टाविंशतिः । चारित्रमोहनीयस्य पञ्चविंशति-  
भेदाः, यथा - कषायमोहनीय १ - नोकषायमोहनीय २-भेदेन चारित्रमोहनीयं  
द्विविधम् । तत्र कषायमोहनीयस्य षोडश भेदा भवन्ति, यथा-अनन्तानुबन्धी  
क्रोधो मानो, माया, लोभः ४, अनन्तः=संसारो नारक-तिर्यग्-मनुष्य-देव-  
जन्म-जरा-मरण-परम्परालक्षणः, तदनुबन्धादनन्तानुबन्धिनः क्रोधमानमायालोभा-  
श्चत्वारः कषायाः ४ । तत्र क्रोधः-कृत्याकृत्यविवेकोन्मूलकाऽक्षमारूप आत्म-  
परिणामः । मानो-गर्वः, माया-शाठ्यम्, लोभो-गृध्नुता । अनन्तानुबन्धि-

(४) मोहनीय की अट्ठाईस-सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय और मिथ्यात्वमोहनीय,  
ये तीन दर्शनमोहनीय की, तथा पच्चीस चारित्रमोहनीय की कुल अट्ठाईस प्रकृतियाँ हैं ।  
चारित्रमोहनीय की पच्चीस प्रकृतियाँ इस प्रकार हैं-चारित्रमोहनीय के दो भेद हैं-कषायचारित्र-  
मोहनीय, और नोकषायचारित्रमोहनीय । कषायचारित्रमोहनीय के सोलह भेद हैं, जैसे-अनन्तानुबन्धी  
क्रोध, मान, माया, लोभ, १ जो कषाय, नारक, तिर्यक्, मनुष्य और देवगति में जन्म-जरा-मरण-  
रूप अनन्त संसार का अनुबन्ध करे, वह अनन्तानुबन्धी है । उस के चार भेद हैं-क्रोध,  
मान, माया और लोभ । कर्तव्य-अकर्तव्य के विवेक को नष्ट कर देने वाला अक्षमारूप आत्मा  
का परिणाम क्रोध कहलाता है । गर्वको मान कहते हैं । माया का अर्थ कपट है । गृद्धिभाव  
(लालच) लोभ कहलाता है । अनन्तानुबन्धी कषायचतुष्क में क्रोध को पर्वत की राजि

(४) मोहनीयकर्मनी अष्टावीस छे. (१) सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, अने  
मिथ्यात्वमोहनीय, आ त्रय दर्शनमोहनीयनी, तथा पच्चीस चारित्रमोहनीयनी, अने  
प्रमाणे कुल अष्टावीस प्रकृतियों छे. चारित्रमोहनीयनी पच्चीस प्रकृतियों आ प्रमाणे छे:-  
चारित्रमोहनीयना ये लेह छे. (१) कषायचारित्रमोहनीय अने (२) नोकषायचारित्रमोहनीय,  
कषायचारित्रमोहनीयना सोण लेह छे. जेभके-अनन्तानुबन्धी क्रोध, मान, माया, लोभ.  
जे कषाय नारक, तिर्यक्, मनुष्य, अने देवगतिमां जन्म, जरा, मरणरूप अनन्त  
संसारना अनुबन्ध करे ते अनन्तानुबन्धी छे. तेना चार लेह छे, क्रोध, मान, माया  
अने लोभ, कर्तव्य-अकर्तव्यनां विवेकना नाश करवावाणा अक्षमारूप आत्माना  
परिणाम ते क्रोध कहेवाय छे. गर्वने मान कहे छे. मायाना अर्थ कपट छे. लालच ते  
लोभ कहेवाय छे. अनन्तानुबन्धी कषायचतुष्कमां क्रोधने पर्वतनी राजिनु (पर्वत कषावाधी

કષાયચતુષ્ટયે ક્રોધસ્ય પર્વતરાજિઃ, માનસ્ય શૈલસ્તમ્ભઃ, માયાયાઃ-વંશમૂલં, લોભસ્ય-કૃમિજરાગઃ, ઉદાહરણમ્ ।

एवमप्रत्याख्यानानावरणीयकषायाः क्रोधादयश्चत्वारः४ । तत्र प्रत्याख्यानं द्विविधम् - देशविति-सर्वविरति-भेदात् । प्रत्याख्यानमित्यत्र प्रतिशब्दः । प्रतिषेधवाची, प्रतिषेधस्याख्यानं=प्रकाशनम्-प्रत्याख्यानम् । ‘सर्वान् प्राणिनो न हन्मि यावज्जीवम्’ इत्यादि भावतः स्वाचार्यादि समीपे प्रकाशनमित्यर्थः । प्रत्याख्यानस्यावरणीयम् प्रत्याख्यानानावरणीयम्, न प्रत्याख्यानानावरणीयम् = अप्रत्याख्यानानावरणीयम् । अत्रोपमार्थो ‘नञ्’ - शब्दः ।

(પર્વત ફટને સે ઉત્પન્ન હુઈ દરાર,) કા, માન કો શૈલસ્તંભકા, માયાકો વાંસકી જડકા ઓર લોભકો કિરમિચી રંગકા ઉદાહરણ દિયા ગયા હૈ ।

इसी प्रकार अप्रत्याख्यानानावरण के क्रोध आदि चार भेद हैं । प्रत्याख्यान दो प्रकारका है-देशविरति और सर्वविरति । ‘प्रत्याख्यान’ शब्द में ‘प्रति’ उपसर्ग निषेध-वाचक है, अर्थात् प्रतिषेध का प्रकाश करना प्रत्याख्यान है, अर्थात् “मैं जीवनपर्यन्त किसी भी प्राणीकी हिंसा नहीं करूँगा” इत्यादि प्रकार से भावपूर्वक अपने आचार्य आदि के समक्ष प्रकाशित करना प्रत्याख्यान है । प्रत्याख्यान का आवरणीय प्रत्याख्यानानावरणीय कहलाता है । जो प्रत्याख्यानानावरणीय न हो वह अप्रत्याख्यानानावरणीय है । यहाँ ‘नञ्’ शब्द उपमा के अर्थ में है, अर्थात् जो कषाय प्रत्याख्यानानावरणीय के समान हो वह अप्रत्याख्यानानावरणीय

ઉત્પન્ન થયેલી ફાટ-ચીર) માનને શૈલસ્તંભનું, માયાને વાંસની જડનું અને લોભને કિરમીય રંગનું ઉદાહરણ આપ્યું છે.

આ પ્રમાણે અપ્રત્યાખ્યાનાવરણના ક્રોધ આદિ ચાર ભેદ છે. પ્રત્યાખ્યાન બે પ્રકારના છે-દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિ ‘પ્રત્યાખ્યાન’ શબ્દમાં ‘પ્રતિ’ ઉપસર્ગ નિષેધ-વાચક છે. અર્થાત્ પ્રતિષેધનો પ્રકાશ કરવો તે પ્રત્યાખ્યાન છે. અર્થાત્ “હું જીવન સુધી કોઈ પણ પ્રાણીની હિંસા કરીશ નહીં.” ઇત્યાદિ પ્રકારે ભાવપૂર્વક પોતાના આચાર્ય આદિના સમક્ષ પ્રકાશિત કરવું તે પ્રત્યાખ્યાન છે. પ્રત્યાખ્યાન નો આવરણીય પ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહેવાય છે. જે પ્રત્યાખ્યાનાવરણીય ન હોય તે અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય છે. અહિં ‘નજ્’ શબ્દ ઉપમાના અર્થમાં છે. અર્થાત્-જે કષાય પ્રત્યાખ્યાનાવરણીયની સમાન હોય તે અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહેવાય છે. અથવા ‘નજ્’ અદ્ય-થોડું-એવા અર્થમાં છે. અર્થાત્



પ્રત્યાખ્યાનાવરણીયવત્ = અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીયમ્ । યદ્વા-અલ્પાર્થો નજ્, અલ્પં પ્રત્યાખ્યાનમ્=અપ્રત્યાખ્યાનમ્, તસ્યાવરણીયમિતિ । અલ્પં=દેશવિરતિરૂપં પ્રત્યાખ્યાનં સમાવૃણોતિ કષાયચતુષ્ટયમ્, તસ્માદપ્રત્યાખ્યાનાવરણીયમિત્યુચ્યતે । યઃ કષાયઃ સ્વલ્પં દેશવિરતિરૂપમાવૃણોતિ સ સર્વવિરતિરૂપં પ્રત્યાખ્યાનમાવૃણોત્યેવેતિ નાત્ર ચિત્રમ્ । યત્કર્મોદયાદાવિર્ભૂતાઃ કષાયાઃ કેવલં વિરતિમાત્રમાવૃણ્વન્તિ તે ત્વપ્રત્યાખ્યાનાવરણીયાઃ કષાયાઃ ।

एवं प्रत्याख्यानावरणीयकषायाः क्रोधादयश्चत्वारः । अत्र प्रत्याख्यान-शब्देन सर्वविरतिपरिग्रहः । ये पुनः कषायाः सर्वविरतिमेव प्रतिबध्नन्ति, न तु देशविरतिं ते प्रत्याख्यानावरणीया इति ।

કહલાતા હૈ । અથવા 'નજ્' અલ્પ-અર્થ મેં હૈ, અર્થાત્ અલ્પ પ્રત્યાખ્યાન અપ્રત્યાખ્યાન કહલાતા હૈ, ઉસકા આવરણીય અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય હૈ । યહ કષાયચતુષ્ટય અલ્પ અર્થાત્ દેશવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન કો આવૃત કરતા હૈ, ઇસ કારણ યહ અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહલાતા હૈ । જો કષાય સ્વલ્પ દેશવિરતિ કો બી નહીં હોને દેતા વહ સર્વવિરતિ કો ન હોને દે, ઇસ મેં આશ્ચર્ય હી ક્યા હૈ ? । જિસ કર્મ કે ઉદય સે આવિર્ભૂત કષાય કેવલ વિરતિમાત્ર કો રોકતે હૈ, વે અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહલાતે હૈ ।

इसी प्रकार क्रोध आदि चार प्रत्याख्यानावरणीय हैं । यहा प्रत्याख्यान शब्द से सर्वविरति का ग्रहण किया गया है । जो कषाय, सिर्फ सर्वविरति का ही घात करते हैं, देशविरति का नहीं वे प्रत्याख्यानावरणीय कहलाते हैं ।

અહ્ય પ્રત્યાખ્યાન અપ્રત્યાખ્યાન કહેવાય છે. તેનું આવરણીય અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય છે. આ કષાયચતુષ્ટય અહ્ય અર્થાત્ દેશવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાનને આવૃત કરે છે (ઢાંકી દે છે). એ કારણથી એ અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહેવાય છે. જે કષાય સ્વલ્પ દેશ-વિરતિને પણ થવા દેતા નથી. તે સર્વવિરતિને નહિ થવાદે. એમાં આશ્ચર્યજ શું છે ? જે કર્મના ઉદયથી આવિર્ભૂત (ઉત્પન્ન થયેલા) કષાય કેવલ વિરતિમાત્રને રોકે છે, તે અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહેવાય છે.

આ પ્રમાણે ક્રોધ આદિ ચાર પ્રત્યાખ્યાનાવરણીય છે, અહિં પ્રત્યાખ્યાન શબ્દથી સર્વવિરતિનું ગ્રહણ કર્યું છે. જે કષાય, માત્ર સર્વવિરતિનો ઘાત કરે છે, દેશવિરતિનો નહીં, તે પ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહેવાય છે.



પ્રત્યાખ્યાનસ્ય દેશવિરતિર્સર્વવિરતિરૂપસ્ય પરિણામદ્વયસ્યોત્પત્તેર્વિધા-  
તકત્વાત્ પ્રત્યાખ્યાનાવરણીયા ઉચ્યન્તે, ન તુ વિદ્યમાનસ્ય પ્રત્યાખ્યાનસ્ય  
વિધાતકતયેતિ તત્ત્વમ્ ।

एवं संज्वलनकषायाः क्रोधादयश्चत्वारः ४ । समस्तसावद्ययोगविरतं  
संयमरतमपि यत्ति दुःसहपरिषहसंपाते संज्वलयन्ति=मालिन्यमापादयन्ति - इति  
संज्वलनाः । (१६) ।

અ પ્રત્યાખ્યાનાવરણીયકષાયચતુષ્ટયે દૃષ્ટાન્તા ઉચ્યન્તે-ક્રોધસ્ય-  
તડાગભૂમિરાજિઃ, માનસ્યાસ્થિરતમ્ભઃ, માયાયાઃ મેષશૃઙ્ગઃ, લોભસ્ય કર્દમરાગઃ ।

દેશવિરતિ ઓર સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાન કી ઉત્પત્તિ કા ઘાતક હોને સે હસે પ્રત્યા-  
ખ્યાનાવરણીય કહતે હૈં, પહેલે સે વિદ્યમાન પ્રત્યાખ્યાન કા ઘાતક હોને સે નહીં ।

इसी प्रकार क्रोध आदि चार संज्वलन कषाय हैं । सब प्रकार के सावद्य योग से  
निवृत्त संयम में लीन मुनि को दुःसह परीषह उपस्थित होने पर जलाने वाला अर्थात् मलिनता  
उत्पन्न करने वाला कषाय संज्वलन कहलाता है ।

અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીયકષાયચૌકડી કે દૃષ્ટાન્ત બતલાતે હૈં-ક્રોધ કા દૃષ્ટાન્ત તડાગ-  
ભૂમિરાજિ હૈ, અર્થાત્ તાલાવ કી ભૂમિ ફટને સે ઉત્પન્ન હોનેવાલી દરાર કે સમાન યહ ક્રોધ  
હોતા હૈ । માન કા ઉદાહરણ હઙ્ડીકા સ્તંભ હૈ । માયાકા ઉદાહરણ મેઢાકા સીંગ હૈ ઓર  
લોભ કા દૃષ્ટાન્ત ગાડી કા ઓગન (ગાડી કે પૈયે મેં દિયે હુણ તૈલ કા કીટા) હૈ ।

દેશવિરતિ અને સર્વવિરતિરૂપ પ્રત્યાખ્યાનની ઉત્પત્તિનું ઘાતક હોવાથી તેને  
પ્રત્યાખ્યાનાવરણીય કહે છે, પહેલાથી વિદ્યમાન પ્રત્યાખ્યાનનું ઘાતક હોવાથી નહિ.

એ પ્રમાણે ક્રોધ આદિ ચાર સંજ્વલન કષાય છે, સર્વ પ્રકારના સાવધ યોગથી  
નિવૃત્ત, સંયમમાં લીન મુનિને દુઃસહ પરિષદ આવી પ્રાપ્ત થતાં જલાવવાવાળા અર્થાત્  
મલિનતા ઉત્પન્ન કરવાવાળા કષાય સંજ્વલન કહેવાય છે.

અપ્રત્યાખ્યાનાવરણીય-કષાય-ચૌકડીનું દૃષ્ટાન્ત બતાવે છે-ક્રોધનું દૃષ્ટાન્ત તડાવની  
ભૂમિરાજિ છે. અર્થાત્ તડાવની ભૂમિ ફાટવાથી ઉત્પન્ન થયેલી ફાટ-ચીરના સમાન  
એ ક્રોધ હોય છે. માનનું ઉદાહરણ હાડકાનો સ્તંભ છે. માયાનું ઉદાહરણ ઘેટાનાં સીંગ  
છે, અને લોભનું દૃષ્ટાન્ત ગાડીની મળી (ગાડીનાં પૈડાંમાં અપાયેલા તેલનું કીટું) છે.

प्रत्याख्यानावरणीयकषायचतुष्टये क्रोधस्य-वालुकाराजिः, मानस्य-काष्ठस्तम्भः, मायाया-गच्छद्बलीवर्दमूत्रिका, लोभस्य-खञ्जनरागः ।

संज्वलनकषायचतुष्टये क्रोधस्य-सलिलराजिः, मानस्य-तृणस्तम्भः, मायाया-रथकारतक्षितकाष्ठसंवलितवक्त्र, लोभस्य-हरिद्राराग इति ।

नोकषायमोहनीयस्य नव भेदाः सन्ति-हास्यं, रतिः, अरति, शोकः, भयं, जुगुप्सा, पुरुषवेदः, स्त्रीवेदः, नपुंसकवेद इति २५ ।

(५) आयुष्यकर्म चतुर्विधम्-नारक-तैर्यग्-मानुष-दैवायुर्भेदात् । यस्यो-दयात् प्रायोग्यप्रकृतिविशेषानुशायीभूत आत्मा नारकादिभावेन जीवति, यस्य च

प्रत्याख्यानावरणीय कषाय की चौकडी के उदाहरण-क्रोध का उदाहरण वाल में खींची हुई लकीर है । मान का उदाहरण काठका खंभा है । माया का उदाहरण चलते हुए बैल के मूत्र की ठेढ़ी-मेढ़ी लकीर है और लोभ का उदाहरण खंजन-राग है ।

संज्वलन कषाय की चौकडी के उदाहरण-क्रोध का उदाहरण जल में बनाई हुई लकीर है । मानका उदाहरण तिनके का स्तम्भ है । माया का उदाहरण बढई द्वारा छीले हुए काठका छिलका है, और लोभ का उदाहरण हलदी का रंग है ।

नोकषाय मोहनीय के नौ भेद हैं-हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद और नपुंसकवेद २५ ।

(५) आयुष्य कर्म के चार भेद हैं-नरकायु, तिर्यचायु, मनुष्यायु और देवायु । जिस कर्म के उदय से प्रायोग्यप्रकृतिविशेषानुशायी अर्थात् जिस कर्म के उदय से उस-उस गतियोग्य प्रकृतिविशेष में स्थित आत्मा नारक आदि के रूप में जीता है

प्रत्याख्यानावरणीय कषायની ચોકડીનું ઉદાહરણ-ક્રોધનું ઉદાહરણ-રેતીમાં કરેલી લીટી છે. માનનું ઉદાહરણ-કાષ્ઠનો થાંભલો છે. માયાનું ઉદાહરણ-ચાલતા બળદીઆના મૂત્રની વાંકી-ચૂંકી લીટી છે, અને લોભનું ઉદાહરણ-ખંજન-રાગ છે.

સંજ્વલન કષાયની ચોકડીના ઉદાહરણ-ક્રોધનું ઉદાહરણ-પાણીમાં કરેલી લીટી છે. માનનું ઉદાહરણ તણબલાનો થાંભલો છે. માયાનું ઉદાહરણ બઢઈ દ્વારા (સુતાર દ્વારા) છોલેલા લાકડાની છાલ છે અને લોભનું ઉદાહરણ-હલદરનો રંગ છે.

નોકષાયમોહનીયના નવ ભેદ છે-હાસ્ય, રતિ, અરતિ, શોક, ભય, જુગુપ્સા, પુરુષવેદ, સ્ત્રીવેદ, અને નપુસકવેદ. ૨૫.

(૫) આયુષ્ય-કર્મના ચાર ભેદ છે-નરકાયુ, તિર્યચાયુ, મનુષ્યાયુ, અને દેવાયુ. જે કર્મના પ્રાયોગ્યપ્રકૃતિવિશેષાનુશાયી, અર્થાત્ જે કર્મના ઉદયથી તે-તે ગતિયોગ્ય પ્રકૃતિવિશેષમાં સ્થિત આત્મા નારકી આદિના રૂપમાં જીવે છે, અને જેના ક્ષયથી મરણ

ક્ષયાન્મૃત ઉચ્યતે, તદાયુઃ । યદ્વા-આનીયન્તે શેષપ્રકૃતયઃ ઉપભોગાય જીવેન યસ્મિન્, તદાયુઃ । યથા-કાંસ્યાદિપાત્રે શાલ્યોદનવ્યઝ્જનાદયો ભોક્ત્રા ભોક્તુ-માનીયન્તે, તદ્વત્ ।

(૬) નમયતિ=પ્રાપયતિ નારકાદિસંજ્ઞાં જીવમિતિ નામ । નામકર્મ-ગત્ત્વિનવતિર્ભેદાઃ ભવન્તિ ।

તત્ર મૂલભેદાઃ દ્વિચત્વારિંશત્ । તથાહિ—

(૧) ગતિનામ, (૨) જાતિનામ, (૩) શરીરનામ, (૪) અઙ્ગોપાઙ્ગનામ, (૫) નિર્માણનામ, (૬) બન્ધનનામ, (૭) સંઘાતનામ, (૮) સંસ્થાનનામ, (૯) સંહનનનામ, (૧૦) વર્ણનામ, (૧૧) ગન્ધનામ, (૧૨) રસનામ, (૧૩) સ્પર્શ-

ઔર જિસ કે ક્ષય સે મર જાતા હૈ, ઉસે આયુકર્મ કહતે હૈ । અથવા જિસ મેં જીવ ભોગને કે લિપ્ અન્ય પ્રકૃતિયોં કો લાતા હૈ બહ આયુ હૈ, જૈસે કાંસે આદિ કે ભાજન મેં ચાવલ, ઓદન, વ્યંજન આદિ વસ્તુએં ભોગને વાલા પુરુષ લાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર શેષ પ્રકૃતિયોં આયુ મેં ભોગી જાતી હૈ ।

(૬) નામ-કર્મ કે તેરાનવે (૧૩) ભેદ-જો કર્મ જીવ કો નારક આદિ સંજ્ઞાઓં કા પાત્ર બનાતા હૈ, વહ નામકર્મ કહલાતા હૈ । ઉસકે તેરાનવે ભેદ હૈ । ઉન મેં મી મૂલ ભેદ બયાલીસ હૈ, વે હિસ પ્રકાર—(૧) ગતિનામ, (૨) જાતિનામ, (૩) શરીરનામ, (૪) અઙ્ગોપાઙ્ગનામ; (૫) નિર્માણનામ, (૬) બન્ધનનામ, (૭) સંઘાતનામ, (૮) સંસ્થાનનામ, (૯) સંહનનનામ (૧૦) વર્ણનામ, (૧૧) ગન્ધનામ, (૧૨) રસનામ, (૧૩) સ્પર્શનામ, (૧૪) આનુપૂર્વનામ,

પામે છે, તેને આયુકર્મ કહે છે અથવા જેમાં જીવ અન્ય પ્રકૃતિઓને ભોગવવા માટે લાવે છે તે આયુ છે. જેમ કે કાંસા આદિના વાસણમાં ચોખા, ભાત, વ્યંજન (શાક) આદિ વસ્તુઓ ભોગવવાવાળા પુરુષ લાવે છે તે પ્રમાણે શેષ-પ્રકૃતિઓ આયુમાં ભોગવાય છે.

(૬) નામકર્મના ત્રાણ (૬૩) લેદ છે. જે કર્મ જીવને નારકી આદિ સંજ્ઞાઓનું પાત્ર બનાવે છે, તે નામકર્મ કહેવાય છે, તેના ત્રાણ (૬૩) લેદ છે. તેમાં પચ્ચ મૂલ લેદ એતાલીસ છે. તે આ પ્રમાણે—(૧) ગતિનામ, (૨) જાતિનામ, (૩) શરીરનામ, (૪) અંગોપાંગનામ, (૫) નિર્માણનામ, (૬) બંધનનામ, (૭) સંઘાતનામ, (૮) સંસ્થાનનામ, (૯) સંહનનનામ, (૧૦) વર્ણનામ, (૧૧) ગન્ધનામ, (૧૨) રસનામ, (૧૩) સ્પર્શનામ, (૧૪) આનુપૂર્વનામ, (૧૫)



नाम, (१४) आनुपूर्वीनाम, (१५) अगुरुलघुनाम, (१६) उपघातनाम, (१७) पराघातनाम, (१८) आतपनाम, (१९) उद्योतनाम, (२०) उच्छ्वासनाम, (२१) विहायोगतिनाम, (२२) प्रत्येकशरीरनाम, (२३) साधारणशरीरनाम, (२४) त्रसनाम, (२५) स्थावरनाम, (२६) सुभगनाम, (२७) दुर्भगनाम, (२८) सुस्वरनाम, (२९) दुस्स्वरनाम, (३०) शुभनाम, (३१) अशुभनाम, (३२) सूक्ष्मनाम, (३३) बादरनाम, (३४) पर्याप्तनाम, (३५) अपर्याप्तनाम, (३६) स्थिरनाम, (३७) अस्थिरनाम, (३८) आदेयनाम, (३९) अनादेयनाम, (४०) यशोनाम, (४१) अयशोनाम, (४२) तीर्थङ्करनाम ।

एते मूलभेदाः पिण्डप्रकृतिनाम्नापि कथ्यन्ते । अत्र गत्यादिचतुर्दशपिण्ड-प्रकृतीनामुत्तरप्रकृतयः— पञ्चषष्टिः (६५) ।

(१५) अगुरुलघुनाम, (१६) उपघातनाम, (१७) पराघातनाम, (१८) आतपनाम, (१९) उद्योतनाम, (२०) उच्छ्वासनाम, (२१) विहायोगतिनाम, (२२) प्रत्येकशरीरनाम, (२३) साधारणशरीरनाम, (२४) त्रसनाम, (२५) स्थावरनाम, (२६) सुभगनाम, (२७) दुर्भगनाम, (२८) सुस्वरनाम, (२९) दुस्स्वरनाम, (३०) शुभनाम, (३१) अशुभनाम, (३२) सूक्ष्मनाम, (३३) बादरनाम, (३४) पर्याप्तनाम, (३५) अपर्याप्तनाम, (३६) स्थिरनाम, (३७) अस्थिरनाम, (३८) आदेयनाम, (३९) अनादेयनाम, (४०) यशःकीर्तिनाम, (४१) अयशःकीर्तिनाम, और (४२) तीर्थंकरनाम—कर्म ।

इन बयालीस प्रकृतियों में जिन प्रकृतियों के अवान्तर भेद हैं, उन्हें पिण्ड-प्रकृति कहते हैं । गति आदि चौदह पिण्डप्रकृतियाँ हैं और उनके पैंसठ (६५) भेद होते हैं ।

अशुल्लघुनाम, (१६) उपघातनाम, (१७) पराघातनाम, (१८) आतपनाम, (१९) उद्योतनाम, (२०) उच्छ्वासनाम, (२१) विहायोगतिनाम, (२२) प्रत्येकशरीरनाम, (२३) साधारण-शरीरनाम, (२४) त्रसनाम, (२५) स्थावरनाम, (२६) सुभगनाम, (२७) दुर्भगनाम, (२८) सुस्वरनाम, (२९) दुःस्वरनाम, (३०) शुभनाम, (३१) अशुभनाम, (३२) सूक्ष्मनाम, (३३) बादरनाम, (३४) पर्याप्तनाम, (३५) अपर्याप्तनाम, (३६) स्थिरनाम, (३७) अस्थिरनाम, (३८) आदेयनाम, (३९) अनादेयनाम, (४०) यशःकीर्तिनाम, (४१) अयशःकीर्तिनाम, (४२) तीर्थंकरनाम—कर्म ।

आ मेंतालीस प्रकृतियोंमें ७२ प्रकृतियोंना अवान्तर भेद छे, तेने पिण्डप्रकृति कहे छे. गति आदि चौदह पिण्डप्रकृतियों छे. अने पैंसठ (६५) तेना भेद छे.

[૧] ગતિનામ્નઃ પિષ્ઠપ્રકૃતેશ્વત્વારો ભેદાઃ— નરકગતિનામ, તિર્યગ્ગતિનામ, મનુષ્યગતિનામ, દેવગતિનામ ચ ।

[૨] જાતિનામ્નો ભેદાઃ પશ્ચ-એકેન્દ્રિયજાતિનામ, દ્વીન્દ્રિયજાતિનામ, ત્રીન્દ્રિયજાતિનામ, ચતુરિન્દ્રિયજાતિનામ, પચ્ચેન્દ્રિયજાતિનામ ।

[૩] શરીરનામ પશ્ચવિધમ્-ઔદારિકશરીરનામ, વૈક્રિયશરીરનામ, આહારકશરીરનામ, તૈજસશરીરનામ, કાર્મણશરીરનામ ।

[૪] અજ્ઞાન્યુપાજ્ઞાનિ ચ યસ્ય કર્મણ ઉદયાદ્યવન્તિ, તદજ્ઞોપાજ્ઞનામકર્મ । તત્ ત્રિવિધમ્-ઔદારિક-વૈક્રિયકા-ઽઽહારક-ભેદાત્ । તત્રાજ્ઞાન્યષ્ટૌ-ઉરઃ, શિરઃ,

[૧] ગતિનામકર્મ કે ચાર ભેદ-નરકગતિનામકર્મ, તિર્યચગતિનામકર્મ, મનુષ્યગતિનામકર્મ ઓર દેવગતિનામકર્મ ।

[૨] જાતિનામકર્મ કે પાંચ ભેદ હૈં-એકેન્દ્રિયજાતિનામ, દ્વીન્દ્રિયજાતિનામ, ત્રીન્દ્રિયજાતિનામ, ચતુરિન્દ્રિયજાતિનામ ઓર પચ્ચેન્દ્રિયજાતિનામ-કર્મ ।

[૩] શરીરનામકર્મ કે પાંચ ભેદ હૈં-ઔદારિકશરીરનામ, વૈક્રિયશરીરનામ; આહારક-શરીરનામ, તૈજસશરીરનામ ઓર કાર્મણશરીરનામ-કર્મ ।

[૪] જિસ કર્મ કે ઉદય સે અજ્ઞ ઓર ઉપાજ્ઞ હોતે હૈં વહ અજ્ઞોપાજ્ઞશરીરનામકર્મ, કહલાતા હૈ । ઉસકે ત્રીન ભેદ હૈં ઔદારિક-અજ્ઞોપાજ્ઞ, વૈક્રિય-અજ્ઞોપાજ્ઞ ઓર આહારક અજ્ઞોપાજ્ઞ । ઇન મેં અજ્ઞ આઠ હોતે હૈં-છાતી, સિર, પીઠ, પેટ, દો હાથ ઓર દો પૈર । વન્દના કરને મેં પાંચ અજ્ઞ પ્રશસ્ત માને જાતે હૈં-દો પૈર, દો હાથ, ઓર સિર । યહાં

(૧) ગતિનામકર્મના ચાર ભેદ-નરકગતિનામકર્મ, તિર્યચગતિનામકર્મ, મનુષ્યગતિનામકર્મ અને દેવગતિનામ-કર્મ.

(૨) જાતિનામકર્મના પાંચ ભેદ છે-એકેન્દ્રિયજાતિનામ, દ્વીન્દ્રિયજાતિનામ, ત્રીન્દ્રિયજાતિનામ, ચતુરિન્દ્રિયજાતિનામ, અને પચ્ચેન્દ્રિયજાતિનામ-કર્મ.

(૩) શરીરનામકર્મના પાંચ ભેદ છે-ઔદારિકશરીરનામ, વૈક્રિયશરીરનામ, આહારકશરીરનામ, તૈજસશરીરનામ, અને કાર્મણશરીરનામ-કર્મ.

એ કર્મના ઉદયથી અંગ અને ઉપાંગ થાય છે તે અંગોપાંગશરીરનામકર્મ કહેવાય છે. તેના ત્રણ ભેદ છે. ઔદારિકઅંગોપાંગ, વૈક્રિયઅંગોપાંગ અને આહારક-અંગોપાંગ. તેમાં અંગ આઠ હોય છે-છાતી, શિર, પીઠ, પેટ એ હાથ અને એ પગ. વન્દના કરવામાં પાંચ અંગ પ્રશસ્ત માન્યાં છે. એ પગ એ હાથ અને શિર-માથું. અહિં



पृष्ठम्, उदरं, करौ, पादौ च । वन्दने तु पञ्चाङ्गान्येव प्रशस्तानि—द्वौ चरणौ, द्वौ करौ, शिरश्चेति । तत्र चरणावित्यनेन जानुनी गृह्यते । एतानि पञ्चाङ्गानि भूमा-  
वारोप्य वन्दनं पञ्चाङ्गवन्दनम् । अष्टानामङ्गानामेकैकस्योपाङ्गमनेकप्रकारम्,  
तत्र शिरोऽङ्गस्योपाङ्गनामानि—यथा—मस्तिष्क—कपाल—कृकाटिका—शङ्ख—ललाट—  
तालु—कपोल—हनु—चिबुक—दशनौ—जठ—भ्रू—नयन—कर्ण—नासादीनि । तत्र मस्तिष्कं  
शिरोऽङ्गस्यारम्भकोऽवयवः ।

ननु मस्तिष्कं धातुविशेषो न त्वङ्गं नाप्युपाङ्गम् ? इति चेत्, उच्यते—कपाला-  
दिवत् शिरोऽङ्गस्यारम्भकत्वान्मस्तिष्कमप्युपाङ्गं शिरसोऽवगन्तव्यम् ।

स्थावरपञ्चके तूरःप्रभृतीन्यङ्गानि न सन्ति ।

पैरों का अभिप्राय घुटना समझना चाहिए । इन पांचों अङ्गों को भूमि पर टिका कर वन्दना  
करना पञ्चाङ्गवन्दना है । इन आठों अङ्गों में से प्रत्येक अङ्ग के अनेक उपाङ्ग हैं । उन में से  
सिरअङ्ग के उपाङ्ग इस प्रकार हैं—मस्तिष्क, कपाल, कृकाटिका, शंख, ललाट, तालु, कपोल,  
हनु, दाढ़ी, चिबुक (ठोड़ी) दांत, ओठ भौंह, नेत्र, कान, नाक, आदि । मस्तिष्क, शिररूप अङ्ग  
का आरम्भक अवयव है ।

‘मस्तिष्क एक प्रकार की धातु है, अङ्ग नहीं है और न उपाङ्ग ही है’ इसका  
समाधान यह है कि—कपाल आदि के समान शिररूप अङ्गका आरम्भक होने के कारण  
मस्तिष्क शिर का उपाङ्ग, ही है ।

पांच स्थावरों में छाती आदि अङ्ग नहीं होते ।

પગનો અભિપ્રાય ઘુટણ સમજવું જોઈએ. આ પાંચ અંગોને ભૂમિપર અડાડીને વંદના  
કરવી તે પંચાંગ વંદના છે. આ આઠ અંગોમાંથી પ્રત્યેક અંગનાં અનેક ઉપાંગ છે.  
તેમાંથી શિર-અંગના ઉપાંગ આ પ્રમાણે છે—મસ્તિષ્ક, કપાલ, કૃકાટિકા (શ્રીવાનો  
ઉન્નત દેશ) શંખ (કર્ણસમીપનુ અસ્થિ) લલાટ, તાળુ, ગાલ, દાઢી, ચિબુક (હડપચી  
વચ્ચેનો છાછર ખાટો) દાંત, ઓઠ, ભૌંહ, નેત્ર, કાન, નાક આદિ. મસ્તિષ્ક શિરરૂપ  
અંગનું આરંભક અવયવ છે.

‘મસ્તિષ્ક એક પ્રકારની ધાતુ છે, અંગ નથી અને પ્રત્યંગ પણ નથી’ તેનું  
સમાધાન એ છે કે—કપાલ આદિ પ્રમાણે શિરરૂપ અંગનું આરંભક હોવાના કારણે  
મસ્તિષ્ક, શિરનું ઉપાંગજ છે.

પાંચ સ્થાવરોમાં છાતી આદિ અંગ નથી.



(५) शरीरनामकर्मोदयाद् गृहीतेषु गृह्यमाणेषु वा तद्योग्यपुद्गलेष्वात्म-  
प्रदेशस्थितेषु शरीराकारेण परिणामितेष्वपि जतुकाष्ठवत् परस्परमवियोगलक्षणं  
बन्धननाम । यदीदं न स्यात् ततो बालुकापुरुषवद् विघटितानि शरीराणि स्युः ।  
बन्धननाम पञ्चधा-औदारिकादिभेदात् ।

(६) काष्ठपिण्डमृत्पिण्डायःपिण्डवत् बद्धानामपि पुद्गलानां संघातविशेष-  
जनकं संघातनाम । यदि संघातनामरूपः कर्मभेदो न स्यात्तर्हि पुरुषयोषिद्-  
गवादिरूपनानाशरीरभेदो न स्यात् । संघातविशेषजनकाऽन्यकर्मविशेषाभावात् ।

[५] शरीरनामकर्म के उदय से ग्रहण किये हुए या ग्रहण किये जाते हुए आत्म-  
प्रदेशों में स्थित और शरीर के आकार परिणत किये हुए शरीर के योग्य पुद्गलों में लाख  
और लकड़ी के समान परस्पर अवियोग होना बन्धननामकर्म है, अगर बन्धननामकर्म न  
होता तो बालू से बनाये हुए पुरुष के समान बिखर जाता । औदारिक आदि के भेद से  
बन्धन के भी पांच भेद हैं ।

[६] काष्ठपिंड, मृत्तिकापिंड या लोह के पिंड के समान बद्ध पुद्गलों में भी एक  
विशेष प्रकार का संघात (घनिष्टता) उत्पन्न करने वाला कर्म संघातनामकर्म कहलाता  
है, और संघातनामकर्म न होता तो पुरुष स्त्री गो आदिरूप भेद शरीर में न होता,  
क्यों कि संघातविशेष उत्पन्न करने वाला अन्य कर्म ही नहीं है । कार्य, कारण जैसा

(५) शरीरनामकर्मना उदयथी अहुषु करेला अथवा अहुषु करवाभां आवता  
आत्मप्रदेशोभां स्थित अने शरीरना आकारे परिणत करेला शरीरना योग्य पुद्गलोभां  
लाख अने लाकडीना समान अवियोग होवुं ते अंधननामकर्म छे. अथवा अंधननाम  
कर्म न होत तो रतीथी अनावेला पुरुषनी समान विभेराध जात. औदारिक आदिना  
बेदथी अंधनना पण पांच बेद छे.

(६) काष्ठपिंड, मृत्तिकापिंड, अथवा लोढाना पिंड समान अद्ध पुद्गलोभां पण  
अेक विशेष प्रकारना संघात (घनिष्टता) उत्पन्न करवावाणा कर्म ते संघात-  
नामकर्म कहवाय छे अथवा संघातनामकर्म न होय तो पुरुष, स्त्री, गाय आदि  
रूपलेह शरीरभां होय नहि. कारणके संघात-विशेष उत्पन्न करवावाणा अन्य कर्म नथी.

કારણાનુરૂપં હિ કાર્યં દૃષ્ટમ્ । સંઘાતવિશેષાદેવ હિ વિભાગેન પુરુષાદિશરીરવ્યપદેશી ભવતિ । સંઘાતનામ પञ्चधा-औदारिकादिभेदात् ।

[૭] વધ્યમાનેષુ શરીરયોગ્યપુદ્ગલેષુ યસ્ય કર્મણ ઉદયાત્ આકાર-વિશેષો ભવતિ તત્ સંસ્થાનનામ । એતચ્ચ षड्विधम्-(૧) સમચતુરસ્ત્રનામ-(૨) ન્યગ્રોધપરિમળ્ડલનામ-(૩) સાદિનામ-(૪) કુબ્જનામ-(૫) વામનનામ-(૬) હુણ્ડ-નામભેદાત્ ।

[૮] સંહનનનામ-અસ્ત્રાં વન્ધવિશેષઃ । તચ્ચ षड्विधम्-(૧) વજ્રર્ષભનારાચનામ, (૨) અર્ધવજ્રર્ષભનારાચનામ, (૩) નારાચનામ, (૪) અર્ધનારાચનામ, (૫) કીલિકાનામ, (૬) સેવાર્તનામ ચ ।

હી હોતા હૈ । સંઘાત કી ભિન્નતા કે કારણ હી શરીરોં મેં સ્ત્રી, પુરુષ આદિકા ભેદ-વ્યવહાર હોતા હૈ । ઔદારિક આદિ કે ભેદ સે સંઘાત મી પાંચ પ્રકાર કા હૈ ।

[૭] વાંધે જાતે હુએ શરીરયોગ્ય પુદ્ગલોં મેં જિસ કર્મ કે ઉદય સે આકૃતિ-વિશેષ બનતા હૈ ઉસે સંસ્થાનનામકર્મ કહતે હૈ । સંસ્થાન છહ પ્રકારકા હૈ—

(૧) સમચતુરસ્ત્ર-સંસ્થાન, (૨) ન્યગ્રોધપરિમળ્ડલ-સંસ્થાન, (૩) સાદિ-સંસ્થાન, (૪) કુબ્જક-સંસ્થાન, (૫) વામન-સંસ્થાન, (૬) હુણ્ડક-સંસ્થાન ।

[૮] અસ્થિયોં કે વન્ધવિશેષ કો સંહનનનામકર્મ કહતે હૈ । ઉસકે છહ ભેદ હૈ— (૧) વજ્રર્ષભનારાચ-સંહનન, (૨) અર્ધવજ્રર્ષભનારાચ-સંહનન, (૩) નારાચ-સંહનન, (૪) અર્ધનારાચ-સંહનન, (૫) કીલિકા-સંહનન ઔર (૬) સેવાર્ત-સંહનન ।

કાર્ય, કારણ જેવાંજ હોય છે. સંઘાતની ભિન્નતાના કારણેજ શરીરોમાં સ્ત્રી, પુરુષ આદિનો ભેદ-વ્યવહાર હોય છે. ઔદારિક આદિના ભેદથી સંઘાત પણ પાંચ પ્રકારના છે.

(૭) બંધાતા શરીરયોગ્ય પુદ્ગલોમાં જે કર્મના ઉદયથી આકૃતિવિશેષ બને છે. તેને સંસ્થાનનામકર્મ કહે છે. સંસ્થાન છ પ્રકારના છે—(૧) સમચતુરસ્ત્ર-સંસ્થાન, (૨) ન્યગ્રોધપરિમળ્ડલ-સંસ્થાન, (૩) સાદિ-સંસ્થાન, (૪) કુબ્જક-સંસ્થાન, (૫) વામન-સંસ્થાન, (૬) હુણ્ડક-સંસ્થાન.

(૮) અસ્થિઓના બંધવિશેષને સંહનનનામકર્મ કહે છે. તેના છ ભેદ છે:— (૧) વજ્રઋષભનારાચસંહનન, (૨) અર્ધવજ્રઋષભનારાચસંહનન, (૩) નારાચસંહનન, (૪) અર્ધનારાચસંહનન, (૫) કીલિકાસંહનન અને (૬) સેવાર્તસંહનન.

(૯) ઔદારિકાદિષુ શરીરેષુ यस્ય કર્મણ ઉદયાત્ કર્કશાદિઃ સ્પર્શ-વિશેષો જાયતે, તત્ સ્પર્શનામ । સ્પર્શનામાષ્ટધા-કર્કશ-મૃદુ-ગુરુ-લઘુ-સ્નિગ્ધ-રૂક્ષ-શીતો-ષ્ણનામભેદાત્ ।

(૧૦) રસનામ પશ્ચવિધમ્-તિક્ત-કટુ-કષાયા-ઝ્મલ-મધુરભેદાત્ । લવણો મધુરાન્તર્ગત ઇતિ કેચિત્ ।

(૧૧) શરીરવિષયં સૌરભં દુર્ગન્ધિત્વં ચ यस્ય કર્મણો વિપાકાન્નિર્વર્તતે, તદ્ ગન્ધનામ । ગન્ધનામ દ્વિવિધમ્-સુગન્ધ-દુર્ગન્ધભેદાત્ ।

(૧૨) યસ્યોદયાચ્છરીરેષુ કૃષ્ણાદિપશ્ચવિધવર્ણનિષ્પત્તિર્ભવતિ તદ્ વર્ણનામ, તત્ પશ્ચવિધમ્-કૃષ્ણ-નાલ-લોહિત-પીત-શુક્લભેદાત્ । સર્વાણિ ચૈતાનિ સ્પર્શના-માદીનિ વર્ણનામાન્તાનિ શરીરવર્તિષુ પુદ્ગલેષુ પરિણતાનિ ભવન્તિ ।

(૯) ઔદારિક આદિ શરીરોં મેં જિસ કર્મ કે ઉદય સે કઠોર આદિ સ્પર્શ ઉત્પન્ન હોતા હૈં ઉસે સ્પર્શનામકર્મ કહતે હૈં । સ્પર્શનામકર્મ આઠ પ્રકાર કા હૈં-કઠોર, કોમલ, ભારી, હલ્કા, ચિકના, રૂઝા, શીત, ઓર ઉષ્ણ ।

(૧૦) રસનામકર્મ પાંચ પ્રકાર કા હૈં-તીચ્છા, કડુવા, કસૈલા, ઝડા ઓર મીઠા । કિસી કે મત સે લવણ મધુર રસ કે અન્તર્ગત હૈં ।

(૧૧) જિસ કર્મ કે ઉદય સે શરીર મેં સુગન્ધ યા દુર્ગન્ધ ઉત્પન્ન હોતી હૈં ઉસે ગન્ધ-નામકર્મ કહતે હૈં । ઉસકે દો ભેદ હૈં-સુગન્ધનામ ઓર દુર્ગન્ધનામ ।

(૧૨) જિસ કર્મ કે ઉદય સે શરીરોં મેં કૃષ્ણ આદિ પાંચ વર્ણોં કી ઉત્પત્તિ હોતી હૈં, વહ વર્ણનામકર્મ હૈં । ઇસ કે પાંચ ભેદ હૈં-કૃષ્ણ, નીલ, રક્ત, પીત ઓર શુક્લ, સ્પર્શ સે લેકર વર્ણ તક યે સબ, શરીરવર્તી પુદ્ગલોં મેં હી પરિણત હોતે હૈં ।

(૯) ઔદારિક આદિ શરીરોમાં જે કર્મના ઉદયથી કઠોર આદિ સ્પર્શ ઉત્પન્ન થાય છે તેને સ્પર્શનામકર્મ કહે છે. સ્પર્શનામકર્મના આઠ પ્રકારના છે-કઠોર, કોમલ, ભારી, હલકો, ચિકણો રૂખો, શીત અને ઉષ્ણ.

(૧૦) રસનામકર્મ પાંચ પ્રકારે છે-તીજો, કડવો, કસાએલો, ખાટો અને મીઠો. કેટલાકના મતથી લવણ મધુર રસની અન્તર્ગત છે.

(૧૧) જે કર્મના ઉદયથી શરીરમાં સુગંધ અથવા દુર્ગંધ ઉત્પન્ન થાય છે. તેને ગંધનામકર્મ કહે છે. તેના બે ભેદ છે-સુગંધનામ અને દુર્ગંધનામ.

(૧૨) જે કર્મના ઉદયથી શરીરમાં કૃષ્ણ આદિ પાંચ વર્ણોની ઉત્પત્તિ થાય છે તે વર્ણનામકર્મ કહેવાય છે. તેના પાંચ ભેદ છે-કાળો, નીલો, રાતો, પીળો અને ઘોળો. સ્પર્શથી લઈને વર્ણ સુધી એ બધાય શરીરવર્તી પુદ્ગલોમાંજ પરિણત થાય છે.



(१३) नारकादिगतिं गन्तुरन्तर्गतौ वर्तमानस्य तदभिमुखमानुपूर्व्या [तत्तद्देशक्रमेण] तत्तत्प्रापणसमर्थमानुपूर्वीनाम । गत्यन्तरं गच्छतो जीवस्य यत्कर्मोदयाद-  
तिशयेन तद्रमनानुगुण्यं स्यात्, तदपि-आनुपूर्वीशब्दवाच्यं भवति । यथा-वारिवेगो  
बलीवर्दादेः, यथा वा नस्योतस्य बलीवर्दस्य नासारज्ज्वां प्रतिबद्धा रज्जुः, तथाऽऽनु-  
पूर्वीकर्म जीवस्य गत्यन्तरप्रापणार्थं समाकर्षकतयोपग्रहस्वरूपम् ।

अन्तर्गतिश्च यावन्मनुष्यो नरकादिवाच्यमुत्पत्तिस्थानं न प्राप्नोति ताव-  
त्कालिकी गतिः । सा द्विविधा-ऋज्वी, वक्रा च । तत्र यदा ऋज्व्या समय-

(१३) नरक आदि गति में जाने वाला जीव-जो कि अन्तर्गति (विग्रहगति) में  
वर्तमान है, उसको उन नरक आदि गतियों की ओर अभिमुख करके आनुपूर्वी से अर्थात्  
उस उस स्थान के क्रम से उन २ गतियों में पहुंचाने में जो कर्म समर्थ होता है, उस कर्म को  
आनुपूर्वीकर्म कहते हैं । यद्यपि आनुपूर्वी शब्द का अर्थ उस उस स्थानका क्रम है तथापि-  
गत्यन्तर में जाते हुए जीव को जिस कर्म के उदय होने पर उस गति में उस उस स्थान  
के क्रम से जाना होता है, इस लिये उस कर्म को भी आनुपूर्वी कहते हैं । जैसे जलका  
प्रवाह बैलको अपनी ओर खींच लेता है । अथवा जैसे गाडीवान बैलको नाथ पकड़ कर  
अपनी ओर मोड़ लेता है, उसी प्रकार आनुपूर्वीकर्म-जीवने जिस गतिका कर्म बाँधा है उस  
गति में उसको पहुँचा देता है, इस लिये वह गति में पहुँचाने के लिये सहायक है ।

जब तक मनुष्य अपनी मनुष्यगति को छोड़कर नरक आदि किसी गति में  
नहीं पहुँचा है, तब तक की अर्थात् बीचकी गतिको अन्तर्गति-विग्रहगति-कहते हैं ।  
वह दो प्रकार की है-सरल और वक्र । जीव जब एकसमयप्रमाणवाली सरल (सीधी)

(१३) नरक आदि गतिमां जवावाणा एव जे के-अन्तर्गति (विग्रहगति)मां  
वर्त्तमान छे तेने ते नरक आदि गतिओनी तरक्ष अलिमुअ करीने आनुपूर्वीथी अर्थात्  
ते ते स्थानना कभथी ते ते गतिओमां पड़ोआउवामां जे कर्म समर्थ होय छे ते कर्मने आनु-  
पूर्वी कर्म कहे छे. जे के आनुपूर्वी शब्दने अर्थ ते ते स्थानने कर्म, ओवो छे तो  
पणु गत्यन्तरमां जते एवने जे कर्मने उदय थवाथी ते गतिमां ते ते स्थानना  
कभथी जहुं होय छे, आट्ठा भाटे ते कर्मने आनुपूर्वी कहे छे. जेभ पाणीने प्रवाह  
अणदीयाने पोतानी तरक्ष ओ'थी दे छे, अथवा जेभ गाडीवाणो अणदीयाने तेनी नाथ पकडीने  
पोतानी आणु मोडी दे छे तेज प्रमाणे आनुपूर्वीकर्म-एव जे गतिनुं कर्म बांध्युं  
छे ते गतिमां तेने पड़ोआडी दे छे भाटे ते गतिमां पड़ोआउवाने भाटे सहायक छे.

न्यां सुधी मनुष्य पोतानी मनुष्यगतिने भूझीने नरक आदि भील गतिमां नथी  
पड़ोआये त्यां सुधीनी अर्थात् वचडी गतिने अन्तर्गति-विग्रहगति कहे छे. ते जे  
प्रकारनी होय छे:-सरल अने वक्र. एव न्यारे ओकसमयप्रमाणवाणी सरल (सीधी) गतिथी

પ્રમાણયા ગચ્છતિ, તદાઽઽયુષ્યકર્મણૈવાત્પત્તિસ્થાનં પ્રાપ્નોતિ । તત્રાનુપૂર્વીનામ્નઃ કશ્ચિદુપયોગો ન ભવતિ । વક્રગત્યા પુનઃ પ્રવૃત્તઃ કૂર્પર- (વક્રાકારરથાવયવ)-લાઙ્ગલ-ગોમૂત્રિકાલક્ષણયા દ્વિત્રિચતુઃસમયમાનયા વક્રારમ્ભકાલે પુરસ્કૃત-માયુરાદત્તે, તદૈવ ચાનુપૂર્વીનામાપ્યુદેતિ ।

નનુ ચ યથૈવ ઋજ્ઞ્યાં ગતૌ વિનાઽઽનુપૂર્વીનામકર્મણા ગતિં પ્રાપ્નોતિ, તદ્વદ્ વક્રગત્યામપિ કસ્માન્ ? इति चेत्, उच्यते-ઋજ્ઞ્યાં-પૂર્વાયુષ્કર્મવ્યાપારેણૈવ ગચ્છતિ, યત્ર તત્ પૂર્વાયુષ્કર્મ ક્ષીણં, તત્ર તસ્યાધ્વયષ્ટિસ્થાનીયસ્યાનુપૂર્વીનામકર્મણ ઉદયો ભવતિ ।

ગતિ સે જાતા હૈ તવ આયુ કર્મ કે દ્વારા હી ઉત્પત્તિસ્થાન કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ, વહાં આનુપૂર્વીનામકર્મ કા કોઈ ઉપયોગ નહીં હોતા । જવ જીવ કૂર્પર (રથ કા ઢેઢા અવયવ) હલ યા ગોમૂત્રિકા સરીસી ઓર દો ત્રીન યા ચાર સમયવાલી વક્ર ગતિ સે જાતા હૈ તવ મોઢકે આરમ્ભ-સમય મેં આગે કી આયુ ગ્રહણ કરતા હૈ, ઉસી સમય આનુપૂર્વી કર્મકા ઉદય હોતા હૈ ।

શક્કા-જૈસે સરલગતિ મેં આનુપૂર્વીકર્મ કે વિના હી ગતિ પ્રાપ્ત કરતા હૈ, ઉસી પ્રકાર વક્ર ગતિ મેં ભી ક્યો નહીં ગતિ કરતા ? ।

સમાધાન-સરલ ગતિ મેં પહેલે કે આયુકર્મ કે વ્યાપાર સે હી જીવ ગતિ કરતા હૈ । જહાં વહ આયુ ક્ષીણ હો જાતી હૈ વહાં માર્ગયષ્ટિ કે સમાન આનુપૂર્વીનામકર્મ કા ઉદય હોતા હૈ ।

જાત્ય છે, ત્યારે આયુકર્મદ્વારાજ ઉત્પત્તિ સ્થાનને પ્રાપ્ત કરી લે છે. ત્યાં આનુપૂર્વી નામકર્મનો કાંઈ ઉપયોગ થતો નથી. જ્યારે જીવ કૂર્પર (રથનો વાંકો એક ભાગ) હલ અથવા ગોમૂત્રિકા સરખી અને બે, ત્રણ અથવા ચાર સમયવાળી વક્રગતિથી જાત્ય છે ત્યારે વળવાના આરંભ સમયમાં આગળની આયુ ગ્રહણ કરે છે તે સમય આનુપૂર્વી કર્મનો ઉદય થાય છે.

શંકા-જેમ સરલગતિમાં આનુપૂર્વીકર્મ વિનાજ ગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. તે પ્રમાણે વક્રગતિમાં ગતિ શા માટે કરતા નથી ?

સમાધાન-સરલગતિમાં પ્રથમના આયુકર્મના વ્યાપારથીજ જીવ ગતિ કરે છે. જ્યાં તે આયુ ક્ષીણ થઈ જાય છે ત્યાં માર્ગયષ્ટિ-માર્ગની લાકડી-ના સમાન આનુપૂર્વી નામકર્મનો ઉદય થાય છે.



आनुपूर्वीनाम चतुर्विधम्-नरकागत्यानुपूर्वीनाम, तिर्यग्गत्यानुपूर्वीनाम, मनुष्यगत्यानुपूर्वीनाम, देवगत्यानुपूर्वीनाम च ।

(१४) लब्धि-शिक्षा-प्रत्ययस्याकाशगमनस्य जनकं नाम विहायोगतिः सामान्य गमनरूपा गतिरपि विहायोगति रित्युच्यते न तु केवलमाकाशगमनरूपेति । सा द्विधा-शुभा-शुभभेदात् । तत्र-हंस गज-वृषादीनां शुभा । उष्ट्रशृगालादीनाम् अशुभा । तत्र-लब्धिर्देवादीनां देवत्वोत्पत्त्यविनाभाविनी । शिक्षया ऋद्धिः, शिक्षाः, लब्ध्या शिक्षाद्वयं च तपस्विनां, शिक्षाद्वयं प्रवचनमधीयानानां विद्याद्यावर्तनप्रभावाद् वा आकाशगमनस्य जनकं विहायोगतिनामकर्म ।

आनुपूर्वीनामकर्म चार प्रकार का है-नरकगत्यानुपूर्वीनाम, तिर्यग्गत्यानुपूर्वीनाम, मनुष्यगत्यानुपूर्वीनाम, और देवगत्यानुपूर्वीनाम ।

(१४) लब्धि एवं शिक्षा-ऋद्धिकारणक; आकाशगमन उत्पन्न करने वाला कर्म विहायोगतिनामकर्म कहलाता है । वह सामान्य गमनरूप गति भी विहायोगति कहलाती है, नहीं कि मात्र आकाशगमनरूप । इस के दो भेद हैं-शुभ और अशुभ । हंस, गज, वृषम आदि की गति के समान शुभविहायोगति है और ऊंट सियार आदि की गतिके अनुसार अशुभविहायोगति है । देव के रूप में उत्पन्न होने के साथ ही उत्पन्न होने वाली लब्धि देवों को प्राप्त होती है । शिक्षा से प्राप्त होने वाली ऋद्धि शिक्षा-ऋद्धि कहलाती है । लब्धि एवं शिक्षा-ऋद्धि से तपस्वियों का आकाशगमन होता है । प्रवचन का अध्ययन करने वालों का विद्या आदि के आवर्तन के प्रभाव से या शिक्षाऋद्धि से जो आकाशगमन होता है वह विहायोगति है ।

आनुपूर्वीनामकर्म चार प्रकारनां छे-नरकगत्यानुपूर्वीनाम, तिर्यग्गत्यानुपूर्वीनाम, मनुष्यगत्यानुपूर्वीनाम, अने देवगत्यानुपूर्वीनाम.

(१४) लब्धि एवं शिक्षा-ऋद्धिकारणक आकाशगमन उत्पन्न करवावाणुं कर्म विहायोगतिनामकर्म कहेवाय छे. सामान्य गमनरूप गति पणु विहायोगति कहेवाय छे इकत आकाशगमनरूप गति नही. तेना ये लेह छे-शुभ अने अशुभ. हंस, हाथी, भण्ड वीगेरेनी गति समान शुभविहायोगति छे. अने ऊंट, शियाल वगेरेनी गति अनुसार अशुभविहायोगति छे. देवना रूपमां उत्पन्न होवाना साथे उत्पन्न थवावाणी लब्धि देवाने प्राप्त थाय छे. शिक्षाथी प्राप्त थवावाणी ऋद्धि शिक्षाऋद्धि कहेवाय छे. लब्धि एवं शिक्षाऋद्धिथी तपस्विओ आकाशगमन करे छे. प्रवचननुं अध्ययन करवावाणाना विद्या आदिना आवर्तनना प्रभावथी अथवा शिक्षाऋद्धिथी ने आकाशगमन थाय छे ते विहायोगति छे.



(૭) ગોત્રકર્મ દ્વિવિધમ્—ઉચ્ચનીચભેદાત્ । તત્રઉચ્ચગોત્રં—દેશ-જાતિ-કુલ-સ્થાન-માન-સત્કારૈ—શ્વર્યાદ્યુત્કર્ષજનકમ્ । તદ્વિપરીતં નીચગોત્રમ્—અનાર્યદેશ-ચાણ્ડાલાદિજાતિદાસ્ય-નિર્વર્તકમ્ ।

(૮) અન્તરાયકર્મ-પશ્ચવિધમ્—દાન-લાભ-ભોગો-પભોગ-વીર્યાન્તરાયભેદાત્ ।

एवं च सर्वसंकलनेनाष्टविधकर्मणामुत्तरप्रकृतिसंख्या अष्टचत्वारिंशदधिकैकशतं (૧૪૮) ભવન્તિ ।

કર્મક્ષયવિચાર:—

જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં કર્મક્ષયો ભવતિ । ઉક્તષડ્જીવનિકાયાનાં યથાર્થ—

(૭) ગોત્રકર્મ દો પ્રકાર કા હૈ—ઉચ્ચગોત્ર ઓર નીચગોત્ર । ઉચ્ચગોત્ર સે દેશ, જાતિ, કુલ, સ્થાન, માન, સત્કાર, એશ્વર્ય આદિ કા ઉત્કર્ષ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । નીચગોત્ર હસ સે વિપરીત હૈ । હસ સે અનાર્ય દેશ, ચાણ્ડાલ આદિ જાતિ ઓર દાસતા ઉત્પન્ન હોતી હૈ ।

(૮) અન્તરાય કર્મ કે પાંચ ભેદ હૈ—દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય, ઉપભોગાન્તરાય, ઓર વીર્યાન્તરાય ।

હસ પ્રકાર સબકા યોગ કરને પર આઠોં કર્મોં કી ઉત્તરપ્રકૃતિયાં એક સૌ અડતાલીસ (૧૪૮) હોતી હૈ ।

કર્મક્ષય કા વિચાર

જ્ઞાન ઓર ક્રિયા સે કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ । પૂર્વોક્ત ષડ્જીવનિકાય કે વાસ્તવિક

(૭) ગોત્રકર્મ બે પ્રકારનું છે—ઉચ્ચગોત્ર અને નીચગોત્ર. ઉચ્ચગોત્રથી દેશ, જાતિ, કુલ, સ્થાન, માન, સત્કાર, એશ્વર્ય આદિનો ઉત્કર્ષ ઉત્પન્ન થાય છે. નીચ ગોત્ર તેનાથી વિપરીત છે. તેનાથી અનાર્ય દેશ, ચાંડાલ આદિ જાતિ અને દાસપણું વગેરે ઉત્પન્ન થાય છે.

અંતરાયકર્મના પાંચ ભેદ છે—દાનાન્તરાય, લાભાન્તરાય, ભોગાન્તરાય, ઉપભોગાન્તરાય અને વીર્યાન્તરાય.

આ પ્રમાણે સર્વનો યોગ કરતાં આઠ કર્મોની ઉત્તરપ્રકૃતિઓ એકસો અડતાલીસ (૧૪૮) થાય છે.

કર્મક્ષયનો વિચાર—

જ્ઞાન અને ક્રિયાથી કર્મોનો ક્ષય થાય છે. પૂર્વોક્ત ષડ્જીવનિકાયાના વાસ્તવિક

સ્વરૂપસ્ય વિસ્તરેણ સંક્ષેપેણ વા અવબોધો જ્ઞાનમ્ । ગુપ્તિસમિતિસમારાધનપૂર્વકં શાસ્ત્રવિધિના તપઃસંયમાચરણં ક્રિયા ।

અષ્ટકર્મણાં ભસ્મસાત્કારકં તપઃ । તસ્યાનશનાદયો દ્વાદશ ભેદાઃ । સાવધ ક્રિયાઃ સમ્યક્ પરિત્યજ્ય નિરવધક્રિયાસુ પ્રવૃત્તિઃ સંયમઃ । તસ્ય પૃથ્વીકાય-સંયમાદયઃ સપ્તદશ ભેદાઃ ।

ઉક્તઘડ્ડજીવનિકાયસ્વરૂપં સમ્યગ્ વિજ્ઞાય સંયમપૂર્વકતપશ્ચરણેનાભિનવકર્મ-પ્રવેશાભાવઃ, પૂર્વોપચિતકર્મપરિક્ષયશ્ચ ભવતિ । તત્રૈવં ક્રમઃ—

અષ્ટમગુણસ્થાનાદાત્મા ક્ષપકશ્રેણિં સમારોહતિ । અસૌ ક્ષપકો નવમં દશમં ગુણસ્થાનં સમારૂઢ દ્વાદશં ગુણસ્થાનમારોહતિ । તત્ર શુદ્ધ્યાનસ્ય દ્વિતીય-

સ્વરૂપ કા વિસ્તારપૂર્વક યા સંક્ષિપ્ત બોધ-જ્ઞાન કહલાતા હૈ । ગુપ્તિ સમિતિ કા આરાધન કરતે હુણ શાસ્ત્રોક્ત વિધિ કે સાથ તપ ઓર સંયમ કા આરાધન કરના ક્રિયા હૈ ।

આઠ કર્મોં કા ભસ્મ કરના તપ હૈ । તપ કે અનશન આદિ બારહ ભેદ હૈ । સાવધ ક્રિયાઓં કા સમ્યક્ પ્રકાર સે પરિત્યાગ કરકે નિરવધ ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્તિ કરના સંયમ હૈ । પૃથ્વીકાયસંયમ આદિ કે ભેદ સે વહ સત્તરહ (૧૭) પ્રકાર કા હૈ ।

ઉક્ત ઘડ્ડજીવનિકાય કા સ્વરૂપ સમીચીન પ્રકાર સે જાનકર, સંયમપૂર્વક તપ કા આચરણ કરને સે નવીન કર્મોં કા આના રુક જાતા હૈ ઓર પહેલે કે સંચિત કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ । કર્મક્ષય કા ક્રમ યહ હૈ—

આત્મા આઠવેં ગુણસ્થાન સે ક્ષપકશ્રેણી પર આરૂઢ હોતા હૈ । યહ ક્ષપક આત્મા નૌવેં દશવેં ગુણસ્થાનો પર આરૂઢ હો કર બાહરેવેં ગુણસ્થાન પર પહુંચતા હૈ ।

સ્વરૂપનો વિસ્તારપૂર્વક અથવા સંક્ષિપ્ત બોધ તે જ્ઞાન કહેવાય છે. ગુપ્તિ, સમિતિની આરાધના કરતાં શાસ્ત્રોક્ત વિધિ પ્રમાણે તપ અને સંયમનું આરાધન કરવું તે ક્રિયા છે. આઠ કર્મોંને બાળી નાંખવા તે તપ છે. તપના અનશન આદિ બાર ભેદ છે. સાવધ ક્રિયાઓંનો સમ્યક્ પ્રકારે પરિત્યાગ કરીને નિરવધ ક્રિયાઓંમાં પ્રવૃત્તિ કરવી તે સંયમ છે. પૃથ્વીકાયસંયમ આદિના ભેદથી તે સત્તર (૧૭) પ્રકારનો છે. આગળ કહેલા ઘડ્ડજીવનિકાયના સ્વરૂપને સારી રીતે બાળીને સંયમપૂર્વક તપનું આચરણ કરવાથી નવીન કર્મોંનું આવવું રોકાઈ જાય છે, અને પહેલાના સંચિત કર્મોંનો ક્ષય થાય છે. કર્મક્ષયનો ક્રમ એ છે— આત્મા આઠમાં ગુણસ્થાનથી ક્ષપકશ્રેણી પર આરૂઢ થાય છે. આ ક્ષપક આત્મા નવમાં, દસમાં ગુણસ્થાનો પર આરૂઢ થઈને બારમાં ગુણસ્થાન પર જઈ પહોંચે છે.

પાદે પ્રયમં મોહનીયં કર્મ ક્ષપયતિ । તદનુ જ્ઞાનાવરણીય-દર્શનાવરણીયા-અંતરાય-કર્માણિ યુગપદેવ ક્ષપયિત્વા દ્વાદશગુણસ્થાનાન્તે ત્રયોદશગુણસ્થાનાદૌ સર્વદ્રવ્ય-પર્યાયવિષય પારમૈશ્વર્યમનન્તં કેવલં જ્ઞાનદર્શનં પ્રાપ્ય શુદ્ધો બુદ્ધઃ સર્વજ્ઞઃ સર્વદર્શી જિનઃ કેવલી ભવતિ । તતઃ સયોગિકેવલી પ્રતનુ-શુભ-ચતુષ્કર્માવશેષઃ, આયુઃ-કર્મસંસ્કારવશાદ્ ભવ્યજનબોધનાય ભૂમણ્ડલે વિહરતિ, વિવિધં કર્મરજો ભવ્યાનાં હરતિ ચ ।

અસૌ તત્પશ્ચાદ્ અયોગિકેવલી ભૂત્વા ચતુર્દશગુણસ્થાને-આયુષ્યકર્મપરિસમાપ્તૌ સત્યાં, વેદનીય-નામ-ગોત્રકર્માણિ ક્ષપયતિ । एवं મૂલપ્રકૃતિવાચ્યમષ્ટવિધં જ્ઞાના-વરણીયાદિસકલકર્મ ક્ષીયતે ।

વહ્ણ શુક્લ ધ્યાન કે દ્વિતીય પાયે મેં સર્વ પ્રથમ મોહનીય કર્મ કા ક્ષય કરતા હૈ । તત્પશ્ચાત્ જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ ઓર અંતરાય કર્મોં કો એક હી સાથ ક્ષય કરકે ચારહવેં ગુણસ્થાન કે અંત મેં ઓર તેરહવેં ગુણસ્થાન કી આદિ મેં સમસ્ત દ્રવ્ય પર્યાય કો વિષય કરને વાલા પરમ ઐશ્વર્ય કો પ્રાપ્ત હોને યોગ્ય અનન્ત કેવલજ્ઞાન ઓર કેવલદર્શન પ્રાપ્ત કરકે શુદ્ધ, બુદ્ધ, સર્વજ્ઞ, સર્વદર્શી, જિન ઓર કેવલી હો જાતા હૈ । ફિર વહ સયોગી કેવલી ચાર હલકે અઘાતિયા કર્મ શેષ રહને પર આયુકર્મ કે સંસ્કાર વશ હો કર ભવ્ય જીવોં કો બોધ દેને કે લિપ્ ભૂમણ્ડલ મેં વિહાર કરતે હૈ ।

તત્પશ્ચાત્ અયોગી કેવલી હો કર ચૌદહવેં ગુણસ્થાન મેં આયુકર્મ કી સમાપ્તિ હોને પર વેદનીય નામ આયુ ગોત્ર કર્મોં કા ક્ષય કરતે હૈ । ઇસ પ્રકાર મૂલપ્રકૃતિ કહલોને વાલે આઠોં હી કર્મોં કા ક્ષય હો જાતા હૈ ।

ત્યાં શુક્લ ધ્યાનના બીજા પાયામાં સર્વપ્રથમ મોહનીય કર્મનો ક્ષય કરે છે. તે પછી જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ અને અંતરાય કર્મોનો એકી સાથે ક્ષય કરીને, આરમા શુભ-સ્થાનના અંતમાં અને તેરમા શુભસ્થાનની આદિમાં સમસ્ત દ્રવ્ય-પર્યાયને વિષય કરવાવાળા પરમ ઐશ્વર્યને પ્રાપ્ત થવા યોગ્ય અનન્ત કેવલજ્ઞાન અને કેવલદર્શન પ્રાપ્ત કરીને શુદ્ધ, બુદ્ધ, સર્વજ્ઞ, સર્વદર્શી, જિન અને કેવલી થઈ જાય છે. પછી તે સયોગી કેવલી ચાર હલકાં અઘાતિયાં કર્મ બાકી રહેવા પર આયુકર્મના સંસ્કારવશ થઈને ભવ્યજીવોને બોધ આપવા માટે પૃથ્વીમાં વિહાર કરે છે.

તે પછી અયોગી કેવલી થઈને ચૌદમાં શુભસ્થાનમાં આયુકર્મની સમાપ્તિ થયા પછી વેદનીય, નામ અને ગોત્રકર્મનો ક્ષય કરે છે. આ પ્રમાણે મૂળપ્રકૃતિ કહેવાતા આઠ કર્મોનો ક્ષય થઈ જાય છે.



एवमात्मप्रदेशेभ्यः सकलकर्मणामपगमे सत्यूर्ध्वगमनस्वभावतयाऽऽत्मा साधन-  
न्तमुपनरावृत्तिसिद्धिगतिनामधेयं स्थानं प्राप्नोति । ज्ञानक्रियाभ्यामेवं सकलकर्मक्षय-  
लक्षणो मोक्षो भवतीति सिद्धम् ।

केचित्तु—सम्यग्ज्ञानं यथार्थविषयकतया बलवत्तरत्वेन मिथ्याज्ञानं  
निवर्तयति । मिथ्याज्ञाने निवृत्ते सति मिथ्याज्ञानमूला रागादयो न समुत्पद्यन्ते ।  
कारणाभावे कार्यस्यानुत्पादात् । रागाद्यभावे च तत्फलभूता मनोवाक्काय-  
प्रवृत्तिर्न भवति । प्रवृत्त्यभावे च पुण्यपापयोरनुत्पत्तिः । आरब्धकार्ययोश्च

આત્મપ્રદેશો સે સમસ્ત કર્મોં કે હટજાને પર ઊર્ધ્વગતિશીલ હોને કે કારણ આત્મા  
સાદિ—અનન્ત પુનરાગમનરહિત સિદ્ધિગતિનામક સ્થાન કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । અત એવ સિદ્ધ  
હુઆ કિ જ્ઞાન ઓર ક્રિયા સે સફલ કર્મોંકા ક્ષયરૂપ મોક્ષ પ્રાપ્ત હોતા હૈ ।

कुछ लोगों का कथन यह है कि—सम्यग्ज्ञान यथार्थ पदार्थ को विषय करता  
है, अतः वह बलवान् है, और बलवान् होने के कारण मिथ्याज्ञान को दूर करता है ।  
मिथ्याज्ञान जब हट जाता है तो उसके कारण उत्पन्न होने वाले रागादि की उत्पत्ति नहीं  
होती; क्योंकि कारण के अभाव में काय उत्पन्न नहीं होता । इस प्रकार रागादि  
का अभाव होने पर उस से होने वाली मन, वचन और काय की प्रवृत्ति रुक जाती है ।  
प्रवृत्ति के रुक जाने से पुण्यकर्म और पापकर्म की उत्पत्ति नहीं होती । जिन का कार्य

આત્મપ્રદેશોથી સમસ્ત કર્મોં દૂર થયા પછી ઉર્ધ્વગતિશીલ હોવાના કારણે  
આત્મા સાદિ—અનન્ત, પુનરાગમનરહિત સિદ્ધિગતિ નામના સ્થાનને પ્રાપ્ત કરે  
છે. એટલે એ સિદ્ધ થયું કે જ્ઞાન અને ક્રિયાથી સકલ કર્મોંના ક્ષયરૂપ મોક્ષને  
પ્રાપ્ત થાય છે.

કેટલાક માણસોનું કહેવું એ છે કે:—સમ્યગ્જ્ઞાન યથાર્થ પદાર્થને વિષય કરે  
છે, એ કારણથી તે બળવાન છે. અને બળવાન હોવાના કારણે મિથ્યાજ્ઞાનને દૂર કરે છે.  
મિથ્યાજ્ઞાન બ્યારે દૂર થઈ જાય છે, તો તેના કારણે ઉત્પન્ન થવાવાળા રાગ-આદિની  
ઉત્પત્તિ થતી નથી; કેમકે કારણના અભાવમાં કાર્ય ઉત્પન્ન થતું નથી. આ પ્રકારે-રાગાદિનો  
અભાવ થવાથી તેનાથી થવા વાળી મન, વચન અને કાયાની પ્રવૃત્તિ અટકી જાય છે.  
પ્રવૃત્તિના અટકાવથી પુણ્યકર્મ અને પાપ કર્મની ઉત્પત્તિ થતી નથી. જેનું કાર્ય આરંભ

પુણ્યપાપકર્મણોરુપભોગાદેવ પ્રક્ષયો ભવતિ; સશ્વિતરુપયોસ્તુ પુણ્યપાપકર્મણોસ્તત્ત્વ-  
જ્ઞાનાદેવ પ્રક્ષયઃ । एवं कर्मक्षयो भवति । उक्तञ्च—

“ જ્ઞાનાગ્નિઃ સર્વકર્માણિ, ભસ્મસાત્ કુરુતે તથા ” । इति । तथा “ नाशुक्तं  
ક્ષીયતે કર્મ, કલ્પકોટિશતૈરપિ ” इति च ।

કેચિચ્—સંચિતકર્મણામપિ પ્રક્ષયો ભોગાદેવ ભાવતીત્યુક્તં તત્રાનુમાનં  
પ્રમાણં ચ પ્રદર્શિતમ્ । तथाहि—पूर्वकर्माण्युपभोगादेव क्षीयन्ते, कर्मत्वात् । यत् यत्  
કર્મ તત્ તત્ ઉપભોગાદેવ ક્ષીયતે, યથા—આરબ્ધશરીરં કર્મ, તથા ચૈતત્ કર્મ, તસ્મા-  
દુપભોગાદેવ ક્ષીયતે ।

ન ચોપભોગાત્ કર્મપ્રક્ષયસ્વીકારે કર્માન્તરસ્યાવશ્યમ્ભાવાત્ સંસારાનુચ્છેદઃ  
इति वाच्यम्,

આરમ્ભ હો ચુકા હૈ, એસે પાપ—પુણ્ય કા, ઉપભોગ સે ક્ષય હોતા હૈ ઓર સશ્વિત પુણ્ય—પાપ  
કા, તત્ત્વજ્ઞાન સે । इस प्रकार समस्त कर्मों का क्षय हो जाता है । कहा भी है—

“ જ્ઞાનરૂપી અગ્નિ સમસ્ત કર્મોં કો ભસ્મ કર ડાલતી હૈ ” । तथा—“ करोड़ों सैकड़ों  
કલ્પોં મેં મી કર્મ કા ભોગે વિના ક્ષય નહીં હોતા ” ।

કિસી કા કહના હૈ કિ—સંચિત કર્મોં કા ક્ષય મી ભોગ સે હી હો જાતા હૈ । इस  
विषय में अनुमान प्रमाण भी दिया गया है । वह इस प्रकार है—पूर्वसंचित कर्म उपभोग  
સે હી ક્ષીણ હોતા હૈ, ક્યોં કિ વહ કર્મ હૈ । जो जो कर्म होता है वह वह उपभोग से ही  
ક્ષીણ હોતા હૈ, જૈસે આરબ્ધ શરીરકર્મ । संचितकर्म भी कर्म हैं अतः वे भी उपभोग से ही  
ક્ષીણ હોતે હૈ ।

ઉપભોગ સે કર્મોં કા ક્ષય સ્વીકાર કિયા જાય તો નવીન કર્મોં કી ઉત્પત્તિ અવશ્ય  
હોગી ઓર ફલતઃ જન્મ—મરણ કા કર્મી નાશ નહીં હોગા । ऐसी आशङ्का करना  
ઉચિત નહીં હૈ ।

થઈ ચૂકયું છે, એવા પાપ—પુણ્યનો ઉપભોગથી ક્ષય છે, અને સંચિત પુણ્ય—પાપનો  
તત્ત્વજ્ઞાનથી ક્ષય થાય છે. આ પ્રકારે સમસ્ત કર્મોનો ક્ષય થઈ જાય છે. કહ્યું પણ  
છે કે:—“ જ્ઞાનરૂપી અગ્નિ સમસ્ત કર્મોને બાળી નાંખે છે. ” तथा “ करोड़ों सैकड़ों  
કલ્પોમાં પણ કર્મ ભોગવ્યા વિના ક્ષય થતા નથી. ”

કેટલાક કહે છે કે—સંચિત કર્મોનો ક્ષય પણ ભોગથીજ થઈ જાય છે. આ  
विषयમાં अनुमान प्रमाण પણ आपवाમાં आव्यु છે તે આ પ્રમાણે છે—पूर्वसं-  
ચितकर्म उपभोगથીજ ક્ષીણ થાય છે, કારણ કે તે કર્મ છે, જે જે કર્મ હોય છે તે  
તે ઉપભોગથીજ ક્ષીણ થાય છે, જેવી રીતે આરબ્ધ શરીરકર્મ સંચિત કર્મ પણ કર્મ  
છે, એ કારણથી તે પણ ઉપભોગથી જ ક્ષીણ થાય છે.

ઉપભોગથી કર્મોનો ક્ષય સ્વીકાર કરવામાં આવે તો, નવીન કર્મોની ઉત્પત્તિ અવશ્ય  
થશે અને ફલતઃ જન્મ મરણનો ક્યારેય નાશ નહિ થાય, આવી શંકા કરવી તે ઉચિત નથી.



समाधिवलेनोत्पन्नतत्त्वज्ञानस्य जनस्य कर्मज्ञानसामर्थ्यात्तदुपभोगार्थमशेष-  
शरीरमुत्पाद्याशेषभोगादेव पूर्वकर्मक्षयः, पुनस्तस्य तत्त्वज्ञानिनो मिथ्याज्ञानाभावा-  
त्तज्जनितसंस्कारस्याप्यभावेन कर्मान्तरानुत्पत्तिश्च । तथा चोपभोगादेव  
सकलकर्मक्षयस्वीकारेऽपि नास्ति कोऽपि दोषलेश इति ।

न च पुण्यपापकर्मणोर्जन्मान्तरशरीरोत्पादने सहकारि कारणं मिथ्या-  
ज्ञानजनितसंस्कारोऽस्ति; तस्याभावादेव तत्त्वज्ञानिनां विद्यमाने अपि कर्मणी न  
जन्मान्तरशरीराण्युत्पादयतः, अतस्तेषां कर्मसत्त्वेऽपि न काऽपि हानिरिति  
वाच्यम् ।

समाधि के बल से उत्पन्न तत्त्वज्ञान वाले पुरुष के कर्मज्ञान के सामर्थ्य से कर्म का  
उपभोग करने के लिए अशेष शरीर उत्पन्न करके अशेष भोग से ही पूर्वकर्म का क्षय हो  
जाता है । उस तत्त्वज्ञानी पुरुष में मिथ्याज्ञान नहीं होता और मिथ्याज्ञान से उत्पन्न होने  
वाला संस्कार भी नहीं होता । इस कारण नवीन कर्म की उत्पत्ति भी नहीं होती । ऐसी  
स्थिति में उपभोग से ही समस्त कर्मों का क्षय मान लेने में लेशमात्र भी दोष नहीं है ।

मिथ्याज्ञान से उत्पन्न होने वाला संस्कार जन्मान्तर के शरीर की उत्पत्ति में  
सहकारी कारण होता है । वह संस्कार तत्त्वज्ञानी में नहीं रहता । उस का अभाव हो  
जाने पर, पुण्य-पाप कर्म भले ही विद्यमान रहें मगर वे शरीर उत्पन्न नहीं कर सकते ।  
अत एव उन में कर्म का सद्भाव होने पर भी कोई हानि नहीं होती । यह सब कथन  
सत्य नहीं है ।

समाधिना ज्ञातव्यं उत्पन्न तत्त्वज्ञान वाणा पुरुषानां कर्मज्ञाननां सामर्थ्यात्  
कर्मनो उपभोग करवा भाटे अशेष शरीर उत्पन्न करीने अशेष लोभार्थी पूर्वकर्मनो  
क्षय थछ जाय छे. ते तत्त्वज्ञानी पुरुषमां मिथ्याज्ञान नथी अने मिथ्याज्ञानथी उत्पन्न  
थवावाणा संस्कार पणु नथी. आ कारणथी नवीन कर्मनी उत्पत्ति पणु थती नथी. जेवी  
स्थितिमां उपभोगथी समस्त कर्मनो क्षय मानी देवाभां देश मात्र पणु दोष नथी.

मिथ्याज्ञानथी उत्पन्न थवावाणा संस्कार जन्मान्तरना शरीरनी उत्पत्तिमां  
सहकारी कारण थाय छे. ते संस्कार तत्त्वज्ञानीमां रहैता नथी. तेनो अभाव थछ  
नवाथी, पुण्य-पापकर्म भलेने विद्यमान रहे. परन्तु ते शरीर उत्पन्न करी शकतां  
नथी, जेटवा भाटे तेमां कर्मनो सद्भाव होवा छताय पणु केहि प्रकारे हानि थती  
नथी. आ सर्व कथन सायां नथी.



જન્યપદાર્થસ્ય નિત્યત્વાપત્તિઃ સ્યાદિત્યેવ મહાન્ દોષઃ સમાપદ્યેત । તથાહિ-પુણ્યપાપરૂપકર્મણોઃ સ્વફલાનુત્પાદનેન તત્સત્તાસ્વીકારે કાર્યરૂપયોરપિ તયોર્નિત્યત્વપ્રસન્નઃ । કિંચ-ભવિષ્યત્કાલે પુણ્યપાપકર્મણોરનુત્પત્તિસ્વીકારે તત્ત્વજ્ઞાનિનાં પ્રત્યવાયપરિહારાર્થં નિત્યનૈમિત્તિકાનુષ્ઠાનં કથમુપપદ્યેત ? ઇતિ વદન્તિ । અત્રોચ્યતે—

યત્તુ-ઉક્તમ્-આરબ્ધકાર્યયોઃ પુણ્યાપુણ્યકર્મણોરુપભોગાત્ પ્રક્ષયઃ સંચિત-યોશ્ચ તયોઃ પ્રક્ષયસ્તત્ત્વજ્ઞાનાદિત્યાદિ, તદપિ ન સંગતમ્ । તથાહિ-ઉપભોગાત્ કર્મપ્રક્ષયે તદુપભોગકાલેઽભિલાષપૂર્વકમનોવાક્રુકાયવ્યાપારસ્યાપરકર્મકારણસ્ય

સબ સે પહેલે મહાન્ હાનિ તો યહી હૈ કિ જન્ય પદાર્થ (કાય) મી નિત્ય હો જાયગા । વહ ઇસ પ્રકાર-પુણ્ય-પાપ રૂપ કર્મોં કે ફલ કો ઉત્પન્ન ન કર કે સત્તા સ્વીકાર કી ગઈ હૈ, સો કાર્યરૂપ હોને પર મી ઊન મેં નિત્યતા કા પ્રસન્ન આતા હૈ । દૂસરી બાત યહ હૈ કિ-આગામી કાલ મેં પુણ્ય-પાપ કી ઉત્પત્તિ ન સ્વીકાર કરને પર તત્ત્વજ્ઞાનિયોં કે લિષ, પ્રત્યવાય (દોષ) કા પરિહાર કરને કે લિષ નિત્ય-નૈમિત્તિક અનુષ્ઠાન કરના કિસ પ્રકાર સંગત હોગા । ઇસા ઇન કા કથન હૈ,

ઇસ પર વિચાર કિયા જાતા હૈ—

કાર્યરૂપ મેં પરિણત પુણ્ય ઓર પાપ કર્મોં કા ઉપભોગ સે ક્ષય હોતા હૈ ઓર સંચિત કર્મોં કા તત્ત્વજ્ઞાન સે, ઇત્યાદિ કથન મી સંગત નહીં હૈ । ઉપભોગ સે કર્મોં કા ક્ષય માનને પર કર્મોં કા ઉપભોગ કરતે સમય ઇચ્છાપૂર્વક મન વચન ઓર કાયાકા વ્યાપાર

સૌથી પ્રથમ મહાન્ હાનિ તો એજ છે કે જન્ય પદાર્થ (કાય) પણ નિત્ય થઈ જશે. તે આ પ્રમાણે-પુણ્યપાપરૂપ કર્મોના ફળને ઉત્પન્ન ન કરતાં નિત્યતાનો સ્વીકાર કરવામાં આવ્યો છે. તે કાર્યરૂપ હોવા છતાંય પણ તેમાં નિત્યતાનો પ્રસંગ આવે છે. બીજી વાત એ છે કે-આગામી કાળમાં પુણ્યપાપની ઉત્પત્તિ નહિ સ્વીકારવાથી તત્ત્વજ્ઞાનીઓ માટે પ્રત્યવાય (દોષ)નો પરિહાર કરવા માટે નિત્ય-નૈમિત્તિક અનુષ્ઠાન કરવું તે કેવી રીતે સંગત થશે આ પ્રમાણે તેમનું કથન છે.

તેના પર વિચાર કરવામાં આવે છે:—

કાર્યરૂપમાં પરિણત પુણ્ય અને પાપ કર્મોનો ઉપભોગથી ક્ષય થાય છે. અને સંચિત કર્મોનો તત્ત્વજ્ઞાનથી. ઇત્યાદિ કથન પણ સંગત નથી. ઉપભોગથી કર્મોનો ક્ષય માનવાથી, કર્મોનો ઉપભોગ કરવા સમયે ઇચ્છાપૂર્વક મન, વચન અને કાયાનો વ્યાપાર

સંભવાત્ પુનઃ પ્રચુરતરપુણ્યપાપકર્મસદ્ભાવે કથમાત્યન્તિકઃ કર્મક્ષયઃ સ્યાત્ ।

નહિ કેવલસ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય આગામિકર્માનુત્પત્તિસામર્થ્યં વિઘટે, કિન્તુ ચારિત્રસહિતસ્યૈવ સમ્યગ્જ્ઞાનસ્ય સંચિતકર્મક્ષયે આગામિકર્માનુત્પત્તૌ ચ સામર્થ્યં સંભાવ્યતે । સમ્યગ્જ્ઞાનેન હિ મિથ્યાજ્ઞાનસ્ય નિવૃત્તિઃ । તત્તથ રાગદ્વેષાદ્યભાવેન હિંસાદિપાપક્રિયાનિવૃત્તિરૂપચારિત્રસહયોગાદ્ નવીનકર્માનુત્પત્તિર્ભવતિ । તદ્વત્ સંચિત-કર્મક્ષયોઽપિ ચારિત્રસહકૃતસમ્યગ્જ્ઞાનાદેવ ભવતિ । યથૌષધં જ્ઞાનમાત્રેણ નામમાત્રેણ વા ન વ્યાધિં નિવર્તયતિ, કિન્તુ તત્સેવનાદિક્રિયાપરિણત્યૈવ, તદ્વત્ ચારિત્રસહિ-તસમ્યગ્જ્ઞાનેનૈવ કર્મક્ષયઃ ।

હોગા, ઓર યહ વ્યાપાર નવીન કર્મબન્ધ કા કારણ હૈ, ઇસ લિખ્ ફિર બહુત સે પુણ્યકર્મ ઓર પાપકર્મ સંચિત હો જાઈંગે । ऐसी दशा में आत्यन्तिक कर्मक्षय किस प्रकार होगा ?

અકેલા સમ્યગ્જ્ઞાન આગામી કર્મોં કી ઉત્પત્તિ રોકને મેં સમર્થ નહીં હૈ । હા, ચારિત્રસહિત સમ્યગ્જ્ઞાન સંચિત કર્મોં કે ક્ષય મેં ઓર આગામી કર્મોં કી ઉત્પત્તિ રોકને મેં સમર્થ હો સકતા હૈ । સમ્યગ્જ્ઞાન સે મિથ્યાજ્ઞાન કી નિવૃત્તિ હોતી હૈ । ફિર રાગ-દ્વેષ આદિ કા અભાવ હો જાને સે હિંસાદિ પાપ ક્રિયા કી નિવૃત્તિરૂપ ચારિત્ર કી સહાયતા સે નવીન કર્મોં કી ઉત્પત્તિ રુકતી હૈ । ઇસી પ્રકાર સંચિત કર્મોં કા ક્ષય મો ચારિત્ર સે યુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન સે હી હોતા હૈ । જૈસે-ઔષધિ જ્ઞાનમાત્ર સે યા નામ લેને માત્રસે વ્યાધિ કો દૂર નહીં કરતી કિન્તુ સેવન કરને સે હી દૂર કરતી હૈ, ઊસી પ્રકાર ચારિત્રયુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન સે હી કર્મોં કા ક્ષય હોતા હૈ ।

થશે, અને તે વ્યાપાર નવીન કર્મબંધનું કારણ છે, એ માટે ફરી ઘણુંજ પુણ્ય-પાપ કર્મ સંચિત થઈ જશે. એવી દશામાં આત્યન્તિક કર્મક્ષય કેવી રીતે થશે ?

એકતું સમ્યગ્જ્ઞાન આગામી કર્મોંની ઉત્પત્તિને રોકવામાં સમર્થ નથી. હા. ચારિત્રસહિત સમ્યગ્જ્ઞાન સંચિત કર્મોંના ક્ષયમાં અને આગામી કર્મોંની ઉત્પત્તિ રોકવામાં સમર્થ થઈ શકે છે. સમ્યગ્જ્ઞાનથી મિથ્યાજ્ઞાનની નિવૃત્તિ થાય છે. પછી રાગ-દ્વેષ વગેરેનો અભાવ થઈ જવાથી હિંસાદિ પાપક્રિયાની નિવૃત્તિરૂપ ચારિત્રની સહાયતાથી નવીન કર્મોંની ઉત્પત્તિ અટકે છે. એ પ્રમાણે સંચિત કર્મોંનો ક્ષય પણ ચારિત્રથી યુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાનથીજ થાય છે. જેવી રીતે ઔષધના જ્ઞાનમાત્રથી અથવા ઔષધનું નામ લેવાથી વ્યાધિ દૂર થતી નથી, પરંતુ સેવન કરવાથી જ દૂર થાય છે. તે પ્રમાણે ચારિત્રયુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાનથીજ કર્મોંનો ક્ષય થાય છે.

યથા-ઉષ્ણસ્પર્શસ્યાગામિશીતસ્પર્શાનુત્પાદનસામર્થ્યં પૂર્વકાલિકશીતસ્પર્શધ્વં-  
સેડપિ ચ સામર્થ્યં લોકે દૃષ્ટમ્, તદ્વચારિત્રસહિતસમ્યગ્જ્ઞાનસ્યાપિ સકલ-  
કર્મક્ષયસામર્થ્યં ભવતિ ।

इदमत्रावधेयम्-सम्यग्ज्ञानं तदेवास्ति, यत् खलु परिणामिजीवाजीवादिवि-  
षयकम्, न त्वेकान्ततोऽपरिणामिकूटस्थनित्यात्मादिविषयकम्, तस्य विपरीतार्थविषय-  
कतया मिथ्यात्वरूपत्वात् । यदि पुनः संवररूपचारित्रसहितसम्यग्ज्ञानस्याग्निरूपत्वं  
स्वीकृत्य निःशेषकर्मक्षयसामर्थ्यमङ्गीक्रियते, “यथैधांसि समिद्धोऽग्निः” इत्यादि-  
वचनेन तर्हि मन्मतसिद्ध एवार्थस्तेन साधित इति ।

જैसे ઉષ્ણ સ્પર્શ, આગામી શીતસ્પર્શ કી ઉત્પત્તિ કો રોકતા હૈં ઓર પૂર્વ કાલીન  
શીતસ્પર્શ કા નાશ કરને મેં બી સમર્થ હોતા હૈ, યહ વાત લોક મેં દેખી જાતી હૈ । ઊસી  
પ્રકાર ચારિત્રસહિત સમ્યગ્જ્ઞાન બી સમસ્ત કર્મોં કે ક્ષય મેં સમર્થ હોતા હૈ ।

સારાંશ યહ હૈ કિ-સમ્યગ્જ્ઞાન વહી હૈ જો જીવ-અજીવ આદિ કો પરિણામી  
જાનતા હૈ । આત્મા આદિ કો એકાન્તઅપરિણામી, કૂટસ્થ નિત્ય સમજાને વાલા જ્ઞાન  
સમ્યગ્જ્ઞાન નહીં હૈ । યહ જ્ઞાન વિપરીત વસ્તુ કા બોધક હોને સે મિથ્યા હૈ । હાં, અગર  
સંવરરૂપ ચારિત્ર સે યુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાન કો અગ્નિ કે સમાન માન કર ઊસકો સબ કર્મોં કે  
ક્ષય કા કારણ માનતે હો, જૈસા કિ કહા હૈ- “વઢી હુઈ અગ્નિ ઇન્ધન કો ભસ્મ  
કરતી હૈ” યહ તો હમારે હી મત કા સમર્થન કિયા ગયા હૈ, અર્થાત્ યહ કથન હમેં બી  
દૃષ્ટ હી હૈ ।

જેવી રીતે ઉષ્ણસ્પર્શ, આગામી શીતસ્પર્શની ઉત્પત્તિને રોકે છે, અને પૂર્વ  
કાલીન શીતસ્પર્શનો નાશ કરવામાં પણ સમર્થ થાય છે. આ વાત લોકમાં જોવામાં  
આવે છે, તે પ્રમાણે ચારિત્રસહિત સમ્યગ્જ્ઞાન પણ સમસ્ત કર્મોના ક્ષય માટે સમર્થ  
થાય છે.

સારાંશ એ છે કે:-સમ્યગ્જ્ઞાન તેજ છે કે જે-જીવ-અજીવ આદિને પરિણામી  
જાણે છે. આત્મા આદિને એકાન્ત અપરિણામી, કૂટસ્થ, નિત્ય સમજવાવાળું જ્ઞાન તે  
સમ્યગ્જ્ઞાન નથી. તે જ્ઞાન વિપરીત વસ્તુનું બોધક હોવાથી મિથ્યા છે. હા. અગર  
સંવરરૂપ ચારિત્રથી યુક્ત સમ્યગ્જ્ઞાનને અગ્નિસમાન માનીને તેને સર્વ કર્મોના ક્ષયનું  
કારણ માનો છો; જેવી રીતે કહ્યું છે કે:-“જેમ વધેલી અગ્નિ લાકડાંને બાળી નાંખે  
છે.” એ તો અમારાજ મતનું સમર્થન કર્યું છે, અર્થાત્ તે કથન તો અમારે પણ ધૃષ્ટ છે.



इति संक्षेपतः कर्मवादिप्रकरणं वर्णितम् । विस्तरतस्तु यथाशास्त्र-  
मवगन्तव्यम् ।

॥ अथ क्रियावादिप्रकरणम् ॥

यः पुनरेवं कर्मबन्धवेदी भव्यः कर्मस्वरूपनिरूपणपरः स एव कर्मवादी  
वस्तुतः क्रियावादीत्याह—‘क्रियावादी’ इति । करणं क्रिया । क्रियते जीवेन इति  
वा क्रिया । कर्मबन्धनिबन्धना चेष्टा । एषा मनोवाक्कायसम्बन्धिनी यथासंभवं  
योग उच्यते । अथवा—युनक्ति जीवो यं वीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितं  
पर्यायं स योगः । वीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितं मनोयुक्तात्मप्रदेशगतवीर्यपरिणमनं  
मनोयोगः । वीर्यान्तरायक्षयोपशमजनितं वाक्संयुक्तात्मप्रदेशगतवीर्यपरिणमनं

इस प्रकार संक्षेप में कर्मवादी के प्रकरण का वर्णन किया गया है । अधिक विवरण  
शास्त्रों से समझ लेना चाहिए ।

क्रियावादी का प्रकरण ।

जो भव्य जीव इस प्रकार कर्मबन्ध का ज्ञाता है, और कर्म के स्वरूप का निरूपण  
करने वाला है वही कर्मवादी सच्चा क्रियावादी है ।

करना क्रिया है । अथवा जीव के द्वारा जो की जाय वह क्रिया है । कर्मबन्ध  
का कारण चेष्टा क्रिया है । मन, वचन, काय सम्बन्धी यह क्रिया यथासंभव योग  
कहलाती है । अथवा जिस के द्वारा जीव वीर्यान्तराय कर्म के क्षयोपशम से जनित  
पर्याय से युक्त बनता है, उसको योग कहते हैं । वीर्यान्तराय के क्षयोपशम से जनित  
मन-युक्त आत्मप्रदेशों में रहे हुए वीर्य का परिणमन मनोयोग कहलाता है । वीर्यान्तराय  
के क्षयोपशम से जनित, वचनयुक्त आत्मप्रदेशों में रहे हुए वीर्य का परिणमन वचनयोग

આ પ્રમાણે સંક્ષેપમાં કર્મવાદીના પ્રકરણનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે, અધિક  
વિવરણ શાસ્ત્રોથી સમજ લેવું જોઈએ.

ક્રિયાવાદીનું પ્રકરણ.

જે ભવ્ય જીવ આ પ્રમાણે કર્મબંધના જ્ઞાતા છે, અને કર્મના સ્વરૂપનું નિરૂપણ  
કરવાવાળા છે; તેજ કર્મવાદી સાચા ક્રિયાવાદી છે.

કરવું તે ક્રિયા છે, અથવા જીવ દ્વારા જે કરવામાં આવે તે ક્રિયા છે. કર્મબંધનું  
કારણ ચેષ્ટા, ક્રિયા છે. મન, વચન, કાયા સંબંધી એ ક્રિયા યથાસંભવ યોગ કહેવાય છે.  
અથવા જેના દ્વારા જીવ વીર્યાન્તરાય-કર્મના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન પર્યાયયુક્ત બને  
છે, તેને યોગ કહે છે. વીર્યાન્તરાયના ક્ષયોપશમથી ઉત્પન્ન, મનયુક્ત આત્મ-  
પ્રદેશોમાં રહેલા વીર્યના પરિણમન તે મનોયોગ કહેવાય છે વીર્યાન્તરાયના ક્ષયોપશમથી

વાગ્યોગઃ । વીર્યાન્તરાયક્ષયોપશમજનિતં કાયયુક્તાત્મપ્રદેશગતવીર્યપરિણમનં  
કાયયોગઃ । સા ચ ક્રિયા સકલકર્મબન્ધસ્ય કારણમ્, અતઃ કર્મવાદી ભવ્યઃ  
ક્રિયાં સકલકર્મકારણસ્વરૂપતયાઽઽત્મપરિણતિરૂપત્વેન ચ વિજાનાતિ, તસ્માત્  
સકલકર્મબન્ધકારણમાત્મપરિણતિરૂપા ચ ક્રિયેતિ વેદિતા, ક્રિયાવાદી-ક્રિયાસ્વરૂપ-  
કથનસ્વભાવો વેદિતવ્ય इत्यर्थः ।

ક્રિયા કર્મણઃ કારણમિતિ ભગવતા ભગવતીસૂત્રે નિગદિતમ્, તથાહિ—

“મંડિઅપુત્તા ! જાવં ચ ણં સે જીવે સયા સમિયં એયઇ, વેયઇ, ચલઇ,  
ફંદહ, ઘટ્ટઇ, સુન્મઇ, ઉદીરઇ, તં તં ભાવં પરિણમઇ, તાવં ચ ણં સે જીવે આરંભઇ  
સારંભઇ સમારંભઇ, આરંભે વટ્ટઇ સારંભે વટ્ટઇ, સમારંભે વટ્ટઇ, આરંભમાણે સારંભમાણે  
સમારંભમાણે આરંભે વટ્ટમાણે સારંભે વટ્ટમાણે સમારંભે વટ્ટમાણે વહૂણં પાણાણં  
ભૂયાણં જીવાણં સત્તાણં દુક્ખાવળયાએ, સોયાવળયાએ, સ્જારાવળયાએ, તિપ્પાવળયાએ,  
પરિયાવળયાએ વટ્ટઇ, સે તેણઠ્ઠેણં મંડિઅપુત્તા ! एवं वुच्चइ—जावं च णं से जीवे  
सया समियं एयइ जाव परिणमइ, तावं च णं तस्स जीवस्स अंते अंतकिरिया न  
भवइ” (ભગવતી. ૩. શત. ૩૬.)

કહલાતા હૈ । વીર્યાન્તરાય કે ક્ષયોપશમ સે જનિત, કાયયુક્ત આત્મપ્રદેશો મેં રહે હુએ વીર્ય  
કા પરિણમન કાયયોગ કહલાતા હૈ । યહ ક્રિયા સકલ કર્મબન્ધ કા કારણ હૈ, ઇસ લિએ  
ભવ્ય પુરુષ ક્રિયા કો સબ કર્મોં કા કારણ ઓર આત્મા કી પરિણતિરૂપ સમજતા હૈ, અતઃ  
“ક્રિયા, સમસ્ત કર્મોં કા કારણ ઓર આત્મા કી પરિણતિરૂપ હૈ” ઇસ પ્રકાર જાનને વાલેકો  
ક્રિયાવાદિક્રિયા કે સ્વરૂપ કા કથન કરને વાલા સમજના ચાહિએ ।

ક્રિયા, કર્મ કા કારણ હૈ, યહ બાત ભગવાન્ ને ભગવતીસૂત્ર મેં કહી હૈ, વહ  
ઇસ પ્રકારઃ—

ઉત્પન્ન, વચન—યુક્ત આત્મપ્રદેશોભાં રહેલા વીર્યના પરિણમન કાયયોગ કહેવાય છે.  
આ ક્રિયા સકલ કર્મબન્ધનું કારણ છે. એટલા માટે ભવ્ય પુરુષ ક્રિયાને સર્વ કર્મોનું  
કારણ અને આત્માની પરિણતિરૂપ સમજે છે. તે કારણથી “ક્રિયા સમસ્ત કર્મોનું  
કારણ અને આત્માની પરિણતિરૂપ છે.” આ પ્રમાણે બાણવાવાળાને ક્રિયાવાદી-ક્રિયાના  
સ્વરૂપનું કથન કરવા વાળા સમજવા ભેઈએ.

ક્રિયા એ કર્મનું કારણ છે, એ વાત ભગવાને ભગવતીસૂત્રમાં કહી છે, તે આ  
પ્રમાણે છે—



छाया-मण्डितपुत्र ! यावच्च खलु स जीवः सदा समितं एजते व्यजते चलति स्पन्दते घट्टते क्षुभ्यति उदीरयते तं तं भावं परिणमति, तावच्च खलु स जीव आरभते संरभते समारभते, आरम्भे वर्तते संरम्भे वर्तते समारम्भे वर्तते, आरभमाणः, संरभमाणः समारभमाणः । आरम्भे वर्तमानः, संरम्भे वर्तमानः समारम्भे वर्तमानो बहूनां प्राणानां भूतानां जीवानां सत्त्वानां, दुःखापनतया शोचापनतया झूरापनतया तेपापनतया पिष्टापनतया परितापनतया वर्तते तत् तेनार्थेन मण्डितपुत्र ! एवम् उच्यते-यावच्च खलु स जीवः सदा समितं एजते यावत् परिणमति, तावच्च खलु तस्य जीवस्य अन्ते अन्तक्रिया न भवति ।

भावार्थः—

मनोवाक्काययोगसहितस्य जीवस्य सर्वदा क्रियापरिणत्या कम्पन-स्थानान्तरगमन-किञ्चिच्चलन-सर्वदिगमन-पृथिव्यादिक्षोभण-बलात्कारपूर्वकप्रेरणो-त्क्षेपणा-पक्षेपणा-ऽऽकुञ्चन-प्रसारणादिपरिणामं प्राप्तस्य पृथिव्यादिजीवानामुप-द्रवकरणेन वा, विनाशसंकल्पनेन वा, परितापनेन वा, मरणलक्षणदुःख-प्रापणया वा, प्रियवियोगादिदुःखप्रापणया वा, शोकप्रापणया वा, शोकाधिक्यजन्य-

“मन वचन और काययोग से सहित जीव सदा क्रियारूप परिणति से कम्पन, विविध कम्पन; एक स्थान से दूसरे स्थान पर गमन, किञ्चित् चलना, सब दिशाओं में गमन करना, पृथ्वी आदि को क्षुब्ध करना, बलात्कार से प्रेरित करना, ऊपर उठाना, नीचे करना, सिकोडना, फैलाना, इत्यादि परिणामों को प्राप्त होता है । इस परिणाम के कारण जीव को पृथिवीकाय आदि के जीवों को उपद्रव करने से, घातका संकल्प करने से, परिताप पहुँचाने से, मृत्युरूप दुःख पहुँचाने से, इष्टवियोग आदि का कष्ट पहुँचाने से, शोक

मन, वचन અને કાયયોગથી સહિત જીવ સદા ક્રિયારૂપ પરિણતિથી કંપન, વિવિધ કંપન, એક સ્થાનથી બીજા સ્થાન પર ગમન, કિંચિત્ ચાલવું, સર્વ દિશાઓમાં ગમન કરવું, પૃથ્વી આદિને ક્ષુબ્ધ કરવું, બલાત્કારથી પ્રેરિત કરવું, ઉપર ઉઠાવવું, નીચે કરવું, સંકોચાવું, ફેલાવું, ઇત્યાદિ પરિણામોને પ્રાપ્ત થાય છે. આ પરિણામના કારણે જીવને પૃથ્વીકાય આદિના જીવોને ઉપદ્રવ કરવાથી, ઘાતનો સંપદ્ય કરવાથી, પરિતાપ પહોંચાડવાથી, મૃત્યુરૂપ દુઃખ પહોંચાડવાથી, શોકની અધિકતાથી થવાવાળી શરીરની



શરીરજીર્ણતાપ્રાપ્તયા વા, અશ્રુપાતાદિપ્રાપ્તયા વા, શરીરપીડોત્પાદનયા વા, ગ્લાનિજનનેન વા સકલકર્મક્ષયાત્મિકા મુક્તિર્ન ભવતીત્યર્થઃ । એવમ્ભૂતસ્ય જીવસ્ય ચતુર્ગતિકદુઃસ્વમયસંસારદુસ્તરમહારણ્યપરિશ્રમણાદ્ વિરામો ન સંભવતીતિ ભાવઃ ।

ક્રિયાયાઃ પચ્ચવિંશતિર્મેદા ઇતિ સ્થાનાઙ્ગસૂત્રે (સ્થા. ૨ ડ. ૧ । સ્થા. ૩ ડ. ૩)

કતિભિઃ ક્રિયાભિઃ પ્રાણાતિપાતઃ —

પ્રાણાતિપાતં કુર્વન્ જીવઃ સપ્તાષ્ટૌ વા જ્ઞાનાવરણીયાદીનિ કર્મણિ બધ્નાતિ । તત્રાયુર્બન્ધે સત્યષ્ટૌ કર્મણિ, આયુર્બન્ધાભાવે સપ્ત કર્મણિ બધ્નાતિ ।

તત્ર જીવઃ કતિભિઃ ક્રિયાભિઃ પ્રાણાતિપાતં નિષ્પાદયતિ ? ઉચ્યતે— કદાચિત્ તિસૃભિઃ ક્રિયાભિઃ, કદાચિચ્ચતસૃભિઃ ક્રિયાભિઃ, કદાચિત્, પચ્ચભિઃ ક્રિયાભિઃ ।

પહુંચાને સે શોક કી અધિકતા સે, હોને વાલી શરીર કી જીર્ણતા પહુંચાને સે, અશ્રુપાત આદિ કરવાને સે, શરીર મેં પીડા ઉત્પન્ન કરને સે, ગ્લાનિ ઉત્પન્ન કરને સે સમસ્ત કર્મોં કા ક્ષયરૂપ મોક્ષ પ્રાપ્ત નહીં હોતા । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—ઇસ પ્રકાર કે જીવ કે ચાર ગતિ કે દુઃખોં સે પરિપૂર્ણ સંસારરૂપી વિકટ અટવી મેં ભ્રમણ કરને કા અન્ત નહીં આતા । ”

ક્રિયા કે પચ્ચીસ ભેદ સ્થાનાઙ્ગસૂત્ર મેં કહે હૈં । (સ્થા. ૨ ડ. ૧, સ્થા. ૩ ડ. ૩)

પ્રાણાતિપાત કિતની ક્રિયાઓં સે હોતા હૈં ? ।

પ્રાણાતિપાત કરતા હુઆ જીવ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સાત યા આઠ કર્મોં કા બન્ધ કરતા હૈં । આયુ કા બન્ધ હો તો આઠ કર્મોં કા અન્યથા સાત કર્મોં કા બન્ધ કરતા હૈ ।

જીવ કિતની ક્રિયાઓં સે પ્રાણાતિપાત કરતા હૈ । ઇસ કા ઉત્તર યહ હૈ—કદાચિત્ ત્રીન ક્રિયાઓં સે, કદાચિત્ ચાર ક્રિયાઓં સે, કદાચિત્ પાંચ ક્રિયાઓં સે ।

જીર્ણતા પહોંચાડવાથી, આંસુ પડાવવાથી, શરીરમાં પીડા ઉત્પન્ન કરવાથી, ગ્લાનિ ઉત્પન્ન કરવાથી સમસ્તકર્મોના ક્ષયરૂપ મોક્ષ પ્રાપ્ત થતો નથી. તાત્પર્ય એ છે કે— આ પ્રમાણે જીવનો આગતિના દુઃખોથી પરિપૂર્ણ સંસારરૂપી વિકટ અટવી(વન)માં ભ્રમણ કરવાનો અંત આવતો નથી.

ક્રિયાના પચ્ચીસ ભેદ સ્થાનાંગ સૂત્રમાં કહ્યા છે. (સ્થા. ૨-ઉ-૧. સ્થા. ૩-૩)

પ્રાણાતિપાત કેટલી ક્રિયાઓથી થાય છે ?

પ્રાણાતિપાત કરનાર જીવ જ્ઞાનાવરણીય આદિ સાત અથવા આઠ કર્મોના બંધ કરે છે. આયુનો બંધ હોય તો આઠ કર્મોના—અન્યથા સાત કર્મોના બંધ કરે છે.

જીવ કેટલી ક્રિયાઓથી પ્રાણાતિપાત કરી શકે છે ? તેનો ઉત્તર એ છે કે—કદાચિત્ ત્રણ ક્રિયાઓથી, કદાચિત્ ચાર ક્રિયાઓથી; કદાચિત્ પાંચ ક્રિયાઓથી.

તત્ર-કાયિક્યાધિકરણિકીપ્રાદેષિકીભિઃ ક્રિયામિત્ત્રિક્રિયો જીવઃ કર્માણિ  
વધ્નાતિ । કાયિકીનામ-હસ્તપાદાદિવ્યાપારણમ્ । અધિકરણિકી-સ્વદ્ગતીક્ષ્ણીકરણા-  
દિકમ્ । પ્રાદેષિકી-‘એનં મારયમી’-ત્યશુભમનઃસંપ્રધારણમિતિ ।

પ્રાણાતિપાતં કર્તુર્જીવસ્ય ચતુષ્ક્રિયતા-કાયિક્યાધિકરણિકીપ્રાદેષિકી  
પારિતાપનિકીમિશ્રતસ્મૃતિઃ ક્રિયામિર્ભવતિ । તત્ર-પારિતાપનિકીનામ-સ્વદ્ગાદિઘાતેન  
પીડાકરણમ્ । પશ્ચક્રિયતા તદા ભવતિ યદા પ્રાણાતિપાતક્રિયાઽપિ પશ્ચમી  
ભવતિ । પ્રાણાતિપાતક્રિયાનામ-જીવિતાદ્ વ્યપરોપણમ્ । ઉક્તરીત્યા જ્ઞાનાવરણી-

કાયિકી, આધિકરણિકી ઓર પ્રાદેષિકી, ઇન ત્રીન ક્રિયાઓં વાલો હોકર જીવ કર્મબન્ધ  
કરતા હૈ । હાથ-પૈર આદિ કા હિલના ડુલના વગૈરહ ‘કાયિકી’ ક્રિયા હૈ । તલવાર કો  
તીક્ષ્ણ કરના વગૈરહ ‘આધિકરણિકી’ ક્રિયા હૈ । ‘ઈસે મારુંગા’ ઇસ પ્રકાર મન મેં અશુભ  
વિચાર કરના ‘પ્રાદેષિકી’ ક્રિયા હૈ ।

પ્રાણાતિપાત કરને વાલો જીવ ચાર ક્રિયા વાલો હોતા હૈ-કાયિકી, આધિકરણિકી,  
પ્રાદેષિકી ઓર પારિતાપનિકી, યે ચાર ક્રિયાઈં ઉસે લગતી હૈં । તલવાર આદિકા આઘાત  
કર કે પીડા પહુંચાના ‘પારિતાપનિકી’ ક્રિયા હૈ । જબ પ્રાણાતિપાત ક્રિયા મી જીવ  
કર ડાલતા હૈ તબ ઉસે પાંચોં ક્રિયાઈં લગતી હૈં । કિસી પ્રાણી કો જીવન સે વિયુક્ત  
કર દેના ‘પ્રાણાતિપાતિકી’ ક્રિયા હૈ । ઇસ પ્રકાર જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં કે કારણભૂત

કાયિકી, આધિકરણિકી અને પ્રાદેષિકી, આ ત્રણ ક્રિયાઓવાળા થઈને જીવ કર્મબન્ધ  
કરે છે, હાથ-પગ આદિને હલાવવું-ફેરવવું વગેરે કાયિકી ક્રિયા છે. તલવાર વગેરેને  
તીક્ષ્ણ કરવી વગેરે આધિકરણિકી ક્રિયા છે ‘એને મારીશ’ આ પ્રકારનો મનમાં  
અશુભ વિચાર કરવો તે પ્રાદેષિકી ક્રિયા છે.

પ્રાણાતિપાત કરવાવાળા જીવ ચાર ક્રિયાવાળા હોય છે-કાયિકી, આધિકરણિકી,  
પ્રાદેષિકી અને પારિતાપનિકી, આ ચાર ક્રિયાઓ તેને લાગે છે. તલવાર આદિનો  
આઘાત કરીને પીડા પહોંચાડવી તે પારિતાપનિકી ક્રિયા છે. જ્યારે પ્રાણાતિપાત ક્રિયા  
પણ જીવ કરી નાંખે છે ત્યારે તેને પાંચ ક્રિયાઓ લાગે છે. કેઈ પ્રાણીને જીવનથી  
વિયુક્ત (જૂડું) કરી દેવું તે પ્રાણાતિપાતિકી ક્રિયા છે. આ પ્રમાણે જ્ઞાનાવરણીય આદિ

યાદિકર્મણાં कारणीभूतस्य प्राणातिपातस्य निष्पत्तिस्त्रिक्रियतया, चतुष्क्रियतया पञ्चक्रियतया वा त्रिधा भवति । एवं चतुर्विंशतिदण्डकेषु विज्ञेयम् ।

### મૃગવધોદયતસ્ય ક્રિયા—

મૃગવધોદયતો લુબ્ધકઃ સ્વલુ વનપર્વતજલાશયાદિષુ મૃગવધાર્થં ગત્વા મૃગગ્રહણાય ગર્તાદિકં તવન્ધનાર્થં ચ પાશં રચયતિ, તદા મૃગવધાર્થં ગમનગર્ત-પાશાદિકરણાત્ તસ્ય કાયિક્યાદિકાઃ ક્રિયા ભવન્તિ । તત્ર ગમનધાવન-ગ્રહણાદિના ગમનાદિકાયચેષ્ટારૂપા કાયિકી, ગર્તપાશાદિરૂપેણાધિકરણેન નિર્વૃત્તા ક્રિયા આધિકરણિકી, યથ મૃગેષુ પ્રદ્રેષસ્તેન નિર્વૃત્તા પ્રાદ્રેષિકી ક્રિયા ભવતિ ।

પ્રાણાતિપાત કી નિષ્પત્તિ કહીં ત્રીન, ચાર તથા કહીં પાંચ ક્રિયાઓં સે, એસે ત્રીન પ્રકાર સે હોતી હૈ । ચૌવીસોં દણ્ડકોં મેં હસી પ્રકાર સમજના ચાહિએ ।

### મૃગવધ મેં ઉદયતકો ક્રિયા—

મૃગ મારને કે લિએ ઉદયત હુઆ શિકારી વન પર્વત ઓર જલાશય આદિ મેં મૃગકા વધ કરને કે લિએ જાકર મૃગ પકડને કે લિએ સ્વડુ બનાતા હૈ ઓર ઉસે બાંધને કે લિએ જાલ રચતા હૈ । ઉસ સમય મૃગવધ કે લિએ ગમન કરને સે, તથા સ્વડુ એવં પાશ તૈયાર કરને સે, ઉસે કાયિકી આદિ ક્રિયાએ લગતી હૈ । જાના દૌડના, પકડના આદિ સે કાયિકચેષ્ટારૂપ કાયિકી ક્રિયા લગતી હૈ । સ્વડુ ઓર જાલરૂપ અધિકરણોં કે કારણ આધિકરણિકી ક્રિયા હોતી હૈ, મૃગ પર હોને વાલે દ્રેષ કે કારણ

કર્મોના કારણુભૂત પ્રાણુતિપાતની ઉત્પત્તિ કોઈ સ્થળે ત્રણ, કોઈ ઠેકાણે ચાર તથા કોઈ ઠેકાણે પાંચ ક્રિયાઓથી એવા ત્રણ પ્રકારથી હોય છે. એવીશેય ઠંડકોમાં આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ.

### મૃગવધમાં તૈયાર થનારને ક્રિયા—

મૃગને મારવા માટે તૈયાર થયેલો શિકારી વન, પર્વત અને જલાશય આદિમાં મૃગનો વધ કરવા માટે જઈને મૃગ પકડવા માટે ખાડો ખનાવે છે, અને તેને બાંધવા માટે જાલ રચે છે તે સમયે મૃગના વધ માટે ગમન કરવાથી, તથા ખાડો અને પાશ તૈયાર કરવાથી તેને કાયિકી આદિ ક્રિયાઓ લાગે છે. જવું, દોડવું, પકડવું આદિથી કાયિક ચેષ્ટારૂપ કાયિકી ક્રિયા લાગે છે. ખાડો અને જાલરૂપ અધિકરણોના કારણે આધિકરણિકી



બદ્ધે સતિ તુ મૃગે તસ્ય લુબ્ધકસ્ય પારિતાપનિકી, પરિતાપનપ્રયોજના ક્રિયા ભવતિ ।  
ઘાતિત્વે ચ સતિ મારણરૂપા પ્રાણાતિપાતક્રિયા ।

પૂર્વ ક્રિયયા જ્ઞાનાવરણીયાદિકં કર્મ જન્યતે । તત્તત્કર્મફલાનુભવનરૂપા વેદના  
ચ તત્પશ્ચાદેવ ભવતિ । ઉક્તશ્ચ—

“પુર્વં મંતે ! કિરિયા પચ્છા વેયણા ? પુર્વં વેયણા તચ્છા કિરિયા ?  
મંડિઅપુત્તા ! પુર્વં કિરિયા પચ્છા વેયણા, ણો પુર્વં વેયણા, પચ્છા કિરિયા ” ।  
( ભગ. ૩ શ. ૩. ઉ. )

છાયા-પૂર્વં મદન્ત ! ક્રિયા પશ્ચાદ્ વેદના ? પૂર્વં વેદના પશ્ચાત્ ક્રિયા ?  
મોમણિટપુત્ર ! પૂર્વં ક્રિયા પશ્ચાદ્ વેદના, નો પૂર્વં વેદના પશ્ચાત્ ક્રિયા ॥

કુમૂલાદૌ લોહમુક્ષિપતઃ ક્રિયા—

લોહં લોહપ્રતાપનાર્થે કુશૂલે. લોહમયેન સંદંશનેનોક્ષિપન્ પ્રક્ષિપન્ વા  
પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા લગતી છે । મૃગ કે બંધ જાને પર શિકારી કો પારિતાપનિકી ક્રિયા  
લગતી છે । મૃગ કા ઘાત કરને પર હિંસારૂપ પ્રાણાતિપાતિકી ક્રિયા હોતી છે ।

પહેલે ક્રિયા સે જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મો કા બંધ હોતા છે ઓર ઉસ કા ફલ  
મોગનારૂપ વેદના વાદ મેં હી હોતી છે । કહા મી છે—

“હે ભગવન્ ! પહેલે ક્રિયા ઓર ફિર વેદના હોતી છે ? અથવા પહેલે વેદના ઓર  
પશ્ચાત્ ક્રિયા હોતી છે ? હે મણિટપુત્ર ! પહેલે ક્રિયા, પશ્ચાત્ વેદના હોતી છે । પહેલે વેદના  
ઓર પશ્ચાત્ ક્રિયા નહીં હોતી ” ( ભગવતી. શ. ૩. ઉ. ૩. )

કુશૂલ આદિ મેં લોહા ડાલને વાલે કો ક્રિયા—

તપાને કે લિપ્ કુશૂલ (મૂષ) મેં લોહે કો સંડાસી સે લોહા ડાલને વાલે કો

ક્રિયા થાય છે. મૃગ ઉપર થવાવાળા દ્વેષથી પ્રાદ્વેષિકી ક્રિયા લાગે છે. મૃગના બંધાઈ  
જવાથી શિકારીને પારિતાપનિકી ક્રિયા લાગે છે. મૃગનો ઘાત કરવાથી હિંસારૂપ  
પ્રાણાતિપાતિકી ક્રિયા થાય છે.

પ્રથમ ક્રિયાથી જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોનો બંધ થાય છે, અને તેનું ફળ ભોગવવા  
રૂપ વેદના પછીથીજ થાય છે. કહ્યું છે કે:—

“હે ભગવન્ ! પહેલાં ક્રિયા અને પછી વેદના થાય છે ? કેપહેલાં વેદના અને  
પછીથી ક્રિયા થાય છે ? હે મંડિતપુત્ર ! પહેલી ક્રિયા, અને પછીથી વેદના થાય છે,  
પહેલી વેદના અને પછીથી ક્રિયા થતી નથી. ” ( ભગ. શ. ૩. ઉ. ૩. )

મૂષ આદિમાં લોહું નાખનારને ક્રિયા—

તપાવવા માટે મૂષમાં, લોહાની સાથેસાથે લોહું નાખવાવાળાને કાયિકીથી લક્ષને

કાયિક્યાદિ-પ્રાણાતિપાતિકીપર્યન્તાભિઃ પચ્ચભિઃ ક્રિયાભિઃ સ્પૃષ્ટો ભવતિ । एवं लोहेन फालपरशुकुठारकुदालदात्रादिनिर्माणे लोहकारादीनां पञ्चक्रियत्वं भवति, अविरतिसद्भावात् । एवं घनोपरि स्थापनेन कुट्टनेन भस्त्रया ध्मापनेन विध्यापनेन प्रज्वालितेन शैत्यकरणार्थं जले तप्तलोहप्रक्षेपेण प्रत्येकतत्तद्व्यापारे पञ्चभिः पञ्चभिः क्रियाभिः स्पृष्टो भवति ।

ધનુષા વિધ્યતઃ ક્રિયા-

ધનુર્ધરઃ શરૈર્વ્યાપાદયન્ યાવત્ ધનુર્ગૃહ્ણતિ, ધનુઃ પ્રસારયતિ, કર્ણ-પર્યન્તમાકર્ષતિ, વર્તુલીકરોતિ, બાણં સંયોજયતિ, ઝર્ધ્વં પ્રક્ષિપતિ, સ્વાભિમુખ-માગચ્છતો હન્તિ, અન્યોન્યગાત્રં સંહતીકરોતિ, મનાક્ સ્પૃશતિ, સમન્તતઃ પરિતા-

કાયિકી સે પ્રાણાતિપાતિકી પર્યન્ત પાંચ ક્રિયાઓં કા સ્પર્શ હોતા હૈ । હસી પ્રકાર લોહે સે ફાલ, ફરસા, કુલ્હાડા, કુદાલ, દાંતલા આદિ કે બનાને મેં છહાર વગૈરહ કો પાંચ ક્રિયાઈ લગતી હૈ, ક્યોં કિ ઉસ મેં અવિરતિ મૌજૂદ હૈ । હસી પ્રકાર ઘન કે ડપર રલ્ખને મેં, કૂટને મેં, ધોંકને મેં, આગ બુલ્લાને મેં, પ્રજ્વલિત કરને મેં, ઠંડા કરનેકે લિખ જલ મેં લોહા ડાલને મેં, હસ પ્રત્યેક મેં પાંચ ૨ ક્રિયાઈ લગતી હૈ ।

ધનુષ સે વેધને મેં ક્રિયા-

ધનુર્ધારી પુરુષ બાળ સે મારતા હુઆ જબ તક ધનુષ ગ્રહણ કરતા હૈ, ધનુષ ફેલાતા હૈ, કાનપર્યન્ત સ્વીચતા હૈ, ગોલ કરતા હૈ, ઉસ મેં બાળ જોડતા હૈ, ડપર ફેંકતા હૈ, અપને સામને આતે કો મારતા હૈ, શરીર કો સિકોડતા હૈ, જરા-સા સ્પર્શ

પ્રાણાતિપાત સુધીની પાંચ ક્રિયાઓનો સ્પર્શ થાય છે. એ પ્રમાણે લોહના કાલ-હળની કોસ, ફરસી, કુવાડા, કોદાલી, દાંતલા આદિ બનાવવામાં હુદાર વગેરેને પાંચ ક્રિયાઓ લાગે છે, કારણ કે તેમાં અવિરતિ હાજર છે. આ પ્રકારે ઘણને ડપર રાખવામાં, કૂટવામાં ધોકનીથી ધોકવામાં, અગ્નિ ખુઝાવામાં; પ્રજ્વલિત કરવામાં અને લોહું ઠંડું કરવા માટે પાણીમાં નાખવામાં. આ પ્રત્યેક કાર્યમાં પાંચ ક્રિયાઓ લાગે છે.

ધનુષથી વિંધવામાં ક્રિયા-

ધનુષ ધારણ કરનાર પુરુષ બાણથી મારતો ન્યાંસુધી ધનુષ ગ્રહણ કરે છે, ધનુષ ફેલાવે છે, કાન સુધી ખેંચે છે, ગોળ કરે છે, તેમાં બાણ જોડે છે, ડપર ફેંકે છે, પોતાના સામે આવનારને મારે છે, શરીરને સંકોચે છે, થોડો એવો સ્પર્શ કરે છે,

પચતિ, સ્થાનતઃ સ્થાનાન્તરં નયતિ, જીવિતાદ્ વ્યપરોચયતિ । તત્ર કાયિકયાદિ-  
પ્રાણાતિપાતિકીપર્યન્તાભિઃ પશ્ચભિઃ ક્રિયાભિઃ સ્પૃષ્ટો ભવતિ ।

વૃષ્ટિજ્ઞાનાય હસ્તાદિકં પ્રસારયતઃ ક્રિયા—

રાત્રૌ નિવિહાન્ધકારે ચક્ષુર્દર્શનાભાવે સતિ વૃષ્ટિં વિજ્ઞાતુમાકાશે યઃ  
સ્વલુ હસ્તં પાદં વા બાહું વા ઝરું વા યાવત્કાલં પ્રસારયેત્ સંકોચયેત્ તાવત્કાલત  
એવાસૌ કાયિકયાદિપ્રાણાતિપાતિકીપર્યન્તાભિઃ પશ્ચભિઃ ક્રિયાભિઃ સ્પૃષ્ટો ભવતિ ।

કરતા હૈ, પૂરી તરહ પરિતાપના કરતા હૈ, એક સ્થાન સે દૂસરે સ્થાન પર લેજાતા હૈ,  
જીવન સે વ્યુત કરતા હૈ, એસા કરને મેં વહ કાયિકી આદિ પ્રાણાતિપાતિકી પર્યન્ત પાંચો  
ક્રિયાઓ સે સ્પૃષ્ટ હોતા હૈ । અર્થાત્ પાંચો હી ક્રિયાઈં ઉસે લગતી હૈ ।

વૃષ્ટિજ્ઞાન કે લિખ હાથ આદિ ફેલાવને વાળે કો ક્રિયાઈં—

રાત્રિ કે સમય ઘોર અન્ધકાર મેં—ચક્ષુર્દર્શન કા અભાવ હોને પર, વર્ષા જાનને કે  
લિખ આકાશ મેં જો હાથ, પૈર, બાહુ, યા ઝરુ, જવ તક પ્રસારતા હૈ, સિકોડતા હૈ,  
તવ તક હી વહ કાયિકી આદિ પ્રાણાતિપાતિકી પર્યન્ત પાંચક્રિયાઓ સે સ્પૃષ્ટ હોતા હૈ ।

પૂરી રીતે પરિતાપના કરે છે, એક સ્થાનથી બીજા સ્થાનમાં લઈ જાય છે, જીવનથી  
વ્યુત (વિયુક્ત) કરે છે. એવી રીતે કરવામાં તે કાયિકી આદિ પ્રાણાતિપાતિકી સુધીની  
પાંચેય ક્રિયાઓથી સ્પૃષ્ટ થાય છે, અર્થાત્ તેને પાંચેય ક્રિયાઓ લાગે છે.

વૃષ્ટિજ્ઞાન માટે હાથ આદિ ફેલાવવા વાળાને ક્રિયાઓ—

રાત્રિના ઘોર અંધકારમાં, ચક્ષુર્દર્શનનો અભાવ હોવાથી, વરસાદ આવે છે કે  
નહિ ? એ જાણવા માટે, આકાશમાં જે હાથ, પગ, બાહુ અથવા ઊંડે જ્યાં સુધી પ્રસારે છે,  
સંકોચે છે, ત્યાં સુધી તે કાયિકી આદિ પ્રાણાતિપાતિકી સુધીની પાંચ ક્રિયાઓ તેને સ્પર્શે છે.



॥ તાલમારુહ તત્ફલં પાતયતઃ ક્રિયા ॥

તાલવૃક્ષમારુહ તત્ફલં પાતયન્નપિ તાવત્કાલત એવ પશ્ચભિઃ કાયિકયાદિ-  
ક્રિયાભિઃ સ્પૃષ્ટો ભવતિ ।

અષ્ટાદશ પાપસ્થાનાનિ—

(૧) પ્રાણાતિપાતઃ—

જીવાનાં પ્રાણાતિપાતાધ્યવસાયેન પ્રાણાતિપાતક્રિયા ભવતિ । હિંસાપરિણામ-  
કાલ એવ પ્રાણાતિપાતક્રિયા ભવતિ । પ્રાણાતિપાતાદીનામધ્યવસાયમાત્રાદપિ જ્ઞાના-  
વરણીયાદિ કર્મ જન્યતે । ઉક્તશ્ચ—

“ પરિણામિયં પમાણં નિચ્છયમવલંબમાણાણં ” ઇતિ ।

તાલવૃક્ષ પર ચઢ કર ફલ ગિરાનેવાલે કો ક્રિયાઈ—

તાલ વૃક્ષ પર ચઢ કર ઉસ કે ફલ ગિરાતા હુઆ તબ તક કાયિકી આદિ પાંચ  
ક્રિયાઓં સે સ્પૃષ્ટ હોતા હૈ ।

અઠારહ પાપસ્થાન—

(૧) પ્રાણાતિપાત—

જીવોં કા પ્રાણાતિપાત કરને કે અધ્યવસાય સે પ્રાણાતિપાતક્રિયા હોતી હૈ । હિંસા-  
રૂપ પરિણામ કે સમય હી પ્રાણાતિપાતક્રિયા હોતી હૈ । પ્રાણાતિપાત કા અધ્યવસાય હોને  
માત્ર સે મી જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ ઉત્પન્ન હોતે હૈ । કહા મી હૈ—

“ પરિણામિયં પમાણં નિચ્છયમવલંબમાણાણં ”

અર્થાત્ પ્રાણાતિપાત કરને કા નિશ્ચય કરને વાલે કા પરિણામ હી કર્મબન્ધ કા કારણ હૈ

તાલવૃક્ષ પર ચઢીને ફલ પાડનારની ક્રિયાઓ—

તાલવૃક્ષ પર ચઢીને તેના ફળ પાડે છે ત્યાં સુધી કાયિકી આદિ પાંચ ક્રિયાઓનો  
સ્પર્શ કરે છે.

અઠાર પાપસ્થાન—

(૧) પ્રાણાતિપાત—

જીવોના પ્રાણાતિપાત કરવાના અધ્યવસાયથી પ્રાણાતિપાતક્રિયા થાય છે. હિંસા-  
રૂપ પરિણામના સમયેજ પ્રાણાતિપાતક્રિયા થાય છે. પ્રાણાતિપાતનો અધ્યવસાય થવા  
માત્રથી પણ જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મ ઉત્પન્ન થાય છે કહ્યું છે. કેઃ—

“ પરિણામિયં પમાણં નિચ્છયમવલંબમાણાણં. ”

અર્થાત્—પ્રાણાતિપાત કરવાનો નિશ્ચય કરવાવાળાનાં પરિણામજ કર્મબંધનું કારણ છે.

इयं च प्राणातिपातक्रिया षड्जीवनिकायविषये भवति । यथा-रज्जादौ सर्पादिबुद्ध्या मारणाध्यवसायोऽपि जीवविषयक एव । तत्र हि-‘सर्पोऽय’-मितिबुद्ध्या मारणाध्यवसायो जायते, तस्मात् रज्जुं प्रति सर्पवधभावयुक्तः सर्पवधजन्यया प्राणातिपातक्रियया स्पृष्टो भवति । अजीवविषयको मारणाध्यवसायस्तु नैव संभवति, यथा रज्जुं रज्जुत्वेन विज्ञाय न कश्चिद्रज्जुविषये मारणाध्यवसायं करोति तस्मात् षट्सु जीवनिकायेष्वेव प्राणातिपातक्रिया प्रवर्तते, न त्वजीवविषय इति । उक्तञ्च—

“कम्हि णं भंते ! जीवाणं पाणाइवाएणं किरिया कज्जइ ! । गोयमा छसु जीवणिकाएसु” इति

यह प्राणातिपात क्रिया षड्जीवनिकाय के विषय में होती है । रस्सी आदि में सांप आदि की भावना से मारने का अध्यवसाय होना भी जीवविषयक ही अध्यवसाय है । वहाँ ‘यह सर्प है’ इस प्रकार की भावना से मारने का अध्यवसाय होता है, अत एव वहाँ रस्सी में सर्प के वधके भाव से युक्त पुरुष सर्पवधजन्य प्राणातिपात क्रिया से स्पृष्ट होता है । अजीवविषयक मारने का अध्यवसाय तो हो ही नहीं सकता है—रस्सी को रस्सी समझ कर कोई रस्सी में मारने की भावना नहीं करता, अतः षड्जीवनिकायों में ही प्राणातिपातिकी क्रिया प्रवृत्त होती है, अजीव में नहीं । कहा भी है—

“भगवन् ! किन में जीवों को प्राणातिपातिकी क्रिया होती है ? गौतम ! छह जीवनिकायों में” ।

આ પ્રાણાતિપાત ક્રિયા ષડ્જીવનિકાયના વિષયમાં થાય છે. દોરડાં આદિમાં સર્પઆદિની ભાવનાથી મારવાનો અધ્યવસાય થવો તે પણ જીવવિષયક અધ્યવસાય છે. ત્યાં ‘આ સર્પ છે’ આ પ્રકારની ભાવનાથી મારવાનો અધ્યવસાય થાય છે. એટલા કારણથી ત્યાં રસી-દોરડાંમાં-સર્પના વધની ભાવનાયુક્ત પુરુષ સર્પવધજન્ય પ્રાણાતિપાત ક્રિયાને સ્પર્શે છે. અજીવવિષયક મારવાના અધ્યવસાય તો થઈ શકતા નથી—રસીને રસી (દોરડી) સમજીને કોઈ રસી-દોરડામાં મારવાની ભાવના કરતા નથી, તે માટે ષડ્જીવની-કાયોમાંજ પ્રાણાતિપાતની ક્રિયા પ્રવૃત્ત હોય છે. અજીવમાં નહિ. કહ્યું પણ છે—

“ભગવન્ ! શે-ં જીવોને પ્રાણાતિપાતિકી ક્રિયા થાય છે ? ગૌતમ ! છ જીવનિકાયોમાં.”

(૨) મૃષાવાદ:-

સતોઽપલાપોઽસતશ્ચ પ્રરૂપણં મૃષાવાદઃ । સ સર્વદ્રવ્યપર્યાયવિશેષયે ભવતિ ।

(૩) અદત્તાદાનમ્-

અદત્તસ્ય=દેવગુર્વાદિભિરનનુજ્ઞાતસ્યાદાનં=ગ્રહણમ્=અદત્તાદાનમ્, યદ્ વસ્તુ ગ્રહીતું ધારયિતું વા શક્યતે, તદ્વસ્તુમાત્રત્રિપયકમાદાનં ભવતિ, ન તુ તદન્યવસ્તુ-વિષયકમ્, ઉક્તશ્ચ—

“કમ્હિ જં મંતે ! જીવાણં અદિન્નાદાણેણં કિરિયા કજ્જહ ? । ગોયમા ગહણધારણિજ્જમ્હુ દવ્વેસુ” । ઇતિ (ભગ. ૧ શ. ૬ ઉ.)

(૪) મૈથુનમ્-

સ્ત્રીપુંસયોઃ કર્મ-મૈથુનમ્ । મૈથુનાધ્યવસાયોઽપિ ચિત્રલેપ્યકાષ્ઠાદિકર્મ-

(૨) મૃષાવાદ-

સત્ કા અપલાપ કરના ઓર અસત્ કા પ્રરૂપણ કરના મૃષાવાદ હૈ । મૃષાવાદ સમસ્ત દ્રવ્યો ઓર પર્યાયોં કે વિષય મેં હોતા હૈ ।

(૩) અદત્તાદાન-

અદત્ત અર્થાત્ દેવ એવં ગુરુ આદિ દ્વારા જિસ કી આજ્ઞા પ્રાપ્ત ન હુઈ હો ઉસકો પ્રહણ કરના અદત્તાદાન હૈ । જો વસ્તુ પ્રહણ કી જા સકતી હૈ યા ધારણ કી જા સકતી હૈ ઉસી વસ્તુ કા આદાન હો સકતા હૈ, અન્ય વસ્તુ કા નહીં । કહા મી હૈ:—

“ભગવન્ ! કિસ વસ્તુ મેં અદત્તાદાન કે દ્વારા ક્રિયા કી જાતી હૈ ? ગૌતમ ! પ્રહણ કરને ઓર ધારણ કરને યોગ્ય દ્રવ્યોં મેં (ભગ., શ. ૧, ઉ. ૬)

(૪) મૈથુન—

મિથુન અર્થાત્ સ્ત્રી ઓર પુરુષ કા કાર્ય મૈથુન કહલાતા હૈ । મૈથુન કા અધ્યવસાય

મૃષાવાદ-

સત-ને ખોટું કહેવું અને અસતને સાચું કહી તેનું પ્રરૂપણ કરવું તે મૃષાવાદ-સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોના વિષયોમાં થાય છે.

(૩) અદત્તાદાન-

અદત્ત અર્થાત્ દેવ-ગુરુ આદિદ્વારા જેની આજ્ઞા મળી ન હોય, તેવી વસ્તુને ગ્રહણ કરવી તે અદત્તાદાન છે. જે વસ્તુ ગ્રહણ કરી શકાય છે, અથવા ધારણ કરી શકાય છે તે વસ્તુનું આદાન થઈ શકે છે. બીજી વસ્તુનું નહિ. કહ્યું પણ છે:—

ભગવન્ ! કઈ વસ્તુમાં અદત્તાદાન દ્વારા ક્રિયા થઈ શકે છે ? ગૌતમ ! ગ્રહણ કરવા અને ધારણ કરવા યોગ્ય દ્રવ્યોમાં.” (ભાગ. શ. ૧ ઉ. ૬)

(૪) મૈથુન—

મૈથુન અર્થાત્ સ્ત્રી અને પુરુષનું કાર્ય મૈથુન કહેવાય છે, મૈથુનના અધ્યવસાય



गतरूपेषु रूपसहगतेषु रूपादिषु विषयेषु भवति, न तु सकलवस्तुविषये ।  
उक्तञ्च—

“कम्हि णं भंते ! जीवाणं मेहुणेणं किरिया कज्जइ ? । गोयमा ! रूवेसु  
वा रूवसहगएसु वा दव्वेसु” इति ( भग. १ श. ६ उ. )

(५) परिग्रहः—

परिग्रहः=स्वस्वामिभावेन मूर्च्छा । स च प्राणिनामधिकलोभात् समस्त-  
वस्तुविषये प्रादुर्भवति ।

कृत्याकृत्यविवेकोन्मूलकोऽक्षमारूप आत्मपरिणामः क्रोधः ६ । मानो=  
गर्वः ७ । माया=शाठ्यम् ८ । लोभो=गृध्नुता ९ ? । रागः=प्रीतिरासक्तिर्वा १० ।

भी सब वस्तुओं में नहीं होता । चित्र, लेप्य, या काष्ठ आदि में अङ्कित किये जाने वाले  
रूपों में या स्त्री आदि में ही मैथुन का अध्यवसाय होता है । कहा भी है—

“भगवन् ! किस विषय में जीव मैथुन किया करते हैं ? गौतम ! रूपों में और  
रूप-युक्त विषयों ( स्त्रियों आदि ) में । ( भग. श. १, उ. ६ )

(५) परिग्रह—

“यह वस्तु मेरी है मैं इसका स्वामी हूँ” इस प्रकार की मूर्च्छा को परिग्रह  
कहते हैं । प्राणियों में लोभ की अधिकता होने के कारण सभी वस्तुओं में मूर्च्छा हो  
सकती है ।

कर्तव्य-अकर्तव्य के विवेक को नष्ट करने वाला अक्षमारूप आत्मा का परिणाम  
(६) क्रोध कहलाता है । गर्व को (७) मान और कपट को (८) माया कहते हैं ।

પણ સર્વ વસ્તુઓમાં નથી. ચિત્ર લેપ્ય અથવા કાષ્ઠ આદિમાં ચિતરવામાં આવેલા  
રૂપોમાં અથવા સ્ત્રી આદિમાંજ મૈથુનનો અધ્યવસાય થાય છે. કહ્યું પણ છે :—

“ભગવન્ ! કયા વિષયમાં જીવ મૈથુન કર્યા કરે છે ?

ગૌતમ ! રૂપોમાં અને રૂપયુક્ત વિષયો ( સ્ત્રિયો આદિ ) માં” ( ભગ. ૦૧ શ-૬-૭ )

(૫) પરિગ્રહ—

“આ વસ્તુ મારી છે-હું તેનો માલિક છું” આ પ્રકારની મૂર્છાને પરિગ્રહ  
કહે છે. પ્રાણીઓમાં લોભની અધિકતા હોવાના કારણે સર્વ વસ્તુઓમાં મૂર્છા હોય છે.

કર્તવ્ય-અકર્તવ્યના વિવેકને નાશ કરવાવાળા, અક્ષમારૂપ આત્માનું પરિણામ તે  
ક્રોધ કહેવાય છે. (૬), ગર્વ ને માન (૭), અને કપટને માયા કહે છે (૮), શ્રદ્ધિ તે

દ્વેષ=અપ્રીતિ: ૧૧ । કલહો=વિરોધ: ૧૨ । અભ્યાખ્યાનમ્=અસહોષારોપણમ્ ૧૩ ।  
 પૈશુન્યં=કર્ણાન્તિકાદૌ પરોક્ષે વિદ્યમાનસ્યાવિદ્યમાનસ્ય વા દોષસ્યોદ્ઘાટનમ્ ૧૪ ।  
 પરપરિવાદઃ=પ્રભૂતજનસમક્ષં પરદોષપ્રકાશનમ્ ૧૫ । રત્યરતિઃ=વિષયેષ્વનુરાગો  
 રતિઃ, ધર્મેઽનમિરુચિરરતિઃ, રતિસહિતા-અરતિઃ રત્યરતિઃ, इदमेकं पापस्थानम् ૧૬ ।  
 માયામૃષા=માયાસહિતો મૃષાવાદઃ, इदमप्येकं पापस्थानम् ૧૭ । મિથ્યાદર્શન-  
 શલ્યમ્=મિથ્યાદર્શનં મિથ્યાત્વં તદેવ શલ્યમિવ વિવિધવ્યથાજનકત્વાત્ મિથ્યા-

ગૃહિ-(૯) લોભ છે, પ્રીતિ યા આસક્તિ (૧૦) રાગ છે, ઓર અપ્રીતિ કો (૧૧) દ્વેષ  
 કહતે છે, (૧૨) કલહ અર્થાત્ વિરોધ । (૧૩) અભ્યાખ્યાન અર્થાત્ કિસી કો ઝૂઠા  
 દોષ લગાના । યુગલી વગેરહ કો (૧૪) પૈશુન્ય કહતે છે, અર્થાત્ વિદ્યમાન યા અવિદ્ય-  
 માન દોષ કો પીઠ પીછે પ્રકાશિત કરના । બહુત સે લોગોં કે સમક્ષ દૂસરે કે દોષ  
 પ્રકાશિત કરના (૧૫) પરપરિવાદ છે । વિષયોં મેં અનુરાગ હોના રતિ ઓર ધર્મ મેં  
 અનુરાગ ન હોના અરતિ છે, રતિસહિત અરતિ કો (૧૬) રત્યરતિ કહતે છે । યહ એક  
 પાપસ્થાનક છે । માયા સે યુક્ત મૃષાવાદ (૧૭) માયામૃષા કહલાતા છે, યહ મી  
 એક પાપસ્થાનક છે । શલ્ય કે સમાન વિવિધ પ્રકાર કી વ્યથાઉં ઉત્પન્ન કરને વાલા  
 મિથ્યાત્વ (૧૮) મિથ્યાદર્શનશલ્ય કહલાતા છે, અર્થાત્ કુદેવ કુગુરુ ઓર કુધર્મ કો

લોભ છે (૯). પ્રીતિ અથવા આસક્તિ તે રાગ છે (૧૦). અને અપ્રીતિને દ્વેષ કહે છે  
 (૧૧). કલહ અર્થાત્ વિરોધ (૧૨). અભ્યાખ્યાન અર્થાત્ કોઈના પર બુઠો આરોપ મૂકવો  
 તે (૧૩). યુગલી વગેરેને પૈશુન્ય કહે છે, અર્થાત્ વિદ્યમાન અથવા અવિદ્યમાન દોષોને  
 પાછળથી પ્રકાશિત કરવા (૧૪). ઘણા લોકોના સમક્ષ ખીબના દોષો પ્રકાશિત કરવા  
 તે પરપરિવાદ છે (૧૫). વિષયોમાં અનુરાગ થવો તે રતિ છે, અને ધર્મમાં અનુરાગ  
 નહિ થવો તે અરતિ છે, રતિસહિત અરતિને રત્યરતિ કહે છે. આ પણ એક પાપ-  
 સ્થાનક છે (૧૬). માયાથી યુક્ત મૃષાવાદ તે માયામૃષા કહેવાય છે. તે પણ એક  
 પાપસ્થાનક છે (૧૭). શલ્યની પ્રમાણે વિવિધ પ્રકારની પીડાઓ ઉત્પન્ન કરવાવાળા  
 મિથ્યાત્વ મિથ્યાદર્શનશલ્ય કહેવાય છે. અર્થાત્ કુદેવ કુચર અને કુધર્મને કુદેવ

દર્શનશલ્યમ્=કુદેવ-કુગુરુ-કુધર્મેષુ સુદેવાદિબુદ્ધિઃ ૧૮ । एतान्यष्टादश पापस्थानानि ।  
एताभिः क्रियाभिर्जीवः कर्म बन्धाति ॥ सू. ५ ॥

॥ इति क्रियावादिप्रकरणम् ॥

ક્રિયા કિલાત્મનઃ પરિણામઃ । તેન ક્રિયાવત્ત્વં કર્તૃત્વં ચાત્મનઃ સિધ્યતિ ।  
તત્તત્કાલિકક્રિયાસમ્બન્ધાદાત્મનસ્ત્રિકાલવર્તિત્વં ચ સિધ્યતીત્યાશયેનાહ-“અકરિસ્સં”  
इत्यादि ।

॥ मूलम् ॥

અકરિસ્સં ચડહં, કારવેસું ચડહં, કરઓ યાવિ સમણુન્ને ભવિસ્સામિ । ઇયાવંતિ  
सच्चावन्ति लोगंसि कम्मसमारंभा परिजाणियव्वा भवन्ति ॥ सू. ६ ॥

સુદેવ સુગુરુ ઓર સુધર્મ સમજના મિથ્યાદર્શનશલ્ય હૈ । યે અઠારહ પાપસ્થાનક હૈ ।  
इन अठारह प्राणातिपात आदि क्रियाओं से जीव को कर्मों का बन्ध होता है । ॥ सू. ५ ॥

॥ इति क्रियावादिप्रकरणम् ॥

ક્રિયા આત્મા કા એક પરિણામ હૈ । ઉસ સે આત્મા કા ક્રિયાવત્ત્વ યા કર્તૃત્વ  
सिद्ध होता है, और अमुक-अमुक-कालीन क्रियाओं के सम्बन्ध से यह भी सिद्ध होता है  
કિ-“ આત્મા ત્રિકાલવર્તી હૈ ” યહ બાત અબ વતલાઈ જાતી હૈ:-“અકરિસ્સં ચડહં”  
इत्यादि ।

મૂલાર્થ—મૈને ક્રિયા થા, મૈ કરાતા હૂં ઓર કરને વાલે કી મૈ અનુમોદના કરૂંગા ।  
यह सब लोक में कर्मसमारंभ जानने चाहिए । सू. ६ ॥

સુશુર અને સુધર્મ સમજવા તે મિથ્યાદર્શનશલ્ય છે (૧૮). આ અઠાર પાપ સ્થાનક  
છે. આ અઠાર પ્રાણાતિપાત આદિ ક્રિયાઓથી જીવને કર્મોનો બંધ થાય છે. (સૂ. ૫)  
इति क्रियावादिप्रकरणम्.

ક્રિયા આત્માનું એક પરિણામ છે, તેનાથી આત્માનું ક્રિયાવત્ત્વ અથવા કર્તૃત્વ  
सिद्ध थाय છે, અને અમુક-અમુક-કાલીન ક્રિયાઓના સંબંધથી એ પણ સિદ્ધ થાય છે  
કે:-આત્મા ત્રિકાલવર્તી છે. તે વાત હવે બતાવવામાં આવે છે-“અકરિસ્સં ચડહં” ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ:-મેં કયું, મેં કરાવ્યું અને કરવાવાળાને મેં અનુમોદન આપ્યું.  
आ सर्व लोकમાં कर्म-समारंभ जानुवा लेछुं. (सू. ६)



॥ છાયા ॥

અકાર્ષં ચાહં, કારયામિ ચાહં, કુર્વતશ્ચાપિ સમનુજ્ઞો ભવિષ્યામિ । एतावन्तः  
सर्वे लोके कर्मसमारंभाः परिज्ञातव्या भवन्ति ॥सू. ६॥

॥ ટીકા ॥

‘અકાર્ષં ચાહમ્’ ઇતિ । અત્ર ‘ચ’-શબ્દોપાદાનેન ભૂતકાલિકારિતાનુ-  
મોદિતક્રિયાદ્વયસ્યાપિ ગ્રહણમ્, તેન-(૧) અહમકાર્ષમ્ (૨) અહમચીકરમ્ (૩) અહં  
કુર્વન્તમન્યમન્વમ્મુદમ્, ઇતિ ભેદત્રયં ભવતિ । ‘કારયામિ ચાહમ્’ ઇતિ, અત્ર  
‘ચ’-શબ્દેન વર્તમાનકાલિકકૃતાનુમોદિતક્રિયાદ્વયસ્યાપિ ગ્રહણમ્, । તેન-(૧)  
અહં કારયામિ, (૨) અહં કરોમિ, (૨) અહમનુમોદયામિ, ઇતિ ભેદત્રયં ભવતિ ।

ટીકાર્થ-‘અકરિસ્સં ચહં’ યહૌ જો ‘ચ’ કા પ્રયોગ ક્રિયા હૈ; ઉસ સે યહ અર્થે  
સમજના ચાહિયે કિ-“મૈને અનુમોદન ક્રિયા થા ।” ઇસ પ્રકાર મૈને ક્રિયા, કરવાયા ઓર  
અનુમોદન ક્રિયા, ત્રીન ભેદો કા કથન હુઆ હૈ ।

‘કારવેસું ચહં’ યહૌ મી ‘ચ’ પદ સે દો ક્રિયાઓં કા ગ્રહણ હોતા હૈ, અતઃ  
મૈ કરાતા હૂં, મૈ કરતા હૂં, ઓર મૈ અનુમોદન કરતા હૂં; ઇન ત્રીન ભેદો કા કથન  
સમજના ચાહિયે ।

“કરઓ યાવિ સમણુન્ને ભવિસ્સામિ” યહૌ મી ‘ચ’ પદ સે ભવિષ્યકાલીન  
કરને ઓર કરાને કા અર્થ લેના ચાહિયે, અતઃ કરને વાલે કા મૈ અનુમોદન કહુંગા, મૈ  
સ્વયં કહુંગા ઓર મૈ કરાહુંગા । યે ક્રિયા કે ત્રીન ભેદ સમજ લેને ચાહિયે ।

ટીકાર્થ-‘અકરિસ્સં ચહં’ અહિં જે ‘ચ’ નો પ્રયોગ કર્યો છે, તેથી એ  
અર્થ સમજવો જોઈએ કે-‘મેં કરાવ્યું હતું’ આ પ્રમાણે ‘મેં’ કયું, કરાવ્યું,  
અને મેં અનુમોદન આપ્યું, આ ત્રણ ભેદોનું કથન સમજવું જોઈએ.

‘કારવેસું ચહં’ અહિં પણ ‘ચ’ પદથી જે ક્રિયાઓનું ગ્રહણ થાય છે, તેથી ‘મેં  
કયું’, મેં કરાવ્યું, અને મેં અનુમોદન આપ્યું’ આ ત્રણ ભેદોનું કથન સમજવું જોઈએ.

‘કરઓ યાવિ સમણુન્ને ભવિસ્સામિ’ અહિં પણ ‘ચ’ પદથી ભવિષ્યકાલીન કરીશ  
અને કરાવીશ. તે અર્થ લેવો જોઈએ. એ કારણથી ‘કરવાવાળાને હું અનુમોદન  
કરીશ, હું સ્વયં કરીશ અને હું કરાવીશ’ એ ક્રિયાના ત્રણ ભેદ સમજ લેવા જોઈએ.

कुर्वतश्चापि समनुज्ञो भविष्यामि, इति । अत्रापि 'च'-शब्दोपादानेन भविष्य-  
त्कालिककृतकारितक्रियाद्वयस्यापि ग्रहणम् । 'समनुज्ञः' इत्यस्य समनुज्ञाता अनुमो-  
दयितेत्यर्थः । तथा च-(१) अहमन्यस्य कुर्वतोऽनुमोदयिता भविष्यामि, (२)  
स्वयमहं करिष्यामि, (३) अहं कारयिष्यामि, इति भेदत्रयं क्रियायाः भवति ।  
कुर्वतश्चापीत्यत्र 'अपि'-शब्दोपादानेन तासां नवानां क्रियाणां मनोवाक्यभेदेन  
सप्तविंशतिर्भेदा भवन्ति ।

आत्मवाचकमहमिति पदं पुरस्कृत्य 'अकार्षम्' इत्यादिक्रियापदोपादानात्  
“सर्वाः क्रिया आत्मपरिणामरूपाः” इति बोधितम् । एतेन “आत्मा निष्क्रियः”  
इति सांख्याद्यभिमतं निराकृतम् ।

‘यावि’ शब्द में जो ‘अपि’ पद है, उस से यह समझना चाहिए कि-इन नौ क्रियाओं  
के मन वचन और कायके भेद से सत्ताईस भेद हो जाते हैं । अर्थात् पूर्वोक्त नौ क्रियाएं  
मन से की जाती हैं, वचन से की जाती हैं, और काय से भी की जाती हैं, अतः उनके  
सत्ताईस भेद हो जाते हैं ।

आत्मा के वाचक अहम् (मैं) पदको प्रधान करके ‘अकार्षम्’ इत्यादि क्रियापदों  
का ग्रहण करने से यह सूचित किया गया है कि-ये सब क्रियाएँ आत्मा का ही परिणाम  
हैं । इस सूचना से आत्माको निष्क्रिय मानने वाले सांख्य आदि मतों का निराकरण हो  
गया है ।

‘यावि’ शब्दમાં જે ‘અપિ’ પદ છે તેથી એ સમજવું જોઈએ કે એ નવ  
ક્રિયાઓના મન, વચન અને કાયાના ભેદથી સત્તાવીશ ભાગ થાય છે. અર્થાત્ પૂર્વોક્ત  
નવ ક્રિયાઓ મનથી કરી શકાય છે. વચનથી અને કાયાથી પણ કરી શકાય છે.  
તેથી તેના સત્તાવીશ ભેદ થઈ જાય છે.

આત્માનો વાચક ‘અહમ્’ હું-પદને પ્રધાન રાખીને ‘અકાર્ષમ્’ આદિ ક્રિયા-  
પદોના ગ્રહણ કરવાથી એ સૂચન કરવામાં આવ્યું છે કે-એ સર્વ ક્રિયાઓ આત્માનું જ  
પરિણામ છે. આ સૂચનથી આત્માને નિષ્ક્રિય માનવાવાળા સાંખ્ય આદિના મતનું  
નિરાકરણ થઈ ગયું છે.

एकस्य चात्मनस्त्रिकालवर्तितत्त्वक्रियासम्बन्धेन क्षणिकवादोऽपि निरस्तः । किञ्च-  
आत्मपरिणतिरूपां क्रियां कुर्वन्नात्मा स्वस्य त्रिकालस्थायित्वं मतिज्ञानमात्रेण  
जानातीति भगवता बोधितम् । तेनात्मनि विषये प्रत्यभिज्ञाऽप्येवं ग्रादुर्भभति—

येन मया मृगतृष्णाम्भसा मृगवद् विविधविषयैराकृष्टेन गते मुग्ध-  
मृगवन्मोहगते निपतितेन सुखलिप्सयाऽऽरम्भपरिग्रहरूपसावद्यक्रियापरायणतया  
वृथायुः क्षपितम्,

स एवाहं संप्रति वातैर्गिरिशिखरद्रुम इव जन्मजरामरणाधिव्याधि-  
विविधदुःखसंपृक्ततुच्छसुखभोगैर्जर्जरૂતઃ કથમસ્માદ્ દુઃખજાલસંસારાન્મુક્તો

एक ही आत्माका त्रिकालवर्ती अमुक-अमुक क्रियाओं के साथ सम्बन्ध दिखलानेसे  
क्षणिकवाद का भी खण्डन किया गया है । भगवान्ने यह भी प्रकट कर दिया है  
कि-अपनी परिणतिरूप क्रियाएँ करता हुआ आत्मा मतिज्ञान से ही यह जान लेता है कि-  
यह (आत्मा) त्रिकालवर्ती है । इससे आत्मा के विषयमें इस प्रकारका प्रत्यभिज्ञान  
उत्पन्न होता है—

“जैसे मृगतृष्णा में फँसकर मूढ मृग कष्ट पाता है उसी प्रकार भौति-भौति  
के विषयों से आकृष्ट हो कर मोहरूपी गड्ढे में गिर कर सुख की लालसा से जिसने  
आरम्भ-परिग्रह-रूप सावद्य क्रियामें उद्यत हो कर वृथा आयु गँवाई थी वही मैं आज  
जन्म, जरा, मरण, आधि, व्याधि वगैरह विविध प्रकार के दुःखों से परिपूर्ण और तुच्छ  
इन्द्रिय-भोगोंद्वारा ऐसा जर्जरित कर दिया गया हूँ, जैसे पर्वत के उपर का पेड़

એકજ આત્માનું ત્રિકાલવર્તી અમુક-અમુક ક્રિયાઓની સાથે સંબંધ દેખાડ-  
વાથી ક્ષણિકવાદનું પણ ખંડન કરવામાં આવ્યું છે. ભગવાને એ પણ પ્રગટ કરી  
લીધું છે કે-પોતાની પરિણતિરૂપ ક્રિયાઓ કરતો આત્મા મતિજ્ઞાનથીજ એ જાણી લે  
છે કે-તે ત્રિકાલવર્તી છે. એ કારણથી આત્માના વિષયમાં આ પ્રકારનું પ્રત્યભિજ્ઞાન  
ઉત્પન્ન થાય છે.

જેમ મૃગતૃષ્ણામાં ફસાઈને મૂઢ મૃગ કષ્ટ પામે છે તે પ્રમાણે જાત-જાતના  
વિષયોથી આકૃષ્ટ થઈને-જેવાઈને મોહરૂપી ખાડામાં પડી જઈને સુખની લાલસાથી જે  
આરંભ પરિગ્રહરૂપ સાવધ ક્રિયામાં ઉદ્યમી થઈને વૃથા આયુ ગુમાવ્યું હતું, તે હું આજે  
જન્મ-જરા-મરણ-આધિ-વ્યાધિ વગેરે વિવિધ પ્રકારનાં દુઃખોથી પરિપૂર્ણ અને તુચ્છ  
ઇન્દ્રિયલોભો દ્વારા એવો જર્જરિત કરવામાં આવ્યો છું કે જેમ-પર્વત ઉપરનું ઝાડ



ભવિષ્યામીતિ ચિન્તાનલેન કોટરસ્થવહ્નિના જરદુમ્નમ્ એવં સંતપ્તોઽસ્મીતિ ભાવઃ ।

લોકે=જિનશાસને, સર્વે કર્મસમારંભાઃ=કર્માણિ જ્ઞાનાવરણીયાદીનિ સમારમ્ભન્તે =જનયન્તિ એ ક્રિયાવિશેષાસ્તે કર્મસમારંભાઃ । એતાવન્ત એવ, નાતોઽધિકા इत्यर्थः, પરિજ્ઞાતવ્યા ભવન્તિ-પરિજ્ઞાવિષયીકૃત્ય જ્ઞેયા હેયાશ્ચ ભવન્તીત્યર્થઃ । પરિજ્ઞા હિ દ્વિવિધા-જ્ઞપરિજ્ઞા, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા ચ । તત્ર જ્ઞપરિજ્ઞયા સપ્તવિંશતિભજ્જરૂપાઃ કર્મસમારંભાઃ ક્રિયાવિશેષાઃ વિજ્ઞેયાઃ । પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ સર્વે કર્મસમારમ્ભાઃ ક્રિયાવિશેષાઃ કર્મબન્ધહેતવઃ પ્રત્યાખ્યાતવ્યા इति ભાવઃ ॥ સુ. ૬ ॥

ઘાંધી સે જર્જરિત હો જાતા હૈ । અવ મૈં દુઃસ્મય સંસાર સે કિસ પ્રકાર છુટકારા પાઁંગા ? ઇસ તરહ કી ચિન્તારૂપી અગ્નિ સે મૈં પેસા સંતપ્ત હૂં જૈસે કોટરસ્થ અગ્નિ સે જીર્ણ વૃક્ષ મીતર હી મીતર ભસ્મ હો જાતા હૈ ।

“લોક મૈં અર્થાત્ જિનશાસન મૈં ઇતને હી જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મો કો ઉત્પન્ન કરને વાલે કર્મસમારમ્ભ હૈ, ઇન સે ન્યૂન યા અધિક નહીં ” । યહ પરિજ્ઞા વિષય કરને યોગ્ય હૈ, અર્થાત્ પરિજ્ઞા સે હી એ સર્વ જ્ઞેય ઓર હેય હોતે હૈ । પરિજ્ઞા દો પ્રકારકી હૈ- જ્ઞ-પરિજ્ઞા ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા । ઇન મૈં સે સત્તાઈસ ભંગ રૂપ કર્મસમારમ્ભ (ક્રિયાવિશેષ) જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનને યાદિય, ઓર પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા સે કર્મ કે કારણ સમસ્ત કર્મસમારમ્ભો કા ત્યાગ કરના યાદિય ॥ સુ. ૬ ॥

વાવાઝોડાથી જર્જરિત થઈ જાય છે. ‘હવે હું દુઃખમય સંસારથી છુટકારો કેવી રીતે પામીશ ? આ પ્રમાણે ચિન્તારૂપી અગ્નિથી હું એવો સંતપ્ત છું કે જેમ-કોટરસ્થ (ઝાડની બખોલમાં રહેલું) અગ્નિથી જીર્ણ વૃક્ષ અંદરને અંદર ભસ્મ થઈ જાય છે.

લોકમાં અર્થાત્ જિનશાસનમાં જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોને ઉત્પન્ન કરવાવાળા આટલાંજ કર્મસમારંભ છે, તેનાથી ઓછા કે વધારે નથી. આ પરિજ્ઞા વિષય કરવા યોગ્ય છે, અર્થાત્ પરિજ્ઞાથીજ આ બધાં જ્ઞેય અને હેય થાય છે. પરિજ્ઞા બે પ્રકારની છે. (૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા, તેમાંથી સત્તાવીસ ભંગરૂપ કર્મસમારંભ (ક્રિયા-વિશેષ) જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી જાણવું જોઈએ, અને પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞાથી કર્મોનું કારણ સમસ્ત કર્મસમારંભોનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. (સુ. ૬)

॥ મૂલમ્ ॥

અપરિણાયકમ્મા સ્વલુ અયં પુરિસે જો હમાઓ દિસાઓ અણુદિસાઓ અણુસંચરહ, સવ્વાઓ દિસાઓ સવ્વાઓ અણુદિસાઓ સાહેહ ॥ સૂ. ૭ ॥

છાયા—

અપરિજ્ઞાતકર્મા સ્વલુ અયં પુરુષઃ યઃ હમા દિશા અનુદિશા વા અનુસંચરતિ, સર્વા દિશાઃ સર્વા અનુદિશાઃ સહૈતિ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકા—

‘અપરિણાયકમ્મા’ इत्यादि । यः इमा दिशा अनुदिशा अनुसंचरति-  
कर्मपरतन्त्रः संश्रतुर्गतिकसंसारं प्राप्य दिक्षु विदिक्षु च परिभ्रमति । तथा-सर्वा-  
दिशा अनुदिशाः सहैति । इह सर्वशब्देन द्रव्यभावोभयविधदिशो ग्रहणम् ।  
द्रव्यभावदिशः सह=ज्ञानावरणीयादिकर्मभिः साकम् एति=गच्छति प्राप्नोतीत्यर्थः ।  
यत्तच्छब्दयोर्नित्यसाकाङ्क्षतयाऽत्र यच्छब्देन स इति परामृश्यते । सः अयं पुरुषः=  
जीवः स्वलु=निश्चयेन अपरिज्ञातकर्मा अस्तीति शेषः । न परिज्ञातं=परिज्ञाविषयी-

મૂલાર્થ—અપરિજ્ઞાતકર્મા યહ પુરુષ હન દિશાઓ ઓર વિદિશાઓ મેં પરિભ્રમણ કરતા  
હે ઓર સર્વ દિશાઓ એવં અનુદિશાઓ કો પ્રાપ્ત હોતા હે ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકાર્થ—કર્મ સે પરતન્ત્ર જીવ ચાર ગતિરૂપ સંસાર કો પ્રાપ્ત હોકર દિશાઓ  
મેં ઓર વિદિશાઓ મેં પરિભ્રમણ કરતા હે । તથા સમસ્ત દિશાઓ ઓર અનુદિશાઓ કો  
પ્રાપ્ત હોતા હે, અર્થાત્ દ્રવ્ય-દિશાઓ એવં ભાવ-દિશાઓ (જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મો) કે  
સાથ પ્રાપ્ત હોતા હે । વહ જીવ નિશ્ચયપૂર્વક અપરિજ્ઞાતકર્મા હે । કર્મ કી કારણભૂત  
ક્રિયાઓ કા સ્વરૂપ જિસને ન જાના હો વહ અપરિજ્ઞાતકર્મા કહલતા હે । અથવા જિસને  
જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મો કી કારણભૂત ક્રિયાઓ કા ત્યાગ ન ક્રિયા હો ઉસે મી

મૂલાર્થ—અપરિજ્ઞાત કર્મા આ પુરુષ આ દિશાઓ અને વિદિશાઓમાં પરિ-  
ભ્રમણ કરે છે, અને સર્વ દિશાઓ એવં અનુદિશાઓને પ્રાપ્ત થાય છે. (૭)

ટીકાર્થ—કર્મથી પરતન્ત્ર જીવ ચાર ગતિરૂપ સંસારને પ્રાપ્ત થઈને દિશાઓમાં  
અને વિદિશાઓમાં પરિભ્રમણ કરે છે, તથા સમસ્ત દિશાઓ અને અનુદિશાઓને  
પ્રાપ્ત થાય છે. અર્થાત્ દ્રવ્યદિશાઓ અને ભાવદિશાઓની સાથે પ્રાપ્ત થાય છે. તે  
જીવ નિશ્ચયપૂર્વક અપરિજ્ઞાતકર્મા છે; કર્મની કારણભૂત ક્રિયાઓના સ્વરૂપને જે બાણતા  
નથી તે અપરિજ્ઞાતકર્મા કહેવાય છે. અથવા જેને જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોની  
કારણભૂત ક્રિયાઓનો ત્યાગ ન કર્યો હોય તેને પણ અપરિજ્ઞાતકર્મા કહે છે. આશય

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧ ૩.૧ સુ. ૭ અપરિજ્ઞાતકર્મા-જીવઃ ૪૦૩

કૃતં કર્મ=કર્મકારણીભૂતક્રિયાસ્વરૂપં યેન, સોઽપરિજ્ઞાતકર્મા । અજ્ઞાતાપસ્તિયક્ત-  
જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મબન્ધકારણભૂતક્રિયાસ્વરૂપં इत्यर्थः । યાવદયં જીવઃ ક્રિયા-  
સ્વરૂપં ન જાનાતિ, નાપિ યાવત્ કર્મબન્ધનિબન્ધનક્રિયાઃ પ્રસ્તિયજતિ, તાવદ્ દ્રવ્ય-  
ભાવોભયવિધાં દિશં પરિભ્રમતીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

ઉક્તાર્થમેવ સ્પષ્ટયતિ-‘અનેગરૂવાઓ.’ इत्यादि ।

॥ મૂલમ્ ॥

અનેગરૂવાઓ જોળીઓ સંઘેડ, વિરૂપરૂવે ફાસે પડિસંઘેડ ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—

અનેકરૂપા યોનીઃ સંઘયતિ, વિરૂપરૂપાન્ સ્પર્શાન્ પ્રતિસંઘેદયતિ ॥ સૂ. ૮ ॥

॥ ટીકા ॥

અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવઃ અનેકરૂપા=વિવિધાઃ યોનીઃ=પ્રાણિનામુત્પત્તિ-  
સ્થાનાનિ, સંઘયતિ=પ્રાપ્નોતિ । અયમાત્મા પૂર્વભવ નાશાનન્તરં શરીરાન્તરગ્રહણાય

અપરિજ્ઞાતકર્મા કહતે હૈં । આશય યહ હૈ કિ-સંસારી જીવ જ્વતક કર્મબન્ધ કી કારણભૂત  
ક્રિયાઓ કો જાન નહીં લેતા ઔર ધ્યાગ નહીં દેતા, તબતક વહ દ્રવ્યભાવરૂપ દોનો પ્રકાર  
કી દિશાઓ મેં પરિભ્રમણ કરતા રહતા હૈ । ॥ સૂ. ૭ ॥

इसी अर्थ को और अधिक स्पष्ट करते हैं:-‘अनेगरूवाઓ.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ-(અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ) અનેકરૂપ યોનિયો કો પ્રાપ્ત હોતા હૈ ઔર નાના  
પ્રકાર કી યાતનાઓ કો ભોગતા હૈ ॥ ૮ ॥

ટીકાર્થ-અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ વિવિધ પ્રકાર કી યોનિયો કો અર્થાત્ જીવો કં  
ઉત્પત્તિસ્થાનો કો પ્રાપ્ત કરતા હૈ । પૂર્વભવ કા અન્ત હોને કં અનન્તર જીવ નવીન શરીર

એ છે કે:-સંસારી જીવ ત્યાં સુધી કર્મબન્ધની કારણભૂત ક્રિયાઓને બાણી લેતો નથી  
અને ત્યજી દેતો નથી ત્યાં સુધી તે દ્રવ્ય-ભાવરૂપ બન્ને પ્રકારની દિશાઓમાં પરિ-  
ભ્રમણ કરતો રહે છે. (સૂ. ૭).

એ અર્થને ફરી અધિક સ્પષ્ટ કરે છે-“અનેગરૂવાઓ.” इत्यादि.

મૂલાર્થ:- (અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ) અનેકરૂપ યોનિઓને પ્રાપ્ત થાય છે અને  
નાના પ્રકારની યાતનાઓને ભોગવે છે. (૮)

ટીકાર્થ:-અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ વિવિધ પ્રકારની યોનિઓને અર્થાત્-જીવોના  
ઉત્પત્તિસ્થાનોને પ્રાપ્ત કરે છે. પૂર્વભવનો અન્ત થવા અનન્તર જીવ નવીન શરીર ગ્રહણ



શરીરાન્તરપ્રાપ્તિસ્થાને યાન્ પુદ્ગલાન્ ગૃહ્ણાતિ તાન્ બાહ્યપુદ્ગલાન્ કાર્મણેન સહ તપ્તાયઃપિષ્ઠજલગ્રહણવત્ મિશ્રયતિ યસ્મિન્ સ્થાને, તત્ સ્થાનં યોનિઃ । પ્રાદુર્ભાવમાત્રં શરીરિણાં જન્મ, ઇતિ યોનિ-જન્મનોર્મેદઃ । સા નવવિધા । (૧) સચિત્તા, (૨) અચિત્તા, (૩) સચિત્તાચિત્તા, (૪) શીતા, (૫) ઉષ્ણા, (૬) શીતોષ્ણા, (૭) સંવૃતા, (૮) વિવૃતા, (૯) સંવૃતવિવૃતા । ઉક્તશ્ચ—

“કહચિદ્વાણં મંતે ! જોળી પળ્ણત્તા ? ગોયમા ! તિવિદ્ધા જોળી પળ્ણત્તા, તંજહા-સીયા જોળી, ઉસિણા જોળી, સીઆસિણા જોળી । તિવિદ્ધા જોળી પળ્ણત્તા, તંજહા-સચિતા જોળી, અચિત્તા જોળી, મીસિયા જોળી ।

ગ્રહણ કરને કે લિષ્ નવીન શરીર કી પ્રાપ્તિ કે સ્થાન પર જિન બાહ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતા હૈ, ઉન્હે જિસ જગહ પર કાર્મણશરીર કે સાથ તપે લોહે કે ગોળે ઓર જલકે સમાન ઇકમેક કરતા હૈ, વહ સ્થાન યોનિ કહલાતા હૈ । જીવોં કા પ્રાદુર્ભાવ હોના જન્મ હૈ । યહ યોનિ ઓર જન્મ મેં અન્તર હૈ । જન્મ કા આધાર યોનિ હૈ, અતઃ યોનિ ઓર જન્મ મેં આધારાધેયમાવ-સમ્બન્ધ હૈ । યોનિ કે નૌ મેદ હૈં—(૧) સચિત્ત, (૨) અચિત્ત, (૩) સચિત્તાચિત્ત, (૪) શીત, (૫) ઉષ્ણ, (૬) શીતોષ્ણ, (૭) સંવૃત, (૮) વિવૃત ઓર (૯) સંવૃત-વિવૃત । કહા-મી હૈ—

“મગવન્ ! યોનિ કિતને પ્રકાર કી કહી ગઈ હૈ ? ગૌતમ ! ત્રીન પ્રકાર કી યોનિ કહી ગઈ હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર—શીતયોનિ, ઉષ્ણયોનિ ઓર શીતોષ્ણયોનિ । તથા ત્રીન પ્રકાર કી યોનિ કહી હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર—સચિત્તયોનિ, અચિત્તયોની ઓર મિશ્રયોનિ ।

કરવા માટે નવીન શરીરની પ્રાપ્તિના સ્થાન પર જે બાહ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. તેને જે જગ્યા પર કાર્મણશરીરની સાથે તપેલા લોહનો ગોળો અને જલની સમાન એકમેક કરે છે તે સ્થાન યોનિ કહેવાય છે. જીવોનો પ્રાદુર્ભાવ થવો તે જન્મ છે. યોનિ અને જન્મમાં એજ અન્તર છે, જન્મનો આધાર યોનિ છે, તેથી યોનિ અને જન્મમાં આધાર-આધેય ભાવ સંબંધ છે. યોનિના નવ લેહ છે—(૧) સચિત્ત (૨) અચિત્ત (૩) સચિત્તાચિત્ત (૪) શીત (૫) ઉષ્ણ (૬) શીતોષ્ણ (૭) સંવૃત (૮) વિવૃત અને (૯) સંવૃત-વિવૃત કહ્યું પણ છે—

“ભગવન્ ! યોનિ કેટલા પ્રકારની કહી છે ? ગૌતમ ! ત્રણ પ્રકારની યોનિ કહી છે. તે આ પ્રમાણે છે—શીતયોનિ, ઉષ્ણયોનિ, અને શીતોષ્ણયોનિ. તથા ત્રણ પ્રકારની યોનિ કહી છે. તે આ પ્રમાણે છે—સચિત્તયોનિ, અચિત્તયોનિ અને મિશ્રયોનિ. ફરી પણ ત્રણ

તિવિહા જોળી પળ્ળતા, તંજહા-સંબુડા જોળી, વિયડા જોળી, સંબુડવિયડા જોળી ” । ( પ્રજ્ઞા. યોનિપદ ૯ )

જીવપ્રદેશૈરધિષ્ઠિતા યોનિઃ સચિત્તા, જીવપ્રદેશૈરનવધિષ્ઠિતા યોનિરચિત્તા । કચિદંશે જીવપ્રદેશૈરધિષ્ઠિતા, કચિદનધિષ્ઠિતા સા સચિત્તાઽચિત્તા । યત્ર શીતસ્પર્શઃ સા શીતા । યત્રોષ્ણસ્પર્શઃ સા યોનિરુષ્ણા । યત્ર કચિદંશે શીતસ્પર્શઃ, કચિદુષ્ણસ્પર્શઃ સા શીતોષ્ણા । અપ્રકટિતા સંવૃતા । પ્રકટિતા વિવૃતા । યત્ર કચિદંશે પ્રકટિતા, કચિદપ્રકટિતાઃ સા સંવૃતવિવૃતા યોનિઃ ।

કસ્ય જીવસ્ય કા યોનિર્ભવતી ?-ત્યુચ્યતે-દેવનારકાણામચિત્તા યોનિઃ । દેવાનાં પ્રચ્છદપટદેવદૂષ્યાન્તરાલં યોનિઃ, તત્ત્વ જીવપ્રદેશવર્જિતમ્ । નારાકાણાં તુ

ફિર મી ત્રીન તરહ કી યોનિ કહી હૈ । વહ હસ પ્રકાર-સંવૃતયોનિ વિવૃતયોનિ ઓર સંવૃત-વિવૃતયોનિ ” । ( પ્રજ્ઞા. યોનિપદ ૯ )

જીવપ્રદેશોં સે અધિષ્ઠિત યોનિ સચિત્ત કહલાતી હૈ ઓર જો જીવપ્રદેશોં સે અધિષ્ઠિત ન હો વહ અચિત્ત કહલાતી હૈ । જો યોનિ કહીં જીવપ્રદેશોં સે અધિષ્ઠિત હો ઓર કહીં અધિષ્ઠિત ન હો વહ મિશ્ર યોનિ હૈ । જહોં શીત સ્પર્શ હો વહ શીતયોનિ, જહોં ઉષ્ણ સ્પર્શ હો વહ ઉષ્ણયોનિ ઓર જિસ મેં કહીં શીત ઓર કહીં ઉષ્ણ સ્પર્શ હો વહ શીતોષ્ણયોનિ હૈ । અપ્રકટ યોનિ સંવૃત કહલાતી હૈ । પ્રકટ કો વિવૃત કહતે હૈ ઓર જો કહીં અપ્રકટ ઓર કહીં પ્રકટ હો વહ સંવૃતવિવૃતયોનિ હૈ ।

કિસ જીવ કી કૌન-સી યોનિ હોતી હૈ ? વહ બતાતે હૈ-દેવ ઓર નારકી જીવોં કી અચિત્ત યોનિ હોતી હૈ । દેવોં કી યોનિ પ્રચ્છદપટ ઓર દેવદૂષ્ય કે બીચ મેં હોતી હૈ,

પ્રકારની યોનિ કહી છે તે આ પ્રમાણે છે:—સંવૃતયોનિ, વિવૃતયોનિ અને સંવૃત-વિવૃતયોનિ ” ( પ્રજ્ઞા. યોનિપદ ૯ ).

જીવપ્રદેશોથી અધિષ્ઠિત યોનિ સચિત્ત કહેવાય છે. અને જે જીવપ્રદેશોથી અધિષ્ઠિત ન હોય તે અચિત્ત કહેવાય છે. જે યોનિ કોઈ સ્થળે જીવપ્રદેશોથી અધિષ્ઠિત હોય અને કોઈ સ્થળે અધિષ્ઠિત ન હોય તે મિશ્રયોનિ કહેવાય છે. જ્યાં શીત સ્પર્શ હોય તે શીતયોનિ, જ્યાં ઉષ્ણસ્પર્શ હોય તે ઉષ્ણયોનિ, અને જેમાં કયાંક શીત અને કયાંક ઉષ્ણ સ્પર્શ હોય તે શીતોષ્ણ યોનિ છે. અપ્રકટ યોનિ સંવૃત કહેવાય છે, અને પ્રકટ યોનિને વિવૃત કહે છે; અને જે કયાંક પ્રકટ અને કયાંક અપ્રકટ હોય તે સંવૃત-વિવૃત યોનિ છે.

કયા જીવની કઈ યોનિ છે ? તે બતાવે છે—દેવ-નારકી જીવોની અચિત્તયોનિ હોય છે. દેવોની યોનિ પ્રચ્છદપટ અને દેવદૂષ્યના વચ્ચેમાં હોય છે અને તે જીવ



વજ્રમયવાતાયનકલ્પાઃ કુમ્ભયો યોનયઃ, તા અપિ જીવપ્રદેશરહિતાઃ । યે ગર્ભ-  
જાસ્તિર્યશ્ચો મનુષ્યાસ્તેષાં મિશ્રાસચિત્તાચિત્તરૂપા યોનિઃ । સ્થાવરપશ્ચ-  
કસ્ય વિકલેન્દ્રિયત્રયસ્ય અગર્ભજપઞ્ચેન્દ્રિયતિરશ્ચાં સંમૂર્છિમમનુષ્યાણાં ચ ત્રિવિધા  
સચિત્તા, અચિત્તા, સચિત્તાચિત્તા ચ ।

ગર્ભજમનુષ્યતિરશ્ચાં દેવાનાં ચ શીતોષ્ણા યોનિઃ । તેજસ્કાયસ્ય ઉષ્ણા ।  
સ્થાવરચતુષ્ટયસ્ય વિકલેન્દ્રિયત્રયસ્ય અગર્ભજપઞ્ચેન્દ્રિયતિરશ્ચાં સંમૂર્છિમમનુષ્યાણાં  
નારકાણાં ચ ત્રિવિધા શીતા, ઉષ્ણા, શીતોષ્ણા ચ યોનિઃ ।

નારકાણાં દેવાનામેકેન્દ્રિયાણાં ચ સંવૃતા યોનિઃ । ગર્ભજાનાં  
પઞ્ચેન્દ્રિયતિરશ્ચાં મનુષ્યાણાં ચ સંવૃતવિવૃતા યોનિઃ । વિકલેન્દ્રિયત્રયસ્ય

और वह जीवप्रदेशों से रहित है । नारकों की योनि वज्रमय वातायन के समान कुंभियाँ हैं ।  
वे भी जीवप्रदेशों से रहित हैं । गर्भज तिर्यचो और मनुष्यों की मिश्र (सचित्ताचित्त) योनि  
होती है । पांच स्थवरो की, तीन विकलेन्द्रियों की, अगर्भज पञ्चेन्द्रिय तिर्यचो की तथा  
संमूर्च्छिम मनुष्यों की योनि तीनों प्रकार की (सचित्त, अचित्त और मिश्र) होती है ।

गर्भज-मनुष्यों, तिर्यचो और देवों की शीतोष्ण योनि होती है । तेजस्काय की  
उष्ण योनि है । चार स्थावरो की, तीन विकलेन्द्रियों की, अगर्भज पञ्चेन्द्रिय तिर्यचो की  
संमूर्च्छिम मनुष्यों की और नारकों की तीनों प्रकार की (शीत उष्ण और मिश्र) योनि  
होती है ।

નારકોં દેવોં ઔર એકેન્દ્રિયોં કી સંવૃત યોનિ હૈ । ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યચોં  
ઔર મનુષ્યોં કી સંવૃતવિવૃત યોનિ હોતી હૈ । ત્રીન વિકલેન્દ્રિયોં કી, અગર્ભજ પંચેન્દ્રિય

પ્રદેશોથી રહિત છે. નારકોંઓની યોનિ વજ્રમય વાતાયન (બારી)ની સમાન કુંભીઓ  
છે. તે પશુ જીવપ્રદેશોથી રહિત છે.

ગર્ભજ તિર્યચો અને મનુષ્યોની મિશ્ર (સચિત્તાચિત્ત) યોનિ હોય છે. પાંચ  
સ્થાવરોની, ત્રણ વિકલેન્દ્રિયોની, અગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યચોની તથા સંમૂર્છિમ  
મનુષ્યોની યોનિ ત્રણ પ્રકારની (સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્ર) હોય છે.

ગર્ભજ મનુષ્યો, તિર્યચો અને દેવોની શીતોષ્ણ યોનિ હોય છે. તેજસ્કાયની  
ઉષ્ણ યોનિ છે. ચાર સ્થાવરોની, ત્રણ વિકલેન્દ્રિયોની, અગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યચોની  
સંમૂર્છિમ મનુષ્યોની અને નારકોની ત્રણ પ્રકારની (શીત, ઉષ્ણ અને મિશ્ર) યોનિ હોય છે.

નારકો, દેવો, અને એકેન્દ્રિયોની સંવૃત યોનિ છે. ગર્ભજ પંચેન્દ્રિય તિર્યચો  
અને મનુષ્યોની સંવૃત-વિવૃત યોનિ હોય છે. ત્રણ વિકલેન્દ્રિયોની અગર્ભજ પંચેન્દ્રિય



અગર્ભજપઞ્ચેન્દ્રિયતિરશ્ચાં સંમૂર્છિમમનુષ્યાણાં ચ વિવૃતા યોનિ: ।

યદ્વા—ચતુરશીતિલક્ષણભેદનાનેકરૂપા યોનયઃ સન્તિ, તથા હિ-પૃથિવ્યપ્તેજો-વાયૂનાં પ્રત્યેકં સપ્ત સપ્ત લક્ષાણિ ૨૮, પ્રત્યેકવનસ્પતીનાં દશ લક્ષાણિ ૩૮, સાધારણવનસ્પતીનાં ચતુર્દશ લક્ષાણિ, ૫૨, વિકલેન્દ્રિયત્રયસ્ય પ્રત્યેકં દ્વે દ્વે લક્ષે, इति तेषां षड् लक्षाणि ५८, देव-नारक-पञ्चेन्द्रियतिरश्चां प्रत्येकं चत्वारि लक्ष्णाणीति तेषां द्वादश लक्षाणि ७०, मनुष्याणां चतुर्दश लक्षाणि ८४ । एवं सर्वसंकलने चतुरशीतिलक्षाणि जीवानां योनयो भवन्ति ।

अनेकविधयोनिप्राप्तौ सत्यामपरिज्ञातकर्मा जीवः कर्मफलं ययाऽनु-भवति तत् प्रदर्शयति-‘विरूपरूपान् प्रतिसंवेदयति’ इति, विरूपं=दुःख-

तिर્યંચો की और संमूर्च्छिम मनुष्यों की विवृतयोनि होती है ।

અથવા—યોનિયોં કે ચૌરાસી લાખ ભેદ મીં હૈં । વે હસ પ્રકાર હૈ:—પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, ઔર વાયુકાય, કી સાત-સાત લાખ યોનિયૈં હૈં ૨૮, પ્રત્યેક વનસ્પતિ કી દશ લાખ ૩૮, સાધારણ વનસ્પતિ કી ચૌદ લાખ ૫૨, ત્રીન વિકલેન્દ્રિ કી પ્રત્યેક કી દો-દો લાખ અર્થાત્ વિકલેન્દ્રિય કી કુલ છહ લાખ ૫૮, દેવોં નારકોં ઔર પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોં મેં પ્રત્યેક કી ચાર-ચાર લાખ, કુલ બારહ લાખ ૭૦, મનુષ્યોં કી ચૌદહ લાખ ૮૪, હસ પ્રકાર કુલ ચૌરાસી લાખ જીવયોનિયૈં હૈં ।

अनेक प्रकार की योनियाँ प्राप्त होने पर अपरिज्ञातकर्मा जीव किस प्रकार कर्मफल भोगता है, सो बतलाते हैं—दुःखजनक होने के कारण इन्द्रियों के अनिष्ट विषयो

तिर्यंચોની અને સંમૂર્છિમ મનુષ્યોની વિવૃત યોનિ હોય છે.

અથવા—યોનિઓના ચૌરાસી લાખ ભેદ પશુ છે, તે આ પ્રમાણે છે—પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, તેજસ્કાય, અને વાયુકાયની. સાત-સાત લાખ યોનિઓ છે (૨૮), પ્રત્યેક વનસ્પતિની દસલાખ (૩૮), સાધારણ વનસ્પતિની ચૌદલાખ (૫૨), ત્રણ વિકલેન્દ્રિયની પ્રત્યેકની બેબે લાખ, અર્થાત્ વિકલેન્દ્રિયની કુલ છ લાખ (૫૮), દેવો નારકોઓ, અને પંચેન્દ્રિય તિર્યંચોમાં પ્રત્યેકની ચાર-ચાર લાખ, તમામ મળી બાર લાખ (૭૦), મનુષ્યોની ચૌદ લાખ (૮૪), આ પ્રમાણે કુલ ચૌરાસી લાખ જીવયોનિ છે.

अनेक प्रकारની योनिઓ प्राप्त થવા છતાંય અપરિજ્ઞાતકર્મો જીવ કેવી રીતે કર્મફલ ભોગવે છે ? તે બતાવે છે—દુઃખ ઉત્પન્ન કરનાર હોવાના કારણે ઇન્દ્રિયોના અનિષ્ટ-

हेतुत्वादशोभनं रूपं=स्वरूपं येषां ते विरूपरूपाः=अनिष्टाः, तान्, स्पर्शान्=इन्द्रियाणां विषयैः सह सम्बन्धाः स्पर्शाः, तान् प्रतिसंवेदयति=पुनः पुनरनुभवति । अनिष्टविषयसंयोगैः पुनः पुनर्दुःखमेव प्राप्नोतीत्यर्थः ।

यद्वा—विरूपं=विभिन्नरूपं विभिन्नात्मकं रूपं=स्वरूपं येषां ते विरूपरूपाः=नानाविधस्वरूपाः, तान् स्पर्शान्=दुःखसंपातान् प्रतिसंवेदयति । लक्षणया कार्य-कारणयोर्भेदाद्वा स्पर्शजन्या अपि दुःखसंपाताः स्पर्शा इति व्यपदिश्यन्ते । अत्र स्पर्शानित्युपलक्षणं, तेन मानसानामपीष्टवियोगादिजन्यदुःखसंपातानां संग्रहः ।

यद्वा—स्पर्शान्=સ્પર્શનેન્દ્રિયવેદ્યાન્ દુઃખસંપાતાન્ પ્રતિસંવેદયતીત્યર્થઃ ।

કો ભોગતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અનિષ્ટ વિષયોં કા સંયોગ હોને કે કારણ વહ જીવ પુનઃ-પુનઃ દુઃખ હી અનુભવ કરતા હૈ ।

અથવા-વિરૂપ અર્થાત્ ભિન્ન-ભિન્ન સ્વરૂપવાલે-નાનાપ્રકાર કે દુઃખજનક સ્પર્શોં કા સંવેદન કરતા હૈ । લક્ષણાવૃત્તિ સે, અથવા કાર્ય-કારણ કે અભેદ કી વિવક્ષા સે સ્પર્શજન્ય દુઃખ મી સ્પર્શ હી કહલાતે હૈ । યહાં સ્પર્શ ઉપલક્ષણ માત્ર હૈ, ઉસ સે ઇષ્ટવિયોગ આદિ માનસિક દુઃખોં કા મી ગ્રહણ સમજના યાહિયે ।

અથવા-સ્પર્શ કા અર્થ હૈ-સ્પર્શનેન્દ્રિયવિષયભૂત દુઃખ । જીવ ઉન્હેં ભોગતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ - જીવ અપરિજ્ઞાતપાપકર્માં હોકર નિગોદ આદિ નાના

દુઃખકારક વિષયોને ભોગવે છે, એ પ્રમાણે અનિષ્ટ વિષયોનો સંયોગ હોવાના કારણે તે જીવ ફરી-ફરી દુઃખનોજ અનુભવ કરે છે.

અથવા-વિરૂપ અર્થાત્ ભિન્ન-ભિન્ન સ્વરૂપવાળા નાના પ્રકારના દુઃખજનક, સ્પર્શોંનું સંવેદન કરે છે. લક્ષણાવૃત્તિથી, અથવા કાર્યકારણના અભેદની વિવક્ષાથી સ્પર્શજન્ય દુઃખ પણ સ્પર્શ કહેવાય છે. અહિં સ્પર્શ ઉપલક્ષણ માત્ર છે, તેમાં ઇષ્ટવિયોગ આદિ માનસિક દુઃખોંનું અહણ પણ સમજ લેવું જોઈ એ.

અથવા-સ્પર્શનો અર્થ છે-સ્પર્શનેન્દ્રિયવિષયભૂત દુઃખ, જીવ તેને ભોગવે છે. તાત્પર્ય એ છે કે-જીવ અપરિજ્ઞાત-પાપકર્મો થઈને નરક-નિગોદ આદિ અનેક યોનિઓમાં

अपरिज्ञातकर्मतया नरकनिगोदाद्यनेकविधयोनीः संप्राप्य सर्वे जीवाः विचित्रकर्मो-  
दयात् स्वकर्मफलं नानाविधं दुःखमेवानुभवन्तीति भावः ॥ ८ ॥

अथ सुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामिनं जगाद-‘तत्थे’-इत्यादि ।

मूलम्—

तत्थ खलु भगवया परिण्णा पवेइया ॥ सू० ९ ॥

छाया—

तत्र खलु भगवता परिज्ञा प्रवेदिता ॥ सू० ९ ॥

टीका—

हे जम्बू ! अपरिज्ञातकर्मा जीवो विभावपरिणामं कुर्वन् नानाविध-  
योनिषु पुनः पुनर्दुःखमेव लभते । तत्र-अपरिज्ञातकर्मणो जीवस्य कृतकारि-  
तानुमोदितादिभेदेनोक्तसप्तविंशतिभङ्गरूपसावद्यक्रियानुष्ठानान्नरकनिगोदादिनानावि-  
धयानिषु पुनः पुनर्दुःखानुभवविषये भगवता श्रीमहावीरस्वामिना परिज्ञा

योनियों में उत्पन्न होकर विचित्र कर्मों के उदय से अपने-अपने कर्मों का नानाविध दुःख-  
रूप फल अनुभव करते हैं ॥ सू. ८ ॥

सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं-‘तत्थ खलु.’ इत्यादि ।

मूलार्थ-भगवान् ने परिज्ञा का उपदेश दिया है ॥ सू. ९ ॥

टीकार्थ- हे जम्बू ! अपरिज्ञातपापकर्मा जीव विभाव परिणाम धारण करता  
हुआ नाना प्रकार की योनियों में बारंवार दुःख पाता है । अपरिज्ञातपापकर्मा जीव के  
कृत कारित अनुमोदना आदि के भेद से सत्ताईस भंगरूप सावद्यक्रिया के अनुष्ठान से  
नरक निगोद आदि नाना प्रकार की योनियों में पुनः पुनः दुःखानुभव करने के विषयमें

ઉત્પન્ન થઈને વિચિત્રકર્મોના ઉદયથી પોત-પોતાના કર્મોના અનેક પ્રકારના દુઃખરૂપ  
ફલોને અનુભવ કરે છે. (સૂ. ૮)

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે-‘તત્થે ખલુ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ-ભગવાને પરિજ્ઞાનો ઉપદેશ આપ્યો છે. (૯)

टीकार्थ- हे जम्बू ! अपरिज्ञातपापकर्मा जीव विभाव परिणाम धारण करता  
थका नाना प्रकारनी योनियोंमां बारंवार दुःख पाये छे. अपरिज्ञात-पापकर्मा जीवना  
कृत कारित अने अनुमोदना आदिना भेदथी सत्तावीस भंगरूप सावद्य क्रियाना अनुष्ठानथी  
नरक-निगोद आदि नाना प्रकारना योनियोंमां पुनः पुनः दुःख अनुभव करवाना विषयमां



સંલુ પ્રવેદિતા । તત્તદ્દુઃસ્વકારણકર્મબન્ધસમુચ્છેદાર્થં જીવેન પરિજ્ઞાઽવશ્યં શરણી-  
કરણીયેતિ ભગવતા પ્રવોધિતમિતિ ભાવઃ પરિજ્ઞા=સમ્યગવબોધઃ । પરિજ્ઞા  
દ્વિવિધા જ્ઞ-પ્રત્યાખ્યાન-ભેદાત્ । ‘સાવધવ્યાપારેણ કર્મબન્ધો ભવતી’તિ જ્ઞાનં  
જ્ઞ-પરિજ્ઞા । કર્મબન્ધકારણસ્ય સાવધવ્યાપારસ્ય પરિત્યાગઃ પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા ।  
અત્રેદમવગન્તવ્યમ્-અતીતકાલે મનસા વાચા કાયેન ચ મયા સાવધ-  
ક્રિયા કૃતા, કારિતા, અનુમોદિતા ચ, તથા વર્તમાનકાલે સાવધક્રિયાં કરોમિ,  
કારયામિ, કુર્વન્તમપ્યન્યમનુમોદયામિ । एवं यदि भविष्यत्कालेऽपि सावधक્રियां  
करिष्यामि, कारयिष्यामि करिष्यमाणमन्यमनुमोदयिष्यामि । इत्थमनेकविधसा-  
वधव्यापारं कुर्वन् जीवः संसारे परिभ्रमति, नरकनिगोदाद्यनेकविधदुस्सहयातनां

મંગવાન્ મહાવીર સ્વામીને પરિજ્ઞા કી પ્રરૂપણા કી હૈ । દુઃસ્વોં કે કારણભૂત કર્મોં કે  
બન્ધ કા નાશ કરને કે લિઁ જીવ કો પરિજ્ઞા કા શરણ અવશ્ય ગ્રહણ કરના ચાહિયે;  
એસા મંગવાન્ ને કહા હૈ । પરિજ્ઞા કા અર્થ હૈ-સમ્યગ્જ્ઞાન । પરિજ્ઞા દો પ્રકાર કી હૈ-  
જ્ઞ-પરિજ્ઞા ઓર પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા । સાવધ વ્યાપાર સે કર્મબન્ધ હોતા હૈ ’ એસા જાનના  
જ્ઞ-પરિજ્ઞા હૈ । ઓર કર્મ બન્ધ કે કારણ સાવધ વ્યાપારોં કા પરિત્યાગ કર દેના પ્રત્યાખ્યાન  
પરિજ્ઞા હૈ । યહાં યહ સમજના ચાહિયે કિ-ભૂતકાલ મેં મૈને મન, વચન, કાય સે સાવધ ક્રિયા  
કી, કરાઈ ઓર ડસ કી અનુમોદના કી, તથા વર્તમાન કાલ મેં સાવધ ક્રિયા કરતા હૂં, કરાતા  
હૂં ઓર દૂસરે કરને વાલે કા અનુમોદન કરતા હૂં, । इसी प्रकार भविष्यकाल में भी सावध  
क्रिया करूंगा, कराऊंगा, और दूसरे का अनुमोदन करूंगा । इस प्रकार भौति-भौति का  
सावध व्यापार करता हुआ जीव संसार में परिभ्रमण करता है और नरक निगोद आदि की

ભગવાન મહાવીર સ્વામીએ પરિજ્ઞાની પ્રરૂપણા કરી છે. દુઃખોના કારણભૂત કર્મોના  
બંધનો નાશ કરવા માટે જીવને પરિજ્ઞાનું શરણ અવશ્ય ગ્રહણ કરવું જોઈએ, એ  
પ્રમાણે ભગવાને કહ્યું છે. પરિજ્ઞાનો અર્થ છે સમ્યગ્જ્ઞાન. પરિજ્ઞા એ પ્રકારની છે-  
(૧) જ્ઞ-પરિજ્ઞા અને (૨) પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા ‘સાવધ વ્યાપારથી કર્મબંધ થાય છે.’  
આ પ્રકારે સમજવું તે જ્ઞ-પરિજ્ઞા છે, અને કર્મબંધના કારણથી સાવધ વ્યાપારોના  
ત્યાગ કરી દેવો તે પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા છે. અહિં આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ કે:-  
ભૂતકાળમાં મેં મન, વચન, કાયાથી સાવધ ક્રિયા કરી છે, કરાવી છે. અને તેને  
અનુમોદન આપ્યું છે તથા વર્તમાન કાલમાં સાવધ ક્રિયા કરું છું, કરાવું છું, અને  
બીજા કરવાવાળાને અનુમોદન આપું છું. આ પ્રમાણે ભવિષ્યકાલમાં પણ સાવધ ક્રિયા  
કરીશ, કરાવીશ અને બીજાને અનુમોદન આપીશ. આ પ્રમાણે અનેક તરેહના બૂદા-બૂદા

ચાતુર્ભવતિ । एवं ज्ञपरिज्ञया विज्ञाय प्रत्याख्यानपरिज्ञया सावधक्रिया परित्याज्येति भगवता बोधितमिति । इदं च ज्ञानं सहसम्मत्या (अवधि-मनःपर्यय-केवलज्ञानैर्जाति-स्मृत्या वा ) मतिज्ञानेन वा भवति, तस्मान्निश्चयव्यवहारस्वरूपसंयममार्गे प्रवृत्तिरेव-जीवस्य हितकारिणी, अनयैव हि परमपदं मोक्षो लभ्यते ॥ सू० ९ ॥

નનુ તર્હિ દુઃખફલેષુ તેષુ ક્રિયાવિશેષેષુ કિમથં પ્રવર્તેતે જીવઃ ? ઇત્યાશંકા-યામાહ—‘ઇમસ્સ ચેવ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાણણપૂયણાણ જાઇમરણમોયણાણ દુક્ખપટ્ટિઘાયહેઉં ॥ સૂ० ૧૦ ॥

છાયા—અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્ય પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય-જાતિમરણમોચ-નાય દુઃખપ્રતિઘાતહેતુમ્ ॥ સૂ० ૧૦ ॥

अनेक प्रकार की दुस्सह यातनाएँ भोगता है, इस प्रकार ज्ञपरिज्ञा से जानकर प्रत्याख्यान-परिज्ञा से सावध क्रिया त्यागने योग्य है । इस प्रकार भगवान् ने उपदेश दिया है । यह बोध-अवधि, मनःपर्यय, केवलज्ञान और जातिस्मरण से होता है, या, मतिज्ञान से होता है । इस लिये निश्चयव्यवहाररूप संयममार्ग में प्रवृत्ति करना ही जीव के लिए हितकर है और इसी से परमपद-मोक्ष प्राप्त होता है ॥ सू० ९ ॥

अगर सावध क्रियाएँ दुःख का कारण हैं तो उन में जीव प्रवृत्ति क्यों करता है ? इस आशंका का समाधान करते हैं—‘इमस्स चैव.’ इत्यादि ।

मूलार्थ—इस जीवन के लिए, परिवन्दन, मानन और पूजन के लिए, जन्म मरण से मुक्त होने के लिए, दुःख दूर करने के लिए, (जीव पापक्रिया में प्रवृत्त होता है) ॥ सू० १० ॥

સાવધ વ્યાપાર કરતો જીવ સંસારમાં પરિજ્ઞમણુ કરે છે, અને નરક, નિર્ગોદ આદિની અનેક પ્રકારની કઠિન યાતનાઓ ભોગવે છે. આ પ્રમાણે જા-પરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યા-ખ્યાન-પરિજ્ઞાથી સાવધ ક્રિયા ત્યાગવા યોગ્ય છે, આ પ્રમાણે ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો છે.

આ બોધ-અવધિ, મનઃપર્યય, કેવલજ્ઞાન અથવા જાતિસ્મરણથી થાય છે, અથવા તો મતિજ્ઞાનથી થાય છે. એ માટે નિશ્ચય-વ્યવહારરૂપ સંયમમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરવી એજ જીવને માટે હિતકર છે, અને એનાથી પરમપદ મોક્ષ થાય છે (સૂ० ૯)

જો કે સાવધ ક્રિયાઓ દુઃખનું કારણ છે, તો તેમાં જીવ પ્રવૃત્તિ શા માટે કરે છે ? એ શંકાનું સમાધાન કરે છે—‘ઇમસ્સ ચેવ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—આ જીવનને માટે, પરિવંદન, માનન, અને પૂજન માટે, જન્મ મરણથી મુક્ત થવા માટે, દુઃખ દૂર કરવા માટે (જીવ પાપક્રિયામાં પ્રવૃત્ત થાય છે). (૧૦)



ટીકા—‘અસ્ય’ ઇતિ-અસ્ય=પ્રત્યક્ષમનુભૂયમાનસ્ય વારિતરજ્જવચ્ચશ્વલતરસ્ય, સંધ્યારાગવત્તરિત્તમહુગુરસ્ય જીવિતસ્ય=જીવનસ્ય ચિરસુખાર્થમપરિજ્ઞાતકર્મા જીવઃ કર્મબન્ધહેતુભૂતેષુ ક્રિયાવિશેષેષુ પ્રવર્તેતે । યથા-જીવનાર્થ લાવકતિત્તિરાદિપક્ષિ-ણામ્, અજમેષમૃગમૃગરાજાદિપશૂનાં વધરૂપઘોરકર્મસમાચરણમ્ । તથા-પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય, તત્ર-પરિવન્દન=પ્રશંસા, તદર્થ, યથા-સ્વચ્છ્યાતિપ્રાપ્ત્યર્થ સાપરાધ-નિરપરાધ-પ્રાણિનાં હિંસનમ્ । માનનમ્=અભ્યુત્થાનાસનદાનાદિરૂપઃ સત્કારઃ, સ્વાજ્ઞા-સ્વીકારો વા, તદર્થમ્, યથા-માનનાર્થ પરેષાં હિંસનાદિકરણમ્ । પૂજનમ્-રત્નવસ્ત્રાદિ-પુરસ્કારઃ, પ્રતિમાદીનાં પૂજાપ્રતિષ્ઠાદિ ચ, તદર્થ, પ્રાણ્યુપમર્દનરૂપહિંસાદિસાવધ-

ટીકાર્થ—પ્રત્યક્ષ અનુભવ ક્રિયે જાને વાલે, જલકી તરજ્જ કે સમાન અતિશય ચંચલ, સંધ્યા કી લાલિમા કે સમાન મહુગુર-જીવન કે ચિરકાલીન સુખ કે લિપ્ત અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ કર્મબન્ધ કી કારણભૂત ક્રિયાઓ મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । જૈસે-જીવિત રહને કે લિપ્ત; લાવા, તીતર આદિ પક્ષિયોં કા ઓર બકરા, મેઢા, હિરન એવં સિંહ આદિ પશુઓં કા વધરૂપ ઘોર પાપકર્મ કા આચરણ કરના ।

તથા પરિવન્દન, માનન ઓર પૂજન કે લિપ્ત જીવ પાપકર્મ કરતા હૈ । ‘પરિવન્દન’ કા અર્થ હૈ પ્રશંસા । પ્રશંસા કે લિપ્ત સાપરાધ ઓર નિરપરાધ પ્રાણિયોં કા ઘાત ક્રિયા જાતા હૈ । ઊઠકર સ્થા હોના, આસન દેના આદિ સત્કાર, અથવા અપની આજ્ઞા સ્વીકાર કરાના ‘માનન’ કહલાતા હૈ, ઇસ કે લિપ્ત મી દૂસરોં કી હિંસા કી જાતી હૈ । રત્નો ઓર વસ્ત્રોં આદિ કા પુરસ્કાર ‘પૂજન’ કહલાતા હૈ, ઓર પ્રતિમા આદિ કી પૂજા-

ટીકાર્થ—પ્રત્યક્ષ અનુભવ કરવામાં આવેલા જલના તરંગોની સમાન અતિશય ચંચલ, સંધ્યાની લાલાશ (શતાપણી)ની સમાન ભંશુર જીવનના લાંબા સમયના સુખ માટે અપરિજ્ઞાતકર્મા જીવ કર્મબન્ધની કારણભૂત ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થાય છે. જેવી રીતે જીવિત રહેવા માટે લાવા તેતર, આદિ પક્ષીઓના અને બકરા, મેઢા, હરણ એ પ્રમાણે સિંહ આદિ પશુઓના વધરૂપ ઘોર પાપકર્મનું આચરણ કરવું.

તથા પરિવન્દન, માનન અને પૂજન માટે પણ જીવ પાપ કરે છે. ‘પરિવન્દન’નો અર્થ છે: પ્રશંસા, પ્રશંસા માટે અપરાધવાળા અને અપરાધ વિનાના પ્રાણીઓનો ઘાત કરવામાં આવે છે. ઉઠીને ઉભા થઈ જવું. આસન આપવું આદિ સત્કાર અથવા પોતાની આજ્ઞા સ્વીકાર કરાવવી તે ‘માનન’ કહેવાય છે, તે માટે પણ પીળાની હિંસા કરવામાં આવે છે. રત્ન અને વસ્ત્રો આદિનો પુરસ્કાર તે પૂજન કહેવાય છે, અને પ્રતિમા



ક્રિયાં કરોતિ । જાતિમરણમોચનાય=જાતિર્જન્મ, તદર્થ ભવાન્તરસુખપ્રાપ્ત્યર્થ  
શ્રમ્પાપાતાદિકં સમાચરતિ । મરણાર્થમ્=મરણં યેષાં પિત્રાદીનાં સંજાતં, તદર્થ  
પિંડદાનાદિક્રિયાસુ પ્રવર્તેતે । યદ્વા મરણં=વધસ્તદર્થ, વધં નિમિત્તીકૃત્ય વૈરનિ-  
ર્યાપનાર્થમ્ । યદ્વા-મરણાર્થ=મૃત્યુનિવૃત્ત્યર્થ મિથ્યાત્વબુદ્ધ્યા દેવીપૂજાદૌ  
બલિદાનાદિકરણમ્ । મોચનમ્=આત્મનઃ કર્મબન્ધાપગમસ્તદર્થ વિપરીતમત્યા-  
પશ્ચાન્નિતાપાદૌ પ્રાણ્યુપમર્દનકર્મણિ પ્રવર્તેતે । તથા દુઃખપ્રતિઘાતહેતું=દુઃખાનાં  
પ્રતિઘાતો=વિધ્વંસસ્તસ્ય હેતું ક્રિયાવિશેષં હિંસાદિકં કરોતિ, યથા-વ્યાધિ-

પ્રતિષ્ઠા વગૈરહ મો ‘પૂજન’ હૈ, ઉસકે લિખે મી મનુષ્ય પ્રાણિયોં કા ઉપમર્દનરૂપ હિંસા વૌરહ  
સાવધ ક્રિયાઈ કરતા હૈ ।

જન્મ ઓર મરણ સે છુટકારા પાને કે લિખે સાવધ ક્રિયાઈ કી જાતી હૈ ।  
‘જાતિ’-જન્મ કે લિખે જૈસે આગામી ભવ મેં સુખ પ્રાપ્ત કરને કે ઉદેશ સે જીવ  
શંપાપાત-(અગ્નિ તથા પાણીમેં પડકરે અથવા ઉપરસે ગિરકર મરના) આદિ કા  
આચરણ કરતા હૈ । ‘મરણ’-પિતા આદિ કા મરણ હોને પર ઉનકે લિખે પિંડદાન આદિ  
ક્રિયાઓં મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । અથવા-મૃત્યુ કો નિમિત્ત બનાકર વૈર કા પ્રતિશોધ (બદલા) લેને  
કે લિખે પાપ કરતા હૈ । અથવા મૃત્યુ ટાલને કી મિથ્યાબુદ્ધિ સે દેવી વૌરહ કે લિખે બલિદાન  
આદિ કરતા હૈ । તથા ‘મોચન’ કે લિખે અર્થાત્ અપના કર્મબન્ધ હટાને કે લિખે વિપરીતમતિ હો  
કર પંચાન્નિતાપ આદિરૂપ પ્રાણિ હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । તથા ‘દુઃખપ્રતિઘાતહેતું’ દુઃખોં  
કો નિવારણ કરને કે લિખે હિંસા આદિ પાપ કરતા હૈ । જૈસે રોગ મિટાને કી બુદ્ધિ સે માંસ

(મૂર્તિ) આદિની પૂજા-પ્રતિષ્ઠા વગેરે પણ ‘પૂજન’ છે. તેના માટે પણ જીવ, પ્રાણિઓનું  
ઉપમર્દનરૂપ હિંસા વગેરે સાવધ ક્રિયાઓ કરે છે.

જન્મ અને મરણથી છુટવા માટે પણ સાવધ ક્રિયાઓ કરવામાં આવે છે. જાતિ-જન્મ  
માટે, જેમ આગામી ભવમાં સુખ પ્રાપ્ત કરવાના ઉદ્દેશથી જીવ શંપાપાત (અગ્નિ કે પાણીમાં  
પડીને મરવું. ઉંચેથી પડતું મૂકવું) આદિનું આચરણ કરે છે. ‘મરણ’ પિતા આદિના મરણ  
પ્રસંગે તેના માટે પિંડદાન આદિ ક્રિયાઓમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, અથવા મૃત્યુ નિવારણ માટે  
મિથ્યાબુદ્ધિથી દેવી વગેરેને બલિદાન આદિ આપવાં. તથા ‘મોચન’ માટે અર્થાત્ પોતાના  
કર્મબંધને દૂર કરવા માટે વિપરીત મતિથી પંચાન્નિતાપ આદિરૂપ હિંસામાં પ્રવૃત્ત થાય છે.  
તથા ‘દુઃખપ્રતિઘાતહેતું’-દુઃખોનું નિવારણ કરવા માટે હિંસાઆદિ પાપ કરે છે. જેમ રોગ

વિધ્વંસનબુદ્ધ્યા માંસં ભક્ષયતિ, મદિરાદિકં પિબતિ, વનસ્પતિમૂલત્વક્ષપત્રનિર્યાસાદિ-  
શતપાકસહસ્રપાકાદિતૈભ્યં વહ્નિવનસ્પત્યાધારમ્ભં કરોતિ । અત્ર કારિતાનુમોદિત-  
ભૂતભવિષ્યત્કાલાદિભેદેન કર્મસમારમ્ભરૂપાઃ ક્રિયાવિશેષા અન્યેઽપ્યવગન્તવ્યાઃ ।

પ્રથમપરિજ્ઞાતકર્મતયા સંસારિણો જીવાઃ કર્મસમારમ્ભરૂપૈઃ ક્રિયાવિશેષૈઃ  
સંસારે સર્વદિક્ષુ પરિભ્રમન્તો વિવિધયોનિષુ દુઃસ્વમેવ પ્રાપ્નુવન્તીતિ વિજ્ઞાય ભવ્યૈઃ  
કર્મસમારમ્ભરૂપા સકલસાવધક્રિયાવિશેષાસ્ત્યાજ્યા इति ભાવઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

કર્મસમારમ્ભરૂપાન્ ક્રિયાવિશેષાન્ અનુસ્મારયિતું પ્રાગુક્તમપિ પુનઃ કથયતિ—  
'પ્રયાવંતિ' इत्याદિ ।

સ્વાતા હૈ, મદિરા આદિ કા પાન કરતા હૈ, વનસ્પતિ કી જડ, છાલ, પત્તા, રસ વગેરહ નિકાલતા હૈ, શતપાક એવં સહસ્રપાક આદિ તૈલોં કૈ લિખે અગ્નિ ઓર વનસ્પતિ આદિ કા આરમ્ભ કરતા હૈ । યહાં કરાના ઓર અનુમોદન કરના તથા ભૂત, ભવિષ્ય કાલ આદિ કૈ ભેદ સે કર્મસમારમ્ભરૂપ અન્ય ક્રિયાએં ભી સમજ ઢેની યાહિખે ।

इस प्रकार अपरिज्ञातपापकर्मा होने के कारण संसारी जीव कर्मसमारम्भरूप क्रियाओं द्वारा संसार में समस्त दिशाओं में भ्रमण करते हुए नाना योनियों में दुःख का ही अनुभव करते हैं । ऐसा समझकर भव्य जीवों को पापकर्मजनक सावध क्रियाओं का त्याग करना चाहिए ॥ सू० १० ॥

કર્મસમારમ્ભરૂપ ક્રિયાવિશેષોં કા સ્મરણ કરાને કૈ લિખે પૂર્વોક્ત અર્થ કો ફિર કહતે હૈ—“પ્રયાવંતિ.” इत्यादि ।

મટાડવાની બુદ્ધિથી માંસ ખાય છે, મદિરા વગેરેનું પાન કરે છે, વનસ્પતિનાં મૂળ, છાલ, પાંદડાં રસ વગેરે કાઢે છે. શતપાક, સહસ્રપાક આદિ તેલો માટે અગ્નિ અને વનસ્પતિ આદિનો આરંભ કરે છે. અહિં કરાવવું અને અનુમોદન આપવું, તથા ભૂત ભવિષ્ય કાલ આદિ ના લેદથી કર્મસમારભરૂપ અન્ય ક્રિયાઓ પણ સમજ લેવી જોઈએ.

આ પ્રમાણે અપરિજ્ઞાતપાપકર્મો હોવાના કારણે, સંસારી જીવ કર્મસમારભરૂપ ક્રિયાઓદ્વારા સંસારમાં, સમસ્ત દિશાઓમાં ભ્રમણ કરતો અનેક યોનિઓમાં દુઃખનોજ અનુભવ કરે છે. આ પ્રમાણે સમજીને ભવ્ય જીવોએ પાપકર્મજનક સાવધ ક્રિયાઓનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. (સૂ૦ ૧૦)

કર્મસમારભરૂપ ક્રિયાવિશેષોનું સ્મરણ કરાવવા માટે પૂર્વોક્ત અર્થને ફરી કહે છે—“પ્રયાવંતિ” इत्यादि.



મૂલમ્—એવાવંતિ સઘ્વાવંતિ લોગંસિ કર્મસમારંભા પરિજાણિયઘ્વા  
ભવંતિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

છાયા—એતાવન્તઃ સર્વે લોકે કર્મસમારંભાઃ પરિજ્ઞાતઘ્વા ભવંતિ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકા—‘એતાવન્તઃ’ ઇતિ-લોકે=જિનશાસને કર્મસમારંભાઃ=કર્મબન્ધહેતવઃ  
ક્રિયાવિશેષાઃ સર્વે એતાવન્તઃ । કૃતકારિતાનુમોદિતમેદેન ત્રિવિધાનાં કર્મસમાર-  
ંભાણાં પ્રત્યેકમતીતવર્તમાનાનાગતત્રયમેદેન નવવિધાનાં પુનર્મનોવાકકાયમેદેન  
પ્રત્યેકં ત્રૈવિધ્યે સતિ સપ્તવિંશતિર્મજ્ઞા ભવન્તીતિ રીત્યા પૂર્વકથિતસપ્તવિંશતિ-  
મજ્ઞાવન્તઃ, ન તુ તેભ્યોઽધિકા इत्यर्थः । एते च कर्मसमारम्भाः परिज्ञातव्या भवन्ति,  
एतत्परिज्ञानार्थं यत्नो विधेय इत्यर्थः । ज्ञाते सति पुनः पुनस्स्यानुस्मरणं करणीयं, न  
तत्र प्रमादः कार्य इति भावः ॥ सू. ૧૧ ॥

કર્મસમારંભપરિજ્ઞાનસ્ય ફલમાહ-‘જસ્સેતે.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનશાસન મેં ઇતને કર્મસમારંભ જાનને યોગ્ય હૈ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકાર્થ—જિનશાસન મેં કર્મબન્ધ કે કારણ ઇતને હી હૈ । કૃત, કારિત, ઔર અનુ-  
મોદિત કે મેદ સે ત્રીન પ્રકાર કે કર્મસમારંભોંકા અતીત વર્તમાન ઔર ભવિષ્ય કાલ કે  
સાથ ગુણાકાર કરને પર નૌ મેદ હોતે હૈ । યે નૌ મેદ મન, વચન, કાય કે મેદસે સત્તાઈસ  
મજ્ઞરૂપ હો જાતે હૈ । ઇસ પ્રકાર સત્તાઈસ તરહ કે કર્મસમારંભ જાનને ચાહિયે, ઇનસે ન  
કમ હૈ ઔર ન અધિક હૈ । ઉન્હેં જાનને કે લિયે યત્ન કરના ચાહિયે । જાન લેને કે પશ્ચાત્  
ઉનકા બાર-બાર સ્મરણ કરના ચાહિયે । ઇસ વિષય મેં પ્રમાદ નહીં કરના ચાહિયે ॥ ૧૧ ॥

કર્મસમારંભ કે જ્ઞાનકા ફલ બતલાતે હૈ—‘જસ્સેતે’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જિનશાસનમાં આટલા કર્મસમારંભ જાણવા યોગ્ય છે (૧૧).

ટીકાર્થ—જિનશાસનમાં કર્મબંધનાં કારણ આટલાંજ છે. કરવું, કરાવવું અને અનુ-  
મોદન આપવું આ લેઢથી ત્રણ પ્રકારના કર્મસમારંભોને જૂતકાલ, વર્તમાન અને ભવિષ્ય  
કાલની સાથે ગુણાકાર કરવાથી નવ લેઢ થાય છે. આ નવ લેઢ મન, વચન, કાયાના લેઢથી  
સત્તાવીસ ભંગરૂપ થઈ જાય છે. એ પ્રમાણે સત્તાવીસ તરેહના કર્મસમારંભોને જાણવા જોઈએ.  
જોનાથી જોછા નથી અને અધિક પણ નથી. તેને જાણવા માટે યત્ન કરવો જોઈએ. જણ્યા  
પછી તેનું વારંવાર સ્મરણ કરવું જોઈએ. આ વિષયમાં પ્રમાદ નહિ કરવો જોઈએ. (૧૧)

કર્મસમારંભના જ્ઞાનનું ફળ બતાવે છે—‘જસ્સેતે’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—જસેતે લોગંસિ કમ્મસમારંભા પરિણાયા ભવંતિ સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મે—ત્તિવેમિ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

છાયા—યસ્ય એતે લોકે કર્મસમારંભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ સ સ્વલુ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ટીકા—‘યસ્ય’ ઇતિ—લોકે યસ્ય=ભવ્યજીવસ્ય એતે=પ્રાગુક્તાઃ કર્મસમારંભાઃ=જ્ઞાનાવરણીયાદ્યદ્વિધકર્મણઃ સમુત્પાદકાઃ, સાવધક્રિયાવિશેષા ઇત્યર્થઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ=‘એતે હિંસાદયઃ સપ્તવિંશતિભજ્જવન્તઃ સાવધક્રિયાવિશેષા આત્મનઃ કર્મબન્ધે હેતવો ભવન્તિ’ ઇત્યેવં જ્ઞપરિજ્ઞયા જ્ઞાતા ભવન્તિ સ પરિજ્ઞાતકર્મા=જ્ઞપરિજ્ઞયા કર્મબન્ધનિબન્ધનત્વેન વિજ્ઞાય, પ્રત્યાલ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યક્તસકલસાવધક્રિયાવિશેષો નિશ્ચયેન મુનિઃ=સર્વસાવધક્રિયોપરતિપ્રતિજ્ઞાવાન્ ભવતીત્યર્થઃ ।

ઇતિ=આત્મતત્ત્વસ્વરૂપનિરૂપણં, કર્મબન્ધહેતુભૂતસકલસાવધક્રિયાસ્વરૂપપ્રદર્શનં, સાવધક્રિયાનિવૃત્તિપુરસ્સરં મુનેર્વિહરણં ચેતિ યત્ તીર્થઙ્કરસ્ય ભગવતો મહાવીરસ્ય

મૂલાર્થ—લોક મેં જો કર્મસમારંભ જ્ઞાન લેતા હૈ, વહ મુનિ નિશ્ચય સે પરિજ્ઞાતકર્મા હૈ, એસા મૈં કહતા હૂં ॥ સૂ. ૧૨ ॥

ટીકાર્થ—લોક મેં જિસ ભવ્ય કો પૂર્વોક્ત કર્મસમારંભ અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોં કે ઉત્પાદક સાવધવ્યાપાર જ્ઞાત હો જાતે હૈં, અર્થાત્ જો પૂર્વોક્ત સત્તાઈસ ભંગો વાલે હિંસાદિક ક્રિયાવિશેષોં કો અપને કર્મબન્ધોં કા કારણ સમજ લેતા હૈ, વહ પરિજ્ઞાત—કર્મા હૈ । જો જ્ઞ-પરિજ્ઞા સે કર્મબન્ધ કા કારણ સમજ કર પ્રત્યાલ્યાન-પરિજ્ઞા સે સમ્પૂર્ણ સાવધ ક્રિયા-ઓંકા ત્યાગ કરતા હૈ વહ નિશ્ચય સે પરિજ્ઞાતકર્મા મુનિ હૈ ।

‘ત્તિ વેમિ’ ઇતિ=ઇસ પ્રકાર કા આત્મા કે -સ્વરૂપ કા નિરૂપણ, કર્મબન્ધ કે કારણભૂત સમસ્ત સાવધ વ્યાપારોં કે સ્વરૂપ કા પ્રદર્શન, ઓર સાવધ ક્રિયા કો નિવૃત્તિપૂર્વક

મૂલાર્થ—લોકમાં જે કર્મસમારંભને જાણી લે છે, તે મુનિ નિશ્ચયથી પરિજ્ઞાતકર્મા છે. એ પ્રમાણે હું કહું છું. (સૂ. ૧૨)

ટીકાર્થ—લોકમાં જે ભવ્ય જીવને પૂર્વોક્ત કર્મસમારંભ અર્થાત્ જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ કર્મોંનો ઉત્પાદક સાવધ વ્યાપાર જાણવામાં આવી જાય છે. અર્થાત્ જે પૂર્વે કહેલા સત્તાવીસ ભંગોવાળા હિંસાદિક્રિયાવિશેષોને પોતાના કર્મબંધનું કારણ સમજ લે છે તે પરિજ્ઞાતકર્મા છે. જે જ્ઞ-પરિજ્ઞાથી કર્મબંધનું કારણ સમજીને પ્રત્યાલ્યાન-પરિજ્ઞાથી સમ્પૂર્ણ સાવધ ક્રિયાઓનો ત્યાગ કરે છે. તે નિશ્ચયથી પરિજ્ઞાતકર્મા મુનિ છે.

ત્તિ વેમિ—ઇતિ=આ પ્રમાણે આત્માના સ્વરૂપનું નિરૂપણ, કર્મબંધના કારણભૂત સમસ્ત સાવધ વ્યાપારોના સ્વરૂપનું પ્રદર્શન, અને સાવધ ક્રિયાની નિવૃત્તિપૂર્વક મુનિનું

સકાશાન્મયા સાક્ષાત્ શ્રુતં તદ્ બ્રવીમિ=કથયામિ ન તુ સ્વબુદ્ધિપરિકલ્પિતમ્ । યતઃ સ્વબુદ્ધ્યા કથને શ્રુતજ્ઞાનસ્યાવિનયો ભવતિ, કિન્ચ-છન્નસ્થાનાં દૃષ્ટ્યોપ્યપૂર્ણા ભવન્તિ તસ્માદ્ યથાભગવત્પ્રતિપાદિતમેવ ત્વાં બ્રવીમિ=ઉપદિશામીત્યર્થઃ । અત્ર સદ્ગ્રહગાથા-

“ સુઅણાણસ્સ અવિણ્ણો, પરિહરણિજ્જો સુહાહિલાસીર્હિ ।

છઉમત્થાણં દિટ્ઠી, પુણ્ણા ણત્થિ-ત્ત સૂર્યં ઇણા ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

સાવધક્રિયાયાઃ ષડ્જીવનિકાયં પ્રતિ શસ્ત્રવદુપધાતકતયા સાવધક્રિયા-સ્વરૂપબોધકસ્ય પ્રથમાધ્યયનસ્ય શસ્ત્રપરિજ્ઞયા વ્યપદેશઃ । ॥ સૂ. ૧૨ ॥

પ્રથમાધ્યયનસ્ય પ્રથમોદ્દેશઃ સમ્પૂર્ણઃ ॥ ૧-૧ ॥

મુનિકા વિચરના જો તીર્થંકર ભગવાન્ મહાવીર કે સન્નિકટ મૈને સાક્ષાત્ સુના હૈ વહી ‘બ્રવીમિ’=મૈં કહતા હૂં, અપની બુદ્ધિસે કલ્પિત નહીં કહતા । અપની બુદ્ધિસે-તીર્થંકરકી વાણી કી અપેક્ષા ન રખતે હુણ કથન કરને સે શ્રુતજ્ઞાન કા અવિનય હોતા હૈ । દૂસરી વાત યહ હૈ કિ છન્નસ્થ કી દૃષ્ટિ મી અપૂર્ણ હોતી હૈ, અતઃ ભગવાન્ દ્વારા પ્રતિપાદિત તત્ત્વ હી મૈં તુમ સે કહતા હૂં । યહાં યહ સદ્ગ્રહગાથા હૈ:—

“ સુખ કે અભિલાષી ભવ્યોં કો શ્રુતજ્ઞાન કે અવિનય કા ત્યાગ કરના વાહિણ છન્નસ્થોં કી દૃષ્ટિ પૂર્ણ નહીં હોતી, એસા યહાં ‘ઇતિ’ શબ્દ સે સૂચિત ક્રિયા ગયા હૈ ” ॥ ૧ ॥

સાવધ ક્રિયા ષડ્જીવનિકાય કે લિણ શસ્ત્ર કે સમાન ધાતક હૈ, અતઃ સાવધ ક્રિયાકે સ્વરૂપકે બોધક હસ પ્રથમ અધ્યયન કા શસ્ત્રપરિજ્ઞા નામ હુઆ હૈ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

પ્રથમ અધ્યયનકા પ્રથમ ઉદ્દેશ સમ્પૂર્ણ ॥ ૧-૧ ॥

વિચરવું. જે તીર્થંકર ભગવાન મહાવીર પાસે મેં સાક્ષાત્ સાંભળ્યું છે, તેજ ‘બ્રવીમિ’=હું કહું છું, પોતાની બુદ્ધિથી કલ્પિત કહેતો નથી. પોતાની બુદ્ધિથી—તીર્થંકરની વાણીની અપેક્ષા નહીં રાખીને કહીએ તો શ્રુતજ્ઞાનનો અવિનય થાય છે. બીજી વાત એ છે કે:—છન્નસ્થની દૃષ્ટિ પણ અપૂર્ણ હોય છે, તે કારણથી ભગવાન દ્વારા પ્રતિપાદન કરાએલું તત્ત્વજ હું તમને કહું છું. અહિં આ સંગ્રહગાથા છે.—

“ સુખના અભિલાષી ભવ્યોએ શ્રુતજ્ઞાનના અવિનયનો ત્યાગ કરવો જોઈએ. છન્નસ્થોની દૃષ્ટિ પૂર્ણ હોય નહીં. એ પ્રમાણે ‘ઇતિ’ શબ્દથી સૂચના કરવામાં આવી છે.” (૭)

સાવધ ક્રિયા ષડ્જીવનિકાય માટે શસ્ત્ર (હથીઆર) સમાન ધાતક છે. એ કારણથી સાવધ ક્રિયાના સ્વરૂપનો બોધ કરાવનાર આ પ્રથમ-અધ્યયન છે, તેનું શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામ પડ્યું છે.

નામક પ્રથમ અધ્યયનનો પ્રથમ ઉદ્દેશ

સંપૂર્ણ (૧-૧)

અથ પ્રથમાધ્યયનસ્ય

દ્વિતીયોદ્દેશઃ ।

પ્રથમોદ્દેશે સામાન્યરૂપેનાત્મનઃ સ્વરૂપં નિરૂપિતમ્, તસ્યૈવ વિશેષરૂપેણ બોધનાય દ્વિતીયોદ્દેશઃ પ્રારભ્યતે, તસ્યેદમાદિસૂત્રમ્—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ ।

તથા—ઇહ ‘પૂર્વભવસ્મૃતિરૂપં વિશિષ્ટં જ્ઞાનં ન ભવતિ કેષાંચિ’—દિતિ પ્રથમોદ્દેશે નિગદિતમ્, અથ તત્ કથં ન ભવતીતિ જિજ્ઞાસાયામુચ્યતે—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ ।

પ્રથમ અધ્યયનકા

દ્વિતીય ઉદ્દેશ ॥

પહેલે ઉદ્દેશ મેં સામાન્યરૂપસે આત્મા કે સ્વરૂપ કા નિરૂપણ કિયા ગયા હૈ । અબ વિશેષરૂપ સે આત્મા કા સ્વરૂપ સમજાને કે ઉદ્દેશ્ય સે દૂસરા ઉદ્દેશ આરંભ કિયા જાતા હૈ, ઉસકા યહ આદિસૂત્ર હૈ—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ ।

તથા—પહેલે ઉદ્દેશમેં બતલાયા ગયા થા કિ—કિન્હી—કિન્હીં જીવોં કો પૂર્વ ભવ કા સ્મરણરૂપ વિશિષ્ટ જ્ઞાન નહીં હોતા । વહ જ્ઞાન ક્યોં નહીં હોતા ? એસી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈ—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ ।

પહેલા અધ્યયનના - બીજો ઉદ્દેશ.

પહેલા ઉદ્દેશમાં સામાન્યરૂપથી આત્માના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે. હવે વિશેષરૂપથી આત્માનું સ્વરૂપ સમજાવવાના ઉદ્દેશથી બીજા ઉદ્દેશનો આરંભ કરવામાં આવે છે, તેનું આ આદિસૂત્ર છે—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ.

તથા—પહેલા ઉદ્દેશમાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે—કોઈ—કોઈ જીવોને પૂર્વ-ભવના સ્મરણરૂપ વિશિષ્ટ-ઉત્તમ અસાધારણ જ્ઞાન થતું નથી. તે જ્ઞાન કેમ થતું નથી ? એવી જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે—‘અદ્વૈ’ ઇત્યાદિ.



તથા-અયમાત્મા પરિજ્ઞાતકર્મતયા સકલસાવધક્રિયાનિવૃત્તઃ સન્ મુનિ-  
ર્ભવતીત્યુપદિષ્ટમ્, અથ યઃ પુનરપરિજ્ઞાતકર્મા સ સ્વલુ કીદશો ભવતીત્યાકાઙ્ક્ષા-  
યામાહ-‘અદૃ’ ઇત્યાદિ ।

અદૃ લોપ પરિજુણે દુસ્સંબોધે અવિજાણે, અસ્મિં લોપ પવ્વહિં તત્થ તત્થ  
પુદો પાસ, આતુરા અસ્મિં પરિતાવેતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—

આર્તઃ લોકઃ પરિદૂનઃ ( પરિજીર્ણઃ ) દુઃસંબોધઃ અવિજ્ઞાનકઃ અસ્મિન્ લોકે  
પ્રવ્યથિતે તત્ર તત્ર પૃથક્ પશ્ય, આતુરા અસ્મિન્ પરિતાપયન્તિ ॥ સૂ. ૧ ॥

તથા-યહ કહા જા ચુકા હૈ કિ આત્મા કર્મોં કા સ્વરૂપ સમજ કર, ઓર સમસ્ત  
સાવધ વ્યાપારોં સે વિરત હો કર મુનિ હો જાતા હૈ, મગર જિસને કર્મોં કા સ્વરૂપ નહીં  
સમજા હૈ, ઉસ આત્મા કી કૈસી સ્થિતિ હોતી હૈ ? એસી જિજ્ઞાસા હોને પર કહતે હૈ—  
‘અદૃ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—( કર્મબંધ કા સ્વરૂપ ન સમજને વાલા ) આર્ત લોક પરિજીર્ણ હૈ—અસમર્થ  
હૈ, બોધ પાને મે અશક્ત હૈ, અજ્ઞાન હૈ, ઇસ લોક મેં વ્યથિત હૈ, પૃથક્-પૃથક્ જીવોં કો  
દેસો । વે આતુર-અજ્ઞાની-હોકર જીવોંકો પરિતાપ પહુંચાતે હૈ ॥ ૧ ॥

તથા-એ પ્રમાણે કહી ચૂક્યા છીએ કે આત્મા કર્મોના સ્વરૂપને સમજીને અને  
સમસ્ત સાવધ વ્યાપારોથી વિરત (ફર) થઈને મુનિ થઈ જાય છે, પણ જેઓ કર્મોના  
સ્વરૂપને સમજ્યા નથી તે આત્માની સ્થિતિ કેવી થાય છે ? એવી જિજ્ઞાસા થવાથી  
કહે છે:-‘અદૃ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—(કર્મબંધના સ્વરૂપને નહીં સમજવાવાળા) આર્તલોક પરિજીર્ણ છે.  
અસમર્થ છે. બોધ પામવામાં અશક્ત છે. અજ્ઞાન છે. આ લોકમાં દુઃખી છે. જુદા-જુદા  
જીવોને જુદો તે આતુર-અજ્ઞાની થઈને જીવોને પરિતાપ પહોંચાડે છે. (૧)

## ટીકા-

લોકઃ=પૃથિવ્યાદિષડ્જીવનિકાયઃ    સ્વલુ    જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મબન્ધ-  
 હેતુભૂતસાવધક્રિયાવિશેષસ્વરૂપાનવબોધેન    આર્તઃ=વિષયસુખતૃષ્ણાવ્યાકુલો    ભવતિ ।  
 અત એવ પરિદ્યૂનઃ=શારીરમાનસાદિદુઃસ્વાનલસંતપ્તઃ । યદ્વા-પરિજીર્ણઃ=ક્ષાયોપશમિક-  
 માવાભાવેન    મોક્ષમાર્ગપ્રવૃત્તાવક્ષમઃ,    અત એવ-દુઃસંબોધઃ=બ્રહ્મદત્તવચ્ચરણકરણ-  
 શિક્ષાં    ગ્રહીતુમસમર્થઃ,    અત એવ અવિજ્ઞાનકઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનરહિતો    ભવતિ,    અત એવ  
 પૂર્વભવસ્મૃતિરૂપમપિ    વિશિષ્ટં    જ્ઞાનં    ન    ભવતીતિ    ભાવઃ । ‘પશ્ય’    ઇતિ    પદેન    શિષ્યેતિ  
 સંબોધનપદસ્યાધ્યાહારઃ—હે    શિષ્ય !    પ્રવ્યથિતે=પૂર્વોપાર્જિતકર્મોદયેન    ક્ષુધા-

ટીકાર્થ—લોક અર્થાત્ પૃથિવીકાય આદિ છ પ્રકાર કે જીવ, જ્ઞાના-  
 વરણ આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મો કે બન્ધકે કારણભૂત સાવધ વ્યાપારોં કા સ્વરૂપ ન  
 સમજકર આર્ત હોતે હૈં—વિષયસુખ કી તૃષ્ણા સે વ્યાકુલ હોતે હૈં । અતએવ વે શારીરિક ઔર  
 માનસિક દુઃસ્વોં કી આગ સે સંતપ્ત હૈં । અથવા ક્ષાયોપશમિક ભાવોં કે અભાવ કે કારણ  
 મોક્ષમાર્ગ મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કર સકતે । ઈસી કારણ વે બ્રહ્મદત્ત કી તરહ ચરણ ઔર  
 કારણ કી શિક્ષા લેને મેં મી અસમર્થ હૈં । એસે જીવ અવિજ્ઞાનક અર્થાત્ સમ્યગ્જ્ઞાન  
 સે રહિત હોતે હૈં, ઈસી કારણ ઉન્હેં પૂર્વ ભવ કી સ્મૃતિરૂપ વિશિષ્ટ ( જાતિસ્મરણ ) જ્ઞાન  
 મી નહીં હોતા ।

‘પશ્ય’ (દેલો) ઈસ પદ કે દ્વારા શિષ્ય કે સંબોધન કા અધ્યાહાર કિયા  
 ગયા હૈ । હે શિષ્ય ! પૂર્વોપાર્જિત કર્મોં કે ઉદય સે મૂલ, પ્યાસ, ત્રાસ, ઈષ્ટવિયોગ,

ટીકાર્થ—લોક અર્થાત્ પૃથ્વીકાય આદિ છ પ્રકારના જીવસમૂહ જ્ઞાનાવરણ  
 આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધના કારણે સાવધ વ્યાપારોના સ્વરૂપને નહિ સમજીને  
 આર્ત થાય છે. વિષય સુખની તૃષ્ણાથી વ્યાકુલ થાય છે. તે કારણથી તે શારીરિક  
 અને માનસિક દુઃખોની આગથી સંતપ્ત-ખૂળતપેલા છે. અથવા ક્ષાયોપશમિક ભાવોના  
 અભાવના કારણે મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરી શકતા નથી. એ કારણથી તે બ્રહ્મદત્તની  
 પેઠે ચરણ અને કરણની શિક્ષા લેવામાં પણ અસમર્થ છે, એવા જીવ અવિજ્ઞાનક  
 અર્થાત્ સમ્યગ્જ્ઞાનથી રહિત હોય છે. આ કારણથી તેને પૂર્વભવની સ્મૃતિરૂપ વિશિષ્ટ  
 (જાતિસ્મરણ) જ્ઞાન પણ થતું નથી.

‘પશ્ય’ (દેખો-જુવો) આ પદથી શિષ્યના સંબોધનનું અધ્યાહાર કરવામાં  
 આવ્યું છે; હે શિષ્ય ! પૂર્વોપાર્જિત કર્મોના ઉદયથી ભૂખ, તરસ, ત્રાસ, ઈષ્ટવિયોગ,

पिपासा-त्रास-प्रियवियोगा-ऽऽधि-व्याधि-परिपीडिते, अस्मिन् लोके तत्र-तत्र=सर्व प्राणिषु पृथक्=प्रत्येकं पश्य । आतुराः=विषयसुखतृष्णाव्याकुला अज्ञानिनः अस्मिन् लोके परितापयन्ति=पृथिव्यादिजीवान् परिपीडयन्ति, इति पश्येत्यर्थः ।

यद्वा-लोकः-षड्जीवनिकायः, आर्तः=परिपीडितः अस्तीति शेषः । कुतः कारणाद् आर्तः ? इत्यत आह-‘परिजृण्णे’ इति । यतः परिजृर्णः=मोक्ष मार्गप्रवृत्तावक्षमः । कथं परिजृर्णः ? इत्यत आह-‘दुस्संबोधे’ इति, यतो दुःसंबोधः ब्रह्मदत्तचरणकरणशिक्षां ग्रहीतुमसमर्थः । दुःसंबोधः कुतोऽस्ती ?-त्यत आह-यतः-अविज्ञानकः=विज्ञानरहितः, पूर्वभवार्जितघोरतरहिंसादिदुरितकर्म-

मानसिक पीडा, शारीरिक पीडा आदि से पीडित इस लोक में जहाँ पृथक्-पृथक् प्राणियों को देखो । वे विषयसुख के लिए व्याकुल एवं ज्ञानहीन हो कर संसार में संताप भोग रहे हैं । वे पृथिवीकाय आदि जीवों को पीडा पहुंचाते हैं (यह देखो) ।

अथवा-षड्जीवनिकायरूप यह लोक आर्त है-पीडा भुगत रहा है । यह किस कारण से आर्त है ? इस प्रश्न का उत्तर यह है कि-वह परिजृर्ण अर्थात् मोक्षमार्ग में प्रवृत्ति करने में असमर्थ है । यह परिजृर्ण क्यों है ? इस का समाधान यह है कि-वह दुःसंबोध है अर्थात् ब्रह्मदत्त की भाँति चरण-करण की शिक्षा ग्रहण करने में अशक्त है । वह दुःसंबोध क्यों है ? इस का कारण यह है कि-वह ज्ञानहीन है अर्थात् पूर्वभवं में उपार्जन किये हुए घोरतर हिंसा आदि पापकर्मोंके वश हो कर एवं अत्यन्त

मानसिक पीडा, शारीरिक पीडा, आदिथी पीडित आ लोकમાં ન્યાં-ત્યાં જૂદા-જૂદા પ્રાણીઓને જુઓ, તે વિષયસુખ માટે વ્યાકુલ એવં જ્ઞાનહીન થઈને સંસારમાં સંતાપ ભોગવી રહ્યા છે. તે પૃથિવીકાય આદિ જીવોને પીડા પહોંચાડે છે. તે જુઓ.

અથવા ષડ્જીવનિકાયરૂપ આ લોક આર્ત છે-પીડા ભોગવી રહ્યા છે. તે શું કારણથી આર્ત છે ? આ પ્રશ્નનો ઉત્તર એ છે કે-તે પરિજૂર્ણ અર્થાત્ મોક્ષ માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ કરવાને અસમર્થ છે. તે પરિજૂર્ણ શા માટે છે ? તેનું સમાધાન એ છે કે-તે દુઃસંબોધ છે, અર્થાત્ બ્રહ્મદત્તની પ્રમાણે ચરણ-કરણની શિક્ષા ગ્રહણ કરવામાં અશક્ત છે. તે દુઃસંબોધ શા માટે છે ? તેનું કારણ એ છે કે-તે જ્ઞાનહીન છે. અર્થાત્ પૂર્વભવમાં ઉપાર્જન કરેલા ઘોરતર હિંસા આદિ પાપકર્મોને વશ થઈને, એમ-એ પ્રમાણે



વશતઃ પ્રગાઢમિથ્યાત્વમોહનીયોદયાત્ પ્રગાઢમોહાક્રાન્ત ઇત્યર્થઃ । એવં સ્વકર્મવશતઃ પરિપીડિતમપિ નિતાન્તદયનીયમપિ રાગદ્વેષમોહાન્ધાઃ પરિતાપયન્તીત્યાહ-અસ્મિન્ લોકે' ઇત્યાદિ । અસ્ય વ્યાખ્યા પૂર્વવત્ બોધ્યા ।

‘પશ્ય’ ઇતિ પદેન ભાગવતા માં સંબોધ્ય યથોપદિષ્ટં તથા કથયામીતિ જમ્બૂસ્વામિનં શ્રીસુધર્મા સ્વામી પ્રતિબોધયતિ ।

‘પ્રવ્યથિતે’ ઇતિ વિશેષણપદં ચ સ્વસ્વકર્મણૈવ નાનાવિધવેદના-સમન્વિતાનામપિ પૃથિવ્યાદિષડ્જીવનિકાયાનાં પરિપીડને વિષયસુખતૃષ્ણાક્રાન્તાના-

ગાઢે મિથ્યાત્વમોહનીય કે ઉદય સે મોહયુક્ત હૈ । ઇસ પ્રકાર અપને કર્મોં સે પીડિત ઔર અત્યન્ત દયનીય પૃથ્વીકાય આદિ જીવોં કો રાગ-દ્વેષ ઔર મોહ સે અન્ધે પુરુષ પીડા પહુંચાતે હૈ । ‘અસ્મિન્ લોકે’-( ઇસ લોક મેં ) ઇત્યાદિ કી વ્યાખ્યા પહેલે કે સમાન સમન્ન લેના ચાહિયે.

‘પશ્ય’ ( દેખો ) ઇસ પદ સે શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામી સે કહતે હૈં કિ-મુકે સંબોધન કરકે ભગવાન્ ને જૈસા ઉપદેશ દિયા હૈ વૈસા હી મૈં કહતા હૂં ।

‘પ્રવ્યથિતે’ પદ સે યહ સૂચિત કિયા ગયા હૈ કિ-વેચારે ષટ્કાય કે જીવ અપને-અપને કર્મોં કે કારણ નાના પ્રકાર કી વેદનાઈ ભોગ હી રહે હૈં, ઇસ પર મી વિષય-સુખ કે લોહુપ લોગ ઉન્હેં ઔર સતાતે હૈં । ઉન્હેં દુઃખી દેખ કર મી ઇન્કે

અત્યન્ત ગાઢા મિથ્યાત્વમોહનીયના ઉદયથી મોહયુક્ત છે. એ પ્રકારે પોતાના કર્મોથી પીડિત અને અત્યન્ત દયાપાત્ર પૃથ્વીકાય આદિ જીવોને રાગ-દ્વેષ અને મોહથી અંધ થયેલ પુરુષ પીડા પહોંચાડે છે ‘અસ્મિન્ લોકે’ (આ લોકમાં) ઇત્યાદિની વ્યાખ્યા પ્રથમ પ્રમાણે સમજી લેવી જોઈએ.

‘પશ્ય’ ( જુઓ ) આ પદથી શ્રી સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે કે:- મને સંબોધન કરીને ભગવાને જેવો ઉપદેશ આપ્યો છે તેવોજ હું કહું છું.

‘પ્રવ્યથિતે’ પદથી એ સૂચિત કરવામાં આવે છે કે:-બિચારા ષટ્કાયના જીવ પોત-પોતાના કર્મોના કારણે નાના પ્રકારની વેદનાઓ ભોગવી જ રહ્યા છે. તે ઉપરાંત પણ વિષય-સુખના લોહુપ માણસો. તેને વધારે સતાવે છે. તેને દુઃખી જોઈને પણ

માતુરાણાં હૃદયં મનાગપિ ન દ્રવતિ; પ્રત્યુત મૃગાન્ ક્ષુધિતવ્યાગ્ર ઇવ તે પૃથિવ્યાદિ-  
પ્રાણિગણં પ્રણિઘ્નન્તિ, ઇતિ સંસૂચયતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

તત્ર ષડ્જીવનિકાયરૂપે લોકે પ્રાથમ્યાત્ પૃથિવીકાયસ્યાધિકારમાહ-‘ સંતિ  
પાણા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

સંતિ પાણા પુઢો સિયા લજ્જમાણા પુઢો પાસ । અણગારામો-ત્તિ એ  
પવયમાણા જમિણં વિરૂપરૂવેહિં સત્થેહિં પુઢવિકમ્મસમારંભેણં પુઢવિસત્થં સમારંભમાણા  
અણો અણેગરૂવે પાણે વિહિંસઙ્ ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—

સન્તિ પ્રાણાઃ પૃથક્ શ્રિતાઃ લજ્જમાનાઃ પૃથક્ પશ્ય । અનગારાઃ સ્મ ઇતિ એકે  
પ્રવદમાનાઃ, યદિદં વિરૂપરૂપૈઃ શસ્ત્રૈઃ પૃથિવીકર્મસમારમ્ભેણ પૃથિવીશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણા  
અન્યાન્ અનેકરૂપાન્ પ્રાણાન્ વિહિંસન્તિ ॥ ૨ ॥

મન મેં દયા નહીં આતી, પ્રત્યુત મૂઝા વાઘ જૈસે મૃગોં કો મારતા હૈં ઉસી પ્રકાર વિષય-  
લોહુપ લેગ ઉન જીવોં કી હિંસા કરતે હૈં ॥ સૂ. ૧ ॥

ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક મેં પૃથ્વીકાય પહલા હૈ, અતઃ પૃથ્વીકાય કા અધિકાર  
કહતે હૈં-‘ સંતિ પાણા ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—પૃથ્વી મેં અલગ-અલગ પ્રાણી હૈં । પૃથ્વીકાય કે આરંભ કી નિવૃત્તિ કરને  
વાલોં ( મુનિયોં ) કો પૃથક્ સમજો । ‘ હમ અનગાર હૈં ’ ઇસ પ્રકાર કહનેવાલે દ્રવ્યલિંગી નાના  
પ્રકાર કે પૃથ્વીશસ્ત્રોં સે પૃથ્વીકર્મ કા સમારમ્ભ કરકે પૃથ્વીશસ્ત્ર કા સમારમ્ભ કરતે હુણ  
અનેક પ્રકાર કે અન્ય પ્રાણિયોં કી મી હિંસા કરતે હૈં ॥ સૂ. ૨ ॥

તેના મનમાં દયા આવતી નથી, પરંતુ ભૂખ્યો વાઘ જેમ મૃગોને મારે છે, તે પ્રમાણે  
વિષય-લાલુપ લોક તે જીવોની હિંસા કરે છે. (૧)

ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકમાં પૃથ્વીકાય પ્રથમ છે, તે કારણથી પૃથ્વીકાયનો  
અધિકાર કહે છે-‘ સંતિ પાણા ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—પૃથ્વીમાં અલગ-અલગ પ્રાણી છે. પૃથ્વીકાયના આરંભની નિવૃત્તિ  
કરવાવાળા ( મુનિયો ) ને જૂદા જાણો. પરંતુ ‘ અમે અનગાર-સાધુ મુનિ છીએ. ’ આ  
પ્રકારનું કહેવાવાળા દ્રવ્યલિંગી ( વેષ ધારણ કરનારા ) નાના-પ્રકારના શસ્ત્રોથી પૃથ્વી  
કર્મનો સમારંભ કરીને પૃથ્વીશસ્ત્રનો આરંભ કરતા થકા અનેક પ્રકારના અન્ય  
પ્રાણીઓની પણ હિંસા કરે છે. (૨)

## ટીકા—

પ્રાણાઃ=પ્રાણાઃ સન્તિ યેષામિત્યર્થઽચૂત્યયઃ, પ્રાણિનિત્યર્થઃ । પૃથક્=ભિન્નભિન્નતયા શ્રિતાઃ=સ્વસ્વશરીરાધિષ્ઠિતાઃ સન્તિ । યદ્વા-શ્રિતાઃ-પૃથિવ્યાશ્રિતાઃ=અઙ્ગુલાસંખ્યાતભાગપ્રમાણસ્વશરીરાવગાહિનઃ પૃથિવ્યામવસ્થિતાઃ પૃથિવીકાયિકાઃ, પ્રાણાઃ=જીવાઃ, પૃથક્=પૃથગ્ભાવેન સન્તિ, ઇતિ પશ્ય । ઇદમુક્તં ભવતિ-પૃથિવ્યા એકદેવતારૂપત્વં મન્યમાના ભ્રાન્તાઃ, વસ્તુતસ્તુ પ્રત્યેકશરીરરૂપાણામસંખ્યાત-પૃથિવીકાયિકજીવાનાં સમુદાયઃ પૃથિવી । એવં ચ પૃથિવી સચ્ચિતાઽનેકજીવાધિષ્ઠિતા ચેતિ ।

અથ દ્વારપ્રદર્શનેન વસ્તુસ્વરૂપં સમ્યગ્ નિર્ણયતે તસ્માદ્ દ્વારણિ

ટીકાર્થ—પ્રાણ કા અર્થ હૈ પ્રાણી । પ્રાણી પૃથક્-પૃથક્ આશ્રિત હૈં અર્થાત્ અલગ-અલગ પ્રાણી અપને-અપને શરીર મૈં રહતે હૈં । અથવા ‘શ્રિત’ કા અર્થ હૈ-પૃથ્વી મૈં આશ્રિત । અંગુલ કૈ અસંખ્યાતવૈં ભાગ અવગાહના વાલૈ જીવ પૃથ્વી-આશ્રિત હૈં, ંસૈ પૃથ્વીકાય કૈ જીવ પૃથક્-પૃથક્ હૈં । યહ દૈસો । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પૃથ્વી કો ંક હી દૈવતા માનને વાલૈ લોગ ભ્રમ મૈં હૈં । વાસ્તવ મૈં પૃથ્વી પ્રત્યેક શરીર વાલૈ અસંખ્યાત પૃથ્વીકાયિક જીવોં કા પિંડ હૈ । ંસી પ્રકાર પૃથ્વી સચ્ચિત્ત હૈ ંર ંનેક જીવોં સૈ અધિષ્ઠિત હૈ ।

દ્વારોં કૈ પ્રદર્શન સૈ વસ્તુ કા સ્વરૂપ સ્પષ્ટ હો જાતા હૈ, અતઃ યહૌં દ્વાર

ટીકાર્થ—પ્રાણુનો અર્થ પ્રાણી છે. પ્રાણી પૃથક્-પૃથક્ આશ્રિત છે, અર્થાત્ અલગ-અલગ પ્રાણી પોત-પોતાના શરીરમાં રહે છે. અથવા ‘શ્રિત’નો અર્થ છે. ‘પૃથ્વીમાં આશ્રિત’ આંગણના અસંખ્યાતમાં ભાગની અવગાહનાવાળા એ જીવ પૃથ્વી-આશ્રિત છે. એવા પૃથ્વીકાયના જીવ જૂદા-જૂદા છે તે જુઓ.

તાત્પર્ય એ છે કેઃ—પૃથ્વીને એક જ દેવતા માનવાવાળા લોક ભ્રમમાં છે વાસ્તવિક રીતે તો પૃથ્વી પ્રત્યેક શરીરવાળા અસંખ્યાત પૃથ્વીકાયિક જીવોનો પિંડ છે. આ પ્રમાણે પૃથ્વી સચ્ચિત્ત છે, અને અનેક જીવોથી અધિષ્ઠિત છે.

દ્વારોના પ્રદર્શનથી વસ્તુનું સ્વરૂપ સ્પષ્ટ થઈ જાય છે; એટલે અહિં દ્વાર બતાવ-



પ્રદર્શ્યન્તે—(૧) લક્ષણ, (૨) પ્રરૂપણા, (૩) પરિમાણ, (૪) વધઃ, (૫) શસ્ત્રમ્, (૬) ઉપભોગઃ, (૭) વેદના, (૮) નિવૃત્તિશ્ચેત્યષ્ટૌ । ઉક્તઞ્ચ—

“લક્ષણ ૧ પ્રરૂપણા ૨ રૂપલુ, પરિમાણ ૩ વહ ૪ તદેવ સત્થં ૫ ચ । ઉપભોગ ૬ વેયણાવિ ૭ ય, નિવૃત્તી ૮ અટ્ટ દારાઈ ॥ ૧ ॥”

(૧) લક્ષણદ્વારમ્—

નનુ પૃથિવી સચેતનાઽસ્તીત્યત્ર કિં પ્રમાણમ્ ? ઉચ્યતે—અનુમાનમેવ તાવત્પ્રથમં ગૃહાણ । પૃથિવી સચેતના તદધિષ્ઠિતશરીરોપલબ્ધેઃ, ગવાશ્વાદિવત્ ।

વતલાયે જાતે હૈં—(૧) લક્ષણ, (૨) પ્રરૂપણા, (૩) પરિમાણ, (૪) વધ, (૫) શાસ્ત્ર, (૬) ઉપભોગ, (૭) વેદના, ઓર (૮) નિવૃત્તિ । યે આઠ દ્વાર હૈં । કહા મી હૈ—

“લક્ષણ ૧ પ્રરૂપણા ૨ રૂપલુ, પરિમાણ ૩ વહ ૪ તદેવ સત્થં ચ ૫ । ઉપભોગ ૬ વેયણાવિ ૭ ય, નિવૃત્તી ૮ અટ્ટ દારાઈ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, વધ, શાસ્ત્ર, ઉપભોગ, વેદના ઓર નિવૃત્તિ, યે આઠ દ્વાર કહે ગયે હૈ । ॥ ૧ ॥

શંકા—પૃથ્વી સજીવ હૈં ઇસ વિષયમેં કયા પ્રમાણ હૈ ?

સમાધાન—પહેલે અનુમાન પ્રમાણ હી લીજિય—પૃથ્વી સચેતન હૈ, કયોં કિ ઉસમેં ચેતના સે અધિષ્ઠિત શરીર કી ઉપલબ્ધિ હોતી હૈ, ગાય ઓર અશ્વ કે સમાન ।

વવામાં આવે છે કે—(૧) લક્ષણ, (૨) પ્રરૂપણા, (૩) પરિમાણ, (૪) વધ, (૫) શસ્ત્ર, (૬) ઉપભોગ, (૭) વેદના અને (૮) નિવૃત્તિ, આ આઠ દ્વાર છે. કહ્યું પણ છે કે—

“લક્ષણ ૧ પ્રરૂપણા ૨ રૂપલુ, પરિમાણ ૩ વહ ૪ તદેવ સત્થં ચ ૫ । ઉપભોગ ૬ વેયણાવિ ૭ ય, નિવૃત્તી ૮ અટ્ટ દારાઈ ॥ ૧ ॥” ઇતિ ।

“લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, વધ, શસ્ત્ર, ઉપભોગ વેદના અને નિવૃત્તિ. આ આઠ દ્વાર કહ્યા છે.” (૧)

(૧) લક્ષણદ્વાર—

શંકા:—પૃથ્વી સજીવ છે, એ વિષયમાં શું પ્રમાણ છે ?

સમાધાન:—પ્રથમ અનુમાન પ્રમાણને લઈએ—પૃથ્વી સચેતન છે. કારણ કે તેમાં ચેતનાથી અધિષ્ઠિત શરીરની ઉપલબ્ધિ થાય છે. ગાય અને અશ્વની સમાન.

કિંચ-જીવસ્ય યાનિ લક્ષણાનિ તાનિ પૃથ્વીકાયસ્ય સન્તિ, કેવલમત્રસ્ત્યાનર્દિના-મદર્શનાવરણકર્મોદયાદુપયોગશક્તિર્જ્ઞાનદર્શનરૂપા નાસ્તિ વ્યક્તા इत्यव्यक्तरूपेणोपयोगો वर्तते । तथौदारिक-तन्मिश्र-कर्मणशरीरात्मकः काययोगो वृद्धयष्टिवत् तस्यालम्बनाय वर्तते । तथा मानसिकचिन्ताविशेषवत्सूक्ष्मा आत्मपरिणामविशेषरूपा अध्यवसाया-स्तत्र सन्ति । तथा साकारोपयोगान्तर्गतमतिश्रुतरूपमज्ञानद्वयं च तत्रास्ति । तथा स्पर्शनेन्द्रियमात्रस्य सद्भावादचक्षुर्दर्शनं च । तथा सेवार्त्तसंहननं, चन्द्रमसूर-संस्थानं वास्ति । तथा-मिथ्यात्वादिसद्भावादष्टविधकर्मबन्धोऽपि । कृष्णनील-

દૂસરી બાત યહ હૈ કિ-જીવ કે જો લક્ષણ હૈં વે સબ પૃથ્વી મેં પાયે જાતે હૈં । હાં, પૃથ્વીકાય મેં સ્ત્યાનર્દિનામક દર્શનાવરણ કર્મ કે ઉદય સે જ્ઞાન-દર્શનરૂપ ઉપયોગશક્તિ પ્રકટરૂપ મેં નહીં હૈ । પૃથ્વી મેં અવ્યક્તરૂપ સે ઉપયોગ રહતા હૈ ।

તથા ઔદારિક ઔદારિકમિશ્ર ઔર કાર્મણ શરીરરૂપ કાયયોગ વૃદ્ધપુરુષ કો લકડીકે સમાન ઉસ કે આલમ્બન કે લિષ્ વિદ્યમાન હૈ । પૃથ્વી મેં આત્મા કે પરિણામ માનસિકચિન્તા-રૂપ અધ્યવસાય મી મૌજૂદ હૈ ।

પૃથ્વી મેં સાકાર-ઉપયોગ કે અન્તર્ગત મતિ ઔર શ્રત-અજ્ઞાન મી પાયે જાતે હૈં । અકેલી સ્પર્શનેન્દ્રિય હોને સે અચક્ષુદર્શન મી હૈ । ઔર સેવાર્ત સંહનન, ઈવં ચન્દ્રમસૂર સંસ્થાન મી હૈ । મિથ્યાત્વ આદિ કારણ વિદ્યમાન હોને સે આઠ પ્રકારકા કર્મબન્ધ હોતા હૈ । કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત ઔર તૈજસ યે ચાર લેશ્યાઈ મી પૃથ્વીકાય મેં હૈં ।

બીજી વાત આ છે કે-જીવના જે લક્ષણ છે તે સર્વ પૃથ્વીમાં જોવામાં આવે છે. હા. પૃથ્વીકાયમાં સ્ત્યાનર્દિનામક દર્શનાવરણીય કર્મના ઉદયથી જ્ઞાન-દર્શનરૂપ ઉપ-યોગશક્તિ પ્રકટ રૂપમાં નથી. પૃથ્વીમાં અવ્યક્ત રૂપમાં ઉપયોગ રહે છે.

તથા-ઔદારિક ઔદારિકમિશ્ર અને કાર્મણ શરીરરૂપ કાયયોગ વૃદ્ધપુરુષની લાકડી સમાન તેના આલમ્બન માટે વિદ્યમાન છે. પૃથ્વીમાં આત્માના પરિણામ, માનસિકચિન્તારૂપ અધ્યવસાય પણ મૌજૂદ છે.

પૃથ્વીમાં સાકાર ઉપયોગના અન્તર્ગત મતિ અને શ્રુત અજ્ઞાન પણ જોવામાં આવે છે. એકલી સ્પર્શનેન્દ્રિય હોવાથી અચક્ષુદર્શન પણ છે. અને સેવાર્ત સંહનન, એ પ્રમાણે ચન્દ્ર-મસૂર સંસ્થાન પણ છે.

મિથ્યાત્વ આદિ કારણ વિદ્યમાન હોવાથી આઠ પ્રકારનાં કર્મબન્ધ પણ થાય છે. કૃષ્ણ, નીલ, કાપોત, અને તૈજસ. આ ચાર લેશ્યાઓ પણ પૃથ્વીકાયમાં છે.

કાપોતૈજસલેશ્યાચતુષ્ટયં, સૂક્ષ્મપૃથિવીકાયસ્યાચલેશ્યાત્રયમ્ । તથા-આહારાદિ-  
સઙ્ગા અપિ । તથા-વેદનાકષાયમારણાન્તિકસમુદ્ઘાતાઽસઙ્ગિજ્ઞત્વં, નપુંસકવેદઃ । પર્યાપ્તિ-  
ચતુષ્ટયમ્ । તથા પૃથિવીકાયજીવા નિરન્તરં સતતમુચ્છૈસન્તિ નિઃશ્વસન્તિ ચ ।  
एवमुपयोगादिश्वासोच्छ्वासान्तर्जीवलक्षण समन्वितत्वान्મनुष્યવत्પૃથિવીસચિત્તાઽસ્તીતિ  
સિદ્ધમ્ ।

નનુ-ઉપયોગાદીનિ જીવલક્ષણાનિ પૃથિવીકાયજીવેષુ કચિન્નોપલભ્યન્તે, તથા  
સતિ-અસિદ્ધેનૈવ ઉપયોગાદિજીવલક્ષણેન કથં પૃથિવ્યાઃ સચિત્તત્વં સાધ્યતે ? ।

ઉચ્યતે-પૃથિવીકાયજીવેષુમાસન્તુમુવ્યક્તાન્યુપયોગલક્ષણાનિ, અવ્યક્તાનિ

સૂક્ષ્મ પૃથ્વીકાય મેં આદિ કી તીન લેશ્યાઈ હેં । આહાર આદિ સંજ્ઞાઈ મી ઉસમેં હેં ।

પૃથ્વી મેં વેદના કષાય ઔર મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત હેં, અસંજીપન હૈ, નપુંસક વેદ હૈ  
ઔર ચાર પર્યાપ્તિયાં મી હેં, પૃથ્વીકાય કે જીવ નિરન્તર શ્વાસોર્ચ્છ્વાસ લેતે રહતે હેં । ઇસ પ્રકાર  
ઉપયોગ સે લગાકર શ્વાસોર્ચ્છ્વાસ પર્યન્ત જીવ કે લક્ષણો સે યુક્ત હોને કે કારણ પૃથ્વી મનુષ્ય  
કે સમાન સચિત્ત હૈ, યહ બાત સિદ્ધ હુઈ ।

શઙ્કા-જીવ કે લક્ષણ ઉપયોગ વગેરહ પૃથ્વીકાય કે જીવોં મેં કહીં મી ઉપલબ્ધ નહીં  
હોતે । એસી સ્થિતિ મેં વહોં ઉપયોગ આદિ જીવ કે લક્ષણોં કા હોના અસિદ્ધ હૈ । અસિદ્ધ  
કથન સે પૃથ્વી કી સચિત્તતા કિસ પ્રકાર સિદ્ધ હો સકતી હૈ ?

સમાધાન-પૃથ્વીકાય કે જીવોં મેં મલીમૈતિ વ્યક્ત ઉપયોગ આદિ લક્ષણ મળે

સૂક્ષ્મપૃથ્વીકાયમાં આદિની ત્રણ લેશ્યાઓ છે. આહાર આદિ સંજ્ઞાઓ પણ તેમાં છે.

પૃથ્વીમાં વેદના, કષાય અને મારણાન્તિકસમુદ્ઘાત છે. અસંજીપણું છે. નપુંસક  
વેદ છે અને ચાર પર્યાપ્તિઓ પણ છે. પૃથ્વીકાયના જીવ નિરન્તર શ્વાસોર્ચ્છ્વાસ લેતા  
રહે છે. આ પ્રમાણે ઉપયોગથી લઈને શ્વાસોર્ચ્છ્વાસ પર્યન્ત જીવના લક્ષણોથી યુક્ત  
હોવાથી પૃથ્વી મનુષ્ય પ્રમાણે સચિત્ત છે. તે વાત સિદ્ધ થઈ.

શંકા-જીવનું લક્ષણ ઉપયોગ વગેરે પૃથિવીકાયના જીવોમાં કોઈ સ્થળે ઉપ-  
લબ્ધ થતાં નથી. એવી સ્થિતિમાં જ્યાં ઉપયોગ આદિ જીવના લક્ષણોનું હોવું તે  
નક્કી નથી. એ અસિદ્ધ કથનથી પૃથ્વીની સચિત્તતા કેવી રીતે સિદ્ધ થઈ શકે છે ?

સમાધાન-પૃથિવીકાયના જીવોમાં સારી રીતે (સ્પષ્ટ) વ્યક્ત ઉપયોગ આદિ



તુ તત્ર સન્ત્યેવ, યથા—કસ્યચિન્મનુષ્યસ્ય અત્યુત્કટમદિરાતિપાનજનિત-  
પિત્તોદયમૂર્છિતસ્ય ચેતનાયા અવ્યક્તત્વેઽપિ ન તસ્યાચિત્તરૂપતા વિજ્ઞાયતે, એવં  
પૃથિવીકાયજીવેષ્વવ્યક્તચેતના સંભવતિ ।

ન ચાવ્યક્તચેતનાઽભિવ્યક્તમુચ્છવાસાદિકં મદ્યમૂર્છિતમનુષ્યસ્ય સચિત્ત-  
ત્વમાવેદયતિ, ઇહ તુ ન કિંચિચ્ચેતનાલક્ષણં લક્ષ્યતેતિ વાચ્યમ્ ।

યથા મનુષ્યશરીરે ક્ષતસ્થાનં માંસાદિરિક્તમપિ પશ્ચાત્ક્ષતાદિનિવૃત્તૌ સ્વયં  
ધ્રિયતે, તથૈવ સ્વનિતં સ્વનિભૂમ્યાદિકં સજાતીયાવયવૈર્ધ્રિયમાણં દૃશ્યતે ।

હી ન હોં, મગર અવ્યક્તરૂપ મેં તો વિદ્યમાન હૈં હી । જૈસે કોઈ મનુષ્ય સ્વૂબ નસૈલી મદિરાકા  
ઢાંટકર પાન કર લે ઓર પિત્ત કે પ્રકોપ સે મૂર્છિત હો જાય તો ડસકો મી ચેતના અવ્યક્ત  
હો જાતી હૈ, ફિર મી ડસે અચિત્ત (અચેતન) નહીં કહા જા સકતા । ડસી પ્રકાર પૃથ્વીકાય  
કે જીવોં મેં અવ્યક્ત ચેતના હૈ ।

**શંકા**—અવ્યક્ત ચેતના કે બોધક ઉચ્છ્વાસ વગેરહ મદ્યમૂર્છિત મનુષ્ય કી સચિત્તા  
કો પ્રકટ કરતે હૈં; મગર યહાં (પૃથ્વીમેં) તો ચેતના કા કોઈ મી લક્ષણ નહીં દિસાઈ દેતા ।  
એસી સ્થિતિ મેં પૃથ્વી કી સચેતનતા કિસ પ્રકાર માની જાય ?

**સમાધાન**—જૈસે—મનુષ્ય કે શરીર મેં ઘાવ હો જાતા હૈ તો ડસ સ્થાન  
મેં માંસ આદિ નહીં રહતા । પશ્ચાત્ ઘાવ મિટ જાને પર વહ ભર જાતા હૈ । ડસી પ્રકાર  
સોદી હુઈ સ્વાન આદિ કી ભૂમિ અપને સજાતીય અવયવોં સે ભરજાતી દિસાઈ દેતી હૈ ।

લક્ષણુ લલે ન હોય, પરન્તુ અવ્યક્ત રૂપમાં તો વિદ્યમાન છેજ. જેમ કોઈ મનુષ્ય  
ખૂબ પેટભરીને ઘણા નીસાવાળી મદિરાનું પાન કરી લે અને પિત્તના પ્રકોપથી  
મૂર્છિત થઈ જાય તો તેની પણ ચેતના અવ્યક્ત થઈ જાય છે, એટલે તેને  
અચિત્ત કહી શકતા નથી. એ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયના જીવોમાં અવ્યક્ત ચેતના છે.

**શંકા**—અવ્યક્ત ચેતનાના બોધક તરીકે ઉચ્છ્વાસ વગેરે મનુષ્યની સચિત્તાને  
પ્રકટ કરે છે પરન્તુ અહિં (પૃથ્વીમાં) તો ચેતનાનું કોઈ પણ લક્ષણ જોવામાં આવતું  
નથી. એવી સ્થિતિમાં પૃથ્વીની સચેતનતા કેવી રીતે માની શકાય ?

**સમાધાન**—જેવી રીતે મનુષ્યના શરીરમાં ઘાવ—ઉંડા જખમ થઈ જાય છે તો  
તે સ્થાનમાં માંસ આદિ રહેતું નથી. પાછળથી ઘાવ રૂઝાઈ જતાં તે માંસથી ભરાઈ જાય  
છે. એ પ્રમાણે ખોદેલી ખાણની ભૂમિ પોતાના સજાતીય અવયવોથી ભરાઈ જાય છે.

एवं च मनुष्यवद् व्रणस्थानभरणरूपस्य चेतनालक्षणस्य पृथिवीकायेऽपि सत्त्वात् ।

यद्वा-पृथिवी સજીવા, દૈનિકઘર્ષણોપચયસંદર્શનાત્, ચરણતલવત્, તદ્યથા-ચરણતલં ઘૃષ્યતે પુણ્યતિ ચ, તદ્વત્ પૃથિવ્યપિ પ્રત્યહં ઘૃષ્યતે, ઉપચીયતે ચ; તસ્માત્તસ્યાઃ સજીવત્વમ્ ।

अथवा-विद्रुमपाषाणिरूपा पृथिवी सचेतना, काठिन्ये सत्यपि वृद्ध्यादि-दर्शनात्, शरीरस्थितास्थ्यादिवत् । तद्यथा-शरीरस्थितमस्थ्यादिकं कमठपृष्ठकठिनं सदपि चित्तवदनुभूयमानमुपचयं च गच्छत् सदृश्यते । एवं विद्रुमशिलाद्यात्मिकायाः

इस प्रकार मनुष्य के समान घाव का भरना भी चेतना का एक लक्षण है, और वह पृथ्वी कायमें विद्यमान है ।

अथवा-पृथ्वी सजीव है, क्यों कि उस में प्रतिदिन घिसना और उपचय होना देखा जाता है, पैर के तल की तरह । तात्पर्य यह है कि-जैसे पैर का तलभाग घिसता है और फिर पुष्ट हो जाता है, उसी प्रकार पृथिवी भी प्रतिदिन घिसती है और भरजाती है । अतः पृथिवी भी सजीव है ।

अथवा-मृंगा, पाषाण आदि रूप पृथ्वी सजीव है, क्यों कि उसमें कठिनता होने पर भी वृद्धि आदि देखी जाती है; जैसे शरीर की हड्डी आदि । तात्पर्य यह है कि जैसे शरीर की हड्डी आदि कलुषे की पीठ की माँति कठोर होने पर भी सचित्त माद्वम होती है और उपचय को प्राप्त होती हुई दिखाई देती है, इसी प्रकार मृंगा-शिला

તે પ્રમાણે મનુષ્યના સમાન ઘાવનું ભરાઈ જવું તે પણ એક ચેતનાનું લક્ષણ છે, અને તે પૃથ્વીકાયમાં વિદ્યમાન છે.

अथवा-पृथिवी સજીવ છે, કારણ કે તેમાં પ્રતિદિન ઘસાણું અને વધણું તે જોવામાં આવે છે, પગના તળીઆની પ્રમાણે. તાત્પર્ય એ છે કે-જેમ પગના તળીઆનો ભાગ ઘસાય છે અને ફરી પાછા પુષ્ટ થઈ જાય છે તે પ્રમાણે પૃથિવી પણ પ્રતિદિન ઘસાય છે અને ફરી પાછી ભરાઈ જાય છે, તેથી પૃથિવી પણ સજીવ છે.

अथवा-मुंगा (परवाणा) पाषाण आदिरेप पृथ्वी सजिव છે કેમકે-તેમાં કઠિનતા હોવા છતાંય પણ વૃદ્ધિ વગેરે જોવામાં આવે છે, જેવી રીતે શરીરના હાડકાં આદિ. તાત્પર્ય એ છે કે-જેવી રીતે શરીરના હાડકાં આદિ કાયબાની પીઠ જેવા કઠોર હોવા છતાંય પણ સચિત્ત માદ્વમ પડે છે, અને વૃદ્ધિને પ્રાપ્ત થતાં હોય તેમ દેખાય છે, તે

પૃથિવ્યાઃ કાઠિન્યે સત્યપિ વૃદ્ધ્યાદિકં પ્રત્યક્ષં દૃશ્યતે તસ્માત્તસ્યાઃ સચેતનત્વમ્ ।

અથ ચ-વિદ્રુમાદ્યાત્મિકા પૃથિવી સચિત્તા, છેદાદૌ તત્સજાતીયધાતુત્પત્તિ-દર્શનાત્, અર્શોઽકુરવત્ । તદ્યાથા-અર્શસોઽકુરે છિન્નેઽપિ પુનસ્તત્સમાન એવાકુરઃ પ્રાદુર્ભવતિ, એવં વિદ્રુમશિલાદ્યાત્મિકાયાઃ પૃથિવ્યાઃ સ્વન્યાદૌ છેદેઽપિ તત્સજાતીય-ધાતુભિસ્તદ્રિક્તભાગઃ પરિપૂર્યતે, તસ્માત્ સિદ્ધં પૃથિવ્યાઃ સચિત્તત્વમ્ ।

કિન્ન - યથા સાસ્નાવિષાણાદ્યવયવસંઘાતાનાં ગોમહિષ્યાદિશરીરાણાં છિન્ન-મિન્નો-ત્ક્ષિપ્ત-સ્પૃષ્ટ-દૃષ્ટ-દ્રવ્યત્વેન જીવશરીરત્વં, તથૈવ પૃથિવ્યાદીનાં પ્રત્યક્ષદૃષ્ટં

આદિરૂપ પૃથ્વી મેં, કઠિનતા હોને પર વૃદ્ધિ આદિ પ્રત્યક્ષ દિશ્વાઈ દેતા હૈ । ઇસ કારણ પૃથિવી સચિત્ત હૈ ।

અથવા-મૂંગા આદિ પૃથ્વી સચિત્ત હૈ, ક્યોં કિં ઉસકા છેદન હોને પર વહાં ઉસી કી સજાતીય ધાતુ ઉત્પન્ન હોતી હૈ, અર્શ (મરસા) કે અંકુર કે સમાન, જૈસે અર્શ કે અંકુર એકવાર કાટ દેને પર મી ફિર વહાં ઉસી જાતિ કે અંકુર ઉત્પન્ન હો જાતે હૈ, ઉસી પ્રકાર મૂંગા-શિલા આદિ રૂપ પૃથિવી કા સ્થાન આદિ મેં છેદન કર દેને પર મી ઉસી કી સજાતીય ધાતુઓં સે યહ સ્થાન ભર જાતા હૈ, અતઃ પૃથિવી કી સચિત્તતા સિદ્ધ હુઈ ।

ઔર મી લીજિયે-જૈસે સાસ્ના (ગાયકે ગલે મેં લટકને વાલી ચમડી) સીંગ આદિ અવયવોં કા સમુદાયરૂપ ગાય, મૈંસ આદિ કે શરીર છિન્ન, મિન્ન, ઉત્ક્ષિપ્ત, સ્પૃષ્ટ, દૃષ્ટ ઔર દ્રવ્યત્વ કે કારણ જીવ કે શરીર હૈ, ઇસી પ્રકાર પૃથિવી આદિ મેં પ્રત્યક્ષ સે

પ્રમાણે મૂંગા (પરવાણાં) શિલા આદિ રૂપ પૃથ્વીમાં કઠિનતા હોવા છતાંય પણ વૃદ્ધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવે છે, આ કારણથી પૃથ્વી સચિત્ત છે.

અથવા-મૂંગા (પરવાણાં) આદિ પૃથ્વી સચિત્ત છે. કેમકે-તેનું છેદન થવાથી ત્યાં તેની સજાતીય ધાતુ, ઉત્પન્ન થાય છે, અર્શ (મરસા)ના અંકુર પ્રમાણે, જેમ અર્શના અંકુર એકવાર કાપી નાખવા છતાંય પણ ફરીથી ત્યાં તે જાતિનો અંકુર ઉત્પન્ન થાય છે, તે પ્રમાણે મૂંગા-શિલા આદિરૂપ પૃથ્વિનું પણ આદિમાં છેદન કરી દેવા છતાંય પણ તેની સજાતીય ધાતુઓથી તે ખાલી સ્થાન ભરાઈ જાય છે, તે કારણથી પૃથ્વીની સચિત્તતા સિદ્ધ થઈ.

પીળું પણ પ્રમાણ લઈએ, જેમ સાસ્ના (ગાયના ગળામાં લટકવાવાળી ચામડી) સીંગ આદિ અવયવોના સમુદાયરૂપ-ગાય, ભેંસ આદિના શરીર છિન્ન, ભિન્ન, ઉત્ક્ષિપ્ત, સ્પૃષ્ટ, દૃષ્ટ, અને દ્રવ્યત્વના કારણથી જીવનું શરીર છે, તે પ્રમાણે પૃથ્વી આદિમાં પ્રત્યક્ષ



છિન્નત્વાદિકમપલપિતું ન શક્યતે, તસ્માત્પૃથિવ્યાદીનામપિ જીવશરીરત્વં સિદ્ધયતિ ।  
જીવશરીરત્વેન નિરૂપિતત્વાच्च पृथिव्यादीनामपि करचरणसंघातानामिव कदाचित्तैतन्यं  
સિદ્ધયતિ, નતુ સર્વથા શાશ્વતિકનિર્જીવત્વં તેષાં સંભવતિ, કદાચિદચિત્તત્વમપિ  
શસ્ત્રોપહતત્વાદેવ ભવતિ કરચરણાદિવદિતિ ।

પૃથિવ્યાઃ સચિત્તત્વેऽનેકજીવાધિષ્ઠિતત્વે चागमोऽपि प्रमाणम् । तथाहि—  
“પુઢવી ચિત્ત મંતમક્ષાયા અગેગજીવા પુઢોસત્તા, અન્નત્થ સત્થપરિણણ” (દશ. ૪ અ.)

પૃથિવી ચિત્તવતી=સજીવા-આશ્રયાતા=ભગવતા કથિતા અનેકજીવા=

દિશ્વાઈ દેને વાલી છિન્નતા આદિ કા અપલાપ નહીં ક્રિયા જા સકતા, અતઃ પૃથિવી આદિ  
જીવ કે શરીર હૈં, ઇસ પ્રકારકા નિરૂપણ કરને સે હાથ પૈર કી તરહ ઁન મૈં મી કિસી  
સમય ચૈતન્ય કા અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોતા હૈ, ઁનકી સદૈવ ઔર સર્વથા નિર્જીવતા સિદ્ધ નહીં હો  
સકતી । પૃથિવી આદિ કદાચિત્ નિર્જીવ હોતી હૈ સો ઁસકા કારણ શસ્ત્ર કા ઉપઘાત હૈ ।  
શસ્ત્ર કે પ્રયોગ સે જૈસે હાથ-પૈર આદિ અવયવ નિર્જીવ હો જાતે હૈં ઁસી પ્રકાર પૃથ્વી મી  
નિર્જીવ હો જાતી હૈ ।

પૃથ્વી સચિત્ત હૈ ઔર અનેક જીવો સે અધિષ્ઠિત હૈ, ઇસ વિષય મૈં આગમપ્રમાણ મી  
હૈ વહ ઇસ પ્રકાર—“પૃથ્વી સચિત્ત કહી ગઈ હૈ ઁસમૈં અનેક જીવ હૈં ઔર ઁન સબ કી સત્તા  
પૃથક્-પૃથક્ હૈ, -શસ્ત્રપરિણત પૃથ્વી કો છોડકર ” ( દશ. ૪. અ. )

અર્થાત્-પૃથ્વી સજીવ હૈ, ઁસા ભગવાનને કહા હૈ । ઁસ મૈં અનેક ઁકેન્દ્રિય જીવ હૈં ।

દેખાઈ આવે તેવી છિન્નતા આદિનો અપલાપ (છતી વસ્તુ દેખાય તે ના કહેવી કે  
નથી દેખાતી) કરી શકાશે નહિ, એ માટે પૃથ્વી આદિ પણ જીવનું શરીર સિદ્ધ થાય  
છે. પૃથ્વી આદિ જીવનાં શરીર છે. એ પ્રકારનું નિરૂપણ કરવાથી હાથ-પગની પ્રમાણે  
તેમાં પણ કોઈ સમય ચૈતન્યનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થાય છે. તેની હમેશાં અને સર્વથા  
નિર્જીવતા સિદ્ધ થઈ શકતી નથી. પૃથ્વી આદિ કદાચિત્ નિર્જીવ હોય છે, તો તેનું  
કારણ શસ્ત્રનો ઉપઘાત છે. (હથિઆરથી કપાલું-ખોદાલું તે છે) શસ્ત્રના પ્રયોગથી જેમ  
હાથ-પગ અવયવ નિર્જીવ થઈ જાય છે, તે પ્રમાણે પૃથ્વી પણ નિર્જીવ થઈ જાય છે.

પૃથ્વી સચિત્ત છે. અને અનેક જીવોથી અધિષ્ઠિત છે. આ વિષયમાં આગમ  
પ્રમાણ પણ છે. તે આ પ્રમાણે:—

“પૃથ્વી સચિત્ત કહેવામાં આવી છે, તેમાં અનેક જીવ છે, અને તે સર્વની  
સત્તા પૃથક્-પૃથક્ છે; શસ્ત્રપરિણત પૃથ્વીને જાણે.” ( દશવૈકલિક, ૪-અ )

અર્થાત્-પૃથ્વી સજીવ છે; એનું ભગવાને કહ્યું છે. તેમાં અનેક એકેન્દ્રિય જીવ છે.

અનેકે=બહવો જીવા એકેન્દ્રિયા યસ્યાં સા તથોક્તા, પૃથક્સત્ત્વા=પૃથક્ પૃથગ્ભૂતા અઙ્ગલાસંખ્યેયભાગમાત્રશરીરાવગાહનામાશ્રિત્ય વિભિન્નરૂપેણ સ્થિતાઃ સત્ત્વાઃ=સ્પર્શનેન્દ્રિયવન્તો જીવા યસ્યાં સા તથોક્તા 'આખ્યાતા' ઇતિ પૂર્વાક્તેન સંબન્ધઃ ।

નતુ તર્હિ તથાભૂતાયાં સચિત્તાયાં પૃથિવ્યાં ગમનાગમનાદિક્રિયાં કુર્વતાં સંયતાનામર્હિસાત્રતસ્ય સંરક્ષણં કથં ભવતિ પ્રત્યુતાવશ્યકરણીયોચાર-પ્રસવનાદિક્રિયયા હિંસૈવ ભવતિ, તસ્માદર્હિસાત્રતપાલનં વંધ્યાપુત્રપાલનવદ-સંભવમ્ ?-ઇત્યત આહ-‘અન્નત્થ સત્થપરિણણં’ ઇતિ, શસ્ત્રપરિણતાયા અન્યત્ર, શસ્ત્રપરિણતાં પૃથિવીં વર્જયિત્વાઽન્યા પૃથિવી સજીવા । શસ્યતે=હિંસ્યતે પ્રાણિગણોઽ-નેનેતિ શસ્ત્રં । યદ્ યસ્ય વિનાશકારણં તત્તસ્ય શસ્ત્રમિત્યર્થઃ । તત્ દ્વિવિધં દ્રવ્યભાવ-

વે સવ જીવ અંગુલ કે અસંખ્યાતવે ભાગકી શરીર-અવગાહનાવાલે ભિન્ન-ભિન્ન રૂપ મેં સ્થિત હેં । યહાં સત્ત્વ કા અર્થ એકેન્દ્રિય જીવ સમજના યાહિયે ।

શઙ્કા—પૃથ્વી અગર સચિત્ત હૈ તો સચિત્ત પૃથ્વી પર ગમન-આગમન આદિ ક્રિયા કરને વાલે સાધુઓં કા અર્હિસાત્રત કૈસે સ્થિર રહ સકતા હૈ ? પ્રત્યુત મલ-મૂત્ર આદિ કા ત્યાગ અનિવાર્ય હૈ ઓર ઇસ સે હિંસા હોના મી અનિવાર્ય હૈ । એસી સ્થિતિ મેં અર્હિસા કા પાલન કરના વંધ્યા-પુત્ર કા પાલન કરને કે સમાન અસંભવ હૈ ।

સમાધાન—શાસ્ત્ર મેં કહા હૈ-‘અન્નત્થ સત્થપરિણણં’ અર્થાત્ શસ્ત્ર-પરિણત પૃથ્વી કો છોડકર દૂસરી પૃથ્વી સચિત્ત હૈ । જિસ કે દ્વારા પ્રાણિગણ કા હનન હો ઉસે શસ્ત્ર કહતે હેં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જો જિસ કે વિનાશ કા કારણ હૈ, વહ ઉસ તે સર્વ જીવ અંગુલના અસંખ્યાતમા ભાગની શરીર-અવગાહનાવાળા ભિન્ન-ભિન્ન રૂપમાં સ્થિત છે. અર્હિ સત્ત્વનો અર્થ એકેન્દ્રિય જીવ સમજવો જોઈએ.

શંકા—પૃથિવી અગર સચિત્ત છે તો સચિત્ત પૃથ્વી પર જવા આવવાની ક્રિયા કરવાવાળા સાધુઓનું અર્હિસાત્રત સ્થિર કેવી રીતે રહી સકે છે ? ઉલટું મલ-મૂત્ર આદિનો ત્યાગ અનિવાર્ય છે, તેથી હિંસા થવી પણ અનિવાર્ય છે. એવી સ્થિતિમાં અર્હિસાનું પાલન કરવું તે વંધ્યાપુત્રના પાલન કરવા સમાન અસંભવ છે.

સમાધાન—શાસ્ત્રમાં કહ્યું છે કે:- ‘અન્નત્થ સત્થપરિણણં’ અર્થાત્ શસ્ત્ર-પરિણત પૃથ્વીને ત્યજી પૃથ્વી સચિત્ત છે. જેના દ્વારા પ્રાણિગણનું હનન (નાશ) થાય તેને શસ્ત્ર કહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે-જે જેના વિનાશનું કારણ છે તે તેના માટે શસ્ત્ર છે.

મેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વકાયપરકાયતદુભયલક્ષણમ્ । તત્ર સ્વકાયશસ્ત્રં પૃથિવ્યાઃ પૃથિવ્યેવ યથા-કૃષ્ણમૃત્તિકાયાઃ શુદ્ધમૃત્તિકેત્યાદિ । પરકાયશસ્ત્રં જલાગ્નિગોમય-ચરણશકટચક્રાદિ । ઉભયકાયશસ્ત્રં જલાદિમિશ્રમૃત્તિકા । એવં ચ શસ્ત્રપરિણતાયાઃ પૃથિવ્યા અચિત્તતયા ન તત્રોચ્ચારપ્રસ્ત્રવણાદિક્રિયયા મુનીનામર્હિસાવ્રતક્ષતિઃ ।

### (૨) પ્રરૂપણાદ્વારમ્-

પૃથિવીજીવા દ્વિવિધાઃ સૂક્ષ્મવાદરમેદાત્ । સૂક્ષ્મનામકર્મોદયાત્સૂક્ષ્માઃ, વાદરનામકર્મોદયાત્ વાદરાઃ, ન તુ વાદરામલકવદાપેક્ષિકં સૂક્ષ્મત્વં વાદરત્વં ચ ।

કે લિખે શસ્ત્ર છે । શસ્ત્ર કે દો મેદ હૈ—દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર । સ્વકાય, પરકાય ઓર ઉભયકાયરૂપ દ્રવ્ય-શસ્ત્ર છે । પૃથ્વી કા શસ્ત્ર પૃથ્વી-સ્વકાયશસ્ત્ર છે જૈસે કાલી મિટ્ટી કા શસ્ત્ર સ્પેદ મિટ્ટી છે । પરકાયશસ્ત્ર જૈસે—જલ, અગ્નિ, ગોવર, ચરણ (પગ), શકટ (ગાડી) કા પૈયા આદિ । જલ આદિ સે મિલી હુઈ મૃત્તિકા ઉભયકાયશસ્ત્ર છે । ઇત્ત પ્રકાર શસ્ત્ર સે પરિણત પૃથ્વી અચિત્ત હો જાતી છે, અત્ત એવ્ ઉસ પર મલ-મૂત્ર આદિ ત્યાગને વાલે મુનિયો કે અર્હિસાવ્રત મેં કોઈ ક્ષતિ નહીં પહુંચતી ।

### (૨) પ્રરૂપણા-દ્વાર-

પૃથ્વી કે સૂક્ષ્મ ઓર વાદર કે મેદસે દો પ્રકાર હૈ । સૂક્ષ્મનામકર્મ કે ઉદય સે સૂક્ષ્મ ઓર વાદરનામકર્મ કે ઉદય સે વાદર હોતે હૈ । યહાં સૂક્ષ્મતા ઓર વાદરતા બેર ઓર આવલે કી તરહ સાપેક્ષ નહીં સમજાની યાહિયે ।

શસ્ત્રના બે લેદ છે. દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર, સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાયરૂપ દ્રવ્યશસ્ત્ર છે. પૃથ્વીનું શસ્ત્ર પૃથ્વી સ્વકાય-શસ્ત્ર છે, જેમ કાલી માટીનું શસ્ત્ર સ્પેદ માટી છે. પરકાય-શસ્ત્ર જેમકે જલ, અગ્નિ, છાણ, પગ, ગાડીનું ચાક આદિ. જલ-પાણી આદિથી મળેલી માટી ઉભયકાય-શસ્ત્ર છે. આ પ્રમાણે શસ્ત્રથી પરિણત પૃથ્વી અચિત્ત થઈ જાય છે. એટલા માટે તેના પર મળ-મૂત્રાદિ ત્યાગ કરવાવાળા મુનિ-ઓના અર્હિસાવ્રતમાં કોઈ હાનિ પહોંચતી નથી.

### (૨) પ્રરૂપણાદ્વાર-

પૃથ્વીકાયના જીવ સૂક્ષ્મ અને વાદરના લેદથી બે પ્રકારના છે. સૂક્ષ્મનામકર્મના ઉદયથી સૂક્ષ્મ અને વાદરનામકર્મના ઉદયથી વાદર થાય છે. અર્હિ સૂક્ષ્મતા અને વાદરતા. બેર અને આંખજાની પ્રમાણે સાપેક્ષ સમજવી નહિ જોઈએ.



તત્ર સૂક્ષ્માઃ દ્વિવિધાઃ-પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચ, તે કજ્જલકૂપિકાવત્ સર્વલોક-વ્યાપિનઃ ।

વાદરા અપિ દ્વિધા-પર્યાપ્તાપર્યાપ્તભેદાત્ । તત્ર વાદરાઃ પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચ લોકસ્યૈકદેશે પૃથિવ્યષ્ટકાધોઽધઃપાતાલ-ભવન-નકરપ્રસ્તરાદૌ સન્તિ । તે વિદ્વિધાઃ શ્લક્ષણ-સ્વરભેદાત્ । તત્ર શ્લક્ષણા વાદરપૃથિવી સપ્તધાકૃષ્ણ-નીલ-લોહિત-પીત-શુક્લ-પાણ્ડુ-પનકભેદાત્ । સ્વરવાદરપૃથિવ્યાસ્તુ ચત્વારિંશદ્ (૪૦) ભેદાઃ, તથાહિ—

(૧)શુદ્ધપૃથિવી, (૨)શર્કરાપૃથિવી, (૩)વાલુકાપૃથિવી, (૪)ઉપલઃ, (૫)શિલા, (૬)લવણઃ, (૭)ઝષઃ (૮)અયઃ, (૯)તામ્રઃ, (૧૦)ત્રપુઃ, (૧૧)સીસકમ્, (૧૨)રૂપ્યમ્, (૧૩)સુવર્ણમ્, (૧૪)વજ્રઃ, (૧૫)હરિતાલઃ (૧૬)દિક્કુલકઃ, (૧૭)મનઃશિલા,

સૂક્ષ્મ જીવ મી દો પ્રકાર કે હૈં—પર્યાપ્ત ઔર અપર્યાપ્ત । યે જીવ કાજલ કી કુપ્પી કે સમાન સમ્પૂર્ણ લોક મેં ભરે હુએ હૈં ।

વાદર મી પર્યાપ્ત ઔર અપર્યાપ્ત—દો પ્રકાર કે હૈં । યે જીવ લોક કે ઇક દેશ મેં હૈં । ઇન કે દો ભેદ હૈં—શ્લક્ષણ ઔર સ્વર । શ્લક્ષણવાદરપૃથ્વી કે સાત ભેદ હૈં—કૃષ્ણ નીલ લોહિત (લાલ) પીત શુક્લ પાણ્ડુ ઔર પનક સ્વરવાદર પૃથ્વી કે ચાલીસ ભેદ હૈં, વે ઇસ પ્રકાર—

(૧) શુદ્ધ-પૃથિવી, (૨) શર્કરા-પૃથિવી, (૩) વાલુકા-પૃથિવી, (૪) ઉપલ, (૫) શિલા, (૬) લવણ-નમક, (૭) ઝષ-ક્ષાર, (૮) લોહા, (૯) તાંબા, (૧૦) રાગા, (૧૧) સીસા, (૧૨) ચાંદી, (૧૩) સોના, (૧૪) વજ્ર, (૧૫) હરિતાલ, (૧૬) હીંગલ,

સૂક્ષ્મ જીવ પશુ મે પ્રકારના છે. પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત—જીવ કાજળની કુપ્પીના સમાન સંપૂર્ણ લોકમાં ભરેલા છે.

વાદર પશુ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત એમ મે પ્રકારના છે. એ જીવ લોકના એક દેશમાં છે. તેના મે ભેદ છે. શ્લક્ષણ અને ઝર, શ્લક્ષણ વાદર પૃથ્વીના સાત ભેદ છે. કૃષ્ણ, નીલ, લોહિત (લાલ) પીત, શુક્લ, પાંડુ અને પનક. ઝર—વાદર પૃથ્વીના ચાલીસ ભેદ છે—તે આ પ્રમાણે છે:—

(૧) શુદ્ધ પૃથિવી; (૨) શર્કરા પૃથિવી, (૩) વાલુકા પૃથિવી, (૪) ઉપલ, (૫) શિલા, (૬) લવણ-નમક, (૭) ઝષ-ક્ષાર, (૮) લોહા, (૯) તાંબા, (૧૦) રાંગા-કલાઈ, (૧૧) સીસા, (૧૨) ચાંદી, (૧૩) સોના, (૧૪) વજ્ર, (૧૫) હરતાલ, (૧૬) હીંગલ,

(૧૮) શસ્યક:-પારદઃ, સ્વનામખ્યાતો રત્નવિશેષથ્, (૧૯) અન્નનં, (૨૦) પ્રવાલમ્, (૨૧)અન્નપટલમ્, (૨૨)અન્નવાલુકા (અન્નકર્ણમ્), (૨૩)ગોમેદકઃ, (૨૪)રુચકઃ, (૨૫)અઙ્કઃ, (૨૬)સ્ફટિકઃ, (૨૭)લોહિતાક્ષઃ, (૨૮)મરકતઃ, (૨૯)મસારગલ્લઃ, (૩૦)ભુજમોચકઃ, (૩૧)ઇન્દ્રનીલઃ, (૩૨)ચન્દનમ્, (૩૩)ગૈરિકમ્, (૩૪)હંસગર્ભઃ, (૩૫)પુલકઃ, (૩૬)સૌગન્ધિકઃ, (૩૭)ચન્દ્રપ્રભઃ, (૩૮)વૈદૂર્યમ્, (૩૯)જલકાન્તઃ, (૪૦)સૂર્યકાન્તઃ । એતે ચ શુદ્ધપૃથિવ્યાદયઃ પૃથિવીકાયિકાઃ સ્વાકરાદૌ સચિત્તા ભવન્તિ ।

ગોમય-કચરા-સવિતૃતાપાદિસંપર્કાતુ ગતચેતના અપિ ભવન્તિ । બાદરપૃથિવ્યા યત્રૈકો જીવસ્તત્રાઽસંખ્યાતૈર્નિયમતો ભાવ્યમ્ ।

એવમપૂતેજોવાયુપ્રત્યેકવનસ્પતિષ્વપિ વિજ્ઞેયમ્ । નિગોદે તુ યત્રૈકો

(૧૭) મૈનસિલ, (૧૮) શસ્યક-પારા, અથવા રત્નવિશેષ, (૧૯) અંજન, (૨૦) પ્રવાલ, (૨૧) અન્નપટલ, (૨૨) અન્નવાલુકા (અન્નકર્ણ), (૨૩) ગોમેદ, (૨૪) રુચક, (૨૫) અંકરત્ન, (૨૬) સ્ફટિક, (૨૭) લોહિતાક્ષ, (૨૮) મરકત, (૨૯) મસારગલ્લ, (૩૦) ભુજમોચક, (૩૧) ઇન્દ્રનીલ, (૩૨) ચંદન, (૩૩) ગેરુ, (૩૪) હંસગર્ભ, (૩૫) પુલક, (૩૬) સૌગંધિક, (૩૭) ચન્દ્રપ્રભ-ચન્દ્રકાન્ત, (૩૮) વૈદૂર્ય, (૩૯) જલકાન્ત, (૪૦) સૂર્યકાન્ત । યે શુદ્ધ પૃથિવી આદિ ચાલીસ જબ અપને આકર (સ્થાન) મેં રહતે હેં તો સચિત્ત હોતે હેં । ગોબર કચરા સૂરજ કી ધૂપ આદિ કે સંપર્ક સે અચેતન હો જાતે હેં । જહાં બાદરપૃથ્વીકાય કા એક જીવ હોતા હૈ વહોં અસંખ્યાત જીવ નિયમ સે હોતે હેં ।

इसी प्रकार अप्, तेज, वायु, और प्रत्येकवनस्पति में भी समझना चाहिए ।

(૧૭) મનશીલ, (૧૮) પારો, (૧૯) સુરમો, (૨૪) રુચક, (૨૫) અંક-રત્ન, (૨૬) સ્ફટિક, (૨૭) લોહિતાક્ષ, (૨૮) મરકત, (૨૯) મસારગલ્લ, (૩૦) ભુજમોચક, (૩૧) ઇન્દ્રનીલ, (૩૨) ચન્દન, (૩૩) ગેરુ, (૩૪) હંસગર્ભ, (૩૫) પુલક, (૩૬) સૌગંધિક, (૩૭) ચન્દ્રપ્રભ-ચન્દ્રકાન્ત, (૩૮) વૈદૂર્ય, (૩૯) જલકાન્ત, (૪૦) સૂર્યકાન્ત. આ શુદ્ધ પૃથ્વી આદિ ચાલીશ જાતનાં આકર-ખાણુમાં રહે છે તો સચિત્ત હોય છે. છાણુ, કચરા, સૂરજનો તડકો વગેરેના સંપર્કથી તે અચેતન થઈ જાય છે. જ્યાં બાદર પૃથ્વીકાયનો એક જીવ હોય છે, ત્યાં અસંખ્યાત જીવ નિયમથી હોય છે.

એ પ્રકારે અપ્, તેજ, વાયુ અને પ્રત્યેકવનસ્પતિમાં પણ સમજવું જોઈએ.

નિગોદજીવસ્ત્ર નિયમતોઽનન્તાઃ ।

વાદરાણાં સૂક્ષ્માણાં ચ પૃથિવીકાયનાભેતે વક્ષ્યમાણા ભેદાઃ સન્તિ, તત્રોભયોઃ પર્યાપ્તાપર્યાપ્તભેદઃ પ્રાગુક્તઃ, અન્યે ભેદા ઉચ્યન્તે—શરીરત્રયા—ઽંગુલકા-સંખ્યેયભાગશરીર—સેવાર્ત્તસંહનન—મસૂરચન્દ્રસંસ્થાન—કષાયચતુષ્ક—સઙ્ગાચતુષ્કા—ઽઘ્નલેશ્યાત્રય—સ્પર્શનેન્દ્રિય—વેદનાકષાયમારણાન્તિકસમુદ્ઘાતા—ઽસઙ્ગિજ્ઞત્વ—નપુંસક-વેદ—પર્યાપ્તિચતુષ્ટય—મિથ્યાદર્શના—ઽચક્ષુદર્શના—ઽજ્ઞાન—કાયયોગ—સાકારાનાકારો-પયોગાઽઽહારાદિપ્રમૃતયઃ । તત્ર વિશેષસ્તુ વાદરપૃથિવીકાયનાં લેશ્યા આઘ્યાશ્વતસઃ, શેષં સર્વં સમાનમ્ । અસંખ્યેયાશ્ચ પ્રત્યેકમુભયે ।

નિગોદ મેં જહાં એક જીવ હોતા હૈ વહાં નિયમ સે અનન્ત જીવ હોતે હૈં ।

વાદર ઓર સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયોં કે ભેદ ઇસ પ્રકાર હૈં—દોનોં કે પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત ભેદ પહેલે કહે જા ચુકે હૈં । અબ અન્ય ભેદ કહતે હૈં—ત્રીન શરીર, અંગુલકા અસંખ્યાતવાં ભાગ શરીર, સેવાર્ત્ત સંહનન, મસૂરચન્દ્રસંસ્થાન, ચાર કષાય, ચાર સંજ્ઞાઈ, પ્રારંભ કી ત્રીન લેશ્યાઈ, સ્પર્શનેન્દ્રિય, વેદના કષાય ઓર મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, અસંજીવન, નપુંસકવેદ, ચાર પર્યાપ્તિયોં, મિથ્યાદર્શન, અચક્ષુદર્શન ત્રીન અજ્ઞાન; કાયયોગ, સાકાર તથા અનાકાર ઉપયોગ, આહાર આદિ । ઇન મેં વિશેષતા ઇતની હી હૈ કિ વાદરપૃથિવી-કાય મેં પહેલે કી ચાર લેશ્યાઈ હોતી હૈં । શેષ સબ બોલ સમાન હૈં । દોનોં હી અસંખ્યાત—અસંખ્યાત હૈં ।

નિગોદમાં જ્યાં એક જીવ હોય છે ત્યાં નિયમથી અનન્ત જીવ હોય છે.

વાદર અને સૂક્ષ્મ પૃથિવીકાયોના ભેદ આ પ્રમાણે છે—અન્નેના પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત બેઉ ભેદ પ્રથમ કહેવામાં આવ્યા છે. હવે બીજા ભેદ કહે છે—ત્રણ શરીર, અંગુલના અસંખ્યાતમાં ભાગ શરીર, સેવાર્ત્ત સંહનન, મસૂર-ચન્દ્ર સંસ્થાન, ચાર કષાય, ચાર સંજ્ઞાઓ, પ્રારંભની ત્રણ લેશ્યાઓ, સ્પર્શ ઇન્દ્રિય, વેદના કષાય, અને મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત, અસંજીવન, નપુંસકવેદ, ચાર પર્યાપ્તિઓ, મિથ્યાદર્શન, અચક્ષુદર્શન, ત્રણ અજ્ઞાન, કાયયોગ, સાકાર તથા અનાકાર ઉપયોગ, આહાર આદિ. તેમાં વિશેષતા એટલી જ છે કે—વાદર પૃથિવીકાયમાં પ્રથમની ચાર લેશ્યાઓ હોય છે, બાકી તમામ બોલ સમાન છે. અન્ને જ અસંખ્યાત—અસંખ્યાત છે.



(૩) પરિમાણદ્વારમ્—

બાદરપર્યાપ્તાઃ પૃથિવીકાયજીવાઃ સર્વતઃ સ્તોકાઃ । તદપેક્ષયા બાદરાઽપર્યાપ્તાઃ અસંખ્યેયગુણાઃ । તદપેક્ષયા સૂક્ષ્માઽપર્યાપ્તા અસંખ્યેયગુણાઃ । તદપેક્ષયા સૂક્ષ્મપર્યાપ્તા અસંખ્યેયગુણાઃ । યદિ જવારીધાન્યકળપમાણપૃથિવ્યંશાશ્રયા જીવા એકૈકં બહિર્નિગત્ય પૃથક્-પૃથક્ કપોતમિતં કાયં કુર્યુસ્તર્હિ તેષાં લક્ષયોજનપ્રમાણજમ્બૂદ્વીપે સમાવેશોઽપિ ન સંભવતિ ।

નનુ જવારીધાન્યકળમાત્રે પૃથિવ્યંશે કથમિયન્તો જીવાસ્તિષ્ઠન્તિ ?  
ઇતિ ચેત્ ઉચ્યતે-યથા સહસ્રૌષધિસંમિશ્રણનિષ્પન્નસહસ્રપાકતૈલસ્યાલ્પીયસિ

(૩) પરિમાણદ્વાર-

પર્યાપ્ત બાદર પૃથ્વીકાય કે જીવ સબ સે થોડે હૈં । उन की अपेक्षा बादर अपर्याप्त असंख्यात गुना अधिक है । उन से सूक्ष्म अपर्याप्त असंख्येय गुना है । उन से सूक्ष्म पर्याप्त असंख्यात गुना है । अगर जवार नामक धान्य के कण के बराबर 'ध्वी' के अंश में रहने वाले जीव एक-एक करके बाहर निकल जाएँ और वे सब अपना शरीर कबूतर के शरीर के बराबर बनालें तो एक लाख योजन विस्तार वाले जम्बूद्वीप में उनका समावेश नहीं हो सकता ।

શક્ય—જવાર કે એક દાને કે બરાબર પૃથિવી કે અંશ મેં ઇતને અધિક જીવ કિસ પ્રકાર રહ સકતે હૈં ?

સમાધાન—જૈસે હજાર ઔષધોં કે સમ્મિશ્રણ સે બને હુણ સહસ્ર-પાક તૈલ કે

(૩) પરિમાણદ્વાર-

પર્યાપ્ત બાદર પૃથ્વીકાયના જીવ સૌથી થોડા છે; તેની અપેક્ષા બાદર અપર્યાપ્ત અસંખ્યાત ગણા અધિક છે. તેનાથી સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત અસંખ્યાત ગણા છે, તેનાથી સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત અસંખ્યાત ગણા છે. अगर जुवार नामका धान्यका कणानी बराबर पृथ्वीमां रहैवावाणा जव अेक-अेक थर्धने बहार निकणे अने ते सर्व पोतानुं शरीर कबूतर-पादेवानां शरीर बराबर बनावी लीअे तो अेक लाख योजनना विस्तारवाणा जम्बू द्वीपमां तेना समावेश थर्ध शके नहि.

શક્ય—જુવારના એક દાણાની બરાબર પૃથિવીમાં એટલા અધિક જીવ કેવી રીતે રહી શકે છે ?

સમાધાન—જેવી રીતે હજાર ઔષધોના સંમિશ્રણથી બનેલા સહસ્ર-પાક તૈલના

સૂચ્યગ્રલગ્નવિન્દુમાત્રેऽપિ સહસ્રૌષધિસમાવેશસ્તથૈવ પૃથિવીકાયજીવાસ્તાવન્માત્રે પૃથિવ્યંશે તિષ્ઠન્તીતિ । યથા વા સહસ્રૌષધિસંમિશ્રણે કૃતે ચૂર્ણીકૃત્ય પરિપિલ્ય સ્વસસ્વસકળપ્રમાણગુટિકા ક્રિયતે, તત્ર પ્રત્યેકગુટિકાયાં સહસ્રૌષધિસમાવેશે દૃશ્યતે, તદ્વજ્જવારીધાન્યકળમાત્રેऽલ્પીયસિ પૃથિવ્યંશે પૃથિવીકાયજીવાસ્તિષ્ઠન્તીતિ નૈતચ્ચિત્રમ્ ।

યદિ લોકાકાશસ્ય પ્રત્યેકપ્રદેશે, એકૈકઃ પૃથિવીકાયજીવઃ સ્થાપ્યતે તદા અસંખ્યાતા લોકા પૂરિતા ભવેયુઃ । પૃથિવીકાયજીવાનાં પરિમાણં તાવદસ્તિ, યદિ લોકા અસંખ્યાતા ભવેયુઃ, તેષામસંખ્યાતલોકાનાં યાવન્તઃ પ્રદેશાઃ ભવેયુસ્તાવન્તઃ પૃથિવીકાયજીવાઃ સન્તીતિ બોધ્યમ્ ।

છોટે સે, સૂઈ કો નોક પર લગે હુએ એક બૂંદ મેં મી હજાર ઔષધોં કા સમાવેશ હો જાતા હૈ, ઇસી પ્રકાર જવાર કે એક દાને કે બરાબર પૃથ્વી કે અંશ મેં ઇતને જીવ રહતે હૈં । અથવા જૈસે એક હજાર ઔષધોં કો મિલા દિયા જાય ઓર ઉનકા ચૂર્ણ બના લિયા જાય, સ્વૂબ પીસા જાય ઓર ઉસસે સ્વસસ્વસ કે દાને કે બરાબર ગોલી બના લી જાય તો ઉસ પ્રત્યેક ગોલી મેં હજાર ઔષધિયોં કા સમાવેશ જાન પડતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જવાર બરાબર પૃથ્વી કે અંશ મેં અગર ઇતને જીવ રહતે હૈં તો ઇસમેં આશ્ચર્ય કી કૌન સી વાત હૈ ?

અગર લોકાકાશ કે એક-એક પ્રદેશ મેં, એક-એક જીવ સ્થાપિત કિયા જાય તો અસંખ્યાત લોક ભરજાઈ । પૃથિવીકાય કે જીવોં કા પરિમાણ ઇતના હૈ કિ-યદિ લોક અસંખ્યાત હોં ઓર ઉન અસંખ્યાત લોકોં કે જિતને પ્રદેશ હોં, ઉતને હી પૃથિવીકાય જીવ હૈં, એસા સમજ લેના ચાહિએ ।

નાના એવા સોઈની અણી પર લાગેલા એક ટીપામાં પણ હબર ઔષધોનો સમાવેશ થઈ જાય છે. એ પ્રમાણે જીવારના એક દાણાની બરાબર પૃથ્વીમાં એટલા જીવ રહે છે. અથવા જેવી રીતે-એક હબર ઔષધોને મેળવવામાં આવે અને તેનું ચૂર્ણ બનાવી લેવાય, અને તેને ખૂબ વાટવામાં આવે અને તેમાંથી ખસ-ખસના દાણા બરાબર ગોળી બનાવવામાં આવે તો પ્રત્યેક ગોળીમાં હબર ઔષધીઓનો સમાવેશ થયેલો છે, એમ ભણી શકાય છે. એ પ્રમાણે જીવાર બરાબર પૃથ્વીમાં એટલા જીવ રહે છે તો તેમાં આશ્ચર્યની વાત શું હોઈ શકે ?

અથવા લોકાકાશના એક એક પ્રદેશમાં, એક-એક જીવ સ્થાપિત કરવામાં આવે તો અસંખ્યાત લોક ભરાઈ જાય. પૃથિવીકાયના જીવોનું પરિણામ એટલું છે-જે લોક અસંખ્યાત હોય અને તે અસંખ્યાત લોકના જેટલા પ્રદેશો હોય એટલા જ પૃથિવીકાય જીવ છે. એમ સમજ લેવું બોધ્યું છે.



ये पृथिवीकायहिंसायां लज्जमानास्ते-अनगाराः, ये तु तत्र प्रवृत्तास्ते द्रव्यलिङ्गिनः, इति बोधयितुमाह-‘लज्जमाणाः’ इत्यादि ।

एके=अन्ये, लज्जमानाः=पृथिवीकायस्यारम्भे परमकरुणया द्रवितहृदयतया संकोचमापद्यमानाः पृथक्=केचित् प्रत्यक्षज्ञानिनोऽवधि-मनःपर्यय-केवलिनः, केचित् परोक्षज्ञानिनो भावितात्मानोऽनगाराः सन्ति, इति, पृथक्-पश्य ।

इमे सूक्ष्मवादरपृथिवीकायारम्भकरणे भीतास्त्रस्ता उद्विग्नास्त्रिकरणत्रियोगैः पृथिवीकायारम्भपस्त्यागिनो विद्यन्ते तानवलोकयेत्यर्थः ।

एके पुनः=अन्ये तु-‘वयमगाराः साधवः स्मः’ इति साभिमानं प्रवदमानाः ‘वयमेव पृथिवीकायजीवरक्षणपराः महाव्रतधारिणः’ इति व्यर्थ

જો પુરુષ પૃથિવીકાય કી હિંસા સે વિરત હોતે હૈં, વેહી અનગાર હૈં । જો ડસ હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હૈં, વે દ્રવ્યલિંગી હૈં । યહ બતલારે કે લિખ્ કહતે હૈં-‘લજ્જમાણા’ ઇત્યાદિ ।

કોઈ-કોઈ પુરુષ પૃથિવીકાય કે આરંભ મેં અત્યંત કરુણાશીલ હોને કે કારણ, દ્રવિત હૃદય વાલે હોને સે, સંકોચ-વૃત્તિ કરતે હૈં, ડન મેં સે કોઈ-કોઈ પ્રત્યક્ષજ્ઞાની અર્થાત્ અવધિજ્ઞાની, મનઃપર્યયજ્ઞાની ઓર કેવલજ્ઞાની, તથા કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની ભાવિતાત્મા અનગાર હૈં, ડસ પ્રકાર પૃથક્-પૃથક્ભાવ સે દેખો । અર્થાત્ ડન પુરુષો કો દેખો જો સૂક્ષ્મ ઓર વાદર પૃથ્વીકાય કા આરંભ કરને મેં લજ્જા કરતે હૈં, ત્રસ્ત હોતે હૈં, ઓર ત્રીનકરણ, ત્રીનયોગ સે પૃથિવીકાય કે આરંભ કે ત્યાગી હૈં ।

ઓર કોઈ-કોઈ ‘હમ સાધુ હૈં । ઁસા અભિમાન કે સાથ કહતે હુખ ‘હમ હી પૃથિવીકાય કી રક્ષા મેં તત્પર હૈં ઓર મહાવ્રતધારી હૈં’ । ડસ પ્રકાર વૃથા પ્રભાપ

જે પુરુષ પૃથિવીકાયની હિંસાથી વિરત-નિવૃત્ત થાય છે તેજ અણુગાર છે. મુનિ છે. જે હિંસામાં પ્રવૃત્ત છે તે દ્રવ્યલિંગી છે. તે બતાવવા માટે કહે છે-‘લજ્જમાણા’ ઇત્યાદિ. કોઈ-કોઈ પુરુષ પૃથિવીકાયના આરંભમાં અત્યંત કરુણાશીલ હોવાના કારણે દ્રવિત હૃદયવાળા હોવાથી સંકોચ-વૃત્તિ કરે છે. તેમાંથી કોઈ-કોઈ પ્રત્યક્ષજ્ઞાની અર્થાત્ અવધિજ્ઞાની, મનઃપર્યયજ્ઞાની અને કેવલજ્ઞાની અને કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની ભાવિતાત્મા અણુગાર છે. પૃથક્=પૃથક્ભાવથી જુઓ, અર્થાત્ તે પુરુષોને જુઓ કે જે સૂક્ષ્મ અને બાદર પૃથ્વીકાયના આરંભ કરવામાં લબ્ધ કરે છે-શરમાય છે-ત્રાસ પામે છે. અને ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી પૃથ્વીકાયના આરંભના ત્યાગી છે.

અને કોઈ-કોઈ ‘અમે સાધુ છીએ’ એવા અભિમાનની સાથે કહે છે કે-‘અમે પણ પૃથ્વીકાયની રક્ષામાં તત્પર છીએ, અને મહાવ્રતધારી છીએ.’ આ પ્રમાણે વૃથા-



પ્રલપન્તો દ્રવ્યલિङ્ગિનઃ સન્તિ તાન્ પૃથક્=પૃથગ્ભાવેન પચ્ય ।

(૪) વધદ્વારં, (૫) શસ્ત્રદ્વારં ચ ।

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्तन्ते, नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्ति, इति दर्शयति—

यद्=यस्माद् विरूपरूपैः=विभिन्नरूपैर्नानाविधैः शस्त्रैः=लोष्टपाषाणादिभिः स्वकायरूपैः, अग्न्यादिभिः=परकायरूपै हलकुदालखनित्रादिभिस्तदुभयरूपैः पृथिवीकर्मसमारम्भेण=पृथिव्याः कर्मसमारम्भः-पृथिवीकर्मसमारम्भः पृथिवीमाश्रित्य ज्ञानावरणीयाद्यष्टविधकर्मबन्धनिबन्धनसावद्यव्यापारः, तेन इमं=पृथिवीकायं विहंसन्ति । पृथिवीकायर्हिंसायां प्रवृत्ताः खलु षड्जीवनिकाय-

करते हुए द्रव्यलिङ्गी हैं उन्हें पृथक् देखो ।

(૪) વધ ઓર (૫) શસ્ત્રદ્વાર

अपने आप को अनगार समझने वाले ये द्रव्यलिङ्गी साधु के गुणों में तनिकभी प्रवृत्त नहीं होते, और न गृहस्थों के किसी कार्य का त्याग करते हैं, यह बात बतलाते हैं—

ये द्रव्यलिङ्गी लोग विभिन्न प्रकार के मिट्टी, पत्थर आदि स्वकाय-शस्त्रों से अग्नि आदि परकाय-शस्त्रों से, हल, कुदाल आदि खोदने के साधनरूप उभयकाय शस्त्रों से पृथिवीकर्मसमारम्भ करते हैं, अर्थात् पृथिवी के निमित्त से ज्ञानावरणीय आदि आठ प्रकार के कर्मबन्ध का कारण सावद्य व्यापार करते हैं, और उस से पृथिवीकाय की हिंसा करते हैं । पृथिवीकाय की हिंसा में प्रवृत्त होने वाला पुरुष छहों जीवनिकायों

મિથ્યા પ્રલાપ કરનારા દ્રવ્યલિંગી છે. તેને જૂઠા જૂઠા ભાવથી જુઓ.

(૪) વધ અને (૫) શસ્ત્ર દ્વાર—

પોતેજ પોતાને અજુગાર-સાધુ સમજવાવાળા એ દ્રવ્યલિંગી, સાધુના ગુણોમાં જરા પણ પ્રવૃત્ત થતા નથી. અને ગૃહસ્થોના કોઈ કાર્યનો ત્યાગ કરતા નથી. એ વાત બતાવે છે:—

એ દ્રવ્યલિંગી લોક જૂઠા-જૂઠા પ્રકારની માટી, પથ્થર આદિ સ્વકાય શસ્ત્રોથી અગ્નિ આદિ પરકાય શસ્ત્રોથી હળ, કોદાળી આદિ ખોદવાના સાધનરૂપ ઉભયકાય શસ્ત્રોથી પૃથ્વીકર્મસમારંભ કરે છે. અર્થાત્ પૃથ્વીના નિમિત્તથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મબંધના કારણુ સાવધ વ્યાપાર કરે છે, અને તેથી પૃથ્વીકાયની હિંસા કરે છે. પૃથ્વીકાયની હિંસામાં પ્રવૃત્ત થવાવાળા પુરુષ છજીવનિકાયોની હિંસા કરે છે.

રૂપં લોકં સર્વમેવ વિહિંસન્તીત્યાહ-‘પૃથ્વીસત્થં’-ઇત્યાદિ ।

પૃથિવીશસ્ત્રમ્=પૃથિવ્યુપમર્દકં શસ્ત્રમ્, શસ્યતે=હિંસ્યતે અનેનેતિ શસ્ત્રમ્, તદ્ દ્વિવિધં-દ્રવ્ય-ભાવ-ભેદાત્ । તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં=સ્વકાયપરકાયતદુભયરૂપમ્ । ભાવશસ્ત્રં=દુષ્પ્રયુક્તમનોવાકાયલક્ષણમ્, સમારંભમાણાઃ=પૃથિવીકાયં પ્રતિ વ્યાપારયન્તઃ, અન્યાન પૃથિવીકાયમિન્નાનં અનેકરૂપાન્ અપૂકાયાદીન્ સ્થાવરાન્, દ્વીન્દ્રિયાદીન્ ત્રસાંશ્વ વિહિંસન્તિ ।

### (૬) ઉપભોગદ્વારમ્-

જગતિ સ્વલુ બહવો દ્રવ્યલિંગિનો વિઘન્ટે, યથા-‘વયં પંચમહાવ્રતધારિણઃ

કી હિંસા કરતા હૈ, યહ બતલાર્ને કે લિખ્ કહતે હૈ-‘પૃથ્વીસત્થં’ ઇત્યાદિ ।

પૃથિવીશસ્ત્રકા અર્થ હૈ-પૃથિવીકાય કી હિંસા કરનેવાલા શસ્ત્ર । જિસ સે હિંસા હો વહ શસ્ત્ર કહલાતા હૈ । શસ્ત્ર દો પ્રકાર કા હૈ-(૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર (૨) ભાવશસ્ત્ર । સ્વકાય, પરકાય ઓર ઉભય-સ્વપર-કાયરૂપસે દ્રવ્યશસ્ત્ર ત્રીન પ્રકાર કા હૈ । મન વચન ઓર કાયકા દુષ્પ્રયોગ કરના ભાવશસ્ત્ર હૈ ।

પૃથ્વીકાય કા આરંભ કરનેવાલે, પૃથિવીકાય સે મિન્ન અનેક અપૂકાય આદિ સ્થાવર જીવોં કી, તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોં કીં મીં હિંસા કરતે હૈં ।

### (૬) ઉપભોગદ્વાર-

સંસાર મેંં બહુત સે દ્રવ્યલિંગીં હૈં । જૈસે-‘હમ પંચમહાવ્રતધારીં હૈં, સબ આરંભ

એ બતાવવા માટે કહે છે :-‘પૃથ્વીસત્થં’ ઇત્યાદિ.

પૃથ્વીશસ્ત્રનો અર્થ છે-પૃથ્વીકાયની હિંસા કરવાવાળાં શસ્ત્રો જેનાથી હિંસા થઈ શકે તે શસ્ત્ર કહેવાય છે. શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે. (૧) દ્રવ્ય શસ્ત્ર અને (૨) ભાવ-શસ્ત્ર-સ્વકાય, પરકાય, અને ઉભય-સ્વ-પરકાયરૂપ દ્રવ્યશસ્ત્ર ત્રણ પ્રકારના છે. મન, વચન અને કાયના દુષ્પ્રયોગ કરવા તે ભાવશાસ્ત્ર છે.

પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરવાવાળા, પૃથ્વીકાયથી મિન્ન અનેક અપૂકાય આદિ સ્થાવર જીવોની તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની પણ હિંસા કરે છે.

### (૬) ઉપભોગ-દ્વાર-

સંસારમાં ઘણાજ દ્રવ્યલિંગી સાધુ છે. જેવી રીતે “અમે પંચમહાવ્રતધારી

સર્વારંભપરિત્યાગિનઃ ષટ્કાયરક્ષકા અનગારાઃ (સાધવઃ) સ્મઃ' ઇતિ વદન્તો દણ્ડિ-  
શાક્યાદયઃ સન્તિ। તત્ર કેચિદેશુદ્ધચર્યં મૃત્તિકાસ્નાયિનો ભવન્તિ। કેચિત્સ્વનિવાસાર્થં  
ગૃહાદિનિર્માણકરણં કુદાલખનિત્રાદિભિઃ પૃથિવીકાયમુપમર્દયન્તિ। કેચિત્ સ્વોદર-  
પૂર્ત્યર્થં કૃષ્યાદિકર્મ કુર્વન્તિ। કેચિચ્ચ દેવકુલાદ્યર્થં સાવધમુપદિશન્તિ. પાર્થિવી-  
દેવ-ગુર્વાદિ-પ્રતિમાનિર્માણે જીર્ણોદ્ધારકરણે ચ મહાભીમભવસમુદ્રાદાત્મનઃ સમુદ્ધારો  
ભવતીતિ મન્યન્તે, વદન્તિ ચ—

“ જિનભવણકારણવિહી, સુદ્ધા ભૂમી દલં ચ કઢાઈ। મિયગાણસંધાણં,  
સાસયવુઢ્ઠી ય જયણા ય ॥૯॥....અયસ્સ ફલં મણિયં, ઇય આણાકારિણો ડ સઢ્ઢેસ્સ।

ઔર પરિગ્રહ કે ત્યાગી હૈં, ષટ્કાય કે રક્ષક સાધુ હૈં'। ઇસ પ્રકાર કહને વાલે દણ્ડી શાક્ય  
આદિ હૈં। ઇન મેં કોઈ-કોઈ તો શરીર કી શુદ્ધિ કે લિખ મિટ્ટી સે સ્નાન કરતે હૈં। કોઈ  
અપને રહને કે લિખ મકાન આદિ બનાને મેં કુદાલ ખનિત્ર (કુસ) આદિ ઓદને કે સાધનો  
દ્વારા પૃથ્વીકાય કા ઉપમર્દન કરતે હૈં। કોઈ-કોઈ અપના પેટ ભરને કે ઉદેશ્ય સે ઓતી આદિ  
કરતે હૈં। કોઈ દેવકુલ આદિ કે લિખ સાવધ ઉપદેશ દેતે હૈં-દેવ ગુરુ આદિ કી પાર્થિવ  
પ્રતિમા નિર્માણ કરાને સે ઔર જીર્ણોદ્ધાર કરાને સે ભવસાગર સે આત્મા કા તરના હોતા હૈ,  
એસા માનતે હૈં ઔર કહતે હૈં કિ-

“ જિનમવન બનાને કી વિધિ ઇસ પ્રકાર હૈ—“ શુદ્ધ ભૂમિ, શુદ્ધ ઈંટેં,  
પથ્થર, કાષ્ઠ આદિ હોના, કાર્ય કરને વાલે કારીગરોં કો પ્રસન્ન રખના, અપને પરિણામ  
ઉત્તરોત્તર ચઢતે હુખ રખકર યતનાપૂર્વક કાર્ય કરાના” ઇત્યાદિ।....મગવાન કી આજ્ઞાકે

છીએ. સર્વ આરંભ અને પરિગ્રહના ત્યાગી છીએ, ષટ્કાયના રક્ષક સાધુ છીએ.' આ  
પ્રમાણે કહેવાવાળા દંડી શાક્ય આદિ છે તેમાં કોઈ-કોઈ તો શરીરની શુદ્ધિ માટે  
માટીથી સ્નાન કરે છે. કોઈ પોતાને રહેવા માટે મકાન આદિ બનાવવામાં કોદાળી,  
કોસ આદિ ખોદવાનાં સાધનો દ્વારા પૃથ્વીકાયનું ઉપમર્દન કરે છે, કોઈ-કોઈ પોતાનું  
પેટ ભરવાના ઉદ્દેશથી ખેતી કરે છે; કોઈ દેવકુળ આદિને માટે સાવધ ઉપદેશ  
કરે છે-દેવ, શુદ્ધ આદિની પાર્થિવ પ્રતિમા નિર્માણ કરાવવામાં અને જીર્ણોદ્ધાર કરા-  
વામાં ભવસાગરથી આત્મા તરી શકે છે, એવું માન છે અને કહે છે કે:-

“ જિનમંદિર બનાવવાની વિધિ આ પ્રમાણે છે:-શુદ્ધ ભૂમિ, શુદ્ધ ઇંટો, પથ્થર,  
કાષ્ઠ આદિ જોઈએ. કામ કરવાવાળા કારીગરોને પ્રસન્ન રાખવા, પોતાનાં પરિણામ ઉત્તરોત્તર  
ચઢતાં રાખીને યતનાપૂર્વક કાર્ય કરવું.” ઇત્યાદિ....મગવાનની આજ્ઞાના આશયક શ્રાવકને



ચિત્તં સુહાણુબંધં, નિવ્વાણં તં જિણિદેહિં ॥ ૪૪ ॥ ( પચ્ચાશક ટીકા ૭. વિ. )

“ જિણભવણાં જે ઉદ્ધરંતિ ભત્તીઈ સહિયપહિયાં ।

તે ઉદ્ધરંતિ અપ્પં, મીમાઓ ભવસમુદ્ધાઓ ॥ ” ( ધર્મસંગ્રહટીકા ૨અધિ. )

છાયા—“ જિનભવનકારણવિધિઃ—શુદ્ધા ભૂમિર્દલં ચ કાષ્ઠાદિ ।

ભૃતકાનતિસન્ધાનં, સ્વાશયવૃદ્ધિશ્ચ (શોભનાશયવૃદ્ધિઃ) યતના ચ ॥

....એતસ્ય ફલં મણિતં, ઇત્યાજ્ઞાકારિણસ્તુ શ્રાદ્ધસ્ય ।

ચિત્રં સુશાણુબંધં, નિર્વાણાન્તં જિનેન્દ્રૈઃ ( મણિતમ્ ) ॥ ૪૪ ॥

જિનભવનાનિ યે ઉદ્ધરન્તિ ભત્તયા શટિતપતિતાનિ ।

તે ઉદ્ધરન્ત્યાત્માનં મીમાદ્ ભવસમુદ્ધાત્ ” ઇતિ ચ ॥

તથૈવ શાસ્ત્રનિષિદ્ધે પૂજાપ્રતિષ્ઠાદિસાવધકાર્યે પ્રવૃત્ત્યા દ્રવ્યલિંગિનોઽપિ  
સ્વાત્માનં મુનિમેવ મન્યન્તે । યે પથિવીશસ્ત્રં પ્રયુજ્ઞાનાઃ ષડ્જીવનિકાય-

આરાધક શ્રાવક કો ભગવાન્ ને હસ કા ફલ હસ પ્રકાર વતાયા હૈ—“ઉસકો અનેકાનેક  
સુખો કા અનુબન્ધ હોતા હૈ ઓર પરમ્પરા સે મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ” ।  
( પચ્ચાશકટીકા ૭ વિ. )

“ જો પુરુષ જીર્ણ જિનભવનો કા ભક્તિસે ઉદ્ધાર કરાતે હૈં વે મીમ ભવસાગર સે અપની  
આત્મા કો તારતે હૈં ” । ( ધર્મસંગ્રહટીકા ૨ અધિ. )

હસી પ્રકાર શાસ્ત્રનિષિદ્ધ પૂજા પ્રતિષ્ઠા આદિ સાવધ કાર્યો મેં પ્રવૃત્તિ કરકે  
દ્રવ્યલિંગી મી અપનને આપ કો મુનિ માનતે હૈં । આશય હૈ કિ—જો લોક પૃથિવી-  
શસ્ત્ર કા પ્રયોગ કરકે ષડ્જીવનિકાયરૂપ સમસ્ત લોક કી હિંસા કરતે હૈં,  
ઓર ભગવાનકા નામ લેકર સ્વયં સ્વોટી પ્રરૂપણા કરતે હૈં અતઃ વે દ્રવ્ય

ભગવાને તેનું ફલ આ પ્રમાણે બતાવ્યું છે—તેને અનેકાનેક સુખોને અનુબંધ થાય  
છે; અને પરમ્પરાથી મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે. ” ( પંચાશકટીકા ૭ વિ. )

“ જે પુરુષ જીર્ણ થયેલું જિનમંદિર, તેનો ભકિતથી ઉદ્ધાર કરાવે છે તે મહાન  
ભવસાગરથી પોતાના આત્માને તારે છે. ” ( ધર્મસંગ્રહટીકા ૨ અધિ. )

આજ પ્રમાણે શાસ્ત્રનિષિદ્ધ પૂજા, પ્રતિષ્ઠા આદિ સાવધ કાર્યોમાં પ્રવૃત્તિ કરીને  
દ્રવ્યલિંગી પણ પોતે પોતાને મુનિ માને છે. આશય એ છે કે—જે લોક પૃથ્વીશસ્ત્રનો  
પ્રયોગ કરીને ષડ્જીવનિકાયરૂપ સમસ્ત લોકની હિંસા કરે છે અને ભગવાનનું  
નામ લઈને પોતે ખોટી પ્રરૂપણા કરે છે માટે તે દ્રવ્યલિંગી છે, સાચા

રૂપં લોકં સર્વમેવ વિદ્ધિસન્તિ તે દ્રવ્યલિङ્ગિનો નાનગારા इति भावः, उक्तञ्च—

“સાવજ્ઞા કિરિયા જેસિં, સાવજ્ઞા દેસણા તહા ।

મમંતિ દીહસંસારે, તે સવ્વે દવ્વલિંગિણો ॥ ૧ इति ॥ सू. २ ॥

एवं शाक्यादीनां पृथिवीकायोपमर्दकत्वेन द्रव्यलिङ्गित्वं प्रतिबोधितं भगवतेति जम्बूस्वामिनं सुधर्मा स्वामी कथयति—‘तत्थे’—त्यादि ।

॥ मूलम् ॥

તત્થ સ્વલુ, ભગવયા પરિણા પવેહા, ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ પરિવંદણ—  
માણણ—પૂયણાણ જાહમરણમોયણાણ, દુક્ખપડિઘાયહેડં, સે સયમેવ પુઢવિ-  
સત્થં સમારંભહ, અણોહિં વા પુઢવિસત્થં સમારંભાવેહ, અણે વા પુઢવિસત્થં

લિંગી હૈ—સવ્વે અનગાર નહીં હૈ । કહા મી હૈ—

“જિન કી ક્રિયા સાવધ હૈ ઓર જિનકા ઉપદેશ સાવધ હૈ, વે દીર્ઘ સંસારમેં પરિભ્રમણ કરતે હૈ । उन सबको द्रव्यलिङ्गी जानना चाहिए” ॥ सू. २ ॥

इस प्रकार पृथिवीकाय का उपमर्दन करने वाले होने से शाक्य आदि को भगवान् ने द्रव्यलिङ्गी कहा है । यह बात सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामी से कहते हैं—‘तत्थ स्वलु’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—ભગવાન્ ને પરિજ્ઞા કા ઉપદેશ દિયા હૈ । ઇસી જીવન કે લિખ—  
વન્દના, માન ઓર પૂજન કે લિખ, જન્મ ઓર મરણ સે મુક્ત હોને કે લિખ, દુઃખ કા નાશ  
કરને કે લિખ વહ સ્વયં હી પૃથિવીકાય કા આરંભ કરતા હૈ, દૂસરો સે પૃથિવીકાયકા  
આરંભ કરાતા હૈ, ઓર પૃથિવીકાયકા આરંભ કરને વાલે દૂસરો કા અનુમોદન કરતા હૈ ।

અણુગાર—સાધુ નથી. કહ્યું છે કે:—

“જેની ક્રિયા સાવધ છે, અને જેનો ઉપદેશ સાવધ છે, તે દીર્ઘ સંસારમાં પરિભ્રમણ કરે છે. તે સર્વને દ્રવ્યલિંગી બાણુવા બોધાયે.” (સૂ. ૨)

એ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયનું ઉપમર્દન—નાશ કરવાવાળા હોવાથી શાક્ય આદિને ભગવાને દ્રવ્યલિંગી કહ્યા છે. આ વાત સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે—‘તત્થ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાને પરિજ્ઞાનો ઉપદેશ આપ્યો છે, આ જીવનને માટે, વંદના, માન અને પૂજન માટે, જન્મ અને મરણથી મુક્ત હોવાના માટે, દુઃખનો નાશ કરવા માટે તે પોતે જ પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરે છે, બીજાથી પૃથિવીકાયનો આરંભ કરાવે છે, અને પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરનાર બીજાને અનુમોદન આપે છે. તે આરંભ તેના

સમારંભંતે સમણુજાણહ । તં સે અહિયાપ, તં સે અબોહીપ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—

તત્ર ચ્વલુ ભગવતા પરિજ્ઞા પ્રવેદિતા । અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્ય પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય, જાતિ-મરણ-મોચનાય દુઃખપ્રતિઘાતહેતું, સ સ્વયમેવ પૃથિવીશસ્ત્રં સમારંભતે, અન્યૈર્વા પૃથિવીશસ્ત્રં સમારંભયતિ, અન્યાન્ વા પૃથિવીશસ્ત્રં સમારંભમાણાન્ સમણુજાનાતિ । તત્ તસ્ય અહિતાય, તત્ તસ્ય અબોધયે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—

તત્ર=પૃથિવીકાયસમારમ્ભે ભગવતા=શ્રીમહાવીરેણ પરિજ્ઞા=સમ્યગ્વબોધઃ ચ્વલુ પ્રવેદિતા=પ્રવોધિતા । કર્મબન્ધસમુચ્છેદાર્થં જીવેન પરિજ્ઞાઽવશ્યં શરણીકરણી-યેતિ ભગવતા પ્રવોધિતમિતિ ભાવઃ । પરિજ્ઞા દ્વિવિધા, જ્ઞ-પ્રત્યાખ્યાન-ભેદાત્ । ‘સાવધવ્યાપાર એવ કર્મબન્ધસ્ય કારણ’-મિતિ જ્ઞાનં-જ્ઞપરિજ્ઞા, તદ્વ્યાપારપરિત્યાગઃ-પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા ।

વહ આરંભ ઉસકે અહિત કે લિણ ઓર ઉસકો અબોધિ કે લિણ હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકાર્થ—પૃથિવીકાય કે સમારંભ કે વિષય મેં ભગવાન્ શ્રી મહાવીર સ્વામીને સમ્યગ્વબોધરૂપ પરિજ્ઞા કા સદુપદેશ દિયા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-કર્મબન્ધ કો નષ્ટ કરને કે લિણ જીવ કો વહ પરિજ્ઞા અવશ્ય હી સ્વીકાર કરની ચાહિણ, એસા ભગવાન્ને કહા હૈ । પરિજ્ઞા દો પ્રકાર કી હૈ—જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા । ‘સાવધ વ્યાપાર સે હી કર્મબન્ધ કા કારણ હોતા હૈ’ એસા જાનના જ્ઞ-પરિજ્ઞા હૈ, ઓર સાવધવ્યાપાર કા ત્યાગ કરના પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા હૈ ।

અહિત માટે અને તે તેની અબોધિ માટે છે. (૩)

ટીકાર્થ—પૃથ્વીકાયના સમારંભના વિષયમાં ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ સમ્યગ્વબોધરૂપ પરિજ્ઞાનો સદુપદેશ આપ્યો છે. તાત્પર્ય એ છે કે:-કર્મબંધને નાશ કરવા માટે જીવે તે પરિજ્ઞા અવશ્યજ સ્વીકાર કરવી જોઈએ, એ પ્રમાણે ભગવાને કહ્યું છે. પરિજ્ઞા એ પ્રકારની છે. જ્ઞપરિજ્ઞા, અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા, ‘સાવધ વ્યાપારજ કર્મબંધનું કારણ થાય છે.’ એ પ્રમાણે જાણવું તે જ-પરિજ્ઞા છે, અને સાવધ વ્યાપારનો ત્યાગ કરવો તે પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા છે.



જીવઃ કસ્મૈ પ્રયોજનાય પૃથિવીકાયં પ્રતિ સાવધવ્યાપારં કરોતી ?-ત્યાહ-  
'ઇમસ્સ ચેવે'-ત્યાદિ । અસ્યૈવ વિદ્યુહ્તાવિલાસવત્ક્ષણભદ્રસ્ય જીવિતસ્ય જીવન-  
સ્વાર્થે ચિરસુખાર્થે, પ્રાસાદસદનાદિરચનાર્થે, ગમના-ગમના-વસ્થાનો-પવેશન-પાર્શ્વ-  
પરિવર્તન-પુતલિકાપ્રતિમાદિકરણો-ચારપ્રસવણાદિકરણો-પકરણાદિગ્રહણનિષ્કેપણા-  
સલેપન-પ્રહરણ-ભૂષણ-ક્રય-વિક્રય-કૃષિકરણ-ભાણ્ડાદિનિર્માણાદ્યર્થમિત્યર્થઃ । તથા  
પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય, પરિવન્દનં=પ્રશંસા, તદર્થં યથા \*આશ્ચર્યગૃહાદિ-

જીવ કિસ પ્રયોજનકે લિયે પૃથિવીકાય કે વિષય મેં સાવધ વ્યાપાર કરતા હૈ ? સો  
વતલાતે હૈ—

વિજલી કી ચમક કે સમાન હસ ક્ષણવિનશ્વર જીવન કે ચિરકાલીન સુખ કે ઉદ્દેશ  
સે મહલ, મકાન આદિ કા નિર્માણ કરાને કે લિયે, અથવા ગમન, આગમન, અવસ્થાન  
(સ્થિત રહના), ઉપવેશન (બેઠના), પાર્શ્વ-પરિવર્તન (પસવાડા બદલના), પુતલી બનાના,  
પ્રતિમા બનાના, મલ-મૂત્ર ત્યાગના, ઉપકરણ આદિ ગ્રહણ કરના, રચના, લેપકરના, ગ્રહણ  
કરના, સજાના, સ્વરીદના, બેચના, ખેતી કરના, તથા વર્તન આદિ બનાના, ઇત્યાદિ  
કાર્યો કે લિયે સાવધ વ્યાપાર કિયા જાતા હૈ ।

હસ કે અતિરિક્ત પરિવન્દન માનન ઓર પૂજન કે લિયે મી સાવધ વ્યાપાર  
કિયા જાતા હૈ । પરિવન્દન અર્થાત્ પ્રશંસા કે લિયે, જૈસે આશ્ચર્યગૃહ (આજાયબ ઘર)

જીવ કયા પ્રયોજન માટે પૃથ્વીકાયના વિષયમાં સાવધ વ્યાપાર કરે છે ? તે  
બતાવે છે:—

વિજલીના ચમકારાની સમાન આ ક્ષણભંગુર જીવનના ચિરકાલીન (લાંબા  
સમય સુધી) સુખના ઉદ્દેશથી, મહેલ મકાન આદિ બનાવવાને માટે, અથવા ગમન,  
આગમન, અવસ્થાન, (સ્થિત રહેવું) ઉપવેશન, (બેસવું) પાર્શ્વ-પરિવર્તન, (પડખાં-  
બદલવાં) પુતલી બનાવવી, પ્રતિમા બનાવવી, મલ-મૂત્ર ત્યાગ કરવો; ઉપકરણ આદિનું  
ગ્રહણ કરવું, રાખવું, લેપ કરવો, પ્રહરણ કરવું, સજાવું, સ્વરીદવું, વેચવું, ખેતી  
કરવી તથા વાસણ બનાવવાં, ઇત્યાદિ કાર્યોને માટે સાવધ વ્યાપાર કરવામાં આવે છે.

તે સિવાય પરિવન્દન માન અને પૂજન માટે પણ સાવધ વ્યાપાર કરવામાં આવે છે.  
પરિવન્દન અર્થાત્ પ્રશંસા માટે જેમ આશ્ચર્યગૃહ-(અજાયબ ઘર) આદિ બનાવવામાં

\* આશ્ચર્યગૃહમ્-‘મ્યુઝિયમ’ ‘અજાયબઘર’ इति भाषाप्रसिद्धम् ।

કરણે, માનનં=જનસત્કારઃ, તદર્થ, યથા-કીર્તિસ્તમ્ભાદિકરણે પૂજનં=વસ્ત્રરત્નાદિ-પુરસ્કારલાભસ્તદર્થ, યથા-શિલ્પિનાં રાજદેવપ્રતિમાદિરચને । જાતિમરણમોચનાય-જાતિઃ=જન્મ, તદર્થ ભવાન્તરસુખપ્રાપ્ત્યર્થ દેવકુલાદિકરણે, મરણં=મરણં યેષાં જાતં તદર્થ મૃતપિત્રાદિસ્મરણાર્થમિત્યર્થઃ, યથા સ્તૂપચૈત્યાદિકરણે, મોચનં=મુક્તિસ્તદર્થ, યથા-દેવભવનપ્રતિમાદિકરણે । યદ્વા જાતિમરણમોચનાય=જન્મમરણવિમુક્તયે । તથા દુઃખમતિઘાતહેતું=દુઃખવિધ્વંસાર્થ, યથા-

આદિ બનવાનેસે પ્રશંસા હોતી હૈ । માનન અર્થાત્ જનતાદ્વારા મિલને વાલા સત્કાર । ઉસ સત્કાર કે લિખે કીર્તિસ્તમ્ભ (મેમોરિયલ) આદિ બનવાકર સમારમ્ભ કરતે હૈ । પૂજન કા અર્થ હૈ-વસ્ત્ર યા રત્ન આદિ કા પુરસ્કાર પાના । જૈસે શિલ્પી લોગ પુરસ્કાર પાને કે ઉદ્દેશ્ય સે રાજા યા દેવતા કી પ્રતિમા બનાતે હૈ ।

જન્મ, મરણ ઓર મુક્તિ કે લિખે મી પૃથિવીકાયકા સમારમ્ભ ક્રિયા જાતા હૈ । જન્મ કે લિખે જૈસે ભવાન્તર મેં સુખ પાને કે લિખે દેવકુલ આદિ કા નિર્માણ કરાને મેં ઓર મૃત્યુ કે લિખે જૈસે મૃત પિતા આદિ કા સ્મારક (સ્તૂપ-ચૈત્ય) બનવાને મેં, ઓર મોચન કે અર્થાત્ મુક્તિ કે લિખે દેવભવન ઇવં ઊનકી પ્રતિમા બનવાને મેં, અથવા જન્મ-મરણ-મોચન કા અર્થ હૈ-જન્મ ઓર મરણસે મુક્ત હોના, ઊસ કે લિખે પૃથ્વીકાય કા સમારમ્ભ કરતે હૈ ।

તથા દુઃખકા નાશ કરને કે લિખે મી પૃથ્વીકાય કા સમારમ્ભ કરતે હૈ, જૈસે

આરંભ કરે છે. માનન અર્થાત્ જનતા દ્વારા મળવાવાળો સત્કાર, તે સત્કાર માટે-કીર્તિસ્તંભ (મેમોરિયલ) આદિ બનાવીને સમારંભ કરે છે. પૂજનનો અર્થ છે-વસ્ત્ર અથવા રત્ન આદિનો પુરસ્કાર પ્રાપ્ત કરવો. તે માટે શિલ્પીલોગ રાજાની કે દેવતાની પ્રતિમા બનાવવામાં સમારંભ કરે છે.

જન્મ મરણ મોચન (મૂકાવવા) માટે પણ પૃથ્વીકાયનો સમારંભ કરવામાં આવે છે. જન્મના માટે જેમ ભવાન્તરમાં સુખ પ્રાપ્ત કરવા માટે દેવકુલ આદિના નિર્માણ કરાવવામાં, અને મૃત્યુ માટે જેમ મૃત પિતા આદિનું સ્મારક સ્તૂપ-ચૈત્ય બનાવવામાં, મોચન અર્થાત્ મુક્તિને માટે દેવભવન એવં તેની પ્રતિમા બનાવવામાં, અથવા જન્મ-મરણ-મોચનનો અર્થ છે-જન્મ અને મરણથી મુક્ત થવું, તે માટે પૃથ્વીકાયનો સમારંભ કરે છે.

તથા દુઃખનો નાશ કરવા માટે પણ પૃથ્વીકાયનો સમારંભ કરે છે, જેમ-શ્રીબ્રહ્મા

ગ્રીષ્મતાપાદિનિવારણાર્થ, સ્વચક્રપરચક્રભયનિવૃત્ત્ય ચ ભૂમિગૃહપ્રાકારાદિરચને ।  
 સઃ=જીવનપરિવન્દનમાનનપૂજનાદ્યર્થ જનઃ સ્વયમેવ પૃથિવીશસ્ત્રં  
 સમારભતે=પૃથિવ્યુપમર્દકં દ્રવ્યભાવશસ્ત્રં વ્યાપારયતિ । અન્યૈર્વા પૃથિવીશસ્ત્રં  
 સમારમ્ભયતિ=ઉદ્યોજયતિ પૃથિવીશસ્ત્રં સમારમમાણાન્ અન્યાન્ સમનુજાનાતિ=  
 અનુમોદયતિ ।

एममतीतानागताभ्यां, तथा मनोवाक्यैश्च पृथिवीशस्त्रसमारम्भ-  
 भेदा अवगन्तव्याः ।

(૭) વેદનાદ્વારમ્—

પૃથિવીશસ્ત્રં સમારમમાણઃ કિં ફલં પ્રાપ્નોતીત્યાહ—‘તં સે અહિયાણ’ ઇત્યાદિ ।

ગ્રીષ્મ કે તાપ સે બચને કે લિષ, અથવા સ્વચક્ર ઓર પરચક્ર કે ભયકી નિવૃત્તિ, કે લિષ, મોહરા યા ચહારદીવારી ( પ્રકોટા ) બનવાના । હસ પ્રકાર જીવન પરિવન્દન માનન ઓર પૂજન આદિ કે લિષ મનુષ્ય સ્વયં હી પૃથ્વીશસ્ત્રકા સમારમ્ભ કરતા હૈ અર્થાત્ પૃથિવી કા ઘાત કરને વાલે દ્રવ્ય ઓર ભાવશસ્ત્ર કા વ્યાપાર કરતા હૈ ઓર પૃથિવીશસ્ત્ર કા પ્રયોગ કરને કરાનેવાલે દૂસરો કા અનુમોદન કરતા હૈ ।

હસ પ્રકાર અતીત ઓર અનાગત સે તથા મન, વચન ઓર કાયસે પૃથિવીશસ્ત્ર કે આરમ્ભ કે ભેદ સમજાલેને ચાહિણ.

(૭) વેદનાદ્વાર—

પૃથિવીશસ્ત્ર કા આરમ્ભ કરનેવાલા કયા ફલ પાતા હૈ ? સો કહતે હૈ—‘તં સે અહિયાણ’ ઇત્યાદિ ।

તાપથી બચવા માટે અથવા સ્વચક્ર અને પરચક્રના ભયની નિવૃત્તિ માટે ભોંયરા અથવા કોટ બનાવવા.

આ પ્રમાણે જીવન, પરિવંદન, માનન, અને પૂજન આદિ માટે મનુષ્ય પોતેજ પૃથ્વી-શસ્ત્રનો સમારંભ કરે છે. અર્થાત્ પૃથ્વીનો ઘાત કરવાવાળા દ્રવ્ય અને ભાવ શસ્ત્રના વ્યાપાર કરે છે. તથા બીજા પાસે પૃથ્વીશસ્ત્રનો વ્યાપાર કરાવે છે. અને પૃથ્વીશસ્ત્રનો પ્રયોગ કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન આપે છે.

આ પ્રમાણે અતીત અને અનાગત (ભૂત-ભવિષ્ય)થી તથા મન, વચન અને કાયાથી પૃથ્વીશસ્ત્રના આરંભના ભેદોને સમજી લેવા જોઈએ.

(૭) વેદનાદ્વાર—

પૃથ્વીશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળા શું ફળ પામે છે ? તે કહે છે—‘તં સે અહિયાણ’ ઇત્યાદિ.



तत्-पृथिवीकायसमारम्भणं तस्य=पृथिवीशस्त्र समारम्भमाणस्य अहि-  
ताय=अकल्याणाय भवतीति शेषः । तत्-तदेव च पृथिवीकायसमारम्भणमेव च  
तस्य पृथिवीशस्त्र समारम्भमाणस्य अबोधये=सम्यक्त्वालाभाय, जिनधर्मप्राप्त्यभावाय  
च भवति । पृथिवीकायसमारम्भणं हि कृतकारितानुमोदितभेदेन त्रिविधं,  
तस्यातीतवर्तमानानागतभेदेन प्रत्येकं त्रैविध्ये नवधा भवति, नवविधस्यापि  
पृथिवीकायसमारम्भणस्य मनोवाकाययोगभेदेन प्रत्येकं त्रैविध्ये सप्तविंशति-  
र्भङ्गा भवन्ति । एवंविधपृथिवीकायसमारम्भप्रवृत्तः खलु षट्कायारम्भसंपातजन्य-  
घोरतरदुरितार्जनेन दुरन्तसंसारदावानलज्वालान्तःपातं प्राप्यानन्तनरकनिगोदादि-  
दुःखमनुभवन् न कदाचित्कल्याणं शाश्वतसुखप्रदं मोक्षमार्गं प्राप्नोतीति भावः ॥३॥

वह पृथिवीकाय का आरंभ, आरंभ करने वाले के अहित के लिए और अबोधि के  
लिए होता है । अर्थात् आरंभ करने से सम्यक्त्व और जिनधर्म की प्राप्ति नहीं होती है ।

पृथिवीकाय का आरंभ-करना, कराना, और अनुमोदन के भेद से तीन प्रकार का  
है । इन तीनों भेदों के अतीत वर्तमान और अनागत के भेद से तीन-तीन भेद करने पर  
आरम्भ नौ प्रकार होता है । इन नौ भेदों का मन, वचन, और काय से गुणाकार कर देने  
पर सत्ताईस भेद हो जाते हैं ।

इस प्रकार के पृथिवीकाय के समारम्भ में प्रवृत्त पुरुष छहों कार्यों का आरम्भ करता  
है और अत्यन्त घोर पाप उपार्जन करके दुरन्त संसाररूपी दावानलकी ज्वालाओं में पडकर  
नरक निगोद आदि के दुःख भोगता हुआ न कभी कल्याण की प्राप्ति करता है और न  
शाश्वत सुख देनेवाले मोक्षमार्ग को पाता है ॥ ३ ॥

તે પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરવાવાળાના અહિત માટે અને અબોધિને માટે હોય  
છે. અર્થાત્-આરંભ કરવાથી સમ્યક્ત્વ અને જિનધર્મની પ્રાપ્તિ થતી નથી.

પૃથ્વીકાયનો આરંભ-કરવો, કરાવવો અને કરવાવાળાને અનુમોદન આપવો  
વગેરેના ભેદથી ત્રણ પ્રકારનો છે, એ ત્રણેય ભેદોના ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ અને વર્ત-  
માનકાળના ભેદથી ત્રણ ત્રણ ભેદ કરવાથી આરંભ નવ પ્રકારનો છે. એ નવ ભેદોને  
મન, વચન અને કાયા, આ ત્રણથી ગુણુવા વડે કરી સત્તાવીશ ભેદ થઈ જાય છે.

આ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયના સમારંભમાં પ્રવૃત્ત પુરુષ છ કાર્યોનો આરંભ કરે છે,  
અને અત્યન્ત ઘોર પાપ ઉપાર્જન કરીને દુરન્તસંસારરૂપી દાવાનલની જ્વાલાઓમાં  
પડીને, નરક-નિગોદ આદિનાં દુઃખ ભોગવતાં કોઈ વખત પણ કલ્યાણની પ્રાપ્તિ કરી  
શકતા નથી, અને શાશ્વત સુખ દેવાવાળા મોક્ષમાર્ગને પણ પ્રાપ્ત થતા નથી. (૩)

## (૮) નિવૃત્તિદ્વારમ્

येन तु तीर्थकरादीनां समीपे पृथिवीकायजीवस्वरूपं ज्ञातं स एवं विजानाती-  
त्याह—‘से तं संबुज्झमाणे’ इत्यादि ।

॥ मूलम् ॥

से तं संबुज्झमाणे आयाणीयं समुद्वाय सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणं  
अंतिए । इहमेगे सिणायं भवइ—एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस  
खलु णरए, इच्चत्थं, गढिए लोए जमिणं यिरूवरूवेहिं सत्थेहिं पुढविकम्मसमारंभेण  
पुढविसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ सू. ४ ॥

छाया—

स तत् संबुध्यमान आदानीयं समुत्थाय श्रुत्वा खलु भगवतः अनगाराणा-  
मन्तिके इहैकेषां ज्ञातं भवति-एष खलु ग्रन्थः, एष खलु मोहः, एष खलु मारः,  
एष खलु नरकः, इत्यर्थं गृद्धो लोकः, यदिमं विरूपरूपैः शस्त्रैः पृथिवीकर्मसमारम्भेण  
पृथिवीशस्त्रं समारम्भमाणः अन्यान् अनेकरूपान् प्रणान् विहिंसति ॥ सू. ४ ॥

## (૮) નિવૃત્તિદ્વાર-

जिसने तीर्थकर आदिके समीप में पृथिवीकाय के जीवों का स्वरूप जान लिया है,  
वह इस प्रकार जानता है—‘से तं.’ इत्यादि ।

मूलार्थ—जो पुरुष तीर्थकर भगवान् के अथवा अनगारों के निकट उपदेश सुनकर  
समझता है और उपादेय ( चारित्र ) को अङ्गीकार करके विचरता है उसे ज्ञात हो जाता है कि  
पृथिवीकायका यह आरंभ ग्रंथ है, यह मोह है, यह मार है, यह नरक है । इस में आसक्त  
पृथ्वीशस्त्र का आरंभ, करने वाला लोक तरह-तरह के शस्त्रों से पृथ्वीकायका आरंभ करके  
अन्य अनेक प्रकार के प्राणीकी हिंसा करता है ॥ सू. ४ ॥

## (૯) નિવૃત્તિદ્વાર

જેણે તીર્થ'કર આદિના સમીપમાં પૃથ્વીકાયના જીવોનું સ્વરૂપ જાણી લીધું છે,  
તે આ પ્રમાણે જાણે છે—‘સે તં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જે પુરૂષ તીર્થ'કર ભગવાનની અથવા અણગારોની સમીપ ઉપદેશ  
સંભળીને સમજે છે, અને ઉપાદેય (ચારિત્ર)ને અંગીકાર કરીને વિચરે છે; તેને માલૂમ  
પડે છે કે—પૃથ્વીકાયનો આરંભ એ ગ્રંથ છે, એ મોહ છે, એ માર છે, એ નરક છે,  
એમાં આસક્ત પૃથ્વીશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળા જાત-જાતના શસ્ત્રથી પૃથ્વીકાયનો  
આરંભ કરીને અન્ય અનેક પ્રકારના પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે (૪)



॥ ટીકા ॥

યઃ खलु भगवतः=तीर्थंकरस्य, अनगाराणाम्=तदीयश्रमणनिर्ग्रन्थानाम्, अन्तिके=समीपे, श्रुत्वा=उपदेशं निशम्य, आदानीयम्, उपादेयं सर्वसावद्ययोग-परित्यागरूपं चारित्रं समुत्थाय=अङ्गीकृत्य विहरति, स तत्=पृथिवीकायसमारम्भणम् संबुध्यमानः=अहिताबोधिजनकत्वेन विज्ञाता भवतीति ।

સ હિ એવં વિચારયતિ-इह मनुष्यलोके एकेषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेशसंज्ञात-सम्यगवबोधवैराग्याणामात्मार्थिनामेव ज्ञातं=विदितं भवति । किं ज्ञातं भवती ?-त्याकाङ्क्षायामाह—‘एस खलु गंधे’ इत्यादि ।

एषः पृथिवीशस्त्रसमारम्भः खलु=निश्चयेन ग्रन्थः=ग्रध्यते=बध्यतेऽनेनेति ग्रन्थः=अष्टविधकर्मबन्धः । कारणे कार्योपचारात् पृथिवीशस्त्रसमारम्भस्य

ટીકાર્થ—જો મગવાનું તીર્થંકર કે યા ઉનકે નિર્ગ્રન્થ શ્રમણો કે સમીપ ઉપદેશ સુનકર ઉપાદેય કો અર્થાત્ સર્વસાવધયોગ કે ત્યાગરૂપ ચારિત્ર કો અંગીકાર કરકે વિચરતા હૈ વહ પૃથ્વીકાયકે સમારંભ કો અહિતકર ઔર અબોધિજનક સમજતા હૈ ।

વહ હસ પ્રકાર વિચાર કરતા હૈ-इस मनुष्य लोक में श्रमण निर्ग्रन्थों के उपदेश से जिन्हें सम्यग्ज्ञान और वैराग्य हो गया है उन आत्मारथी पुरुषों को ही ज्ञात होता है । उन्हें क्या ज्ञात होता है ? ऐसी आकांक्षा होने पर कहते हैं—‘एस खलु गंधे’ इत्यादि ।

यह पृथ्वीकाय का समारम्भ निश्चय ही ग्रंथ है अर्थात् आठ प्रकार के कर्मोंका बंध है । कारण में कार्यका उपचार करके पृथिवीकाय के समारम्भ को यहाँ ग्रन्थ कहा है ।

ટીકાર્થ—જે લગવાનું તીર્થંકરની અથવા તેના નિર્ગ્રન્થ શ્રમણોની સમીપ ઉપદેશ સાંભળી ઉપાદેયને અર્થાત્ સર્વસાવધયોગના ત્યાગરૂપ ચારિત્રને અંગીકાર કરીને વિચરે છે, તે પૃથ્વીકાયના સમારંભને અહિતકર અને અબોધિજનક સમજે છે.

તે આ પ્રમાણે વિચાર કરે છે કે:-આ મનુષ્ય લોકમાં શ્રમણ નિર્ગ્રન્થોના ઉપદેશથી જેને સમ્યગ્જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય થઈ ગયો છે તે આત્માર્થી પુરુષોને જ જાણવામાં હોય છે.

તે શું જાણવામાં હોય છે ? એવી શંકા થતાં કહે છે-‘एस खलु गंधे’ इत्यादि આ પૃથ્વીકાયને સમારંભ નિશ્ચય જ ગ્રંથ છે. અર્થાત્ આઠ પ્રકારના કર્મોનો બંધ છે. કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને પૃથ્વીકાયના સમારંભને અહિં ગ્રંથ કહ્યો છે. આશય એ છે કે—



ગ્રન્થરૂપત્વમ્, એવમગ્રેऽપિ બોધ્યમ્ । તથા-એષ એવ પૃથિવીસમારમ્ભઃ મોહઃ=વિપર્યાસઃ, વિપરીતજ્ઞાનરૂપઃ । તથા-એષ એવ મારઃ=મરણમ્ નિગોદાદિમરણરૂપઃ । તથા-એષ સ્વલુ નરકઃ=નારકજીવાનાં દશવિધયાતનાસ્થાનમ્ । इत्यर्थम्=एतदर्थं कर्मबन्ध-मोह-मरण-नरकरूपं घोरं दुःखफलं प्राप्य पुनः पुनरेतदर्थमेव लोकः=अज्ञानवशवर्ती जीवः गृद्धः=लिप्सुरस्ति । यद्वा गृद्धः=विषयभोगासक्तः लोकः=संसारी जीवः इत्यर्थं =एतदर्थमेव-कर्मबन्धमोहमरणनरकार्थमेव प्रवर्तते ।

यद्यपि-विषयभोगासक्तो लोकः शरीरादिपरिपोषणार्थं परिवन्दनमानन-पूजनार्थं जातिमरणमोचनार्थं दुःखप्रतिघातार्थं च पृथिवीशस्त्रसमारम्भं करोति

આશય યહ હૈ કિ આરંભ-ગ્રન્થ (બંધ) કા કારણ હોને સે ગ્રન્થ કહા ગયા હૈ । હસી પ્રકાર કા ઉપચાર આગે કે કથન મેં ભી સમજ લેના ચાહિયે ।

યહ પૃથિવીકાયસમારંભ મોહ અર્થાત્ વિપર્યાસ હૈ-વિપરીત જ્ઞાનરૂપ હૈ, તથા યહી આરમ્ભ, નિગોદ આદિ મરણરૂપ હૈ । તથા યહી આરંભ નરક હૈ અર્થાત્ નારકી જીવોં કે લિયે દશ પ્રકાર કી ક્ષેત્ર વેદનાઓં કા સ્થાન હૈ । હસ સમારંભ કે કારણ કર્મબંધ, મોહ, મરણ એવં નરકરૂપ ઘોર દુઃખમય ફલ પ્રાપ્તકર કે ભી અજ્ઞાની લોગ વાર-વાર હસી કી ઇચ્છા કરતે હૈ । અથવા સંસારી જીવ વિષયભોગોં મેં આસક્ત હોતા હૈ અર્થાત્ કર્મબંધ, મોહ, મરણ ઓર નરક કે લિયે હી અજ્ઞાની જીવ પ્રવૃત્તિ કરતે હૈ ।

વિષયભોગોં મેં આસક્ત જીવ યદ્યપિ શરીર આદિ કો પુષ્ટ કરને કે લિયે પરિવંદન, માનન ઓર પૂજન કે લિયે, જન્મ મરણ સે મુક્ત હોને કે લિયે, દુઃખ કા

આરંભ-ગ્રન્થ (બંધ)નું કારણ હોવાથી ગ્રન્થ કહ્યો છે, આ પ્રમાણેનો ઉપચાર આગળના કથનમાં પણ સમજ લેવો જોઈએ.

આ પૃથ્વીકાય-સમારંભ મોહ અર્થાત્ વિપર્યાસ છે, વિપરીતજ્ઞાનરૂપ છે, તથા એ આરંભ નિગોદ આદિ મરણરૂપ છે. તથા એ આરંભ નરક છે અર્થાત્ નારકીના જીવો માટે હસ પ્રકારની ક્ષેત્ર વેદનાઓનું સ્થાન છે. આ સમારંભના કારણે કર્મબંધ, મોહ, મરણ અને નરકરૂપ ઘોર દુઃખમય ફલ પ્રાપ્ત કરીને પણ અજ્ઞાની લોક વારંવાર તેની ઇચ્છા કરે છે. અથવા સંસારી જીવ વિષયભોગોમાં આસક્ત થાય છે, અર્થાત્ કર્મબંધ, મોહ, મરણ અને નરકતા માટેજ અજ્ઞાની જીવ તેમાં પ્રવૃત્તિ કરે છે.

વિષયભોગોમાં આસક્ત જીવ હજી પણ શરીર આદિને પુષ્ટ કરવા માટે પરિવંદન, માનન, અને પૂજનને માટે, જન્મ મરણથી મુક્ત થવા માટે દુઃખનો નાશ કરવા માટે,

તથાપિ તત્ફલં કર્મબન્ધમોહમરણનરકરૂપમેવ લભન્તે, અતઃ પૃથિવીકર્મસમારમ્મસ્ય તદેવ ફલં ભવતીતિ ભાવઃ । ઇત્યર્થમિતિ પ્રયોગસ્તુ યથા-અયં સંસારી લોકો જાયતે મરણાયૈવ, મ્રિયતે ચ જનનાયૈવ, ઇતિ, તદ્વત્ ।

લોકઃ પુનઃ પુનઃ કર્મબન્ધાદ્યર્થમેવ લિપ્સુરસ્તિ, તદર્થમેવ પ્રવર્તતે વા, ઇતિ પ્રતિજ્ઞાયાં હેતુમાહ-‘જમિણં’ . ઇત્યાદિ ।

યદ્-યસ્માત્=વિરૂપરૂપૈઃ = નાનાવિધૈઃ શાસ્ત્રઃ=સ્વકાયપરકાયતદુભયરૂપૈઃ પૃથિવીકર્મસમારમ્મેણ=પૃથિવ્યુપમર્દકસાવધવ્યાપારકરણેન, યદ્વા-પૃથિવીકાયમુદ્દિ-શ્યાષ્ટવિધકર્મસમુત્પાદકસાવધવ્યાપારેણ, ઇમં = પૃથિવીકાયં વિહિનસ્તિ,

વિનાશ કરને કે લિષ્ટ, પૃથિવીશસ્ત્ર કા આરંભ કરતા હૈ તથાપિ ઇસ આરંભ કા ફલ ઉસે કર્મબન્ધ, મોહ, મરણ ઓર નરક કે રૂપ મેં હી મિલતા હૈ । અતઃ એવ આશય યહ હૈ કિ-કોઈ કિસી મી અમિલાષા સે પૃથિવીકાયકા આરંભ કરે મગર ફલ તો વહી કર્મ-બંધ આદિ હી હોગા । ( ઇચ્છત્થં ) ઇસ કા પ્રયોગ યહ બતલારને કે લિષ્ટ ક્રિયા ગયા હૈ-યહ સંસારી જીવ ઉત્પન્ન હોતા હૈ મરને કે લિષ્ટ ઓર મરતા હૈ જનમને કે લિષ્ટ, ઇસી પ્રકાર યહ પ્રયોગ હૈ ।

લોક વારંવાર કર્મબંધ આદિ કે લિષ્ટ હી અમિલાષી હૈ, અથવા-કર્મબંધ કે લિષ્ટ હી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ । ઇસ પ્રતિજ્ઞા મેં હેતુ કહતે હૈ-‘જમિણં’ . ઇત્યાદિ ।

જિસ કારણ સે ગૃહ (આસક્ત) લોક નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રો સે-સ્વકાય, પરકાય ઓર ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્રો સે-પૃથિવીકાય કા સમારંભ કરકે અર્થાત્ પૃથિવીકાય કી હિંસા કરને વાલા સાવધ વ્યાપાર કરકે, અથવા પૃથિવીકાય કે નિમિત્ત સે આઠો કર્મ-જનક સાવધ

પૃથ્વીશસ્ત્રનો આરંભ કરે છે તો પણ તે આરંભનું ફળ તેને કર્મબંધ, મોહ, મરણ અને નરકના રૂપમાં જ મળે છે. એ માટે આશય એ છે કે-કોઈ કોઈ પણ અભિલાષથી પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરે પરંતુ ફળ તો તે કર્મબંધ આદિ જ થશે.

‘ઇચ્છત્થં’ એનો પ્રયોગ એ બતાવવા માટે, કર્યો છે કે આ સંસારી જીવ ઉત્પન્ન થાય છે મરવાને માટે, અને મરે છે તે જન્મ લેવા માટે, આ પ્રમાણે એ પ્રયોગ છે.

લોક વારંવાર કર્મબંધ આદિ માટેજ અભિલાષી છે. અથવા કર્મબંધ માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે. આ પ્રતિજ્ઞામાં હેતુ કહે છે-‘જમિણં’ . ઇત્યાદિ.

જે કારણથી ગૃહ-આસક્ત લોકો નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી-સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાય રૂપ શસ્ત્રોથી-પૃથ્વીકાયનો સમારંભ કરીને અર્થાત્ પૃથ્વીકાયની હિંસા કરવાવાળા સાવધ વ્યાપાર કરીને અથવા પૃથ્વીકાયના નિમિત્તથી આઠ કર્મોને ઉત્પન્ન કરનાર સાવધ વ્યાપારથી

છિનત્તિ, મિનત્તિ, પ્રાણરહિતં કરોતિ ગૃહો લોક इत्यादि । तथा पृथिवीशस्त्र= पृथिव्युपमर्दकं शस्त्र स्वकायपरकायतदुभयरूपं समारभमाणः=व्यापारयन् अन्यान्= अप्कायादीन् अनेकरूपान्=त्रसान् स्थावरांश्च, प्राणान्=प्राणिनो विहिनस्ति । पृथिवीकायहिंसया षड्जीवनिकायरूपं लोकं सर्वमेव प्रणिहन्तीति घोरतरं दुरितं कुर्वन् पुनः पुनः कर्मबन्धादिनरकान्तं प्राप्यापि तदर्थमेव प्रवर्त्तते न पुनर्मोक्षायेति भावः ॥ सू. ४ ॥

નનુ પૃથિવીકાયજીવાનાં શ્રોત્રનેત્રપ્રાણરસનેન્દ્રિયાણિ ન સન્તિ, નાપિ મનસ્તેષાં, કથં તર્હિ દુઃસ્વેદના સંભવતિ ? તતશ્ચ પૃથિવીકાયસમારમ્ભિણાં

વ્યાપાર સે ઇસ પૃથિવીકાય કા હનન કરતા હૈ, છેદન કરતા હૈ, ભેદન કરતા હૈ, ઉસે પ્રાણહીન બનાતા હૈ । તથા પૃથિવીકાય કે સ્વકાય, પરકાય, ઓર ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્રોં કા ઉપયોગ કરતા હુઆ અપ્કાય આદિ અનેક ત્રસ સ્થાવર પ્રાણિયોં કી હિંસા કરતા હૈ ।

તાત્પર્યે યહ હૈ કિ-પૃથિવીકાય કી હિંસા કે દ્વારા સમસ્ત ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોક કી હિંસા કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અત્યન્ત ઘોર પાપ કરતા હુઆ વારંવાર કર્મબંધ કરતા હૈ ઓર યહોં તક કિ નરક કો પ્રાપ્ત કરકે મી નરક કે લિખે હી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ, મોક્ષ કે લિખે નહીં ॥ સૂ. ૪ ॥

પૃથિવીકાય કે જીવોં મેં શ્રોત્રેન્દ્રિય, ચક્ષુરિન્દ્રિય, પ્રાણેન્દ્રિય, રસના-ઇન્દ્રિય ઓર મન નહીં હૈ, ફિર ઉન્હેં દુઃખ કા અનુભવ કૈસે હો સકતા હૈ ? ઓર એસી અવસ્થા મેં પૃથિવીકાય કા આરંભ કરનેવાલોં કો કર્મબંધ ક્યોં હોતા હૈ ? ઇસ શંકા કા સમાધાન

આ પૃથ્વીકાયનો ઘાત કરે છે. છેદન કરે છે. ભેદન કરે છે, તેને પ્રાણહીન બનાવે છે. તથા પૃથ્વીકાયના સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્રોનો ઉપયોગ કરતા થકા અપ્કાય આદિ અનેક ત્રસ-સ્થાવર પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે.

તાત્પર્ય એ છે કે-પૃથ્વીકાયની હિંસા દ્વારા સમસ્ત ષડ્જીવનિકાયરૂપ લોકની હિંસા કરે છે. આ પ્રમાણે અત્યન્ત ઘોર પાપ કરીને વારંવાર કર્મબંધ કરે છે. અને ત્યાં સુધી કે નરકને પ્રાપ્ત કરીને પણ નરક માટે જ પ્રવૃત્તિ કરે છે, મોક્ષ માટે કરતા નથી. (૪)

પૃથ્વીકાયના જીવોમાં શ્રોત્રેન્દ્રિય, ચક્ષુરિન્દ્રિય, પ્રાણેન્દ્રિય, રસના-ઇન્દ્રિય અને મન નથી, તે પછી તેને દુઃખનો અનુભવ કેવી રીતે થઈ શકશે ? અને એવી અવસ્થામાં પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરવાવાળાને કર્મબંધ કેમ થઈ શકશે ? આ શંકાનું



कथं कर्मबन्धः ? इति जिज्ञासायामाह—‘ से बेमि. ’ इत्यादि ।

( मूलम )

से बेमि-अप्पेगे अंधमब्भे, अप्पेगे अंधमच्छे, अप्पेगे पायमब्भे, अप्पेगे पायमच्छे. अप्पेगे गुंफमब्भे, अप्पेगे जंघमब्भे, अप्पेगे जाणुमब्भे, अप्पेगे उकमब्भे, अप्पेगे कडिमब्भे, अप्पेगे णाभिमब्भे, अप्पेगे उयरमब्भे, अप्पेगे पासमब्भे, अप्पेगे पिट्टिमब्भे, अप्पेगे उरमब्भे, अप्पेगे हिययमब्भे, अप्पेगे थणमब्भे, अप्पेगे खंधमब्भे, अप्पेगे बाहुमब्भे, अप्पेगे हत्थमब्भे, अप्पेगे अंगुलिमब्भे, अप्पेगे णहमब्भे, अप्पेगे गीबामब्भे, अप्पेगे हणुयमब्भे, अप्पेगे होट्ठमब्भे, अप्पेगे दंतमब्भे, अप्पेगे जीहमब्भे, अप्पेगे तालुमब्भे, अप्पेगे गलमब्भे, अप्पेगे, गंडमब्भे, अप्पेगे कन्नमब्भे, अप्पेगे णासमब्भे, अप्पेगे अच्छिमब्भे, अप्पेगे भमुहमब्भे, अप्पेगे णिडालमब्भे, अप्पेगे सीसमब्भे, अप्पेगे संपमारए अप्पेगे उदवए ॥ सू. ५ ॥

( छाया )

अथ ब्रीवीमि-अप्येकः अन्धमाभिन्ध्यात् अप्येकः अन्धमाच्छिन्ध्यात् । अप्येकः पादमाभिन्ध्यात्, अप्येकः पादमाच्छिन्ध्यात् । अप्येकः गुल्फमाभिन्ध्यात्, अप्येकः जङ्घामाभिन्ध्यात्, अप्येकः जानु आभिन्ध्यात्, अप्येकः उरु आभिन्ध्यात्, अप्येकः कटिमाभिन्ध्यात्, अप्येकः नामिमाभिन्ध्यात्, अप्येकः उदरमाभिन्ध्यात्, अप्येकः पार्श्वमाभिन्ध्यात्, अप्येकः पृष्टिमाभिन्ध्यात्, अप्येकः उर आभिन्ध्यात्, अप्येकः

करने के लिए सूत्र कहते हैं—‘ से बेमि. ’ इत्यादि ।

मूलार्थ—मैं कहता हूँ—कोई अंग को भेदे, कोई अंग को छेदे, कोई पैर को भेदे कोई पैर को छेदे, कोई गुल्फ को भेदे छेदे, कोई पिण्डी को भेदे छेदे, कोई घुटने को भेदे, छेदे, कोई जांघ को भेदे छेदे, कोई कमर को भेदे छेदे, कोई नामि को भेदे छेदे, कोई पेट को भेदे छेदे, कोई, पसवाडे को भेदे छेदे, कोई पीठ को भेदे छेदे, कोई छाती

समाधान करवा भाटे सूत्र कहे छे—‘ से बेमि. ’ इत्यादि.

मूलार्थ—हुं कहुं छुं केअ आंधणाने लेहन करे, केअ आंधणाने छेहन करे, केअ पगने डापे, केअ पगने छेहे केअ शुद्ध- (धुंटी) ने लेहे, छेहे, केअ पीडीने लेहे, छेहे, केअ धुंटीने लेहे छेहे, केअ नांघने लेहे छेहे, केअ कमरने लेहे छेहे केअ नामि (धुंटी) ने लेहे छेहे, केअ पेटने लेहे छेहे, केअ पांसणीआने लेहे-छेहे केअ पीठने लेहे-छेहे, केअ-छातीने लेहे-छेहे केअ

હૃદયમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ સ્તનમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ સ્કન્ધમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 બાહુમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ હસ્તમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ અઙ્ગુલિમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 નયમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ ગ્રીવામાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ હનુ આભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 ઓષ્ઠમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ દન્તમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ જિહ્વામાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 તાલુ આભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ ગલમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ ગણ્ડમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 કર્ણમાભિન્ધાત્૨; અપ્યેકઃ નાસામાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ અક્ષિ આભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 ભ્રુવમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ લલાટમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ શીર્ષમાભિન્ધાત્૨, અપ્યેકઃ  
 સંપ્રમારયેત્, અપ્યેકઃ ઉપદ્રાવયેત્ ॥ સૂ. ૫ ॥

કો મેદે છેદે, કોઈ હૃદય કો મેદે છેદે, કોઈ સ્તન કો મેદે છેદે, કોઈ કન્ધે કો  
 મેદે છેદે, કોઈ બાહુ કો મેદે છેદે, કોઈ હાથ કો મેદે છેદે, કોઈ ઁગલી કો મેદે  
 છેદે, કોઈ નય કો મેદે છેદે, કોઈ ગર્દન કો મેદે છેદે, કોઈ હનુ (ઢાઢી-ઢોઢી) કો  
 મેદે છેદે, કોઈ હોઠ કો મેદે છેદે, કોઈ દાંત કો મેદે છેદે, કોઈ જીભ કો મેદે,  
 છેદે, કોઈ તાલુ કો મેદે છેદે, કોઈ ગલે કો મેદે છેદે, કોઈ ગંઢસ્થલ (કનપટી) કો  
 મેદે છેદે, કોઈ કાન કો મેદે છેદે, કોઈ નાકકો મેદે છેદે, કોઈ આંસ કો મેદે છેદે,  
 કોઈ મોંહ કો મેદે છેદે, કોઈ લલાટ કો મેદે છેદે, કોઈ સિરકો મેદે છેદે, કોઈ મારકર  
 વેહોશ કર દે; યા કોઈ માર હી ઢાલે, ઇસ પ્રકાર ઇન્દ્રિયબલહીન હોને પર મી ઉસે વેદના કા  
 અનુભવ હોતા હી હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

હૃદયને લેદે-છેદે, કોઈ સ્તનને લેદે-છેદે, કોઈ કાંધને લેદે-છેદે, કોઈ બાહુને લેદે-છેદે, કોઈ  
 હાથને લેદે-છેદે, કોઈ આંગલીને લેદે-છેદે, કોઈ નખને લેદે-છેદે, કોઈ ગર્દનને લેદે-છેદે,  
 કોઈ ઢાઢીને લેદે-છેદે, કોઈ હોઠને લેદે-છેદે, કોઈ દાંતને લેદે-છેદે, કોઈ જીભને લેદે-છેદે,  
 કોઈ તાલુ-(તાળવા)ને લેદે-છેદે, કોઈ ગળાને લેદે-છેદે, કોઈ ગંઢસ્થલ (લમણા)  
 કાનપટીને લેદે-છેદે, કોઈ કાનને લેદે-છેદે, કોઈ નાકને લેદે-છેદે, કોઈ આંખને  
 લેદે-છેદે, કોઈ ભંમરને લેદે-છેદે, કોઈ લલાટને લેદે-છેદે, કોઈ શિરને લેદે-છેદે,  
 કોઈ મારીને બેહોશ કરી દે, અથવા કોઈ મારીજ નાંખે, આ પ્રમાણે ઇન્દ્રિયબલહીન  
 હોવા છતાં પણ તેને વેદનાનો અનુભવ થાય છે. (૫)

॥ ટીકા ॥

‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ । અથેતિ પ્રતિવાક્યપ્રારમ્ભઘોતનાય । બ્રવીમિ=પૃથિવી-કાયસ્ય વેદનાવિષયે કથયામિ । યથા-અકઃ=કશ્ચિત્ અન્ધ-જન્માન્ધ આમિન્ધ્યાત્, તથા અકઃ=અપરઃ કશ્ચિત્ અન્ધમપિ આહિન્ધ્યાત્ ।

અત્ર અન્ધમિત્યુપલક્ષણં, બહિરમૂકપદ્મગુપ્તભૃતીનામ્ । યઃ સ્વલુ જન્માન્ધો જન્મબહિરો જન્મમૂકો જન્મપદ્મગુર્મુગાપુત્રવત્કરચરણાદ્યવયવવિભાગરહિતઃ પૂર્વભવાર્જિતાશુભકર્મો-દયાત્ સ્વહિતપ્રાપ્ત્યહિતપરિહારાક્ષમોઽતિદયનીયદશામુપગતઃ ।

અન્ધવિધજન્માન્ધાદિકં કશ્ચિત્ કઠોરહૃદયો નિર્દયતયાઽતિનિશિતમહાદિના મિનત્તિચેત્, સુતીક્ષ્ણપરશુકુઠારાદિના હિનત્તિ ચેત્તદાઽસૌ સ્વાઙ્ગ મેદનચ્છેદનસમયેમેદકં છેદકં ન

ટીકાર્થ-‘અથ’ શબ્દ નવા વાક્ય આરંભ કરને કો પ્રકટ કરતા હૈ-‘કહતા હૂં’ અર્થાત્ પૃથિવીકાય કી વેદના કે વિષય મેં કહતા હૂં । જૈસે-કોઈ પુરુષ અંધે અર્થાત્ જન્મ સે અંધે કો મેદે છેદે । યહાં ‘અંધ’ પદ ઉપલક્ષણ હૈ, ઉસ સે બહિરા, મૂંગા, લંગડા, આદિ મી પ્રહણ કર લેના ચાહિયે ।

જો જીવ મૃગાલોહક કી તરહ જન્માન્ધ હૈ, જન્મ સે બહિરા હૈ, જન્મ સે મૂંગા હૈ, જન્મ સે લંગડા હૈ, હાથ-ઔર આદિ વિભિન્ન અવયવો કા જિસ કે શરીર મેં મેદ નહીં હૈ, ઔર જો પૂર્વભવ કે અશુભ કર્મો કે ઉદય સે અપને હિત કી પ્રાપ્તિ તથા અહિત કે પરિહાર મેં અસમર્થ હૈ, અત્યન્ત દયનીય દશા કો પ્રાપ્ત હૈ, ઇસ પ્રકાર કે જન્માન્ધ વગેરહ કો કોઈ કઠોર હૃદયવાલા પુરુષ નિર્દય હો કર આવેશ કે સાથ, બહુત તીલે માલે વગેરહ સે મેદતા હૈ, અત્યન્ત તીલે ફરસી કુઠાર આદિ સે છેદતા હૈ,

ટીકાર્થ-‘અથ’ શબ્દ નવું વાક્ય આરંભ કરવાનું પ્રગટ કરે છે ‘કહું છું’ અર્થાત્ પૃથ્વીકાયની વેદનાના વિષયમાં કહું છું-જેમ કોઈ મનુષ્ય અન્ધ અર્થાત્-જન્મથી અંધને (આંધળો છે તેને) લેદે છેદે. અહિં ‘અંધ’ પદ તે ઉપલક્ષણ છે, તેનાથી બહેરા મૂંગા, લંગડા આદિ પણ પ્રહણ કરી લેવા બોધાયે.

જે જીવ મૃગલોહકની માફક જન્માન્ધ છે. (જન્મથી આંધળો છે) જન્મથી; બહેરા છે. જન્મથીજ મૂંગો છે જન્મથી લંગડો છે. હાથ-પગ આદિ વિભિન્ન અવયવોના જેના શરીરમાં લેદ નથી, અને તે પૂર્વજીવના અશુભ કર્મોના ઉદયથી પોતાના હિતની પ્રાપ્તિ તથા અહિતના પરિહારમાં અસમર્થ છે, અત્યન્ત દયાપાત્ર-દશાને પ્રાપ્ત છે, આ પ્રકારના જન્માન્ધ વગેરેને કોઈ કઠોર હૃદયવાળા પુરુષ નિર્દય થઈને આવેશની સાથે બહુજ તીક્ષ્ણ ભાદા વગેરેથી લેદે છે (વિધે છે), અત્યન્ત તીખી ધારવાળી ફરસી, કુઠાર આદિથી



પશ્યતિ ન, શૃણોતિ, નાપ્યુચૈઃ ક્રન્દતિ, તાવતા તસ્યાઽજીવત્વં વેદનાયા અભાવો વા નિશ્ચેતું વક્તું વા ન શક્યતે, एवं पृथिवी सचेतना वेदनासहिता चेति निश्चीयते । जात्यन्धबधिरमूकपङ्ग्वादिगुणयुक्तपुरुषवत्, मृगापुत्रवत्, इत्यर्थः ।

યદ્વા પચ્ચેન્દ્રિયાણાં સુવ્યક્તચેતનાનાં પાદગુલ્ફજઙ્ગાજાનૂરુકટિ-  
નાભ્યુદરપાર્શ્વપૃષ્ઠોરોહદયસ્તનસ્કન્ધબાહુહસ્તાઙ્ગુલિનસ્ત્રગ્રીવાહન્વોષ્ઠદન્તજિહ્વાતાલુ-  
ગલગણ્ડકર્ણનાસાક્ષિભૂલલાટમસ્તકાદિષુ મિદ્યમાનેષુ છિદ્યમાનેષુ વા યથા ઘોરતર-  
વેદના જાયતે તથા પ્રગાદમોહાજ્ઞાનવતાં સ્ત્યાનદ્વર્ચાદિકર્મોદયાદ્ અવ્યક્તચેતનાનાં

મેદન-છેદન કે સમય, અપને અંગ કે મેદને-છેદને વાલે કો ન દેખતા હૈ, ન સુનતા હૈ, ન ડંચી આવાજ સે ચિહ્ણતા હૈ; इतने मात्र से उस में अजीवपना या वेदना का अभाव निश्चित नहीं किया जा सकता, और नहीं कहा जाता । इसी प्रकार पृथिवी सचेतन है और उसे वेदना भी होती है, यह बात निश्चित हो जाती है । अर्थात् जैसे मृगालोढक की तरह बहिरे, मूंगे, लंगड़े आदि पुरुष को वेदना होती है, उसी प्रकार पृथिवीकाय को भी वेदना होती है ।

અથવા સ્પષ્ટ ચેતના વાલે પચ્ચેન્દ્રિય જીવોં કે પૈર, ગુલ્ફ, જાંઘ, જાનુ, ઊરુ, કમર, નાભિ, ઉદર, પાર્શ્વ, પૃષ્ઠ, ઊર-છાતી, હૃદય, સ્તન, સ્કન્ધ, બાહુ, હાથ, અંગુલી, નખ, ગ્રીવા, દાઢી, હોઠ, દાંત, જીભ, તાલુ, ગલા, કનપટી, કાન નાક બાંસ, મોંહ, લલાટ, મસ્તક આદિ કે મિદને-છિદને પર જૈસે અત્યન્ત ઘોર વેદના ઉત્પન્ન હોતી હૈ

છેદે છે, તો ભેદન-છેદનના સમયે પોતાના અંગતું ભેદન-છેદન કરનારને તે દેખતો નથી, સાંભળતો નથી, ઉંચા અવાજથી શોર-બકોર કરી શકતો નથી. એટલામાત્રથી તેમાં અશુવપણું અથવા વેદનાનો અભાવ નિશ્ચિત કરી શકતો નથી, તેમ કહેવાતું પણ નથી. એ પ્રમાણે પૃથ્વી સચેતન છે અને તેને વેદના પણ થાય છે. એ વાત નિશ્ચિત થઈ ગય છે. અર્થાત્ જેવી રીતે મૃગાલોદીઆ પ્રમાણે-બહેરા, મૂંગા, લંગડા આદિ પુરુષને વેદના થાય છે, તે પ્રમાણે પૃથ્વીકાયને પણ વેદના થાય છે.

અથવા-સ્પષ્ટ ચેતનાવાળા જન્માન્ધ આદિ પચ્ચેન્દ્રિય જીવોના પગ, ઢીંચણ, બાંધ, બાનૂ, ઊરુ કમર, નાભિ, ઉદર, પાર્શ્વ, પૃષ્ઠ, ઊર-છાતી, હૃદય, સ્તન, સ્કન્ધ, બાહુ હાથ, આંગલી, નખ, ગ્રીવા દાઢી, હોઠ, દાંત, જીભ, તાળુ, ગળુ, લમણા, કાન, નાક, આંખ, લમર, લલાટ, મસ્તક આદિના ભેદવા-છેદવાથી જેમ અત્યન્ત ઘોર વેદના ઉત્પન્ન થાય છે, તેમ પ્રગાદ

પૃથિવ્યાદીનામવ્યક્તૈવ ધોરતરવેદના ભવતીતિ ભગવતા કેવલાલોકેન સાક્ષાત્કૃત્ય પ્રવેદિતમ્ ।

અત્રૈવાન્યમપિ દૃષ્ટાન્તમાહ—“અપ્પેગે સંપમારણ અપ્પેગે ઉદ્ધવણ”  
 ઇતિ । એકઃ કશ્ચિત્ યથા સર્વાવયવયુક્તં કશ્ચિત્પ્રાણિનં સંપમારયેત્=તીવ્રદ્વેષાવેશેન  
 શસ્ત્રાદિપ્રહારેણ ચેષ્ટારાહિત્યરૂપાં મૂર્છામાપાદયેત્ તથા એકઃ કશ્ચિત્ મૂર્છાપન્નં  
 ઉદ્ધાવયેત્=પ્રાણેભ્યો વ્યપરોપયેત્, તસ્ય મૂર્છાવિશેષેન વ્યક્ત-વેદનાયા અભાવેઽપિ  
 અવ્યક્તા ધોરતરવેદના જાયત એવ, તથા પૃથિવીજીવાનામવ્યક્તા ધોરતરવેદના  
 ભવત્યેવ ॥ સૂ. ૫ ॥

इत्थं पृथिवीकायस्य जीवत्वं शस्त्राद्धाघातेन वेदनां च प्रदर्श्य, अधुना

उसी प्रकार प्रगाढ मोह अज्ञान वाले स्त्यानर्द्धि आदि कर्म के उदय से अप्रकट चेतना वाले पृथ्वीकाय आदि जीवों को अप्रकट किन्तु अत्यन्त दारुण वेदना होती है । यह बात भगवान् ने केवलज्ञान से साक्षात् जानकर प्रकट की है ।

इसी विषय में एक दृष्टान्त और कहते हैं—‘अप्पेगे’ इत्यादि । जैसे—कोई पुरुष, सभी अवयवों से युक्त किसी प्राणी को तीव्र द्वेष के आवेश के वश हो कर शस्त्र आदि का प्रहार कर के चेष्टारहित—मूर्छित कर देता है, तथा कोई उस मूर्छित पुरुष को प्राणहीन करता है तो यद्यपि उस मूर्छित में व्यक्त वेदना नहीं है फिर भी अव्यक्त अत्यन्त घोर वेदना होती ही है, इसी प्रकार पृथिवीकाय में घोर अव्यक्त वेदना होती है ॥ सू. ६॥

इस प्रकार पृथिवीकाय की सचित्तता और शस्त्र आदि के आघात से होने वाली

(દેઢ) મોહ અજ્ઞાનવાળા સ્ત્યાનર્દ્ધિ આદિ કર્મના ઉદયથી અપ્રકટ ચેતનાવાળા પૃથ્વી-કાય આદિ જીવોને અપ્રકટ પરન્તુ અત્યન્ત દારુણ વેદના થાય છે, આ વાત ભગવાને કેવલ જ્ઞાનથી સાક્ષાત્ જાણીને પ્રકટ કરી છે.

આ વિષયમાં એક બીજું દૃષ્ટાન્ત કહે છે—‘અપ્પેગે’ ઇત્યાદિ, જેમ કોઈ પુરુષ, સર્વ અવયવોથી યુક્ત કોઈ પ્રાણીને તીવ્ર દ્વેષથી આવેશને વશ થઈ શસ્ત્ર આદિના પ્રહાર કરીને ચેષ્ટારહિત—મૂર્છિત કરી નાખે છે, તથા કોઈ તે મૂર્છિત પુરુષને પ્રાણહીન કરે છે. તે મૂર્છિતમાં વ્યક્ત વેદના નથી. તે પણ અવ્યક્ત (જાણી-જોઈ શકાય નહિ તેવી રીતે) અત્યન્ત ઘોર વેદના થાય છે. એ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયમાં પણ ઘોર વેદના થાય છે. ॥૫॥

આ પ્રમાણે પૃથ્વીકાયની સચિત્તતા અને શસ્ત્ર આદિના આઘાતથી થતાવાળી

તત્સમારમ્ભે કર્મબન્ધો ભવતીત્યાહ—‘**एत्थ**’ **इत्यादि** ।

॥ મૂલમ્ ॥

**एत्थ** સત્થં સમારંભમાણસ્સ **इच्छेते** આરંભા અપરિણાયા ભવંતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

॥ છાયા ॥

અત્ર શસ્ત્ર સમારંભમાણસ્ય **इत्येते** આરમ્ભા અપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ ॥ સૂ. ૬ ॥

॥ ટીકા ॥

અત્ર=પૃથિવીકાયે. શસ્ત્ર=સ્વકાયપરકાયતદુભયરૂપં દ્રવ્યશસ્ત્ર, દુષ્પ્રણિહિતમનોવાકકાયરૂપં ભાવશસ્ત્રં વા સમારંભમાણસ્ય=વ્યાપારયતઃ **इत्येते**=પ્રાગુક્તાઃ સપ્તવિંશતિભજ્જરૂપાઃ, આરમ્ભાઃ=સ્વનનકૃષ્યાદિરૂપાઃ સાવધવ્યાપારાઃ, અપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ=કર્મબન્ધહેતુત્વેન પરિજ્ઞાતા ન ભવન્તિ, પૃથિવીશસ્ત્ર સમારંભમાણઃ સ્વનાદિસાવધવ્યાપારસ્ય કર્મબન્ધકારણતામવિજ્ઞાય ચારિત્રરૂપ-

વેદના પ્રદર્શિત કર કે યહ બતાતે હૈં કિ-પૃથિવીકાય કા આરંભ કરને મેં કર્મ કા બંધ હોતા હૈ-‘**एत्थ**’ **इत्यादि** ।

મૂલાર્થ—પૃથિવીકાય કા આરંભ કરને વાળે કો યહ (પૂર્વોક્ત) આરંભ જ્ઞાત નહીં હોતા હૈ ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ—પૃથિવીકાય મેં સ્વકાય પરકાય ઓર ઉભયકાયરૂપ દ્રવ્યશસ્ત્ર કા, તથા મન વચન કાયકા દુષ્પ્રણિધાનરૂપ ભાવશસ્ત્ર કા વ્યાપાર કરને વાળે કો જ્ઞાત નહીં હોતા કિ-પૂર્વોક્ત સત્તાઈસ પ્રકાર કા સ્વનન એવં કૃષિ આદિરૂપ સાવધ વ્યાપાર કર્મબંધ કે કારણ હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-જો પુરુષ પૃથિવીકાય કા આરંભ કરતા હૈ, ઉસે યહ માલુમ નહીં હોતા કિ-યહ સાવધ વ્યાપાર કર્મબંધ કા કારણ હૈ, યહ માલુમ ન હોને કે કારણ

વેદના બતાવીને હવે એ બતાવે છે કે:-પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરવામાં કર્મનો બંધ થાય છે-‘**एत्थ**’ **इत्यादि**.

મૂલાર્થ—પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરવાવાળાને આ (પૂર્વોક્ત) આરંભ જ્ઞાન હોતું નથી. (૬)

ટીકાર્થ—પૃથ્વીકાયમાં સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાયરૂપ દ્રવ્યશસ્ત્રનો તથા મન, વચન, કાયાનાં દુષ્પ્રણિધાન (પરાબ લાવ)રૂપ ભાવશસ્ત્રનો વ્યાપાર કરવાવાળાને ખબર નથી હોતી કે-પૂર્વોક્ત (પૂર્વે કહેલા) સત્તાવીસ પ્રકારના ખનન (ખોદણું) એ પ્રમાણે કૃષિ-ખેતી આદિરૂપ સાવધ-વ્યાપાર કર્મબંધનું કારણ છે. તાત્પર્ય એ છે કે:-જો પુરુષ પૃથ્વીકાયનો આરંભ કરે છે, તેને એ માલુમ નથી કે:-આ સાવધ વ્યાપાર કર્મ



मोक्षमार्गतो दूरमपगतो भवतीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

(८) विवृत्तिद्वारम्-

पृथिवीकायसमारम्भपरिज्ञाने हि परिज्ञातकर्मा मुनिर्भवतीत्याह-‘एत्थ’ इत्यादि ।  
॥ मूलम् ॥

एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिणायया भवन्ति । तं परिणाय मेहावी नेव सयं पुढविसत्थं समारंभेज्जा, जेवण्णेहि पुढविसत्थं समारंभावेज्जा, जेवण्णे पुढविसत्थं समारंभेते समणुजाणेज्जा । जस्सेते पुढविकम्मसमारंभा परिणायया भवन्ति से हु मुणी परिणायकम्मे-त्तिवेमि ॥ सू० ७ ॥

॥ इय सत्थपरिणाय बीओ उद्देशो समत्तो ॥ १-२ ॥

॥ छाया ॥

अत्र शस्त्रं असमारंभमाणस्य इत्येते आरम्भाः परिज्ञाता भवन्ति । तत् परिज्ञाय मेहावी नैव स्वयं पृथिवीशस्त्रं समारंभेत, नैवान्यैः पृथिवीशस्त्रं समारम्भयेत्, नैवान्यान् पृथिवीशस्त्रं समारंभतः समनुजानीयात्, यस्यैते पृथिवीकर्मसमारम्भाः परिज्ञाता भवन्ति स एव मुनिः परिज्ञातकर्मा, इति ब्रवीमि ॥ सू० ७ ॥

॥ इति शस्त्रपरिज्ञायां द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ १ । २ ॥

यह चरित्ररूप मोक्षमार्ग से दूर ही रहता है ॥ सू. ६ ॥

पृथिवीकाय के समारम्भ का परिज्ञान होने पर ही परिज्ञातकर्मा मुनि होता है, इस बात को कहते हैं-‘एत्थ’ इत्यादि ।

मूलार्थ- पृथिवीकाय में शस्त्र का आरंभ न करने वाले को यह आरंभ ज्ञात होता है । उन्हें जान कर बुद्धिमान् पुरुष न स्वयं पृथिवीकाय के शस्त्र का आरंभ करे, न दूसरों से पृथिवीकाय के शस्त्रका आरंभ करावे और न पृथिवीकाय का आरंभ करने वाले दूसरों की अनुमोदना करे । इन पृथिवीकर्मसमारम्भों को जानने वाला ही मुनि है, वही परिज्ञातकर्मा है, ऐसा मैं कहता हूँ ॥ सू. ७ ॥

अंधनुं करणुं छे. आ भावुम नहि होवाथी ते आरिउरूप मोक्षमार्गथी इरुण रडे छे. ॥६॥

पृथिवीकायना समारंभनुं परिज्ञान होवाथीण परिज्ञातकर्मा मुनि होय छे, आ वात अतावे छे:-‘एत्थ’ इत्यादि.

मूलार्थ- पृथिवीकायमां शस्त्रनो आरंभ नहि करवावाणाने आ आरंभनी अयर होय छे. तेने ज्ञाणीने बुद्धिमान् पुरुष पोते पृथिवीकायना शस्त्रनो आरंभ करता नथी; भील पासे पणु पृथिवीकायना शस्त्रनो आरंभ करवाता नथी. अने पृथिवीकायनो आरंभ करवावाणा भीलने अनुमोदन आपता नथी. ओ पृथिवीकर्म-समारंभाने ज्ञाणवावाणान् मुनि छे, ते परिज्ञातकर्मा छे; ओ प्रमाणे हुं कहुं छुं. (७)

## ટીકા—

અત્ર=પૃથિવીકાયે શસ્ત્રં=સ્વકાયપરકાયાદિકંમ્ અસમારભમાણસ્ય=અવ્યા-  
પારયતઃ इत्येते=પૂર્વોક્તા આરમ્ભાઃ=સાવધક્રિયાવિશેષાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ ।  
જપરિજ્ઞયા સર્વાન્ પૃથિવીકાયસમારમ્ભાન્ કર્મબન્ધહેતુત્વેન અનન્તનરકનિગોદાદિ-  
દુઃસ્વજનકત્વેન ચ પરિજ્ઞાય ચારિત્રરૂપમોક્ષમાર્ગે પ્રવર્તત इति भावः ।  
ઉપસંહારમાહ—

તત્=પૃથિવીકાયસમારમ્ભણં પરિજ્ઞાય=બન્ધહેતુત્વેનાવબુધ્ય મેધાવી=  
સદસદ્વિવેકી પૃથિવીશસ્ત્રં દ્રવ્યભાવરૂપં સ્વયં નૈવ સમારમ્ભતે અપિ ચ—અન્યૈરપિ  
પૃથિવીશસ્ત્રં નૈત્ર સમારમ્ભયતિ, પૃથિવીશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણાન્ અન્યાન્ નૈવ સમનુ-  
જાનાતિ । एवं मनोवाक्याभेदेनातीतानागतवर्तमानकालभेदेन च पृथिवीकाय-

ટીકાર્થ—પૃથિવીકાય મેં સ્વકાય પરકાય આદિ શસ્ત્રોં કા આરંભ ન કરને  
વાલે કો યહ પૂર્વોક્ત સાવધવ્યાપારરૂપ આરંભ જ્ઞાત હોતા હૈ । ઇન આરંભોં કો જાનને વાલ  
અર્થાત્ જપરિજ્ઞા સે પૃથિવીકાયસંબંધી આરંભોં કો કર્મબંધ કા કારણ તથા અનન્ત નરક  
નિગોદ કે દુઃસ્વો કા કારણ જાનકર ચારિત્રરૂપ મોક્ષમાર્ગે મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ । ઉપસંહાર  
કરતે હૈ—

પૃથ્વીકાય કે આરંભ કો બંધકા કારણ જાનકર બુદ્ધિમાન્ સત્ અસત્ કા ભેદ  
સમજને વાલ, દ્રવ્ય—ભાવરૂપ પૃથ્વીશસ્ત્રકા સ્વયં વ્યાપાર નહીં કરતા, દૂસરે સે વ્યાપાર  
નહીં કરાતા ઓર વ્યાપાર કરને વાલે કો અનુમોદના મી નહીં કરતા । ઇસી પ્રકાર મન,  
વચન, કાય કે ભેદ સે ઓર અતીત, અનાગત, વર્તમાન કાલ કે ભેદ સે સત્તાઈસ પ્રકાર કે

ટીકાર્થ—પૃથ્વીકાયમાં સ્વકાય પરકાય આદિ શસ્ત્રોંનો આરંભ નહિ કરવાવાળાને  
એ પૂર્વોક્ત સાવધ વ્યાપારરૂપ આરંભની ખબર હોય છે, તે આરંભોંને જાણવાવાળા અર્થાત્  
જપરિજ્ઞાથી પૃથ્વીકાયસમ્બંધી આરંભોંને કર્મબંધનું કારણ, તથા અનન્ત નરક નિગોદના  
દુઃખોંનું કારણ જાણીને ચારિત્રરૂપ મોક્ષમાર્ગમાં પ્રવૃત્ત થાય છે. હવે ઉપસંહાર કરે છે—

પૃથ્વીકાયના આરંભને બંધનું કારણ જાણીને બુદ્ધિમાન સત્-અસત્ના ભેદને  
જાણવા-સમજવાવાળા, દ્રવ્યભાવરૂપ પૃથ્વીશસ્ત્રનો પોતે વ્યાપાર કરતા નથી, બીજા  
પાસે વ્યાપાર કરાવતા નથી, અને વ્યાપાર કરવાવાળાને અનુમોદન પણ કરતા નથી.  
આ પ્રમાણે મન, વચન, કાયના ભેદથી, અને ભૂતકાળ, ભવિષ્યકાળ, વર્તમાનકાળના

સમારંભાન્ વિજ્ઞાય સર્વાન્ પરિત્યજેત્ ।

एवं यस्य एते पृथिवीकर्मसमारम्भाः पृथिवीविषयाः स्वननकृत्यादिरूपाः  
सावद्यक्रियाविशेषाः परिज्ञाता भवन्ति=ज्ञपरिज्ञया कर्मबन्धहेतुत्वेन विज्ञाताः, तथा  
प्रत्याख्यानपरिज्ञया परित्यक्ता भवन्ति स एव परिज्ञातकर्मा=विदितपरित्यक्त-  
सकलसावद्यक्रियाविशेषः मुनिर्भवति, न त्वपरो द्रव्यलिङ्गीत्यर्थः । इति ब्रवीमि=  
यथा भगवता कथितं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ७ ॥

॥ इति शस्त्रपरिज्ञाध्ययने द्वितीय उद्देशः समाप्तः ॥ १-२ ॥

પૃથ્વીકાયસમારંભ કો જાનકર સર્વકા ત્યાગ કરના चाहिए ।

इस प्रकार जो पुरुष पृथ्वीकायसम्बन्धी खोदना जोतना आदि सावद्य व्यापारो  
को ज्ञपरिज्ञा से कर्मबंध का कारण समझता है, और प्रत्याख्यानपरिज्ञा से उन का  
त्याग कर देता है वही परिज्ञातकर्मा और सकल सावद्य क्रियाओं को जानने वाला पुरुष  
मुनि कहलाता है, सिर्फ द्रव्यलिङ्गी मुनि नहीं कहलाता । 'त्तिबेमि' भगवान् ने जैसा कहा  
है वैसा ही मैं कहता हूँ ॥ ७ ॥

આચારાજ્ઞ-સૂત્ર કી આચારચિન્તામણિ-ટીકા કે હિન્દી-અનુવાદમેં  
શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક પ્રથમ અધ્યયનકા દ્વિતીય ઉદ્દેશ  
સમાપ્ત ॥ ૧-૨ ॥

ભેદથી સત્તાવીસ પ્રકારના પૃથ્વીકાયના સમારંભને બાણી કરીને સર્વનો ત્યાગ કરવો બોધ્યો.

આ પ્રમાણે જે પુરુષ પૃથ્વીકાયસમ્બન્ધી ખોદવું, ખેડવું આદિ સાવધ વ્યાપારોને  
જ્ઞપરિજ્ઞાથી કર્મબંધનું કારણ સમજે છે, અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરી  
દે છે, તે પરિજ્ઞાતકર્મા અને સકલસાવધક્રિયાઓને બાણવાવાળા પુરુષ મુનિ કહેવાય છે,  
માત્ર દ્રવ્યલિંગી મુનિ કહેવાતા નથી. ભગવાને જેવું કહ્યું છે, એવું જ હું કહું છું ॥૭॥

આચારાંગ સૂત્રની આચારચિન્તામણિ ટીકાના ગુજરાતી અનુવાદમાં  
શસ્ત્રપરિજ્ઞાનામક પ્રથમ અધ્યયનનો બીજો ઉદ્દેશ  
સમાપ્ત થયો ॥ ૧-૨ ॥



## અથ તૃતીયોદેશઃ ।

દ્વિતીયોદેશે પૃથિવ્યાઃ સચિત્તત્ત્વં તત્ર પૃથક્પૃથગનેકપૃથિવીકાયજીવાશ્રિતત્ત્વં ચ પ્રસાધિતમ્, તસ્ય હિંસયા કર્મબન્ધો ભવતીત્યુક્તમ્, અન્તતશ્ચ પૃથિવીકાયજીવ-હિંસાનિવૃત્ત્યા મુનિર્ભવતીતિ સિદ્ધાન્તિતમ્ । ઇદાનીમપાં સચિત્તત્ત્વમનેકાપ્કાયજીવા-શ્રિતત્ત્વં બોધયતા ભગવતાઽપ્કાયહિંસયા ષટ્કાયજીવહિંસાસંપાતાત્ કર્મબન્ધો ભવતિ, તથાઽપ્કાયહિંસાનિવૃત્ત્યા ચ મુનિત્ત્વં લ્ભ્યતેતિ બોધયિતું તૃતીયોદેશઃ પ્રારમ્ભ્યતે-‘સે વેમિ’ ઇત્યાદિ ।

અપ્કાયજીવસ્વરૂપવિચારણાયાં પ્રથમમનગારસ્ય યોગ્યતા દર્શયતિ-

## ત્રીસરા ઉદ્દેશ

દ્વિતીય ઉદ્દેશક મેં પૃથિવી કી સચિત્તતા સિદ્ધ કી ઓર પૃથિવી મેં પૃથક્-પૃથક્ અનેક પૃથિવીકાય કે જીવોં કા રહના સિદ્ધ કિયા । યહ બી બતલાયા જા ચુકા હૈ કિ-ઉન જીવોં કી હિંસા કરને સે કર્મ કા બંધ હોતા હૈ । અન્ત મેં યહ બી પ્રમાણિત કિયા હૈ કિ-પૃથ્વીકાય કે જીવોં કી હિંસા કા ત્યાગ કરને સે મુનિ હોતા હૈ । અબ યહ બતલાતે હૈ કિ-અપ્કાય સચિત્ત હૈ, અનેક અપ્કાય કે જીવોં સે આશ્રિત હૈ ઓર અપ્કાય કી હિંસા સે ષટ્કાય કે જીવોં કી હિંસા હોતી હૈ ઓર અપ્કાય કી હિંસા કા ત્યાગ કરને વાલા મુનિપન પાતા હૈ । યહ સબ બતલાને કે લિખ ત્રીસરા ઉદ્દેશ આરંભ કિયા જાતા હૈ-‘સે વેમિ’ ઇત્યાદિ ।

અપ્કાય કે જીવોં કે સ્વરૂપ કા વિચાર કરતે હુખ સર્વ પ્રથમ અનગાર કી

## ત્રીજો ઉદ્દેશક-

ત્રીજો ઉદ્દેશકમાં પૃથ્વીની સચિત્તતા સિદ્ધ કરી છે. અને પૃથ્વીમાં જૂદા-જૂદા અનેક પૃથ્વીકાયના જીવો રહે છે તે સિદ્ધ કર્યું છે. એ પણ બતાવવામાં આવ્યું છે કે તે જીવોની હિંસા કરવાથી કર્મનો બંધ થાય છે. અન્તમાં એ પણ પ્રમાણિત કર્યું કે પૃથ્વીકાયના જીવોની હિંસાનો ત્યાગ કરવાથી મુનિ થાય છે. હવે તે બતાવે છે કે:-અપ્કાય સચિત્ત છે, અનેક અપ્કાયના જીવોથી આશ્રિત છે, અને અપ્કાયની હિંસાથી ષટ્કાયના જીવોની હિંસા થાય છે, અને અપ્કાયની હિંસાનો ત્યાગ કરવાવાળા મુનિપણને પામે છે. એ સર્વ બતાવવા માટે ત્રીજો ઉદ્દેશકનો આરંભ કરવામાં આવે છે:-‘સેવેમિ’ ઇત્યાદિ.

અપ્કાયના જીવોના સ્વરૂપનો વિચાર કરતા થકા સૌથી પ્રથમ અણુગારની ચોચતા

સર્વવિરતિરૂપં પદં પ્રાપ્તો મુનિઃ પૃથિવીકાયાદિસૂક્ષ્મજીવસમારમ્ભનિવૃત્ત્યાદિ-  
કર્તવ્યતાયામલ્પીયોઽપિ પ્રમાદજાતં સ્વલનં સમુપેક્ષતે ચેત્ તર્હિ પુનસ્તત્રાધિકતરં  
સ્વલનં કર્તુ ન લજ્જતે, તથાવિધનિયમાનુસારિણી હિ મનોવૃત્તિઃ, અતઃ  
સ્વલ્પમપિ સંયમતઃ સ્વલનં યથા ન ભવેત્ તથા પ્રયતિતવ્યં મુનિભિઃ ।

અત્ર દૃષ્ટાન્તઃ પ્રદર્શ્યતે—

કેનચિદ્ બાલ્યાવસ્થાયામન્યસ્ય કપર્દિકામાત્રં સ્તેયવૃત્ત્યાઽપહૃત્ય  
સ્વમાતુરગ્રે નિહિતમ્ । માતા તદવલોક્ય હૃષ્ટા સતી તસ્મૈ મધુરં વસ્તુ દદૌ ।  
અથ પુનઃ પુનઃ સ્તેયકર્મણિ પ્રવૃત્તઃ સ્વમાતૃહસ્તાત્ પારિતોષિકં પ્રાપ્તઃ ક્રમેણ

યોગ્યતા દિશ્વલાતે હૈં—સર્વવિરતિરૂપ પદકો પ્રાપ્ત મુનિ પૃથિવીકાય આદિ છોટે-છોટે જીવો  
કે આરંભ કા ત્યાગ કરને મેં યદિ પ્રમાદ કે કારણ થોડે સે મી સ્વલન કી ઉપેક્ષા કરતા હૈ  
તો ફિર ઔર અધિક સ્વલન કરને મેં મી સંકોચ નહીં કરતા । મનોવૃત્તિ કા એસા હી  
નિયમ હૈ કિ—ગિરી સો ગિરતી હી જાતી હૈ, અત એવ મુનિયોં કો એસા પ્રયત્ન કરના ચાહિપ્  
કિ, જિસ સે સંયમ મેં તનિક મી સ્વલન ન હો ।

ઇસ વિષય મેં દૃષ્ટાન્ત કહતે હૈં—

કિસી બાલકને અપની બાલ્યાવસ્થા મેં એક કૌડી ચુરાકર અપની માતા કે  
પાસ રક્ષ દી । માતા ઉસે દેશ્વકર હર્ષિત હુઈ ઔર ઉસને ઇનામ કે તૌર પર બાલક કો  
મીઠી ચીજ દી । ઇસ કે બાદ વહ બારબાર ચૌરી કરને લગા ઔર અપની માતા કે હાથ સે  
પારિતોષિક પ્રાપ્ત કરને લગા । ધીરે-ધીરે વહ તામ્રપણ (તાંબે કા સિક્કા) કાર્ષાપણ

બતાવે છે—સર્વવિરતિરૂપ પદને પામેલા મુનિ પૃથ્વીકાય આદિ નાના-નાના જીવોના  
આરંભનો ત્યાગ કરવામાં જો પ્રમાદના કારણે થોડાં પણ સ્વલન (ચુટી)ની ઉપેક્ષા કરે  
છે. તો ફરીને વધારે સ્વલન કરવામાં પણ સંકોચ કરતા નથી. મનોવૃત્તિનો એવોજ  
નિયમ છે કે—નીચે પડવા પછી વધારે નીચે પડી જાય છે. એ કારણથી મુનિઓએ  
એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે—જેનાથી સંયમમાં થોડું પણ સ્વલન નહીં હોય.

આ વિષયમાં દૃષ્ટાન્ત કહે છે:—

કોઈ બાળકે પોતાની બાલ્યાવસ્થામાં એક કૌડી ચોરીને પોતાની માતાની પાસે  
સાંપી લીધી; માતા તેને જોઈને સજી થઈ અને તેને ઇનામ આપવાના ઠંઠથી બાળકને  
મીઠી વસ્તુ આપી. ત્યાર પછી તે બાળક વારંવાર ચોરી કરવા લાગ્યો. અને પોતાની  
માતા પાસેથી (માતાના હાથથી) ઇનામ મેળવવા લાગ્યો. ધીરે ધીરે તે તામ્રપણ-ત્રાંબાના

તામ્રપણ-કાર્ષાપણ-રૂપ્યક - દીનાર-રત્ન - સ્પર્ણ-મણિ- માણિક્યાદિહરણપ્રવીણઃ  
કસ્યચિન્નપસ્ય કોશાગારં પ્રવિષ્ટઃ । તતઃ પ્રચણ્ડમ્બુજદણ્ડકૈસ્તદ્રક્ષકૈઃ સઘોષણં ધૃતો  
રાજાન્તિકં સમાનીતઃ । તદપરાધં વિજ્ઞાય ક્રોધાવિષ્ટેન રાજા સમાદિષ્ટમ્-અયં ચૌરઃ  
શૂલે સમારોપ્યતામ્, ઇતિ ।

અસૌ પૃથ્થ રાજા-તવ કાચિદિચ્છા વર્તતે? ચેદ્ બ્રૂહિ । ચૌરેણોક્તમ્-  
રાજન્ ! સ્વમાતુર્મિલનં પ્રાર્થયેઃ । અથ નૃપાજ્ઞયા તજ્જનનો તત્રાગત્ય મિલિતા ।  
સ ચૌરસ્તત્ર રાજઃ સમક્ષમેવ સવેગમુત્થાય સત્ત્વરં માતુર્નાસિકાં દન્તૈશ્ચિચ્છેદ ।  
તતોઽસૌ રાજા પૃથઃ-ત્વયા કથમેવં દુશ્ચરિતમાચરિતમ્ ? । ચૌરોઽવદત્-ઇયમેવ મમે-

( ચૌઅન્ની ) રૂપયા, દીનાર (સુવર્ણ-મુહર), રત્ન, સુવર્ણ, મણિ, માણિક આદિ ચુરાને મેં મી  
પ્રવીણ હો ગયા । વહ કિસી રાજા કે સ્વજાને મેં ઘુસા । સ્વજાને કે બલવાન્ પહરેદારોં ને ઉસે  
પકડ લિયા ઓર રાજા કે સામને પેશ કિયા । રાજા ઉસકા અપરાધ સુનકર ક્રોધિત હુઆ,  
ઉસને આજ્ઞા દી-‘ઇસ ચોર કો શૂલી પર ચઢા દો ’ ।

રાજાને ઉસ સે પૂછા-અગર તુમ્હારી કોઈ ઇચ્છા હો તો કહો ।

ચોરને કહા-‘ મહારાજ ! મેં અપની માતા સે મિલને કી પ્રાર્થના કરતા હૂં ।

રાજા કી આજ્ઞા સે ચોર કી માતા વહાં આકર મિલી । ચૌરને રાજા કે સામને હી વેગ  
કે સાથ ઉઠ કર જલ્દી સે અપની માતા કી નાક દાંતોં સે કાટલી । યહ દેસકર રાજાને  
પૂછા-અરે ! તૂંને યહ દુષ્કર્મ ક્યોં કિયા ?

સિશ્કા, ચાર આની, રૂપિઆ, સોના મહોર, રત્ન, સોનું, મણિ, માણિક આદિ ચોરવામાં  
પણ પ્રવીણ થઈ ગયો. ( કેટલોક સમય જતા ) તે કેઈ રાબના ખબનામાં ઘુસી  
ગયો. ખબનાના બલવાન્ પહરેદારો રક્ષકોએ તેને પકડી લીધો અને રાબની સામે-  
હાજર કર્યો. રાબ તેનો અપરાધ સાંભળીને ક્રોધાયમાન થયા, અને આજ્ઞા આપી કે  
એ ચોરને શૂલી પર ચઢાવી દો !

રાબએ તેને પૂછ્યું કે તારી કાંઈ ઇચ્છા હોય તો કહો.

ચોરે કહ્યું-‘ મહારાજ ! હું મારી માતાને મળવાની પ્રાર્થના કરું છું. ’

રાબની આજ્ઞાથી ચોરની માતા ત્યાં આગળ આવી. અને ચોરને મળી, ચોરે  
રાબના સામેજ વેગથી એકદમ ઉઠીને જલ્દીથી પોતાની માતાનું નાક પોતાના  
દાંતથી કાપી લીધું. તે બેઠને રાબએ પૂછ્યું-અરે ! તેં આહું દુષ્કર્મ શા માટે કર્યું ?



तद्घोरतरदुःखप्रदशूलारोपणफलप्रदात्री प्राणापहत्री, न तु भवान् । इत्युक्त्वा सर्वं पूर्ववृत्तं राज्ञे विज्ञापयामास । ततः स्वकृतस्तेयकर्मणो विपाकं शूलारोपेण घोरतरवेदनां प्राप्नुवन्मृतः । तस्मात् स्वल्पोऽपि दोषो महाऽनर्थाय भवतीति विज्ञायात्मार्थिभिर्मुनिभिः संयमतः स्वल्पमपि स्वलनं यथा न भवेत् तथा वर्तितव्यम् ।

तपःसंयमे कदाचिदाकस्मिकस्वलनसंपातस्त्वन्य एव, स्वलनोपेक्षण-मप्यन्यदेव, यतः स्वलनोपेक्षया पुनरुत्तरोत्तरस्वलनवृद्ध्या साधुत्वमेव नश्यतीति विचिन्त्य जागरूकाः साधवो नवनवागन्तुकस्वलनपरंपराविरहिताः पूर्वजातस्वलन-

चोर-महाराज ! इसी के कारण मुझे घोर दुःख देने वाली शूली पर चढ़ना पड़ रहा है; यही मेरे प्राण लेने वाली है, आप नहीं । यह कह कर चोरने अपना सम्पूर्ण पूर्व-वृत्तांत राजा को सुना दिया ।

तत्पश्चात् अपने किये चौर्य कर्म का घोरवेदनारूप फल-शूली पर चढ़नेरूप-को भोगता हुआ वह चोर मर गया ।

अत एव थोड़ा-सा भी दोष महान् अनर्थ का कारण बन जाता है, ऐसा समझकर आत्मकल्याण के अभिलाषी मुनियों को ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि जिस से संयम में तनिक भी स्वलन न हो ।

तप और संयम में कदाचित् अकस्मात् स्वलना की बात दूसरी है किन्तु स्वलना की उपेक्षा करना और बात है, उस का कारण यह है कि स्वलना की उपेक्षा करने से उत्तरोत्तर स्वलना बढ़ती ही चली जाती है, ऐसा विचार करके सदैव सावधान

ચોર કહે-મહારાજ ! એ માતાના કારણે જ મારે ઘોર દુઃખ આપવાવાળી શૂલી ઉપર ચઢવાનું થાય છે, એ મારો પ્રાણ લેવાવાળી છે, આપ નહિ. આ પ્રમાણે કહીને ચોરે પોતાની આગળની સંપૂર્ણ હકીકત રાજાને સંભળાવી. તે પછી પોતાનું કરેલ ચોરીનું કર્મનું ઘોરવેદનારૂપ ફલ-શૂલી પર ચઢવાનું, તે ભોગવતો થકો તે ચોર મરણ પામ્યો.

એટલે કે:-થોડો પણ દોષ મહાન અનર્થનું કારણ બની જાય છે. એ પ્રમાણે સમજીને આત્મકલ્યાણના અભિલાષી મુનિઓએ એવો પ્રયત્ન કરવો જોઈએ કે, જેનાથી સંયમમાં થોડુંક પણ સ્થલન ન થાય.

તપ અને સંયમમાં કોઈ વખત અકસ્માત સ્થલનની વાત જૂદી છે. પણ સ્થલનની ઉપેક્ષા કરવી તે બીજી વાત છે. તેનું કારણ એ છે કે-સ્થલનની ઉપેક્ષા કરવાથી ઉત્તરોત્તર સ્થલન (ભૂલ) વધતું જ જાય છે. એવો વિચાર કરીને સદૈવ-હંમેશાં સાવધાન રહેવાવાળા

દોષમપનેતું શક્તુવન્તિ । તદેવ વિશદયન્ સુધર્મા સ્વામી પ્રાહ—‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ ।

દ્વિતીયોદેશસમાપ્તૌ “જસ્સેતે પુઢવિકમ્પસમારંભા પરિણાયા ભવંતિ સે હુ મુળી પરિણાયકમ્મા” ઇત્યુક્તમ્ । અધુના તુ—ન ચ તાવતૈવ સર્વથા મુનિર્ભવિતુમર્હતિ । યથા ભવતિ તથા દર્શયિતું શ્રીસુધર્મા સ્વામી પ્રાહ—‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ ।

॥ મૂલમ્ ॥

સે બેમિ—સે જહાવિ અળગારે ઉજ્જુકહે નિયાગપહિવળે અમાયં કુવ્વમાળે વિચાહિણ ॥ સૂ. ૧ ॥

॥ છાયા ॥

તદ્ બ્રવીમિ સ યથાપિ અનગાર ઋજુકૃતઃ નિયાગપ્રતિપન્નઃ અમાયાં કુર્વાણો વ્યાખ્યાતઃ ॥ સૂ. ૧ ॥

॥ ટીકા ॥

‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ । તદ્ બ્રવીમિ યદન્યચ્ચ ભગવદન્તિકે મયા

રહને વાળે સાધુ નયી—નયી હોને વાલી સ્વલના કે દોષોં સે બચ સકતે હૈં । યહી વાત સ્પષ્ટ કરતે હુણ સુધર્મા સ્વામી આગે કહતે હૈં—‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ (ભગવાન્ કે મુખારવિન્દ સે જો સુના હૈ,) સો કહતા હૈં—ઋજુકૃતઃ મોક્ષમાર્ગ મેં પ્રાપ્ત ઔર માયા ન કરને વાલા અનગાર કહા ગયા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—ભગવાન્ કે સમીપ ઔર મી જો સુના હૈ વહ કહતા હૈં । પૃથ્વીકાય કે વિષય મેં શલ્ક કા આરંભ ન કરને વાલા પૃથ્વીકાય કે આરંભ કો જાનને વાલા પુરુષ જિસ

સાધુ—નવી નવી થવાવાળી સ્ખલના દોષોથી બચી શકે છે, એ વાત સ્પષ્ટ કરીને સુધર્મા સ્વામી આગળ કહે છે—‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ.

બીજા ઉદ્દેશકની સમાપ્તિમાં કહ્યું હતું કે:—એ પુરુષ પૃથ્વીકાયના આરંભને બાણીને તેનો ત્યાગ કરી આવે છે, તે મુનિ છે. અહિં એ બતાવવામાં આવે છે કે:—આટલું કરવા માત્રથી જ કેઈ પૂરી રીતે મુનિ થઈ શકતા નથી, મુનિ થવાને માટે બીજા—એ જે વાતોની (બાણવાની) આવશ્યકતા છે, તેને સુધર્મા સ્વામિ કહે છે—‘સે બેમિ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—(ભગવાનના મુખારવિન્દથી જે સાંભળ્યું છે) તે કહું છું.—ઋજુકૃત, મોક્ષમાર્ગમાં પ્રાપ્ત અને માયા નહિ કરવાવાળા અણગાર કહ્યા છે (૧)

ટીકાર્થ—ભગવાનની પાસેથી બીજું પણ જે સાંભળ્યું છે, તે કહું છું.—પૃથ્વીકાયના વિષયમાં શલ્કનો આરંભ નહિ કરવાવાળા, પૃથ્વીકાયના આરંભને

श्रुतं तत् कथयामि । स पृथिवीकायश्चमसमारभमाणः परिज्ञातपृथिवीकर्म-  
समारम्भो यथा संपूर्णोऽनगारो भवति, अपिच-यथाऽनगारो न भवति,  
तद् द्वयमपि ब्रवीमि, वक्ष्यति च-‘अणगारामोत्ति एगे पवयमाणा’ इत्यादि ।  
सावद्यक्रियाया गृहाश्रयत्वाद् गृहपरित्याग एव मुनित्वे प्रधानकारणमिति बोधनाय  
साध्वादिशब्दं परित्यज्य ‘अनगार’-शब्दोपादानम् । कथं सर्वथाऽनगारो भवति ?  
इत्याकाङ्क्षायामाह—

‘उज्जुकडे’ इति, ऋजुकृतः, अर्जयति क्षान्त्यादिगुणानिति ऋजुः ।  
यद्वा-अर्जयति-सकलप्राणिगणहितं दयास्वभावमिति ऋजुः । यदिवा-अर्जयति=  
यथावस्थितात्मस्वरूपं प्रापयतीति ऋजुः । यद्वा-अर्जयति=प्रापयति शाश्वतिकं

प्रकार पूर्ण अनगार होता है, और जिस प्रकार पूर्ण अनगार नहीं होता, ये दोनों बातें मैं  
कहता हूँ-‘अणगारा मोत्ति एगे पवयमाणा’ इत्यादि सूत्र में आगे कहा जायगा ।

गृह में सावद्यक्रिया अवश्य होती है, अत एव गृह का त्याग करना ही मुनिपन  
का प्रधान कारण है । यह बात प्रकट करने के लिए साधुवाचक अन्य शब्द छोड़कर  
यहाँ अनगार शब्द का प्रयोग किया है । पूरा अनगार किस प्रकार बनता है, एसी आकांक्षा  
होने पर कहने हैं-‘उज्जुकडे’ इति ।

उज्जुकडे का संस्कृत रूप है ‘ऋजुकृतः’ । क्षमा आदि गुणों को उपार्जन  
करने वाला ऋजु कहलाता है । अथवा समस्त प्राणियों के हितरूप दया को उपार्जन  
करने वाला ऋजु कहलाता है । अथवा आत्मा को अपने असली स्वरूप पर पहुँचाने

બાણવાવાળા પુરૂષ, જે પ્રમાણે પૂણું અણુગાર થાય છે અને જે પ્રમાણે પૂણું અણુ-  
ગાર નથી થતા, તે બન્ને વાતો હું કહું છું-‘અણગારા મોત્તિ એગે પવયમાણા’ ઇત્યાદિ  
સૂત્રમાં આગળ કહેવામાં આવશે.

ધરમાં સાવધક્રિયા અવશ્ય થાય છે એટલા માટે ધરનો ત્યાગ કરવો તેજ મુનિ-  
પણુંનું પ્રધાન કારણ છે એ વાત પ્રગટ-કરવા માટે સાધુવાચક અન્ય સજ્જત્યજીને  
અહિં ‘અનગાર’ શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. પૂરા અણુગાર કેવી રીતે બને છે, એવી  
ધૃષ્ટિ થવાથી કહે છે-‘ઉજ્જુકડે’ ઇતિ.

‘ઉજ્જુકડે’નું સંસ્કૃત રૂપ ‘ઋજુકૃત’ થાય છે. ક્ષમા આદિ ગુણોનું ઉપાર્જન  
કરવાવાળા ઋજુ (સરલ-સિધા) કહેવાય છે અથવા સમસ્ત પ્રાણીઓના હિતરૂપ દયાને  
ઉપાર્જન કરવાવાળા ઋજુ કહેવાય છે. અથવા આત્માને અસલ સ્વરૂપ સુધી પહોંચાડવા-



શિવસ્થાનમિતિ - ઋજુઃ = વિષમભાવરહિતત્વાદ્ દુષ્પ્રણિહિતમનોવાકાયનિરોધરૂપઃ સંયમઃ, સ કૃતઃ=અનુષ્ઠિતો યેન સ ઋજુકૃતઃ-મનોવાકાયજન્યસકલસાવધ-ક્રિયાનિવૃત્ત ઇત્યર્થઃ ।

યદ્વા-સંપૂર્ણસંવરસ્વરૂપસંયમેન સંયમિના મોક્ષસ્થાનગમનાર્થ ઋજુગતિઃ પ્રાપ્યતે, તત્ર ઋજુગતેઃ કારણં સંયમ ઇતિ કારણે કાર્યોપચારાત્સપ્તદશવિધ-સંયમોઽપિ ઋજુરિત્યુચ્યતે, સ કૃતઃ=સમાચરિતો યેનાસૌ ઋજુકૃતઃ કૃતસંપૂર્ણ-સંયમાનુષ્ઠાન ઇત્યર્થઃ ।

વાળા ઋજુ કહલતા હૈ । અથવા આત્મા કો શાશ્વત મોક્ષસ્થાન પર પહુંચાને વાળા ઋજુ કહલાતા હૈ । અથવા ઋજુ કા અર્થ હૈ-સંયમ । મન, વચન, કાય કે સોટે વ્યાપાર કો રોકનારૂપ સંયમ હૈ । જિસ ને એસા વ્યાપાર રોક દિયા હૈ વહ ઋજુકૃત કહલાતા હૈ । અર્થાત્ જો મન, વચન ઓર કાય સે હોને વાલી સમસ્ત સાવધ ક્રિયાઓ સે નિવૃત્ત હો ગયા હો વહ ‘ઋજુકૃત’ હૈ ।

અથવા-સમ્પૂર્ણસંવરરૂપ સંયમ કે દ્વારા સંયમી મોક્ષ મેં ગમન કરને કે લિખ ઋજુગતિ પ્રાપ્તિ કરતા હૈ । ઇસ ઋજુગતિ કા કારણ સંયમ હૈ । અતઃ કારણ મેં કાર્ય કા ઉપચાર કરને સે સત્રહ પ્રકાર કા સંયમ મી ‘ઋજુ’ કહલાતા હૈ । ડસ ‘ઋજુ’ અર્થાત્ સંયમ કા જિસને આચરણ ક્રિયા હો વહ ‘ઋજુકૃત’ કહલાતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ પૂર્ણ સંયમ કા અનુષ્ઠાન કરને વાળા ઋજુકૃત હૈ ।

વાળા ઋજુ કહેવાય છે. અથવા આત્માને શાશ્વત મોક્ષસ્થાન પર પહોંચાડવાવાળા ઋજુ કહેવાય છે. અથવા ઋજુનો અર્થ છે સંયમ-મન, વચન અને કાયના ખોટા વ્યાપારને રોકવા રૂપ સંયમ છે. જેણે એવો વ્યાપાર રોકી આપ્યો છે તે ‘ઋજુકૃત’ કહેવાય છે. અર્થાત્ જે મન, વચન અને કાયથી થવાવાળી સમસ્ત સાવધ ક્રિયા-ઓથી નિવૃત્ત થઈ ગયા હોય તે ઋજુકૃત છે.

અથવા-સંપૂર્ણસંવરરૂપ સંયમદ્વારા સંયમી મોક્ષમાં ગમન કરવા માટે ઋજુગતિ પ્રાપ્ત કરે છે. તે ઋજુગતિનું કારણ સંયમ છે. તેથી કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરવાથી સત્તર (૧૭) પ્રકારનો સંયમ પણ ‘ઋજુ’ કહેવાય છે. તે ઋજુ અર્થાત્ સંયમનું જેણે આચરણ કર્યું છે તે ‘ઋજુકૃત’ કહેવાય છે. તાત્પર્ય એ છે કે પૂર્ણ-સંયમનું અનુષ્ઠાન કરવાવાળા ઋજુકૃત છે.

તથા નિયાગપ્રતિપન્નઃ, નિ=નિશ્ચયેન યજતિ=સમ્યગ્ગમનં કુર્વન્તિ યત્ર સ નિયાગઃ=મોક્ષમાર્ગઃ જ્ઞાનક્રિયાલક્ષણઃ । યદ્વા-નિ=નિશ્ચયેન યજતિ=દદાતિ સિદ્ધિ-ગતિમિતિ નિયાગઃ=જ્ઞાન્ત્યાદિદશવિધો યતિધર્મઃ, તં પ્રતિપન્નઃ=પ્રાપ્તઃ ।

તથા ‘અમાયાં કુર્વાણઃ’ માયા=વીર્યાચારસંગોપનં પરવશ્ચનં વા, ન માયા અમાયા, તાં કુર્વાણઃ અનગારો વ્યાખ્યાતઃ=ભગવતા કથિતઃ ।

અયં ભાવઃ-ન કેવલં પૃથિવીશસ્ત્રસમારમ્ભમાત્રનિવૃત્ત્યાઽનગારો ભવતિ કિન્તુ યઃ સ્વલુ પૃથિવીશસ્ત્રસમારમ્ભનિવૃત્તઃ પરિજ્ઞાતસકલસાવધકર્મા નિરવ-

અવ ‘નિયાગપ્રતિપન્ન’ શબ્દકા અર્થ કરતે હૈં । ‘નિ’ અર્થાત્ નિશ્ચય સે ‘યાગ’ અર્થાત્ સમ્યક્ ગમન જહાં ક્રિયા જાતા હૈ ઉસે ‘નિયાગ’ યા મોક્ષમાર્ગ કહતે હૈ । જ્ઞાન ઔર ક્રિયા મોક્ષ કા માર્ગ હૈ ।

અથવા ‘નિ’ અર્થાત્ નિશ્ચય સે ‘યાગ’ અર્થાત્ સિદ્ધિગતિ દેને વાલા ક્ષમા આદિ દશ પ્રકાર કા યતિધર્મ ‘નિયાગ’ કહલાતા હૈ, ંસે નિયાગ કો જો પ્રાપ્ત હો ચુકા હો વહ નિયાગપ્રતિપન્ન હૈ ।

તથા માયા અર્થાત્ વીર્યાચર કા ગોપન કરના યા દૂસરે કો ગોસ્લા દેના માયા હૈ । ંસ માયા કા સેવન ન કરને વાલા જો વહી અનગાર હૈ, ંસા ભગવાન્ ને કહા હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-કેવલ પૃથ્વીશસ્ત્ર કે આરંભ કા ત્યાગ કર દેને માત્ર સે હી કોઈ અનગાર નહીં હો જાતા, વરન્ જો પૃથ્વીશસ્ત્ર કે આરંભ કા ત્યાગ કર કે સકલ

હવે ‘નિયાગપ્રતિપન્ન’ શબ્દનો અર્થ કરે છે. ‘નિ’ અર્થાત્ નિશ્ચયથી ‘યાગ’ અર્થાત્ સમ્યક્ગમન જ્યાં કરવામાં આવે છે. તેને નિયાગ અથવા મોક્ષમાર્ગ કહે છે. જ્ઞાન અને ક્રિયા મોક્ષનો માર્ગ છે. અથવા ‘નિ’ અર્થાત્ નિશ્ચયથી ‘યાગ’ અર્થાત્ સિદ્ધિગતિ આપવાવાળો ક્ષમા આદિ દસ પ્રકારનો યતિધર્મ ‘નિયાગ’ કહેવાય છે. એવા નિયાગને જે પ્રાપ્ત થઈ ચૂકયા છે, તે નિયાગપ્રતિપન્ન છે. તથા માયા અર્થાત્ વીર્યાચરનું ગોપન કરવું અથવા ખીજાને ધોખો દેવો તે માયા છે. તે માયાનું સેવન નહિ કરવાવાળા જે હોય તે અણુગાર છે. એ પ્રમાણે ભગવાને કહ્યું છે.

તાત્પર્ય એ છે કે-કેવલ પૃથ્વીશસ્ત્રના આરંભનો ત્યાગ કરી દેવા માત્રથીજ કોઈ અણુગાર થતા નથી. પરન્તુ જે પૃથ્વીશસ્ત્રના આરંભનો ત્યાગ કરીને, સકલ સાવધ કર્યોનો

શેષસંયમાનુષ્ઠાનપ્રવૃત્તઃ સમાશ્રિતમોક્ષમાર્ગઃ કપૂરસ્વખંડવદન્તર્વહિરેકરૂપતયા  
સ્વવીર્યસંગોપન-પરવશ્ચનલક્ષણમાયાચારરહિતો ભવતિ સ એવ વસ્તુતોઽનગારો  
બોદ્ધવ્ય ઇતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉક્તરૂપસ્યાનગારસ્ય કર્તવ્યમાહ—‘જાણ’ ઇત્યાદિ ।

॥ મૂલમ્ ॥

જાણ સદ્ધાણ નિસ્ખંતો તમેવ અણુપાલિજ્ઞા વિજહિતા વિસોત્તિયં  
પુન્નસંજોગં ॥ સૂ. ૨ ॥

॥ છાયા ॥

યયા શ્રદ્ધયા નિઃક્રાન્તસ્તામેવાનુપાલયેત્ વિસ્ત્રોતસિકાં પૂર્વ-  
સંયોગમ્ ॥ ૨ ॥

॥ ટીકા ॥

યયા શ્રદ્ધયા વિસ્ત્રોતસિકાં=શઙ્કાં, સર્વશઙ્કાં દેશશઙ્કાં ચેત્યર્થઃ ।

સાવધ કાર્યોં કા જ્ઞાતા હોતા હૈ ઓર પૂર્ણ સંયમ કૈ અનુષ્ઠાન મૈં પ્રવૃત્ત હો તથા મોક્ષમાર્ગ કા  
આશ્રય લેતા હૈ । કપૂર કૈ ટુકડે કી માંતિ મીતર-બાહર ઇકસા ઉજ્જ્વલ હોને કૈ કારણ  
અપની શક્તિ કા ગોપન નહીં કરતા ઓર દૂસરોં કો ઘોંસા નહીં દેતા અર્થાત્ માયાચાર સે  
રહિત હોતા હૈ, ડસી કો વાસ્તવ મૈં અનગાર સમજના ચાહિય ॥ સૂ. ૧ ॥

ઉક્ત પ્રકાર કૈ અનગાર કા કર્તવ્ય બતલાતે હૈ—‘જાણ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—શઙ્કા કાંક્ષા આદિ કા ત્યાગ કર કૈ ઓર પૂર્વકાલીક સંયોગોં કા ત્યાગ  
કર કૈ જિસ શ્રદ્ધા કૈ સાથ નિકલા હૈ, ડસી શ્રદ્ધા કા નિરન્તર પાલન કરે ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકાર્થ—‘વિસ્ત્રોતસિકા’ કા અર્થ હૈ શઙ્કા, શઙ્કા ડો પ્રકાર કી હૈ (૧) સર્વશઙ્કા

જ્ઞાતા-જાણનાર થાય છે. અને પૂર્ણ સંયમના અનુષ્ઠાનમાં પ્રવૃત્ત થાય છે, તથા મોક્ષ  
માર્ગનો આશ્રય લે છે. કપૂરના ટુકડાની માફક અંદર અને બહાર એકજ પ્રકારે ઉજ્જ્વલ  
હોવાના કારણે પોતાની શક્તિનું ગોપન કરતો નથી. અને બીજાને ઢગો દેતો નથી. અર્થાત્  
માયાચારથી રહિત હોય છે, તેને વાસ્તવિક રીતે અણુગાર સમજવો જોઈએ. (સૂ. ૧)

ઉપર કહ્યા તેવા અણુગારનું કર્તવ્ય બતાવે છે:—‘જાણ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—શંકા, કાંક્ષા વગેરેનો ત્યાગ કરીને અને પૂર્વ કાલના સંયોગોનો  
ત્યાગ કરીને જે શ્રદ્ધાથી નિકળ્યા છે, તે શ્રદ્ધાનું નિરંતર પાલન કરવું. (સૂ. ૨)

ટીકાર્થ—‘વિસ્ત્રોતસિકા’નો અર્થ છે. શંકા, શંકા બે પ્રકારની છે—(૧) સર્વશંકા



“किमर्हतो मार्गोऽस्ति न वा” इति सर्वागमविषयिका शङ्का सर्वशङ्का, तथा-  
“किमपूकायादयो जीवाः सन्ति न वा” इति देशशङ्का ।

केवलालोकेन विलोक्य भगवता विशिष्य प्रवचने कथितत्वात् अपूकायादयः  
सन्ति जीवाः, इति पूर्वा कोटिः, चेतनारूपात्मलक्षणस्य सुस्पष्टमनुपलब्धेर्न सन्ति  
अपूकायादयो जीवाः, इत्युत्तरा कोटिः प्रादुर्भवति । पूर्वसंयोगं=मातापित्रादिसम्बन्धं,  
धनधान्यस्वजनादिसम्बन्धं वा ।

इदमुपलक्षणम्-तेन पश्चात्संयोगमपि श्वशुरादिकृतं विहाय=परित्यज्य  
निष्क्रान्तः=अनगारो जातः, तां श्रद्धाम् अनुपालयेदेव निरतिचारं रक्षेदित्यर्थः ।

और (२) देशशङ्का । अर्हन्त भगवान् द्वारा प्ररूपित मार्ग वास्तव में मोक्षमार्ग है  
या नहीं? ऐसी-शंका सर्वशङ्का है । अपूकाय आदि के जाव हैं या नहीं? यह देश  
शङ्का है ।

भगवान् ने केवल ज्ञान से देखकर प्रवचन में अपूकाय आदि के जीवों का  
अस्तित्व प्रगट किया है, यह शङ्का की पूर्वकोटि है । आत्मा का चेतनालक्षण स्पष्ट  
रूप से नहीं पाया जाता, अत एव अपूकाय आदि अजीव हैं, वह शङ्का की दूसरी कोटि है ।

माता, पिता आदि का संबंध तथा धन; धान्य; स्वजन आदि का संबंध पूर्वसंयोग ।  
कदलता है । उपलक्षण से सास-ससुर आदि का संबंध पश्चात्संयोग कहलता है । इन दोनों  
संयोगों की त्याग कर के जिस श्रद्धा के साथ अनगार हुआ है उसी श्रद्धा का पालन करे  
अर्थात् उस की निरतिचार रक्षा करे ।

अने (२) देशशङ्का ‘अर्हन्त भगवान् द्वारा प्ररूपित मार्ग वास्तविक रीति मोक्ष  
मार्ग छे के नहीं?’ आ प्रकारनी शङ्का ते सर्वशङ्का छे. अपूकाय आदिना लव  
छे के नहीं? आ देशशङ्का छे.

भगवान् ने केवलज्ञान वडे जेधने प्रवचनमां अपूकाय आदिना लवोनुं अस्तित्व  
प्रगट कयुं छे; आ शङ्कानी पूर्वकोटि छे. आत्मानुं चेतनालक्षण स्पष्टरूपथी जेवामां  
आवतुं नथी तेथी अपूकाय आदि अलव छे, आ शङ्कानी भीलु कोटि छे.

माता-पिता आदिना संयंघ तथा धन, धान्य स्वजन आदिना संयंघ पूर्व-  
संयोग कडेवाय छे, उपलक्षणथी सासु, सासुरा आदिना संयंघ पश्चात्संयोग  
कडेवाय छे. आ जेने संयोगनो त्याग करीने जे श्रद्धाथी अलुगार थया छे, ते  
श्रद्धानुं पालन करे, अर्थात् तेनी निरतिचार (विना अतिचार) रक्षा करे.

નનુ કા નામ શ્રદ્ધા, યયા વિનાઽનગારત્વં નોપલભ્યતે ? ઉચ્યતે—જીવાદિતત્ત્વેષુ શ્રદ્ધાનં, રુચિઃ, અભિપ્રીતિઃ, સમ્યગ્દર્શનં શ્રદ્ધા, ‘એતત્તત્ત્વમેવમેવે’—ત્યવધારણમ્, “તમેવ સત્ત્વં નીસંકં જં જિણેહિં પવેદ્યં” ઇતિ વચનાનુસ્મરણેન જગદેકબન્ધુના વીતરાગેણ ભગવતા યથા કથિતં તથૈવેદં જીવાદિતત્ત્વં સત્યમિતિ નિશ્ચય ઇતિ યાવત્ ।

યદ્વા મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મણ ઉપશમાત્ ક્ષયોપશમાત્ ક્ષયાદ્વા આત્મનોઽપૂર્વા જ્ઞાનાવસ્થા જાયતે, આવિલસલિલસ્ય કતકફલચૂર્ણસંયોગાત્સ્વચ્છતાવત્ સૈવ શ્રદ્ધા ।

શંકા—યહ શ્રદ્ધા કૌન—સી હૈ જિસ કે વિના સાધુપન નહી રહ સકતા ?

સમાધાન—જીવાદિ તત્ત્વો પર શ્રદ્ધા કરના, રુચિ હોના, અભિપ્રીતિ હોના, યહ સમ્ય-દર્શન—શ્રદ્ધા હૈ । ‘યહ તત્ત્વ એસા હી હૈ’ ઇસ પ્રકાર પક્કા નિશ્ચય કરના શ્રદ્ધા હૈ । ‘જિન ભગવાને જો કહા હૈ વહી સત્ય ઓર સંદેહ—રહિત હૈ’ ઇસ વચન કે અનુસાર યહ નિશ્ચય કરના કિ જગત કે અદ્વિતીય બન્ધુ વીતરાગ ભગવાન ને જૈસા નિરૂપણ કિયા હૈ, ડસી પ્રકાર જીવાદિતત્ત્વ સત્ય હૈ । યહ શ્રદ્ધા કા સ્વરૂપ હૈ ।

અથવા—મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કે ઉપશમ સે, ક્ષયોપશમ સે અથવા ક્ષય સે આત્મા કી એક અપૂર્વ જ્ઞાનાવસ્થા ઉત્પન્ન હોતી હૈ । જૈસે—મલિન જલ મેં કતકફલ કા ચૂર્ણ ડાલને સે જલ સ્વચ્છ હો જાતા હૈ । એસી સ્વચ્છ—નિર્મલ આત્મદશા શ્રદ્ધા કહલાતી હૈ ।

શંકા—તે શ્રદ્ધા કેવી છે, કે જેના વિના સાધુપણું રહી શકે નહિ ?

સમાધાન—જીવાદિ તત્ત્વો પર શ્રદ્ધા કરવી, રુચિ થવી, અભિપ્રીતિ થવી, તે સમ્યગ્દર્શન શ્રદ્ધા છે, “આ તત્ત્વ આપુંજ છે” એ પ્રમાણે પાકો નિશ્ચય કરવો તે શ્રદ્ધા છે. “જિન ભગવાને જે કહ્યું છે તે સત્ય અને સંદેહરહિત છે” એ વચન પ્રમાણે એ નિશ્ચય કરવો કે જગતના અજોડ બન્ધુ વીતરાગ ભગવાને જેવું નિરૂપણ કયું છે, તે પ્રમાણે જીવાદિ તત્ત્વ સત્ય છે. આ શ્રદ્ધાનું સ્વરૂપ છે

અથવા—મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના ઉપશમથી, ક્ષયોપશમથી, અથવા ક્ષયથી આત્માની એક અપૂર્વ જ્ઞાનાવસ્થા ઉત્પન્ન થાય છે. જેમ મદીન પાણીમાં કતકફળ—નિર્મળીકણનું ચૂર્ણ નાંખવાથી જલ સ્વચ્છ થઈ જાય છે. એવી સ્વચ્છ—નિર્મલ આત્મદશા શ્રદ્ધા કહેવાય છે.



અસ્યા લક્ષણં તુ શમસંવેગનિર્વેદાનુકમ્પાઽઽસ્તિક્યાનાં પ્રાદુર્ભાવઃ । તત્ર વીત-  
રાગપ્રણીતપ્રવચનતત્ત્વાભિનિવેશવશેનાઽનન્તાનુબંધિકષાયાણામનુદયઃ શમ ઇત્યુચ્યતે ।  
યદ્વા વિષયાસક્તિનિવૃત્તિઃ શમઃ ।

તથા સંવેગઃ=જિનપ્રવચનાનુસારેણ નરકાદિગતિષુ નનાવિધદુઃખાવલો-  
કનાદ્યમ્, યથા સ્વકૃતકર્મોદયાન્નરકેષુ-ક્ષેત્રજન્યશીતોષ્ણાદિદશવિધવેદનાસહનં,  
પરમાધાર્મિકદેવકૃતં, પરસ્પરોદીરિતં ચેતિ ત્રિવિધં દુઃખં, તથા તિર્યક્ષુ-તાડન-  
તર્જન-શ્લુત્પિપાસા-પારવશ્ય-ભારારોપણાદ્યનેકવિધં દુઃખં, મનુષ્યેષુ-દારિદ્ર્ય-

શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકમ્પા ઓર આસ્તિક્ય કા પ્રકટ હો જાના શ્રદ્ધા કા ચિહ્ન હૈ ।

વીતરાગદ્વારા પ્રરૂપિત પ્રવચન કે તત્ત્વ મેં ગાઢી પ્રીતિ હોને સે અનન્તાનુબંધી કષાયો  
કા (ક્રોધ, માન, માયા, લોભ, કા) ઉદય ન હોના શમ કહલાતા હૈ । અથવા વિષયો કે  
પ્રતિ આસક્તિ હટ જાના 'શમ' હૈ ।

જિન ભગવાન્ કે વચન કે અનુસાર નરક આદિ ગતિયોં મેં નાના પ્રકાર કે દુઃખો  
કો જાનકર ઊન સે ભયભીત હોના 'સંવેગ' હૈ । જૈસે—"અપને કિયે કર્મોં કે  
ઉદય સે નરકોં મેં ક્ષેત્રજન્ય શીત-ઉષ્ણ (સર્દી-ગરમી) આદિ દસ પ્રકાર કો વેદના,  
પરમાધાર્મી દેવોં દ્વારા દીજાને વાલી વેદના ઓર પરસ્પર નારકી જીવોં દ્વારા હોને વાલી  
વેદના, નરક મેં યહ ત્રીન તરહ કી વેદના હૈ । તિર્યંચોં મેં તાડના, તર્જના, મૂલ,  
પ્યાસ, પરાધીનતા, બોજા ઢોના આદિ અનેક પ્રકાર કી વેદના હૈ । મનુષ્યોં મેં દરિદ્રતા,

શમ, સંવેગ, નિર્વેદ, અનુકંપા અને આસ્તિક્ય વગેરે પ્રકટ થઈ જાય તે  
શ્રદ્ધાનું ચિહ્ન છે.

વીતરાગદ્વારા પ્રરૂપિત પ્રવચનનાં તત્ત્વોમાં સંબંધ પ્રીતિ થવાથી અનન્તાનુ-  
બંધી કષાયોનો (ક્રોધ, માન, માયા, લોભનો) ઉદય થાય નહિ તે શમ કહેવાય  
છે. અથવા વિષયો પ્રતિ આસક્તિ હટી જાય તે શમ છે.

જિન ભગવાનના વચન-અનુસાર નરક આદિ ગતિઓમાં નાના પ્રકારના દુઃખોને  
જાણી ને તેનાથી ભયભીત થવું તે 'સંવેગ' છે. જેમકે—"પોતાના કરેલાં કર્મોના ઉદયથી  
નરકોમાં ક્ષેત્રજન્ય શીત-ઉષ્ણ (સર્દી-ગરમી) આદિ દસ પ્રકારની વેદના, પરમાધાર્મી દેવો  
દ્વારા જે થાય છે તે વેદના, અને પરસ્પર નારકી જીવો દ્વારા થનારી વેદના, નરકમાં આ  
પ્રમાણે ત્રણ પ્રકારની વેદના છે. તિર્યંચોમાં તાડના, તર્જના (મારવું-તરછોડવું) મૂળ, તરસ,  
પરાધીનતા, બોજા ઉપાડવા આદિ અનેક પ્રકારની વેદના છે. મનુષ્યોમાં દરિદ્રતા, હાનિ,



દૌર્ભાગ્ય-જન્મ-જરા-મરણ-રોગ-શોક-સન્તાપાદિ, દેવેષુ-ઈર્ષ્યા-વિષાદ-પરપ્રેષ્ય-ત્વાદિદુઃખં જીવા અનુભવન્તિ, તસ્માદ્-‘યથા મમેદ્દશં દુઃખં ન સ્યાત્ તથા યત્નં કરોમિ’ इत्याकारक आत्मिकपरिणामः संवेगः ।

यद्वा-सुदेव-सुगुरु-सुधर्मेषु निश्चलोऽनुरागः संवेगः । उक्तञ्च—

“तथ्ये धर्मे ध्वस्तहिंसाप्रबन्धे, देवे रागद्वेषमोहादिमुक्ते ।

साधौ सर्वग्रन्थसन्दर्भहीने, संवेगोऽसौ निश्चलो योऽनुरागः ॥ १ ॥” इति ।

આગમોઽપ્યત્રાર્થે પ્રમાણમ્—

જન્મ, જરા, મરણ, રોગ, શોક, સંતાપ આદિ કી વેદના હૈ । દેવોં મેં ઈર્ષ્યા, વિષાદ, આજ્ઞા-પાલન આદિ કે દુઃખ હૈં । જીવ ઇન દુઃખોં કા અનુભવ કરતે હૈં, અત ઇવ મૈં ઇસા પ્રયત્ન કરૂં કિ-જિસ સે મુક્તે ઇસ પ્રકાર કે દુઃખ ન મુગતને પડે ” । ઇસ પ્રકાર કા આત્મા કા પરિણામ ‘સંવેગ’ કહલાતા હૈ ।

અથવા સુદેવ, સુગુરુ ઓર સુધર્મ મેં અચલ અનુરાગ હોના ‘સંવેગ’ કહલાતા હૈ । કહા મી હૈ—

“હિંસા આદિ કી પરમ્પરા સે રહિત સર્વે ધર્મ મેં, રાગ દ્વેષ ઓર મોહ આદિ સે રહિત દેવ મેં, તથા સર્વ પ્રકાર કે પરિગ્રહ સે રહિત ગુરુ-સાધુ મેં નિશ્ચલ અનુરાગ હોના સંવેગ હૈ” ॥ ૧ ॥

इस विषय में आगम प्रमाण भी है—

જન્મ, જરા, મરણ, રોગ, શોક, સન્તાપ આદિની વેદના છે. દેવોમાં ઈર્ષ્યા, વિષાદ, ( શોક ) આજ્ઞાપાલન આદિનાં દુઃખો છે. જીવ આ દુઃખોનો અનુભવ કરે છે. તે કારણથી હું એવો પ્રયત્ન કરું કે-જેથી મને આ પ્રકારનું દુઃખ ભોગવવું પડે નહિ.” આ પ્રકારનું આત્માનું પરિણામ તે સંવેગ કહેવાય છે.

અથવા સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મમાં અચલ અનુરાગ-પ્રીતિ થવો તે સંવેગ કહેવાય છે. કહ્યું પણ છે કે:-

“હિંસા આદિની પરમ્પરાથી રહિત સાચા ધર્મમાં, રાગ દ્વેષ અને મોહ આદિથી રહિત દેવમાં, તથા સર્વ પ્રકારના પરિગ્રહથી રહિત ગુરુ-સાધુમાં નિશ્ચલ અનુરાગ થવો તે સંવેગ છે.” ॥ ૧ ॥

આ વિષયમાં આગમ પ્રમાણ પણ છે:-

“સંવેગેણં મંતે ! જીવે કિં જણયઈ ? સંવેગેણં અણુત્તરં ધમ્મસદ્ધં જણયઈ । અણુત્તરાણં ધમ્મસદ્ધાણં સંવેગં હવ્યમાગચ્છઈ । અણંતાણુવંધિકોહમાણમાયાલોભે સ્વેદઈ । નવં ચ કમ્મં ન બંધઈ । તપ્પચ્ચઈયં ચ ણં મિચ્છત્તવિસોહિં કાઠ્ઠણં દંસણારાહણં ભવઈ । દંસણવિસોહીયં ય ણં વિસુદ્ધાણં અત્થેગઈયં તૈણેવ ભવગ્ગહણેણં સિજ્ઞઈ । વિસોહીયં ય ણં વિસુદ્ધાણં તચ્ચં પુણો ભવગ્ગહણં નાહકમઈ ॥ ” (ઉત્તરા ૦ અ ૨૯)

છાયા—“સંવેગેન મદન્ત ! જીવઃ । ક જનયતિ ? સંવેગેન અણુત્તરાં ધર્મશ્રદ્ધાં જનયતિ । અણુત્તરયા ધર્મશ્રદ્ધયા સંવેગો હવ્યમાગચ્છતિ, અનન્તાણુવન્ધિ-ક્રોધમાન-માયાલોભાન્ ક્ષપયતિ, નવં ચ કર્મ ન બધ્નાતિ, તત્પ્રત્યયિકાં ચ સ્વલુ મિથ્યાત્વવિશોધિ કૃત્વા દર્શનારાધકો ભવતિ, દર્શનવિશોધ્યા ચ સ્વલુ વિશુદ્ધયા અપ્યેકકસ્તેનૈવ ભવ-ગ્રહણેન સિદ્ધયતિ । વિશોધ્યા ચ સ્વલુ વિશુદ્ધયા તૃતીયપુનર્ભવગ્રહણં નાતિક્રામતિ ॥ ”

સુદેવ-સુગુરુ-સુધર્મેષુ નિશ્ચલાનુરાગરૂપેણ સંવેગેન ઉત્કૃષ્ટતમાં ધર્મશ્રદ્ધાં

“ભગવાન્ ! સંવેગ સે જીવ કો કયા લાભ હોતા હૈ ?

સંવેગ સે સર્વશ્રેષ્ઠ ધર્મશ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ, ઓર ધર્મશ્રદ્ધા સે સંવેગ શીઘ્ર ઉત્પન્ન હો જાતા હૈ । અનન્તાણુવન્ધી ક્રોધ, માન, માયા ઓર લોભ કા વહ ક્ષય કરતા હૈ । નવીન કર્મો કા બંધ નહીં કરતા, ઓર ઇન કારણો સે મિથ્યાત્વ કી વિશુદ્ધિ કર કે જીવ દર્શન કા આરાધક હોતા હૈ । દર્શનવિશુદ્ધતા વધજાને સે કોઈ-કોઈ જીવ ડસી ભવ મેં સિદ્ધ હો જાતા હૈ, અગર કોઈ ડસી ભવ મેં મોક્ષ ન જાવે તો તોસરે ભવ કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતા, અર્થાત્ તોસરે ભવ મેં વહ અવશ્ય મોક્ષ જાતા હૈ ” । -(ઉત્તરાધ્યયન અ. ૨૯)

“સુદેવ, સુગુરુ ઓર સુધર્મ મેં નિશ્ચલ અનુરાગરૂપ સંવેગ સે જીવ કો સર્વોત્કૃષ્ટ

“ભગવાન્ સંવેગથી જીવને શું લાભ થાય છે ?” સંવેગથી સર્વશ્રેષ્ઠ ધર્મશ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે, અને ધર્મશ્રદ્ધાથી સંવેગ શીઘ્ર ઉત્પન્ન થાય છે. અનન્તાણુવંધી ક્રોધ, માન, માયા અને લોભનો તે ક્ષય કરે છે. નવીન કર્મોનો બંધ કરતો નથી, અને એ કારણથી મિથ્યાત્વની વિશુદ્ધિ કરીને જીવ દર્શનનો આરાધક થાય છે. દર્શનવિશુદ્ધતા વધી જવાથી કોઈ-કોઈ એ ભવમાં સિદ્ધ થઈ જાય છે; કોઈ એ ભવમાં મોક્ષ ન જાય તો ત્રીજા ભવનું ઉલ્લંઘન કરતા નથી, અર્થાત્ ત્રીજા ભવમાં તે અવશ્ય મોક્ષ જાય છે.” (ઉત્તરા ૦ અ. ૨૯)

સુદેવ, સુગુરુ અને સુધર્મમાં નિશ્ચલ અનુરાગરૂપ સંવેગથી જીવને સર્વોત્કૃષ્ટ

જીવો જનયતિ । તયા ચ નરકાદિભવેષુ ઘોરતરબહુતરાશાતવેદનામવલોક્ય તદ્વ્યાન્મોક્ષમાર્ગે શરણીકૃત્ય મોક્ષાભિલાષરૂપં સંવેગં શીઘ્રં પ્રાપ્નોતિ । અનન્તાનુ-  
બન્ધિકષાયાન્ ક્ષપયતિ, નવીનં કર્મ ન બધ્નાતિ, તેન મિથ્યાત્વં ક્ષપયિત્વા ક્ષાયિકશુદ્ધસમ્યક્ત્વં નિરતિચારેણ પાલયતિ । એવમતિર્નિર્મલયા સમ્યક્ત્વવિશુદ્ધ્યા કશ્ચિદ્વ્યજીવસ્તેનૈવ ભવગ્રહણેન સિદ્ધિં પ્રાપ્નોતિ । એકઃ પુનઃ સમ્યક્ત્વસ્ય નિર્મલયા વિશુદ્ધ્યા તૃતીયં પુનર્ભવગ્રહણં નાતિક્રામતિ । મિથ્યાત્વ-  
મોહનીયકર્મણો નિરવશેષક્ષયાત્ શુદ્ધક્ષાયિકસમ્યક્ત્વવાન્ ભવત્રયમધ્યે મોક્ષં પ્રાપ્નોત્યેવેત્યર્થઃ ।

તથા નિર્વેદઃ—અર્હતવચનાભિનિવેશાત્સર્વવિષયેષુ—અનાસક્તિઃ, ‘ઇહ—અલોકે

શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થોતી હૈ । ઉસ શ્રદ્ધા સે નરક આદિ ગતિયોં મેં ઘોર ઓર બહુ અસાતા કી વેદના દેખકર તથા ઉસ વેદના કે ભય સે મોક્ષમાર્ગ કા આશ્રય લેકર મોક્ષાભિલાષા—રૂપી સંવેગ કો શીઘ્ર હી સ્વીકાર કર લેતા હૈ । વહ અનન્તાનુબંધી કષાયોં કા ક્ષય કરતા હૈ ઓર નવીન કર્મ કે બંધ કો રોક દેતા હૈ । મિથ્યાત્વ કા ક્ષય કર કે શુદ્ધ ક્ષાયિક સમ્યક્ત્વ કા નિરતિ-  
ચાર પાલન કરતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અત્યન્ત નિર્મલ દર્શનવિશુદ્ધિ કે કારણ કોઈ—કોઈ ભવ્ય જીવ ઉસી ભવ મેં મુક્ત હો જાતા હૈ, ઓર કોઈ—કોઈ તીસરે ભવ કા ઉલ્લંઘન નહીં કરતા અર્થાત્ મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કે સમ્પૂર્ણ ક્ષય સે શુદ્ધક્ષાયિકસમ્યક્ત્વી જીવ ત્રીન ભવોં મેં અવશ્ય મોક્ષ પાતા હૈ ।

અર્હન્ત ભગવાન્ કે પ્રવચન મેં પ્રગાઢ પ્રીતિ હોને કે કારણ સબ ઇન્દ્રિય-વિષયોં મેં

શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે, એ શ્રદ્ધાથી નરક આદિ ગતિઓમાં ઘોર અને બહુ અસા-  
તાની વેદના જોઈને. તથા એ વેદનાના ભયથી મોક્ષમાર્ગનો આશ્રય લઈને મોક્ષા  
ભિલાષારૂપી સંવેગને શીઘ્રજ સ્વીકાર કરી લે છે. તે અનન્તાનુબંધી કષાયોનો ક્ષય કરે  
છે. અને નવીન કર્મના બંધને રોકી દે છે. મિથ્યાત્વનો ક્ષય કરીને શુદ્ધ ક્ષાયિક  
સમ્યક્ત્વનું નિરતિચાર પાલન કરે છે. આ પ્રમાણે અત્યન્ત નિર્મલ દર્શનવિશુદ્ધિના  
કારણે કોઈ—કોઈ ભવ્ય જીવ એજ ભવમાં મુક્ત થઈ જાય છે, અને કોઈ—કોઈ ત્રીજા  
ભવનું ઉલ્લંઘન કરતા નથી. અર્થાત્ મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના સંપૂર્ણ ક્ષયથી શુદ્ધક્ષાયિક-  
સમ્યક્ત્વી જીવ ત્રણ ભવોમાં અવશ્ય મોક્ષને પ્રાપ્ત કરે છે.

અર્હન્ત ભગવાનના પ્રવચનમાં પ્રગાઢ-સબળ પ્રીતિ હોવાના કારણે સર્વ ઇન્દ્રિયોના



કામભોગાધ્યવસાયઃ સ્વલુ દુરન્તોઽનન્તદુઃસ્વફલદશ્ચ, પરલોકેઽપ્યતિકટુકો નરકાદિ-  
જન્મફલપ્રદઃ, इत्यतो न किञ्चित्प्रयोजनमनेन कामभोगाध्यवसायेन, परित्याज्य  
एवायमतिप्रयत्नेन ' इत्येवंरूप आत्मकपरिणामो निर्वेदः ।

उक्तं च निर्वेदस्वरूपं तत्फलं च, तथाहि—

“ નિવ્વેણં મંતે ! જીવે કિં જળયઈ ? નિવ્વેણં દિવ્યમાણસતેરિચ્છિણ્ણુ  
કામભોગેસુ નિવ્વેયં હવ્વમાગચ્છઈ । સન્નવિસણ્ણુ વિરજ્જઈ । સન્નવિસણ્ણુ વિરજ્જમાણે  
આરંભપરિચ્ચાયં કરેઈ । આરંભપરિચ્ચાયં કરેમાણે સંસારમગ્ગં વોચ્છિદઈ, સિદ્ધિમગ્ગં  
પહિવન્ને ય હવઈ । ” (ઉત્તરા ૦ અ. ૨૯)

આસક્તિ ન હોના ‘નિર્વેદ’ છે । ‘કામભોગસમ્બન્ધી અધ્યવસાય’ આ લોક મેં અત્યન્ત દુઃસ્વ-  
દાયક છે, ઓર પરલોક મેં ઓ અત્યન્ત કટુક નરક આદિરૂપ ફલ દેને વાલ છે, અત એવ  
કામભોગસંબંધી અધ્યવસાય સે મુક્તે કયા લેન-દેન છે । ઇસે સ્વૂં પરિશ્રમ કર કે ત્યાગ હી  
દેના ચાહિય । ઇસ પ્રકાર કા આત્મિક પરિણામ ‘નિર્વેદ’ કહલાતા છે । નિર્વેદ કા સ્વરૂપ  
ઓર ફલ ઇસ પ્રકાર કહા ગયા છે:—

“ ભગવન્ ! નિર્વેદ સે જીવ કો કયા લાભ હોતા છે ? નિર્વેદ સે જીવ કો દેવતા મનુષ્ય  
ઓર તિર્થંચ સંબંધી કામ ભોગો મેં શીઘ્ર હી વિરક્તિ ઉત્પન્ન હોતી છે । સર્વ વિષયો સે જીવ  
વિરક્ત હોકર આરંભ કા પરિત્યાગ કરતા છે । આરંભ કા પરિત્યાગ કરતા હુઆ સંસારમાર્ગ  
કો ત્યાગતા છે ઓર મોક્ષમાર્ગ કો અંગીકાર કરતા છે ” ।-(ઉત્તરા. અ. ૨૯)

વિષયોમાં આસક્તિ થાય નહિ તે નિર્વેદ છે. ‘કામભોગસમ્બન્ધી અધ્યવસાય આ લોકમાં  
અત્યન્ત દુઃખદાયક છે, અને પરલોકમાં પણ અત્યન્ત કટુક નરકગતિ આદિ રૂપ ઇળ  
દેવાવાળા છે, એટલા માટે કામભોગસમ્બન્ધી અધ્યવસાયથી મારે શું દેવા દેવા છે.  
તેને ખૂબ પરિશ્રમ કરીને ત્યજી દેવા બોધ્યો.’ આ પ્રકારનું આત્મિક પરિણામ તે  
નિર્વેદ કહેવાય છે. નિર્વેદનું સ્વરૂપ અને ફલ આ પ્રકારે કહ્યું છે—

“ ભગવન્ ! નિર્વેદથી જીવને શું લાભ થાય છે ?

નિર્વેદથી જીવને દેવતા, મનુષ્ય અને તિર્થંચસમ્બન્ધી કામભોગોમાં શીઘ્ર  
વિરક્તિ ઉત્પન્ન થાય છે. સર્વવિષયોથી જીવ વિરક્ત થઈ જાય છે. સર્વ વિષયોથી  
વિરક્ત થઈને આરંભનો પરિત્યાગ કરતો થકો સંસારમાર્ગને ત્યજી દે છે. અને  
મોક્ષમાર્ગનો અંગીકાર કરે છે. ” (ઉત્તરા ૦ અ. ૨૯)

‘કદાઽહં સંસારં પરિત્યજેયમ્ ?’ इत्येवंरूपेण निर्वेदेन दिव्यमानुषतैरश्वेषु कामभोगेषु निर्वेदम्=अनासक्तिं जीवः शीघ्रं प्राप्नोति । इममेवार्थं स्पष्टयति—सर्वविषयेषु विरज्यते—‘अलमेतैरनर्थहेतुभूतैर्विषयैः’ इत्येवंरूपं वैराग्यं प्राप्नोति । वैराग्यं प्राप्तश्च सावद्यव्यापारं परित्यजति । तत्परित्यागं कुर्वन् संसारमार्गं=मिथ्यात्वाविरतिप्रभृतिरूपं व्यवच्छिनत्ति, संसारमार्गव्यवच्छेदे च जीवः सिद्धिमार्गं=सम्यग्दर्शनादिरूपं प्राप्नोतीत्यर्थः ।

अनुकम्पा—अनु=अनुकूलं      कम्पनं=रक्षणचेष्टाकरणमनुकम्पा=जिनप्रवचनानुसारेणजीवानामुपरि कारुण्यं, प्राणातिपाताकरणं, परदुःखनिवारणं, प्रियमाण-

‘કવ મૈં સંસાર કા ત્યાગ કરૂં ?’ इस प्रकार के निर्वेद से जीव को देव मनुष्य और तिर्यच संबंधी काम भोगों में अनासक्ति प्राप्त होती है । इसी विषय को स्पष्ट करते हैं कि—जीव सब विषयों से विरक्त हो जाता है, अर्थात् ‘इन अनर्थ के कारणभूत विषयों से बस करो !’ इस प्रकार का वैराग्य पाता है । वैराग्य पाकर जीव सावद्य व्यापार का त्याग कर देता है । सावद्य व्यापारका त्याग करता हुआ मिथ्यात्व अविरति आदि संसारमार्ग को छोड़ता है और संसारमार्ग का त्याग कर के सम्यग्दर्शन आदिरूप मोक्षमार्ग को प्राप्त कर लेता है ।

‘अनु’ अर्थात् अनुकूल ‘कम्पन’ अर्थात् रक्षा करने की चेष्टा करना—अनुकम्पा है । अर्थात् जिन भगवान् के उपदेश के अनुसार जीवों पर करुणामाव होना, किसी के प्राणों का वियोग न करना, दूसरों का दुःख दूर करना, मरते हुए और मारे जाते हुए प्राणियों को प्राण

‘હું કયારે સંસારનો ત્યાગ કરું ?’ આ પ્રકારના નિર્વેદથી જીવને દેવ, મનુષ્ય અને તિર્યચ સમ્બન્ધી કામભોગોમાં અનાસક્તિ પ્રાપ્ત થાય છે, તે વિષયને સ્પષ્ટ કરે છે કે:—જીવ સર્વ વિષયોથી વિરક્ત થઈ જાય છે. અર્થાત્ આ અનર્થના કારણભૂત વિષયોથી બસ કરો ?’ આ પ્રકારનો વૈરાગ્ય પામે છે. વૈરાગ્ય પામીને જીવ સાવધ વ્યાપારનો ત્યાગ કરી દે છે. સાવધ વ્યાપારનો ત્યાગ કરતો થકો મિથ્યાત્વ, અવિરતિ આદિ સંસારમાર્ગને છોડે છે, અને સંસારમાર્ગનો ત્યાગ કરીને સમ્યગ્દર્શન આદિરૂપ મોક્ષમાર્ગને પ્રાપ્ત કરી લે છે.

અનુ અર્થાત્ અનુકૂલ, કમ્પન અર્થાત્ રક્ષા કરવાની ચેષ્ટા કરવી તે અનુકમ્પા છે. અર્થાત્—જિન ભગવાનના ઉપદેશ પ્રમાણે જીવો પર કરુણાભાવ થવો, કોઈના પ્રાણોનો વિયોગ કરવો નહિ, બીજાના દુઃખ દૂર કરવાં, મરતાં અને મરતાં પ્રાણીઓને પ્રાણ-





સમ્મદ્દર્શને ચેય” (સ્થાનાંગ ૦ સ્થા. ૨ ઉ. ૧)

તત્ર નિસર્ગઃ, પરિણામઃ, સ્વભાવઃ, ઇત્યેકાર્થકાઃ ।

અપૂર્વકરણાનન્તરં યદ્ ભવત્યનિવૃત્તિકરણં તન્નિસર્ગં ઇતિ કથ્યતે । નિસૃજ્યતે કાર્યોત્પત્તૌ સત્યામિતિ નિસર્ગઃ, કાર્યે સમુત્પન્ને સતિ કારણસ્ય ન કિશ્ચિત્ પ્રયોજનં ભવતિ, ઉત્પન્ને સમ્યક્ત્વે પ્રયોજનાભાવાદનિવૃત્તિકરણં પરિત્યજ્યતે । ન ચાત્યન્તં પરિત્યાગસ્તસ્યેષ્યતે યતસ્તદેવ કારણં તેનાકારેણ પરિણતમ્, યથા—ઉત્થિતોઽપિ પુરુષઃ પુરુષ એવ, આસીનો શયિતો વા પુરુષઃ પુરુષ એવ, અવસ્થામાત્રભેદાદવસ્થાવતો ભેદઃ ક્વાપિ ન દ્રશ્યતે । તત્ર—પરિણામસ્યાનેકરૂપત્વેઽપિ પરિણામિનોઽન્વયિદ્રવ્યસ્ય ન તત્ત્વાત્, સર્વથા ભેદઃ,

સમ્યદ્દર્શન” । (સ્થાનાંગ. સ્થા. ૨ ઉ. ૧)

નિસર્ગ, પરિણામ, યા સ્વભાવ, યે સર્વ પર્યાયવાચક હૈં ।

અપૂર્વકરણ કે પશ્ચાત્ હોને વાળા અનિવૃત્તિકરણ ‘નિસર્ગ’ કહલાતા હૈ । કાર્યે કી ઉત્પત્તિ હો જાને પર જો ત્યાગ દિયા જાતા હૈ વહ ‘નિસર્ગ’ હૈ । કાર્યે કી ઉત્પત્તિ હો જાને કે બાદ કારણ કા કોઈ પ્રયોજન નહીં રહતા, ક્યોં કિ સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોને પર પ્રયોજન નહીં રહને સે અનિવૃત્તિકરણ ત્યાગ દિયા જાતા હૈ, મગર ઉસ કા અત્યન્ત પરિત્યાગ નહીં કિયા જાતા, ક્યોં કિ વહી કારણ ઉસ આકાર મેં—કાર્યરૂપ મેં—પરિણત હો જાતા હૈ । જૈસે—ઘડા હુઆ પુરુષ—પુરુષ હી હૈ । બૈઠા હુઆ યા સોયા હુઆ પુરુષ મી પુરુષ હી હૈ । અવસ્થાઓ મેં ભેદ હોનેમાત્ર સે અવસ્થાવાલે મેં કહીં સર્વથા

સમ્યદ્દર્શન” (સ્થાનાંગ ૦ સ્થા. ૨ ઉ. ૧)

નિસર્ગ, પરિણામ અથવા તેા સ્વભાવ, આ સર્વ પર્યાયવાચક શબ્દો છે. અપૂર્વ-કરણની પછી થવાવાળાં અનિવૃત્તિકરણ નિસર્ગ કહેવાય છે. કાર્યની ઉત્પત્તિ થઈ જવા પછી જે ત્યજ દેવામાં આવે છે. તે નિસર્ગ છે. કાર્યની ઉત્પત્તિ થઈ ગયા પછી કારણનું કોઈ પ્રયોજન રહેતું નથી. કેમકે—સમ્યક્ત્વ ઉત્પન્ન હોવા છતાંય પણ પ્રયોજન નહિ રહેવાથી અનિવૃત્તિકરણ ત્યાગી દેવામાં આવે છે. અર્થાત્ પ્રયોજન નહિ રહેવાથી અનિવૃત્તિકરણનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે. પરન્તુ તેનો અત્યન્ત પરિત્યાગ કરવામાં આવતો નથી; કારણ કે તે કારણ તેવા આકારમાં—કાર્યરૂપમાં—પરિણત થઈ જાય છે. જેમ ઉભો રહેલો પુરુષ, પુરુષજ છે, બેઠેલો અથવા સુતેલો પુરુષ પણ પુરુષજ છે, અવસ્થાઓમાં ભેદ થવા માત્રથી અવસ્થા-

तथाऽत्रापि अनिवृत्तिकरणरूपः परिणामो निसर्गः सम्यक्त्वाकारेण वर्तते पूर्वावस्थापनुद्यावस्थान्तरप्राप्तिः परिणामः, परिणामि जीवद्रव्यं तु ध्रुवमेव । परिणामोऽप्यत्र वैस्रसिक एव, अभेन्द्रधनुरादिवदिति परिणामः स्वभाव इति वाच्यम् ।

ननु श्रद्धा निसर्गतः कथमुत्पद्यते ? उच्यते-कर्मणोऽनादित्वात्पूर्वकर्मोदयेन यद्यदन्यत्कर्म ज्ञानावरणीयादिकं स्वेनैव कृतं तदपि कर्मणशरीरेण सहैव बध्यते कर्मत्वादिदानींतनकर्मवत् । एवंविधपूर्वगृहीतकर्मणः फलमुपभुञ्जानस्य भव्यजीवस्य ज्ञानदर्शनोपयोगस्वभावतयाऽनादिमिथ्यादृष्टेरपि तादृशभवस्थिति-

भेद नहीं देखा जाता । जैसे परिणमन, अनेक प्रकार का होने पर भी परिणामी-अन्वयि-द्रव्य एक होने से उस में सर्वथा भेद नहीं होता । उसी प्रकार यहाँ अनिवृत्तिकरणरूप परिणाम निसर्गसम्यक्त्व के रूप में परिणत हो जाता है-उसकी पूर्व-अवस्था मिटकर नवीन अवस्था उत्पन्न हो जाती है, फिर भी परिणामी-जीवद्रव्य-ज्यों का ल्यों ध्रुव बना रहता है । परिणाम भी यहाँ वैस्रसिक (स्वाभाविक) लेना चाहिए, मेघ तथा इन्द्रधनुष की तरह, अत एव परिणाम का अर्थ-स्वभाव है ।

शङ्का-श्रद्धा, स्वभाव (निसर्ग) से किस प्रकार उत्पन्न होती हैं ? ।

समाधान-अनादि काल से लगे हुए पूर्वकर्मों के उदय से ज्ञानावरणीय आदि जो-जो कर्म जीवने किये हैं, वे सब कर्मण शरीर के साथ ही बँधते हैं, क्योंकि वे कर्म हैं, वर्तमानकालीन कर्मों के समान । इस प्रकार के पहले ग्रहण किये हुए कर्मों का फल भोगते हुए भव्य जीव ज्ञानदर्शनरूप उपयोगस्वभाववाला होने के कारण

વાળામાં કેાઈ સર્વથા ભેદ બેવામાં આવતો નથી જેમ-પરિણમન અનેક પ્રકારનાં હોવા છતાંય પણ પરિણામી-અન્વયિદ્રવ્ય એક હોવાથી તેમાં સર્વથા ભેદ થતો નથી, તે પ્રમાણે અહિં અનિવૃત્તિકરણરૂપ પરિણામ નિસર્ગસમ્યક્ત્વના રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે-તેની પૂર્વ અવસ્થા મટીને નવીન અવસ્થા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે, પણ પરિણામી-જીવદ્રવ્ય-જેમ છે તેમ ધ્રુવ બની રહે છે. પરિણામ પણ અહિં વૈસ્રસિક (સ્વાભાવિક) હોવું જોઈએ, મેઘ તથા ઈન્દ્રધનુષની માફક. એ પ્રમાણે પરિણામનો અર્થ સ્વભાવ છે.

શંકા-શ્રદ્ધા સ્વભાવ (નિસર્ગ)થી કયા પ્રકારે ઉત્પન્ન થાય છે ?

સમાધાન-અનાદિ કાળથી લાગેલાં પૂર્વ કર્મોના ઉદયથી જ્ઞાનાવરણીય આદિ જે-જે કર્મ જીવે કર્યાં છે, તે સર્વ કર્મો જ શરીરની સાથેજ બંધાય છે; કેમકે તે કર્મ છે, વર્તમાનકાલીન કર્મોની સમાન. આ પ્રકારનાં પહેલાં ગ્રહણ કરેલાં કર્મોનું ફલ ભોગવતો

પરિપાકવશેન શુભપરિણામરૂપાઽધ્યવસાયા ભવન્તિ, તેષાં સ્થાનાનિ મન્દ-મધ્ય-તીવ્રાણિ ભવન્તિ । તત્ર જઘન્યશુભપરિણામસ્ય સ્થાનં વિશુદ્ધં, તસ્માદુત્કૃષ્ટસ્ય વિશુદ્ધતરં, તતોઽપ્યુત્કૃષ્ટશુભપરિણામસ્ય વિશુદ્ધતમં સ્થાનં પ્રાપ્નુવતો જીવસ્ય વર્ધમાનશુભપરિણત્યા તાદૃકપરિણામવિશેષો જાયતે, યેન તીર્થઙ્કરાદ્યુપદેશ-મન્તરેણ સ્વતઃ એવ જીવસ્ય કર્મોપશમાદિભ્યઃ શ્રદ્ધોત્પદ્યતે । તત્રાયં ક્રમઃ—

શ્રદ્ધાપ્રાપ્તયેઽધિકારી દ્વિવિધો ભવતિ, અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિઃ, સાદિ-મિથ્યાદૃષ્ટિશ્ચ । યઃ પૂર્વં કદાપિ સમ્યક્ત્વં ન લબ્ધવાન્ સોઽનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિઃ । યશ્ચ ભવ્યઃ પૂર્વં સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્ય પશ્ચાદનન્તાનુવન્ધિકપાયોદયાદુપજાતમિથ્યાત્વઃ

અનાદિકાલ સે મિથ્યાદૃષ્ટિ હોને પર મી અમુક પ્રકાર કી ભવસ્થિતિ કા પરિપાક હોને સે ઉસકે શુભપરિણામરૂપ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન હોતે હૈં । ઉન અધ્યવસાયોં કે સ્થાન મન્દ, મધ્યમ ઓર તીવ્ર હોતે હૈં । ઇન મેં જઘન્ય શુભ પરિણામ કા સ્થાન વિશુદ્ધ હૈ, ઉસ સે ઉત્કૃષ્ટ વિશુદ્ધતર હૈ । ઓર ઉસસે મી ઉત્કૃષ્ટ શુભપરિણામ વિશુદ્ધતમ હૈ । ઇન સ્થાનોં કો પ્રાપ્ત જીવ કે બઢતે હુણ શુભ પરિણામોં સે એક એસા પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસ કે દ્વારા તીર્થંકર આદિ કે ઉપદેશ કે વિના હી સ્વયમેવ જીવ કો કર્મોં કા ઉપશમ આદિ હોને સે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હો જાતી હૈ ।

ક્રમ ઇસ પ્રકાર હૈ—

દો પ્રકાર કે જીવ શ્રદ્ધા પાને કે અધિકારી હૈં—(૧) અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ ઓર (૨) સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ । જિસ જીવને પહેલે કર્મોં સમ્યક્ત્વ નહીં પાયા વહ અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ કહલાતા હૈ । જિસ ભવ્ય જીવને પહેલે સમ્યક્ત્વ પાયા કિન્તુ

થકેા ભવ્ય જીવ જ્ઞાન-દર્શનરૂપ ઉપયોગસ્વભાવવાળા હોવાના કારણે. અનાદિ કાલથી મિથ્યાદૃષ્ટિ હોવા છતાંય પણ અમુક પ્રકારની ભવસ્થિતિનો પરિપાક હોવાથી તેને શુભ પરિણામરૂપ અધ્યવસાય ઉત્પન્ન થાય છે. તે અધ્યવસાયોનાં સ્થાન મંદ, મધ્યમ અને તીવ્ર હોય છે. તેમાં જઘન્ય શુભ પરિણામનું સ્થાન વિશુદ્ધ છે, તેનાથી ઉત્કૃષ્ટ વિશુદ્ધતર છે, અને એનાથી પણ ઉત્કૃષ્ટ શુભ પરિણામ વિશુદ્ધતમ છે. આ સ્થાનોને પ્રાપ્ત જીવના વધતા ગયેલા શુભ પરિણામોમાંથી એક એવું પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે કે જેના દ્વારા તીર્થંકર આદિના ઉપદેશ વિનાજ સ્વયમેવ, જીવને કર્મોંનો ઉપશમ આદિ થવાથી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ જાય છે.

ક્રમ આ પ્રકારે છે—

એ પ્રકારના જીવ શ્રદ્ધા પ્રાપ્ત કરવાની અધિકારી છે. (૧) અનાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ અને (૨) સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ. જે જીવે પહેલા ક્યારેય સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કર્યું નથી તે અનાદિ મિથ્યાદૃષ્ટિ કહેવાય છે. જે ભવ્ય જીવે પહેલાં સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કર્યું હતું પરંતુ પછીથી



જઘન્યતોઽન્તર્મુહૂર્તમ્, સ ઉત્કર્ષતો દેશોનાર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્ત સ્થિત્વા પુનઃ સમ્યક્ત્વં પ્રાપ્સ્યતિ, સ સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિર્ભવતિ ।

### યથાપ્રવૃત્તિકરણમ્—

એવમુભયવિધસ્ય મિથ્યાદૃષ્ટેર્જીવસ્ય પરિણામરૂપાધ્યવસાયઃ પૂર્વ જઘન્ય-શુભપરિણામમઙ્ગીકૃત્ય પરઃ પરઃ શુભપરિણામઃ પરિણામવિશેષ इत्युच्यते । સ એવ પરિણામવિશેષો ‘યથાપ્રવૃત્તિકરણ’—મિત્યુચ્યતે ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણ—મિત્યસ્ય શબ્દાર્થસ્ત્વેવમ્—યથા=યેન અનાદિસંસિદ્ધ-પ્રકારેણ પ્રવૃત્તિર્યસ્ય તત્ યથાપ્રવૃત્તિ, ક્રિયતે કર્મક્ષણમનેનેતિ કરણં=જીવસ્ય શુભપરિણામઃ, યથાપ્રવૃત્તિ ચ તત્કરણં ચ યથાપ્રવૃત્તિકરણં કર્મક્ષણકારણસ્યા-

વાદ મેં અનન્તાનુબન્ધી કષાય કે ઉદય સે ફિર મિથ્યાત્વ આ ગયા કિન્તુ વહ મિથ્યાત્વ જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્તે તક ઓર ઉત્કૃષ્ટ દેશોન અર્દ્ધપુદ્ગલપરાવર્તન તક રહતા હૈ વહ જીવ સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ હૈ ।

### યથાપ્રવૃત્તિકરણ—

इस प्रकार दोनों प्रकार के मिथ्यादृष्टि जीवों का अध्यवसाय पहले के जघन्य शुभ परिणाम से लेकर उत्तरोत्तर बढ़ते हुए शुभ परिणाम, परिणामविशेष कहलाता है । उसी परिणामविशेष को ‘यथाप्रवृत्तिकरण’ कहते हैं ।

‘યથાપ્રવૃત્તિકરણ’ કા શબ્દાર્થ ઇસ પ્રકાર હૈ—‘યથા’ અર્થાત્ અનાદિ-કાલીનરૂપ સે જિસ કી પ્રવૃત્તિ હો વહ યથાપ્રવૃત્તિ કહલાતા હૈ । જિસ સે કર્મોં કા ક્ષય કિયા જાતા હૈ, જીવ કે ઉસ શુભ પરિણામ કો ‘કરણ’ કહતે હૈ । યથાપ્રવૃત્તિ-

અનન્તાનુબન્ધી કષાયના ઉદયથી ફરીથી મિથ્યાત્વ આવી ગયું. પણ તે મિથ્યાત્વ જઘન્ય અન્તર્મુહૂર્ત સુધી અને ઉત્કૃષ્ટ દેશોન અર્દ્ધ પુદ્ગલપરાવર્તન સુધી રહે છે. તે એવ સાદિમિથ્યાદૃષ્ટિ છે.

### યથાપ્રવૃત્તિકરણ—

આ પ્રકારના બંને મિથ્યાદૃષ્ટિ જીવોના અધ્યવસાય પહેલાના જઘન્ય શુભ પરિણામથી લઈને ઉત્તરોત્તર વધતા શુભ પરિણામ, પરિણામવિશેષ કહેવાય છે. તે પરિણામવિશેષને યથાપ્રવૃત્તિકરણ કહે છે. “યથાપ્રવૃત્તિકરણ” નો શબ્દાર્થ આ પ્રકારે છે—‘યથા’ અર્થાત્ અનાદિ કાલીનરૂપથી જેની ‘પ્રવૃત્તિ’ હોય તે ‘યથાપ્રવૃત્તિ’ કહેવાય છે. જેનાથી કર્મોનો ક્ષય કરવામાં આવે છે, જીવના તે શુભ પરિણામને “કરણ” કહે છે.

અધ્યવસાયમાત્રસ્ય સર્વદૈવ ભાવાદુદયાવલિકાપ્રવિષ્ટાનાં કર્મણાં સર્વદૈવ ક્ષપણાત્ ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણં ભવ્યસ્યાભવ્યસ્ય ચ ભવતિ । વક્ષ્યમાણમપૂર્વકરણમનિવૃત્તિકરણં  
ચ ભવ્યસ્યૈવ ભવતિ, ન ત્વભવ્યસ્ય ।

મિથ્યાત્વવશાદનન્તાન્ પુદ્ગલપરાવર્તાન્ અનન્તદુઃસ્વાન્યનુભૂય કથમપિ  
તાદૃશભવસ્થિતિપરિપાકવશાદ્ ગિરિણદીપ્રવહદુઃસ્વર્ત્તિતાપવર્તિતપાષાણવર્ત્તુલા-  
વસ્થાવદનાભોગનિર્વર્ત્તિતેન યથાપ્રવૃત્તિકરણેન વિશુદ્ધપરિણામવિશેષરૂપેણાયુષ્ય-  
કર્મ વર્ગયિત્વા જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્માણિ સર્વાણ્યપિ પલ્યોપમાસંખ્યેયભાગન્યૂનૈક-

રૂપ કરણ યથાપ્રવૃત્તિકરણ કહલાતા હૈ । કર્મક્ષય કા કારણભૂત અધ્યવસાય  
સર્વદૈવ બના રહતા હૈ, ક્યોં કિ ઉદયાવલિકા મેં આપ્ હુએ કર્મોં કા સદા ક્ષય હોતા  
રહતા હૈ ।

યથાપ્રવૃત્તિકરણ ભવ્ય જીવ કો મી હોતા હૈં ઓર અભવ્ય જીવ કો મી  
હોતા હૈ, કિન્તુ આગે કહે જાને વાલે અપૂર્વકરણ ઓર અનિવૃત્તિકરણ ભવ્ય જીવ કો હી હોતે  
હૈં; અભવ્ય જીવ કો નહીં ।

મિથ્યાત્વ કે વશ હોકર અનન્ત પુદ્ગલપરાવર્તનોં તક અનન્ત દુઃસ્વોં કો ભોગને  
કે પશ્ચાત્ કિસી મી તરહ ઉસ પ્રકાર કી ભવસ્થિતિ કા પરિપાક હોને સે પહાડી નદી કે  
પ્રવાહ મેં બહને વાલા; છુદક (ગુડક)ને વાલા, ઘિસને વાલા પાષાણ જૈસે ગોલમટોલ બન  
જાતા હૈ, ઉસી પ્રકાર અનજાન મેં હી યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ વિશુદ્ધ પરિણામ કે કારણ  
આયુર્કર્મ કો છોડકર જ્ઞાનાવરણીય આદિ સાત કર્મ પલ્યોપમા કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ

યથાપ્રવૃત્તિરૂપ કરણ તે ‘યથાપ્રવૃત્તિકરણ’ કહેવાય છે. કર્મક્ષયના કારણભૂત અધ્યવસાય  
હમેશાં બની રહે છે, કેમકે-ઉદયાવલિકામાં આવેલાં કર્મોના હમેશાં ક્ષય થયા કરે છે.

યથાપ્રવૃત્તિકરણ ભવ્ય જીવને પણ થાય છે, અને અભવ્ય જીવને પણ થાય  
છે, પરન્તુ આગળ કહેવામાં આવશે તે અપૂર્વકરણ અને અનિવૃત્તિકરણ ભવ્ય  
જીવોને જ થાય છે, અભવ્ય જીવોને થતાં નથી.

મિથ્યાત્વને વશ થઈને અનન્ત પુદ્ગલપરાવર્તનો સુધી અનન્ત દુઃખોને ભોગવ્યા  
પછી કોઈ પણ પ્રકારે આ પ્રકારની ભવસ્થિતિનો પરિપાક થવાથી પ્રહાડી નદીના પ્રવાહમાં  
વહેવાવાળો-ગબડવાવાળો, ઘસાતો જતો પથ્થર જેવી રીતે ગોળ-મટોળ બની જાય છે,  
એ પ્રમાણે અજ્ઞાણતાં પણ યથાપ્રવૃત્તિકરણરૂપ વિશુદ્ધ પરિણામના કારણે આયુર્કર્મને  
ત્યજીને બીજા જ્ઞાનાવરણીય આદિ સાત કર્મ પલ્યોપમાના અસંખ્યાતમા ભાગ-ઓછાં

સાગરોપમકોટીકોટીસ્થિતિકાનિ કરોતિ । ઉક્તઽચ—

“અંતિમકોડાકોડીએ હોઈ સવ્યાસિં કમ્મપગડીણં ।

પહિયામસંસ્થભાગે, સ્ત્રીણે સેસે હવઈ ગંઠી ॥ ૧ ॥ ”

તત્રાયં ક્રમો વિજ્ઞેયઃ—જ્ઞાનાવરણીય-દર્શનાવરણીય-વેદનીયા-અન્તરાયકર્મ-ચતુષ્ટયસ્ય ત્રિંશત્સાગરોપમકોટીકોટચ ઉત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ । નામગોત્રયોર્વિંશતિ-સાગરોપમકોટીકોટચઃ, મોહનીયસ્ય સપ્તતિસાગરોપમકોટીકોટચ ઉત્કૃષ્ટા સ્થિતિઃ । તત્ર યથાપ્રવૃત્તિકરણેન જીવ ઉત્કૃષ્ટાં સ્થિતિં હ્રાસયન્ તાવતીં સ્થિતિં પ્રાપયતિ, યેન સમાનરૂપેણ સપ્તાનાં કર્મણાં પલ્યોપમાસંખ્યેયભાગન્યૂનૈકસાગરોપમકોટીકોટીસ્થિતિ-

એક કોડાકોડી સાગરોપમ કી સ્થિતિ મેં લાયે જાતે હૈં । કહા મી હૈ—

“સમસ્ત કર્મ પ્રકૃતિયૌ જબ પલ્ય કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ કોડાકોડી કી સ્થિતિવાલી હોતી હૈં, તબ પ્રન્થિ હોતી હૈ ” ॥ ૧ ॥

ક્રમ ઇસ પ્રકાર હૈ—જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય ઓર અન્તરાય, ઇન ચાર કર્મોં કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ-ત્રીસકોડા-કોડી સાગરોપમ કી હૈ । નામ ઓર ગોત્રકી વીસ-વીસ કોડાકોડી સાગરોપમ કી હૈ, ઓર મોહનીય કર્મ કી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સિત્તર (૭૦) કોડાકોડી સાગરોપમ કી હૈ । યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે દ્વારા જીવ ઇસ સારી ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ કો ઘટાકર ઇતની કમ કર ડાલતા હૈ કિ સાતોં કર્મોં કી સ્થિતિ સમાનરૂપ સે પલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવેં ભાગ કમ એક સાગરોપમ કોડાકોડી

એક કોડા-કોડી સાગરોપમની સ્થિતિમાં લાવવામાં આવે છે. કહ્યું પણ છે.

“સમસ્ત કર્મપ્રકૃતિયો બ્યારે પલ્યના અસંખ્યાતમાં-ભાગ ઓછા-એક કોડા-કોડીની સ્થિતિવાળી હોય છે, ત્યારે પ્રંથિ થાય છે.” ॥૧॥

ક્રમ આ પ્રમાણે છે—જ્ઞાનાવરણીય, દર્શનાવરણીય, વેદનીય અને અન્તરાય આ ચાર કર્મોની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ ત્રીસ-ત્રીસ કોડા-કોડી સાગરોપમની છે. નામ અને ગોત્રની વીસ વીસ કોડા-કોડી સાગરોપમની છે. અને મોહનીય કર્મની ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિ સીતેર (૭૦) કોડા-કોડી સાગરોપમની છે. યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા જીવ તમામ ઉત્કૃષ્ટ સ્થિતિને ઓછી કરીને-એટલી ઓછી કરી નાંખે છે કે-સાતે કર્મોની સ્થિતિ સમાનરૂપથી પલ્યોપમના અસંખ્યાતમાં ભાગ ઓછા એક સાગરોપમ કોડા-કોડીની બાકી રહી બચે છે એના



સ્વશિષ્ટા ભવતિ । અત્રાન્તરે ચ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન કર્મનિર્જરાં કુર્વતો જીવસ્ય યાવત્ પૂર્વકર્મણો નિર્જરા ન ભવતિ તાવત્ સ્થીયમાનં તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામરૂપં કર્મ, ગ્રન્થિ-સાદૃશ્યાદ્ ગ્રન્થિરિત્યુચ્યતે ॥

યથા કાષ્ઠવિશેષસ્ય અતિકઠોરનિવિઢાતિશુષ્કઘનગૂઢગ્રન્થિર્દુર્ભેદ્યસ્તથા તીવ્રરાગદ્વેષપરિણામરૂપઃ કર્મવિશેષોઽપિ દુર્ભેદ્યો ભવતિ તસ્માદ્ ગ્રન્થિશબ્દેન વ્યવહીયતે ।

અભવ્યા અપિ યથાપ્રવૃત્તિકરણવલ્લેન કર્મ ક્ષપયિત્વાઽનન્તવારમેતદ્ગ્રન્થિ-પર્યન્તમાગચ્છન્તિ । કશ્ચિદ્ ગ્રન્થિસ્થાનં પ્રાપ્ય તસ્માદધઃ પતતિ । કશ્ચિત્તત્રૈવ ગ્રન્થિસ્થાને સ્થિતસ્તિષ્ઠતિ, ન તસ્માદગ્રે પ્રવર્તતે ।

કી બાકી રહ જાતી છે । इसी बीच—यथाप्रवृत्तिकरणद्वारा कर्मों की निर्जरा करते हुए जीव के जितने कर्मों की निर्जरा नहीं होती अर्थात् जो कर्म शेष रह जाते हैं, वे तीव्र राग-द्वेषपरिणामरूप कर्म, ग्रन्थि के समान होने के कारण ग्रन्थि ( गांठ ) कहलाती हैं ।

जैसे—काठविशेष की अत्यन्त कठिन घनी और एकदम सूखी भीतरी गांठ दुर्भेद्य होती है, उसी प्रकार राग-द्वेषपरिणामरूप कर्मविशेष भी दुर्भेद्य होता है, अत एव वह कर्म, ग्रन्थि कहलाती है ।

અભવ્ય જીવ મી યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા કર્મ કા ક્ષય કર કે અનન્ત વાર ગ્રન્થિ પર્યન્ત આ પહુંચતે હૈં, કોઈ-કોઈ ગ્રન્થિસ્થાન કો પ્રાપ્ત કર કે ફિર નીચે ગિર જાતા હૈ । કોઈ-કોઈ ગ્રન્થિસ્થાન પર હી ઠહર જાતા હૈ, આગે નહીં બઢતા હૈ ।

વચમાં—યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા કર્મોની નિર્જરા કરતા થકા જીવનાં બેટલાં કર્મોની નિર્જરા નથી થતી અર્થાત્ જે કર્મ શેષ રહી જાય છે તે તીવ્ર રાગ-દ્વેષપરિણામરૂપ કર્મ, ગ્રન્થિના સમાન હોવાના કારણે ગ્રન્થિ (ગાંઠ) કહેવાય છે.

જેવી રીતે કાષ્ઠ (લાકડા) વિશેષની અત્યન્ત કઠિન, મજબુત અને એકદમ સૂકી અંદરની ગાંઠ દુર્ભેદ્ય હોય છે, એ પ્રમાણે રાગ-દ્વેષપરિણામરૂપ કર્મવિશેષ પણ દુર્ભેદ્ય હોય છે. એટલા માટે તે કર્મ, ગ્રન્થિ કહેવાય છે.

અભવ્ય જીવ પણ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા કર્મનો ક્ષય કરીને અનન્તવાર ગ્રન્થિ સુધી પહોંચે છે. કોઈ કોઈ ગ્રન્થિ સ્થાનને પ્રાપ્ત થઈને પાછા નીચે પડી જાય છે. કોઈ-કોઈ ગ્રન્થિ સ્થાન ઉપરજ રહી જાય છે. આગળ વધી શકતા નથી.

અભવ્યોઽપિ કશ્ચિદ્ યથાપ્રવૃત્તિકરણેન ગ્રન્થિપર્યન્તં સમાગત્ય તીર્થઙ્કરાતિશય-  
દર્શનેન લબ્ધિધારિભાવિતાત્મમહાત્મનો મહિમાવલોકનેન, પ્રયોજનાન્તરેણ વા  
પ્રવર્તમાનઃ સૂત્રાર્થતદુભયશ્રવણપઠનરૂપં શ્રુતસામાયિકં લભતે, ન ત્વન્યદપૂર્વ-  
કરણાદિકમ્ ।

### ॥ અપૂર્વકરણમ્—

તદનન્તરં કશ્ચિદેવ ભવ્યજીવ આસન્નસિદ્ધિસુખત્વાદુદિતપ્રચુરદુર્નિવારવીર્ય-  
પ્રસરોઽતિનિશિતકુઠારેણેવ યથાપ્રવૃત્તિકરણાપેક્ષયા વિશુદ્ધતરેણાભૂતપૂર્વશુભા-  
ધ્યવસાયવિશેષરૂપેણાપૂર્વકરણેન પ્રાશુક્તં દુર્ભેદ્યં કર્મગ્રન્થિ મિનત્તિ ।

કોઈ અભવ્ય મી યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા ગ્રન્થિ તક આકર તીર્થકર ભગવાન્  
કા અતિશય દેશ્વકર, લબ્ધિધારી ભાવિતાત્મા મહાત્મા કી મહિમા દેશ્વકર, અથવા કિસી  
અન્ય પ્રયોજન સે પ્રવૃત્તિ કરતા હુઆ સૂત્ર, અર્થ ઓર તદુભય આગમ કા શ્રવણ યા  
પઠનરૂપ શ્રુતસામાયિક કો પ્રાપ્ત કર લેતા હૈ, મગર વહ અપૂર્વકરણ આદિ કો નહીં  
પા સકતા ।

### અપૂર્વકરણ—

તદનન્તર મોક્ષસુખ સમીપ હોને કે કારણ જિસ મેં પ્રચુર ઓર દુર્નિવાર શક્તિ ઉત્પન્ન  
હો ગઈ હૈ એસા કોઈ ભવ્ય જીવ હી વહુત તીલે કુલ્હાડે કે સમાન યથાપ્રવૃત્તિ-કરણ કી  
અપેક્ષા અધિક વિશુદ્ધ, ઓર પહેલે કમી મી પ્રાપ્ત ન હોને વાલે શુભઅધ્યવસાયરૂપ  
અપૂર્વકરણ કે દ્વારા ઉસ દુર્ભેદ્ય કર્મગ્રન્થિ કો મેદતા હૈ ।

કોઈ અભવ્ય પણ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારા અંથી સુધી આવીને તીર્થકર ભગવાનના  
અતિશયને જોઈને, લબ્ધિધારી ભાવિતાત્મા મહાત્માનો મહિમા જોઈને, અથવા કોઈ  
અન્ય પ્રયોજનથી પ્રવૃત્તિ કરતો થકો, સૂત્ર, અર્થ અને તદુભય આગમના શ્રવણ  
અથવા પઠનરૂપ શ્રુત-સામાયિકને પ્રાપ્ત કરી લે છે, પરન્તુ તે અપૂર્વકરણ આદિને  
પ્રાપ્ત કરી શકતો નથી.

### અપૂર્વકરણ—

ત્યાર પછી મોક્ષસુખ સમીપ હોવાના કારણે જેનામાં મહાન અને કોઈથી  
નિવારી શકાય નહિ તેવી શક્તિ ઉત્પન્ન થઈ ગઈ છે. એવો કોઈ ભવ્ય જીવ બહુજ  
તીખા કુહાડા સમાન યથાપ્રવૃત્તિકરણની અપેક્ષા અધિક વિશુદ્ધ, અને પહેલાં કોઈ વખત  
પણ પ્રાપ્ત નહિ થયેલા શુભ-અધ્યવસાયરૂપ અપૂર્વકરણ દ્વારા એ દુર્ભેદ્ય કર્મગ્રન્થિને ભેદે છે.

અસ્મિન્ ગ્રન્થિભેદે મનઃક્ષોભપરિશ્રમાદિવિઘ્નાઃ ભવન્તિ । યથા વિદ્યાસાધકસ્ય વિદ્યાધિષ્ઠાતૃદેવતાકૃતોપસર્ગેર્મનઃક્ષોભો ભવતિ, યથા ઘોરમહાસમરગતસુમટસ્ય દુર્ધર્ષ-  
વહુતરશત્રુગણપરાજયકરણાત્પરિશ્રમો ભવતિ, યથા ચ મહાસમુદ્રાદિભ્યો નૌકાદિતારણે  
નાવિકસ્ય પરિશ્રમો ભવતિ તથા પ્રચુરદુર્જયકર્મશત્રુસંઘાતપરાજયે પરિશ્રમોઽતિશયેન  
જાયતે । વજ્રાશ્મવદ્દુર્ભેદોઽયં કર્મગ્રન્થિઃ । અપૂર્વકરણવજ્રસૂચ્યાશ્રયમન્તરેણાસ્ય  
ભેદો દુષ્કરઃ ।

અપૂર્વકરણવજ્રસૂચ્યા સકૃદ્ ગ્રન્થિભેદે કૃતે સતિ લબ્ધવિશુદ્ધતમશ્રદ્ધા-

ગ્રન્થિભેદન કરને મેં માનસિક ક્ષોભ તથા પરિશ્રમ આદિ અનેક વિઘ્ન ઉપસ્થિત  
હોતે હેં । જૈસે વિદ્યા કી સાધના કરને વાલે કો વિદ્યા કી અધિષ્ઠાત્રી દેવતા કે દ્વારા  
કિયે જાને વાલે વિઘ્નો સે મન મેં ક્ષોભ હોતા હૈ, ઓર ઘનઘોર મહાયુદ્ધ મેં ગયે હુ  
યોદ્ધા કો બહુ-સંખ્યક ઓર દુર્જય શત્રુઓ કે દલ પર વિજય પ્રાપ્ત કરને મેં પરિશ્રમ  
કરના પડતા હૈ, અથવા જૈસે કિસી મહાસમુદ્ર સે જહાજ વગૈરહ કો પાર લગાને મેં  
નાવિક કો પરિશ્રમ કરના પડતા હૈ, ઊસી પ્રકાર બહુત-સે દુર્જય કર્મશત્રુઓ કે  
દલ કો પરાજિત કરને મેં અત્યન્ત પરિશ્રમ કરના પડતા હૈ । યહ કર્મગ્રન્થિ વજ્ર કી તરહ  
બડી કઠિનાઈ સે ભેદી જાતી હૈ । અપૂર્વકરણરૂપી વજ્ર કી સુઈ કા સહારા લિયે વિના ઊસ  
કા ભેદન હોના અશક્ય હૈ ।

અપૂર્વકરણ કી વજ્રમય સુઈ સે ઇક વાર કર્મગ્રન્થિ કા ભેદન હો જાને પર

અંતિભેદન કરવામાં માનસિક ક્ષોભ તથા પરિશ્રમ આદિ અનેક વિઘ્ન ઉપ-  
સ્થિત થાય છે. જેમ વિદ્યાની સાધના કરવાવાળાને વિદ્યાની અધિષ્ઠાત્રી દેવતાદ્વારા  
થવાવાળા વિઘ્નોથી મનમાં ક્ષોભ થાય છે, અને ઘનઘોર મહાયુદ્ધમાં ગયેલા યોદ્ધાને  
ઘણીજ સંખ્યાવાળા અને દુર્જય શત્રુઓના દળ ઉપર વિજય મેળવવામાં જેમ પરિશ્રમ  
કરવો પડે છે. અથવા—જેવી રીતે કોઈ મહાસમુદ્રમાંથી વહાણ વગેરેને પાર લઈ  
જવામાં નાવિકોને પરિશ્રમ કરવો પડે છે, એ પ્રમાણે બહુજ દુર્જય કર્મશત્રુઓના  
દળનો પરાજય કરવામાં અત્યન્ત પરિશ્રમ કરવો પડે છે.

આ કર્મગ્રન્થિ વળના જેવી મહાકઠિનતાથી ભેદી શકાય છે. અપૂર્વકરણ રૂપી  
વળની સોયની સહાય લીધા વિના તેનું ભેદન થવું અશક્ય છે.

અપૂર્વકરણની વળમય સોયથી એકવાર કર્મગ્રન્થિનું ભેદન થઈ જવા પછી



सामर्थ्यान्न पुनर्ग्रन्थिवन्धनं भवति, यथा जातवेधो मणिः कथञ्चिद्रजसा परिपूरितेऽपि रन्ध्रे न पूर्वावस्थां प्राप्नोति, तथैव संस्पृष्टसम्यक्त्वो जीवः कथञ्चित्सम्यक्त्वापगमे पश्चात्तीव्ररागद्वेषपरिणामप्राप्तावपि न पुनर्ग्रन्थिरूपेण कर्म बध्नाति ।

यथा जन्मान्धस्य कथञ्चिच्चक्षुःप्राप्तौ सत्यां यथावस्थितपदार्थसार्थावलोकनेन, यथा च महाव्याधिजनितदुरन्तघोरवेदनासमाक्रान्तस्य तद्व्याध्यपगमे महान् प्रमोदो जायते तथा भव्यस्यानिवृत्तिकरणबलेन वीतरागोपदिष्ट-

जीव को श्रद्धा की अत्यन्त विशुद्ध शक्ति प्राप्त हो जाती है, अत एव फिर कभी ग्रन्थिवन्ध नहीं होता । किसी मणि में एक बार छेद कर दिया जाय और कालान्तर में उस में धूल भर जाय तो भी वह छेद पहले की भाँति नहीं होता । इसी प्रकार एकवार सम्यक्त्व प्राप्त कर लेने वाला जीव सम्यक्त्व के नष्ट हो जाने पर भी बाद में तीव्र राग-द्वेषरूप परिणामों की प्राप्ति होने पर भी ग्रन्थि के रूप में कर्मों का बंध नहीं करता ।

जैसे जन्म से अंधे को किसी उपाय से आँख मिलने पर पदार्थों का असली स्वरूप देखकर अत्यन्त हर्ष होता है, अथवा जैसे किसी महान् रोग से होने वाली घोर वेदना से पीड़ित पुरुष के रोग हट जाने पर महान् हर्ष होता है, उसी प्रकार भव्य-जीव को अनिवृत्तिकरण-के बल से भगवान् वीतराग द्वारा कथित यथार्थ

श्रवणे श्रद्धानी अत्यन्त विशुद्ध शक्ति प्राप्त થઈ જાય છે, એટલા માટે ફરી કેઈ વખત ગ્રંથિબંધ થતો નથી. કેઈ મણિમાં એક વખત છિદ્ર-કાણું પાડ્યાં પછી કાલાન્તરમાં તે છિદ્રમાં કદાચ ધૂળ ભરાઈ જાય તો પણ તે છેદ પ્રથમ પ્રમાણે થતો નથી. આ પ્રકારે એકવાર સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કરી લેવાવાળા જીવ, સમ્યક્ત્વનો નાશ થવા છતાં પણ પછીથી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ રૂપ પરિણામોની પ્રાપ્તિ થવા છતાંય પણ ગ્રંથિના રૂપમાં કર્મોનો બંધ કરતા નથી.

જેવી રીતે જન્મથી આંધળાને કેઈપણ ઉપાયથી નેત્ર મળી જતાં પદાર્થોના અસલી સ્વરૂપને જોઈને અત્યંત હર્ષ થાય છે, અથવા જેમ કેઈ મહાન્ રોગથી થવા વાળી મહાઘોર વેદનાથી પીડિત પુરૂષનો રોગ નિવારણ થઈ જતાં તેને મહાન્ હર્ષ થાય છે. એ પ્રમાણે ભવ્ય જીવને અનિવૃત્તિકરણના બળથી, ભગવાન વીતરાગદ્વારા કથિત

યથાવસ્થિતવસ્તુતત્ત્વાઽભિરુચ્યા શ્રદ્ધયાઽભૂતપૂર્વો વિષયવૈરસ્યપુરસ્કૃતઃ પ્રમોદઃ પ્રાદુર્ભવતિ ।

### ॥ અનિવૃત્તિકરણમ્—

તતથ ગ્રન્થિભેદોત્તરકાલમેવ તતો વિશુદ્ધતમં શુભાધ્યવસાયવિશેષમનિવૃત્તિકરણં પ્રાપ્નોતિ, યેન તાવન્ન નિવર્ત્તતે જીવઃ સમ્યક્ત્વં ન લભતે યાવદિત્યનિવૃત્તિકરણમુચ્યતે । અનિવૃત્તિકરણબલેન જીવઃ સમ્યગ્દર્શનં લભતે । તદેવ નૈસર્ગિકી શ્રદ્ધોચ્યતે ।

નતુ પ્રાગુક્તં ‘મિથ્યાત્વમોહનીયકર્માપશમાદિભ્યઃ શ્રદ્ધા જાયતે’ પુનરુચ્યતે ‘નિસર્ગાદધિગમાદ્વા શ્રદ્ધા જાયતે’ તદસંગતમ્ ।

વસ્તુસ્વરૂપ કે પ્રતિ રૂપરૂપ શ્રદ્ધા સે વિષયવૈરાગ્યપૂર્વક એક એસા આનન્દ ઉત્પન્ન હોતા હૈ, જિસ કા પહેલે કમી અનુભવ નહીં હુઆ થા ।

### અનિવૃત્તિકરણ—

ગ્રંથિભેદ કે અનન્તર કાલ મેં અત્યન્ત વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન હોતા હૈ । વહી અનિવૃત્તિકરણ કહલાતા હૈ । યહ પરિણામ પ્રાપ્ત હોને પર જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કિયે બિના નહીં છોટતા, ઈસી કારણ ઈસે ‘અનિવૃત્તિકરણ’ કહતે હૈ । અનિવૃત્તિકરણ કે દ્વારા જીવ સમ્યગ્દર્શન પ્રાપ્ત કરતા હૈ । ઈસી કો નૈસર્ગિક શ્રદ્ધા કહતે હૈ ।

શુદ્ધા—પહેલે કહા થા કિ—‘મિથ્યાત્વમોહનીયકર્મ કે ઉપશમ આદિ સે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ’ ઓર બાદ મેં કહતે હૈ કિ—‘નિસર્ગ સે, અથવા અધિગમ સે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોતી હૈ’ । યહ કથન પરસ્પર અસંગત હૈ ?

યથાર્થવસ્તુસ્વરૂપની રૂચિરૂપ શ્રદ્ધાથી વિષયવૈરાગ્યપૂર્વક એક એવો આનન્દ ઉત્પન્ન થાય છે કે-જેનો પહેલા કોઈ વખત અનુભવ થયો નથી.

### અનિવૃત્તિકરણ—

ગ્રંથિભેદના અનન્તર (તરતના) કાળમાં અત્યન્ત વિશુદ્ધ પરિણામ ઉત્પન્ન થાય છે તે ‘અનિવૃત્તિકરણ’ કહેવાય છે. આ પરિણામ પ્રાપ્ત થયાં પછી જીવ સમ્યક્ત્વ પ્રાપ્ત કર્યા બિના પાછો નથી ફરતો તેથીજ એને અનિવૃત્તિકરણ કહે છે. અનિવૃત્તિકરણ જીવ દ્વારા સમ્યગ્દર્શન પ્રાપ્ત કરે છે. તેનેજ નૈસર્ગિક (સ્વાભાવિક) શ્રદ્ધા કહે છે.

શંકા—પહેલાં કહ્યું હતું કે—‘મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના ઉપશમ આદિથી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે.’ અને પછી કહે છે કે—‘નિસર્ગ અથવા અધિગમથી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે, એ કથન પરસ્પર અસંગત છે.

અત્રોચ્યતે-સ એવ ક્ષયોપશમાદિર્નિસર્ગાધિગમાદ્વા જાયતે, તથા ચ શ્રદ્ધાયા અપિ તદ્વ્યયં કારણં સિદ્ધયતીતિ ન દોષઃ ।

નનુ સમ્યક્ત્વગુણરહિતેનૈવ જીવેન દ્રાઘીયસી કર્મસ્થિતિર્ગ્રંથિભેદા-ત્પૂર્વે યથાપ્રવૃત્તિકરણેન યથા ક્ષપિતા તથા તદ્વશિષ્ટમપિ કર્મગ્રંથિ યથા-પ્રવૃત્તિકરણેનૈવ મિનત્તુ, તતો મોક્ષમપ્યેવમેવ પ્રાપ્નોતુ કિં પુનરપૂર્વકરણાલમ્બનેન ? અત્રોચ્યતે-મહાવિદ્યાસાધનવદેતદ્ દ્રષ્ટવ્યમ્ । યથા મહાવિદ્યાયાઃ સાધને પૂર્વ સ્વલ્પ એવ પરિશ્રમો ભવતિ, તત્સિદ્ધિપ્રાપ્તિસમયે તુ સા વિદ્યા તદ્વિદ્યાધિષ્ઠાતૃદેવતાકૃત-

**સમાધાન**—મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મ કા ક્ષયોપશમ આદિ, નિસર્ગા સે અથવા અધિગમ સે હોતા હૈ, એસી સ્થિતિ મેં યહ દોનો કારણ શ્રદ્ધા કે હી હૈ, અતઃ કોઈ દોષ નહીં હૈ ।

**શંકા**—જીવ ને સમ્યક્ત્વ ન હોને પર મી જૈસે ઉતની બડી ભારી કર્મસ્થિતિકો ગ્રંથિભેદ સે પહેલે હી યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે દ્વારા સ્થિતિ મી યથાપ્રવૃત્તિકરણ કે દ્વારા હી સ્થિતિ ઓર મોક્ષ મી હીસી પ્રકાર પ્રાપ્ત કરલે ફિર અપૂર્વકરણ કા આશ્રય લેને કી કયા આવશ્યકતા હૈ ?

**સમાધાન**—મહાવિદ્યા કી સાધના કી તરહ હી યહાં સમજના ચાહિયે । જૈસે મહાવિદ્યા કી સાધના મેં પહેલે થોડા-સા શ્રમ હોતા હૈ કિન્તુ જવ ઉત કો સિદ્ધિ કા સમય નજદીક આતા હૈ તો વહ વિદ્યાધિષ્ઠાત્રી દેવતાદ્વારા કિયે જાનેવાલે નાના પ્રકાર કે ઉપસર્ગો દ્વારા વિઘ્નયુક્ત હો જાતો હૈ ઓર પ્રાયઃ અત્યન્ત કષ્ટસાધ્ય બન જાતો હૈ,

**સમાધાન**—મિથ્યાત્વમોહનીય કર્મના ક્ષયોપશમ આદિ, નિસર્ગાથી અથવા અધિગમથી થાય છે, એવી સ્થિતિમાં આ બંને કારણો શ્રદ્ધાનાજ છે તેથી કોઈ દોષ નથી.

**શંકા**—જીવને સમ્યક્ત્વ ન હોય તો પણ એવી રીતે એવી મહાભારી કર્મ સ્થિતિને ગ્રંથિભેદના પહેલાજ યથાપ્રવૃત્તિકરણના દ્વારા ખપાવી નાંખે છે તે પ્રમાણે શેષ સ્થિતિ પણ યથાપ્રવૃત્તિકરણદ્વારાજ ખપાવી નાંખે અને મોક્ષ પણ આ પ્રમાણે પ્રાપ્ત કરી લીએ તો પછી અપૂર્વકરણનો આશ્રય લેવાની શું આવશ્યકતા છે ?

**સમાધાન**—મહાવિદ્યાની સાધના પ્રમાણેજ અહિં સમજી લેવું જોઈએ. જેમ મહાવિદ્યાની સાધનામાં પહેલાં થોડો એવો શ્રમ થાય છે, પરંતુ બ્યારે તેની સિદ્ધિને સમય નજીક આવે છે ત્યારે તે વિદ્યાની અધિષ્ઠાત્રીદેવતાદ્વારા કરવામાં આવતા નાના પ્રકારના ઉપસર્ગો દ્વારા વિઘ્નયુક્ત થઈ જાય છે. અને ઘણું કરીને અત્યન્ત કષ્ટસાધ્ય



વિવિધોપસર્ગેઃ સવિધ્ના કષ્ટતરસાધ્યા ચ પ્રાયશો ભવતિ, તદ્વદ્ ગ્રન્થિભેદો મનઃ-  
ક્ષોભાદિવિવિધોપસર્ગેઃ, પરમવીર્યાવિષ્કારપૂર્વકકષ્ટતરસાધ્યત્વેન ચ સવિદ્નોઽતિદુષ્કરશ્ચ,  
તસ્માત્ કેવલં યથાપ્રવૃત્તિકરણેન ગ્રન્થિભેદો ન ભવિતુમર્હતિ, અતઃ એવા પૂર્વકરણમાવ-  
શ્યકમિતિ । इत्थं चापूर्वकरणेन ग्रन्थिभेदं विधायाऽनिवृत्ति-करणेन श्रद्धा लभ्यते ।

॥ અધિગમશ્રદ્ધા—

येन प्रकारेण निसर्गतः श्रद्धा जायते स कथितः, अधुना-अधिगमश्रद्धा  
व्याख्यायते-अधि=अधिकृत्य तीर्थङ्कराद्युपदेशं निमित्तीकृत्य गमः=ज्ञानं यद्भवति  
सोऽधिगमः, वीतरागोपदेशश्रवणाद् वीतरागप्राणीतागमार्थपर्यालोचनाद्वा यथाव-

इसी प्रकार ग्रन्थिभेद भी मनःक्षाम आदि अनेक उपसर्गों के कारण विघ्नयुक्त हो जाता  
है और ग्रन्थिभेद के करने में बड़ी शक्ति की आवश्यकता होती है, अत एव अकेले  
यथाप्रवृत्तिकरण से ग्रन्थिभेद नहीं हो सकता, उस के लिए अपूर्वकरण की आवश्यकता  
होती है । इस प्रकार अपूर्वकरण-द्वारा ग्रन्थिभेद करने पर अनिवृत्तिकरण-द्वारा श्रद्धा प्राप्त  
की जाती है ।

અધિગમશ્રદ્ધા—

जिस प्रकार निसर्ग से श्रद्धा उत्पन्न होती है वह प्रकार कहा जा चुका ।  
अब अधिगमश्रद्धा की व्याख्या की जाती है-तीर्थङ्कर आदि के उपदेश के निमित्त से  
होने वाला ज्ञान अधिगम कहलता है । वीतराग भगवान् का उपदेश सुनने से

ખની જાત છે; એ પ્રમાણે અંથિલેદ પણ મનઃક્ષોભ આદિ અનેક ઉપસર્ગોના કારણે  
વિઘ્નયુક્ત થઈ જાય છે, અને તે ગ્રન્થિભેદના કરવામાં ભારે શક્તિની આવશ્યકતા  
હોય છે, એટલા માટે એકલા યથાપ્રવૃત્તિકરણથી અંથિલેદ થતો નથી, તેને માટે  
અપૂર્વકરણની આવશ્યકતા રહે છે, એ પ્રમાણે અપૂર્વકરણ-દ્વારા અંથિલેદ કરવાથી  
અનિવૃત્તિકરણ-દ્વારા શ્રદ્ધા પ્રાપ્ત કરવામાં આવે છે

અધિગમશ્રદ્ધા—

એ પ્રમાણે નિસર્ગથી શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થાય છે તે પ્રકાર કહેવામાં આવી ગયો છે.  
હવે અધિગમશ્રદ્ધાની વ્યાખ્યા કરવામાં આવે છે-તીર્થંકર આદિના ઉપદેશના નિમિત્તથી  
થવાવાશું જ્ઞાન તે અધિગમ કહેવાય છે. વીતરાગ ભગવાનનો ઉપદેશ સાંભળવાથી, અથવા

સ્થિતપદાર્થનિર્ણયો જાયતે સોઽધિગમઃ, તસ્માદુપશમાદિદ્વારેણ તત્ત્વાર્થોભિરુચિર્જાયતે સા-અધિગમશ્રદ્ધા ।

શ્રદ્ધયા શમસંવેગાદયઃ પ્રાદુર્ભવન્તિ, તતથ રાજ્યાદિવિભવં પુત્રદારાદિકં સ્વજનં સર્વં પરિણામદુઃસ્વપ્રદં વિષવત્પરિત્યજ્ય સર્વસુખસારભૂતં નિત્યં ધ્રુવં શાશ્વતિકં મોક્ષસુખં પ્રાપ્તુકામઃ પ્રવ્રજિતો ભવતિ ।

સંયમશ્રેણિપ્રાપ્તિકાલે યા પ્રવૃદ્ધપરિણામધારા વર્તતે તાં સર્વથા રક્ષેન્ન તુ હ્રાસયેદિતિ ભાવઃ । શ્રદ્ધાયાઃ પરમદુર્લભત્વાત્, જ્ઞાનચારિત્રકારણતયા મોક્ષસ્યાદિ-

અથવા વીતરાગ દ્વારા નિરૂપિત આગમ કે અર્થ કા વિચાર કરને સે પદાર્થો કા યથાર્થ નિર્ણય હોતા હૈ । ઉસ નિર્ણય કો અધિગમ કહતે હૈ । ઉસ અધિગમ સે મિથ્યાત્વ-મોહનીય કા ક્ષય, ઉપશમ આદિ હોને પર તત્ત્વાર્થ કો જો રુચિ હોતી હૈ, વહ અધિગમ-શ્રદ્ધા હૈ ।

શ્રદ્ધા સે શમ, સંવેગ આદિ ઉત્પન્ન હોતે હૈ, અત એવ “રાજ્ય આદિ વૈભવ તથા પુત્ર, પત્ની આદિ સમસ્ત આત્મીયજન અન્ત મેં દુઃખદાયક હૈ” એસા જાન કર, ઔર વિષ કે સમાન ઉન કા પરિત્યાગ કર કે સબ સુખો મેં ઉત્તમ, નિત્ય, ધ્રુવ, શાશ્વતિક મોક્ષ-સુખ કી ઇચ્છાવાલા વહ સમ્યગ્દષ્ટિ પુરુષ દીક્ષિત હો જાતા હૈ ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-સંયમપ્રાપ્તિ કે સમય પરિણામોં કી જો વઢી હુઈ ધારા થી ઉસ કી સબ પ્રકાર સે રક્ષા કરના ચાહિણ, ઉસે ઘટને નહીં દેના ચાહિણ । શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભ હૈ, ઔર જ્ઞાન એવં ચારિત્ર કા કારણ હોને સે મોક્ષ કા આદ્ય કારણ હૈ, અત એવ

વીતરાગદ્વારા નિરૂપિત આગમના અર્થનો વિચાર કરવાથી પદાર્થોનો યથાર્થ નિર્ણય થાય છે તે નિર્ણયને અધિગમ કહે છે. તે અધિગમથી મિથ્યાત્વમોહનીયનો ક્ષય-ઉપશમ આદિ થયા પછી તત્ત્વાર્થની જે રુચિ થાય છે, તે અધિગમશ્રદ્ધા છે.

શ્રદ્ધાથી શમ, સંવેગ આદિ ઉત્પન્ન થાય છે. એટલા માટે “રાજ્ય આદિ વૈભવ તથા પુત્ર, પત્ની વગેરે સમસ્ત આત્મીયજન અંતમાં દુઃખદાયક છે.” એ પ્રમાણે બાણીને વિષની સમાન તેને ત્યાગ કરીને સર્વસુખોમાં ઉત્તમ, નિત્ય, ધ્રુવ, શાશ્વતિક મોક્ષ સુખની ઇચ્છાવાળા સમ્યગ્દષ્ટિ પુરુષ દીક્ષિત થઈ જાય છે.

તાત્પર્ય એ છે કે-સંયમની પ્રાપ્તિના સમયે પરિણામોની જે વધતી જતી ધારા હોતી તેનું સર્વ પ્રકારથી રક્ષણ કરવું જોઈએ. તેને ઘટવા દેવી જોઈએ નહિ. શ્રદ્ધા પરમ દુર્લભ છે અને જ્ઞાન, એવી રીતે ચારિત્રનું કારણ હોવાથી મોક્ષનું મુખ્ય કારણ છે. એટલા માટે

कारणत्वाच्च श्रद्धां न परित्यजेत् । यथा-कथञ्चित्प्राप्तस्यापि संयमस्य श्रद्धापूर्वकरक्षणे यावज्जीवं सावधानो भवेदिति सूत्राशयः ॥ सू० २ ॥

शिष्यश्रद्धादृढीकरणाय 'परिशीलितमार्गोऽनुगम्यते' इति लोकीकृत्या 'पूर्व-महापुरुषाचरितोऽयं मार्गः' इत्याशयेन कथयति—

यद्वा 'पूर्वमहापुरुषतीर्थङ्कर-गणधरादिभिरप्याचरितोऽयं मार्गः' इति प्रदर्शनाय शिष्यचेतसि श्रद्धातिरेको यथा स्यात्तथा सूत्रकारः स्वयमाह—'पणया' इत्यादि ।

॥ मूलम् ॥

पणया वीरा महावीहि ॥ सू० ३ ॥

॥ छाया ॥

प्रणता वीरा महावीथिम् ॥ सू० ३ ॥

श्रद्धा का त्याग नहीं करना चाहिए, आशय यह है कि—बड़ी कठिनाई से प्राप्त होने वाले संयम की श्रद्धापूर्वक रक्षा करने में जीवनभर सावधान रहना चाहिए ॥सू. २॥

'चले मार्ग पर चला जाता है' इस लोकव्यवहार के अनुसार शिष्य की श्रद्धा मजबूत करनेके लिए 'यह मार्ग पूर्वकालीन महापुरुषों द्वारा आचरित है' इस आशयसे कहते हैं—

अथवा—'पूर्वकाल के तीर्थङ्कर गणधर आदिने भी इसी मार्ग का अवलम्बन किया है' यह बतलाते हुए शिष्य के चित्त की श्रद्धा बढ़ाने के लिए कहते हैं—'पणया' इत्यादि ।

मूलार्थ—वीर पुरुष महामार्ग को प्राप्त हुए ॥ सू. ३ ॥

श्रद्धानो त्याग करवो न्होई नहि; आशय ओ छे के:-महान कठिनाईथी प्राप्त थवावाजा संयमनी श्रद्धापूर्वक रक्षा करवाभां जवनता छेला रक्षाय सुधी सावधान रहेबुं न्होई ओ. (सू. २)

"आलता मार्ग पर थलावाय छे." आ लोकव्यवहार प्रमाणे शिष्यनी श्रद्धा मजबूत करवा भाटे—'आ मार्ग पूर्वकालीन महापुरुषोओ आचरयु करेल छे.' आ आशयथी कहे छे—

अथवा पूर्व कालना तीर्थंकर गणधर आदि सौओ आ मार्गनुं अवलम्बन (आश्रय) कयुं. ओ अताववा भाटे शिष्यना चित्तनी श्रद्धाने वधारवा भाटे कहे छे—'पणया' इत्यादि.

मूलार्थ—वीर पुरुष महामार्गने प्राप्त थया—(वीर पुरुष महामार्गने प्राप्त कयो.) (सू. ३)



॥ ટીકા ॥

વીરાઃ=પરીષહોપસર્ગકષાયારૂપશત્રુવિજયિનો ભાવવીરાઃ સંયમાનુષ્ઠાને કીર્ય-  
વન્તઃ સર્વોત્કૃષ્ટા इति यावत्,

મહતી ચાસૌ વીથિઃ મહાવીથિઃ=સમ્યગ્જ્ઞાનાદિલક્ષણો મહામાર્ગઃ, મહા-  
પુરુષસેવિતત્વાત્, તાં મહાવીથિમ્ પ્રણતાઃ=પ્રાપ્તાઃ કઠિનતરતપઃસંયમારાધનેન  
પ્રાપ્તવન્ત इत्यर्थઃ, અયમેવ માર્ગો મોક્ષાવાપ્તિકરોઽશ્વેષસંયમિસેવિતત્વાત્ ।  
તીર્થંકરાદિમહાપુરુષા અપિ માર્ગમિમમનુશીલિતવન્ત इति વિશ્વસનીયતયા શિષ્યાણાં  
શ્રદ્ધાપૂર્વકપ્રવૃત્તિર્યથા સ્યાદિતિ ભાવઃ ।

यथा राजानो विपक्षपक्षदलनाद् वीरत्वेन प्रसिद्धा भवन्ति, एवमेव

ટીકાર્થ—પરીષદ, ઉપસર્ગ, કષાય આદિરૂપ શત્રુઓં કો જીતનેવાલે, સંયમ કે  
આચરણ મેં પરાક્રમ કરનેવાલે સર્વોત્કૃષ્ટ ભાવવીર યહાં ‘વીર’ શબ્દ સે પ્રહણ કિયે ગયે હૈં ।

સમ્યગ્જ્ઞાન આદિ મોક્ષ કા મહામાર્ગ ‘મહાવીથિ’ કહલાતા હૈ, ક્યોં કિ મહાપુરુષોને  
ઉસ કા સેવન કિયા હૈ । ભાવવીર ઇસ મહામાર્ગ કો પ્રાપ્ત હુએ હૈં । અત્યન્ત કઠોર તપ  
ઔર સંયમ કા આરાધન કરના હી ઇસ માર્ગ કો પ્રાપ્ત કરના હૈ । યહી માર્ગ મોક્ષ કી પ્રાપ્તિ  
કરને વાલા હૈ, ક્યોં કિ સમસ્ત મુનિયોંને ઇસી કા સેવન કિયા હૈ । તીર્થંકર આદિ મહાપુરુષોંને  
મી ઇસી માર્ગ કા આશ્રય લિયા હૈ, અત એવ વિશ્વસનીય સમજ કર શિષ્યગણ કી મી ઇસી  
મેં પ્રવૃત્તિ હોની ચાહિએ ।

‘વીર’ પદ સે યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ—જૈસે રાજા લોગ અપને શત્રુઓં કા

ટીકાર્થ—પરીષદ, ઉપસર્ગ કષાય વગેરે શત્રુઓંને જીતવાવાળા, સંયમના  
આચરણમાં પરાક્રમ કરવાવાળા સર્વોત્કૃષ્ટ ભાવવીર અહિં ‘વીર’ શબ્દ વડે ગ્રહણ  
કરવામાં આવ્યા છે.

સમ્યગ્જ્ઞાન આદિ મોક્ષનો માર્ગ તે “મહાવીથિ” કહેવાય છે, કારણ કે મહા-  
પુરુષોએ તેનું સેવન કર્યું છે. ભાવવીર આ મહામાર્ગને પ્રાપ્ત થયા છે. અત્યન્ત કઠોર  
તપ અને સંયમનું આરાધન કરવું એ જ આ માર્ગને પ્રાપ્ત કરવો તે છે. આ માર્ગજ  
મોક્ષની પ્રાપ્તિ કરાવવાવાળો છે, કારણ કે સમસ્ત મુનિઓએ એ માર્ગનો સેવન કર્યું  
છે. તીર્થંકર આદિ મહાપુરુષોએ પણ આ માર્ગનો આશ્રય લીધો છે, એટલા માટે આ  
માર્ગને વિશ્વાસપાત્ર સમજીને શિષ્યગણની પણ આ માર્ગમાં પ્રવૃત્તિ થવી જોઈએ.

‘વીર’ પદથી એ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે કે—જેમ રાજા લોક પોતાના શત્રુઓનો

परिषहादिरूपशत्रुविजयेन संयमिनोऽपि मोक्षमार्गं लब्ध्वा लोकोत्तरवीरा भवन्ति, इति वीरपदेन व्यज्यते, इति सूत्राशयः ॥ सू० ३ ॥

कश्चिन्मन्दधीः शिष्योऽनेकदृष्टान्तैर्बोध्यमानोऽपि अप्कायादिजीवेषु न श्रद्धातीति तमुद्दिश्य कथयति—हे शिष्य ! तव मतिर्यद्यप्यप्कायजीवविषये न परिस्फुरति, तद्विषये विशेषज्ञानाभावात्, तथापि भगवदाज्ञया श्रद्धा नितरां विधेयेत्याशयेनाह—‘लोगं च’ इत्यादि ।

मूलम्—

लोगं च आणाए अभिसमेच्चा अकुतोभयं ॥ सू० ४ ॥

छाया—

लोकं चाज्ञयाऽभिसमेत्य अकुतोभयम् ॥ सू० ४ ॥

दलन करके वीर पदवी पाते हैं, उसी प्रकार परीषह आदि शत्रुओं को जीतने से संयमी मोक्षमार्ग प्राप्त कर के लोकोत्तर वीर कहलाते हैं ॥ सू. ३ ॥

कोई मन्दबुद्धिवाला शिष्य अनेक दृष्टान्तों से समझाने पर भी अप्काय आदि के जीवों पर श्रद्धा नहीं करता तो उसे लक्ष्य कर के कहते हैं—हे शिष्य ! यद्यपि तुम्हारी बुद्धि अप्काय के जीवों के विषय में नहीं दौडती, क्यों कि तुम्हें उस विषय का विशेष ज्ञान नहीं है; फिर भी भगवान् की आज्ञा से अवश्य ही श्रद्धा रखनी चाहिए । इस आशय से कहते हैं—‘लोगं च’ इत्यादि ।

मूलार्थ—भगवान् की आज्ञा से ( अप्कायरूप ) लोक को सम्यक् प्रकार से जानकर संयम का पालन करना चाहिए ॥ सू. ४ ॥

नाश करीने वीर पदवी प्राप्त करे छे, ते प्रमाणे परीषह आदि शत्रुओंने जितवाथी संयमी पण मोक्षमार्ग प्राप्त करीने दोकोत्तर वीर कहवाय छे. ( सू. ३ )

कोई मन्दबुद्धिवाला शिष्य अनेक दृष्टान्तोथी समझव्या छतां पण अप्काय आदिना जिवे पर श्रद्धा नथी करता तो तेने लक्ष्यरूप राखीने कहे छे के—हे शिष्य ! छुछु सुधी तमारी बुद्धि अप्कायना जिवे विषयमां दौडती नथी. ( काम करती नथी ) कारण के तमने आ विषयनुं विशेष ज्ञान नथी तो पछी भगवान् की आज्ञाथी अवश्य श्रद्धा राखवी जेधये. जे आशयथी कहे छे—‘लोगं च’ इत्यादि.

मूलार्थ—भगवान् की आज्ञाथी ( अप्कायरूप ) लोकने सम्यक् प्रकारथी ज्ञानीने संयमनुं पालन करवुं जेधये. ( सू. ४ )

टीका—

अत्र लोकशब्देन प्रकरणवशादप्कायलोक एव गृह्यते, तमप्काय-लोकं, 'च'-शब्देनान्याश्चाप्कायाश्रितान्, आज्ञया=तीर्थङ्करवचनेन, अभिसमेत्य= अभिमुख्येन सम्यक् ज्ञात्वा 'अप्कायादयो जीवाः सन्ती-त्येवमवबुध्येत्यर्थः, अकुतोभयम्=नास्ति कुतश्चित्केनापि प्रकारेण प्राणिनां भयं यस्मात्सोऽकुतोभयः= संयमस्तम् अनुपालयेत् इत्यन्वयः । सर्वथा जीवाभिरक्षणरूपसंयमानुपालने सावधानतया यत्नः कार्य इत्यर्थः ।

यद्वाऽकुतोभयोऽप्कायलोको, यतोऽसौ न कुतश्चिदन्यस्माद्भयमिच्छति, स्वकीयमरणादिभयात् सर्वः प्राणिगणः खिन्नो भवति । 'सर्वे जीवा वि

टीकार्थ—मूल सूत्र में दिये हुए 'लोक' शब्द से, प्रकरण के कारण यहां अप्काय-लोक ही समझना चाहिए । 'च' शब्द से अप्काय के आश्रय रहे हुए अन्य जीवों का ग्रहण करना चाहिए । इस प्रकार अप्काय और अप्काय के आश्रित रहनेवाले अन्य जीवों को तीर्थङ्कर भगवान् की आज्ञा से सम्यक् प्रकार जानकर अर्थात् 'अप्काय आदि जीव हैं' ऐसा समझ कर संयम का पालन करना चाहिए । 'अकुतोभय' अर्थात् जिस से किसी भी प्राणि को किसी प्रकार का भय न हो ऐसा संयम । सर्वथा जीवरक्षारूप संयम के पालने में सावधान होकर यत्न करना चाहिए ।

अथवा—'अकुतोभय' का अर्थ है—अप्कायलोक, क्यों कि वह दूसरे से भय की इच्छा नहीं करता । सभी प्राणी अपनी मृत्यु आदि के भय से खिन्न होते हैं ।

टीकार्थ—मूलसूत्रमां आपेक्षा 'लोक' शब्दधी प्रकरणेना कारणे अप्काय-लोकेन समञ्चं नेधये. 'च' शब्दधी अप्कायना आश्रये रडेला अन्य एवेनुं ग्रहण करवुं नेधये. ये प्रमाणे अप्काय अने अप्कायना आश्रित रडेवावाणा अन्य एवेने तीर्थंकर भगवाननी आश्रधी, सम्यक् प्रकारे नेणी करीने अर्थात् 'अप्काय आदि एव छे.' ये प्रमाणे समञ्चने संयमनुं पालन करवुं नेधये. 'अकुतोभय' अर्थात् नेना वडे कोधपणु प्राणीने कोध प्रकारेना भय न डोय येवो संयम, सर्वथा एव-रक्षारूप संयमना पालनमां सावधान थधने यत्न करवो नेधये.

अथवा 'अकुतोभय'ने अर्थ छे—अप्कायलोक, कारणे के ते जीवना तरङ्गी लयनी धरुता नधी; सर्व प्राणी पोताना मृत्यु आदिना लयधी भिन्न-दुःखी थाय छे.



इच्छन्ति, जीविउं न मरिज्जिउं' इति वचनात् । तमप्कायलोकं समनुपालयेदिति सम्बन्धः । संयमी सर्वप्राणिगणपरिपालक एव सन् नान्यस्मै भयमुत्पादयति, 'मित्री मे सव्वभूएसु' इति वचनेन तस्य सर्वैः सह मैत्रीसद्भावात्, अतोऽसौ संयमी न तेभ्यो भयं जनयति, कस्मैचिदपि भयं केनापि नोत्पादयति, प्रत्युत सर्वप्राणिगणं परिरक्षतीति भावः ।

यद्यपि छद्मस्थैः प्राणिभिः सर्वद्रव्यपर्यायज्ञानाभावाद्बुद्धिसंस्कारराहित्येनाप्कायजीवस्याव्यक्तचेतनया च 'आपो जीवाः सन्ती'—त्यपरोक्षत्वेन कदाचिदपि ज्ञातुं न शक्यते, तथापि सकलतीर्थोद्धारधुरीण—तीर्थङ्कर—वचनप्रामाण्यादवश्यं

आगम में कहा है—'सभी जीव जीवित रहना चाहते हैं मरना नहीं चाहते ।' उस अप्कायलोक का पालन करे अर्थात् रक्षण करे । संयमी पुरुष समस्त प्राणियों का रक्षक होता है । वह किसी भी प्राणी को भय उत्पन्न नहीं करता । " मेरा सब प्राणियों पर मैत्रीभाव है " इस वचन के अनुसार उस की प्राणीमात्र पर मित्रता की भावना होती है । इस कारण संयमी उन्हे भय उत्पन्न नहीं करता, किसी को भी किसी द्वारा भय उत्पन्न नहीं कराता, बल्कि वह सब प्राणियों की रक्षा करता है ।

यद्यपि छद्मस्थ जीवों को समस्त द्रव्यों का ज्ञान नहीं होता इस कारण, तथा बुद्धि, संस्कार से रहित होने के कारण अप्काय के जीवों में अव्यक्त चेतना होने से, तथा 'जल जीव है' यह बात प्रत्यक्ष न होने से कभी इन्द्रियों द्वारा जानी नहीं जा सकती, फिर भी सम्पूर्ण तीर्थ का उद्धार करने में समर्थ तीर्थङ्कर के वचनों को प्रमाण

આગમમાં પણ કહ્યું છે કે:—“સર્વ જીવ જીવતા રહેવાની ઇચ્છા કરે છે, મરવાની ઇચ્છા કરતા નથી.” તે અપ્કાયલોકનું પાલન કરે અર્થાત્ રક્ષા કરે. સંયમી પુરુષ સમસ્ત પ્રાણીઓના રક્ષક થાય છે. તે કોઈ પણ પ્રાણીને ભય ઉત્પન્ન કરતા નથી. ‘સર્વ પ્રાણીઓ પર મારો મૈત્રીભાવ છે.’ આ વચન પ્રમાણે તેની સર્વ પ્રાણીમાત્ર પર મિત્રતાની ભાવના હોય છે, તે કારણથી સંયમી તે જીવોને ભય ઉત્પન્ન કરતા નથી, કોઈને પણ કોઈથી ભય ઉત્પન્ન કરાવતા નથી, પરંતુ તે સર્વ પ્રાણીઓની રક્ષા કરે છે.

જો કે છદ્મસ્થ જીવોને સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોનું જ્ઞાન નથી; તે કારણથી તથા બુદ્ધિ, સંસ્કારથી રહિત હોવાથી અપ્કાયના જીવોમાં અવ્યક્ત ચેતના હોવાથી, તથા 'જલ જીવ છે' એ વાત પ્રત્યક્ષ નહિ હોવાથી ઇન્દ્રિયોદ્ધાર કોઈ વખત બાણવામાં આવતી નથી તો પણ સંપૂર્ણ તીર્થોનો ઉદ્ધાર કરવામાં સમર્થ તીર્થંકરના વચનોને પ્રમાણ

વિશ્વાસો વિધેયઃ । અવધ્યાદિપ્રત્યક્ષજ્ઞાનિનોઽપિ પૂર્વે ભગવદાજ્ઞાયાં શ્રદ્ધાવન્તઃ સન્ત  
 एवाऽप्कायजीवान् विज्ञाय प्रत्यक्षज्ञानिनः संजाताः, अतः संयमिभिरवश्यमप्कायादि-  
 जीवरक्षायां सावधानैर्भवितव्यमिति परमार्थः ॥ सू० ४ ॥

અપ્કાયલોકં ભગવદાજ્ઞયા વિજ્ઞાય સંયમિના યત્ કર્તવ્યં, તત્ કથયતિ-‘ સે  
 बेमि ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

સે બેમિ-એવ સયં લોગં અબ્માઈક્ષિવજ્ઞા, એવ :અત્તાણં અબ્માઈક્ષિવજ્ઞા,  
 જે લોયં અબ્માઈક્ષવ્હ સે અત્તાણં અબ્માઈક્ષવ્હ, જે અત્તાણં અબ્માઈક્ષવ્હ, સે લોયં  
 અબ્માઈક્ષવ્હ ॥ સૂ૦ ૫ ॥

છાયા—

સ વ્રવીમિ નૈવ સ્વયં લોકમભ્યાख्याત્, નૈવાત્માનનમભ્યાख्याત્, યો લોક-  
 मभ्याख्याति, स आत्मानमभ्याख्याति, य आत्मानमभ्याख्याति, स लोकमभ्या-  
 ख्याति ॥ सू० ५ ॥

માનકર અવશ્ય વિશ્વાસ કરના ચાહિયે । અવધિજ્ઞાની આદિ પ્રત્યક્ષજ્ઞાની મી પહેલે ભગવાન્  
 કી આજ્ઞા પર શ્રદ્ધા રાખતે હુણ અપ્કાય કે જીવોં કો જાન કર પ્રત્યક્ષજ્ઞાની હુણ, અતઃ સંયમી  
 જનોં કો અપ્કાય આદિ કે જીવોં કી રક્ષા મેં સાવધાન હોના ચાહિયે ॥ સૂ. ૪ ॥

ભગવાન્ કી આજ્ઞા સે અપ્કાયલોક કો જાન કર સંયમી કો જો કરના ચાહિયે વહ  
 પ્રગટ કરતે હૈ—‘ સે બેમિ ’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—વહ મેં કહતા હૂં—સ્વયં અપ્કાયલોક કા અપલાપ ન કરે,  
 આત્મા કા અપલાપ ન કરે, જો લોક કા અપલાપ કરતા હૈ વહ આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ,  
 ઔર જો આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ વહ લોક કા અપલાપ કરતા હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

માનીને અવશ્ય વિશ્વાસ કરવો જોઈએ. અવધિ આદિ પ્રત્યક્ષ જ્ઞાની પણ પ્રથમ ભગવાનની  
 આજ્ઞા પર શ્રદ્ધા રાખીને અપ્કાયના જીવોને જાણી કરીને પ્રત્યક્ષજ્ઞાની થયા, એ માટે  
 સંયમી પુરૂષોએ અપ્કાય આદિના જીવોની રક્ષામાં સાવધાન રહેવું જોઈએ. (સૂ. ૪)

ભગવાનની આજ્ઞાથી અપ્કાયલોકને જાણીને સંયમીનું જે કર્તવ્ય છે તે પ્રગટ  
 કરે છે—‘ સે બેમિ ’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—તે હું કહું છું—પોતે અપ્કાય લોકનો અપલાપ—(હોવા છતાં નથી  
 કહેવું તે) ન કરે. આત્માનો અપલાપ કરે નહિ. જે લોકનો અપલાપ કરે છે તે આત્માનો  
 અપલાપ કરે છે. અને જે આત્માનો અપલાપ કરે છે તે લોકનો અપલાપ કરે છે. (સૂ. ૫)

## ટીકા—

સોઽહં=મગવદ્વચનેન જ્ઞાતાપ્કાયસ્વરૂપઃ, બ્રવીમિ=યથા મગવતઃ સકાશાન્મયા શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ । લોકમ્=અપ્કાયલોકં, નૈવ સ્વયમ્ અભ્યાખ્યાત્=‘આપો જીવા ન સન્તી’-ત્યેવં નાપલપેદિત્યર્થઃ । અભ્યાખ્યાનં નામાસદ્ભિયોગઃ, યથા કશ્ચિદ્ચૌરમુદ્દિશ્ય વદતિ-ચોરોઽયમિતિ । અત્ર તુ-‘ઘૃતતૈલાદિવજ્જીવાનામુપકરણમાત્રં જલં, ન તુ તદ્ જીવો ભવિતુમર્હતિ, જીવોપકરણત્વાત્’ એતત્કથનમેવાસદ્ભિયોગઃ, યતો હિ તુરગાદીનાં જીવાનામપિ જીવોપકરણત્વેન દૃષ્ટત્વાદુક્તરોત્યા જલસ્ય જીવ-ત્વં નાપલપિતું શક્યતે ।

નન્વજીવાનામપાં જીવત્વારોપણમેવાભ્યાખ્યાનં કુતો ન ભવતિ ? મૈવમ્,

ટીકાર્થ—મગવાન્ કે વચનોં કે અનુસાર અપ્કાય કા સ્વરૂપ જાનને વાલા મૈં કહતા હૂં, અર્થાત્ મૈંને મગવાન્ કે સમીપ જૈસા જાના હૈ વૈસા હી કહતા હૂં—સ્વયં અપ્કાયરૂપ લોક કા અપલાપ ન કરે અર્થાત્ એસા ન કહે કિ—‘જલ જીવ નહીં હૈ’ ।

અસત્ આરોપ કો અભ્યાખ્યાન કહતે હૈં, જૈસે અચૌર કો ચૌર કહના । યહાં “ ઘી તેલ આદિ કે સમાન જલ, જીવોં કા ઉપકરણમાત્ર હી હો સકતા હૈ, વહ સ્વયં જીવ નહીં હૈ, ક્યોંકિ જીવ કા ઉપકરણ હૈ” । ઇસ પ્રકાર કા કથન હી અસત્-અભિયોગ હૈ । ક્યોં કિ ઘોડા વગૈરેહ જીવ મી જીવોપકરણ કે રૂપ મૈં દેખે જાતે હૈં, અતઃ જલ કે જીવપન કા અપલાવ નહીં ક્રિયા જા સકતા ।

શંકા—અજીવ જલ મૈં જીવત્વ કા આરોપ કરના હી અભ્યાખ્યાન ક્યોં ન સમજા જાય ?

ટીકાર્થ—લગવાનનાં વચનો પ્રમાણે અપ્કાયનું સ્વરૂપ જાણવાવાળો હું કહું છું, અર્થાત્ મેં લગવાનની પાસેથી જેવું સાંભળ્યું છે તેવું જ કહું છું—પોતે અપ્કાય રૂપ હોકનો અપલાપ કરે નહિ, અર્થાત્ એવું કહે નહિ કે:—‘જલ જીવ નથી.’ અસત્ આરોપને અભ્યાખ્યાન કહે છે, જેમકે અચૌરને ચૌર કહેવો. અહિં “ ઘી તેલ આદિ પ્રમાણે જલ એ જીવોનું ઉપકરણમાત્ર જ હોઈ શકે છે, તે સ્વયં જીવ નથી, કારણ કે—” તે જીવનું ઉપકરણ છે, આ પ્રકારનું કહેવું જ—અસત્ (મિથ્યા) અભિયોગ છે, કારણકે ઘોડા વગેરે જીવ પણ જીવોપકરણના રૂપમાં જોવામાં આવે છે. તેથી જલનું જીવપણું અપલાપ કરી શકાય નહિ.

શંકા—અજીવ પાણીમાં જીવપણાનો આરોપ કરવો તેજ અભ્યાખ્યાન શા માટે નહિ સમજવું ?



અનુમાનાગમાભ્યાં જીવલક્ષણકલાપસમ્બન્ધાચ્છાપાં જીવત્વનિરૂપણાત્ ।

યદ્યપ્કાયલોકસ્યાભ્યાખ્યાનં કુર્યાત્, તર્હ્યાત્મનોઽપિ શરીરાધિષ્ઠાતુરભ્યાખ્યાનં તેન કર્તવ્યં સ્યાત્, ન ચ તત્ સંભવતીત્યત આહ-નૈવમાત્માનમભ્યાખ્યાદિતિ । આત્મા હિ શરીરાધિષ્ઠાતા પ્રત્યક્ષભૂતશ્ચેતનાવાનિતિ નાપહોતું શક્યઃ, તરમાદાત્મા નાસ્તી-ત્યેવમાત્માનં નાપલપેદિત્યર્થઃ ।

યઃ खलु मन्दधीः लोकम्=अप्कायलोकम् अभ्याख्याति=अपलपति, स प्रत्यक्षादिप्रमाणैर्निरूपितमात्मानमभ्याख्याति । यश्चात्मानमभ्याख्याति-‘आत्मा नास्ती’ति यद्वा-‘अहं नास्मी’ति, स महामूढः लोकम्=अप्कायलोक

સમાધાન-એસા મત કહો । અનુમાન ઓર આગમપ્રમાણ સે તથા જીવ કે લક્ષણો કે સંબંધ સે જલ કો જીવ નિરૂપણ ક્રિયા ગયા હૈ ।

યદિ અપ્કાય લોક કા અભ્યાખ્યાન ક્રિયા જાય તો શરીર કે અધિષ્ઠાતા આત્મા કા મી અભ્યાખ્યાન કરના હોના મગર વહ સંભવ નહીં હૈ, યહી બાત કહતે હૈ-આત્મા કા અભ્યાખ્યાન ન કરે । આત્મા શરીર કા અધિષ્ઠાતા હૈ ઓર પ્રત્યક્ષ ચેતના વાલા હૈ, અતઃ ઉસ કા અપલાપ નહીં ક્રિયા જા સકતા । અત એવ ‘આત્મા નહીં હૈ’ ઇસ પ્રકાર આત્મા કા અપલાપ ન કરે ।

જો મન્દબુદ્ધિ અપ્કાયલોક કા નિષેધ કરતા હૈ વહ પ્રત્યક્ષ જાદિ પ્રમાણો સે સિદ્ધ આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ । ઓર જો ‘આત્મા નહીં હૈ, અથવા ‘મેં નહીં હૂં’ ઇસ તરહ આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ વહ મહામૂઢ મનુષ્ય અપને અજ્ઞાન કે વલ સે

સમાધાન-આ પ્રમાણે કહેા નહિ, અનુમાન અને આગમ પ્રમાણથી તથા જીવના લક્ષણોના સંબંધથી જલનું જીવપણું નિરૂપણ કયું છે. જે અપ્કાય-લોકનું અભ્યાખ્યાન કરવામાં આવે તો શરીરના અધિષ્ઠાતા આત્માનું પણ અભ્યાખ્યાન કરવું પડશે. પરંતુ તે સંભવ નથી. એ વાત કહે છે—

આત્માનું અભ્યાખ્યાન કરશો નહિ. આત્મા શરીરનો અધિષ્ઠાતા છે, અને પ્રત્યક્ષ ચેતનાવાળા છે. તેથી તેનો અપલાપ કરી શકાશે નહિ. એટલા માટે ‘આત્મા નથી’ એ પ્રમાણે અપલાપ કરશો નહિ.

જે મંદ બુદ્ધિવાળા અપ્કાયલોકનો નિષેધ કરે છે, તે પ્રત્યક્ષ આદિ-પ્રમાણોથી સિદ્ધ-આત્માનો અપલાપ કરે છે, અને જે “આત્મા નથી” અથવા “હું નથી” એ પ્રમાણે આત્માનો અપલાપ કરે છે તે મહામૂઢ મનુષ્ય પોતાના અજ્ઞાનના બળથી

સ્વાજ્ઞાનવલાદભ્યાશ્રયાતિ । કરચરણમુશ્વાધવયવસહિતશરીરાધિષ્ઠાતા સુવ્યક્તોપયોગા-  
દિલક્ષણઃ સ્વાત્માઽપિ યેનાભ્યાશ્રયાતસ્તસ્યાવ્યક્તોપયોગાદિલક્ષણસ્યાપ્કાયસ્યાભ્યા-  
શ્રયાનં કિં નુ નામ દુષ્કરમ્ ? ॥ સૂ. ૫ ॥

અપ્કાયલોકસ્યાભ્યાશ્રયાને બહુદોષાપાતો ભવતીતિ પર્યાલોચ્યાનગારા અપ્-  
કાયં નોપમર્દયન્તિ । દણ્ડિશાક્યાદયસ્તુ નાનગારા ભવિતુમર્હન્તિ, તેષામપ્કાયોપ-  
મર્દકત્વાદિત્યાહ—‘લજ્જમાણા’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

લજ્જમાણા પુઠો પાસ, અણગારા મો—ત્તિ એગે પવયમાણા જમિણં

અપ્કાય કા અપલાપ કરતા હૈ । જિસ ને હાથ, પૈર, મુખ આદિ અવયવોં સે યુક્ત શરીર કે અધિષ્ઠાતા, તથા અત્યન્ત સ્પષ્ટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોં વાલે આત્મા કા હી અપલાપ કર દિયા તો ઉસ કે લિપ્ અસ્પષ્ટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોં વાલે અપ્કાય કા અપલાપ કરના કુચ્છ મી કઠિન નહીં હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

અપ્કાય કા અપલાપ કરને સે બહુત સે દોષ આતે હૈ, એસા વિચાર કર અનગાર અપ્કાય કી વિરાધના નહીં કરતે । દણ્ડી ઓર શાક્ય આદિ, અનગાર નહીં હો સકતે, ક્યોં કિ વે અપ્કાય કી વિરાધના કરતે હૈ । યહ બાત ઇસ સૂત્ર મેં બતલાતે હૈ—‘લજ્જમાણા’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—અપ્કાય કી હિંસાસે સંકોચ કરને વાલોં કો અલગ સમજો, ઓર ‘હમ અનગાર હૈ’ એસા કહને વાલોં કો અલગ સમજો । જો નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રોં સે

અપ્કાયનો અપલાપ કરે છે. જેણે હાથ, પગ, મુખ આદિ અવયવોથી યુક્ત, શરીરના અધિષ્ઠાતા, તથા અત્યન્ત સ્પષ્ટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોવાળા આત્માનો અપલાપ કરી દીધો, તેને માટે અસ્પષ્ટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોવાળા અપ્કાયનો અપલાપ કરવો તે કાંઈ કઠિન નથી. ( સૂ. ૫ )

અપ્કાયનો અપલાપ કરવાથી ઘણાજ દોષ આવે છે, એવો વિચાર કરીને અણુગાર અપ્કાયની વિરાધના કરતા નથી, દંડી અને શાક્ય આદિ, અણુગારો થઈ શકતા નથી, કારણ કે તેઓ અપ્કાયની વિરાધના કરે છે. તે વાત આગળના સૂત્રમાં બતાવે છે—‘લજ્જમાણા’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—અપ્કાયની હિંસાને સંકોચ કરવાવાળાને જૂદા જાણો અને “અમે અણુગાર છીએ.” એ પ્રમાણે કહેવાવાળાને પણ જૂદા જાણો. જે નાના પ્રકારનાં શસ્ત્રોથી

विरुवरुवेहिं सत्थेहिं उदयकम्मसमारंभेण उदयसत्थं समारभमाणा अण्णे अणोगरुवे पाणे विहिंसन्ति ॥ सू० ६ ॥

छाया—

लज्जमानाः पृथक् पश्य, अनगाराः स्म इति एके प्रवदमानाः यदिसं विरूप-  
रूपैः शस्त्रैः उदककर्मसमारम्भेण, उदकशस्त्रं समारभमाणा अन्यान् अनेकरूपाम् प्राणान्  
विहिंसन्ति ॥ सू० ६ ॥

टीका—

एके=अन्ये लज्जमानाः=अप्कायस्यारम्भे परमकरुणया द्रवितहृदयतया  
संकोचमापद्यमानाः, पृथक्=विभिन्नाः, केचित्तु प्रत्यक्षज्ञानिनोऽवधिमनःपर्ययकेव-  
लिनः, केचित् परोक्षज्ञानिनो भावितात्मानोऽनगाराः सन्ति, इति पश्य । इमे  
सूक्ष्मबादराप्कायारम्भकरणे भीतास्त्रस्ता उद्धिग्नास्त्रिकरणत्रियोगैरप्कायारम्भपरि-  
स्थागिनो विद्यन्ते तानवलोकयेत्यर्थः ।

अप्काय का आरम्भ करते हैं वे अप्काय के शस्त्रों का आरंभ करने वाले अनेक प्राणियों के  
प्राणों का हनन करते हैं ॥ सू. ६ ॥

टीकार्थ—तीव्रकरुणा से द्रवित हृदयवाले कोई-कोई ( अनगार ) अप्काय के आरंभ  
में संकोच करते हैं—अप्काय का आरंभ नहीं करते वे विभिन्न हैं—कोई अवधिज्ञानी कोई  
मनःपर्ययज्ञानी और कोई परोक्षज्ञानी भावितात्मा अनगार हैं, उन्हें देखो । ये सूक्ष्म बादर  
अप्काय का आरंभ करने में भीत हैं, त्रस्त हैं, उद्धिग्न हैं, और तीन कारण तीन योग से  
अप्काय के आरंभ के त्यागी हैं, उन्हें देखो ।

अप्कायनो आरंभ करे छे; ते अप्कायनो शस्त्रो नो आरंभ करवावाणा अनेक प्राणी-  
ओना प्राणो नो नाश करे छे. ( सू. ५ )

टीकार्थ—तीव्र कर्षणशी द्रवित हृदयवाला डोर्छ-डोर्छ अणुगार आरंभमां  
संकोच करे छे—अप्कायनो आरंभ करता नहीं ते नृदा छे. डोर्छ अवधिज्ञानी, डोर्छ  
मनःपर्ययज्ञानी अने डोर्छ परोक्षज्ञानी भावितात्मा अणुगार छे, तेने नुओः—ते  
सूक्ष्म अने बादर अप्कायनो आरंभ करवामां लय पावेला छे, त्रस्त छे, उद्धिग्न  
छे, अने त्रणु करणु त्रणु योगशी अप्कायनो आरंभना त्यागी छे. तेने नुओः.



એકે=પુનરન્યે તુ વયમનગારાઃ=સાધવઃ સ્મઃ, ઇતિ સાભિમાનં પ્રવદમાનાઃ  
'વયમેવ અપ્કાયજીવરક્ષણપરાઃ મહાવ્રતધારિણઃ' ઇતિ વ્યર્થે પ્રલપન્તો દ્રવ્યલિંગિનઃ  
સન્તિ તાન્ પૃથક્=પૃથગ્ભાવેન પश्य ।

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्त्तन्ते,  
नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्ति, इति दर्शयति—'यदिमम्' इत्यादि ।

यद्=यस्माद् विरूपरूपैः=विभिन्नरूपैर्नानાવિધैઃ, દ્રવ્યભાવરૂપૈઃ શસ્ત્રૈઃ ।  
તત્ર દ્રવ્યશસ્ત્રં સ્વકાય-પરકાય-તદુભયરૂપમ્ । સ્વકાયશસ્ત્રં-તડાગાદ્યુદકસ્ય કૂપા-  
દ્યુદકમ્ । કૂપાદ્યુદકસ્ય તડાગાદ્યુદકં ચ । પરકાયશસ્ત્રં દ્રાક્ષા-શાક-તણ્ડુલ-પિષ્ઠ-

और कोई-कोई लोग 'हम साधु हैं' इस प्रकार अभिमान के साथ कहते हुए—  
अर्थात् 'हम ही अप्काय के रक्षक और महाव्रतधारी हैं' इस प्रकार वृथा प्रलाप करते  
हुए द्रव्यलिङ्गी हैं, उन्हें अलग समझो ।

अनगार होने का अभिमान करने वाले ये द्रव्यलिङ्गी, अनगार के गुणों में तनिक भी  
प्रवृत्ति नहीं करते, और न गृहस्थ के किसी कार्य का त्याग करते हैं । यही बात आगे बतलाते  
हैं—'जमिणं.' इत्यादि ।

वे नानા પ્રકાર કે શસ્ત્રો સે જલકા આરંભ કરતે હૈં । શસ્ત્ર અનેક પ્રકાર કે હૈં,  
उन में से द्रव्यशस्त्र—स्वकाय, परकाय और उभयकायरूप है । तालाव का जल, कूप का  
जल परस्पर स्वकायशस्त्र है । इसी प्रकार कूप आदि के जल का शस्त्र—तालाव आदिका  
जल है यह स्वकायशस्त्र है । दाख, शाक, चावल, आटा, दाल, चना, वाल आदि परकाय

અને કોઈ-કોઈ લોક “અમે સાધુ છીએ” આ પ્રમાણે અભિમાન સાથે કહેતા  
અર્થાત્ ‘અમેજ અપકાયના રક્ષક અને મહાવ્રત ધારણ કરવાવાળા છીએ’ આ  
પ્રમાણે વૃથા પ્રલાપ કરતા થકા દ્રવ્યલિંગી છે તેને જૂઠા જાણો.

અણુગાર હોવાનું અભિમાન કરવાવાળા એ દ્રવ્યલિંગી સાચા અણુગારના ગુણોમાં  
જરાપણ પ્રવૃત્તિ કરતા નથી, અને ગૃહસ્થના કોઈપણ કાર્યોના ત્યાગ કરતા નથી,  
તે વાત આગળ બતાવે છે—‘જમિણં’ ઇત્યાદિ.

તે નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી જલનો આરંભ કરે છે. શસ્ત્રો અનેક પ્રકારના છે,  
તેમાંથી દ્રવ્યશસ્ત્ર—સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાય—રૂપ છે. તલાવનું પાણી,  
કુવાનું પાણી, પરસ્પર સ્વકાયશસ્ત્ર છે. એ પ્રમાણે કુવા વગેરેના જલનું શસ્ત્ર  
તલાવ આદિનું જલ છે, તે પણ સ્વકાયશસ્ત્ર છે. દ્રાક્ષ, ચાવલ, લોટ,

દાલી-ચળક-વહ્ણાદિકમ્ । તદુભયશસ્ત્રં-મૃત્તિકાદિમિશ્રં જલમ્ । ભાવશસ્ત્રમ્=અપઃ પ્રતિ મનોવાકાયાનાં દુષ્પ્રણિહિતત્ત્વમ્ । એતૈઃ શસ્ત્રૈઃ ઉદકકર્મસમારમ્ભેણ=ઉદયકસ્ય કર્મસમારમ્ભઃ ઉદકકર્મસમારમ્ભઃ=ઉદકમાશ્રિત્ય જ્ઞાનાવરણીયાઘટવિધકર્મબન્ધ- નિબન્ધનસાવધવ્યાપારસ્તેન, ઇમમ્=અપ્કાયં વિહિંસન્તિ ।

અપ્કાયહિંસાયાં પ્રવૃત્તાઃ સ્વલુ ષડ્જીવનિકાયરૂપં લોકં સર્વમેવ વિહિંસન્તી- ત્યાહ-‘ઉદકશસ્ત્ર’-મિત્યાદિ, ઉદકશસ્ત્રમ્=ઉદકોપમર્દકં શસ્ત્રં, શસ્યતે=હિંસ્યતે અનેનેતિ શસ્ત્રં, તત્ પૂર્વોક્તપ્રકારં દ્રવ્યભાવભેદભિન્નં સમારમમાણઃ=ઉદકકાયં પ્રતિ વ્યાપારયન્તઃ, અન્યાન્=અપ્કાયભિન્નાન્ અનેકરૂપાન્ પૃથિવીકાયાદીન્-સ્થાવરાન્, દ્વીન્દ્રિયાદીન્ ત્રસાંશ્ચ વિહિંસન્તિ ।

શસ્ત્ર હૈ । મિટ્ટી આદિ સે મિલા હુઆ જલ ઉભયકાયશસ્ત્ર હૈ । જલ કે વિષય મેં મન, વચન ઓર કાયકા દૂષિત પ્રયોગ કરના ભાવશાસ્ત્ર હૈ । ઇન શસ્ત્રોં સે જલકર્મ કા સમારંભ કર કે અર્થાત્ જલ કે આરંભદ્વારા જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકાર કે કર્મોં કે બંધ કારણભૂત સાવધ વ્યાપાર કર કે જલકાય કી હિંસા કરતે હૈ ।

જો જલકાય કી હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતે હૈં વે ષડ્કાયરૂપ સમસ્ત લોક કી હિંસા કરતે હૈં, યહ બતલાતે હૈં-‘ઉદયસત્થં.’ ઇત્યાદિ ।

જિસ કે દ્વારા હિંસા કી જાય ઉસે શસ્ત્ર કહતે હૈં । શસ્ત્ર દા પ્રકાર કે હૈં- દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર । જિસ સે અપ્કાય કી હિંસા હો વહ અપ્કાયશસ્ત્ર હૈ । અપ્કાય-શસ્ત્ર કા અપ્કાય કે વિષય મેં પ્રયોગ કરને વાલે અપ્કાય સે ભિન્ન અનેક પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોં કી, તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોં કી હિંસા કરતે હૈં ।

દાલ, ચણા, વાલ આદિ પરકાયશસ્ત્ર છે. માટી આદિથી મળેલું જલ ઉભયકાયશસ્ત્ર છે. જલના વિષયમાં મન, વચન અને કાયાનો દૂષિત પ્રયોગ કરવો તે ભાવશસ્ત્ર છે. એ શસ્ત્રોથી જલકર્મનો સમારંભ કરીને, અર્થાત્ જલના આરંભદ્વારા જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ પ્રકારના કર્મોના બંધના કારણભૂત સાવધ વ્યાપાર કરીને જલકાયની હિંસા કરે છે.

જલકાયની હિંસામાં જે પ્રવૃત્ત થાય છે તે ષડ્કાયરૂપ સમસ્ત લોકની હિંસા કરે છે. એ બતાવે છે-‘ઉદયસત્થં’. ઇત્યાદિ જેના દ્વારા હિંસા કરી શકાય તેને શસ્ત્ર કહે છે. શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે—(૧) દ્રવ્યશસ્ત્ર અને (૨) ભાવશસ્ત્ર જેનાથી અપ્કાયની હિંસા થાય તે અપ્કાયશસ્ત્ર છે. અપ્કાયશસ્ત્રનો અપ્કાયના વિષયમાં પ્રયોગ કરવાવાળા અપ્કાયથી ભિન્ન અનેક પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોની દ્વીન્દ્રિય વિગેરે ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે.

જગતિ સ્વલુ બહવો દ્રવ્યલિંગિનો વિદ્યન્તે, યથા—‘વયં પશ્ચળહાત્રતધારિણઃ સર્વારમ્ભપરિત્યાગિનઃ ષટ્કાયરક્ષકા અનગારાઃ સ્મઃ’ ઇતિ વદન્તો દણ્ડિશાક્યાદયઃ સન્તિ । તત્ર કેચિદ્દેહશુદ્ધયે બહુદક્સ્નાયિનો ભવન્તિ । કેચિત્સ્વનિવાસર્થે ગૃહાદિ-નિર્માણકરણે મૃત્તિકાપાષાણચૂર્ણાદિષુ નિક્ષેપણેનાપ્કાયમુપમર્દયન્તિ । કેચિત્ સ્વોદર-પૂર્ત્યર્થે કૃષ્યાદિષુ જલસેચનં કુર્વન્તિ । કેચિચ્ચ દેવકુલાદ્યર્થે સાવધમુપદિશન્તિ, પાર્થિવીં દેવગુર્વાદિપ્રતિમામનેકઘટજલૈઃ સ્નપયન્તિ । તે હિ સવિધિજિનપૂજાયાં, પ્રતિમાપ્રતિષ્ઠાપને બહુવિધસચિત્તજલૈઃ પ્રતિમાસ્નપને ચ મહાભીમભવસમુદ્રાદાત્મનઃ સમુદ્ધારો ભવતીતિ મન્યન્તે, ઉપદિશન્તિ ચ—

સંસાર મેં બહુતસે દ્રવ્યલિંગી હૈં । જૈસે—‘હમ પંચમહાત્રતધારી, સબ આરમ્ભ કે ત્યાગી, ઓર ષટ્કાય કે રક્ષક અનગાર હૈં’ એસા કહને વાલે દણ્ડી તથા શાક્ય આદિ હૈં । ઇન મેં કોઈ-કોઈ દેહ કી શુદ્ધિ કે લિએ બહુત-સે જલ સે સ્નાન કરને વાલે હૈં । કોઈ અપને રહને કે વાસ્તે મકાન આદિ બનાને કે લિએ મિટ્ટી કંકર ઓર ચૂને વગેરહ મેં મિલાકર જલકાય કી હિંસા કરતે હૈં । કોઈ અપના પેટ ભરને લિએ કૃષિ (લેતી) મેં જલ સીંચતે હૈં । કોઈ દેવકુલાદિકે લિયે સાવધ ઉપદેશ કરતે હૈં । કોઈ દેવ ઇવં ગુરુ કી પાર્થિવ પ્રતિમા કો બહુત સે-ઘડે પાની સે સ્નાન કરાતે હૈં । વે વિધિપૂર્વક જિનપૂજા મેં ઓર પ્રતિમા કી પ્રતિષ્ઠા મેં બહુત પ્રકાર કે સચિત્ત જલ સે પ્રતિમા કે સ્નાન મેં, મહા-ભયંકર ભવસાગર સે આત્મા કા ઉદ્ધાર હોના માનતે હૈં ઓર ઉપદેશ દેતે હૈં—

સંસારમાં બહુ સંખ્યામાં દ્રવ્યલિંગી છે. જેમ કે—‘અમે પંચમહાત્રતધારી, સર્વ પ્રકારના આરંભના ત્યાગી અને ષટ્કાયના રક્ષક અણુગાર છીએ’ આ પ્રમાણે કહેવાવાળા દંડી તથા શાક્ય આદિ છે, તેમાંથી કેટલાક તો દેહની શુદ્ધિ માટે ઘણા જ જલથી સ્નાન કરવાવાળા હોય છે. કેટલાક તો પોતાને રહેવા માટે મકાન આદિ બનાવવા માટે માટી કાંકરા અને ચુના વગેરેમાં મેળવીને જલકાયની હિંસા કરે છે. કોઈ-કોઈ પોતાનું પેટ ભરવા માટે ખેતીમાં જલ સીંચે છે. કોઈ દેવકુલ વગેરે માટે સાવધનો ઉપદેશ આપે છે, અને કોઈ દેવ અને ગુરૂની પાર્થિવ પ્રતિમાને ઘણા જ-ઘડા પાણીથી સ્નાન કરાવે છે. તે વિધિપૂર્વક જિનપૂજામાં અને પ્રતિષ્ઠામાં ઘણા જ પ્રકારના સચિત્ત જલથી પ્રતિમાને સ્નાન કરાવામાં મહાભયંકર ભવસાગરથી આત્માનો ઉદ્ધાર થાય છે, એવું માને છે. અને ઉપદેશ આપે છે:—



“सम्यक् स्नात्वोचिते काले, संस्नाप्य च जिनान् क्रमात् ।  
पुष्पाहारस्तुतिभिश्च, पूजयेदिति तद्विधिः” ॥ १ ॥ (धर्मसंग्रहः)

“कुसुमस्वयधूवेहि, दीवयवासेहि सुन्दरफलेहि ।

पूया घयसलिलेहि, अट्टविहा तस्स कायव्वा” ॥ १ ॥

(दर्शनशुद्धिः सटीका १ तत्त्व)

छाया—“कुसुमाक्षतधूपै-दीपकवासैः सुन्दरफलैः ।

पूजा घृतसलिलै, -रष्टविधा तस्य कर्त्तव्या ॥ १ ॥” इति ।

“विहिणा उ कीरमाणा, सव्व च्चिय फलवई भवे चेद्वा ।

इअलोइया वि किं पुण, जिणपूया उभयलोगहिया” ॥ १ ॥

(पञ्चाशक ४ विव.)

छाया—विधिना तु क्रियमाणा, सर्वा चैव फलवती भवेच्चेष्टा ।

इहलौकिकाऽपि किं पुन, -जिनपूजा-उभयलोकहिता ॥ १ ॥ इति ॥

तथैव पूजामतिष्ठादिषु अप्कायोपमर्दनरूपे शास्त्रनिषिद्धे सावद्यकार्ये प्रवृत्त्याऽपि  
द्रव्यलिङ्गिनो दण्डिनः शाक्यादयश्च स्वात्मानमनगारमेव मन्यन्ते ।

“उचित काल में सम्यक् प्रकार से स्नान कर के और क्रम से जिनप्रतिमा को  
स्नान करा के पुष्प, आहार और स्तुतिसे पूजा करे । यह पूजा की विधि है” । (धर्मसंग्रह)

“विधिपूर्वक की हुई समस्त इस लोकसंबंधी चेष्टाएँ भी सफल होती है तो जिनेन्द्र  
भगवान् की पूजा का तो कहना ही क्या है, अर्थात् वह दोनों लोकों में हितकारी है” ।  
(पञ्चाशक ४ विव.)

इसी प्रकार पूजा प्रतिष्ठा आदि अप्काय की हिंसारूप, शास्त्रनिषिद्ध सावद्य कार्य  
में प्रवृत्ति करके भी द्रव्यलिङ्गी दंडी शाक्य आदि अपने आप को अनगार ही मानते हैं ।

“उचित कालમાં सम्यक्प्रकारથી स्नान કરીને અને ક્રમથી જિનપ્રતિમાને  
સ્નान કરાવી, પુષ્પ, આહાર અને સ્તુતિથી પૂજા કરે. આ પ્રમાણે પૂજાની  
વિધિ છે. (ધર્મસંગ્રહ)

“વિધિપૂર્વક કરવામાં આવેલી લોકસંબંધી સમસ્ત ચેષ્ટાઓ. (ક્રિયાઓ)  
પણ સફળ થાય છે, તો જિનેન્દ્ર ભગવાનની પૂજાનું તો કહેવું જ શું ? આ તો  
બંને લોકમાં હિતકારી છે ॥ ૧ ॥” (પંચાશક-૪-વિવ)

એ પ્રમાણે પૂજા પ્રતિષ્ઠા આદિ અપ્કાયની હિંસારૂપ શાસ્ત્રનિષિદ્ધ સાવધ કાર્યમાં  
પ્રવૃત્તિ કરીને પણ દ્રવ્યલિંગી દંડી, શાક્ય આદિ પોત-પોતાને અણુગારજ  
માને છે.

ये उदकशस्त्रं प्रयुज्जानाः षड्जीवनिकायरूपं लोकं सर्वमेव विहिंसन्ति, ते द्रव्य-  
लिङ्गिनो नरकनिगोदादिनानाविधदुःखज्वालमालाकुले दीर्घसंसारे परिभ्रमन्ति,  
उक्तञ्च—

“सावज्जपूयकारी, सावज्जं उवदिसति जे अणू ।

आउक्कायवहाओ, भमंति ते दीहसंसारे ॥ ૧ ॥” ॥ सू० ૬ ॥

अथ सुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामिनं ग्राह ‘तत्थ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

તત્થ જલ ભગવયા પરિણા પવેડયા । ઇમસ્સ ચેવ  
જીવિયસ્સ પરિવંદણ-માણણ-પૂયણા જાઇમરણમોયણા દુક્ખપડિયાયહેઉં સે

જો લોગ જલશસ્ત્રના પ્રયોગ કરતે હુણ ષટ્કાયના સમસ્ત જીવોની વિરાધના કરતે  
હૈં વે દ્રવ્યલિંગી નરક આદિના નાના પ્રકારના દુઃખોની જ્વાલાઓના સમૂહ સે વ્યાપ્ત લગ્બે  
સંસારમાં ચારોં ઓર ચક્કર લગાતે હૈં । કહા મી હૈ—

“જો પુરુષ જ્ઞાનરહિત હોકર સાવધનાનો ઉપદેશ દેતે હૈં વે, ઓર સાવધના પૂજા કરને  
વાળે હૈં વે અણ્કાયની હિંસા સે દીર્ઘ સંસારમાં ભ્રમણ કરતે હૈં” ॥ સૂ. ૬ ॥

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈં—‘તત્થ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ભગવાનને પરિજ્ઞાના પ્રતિબોધ દિયા હૈ । જો ઇસ જીવનના સુખ  
ના લીધે અપની વન્દના, માનના, પૂજા, જન્મ-મરણ સે છુટકારા, તથા દુઃખોના નાશ

જે લોક જલશસ્ત્રના પ્રયોગ કરીને ષટ્કાયના તમામ જીવોની વિરાધના કરે છે  
તે દ્રવ્યલિંગી, નરક નિગોદ આદિના નાના પ્રકારના દુઃખોની જ્વાલાઓના સમૂહથી  
વ્યાપ્ત લાંબા સંસારમાં આરેય તરફ ચક્કર લગાવે છે. કહ્યું છે કે:-

“જે પુરુષ જ્ઞાનરહિત થઈને સાવધનાનો ઉપદેશ આપે છે તે, અંને સાવધના  
પૂર્ણ કરવાવાળા દીર્ઘ-લાંબા સંસારમાં ભ્રમણ કરે છે.” ॥ ૧ ॥ (સૂ. ૬)

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે—‘તત્થ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાને પરિજ્ઞાનો બોધ આપ્યો છે. જે આ જીવનના સુખ માટે  
પોતાની વન્દના, માન્યતા, પૂજા, જન્મ-મરણથી મુક્તિ તથા દુઃખોનાં નિવારણ માટે; તે

सयमेव उदयसत्थं समारंभइ, अण्णेहिं उदयसत्थं समारंभावेइ, अण्णे वा उदयसत्थं समारंभंते समणुजाणइ, तं से अहियाए तं से अबोहीए ॥ सू० ७ ॥

छाया—

तत्र खलु भगवता परिज्ञा प्रवेदिता । अस्य चैव जीवितस्य परिवन्दन-मानन-पूजनाय जातिमरणमोचनाय दुःखप्रतिघातहेतुं स स्वयमेवोदकशस्त्रं समारंभते, अन्यैरुदकशस्त्रं समारंभयति, अन्यान् वा उदकशस्त्रं समारंभमाणान् समनुजानाति, तत्तस्याहिताय तत्तस्याबोधये ॥ सू० ७ ॥

टीका—

तत्र=अप्कायसमारंभे भगवता=श्रीमहावीरेण परिज्ञा=सम्यग्बोधः खलु प्रवेदिता=प्रतिबोधिता । कर्मबन्धसमुच्छेदार्थं जीवेन परिज्ञाऽवश्यं शरणीकरणीयेति भगवता प्रतिबोधितमिति भावः । ज्ञ-प्रत्याख्यान-भेदात् परिज्ञाया द्वैविध्यं, द्विविधा-यास्तस्या लक्षणं च प्रागभिहितम् ।

करने के निमित्त वह स्वयं ही उदकशस्त्र का आरंभ करता है, दूसरों से उदकशस्त्र का आरंभ कराता है, और उदकशस्त्र का आरंभ करने वालों की अनुमोदना करता है । वह उस के अहित के लिए है, वह उसकी अबोधि के लिए है ॥ सू. ७ ॥

टीकार्थ—अप्काय के समारंभ के विषय में भगवान् श्री महावीरने सम्यग् बोध का उपदेश दिया है । भगवान्ने कहा है कि-कर्मबन्ध का नाश करने के लिए जीव को परिज्ञा का आश्रय आवश्यक लेना चाहिए । ज्ञपरिज्ञा और प्रत्याख्यानपरिज्ञा, इस प्रकार परिज्ञा के दो भेद हैं । दोनों के लक्षण पहले ही कह चुके हैं ।

પોતેજ જલશસ્ત્રનો આરંભ કરે છે, બીજા પાસે જલશસ્ત્રનો આરંભ કરાવે છે. અને જલશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળાની અનુમોદના કરે છે. તે પોતાના અહિત માટે છે. તે તેની અબોધિને માટે છે. (સૂ. ૭)

टीकार्थ—अप्कायना समारंभना विषयमां भगवान् श्री महावीरे सम्यग् बोधना उपदेश आप्णो छे. भगवाने कहुं छे के-कर्मबन्धना नाश करवा माटे एवेओ परिज्ञाने आश्रय जर लेवो ओधओ. ज्ञपरिज्ञा अने प्रत्याख्यानपरिज्ञा, आ प्रमाणे परिज्ञाना ओ लेह छे. जन्नेना लक्षणो प्रथमज कडेवामां आव्या छे.



## ઉપભોગદ્વાર—

જીવઃ કસ્મૈ પ્રયોજનાયાપ્કાયજીવં પ્રતિ સાવધવ્યાપારં કરોતી ?—ત્યાહ—  
‘અસ્ય ચૈવે’—ત્યાદિ । અસ્યૈવ ક્ષણભંડુરસ્ય જીવિતસ્ય જીવનસ્યાર્થે—સુસ્વાર્થ સ્નાન-પાન  
—ધાવન—સેક—યાનપાત્રો—હુપ—ગમનાગમનાદ્યર્થમ્, તથા પરિવન્દન—માનન—પૂજનાય—  
પરિવન્દનં=પ્રશંસા, તદર્થ, યથા—જલયન્ત્રણ શીકરવૃષ્ટ્યાદૌ, ‘ફુંહારા’ इति भाषायाम् ।  
માનનં=જનસત્કારઃ, તદર્થ, યથા—મલાપકર્ષસ્નાનવસ્ત્રમલાપકર્ષણાદૌ । પૂજનં=વસ્ત્રસ્ના-  
દિપુરસ્કારલાભસ્તદર્થ, યથા—દેવપ્રતિમાદિસ્નપનપૂજનાદૌ । જાતિમરણમોચનાય તીર્થ-  
સ્નાનાદૌઃ । દુઃસ્વપ્રતિષ્ઠાતહેતું=રોગાદિશ્મનાર્થ સ્નાનપાનાદૌ, સ સ્વયમેવોદકશસ્ત્રં  
સમારભતે=વ્યાપારયતિ । અન્યૈર્વા ઉદકશસ્ત્રં સમારમ્ભયતિ=ઉદ્યોજયતિ । અન્યાન

## ઉપભોગદ્વાર—

જીવ કિસ પ્રયોજન સે અપ્કાય કે જીવો કે પ્રતિ સાવધ વ્યાપાર કરતા હૈ ? इस का  
उत्तर कहते हैं—इसी क्षणभंडुर जीवन के सुख के लिए, अर्थात् स्नान, पान, धोना, सींचना,  
जहाज, नौका का गमनागमन, इत्यादि के लिए । प्रशंसाके लिए, जैसे—जल से फौहारा  
चलाने आदि में, लोगों से स्तुति पाने के लिए, जैसे—स्नान और वस्त्र आदि का मूल दूर  
करने आदि में, पूजा अर्थात् वस्त्र, स्नान आदि का पुरस्कार पाने के लिए, जैसे देवप्रतिमा  
आदि के स्नपन और पूजन आदि में, जन्म मरण से मुक्त होने के लिए तीर्थस्नान आदि  
में । दुःस्वों का निरोध करने के हेतु, अर्थात् रोग आदि को शान्त करने लिए  
स्नान—पान आदि में वह स्वयं अप्काय के विराधक द्रव्य और भावशस्त्र का आरंभ करता

## ઉપભોગદ્વાર—

જીવ કયા પ્રયોજનથી અપ્કાયના જીવો પ્રતિ સાવધ વ્યાપાર કરે છે ? તેનો ઉત્તર  
કહે છે કે—આ ક્ષણભંડુર જીવનના સુખ માટે, અર્થાત્, સ્નાન, પાન ધોવું, પાણી સીંચવું,  
વહાણ આગળોટમાં જવું આવવું, ઇત્યાદિ માટે. પ્રશંસાને માટે, જેમકે—નણમાંથી કુવારા ચલા-  
વવા આદિમાં, લોકોથી સત્કાર પામવા માટે. જેમકે—સ્નાન કરવામાં અને વસ્ત્ર વગેરેનો મેલ  
દૂર કરવામાં, પૂજા અર્થાત્ વસ્ત્ર, રત્ન, આદિનો પુરસ્કાર મેળવવા માટે, જેમ-દેવપ્રતિમા આદિના  
સ્નાન અને પૂજન વગેરેમાં, જન્મ-મરણથી મુક્ત થવા માટે, જેમ-તીર્થસ્નાન આદિમાં,  
દુઃખોનો નિરોધ કરવાના હેતુથી, અર્થાત્—રોગ વગેરેની શાન્તિ માટે સ્નાન—પાન વગેરેમાં તે  
પોતે અપ્કાયના વિરાધક દ્રવ્ય અને ભાવશસ્ત્રનો આરંભ કરે છે, બીજા પાસે અપ્કાયશસ્ત્રનો

વા ઉદકશસ્ત્રં સમારંભમાણાન્ સમનુજાનાતિ=અનુમોદયતિ । તત્=અપ્કાયસમારંભનં  
તસ્ય=અપ્કાયસમારંભનં કુર્વતઃ કારયિતુરનુમોદયિતુશ્ચ અહિતાય ભવતિ, તથા તત્  
તસ્ય અવોધયે=જિનધર્મપ્રાપ્ત્યભાવાય ભવતિ ॥ સૂ. ૭ ॥

येन तु तीर्थङ्करादीनां समीपेऽपूकायजीवस्वरूपं ज्ञातं स एवं विजानातीत्याह—  
'से तं संबुज्जमाणे.' इत्यादि ।

મૂલમ્—

से तं संबुज्जमाणे आयाणीयं समुद्राए सोच्चा भगवओ आणगाराणं वा अंतिए,  
इहमेगेसिं णायं भवइ—एस खलु गंधे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस खलु णरए,  
इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं उदयकम्मसमारंभेणं उदयसत्थं  
समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे विहिंसइ ॥ सू. ८ ॥

है; दूसरों से अप्कायशस्त्रों का समारंभ करवाता है और अप्कायशस्त्र का आरंभ करने वाले  
दूसरों का अनुमोदन करता है । वह अप्काय का आरंभ, आरंभ करने वाले, कराने वाले  
और अनुमोदन करने वाले के अहित के लिए होता है और अवोधि—जिनधर्म की अप्राप्ति के  
लिए होता है ॥सू. ७॥

जिसने तीर्थंकर आदि के सन्निकट अप्काय के जीवों का स्वरूप जान लिया है, वह  
इस प्रकार जानता है—‘से तं.’ इत्यादि ।

मूलार्थ—भगवान और अनगारों से सुनकर अप्काय का स्वरूप जानता हुआ  
जीव चारित्र अङ्गीकार करके कोई—कोई इस प्रकार जानता है—यह ग्रંथ है, यह मोह है, यह  
मार (मृत्यु) है, यह नरक है । गृद्ध पुरुष नाना प्रकार के शस्त्रों से जल का आरंभ करके  
जलशस्त्र का समारंभ करता हुआ अन्य अनेक प्रकार के प्राणियों की हिंसा करता है ॥सू. ८॥

સમારંભ કરાવે છે, અને અપ્કાયશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે છે તે  
અપ્કાયનો આરંભ કરનારને કરાવનારને અને કરવાવાળાને અનુમોદન આપવાવાળાને  
એ સૌને માટે અહિત કરનાર છે. અને અવોધિ—જિનધર્મની અપ્રાપ્તિ માટે હોય છે. (સૂ. ૭)

જેણે તીર્થંકર આદિના સમીપમાં અપ્કાયના જીવોનું સ્વરૂપ જાણી લીધું છે તે  
આ પ્રમાણે જાણે છે:—‘સે તં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાન અથવા અણુગારો પાસેથી સાંભળીને અપ્કાયના સ્વરૂપને  
જાણનારા જીવો ચારિત્ર અંગીકાર કરીને કોઈ—કોઈ આ પ્રમાણે જાણે છે—આ ગ્રંથ  
છે, આ મોહ છે, આ મૃત્યુ છે, આ નરક છે. ગૃદ્ધ પુરુષ નાના પ્રકારનાં (અનેક  
પ્રકારનાં) શસ્ત્રોથી જલનો આરંભ કરીને, જલશસ્ત્રનો આરંભ કરતા થકા બીજા અનેક  
પ્રકારના પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે. (સૂ. ૮)

छाया—

स तत् संबुध्यमान आदानीयं समुत्थाय श्रुत्वा खलु भगवतः अनगाराणां वाऽन्तिके, इहैकेषां, ज्ञातं भवति—एष खलु ग्रन्थः, एष खलु मोहः एष खलु मारः, एष खलु नरकः, इत्यर्थं गृद्धो लोकः यदिसं विरूपरूपैः शस्त्रैरुदककर्मसमारम्भेण, उदकशस्त्रं समारम्भमाणः अन्यान् अनेकरूपान् प्राणान् विहिनस्ति ॥ सू० ८ ॥

टीका—

यः खलु भगवतः=तीर्थङ्करस्य, अनगाराणाम्=तदीयश्रमणनिर्ग्रन्थानाम्, अन्तिके=समीपे, श्रुत्वा=उपदेशं निश्चय्य, आदानीयम्=उपादेयं, सर्वसावद्ययोगपरित्यागरूपं चारित्रं, समुत्थाय=अङ्गीकृत्य विहरति, स तत्=अपकायसमारम्भणं, संबुध्यमानः=अहिताबोधिजनकत्वेन विज्ञाता भवति ॥

स हि—एवं विचारयति इह=मनुष्यलोके, एकेषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेशसंज्ञात-सम्यगवबोधवैराग्याणामात्मार्थिनामेव, ज्ञातं=विदितं भवति । किं ज्ञातं भवतीत्याकाङ्क्षायामाह—‘एष खलु ग्रन्थः’ इत्यादि ।

टीकार्थ—जा पुरुष तीर्थंकर भगवान् या उनके अनुयायी श्रमण निर्ग्रन्थों के समीप उपदेश सुनकर सर्वसावद्य व्यापार का त्यागरूप चारित्र अंगीकार करके विचरता है, वह अपकाय के आरंभ को समझता है—उसे अहितकर और अबोधिजनक जानता है । वह इस प्रकार विचार करता है—इस मनुष्य लोक में श्रमण निर्ग्रन्थों के उपदेश से सम्यग्ज्ञान और वैराग्य प्राप्त करनेवाले किन्हीं आत्मार्थियों को ही विदित होता है कि—‘यह ग्रंथ है’ इत्यादि ।

टीकार्थ—जे पुरुष तीर्थंकर लगवान तथा तेना अनुयायी श्रमणनिर्ग्रन्थाना समीप उपदेश सांलणीने सर्व सावद्यव्यापारना त्यागरूप चारित्र अंगीकार करीने विचरे छे, ते अपकायना आरंभने समझे छे—तेने अहितकर अने अबोधिजनक जान्छे छे, ते आ प्रमाणे विचार करे छे के—आ मनुष्य लोकमां श्रमण-निर्ग्रन्थाना उपदेशशी सम्यग्ज्ञान अने वैराग्य प्राप्त करवावाणा केहि पण आत्मार्थियोंना जानुवामां होय छे के—‘आ ग्रंथ छे इत्यादि’



एषः=उदकशस्त्रसमारम्भः खलु=निश्चयेन, ग्रन्थः=ग्रथयते=बध्यतेऽनेनेति ग्रन्थः  
अष्टविधकर्मबन्धः । कारणे कार्योपचारादुदकशस्त्रसमारम्भस्य ग्रन्थरूपत्वम्, एगमग्रेऽपि  
बोध्यम् । तथा एषः उदकशस्त्रसमारम्भः मोहः=विपर्यासः विपरीतज्ञानरूपः । तथा  
एष एव मारः=मरणं निगोदादिमरणरूपः । तथा एष खलु नरकः=नारकजीवानां  
दशविधयातनास्थानम् । इत्यर्थम्=एतदर्थं कर्मबन्ध-मोह-मरण-नरकरूपं घोरं दुःख-  
फलं प्राप्य पुनः पुनरेतदर्थमेव लोकः=अज्ञानवशवर्ती जीवः गृद्धः=लिप्सुरस्ति । यद्वा-  
गृद्धः=विषयभोगासक्तः, लोकः संसारी जीवः, इत्यर्थम्=एतदर्थमेव=कर्मबन्ध-मोह-  
मरण-नरकार्थमेव, प्रवर्तते ।

जिस के द्वारा गूँथा जाय-बांधा जाय यह ग्रंथ कहलाता है । यह उदकशस्त्र का  
समारंभ ग्रंथ है, अर्थात् आठ कर्मों का बंध है । यहाँ कारण में कार्य का उपचार करके  
उदकशस्त्र के समारंभ को ग्रंथ कहा है । वास्तव में वह ग्रंथ (कर्मबंध) का कारण है ।  
आगे भी इसी प्रकार समझना चाहिए ।

यह जलशस्त्र का समारंभ मोह-विपरीत ज्ञान है । तथा यह मार-निगोद  
आदि के मरणरूप है । यह नरक है अर्थात् नारकी जीवों को होनेवाली दस प्रकार की  
वेदनाओं का स्थान है । कर्मबंध, मोह, मरण, और नरकरूप घोर दुःखरूप फल को प्राप्त  
कर के भी अज्ञानी लोग फिर इसी के लिए गृद्ध होते हैं । अथवा गृद्ध अर्थात् भोगों  
में आसक्त, संसारी जीव इसी के लिए, अर्थात् कर्मबंध, मोह, मरण तथा नरक के लिए ही  
प्रवृत्ति करते हैं ।

જેના દ્વારા ગૂંથી શકાય-બાંધી શકાય તે ગ્રંથ કહેવાય છે. એ ઉદક-જલ-  
શસ્ત્રનો સમારંભ ગ્રંથ છે અર્થાત્ આઠ કર્મોનો બંધ છે. અહિં કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર  
કરીને ઉદકશસ્ત્રના સમારંભને ગ્રંથ કહ્યો છે. વાસ્તવિક રીતે તે ગ્રંથ (કર્મબંધ)નું કારણ  
છે. આગળ પણ આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ.

આ જલશસ્ત્રનો સમારંભ મોહ-વિપરીત જ્ઞાન છે, તથા આ માર-નિગોદ  
વગેરેના મરણરૂપ છે, આ નરક છે-અર્થાત્ નારકી જીવોને થવાવાળી દસ પ્રકારની  
વેદનાઓનું સ્થાન છે. કર્મબંધ, મોહ મરણ અને નરક રૂપ ઘોરદુઃખરૂપ ફલને પ્રાપ્ત  
કરીને પણ અજ્ઞાની લોક ફરીને તેના માટે ગૃહ-આસક્ત થાય છે. અથવા ગૃહ  
અર્થાત્ ભોગોમાં આસક્ત સંસારી જીવ એ માટે, અર્થાત્ કર્મબંધ, મોહ, મરણ  
તથા નરક માટે જ પ્રવૃત્તિ કરે છે.

યદ્યપિ વિષયભોગાસક્તો લોકઃ શરીરાદિપરિપોષણાર્થં પરિવન્દનમાનનપૂજનાર્થં જાતિમરણમોચનાર્થં દુઃખપ્રતિઘાતાર્થં આપ્કાયશસ્ત્રસમારમ્ભં કરોતિ, તથાપિ તત્ફલં ગ્રન્થ-મોહ-મરણ-નરકરૂપમેવ લભતે, અતઃ ઉદકકર્મસમારંભસ્ય તદેવ ફલં ભવતીતિ ભાવઃ ।

લોકઃ પુનઃ પુનઃ કર્મબંધાદ્યર્થમેવ લિપ્સુરસ્તિ, તદર્થમેવ ચ પ્રવર્તતે, ઇતિ યદુક્તં તત્ર હેતુમાહ—‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ ।

યદ્=યસ્માદ્, ગૃહ્ણો લોકઃ, વિરૂપરૂપૈઃ=નાનાવિધૈઃ શસ્ત્રૈઃ=સ્વકાય-પરકાયતદુભયરૂપૈઃ, ઉદકકર્મસમારમ્ભેણ=અપ્કાયમુદ્દિશ્યાષ્ટવિધકર્મસમુત્પાદક-સાવધવ્યાપારેણ, ઇમમ્=અપ્કાયં, બિહિનસ્તિ=પાણરહિતં કરોતિ । તથા-ઉદક-

તાત્પર્યં યહ હૈ કિ વિષયભોગો મેં આસક્ત જીવ, શરીર આદિ કા પોષણ કરને કે લિષ્, વન્દન-માન-પૂજન કે લિષ્, જન્મ-મરણ સે મુક્ત હોને કે લિષ્ તથા દુઃખો કા નાશ કરને કે લિષ્, અપ્કાય કે શસ્ત્ર કા આરંભ કરતા હૈ મગર ઉસ કા ફલ-ગ્રન્થ, મોહ, મરણ ઓર નરક-રૂપ હી પાતા હૈ । અતઃ એવ જલકર્મસમારંભ કા વહી ફલ હોતા હૈ ।

લોક બાર-બાર કર્મબંધ આદિ કે લિષ્ હી ઇચ્છુક હોતા હૈ, ઓર ઉસો કે લિષ્ પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ, યહ બાત પહેલે કહી હૈ । યહાં ઉસ કા કારણ બતલાતે હૈ—

ક્યોં કિ ગૃહ્ણજન નાના પ્રકાર કે સ્વકાય, પરકાય ઓર ઉભયકાયરૂપ શસ્ત્રો સે, ઉદકકર્મ કે આરંભદ્વારા, અપ્કાયસંબંધી અષ્ટકર્મ-જનક સાવધવ્યાપારદ્વારા અપ્કાય કી હિંસા કરતા હૈ । તથા જલકાય કે વિરાધક સ્વકાય, પરકાય ઓર

તાત્પર્યં એ છે કે-વિષયભોગોમાં આસક્ત જીવ શરીર-આદિના પોષણ કરવા માટે વન્દન, માન, પૂજા માટે, જન્મ મરણથી મુક્ત થવા માટે તથા દુઃખોના નાશ કરવા માટે અપ્કાયના શસ્ત્રોના આરંભ કરે છે, પરંતુ તેનું ફળ ગ્રન્થ, મોહ, મરણ અને નરક રૂપજ પામે છે, એ માટે જલકર્મસમારંભનું ફલ તેજ હોય છે.

લોક વારંવાર કર્મબંધ વગેરે માટે ઇચ્છા કરતા હોય છે; અને તે માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે. એ વાત પ્રથમ કહી છે. અહિં તેનું કારણ બતાવે છે કેમકે-ગૃહ્ણ માણસ નાના પ્રકારના સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાય રૂપ શસ્ત્રોથી ઉદકકર્મના આરંભદ્વારા અપ્કાયના સંબંધી આઠ કર્મજનક સાવધવ્યાપારદ્વારા અપ્કાયની હિંસા કરે છે. તથા



શસ્ત્રમ્-અપ્કાયમર્દકં શસ્ત્રં સ્વકાયપરકાયતદુભયરૂપં, સમારભમાણઃ=વ્યાપારયન્  
અન્યાન્=વૃથિત્રીકાયાદીન્, અનેકરૂપાન્=ત્રસાન્ સ્થાવરાંશ્ચ, પ્રાણાન્=પ્રાણિનો  
વિહિનસ્તિ ।

અપ્કાયહિંસયા ષડ્જીવનિકાયરૂપં લોકં સર્વમેવ પ્રણિહન્તીતિ ઘોરતરં દુરિતં  
કુર્વન્ પુનઃ પુનઃ ગ્રન્થાદિનરકાન્તં પ્રાપ્યાપિ તદર્થમેવ પ્રવર્ત્તે ન પુનર્મોક્ષાયેતિ  
ભાવઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

પુનરપિ સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામિનં પ્રાહ—‘સે વેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

॥ મૂલમ્ ॥

સે વેમિ સંતિ પાણા ઉદયનિસ્સિયા જીવા અણેમે ॥ સૂ. ૯ ॥

॥ છાયા ॥

સ બ્રવોમિ સન્તિ પ્રાણા ઉદકનિશ્રિતા જીવા અનેકે ॥ સૂ. ૯ ॥

ઉભયકાય રૂપ શસ્ત્રોં કા આરંભ કરતા હુઆ અન્યકાય-સ્થાવર ઓર ત્રસ જીવોં કો મો હિંસા  
કરતા હૈ, વહ જલકાયકી હિંસાદ્વારા ષડ્જીવનિકાયરૂપ સમસ્ત લોક કી હિંસા કરતા હૈ;  
અતઃ અત્યન્ત ઘોર પાપ કરતા હુઆ પુનઃપુનઃ ગ્રંથ સે લેકર નરક તક કે દુષ્કલકો પાકરકે મી  
ઉસી કે લિષ્ પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ-મોક્ષ કે લિષ્ નહીં ॥સૂ. ૮॥

સુધર્મા સ્વામી ફિર જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈ-‘સે વેમિ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—મૈ કહતા હૂં અપ્કાય કે આશ્રિત પ્રાણી હૈં ઓર અન્ય અનેક (દ્વીન્દ્રિય  
આદિ) જીવ મો હૈં ॥સૂ. ૯॥

જલકાયના વિરાધક સ્વકાય, પરકાય અને ઉભયકાય રૂપ શસ્ત્રોનો આરંભ કરીને  
અન્યકાય-સ્થાવર અને ત્રસ જીવોની પણ હિંસા કરે છે. તે જલકાયની હિંસાદ્વારા  
ષડ્જીવનિકાયરૂપ સમસ્ત લોકની હિંસા કરે છે. તેથી અત્યન્ત ઘોર પાપ કરતા થકા  
ફરી ફરી ગ્રંથ (કર્મબંધ)થી લઈને નરક સુધીના માઠા-હુઃખકારક ફળને પામીને  
પણ તે માટે પ્રવૃત્તિ કરે છે. મોક્ષ માટે કરતા નથી. (સૂ. ૮)

સુધર્મા સ્વામી ફરીથી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે-‘સે વેમિ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—હું કહું છું-અપ્કાયના આશ્રિત પ્રાણી છે, અને અન્ય અનેક (દ્વીન્દ્રિય  
આદિ) જીવ પણ છે. (સૂ. ૯)



## ટીકા—

સઃ=વિજ્ઞાતાપ્કાયસ્વરૂપોઽહં બ્રવીમિ=યથા સાક્ષાદ્ ભગવતઃ સકાશાન્મયા શ્રુતં તથા કથયामीત્યર્થઃ । ઉદકનિશ્ચિતાઃ જલરૂપં કાયમાશ્રિત્ય વર્તમાનાઃ અપ્કાયિકા इत्यર્થઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સન્તિ । તથાઽનેકે=દ્વીન્દ્રિયાદયઃ નાનાવિધાઃ જીવા નીલઙ્ગુ-પૂતરક-મત્સ્યાદયઃ ઉદકનિશ્ચિતાઃ=ઉદકાવસ્થિતાઃ સન્તિ । દેહલી-દીપન્યાયેનોદકનિશ્ચિતા इत्यस्योभयत्रान्वयः, અનેનોદકં સચિત્તમનેકજીવાધિષ્ઠિતં ચેતિ પ્રતિબોધિતમ્ ।

ટીકાર્થ—અપ્કાય કે સ્વરૂપ કા જ્ઞાતા મੈં કહતા હૂં । જૈસા કિ ભગવાન્ સે મૈને સુના હૈ કિ—અપ્કાય કો આશ્રિત કરકે રહે હુએ અપ્કાયિક પ્રાણી હૈ, તથા અનેક દ્વીન્દ્રિય આદિ નાના પ્રકાર કે જીવ નીલંગુ, પૂતરક, મત્સ્ય આદિ મી જલ મેં રહે હુએ હૈ । ઉદકનિશ્ચિતાઃ—‘જલકાય કે આશ્રિત’ યહ પદ દેહલી—દીપકન્યાય સે દોનોં ઓર જોડ લેના ચાહિએ । યહાં ઇતના સમસ લેના આવશ્યક હૈ કિ—જલકાય કે જીવોં કા શરીર જલ હી હૈ, જબ કિ જલ મેં રહેને બાલે ત્રસ આદિ જીવોં કા શરીર ભિન્ન હોતા હૈ, ફિરમી વે જલ હી મેં રહેતે હૈં ઓર જલ કી વિરાધના કરનેસે ડન ત્રસ આદિ જીવોં કી મી વિરાધના હોતી હૈ । જહાં જલકાય હૈ વહાં સમી કાય કે જીવ હોતે હૈં ।

ટીકાર્થ—અપ્કાયના સ્વરૂપને જાણનાર હું કહું છું. જેવી રીતે કે મેં ભગવાન પાસેથી સાંભળ્યું છે કે—અપ્કાયને આશ્રિત-આશ્રય કરીને રહેલા અપ્કાયના જીવો છે. તથા અનેક દ્વીન્દ્રિય આદિ નાના પ્રકારના જીવ નીલંગુ, પૂતરક, મત્સ્ય આદિ પણ જલમાં રહેલા છે. ‘ઉદકનિશ્ચિતાઃ’ ‘જલકાયને આશ્રિત’ આ પદ દેહલી-દીપક-ન્યાયથી બંને બાજુ જોડી લેવું જોઈએ.

અહિં એટલું સમજી લેવું આવશ્યક છે કે—જલકાયના—જીવોનાં શરીર જલજ છે. જ્યારે કે જલમાં રહેવાવાળા ત્રસ આદિ જીવોના શરીર ભિન્ન-જૂદાં હોય છે. તે પણ તે જલમાંજ રહે છે, અને જલની વિરાધના કરવાથી તે ત્રસ આદિ જીવોની પણ વિરાધના થાય છે. જ્યાં જલકાય છે ત્યાં તમામ કાયના જીવ હોય છે.

અપ્કાયસ્ય લક્ષણદ્વારમ્—

નનૂદકં સચિત્તમસ્તીત્યત્ર કિં પ્રમાણમ્ ? ઉચ્યતે—આપઃ સચિત્તાઃ, શસ્ત્રાનુપહત-  
ત્વે સતિ દ્રવત્વાત્, હસ્તિશરીરોપાદાનભૂતકલલવત્ । વસ્રવણાદૌ દોષવારણાય શસ્ત્રાનુપહ-  
તત્ત્વવિશેષણોપાદાનમ્ । કલલશબ્દગ્રહણેન સપ્તદિવસમાત્રવર્તિનો ગ્રહણમ્, તતઃ  
પરમ્ષ્ટમદિવસાદૌ તદેવાર્બુદાઘવસ્થામાપદ્યતે ।

કિંચ—આપઃ સજીવાઃ, અનુપહતદ્રવત્વાત્, અણ્ડકમધ્યસ્થિતકલલવત્ ।

કિંચ—આપો જીવશરીરાણિ, છેદ્યત્વાત્, ભેદ્યત્વાત્, દૃશ્યત્વાત્, કરચરણાદિ-  
સમુદાયવત્ ।

અપ્કાયકા લક્ષણદ્વાર

શંકા—જલ સચિત્ત છે, આ વિષય મેં કયા પ્રમાણ છે ?

સમાધાન—જલ સચિત્ત છે, ક્યોં કિ શસ્ત્ર કે ઉપઘાત કે વિના હી વહ  
દ્રવ (તરલ) છે, જૈસે—હાથી કે શરીર કા ઉપાદાન કલલ । યહાં મૂત્ર આદિ સે  
વ્યભિચાર હટાને કે લિખે ‘શસ્ત્ર કે ઉપઘાત કે વિના’ યહ વિશેષણ લગાયા ગયા છે ।  
‘કલલ’ શબ્દ કે ગ્રહણ કરને સે સિર્ફ સાત દિન કા ગર્ભાશયસ્થિત શુક્રશોણિતમિશ્રિત  
દ્રવપદાર્થ લેના ચાહિયે । આઠવેં દિન સે ઉકકી અર્બુદ આદિ અવસ્થાએ હો જાતી હૈં—અર્થાત્  
વહ ગાઢા હોને લગતા છે ।

ઔર મી—જલ સજીવ છે, ક્યોં કિ વહ અનુપહત દ્રવ છે, જૈસે અંડે કા રસ ।

ઔર મી—જલ, જીવ કા શરીર છે, ક્યોં કિ ઉસકા છેદન—ભેદન ક્રિયા જાતા છે ઔર  
દૃશ્ય છે, હાથ પગ આદિ કે સમૂહ કી તરહ ।

અપ્કાયનું લક્ષણદ્વાર—

શંકા—જલ—પાણી સચિત્ત છે એ વિષયમાં શું પ્રમાણ છે ?

સમાધાન—જલ સચિત્ત છે. કેમકે શસ્ત્રના ઉપઘાત વિનાજ તે તરલ છે.  
જેવી રીતે હાથીના શરીરનું ઉપાદાન “કલલ”. અહિં મૂત્ર આદિથી વ્યભિચાર હટાવવા  
માટે ‘શસ્ત્રના ઉપઘાત વિના’ એ વિશેષણ લગાડ્યું છે. “કલલ.” શબ્દના ગ્રહણ કર-  
વાથી માત્ર સાત દિવસનો ગર્ભાશયમાં રહેલો શુક્રશોણિત-મિશ્રિત દ્રવપદાર્થ સમજવો  
જોઈએ. આઠમા દિવસથી તેની અર્બુદ આદિ અવસ્થાઓ થઈ જાય છે. અર્થાત્ તે કઠણ  
થવા લાગે છે.

ખીનું પણ—જલ સજીવ છે, કેમકે તે અનુપહત દ્રવ છે, જેમકે ઇંડાનો રસ.

ખીનું પણ જલ—જીવ-શરીર છે. કેમકે—તેનું છેદન—ભેદન કરી શકાય છે અને  
દૃશ્ય છે; હાથ-પગ આદિના સમૂહ પ્રમાણે.

કિઞ્ચાઽવ્યક્તોપયોગાદીનિ કષાયપર્યન્તાનિ જીવલક્ષણાનિ પૃથ્વીકાયોદેશકે પ્રાગુક્તાનિ, તેષાં જીવલક્ષણાનાં સમન્વયાદાપઃ સચિત્તા મનુષ્યવદિતિ વિજ્ઞાયતે ।

एवं तेजस्कायादेरेकेन्द्रियजीवस्यैतानि जीवलक्षणानि सन्तीति बोध्यम् ।

આગમોઽપિ યથા—“આઝ ચિત્તમંતમવ્વાયા અણેગજીવા પુઠોસત્તા” ઇતિ (દશવૈ. અ૦ ૪)

### પ્રરૂપણાદ્વારમ્—

અપ્કાયા જીવા દ્વિવિધાઃ, સૂક્ષ્મવાદરભેદાત્ । સૂક્ષ્મનામકર્મોદયાત્

इस के अतिरक्त—अव्यक्त उपभोग से लेकर कषायपर्यन्त जीव के जो लक्षण पृथ्वीकाय के उद्देशक में बतलाये हैं, उन सब जीव के लक्षणों की विद्यमानता होने के कारण भी जल सचित है, जैसे मनुष्य आदि ।

इसी प्रकार तेजस्काय आदि एकेन्द्रिय जीवों में भी जीव के लक्षण हैं, ऐसा समझ लेना चाहिए ।

આગમ પ્રમાણ સે મી જલ સજીવ સિદ્ધ હોતા હૈ—“ અપ સચિત કહા ગયા હૈ । ડસમેં અનેક જીવ હૈ ઓર ડન કા અસ્તિત્વ, અલગ—અલગ હૈ । ” (દશ૦ અ૦ ૪)

### પ્રરૂપણાદ્વાર—

અપ્કાય કે જીવ ડો પ્રકાર કે હૈ— સૂક્ષ્મ ઓર વાદર । જિનકે સૂક્ષ્મનામ

તે સિવાય અવ્યક્ત ઉપયોગથી લઈને કષાય સુધી જીવનાં જે લક્ષણ પૃથ્વી-કાયના ઉદ્દેશકમાં બતાવ્યાં છે. તે સર્વ જીવના લક્ષણોની વિદ્યમાનતા હોવાના કારણે પણ જલ સચિત છે. જેવી રીતે મનુષ્ય આદિ. એ પ્રમાણે તેજસ્કાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોમાં પણ જીવના લક્ષણ છે. એ રીતે સમજ લેવું જોઈએ.

આગમ પ્રમાણથી પણ જલ સજીવ સિદ્ધ થાય છે—

“અપ સચિત કહેલું છે; તેમાં અનેક જીવ છે. અને તેનું અસ્તિત્વ અલગ-અલગ છે.” (દશ૦ અ. ૪)

### પ્રરૂપણાદ્વાર—

અપ્કાયના જીવ જે પ્રકારનાં છે—(૧) સૂક્ષ્મ અને (૨) વાદર જેને સૂક્ષ્મનામ



सूक्ष्माः, बादरनामकर्मोदयाद् बादराः । तत्र सूक्ष्मा द्विविधाः-पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च । सूक्ष्माः सर्वलोकव्यापिनः । बादरा लोकैकदेशे सन्ति । बादरा अप्काया अनेकविधाः-हिमा-वश्याय-मिहिका-करक-हरतनु-शुद्ध-शीतोष्ण-क्षाराम्ल-लवण-क्षीर-घृतोदकादयः । ते सर्वे बादरा अप्कायाः संक्षेपतो द्विधा-पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च । बादराणां यत्रैको जीवस्तत्रासंख्येयैर्बादरजीवैर्नियमतो भाव्यम् । बादराणां स्थानं समुद्रहृद-नदीप्रभृतयः ।

बादराणां सूक्ष्माणां चोभयेषामप्कायानां पर्याप्तापर्याप्तभेदवदन्येऽपि शरीरत्रयादिभेदाः सन्ति, ते पृथिवीकायोद्देशे प्रागुक्तास्तत एव बोद्धव्याः ।

कर्मका उदय है वे सूक्ष्म कहलाते हैं, और बादरनामकर्म के उदय वाले बादर कहलाते हैं । इनमेंसे सूक्ष्म जीव पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार के हैं । सूक्ष्म सम्पूर्ण लोक में व्याप्त हैं । बादर लोक के एक देश में हैं, बादरअप्काय के अनेक भेद हैं-हिम, ओस, मिहिका ( धूँवर ) ओले, हरतनु ( तृणके अग्र पर रहा हुआ पानी ) शुद्ध, शीतउष्ण, क्षार, आम्ल, लवण, क्षीर, घृतोदक आदि । सब बादर अप्काय संक्षेप से पर्याप्त तथा अपर्याप्त के भेद से दो प्रकार के हैं । जहाँ एक बादर जीव होता है वहाँ नियम से असंख्यात बादर जीव होते हैं । समुद्र, तालाब, नदी वगैरह बादर जीवों के स्थान हैं ।

बादर और सूक्ष्म, दोनों प्रकार के जलकाय के जैसे पर्याप्त और अपर्याप्त भेद किये गये हैं उसी प्रकार शरीरत्रय आदि और भेद भी हैं । वे पृथ्वीकाय के उद्देशक में बतलाये हैं । वहीं से जान लेने चाहिए ।

કર્મના ઉદય છે તે સૂક્ષ્મ કહેવાય છે અને બાદરનામકર્મના ઉદયવાળા બાદર કહેવાય છે. તેમાંથી સૂક્ષ્મ જીવ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્તના ભેદથી બે પ્રકારનાં છે. સૂક્ષ્મ સર્વ લોકમાં વ્યાપ્ત છે. અને બાદર લોકના એક દેશમાં છે. બાદર અપ્કાયના અનેક ભેદ છે. હિમ, ઓસ, મિહિકા ( ધૂંવર ) ઓલે, હરતનુ ( તૃણના અગ્ર પર રહ્યા પાણી ) શુદ્ધ, શીત, ઉષ્ણ, ક્ષાર, અમ્લ, લવણ, ક્ષીર, ઘૃતોદક આદિ. સર્વ બાદર અપ્કાય સંક્ષેપથી પર્યાપ્ત તથા અપર્યાપ્તના ભેદથી બે પ્રકારનાં છે. જ્યાં એક બાદર જીવ હોય છે. ત્યાં નિયમથી અસંખ્યાત બાદર જીવ હોય છે. સમુદ્ર, તળાવ, નદી વગેરે બાદર જીવોના સ્થાન છે.

બાદર અને સૂક્ષ્મ-બન્ને પ્રકારના જલકાયના જેવી રીતે પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત ભેદ કરવામાં આવ્યા છે. તે પ્રમાણે શરીરત્રય આદિ બીજા ભેદો પણ છે તે પૃથ્વી-કાયના ઉદ્દેશકમાં બતાવેલા છે. તે ત્યાંથી જાણી લેવા જોઈએ.

પૃથિવીકાયવદ્ અસંખ્યેયાશ્ચ પ્રત્યેકમુખ્યે । કેવલં શરીરસંસ્થાનં સ્તિબુકબિન્દુક-  
સંસ્થિતમેવ ।

### પરિમાણદ્વારમ્—

યે વાદરપર્યાપ્તા અપ્કાયાઃ, તે સંવર્તિતલોકપ્રતરાસંખ્યેયભાગ  
પ્રદેશરાશિપરિમાણાઃ, યે તુ વાદરા અપર્યાપ્તાઃ, તથા સૂક્ષ્માઃ પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચ  
રાશયસ્તે પૃથક્—પૃથગસંખ્યેયલોકાકાશપ્રદેશરાશિપરિમાણાઃ સન્તિ । અયમત્ર  
વિશેષઃ—વાદરપર્યાપ્તેભ્યઃ પૃથિવીકાયેભ્યો વાદરપર્યાપ્તા અપ્કાયા અસંખ્યેયગુણાઃ,  
વાદરેભ્યોઽપર્યાપ્તેભ્યઃ પૃથિવીકાયેભ્યો વાદરા અપર્યાપ્તા અપ્કાયા અસંખ્યેય-  
ગુણાઃ । સૂક્ષ્માપર્યાપ્તપૃથિવીકાયેભ્યઃ સૂક્ષ્મા અપર્યાપ્તા અપ્કાયા વિશેષાધિકાઃ,

પૃથ્વીકાય કે સમાન પ્રત્યેક પ્રકાર કે જીવ અસંખ્યાત હૈં । અલબત્તા ઇન કે શરીર કા  
આકાર સ્તિબુકબિન્દુ (બુદ-બુદ) કે સમાન હૈ ।

### પરિમાણદ્વાર—

વાદર પર્યાપ્ત અપ્કાય કે જીવ સંવર્તિત લોકપ્રતર કે અસંખ્યેયભાગ પ્રદેશો કે  
બરાબર હૈં, વાદર અપર્યાપ્ત તથા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત ઔર અપર્યાપ્ત રાશિયૌ અલગ અલગ  
અસંખ્યાત લોકાકાશ કે પ્રદેશ કે બરાબર હૈં । યહૌ ઇતની વિશેષતા સમજની યાહિય  
કિ—વાદર પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કી અપેક્ષા વાદર પર્યાપ્ત અપ્કાય અસંખ્યાતગુણા હૈં, ઔર  
વાદર અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કી ઉપેક્ષા વાદર અપર્યાપ્ત અપ્કાય કે જીવ અસંખ્યાતગુણા હૈં ।  
સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કે જીવોં સે સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત અપ્કાયિક જીવ વિશેષ અધિક હૈં

પૃથ્વીકાયની પ્રમાણે પ્રત્યેક પ્રકારના જીવ અસંખ્યાત છે. અલબત્ત તેના શરીરના  
આકાર સ્તિબુકબિન્દુ—બુદ-બુદના પ્રમાણે છે.

### પરિમાણદ્વાર—

વાદર પર્યાપ્ત અપ્કાયના જીવ સંવર્તિત લોકપ્રતરના અસંખ્યેય ભાગ પ્રદેશોના  
બરાબર છે. વાદર અપર્યાપ્ત તથા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત રાશિઓ અલગ-અલગ  
અસંખ્યાત લોકાકાશના પ્રદેશોની બરાબર છે. અહિં એટલી વિશેષતા સમજવી જોઈએ કે—  
વાદર પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયની અપેક્ષા વાદર પર્યાપ્ત અપ્કાય અસંખ્યાત ગુણા છે, અને  
વાદર અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયની અપેક્ષા વાદર અપર્યાપ્ત અપ્કાયના જીવ અસંખ્યાત ગુણા છે.  
સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયના જીવોથી સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત અપ્કાયિક જીવ વિશેષ અધિક છે.



સૂક્ષ્મ-પર્યાપ્ત-પૃથ્વીકાયેભ્યઃ સૂક્ષ્મપર્યાપ્તા અપ્કાયા વિશેષાધિકાઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

શ્રીસુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનમામન્વ્ય કથયતિ-‘ઈહં ચે.’-ત્યાદિ ।

મૂલમ્—

ઈહં ચ ચ્વલુ મો ! અણગારાણં ઉદયં જીવા વિયાહિયા સૂ. ॥ ૧૦ ॥

છાયા—

ઈહં ચ ચ્વલુ મોઃ ! અનગારાણામુદકં જીવા વ્યાખ્યાતાઃ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકા—

‘મોઃ’ इति परस्परालापविषयकामन्त्रणे, तेन મોઃ=હેજમ્બૂઃ !  
ઈહં=જિનશાસને ચ્વલુ=નિશ્ચયેન અનગારાણાં=દ્રવ્યભાવગૃહરહિતાનાં મુનીનાં પ્રતિ-  
બોધનાયેતિ શેષઃ, ઉદકં જીવા વ્યાખ્યાતાઃ’ इति, ઉદકં જીવપિન્ડભૂત-

તથા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કી અપેક્ષા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત અપ્કાય કે જીવ વિશેષ  
અધિક હૈં ॥ સૂ. ૯ ॥

શ્રી સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી કો સંબોધન કરકે કહતે હૈં:—‘ઈહં ચ’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—હૈ શિષ્ય ! જિન શાસન મેં અનગારોં કે લિષ્ઠે યહ વ્યાખ્યા કી ગઈ હૈ  
કિ—જલ જીવ હૈ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

ટીકાર્થ—‘મો’ શબ્દ સંબોધન કે લિષ્ઠે હૈ । ઇષ્ઠ કા તાત્પર્ય યહ હુઆ કિ—હે  
જમ્બૂ ! ઇષ્ઠ જિન શાસન મેં નિશ્ચય સે અનગારોં અર્થાત્ દ્રવ્ય ઔર ભાવ ગૃહ સે રહિત  
મુનિયોં કે બોધ કે લિષ્ઠે ‘જલ જીવ હૈ’ યહ વ્યાખ્યાન કિયા ગયા હૈ । જલ, જીવોં કા

તથા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયની અપેક્ષા સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત અપ્કાયના જીવ વિશેષ  
અધિક છે. (સૂ. ૯)

શ્રી સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને સંબોધન કરીને કહે છે—‘ઈહં ચ’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—હે શિષ્ય ! જિનશાસનમાં અણગારોને માટે આ વ્યાખ્યા કરવામાં  
આવી છે, કે જલ જીવ છે. (સૂ. ૧૦)

ટીકાર્થ—‘મો’ શબ્દ સંબોધન માટે છે. તેનું તાત્પર્ય એ થયું કે—હે જમ્બૂ ! આ  
જિનશાસનમાં નિશ્ચયથી અણગારોના અર્થાત્ દ્રવ્ય અને ભાવ ગૃહથી રહિત મુનિઓના બોધ  
માટે ‘જલ જીવ છે’ આ વ્યાખ્યાન કરવામાં આવ્યું છે. જલ, જીવોનો પિન્ડ છે, એ પ્રમાણે



મસ્તીતિ ભગવતા કેવલાલોકેન વિજ્ઞાયાનગારેભ્યઃ સંયમરક્ષણાર્થમુદકં જીવત્વેન પ્રતિબોધિતમિત્યર્થઃ । ‘ચ’-શબ્દાત્ તદાશ્રિતા અન્યે દ્વીન્દ્રિયાદયોઽપિ જીવા વ્યાખ્યાતા इति बोधितम् । यो बिन्दुमात्रोदकविराधकः, स षट्जीविकाय-  
विराधको भवतीति वर्तुलार्थः ॥ सू० १० ॥

શસ્ત્રદ્વારમ્—

નનુ યદિ જીવપિણ્ડભૂતમુદકં ભગવતા પ્રોક્તં તર્હિ ઉદકસેવિનાં મુનીનામવશ્યં પ્રાણાતિપાતદોષસમ્પાતઃ, તેન કથં સંયમઃ સંયમિનાં સંપદ્યતે ? ઉચ્યતે—

સચિત્તાચિત્તમિશ્રભેદેન ત્રિવિધમુદકમ્ । તત્ર સચિત્તં-નદીકૂપતટાગાદિ-

પિણ્ડ હૈ, ઇસ પ્રકાર ભગવાન્ ને કેવલજ્ઞાન સે જાનકર સાધુઓં કે સંયમ કી રક્ષા કે લિખ જલ કો જીવ બતલાયા હૈ । સૂત્ર મેં દિયે હુખ ‘ચ’ શબ્દ સે યહ પ્રકટ કિયા ગયા હૈ કિ જલ કે આશ્રિત દૂસરે દ્વીન્દ્રિય આદિ જીવ મી હૈ । સંક્ષેપ મેં તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-જો પુરુષ ઇક બિન્દુ જલ કી વિરાધના કરતા હૈ વહ ષટ્કાય કે જીવોં કા વિરાધક હૈ ॥ સૂ. ૧૦ ॥

શસ્ત્રદ્વાર—

શંકા—યદિ જલ જીવોં કા પિણ્ડ હૈ, ઇસા ભગવાન્ને કહા હૈ તો જલકા સેવન કરને વાલે મુનિયોં કો હિંસા કા દોષ લગતા હૈ । ઇસી સ્થિતિ મેં સાધુઓં કા સંયમ કિસ પ્રકાર કાયમ રહ સકતા હૈ ?

સમાધાન—જલ ત્રીન પ્રકાર કા હૈ—(૧) સચિત્ત (૨) અચિત્ત ઓર (૩) મિશ્ર

ભગવાને કેવલજ્ઞાનથી જાણી કરીને સાધુઓના સંયમની રક્ષા માટે જલને જીવ તરીકે બતાવ્યું છે. સૂત્રમાં આપેલા ‘ચ’ શબ્દથી એ પ્રગટ કરવામાં આવ્યું છે કે-જલના આશ્રિત બીજા દ્વીન્દ્રિય આદિ જીવ પણ છે. સંક્ષેપમાં તાત્પર્ય એ છે કે-જો પુરુષ એક ટીપા જલની વિરાધના કરે છે તે ષટ્કાયના જીવોનો વિરાધક છે. (સૂ. ૧૦)

શસ્ત્રદ્વાર—

શંકા—જો જલ જીવોનો પિંડ છે, એ પ્રમાણે ભગવાને કહ્યું છે તો જલનું સેવન કરવાવાળા મુનિઓને હિંસાદોષ લાગે છે. એવી સ્થિતિમાં સાધુઓનો સંયમ કાયમ કેવી રીતે રહી શકે છે ?

સમાધાન—જલ ત્રણ પ્રકારનું છે (૧) સચિત્ત (૨) અચિત્ત અને (૩) મિશ્ર.

જલમ્ । મિશ્રં સચિત્તાચિત્તસંમિલિતમ્ । એતદ્ દ્વયં ચાગ્રાહ્યમ્ । અચિત્તં દ્વિવિધં સ્વભાવતઃ, શસ્ત્રસંપર્કતઃ । સ્વભાવતોઽચિત્તં જલં કેવલી-મનઃપર્યયાઽવધિ-શ્રુત-જ્ઞાનિનસ્તજ્ઞાનાના અપિ ન સેવન્તે, અનવસ્થાદોષપ્રસજ્ઞાત, વ્યવહારાશુદ્ધેશ્ચ । પ્રસિદ્ધં ચ યત્ કદાચિત્સ્વભાવતોઽચિત્તજલપરિપૂર્ણં હૃદં, સ્વભાવતોઽચિત્તીભૂતં તિલાદિકં ચ દૃષ્ટ્વા વ્યવહારાશુદ્ધત્વાત્પિપાસાશુધાપરિપીડિતાનામપિ સાધૂનાં પાનાર્થં ભક્ષણાર્થં ચ તત્રાનુજ્ઞા ન કૃતા ભગવતેતિ । યત્તુ શસ્ત્રસંપર્કાદચિત્તં જલં તત્ સાધૂનામુપભોગાય ગ્રાહ્યં, તેન સંયમનિર્વાહો ભવતિ । કિં તચ્છસ્ત્રમ્ ? इत्याह-‘सत्थं.’ इत्यादि ।

નદી, કૂપ, તાલાવ આદિ કા જલ સચિત્ત, ઔર અચિત્ત મિલા જલ મિશ્ર કહલાતા હૈ । યહ દોનો પ્રકાર કા જલ સાધુ કે લિયે અગ્રાહ્ય હૈ । અચિત્ત જલ દો પ્રકાર કા હૈ-સ્વભાવ સે અચિત્ત ઔર શસ્ત્ર કે સંયોગ સે અચિત્ત । સ્વભાવ સે અચિત્ત જલ કો કેવલી, મનઃપર્યયજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની, તથા શ્રુતજ્ઞાની, જાનતે હૈ, મગર ડસ કા સેવન નહીં કરતે । સેવન કરને સે અનવસ્થા દોષ આતા હૈ ઔર વ્યવહાર અશુદ્ધ હો જાતા હૈ । યહ વાત પ્રસિદ્ધ હૈ કિ-કદાચિત્ સ્વભાવ સે અચિત્ત જલ સે ભરા હુઆ તાલાવ, તથા સ્વભાવ સે અચિત્ત તિલ, આદિ કો દેખકર વ્યવહાર મેં અશુદ્ધ હોને કે કારણ પ્યાસ ઔર ભૂક્ષ સે પીડિત સાધુઓં કો ભી પીને-ઝાને કી આજ્ઞા ભગવાનને નહીં દી હૈ । જો જલ, શસ્ત્ર કે સંયોગ સે અચિત્ત હો ગયા હો વહી સાધુઓં કે લિપ, ગ્રાહ્ય હોતા હૈ । એસા કરને સે હી સંયમ કા પાલન હોતા હૈ । વહ શસ્ત્ર કયા હૈ, યહ બતલાને કે લિપ કહતે હૈ-‘સત્થં.’ इत्यादि ।

નદી, કુવા, તળાવ આદિનું જલ સચિત્ત છે. સચિત્ત અચિત્ત બન્ને પ્રકારનું બેશું થયેલું જલ મિશ્રકહેવાય છે. આ બન્ને પ્રકારનાં જલ સાધુઓ માટે અગ્રાહ્ય છે. અચિત્ત જલ બે પ્રકારનું છે. (૧) સ્વભાવથી અચિત્ત અને (૨) શસ્ત્રના સંયોગથી અચિત્ત. સ્વભાવથી અચિત્ત જલને કેવલી, મનઃપર્યયજ્ઞાની, અવધિજ્ઞાની તથા શ્રુતજ્ઞાની બાણે છે, પરંતુ તેનું સેવન કરતા નથી-સેવન કરવાથી અનવસ્થા દોષ આવે છે, અને વ્યવહાર અશુદ્ધ થઈ જાય છે. એ વાત પ્રસિદ્ધ છે કે-કદાચિત્ સ્વભાવથી અચિત્ત જલથી ભરેલું તળાવ તથા સ્વભાવથી અચિત્ત તલ આદિને બેઠને વ્યવહારમાં અશુદ્ધ હોવાના કારણે તરસ અને ભૂખથી પીડિત સાધુઓને પણ પીવા-ખાવાની આજ્ઞા ભગવાને આપી નથી. જે જલ શસ્ત્રના સંયોગથી અચિત્ત થઈ ગયું હોય તે જલ સાધુઓ માટે ગ્રાહ્ય હોય છે. એ પ્રમાણે કરવાથી જ સંયમનું પાલન થાય છે. તે શસ્ત્ર શું છે? એ બતાવવા માટે કહે છે-‘સત્થં’ इत्यादि.

મૂલમ્—

સત્થં ચેત્થ અણુવીહ પાસ, પુઠો સત્થં પવેહ્યં ॥ સૂ. ૧૧ ॥

છાયા—

શસ્ત્રં ચાત્ર અનુવિચિન્ત્ય પડ્ય, પૃથક્ શસ્ત્રં પ્રવેદિતમ્ ॥ ૧૧ ॥

ટીકા—

અસ્મિન્ પ્રસ્તુતેઽપ્કાયે શસ્ત્રં-શસ્યતે=હિંસ્યતે પ્રાણી યેન તચ્છસ્ત્રમ્ અનુવિચિન્ત્ય = 'ઇદમપ્કાયસ્ય શસ્ત્રમ્' इति विचार्य, पश्य=हे शिष्य ! ज्ञानदृष्ट्या विलोक्य । शस्त्रम्=उपमर्दकं प्रस्तुतत्वादप्कાયस्य पृथक्=विभिन्नरूपं स्वकायपरकायोभयकाय-भेदात् त्रिविधमित्यर्थः प्रवेदितं=प्रतिबोधितं भगवतेतिशेषः । तत्र स्वकायशस्त्रं नद्याद्युदकानां कूपाद्युदकम् । कूपाद्युदकानां नद्याद्युदकं च । स्वकायशस्त्रपरिणतं जलं साधूनामग्राह्यं व्यवहाराशुद्धेः । उभयकायशस्त्रं कूपादिजलस्योष्णजलं मृत्तिकादि-

મૂલાર્થ—અપ્કાય કે વિષય મેં, હે શિષ્ય ! શસ્ત્ર કા વિચાર કરો । અપ્કાય કે શસ્ત્ર પૃથક્-પૃથક્ સમજાવે ગયે હૈ ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ટીકાર્થ—જિસ કે દ્વારા હિંસા હો વહ શસ્ત્ર કહલતા હૈ, હે શિષ્ય ! અપ્કાય કે વિષય મેં 'યહ અપ્કાય કા શસ્ત્ર હૈ' इस प्रकार विचार करो अप्कાય के शस्त्र स्वकाय, परकाय और उभयकाय के भेद से नाना प्रकार के भगवानन् ने बतलाये हैं । कुँए का जल नदी के जल के लिए स्वकायशस्त्र है, इसी प्रकार नदी आदि का जल कुँए के जल के लिए स्वकायशस्त्र है । स्वकायशस्त्र से परिणत जल साधुओं के लिए ग्राह्य नहीं होता, क्योंकि वह व्यवहार में अशुद्ध है । उभयकायशस्त्र है—कुँए आदि के

મૂલાર્થ—અપ્કાયના વિષયમાં હે શિષ્ય ! શસ્ત્રનો વિચાર કરો. અપ્કાયનાં શસ્ત્ર જુદાં જુદાં સમજાવ્યાં છે. (સૂ. ૧૧)

ટીકાર્થ—જેના દ્વારા હિંસા થઈ શકે તે શસ્ત્ર કહેવાય છે, હે શિષ્ય ! અપ્કાયના વિષયમાં 'આ અપ્કાયનું શસ્ત્ર છે' એ પ્રમાણે વિચાર કરો અપ્કાયનાં શસ્ત્ર સ્વકાય, પરકાય, અને ઉભયકાયના ભેદથી નાના પ્રકારનાં ભગવાને બતાવ્યાં છે. કુવાનું જલ, નદી આદિનાં જલ માટે સ્વકાયશસ્ત્ર છે. એ પ્રમાણે નદી આદિનું જલ કુવાનાં જલ માટે સ્વકાયશસ્ત્ર છે. સ્વકાયશસ્ત્રથી પરિણત જલ સાધુઓ માટે ગ્રાહ્ય રહેતું નથી, કારણ કે તે વ્યવહારમાં અશુદ્ધ છે. ઉભયકાયશસ્ત્ર છે કુવા આદિનાં જલ. માટે ગરમ જલ, અથવા માટી વગેરેથી



મિશ્રજલં ચ । ઉભયકાયશસ્ત્રપરિણતમપિ ન ગ્રાહ્યમ્, તત્ર મિશ્રશઙ્કાસદ્ભાવાત્ ।  
પરકાયશસ્ત્રપરિણતમેવ જલં મુનીનાં ગ્રાહ્યમ્, પરકાયશસ્ત્રં ચાપ્કાયસ્ય અગ્નિ-મૃત્તિકા-  
દ્રાક્ષા-શાક-તણ્ડુલ-પિષ્ઠ-દાલી-ચણકાદિકમ્ । પરકાયશસ્ત્રપરિણતં=વર્ણાદીનાં  
પૂર્વાવસ્થાવૈલક્ષણ્યાપન્નમ્ । તત્ર વર્ણતો ધૂસરત્વાદિરૂપં, ગન્ધતસ્તત્તદ્વસ્તુસમ્બન્ધિ-  
ગન્ધવત્ત્વમ્, રસતસ્તત્તદ્વસ્તુસમ્બન્ધિત્તકટુકષાયાદિરસવત્ત્વમ્ । સ્પર્શતઃ  
સ્નિગ્ધરૂક્ષત્વાદિરૂપમ્ । તદેવમ્ભૂતમચિત્તં જલમસ્યૈવાજ્ઞસ્ય દ્વિતીયશ્રુતસ્કન્ધે  
પાનૈષણાયામેકવિંશતિવિધં મુનીનાં ગ્રાહ્યત્વેન વક્ષ્યતે ભગવતા । તથાહિ—

જલ કે લિપ્ ગર્મ જલ અથવા મિટ્ટી આદિ સે મિલા હુઆ જલ । ઉભયકાયશસ્ત્ર સે પરિણત  
જલ મી સાધુઓ કે લિપ્ ગ્રાહ્ય નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઉસ મેં મિશ્ર (સચિત્તાચિત્ત) કી શઙ્કા  
રહતી હૈ । મુનિયોં કે લિપ્ પરકાયશસ્ત્રપરિણત જલ હી ગ્રહણ કરને યોગ્ય હૈ । અપ્કાય કા  
પરકાયશસ્ત્ર—અગ્નિ, મિટ્ટી, દાસ, શાક, ચાવલ, આટા, દાલ, ઓર ચના આદિ હૈ ।

પહેલે કી અપેક્ષા વર્ણ, રસ ગંધ આદિ બદલ જાના પરકાયશસ્ત્ર સે જલ કે પરિણત (અચિત્ત)  
હો જાને કી પહચાન હૈ । વર્ણ સે જલ કા ધૂસર આદિ હો જાના, ગંધ સે ઉસ મેં મિલી હુઈ  
વસ્તુઓં કી ગંધ આને લગના, હસી પ્રકાર જલ મેં મિલી હુઈ વસ્તુઓં કા તીસા, કડવા,  
કસૈલા આદિ રસ કા સ્વાદ આ જાના, ઓર સ્પર્શ સે જલ કા રૂઝા, ચિકના આદિ હો જાના  
જલ કે અચિત્ત હોને કે લક્ષણ હૈ ।

મળેલું જલ. ઉભયકાય શસ્ત્રથી પરિણત જલ પણ સાધુઓ માટે ગ્રાહ્ય નથી. કેમકે—  
તેમાં મિશ્ર (સચિત્તાચિત્ત) ની શંકા રહે છે. મુનિઓ માટે પરકાયશસ્ત્રપરિણત જલજ  
ગ્રહણ કરવા યોગ્ય છે. અપ્કાયનું પરકાયશસ્ત્ર, અગ્નિ, માટી, દ્રાક્ષ, શાક, ચાવલ,  
લોટ, દાલ અને ચણા આદિ છે.

પહેલાં કરતાં જેનાં વર્ણ, રસ, ગંધ, આદિ બદલાઈ જાય તે પરકાયશસ્ત્રથી  
જલ પરિણત (અચિત્ત) થઈ જવાની એ નિશાની અર્થાત્ ઓળખાણ છે.

વર્ણથી જલનું ધૂસર આદિ થઈ જવું, ગંધથી તેમાં મળેલી વસ્તુઓની ગંધ  
આવવી, એ પ્રમાણે જલમાં મળેલી વસ્તુઓના તીખા, કડવા, કસેલા આદિ રસનો  
સ્વાદ આવી જવો, અને સ્પર્શથી જલનું રૂક્ષ ચિકણું આદિ થઈ જવું. એ જલ  
અચિત્ત હોવાના લક્ષણ છે.

(१) उत्स्वेद्यम्=पिष्टसंसृष्टपिठरादिग्रक्षालनजलम् । (२) संस्वेद्यम्=संसेकिमं वा=उत्कालिततिलधावनजलं, उत्कालितपत्रशाकादिधावनजलं वा । (३) तन्दुलोदकम्=तन्दुलधावनजलम् । (४) तिलोदकम्=तिलधावनजलम् । (५) तुषोदकम्=व्रीहिधावनजलम् । (६) यवोदकम्=यवधान्यक्षालनजलम् । (७) आचामकम्=अवश्रामणजलं 'औसामण' इति भाषाप्रसिद्धम् । (८) सौवीरम्=आरनालं, तक्रपात्रधावनजलं, तक्रोपरिष्ठान्निस्तारितजलं वा 'आँछ' इति भाषायाम् । (९) आम्रफलादिधावनजलम् । (१०) आम्रातकपानकम्=आम्रातकधावनजलम् । आम्रातकमिति 'अम्बाडी' इति भाषाप्रसिद्धम् । (११) कपित्थपानकम्=कपित्थं='कविठ' इति भाषायां, तस्य धावनजलम् । (१२) मातुलिङ्गम् 'बिजोरा'

इस प्रकार का अचित्त जल इसी सूत्र के दूसरे श्रुतस्कन्ध में 'पानैषणा' प्रकरण में इक्कीस प्रकार का भगवान् ने साधुओं के लिए ग्राह्य कहा है । वह इस प्रकार:-

(१) उत्सेद्य-आटेका मिला हुवा पीठर (कथोटी) आदिका धोवन ।

(२) संस्वेद्य (संसेकिम) उकाले हुए तिलोंका धोवन या उकाले हुए पत्तों के शाक का धोवन ।

(३) चावलों का धोवन, (४) तिलों का धोवन, (५) धान्यका धोवन, (६) जौ का धोवन (७) ओसामण, (८) आरनाल, छाछ के वर्तनों का धोवन, अथवा छाछ के उपर का नितारा पानी जिसे 'आँछ' भी कहते हैं ।

(९) आम आदि फलों का धोवन (१०) अम्बाडी का धोवन (११) कविठ (कैथ) का धोवन (१२) विजौरै का धोवन (१३) दाख का धोवन (१४) दाडिम (अनार)

आवा प्रकारनुं अचित्त जल आ सूत्रना भील श्रुतस्कन्धना पानैषणा-प्रकरणमां ओकवीश प्रकारनुं लगवाने साधुओ माटे ग्राह्य कह्युं छे, ते आ प्रमाणे छे:-

(१) उत्सेद्य-ढोऱ भणेलुं, कथरेऱ आदिनुं धोवणु.

(२) संस्वेद्य-ढकाणेलो तलनुं धोवणु, अथवा ढकाणेलो पत्तावाणां शाकनुं धोवणु.

(३) ओआनुं धोवणु. (४) तलनुं धोवणु. (५) धान्यनुं धोवणु. (६) ज्वनुं धोवणु. (७) ओसामण. (८) आरनाल-छासना वासणेलुनुं धोवणु, अथवा छासनी उपर नीतरेल पाण्णी. जेने 'आछ' पणु कडे छे.

(९) आंआ-आम्र आदि इणेलुं धोवणु. (१०) अम्बाडीनुं धोवणु (११) कौठानुं धोवणु. (१२) बिजोरानुं धोवणु. (१३) दाखनुं धोवणु. (१४) दाडिमनुं धोवणु. (१५)



इति भाषायां, तस्य पानकं=धावनजलम् । (१३) द्राक्षापानकम्=द्राक्षाधावनजलम् । (१४) दाडिमपानकम्=दाडिमधावनजलम् । (१५) खर्जूरपानकम्=खर्जूरधावन-जलम् । (१६) नालिकेलपानकम्=नालिकेलधावनजलम् । (१७) करीरपानकम्=करीरधावनजलम् । (१८) कोलपानकम्=बदरधावनजलम् । (१९) आमलकपानकम्=आमलकधावनजलम् । (२०) चिञ्चपानकम्=चिञ्चा-अम्लिका 'इमली' इति भाषायां, तस्याः पानकं=धावनजलम् । (२१) शुद्धविकृतम्=अग्न्युत्कालितमुष्णं जलं च ।

इह शेषद्वाराणि पृथिविकायवद् विज्ञेयानि ।

ये तु शाक्यादयः सचित्तापकायोपभोगिनः सन्ति तेषु शाक्यादयः स्वोपभोगार्थम् 'आपो जीवा न सन्ति' इति प्रतिपादयन्ति, दण्डिनस्तु जलं सचितं मन्यमाना अपि मोहप्रमादवशतः स्वार्थमुत्कालयन्ति, परमुपदिशन्ति, च, यथा त्रिदण्डमुत्कालनीयं जलम्, इत्युपदिश्यापकायसमारम्भं कारयन्तो न केवलमपकायं विहिंसन्ति, किन्तु तदाश्रितानन्यानपि द्वीन्द्रियान् विराधयन्ति ।

का धोवन (१५) खजूर का धोवन (१६) नारियल का धोवन (१७) कैर का धोवन (१८) बेर का धोवन (१९) आंवले का धोवन (२०) इमली का धोवन (२१) अग्नि से उकाला हुआ गर्म जल ।

जो शाक्य आदि सचित्त अपकाय का सेवन करते हैं, उन में से शाक्य आदि अपने उपभोग के लिए 'जल सचित नहीं है' इस प्रकार की प्ररूपणा करते हैं । दण्डी लोक जल को सचित्त मान कर के भी मोह और प्रमाद के वश हो कर अपने लिए पानी गरम करवाते हैं और दूसरों को उकालने का उपदेश देते हैं कि-जल तीन दण्ड, उकालना चाहिए । अर्थात् तीन उकालेका पानी होना चाहिये इस प्रकार उपदेश देकर अपकाय का समारम्भ करते हुए न केवल अपकाय की हिंसा करते हैं अपि तु जल में रहने वाले द्वीन्द्रिय आदि की भी विराधना करत हैं ।

धोवण. (१६) नारीअलनुं धोवण. (१७) केरनुं धोवण. (१८) ओरानुं धोवण. (१९) आंअणानुं धोवण. (२०) आंअलीनुं धोवण. (२१) अग्निथी उकालेनुं गरम जल.

જે શાક્ય આદિ સચિત્તઅપકાયનું સેવન કરે છે. તેમાંથી શાક્ય આદિ પોતાના ઉપભોગ માટે 'જલ સચિત્ત નથી' એ પ્રકારની પ્રરૂપણા કરે છે. દંડી જલને સચિત્ત માનીને પણ મોહ અને પ્રમાદ વશ થઈ પોતાના માટે પાણી ગરમ કરાવે છે, અને બીજાને પાણી ગરમ કરવાનો ઉપદેશ આપે છે કે-જલ ત્રણ દંડ-ઉકાળા આપીને ઉકાળવું જોઈએ. આ પ્રમાણે ઉપદેશ આપીને અપકાયનો સમારંભ કરતા થકા કેવળ અપકાયનીજ હિંસા કરે છે, એટલુંજ નહીં પરંતુ જલમાં રહેવાવાળા દ્વીન્દ્રિય આદિની પણ વિરાધના કરે છે.



દૃશ્યન્તે ચ તીર્થાદિષુ અધઃકર્માદિદોષદૂષિતભક્તપાનાદિગ્રહણેનાપ્કાયાદિમહાસમારંભં  
કુર્વાણાઃ । ન ચ તે સ્વાત્માનં ભવસાગરાત્તારયિતું સમર્થા ભવન્તિ, ઉક્તશ્ચ-ભગવતો-  
ત્તરાધ્યયનસૂત્રે-(અધ્ય. ૨૦)

“ચિરંપિ સે મુંડરૂઈ ભવિત્તા, અથિરવ્વણ તવનિયમેહિં મટ્ટે ।

ચિરંપિ અપ્પાણ કિલેસસિત્તા, ન પારણ હોઈ હુ સંપરાણ ” ॥ સૂ. ૧૧ ॥

ન કેવલં તે હિંસાદોષભાગિનઃ, અપિ ત્વન્યદોષભાગિનોઽપિ સન્તિ, તદેવ  
ભગવાનાહ-‘અદુવા.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

અદુવા અદિન્નાદાણં ॥ સૂ. ૧૨ ॥

છાયા—

અથવા અદત્તાદાનમ્ ॥ સૂ. ૧૨ ॥

તીર્થ આદિ પર આધાકર્મ આદિ દોષો સે દૂષિત આહારપાની ગ્રહણકરકે અપ્કાયકા મહારંભ  
કરતે હુણ દેલે જાતે હૈં । વે અપને આત્મા કો ભવસાગર સે તારને મેં સમર્થ નહીં હૈં । ભગવાન્  
ને ઉત્તરાધ્યયનસૂત્ર (અધ્યયન ૨૦) મેં કહા હૈં—

“જો પુરુષ અસ્થિર વ્રત વાલા હૈં ઓર તપ તથા નિયમો સે બ્રહ્મ હૈં વહ ચિરકાલ તક  
અપને આત્મા કો ક્લેશ પહુંચાને પર મી સંપરાય (સંસાર સે) પાર નહીં હો ચકતા ”  
(ઉત્ત. અ. ૨૦) ॥ સૂ. ૧૧ ॥

સચિત્ત જલ કા આરંભ કરને વાલે અકેલી હિંસા કે હી ભાગી નહીં હૈં, કિન્તુ અન્ય  
દોષો કે ભાગી મી હૈં । યહી વાત ભગવાન્ કહતે હૈં:—‘અદુવા.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—અથવા અદત્તાદાન કા દોષ લગતા હૈ ॥ મૂ. ૧૨ ॥

તીર્થ આદિ પર આધાકર્મ આદિ દોષોથી દૂષિત આહાર-પાણી ગ્રહણ કરીને  
અપ્કાયનો મહારંભ કરતા હોય એમ જોવામાં આવે છે. તે પોતાના આત્માને ભવસાગરથી  
તારવામાં સમર્થ નથી. ભગવાને-ઉત્તરાધ્યયન સૂત્રમાં (અધ્યયન ૨૦માં) કહ્યું છે કે:-

“જો પુરુષ અસ્થિર વ્રતવાળા છે અને તપ તથા નિયમોથી બ્રહ્મ છે, તે લાંબા  
સમય સુધી પોતાના આત્માને કલેશ પહોંચાડવા ઉપરાંત પણ સંસારથી પાર થઈ  
શકતા નથી.” (ઉત્તરા. અ. ૨૦) (સૂ. ૧૧)

સચિત્ત જલનો આરંભ કરવાવાળા એકલી હિંસાનાજ ભાગી નથી પરન્તુ અન્ય  
દોષોના પણ ભાગી છે. તે વાત ભગવાન કહે છે-‘અદુવા.’ ઇત્યાદિ.

સુદાર્થ—અથવા અદત્તાદાનનો દોષ લાગે છે. (સૂ. ૧૨)

टीका—

‘अथवा’-शब्दः कथितस्यार्थस्य प्रकारान्तरेण स्पष्टीकरणे वर्तते । येऽप्काया-  
रम्भिणस्तेषामदत्तादानदोषापत्तिरपि । यतोऽप्कायजीवैस्तेभ्यो नार्पितानि स्वशरीराण्यु-  
पमर्दयितुं, ते च तानि वाङ्मनःकाययोगैः कृतकारितानुमोदितैरुपमर्दयन्ति, तत-  
श्चाप्कायारम्भिणामदत्तादानदोषोऽप्यनिवार्यो भवति, तस्मान्मुमुक्षुभिः सर्वथाऽप्काया-  
रम्भो वर्जनीयः, इति भगवता साक्षात्प्रोक्तम् ॥ सू० १२ ॥

सचित्तजलोपभोगिनो हि पृष्ठाः सन्तो यद् वदन्ति तदाह—

यद्वा-अप्कायारम्भं स्वयं परिहर्तुमक्षमाः शाक्यादयो यद्वदन्ति तदाह—  
‘कप्पइ णे.’ इत्यादि ।

टीकार्थ—पहले कही हुई बात का दूसरी तरह से स्पष्टीकरण करने के लिये  
‘अथवा’ शब्द है । जो अप्काय का आरंभ करते हैं उन्हें अदत्तादान का दोष भी लगता  
है । कारण यह है कि—अप्काय के जीवों ने अपने शरीर उपमर्दन करने के लिए उन्हें सौंपे  
नहीं हैं, फिर भी वे लोग मन, वचन, काय से और कृत, कारित, अनुमोदना से उनका  
उपमर्दन करते हैं. अतः अप्काय का आरंभ करने वालों को अदत्तादान का दोष अनिवार्य  
है । अतः मुमुक्षु पुरुषों को अप्काय का आरंभ त्यागना चाहिए । ऐसा भगवान् ने साक्षात्  
कहा है ॥ सू० १२ ॥

सचित्त जलका उपयोग करनेवाले पूछनेपर जो उत्तर देते हैं सो कहते हैं—  
अथवा जो लोग अप्काय के आरंभ को त्यागने में असमर्थ हैं उनका कथन बतलाते हैं—  
‘कप्पइ णे.’ इत्यादि ।

टीकार्थ—प्रथम कड़ेवी बातने भील रीतथी स्पष्टीकरण करवाना अर्थमां  
‘अथवा’ शब्द छे. जे अप्कायनो आरंभ करे छे, तेने अदत्तादाननो दोष पणु लागे  
छे, कारण अछे छे जे-अप्कायना लोकोअछे पोतानुं शरीर उपमर्दन करवा भाटे तेने सोअछुं  
नथी. तो पणु ते लोको मन, वचन अने कायाथी अने करवुं, कराववुं तथा अनुमोदवुं  
ते वडे करी उपमर्दन करे छे, ते कारणथी अप्कायनो आरंभ करवावाणाने अदत्ता-  
दाननो दोष पणु अनिवार्य (टाणी न शक्य तेवो) छे. अछे भाटे मुमुक्षु पुरुषोअछे  
अप्कायनो आरंभ त्यागी हेवो जेधअछे. अछे प्रमाणे भगवाने साक्षात् कछुं छे. (सू. १२)

सचित्त जलनो उपयोग करवावाणाने पूछतां जे उत्तर आपे छे-ते कड़े छे,  
अथवा जे लोको अप्कायना आरंभने त्यजवामांअसमर्थ छे. तेमनुं कड़ेवुं-कथन  
भतावे छे-‘कप्पइ णे.’ इत्यादि.

મૂલમ્—

કપ્પઈ જે કપ્પઈ જે પાઉં અદુવા વિભૂસાણ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

છાયા—

કલ્પતેઽસ્માકં કલ્પતેઽસ્માકં પાતું, અથવા વિભૂષાયૈ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકા—

‘કલ્પતેઽસ્માક’—મિતિ । ન વયં સ્વેચ્છયોદકમુપમર્દયામઃ કિન્ત્વસ્માકમાગમે નિર્જીવત્વેન પ્રતિબોધિતત્વાદનિષિદ્ધત્વાચ્ચ પાતું કલ્પતે । ‘કલ્પતેઽસ્માકમ્’ इत्यस्य द्विरुच्चारणेन पुनःपुनरनेकप्रयोजनवशाद् बहुविध उपभोगोऽस्माकं कल्पते, इति बोध्यते । तथाहि—

અસ્મસ્નાયિનો વદન્તિ—અસ્માકં પાતુમેવ કલ્પતે ન તુ સ્નાતુમિતિ ।

શાક્યાદયસ્ત્વેવં જલ્પન્તિ—સ્નાન—પાનાદિ સર્વ કલ્પતે જલેનેતિ ।

મૂલાર્થ—હમેં કલ્પતા હૈ, હમેં કલ્પતા હૈ, (જલ) પીને ઓર વિભૂષા કરને—હાથ પૈર આદિ ધોને, નહાને—કે લિણ ॥ સૂ. ૧૩ ॥

ટીકાર્થ—હમ સ્વેચ્છા સે જલ કી વિરાધના નહીં કરતે, વરન હમારે આગમ મેં જલ કો અચિત્ત બતલાયા હૈ ઓર પીને કા નિષેધ નહીં કિયા હૈ, અતઃ હમેં પીના કલ્પતા હૈ । ‘હમેં કલ્પતા હૈ’ यह दो बार कहने से यह सूचित किया गया है कि—प्रयोजन के वश नाना प्रकार का उपभोग करना हमें कल्पता है । जैसे—

અસ્મ સે સ્નાનકરનેવાલે કહતે હૈ—હમેં પીના હી કલ્પતા હૈ, સ્નાનકરના નહીં કલ્પતા ।

શાક્ય આદિ કા કહના હૈ કિ—હમેં પીના ઓર સ્નાનકરના—સમી કુછ કલ્પતા હૈ !

મૂલાર્થ—અમને કલ્પે છે, અમને કલ્પે છે, (જલ) પીવાને અને વિભૂષા—હાથ પગ આદિ ધોવા, નહાવા માટે (સૂ. ૧૩)

ટીકાર્થ—અમે સ્વેચ્છાથી જલની વિરાધના કરતા નથી. પરંતુ અમારા આગ-મમાં જલને અચિત્ત બતાવ્યું છે; અને પીવાનો નિષેધ કર્યો નથી. તેથી અમારે પીવું કલ્પે છે. ‘અમારે કલ્પે છે.’ આ બે વાર કહેવાથી એ સૂચિત કરવામાં આવ્યું છે કે:—પ્રયોજનવશ નાના પ્રકારનો ઉપભોગ કરવાનું અમને કલ્પે છે. જેમકે—

અસ્મથી સ્નાનકરવાવાળા કહે છે—અમારે પીવું કલ્પે છે, સ્નાન કરવું કલ્પતું નથી.

શાક્ય આદિનું કહેવું છે કે—અમારે પીવું અને સ્નાન, સર્વે કાંઈ કલ્પે છે.



તે પુનરેવં વદન્તિ-અથવા વિભૂષાયૈ=શોમાર્થ કલ્પતેઽસ્માકમુદકમિતિ । વિભૂષા નામ-કરચરણમુખાદિપ્રક્ષાલનાદિકા, વસ્ત્રાદિપ્રક્ષાલનરૂપા વા, તદર્થ જલેન વ્યવહર-તામસ્માકં નાસ્તિ કોઽપિ દોષલ્લેશ ઇતિ ॥ સૂ૦ ૧૩ ॥

પુનઃ કિં કુર્વન્તિ તે ? ઇત્યાહ-‘પુઢો સત્થેહિં,’ ઇત્યાદિ

મૂલમ્--

પુઢો સત્થેહિં વિઠુઢંતિ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

છાયા--

પૃથક્ શસ્ત્રૈર્વ્યાવર્તયન્તિ ( વિકુઢંતિ વા ) ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

॥ ટીકા ॥

આત્માનમનગારં પ્રવદમાના શાક્યાદયઃ પૃથક્=ભિન્નભિન્નસ્વરૂપૈઃ શસ્ત્રૈઃ=સ્નાનપાનધાવનોત્સેચનાદિભિરપ્કાયજીવાન્ વ્યાવર્તયન્તિ=પ્રાણેભ્યો વ્યપરોપયન્તિ । યદ્વા વિકુઢન્તી ’-તિચ્છાયા તેન વિકુઢન્તિ=વિશેષેણ છિન્દન્તિ, સર્વથા ભાવેન વિરાધયન્તીત્યર્થઃ ॥ સૂ૦ ૧૪ ॥

उनका यह भी कहना है कि-विभूषा-शोभा के लिए भी जल का उपभोग हमें कल्पता है । हाथ, पैर, मुख, आदि धोना और वस्त्र आदि धोना विभूषा है । इस के लिए जलका व्यवहारकरने में हमें जरा भी दोष नहीं लगता ॥ सू० १३ ॥

वे और क्या करते हैं, सो करते हैं:-‘पुढो.’ इत्यादि ।

मूलार्थ--भिन्न-भिन्न शस्त्रों से जलकाय की हिंसा करते हैं ॥ सू० १४ ॥

टीकार्थ--अपन को अनगार कहते हुए शाक्य वगैरह भिन्न-भिन्न प्रकार के शस्त्रों से स्नान, पान, धोना, सींचना आदि कार्य कर के अप्काय की हिंसा करते हैं । अथवा पूर्णरूप से उस की विराधना करते हैं ॥ सू० १४ ॥

તેમનું એ પણ કહેવું છે કે વિભૂષા-શોભા માટે પણ જલનો ઉપભોગ અમારે કલ્પે છે. હાથ પગ, મુખ આદિને ધોવાં અને વસ્ત્ર આદિ ધોવાં તે વિભૂષા કહેવાય છે. એ માટે જલનો વ્યવહાર કરવામાં અમને જરાપણ દોષ લાગતો નથી. (સૂ. ૧૩) તે બીજું શું કરે છે, તે કહે છે ‘પુઢો.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ--બહુ બહુ શસ્ત્રોથી જલકાયની હિંસા કરે છે. (સૂ. ૧૪)

ટીકાર્થ--પોતાને અણગાર કહેનારા શાક્ય વગેરે ભિન્ન-ભિન્ન પ્રકારના શસ્ત્રોથી સ્નાન, પાન, ધોવું, સીંચવું આદિ કાર્ય કરીને અપ્કાયની હિંસા કરે છે. અથવા પૂર્ણ રૂપથી તેની વિરાધના કરે છે. (સૂ. ૧૪)

साम्प्रतमेषां युक्त्यागमयोर्निस्सारत्वं प्रदर्शयन्नाह—‘एत्थवि.’ इत्यादि ।

॥ मूलम् ॥

एत्थ वि तेसिं नो निकरणाए ॥ सू० १५ ॥

॥ छाया ॥

अत्रापि तेषां नो निकरणाए ॥ सू० १५ ॥

॥ टीका ॥

तेषां शक्यादीनां युक्तयः अत्र=अस्मिन्नपकायारम्भविषये नो=नैव निकरणायै=निश्चयकरणाय समर्थाः सन्ति । अपिशब्देन तेषामागमोऽपि न निश्चेतुं समर्थो भवति । आगमत्वपि तत्र न संभवति, अनास्रप्रणीतत्वात्, हिंसाविधायकत्वाच्च । यतो हि स एवागमशब्दवाच्यः यः खलु वीतरागप्रणीतः सर्वप्राणिहितकरो भवति ॥ सू० १५ ॥

उन का कथन युक्ति और आगम से सारहीन है, यह बतलाते हुए कहते हैं—‘एत्थवि.’ इत्यादि ।

मूलार्थ—उन लोगों की युक्तियाँ अपकाय के विषय में निश्चय नहीं कर सकती ॥ सू० १५ ॥

टीकार्थ—उन शाक्य आदि की युक्तियाँ अपकाय के आरंभ के विषय में, निश्चय करने में समर्थ नहीं हैं । ‘वि’ अपि शब्द से यह सूचित किया है कि—उनका आगम भी निश्चय करने में समर्थ नहीं है । उनका आगम, आगम भी नहीं है, क्योंकि वह आसपुरुषद्वारा प्रणीत नहीं है और हिंसा का विधान करनेवाला है । आगम वही कहला सकता है जो वीतरागद्वारा प्रणीत हो और प्राणीमात्र का हितकारी हो ॥ सू० १५ ॥

तेमनुं कथन—कडेबुं—युक्ति अने आगमथी सारहीन छे. ओ अतावीने कडे छे—‘एत्थवि,’ इत्यादि.

मुद्गार्थ—ते बोडोनी युक्तिओ अपकायना विषयमां निश्चय करी शकती नथी. (सू. १५)

टीकार्थ—ते शाक्य आदिनी युक्तिओ अपकायना आरंभना विषयमां निश्चय करवामां समर्थ नथी. ‘वि’ अपि शब्दथी ओ सूचित करुं छे के तेमनुं आगम पणु निश्चय करवामां समर्थ नथी. तेमनुं आगम ते आगम पणु नथी. केमके ते आप्त पुद्गो द्वारा प्रणीत नथी. अने हिंसानुं निधान करवावाणां छे. आगम ते कडेवाय छे के ओ वीतरागद्वारा प्रणीत होय अने प्राणीमात्रनुं हितकारी होय. (सू. १५)

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧૩. સૂ. ૧૫-૧૬ અપ્કયોપભોગવાદિમતસ્વળ્ડનમ્ ૫૩૫

તદેવમપાં જીવત્વં પ્રતિબોધ્ય અસ્ય ઉદ્દેશસ્ય સ્કલાર્થમુપસંહરન્નાહ-‘ઇત્ય સત્થં.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

ઇત્ય સત્થં સમારંભમાણસ્ય ઇચ્છેતે આરંભા અપરિણાયા ભવંતિ । ઇત્ય સત્થં અસમારંભમાણસસ ઇચ્છેતે આરંભા પરિણાયા ભવંતિ । તં પરિણાય મેઘાવી ણેવ સયં ઉદયસત્થં સમારંભેજ્જા, ણેવન્નેહિં ઉદયસત્થં સમારંભાવેજ્જા, ઉદયસત્થં સમારંભતેઽવિ અણ્ણે ન સમણુજાણેજ્જા । જસ્સેતે ઉદયસત્થસમારંભા પરિણાયા ભવંતિ સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મે-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ. ૧૬ ॥

તદ્વિઓ ઉદ્દેશો સમત્તો ॥ ૩ ॥

છાયા—

અત્ર શસ્ત્રં સમારંભમાણસ્ય ઇત્યેતે આરંભા અપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ । અત્ર શસ્ત્રમસમારંભમાણસ્ય ઇત્યેતે આરંભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ । તત્ પરિજ્ઞાય મેઘાવી નૈવ સ્વયમુદકશસ્ત્રં સમારંભેત, નૈવાન્યૈરુદકશસ્ત્રં સમારંભયેત, ઉદકશસ્ત્રં

ઇસ પ્રકાર જલ કો જીવ વતલાકર ઇસ ઉદ્દેશક કે સમસ્ત કથન કા ઉપસંહાર કરતે હૈ—‘ઇત્ય સત્થં.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—અપ્કાય મેં શસ્ત્ર કા આરંભ કરને વાલે કો યે આરંભ જ્ઞાત નહીં હોતે । અપ્કાય મેં શસ્ત્ર કા આરંભ ન કરને વાલે કો યે આરંભ જ્ઞાત હોતે હૈ । ઉન્હેં જ્ઞાનકર બુદ્ધિમાન્ પુરુષ સ્વયં જલ કા આરંભ ન કરે, દૂસરોં સે આરંભ ન કરાવે ઔર આરંભ કરને વાલે દૂસરે કો મળા ન જાને । જો જલકાય કે ઇસ આરંભ કો જ્ઞાનતા હૈ વહી પરિજ્ઞાતકર્મા મુનિ હૈ । મગવાન્ સે મૈને જો સુના વહ કહતા હૂં ॥ સૂ. ૧૬ ॥

આ પ્રમાણે જલને જીવ બતાવીને આ ઉદ્દેશકનાં સમસ્ત કથનનો ઉપસંહાર કરે છે—‘ઇત્ય.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—અપ્કાયમાં શસ્ત્રના આરંભ કરવાવાળાને આરંભ જાણવામાં આવતા નથી. અપ્કાયમાં શસ્ત્રના આરંભ નહિ કરવાવાળાને એ આરંભ જાણવામાં આવે છે. તેને જાણી કરીને બુદ્ધિમાન પુરુષ સ્વયં જલનો આરંભ કરે નહિ. બીજા પાસે આરંભ કરાવે નહિ. અને આરંભ કરવાવાળા બીજાને ભલો જાણે નહિ. જે જલકાયનો આ પ્રમાણે આરંભ જાણે છે. તે પરિજ્ઞાતકર્મા મુનિ છે, મગવાન પાસેથી જે સાંભળ્યું તે કહું છું. (સૂ. ૧૬)



સમારભમાણાનન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્ । યસ્યૈતે ઉદકશસ્ત્રસમારમ્ભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ સ સ્વલ્લ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૧૬ ॥

। તૃતીય ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૩ ॥

ટીકા--

અત્ર=અસ્મિન્નપ્કાયે શસ્ત્રં=દ્રવ્યભાવરૂપં સમારભમાણસ્ય=વ્યાપારયતઃ  
 ઇત્યેતે આરમ્ભાઃ બન્ધહેતુત્વેનાપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ । અત્ર=અસ્મિન્નપ્કાયે શસ્ત્રં=દ્રવ્ય-  
 ભાવરૂપમ્ અસમારભમાણસ્ય=અવ્યાપારયતઃ ઇત્યેતે આરમ્ભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ ।  
 જ્ઞપરિજ્ઞયા પરિજ્ઞાતાઃ, તથા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિત્યક્તા ભવન્તીત્યર્થઃ ।  
 જ્ઞપરિજ્ઞાપૂર્વિકા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા યથા સમુદ્ભવતિ દર્શયતિ-‘તત્ પરિજ્ઞાયે’-  
 ત્યાદિ । તદ્=ઉદકારમ્ભણં પરિજ્ઞાય=‘બન્ધાય ભવતી’-ત્યેવમવબુધ્ય મેધાવી=  
 સાધુમર્યાદાયાં સાવધાનઃ, નૈવ સ્વયમુદકશસ્ત્રં સમારભેત, નૈવાન્યૈરુદકશસ્ત્રં સમારમ્ભ-

ટીકાર્થ--હસ અપ્કાય કે વિષય મેં દ્રવ્ય ઔર ભાવ રૂપ શસ્ત્ર કા વ્યાપાર કરને વાલા અપને વ્યપારોં કો કર્મબંધ કા કારણ નહીં જાનતા । કો અપ્કાય કે વિષય મેં દ્રવ્ય ઔર ભાવ રૂપ શસ્ત્ર કા ઉપયોગ નહીં કરતે, ઉન્હેં હસ વ્યાપારોં કા જ્ઞાન હોતા હૈ । અર્થાત્ વે જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ઉનકા ત્યાગ કર દેતે હૈ । જ્ઞપરિજ્ઞા કે બાદ પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કિસ પ્રકાર ઉત્પન્ન હોતી હૈ સોં કહતે હૈ--જલ કે આરંભ કો કર્મબંધ કા કારણ જાનકર સાધુ કી મર્યાદા મેં રહને વાલે બુદ્ધિમાન્ સ્વયં જલકાય કા આરંભ નહીં કરે, દૂસરોં સે આરંભ નહીં કરાવે ઔર જલકા આરંભ કરને

ટીકાર્થ--આ અપ્કાયના વિષયમાં દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રનો વ્યાપાર કરવા-  
 વાળા પોતાના વ્યાપારોને કર્મબંધનું કારણ જાણતા નથી. જે અપ્કાયના વિષયમાં  
 દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ શસ્ત્રનો ઉપયોગ કરતા નથી, તેને એ વ્યાપારોનું જ્ઞાન હોય  
 છે. અર્થાત્ તે જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરી દે છે.

જ્ઞપરિજ્ઞા પછી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કેવા પ્રકારે ઉત્પન્ન થાય છે, તે કહે છે--જલના  
 આરંભને કર્મબંધનું કારણ જાણી કરીને સાધુની મર્યાદામાં રહેવાવાળા બુદ્ધિમાન સ્વયં  
 જલકાયનો આરંભ કરે નહિ, બીજા પાસે કરાવે નહિ, અને જલનો આરંભ કરવાવાળાને

येत्, उदकशस्त्रं समारभमाणान् अन्यान् अपि न समनुजानीयात् नानुमोदये-  
दित्यर्थः । यस्यैते उदकशस्त्रसमारम्भाः परिज्ञाता भवन्ति स एव परिज्ञातकर्मा  
मुनिर्भवति, इति ब्रवीमि, एतद्व्याख्यानं प्राग्वद् बोध्यम् ॥ सू० १६ ॥

इत्याचाराङ्गसूत्रस्याऽऽचारचिन्तामणिटीकायां प्रथमाध्ययने

तृतीयोद्देशः समाप्तः ॥ १।३ ॥

वाले दूसरों का अनुमोदन नहीं करे । जो उदकशस्त्र के आरंभ को जानता है वह  
परिज्ञातकर्मा मुनि है । 'इति वेमि' का अर्थ पहले की तरह जानना चाहिए ॥ सू० १६ ॥

इति श्री आचाराङ्ग सूत्र की 'आचारचिन्तामणि' टीका के

हिन्दी अनुवाद में प्रथम अध्ययनका

तीसरा उद्देशक समाप्त ॥ १-३ ॥

अनुमोदन आपे नहि. जे उदकशस्त्रना आरंभने जाणु छे, ते परिज्ञातकर्मा मुनि छे.  
'इति वेमि' ने। अर्थ पहिलेनां प्रमाणे जाणुवे। जे छे. (सू० १६)

इति श्री आचारङ्ग सूत्रनी 'आचारचिन्तामणि' टीकाना

गुजराती अनुवादमां प्रथम अध्ययनने।

त्रीजे उद्देशक समाप्त. ॥ १।३ ॥



અથ ચતુર્થોદેશઃ ।

અનન્તરતૃતીયોદેશકે મુનિત્વપ્રાપ્તયેઽપ્કાયસ્ય સ્વરૂપં નિર્ણીતં, તદર્થ-  
મેવાપ્કાયશસ્ત્રસમારમ્ભે જ્ઞ-પ્રત્યાખ્યાન-ખેદાદ્ દ્વિવિધા પરિજ્ઞાઽપિ પ્રવેદિતા ।  
અથૈતદર્થમેવ ચ ક્રમમાપ્તમગ્નિકાયં પ્રતિવોધયિતુકામશ્ચતુર્થમુદેશકં પ્રારમ્ભતે ।  
તત્રાદૌ 'તેજસ્કાયા જીવાઃ સન્તી'તિ નિર્ધારયિતુમાદ્યં સૂત્રમાહ-'સે વેમિ'  
ઇત્યાદિ ।

મૂલમ—

સે વેમિ નેવ સયં લોયં અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા, નેવ અત્તાણં અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા, જે  
લોયં અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા, સે અત્તાણં અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા । જે અત્તાણં અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા, સે લોયં  
અબ્માઙ્કલ્લજ્ઞા ॥ સૂ. ૧ ॥

ચૌથા ઉદેશક—

પિછલે તીસરે ઉદેશક મેં સાધુતા કી પ્રાપ્તિ કે લિખે અપ્કાય કે સ્વરૂપ કા  
નિર્ણય ક્રિયા, ઓર અપ્કાયશસ્ત્ર કા ઉપયોગ કરને મેં જ્ઞપરિજ્ઞા તથા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા ખી  
વતલાઈ । અવ ડસી સાધુતા કી પ્રાપ્તિ કે લિખે ક્રમપ્રાપ્ત અગ્નિકાય કા સ્વરૂપ સમજાતે હુખ  
ચૌથા ઉદેશક આરંભ કરતે હૈં । સર્વપ્રથમ તેજસ્કાય કે જીવોં કા અસ્તિત્વ નિશ્ચિત કરને  
કે લિખે સૂત્ર કહતે હૈં—'સે વેમિ' ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ભગવાન્ કે સમીપ જૈસા સુના હૈ વૈસા કહતા હ । સ્વયં અગ્નિકાયરૂપ  
લોક કા અપલાપ ન કરે । ન આત્માકા અપલાપ કરે । જો અગ્નિકાય કા અપલાપ કરતા હૈ  
વહ આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ, જો આત્મા કા અપલાપ કરતા હૈ વહ અગ્નિકાય કા  
અપલાપ કરતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ચૌથા ઉદેશક—

પાછળના ત્રીજા ઉદેશકમાં સાધુતાની પ્રાપ્તિ માટે અપ્કાયનો નિર્ણય કર્યો  
અને અપ્કાય શસ્ત્રનો ઉપયોગ કરવામાં જ્ઞપરિજ્ઞા તથા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા પણ અતાવી.  
હવે તે સાધુતાની પ્રાપ્તિ માટે ક્રમપ્રાપ્ત અગ્નિકાયનું સ્વરૂપ સમજાવતા થકા—ચૌથા  
ઉદેશકનો આરંભ કરે છે. સર્વ પ્રથમ તેજસ્કાયના જીવોનું અસ્તિત્વ નિશ્ચય કરવા  
માટે સૂત્ર કહે છે—'સે વેમિ' ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાનની સમીપ જેવું સાંભળ્યું છે, તેવું કહું છું. સ્વયં અગ્નિકાય  
રૂપ હોકનો અપલાપ કરે નહિ; અને આત્માનો અપલાપ પણ કરે નહિ. જે અગ્નિ-  
કાયનો અપલાપ કરે છે, તે આત્માનો અપલાપ કરે છે. જે આત્માનો અપલાપ કરે  
છે તે અગ્નિકાયનો અપલાપ કરે છે, (સૂ. ૧)



छाया—

स ब्रवीमि, नैव स्वयं लोकमभ्याख्यायात्, नैवात्मानमभ्याख्यायात् । यो लोकमभ्याख्याति, स आत्मानमभ्याख्याति । य आत्मानमभ्याख्याति, स लोकमभ्याख्याति ॥ सू० १ ॥

टीका—

येन मया नित्यं गुरुकुलनिवासिना भगवतः समीपे षड्जीवनिकाय-स्वरूपं निरवशेषविशेषपुरस्सरं श्रवणमननादिना परिज्ञाविषयीकृत्य निर्णीतं, सोऽहं ब्रवीमि=श्रुतं यथा भगवन्मुखात्, तथा कथयामीत्यर्थः ।

लोकम्=अग्निकायलोकम्, प्रकरणसम्बन्धादिह लोकशब्देनाग्निकाय-लोकस्य ग्रहणम् । स्वयम्=आत्मना, नैव अभ्याख्यायात्=नैवापहनुवीत् । 'अग्निकाय-जीवा न सन्ती'त्येवमग्निकायजीवस्यापलापं नैव कुर्यादित्यर्थः । स्वयमित्यने-नाग्निकायजीवापलपनकर्मणा स्वमात्मानं नैव बध्नीयादित्यर्थो बोध्यते ।

टीकार्थ—गुरुकुल में निवास करते हुए मैंने भगवान के मुख से षट्काय का समस्त विशेषों से युक्त जो स्वरूप श्रवण मनन आदि से परिज्ञा का विषय कर के निर्णीत किया है, उसे मैं कहता हूँ । अर्थात् जैसा भगवान् के मुखारविन्द से सुना है वैसा ही कहता हूँ ।

अग्निकाय का प्रकरण होने के कारण यहाँ 'लोक' का अर्थ अग्निकायरूप लोक समझना चाहिए । इस अग्निकाय का स्वयं अपलाप न करे अर्थात् यह न कहे कि—अग्निकाय के जीव नहीं हैं । स्वयं शब्द से यह अर्थ प्रकट होता है कि अग्निकाय के अपलापरूप कर्म से अपने आप को बद्ध न करे ।

टीकार्थ—गुरुकुलમાં નિવાસ કરીને મેં ભગવાનના મુખથી ષટ્કાયના સમસ્ત વિશેષોથી યુક્ત જે સ્વરૂપને શ્રવણ-મનન આદિથી પરિજ્ઞાનો વિષય કરીને નિર્ણીત કર્યું તે હું કહું છું. અર્થાત્ જે પ્રમાણે ભગવાનના મુખારવિન્દથી સાંભળ્યું છે. તેવું હું કહું છું.

અગ્નિકાયનું પ્રકરણ હોવાના કારણે અહિં 'લોક' નો અર્થ અગ્નિકાયરૂપ લોક સમજવો જોઈએ. આ અગ્નિકાયનો સ્વયં અપલાપ કરે નહિ. અર્થાત્ એ પ્રમાણે કહે નહિ કે—અગ્નિકાયના જીવ નથી 'સ્વયં' શબ્દથી એ અર્થ પ્રગટ થાય છે કે અગ્નિકાયના અપલાપરૂપ કર્મથી પોતે પોતાને બદ્ધ કરે નહિ.

અર્થ ભાવઃ—કૃતકારિતાનુમોદિતભેદેન, મનોવાક્કાયભેદેન, તથાઽતીતાનાગતવર્તમાન-  
ભેદેન ચ પ્રત્યેકક્રિયાયાઃ સપ્તવિંશતિભેદા ભવન્તિ; એવમસ્યા અપિ તેજસ્કાય-  
જીવાભ્યાખ્યાનરૂપક્રિયાયા એકસ્યા એવ સપ્તવિંશતિભેદા ભવિતુમર્હન્તિ ।  
તત્ર કસ્યાચ્ચિદપિ ક્રિયાયાં સ્વાત્માનં ન નિયુઙ્ગ્યાદિતિ । ઉપપદ્યતેઽપ્યયમર્થઃ,  
અન્યથા હિ સ્વયંકૃતસ્યૈવાભ્યાખ્યાનસ્ય પ્રતિષેધે કારિતાનુમોદિતરૂપાણાં  
તેજસ્કાયજીવાભ્યાખ્યાનરૂપક્રિયાણાં પ્રતિષેધાભાવઃ પ્રસજ્યેત । તતશ્ચ તાદૃશાભ્યા-  
ખ્યાનં પાપાય ન સ્યાત્ । તથાચોત્સૂત્રપ્રરૂપણાપત્તિઃ ।

તાત્પર્યં યહ હૈ—પ્રત્યેક કે કૃત, કારિત, અનુમોદના, મન, વચન કાય,  
ઔર અતીત, અનાગત, વર્તમાન કે ભેદ સે (ઇનકા પરસ્પર ગુણાકાર કરને સે) સત્તાઈસ  
ભેદ હોતે હૈં । હીસીપ્રકાર હીસ તેજસ્કાય કા અપલાપરૂપ ક્રિયા કે મી સત્તાઈસ ભેદ હો  
સકતે હૈં । ઇન ભેદોં સે કિસી મી ભેદ મેં આત્મા કો જોડના ન ચાહિયે । અગર ઈસા અર્થ  
ન લગાયા જાતા તો યહ મી સમજ લિયા જાતા કિ—અગ્નિકાય કા સ્વયં અપલાપ ન કરે,  
મગર અપલાપ કરાને ઔર અનુમોદન કરને કી ક્રિયાઓં કા નિષેધ નહીં હૈ । ઈસા  
અર્થ સંગત નહીં હૈ, ક્યોં કિ ઈસા અર્થ કરને સે કેવલ સ્વયંકૃત અપલાપકા હી  
પ્રતિષેધ હોગા, કિન્તુ કારિત ઔર અનુમોદિત અપલાપકા પ્રતિષેધ નહીં હોગા ઔર હીસ  
પ્રકાર કા અપલાપ પાપ કા કારણ ન હોગા । ફિર તો સૂત્ર કે વિરુદ્ધ પ્રરૂપણા કા  
દોષ આયગા ।

તાત્પર્યં એ છે—પ્રત્યેક ક્રિયાના કરવું-કરાવવું અને અનુમોદના, મન, વચન,  
કાયા અને ભૂતકાલ, ભવિષ્યકાલ તથા વર્તમાન કાલના ભેદથી (એનો પરસ્પર  
ગુણાકાર કરવાથી) સત્તાવીસ ભેદ થાય છે. એ પ્રમાણે આ તેજસ્કાયના અપલાપરૂપ  
ક્રિયાના પણ સત્તાવીસ ભેદ થઈ શકે છે. એ ભેદોમાંથી કેઈ પણ ભેદમાં આત્માને  
જોડવો જોઈએ નહિ; પરંતુ એ પ્રમાણે અર્થ કરવામાં ન આવે તો એ પણ સમજ  
લેવામાં આવત કે, અગ્નિકાયનો સ્વયં અપલાપ કરે નહિ. પરંતુ અપલાપ કરાવવાની  
અને અનુમોદન કરવાની ક્રિયાઓનો નિષેધ નથી. આ પ્રકારનો અર્થ સંગત નથી,  
કેમકે—આવો અર્થ કરવાથી કેવળ સ્વયંકૃત અપલાપનો જ નિષેધ થશે. કિન્તુ કારિત  
અને અનુમોદિત અપલાપનો નિષેધ થશે નહિ, અને એ પ્રકારનો અપલાપ પાપનું  
કારણ ન થાય, પછી તો સૂત્રના વિરુદ્ધ પ્રરૂપણાનો દોષ આવશે.

लक्षणद्वारम्—

ननु तेजस्कायजीवाः सन्तीत्यत्र किं मानम् ? उच्यते—अङ्गारादयो जीवशरीराणि, छेद्यत्वाद्, दृश्यत्वाद्, करचरणादिसमुदायवत् ।

अङ्गारादीनां प्रकाशपरिणामः आत्मप्रयोगाविर्भूतः शरीरस्थत्वात्, खद्योतदेहपरिणामवत् । यथा—रजन्यादौ विशिष्टकाले प्राणिविशेषस्य खद्योतस्य देहपरिणामो जीवप्रयोगविशेषाद् भवति, एवमङ्गारादीनामपि प्रकाशपरिणामः ।

यद्वा—अङ्गारादीनामूष्मा आत्मसंप्रयोगपूर्वकः, शरीरस्थत्वात्, ज्वरोष्मवत् ।

लक्षणद्वार—

शङ्का—तेजस्काय के जीवों के अस्तित्व में क्या प्रमाण है ?

समाधान—अंगार आदि, जीव के शरीर हैं, क्यों कि वह छेद्य हैं, मेद्य हैं और दृश्य हैं, जैसे हाथ-पैर आदि का समूह ।

अथवा—अंगार आदि की प्रकाशरूप पर्याय, आत्मा के प्रयोग से उत्पन्न हुई है; क्यों कि वह शरीर में स्थित है, जैसे—जुगनू के शरीर की पर्याय, जैसे रात्रि वगैरह खास समय में जुगनू नामका प्राणी का शरीरपरिणाम (चमकना) जीव के प्रयोग से प्रकट होता है, उसी प्रकार अंगार आदि का प्रकाशरूप परिणाम भी आत्मा के व्यापार से ही उत्पन्न होता है ।

अथवा—अंगार आदि की गर्मी आत्मा के व्यापार से उत्पन्न होती है, क्यों कि वह शरीर में है, जैसे ज्वर की गर्मी. ज्वर की गर्मी जीव से युक्त शरीर में ही उत्पन्न होती है,

લક્ષણદ્વાર—

શંકા—તેજસ્કાયના જીવોના અસ્તિત્વ (હોવાપણ)માં શું પ્રમાણ છે ?

સમાધાન—અંગાર આદિ જીવનાં શરીર છે. કેમકે તે છેદ્ય છે, ભેદ્ય છે, અને દૃશ્ય છે. જેમકે હાથ, પગ આદિનો સમૂહ.

અથવા—અંગાર આદિની પ્રકાશરૂપ પર્યાય આત્માના પ્રયોગથી ઉત્પન્ન થઈ છે; કારણકે તે શરીરમાં સ્થિત છે. જેવી રીતે—જુગનૂ ( આગિયો નામના પ્રાણી )ના શરીરની પર્યાય. જેમ રાત્રી વગેરે ખાસ સમયમાં જુગનૂ ( આગીચો )નામક પ્રાણીનો શરીર-પરિણામ (ચમકવું) જીવના પ્રયોગથી પ્રગટ થાય છે. તે પ્રમાણે અંગાર આદિના પ્રકાશરૂપ પરિણામ પણ આત્માના વ્યાપારથીજ ઉત્પન્ન થાય છે.

અથવા—અંગાર આદિની ગરમી આત્માના વ્યાપારથી ઉત્પન્ન થાય છે. કારણકે તે શરીરમાં છે, જેમકે જ્વર-તાવની ગરમી. જ્વર-તાવની ગરમી જીવથી યુક્ત શરીરમાંજ



યથા—જ્વરોષ્મા જીવાધિષ્ઠિતશરીરમેવાશ્રિત્ય ભવતિ, જીવસંયોગં નાતિક્રામતિ । ન ચ મૃતા જ્વરિણઃ ક્વચિદુપલભ્યન્તે । એવમન્વયવ્યતિરેકાભ્યામગ્નેઃ સચિત્તતા વિજ્ઞેયા । ન ચ સૂર્યાદિભિરનેકાન્તો વાચ્યઃ, સર્વેષામાત્મસંયોગપૂર્વક એવોષ્ણ-પરિણામો ભવતિ, તસ્માદનેકાન્તો ન સંભવતિ ।

યદ્વા—તેજઃ સચેતનમ્, યથાયોગ્યાહારગ્રહણેન વૃદ્ધિવિશેષતદ્વિકાર-વચ્ચાત્, પુરુષવત્ । એવમુક્તલક્ષણેન તેજસ્કાયજીવાઃ સન્તીતિ વિજ્ઞાયતે ।

યદ્વા—અવ્યક્તોપયોગાદીનિ કષાયપર્યન્તાનિ જીવલક્ષણાનિ પૃથિવ્યપ્-કાયવત્ તેજસ્કાયેઽપિ સમુપલભ્યન્તે । એવં ચ જીવલક્ષણસદ્ભાવાત્ તેજસ્કાયજીવાઃ સન્તીતિ નિશ્ચીયતે । આગમોઽપિ યથા—

જીવ કે સંયોગ વિના ઉત્પન્ન નહીં હોતી । મુર્દેમાં જ્વર કહીં નહીં દેખા જાતા । ઇસ પ્રકાર અગ્નિ મેં અન્વય—વ્યતિરેકદ્વારા સચિત્તતા સમજની યાહિએ । યહાં સૂર્ય સે હેતુ મેં વ્યભિચાર નહીં હૈ, ક્યોં કિ સવ મેં આત્મપ્રયોગપૂર્વક હી ગર્મોં હો સક્તી હૈ, અતઃ વ્યભિચાર નહીં હૈ ।

અથવા—તેજ સચેતન હૈ, ક્યોં કિ યથાયોગ્ય આહાર ગ્રહણ કરને સે ઇસ મેં વૃદ્ધિરૂપ વિકાર દેખા જાતા હૈ, જૈસે પુરુષ મેં । ઇસ પ્રકાર ઇસ લક્ષણ સે તેજસ્કાય કે જીવોં કા અસ્તિત્વ વિદિત હોતા હૈ । અથવા અપ્રકટ ઉપયોગ સે લેકર કષાયપર્યન્ત જીવ કે લક્ષણ જૈસે પૃથ્વીકાય ઓર અપ્કાય મેં પાયે જાતે હૈં, ઇસી પ્રકાર તેજસ્કાય મેં ભી પાયે જાતે હૈં । ઇસ પ્રકાર જીવ કે લક્ષણ પાયે જાને કે કારણ તેજસ્કાય કે જીવોં કા અસ્તિત્વ નિશ્ચિત્ત હોતા હૈ । ઇસમેં આગમ પ્રમાણ ભી હૈ—

ઉત્પન્ન થાય છે. જીવના સંયોગ વિના ઉત્પન્ન થતી નથી. મુઠલામાં જ્વર—તાવ કોઈ સ્થળે જોવામાં આવતો નથી; આ પ્રમાણે અગ્નિમાં અન્વય—વ્યતિરેકદ્વારા સચિત્તતા સમજવી જોઈએ. અહિં સૂર્યથી હેતુમાં વ્યભિચાર નથી. કેમકે સર્વમાં આત્મપૂર્વકજ ગરમી હોઈ શકે છે, એટલા કારણથી વ્યભિચાર નથી.

અથવા—તેજ સચેતન છે. કેમકે યથાયોગ્ય આહાર ગ્રહણ કરવાથી તેનામાં વૃદ્ધિરૂપ વિકાર જોવામાં આવે છે. જેવી રીતે પુરુષમાં. આ પ્રકારે જીવના લક્ષણ મળવાથી તેજસ્કાયના જીવોનું અસ્તિત્વ જાણવામાં આવે છે.

અથવા—અપ્રકટ ઉપયોગથી લઈને કષાયપર્યન્ત જીવનાં લક્ષણ જોવામાં આવે છે. તે કારણે તેજસ્કાયના જીવોનું અસ્તિત્વ નિશ્ચય હોય છે. આમાં આગમ પ્રમાણ પણ છે—

“ તેજ ચિત્તમંતમચ્છાયા અણેગજીવા પુઢોસત્તા અન્નથ સત્થપરિણેણં ”  
 ઇત્યાદિ । ( દશવૈ ૦ અ ૪ )

### પ્રરૂપણાદ્વારમ્—

અગ્નિકાયજીવા દ્વિવિધાઃ, સૂક્ષ્મબાદરભેદાત્ । તત્ર સૂક્ષ્મનામકર્મોદયાત્  
 સૂક્ષ્માઃ । બાદરનામકર્મોદયાત્ બાદરાઃ । તત્ર સૂક્ષ્માઃ દ્વિધા, પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચ ।  
 સૂક્ષ્માઃ સર્વલોકવ્યાપિનઃ । બાદરાસ્તુ લોકૈકદેશે સન્તિ ।

બાદરા અગ્નિકાયા અનેકવિધાઃ—અદ્ભારાચિરલાતશુદ્ધાગ્ન્યાદયઃ । સર્વે બાદરા  
 અગ્નિકાયા અપિ દ્વિવિધાઃ પર્યાપ્તા અપર્યાપ્તાશ્ચ । બાદરાણાં યત્રૈકો જીવસ્તન્ના-

“ તેજસ્કાય સચિત્ત કહા ગયા હૈ । ઉસ મેં અનેક જીવ હૈ, ઉનકા અસ્તિત્વ અલગ—  
 અલગ હૈ, શસ્ત્રપરિણત અગ્નિ કો છોડ કર ” ઇત્યાદિ । (દશવૈ ૦ અધ્ય ૦ ૪)

### પ્રરૂપણાદ્વાર—

અગ્નિકાય કે જીવ દો પ્રકાર કે હૈ—(૧) સૂક્ષ્મ ઓર બાદર, જિનકે સૂક્ષ્મ નામકર્મ  
 કા ઉદય હો વે સૂક્ષ્મ ઓર જિનકે બાદર નામકર્મ કા ઉદય હો વે બાદર જીવ હૈ । ઇનમેં  
 સે સૂક્ષ્મ કે મી દો ભેદ હૈ—પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત । સૂક્ષ્મ જીવ સમસ્ત લોકાકાશ મેં વ્યાપ્ત  
 હૈ ઓર બાદર લોક કે એક દેશ મેં હૈ ।

બાદર અગ્નિકાય અનેક પ્રકાર કે હૈ । જૈસે—અંગાર, જ્વાલા, અલાત (જલતા  
 હુઆ કાષ્ટ), શુદ્ધ અગ્નિ આદિ । સર્વ બાદર અગ્નિકાય મી દો પ્રકાર કે હૈ—પર્યાપ્ત

“ તેજસ્કાય સચિત્ત કહેલું છે. તેમાં અનેક જીવ છે, તેનું અસ્તિત્વ અલગ—  
 અલગ છે, શસ્ત્રપરિણત અગ્નિને છોડીને. ” ઇત્યાદિ. (દશવૈ, અ. ૪)

### પ્રરૂપણાદ્વાર—

અગ્નિકાયના જીવ બે પ્રકારના છે—(૧) સૂક્ષ્મ અને (૨) બાદર. જેને સૂક્ષ્મ-  
 નામકર્મના ઉદય હોય તે સૂક્ષ્મ અને જેને બાદર નામકર્મના ઉદય હોય તે બાદર-  
 જીવ છે. તેમાંથી સૂક્ષ્મના પણ બે ભેદ છે. પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત. સૂક્ષ્મ જીવ  
 સમસ્ત લોકાકાશમાં વ્યાપ્ત છે. અને બાદર લોકના એક દેશમાં છે.

બાદર અગ્નિકાય અનેક પ્રકારના છે. જેમકે—અંગાર, જ્વાલા, બળતું લાકડું,  
 શુદ્ધ અગ્નિ વગેરે. સર્વ બાદર અગ્નિકાય પણ બે પ્રકારના છે—પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્ત;

સંખ્યેયૈર્નિયમતો ભાવ્યમ્ । બાદરાણાં સ્વસ્થાનં મનુષ્યક્ષેત્રમેવ, ન તતઃ પરમસ્તિ ।

બાદરાસ્તેજસ્કાયાઃ વ્યાઘાતાભાવે સતિ મનુષ્યક્ષેત્રેઽર્ધતૃતીયદ્વીપસમુદ્રેષુ પંચદશક્ષેત્રેષુ વિદ્યન્તે । યુગલસમયરૂપે વ્યાઘાતે સતિ તુ પંચમહાવિદેહેષુ વર્તન્તે, નાન્યત્ર । ઉપપાતાઙ્ગીકરણેન લોકસંખ્યેયભાગવર્તિનઃ સન્તિ ।

સમુદ્ઘાતેન સર્વલોકવર્તિનઃ પૃથિવીકાયાદયશ્ચ મારણાન્તિકસમુદ્ઘાતેન સમવહતા બાદરાગ્નિષુ સમુત્પદ્યમાનાસ્તત્તદ્વ્યપદેશભાજઃ સર્વલોકવ્યાપિનઃ સન્તિ ।

યત્ર ચ બાદરાઃ પર્યાપ્તાસ્ત વ બાદરા અપર્યાપ્તાઃ, યતસ્તે તન્નિશ્રયો-

ઔર અપર્યાપ્ત । જહાં એક બાદર જીવ હોતા હૈ વહાં નિયમ સે અસંખ્યાત જીવ હોતે હૈ । બાદર જીવોં કા ક્ષેત્ર મનુષ્યલોક હી હૈ; ઉસસે આગે નહીં ।

બાદર તેજસ્કાય વ્યાઘાત (અન્તર) ન હો તો મનુષ્ય ક્ષેત્ર મેં અઢાઈ દ્વીપ સમુદ્રોં મેં પન્દર ક્ષેત્રોં મેં રહતે હૈ । યુગલિયોં કે સમયરૂપ વ્યાઘાત (અન્તર) કે હોને પર પાંચ મહાવિદેહોં મેં રહતે હૈ, અન્યત્ર નહીં । ઉપઘાત કી અપેક્ષા લોક કે સંખ્યાત ભાગ મેં રહતે હૈ ।

સમુદ્ઘાત કી અપેક્ષા—સમસ્તલોકવ્યાપી પૃથ્વીકાય આદિ, મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરકે બાદર અગ્નિ મેં ઉત્પન્ન હોતે હુએ, ઉસ—ઉસ વ્યપદેશ (નામ) કે પાત્ર હો કર સર્વલોકવ્યાપી હૈ ।

જહાં બાદર પર્યાપ્ત હૈં વહીં બાદર અપર્યાપ્ત હૈં, ક્યોં કિ—અપર્યાપ્ત જીવ

જ્યાં એક બાદર જીવ હોય છે ત્યાં નિયમથી અસંખ્યાત જીવ હોય છે. બાદર જીવોનું ક્ષેત્ર મનુષ્ય લોકજ છે. તેનાથી આગળ નથી.

બાદર તેજસ્કાય, અન્તર ન હોય તો મનુષ્ય ક્ષેત્રમાં અઢી દ્વીપ—સમુદ્રોમાં, પંદર ક્ષેત્રોમાં રહે છે. યુગલિઆઓના સમયરૂપ અંતર હોવા પર પાંચ મહાવિદેહોમાં રહે છે, અન્યત્ર નહિ. ઉપપાતની અપેક્ષા લોકના સંખ્યાત ભાગમાં રહે છે.

સમુદ્ઘાતની અપેક્ષા સમસ્તલોકવ્યાપી પૃથ્વીકાય આદિ મારણાન્તિક સમુદ્ઘાત કરીને બાદર અગ્નિમાં ઉત્પન્ન થઈને તે-તે વ્યપદેશ—(નામ)ને પાત્ર થઈને સર્વ લોકવ્યાપી છે.

જ્યાં બાદર પર્યાપ્ત છે ત્યાંજ બાદર અપર્યાપ્ત છે; કેમકે—અપર્યાપ્ત જીવ પર્યાપ્તના



त्पद्यन्ते, तस्मात् सूक्ष्मा वादराश्च प्रत्येकं पर्याप्तापर्याप्तभेदेन द्विविधा भवन्ति । सर्वे चैते वर्णगन्धरसस्पर्शभेदैः सहस्राग्रशो भिद्यमानाः संख्येययोनिप्रमुखशतसहस्रभेदपरिमाणा भवन्ति । तेषां संवृतोष्णा च योनिः सचित्ताचित्तमिश्रभेदेन त्रिधा । एषां सप्त लक्षाणि योनयो भवन्ति ।

सूक्ष्मवादराणामुभयेषामग्निकायानां शरीरसंस्थानं सूचीकलापाकृतिकम्, अन्ये शरीरत्रयादिभेदाः पृथिवीकाय वत् । उभयेऽग्निकायाः प्रत्येकमसंख्येयाश्च ।

पर्याप्त के आश्रय ही उत्पन्न होते हैं । अतः सूक्ष्म और वादर, प्रत्येक के पर्याप्त और अपर्याप्त के भेद से दो भेद हैं और वर्ण, गंध, रस, और स्पर्श के भेद से हजारों भेदों को प्राप्त होते हुए इनकी संख्येय योनि वगैरह भेदों की संख्या लाखों की हो जाती है ।

इनकी योनि संवृत और उष्ण है । वह भी सचित्त, अचित्त और मिश्र के भेद से तीन प्रकार की है । इनकी सात लाख योनियाँ हैं ।

सूक्ष्म और वादर—दोनों प्रकार के अग्निकाय जीवों के शरीर का आकार सुइयों के समूह की तरह है । शरीरत्रय आदि अन्य भेद पृथ्वीकाय के समान हैं । दोनों प्रकार के अग्निकाय असंख्यात—असंख्यात हैं ।

आश्रयेऽ उत्पन्न थाय છે. એ કારણથી સૂક્ષ્મ અને બાદર પ્રત્યેકના પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્તના ભેદથી એ ભેદ છે અને વર્ણ, ગંધ, રસ અને સ્પર્શના ભેદથી હજારો ભેદો પામતા થકા એની સંખ્યેય યોનિ વગેરે ભેદોની સંખ્યા લાખો થઈ જાય છે.

તેની યોનિ સંવૃત અને ઉષ્ણ છે, તે પણ સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્રના ભેદથી ત્રણ પ્રકારની છે. એની સાત લાખ યોનિઓ છે.

સૂક્ષ્મ અને બાદર બન્ને પ્રકારના અગ્નિકાય જીવોના શરીરનો આકાર સૂઈના સમૂહની પ્રમાણે છે. શરીરત્રય (ત્રણ શરીર) આદિ અન્ય ભેદ પૃથ્વીકાયની સમાન છે. બન્ને પ્રકારના અગ્નિકાય અસંખ્યાત—અસંખ્યાત છે.

## પરિમાણદ્વારમ્—

બાદરપર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયજીવાઃ ક્ષેત્રપલ્યોપમસ્યાઽસંખ્યેયભાગમાત્રવર્તિપ્રદે-  
શરાશિપરિમાણાઃ સન્તિ । તદપેક્ષયા બાદરા અપર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયજીવા  
અસંખ્યાતગુણાઃ તદપેક્ષયા સૂક્ષ્મા અપર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયા અસંખ્યાતગુણાઃ, તદપેક્ષયા  
સૂક્ષ્માઃ પર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયા અસંખ્યાતગુણાઃ સન્તિ । પૃથિવીકાયેન સહાગ્નિકાયસ્ય  
પરિમાણસમાલોચનાયાં ત્વેવમવધેયમ્—

ये तेजस्काया बादरपर्याप्ताः क्षेत्रपल्योपमासंख्येयभागमात्रवर्ति-  
प्रदेशराशिपरिमाणाः सन्ति, ते बादरपर्याप्तेभ्यः पृथिवीकायेभ्योऽसंख्यात-  
गुणहीनाः । शेषास्त्रयोऽपि राशयः पृथिवीकायवद् विज्ञेयाः । तत्रायं विशेषः—

## પરિમાણદ્વાર—

બાદર પર્યાપ્ત તેજસ્કાય કે જીવ ક્ષેત્રપલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવે ભાગવર્તી  
પ્રદેશો કી રાશિ કે બરાબર હૈ । બાદર અપર્યાપ્ત તેજસ્કાય જીવ ઉનસે અસંખ્યાત  
ગુણા હૈ, સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત ઇનસે મી અસંખ્યાત ગુણા હૈ, ઓર સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત ઇન સે મી  
અસંખ્યાત ગુણા હૈ । પૃથ્વીકાય કે સાથ અગ્નિકાય કે પરિમાણ કા વિચાર કિયા જાય તો  
ઇસ પ્રકાર હૈ—

તેજસ્કાય કે જો બાદર પર્યાપ્ત જીવ ક્ષેત્રપલ્યોપમ કે અસંખ્યાતવે ભાગવર્તી  
પ્રદેશો કે બરાબર હૈ, વે બાદર પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કે જીવો સે અસંખ્યાતગુણા હીન હૈ ।  
શેષ ત્રીનો રાશિયો પૃથ્વીકાય સે સમાન હી સમજ લેની ચાહિયે । વિશેષતા સિર્ફ ઇતની હૈ—

## પરિમાણ દ્વાર—

બાદર પર્યાપ્ત તેજસ્કાયના જીવ ક્ષેત્ર-પલ્યોપમના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી  
પ્રદેશોની રાશિના બરાબર છે. બાદર અપર્યાપ્ત-તેજસ્કાય જીવ તેનાથી અસંખ્યાત ગુણા  
છે. સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત તેનાથી પણ અસંખ્યાત ગુણા છે. અને સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત તેનાથી  
પણ અસંખ્યાત ગુણા છે. પૃથ્વીકાયની સાથે અગ્નિકાયના પરિમાણનો વિચાર કરવામાં  
આવે તો આ પ્રકારે છે—

તેજસ્કાયના જે બાદર પર્યાપ્ત જીવ ક્ષેત્રપલ્યોપમના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી પ્રદેશોની  
બરાબર છે; તે બાદર પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયના જીવોથી અસંખ્યાત ગુણા હીન છે. બાકીની  
ત્રણેય રાશિઓ પૃથ્વીકાયની સમાનજ સમજ લેવી જોઈએ, વિશેષતા માત્ર એટલી છે કે—

વાદરાપર્યાપ્તેભ્યઃ પૃથિવીકાયેભ્યો વાદરા અપર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયા અસંખ્યાતગુણહીનાઃ,  
સૂક્ષ્માપર્યાપ્તપૃથિવીકાયેભ્યઃ સૂક્ષ્મા અપર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયા વિશેષહીનાઃ ।  
સૂક્ષ્મપર્યાપ્તપૃથિવીકાયેભ્યઃ સૂક્ષ્માઃ પર્યાપ્તાસ્તેજસ્કાયા વિશેષહીના ઇતિ ।

एवं युक्त्यागमप्रमाणाभ्यामग्नेर्जीवत्वे सिद्धे यदि कश्चिदग्निकाय-  
जीवस्याभ्याख्यानं कुर्यात्, तर्ह्युपयोगादिलक्षणैरनुमितस्य शरीराधिष्ठातुरात्मतोऽ-  
प्यभ्याख्यानं तेन कर्तव्यं स्यात्, परन्तु तन्न उचितं भवतीत्यत आह-‘नैवाऽऽ-  
त्मानमभ्याख्याया’-दिति । केनचिदात्मना शरीरमिदं, परिगृहीतं, केनचिच्च  
शरीरमिदं परित्यक्तमिति प्रत्यक्षदर्शनादात्मनः शरीराधिष्ठातृत्वं सिध्यति ।

વાદર અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કે જીવોં સે વાદર અપર્યાપ્ત તેજસ્કાય કે જીવ અસંખ્યાતગુણ  
કમ હૈં । સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કે જીવોં સે સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત તેજસ્કાય કે જીવ  
વિશેષ હીન હૈં । સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાય કે જીવોં સે સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત તેજસ્કાય કે જીવ  
વિશેષ હીન હૈં ।

इस प्रकार युक्ति और आगमप्रमाण से अग्नि की सजीवता सिद्ध हो जाने  
पर भी यदि कोई अग्निकाय के जीवों का अपलाप करता है तो वह उपयोग आदि  
लक्षणों से अनुमान किये जाने वाले और शरीर के अधिष्ठाता आत्मा का अपलाप  
करता है, मगर ऐसा करना उचित नहीं है, अतः सूत्रकार कहते हैं-‘ आत्मा का  
अपलाप न करे ’ । किसी आत्माने यह शरीर ग्रहण किया है और किसी ने शरीर का  
त्याग किया है, यह बात प्रत्यक्ष देखी जाती है । इस से यह सिद्ध हो जाता है कि शरीर,  
आत्मद्वारा अधिष्ठित है ।

આદર અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયના ઊવોથી આદર અપર્યાપ્ત તેજસ્કાયના ઊવ અસંખ્યાત  
ગુણા ઓછા છે. સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયના ઊવોથી સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત તેજસ્કાયના  
ઊવ વિશેષહીન છે. સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત પૃથ્વીકાયના ઊવોથી સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત તેજસ્કાયના  
ઊવ વિશેષહીન છે-વિશેષ ઓછા છે.

આ પ્રમાણે યુક્તિ અને આગમપ્રમાણથી અગ્નિની સજીવતા સિદ્ધ થઈ જવા  
છતાંય પણ જો કોઈ અગ્નિકાયના ઊવોનો અપલાપ કરે છે તો તે ઉપયોગ લક્ષણોથી  
અનુમાન કરવામાં આવેલા અને શરીરના અધિષ્ઠાતા આત્માનો અપલાપ કરે છે. પરન્તુ એ  
પ્રમાણે કરવું તે ઉચિત નથી. તેથી સૂત્રકાર કહે છે-‘ આત્માનો અપલાપ ન કરે. ’ કોઈ  
આત્માએ આ શરીર ગ્રહણ કર્યું છે, અને કોઈએ શરીરનો ત્યાગ કર્યો છે, એ વાત  
પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવે છે. તેથી એ સિદ્ધ થાય છે કે શરીર આત્માદ્વારા અધિષ્ઠિત છે,



एवं च युक्त्यागमसंसिद्धः शरीराधिष्ठाता ज्ञानादिगुणवानयमात्मा कथमपि नापलपितुं शक्यः । तस्मादात्मा नास्तीत्येवमभ्याख्यानमात्मनो न कुर्यादित्यर्थः ।

યઃ સ્વલુ મન્દધીઃ, લોકમ્=અગ્નિકાયલોકમ્, અભ્યાખ્યાતિ, આત્મ-  
વત્સર્વપ્રમાણસંસિદ્ધમપ્યગ્નિકાયલોકં પ્રત્યાચષ્ટે—‘અગ્નિકાયજીવો નાસ્તી’તિ, સ  
આત્માનમભ્યાખ્યાતિ=સ મૂઢઃ સ્વલુ યુક્ત્યાગમપ્રમાણસંસિદ્ધમાત્માનમપલપતિ ‘આત્મા  
નાસ્તી’તિ । સર્વપ્રમાણસંસિદ્ધાગ્નિકાયલોકાભ્યાખ્યાને પ્રવૃત્તસ્ય સુકરમેવાત્મનોઽ-  
ભ્યાખ્યાનમ્, અગ્નિકાયવદેવાત્મન્યપિ પ્રમાણસત્તાયાસ્તુલ્યત્વાદિતિ ભાવઃ ।

य आत्मानमभ्याख्याति=यच्चात्मनोऽभ्याख्याने ‘आत्मा नास्ती’

इस प्रकार युक्ति और आगम से सिद्ध शरीर के अधिष्ठाता तथा ज्ञान आदि गुणों वाले आत्मा का निषेध नहीं किया जा सकता । अत एव ‘आत्मा नहीं है’ इस प्रकार आत्मा का निषेध नहीं करना चाहिए ।

જો મન્દબુદ્ધિ પુરુષ અગ્નિકાયરૂપ લોક કા જો આત્મા કી માંતિ સમસ્ત પ્રમાણોં સે સિદ્ધ હૈ—નિષેધ કરતા હૈ અર્થાત્ અગ્નિકાય કે જીવોં કા નિષેધ કરતા હૈ વહ યુક્તિ ઓર આગમ સે સિદ્ધ આત્મા કા નિષેધ કરતા હૈ । સબ પ્રમાણોં સે સિદ્ધ અગ્નિકાય લોક કા અપલાપ કરને પર આત્મા કા અપલાપ કરના સરલ હી હૈ, ક્યોં કિ અગ્નિકાય ઓર આત્મા કે અસ્તિત્વ મેં પ્રમાણોં કા સદ્ભાવ સમાન હૈ ।

जो मूर्ख ‘आत्मा नहीं है’ इस प्रकार आत्मा का निषेध करता है वह

આ પ્રમાણે યુક્તિ અને આગમથી સિદ્ધ, શરીરના અધિષ્ઠાતા તથા જ્ઞાન આદિ ગુણોવાળા આત્માનો નિષેધ કરી શકાતો નથી. એટલા માટે ‘આત્મા નથી’ આ પ્રમાણે આત્માનો નિષેધ કરી શકાતો નથી. એટલા માટે ‘આત્મા નથી’ આ પ્રમાણે આત્માનો નિષેધ કરવો બેઠે બે નહિ.

જે મન્દબુદ્ધિ પુરુષ અગ્નિકાયરૂપલોકનો કે જે આત્મા પ્રમાણે સમસ્ત પ્રમાણોથી સિદ્ધ છે તેનો, નિષેધ કરે છે, અર્થાત્ અગ્નિકાયના જીવોનો નિષેધ કરે છે, તે યુક્તિ અને આગમથી સિદ્ધ આત્માનો નિષેધ કરે છે. સર્વ પ્રમાણોથી સિદ્ધ અગ્નિકાયલોકના અપલાપ કરવાથી આત્માનો અપલાપ કરવો તે સરલજ છે. કેમકે અગ્નિકાય અને આત્માના અસ્તિત્વમાં પ્રમાણોનો સદ્ભાવ સમાન છે.

જે મૂર્ખ ‘આત્મા નથી’ આ પ્રમાણે આત્માનો નિષેધ કરે છે, તે ‘અગ્નિકાય

ત્યપલપને પ્રવર્તે, સ મૂઢઃ લોકમ્=અધિકાયલોકમ્ અભ્યાખ્યાતિ= 'અગ્નિકાયજીવો નાસ્તી'—ત્યપલપતિ । અયં ભાવઃ—સામાન્યરૂપેનાત્મનઃ સિદ્ધૌ સત્યામેવ હિ તસ્યાત્મનો ભેદાઃ પૃથ્વીકાયાદયઃ સિદ્ધ્યન્તિ, નાન્યથા । સામાન્યાત્મનોઽભ્યાખ્યાને પ્રવૃત્તઃ સાહસિકઃ પૃથ્વીકાયાદેર્વિશેષાત્મનોઽભ્યાખ્યાનં સુતરાં કર્તુમર્હતીતિ ।

અપિ ચાયં ભાવઃ—કરચરણાદ્યવયવયુક્તશરીરાધિષ્ઠાતા સુવ્યક્તોપયોગાદિ-લક્ષણઃ સ્વાત્માઽપિ યેનાભ્યાખ્યાતઃ, તસ્યાવ્યક્તોપયોગાદિલક્ષણાગ્નિકાયાભ્યાખ્યાનં કિં નુ દુષ્કર ?—મિતિ ॥ સૂ. ૧ ॥

‘અગ્નિકાય નહીં હૈ’ ઇસ પ્રકાર અગ્નિકાય કા નિષેધ કરતા હૈ ।

તાત્પર્યં યહ હૈ કિ—સામાન્યરૂપ સે આત્મા કા અસ્તિત્વ સિદ્ધ હોને પર હી ઉસકે પૃથ્વીકાય આદિ ભેદ સિદ્ધ હો સકતે હૈં અન્યથા નહીં । જો સાહસી પુરુષ સામાન્ય આત્મા કા હી નિષેધ કરને કો તૈયાર હો ગયા વહ પૃથ્વીકાય આદિ વિશેષ આત્માઓં કા નિષેધ કરે; યહ તો સ્વાભાવિક હી હૈ ।

ઇસસે યહ મી આશય નિકલતા હૈ—હાથ—પૈર આદિ અવયવોં સે યુક્ત શરીર કે અધિષ્ઠાતા ઔર મલીમૈતિ પ્રકટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોં વાળે અપને આત્મા કા મી જિસને નિષેધ કર દિયા ઉસકે લિખ અપ્રકટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોં વાળે અગ્નિકાય કા નિષેધ કરના કૌન વડી વાત હૈ ? ॥ સૂ. ૧ ॥

નથી’ આ પ્રમાણે અગ્નિકાયનો નિષેધ કરે છે.

તાત્પર્યં એ છે કે—સામાન્યરૂપથી આત્માનું અસ્તિત્વ સિદ્ધ થવાથી જ તેના પૃથ્વીકાય આદિ ભેદ સિદ્ધ થઈ શકે છે, અન્યથા—બીજી રીતે નહિ. જે સાહસી પુરુષ સામાન્ય આત્માનો જ નિષેધ કરવા માટે તૈયાર થઈ ગયા તે પૃથ્વીકાય આદિ વિશેષ આત્માઓનો નિષેધ કરે એ તો સ્વાભાવિક જ છે.

એમાંથી એ પણ આશય નિકળે છે કે—હાથ—પગ આદિ અવયવોથી યુક્ત શરીરના અધિષ્ઠાતા ને સારી રીતે પ્રગટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોવાળા પોતાના આત્માનો પણ જેણે નિષેધ કરી દીધો તેને અપ્રગટ ઉપયોગ આદિ લક્ષણોવાળા અગ્નિકાયનો નિષેધ કરવો તે શું મોટી વાત છે ? (સૂ. ૧)

અયમગ્નિકાયલોકઃ સ્વાત્મવન્નૈવ અભ્યાચ્ચેય્યેયમિતિ પ્રતિબોધિતમ્,  
 હદાનીમગ્નિકાયજીવોપમર્દનાદ્ વિનિવૃત્ત એવ મુનિર્મવિતુમર્હતીત્યાદ્—‘જે દીહ૦’  
 ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

જે દીહલોગસત્થસ્સ ચેયન્ને, સે અસત્થસ્સ ચેયન્ને, જે અસત્થસ્સ ચેયન્ને  
 સે દીહલોગસત્થસ્સ ચેયન્ને ॥ સૂ. ૨ ॥

છાયા—

યો દીર્ઘલોકશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ, સોઽશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ । યોઽશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ, સ  
 દીર્ઘલોકશસ્ત્રસ્ય ચેદજ્ઞઃ ॥ સૂ. ૨ ॥

ટીકા—

યો ભવ્યઃ, દીર્ઘલોકશસ્ત્રસ્ય=દીર્ઘશ્વાસૌ લોકશ્ચ દીર્ઘલોકઃ=વનસ્પતિઃ,  
 તસ્ય શસ્ત્રં દીર્ઘશ્વોકશસ્ત્રમ્=અગ્નિઃ । વનસ્પતિકાયસ્ય દાહકરણેન વિનાશકતયાઽ-

અગ્નિકાયલોક, આત્મા કી તરહ નિષેધ કરને યોગ્ય નહીં હૈ, યહ બતલા દિયા ।  
 અવ બતલાતે હૈં કિ—અગ્નિકાય કે જીવોં કી હિંસા સે નિવૃત્ત હોને વાલા પુરુષ હૈ મુનિ હોતા  
 હૈ—‘જે દીહ૦’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જો દીર્ઘલોક (વનસ્પતિકાય) કે શસ્ત્ર (અગ્નિકાય) કે દુઃખ કો જાનતા  
 હૈ વહી સંયમ કે ચેદ કો જાનતા હૈ ઓર જો સંયમ કે ચેદ કો જાનતા હૈ વહ દીર્ઘલોક કે  
 શસ્ત્ર કે ચેદ કો જાનતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—જો ભવ્ય પુરુષ દીર્ઘલોક અર્થાત્ વનસ્પતિ કે શસ્ત્ર—અગ્નિ કે દુઃખ કો  
 જાનતા હૈ, વહી અશસ્ત્ર અર્થાત્ સંયમ કે ચેદ કો જાનતા હૈ । વનસ્પતિકાય કી વિરાધના

અગ્નિકાયલોક, આત્માની પ્રમાણે નિષેધ કરવા યોગ્ય નથી; તે બતાવી આપ્યું  
 છે. હવે બતાવે છે કે—અગ્નિકાયના જીવોની હિંસાથી નિવૃત્ત થવાવાળા પુરુષજ  
 મુનિ હોય છે—‘જે દીહ૦’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જે દીર્ઘલોક (વનસ્પતિકાય)ના શસ્ત્ર (અગ્નિકાય)ના દુઃખને જાણે  
 છે, તેજ સંયમના ખેદને જાણે છે, અને જે સંયમના ખેદને જાણે છે. તેજ દીર્ઘ-  
 લોકના શસ્ત્રના ખેદને જાણે છે. (સૂ. ૨)

ટીકાર્થ—જે ભવ્ય પુરુષ દીર્ઘલોક અર્થાત્ વનસ્પતિનું શસ્ત્ર અગ્નિના દુઃખને  
 જાણે છે, તેજ અશસ્ત્ર અર્થાત્ સંયમના ખેદને જાણે છે. વનસ્પતિકાયની વિરાધના કરવાના



ગ્નિસ્તેષાં શસ્ત્રં ભવતિ । તસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ=સ્વેદમ્=ઉપમર્દનજન્યદુઃખં જ્ઞાનાતીતિ સ્વેદજ્ઞઃ,  
સ એવ અશસ્ત્રસ્ય-અશસ્ત્રં=સંયમઃ, સંયમો હિ ન વ્યાપાદકો ભયદો વા કસ્યા-  
પીત્યશસ્ત્રમુચ્યતે । તસ્ય સ્વેદજ્ઞઃ=સંયમભજ્ઞમયજનિતદુઃખાનુભવકુશલઃ । एवं  
સંયમાનુષ્ઠાનાદેવ મુનિત્વં લભ્યમિતિ ભાવઃ ।

નનુ-કથમિદં જ્ઞાયતે દીર્ઘલોકશબ્દાર્થે વનસ્પતિરિતિ ? ઉચ્યતે-  
કાયસ્થિતિકાલેન, પરિમાણેન, શરીરાવગાહનયા ચ વનસ્પતિકાયસ્ય અન્યૈકેન્દ્રિ-  
યાપેક્ષયા મહત્ત્વમસ્તિ । તથાહિ-વનસ્પતિકાયસ્ય કાયસ્થિતિકાલોઽનન્તઃ,  
સ ચાનન્તોત્સર્પિણ્યવસર્પિણીરૂપઃ, તસ્મિન્નસંખ્યેયાઃ પુદ્ગલપરાવર્ત્તા ભવન્તિ, તે  
પુદ્ગલપરાવર્ત્તા આવલિકાયા અસંખ્યેયે ભાગે યાવન્તઃ સમયાસ્તાવત્પ્રમાણાઃ

કરને કે કારણ અગ્નિ, વનસ્પતિકાય કા શસ્ત્ર હૈ । સંયમ સે કિસી કી વિરાધના નહીં હોતી,  
ન વહ કિસી કો ભયકારી હૈ, અત એવ સંયમ કો અશસ્ત્ર કહતે હૈ । સંયમ કે ભંગ હોને કે  
ભય સે ઉત્પન્ન હોને વાલા દુઃખ સંયમ કા સ્વેદ કહલાતા હૈ । હિસ પ્રકાર સંયમ કે પાલન  
કરને સે હી મુનિપન હોતા હૈ ।

શંકા—દીર્ઘલોક શબ્દ કા અર્થ વનસ્પતિ કૈસે સમજા જાય ?

સમાધાન—કાયસ્થિતિ કે સમય, પરિમાણ ઓર શરીર કી અવગાહના સે  
વનસ્પતિકાય અન્ય એકેન્દ્રિય જીવો કી અપેક્ષા મહાન્ હૈ । વનસ્પતિકાય કી કાયસ્થિતિ કા  
કાલ અનન્ત હૈ, ઓર વહ અનન્ત મી અનન્ત ઉત્સર્પિણીરૂપ-અવસર્પિણીરૂપ હૈ । ડસમેં  
અસંખ્યાત પુદ્ગલપરાવર્તન હોતે હૈ । વે પુદ્ગલપરાવર્તન આવલિકા કે અસંખ્યાતવે ભાગ મેં

કારણથી અગ્નિ વનસ્પતિકાયનું શસ્ત્ર છે. સંયમથી કોઈની પણ વિરાધના થતી નથી.  
તે કોઈને ભયકારી નથી. એ માટે સંયમને અશસ્ત્ર કહે છે. સંયમનો ભંગ થવાના  
ભયથી ઉત્પન્ન થવાવાળું દુઃખ તે સંયમનો સ્વેદ કહેવાય છે. આ પ્રમાણે સંયમનું  
પાલન કરવાથીજ મુનિપણું હોય છે.

શંકા—દીર્ઘલોક શબ્દનો અર્થ વનસ્પતિ કેવી રીતે સમજી શકાય ?

સમાધાન—કાયસ્થિતિના સમય, પરિમાણ અને શરીરની અવગાહનાથી  
વનસ્પતિકાય, અન્ય એકેન્દ્રિય જીવોની અપેક્ષાએ મહાન્ છે. વનસ્પતિકાયની કાયસ્થિતિનો  
કાલ અનન્ત છે અને તે અનન્ત પણ અનન્ત ઉત્સર્પિણી-અવસર્પિણીરૂપ છે. તેમાં  
અસંખ્યાત પુદ્ગલપરાવર્તન થાય છે. તે પુદ્ગલપરાવર્તન આવલિકાના અસંખ્યાતભાગ

સન્તિ । એતાવાન્ કાલો વનસ્પતિકાઙ્ગ ઇત્યુચ્યતે । પરિમાણતસ્તુ પ્રત્યુત્પન્નવનસ્પતિ-  
કાર્યિકાનાં નિર્લેપના નાસ્તિ ।

શરીરાવગાહનયા ચ સાતિરેકં યોજનસહસ્રમ્ । અતો વનસ્પતિકાયસ્ય  
દીર્ઘલોક ઇતિ વ્યપદેશઃ । (પ્રજ્ઞાપના ૧૮ પદે)

નનુ પ્રસિદ્ધમગ્નિશબ્દં વિહાય કિમર્થમિહ દીર્ઘલોકશસ્ત્રશબ્દોપાદાનમ્ ?  
ઉચ્યતે—વનસ્પતિકાયદહનપ્રવૃત્તોઽગ્નિકાયો बहुतरप्राणिनां विनाशको भवति,  
वनस्पतिकाये बहुविधाः प्राणिनः कीट पिपीलिका भ्रमरमधुमक्षिकाकपोतादयो  
निवसन्ति, तरुकोटरेषु पृथिवीकायाश्च, अवश्यायरूपा अप्काया अपि, मृदुतर-

જિતને સમય હોતે હૈં ઉતને હૈં, ઇતના કાલ વનસ્પતિકાલ કહલાતા હૈ । પરિમાણ સે પ્રત્યુત્પન્ન  
વનસ્પતિકાયિક જીવોં કી નિર્લેપના નહીં હૈ । ઇન્કે શરીર કી અવગાહના કુછ અધિક એક  
હજાર યોજન હૈ । ઇસી કારણ વનસ્પતિકાય કો દીર્ઘલોક કહતે હૈ ।

અવ પ્રશ્ન હો સકતા હૈ કિ—પ્રસિદ્ધ ‘અગ્નિ’ શબ્દ કો છોડ કર ‘દીર્ઘલોકશસ્ત્ર’  
શબ્દ કા પ્રયોગ કરને કી વ્યા અવશ્યકતા થી ?

ઇસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ—વનસ્પતિકાય કો જલાને મેં પ્રવૃત્ત અગ્નિકાય ઓર મી  
બહુત સે પ્રાણિયોં કા વિનાશ કરતા હૈ । વનસ્પતિકાય કે સહારે કીડે, ચિંટી, મૈરે,  
મધુમક્ષી ઓર કબૂતર આદિ બહુત સે પ્રાણી નિવાસ કરતે હૈ । વૃક્ષોં કી સ્વોતરોં મેં  
પૃથ્વીકાય કે જીવ મી હોતે હૈ । ઓસરૂપ અપ્કાય મી હોતા હૈ, ઓર અત્યન્ત કોમલ

ભાગમાં જેટલા સમય થાય છે. તેટલા છે એટલો કાળ તે વનસ્પતિકાળ કહેવાય છે.  
પરિમાણથી પ્રત્યુત્પન્ન વનસ્પતિકાયિક જીવોની નિર્લેપના નથી. તેના શરીરની અવગાહના  
કંઈક અધિક એક હજાર યોજન છે. આ કારણથી વનસ્પતિ કાયને ‘દીર્ઘલોક’ કહે છે.

હવે પ્રશ્ન થઈ શકે છે કે—પ્રસિદ્ધ અગ્નિ શબ્દને છોડીને ‘દીર્ઘલોકશસ્ત્ર’  
શબ્દનો પ્રયોગ કરવાની શું આવશ્યકતા હતી ? તેનો ઉત્તર એ છે કે—વનસ્પતિકાયને  
બાળવામાં પ્રવૃત્ત (આહુ) અગ્નિકાય બીજા પણ પ્રાણીઓનો વિનાશ કરે છે. વનસ્પતિના  
આશ્રયે કીડા, મૈકોડા, ભમરા, મધમાખી અને કબૂતર આદિ ઘણાંજ પ્રાણીઓ નિવાસ કરે  
છે. વૃક્ષોના અખોલમાં પૃથ્વીકાયના જીવ પણ હોય છે. આકળરૂપ અપ્કાય પણ હોય છે.

पल्लवानुसारी वायुरपि तत्र संभाव्यते, तदेवं वनस्पतिशस्त्रीभूय दहनो बहुतर-  
जीवान्नाशयतीति सूचनाय भगवता दीर्घलोकशस्त्रशब्दः परिगृहीत इति ।

यद्वा—दीर्घलोकः=पृथिवीकायादिः, पृथिव्यव्वायुवनस्पतिकायानां  
भवस्थितिर्यथाक्रमं द्वाविंशति, -सप्त-त्रि-दश-वर्षसहस्रपरिमाणा, अग्निकायस्य तु  
त्रीण्येवाहोरात्राणि । यथा बादराग्निकायाः पर्याप्तकाः स्वल्पाः सन्ति, अन्ये  
पृथिव्यादयः पर्याप्तकाः बहवः सन्ति, अतो दीर्घलोकः पृथिव्यादिस्तस्य  
शस्त्रम्=अग्निकायः । अग्निरुत्पाद्यमानः प्रज्वाल्यमानो वा पृथिव्यादिजीवसमूहं  
प्रणिहन्तीति तस्य शस्त्रत्वम् । उक्तञ्च—

पत्तो (कोपलो) का अनुसारी वायु भी वहाँ संभव है । इस प्रकार अग्नि वनस्पति का शस्त्र  
हो कर बहुतेरे जीवों का विनाश करता है । यह सूचित करने के लिए भगवान् ने  
'दीर्घलोकशस्त्र' शब्द का अग्नि के लिए प्रयोग किया है ।

अथवा—'दीर्घलोकका' अर्थ पृथ्वीकाय आदि है । पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय  
और वनस्पतिकाय की भवस्थिति कम से बाईस, सात, तीन और दश हजार वर्ष की है,  
मगर अग्निकाय की तीन रात्रि-दिन ही है । बादर अग्निकाय के पर्याप्त जीव स्वल्प हैं  
मगर पृथ्वी आदि के पर्याप्त जीव बहुत हैं । अतः 'दीर्घलोक' शब्द से पृथ्वीकाय आदि  
का ग्रहण करना चाहिए और उनका शस्त्र अग्निकाय समझना चाहिए । अग्नि उत्पन्न होते  
ही और जलते ही पृथ्वी आदि के जीवों के समूह का घात करता है, अतः वह पृथ्वी आदि  
का शस्त्र है । कहा भी हैः—

अने अत्यंत डोमल पत्ता (कुंपणी)ના અનુસારી વાયુનો પણ ત્યાં સંભવ છે. આ  
પ્રમાણે અગ્નિ, વનસ્પતિનું શસ્ત્ર બની ઘણાંજ જીવોનો વિનાશ કરે છે. આ હકીકત  
સૂચવવા માટે ભગવાને 'દીર્ઘલોકશસ્ત્ર' શબ્દનો અગ્નિ માટે પ્રયોગ કર્યો છે.

અથવા—દીર્ઘલોકનો અર્થ પૃથ્વીકાય આદિ છે, પૃથ્વીકાય, અપ્કાય, વાયુકાય,  
અને વનસ્પતિકાયની ભવસ્થિતિ ક્રમથી બાવીસ, સાત, ત્રણ અને દસ હજાર વર્ષની  
છે. પરંતુ અગ્નિકાયની ત્રણ રાત્રિ-દિવસજ છે. જેમકે—બાદર અગ્નિકાયના પર્યાપ્ત  
જીવ સ્વલ્પ છે. પરંતુ પૃથ્વી આદિના પર્યાપ્ત જીવ ઘણાંજ છે. એ માટે 'દીર્ઘલોક'  
શબ્દથી પૃથ્વીકાય આદિનું અહણ કરવું જોઈએ, અને તેનું શસ્ત્ર અગ્નિકાય સમજવું  
જોઈએ. અગ્નિ ઉત્પન્ન થતાંજ અને બળવાની ક્રિયા થતાંજ પૃથ્વીઆદિના જીવોના  
સમૂહનો ઘાત કરે છે. તેથી તે પૃથ્વી આદિનું શસ્ત્ર છે. કહ્યું પણ છે કેઃ—



“ભૂયાણમેસમાધાઓ હવ્વાહો ન સંસઓ” । (દશવૈ. ૩ અંગા. ૩૫)  
 તસ્ય ચ્વેદજ્ઞઃ=ચ્વેદયતીતિ ચ્વેદઃ=અગ્નેવ્યાપારઃ, અગ્નિવ્યાપારો હિ પૃથિવ્યાદિ-  
 જીવાનાં દહનાત્મકતયા દુઃસ્વમુત્પાદયતીત્યતઃ ચ્વેદ-શબ્દેન વ્યપદિશ્યતે, તં  
 જાનાતીતિ ચ્વેદજ્ઞઃ । અગ્નિકાયસ્ય વ્યાપારઃ સર્વપ્રાણિપીડાકર ઇતિ વિજ્ઞાતા યઃ  
 ચ્વલુ ભવતિ, સ એવ અશસ્ત્રસ્ય=સપ્તદશવિધસંયમસ્ય ચ્વેદજ્ઞઃ=સંયમક્ષરણજન્ય-  
 દુઃસ્વાનુભાવકઃ, અસ્તીતિ શેષઃ । અગ્નિકાયવ્યાપારેણ પૃથિવ્યાદિજીવાનાં  
 વિનાશસ્તેન સંયમક્ષરણં, તતશ્ચ મુનિત્વવિશ્વંશ ઇતિ સર્વસ્વનાશકતયાગ્નિવ્યાપારઃ  
 સાધૂનાં જ્ઞપરિયા વિજ્ઞાય પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિહરણીય ઇતિ ભાવઃ ।

“યહ અગ્નિ ભૂતોં કા ઘાતક હૈ, ઇસમેં સંદેહ નહીં” । (દશવૈ. ૩. અ. ગા. ૩૫)

અગ્નિ કે વ્યાપાર કો પૃથ્વીકાય આદિ કા ચ્વેદ કહતે હૈ, ક્યોં કિ દાહક હોને  
 કે કારણ વહ પૃથ્વી આદિ કો દુઃસ્વ ઉત્પન્ન કરતા હૈ । ઉસે જાનને વાલા ‘ચ્વેદજ્ઞ’ કહલાતા  
 હૈ । ‘અગ્નિકાય કા વ્યાપાર સર્વ પ્રાણિયોં કો પીડા પહુંચાતા હૈ’—જો એસા જાનતા વહી  
 પુરુષ અશસ્ત્ર કા અર્થાત્ સત્તરહ પ્રકાર કે સંયમ કે ચ્વેદ કા—સંયમ કે ભંગ સે હોને વાલે  
 ચ્વેદ કા જ્ઞાતા હોતા હૈ । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—અગ્નિકાય કે વ્યાપાર સે પૃથ્વીકાય આદિ કે  
 જીવોં કા વિનાશ હોતા હૈ, ઓર ઉસસે સંયમભંગ હોતા હૈ, ઓર સંયમ કે ભંગ સે મુનિપન  
 કા ભંગ હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર અગ્નિવ્યાપાર સર્વસ્વ કા નાશક હોને સે વહ સાધુઓં કે લિપ્  
 જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનકર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગને યોગ્ય હૈ ।

“આ અગ્નિ ભૂતોના ઘાતક છે, એમાં સંદેહ નથી.” (દશવૈ. અ. ૩. ગા. ૩૫)

આ અગ્નિના વ્યાપારને પૃથ્વીકાયને ખેદ કહે છે. કારણ કે દાહક હોવાના  
 કારણે તે પૃથ્વીઆદિને દુઃખ ઉત્પન્ન કરે છે તેને જાણવાવાળા ‘ખેદજ્ઞ’ કહેવાય છે.  
 ‘અગ્નિકાયનો વ્યાપાર સર્વ પ્રાણીઓને પીડા પહોંચાડે છે.’ જે આ પ્રકારે જાણે છે  
 તેજ પુરુષ અશસ્ત્રનો અર્થાત્ સત્તર પ્રકારના સંયમના ખેદનો—સંયમના ભંગથી  
 થવાવાળા ખેદનો જ્ઞાતા—જાણનાર હોય છે. તાત્પર્ય એ છે કે—અગ્નિકાયના વ્યાપારથી  
 પૃથ્વીકાય આદિના જીવોનો નાશ થાય છે. અને તેથી સંયમ ભંગ થાય છે, અને  
 સંયમના ભંગથી, મુનિપણું ભંગ થાય છે. આ પ્રમાણે અગ્નિવ્યાપાર સર્વસ્વનો નાશક  
 હોવાથી સાધુઓ માટે જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણીને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી ત્યાગવા યોગ્ય છે.

उक्तमर्थं दृढीकर्तुं विपर्ययेण पुनः कथयति-‘योऽशस्त्रस्य खेदज्ञः स दीर्घलोकशस्त्रस्य खेदज्ञः’ इति, व्याख्या पूर्ववत् । ॥ सू० २ ॥

॥ शस्त्रद्वारम् ॥

ननु येन शस्त्रेण वह्निः खिद्यते, तत् केन दृष्टम् ? अपि चाशस्त्रं संयम-  
स्वरूपमिति केन दृष्टम् ?, इति जिज्ञासायामाह-‘वीरेहि’ इत्यादि ।

मूलम्—

वीरेहि एय अभिभूय दिष्टं, संजएहि सया जएहि सया अप्पमत्तेहि ॥ सू० ३ ॥

छाया—

वीरैः एतद् अभिभूय दृष्टम्, संयतैः सदा यतैः सदा अप्रमत्तैः ॥ सू० ३ ॥

इसी बात को दृढ करने के उद्देश्य से पुनः अन्यरूप से कहते हैं कि—जो अशस्त्र  
(संयम) के खेद को जानता है वह दीर्घलोकशस्त्र के खेद को जानता है । इस की व्याख्या  
पहले के समान ही समझनी चाहिए ॥ सू० २ ॥

शस्त्रद्वार—

शंका होती है कि—जिस शस्त्र से अग्नि को खेद होता है वह किस ने  
देखा है और संयमरूप अशस्त्र किस ने देखा है ? इसके उत्तर में कहते हैं—  
‘वीरेहि’ इत्यादि ।

मूलार्थ—परिषद् उपसर्ग आदि को जीतनेवाले संयत सदा यतनावान् और सदा  
अप्रमत्त रहने वाले वीर पुरुषों ने यह देखा है ॥ सू० ३ ॥

આ વાતને દૃઢ કરવાના ઉદ્દેશથી ફરી બીજા રૂપથી કહે છે કે—જે અશસ્ત્ર  
(સંયમ)ના ખેદને જાણે છે તે દીર્ઘલોકશસ્ત્રના ખેદને જાણે છે. તેની વ્યાખ્યા પ્રથમ  
કહેલી છે તે પ્રમાણે સમજવી જોઈએ. (સૂ. ૨)

શસ્ત્રદ્વાર—

શંકા થાય છે કે જે શસ્ત્રથી અગ્નિને ખેદ થાય છે તે કોણે જોયું છે ? અને  
સંયમરૂપ અશસ્ત્ર કોણે જોયું છે ? તેના ઉત્તરમાં કહે છે—‘વીરેહિ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—પરિષદ-ઉપસર્ગ આદિને જીતવાવાળા, સંયત-સંયમી સદા યતના-  
વાન્ અને સદા અપ્રમત્ત રહેવાવાળા વીરપુરુષોએ તે જોયું છે. (સૂ. ૩)

## ટીકા—

વીરૈરિતિ । ઘનઘાતિકર્મરૂપરિપુગણક્ષપણાનન્તરં લબ્ધાતુલકેવલા-  
લોકલક્ષ્મ્યા વિરાજન્તે इति वीराः । यथा—राजानश्चतुरङ्गसैन्यसमावृतं स्वकीय-  
मरिवर्गं निहत्य लब्धराज्यविजयलक्ष्म्या विराजमाना वीरा निगद्यन्ते ।  
यद्वा—वि=विशेषेण ईरयन्ति=रागाद्यन्तरङ्गमहासुभटान् निवारयितुमनन्ततपोवीर्यं  
व्यापारयन्तीति वीराः । यद्वा—विशेषेण ईरयन्ति=शिवगतिं गमयन्ति भव्यजीवा-  
निति वीराः । यद्वा—विशेषेण ईरयन्ति=ज्ञानाचारादीन् प्रति प्रेरयन्ति भव्यजीवानिति  
वीराः, तीर्थङ्करा गणधराश्च, तैर्वीरैः, एतद्=अग्निकायस्वरूपं, यद्वा—अग्निशस्त्रम्  
अशस्त्रं चेति द्वयं दृष्टं=ज्ञानदृष्ट्य विलोकितम्, अर्थतस्तीर्थङ्करैः, गणधरैस्तु  
भगवद्वचनैरिति विशेषः ।

ટીકાર્થ—ઘાતિયાકર્મરૂપી શત્રુઓં કે સમૂહ કો નાશ કરને કે અનન્તર અનુપમ  
કેવલજ્ઞાનરૂપી લક્ષ્મી પ્રાપ્ત હોતી હૈ । ઉસ લક્ષ્મી સે જો વિરાજમાન હૈં ઉન્હેં વીર કહતે હૈં ।  
જેસે કોઈ રાજા, ચતુરંગ સેના સે યુક્ત શત્રુઓં કો હરાકર પ્રાપ્ત રાજ્ય ઔર વિજય કી લક્ષ્મી  
સે સુશોભિત હો કર ‘વીર’ કહલાતે હૈં । અથવા રાગ-દ્રેષ આદિ આન્તરિક મહાયોદ્ધાઓં  
કો રોકને કે લિપ્ અનન્ત તપોવીર્ય કાં પ્રયોગ કરને વાલે ‘વીર’ કહલાતે હૈં । અથવા ભવ્ય  
જીવોં કો વિશેષરૂપ સે મુક્તિ કી ઓર પ્રેરિત કરને વાલે ‘વીર’ કહલાતે હૈં । અથવા  
વિશેષરૂપ સે જ્ઞાનાચાર આદિ કી ઓર ભવ્ય જીવોં કો પ્રેરિત કરને વાલે ‘વીર’ કહલાતે હૈં ।  
એસે વીર તીર્થંકર ગણધર આદિ હૈં । ઉન વીરોં ને અગ્નિ કે સ્વરૂપ કો અથવા અગ્નિશસ્ત્ર  
ઔર અશસ્ત્ર કો જ્ઞાનદૃષ્ટિ સે દેખા હૈ । અર્થ સે તીર્થંકરોં ને ઔર ઉન કે વચનોં કે અનુસાર  
ગણધરોં ને દેખા હૈ ।

ટીકાર્થ—ઘાતિ—કર્મરૂપી શત્રુઓના સમૂહનો નાશ કર્યાના અનન્તર  
અનુપમ કેવલજ્ઞાન રૂપી લક્ષ્મી પ્રાપ્ત થાય છે. તે લક્ષ્મીથી જે વિરાજમાન છે તેને  
વીર કહે છે. જેમ કેઈ રાજા, ચતુરંગ સેનાથી યુક્ત (ચાર પ્રકારની સેના સહિત)  
શત્રુઓને હરાવીને પ્રાપ્ત કરેલું રાજ્ય અને વિજયરૂપ લક્ષ્મીથી સુશોભિત બની ‘વીર’  
કહેવાય છે, અથવા—રાગ-દ્રેષ આદિ આન્તરિક મહાયોદ્ધાઓને રોકવાવાળાને ‘વીર’  
કહે છે. અથવા ભવ્ય જીવોને વિશેષરૂપથી મુક્તિની તરફ પ્રેરિત કરવાવાળા ‘વીર’  
કહેવાય છે. અથવા વિશેષરૂપથી જ્ઞાનાચાર આદિની તરફ ભવ્ય જીવોને પ્રેરિત  
કરવાવાળા ‘વીર’ કહેવાય છે. એવા વીર તીર્થંકર અને ગણધર આદિ છે, તે વીરોએ  
અગ્નિના સ્વરૂપને અથવા અગ્નિશસ્ત્ર અને અશસ્ત્રને જ્ઞાનદૃષ્ટિથી જોયાં છે. અર્થથી  
તીર્થંકરોએ જોયાં છે. અને તેમનાં વચનો અનુસાર ગણધરોએ જોયાં છે.



કિં કૃત્વા તૈરેતદ્ દૃષ્ટ?—મિત્યાકાઙ્ક્ષાયામાહ—‘અભિભૂય’ ઇતિ । પરિષ્હોપસર્ગાન્ , જ્ઞાનાવરણીય-દર્શનાવરણીય-મોહનીય-અન્તરાયાગ્ધ્યાતિકર્મ-ચતુષ્ટયં ચ વિજિત્ય કેવલં સંપ્રાપ્યેત્યર્થઃ । કથમ્ભૂતૈસ્તૈ ?—સ્તિયાહ-સંયતૈઃ=સમ્=સમ્યક્પ્રકારેણ યતાઃ=પરમકરુણયા ઈર્યાસમિત્યાદિયતનાવન્તસ્તૈઃ, સકલષડ્જીવનિકાયપરિત્રાણપરાયણૈરિત્યર્થઃ । યતના દ્વિવિધા-પ્રમત્તયતના, અપ્રમત્તયતના ચ । અથ પ્રમત્તસ્ય કીદૃશી યતના ? ઉચ્યતે-કષાયાદિનિગ્રહિણ ઈર્યાદ્યુપયોગવચ્ચં પ્રમત્તયતના કથ્યતે ।

અપ્રમત્તયતના કષાયરહિતવચનસાધ્યા ભવતિ । અત્ર અપ્રમત્તગ્રહણાદિન્દ્રિયાદિપ્રમાદવર્જનં ગૃહ્યતે । યતનાગ્રહણાદ્ યાવજ્જીવયતના ગૃહ્યતે । અતઃ એવ

અહોં ને વ્યા કર કે યહ દેસા હૈ ? ઇસ શંકા કા ઉત્તર હૈ-પરીષદ્ ઓર ઉપસર્ગોં કો તથા જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય ઓર અન્તરાય નામક ચાર ઘાતિયા કર્મોં કો જીતકર કેવલ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કર કે અહોં ને દેસા હૈ ।

વે દેખને વાલે કિસ પ્રકાર કે થે ? ઇસકા ઉત્તર યહ હૈ-સમ્યક્ પ્રકાર સે, અત્યન્ત કરુણાપૂર્વક ઈર્યાસમિતિ આદિ કા પાલન કરનેવાલે અર્થાત્ સમસ્ત ષટ્કાય કી રક્ષા મેં તત્પર થે । યતના દો પ્રકાર કી હૈ-પ્રમત્ત કી યતના ઓર અપ્રમત્ત કી યતના । પ્રમત્ત કી યતના કૈસી હોતી હૈ ? ઇસકા ઉત્તર યહ હૈ કિ-કષાય આદિ કા નિગ્રહ કરને વાલા પુરુષ ઈર્યા આદિ મેં જો ઉપયોગ રખતા હૈ, વહ પ્રમત્તયતના હૈ । અપ્રમત્ત કી યતના કષાયરહિત વચનોં સે હોતી હૈ । યહાં અપ્રમત્ત શબ્દ સે ઇન્દ્રિય આદિ પ્રમાદોં કા ત્યાગ લેના ચાહિયે । યતના શબ્દ સે યહાં યાવજ્જીવ યતના કા ગ્રહણ કરના ચાહિયે । અતઃ

તેમણે શું કરીને જોયાં છે ? આ શંકાનો ઉત્તર એ છે પરીષદ્ અને ઉપસર્ગોં ને તથા જ્ઞાનાવરણ, દર્શનાવરણ, મોહનીય અને અન્તરાય નામના ચાર ઘાતિયા કર્મોં ને જીતીને કેવલજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરીને તેમણે જોયાં છે.

તે જોવાવાળા કેવા પ્રકારના હતા ? તેનો ઉત્તર-સમ્યક્પ્રકારે, અત્યન્ત કરુણાપૂર્વક ઈર્યાસમિતિ આદિના પાલન કરવાવાળા, અર્થાત્ સમસ્ત ષટ્કાયની રક્ષામાં તેઓ તત્પર હતા. યતના એ પ્રકારની છે-પ્રમત્તની યતના અને અપ્રમત્તની યતના. પ્રમત્તની યતના કેવી હોય છે ? તેનો ઉત્તર એ છે કે-કષાય આદિના નિગ્રહ કરવાવાળા પુરુષ, ઈર્યા આદિમાં જે ઉપયોગ રાખે છે તે પ્રમત્તની યતના છે. અપ્રમત્તની યતના કષાયરહિત વચનોથી થાય છે. અહિં અપ્રમત્ત શબ્દથી ઇન્દ્રિય આદિ પ્રમાદોનો ત્યાગ દેવો જોઈએ. યતના શબ્દથી અહિં જીવમાત્રની યતનાનું ગ્રહણ કરવું જોઈએ. એ માટે

સદ=સર્વદા યતૈઃ=ચરણકરણવિષયે નિરતિચારતયા યત્નવદ્ધિઃ, તથા-સદા=સર્વકાલે અપ્રમત્તૈઃ=વિષયકષાયાદિવર્જિતૈઃ । એવમ્ભૂતૈર્વીરૈરગ્નિકાયસ્વરૂપં તદીયશસ્ત્રમશસ્ત્રં ચ દૃષ્ટમિત્યર્થઃ ।

નતુ કિં નામાગ્નિશસ્ત્રમ્ ? ઉચ્યતે-અન્યુપમર્દકં શસ્ત્રમ્ । તત્ કિં-સ્વરૂપ ?-મિતિચેત્, અવધેહિ-અગ્નિશસ્ત્રં તાવદ્ દ્વિધા-દ્રવ્ય-ભાવભેદાત્ । તત્ દ્રવ્યશસ્ત્રં ત્રિવિધમ્ સ્વકાયપરકાયોભયકાયભેદાત્ । સ્વકાયશસ્ત્રં-અગ્નિકાયસ્યાગ્નિકાય એવ, યથા-તૃણાગ્નિઃ, પર્ણાગ્નિઃ શસ્ત્રમ્ । પરકાયશસ્ત્રં-ધૂલિરાપશ્ચ, આર્દ્રશ્ચ-વનસ્પતિઃ, ત્રસાઃ પ્રાણિનશ્ચ । ઉભયકાયશસ્ત્રં તુષકરીષાદિમિશ્રોઽગ્નિરન્યસ્યાગ્નેઃ,

સર્વદા ચરણસત્તરી ઓર કરણસત્તરી મેં અતિચારરહિત યતના કરને વાલે તથા સદેવ વિષય-કષાય આદિ પ્રમાદ સે રહિત વીર પુરુષોને અગ્નિકાય કે સ્વરૂપ કો તથા ડસકે શસ્ત્ર ઓર અશસ્ત્ર કો દેસા હૈ ।

શંકા—અગ્નિશસ્ત્ર કયા હૈ ?

સમાધાન—અગ્નિ કી વિરાધના કરને વાલા શસ્ત્ર અગ્નિશસ્ત્ર કહલાતા હૈ । ડસકા સ્વરૂપ કયા હૈ ? સો ડસ પ્રકાર સમજો-દ્રવ્ય ઓર ભાવ કે ભેદ સે અગ્નિ શસ્ત્ર ડો પ્રકાર કા હૈ । ડનમેં સે દ્રવ્યશસ્ત્ર કે ત્રીન ભેદ હૈ—સ્વકાય-શસ્ત્ર, પરકાય-શસ્ત્ર ઓર ઉભયકાય-શસ્ત્ર । અગ્નિકાય કા સ્વકાયશસ્ત્ર અગ્નિ હી હૈ, જૈસે તિનકે કી અગ્નિ, પત્તોં કી અગ્નિ કા શસ્ત્ર હૈ । ધૂલિ ઓર પાની આદિ અગ્નિકાય કા પરકાયશસ્ત્ર હૈ । ગીલી વનસ્પતિ ભી પરકાયશસ્ત્ર હૈ ઓર ત્રસ પાણી ભી । તુષ ( છિલકા ) ઓર કરીષ

સર્વદા ચરણ સીતેરી અને કરણસીતેરીમાં અતિચારરહિત યતના કરવાવાળા તથા હંમેશાં વિષય-કષાય આદિ પ્રમાદથી રહિત વીર પુરુષોએ અગ્નિકાયના સ્વરૂપને તથા તેના શસ્ત્ર અને અશસ્ત્રને જોયાં છે.

શંકા—અગ્નિ શસ્ત્ર એ શું છે ?

સમાધાન—અગ્નિની વિરાધના કરવાવાળું શસ્ત્ર તે અગ્નિશસ્ત્ર કહેવાય છે. તેનું સ્વરૂપ કેવું છે ? તે આ પ્રમાણે સમજો-દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી અગ્નિશસ્ત્ર બે પ્રકારનાં છે, તેમાંથી દ્રવ્યશસ્ત્રના ત્રણ ભેદ છે. સ્વકાયશસ્ત્ર પરકાયશસ્ત્ર, અને ઉભયકાયશસ્ત્ર. અગ્નિકાયનું સ્વકાયશસ્ત્ર અગ્નિજ છે. જેમ તણુપાની અગ્નિ, પાંદડાંની અગ્નિનું શસ્ત્ર છે. ધૂળ અને પાણી આદિ અગ્નિકાયનું પરકાયશસ્ત્ર છે. લીલી વનસ્પતિ પણ પરકાયશસ્ત્ર છે. અને ત્રસ પ્રાણી પણ પરકાયશસ્ત્ર છે. તુષ અને છાણુ આદિથી મળેલી અગ્નિ

તપ્તોદકાદિકં ચ । ભાવશસ્ત્રં તુ-અગ્નિં પ્રતિ દુષ્પ્રણિહિતમનોવાકાયરૂપમ્ । શેષાણિ પૃથિવીકાયવદ્ બોધ્યાનિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

યસ્તુ પ્રમાદવશાદુપભોગાર્થમગ્નિકાયજીવાનુપમર્દયતિ, તત્ફલમાહ—‘જે’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

જે પમત્તે ગુણદ્વિષ્ણુ સે હુ દંડેત્તિ પવુચ્ચહ ॥ ૪ ॥

છાયા—

યઃ પ્રમત્તઃ ગુણાર્થિકઃ ( ગુણસ્થિતઃ ) સ સ્વલુ દણ્ડ ઇતિ પ્રોચ્યતે ।

ટીકા—

યો હિ પ્રમત્તઃ=વિષયકષાયાદિપ્રમાદવશઃ સન્ ગુણાર્થિકઃ ભવતી-  
ત્યન્વયઃ । ગુણઃ=અગ્નિકાયકૃતોપકારઃ. સ એવાર્થઃ=પ્રયોજનં યસ્ય સ ગુણાર્થી, સ  
એવ ગુણાર્થિકઃ, રન્ધન-પચન-પ્રકાશ-તાપનાદિપ્રયોજનવાન્ ભવતિ । યદ્વા—

(છાણે) આદિ સે મિલી અગ્નિ તથા ગર્મ જલ અગ્નિ કા ઉભયકાયશસ્ત્ર હૈ । અગ્નિ કે  
પ્રતિ દુષ્ટ મન વચન ઔર કાયકા પ્રવર્તન ભાવશસ્ત્ર હૈ । શેષ દ્વાર પૃથિવીકાય કે સમાન સમજને  
ચાહિય ॥ સૂ૦ ૩ ॥

પ્રમાદ કે વશ હોકર ઉપભોગ કે નિમિત્ત અગ્નિકાય કે જીવોં કી વિરાધના કરને વાલે  
કો હોને વાલા ફલ કહતે હૈં—‘જે’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—જો પ્રમાદી પુરુષ અગ્નિ કે ગુણોં કા અર્થી—રાંધના આદિ મેં સ્થિત—હૈ,  
વહ ઉસકે લિયે દણ્ડ કહલાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

ટીકાર્થ—વિષય કષાય આદિ પ્રમાદોં કે અધીન હોકર પુરુષ ગુણાર્થી હોતા હૈ ।  
અગ્નિકાય દ્વારા હોને વાલા ઉપકાર યહાં ગુણ કહા ગયા હૈ । ઇસ ગુણ કા અર્થી  
ગુણાર્થિક કહલાતા હૈ । રાંધના, પકાના, ઉજાલા કરના આદિ અગ્નિ કે ગુણ હૈં । જો

તથા ગરમ જલ અગ્નિનું ઉભયકાયશસ્ત્ર છે. અગ્નિ પ્રતિનું દુષ્ટ મન, વચન અને કાયાનું  
પ્રવર્તન તે ભાવશસ્ત્ર છે, બાકીના દ્વાર પૃથ્વીકાયની સમાન બરાબર-સમજવા જોઈએ. (સૂ. ૩)

પ્રમાદને વશ થઈ ઉપભોગના નિમિત્તે અગ્નિકાયના જીવોની વિરાધના કરવા  
વાળાને જે ક્ષણ થાય છે—મળે છે. તે ક્ષણ કહે છે. ‘જે’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—જે પ્રમાદી પુરુષ અગ્નિના અર્થી—રાંધવું વિગેરેમાં સ્થિત—છે તે  
એના માટે દંડ કહેવાય છે. (સૂ. ૪)

ટીકાર્થ—વિષય કષાય આદિ પ્રમાદોને આધીન થઈને પુરુષ ગુણાર્થી થાય છે.  
અગ્નિકાય દ્વારા થવાવાળો ઉપકાર તેને અહિં ગુણ કહેવામાં આવ્યો છે. આ ગુણને  
અર્થી તે ગુણાર્થિક કહેવાય છે. રાંધવું-પકાવવું, અજવાળું કરવું આદિ અગ્નિના ગુણ છે. જે



‘गुणस्थितः’ इति च्छाया, तेन गुणेषु=अग्निगुणेषु रन्धनपचनादिषु, शब्दादिषु वा स्थितः=आसक्तः, रन्धनार्थमग्निमुत्पादयति प्रज्वालयति यथाकथञ्चिदुपमर्दयतीत्यर्थः । स मनोवाक्कायस्य दुष्प्रणिधानेनाग्निशस्त्रसमारम्भकरणेन चाग्न्यादीनां प्राणिनां दण्डं प्रति कारणभूतत्वाद् दण्ड इति प्रोच्यते, कारणे कार्योपचाराद्, दण्डवत् प्राणिनां हिंसकतया दण्ड इति निन्धनाम्ना लोके प्रसिध्यतीति भावः ॥ सू० ४ ॥

एवं विज्ञायाग्निशस्त्रसमारम्भाद् विनिवर्तितव्यमित्याह—‘तं’ इत्यादि ।

मूलम्—

तं परिणाय मेधावी इयाणि णो जमहं पुव्वमकासी पमाणं ॥ सू० ५ ॥

छाया—

परिज्ञाय मेधावी इदानीं नो यदहं पूर्वमकार्षं प्रमादेन ॥ सू० ५ ॥

पुरुष इन गुणों में अथवा शब्द आदि इन्द्रियविषयों में आसक्त है अर्थात् रांधने आदि के लिए अग्नि उत्पन्न करता है, जलाता है और किसी भी प्रकार उसका हनन करता है, वह पुरुष अपने मन, वचन, काय के दूषित व्यापार के कारण तथा अग्निशस्त्र का समारंभ करने के कारण अग्नि के जीवों के दंडका कारण होने से दण्ड कहलाता है। कारण में कार्य का उपचार करने से दंड के कारणभूत पुरुष को दंड कहते हैं। लोक में उस पुरुष की ‘दंड’ इस निंदनीय नाम से प्रसिद्धि होती है ॥ सू० ४ ॥

अब बतलाते हैं कि पूर्वोक्त कथन जानकर अग्निशस्त्र के समारंभ से वचना चाहिए—‘ते’ इत्यादि ।

मूलार्थ—अग्निकाय अथवा अग्निकाय के समारंभ को जानकर बुद्धिमान् पुरुष निश्चय करे कि—प्रमाद के वश होकर मैंने पहले जो किया सो अब नहीं करूंगा ॥ सू० ५ ॥

પુરુષ આ શુભોમાં અથવા શબ્દ આદિ ઇન્દ્રિયવિષયોમાં આસક્ત છે. અર્થાત્ રાંધવા આદિને માટે અગ્નિ ઉત્પન્ન કરે છે, બાળે છે, અને કોઈ પણ પ્રકારે તેનું હનન કરે છે, તે પુરુષ પોતાના મન, વચન અને કાયાના દૂષિત વ્યાપારના કારણે તથા અગ્નિશસ્ત્રના સમારંભ કરવાના કારણે અગ્નિના જીવોને દંડનું કારણ હોવાથી દંડ કહેવાય છે. કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરવાથી દંડના કારણભૂત પુરુષને પણ દંડ કહે છે. લોકમાં તે પુરુષની ‘દંડ’ આ નિંદનીય નામથી પ્રસિદ્ધિ થાય છે. (સૂ. ૪)

હવે બતાવે છે કે—પૂર્વોક્ત કથન બાણીને અગ્નિશસ્ત્રના સમારંભથી બચવું બોધ એ—‘તં’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—અગ્નિકાય અથવા અગ્નિકાયના સમારંભને બાણી બુદ્ધિમાન પુરુષ નિશ્ચય કરે કે—પ્રમાદના વશ થઈને મેં પહેલાં જે કયું છે તે હવે નહીં કરું. (સૂ. ૫)

टीका—

मेधावी=ग्रहणधारणादिगुणवान्, यद्वा-साधुमर्यादारक्षणे सावधानः, यद्वा-  
हेयोपादेयविवेकनिपुणः, तम्=अग्निकायं, यद्वा तम्=अग्निशस्त्रसमारम्भं दण्डनाम-  
फलप्रदं परिज्ञाय=ज्ञपरिज्ञया बन्धकारणत्वेन, प्रत्याख्यानपरिज्ञया हेयत्वेन पर्यालोच्य,  
प्रतिजानीते-अहं=मिथ्यात्वादिमलिनान्तःकरणः प्रमादेन=विषयकषायादिप्रमादवशतः  
यम्=अग्निशस्त्रसमारम्भं पूर्वम्=अज्ञानावस्थायाम्, अकार्षम्=कृतवान्, यत्तदोर्नित्य-  
साकाङ्क्षत्वात् तम् इदानीम्=संप्रति प्रव्रज्यावस्थायाम् नो=नैव करिष्य इति  
शेषः ॥ सू० ५ ॥

अथ सर्वथाऽग्निशस्त्रसमारम्भपरित्यागिनोऽनगारान्, तथाऽग्निशस्त्र-  
समारम्भे प्रवृत्तान् द्रव्यलिङ्गिनश्च विविच्य प्रतिबोधयितुमाह-‘लज्जमाणा’. इत्यादि ।

टीकार्थ—ग्रहण और धारणादिक गुणों से युक्त, अथवा साधुओं की मर्यादा की  
रक्षा करने में सावधान, अथवा हेय और उपादेय के विवेक में निपुण पुरुष अग्निकाय अथवा  
अग्निकाय के समारंभ को जानकर अर्थात् ज्ञपरिज्ञा से उसे कर्मबंध का कारण समझकर और  
प्रत्याख्यानपरिज्ञा से हेय समझकर इस प्रकार प्रतिज्ञा करते हैं—मिथ्यात्व आदि विकारों के  
वश होकर मैंने अज्ञानदशा में अग्निकाय का समारंभ किया था । वह समारंभ अब दीक्षा-  
अवस्था में नहीं करूँगा ॥ सू० ५ ॥

अग्निशस्त्र का सर्वथा त्याग करने वाले अनगारों तथा अग्निशस्त्र के समारंभ में  
प्रवृत्ति करने वाले द्रव्यलिङ्गी पुरुषों को अलग अलग कर के समझाते हैं—‘लज्जमाणा’. इत्यादि ।

टीकार्थ—शुद्ध अने धारणादिक गुणोत्थी युक्त अथवा साधुओं की मर्यादा की  
रक्षा करवाया सावधान, अथवा हेय अने उपादेयना विवेकमां निपुण पुरुष अग्निकाय  
अथवा अग्निकायना समारंभने लक्ष्मीने अर्थात् ज्ञपरिज्ञाथी तेने कर्मबंधनं कारण  
समझने अने प्रत्याख्यानपरिज्ञाथी हेय-(त्याग्य) समझने आ प्रभावे प्रतिज्ञा  
करे छे-मैं अज्ञान दशा में मिथ्यात्व आदि विकारोंने वश थधने अग्निकायने समारंभ  
कर्यो हतो; ते समारंभ हवे दीक्षा-अवस्था में नहीं करूँ. (सू. ५)

अग्निशस्त्रने सर्वथा त्याग करवावाणा अणुगारो तथा अग्निशस्त्रना समारंभमां  
प्रवृत्ति करवावाणा द्रव्यलिङ्गी पुरुषोंने अलग-अलग करीने समझावे छे-‘लज्जमाणा’. इत्यादि.

મૂલમ્—

લજ્જમાણા પુઢો પાસ, અળગારા મોત્તિ એગે પવયમાણા, જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં અગ્નિકર્મસમારંભેણં, અગ્નિસત્થં સમારંભમાણા અળ્લે અળેગરૂવે પાળે વિહિંસંતિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

છાયા—

લજ્જમાનાઃ પૃથક્ પશ્ય, અનગારાઃ સ્મ ઇતિ એકે પ્રવદમાનાઃ, યદિમં વિરૂપ-  
રૂપૈઃ શસ્ત્રૈઃ અગ્નિકર્મસમારંભેણ, અગ્નિશસ્ત્રં સમારંભમાણા અન્યાન્ અનેકરૂપાન્ પ્રાણિનો  
વિહિંસન્તિ ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકા—

લજ્જમાનાઃ=અગ્નિકાયસમારંભે પરમકરૂણયા દ્રવીભૂતહૃદયતયા સંકુચિતા-  
ત્માનઃ, અગ્નિશસ્ત્રસમારંભપરિત્યાગિન ઇત્યર્થઃ, પૃથક્=વિભિન્નાઃ, કેચિત્ પ્રત્યક્ષ-  
જ્ઞાનિનોઽવધિમનઃપર્યયકેવલિનઃ, કેચિત્ પરોક્ષજ્ઞાનિનો ભાવિતાત્માનોઽનગારાઃ

મૂલાર્થ—અગ્નિકાય કે આરંભ મેં સંકોચ કરને વાલોં કો અલગ સમજો । ઔર  
'હમ અનગાર હૈં' એસા કહને વાલે નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રોં દ્વારા અગ્નિકર્મ કા સમારંભ કરને  
વાલે દૂસરે (દ્રવ્યલિંગી), અનેક પ્રકાર કે પ્રાણિયોં કી હિંસા કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકાર્થ—અત્યન્ત દયા કે કારણ અગ્નિકાય કે સમારંભ મેં હાર્દિક સંકોચ  
કરને વાલે, હસી કારણ અગ્નિશસ્ત્ર કે સમારંભ કે ત્યાગી અલગ હૈં, ઉન મેં કોઈ અવધિ-  
જ્ઞાની હૈં, કોઈ મનઃપર્યયજ્ઞાની હૈં, કોઈ કેવલજ્ઞાની હૈં । કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની ભાવિતાત્મા

મૂલાર્થ—અગ્નિકાયના આરંભમાં સંકોચ કરવાવાળાને અલગ સમજો, અને  
'અમે અણુગાર છીએ' એ પણુ કહેવાવાળા નાના પ્રકારનાં શસ્ત્રો દ્વારા અગ્નિકર્મને  
સમારંભ કરવાવાળા ખીજ (દ્રવ્યલિંગી) અનેક પ્રકારનાં પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે. (સૂ. ૬)

ટીકાર્થ—અત્યન્ત દયાના કારણે અગ્નિકાયના સમારંભમાં હાર્દિક સંકોચ  
કરવાવાળા, આજ કારણથી અગ્નિશસ્ત્રના સમારંભના ત્યાગી અલગ છે—જૂદા છે. એમાં  
કોઈ અવધિજ્ઞાની છે, કોઈ મનઃપર્યયજ્ઞાની છે, કોઈ કેવલજ્ઞાની છે. કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની  
ભાવિતાત્મા અણુગાર છે, તે સર્વ સૂક્ષ્મ અને આદર અગ્નિકાયનો સમારંભ કરવામાં



आचारचिन्तामणि-टीका अध्या० १ उ. ४ सू. ६ अग्निकायसमारम्भकर्तृ निरूपणम् ५६३

सन्तीति पश्य । इमे सूक्ष्मवादराग्निकायसमारम्भकरणे भीतास्त्रस्ता उद्विग्नास्त्रिकरण-  
त्रियोगैरग्निकायसमारम्भपरित्यागिनो विद्यन्ते तानवलोकयेत्यर्थः ।

एके पुनरन्ये तु 'वयमनगाराः स्मः' इति साभिमानं प्रवदमानाः 'वयमेवा-  
ग्निकायजीवरक्षणगरा महाव्रतधारिणः' इति प्रलपन्तो द्रव्यलिङ्गिनः सन्ति, तान् पृथक्  
=पृथग्भावेन पश्य ।

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्तन्ते,  
नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्ति, इति दर्शयति-'यदिमम्' इत्यादि ।

यद्-यस्माद् विरूपरूपैः=विभिन्नस्वरूपैः द्रव्यभावभेदभिन्नैः शस्त्रैः=  
अग्निकायशस्त्रैः, अग्निकर्मसमारम्भेण=अग्नेः कर्मसमारम्भः अग्निकर्मसमारम्भः=

अनगार हैं । ये सब सूक्ष्म और बादर अग्निकाय का समारंभ करने में भीत-डरने वाले हैं,  
त्रस्त हैं, उद्विग्न हैं और तीन करण तीन योग से अग्निकाय के समारंभ के त्यागी हैं,  
उन्हें देखो ।

इन से विपरीत दूसरे लोग 'हम अनगार हैं, हमीं अग्निकाय की रक्षा  
में तत्पर हैं, महाव्रती हैं' इस प्रकार अभिमान के साथ प्रलाप करते हुए द्रव्यलिङ्गी हैं,  
उन्हें अलग समझो ।

अनगार होने को अभिमान करने वाले ये लोग साधुओं का तनिक भी कर्तव्य नहीं  
करते और न गृहस्थकार्य का त्याग करते हैं ।

वे लोग तरह-तरह के द्रव्य और भाव रूप अग्निकाय के शस्त्रों से अग्निकर्म का

भीत-ભયવાન છે, ત્રસ્ત છે, ઉદ્વિગ્ન છે. અને ત્રણકરણ, ત્રણયોગથી અગ્નિકાયના  
સમારંભના ત્યાગી છે, તેને જુઓ.

એનાથી વિપરીત ( ઉપર કહ્યા તેનાથી ઉલટો વ્યવહાર કરનારા ) બીજા લોક  
'અમે અણુગાર છીએ, અમે અગ્નિકાયની રક્ષામાં તત્પર છીએ, મહાવ્રતી છીએ.'  
એ પ્રમાણે અભિમાનની સાથે પ્રલાપ કરે છે તે દ્રવ્યલિંગી છે, તેને અલગ સમજો.

અણુગાર હોવાનું અભિમાન કરવાવાળા આ લોક સાધુઓના જરાયણ કર્તવ્યને  
કરતા નથી અને ગૃહસ્થનાં કાર્યોનો ત્યાગ કરતા નથી.

તે લોક તરેહ-તરેહના દ્રવ્ય અને ભાવરૂપ અગ્નિકાયના શસ્ત્રોથી અગ્નિકર્મનો

અગ્નિ નિમિત્તીકૃત્ય જ્ઞાનાવરણીયાદ્યષ્ટવિધકર્મબન્ધનિવન્ધનસાવધવ્યાપારસ્તેન, ઇમમ્= અગ્નિકાયં વિહિંસન્તિ ।

અગ્નિકાયહિંસાયાં પ્રવૃત્તાઃ સ્વલુ ષટ્કીવનિકાયરૂપં લોકં સર્વમેવ વિહિંસન્તી-  
ત્યાહ-‘અગ્નિશસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । અગ્નિશસ્ત્રમ્=અન્યુપમર્દકં શસ્ત્રમ્, તત્ પૂર્વોક્તપ્રકારં  
દ્રવ્યભાવભેદભિન્નં સમારમમાણાઃ=અગ્નિકાયં પ્રતિ વ્યાપારયન્તઃ અન્યાન્ ત્રસાંશ્ચ  
વિહિંસન્તિ ।

इह बहुविधा द्रव्यलिङ्गिनो विद्यन्ते, यथा-‘वयं पञ्चमहाव्रतधारिणः  
सर्वारम्भपरित्यागिनः षट्कजीवनिकायरक्षका अनगाराः स्मः’ इति वदन्तो दण्डि-  
शाक्यादयः सन्ति । ते चात्मानमनगारं प्रवदमाना नानगारगुणेषु लेशतोऽपि प्रवर्तन्ते ।

આરંભ કર કે અર્થાત્ અગ્નિ કે નિમિત્ત સે જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોં કા કારણભૂત સાવધ  
વ્યાપાર કર કે અગ્નિકાય કી હિંસા કરતે હૈં ।

અગ્નિકાય કી હિંસા મેં પ્રવૃત્ત પુરુષ ષટ્કાયરૂપ સમસ્ત જીવોં કી હિંસા કરતે હૈં,  
યહી બતલાતે હૈં-અગ્નિ કા ઘાત કરને વાલે-દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર કા અગ્નિ કે વિષય મેં  
પ્રયોગ કરને વાલે અગ્નિકાય કે અતિરિક્ત અન્ય પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોં કી તથા દ્વીન્દ્રિય  
ત્રસ જીવોં કી હિંસા કરતે હૈં ।

સંસાર મેં બહુત સે દ્રવ્યલિંગી હૈં । ‘હમ પંચમહાવ્રતધારી, સમસ્ત આરંભ કા  
ત્યાગ કરને વાલે ઓર ષટ્કાય કે રક્ષક અનગાર હૈં ।’ ઇસ પ્રકાર કહને વાલે દંડી  
શાક્ય આદિ હૈં । વે અપને કો અનગાર કહતે હુએ મી લેશમાત્ર મી અનગાર કે ગુણોં મેં  
પ્રવૃત્તિ નહીં કરતે ।

આરંભ કરીને અર્થાત્ અગ્નિના નિમિત્તથી જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠ કર્મોના કારણભૂત  
સાવધ વ્યાપાર કરીને અગ્નિકાયની હિંસા કરે છે.

અગ્નિકાયની હિંસામાં પ્રવૃત્ત પુરુષ ષટ્કાયરૂપ સમસ્ત જીવોની હિંસા કરે છે.  
એજ બતાવે છે-અગ્નિના ઘાત કરવાવાળા-દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્રનો અગ્નિના  
વિષયમાં પ્રયોગ કરવાવાળા અગ્નિકાય સાથે બીજા પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોની તથા  
દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે.

સંસારમાં ઘણાંજ દ્રવ્યલિંગી છે. ‘અમે પંચમહાવ્રતધારી સમસ્ત આરંભનો  
ત્યાગ કરવાવાળા અને ષટ્કાયના રક્ષક અણગાર છીએ.’ આ પ્રકારે કહેવાવાળા દંડી  
શાક્ય આદિ છે. તે પોતાને અણગાર કહેતા થકા પણ લેશમાત્ર અણગારના ગુણોમાં  
પ્રવૃત્તિ કરતા નથી.

आचारचिन्तामणि-टीका अध्या० १ उ. ४ सू. ६ अग्निकायसमारम्भकर्त्तरिरूपणम् ५६५

शाक्यादयः पचन-पाचन-प्रतापन-प्रकाशाद्यर्थमग्निकर्मसमारम्भं कुर्वन्ति, कारयन्ति, कुर्वतोऽनुमोदयन्ति च, तेन षट्कायजीवविराधका भवन्ति ।

दण्डिनोऽपि-‘ वयं पञ्चमहाव्रतधारिणो जिनवचनाराधका अनगाराः स्मः ’ इत्यादि प्रवदमानाः साध्वाभासाः सावद्यमुपदिशन्तः शास्त्रनिषिद्धमग्निकर्मसमारम्भं कारयन्ति ।

दृश्यन्ते हि-शास्त्रव्याख्यानादौ देवकुलादौ प्रतिमाप्रतिश्रयादिप्रतिष्ठादौ च धूपदीपहवनादिभिरग्निकर्मसमारम्भं कारयन्तो दण्डिनः एवं कथयन्ति च-स्नानादिना पुष्पैर्धूपैश्च पायसापूपलङ्घूकादिभिर्विविधैर्नैवेद्यैश्च प्रतिमापूजा

शाक्य आदि पचन, पाचन, तापन तथा प्रकाश आदि के लिए अग्निकर्म का समारंभ करते हैं, कराते हैं और करते हुए का अनुमोदन करते हैं, अतः वे षट्काय के विराधक हैं ।

दण्डी कहते हैं-‘ हम पंचमहाव्रतधारी हैं, जिनवचन के आराधक अनगार हैं ’ । ये साध्वाभास सावद्य का उपदेश देते हैं और शास्त्रनिषिद्ध अग्निकर्म का समारंभ करवाते हैं ।

शास्त्र के व्याख्यान आदि में, देवकुल आदि में, प्रतिमा प्रतिश्रय और प्रतिष्ठा आदि में धूप दीप और हवन आदि द्वारा अग्निकर्म का आरंभ करवाते हुए दंडी देखे जाते हैं । वे ऐसा कहते हैं-‘ स्नान कराकर पुष्पों से, धूप से, खीर से, पूसा से, तथा लङ्घू आदि से, तथा विविध प्रकार के नैवेद्य से प्रतिमा की पूजा करनी

शाक्य आदि पचन, पाचन, तापन तथा प्रकाश आदि भाटे अग्निकर्मने समारंभ करे छे, करावे छे अने करनारने अनुमोदन आपे छे. तेथी ते षट्कायना विराधक छे.

दंडी कहे छे के:-‘ अमे पंचमहाव्रतधारी छीअे, जिनवचनना आराधक अणुगार छीअे. ’ अे साध्वाभास सावद्यने उपदेश आपे छे. अने शास्त्रनिषिद्ध अग्निकर्मने समारंभ करावे छे.

शास्त्रना व्याख्यान आदिमां, देवकुल आदिमां, प्रतिमा प्रतिश्रय तथा प्रतिष्ठा आदिमां धूप, दीप अने हवन आदि द्वारा अग्निकर्मने आरंभ करावता छेथ तेवा दंडी जेवामां आवे छे. ते अेभ कहे छे के:-स्नान करावीने, पुष्पोथी, धूपथी, भीरथी, मालपूवा तथा दाडु आदिथी तथा विविध प्रकारनां नैवेद्यथी प्रतिमानी पूजा करवी जोधअे. जिन



કર્તવ્યેત્યાદિ । પુનઃ—જિનસ્ય વામપાશ્વે ધૂપઃ સ્થાપનીયઃ, દક્ષિણપાશ્વે ઘૃતપૂર્ણઃ પ્રજ્વાલિતઃ પ્રદીપઃ સ્થાપ્યઃ, પાયસાપૂષ્પઘૃતપૂલકાદિ નૈવેદ્યમપિ પુનઃ સ્થાપનીય-મિત્યાદિ । તત્ત્વ વિનાગ્નિકર્મસમારંભં નોપપદ્યતે । ઓષધ્યર્થે કાથાદિ, શુઠિઠપાકાદિ, પાતુમુષ્ણોદકં, મોક્તું વિવિધાહારં ચ કારયન્તીતિ ॥ સૂ. ૬ ॥

અથ સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનં જગાદ—‘તત્થ’ . ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

તત્થ સ્વલુ ભગવયા પરિણ્ણા પવેડયા । ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ પરિવંદન-  
માણણ-પૂયણાણ જાહમરણમોયણાણ દુક્કલપહિઘાયહેડં સે સયમેવે અગણિસત્થં

ચાહિયે । જિન ભગવાન્ કે બૈંઈ (ડાબી) ઓર ધૂપ રખના ચાહિયે ઓર દાહિની (જિમણી) ઓર ઘી સે મરા જલતા દીપ રખના ચાહિયે । સામને સ્ત્રીર, માલપૂઆ, ઘેવર ઓર લડકા આદિ નૈવેદ્ય રખના ચાહિયે ” । યે સબ અગ્નિકર્મ કા સમારંભ કિયે વિના નહીં હો સકતે । વે લોગ ઓષધિ કે લિયે કાથ વગેરહ, સૌંઠ કા પાક આદિ, પીને કે લિયે ગર્મ જલ ઓર સ્નાને કે લિયે વિવિધ પ્રકાર કે આહાર બનવાતે હૈં ॥ સૂ. ૬ ॥

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈં—‘તત્થસ્વલુ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ઈસ વિષય મેં ભગવાન્ને બોધ દિયા હૈ । ઈસી જીવન કે લિયે, વંદન, માનના ઓર પૂજા કે લિયે, જન્મ મરણ સે મુક્ત હોને કે લિયે, તથા દુઃખોં કા નિવારણ કરને કે લિયે વહ સ્વયં અગ્નિશક્તિ કા આરંભ કરતા હૈ, દૂસરોં સે અગ્નિશક્તિ કા

ભગવાનની ડાબી તરફ ધૂપ રાખવો જોઈએ. અને જમણી તરફ ઘીનો ભરેલો બળતો દીપક રાખવો જોઈએ. સામે ખીર, માલપૂવા, ઘેવર અને લાડુ આદિ નૈવેદ્ય રાખવું જોઈએ. એ સર્વ અગ્નિકર્મના સમારંભ કર્યા વિના થઈ શકતાં નથી. તે લોક ઔષધી માટે કવાથ વગેરે, સુંકના પાક આદિ, પીવા માટે ગરમ જલ અને ખાવા માટે વિધ-વિધ પ્રકારના આહાર બનાવરાવે છે. (સૂ. ૬)

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે—‘તત્થ સ્વલુ’ . ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—આ વિષયમાં ભગવાને બોધ આપ્યો છે. આ જીવન માટે વંદન, માનન, અને પૂજાને માટે, જન્મ-મરણથી મુક્ત થવા માટે તથા દુઃખોનું નિરાકરણ કરવા માટે તે પોતે અગ્નિશક્તિનો આરંભ કરે છે, બીજા પાસે અગ્નિશક્તિનો આરંભ કરાવે છે, અને

आचारचिन्तामणि-टीका अ० १ उ. ४ सू० ७ अग्निशस्त्रसमारम्भकारणनिरूपणम् ५६७

समारंभइ, अण्णेहिं वा अगणिसत्थं समारंभावेइ, अण्णे वा अगणिसत्थं समारंभमाणे समणुजाणइ, तं से अहियाए, तं से अबोहीए ॥ सू० ७ ॥

छाया—

तत्र खलु भगवता परिज्ञा प्रवेदिता । अस्य चैव जीवितस्य परिवन्दनमानन-  
पूजनाय जातिमरणमोचनाय दुःखप्रतिघातहेतुं स स्वयमेव अग्निशस्त्रं समारभते,  
अन्यैर्वा अग्निशस्त्रं समारम्भयति, अन्यान् वा अग्निशस्त्रं समारभमाणान् समनुजानाति,  
तत् तस्याहिताय, तत् तस्याबोधये ॥ सू० ७ ॥

टीका—

तत्र=अग्निकायसमारम्भे भगवता=श्रीमहावीरेण परिज्ञा=सम्यग्बोधः खलु  
प्रवेदिता=प्रतिबोधिता । कर्मबन्धसमुच्छेदार्थं जीवेन परिज्ञाऽवश्यं शरणीकरणीयेति  
भगवता प्रतिबोधितमिति भावः ।

उपभोगद्वारम्—

लोकः कस्मै प्रयोजनायाग्निकायमुपमर्दयती ?—त्याह—‘अस्य चैव जीवितस्ये ’

आरंभ करवाता है और अग्निशस्त्र का आरंभ करने वाले दूसरों का अनुमोदन करता है, सो  
यह उस के अहित के लिए है, यह अबोधि के लिए है ॥ सू० ७ ॥

टीकार्थ—अग्निकाय के समारंभ में श्री महावीरने सम्यक् उपदेश दिया है । आशय  
यह है कि—कर्मबंध का नाश करने के लिए जीव को परिज्ञाका आश्रय अवश्य लेना चाहिए,  
ऐसा उपदेश दिया है ।

उपभोगद्वार—

किस प्रयोजन से लोग अग्निकाय की हिंसा करते हैं यह बतलाते हैं—इसी

अग्निशस्त्रने। आरंभ करवावाणा भीजने अनुमोदन करे छे. ते अनेना ( पोताना )  
अहित भाटे छे, ते अबोधिने भाटे छे. ( सू. ७ )

टीकार्थ—अग्निकायना समारंभमां श्री महावीरे सम्यक् उपदेश आये छे.  
आशय अे छे के—कर्मबंधना नाश करवा भाटे अवे परिज्ञाने। आश्रय अवश्य लेवे।  
नेछ अे. अवे। उपदेश आये छे.

उपभोग द्वार—

इया प्रयोजनथी लोक अग्निकायनी हिंसा करे छे, अे बतावे छे—आ क्षणभंगुर

ત્યાદિ । અસ્યૈવ ક્ષણમહ્નુસ્ય જીવિતસ્ય=જીવનસ્ય સુખાર્થ પ્રકાશકરણાર્થમ્, ઓદનાદિરન્ધનાર્થ, ધૂમયાનાદિગતિસિદ્ધ્યર્થ ચેત્યર્થઃ । તથા-પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય-પરિવન્દન=પ્રશંસા તદર્થ, યથા-અગ્નિયન્ત્રેણ 'આતિશયજી' ઇતિ-ભાષાપસિદ્ધે ક્ષણનશ્વરસ્ફુલ્લિજ્જવૃષ્ટ્યાદૌ, માનન=જનસત્કારઃ તદર્થ, યથા-ભૂપાદીન્ પ્રસાદયિતું દીપમાલાદીપવૃક્ષનિર્માણાદૌ । પૂજન=ચત્ત્રસ્નાદિપુરસ્કારલાભસ્તદર્થ, યથા-દેવપ્રતિમાદ્યર્થ ધૂપદીપારાત્રિકકરણાદૌ । તથા-જાતિમરણમોચનાય=જન્મ-મરણબન્ધમોચનાર્થ, યથા-હવનાદૌ, દુઃખપ્રતિઘાતહેતુમ્=વાતરોગાપનયનાર્થ શીતાપનોદનાર્થ જ્વરવિષ્ણુચિકાદિનિવૃત્ત્યથ ચ દહનપ્રતાપનાદૌ, સ=નશ્વરજીવન-સુખાદ્યર્થો સ્વયમેવ અગ્નિશસ્ત્રમ્=અન્યુપમર્દકં દ્રવ્યભાવશસ્ત્રં સમારભતે=વ્યાપારયતિ ।

ક્ષણમહ્નુર જીવન કે સુખ કે લિપે, પ્રકાશ કરને કે લિપે, ચાવલ આદિ પકાને કે લિપે, રેલ આદિ ચલાને કે લિપે, તથા અપની પ્રશંસા કે લિપે, જૈસે-અગ્નિયન્ત્ર સે ક્ષણવિનશ્વર ચિનગારિયાં વરસાને કે લિપે અર્થાત્ 'અતિશયજી' કે લિપે' જન-સત્કાર કે લિપે જૈસે-રાજા વગૈરહ કો પ્રસન્ન કરને કે ઉદેશ્ય દીપમાલિકા જલાના યા દીપકો કે વૃક્ષ કી રચના કરના, તથા વલ્લ, રત્ન આદિ પુરસ્કાર પાને કે લિપે, જૈસે-દેવપ્રતિમા આદિ કે લિપે ધૂપ-દીપ આદિ કરના । તથા જન્મ મરણ સે મુક્ત હોને કે લિપે, જૈસે હવન આદિ મેં, દુઃખોં કા પ્રતીકાર કરને કે લિપે, જૈસે-વાતરોગ હટાને કે લિપે, ઠંડ દૂર કરને કે લિપે તથા જ્વર ઇવં વિષ્ણુચિકા દૂર કરને કે લિપે ડાંમ દેના યા તપાના આદિ કાર્ય કરને મેં । ઇન સવ પ્રયોજનોં કે લિપે ઇસ જીવન કે સુખ કા અર્થો પુરુષ સ્વયં દ્રવ્ય

જીવનના સુખ માટે, પ્રકાશ કરવા માટે, ચોખ્ખા આદિ રાંધવા માટે, રેલ આદિ ચલાવવા માટે તથા પોતાની પ્રશંસા માટે, જેમકે-અગ્નિયન્ત્રથી ક્ષણવિનશ્વર ચિન-ગારીઓ વરસાવવા માટે. અર્થાત્ 'આતિશયજી' માટે, જનસત્કાર માટે, જેમ-રાજા વગેરેને પ્રસન્ન કરવાના ઉદેશથી દીપમાલિકા જગાવવી અથવા દીપકોના વૃક્ષની રચના કરવી, તથા વલ્લ, રત્ન આદિ પુરસ્કાર પ્રાપ્ત કરવા માટે જેમ-દેવપ્રતિમા આદિ માટે ધૂપ-દીપ આદિ કરવું, તથા જન્મ-મરણથી મુક્ત થવા માટે જેમ-હવન આદિમાં, દુઃખોંનો પ્રતીકાર કરવા માટે જેમ-વાતરોગ હટાવવા માટે, ઠંડી દૂર કરવા માટે તથા જ્વર-તાવ અને કોલેરા દૂર કરવા માટે ડાંમવું-આદિ કાર્ય કરવામાં, આ સર્વ પ્રયોજનોં માટે આ જીવનના સુખના અર્થો પુરુષ પોતે દ્રવ્યભાવ રૂપ અગ્નિશસ્ત્રનો



અન્યૈર્વા અગ્નિશસ્ત્રં સમારમ્ભયતિ=અધોજયતિ । અન્યાન્ વા અગ્નિશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણાન્  
સમનુજાનાતિ=અનુમોદયતિ । તત્=અગ્નિકાયસમારમ્ભણં, તસ્ય=અગ્નિકાયસમારમ્ભણં  
કુર્વતઃ, કારયિતુઃ, અનુમોદયિતુશ્ચ, અહિતાય ભવતિ, તથા તત્, તસ્ય અવોધયે=  
સમ્યક્ત્વાલાભાય, ભવતિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

येन तु तीर्थङ्करादिसमीपेऽग्निकायजीवस्वरूपं परिज्ञातं स एवं विभावयतीत्याह  
-‘से तं.’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

से तं संबुज्जमाणे आयाणीयं समुद्राय सोच्चा खलु भगवओ अणगा-  
राणं वा अंतिए, इहमेगेसिं णायं भवइ-एस खलु गंधे, एस खलु मोहे, एस  
खलु मारे, एस खलु णरए, इच्चत्थं गढिए लोए जमिणं विरूवरूवेहिं सत्थेहिं

भावरूप अग्निशस्त्र का आरंभ करता है, दूसरों से आरंभ करवाता है और आरंभ करने वालों  
की अनुमोदना करता है । वह अग्निकाय का आरंभ, करने, कराने और अनुमोदन करने वाले  
के अहित और सम्यक्त्व की अप्राप्ति के लिए होता है ॥ सू० ७ ॥

जिस ने तीर्थङ्कर आदि से अग्निकाय का स्वरूप समझ लिया है वह इस प्रकार  
विचार करता है:-‘से तं.’ इत्यादि ।

मूलार्थ—जो पुरुष तीर्थङ्कर भगवान् या उनके अनुगामी से उपदेश सुनकर  
चारित्र अङ्गीकार कर के विचरता है, वह इस प्रकार सोचता है-संसार में किन्हीं-किन्हीं को  
ही यह ज्ञान होता है कि-यह ग्रंथ है, यह मोह है, यह मार है, यह नरक है ।

આરંભ કરે છે. બીજા પાસે આરંભ કરાવે છે, અને આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન  
આપે છે-આ અગ્નિકાયનો આરંભ કરનાર, કરાવનાર અને કરનારને અનુમોદન  
આપનારના અહિત અને સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિ માટે થાય છે. (સૂ. ૭)

જેણે તીર્થંકર આદિ પાસેથી અગ્નિકાયનું સ્વરૂપ સમજી લીધું છે, તે આ  
પ્રમાણે વિચાર કરે છે:-‘સેતં’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જે પુરુષ તીર્થંકર ભગવાન અથવા તેમના અણુગારો પાસેથી  
ઉપદેશ સાંભળી ચારિત્ર અંગીકાર કરીને વિચરે છે-તે આ પ્રમાણે વિચારે છે કે:-સંસારમાં  
કોઈ-કોઈનેજ આ જ્ઞાનમાં હોય છે કે-આ ગ્રંથ છે, આ મોહ છે, આ માર-મૃત્યુ છે.

अगणिकम्मसमारम्भेणं अगणिसत्थं समारम्भमाणे अण्णे अणोगरूवे पाणे विहिंसइ  
॥ सू० ८ ॥

हाया—

स तत् संबुध्यमान आदानीयं समुत्थाय श्रुत्वा खलु भगवतः अनगाराणां वा  
अन्तिके, इहैकेषां ज्ञातं भवति—एष खलु ग्रन्थः, एष खलु मोहः, एष खलु मारः, एष  
खलु नरकः, इत्यर्थं गृद्धो लोकः, यदिसं विरूपरूपैः शस्त्रैः अग्निकर्मसमारम्भेण  
अग्निशस्त्रं समारम्भमाणः अन्यान् अनेकरूपान् प्राणान् विहिनस्ति ॥ सू० ८ ॥

टीका—

यः खलु भगवतः=तीर्थङ्करस्य, अनगाराणाम्=तदीयश्रमणनिर्ग्रन्थानाम् वा  
अन्तिके श्रुत्वा=उपदेशं निश्चय्य आदानीयम्=उपादेयं सर्वसावध्ययोगविरतिरूपं चारित्रं  
समुत्थाय=अङ्गीकृत्य विहरति स तत्=अग्निकायसमारम्भणं, संबुध्यमानः=अहिताबोधि-  
जनकत्वेन विज्ञाता भवति ।

स हि एवं विभावयति—इह=मनुष्यलोके, एकेषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेश-

गृद्ध लोक नाना प्रकार के शस्त्रों से अग्निकर्म का आरंभ करके अग्निशस्त्र का व्यापार करता  
हुवा अन्य भी अनेक प्रकार के प्राणियों की हिंसा करता है ॥ सू० ८ ॥

टीकार्थ—जो पुरुष भगवान् तीर्थङ्कर अथवा उन के अनगारों के निकट उपदेश  
सुनकर सर्वसावध्ययोग के त्यागरूप चारित्र को स्वीकार कर के विचरता है, वह अग्निकाय के  
समारंभ को अहितकर और अबोधिकर समझ लेता है ।

वह इस प्रकार सोचता है—इस मनुष्य लोक में, श्रमण निर्ग्रन्थो के उपदेश से

आ नरक छे. गृद्धलोक नाना प्रकारना शस्त्रोथी अग्निकर्मना समारंभ करीने अग्नि-  
शस्त्रना व्यापार करता थका अनेक प्रकारना प्राणीओनी हिंसा करे छे. (सू. ८)

टीकार्थ—जे पुरुष भगवान् तीर्थङ्कर अथवा तेमना अणुगारोनी समीप  
उपदेश सांलणीने सर्वसावध्ययोगना त्यागरूप चारित्रना स्वीकार करीने विचरे छे. ते  
अग्निकायना समारंभने अहितकर अने अबोधिकर समझ ले छे.

ते आ प्रमाणे विचारे छे के:-आ मनुष्य लोकमां श्रमण निर्ग्रन्थोना उपदेशथी

સંજાતસમ્યગવબોધવૈરાગ્યાણામાત્માર્થિનામેવ, જ્ઞાતં=વિદિતં ભવતિ । કિં જ્ઞાતં ભવતી ?  
-ત્યાકાઙ્ક્ષાયમાહ—‘એ સ્વલ્પ ગ્રંથઃ’ ઇત્યાદિ ।

એષઃ=અગ્નિશસ્ત્રસમારંભઃ, સ્વલ્પ=નિશ્ચયેન, ગ્રંથઃ=ગ્રંથ્યતે=વધ્યતેડનેતિ-  
ગ્રંથઃ=અટ્ટવિધકર્મબંધઃ । કારણે કાર્યોપચારાત્ કારણભૂતોડગ્નિશસ્ત્રસમારંભ એવ  
કર્મબંધરૂપો ગ્રંથ ઇત્યુચ્યતે । એવમગ્રેડપિ બોધ્યમ્ । તથા-એષઃ=અગ્નિશસ્ત્રસમારંભઃ  
મોહઃ=વિપર્યાસઃ=અજ્ઞાનમ્ । તથા-એષ એવ મારઃ=મરણં-નિગોદાદિમરણરૂપઃ । તથા-  
એષ નરકઃ=નરકજીવાનાં દશવિધયાતનાસ્થાનમ્ ।

ઇત્યર્થઃ=એતદર્થઃ, કર્મબંધ-મોહ-મરણ-નરકરૂપં ઘોરદુઃસ્વફલં પ્રાપ્યાપિ  
પુનઃપુનરેતદર્થમેવ, લોકઃ=અજ્ઞાનવશવર્તી જીવઃ ગૃઢઃ=લિપ્સુરસ્તિ । યદ્વા-ગૃઢઃ=

જિન્હે સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન હો ગયા હૈ. ઁન આત્માર્થી પુરુષો કો હી વિદિત હોતા હૈ ।  
ક્યા વિદિત હોતા ? સો કહતે હૈ—‘યહ ગ્રંથ હૈ’ ઇત્યાદિ ।

યહ અગ્નિશસ્ત્ર કા સમારંભ નિશ્ચય હી આઠ પ્રકાર કા કર્મબંધ હૈ । કારણ મેં કાર્ય  
કા ઉપચાર કરને સે અગ્નિશસ્ત્ર કે સમારંભ કો હી કર્મબંધ કહા હૈ, વાસ્તવ મેં યહ સમારંભ  
કર્મબંધ કા કારણ હૈ । ઇસી પ્રકાર આગે ભી સમજના ઁહિય્ । તથા યહ અગ્નિસમારંભ મોહ  
હૈ—વિપર્યાસ હૈ—અજ્ઞાન હૈ ।

તથા યહ સમારંભ મૃત્યુરૂપ હૈ—નિગોદ આદિ મરણરૂપ હૈ । ઔર યહ નરક હૈ—નરક  
કી દશ પ્રકાર કી યાતનાઓ કા સ્થાન હૈ ।

કર્મબંધ, મોહ, મરણ ઔર નરક રૂપ ઘોર દુઃસ્વમય ફલ પ્રાપ્ત કરકે ભી અજ્ઞાનો

જેને સમ્યગ્જ્ઞાન ઁને વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થઈ ગયો છે, તે આત્માર્થી પુરુષોનેજ જાણવામાં  
હોય છે. શું જાણવામાં હોય છે? તે કહે છે—‘આ ગ્રંથ છે.’ આદિ.

આ અગ્નિશસ્ત્રનો આરંભ નિશ્ચય-નક્ષીજ આઠ પ્રકારના કર્મબંધ છે. કારણમાં  
કાર્યનો ઉપચાર કરવાથી અગ્નિશસ્ત્રના સમારંભનેજ કર્મબંધ કહ્યો છે. વાસ્તવિક રીતે  
આ સમારંભ કર્મબંધનું કારણ છે. આ પ્રમાણે આગળ પણ સમજ લેવું જોઈએ. તથા  
આ સમારંભ મોહ છે—વિપર્યાસ—અજ્ઞાન છે, તથા આ સમારંભ મૃત્યુરૂપ છે—નિગોદ  
આદિ મરણરૂપ છે. ઁને આ નરક છે—નરકની દસ પ્રકારની યાતનાઓનું સ્થાન છે.

કર્મબંધ, મોહ, મરણ ઁને નરકરૂપ ઘોર દુઃસ્વમય ફલ પ્રાપ્ત કરીને પણ



મોગામિલાષી લોકઃ=સંસારી જીવઃ इत्यर्थम्=एतदर्थमेव=कर्मबन्धमोहमरणनरकार्थ-  
मेव प्रवर्तते इति शेषः ।

અર્થ ભાવઃ—મોગામિલાષી લોકઃ શરીરાદિપરિપોષણાર્થ પરિવન્દનમાનનપૂજ-  
નાર્થ જાતિમરણમોચનાર્થ દુઃખપ્રતિઘાતાર્થ ચાગ્નિશસ્ત્રસમારંભં કરોતિ, તત્ફલં શ્વલુ  
કર્મબન્ધ—મોહ—મરણ—નરકરૂપમેવ લભતે, તસ્માદગ્નિશસ્ત્રસમારંભસ્ય તદેવ ફલં  
બોધ્યમિતિ ।

‘લોકઃ પુનઃ પુનઃ કર્મબન્ધાદ્યર્થમેવ પ્રવર્તતે’ इति यदुक्तं, तत् कथं ज्ञायते ?  
इति जिज्ञासायामाह—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद्, विरूपरूपैः=नानाविधैः शस्त्रैः=पूर्वोक्तप्रकारैः अधिकर्म-

જીવ વાર—વાર इसी की इच्छा करते हैं । अथवा भोगों का अभिलाषी संसारी जीव ईश  
कर्मबंध, मोह मरण और नरक के लिए ही प्रवृत्त होते हैं ।

તાત્પર્યે યહ હૈ—ભોગોં કા અભિલાષી લોક શરીર આદિ કા પોષણ કરને કે  
लिए, वंदना, मानना और पूजा के लिए जन्म—मरण से मुक्त होने के लिए और दुःख का  
प्रतीकार करने के लिए अग्निशस्त्र का समारंभ करता है और फलस्वरूप कर्मबंध, मोह,  
मरण और नरक रूप फल पाता है । अत एव अग्निशस्त्र के समारंभ का फल वही बंध  
आदि समझना चाहिए ।

‘લોક વાર—વાર કર્મબંધ આદિ કે લિે હી પ્રવૃત્તિ કરતા હૈ’ યહ જો કહા હૈ સો  
कैसे ज्ञात हुआ ? ऐसी जिज्ञासा होने पर कहते हैं—

क्यों कि वह नाना प्रकार के पूर्वोक्तशस्त्रों से अग्नि की विराधना करने वाला

અજ્ઞાની જીવ વારંવાર તેનીજ ઈચ્છા કરે છે. અથવા—ભોગોનો અભિલાષી સંસારી  
જીવ આ કર્મબંધ, મોહ, મરણ અને નરક માટેજ પ્રવૃત્ત થાય છે.

તાત્પર્ય એ છે—ભોગોના અભિલાષી માણસો શરીર આદિનું પોષણ કરવા માટે  
વંદના, માનના અને પૂજાને માટે, જન્મમરણથી મુક્ત થવા માટે અને દુઃખનો  
પ્રતિકાર કરવા માટે અગ્નિશસ્ત્રનો સમારંભ કરે છે અને ફલસ્વરૂપ કર્મબંધ, મોહ,  
મરણ અને નરકરૂપ ફલને પ્રાપ્ત કરે છે. એટલા માટે અગ્નિશસ્ત્રના સમારંભનું ફલ  
તે બંધ આદિ સમજવાં જોઈએ.

લોક વારં—વાર કર્મબંધ વગેરે માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે. એનું જે કહ્યું તે કેવી  
रीते ज्ञातव्यमां आन्युं ? या प्रमाणे जिज्ञासा थवाथी कडे છે—

કેમકે તે નાના પ્રકારના પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોથી અગ્નિની વિરાધના કરવાવાળા સાવધ

समारम्भेण=अग्न्युपमर्दनरूपसावधव्यापारेण, इमम्=अग्निकायं विहिनस्ति । तथा अग्निशस्त्रं समारभमाणः=व्यापारयन् अन्यान्=पृथिवीकायादीन्, अनेकरूपान्=त्रसान् स्थावरांश्च, प्राणान्=प्राणिनो, विहिनस्ति=उपमर्दयति ॥ सू० ८ ॥

अग्निशस्त्रं समारभमाणा अनेकविधान् जीवान् कथं विहिनसन्ति ? तत्प्रति-  
बोधयितुं श्रीसुधर्मा स्वामी प्राह-‘से बेमि’ इत्यादि ।

मूलम्—

से बेमि-सन्ति पाणा पुढवीनिस्सिया तणनिस्सिया पत्तनिस्सिया कडु-  
निस्सिया गोमयनिस्सिया कयवरनिस्सिया, सन्ति संपाइमा पाणा आहच्च  
संपयन्ति, अगणिं च खलु पुढा एगे संघायमावज्जन्ति, जे तत्थ संघायमावज्जन्ति,

सावध व्यापार कर के अग्निकाय की हिंसा करता है और अग्निकाय का आरंभ करता  
हुआ अन्य पृथ्वीकाय आदि नाना प्रकार के स्थावर एवं त्रस प्राणियों का घात  
करता है ॥ सू० ८ ॥

अग्निशस्त्र का आरंभ करने वाले अनेक प्रकार के जीवों की विराधना किस प्रकार  
करते हैं । यह समझाने के लिए श्रीसुधर्मा स्वामी कहते हैं:-‘से बेमि’ इत्यादि ।

मूलार्थ—वही मैं कहता हूँ—जीव पृथिवी के आश्रित हैं, तृण के आश्रित हैं,  
पत्तों के आश्रित हैं, काष्ठ के आश्रित हैं गोबर के आश्रित हैं, कचरे के आश्रित हैं;  
संपातिम जीव अचानक आकर अग्नि में पड़ जाते हैं, कोई-कोई अग्नि को छूकर सिकुड़

व्यापार करीने अग्निकायनी हिंसा करे छे. अने अग्निकायनो आरंभ करवा साथे  
अन्य पृथ्वीकाय आदि नाना प्रकारना त्रस लुवो अे प्रमाणे स्थावर प्राणीअोना  
घात करे छे. (सू. ८)

अग्निशस्त्रनो आरंभ करवावाणा अनेक प्रकारना लुवोनी विराधना कथा प्रकारे  
(केवी रीते) करे छे ? ते समजववा भाटे, श्री सुधर्मा स्वामी कहे छे:-‘से बेमि’ इत्यादि.

मूलार्थ—ते हुं कहुं छुं—लुव पृथ्वीना आश्रित छे. तृणने आश्रित छे. पत्तां-  
पांढराने आश्रित छे. लाकड़ाने आश्रित छे. छाणुने आश्रित छे. कयरांने आश्रित छे.  
संपातिमलुव अचानक आवीने अग्निभां पडी जाय छे. जे सँकेआर्थ जाय छे, ते

તે તત્થ પરિયાવજ્જંતિ જે તત્થ પરિયાવજ્જંતિ તે તત્થ ઉદાયંતિ ॥ સૂ. ૯ ॥

છાયા—

તદ્ બ્રવીમિ—સન્તિ પ્રાણાઃ પૃથિવીનિશ્રિતાઃ તૃણનિશ્રિતાઃ પત્રનિશ્રિતાઃ કાષ્ઠનિશ્રિતાઃ ગોમયનિશ્રિતાઃ કચવરનિશ્રિતાઃ, સન્તિ સંપાતિમાઃ પ્રાણાઃ આહત્ય સંપતન્તિ, અગ્નિ ચ સ્વલુ સ્પૃષ્ઠા એકે સંઘાતમાપદ્યન્તે, યે તત્ર સંઘાતમાપદ્યન્તે તે તત્ર પર્યાપદ્યન્તે, યે તત્ર પર્યાપદ્યન્તે તે તત્રાપદ્રાવન્તિ ॥ સૂ. ૯ ॥

ટીકા—

તદ્=અગ્નિકાયહિંસયા યથા બહુવિધાઃ પ્રાણિનઃ પ્રણશ્યન્તિ, તદ્ બ્રવીમિ=કથયામિ, પૃથિવીનિશ્રિતાઃ=પૃથિવીરૂપં કાયમાશ્રિત્ય વર્તમાનાઃ પૃથિવીકાયિકા इत्यर्थः । ‘પૃથિવીનિશ્રિતાઃ’ इत्युपलक्षणम्, તેન તદાશ્રિતાઃ કૃમિ-કુન્થુ-પિપી-લિકા-બુજઙ્ગમ-મળ્લક-વૃથિક-કર્કટકાદયો ગૃહ્યન્તે । તથા ચ પૃથિવીકાયિકા-સ્તદાશ્રિતાસ્ત્રસાશ્ચેત્યર્થઃ, વૃક્ષલતાદયશ્ચ । તથા-તૃણનિશ્રિતાઃ=વનસ્પતિકાયિકાઃ,

જાતે હૈ; જો સિકુડ જાતે હૈં વે મૂર્છિત હો જાતે હૈં ઓર જો મૂર્છિત હો જાતે હૈ વે મર મી જાતે હૈ ॥સૂ. ૯॥

ટીકાર્થ—અગ્નિકાય કી હિંસા સે બહુત પ્રકાર કે જીવોં કા ઘાત હોતા હૈ, સો મૈં કહતા હૂં—પૃથિવી કે સહારે રહને વાલે જીવ પૃથિવીકાયિકોં કે અતિરિક્ત ઓર મી બહુત સે હૈં । જૈસે—કૃમિ, કુંથુવા, વિંટી, સાપ, મેંદક, બિચ્છુ, કૈકડા, આદિ । અતઃ પૃથિવી આશ્રિત કા અર્થ યહાં પૃથિવીકાયિક સ્થાવર તથા ત્રસ જીવ લેના ચાહિયે । વૃક્ષ ઓર વેલ આદિ મી હસી મેં સમ્મિલિત હૈં । તથા તૃણ—આશ્રિત વનસ્પતિકાય કે મૂર્ચ્છિત થઈ જાય છે, અને જે મૂર્ચ્છિત થાય છે તે મરી પણ જાય છે. (સૂ. ૯)

ટીકાર્થ—અગ્નિકાયની હિંસાથી ઘણાજ પ્રકારના જીવોનો ઘાત થાય તે હું કહું છું—પૃથ્વીના આશ્રયે રહેવાવાળા જીવ પૃથ્વીકાયોની સાથે બીજા પણ ઘણા છે. જેમ કૃમિ કુંથવા, કીડીઓ, સાપ, દેડકાં, વીંછી કેંકડા આદિ. એ કારણથી પૃથ્વીઆશ્રિતનો અર્થ અહિં પૃથ્વીકાયિક સ્થાવર તથા ત્રસ જીવ લેવા જોઈએ. વૃક્ષ અને વેલા-વેલ આદિ પણ તેમાં સમ્મિલિત છે. તથા તૃણ—આશ્રિત વનસ્પતિકાયના જીવ અને તૃણના આશ્રયે રહેવા-



તૃણમાશ્રિત્યાવસ્થાયિનઃ મશકકીટતૃણજલૈકાદયશ્ચ, તથા-પત્રનિશ્રિતાઃ=વનસ્પતિ-  
કાયિકાઃ પત્રમાશ્રિત્ય નિવાસિનઃ પિપીલિકાભેદાઃ 'ઘોડન' ઇતિ મગધદેશે પ્રસિદ્ધાઃ,  
કીટપતંગનીલહુપ્રભૃતયશ્ચ, તથા-કાષ્ઠનિશ્રિતાઃ કાષ્ઠં શરણીકૃત્ય સ્થિતાઃ ધુળોદે-  
હિકા-તદણ્ડાદયઃ, અત્ર કાષ્ઠં શુષ્કમિન્ધનરૂપં સાર્દ્રં ચ ગૃહ્યતે । તથા-ગોમયનિશ્રિતાઃ  
=ગણ્ડપદ્મભૂમિસ્ફોટાદયઃ । તથા કચવરનિશ્રિતાઃ-કચવરઃ શુષ્કતૃણપત્રરજઃસમુદા-  
યરૂપઃ, તં નિશ્રિતાઃ=સમાશ્રિતાઃ કૃમિકુન્થુકીટાદયઃ પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સન્તિ ।

તથા-સંપાતિમાઃ=ઉત્પ્લુત્યોત્પ્લુત્ય પતનશીલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ દંશમશકમ-  
શિકાપતંગપક્ષિપવનાદયઃ સન્તિ । એતે સંપાતિમા આહત્ય=અગ્નિશિખાકૃષ્ટાઃ સ્વય-  
મેવોપેત્ય, અગ્નૌ સંપતન્તિ ।

જીવ ઓર તૃણ કે સહારે રહને વાલે મચ્છર કીડે ઓર ઘાસ કી જલોક (જૌંક) આદિ  
તૃણ-નિશ્રિત કહલાતે હૈં । પતૌં કે સહારે રહને વાલે મગધ દેશ મેં પ્રસિદ્ધ ઘોડન તથા  
કીટ, પતંગ એવં નીલંગુ (લટ) આદિ જીવ હૈં । ધુન, ઉદર્દે ઓર અનેકે અણ્ડે આદિ  
કાઠ કે સહારે રહને વાલે જીવ કાષ્ઠનિશ્રિત કહલાતે હૈં । યહાં 'કાઠ' શબ્દ સે સૂઆ  
ઈંધનરૂપ કાઠ ઓર ગીલા કાઠ, દોનોં સમજને યાહિએ । તથા ગોવર કે આશ્રિત ગિંડીલા ઓર  
ભૂમિસ્ફોટક (ભૂફોડ) આદિ જીવ હૈં । ઇસી કેકાર કચરે કે સહારે રહને વાલે કૃમિ કુંથુવા  
તથા કીડા વગેરહ, યે સવ પ્રાણી હૈં ।

ઉડ-ઉડ કર ગિરને વાલે ડાંસ, મચ્છર, મક્સી પતંગ, પક્ષી ઓર પવન આદિ  
સંપાતિમ જીવ કહલાતે હૈં । યે સંપાતિમ જીવ આગ કી શિખા સે સ્વયં આકર્ષિત હો કર  
આગ મેં ગિર જાતે હૈં ।

વાળા મચ્છર, કીડા અને ઘાસની જાળો આદિ, તૃણ આશ્રિત કહેવાય છે. પતંગ-પાંદડાંના  
આશ્રયે રહેવાવાળા મગધદેશમાં પ્રસિદ્ધ ઘોડન તથા કીટ પતંગ અને નીલંગુ (લટ) આદિ  
જીવ છે. ધુણુ ઉધેઈ અને તેનાં ઈંડાં આદિ-લાકડાના સહારે રહેવાવાળા જીવ કાષ્ઠનિશ્રિત  
કહેવાય છે. અહિં કાષ્ઠ શબ્દથી સૂકાં લાકડાંરૂપ કાષ્ઠ અને લીલાં કાષ્ઠ, આ બન્ને સમજવાં  
જોઈએ, તથા છાણમાં આશ્રય કરીને રહેલાં ગિંડોળા અને ભૂફોડા આદિ જીવ છે. આ  
પ્રમાણે કચરાના આશ્રયે રહેવાવાળા કૃમિ, કુંથુવા તથા કીડા વગેરે, આ સર્વ પ્રાણી છે.

ઉડી-ઉડીને પડવાવાળા ડાંસ, મચ્છર, માખી, પતંગ, પક્ષી અને પવન આદિ  
સંપાતિમ જીવ કહેવાય છે. એ સંપાતિમ જીવ આગની-અગ્નિની શિખાથી પેતે  
આકર્ષિત થઈને અગ્નિમાં પડી જાય છે.

અગ્નિકાયસમારમ્ભે પૃથિવ્યાદિસમાશ્રિતાનાં સ્થાવરાણાં ત્રસાનાં ચોપમર્દના-  
દિકં યથા ભવતિ તદ્ દર્શયિતુમાહ-અર્ગ્નિ ચેત્યાદિ ।

એકે-કેચિત્ પ્રાણિનઃ, અગ્નિમ્=સમુત્પાદિતં પ્રજ્વાલિતં ચાગ્નિકાયં સ્પૃષ્ટાઃ  
સ્પર્શકર્તારઃ, આર્ષત્વાત્ કર્તરિ ક્તઃ ।

સંઘાતં=પક્ષાદિદહનેન ગાત્રસંકોચનમ્ આપદ્યન્તે, પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । તત્ર=  
અગ્નૌ પતિત્વા યે જીવાઃ સંઘાતમાપદ્યન્તે, તે તત્ર પર્યાપદ્યન્તે=તાપાભિભૂતા મૂર્છા  
પ્રાપ્નુવન્તીત્યર્થઃ । યે તત્ર=અગ્નૌ પર્યાપદ્યન્તે, તે તત્ર=અગ્નૌ, અપદ્રાવન્તિ=પ્રાણાન્  
પરિત્યજન્તિ । અગ્નિસમારમ્ભેણ કેવલમગ્નિકાયવિરાધના ન ભવતિ, અપિતુ સર્વદિક્-  
સંચારિણં ત્રસાનાં પૃથિવ્યાદીનાં સ્થાવરાણામપિ બહુતરાણાં હિંસાઽવશ્યં ભવતીતિ  
ભાવઃ । અત્ એવોક્તં ભગવતા—

અગ્નિકાય કા આરંભ કરને સે પૃથિવી આદિ મેં આશ્રિત સ્થાવરોં ઔર ત્રસ જીવોં કા  
વિરાધન કિસ પ્રકાર હોતા હૈ ? સો કહતે હૈ ।

કોઈ-કોઈ પ્રાણી જલતી અગ્નિ કો સ્પર્શ કરકે સિકુડ જાતે હૈ—અન કે પંચ  
વગેરહ જલ જાતે હૈ । અગ્નિ મેં પડ કર જો જીવ સંઘાત કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ વે ગમીં સે  
મૂર્છિત હો જાતે હૈ । અગ્નિ મેં ગિરને વાલે અપને પ્રાણ મીં છો દેતે હૈ । અગ્નિ કા સમારંભ  
કરને સે કેવલ અગ્નિકાય કી હી વિરાધના નહીં હોતી વરન્ સમીં દિશાઓં મેં સંચાર કરને  
વાલે ત્રસ ઔર બહુત સે સ્થાવર જીવોં કી મીં હિંસા અવશ્ય હોતી હૈ । હસી લિખ  
ભગવાન્ ને કહા હૈ:—

અગ્નિકાયનો આરંભ કરવાથી પૃથ્વીઆદિમાં આશ્રય કરીને રહેલાં સ્થાવરો અને  
ત્રસ જીવોની વિરાધના જે પ્રકારે થાય છે, તે કહે છે—

કોઈ-કોઈ પ્રાણી બળતી અગ્નિનો સ્પર્શ કરીને સંકોચાઈ જાય છે. તેની  
પાંખો વગેરે બળી જાય છે. અગ્નિમાં પડીને જે જીવ સંઘાતને પ્રાપ્ત થાય છે તે  
ગરમીથી મૂર્છિત થઈ જાય છે. અગ્નિમાં પડવાવાળા જીવ જે મૂર્છિત થઈ જાય છે તે  
પોતાના પ્રાણ પછી ખોઈ નાખે છે. અગ્નિનો સમારંભ કરવાથી કેવલ અગ્નિકાયની  
વિરાધના થતી નથી, પરન્તુ સર્વ દિશાઓમાં સંચાર કરવાવાળા ત્રસ અને ઘણાં  
સ્થાવર જીવોની પછી હિંસા અવશ્ય થાય છે. એ માટે ભગવાને કહ્યું છે—

“જાયતેયં ન ઇચ્છંતિ, પાવકં જલદ્વિત્ત્વં ।  
તિલ્લમન્નયરં સત્થં, સન્વઓવિ દુરાસયં ॥ ૧ ॥  
પાઈણં પહિણં વાવિ, ઉદ્ધં અણુદિસામવિ ।  
અહે દાહિણઓ વાવિ, દહે ઉત્તરઓવિ ય ॥ ૨ ॥  
ભૂયાણમેસમાઘાઓ, હવ્યવાહો ન સંસઓ ।  
તં પર્વપયાવદ્ધા, સંજઓ કિંચિ નારમે ॥ ૩ ॥” (દશવૈ. અ. ૬)

છાયા—જાતતેજસં નેચ્છન્તિ, પાવકં જ્વાલયિતુમ્ ।  
તીક્ષ્ણમન્યતરત્ શસ્ત્રં, સર્વતોઽપિ દુરાસદમ્ ॥ ૧ ॥  
પ્રાચ્યાં પ્રતીચ્યાં વાપિ, ઊર્ધ્વમનુદિશ્વપિ ।  
અથો દક્ષિણતો વાપિ, દહેદુત્તરતોઽપિ ચ ॥ ૨ ॥  
ભૂતાનામેષ આઘાતો, હવ્યવાહો ન સંશયઃ ।  
તં પ્રદીપપ્રતાનાર્થ, સંયતઃ કિશ્ચિન્નારમેત ॥ ૩ ॥

“સાધુ અગ્નિ કો જલારને કી ઇચ્છા તક નહીં કરતે, કયોં કિ વહ ઇક બડા હી તીક્ષ્ણ શસ્ત્ર હૈ, જો કિસી મી ઓર સે દુસ્સહ હૈ—સમી ઓર સે જલાતા હૈ ॥૧॥

યહ અગ્નિશસ્ત્ર પૂર્વ સે મી ઓર પશ્ચિમ સે મી ઊપર સે મી ઓર વિદિશાઓં કી તરફ સે મી નીચે સે મી ઓર દક્ષિણ સે મી તથા ઉત્તર સે મી જલાતા હૈ ॥૨॥

અગ્નિ જીવોં કા ઘાતક હૈ, ઇસ મેં કોઈ સંશય નહીં હૈ । સાધુ દીપક જલાને તથા પ્રતાપને કે લિખે ઇસ કા જરા મી આરંભ નહીં કરતે ॥૩॥ (દશવૈ. અધ્ય. ૬)

ફિર મી કહા હૈ—

“સાધુ અગ્નિને સળગાવવાની ઇચ્છા સુધી કરતા નથી, કારણ તે એક મહાન તીક્ષ્ણ શસ્ત્ર છે. તે કોઈપણ આનુથી દુસ્સહ છે—ચારેય તરફથી આળે છે.” ॥ ૨ ॥

આ અગ્નિશસ્ત્ર પૂર્વથી પણ અને પશ્ચિમથી પણ ઉપરથી અને વિદિશાઓની તરફથી પણ નીચેથી અને દક્ષિણથી પણ અને ઉત્તરથી પણ આળે છે. ॥ ૨ ॥

અગ્નિ જીવોનો ઘાતક છે, તેમાં કોઈ પણ સંશય નથી. સાધુ દીપક સળગાવવા તથા તાપવાને માટે તેનો જરા પણ આરંભ કરતા નથી.” ॥ ૩ ॥ (દશવૈ. અધ્ય. ૬)

ફરી પણ કહે છે—

પ્ર. મા.—૭૩



“દો પુરિસા સરિસવયા અન્નમન્નેર્હિ સદ્ધિ અગ્નિકાયં સમારંભંતિ, તત્થ ણં એગે પુરિસે અગ્નિકાયં સમુજ્જાલેતિ, એગે વિજ્જવેતિ, તત્થ ણં કે પુરિસે મહાકમ્મયરાણ ? કે પુરિસે અપ્પકમ્મયરાણ ? ગોયમા ! જે ઉજ્જાલેતિ સે મહાકમ્મયરાણ, જે વિજ્જવેતિ સે અપ્પકમ્મયરાણ ” ॥

છાયા—દ્વૌ પુરુષૌ સદશવયસ્કૌ અન્યાન્યાભ્યાં સાર્દ્ધમ્ અગ્નિકાયં સમારંભેતે, તત્ર સ્વલુ એકઃ પુરુષઃ અગ્નિકાયં સમુજ્જ્વાલયતિ, એકો વિધ્યાપયતિ, તત્ર સ્વલુ કઃ પુરુષઃ મહાકર્મતરકઃ ? કઃ પુરુષઃ અલ્પકર્મતરકઃ ? । ગૌતમ ! યઃ (અગ્નિ) ઉજ્જ્વાલયતિ સ મહાકર્મતરકઃ, ય (અગ્નિ) વિધ્યાપયતિ સ અલ્પકર્મતરકઃ ( ભગવતી સૂત્ર૦ ) ॥ સૂ. ૯ ॥

તદેવમગ્નિકાયર્હિંસયા બહુતરજીવોપમર્દનં ભવતીતિ વિદિત્વા ત્રિકરણ-ત્રિયોગૈઃ કૃતકારિતાનુમોદિતૈશ્ચાગ્નિશસ્ત્રસમારંભો વર્જનીય इत्याह—‘एत्थ सत्थं’ इत्यादि ।

“સમાન ઉત્ત્ર વાલે દો પુરુષ પરસ્પર અગ્નિકાય કા આરંભ કરતે હૈં । એક પુરુષ અગ્નિકાય કો જ્વળતા હૈં ઓર એક બુઝાતા હૈં । ઇન મેં સે કૌન—સા પુરુષ મહાકર્મ બાંધતા હૈં ? ઓર કૌન અલ્પકર્મ બાંધતા હૈં ? । હે ગૌતમ ! જો અગ્નિ જ્વળતા હૈં વહ મહા કર્મ બાંધતા હૈં ઓર જો અગ્નિ બુઝાતા હૈં વહ અલ્પ કર્મ બાંધતા હૈં” (ભગવતીસૂત્ર.) ॥ સૂ. ૯ ॥

इस प्रकार अग्निकाय की हिंसा होती है, यह जानकर तीन करण, तीन योग से, तथा कृत, कारित और अनुमोदना से अग्निशस्त्र का समारंभ त्याग देना चाहिए, यही बात कहते हैं—‘एत्थ सत्थं.’ इत्यादि ।

“સમાન ઉત્તરવાળા બે પુરુષ પરસ્પર અગ્નિકાયને આરંભ કરે છે. એક પુરુષ અગ્નિકાયને સળગાવે છે. બાળે છે અને એક બુઝાવે—ઓઢવે છે. તે બેમાંથી કયો પુરુષ મહા કર્મ બાંધે છે. અને કોણ અલ્પ કર્મ બાંધે છે ? હે ગૌતમ ! જે અગ્નિ સળગાવે છે—બાળે છે તે મહા કર્મ બાંધે છે. અને જે અગ્નિ બુઝાવે છે. તે અલ્પ કર્મ બાંધે છે.” (ભગવતી સૂત્ર.) (સૂ. ૯)

આ પ્રમાણે અગ્નિકાયની હિંસાથી ઘણા પ્રકારના જીવોની હિંસા થાય છે. એ બાણી કરીને ત્રણ કરણ, ત્રણ યોગથી તથા કરવું, કરાવવું અને અનુમોદનાથી અગ્નિશસ્ત્રને સમારંભ ત્યજી દેવો બોધએ, એજ વાત કહે છે—‘एत्थ सत्थं,’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—

एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति । एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति । तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं अगणिसत्थं समारंभेज्जा, नेवऽण्णेहि अगणि-सत्थं समारंभावेज्जा अगणिसत्थं समारंभमाणे अण्णे न समणु जाणिज्जा जस्सेते अगणिकम्मसमारंभा परिण्णाया भवंति, से हु मुणी परिण्णायकम्मे-त्ति वेमि ॥ सू० १० ॥

॥ चउत्थो उद्देशो समत्तो ॥ १-४ ॥

छाया—

अत्र शस्त्रं समारंभमाणस्य इत्येते आरम्भाः अपरिज्ञाता भवन्ति । अत्र शस्त्रं समारंभमाणस्य इत्येते आरम्भाः परिज्ञाता भवन्ति । तत् परिज्ञाय मेधावी नैव स्वयमग्निशस्त्रं समारंभेत नैवान्यैरग्निशस्त्रं समारंभयेत्, अग्निशस्त्रं समारंभमाणान् अन्यान् न समनुजानीयात् । यस्त्येते अग्निकर्मसमारम्भाः परिज्ञाता भवन्ति, स खलु मुनिः परिज्ञातकर्मा-इति ब्रवीमि ॥ सू० १० ॥

॥ चतुर्थ उद्देशः समाप्तः ॥ १-४ ॥

टीका—

अत्र=अस्मिन् अग्निकाये, शस्त्रं द्रव्यभावरूपं प्रागुक्तं : समारंभमाणस्य=

मूलार्थ—अग्निशस्त्र का आरंभ करने वाला इन आरंभो को नहीं जानता । अग्निशस्त्र का आरंभ न करने वाला इन आरंभो को जानता है । इन्हें जानकर बुद्धिमान् पुरुष स्वयं अग्निशस्त्र का आरंभ न करे, दूसरों से अग्निशस्त्र का आरंभ न करावे और अग्निशस्त्र का आरंभ करने वालों की अनुमोदना न करे । जो इन समारंभो का ज्ञाता होता है वही मुनि परिज्ञातकर्मा है, ऐसा मैं (भगवान् के कथनानुसार) कहता हूँ ॥ सू० १० ॥

टीकार्थ—अग्निकाय में द्रव्य और भावरूप पूर्वोक्त शस्त्र का व्यापार करने

मूलार्थ—अग्निशस्त्रનો આરંભ કરવાવાળા એ આરંભોને બાણુતા નથી. અગ્નિ-શસ્ત્રનો આરંભ નહિ કરવાવાળા એ આરંભોને બાણુ છે. તેને બાણુને બુદ્ધિમાન પુરુષ સ્વયં અગ્નિશસ્ત્રનો આરંભ ન કરે, બીજા પાસે અગ્નિશસ્ત્રનો આરંભ કરાવે નહિ. અને અગ્નિશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ. જે આ સમારંભોના જ્ઞાતા-બાણુકાર હોય છે તે મુનિ પરિજ્ઞાતકર્મા છે. એ પ્રમાણે હું (ભગવાનના વચનાનુસાર) કહું છું. (સ. ૧૦)

टीकार्थ—अग्निकायमां द्रव्य અને भावरूप पूर्वोक्त शस्त्रो व्यापार (उपयोग)

વ્યાપારયતઃ, इत्येतै=पचनपाचनादयः आरम्भाः=सावद्यव्यापाराः, अपरिज्ञाताः=अष्टविधकर्मबन्धकारणत्वेनाविज्ञाता भवन्ति, अग्निकाये शस्त्रं प्रयुञ्जानस्य परिज्ञाया अभावादिति भावः ।

अत्र=अस्मिन् अष्काये शस्त्रम्=पूर्वोक्तस्वरूपम्, असमारभमाणस्य=अप्रयुञ्जानस्य, इत्येतै=पचनपाचनादयः, आरम्भाः=सावद्यव्यापाराः, परिज्ञाताः ज्ञपरिज्ञया परिज्ञाताः भवन्ति, प्रत्याख्यानपरिज्ञया परित्यक्ता भवन्तीत्यर्थः ।

ज्ञपरिज्ञાપૂર્વિકા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા યથા સમુદ્ભવતિ તથા દર્શયતિ-‘તત્ પરિજ્ઞાયે’-ત્યાદિ । તત્=અગ્નિકાયારમ્ભણં, પરિજ્ઞાય=‘કર્મબંધાય ભવતી’-ત્યેવમવબુદ્ધ્ય, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકકુશલઃ, સાધુમર્યાદાવધાનશીલ इति यावत्, નૈવ સ્વયમગ્નિશસ્ત્રં સમારભેત, નૈવાન્યૈરગ્નિશસ્ત્રં સમારમ્ભયેત્, અગ્નિશસ્ત્રં

વાળે કો અર્થાત્ પચન-પાચન આદિ પાપમય કાર્ય કરને વાળો કો યહ જ્ઞાન નહીં હોતા કિ-યહ કાર્ય આઠ પ્રકાર કે કર્મો કે બંધ કા કારણ હૈ, ક્યો કિ અગ્નિકાય કે શસ્ત્ર કા પ્રયોગ કરને વાળે મેં પરિજ્ઞા કા અભાવ હોતા હૈ ।

અગ્નિકાય મેં પૂર્વોક્ત શસ્ત્ર કા વ્યાપાર ન કરને વાળે કો સાવધ વ્યાપારો કા જ્ઞાન હોતા હૈ । વહ જ્ઞપરિજ્ઞા સે ઉન્હેં જાનતા હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ઉનકા ત્યાગ કર દેતા હૈ ।

જ્ઞપરિજ્ઞા કે બાદ પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કિસ પ્રકાર ઉત્પન્ન હોતી હૈ ? સો કહતે હૈ-અગ્નિકાય કા આરંભ કર્મબંધ કા કારણ હૈ, યહ જાનકર હૈય-ઉપાદેય કે વિવેક મેં પ્રવીણ સાધુમર્યાદા કા ધ્યાન રાખને વાળા સ્વયં અગ્નિશસ્ત્ર કા આરંભ નહીં કરતા, દૂસરો સે કરવાવાળાને અર્થાત્-પચન-પાચન આદિ પાપમય કાર્ય-કરવાવાળાને એ જ્ઞાન હોતું નથી કે આ કાર્ય આઠ પ્રકારનાં કર્મોનાં બંધનું કારણ છે, કારણ કે અગ્નિકાયનાં શસ્ત્રનો પ્રયોગ કરવાવાળાઓમાં પરિજ્ઞાનો અભાવ હોય છે.

અગ્નિકાયમાં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રનો વ્યાપાર-ઉપયોગ નહિ કરવાવાળાને સાવધ વ્યાપારોનું જ્ઞાન હોય છે. તે જ્ઞપરિજ્ઞાથી તેને નાણું છે, અને પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરી આપે છે.

જ્ઞપરિજ્ઞાની પછી પ્રત્યાખ્યાન પરિજ્ઞા કયા પ્રકારે ઉત્પન્ન થાય છે ? તે કહે છે:-અગ્નિકાયનો આરંભ કર્મબંધનું કારણ છે. એ પ્રમાણે નાણીને હૈય-ઉપાદેયના વિવેકમાં પ્રવીણ-કુશળ સાધુમર્યાદાનું ધ્યાન રાખવાવાળા પોતે અગ્નિશસ્ત્રનો આરંભ કરતા નથી; બીજા પાસે આરંભ કરાવતા નથી, અને આરંભ કરવાવાળાને અતુભોદન



आचारचिन्तामणि-टीका अध्या. १ उ. ४ सू. १० अग्निकायसमारम्भनिषेधः ५८१

समारम्भमाणान् अन्यान् न समनुजानीयात्=नानुमोदयेत् । शेषं सुगमम् । यस्यैते अग्निकर्मसमारम्भाः=कर्मणां समारम्भाः कर्मसमारम्भाः, अग्नेः कर्मसमारम्भाः अग्निकर्म-समारम्भाः=अग्निं निमित्तीकृत्य कर्मकारणीभूताः उपमर्दनव्यापारा इत्यर्थः, परिज्ञाताः=सर्वथा ज्ञाताः, ज्ञपरिज्ञया बन्धकारणत्वेन विदिताः प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परि-वर्जिता भवन्ति स एव परिज्ञातकर्मा-परिज्ञातानि=ज्ञपरिज्ञया स्वरूपतो विपाकतस्त-दुपादानतश्चावगतानि प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परित्यक्तानि कर्माणि=सावधव्यापाराः येन-स परिज्ञातकर्मा=मनोवाक्यायैः सकलसावधकरणकारणानुमतिनिवृत्तो मुनिर्भवती-त्यर्थः । 'इति ब्रवीमि' अस्य व्याख्यानं पूर्ववद् बोध्यम् ।

॥ इत्याचाराङ्गसूत्रस्याऽऽचारचिन्तामणिटीकायां प्रथमाध्ययने  
चतुर्थोद्देशकः संपूर्णः ॥ १-४ ॥

आरंभ नहीं कराता और आरंभ करने वालों की अनुमोदना नहीं करता । शेष भाग सुगम हैं ।

अग्नि के निमित्त से होने वाले तथा कर्मबंध के कारणभूत यह सब पापमय व्यवहार जिस ने कर्मबंध के कारण ज्ञपरिज्ञा से समझ कर प्रत्याख्यानपरिज्ञा से त्याग दिये हैं वही परिज्ञातकर्मा मुनि है । जिसने इन व्यापारों का स्वरूप, फल और कारण ज्ञपरिज्ञा से जान लिया है तथा प्रत्याख्यानपरिज्ञा से त्याग कर दिया है उसे परिज्ञात-कर्मा मुनि कहते हैं । ऐसा मुनि मन, वचन काय से समस्त सावध के करने, कराने और अनुमोदन करने का त्यागी होता है । 'इति ब्रवीमि' की व्याख्या पहले के समान समझ लेना चाहिए ॥सू० १०॥

श्रीआचाराङ्गसूत्रकी 'आचारचिन्तामणि' टीकाके हिन्दी अनुवादमें  
प्रथम अध्ययनका चौथा उद्देश संपूर्ण ॥ १-४ ॥

आपता नहीं. शेष-आधीना भाग सुगम छे.

अग्निना निमित्तथी थावाणा तथा कर्मबंधना कारणभूत आ सर्व पापमय व्यवहारने जेणे कर्मबंधना कारणे ज्ञपरिज्ञाथी समझने प्रत्याख्यानपरिज्ञाथी त्याग करी आये छे तेने परिज्ञातकर्मा मुनि कहे छे. एवा मुनि-मन, वचन, कायाथी समस्त सावधने करवुं, कराववुं अने अनुमोदन करवुं तेना त्यागी होय छे 'इति ब्रवीमि'नी व्याख्या प्रथमना समान समझ लेवी जेछे. (सू. १०)

श्री आचारङ्गसूत्रनी 'आचारचिन्तामणि' टीकाना  
गुजराती-अनुवादमां प्रथम अध्ययनना  
चौथा उद्देशक संपूर्ण. (१-४)

અથ પશ્ચમોદેશકઃ—

ચતુર્થોદેશેઽગ્નિકાયસ્વરૂપં મુનિત્વપ્રાપ્તયે પ્રતિબોધિતમ્ । સામ્પ્રતં તદર્થમેવ ક્રમપ્રાપ્તવાયુકાયપ્રતિબોધનાવસરે વનસ્પતિકાયજીવસ્વરૂપં પ્રતિબોધયિતુકામઃ પશ્ચમોદેશકમુપક્રમતે—‘તં ણો’ । इत्यादि ।

નનુ ક્રમપ્રાપ્તવાયુકાયપ્રતિબોધનં કથં ન પ્રક્રમ્યતે ? ઉચ્યતે—વાયુકાયઃ પ્રત્યક્ષતયા દૃષ્ટિગોચરો ન ભવતિ, અતસ્તત્ર શ્રદ્ધા સ્મૃતિતિ નોદેતું પ્રભવતિ, પૃથિવ્યાદ્યે-કેન્દ્રિયજીવસ્વરૂપં પ્રતિબુદ્ધ્ય તુ સુતરાં વાયુકાયો વિજ્ઞાસ્યતે, અતઃ સ એવ ક્રમો ગુરુભિરુપાદેયો ભવતિ, યેન જીવાદિતત્ત્વવિજ્ઞાનાય શિષ્યાઃ

પંચમ ઉદેશક—

ચૌથે ઉદેશ મેં સાધુતા પ્રાપ્ત કરને કે લિખે અગ્નિકાય કા સ્વરૂપ સમજાયા હૈ । હસી કે લિખે ક્રમ કે અનુસાર વાયુકાય કા સ્વરૂપ સમજાને કે પ્રસંગ મેં વનસ્પતિકાય કા સ્વરૂપ વતલાને કે લિખે પાંચવૉ ઉદેશ આરંભ કરતે હૈ—‘તં ણો.’ इत्यादि ।

પ્રશ્ન—ક્રમ કે અનુસાર વાયુકાય કા સ્વરૂપ ક્યોં નહીં વતલાયા ગયા હૈ ? ઓર વાયુકાય કો છોડકર વનસ્પતિકાય કે વિવેચન કા ઉદેશ્ય ક્યા હૈ ?

ઉત્તર—વાત યહ હૈ કિ વાયુકાય નેત્રોં સે પ્રત્યક્ષ દિશ્વાઈ નહીં દેતા—સિર્ફ સ્પર્શેન્દ્રિય સે ઉસ કી પ્રતીતિ હોતી હૈ । હસ કારણ ઉસ કે વિષય મેં જલ્દી શ્રદ્ધા નહીં હોતી । હૈ, પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોં કા સ્વરૂપ સમજ લેને પર વાયુકાય સહજ હી સમજ મેં આ જાયગા । ગુરુજન વહી ક્રમ કામ મેં લાતે હૈં જિસ સે શિષ્ય જીવાદિ

પંચમ ઉદેશક—

ચોથા ઉદેશકમાં સાધુતા પ્રાપ્ત કરવાને માટે અગ્નિકાયનું સ્વરૂપ સમજાવ્યું છે. આ માટેજ ક્રમ અનુસાર વાયુકાયનું સ્વરૂપ સમજાવવાના પ્રસંગે વનસ્પતિકાયનું સ્વરૂપ બતાવવાને માટે પાંચમા ઉદેશકનો આરંભ કરે છે—‘તં ણો.’ इत्यादि.

પ્રશ્ન—ક્રમ પ્રમાણે વાયુકાયનું સ્વરૂપ શા માટે બતાવ્યું નથી ? અને વાયુકાયને છોડીને વનસ્પતિકાયના વિવેચનમાં કયો ઉદેશ્ય છે ?

ઉત્તર—વાત એ છે કે—વાયુકાય નેત્રથી પ્રત્યક્ષ જોવામાં આવતો નથી. માત્ર સ્પર્શેન્દ્રિયથી તેની પ્રતીતિ થાય છે. આ કારણથી તેના વિષયમાં જલ્દી શ્રદ્ધા થતી નથી. હા, પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય જીવોંનું સ્વરૂપ સમજ લીધા પછી વાયુકાય સહજ સમજવામાં આવી જશે. ગુરુજન આ ક્રમને કામમાં લાવે છે, જે વડે કરી શિષ્ય જીવાદિ

સ્વયમેવોત્સહન્તે, તસ્માદ્ વાયુકાયસ્વરૂપમનભિધાય વનસ્પતિકાયઃ પ્રથમં પ્રસ્તૂયતે—  
'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

યદ્વા-અનન્તરચતુર્થોદ્દેશેઽગ્નિકાયો દીર્ઘલોકશસ્ત્રશબ્દેનાદૌ પ્રતિબોધિતઃ ।  
તત્ર દીર્ઘલોકશબ્દાર્થો વનસ્પતિરિત્યાશયં સમધિગમ્યાગ્નિકાયપ્રકરણસમાપ્ત્ય-  
નન્તરં પ્રથમં વનસ્પતિકાયસ્વરૂપં વિજ્ઞાતુકામસ્ય શિષ્યસ્ય પ્રતિબોધનાય પશ્ચમં  
વનસ્પતિકાયોદ્દેશં કથયતિ—'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

યથા વનસ્પતિકાયોપમર્દનનિવૃત્ત્યાઽનગારસ્ત્વં લભ્યતે, તં પ્રકારં નિર્દિશતિ—  
'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

તત્ત્વો કે જ્ઞાન મેં ઉત્સાહિત હોં । યહી કારણ હૈ કિ પહેલે વાયુકાય કા સ્વરૂપ ન કહ કર  
વનસ્પતિકાય કા વર્ણન કિયા જાતા હૈ—'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

અથવા—ચૌથે ઉદ્દેશ મેં અગ્નિકાય કો 'દીર્ઘલોકશસ્ત્ર' બતલાયા હૈ । દીર્ઘલોકકા  
અર્થ વનસ્પતિકાય હૈ, યહ આશય જાનકર અગ્નિકાય કે પ્રકરણ કે પશ્ચાત્ હી શિષ્ય કો  
વનસ્પતિકાય કા સ્વરૂપ જાનને કી ઇચ્છા હોના સ્વાભાવિક હૈ । જિજ્ઞાસા કે અનુરૂપ  
દિયા હુઆ ઉપદેશ હી અધિક સફલ હોતા હૈ, અતઃ શિષ્ય કી જિજ્ઞાસા તૃપ્ત કરને કે  
લિટ્ પાંચવેં ઉદ્દેશ મેં વનસ્પતિકાય કા કથન કિયા જાતા હૈ—'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

વનસ્પતિકાય કી હિંસા સે નિવૃત્ત હોને પર હી સાધુતા પ્રાપ્ત હોતી હૈ, વહ કિસ પ્રકાર  
પ્રાપ્ત હોતી હૈ ? સો કહતે હૈ—'તં જો.' ઇત્યાદિ ।

તત્ત્વોના જ્ઞાનમાં ઉત્સાહિત થાય. આ કારણથી પ્રથમ વાયુકાયના સ્વરૂપને નહિ કહેતાં  
વનસ્પતિકાયનું વર્ણન કરવામાં આવ્યું છે—'તં જો.' ઇત્યાદિ.

અથવા—ચોથા ઉદ્દેશમાં અગ્નિકાયને 'દીર્ઘલોકશસ્ત્ર' તરીકે બતાવ્યું છે.  
દીર્ઘલોકનો અર્થ વનસ્પતિકાય છે; એ આશયને સમજીને અગ્નિકાયના પ્રકરણની પછીજ  
શિષ્યને વનસ્પતિકાયના સ્વરૂપને જાણવાની ઇચ્છા હોય-થવી તે સ્વાભાવિક છે. જિજ્ઞાસાને  
અનુરૂપ આપેલા ઉપદેશજ અધિક સફલ થાય છે, એ કારણથી શિષ્યની જિજ્ઞાસા તૃપ્ત  
કરવાને માટે પાંચમા ઉદ્દેશમાં વનસ્પતિકાયનું વિવેચન કરવામાં આવે છે—'તં જો.' ઇત્યાદિ.

વનસ્પતિકાયની હિંસાથી નિવૃત્ત થયા પછીજ સાધુતા પ્રાપ્ત થાય છે, તે કયા  
પ્રકારે પ્રાપ્ત થાય છે. તે કહે છે—'તં જો.' ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—

તં જો કરિસ્સામિ સમુદ્ઘાણ મત્તા મહિમં, અમયં વિદિત્તા તં જે જો કરણ,  
એસોવરણ એત્થોવરણ, એસ અણગારેત્તિ પવુચ્ચઈ ॥ સૂ. ૧ ॥

છાયા—

તં નો કરિષ્યામિ સમુત્થાય મત્વા મતિમાન્, અમયં વિદિત્વા તં યો નો કુર્યાત્,  
એષ ઉપરતઃ અત્રોપરતઃ, એષઃ અનગાર ઇતિ પ્રોચ્યતે ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકા—

મતિમાન્=મેધાવી શ્રમણનિર્ગન્થાદિદેશનાશ્રમણસંજાતહેયોપાદેયવિવેકવા-  
નિત્યર્થઃ । મત્વા=વનસ્પતિકાયસ્વરૂપં વિજ્ઞાય વિભાવયતિ—અહં સમુત્થાય  
આત્મકલ્યાણાર્થમુદ્યુક્તઃ સન્ પ્રવ્રજ્યાં ગૃહીત્વા, તં=વનસ્પતિકાયસમારંભં નો  
કરિષ્યામીતિ ।

મૂલાર્થ—મેધાવી પુરુષ વિચાર કરતા હૈ—મૈ આત્મકલ્યાણ કે લિખ ઉદ્યત હોકર  
વનસ્પતિકાય કા આરંભ નહીં કરૂંગા । જો પુરુષ સંયમ કો જાનકર આરંભ નહીં કરતા હૈ  
વહી આરંભ સે ઉપરત હૈ—વહી જિન શાસન મૈ આરંભ સે નિવૃત્ત કહલાતા હૈ । વહી અનગાર  
કહલાતા હૈ ॥ સૂ. ૧ ॥

ટીકાર્થ—શ્રમણ નિર્ગન્થ આદિ કા ઉપદેશ સુનને સે જિસે હેય ઔર ઉપાદેય કા  
વિવેક ઉત્પન્ન હો ગયા હૈ વહ વનસ્પતિકાય કા સ્વરૂપ જાનકર ઇસ પ્રકાર વિચાર  
કરતા હૈ:—મૈ આત્મકલ્યાણ કે લિખ ઉદ્યત હોકર—દીક્ષા લેકર વનસ્પતિકાય કા આરંભ  
સમારંભ નહીં કરૂંગા ॥

મૂલાર્થ—મેધાવી પુરુષ વિચાર કરે છે—હું આત્મકલ્યાણ માટે તૈયાર થઈને  
વનસ્પતિકાયનો આરંભ નહિ કરું. જે પુરુષ સંયમને બાણીને આરંભ કરતા નથી  
તે આરંભથી ઉપરત છે, તેજ જિનશાસનમાં આરંભથી નિવૃત્ત કહેવાય છે, તેજ  
અણગાર કહેવાય છે. ॥ ૧ ॥

ટીકાર્થ—શ્રમણ નિર્ગન્થ આદિને ઉપદેશ સાંભળવાથી જેને હેય અને  
ઉપાદેયનો વિવેક ઉત્પન્ન થઈ ગયો છે. તે વનસ્પતિકાયના સ્વરૂપને બાણીને આ  
પ્રમાણે વિચાર કરે છે:—

હું આત્મકલ્યાણને માટે ઉદ્યત—તૈયાર થઈને—દીક્ષા લઈને વનસ્પતિકાયનો આરંભ  
સમારંભ કરીશ નહિ.

અસ્યોદ્દેશસ્ય વનસ્પતિકાયવિષયકતયાઽત્ર તચ્છબ્દેન વનસ્પતિકાયસમારમ્ભઃ પરિગૃહ્યતે । અત્ર વનસ્પતિકાયસ્વરૂપવિજ્ઞાનાનન્તરં તત્સમારમ્ભવર્જનપ્રતિજ્ઞાપદર્શનેન જ્ઞાનક્રિયાભ્યાં મોક્ષ ઇતિ પ્રતિબોધિતમ્ । યઃ અભયં-નાસ્તિ ભયં યસ્માત્ કસ્ય ચિત્ પ્રાણિનઃ ઇત્યભયઃ=સર્વપ્રાણિપ્રાણત્રાણલક્ષણઃ સંયમઃ, તં-વિદિત્વા તં=વનસ્પતિકાય-સમારમ્ભં નો કુર્યાત્ । એષઃ ઉપરતઃ=વનસ્પતિજીવવિષયે સર્વથા સમારમ્ભાદ્ વિનિવૃત્તઃ, અત્ર=અસ્મિન્ જિનશાસને ઉપરતઃ પ્રોચ્યતે, ઇત્યન્વયઃ । તથા એષઃ=પૂર્વોક્તલક્ષણ ઉપરતઃ ‘અનગારઃ’ ઇતિ પ્રોચ્યતે । અનગારગુણાનાં સંપૂર્ણતયા તત્ર સત્ત્વાત્, સ એવાનગારશબ્દવાચ્યોઽસ્તીતિ ભાવઃ ।

અથ વનસ્પતિકાયસ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનાર્થં પ્રાગુક્તાઽવિધદ્વારાણિ નિરૂપણી-

યહ ઉદ્દેશ વનસ્પતિકાયસંબંધી હૈ અતઃ યહાં ‘તત્’ શબ્દ સે વનસ્પતિકાય કા સમારંભ લિયા જાતા હૈ । પહેલે વનસ્પતિકાય કા જ્ઞાન હોતા હૈ ફિર ઉસકે આરંભ કા ત્યાગ ક્રિયા જાતા હૈ, યહ બતલાકર સૂચના કી ગઈ હૈ કિ મોક્ષ, જ્ઞાન ઓર ક્રિયા-દોનો સે હોતા હૈ ।

જિસસે કિસીમી પ્રાણી કો ભય નહીં એસા, પ્રાણીમાત્ર કી રક્ષારૂપ સંયમ અભય કહલાતા હૈ । ઉસે જાનકર વનસ્પતિકાય કા સમારંભ ન કરે । ઇસ પ્રકાર વનસ્પતિકાય કે આરંભ સે વિરત પુરુષ જિનશાસન મેં ‘ઉપરત’ કહલાતા હૈ ઓર વહી ઉપરત પુરુષ અનગાર હૈ, ક્યોં કિ અનગાર કે ગુણ પૂર્ણરૂપ સે ઉસીમેં પાચે જાતે હૈ ।

વનસ્પતિકાય કા સ્વરૂપ સમ્યક્ પ્રકાર સે જાનને કે લિખે પૂર્વોક્ત આઠ

આ ઉદ્દેશ વનસ્પતિકાયસંબંધી છે. એ કારણથી અહિં ‘તત્’ શબ્દથી વનસ્પતિકાયનો સમારંભ લેવામાં આવે છે. પહેલાં વનસ્પતિકાયનું જ્ઞાન થાય છે. પછી તેના આરંભનો ત્યાગ કરવામાં આવે છે. એ બતાવીને સૂચના કરવામાં આવી છે કે-જ્ઞાન અને ક્રિયા, આ બન્નેથી મોક્ષ થાય છે.

જેનાથી કોઈ પણ પ્રાણીને ભય થાય નહિ. એ પ્રમાણે પ્રાણીમાત્રની રક્ષારૂપ સંયમ તે અભય કહેવાય છે. તેને જાણીને વનસ્પતિકાયનો સમારંભ કરે નહિ. આ પ્રમાણે વનસ્પતિના આરંભથી વિરત પુરુષ જિનશાસનમાં ‘ઉપરત’ કહેવાય છે. અને તેજ ઉપરત પુરુષ અનગાર છે. કારણ કે-અણુગારના ગુણ પૂર્ણરૂપથી તેમાં જોવામાં આવે છે.

વનસ્પતિકાયનું સ્વરૂપ સમ્યક્ પ્રકારે જાણવા માટે પૂર્વોક્ત આઠ દ્વારોનું નિરૂપણ

યાનિ, તત્ર લક્ષણ-પ્રરૂપણા-શસ્ત્રો-પ્રભોગદ્વારાણિ પ્રદર્શયામોઽસ્મિન્નુદેશે, શેષાણિ તુ પૃથિવીકાયવદવગન્તવ્યાનિ ।

### લક્ષણદ્વારમ્—

નનુ કથમિદં વિજ્ઞાયતે-વનસ્પતિકાયઃ સચિત્તોઽસ્તીતિ ? ઉચ્યતે-યુક્ત્યાગમા-  
ખ્યાં વનસ્પતિકાયસ્ય સચિત્તત્વં નિર્ણયતે । તથાહિ—

વૃક્ષલતાદયો જીવશરીરાણિ દ્રશ્યત્વાત્, કરચરણાદિસમુદાયવત્ । તથા વૃક્ષા-  
દયઃ કદાચિત્ સચિત્તા અપિ, જીવશરીત્વાત્, કરચરણાદિસમુદાયવદેવ ।

દ્વારો કા નિરૂપણ કરના યાહિયે । ડનમેં સે લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, શસ્ત્ર ઓર ઉપભોગ  
દ્વાર યહાં વતલાતે હૈં । શેષ દ્વાર પહેલે કહે પૃથ્વીકાય કે સમાન સમજ લેને યાહિયે ।

### લક્ષણદ્વાર—

શંકા—વનસ્પતિકાય સચિત્ત હૈ, યહ કૈસે જાના જા સકતા હૈ ?

સમાધાન—યુક્તિ ઓર આગમ સે વનસ્પતિકાય કી સચિત્તતા કા નિર્ણય  
હોતા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર-વૃક્ષ ઓર લતા આદિ જીવ કે શરીર હૈં, ક્યોં કિ વે દ્રશ્ય હૈં ।  
જો દ્રશ્ય હોતે હૈં વે સર્વ જીવ કે શરીર હોતે હૈં, જૈસે હાથ-પૈર આદિ । તથા-વૃક્ષ  
આદિ કમી-કમી સચિત્ત મી હોતે હૈં, ક્યોં કિ વે જીવ કે શરીર હૈં, જો જીવ કે શરીર  
હોતે હૈં વે સચિત્ત હોતે હૈં, જૈસે હાથ-પૈર આદિ કા સમૂહ । તથા-વૃક્ષ અવ્યક્ત

કરવું જોઈએ, તેમાંથી લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, શસ્ત્ર અને ઉપભોગ દ્વાર અહિં બતાવે છે.  
શેષ-આકીના દ્વાર પ્રથમ પૃથ્વીકાયમાં જે કહ્યાં છે તેના પ્રમાણે સમજ લેવાં જોઈએ.

### લક્ષણદ્વાર—

શંકા—વનસ્પતિકાય સચિત્ત છે, એ કેવી રીતે જાણી શકાય છે ?

સમાધાન—યુક્તિ અને આગમથી વનસ્પતિકાયની સચિત્તતાનો નિર્ણય થઈ  
શકે છે. તે આ પ્રમાણે છે:-વૃક્ષ અને લતા આદિ જીવના શરીર છે, કેમકે તે દ્રશ્ય છે. જે  
દ્રશ્ય હોય છે તે સર્વ જીવના શરીર હોય છે. જેવી રીતે હાથ-પગ આદિ. તથા વૃક્ષ આદિ  
કોઈકોઈ વખત સચિત્ત પણ હોય છે, કારણકે તે જીવના શરીર છે. જે જીવનાં શરીર  
હોય છે તે સચિત્ત હોય છે. જેમ હાથ-પગ આદિનો સમૂહ. તથા વૃક્ષ અવ્યક્ત ઉપયોગ



તથા-વૃક્ષાઃ અવ્યક્તોપયોગમુસ્વાદિમન્તઃ, અવ્યક્તચેતનાવચ્ચાત્, સુપ્તમૂર્ચ્છિત-  
પુરુષવત્ । અત્ર વનસ્પતીનાં દૃશ્યત્વહેતુના જીવશરીરત્વં સિદ્ધયતિ, તત્થ સચિત્ત-  
ત્વમ્ । અપરશ્ચ-વૃક્ષાઃ સચેતનાઃ, સર્વત્વગપહરણે મરણાત્, અજવત્ । વનસ્પતિ-  
કાયસ્ય સચેતનત્વમગ્રેऽપિ સાધયિષ્યતે-‘સે વેમિ-ઈમંપિ જાઙ્ઘમ્મયં એયંપિ  
જાઙ્ઘમ્મયં’ इत्यत्र ।

યદ્વા-અવ્યક્તોપયોગાદીનિ કષાયપર્યન્તાનિ જીવલક્ષણાનિ પૃથિવી-

ઉપયોગ (ચેતના) ઔર સુખ આદિ સે યુક્ત હૈં, ક્યોં કિં ઉન મેં અવ્યક્ત ચેતના હૈં, જો અવ્યક્ત  
ચેતનાવાલા હોતા હૈ વહ અવ્યક્ત ચેતનાવાલા ઔર સુખ આદિ વાલા હોતા હૈ, જૈસે સુપ્ત  
યા મૂર્ચ્છિત પુરુષ ।

હિસ પ્રકાર ‘દૃશ્યત્વ’ હેતુ સે સિદ્ધ હોતા હૈ કિ-વનસ્પતિ, જીવ કા શરીર હૈ ઔર જીવ  
કા શરીર હોને કે કારણ સચિત્ત મી હૈ । હિસકે અતિરિક્ત ઔર મી પ્રમાણ હૈ । જૈસે વૃક્ષ  
ચેતનાવાન હૈ ક્યોં કિં ઉનકી સારી ત્વચા (છાલ) હટાને પર ઉનકી મૃત્યુ હો જાતી હૈ,  
સારી ત્વચા હટાને પર જિસ કી મૃત્યુ હો જાતી હૈ વહ સચેતન હી હોતા હૈ, જૈસે બકરા ।  
વનસ્પતિકાય કો સચેતનતા આગે મી-‘સે વેમિ-ઈમંપિ જાઙ્ઘમ્મયં એયંપિ જાઙ્ઘમ્મયં’  
હિસ સૂત્ર કી વ્યાખ્યા કરતે હુએ સિદ્ધ કી જાયગી ।

અથવા-અવ્યક્ત ઉપયોગ સે લેકર કષાયપર્યન્ત જીવ કે જો લક્ષણ પૃથ્વી-

(ચેતના) અને સુખ આદિથી યુક્ત છે, કેમકે તેમાં અવ્યક્ત ચેતના છે. જે અવ્યક્ત  
ચેતનાવાળા હોય છે તે અવ્યક્ત ચેતનાવાળા અને સુખ આદિવાળા હોય છે. જેમ સુતેલા  
અથવા મૂર્ચ્છિત પુરુષ. આ પ્રકારે ‘દૃશ્યત્વ’ હેતુથી સિદ્ધ થાય છે કે-વનસ્પતિ જીવનું  
શરીર છે અને જીવનું શરીર હોવાના કારણે સચિત્ત પણ છે. એની સાથે બીજું પણ  
પ્રમાણ છે. જેમકે:-વૃક્ષ ચેતનાવાન છે કેમકે તેની તમામ ચામડી-છાલ કાઢી નાંખવાથી  
તેનું મૃત્યુ થઈ જાય છે; તમામ છાલ કાઢી નાંખવાથી જેનું મૃત્યુ થઈ જાય છે તે ચેતન  
જ હોય છે. જેવી રીતે બકરા. વનસ્પતિકાયની ચેતનતા આગળ પણ-‘સે વેમિ-ઈમંપિ  
જાઙ્ઘમ્મયં એયંપિ જાઙ્ઘમ્મયં’ આ સૂત્રની વ્યાખ્યા કરતી વખતે સિદ્ધ કરવામાં આવશે.

અથવા-અવ્યક્ત ઉપયોગથી લઇને કષાય સુધી જીવના જે લક્ષણ પૃથ્વીકાયનાં

કાયોદેશે પ્રાગ્ભિહિતાનિ, તેષાં જીવલક્ષણાનાં વનસ્પતિકાયેઽપિ સદ્ભાવાદ્ વનસ્પતિઃ સચિત્તોઽસ્તિ, મનુષ્યવદિતિ નિર્ણયતે ।

અપિચ—વનસ્પતિઃ સચેતનઃ, બાલાઘવસ્થાસંદર્શનાત્, અનુકૂલ-પ્રતિકૂલાહારાદિના પુષ્ટિકાર્યાદિદર્શનાત્, છેદનભેદનાદિના મ્લાનતાદિદર્શનાચ મનુષ્ય-શરીરવત્ ।

યથા મનુષ્યશરીરમનુકૂલેનાહારાદિના પુષ્યતિ, તત્પ્રતિકૂલેન તદભાવેન ચ શુષ્યતિ, એવં વનસ્પતિરપ્યનુકૂલજલવાતાદિભિઃ પુષ્યતિ; પ્રતિકૂલજલવાતાદિભિશ્ચ શુષ્યતિ । યથા વા છેદનાદિના મનુષ્યશરીરં હસ્તાદિ મ્લાયતિ, તથા કાય કે ઉદેશ મેં પહેલે કહે ગયે હૈં વે સબ વનસ્પતિકાય મેં મી પાયે જાતે હૈં । ઇસ કારણ વનસ્પતિ મનુષ્ય આદિ કે સમાન સચિત્ત હૈ ।

તથા—વનસ્પતિ સચેતન હૈ, ક્યોં કિ ઉસ મેં બાલ્યાવસ્થા આદિ દેહી જાતી હૈં, અનુકૂલ આહાર સે પુષ્ટિ ઓર પ્રતિકૂલ આહાર સે કૃશતા આદિ દિખાઈ દેતી હૈ, ઓર છેદન-ભેદન આદિ કરને સે મુરજાના વગેરહ દેહા જાતા હૈ, જૈસે મનુષ્ય કા શરીર ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ જૈસે મનુષ્ય કા શરીર અનુકૂલ આહાર આદિ સે પુષ્ટ હોતા હૈ ઓર પ્રતિકૂલ આહાર સે યા આહાર કે અભાવ સે સૂચ જાતા હૈ, ડસી પ્રકાર વનસ્પતિ મી અનુકૂલ જલ-વાયુ આદિ સે પુષ્ટ હોતી હૈ ઓર પ્રતિકૂલ જલ-વાયુ આદિ સે સૂચ જાતી હૈ । અથવા જૈસે છેદન-ભેદન કરને સે મનુષ્ય કા શરીર હાથ આદિ મુરજા ઉદેશમાં પહેલા કહ્યાં છે, તે સર્વ વનસ્પતિકાયમાં પણ જોવામાં આવે છે. આ કારણથી વનસ્પતિ મનુષ્ય આદિના સમાન સચિત્ત છે.

તથા—વનસ્પતિ સચેતન છે, કેમકે તેમાં બાલ્યાવસ્થા આદિ અવસ્થાઓ જોવામાં આવે છે. અનુકૂલ આહારથી પુષ્ટિ અને પ્રતિકૂલ આહારથી કૃશતા-દુર્બલતા આદિ દેખાય છે, અને છેદન, ભેદન આદિ કરવાથી મુરઝાઈ જવું-કરમાઈ જવું સુસ્ત કે બિન્ન થવાપણું વગેરે જોવામાં આવે છે. જેવી રીતે મનુષ્યનું શરીર.

તાત્પર્ય એ છે કે—જેમ મનુષ્યનું શરીર અનુકૂલ આહાર આદિથી પુષ્ટ થાય છે, અને પ્રતિકૂલ આહારથી અથવા તો આહારના અભાવથી સુકાઈ જાય છે તેવી રીતે વનસ્પતિ પણ અનુકૂલ જલ, વાયુ આદિથી પુષ્ટ થાય છે, અને પ્રતિકૂલ જલ વાયુ આદિથી સુકાઈ જાય છે. અથવા જેવી રીતે છેદન-ભેદન કરવાથી મનુષ્યશરીરના હાથ-પગ આદિ કરમાઈ જાય છે. તે પ્રમાણે પાંદડા, ફલ, ફૂલ, આદિ વનસ્પતિ પણ છેદન-ભેદન

પલ્લવફલકુસુમાદિરૂપો વનસ્પતિરપિ છેદનાદિના મ્લાયતિ, તસ્માદ્ વનસ્પતિઃ સચેતન ઇતિ સિદ્ધમ્ ।

યદ્વા—વનસ્પતિર્જીવઃ, ચેતનાવસ્ત્વાત્, મનુષ્યવત્, યથા મનુષ્યસ્ય શબ્દાદિગ્રહણશક્તિરૂપા ચેતના, તથૈવ વનસ્પતૌ સમુપલભ્યતે । તથાહિ—બકુલાદયો ગીત—મુરાગણ્ડૂષ—કામિનીચરણતાડનાદિભિઃ ફલન્તિ, શમીલજ્જાલુપ્રભૃતિષુ ચ સ્વાપાવબોધસંકોચાદયો દૃશ્યન્તે । શાપાનુગ્રહાભ્યામાન્તરૌ સંકોચવિકાશૌ સમસ્ત-વનસ્પતીનાં ભવતઃ । ઉક્તઞ્ચ—

જાતા હૈ उसी प्रकार पत्ता, फल, फूल, आदि वनस्पति भी छेदन—भेदन आदि से मुरझा जाती है, इससे सिद्ध होता है कि वनस्पति सचेतन है ।

અથવા—વનસ્પતિ જીવ હૈ; ક્યોં કિ ચેતનાવાલી હૈ, જૈસે મનુષ્ય । જૈસે—મનુષ્ય આદિ મેં શબ્દ આદિ કો ગ્રહણ કરને કી શક્તિરૂપ ચેતના હૈ उसी प्रकार वनस्पति में भी शब्द आदि को ग्रहण करने की शक्तिरूप चेतना पाई जाती है । बकुल आदि के वृक्ष गीत, मदिरा का कुल्ला, कामिनी के पैर के ताड़न आदि से फलते हैं । शमी तथा लज्जावती आदि में स्वाप, (सोना) अवबोध (जागना) और संकोच (सिकुड़ना) देखा जाता है । शाप और अनुग्रह से सब वनस्पति में संकोच और विकास होता है । कहा भी है :—

આદિથી કરમાઈ જાય છે સુકાઈ જાય છે, આ કારણથી સિદ્ધ થાય છે કે વનસ્પતિ સચેતન છે.

અથવા—વનસ્પતિ જીવ છે, કેમકે—ચેતનાવાળી છે, જેમ મનુષ્ય. જેવી રીતે મનુષ્ય આદિમાં શબ્દ આદિને ગ્રહણ કરવાની શક્તિરૂપ ચેતના છે. તે પ્રમાણે વનસ્પતિમાં પણ શબ્દ આદિને ગ્રહણ કરવાની શક્તિરૂપ ચેતના જોવામાં આવે છે. બકુલ આદિ વૃક્ષ ગીત, મદિરાના ગંડૂષ (કોગલા), સ્ત્રીના પગથી થયેલું તાડન આદિથી ક્ષણે છે. શમી તથા લજ્જાવંતી (રીસામણી) આદિમાં સુઈ જવું જાગવું અને સંકોચાઈ જવું વગેરે જોવામાં આવે છે. શાપ અને અનુગ્રહથી સર્વ વનસ્પતિમાં સંકોચ અને વિકાસ થાય છે. કહ્યું છે કે:—



“સ્ત્રીणां સ્પર્શાત્ પ્રિયङ्गुर्वિકसति बकुलः शीघ्रगण्डूपसेकात्,  
 पादाघातादशोकस्तिलककुरवकौ वीक्षणालिङ्गनाभ्याम् ।  
 मन्दारो नर्मवाक्याच्चटुमृदुहसनाच्चम्पको वक्त्रवाताद्,  
 वल्ली गीतान्ममेरुर्विकसति च पुरो नर्तनात् कर्णिकारः ” ॥ १ ॥ इति ॥

આગમોઽપિ—

“વળસ્સઈ ચિત્તમંતમવ્વાયા અળેગજીવા પુઠોસત્તા, અન્નત્થ સત્થપરિણેણ”  
 इति । ( दशवै० )

પ્રદર્શિતં ચાધુનિકવૈજ્ઞાનિકૈઃ પ્રત્યક્ષતયા સ્વકૃતપ્રયોગવિશેષેણ વનસ્પતીનાં  
 સચિત્તત્વમ્, યથા—ક્રોધાદિમુન્નાટયતાં તેષાં ગાલીપ્રદાનાદિભર્ત્સનવાક્યતો

“પ્રિયંગુ કા પેડ છિયોં કે સ્પર્શ સે વિકસિત હોતા હૈ, બકુલ મદિરા કે કુલ્લે સે  
 સ્થિલ ઊઠતા હૈ । અશોક વૃક્ષ સ્ત્રી કે પૈર કા આઘાત લગને સે સ્થિલ જાતા હૈ । તિલક વૃક્ષ  
 છિયોં કે દેખને સે, તથા કુરવકાં ઊંકે આલિંગન સે સ્થિલ ઊઠતા હૈ । મન્દાર વૃક્ષ વિનોદમય  
 વાક્ય સુનકર, ચમ્પક મૃદુહસી સે, વલ્લી વક્ત્ર (મુખ) વાયુ સે ઓર નમેરુ ગીત સે વિકસિત  
 હોતા હૈ । કનેર કા પેંડ સામને નાચને સે સ્થિલ જાતા હૈ ” ॥૧॥

વનસ્પતિ કી સચેતનતા આગમ પ્રમાણ સે મી સિદ્ધ હોતી હૈ । દશ વૈકાલિક  
 સૂત્ર મેં કહા હૈ—શસ્ત્રપરિણત કો છોડકર શેષ સર્વ વનસ્પતિ સચિત્ત કહો ગઈ હૈ, વહ  
 અનેક જીવવાલી હૈ ઓર ઊન જીવોં કી સત્તા પૃથક્ પૃથક્ હૈ ” ।

આધુનિક વૈજ્ઞાનિકોને અપને પ્રયોગોં દ્વારા પ્રત્યક્ષ દિશ્વલ દિયા હૈ કિ-વનસ્પતિ  
 સચિત્ત હૈ । ક્રોધ આદિ કરને સે—ગાલી દેને યા ભર્ત્સના કરને સે વૃક્ષ, લતા આદિ

“પ્રિયંગુનો છોડ સ્ત્રીઓના સ્પર્શથી વિકસિત થાય છે, બકુલ મદિરાના કોગળા  
 કરવાથી ખિલી ઉઠે છે. અશોક વૃક્ષ સ્ત્રીના પગનો આઘાત લાગવાથી ખિલી ઉઠે છે.  
 તિલક વૃક્ષ સ્ત્રીઓને બેવાથી તથા કુરવકાં સ્ત્રીઓના આલિંગનથી ખિલી ઉઠે છે. મન્દાર  
 વૃક્ષ વિનોદમય વાક્ય સાંભળીને, ચમ્પક મૃદુ હાંસીથી, વલ્લી વક્ત્ર (મુખ) વાયુથી  
 અને નમેરુ ગીતથી વિકસિત થાય છે. કનેરનો છોડ તેના સામે નાચવાથી ખિલે છે.” ॥૧॥

વનસ્પતિની સચેતનતા આગમપ્રમાણથી પણ સિદ્ધ થાય છે. દશવૈકાલિક  
 સૂત્રમાં કહ્યું છે—“શસ્ત્રથી પરિણત—(છેદાયેલી)ને છોડીને ખાડીની સર્વ વનસ્પતિ  
 સચિત્ત કહેલી છે, તે અનેક જીવવાળી છે, અને તે જીવોની સત્તા પૃથક્-પૃથક્ છે.”

આધુનિક વૈજ્ઞાનિકોએ પોતાના પ્રયોગો દ્વારા પ્રત્યક્ષ-ખતાવી આપ્યું છે કે વનસ્પતિ  
 સચિત્ત છે. ક્રોધ આદિ કરવાથી, ગાળ દેવાથી અથવા તિરસ્કાર કરવાથી વૃક્ષ, લતા આદિ

વૃક્ષલતાદયઃ સંકોચમાપદ્યન્તે, સ્તુતિવાક્યૈશ્ચ પ્રવધન્તે, વિકસન્તિ ચેતિ વનસ્પતીનાં સચેતનત્વે નાસ્તિ કેષાશ્ચિદ્ વિવાદઃ ।

ये तु सूक्ष्मा वनस्पतिकायास्ते चक्षुषा नैव दृश्यन्ते, अतस्तेषां सचिच्छत्वं भगवद्वचनमात्रावगम्यमिति तत्रापि श्रद्धा करणीयैव ।

પ્રરૂપણાદ્વારમ્—

वनस्पतिजीवा द्विविधाः—सूक्ष्मबादरभेदात् । सूक्ष्माः सर्वलोके कज्जलकूपिकावत् संभृताः । बादरास्तु लोकैकदेशे सन्ति । सूक्ष्माः पर्याप्तापर्याप्तभेदाद्विविधाः ।

बादरा द्विविधाः—प्रत्येकशरीर—साधारणशरीरभेदात् । एकमेकं जीवं

સંકોચ કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઔર પ્રશંસા કરને સે બઢતે, હૈં ઔર ફૂલતે હૈં અતઃ વનસ્પતિ કી સચિત્તા મેં અબ કિસી કો મી વિવાદ નહીં હૈ ।

સૂક્ષ્મ વનસ્પતિકાય કે જીવ આંખ સે નહીં દિખાઈ દેતે । ભગવાન્ કે વચનોં સે હી જાને જા સકતે હૈં । ઁન પર શ્રદ્ધા રચની ચાહિએ ।

પ્રરૂપણાદ્વાર—

वनस्पतिकाय के जीव दो प्रकार के हैं—सूक्ष्म और बादर । सूक्ष्म जीव समस्त लोकाकाश में काजल की कुप्पी की तरह भरे हुए हैं । बादर जीव लोक के एक-एक भाग में होते हैं । सूक्ष्म जीवों के भी दो भेद हैं—पर्याप्त और अपर्याप्त ।

बादर जीव प्रत्येकशरीर और साधारणशरीर के भेद से दो प्रकार के हैं ।

સંકોચને પ્રાપ્ત થાય છે અને પ્રશંસા કરવાથી ફૂલે છે અને ખિલે છે એ કારણથી વનસ્પતિની સચિત્તામાં હવે કોઈને પણ વિવાદ નથી.

સૂક્ષ્મ વનસ્પતિકાયના જીવ નેત્રથી જોઈ શકાતા નથી. તે ભગવાનના વચનોથી જ જાણી શકાય છે. તેના પર શ્રદ્ધા રાખવી જોઈએ.

પ્રરૂપણાદ્વાર—

वनस्पतिकायना ज्व ये प्रकारना छे. (१) सूक्ष्म અને બાદર. સૂક્ષ્મ જીવ સમસ્ત લોકાકાશમાં કાજલની કુપ્પીની પ્રમાણે ભરેલા છે. બાદર જીવ લોકના એક-એક ભાગમાં હોય છે.

સૂક્ષ્મ જીવોના પણ બે ભેદ છે. (૧) પર્યાપ્ત અને (૨) અપર્યાપ્ત. બાદર જીવ પ્રત્યેકશરીર અને સાધારણશરીરના ભેદથી બે પ્રકારના છે. એક-એક જીવ સમગ્ર નથી

પ્રતિ ગતં પ્રત્યેકમ્, પ્રત્યેકં શરીરં યેષાં તે પ્રત્યેકશરીરાઃ । પ્રત્યેકનામકર્મોદયવશા-  
દેકૈકસ્ય જીવસ્ય શરીરમૌદારિકં વૈક્રિયં વા પૃથક્ પૃથક્ ભવતિ । એવમ્ભૂતા જીવાઃ  
પ્રત્યેકશરીરા ઉચ્યન્તે । નારકદેવમનુષ્યાઃ, દ્વીન્દ્રિયાદયઃ, પૃથિવ્યાદયઃ, વૃક્ષગુચ્છાદિ-  
વનસ્પતયશ્ચ પ્રત્યેકશરીરિણઃ સન્તિ । ઇમે પ્રત્યેકાઃ પ્રત્યેકજીવા અપિ કથ્યન્તે ।

પ્રત્યેકશરીરા દ્વાદશવિધાઃ-વૃક્ષ-ગુચ્છ-ગુલ્મ-લતા-વહ્ની-પર્વગ-તૃણ-વલય-  
રિતૌ-ષધિ-જલરુહ-કુહળભેદાત્ ।

તત્ર વૃક્ષા દ્વિવિધાઃ-એકાસ્થિકાઃ (એકબીજકાઃ) બહુબીજકાશ્ચ । તૈત્રેકાસ્થિકા  
અનેકવિધાઃ-નિમ્બામ્રજમ્બૂકૌશમ્બાદયઃ । બહુબીજકા અપ્યનેકવિધાઃ-

એક-એક જીવસંબંધી શરીર પ્રત્યેકશરીર કહલાતા હૈ । પ્રત્યેકનામકર્મ કે ઉદય સે એક-એક  
જીવ કે શરીર ઔદારિક ઔર વૈક્રિય અલગ-અલગ હોતા હૈ । એસે અલગ-અલગ શરીર  
વાલે જીવ પ્રત્યેકશરીર કહલાતે હૈ-નારક, દેવ, મનુષ્ય દ્વીન્દ્રિય આદિ, પૃથ્વીકાય આદિ  
તથા વૃક્ષ, ગુચ્છ આદિ વનસ્પતિજીવ પ્રત્યેક શરીરી હૈ । ઇન્હે પ્રત્યેક ઔર પ્રત્યેકજીવ  
મી કહતે હૈ ।

પ્રત્યેકશરીરી વનસ્પતિકાય બારહ પ્રકાર કે હૈ-વૃક્ષ, ગુચ્છ ગુલ્મ, લતા, વહ્ની, પર્વગ,  
તૃણ, વલય, હરિત, ઔષધ, જલરુહ ઔર કુહળ ।

ઇનમે વૃક્ષ દો પ્રકાર કે હૈ-એકાસ્થિક અર્થાત્ એક બીજ વાલે ઔર બહુ-  
બીજક અર્થાત્ બહુત બીજો વાલે । એક બીજ વાલે નીમ, આમ, જામન ઔર કૌશમ્બ  
આદિ અનેક પ્રકાર કે હૈ । બહુબીજક મી અનેક પ્રકાર કે હૈ । જૈસે અસ્થિક, તિન્દુક,

શરીર પ્રત્યેક શરીર કહેવાય છે. પ્રત્યેકનામકર્મના ઉદયથી એક-એક જીવના શરીર  
ઔદારિક અને વૈક્રિય અલગ-અલગ હોય છે. એવા અલગ-અલગ શરીરવાળા જીવ  
પ્રત્યેકશરીર કહેવાય છે. નારક, દેવ, મનુષ્ય, દ્વીન્દ્રિય આદિ, પૃથ્વીકાય આદિ તથા  
વૃક્ષ, ગુચ્છ આદિ વનસ્પતિજીવ પ્રત્યેકશરીર છે. તેને પ્રત્યેક અને પ્રત્યેકજીવ પણ કહે છે.

પ્રત્યેકશરીરી વનસ્પતિકાય બાર પ્રકારના છે-વૃક્ષ, ગુચ્છ, ગુલ્મ, લતા, વહ્ની,  
પર્વગ, તૃણ, વલય, હરિત, ઔષધ, જલરુહ અને કુહળ.

એમાં વૃક્ષ બે પ્રકારના છે-એકાસ્થિક અર્થાત્ એક બીજવાળા, અને બહુબીજક  
અર્થાત્ ઘણાં બહુ બીજવાળાં. એક બીજવાળા-લીંબડો, આંબો, જાંબુ અને કૌશમ્બ, આદિ  
અનેક પ્રકારના છે. બહુબીજક એટલે ઘણા બીજવાળા પણ અનેક પ્રકારના છે. જેમકે:-



અસ્થિક-તિન્દુક-કપિત્થા-મ્બાડક-માતુલિંગ-બિલ્વા-મલક-પનસ-દાડિમાદયઃ ।

एकास्थिकानां बहुबीजकानां च वृक्षाणां मूलैकजीवमाश्रित्य मूलकन्दस्कन्ध-  
त्वक्शाखाप्रवालेषु प्रत्येकमसंख्येया जीवाः सन्ति । एको मूलजीवस्तु मूलादिफल-  
पर्यन्तं सर्वावयवं व्याप्य वृक्षेषु तिष्ठति ।

नन्वेकास्थिकानां बहुबीजकानां च वृक्षाणां मूलकन्दस्कन्धत्वक्शाखादयः  
प्रत्येकमसंख्येयजीवाः सन्ति, इति यदुक्तं तत् कथमुपपद्यते, मूलादिफलपर्यन्ता वृक्षाः  
सर्वेऽप्येकशरीराकारा एवोपलभ्यन्ते, यथा-देवदत्तस्य शरीरमखण्डमेकरूपमुपलभ्यते  
तद्वत्, तस्मादेकशरीरात्मका एव वृक्षाः, कथमस्मी प्रत्येकशरीरा असंख्येयजीवा  
इति ? उच्यते—

(તેંદૂ) કપિત્થ (કવિઠ), અમ્બાડક, માતુલિંગ, બિલ્વ, આમલા, પનસ ઓર દાડિમ આદિ ।

एकास्थिक और बहुबीजक वृक्षों में मूलके एक जीव के सहारे मूल, कंद, स्कंध, छाल,  
शाखा, और प्रवाल में अलग-अलग असंख्यात जीव हैं । एक मूल जीव, मूल से लेकर फल  
तक वृक्ष के सभी अवयवों में व्याप्त होकर रहता है ।

શંકા—એક બીજવાળે ઓર બહુત બીજ વાળે વૃક્ષોં કે મૂલ, કન્દ, સ્કન્ધ, ત્વચા,  
શાખા આદિ પ્રત્યેક અસંખ્યાત જીવ વાળે હૈં, યહ કથન સહી કૈસે હો સકતા હૈ ? મૂલ સે  
લેકર ફલપર્યન્ત વૃક્ષ સમી એક શરીરાકાર હી ઉપલબ્ધ હોતે હૈં, જૈસે કિ દેવદત્ત કા શરીર  
અખંડ એકરૂપ હી દેખા જાતા હૈ । અતઃ વૃક્ષ એક-એક શરીરરૂપ હી હૈં । ડન મેં અસંખ્યાત  
પ્રત્યેક કિસ પ્રકાર હો સકતે હૈં ?

અસ્થિક, તિન્દુક, કપિત્થ, અમ્બાડક, માતુલિંગ (ખિન્નેર), ખિલ્વ, (ખીલી), આમલાં,  
પનસ અને દાડમ આદિ.

એકાસ્થિક અને બહુબીજક વૃક્ષોમાં મૂળના એક જીવના આધારે મૂલ, કંદ, સ્કંધ,  
છાલ, શાખા અને પ્રવાલમાં અલગ-અલગ અસંખ્યાત જીવ છે. એક મૂલ જીવ,  
મૂલથી લઈને ફલ સુધી વૃક્ષના સર્વ અવયવોમાં વ્યાપ્ત થઈને રહે છે.

શંકા—એકબીજવાળા અને બહુબીજવાળા વૃક્ષોના મૂળ, કંદ, સ્કન્ધ, ત્વચા-  
છાલ, શાખા આદિ પ્રત્યેક અસંખ્યાત જીવવાળા છે. આ કથન સાચું છે એમ કેવી  
રીતે કહી શકાય ? અથવા એ કથન સાચું કેવી રીતે હોઈ શકે ?

મૂલથી લઈને ફલ સુધી વૃક્ષ સર્વ એક શરીરાકારજ ઉપલબ્ધ થાય છે. જેમકે  
દેવદત્તનું શરીર અખંડ એકરૂપજ જોવામાં આવે છે. એ માટે વૃક્ષ એક એક શરીર-  
રૂપજ છે. તેમાં અસંખ્યાત પ્રત્યેકશરીર કેવી રીતે હોઈ શકે છે ?

મૂલસ્કન્ધાદિષુ તેષામસંખ્યેયાનામપિ જીવાનાં પ્રત્યેકનામકર્મોદયાત્ પૃથક્ પૃથગેવ એકેકશરીરસદ્ભાવેન પ્રત્યેકશરીરત્વં સિદ્ધયતિ ।

યદ્યપિ વૃક્ષાણાં મૂલાદિષુ પ્રત્યેકમસંખ્યેયા અપિ જીવાઃ પરસ્પરં વિભિન્નશરીરાઃ, તથાપિ પ્રબલરાગદ્વેષોપચિત્તતથારૂપપ્રત્યેકનામકર્મમાહાત્મ્યાદેવ પરસ્પરં સમાશ્લિષ્ટાઃ સંમિશ્રિતા ભવન્તિ । યથા શ્લેષણદ્રવ્યેણ મિશ્રીકૃત્ય નિર્મિતાયાં યસ્યયસગુટિકાયાં પ્રત્યેકભાગે સ્વસ્વસત્તયા યસ્યયસવીજાનિ તિષ્ઠન્તિ । યથા વા-ગુડમિશ્રિતૈસ્તિલૈઃ કૃતાયાં તિલપર્પટિકાયાં તિલાઃ સ્વસ્વરૂપેણ વર્તન્તે, તથૈવ પ્રત્યેકશરીરા અસંખ્યેયજીવાઃ મૂલકન્દાદિષુ પ્રત્યેકં તિષ્ઠન્તિ । સાધારણ-

**સમાધાન—**મૂલ ઓર સ્કન્ધ આદિ મેં ડન અસંખ્યાત જીવોં કે, પ્રત્યેકનામકર્મ કે ડદય સે અલગ-અલગ ઇક-ઇક શરીર હૈં, અતઃ વે સબ પ્રત્યેકશરીરી સિદ્ધ હોતે હૈં ।

યદ્યપિ વૃક્ષોં કે મૂલ આદિ મેં અસંખ્યાત જીવ હૈં ઓર ડન સબ કે શરીર ભિન્ન-ભિન્ન હૈં, ફિર મી તીવ્ર રાગ-દ્વેષ કે કારણ ડપાર્જિત પ્રત્યેકનામકર્મ કે પ્રભાવ સે હી વે સબ આપસ મેં મિલે હુઇ-સે રહતે હૈં । જૈસે કિસી ચિપકની ચીજ મેં મિલકર બનાઈ હુઈ યસ્યયસ કી ગોલી કે પ્રત્યેક ભાગ મેં યસ્યયસ કે વીજ અપના અલગ-અલગ અસ્તિત્વ બનાયે રઘતે હૈં, અથવા જૈસે ગુડ મિલે તિલોં કી બનાઈ હુઈ તિલપપડી મેં તિલોં કે ડાને અપને અપને સ્વરૂપ મેં વિદ્યમાન રહતે હૈં, ડસી પ્રકાર પ્રત્યેકશરીરી અસંખ્યાત જીવ મૂલ, કન્દ આદિ મેં રહતે હૈં । સાધારણવનસ્પતિ સે ડન મેં યહ ભેદ હૈ કિ-પ્રત્યેકશરીરી

**સમાધાન—**મૂલ અને સ્કન્ધ આદિમાં તે અસંખ્યાત જીવોના પ્રત્યેકનામકર્મના ઉદયથી અલગ-અલગ એક-એક શરીર છે, તેા પણ તીવ્ર રાગ-દ્વેષના કારણે ઉપાર્જિત-પ્રાપ્ત કરેલા પ્રત્યેકનામકર્મના પ્રભાવથીજ તે સર્વ આપસમાં-પરસ્પરમાં મળેલા રહે છે, જેમ કેઈ ચિપકની (ચીકણી-ચોટી બાય તેવી) ચીજમાં મેળવીને બનાવેલી ખસખસની ગોળીના પ્રત્યેક ભાગમાં ખસખસનાં બીજ પોતાનું અલગ અલગ અસ્તિત્વ બનાવી રાખે છે. અથવા જેમ ગોળ મેળવેલી તલની તલપાપડી-તલસાંકળીમાં તલના દાણા પોત-પોતાના સ્વરૂપમાં વિદ્યમાન રહે છે, તે પ્રમાણે પ્રત્યેકશરીરી અસંખ્યાત જીવ મૂલ, કન્દ આદિમાં રહે છે. સાધારણ વનસ્પતિથી તેનામાં એ ભેદ છે કે:-પ્રત્યેકશરીરી

વનસ્પતિભ્યસ્ત્વેતાવાન્ વિશેષ:- પ્રત્યેકશરીરાઃ પરસ્પરં સંમિશ્રિતા અપિ ભિન્ના એવ તિષ્ઠન્તિ, સાધારણશરીરાસ્ત્વન્યોન્યાનુવિદ્વા ઇતિ ।

પત્રેષુ પ્રત્યેકં મૂલજીવાદ્ભિન્ન એકૈકો જીવઃ । ઉક્તં હિ પ્રજ્ઞાપનાયામેકા- સ્થિકવહુવીજવૃક્ષપ્રરૂપણાવસરે-“ પત્તા પત્તેયજીવિયા ” ઇતિ ।

તથા-તાલસરલનાલિકેરવૃક્ષાણાં સ્કન્ધશ્ચૈકજીવઃ । તદુક્તમ્-

“ ણાણાવિહસંઠાણા, સ્વસ્થાણં એગજીવિયા પત્તા ।

સ્વંધોવિ એગજીવો, તાલ-સરલ-નાલિકેરીણં ” ॥

છાયા-નાનાવિધ સંસ્થાનાનિ, વૃક્ષણામ્ એકજીવિકાનિ પત્રાણિ ।

સ્કન્ધોઽપિ એકજીવઃ, તાલસરલ નારિકેલાનામ્ ॥ (પ્રજ્ઞા૦)

જીવ આપસ મેં મિલે હુએ મી ભિન્ન-ભિન્ન રહેતે હૈં કિન્તુ સાધારણશરીરવાલે જીવ આપસ મેં અનુવિદ્ધ-એક રૂપ હોકર રહેતે હૈં । તાત્પર્ય યહ હૈ કિ-પ્રત્યેકશરીરી જીવોં કા શરીર અલગ-અલગ હોતા હૈ કિન્તુ ઇન સાધારણશરીરી જીવોં કા શરીર એક હી હોતા હૈ ।

પત્રોં મેં મૂલ જીવ સે ભિન્ન એક-એક જીવ અલગ-અલગ હોતે હૈં । પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં એકવીજ ઓર વહુવીજ વૃક્ષોં કી પ્રરૂપણા કરતે હુએ કહા હૈ- ‘પત્તા પત્તેયજીવિયા’ અર્થાત્ પત્તે પ્રત્યેક જીવ વાલે હૈં ।

તથા તાલ, સાલ, નાલિકેર આદિ વૃક્ષોં કા સ્કન્ધ એક જીવ હૈ । કહા હૈ-

“ નાના પ્રકાર કે આકાર વાલે વૃક્ષોં કે પત્તે પ્રત્યેકજીવ હૈં ઓર તાલ, સરલ તથા નારિયલ કે સ્કન્ધ એકજીવ હૈં ” ।

જીવ પરસ્પર મળેલા છતાં પણ ભિન્ન-ભિન્ન રહે છે; પરન્તુ સાધારણ શરીરવાળા જીવ પરસ્પરમાં અનુવિદ્ધ-એકરૂપ થઈને રહે છે. તાત્પર્ય એ છે કે-પ્રત્યેકશરીરી જીવોનાં શરીર અલગ-અલગ હોય છે. કિન્તુ આ સાધારણશરીરી જીવોનાં શરીર એકજીવ હોય છે.

પત્તાં-પાંદડાંમાં, મૂલ જીવથી ભિન્ન એક-એક જીવ અલગ-અલગ હોય છે. પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં એકબીજા અને બહુબીજા વૃક્ષોની પ્રરૂપણા કરતા થકા કહ્યું છે કે:- ‘પત્તા પત્તેયજીવિયા’ અર્થાત્ પત્તાં પ્રત્યેક જીવવાળા છે.

તથા તાલ, સરલ, નાળિયેર આદિ વૃક્ષોનાં સ્કન્ધ એક જીવ છે. કહ્યું છે કે:-

“ નાના પ્રકારના આકારવાળા વૃક્ષોનાં પત્તાં-પાંદડાં પ્રત્યેકજીવ છે. અને તાલ, સરલ તથા નારિયેલના સ્કન્ધ એકજીવ છે. ”



પુષ્પેષુ અનેકજીવાઃ-સંખ્યાતા અસંખ્યાતા અનન્તા વા સન્તિ । ઉક્તશ્ચ-  
“પુષ્પા અણેગજીવા ” ઇતિ ।

“પુષ્પા જલયા થલયા, વિંટવદ્વા ય નાલિવદ્વા ય ।

સંસ્વિજ્જમસંસ્વિજ્જા, બોધવ્વાઽણંતજીવા ય ” ॥

છાયા-પુષ્પાણિ જલજાનિ સ્થલજાનિ, વૃન્તવદ્વાનિ ચ નાલિવદ્વાનિ ચ ।

સંસ્વેયાનિ (સંસ્વેય જીવાનિ) અસંસ્વેયાનિ (અસંસ્વેય જીવાનિ)

બોદ્ધવ્યાનિ અનન્ત જીવાનિ ચ ॥ (પ્રજ્ઞા૦)

યત્તુ “પુષ્પાણિ ચૈકજીવાનિ મન્તવ્યાની”-તિ શીલાઙ્કાચાર્યૈરભિહિતં તત્  
પ્રામાદિકમ્, પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રવિરોધાત્ ।

ફલેષુ મૂલજીવમાશ્રિત્ય પ્રત્યેકં દ્વૌ દ્વૌ જીવૌ સ્તઃ । દોષ્ણિ ય જીવા ફલે  
મણિયા ” ઇતિ પ્રજ્ઞાપનાવચનાત્ । વૃક્ષાઃ પ્રરૂપિતાઃ, અથગુચ્છાદયઃ પ્રોચ્યન્તે-

ફૂલો મેં અનેક-સંખ્યાત અસંખ્યાત અથવા અનન્ત જીવ હોતે હૈં । કહા મી હૈ-“પુષ્પા  
અણેગજીવા” ફૂલ અનેક જીવ વાલે હોતે હૈં ।

“જલ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલે, સ્થલ મેં ઉત્પન્ન હોને વાલે, વૃન્તવદ્વા યા નાલિ-  
વદ્વા ફૂલ સંખ્યાત, અસંખ્યાત અથવા અનન્ત જીવ વાલે સમજ્ઞને ચાહિય ” ।  
( પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર )

“ફૂલ એક જીવ વાલે હોતે હૈં” યહ શીલાઙ્કાચાર્ય કા કથન મૂલભરા હૈ, ક્યોં કિ  
યહ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર સે વિરુદ્ધ હૈ ।

ફલોં મેં મૂલ જીવ કી અપેક્ષા પ્રત્યેક દો-દો જીવ હૈં । પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં કહા હૈ-  
“ ફલ મેં દો જીવ કહે ગયે હૈં । ”

યહોં તક વૃક્ષોં કા નિરૂપણ કિયા । અવ ગુચ્છ આદિ કે વિષય મેં કહતે હૈં-

ફૂલોમાં અનેક સંખ્યાત અસંખ્યાત અથવા અનન્ત-જીવ હોય છે. કહું પણ  
છે-“ પુષ્પા અણેગજીવા ” “ ફૂલ અનેક જીવવાળા હોય છે. ”

“ જલમાં ઉત્પન્ન થવાવાળાં, સ્થળમાં ઉત્પન્ન થવાવાળાં વૃન્તવદ્વા અથવા  
નાલિવદ્વા ફૂલ સંખ્યાત અસંખ્યાત અથવા અનન્ત જીવવાળાં છે, એમ સમજવું  
જોઈએ. ” ( પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર ).

“ ફૂલ એક જીવવાળાં હોય છે. ” આ શીલાંકાચાર્યનું કથન મૂલભર્યું છે, કેમકે  
તે પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રથી વિરુદ્ધ છે.

ફૂલોમાં મૂલ જીવની અપેક્ષા પ્રત્યેક બે-બે જીવ છે. પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં કહું છે-  
“ ફૂલમાં બે જીવ કહેલા છે. ”

અહિં સુધી વૃક્ષોંનું નિરૂપણ કયું, હવે ગુચ્છ આદિના વિષયમાં કહે છે:-

गुच्छा अनेकविधाः-आढकी-वृन्ताकी-तुलसी-पिप्पलीप्रभृतयः । गुल्माः-  
ह्रस्वस्कन्धबहुकाण्डपत्रपुष्पफलोपेताः, तेऽनेकविधाः-सेरिका-नवमालिका-कोरण्टक-  
बन्धुजीवकादयः । लता अनेकविधाः-पद्मलता-नागलताऽशोकलताचम्पकलतादयः ।  
यस्य वनस्पतेस्तिर्यक् तथाविधाः शाखाः प्रशाखा वा न प्रसृताः सा लतोच्यते ।

वल्लयोऽनेकविधाः-पुष्पफली-कूष्माण्डी-कालिङ्गी-तुम्बी-त्रपुषी-कोशातकी  
-पटोलादयः । पर्वगा अनेकविधाः-इक्षु-वंश-नलवंश-वेतसप्रभृतयः । तृणानि-  
अनेकविधानि-कुशदूर्वादीनि । वलयानि-ताल-तमाल-केतकी-कदली-कन्दल्या-

गुच्छ अनेक प्रकार के हैं । जैसे-अरहर वृन्ताकी, तुलसी, पिप्पली आदि ।  
जिनका तना छोटा हो, कांड बहुत हो और जो पत्तों, फूलों और फलों से युक्त हों  
उन्हें गुल्म कहते हैं । वे भी कई प्रकार के हैं । यथा-सेरिका, नवमालिका, कोरण्टक,  
बन्धुजीवक वगैरह । लताएँ भी अनेक प्रकार की हैं; जैसे-पद्मलता, नागलता, अशोकलता,  
चम्पकलता आदि । जिस वनस्पति की तिरछी अथवा खास तरह की शाखाएँ-प्रशाखाएँ नहीं  
फैलती वह लता कहलाती हैं ।

बल्ली के भी अनेक भेद हैं । जैसे-पुष्पकली, कूष्माण्डी, कालिङ्गी, तुम्बी,  
त्रपुषी, (ककडी) कोशातकी तथा पटोलादि । पर्वग भी अनेक प्रकार के हैं ।  
जैसे-इक्षु, (सेलरी) वंश, (बाँस) नलवंश, वेत आदि । कुश और दूब आदि तृण  
अनेक प्रकार के होते हैं । ताल, तमाल, केतकी, कदली, कन्दली आदि वलय

गुच्छ अनेक प्रकारના છે. જેવાં કે-તુલસી, વૃન્તાકી, પિપ્પલી, આદિ.  
જેના થડ નાના હોય, કાંડ બહુ જ હોય અને જે પત્તાં-ફૂલ અને ફળોથી યુક્ત હોય  
તેને ગુલ્મ કહે છે. તે પણ ઘણા પ્રકારના છે. જેમ-સેરિકા, નવમાલિકા, કોરન્ટક,  
બંધુજીવક વગેરે; લતાઓ પણ અनेક પ્રકારની છે. જેવી રીતે કે-પદ્મલતા, નાગલતા,  
અશોકલતા, ચમ્પકલતા આદિ. જે વનસ્પતિની તિરછી અથવા ખાસ તરહની  
શાખાઓ-પ્રશાખાઓ ફેલાતી નથી તે લતા કહેવાય છે.

વલ્લીના પણ અनेક ભેદ છે. જેવી રીતે પુષ્પકલી, કૂષ્માન્ડી, કાલિંગી, તુમ્બી,  
ત્રપુષી, કોશાતકી તથા પટોલાદિ. પર્વગ પણ અनेક પ્રકારના છે. જેમ-સેરિકા, વાંસ,  
નલવંશ વેત આદિ. કુશ-દાલડો અને દૂબ-ધરો આદિ તૃણ અनेક પ્રકારનાં હોય છે.  
તાલ, તમાલ, કેતકી, કદલી-કેળ, કન્દલી આદિને વલય કહેવાય છે. તાંદુલીયક, (તાંદલબ)

દીનિ । હરિતાનિ-તન્દુલીયક-વસ્તુલ-માર્જારપાદિકા-પાલક્યાદીનિ । ઓષધ્યઃ-શાલિ-ત્રીહિ-ગોધૂમ-યવ-વર્જરી-મુદ્-માષાદયઃ । જલરુહાઃ-ઉત્પલ-પદ્મ-કુમુદ-નલિન-પુણ્ડરીક-શતપત્ર-સહસ્રપત્ર-કોકનદા-રવિન્દ-પનક-પનકચટ્ટ-શૈવાલાદયઃ । કુહળાઃ ભૂમિસ્ફોટકાઽપકાય-સર્પચ્છત્રાદયઃ ।

ઉક્તાઃ પ્રત્યેકશરીરા વનસ્પતયઃ । અથ સાધારણશરીરાઃ પ્રરૂપ્યન્તે—

સાધારણનામકર્મોદયાદનન્તાનાં જીવાનાં સાધારણમેકં શરીરં ભવતિ । તસ્માત્ સાધારણમેકં શરીરં યેષાં તે સાધારણશરીરાઃ ।

નનુ કથમનન્તજીવાનામેકં શરીરં સંભવતિ, તથાહિ-યઃ સ્વલ્લ પ્રથમં

કહલાતે હૈં । તન્દુલીયક, વસ્તુલ, માર્જારપાદિકા, પાલંકી આદિ કો હરિત કહતે હૈં । શાલિ ત્રીહિ (ધાન) ઓ ગેહૂં, જૌ, બાજરી, મૂગ, ડડદ આદિ કે પૌધે ઓષધિ કહલાતે હૈં । ઉત્પલ, પદ્મ, કુમુદ, નલિન, પુણ્ડરીક શતપત્ર, સહસ્રપત્ર, કોકનદ, અરવિન્દ, પનક, પનકચટ્ટ, શૈવાલ આદિ કો જલરુહ કહતે હૈં । ભૂમિસ્ફોટક, આપકાય ઓર સર્પચ્છત્ર આદિ કુહળ કહલાતે હૈં ।

યહાં તક પ્રત્યેકશરીર વનસ્પતિ કા વિવેચન હુઆ । સાધારણશરીર કા પ્રરૂપણ હસ પ્રકાર હૈ—

સાધારણનામકર્મ કે ઉદય સે અનન્ત જીવો કા એક સાધારણ હોતા હૈ । જિનકા શરીર સાધારણ અર્થાત્ એક હો, વે સાધારણશરીર કહલાતે હૈં ।

શંકા—અનન્ત જીવો કા શરીર એક કૈસે હો સકતા હો ? કયોં કિં પહેલે-

વસ્તુલ (બથુવા) માર્જારપાદિકા, પાલંકી (સુવાપાલક) આદિને હરિત કહે છે. શાલી, ત્રીહિ (ધાન્ય) ગેહૂં-ધઉં, જવ, બાજરો, મગ, ડડદ આદિ ઓષધિ કહેવાય છે. ઉત્પલ, પદ્મ, કુમુદ, નલિન, પુંડરીક, શતપત્ર, સહસ્રપત્ર, કોકનદ, અરવિંદ, પનક, પનકચટ્ટ. શૈવાલ આદિને જલરુહ કહે છે. ભૂમિસ્ફોટક, આપકાય અને સર્પચ્છત્ર આદિ-કુહળ કહેવાય છે.

અહિં સુધી પ્રત્યેક વનસ્પતિનું વિવેચન થયું, સાધારણશરીરનું પ્રરૂપણ આ પ્રકારે છે—

સાધારણનામકર્મના ઉદયથી અનન્ત જીવોનું એક સાધારણશરીર હોય છે. જેનું શરીર સાધારણ અર્થાત્ એક હોય તે સાધારણશરીર કહેવાય છે.

શંકા—અનન્ત જીવોનાં શરીર એક કેવી રીતે હોઈ શકે છે ? કેમકે પહેલ વહેલો



જાતસ્તેન તચ્છરીરમુત્પાદિતં, સર્વથા સ્વાયત્તીકૃતં ચ, કથં તત્રાન્યેષાં જીવાનામવ-  
કાશઃ, નદિ દેવદત્તશરીરે દેવદત્ત ઇવાન્યેऽપિ જીવાઃ સર્વાવયવેષુ સહૈવ પરસ્પરાનુ-  
પ્રવેશપૂર્વકં પ્રાદુર્ભવન્તિ ?

યદ્વા-યેનૈવ તચ્છરીરં નિષ્પાદ્ય સત્યવકાશે સ્વેતરૈઃ સહ પરસ્પરાનુપ્રવેશેન  
સ્વાધીનં કૃતં, સ એવ યત્ર પ્રધાનઃ સ્યાત્, તત્તથ તસ્યૈવ પર્યાપ્તાપર્યાપ્તવ્યવસ્થા,  
પ્રાણાપાનાદિયોગ્યપુદ્ગલોપાદાનં વા ભવેત્, નતુ શેષાણામ્ ? અત્રોચ્યતે—

નાયં પ્રશ્નો યુક્તિપથમારોહતિ, શઙ્કાકર્તુર્જિનશાસનપરિજ્ઞાનાભાવાત્ ।

પહલ જો જીવ ઉત્પન્ન હુઆ ઉસને વહ શરીર ઉત્પન્ન કિયા ઓર ઉસે પૂરી તરહ અપના  
લિયા । ફિર ઉસ શરીર મેં દૂસરે જીવોં કો અવકાશ કિસ પ્રકાર મિલ સકતા હૈ ? દેવદત્ત  
કે શરીર મેં દેવદત્ત કી તરહ અન્ય જીવ ભી સબ અવયવોં મેં, એક દૂસરે મેં મિલકર ઉત્પન્ન  
કૈસે હો સકતે હૈ ?

અથવા—જિસ જીવને વહ શરીર ઉત્પન્ન કરકે, અવકાશ હોને પર અપને  
સે મિન્ન અન્ય જીવોંકે સાથ મિલકર ગ્રહણ કિયા હૈ વહી જીવ ઉસ શરીર મેં પ્રધાન  
હોગા । એસી સ્થિતિ મેં ઉસી કી પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત કી વ્યવસ્થા હોગી । વહી પ્રાણાપાન  
આદિ કે યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરેગા । શેષ જીવોં કે વિષય મેં કિસ પ્રકાર યહ વ્યવસ્થા  
હો સકતી હૈ ।

સમાધાન—યહ શંકા ઉચિત નહીં કહી જા સકતી, ક્યોં કિ શંકાકાર કો  
જિનશાસન કા પરિજ્ઞાન નહીં હૈ ।

જે જીવ ઉત્પન્ન થયો તેણે તે શરીર ઉત્પન્ન કર્યું અને તેણે પૂરી રીતે પોતાનું કરી  
લીધું. પછી એ શરીરમાં બીજા જીવોને અવકાશ કેવી રીતે મળી શકે છે? દેવદત્તના  
શરીરમાં દેવદત્તની પ્રમાણે અન્ય જીવ પણ તમામ અવયવોમાં એક બીજાને મળીને  
ઉત્પન્ન કેવી રીતે થઈ શકે છે?

અથવા જે જીવે આ શરીર ઉત્પન્ન કરીને અવકાશ મળતાં પોતાનાથી ભિન્ન  
અન્ય જીવોની સાથે મળીને ગ્રહણ કર્યું છે તે જીવ એ શરીરમાં પ્રધાન થશે. એવી  
અવસ્થામાં-સ્થિતિમાં એની પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્તની વ્યવસ્થા થશે. તેજ પ્રાણ-  
અપાન આદિના યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરશે. શેષ-બાકીના જીવોના વિષયમાં એ  
વ્યવસ્થા કેવી રીતે થઈ શકે છે?

સમાધાન—આ શંકા યોગ્ય નથી કેમકે-શંકા કરનારને જિન, શાસનનું  
પરિજ્ઞાન નથી.

સાધારણનામકર્મપ્રભાવાદનન્તા અપિ જીવા એકસ્મિન્નેવ કાલે સહૈવોત્પત્તિદેશે તિષ્ઠન્તિ, સહૈવ પર્યાપ્તિં નિર્વર્તયન્તિ, સહૈવ પ્રાણાપાનયોગ્યપુદ્ગલાનુપાદદતે, સહૈવ ચ તેષામાહારાદિપુદ્ગલગ્રહણમ્, તસ્માન્ન કાચિદનુપપત્તિરિતિ । ઉક્તશ્ચ ભગવતા—

“ સમયં વક્તાણં, સમયં તેસિં શરીરનિર્વિત્તી ।

સમયં આણગ્ગ્રહણં, સમયં ઉસ્સાનીસાસા ॥ ૧૬ ॥

એકસ્સ ઉ જં ગ્રહણં, બહૂણ સાહારણાણ તં ચેવ ।

જં બહુયાણં ગ્રહણં, સમાસઓ તંપિ એગસ્સ ॥ ૧૭ ॥

છાયા—સમકં વ્યુત્ક્રાન્તાનાં, સમકં તેષાં શરીરનિર્વિત્તિઃ ।

સમકમાનગ્રહણં, સમકમુચ્છ્વાસનિઃશ્વાસૌ ॥ ૧૬ ॥

એકસ્ય તુ યદ્ ગ્રહણં, બહૂનાં સાધારણાનાં તદેવ ।

યદ્ બહુકાનાં ગ્રહણં, સમાસતસ્તદપ્યેકસ્ય ॥ ૧૭ ॥

સાધારણનામકર્મ પ્રભાવ સે અનન્ત જીવ એક હી કાલ મેં સાથ હી ઉત્પત્તિ દેશ મેં ઉત્પન્ન હોતે હૈં, સાથ હી પર્યાપ્તિયાં પૂર્ણ કરતે હૈં, સાથ હી પ્રાણાપાન કે યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતે હૈં ઓર સાથ હી આહાર આદિ કે યોગ્ય પુદ્ગલોં કો ગ્રહણ કરતે હૈં । અત એવ હસ કથન મેં તનિક મો અયુક્તિ નહીં હૈ । ભગવાન્ ને કહા હૈ—

“સાથ હી વે જીવ ઉત્પત્તિદેશ મેં આતે હૈં, સાથ હી ઉનકા શરીર બનતા હૈ, સાથ હી પ્રાણ ગ્રહણ કરતે હૈં, સાથ હી ઉચ્છ્વાસ—નિઃશ્વાસ હોતે હૈં (૧૬) એક જીવ જો ગ્રહણ કરતા હૈ વહ બહુત જીવોં કે લિએ સમાન હોતા હૈ ઓર બહુત જીવ જો ગ્રહણ કરતે હૈં વહ એક જીવ કે લિએ મો હોતા હૈ (૧૭)

સાધારણ નામકર્મના પ્રભાવથી અનન્ત જીવ એકજ કાલમાં સાથેજ ઉત્પત્તિદેશમાં ઉત્પન્ન થયા છે. સાથેજ પર્યાપ્તિઓ પૂર્ણ કરે છે. સાથેજ પ્રાણ—અપાનના યોગ્ય—પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે, અને સાથેજ આહાર આદિના યોગ્ય પુદ્ગલોને ગ્રહણ કરે છે. એ માટે આ કથનમાં જરાપણ અસ્વાભાવિકતા અથવા અયુક્તતા નથી. ભગવાને કહ્યું છે કે:—

“તે જીવ એક સાથેજ ઉત્પત્તિદેશમાં આવે છે, સાથેજ એનાં શરીરો બને છે, સાથેજ પ્રાણ ગ્રહણ કરે છે. સાથેજ શ્વાસોચ્છ્વાસ થાય છે. (૧૬) એક જીવ જે ગ્રહણ કરે છે તે બધાય જીવો માટે સમાનપણે થાય છે, અને તમામ જીવો જે ગ્રહણ કરે છે તે એક જીવને માટે પણ થાય છે. (૧૭)

સાહારણમાહારો, સાહારણમાણપાણગ્રહણં ચ ।

સાહારણજીવાણં, સાહારણલક્ષણં એયં” ॥ ૧૮ ॥ (પ્રજ્ઞા ૦ ૧૧૫)

છાયા-સાધારણમાહારઃ, સાધારણમાણપ્રાણગ્રહણં ચ ।

સાધારણજીવાનાં, સાધારણલક્ષણમેતત્ ॥ ૧૮ ॥

એવં ચ પરસ્પરાનુવિદ્વાનન્તજીવસમૂહરૂપેણ એકશરીરાવસ્થાયિનો જીવાઃ સાધારણશરીરા इति सिद्धम् । एते साधारणजीवशब्देन साधारणशब्देनापि च व्यपदिश्यन्ते ।

તેઽનેકવિધાઃ-સૂરણકન્દ - વજ્રકન્દ-શર્કરાકન્દ - રક્તાલુ-પિંડાલુ - લઘુન-પલાણુ-ગૃઝન-શૃંગ્ગેરાદયઃ । વનસ્પતેર્મૂલસંલગ્નો ભૂમ્યન્તર્ગતો ભાગવિશેષઃ કન્દઃ । एतेऽनन्तजीवपिण्डस्वरूपाः सन्ति ।

સાધારણ જીવોં કા આહાર સાધારણ હોતા હૈં ઓર સાધારણ પ્રાણાપાન કા ગ્રહણ હોતા હૈં, ઇસ પ્રકાર ડનકા યહ સાધારણ લક્ષણ કહા ગયા હૈં” ॥૧૮॥ (પ્રજ્ઞા ૦ ૧૧૫)

ઇસ પ્રકાર સિદ્ધિ હુઆ કિ એક દૂસરેં મેં મિલે હુએ અનન્તજીવસમૂહરૂપ સે એક હી શરીર મેં રહેને વાલે સાધારણ જીવ હૈં । ઇન જીવોં કે લિએ ‘સાધારણજીવ’ તથા ‘સાધારણ’ શબ્દ કા બી વ્યવહાર કિયા જાતા હૈં ।

સાધારણ જીવ અનેક પ્રકાર કે હોતે હૈં । જૈસે-સૂરણકન્દ, વજ્રકન્દ, શર્કર-કન્દ, રતાલુ, પિંડાલુ, લઘુન, પ્યાજ, ગાજર, અદરસ આદિ । વનસ્પતિ કે મૂલક સાથ જુડા હુઆ ઓર જમીન કે અન્દર રહેને વાળા હિસ્સા કંદ કહલાતા હૈં । યે કંદ અનન્ત જીવોં કે પિંડ હૈં ।

સાધારણુ જીવોનો આહાર સાધારણુ હોય છે અને સાધારણુ પ્રાણાપાનનું ગ્રહણુ હોય છે. એ પ્રમાણે તેનું આ સાધારણુ લક્ષણુ કહ્યું છે (૧૮)”

આ પ્રમાણે સિદ્ધ થયું કે એક બીજામાં મળેલા અનન્તજીવસમૂહરૂપથી એક જ શરીરમાં રહેવા વાળાં સાધારણુ જીવ છે. એ જીવોને માટે ‘સાધારણુ જીવ’ તથા ‘સાધારણુ’ શબ્દનો પણ વ્યવહાર કરી શકાય છે.

સાધારણુ જીવ અનેક પ્રકારના હોય છે. જેમ-સૂરણકન્દ, રતાલુ, પિંડાલુ, લઘુન, ડુંગળી, ગાજર, આદુ આદિ. વનસ્પતિના મૂળની સાથે જોડાયેલા અને જમીનની અંદર રહેવાવાળો ભાગ કંદ કહેવાય છે. આ કંદ અનન્ત જીવોના પિંડ છે.



બાદરા વનસ્પતયઃ સંક્ષેપતઃ પદ્ધિવધાઃ-અગ્રવીજ-મૂલવીજ-પર્વવીજ-સ્કન્ધ-વીજ-વીજરુહ-સંમૂર્ચ્છિમભેદાત્ । અગ્રે વીજં યેષાં તે-અગ્રવીજાઃ કોરુટકપ્રભૃતયઃ । મૂલમેવ વીજં યેષાં તે મૂલવીજાઃ કદલ્યાદયઃ । પર્વણિ=ગ્રન્થૌ સન્ધિભાગે પર્વે વા વીજં યેષાં તે પર્વવીજાઃ ઇશુ-વંશ-વેત્રપ્રભૃતયઃ । સ્કન્ધઃ=સ્થુડં, સ એવ વીજં યેષાં તે સ્કન્ધવીજાઃ=અરણિ-શલ્લકી-સ્તુહીપ્રભૃતયઃ । વીજાદ્ રોહન્તિ=પ્રાદુર્ભવન્તીતિ વીજ-રુહાઃ=શાલિ-ગોધૂમ-જવ-મક્કા-વર્જરીપ્રભૃતયઃ । સંમૂર્ચ્છન્તિ=વીજં વિનાઽપિ દગ્ધભૂ-માવપિ સમુદ્ભવન્તીતિ સંમૂર્ચ્છિમાઃ પૃથિવીજલસંયોગમાત્રજનિતાસ્તૃણવિશેષાઃ ।

બાદર વનસ્પતિ સંક્ષેપ મેં છહ પ્રકાર કી હૈ—(૧) અગ્રવીજ (૨) મૂલવીજ (૩) પર્વવીજ (૪) સ્કન્ધવીજ (૫) વીજરુહ ઓર (૬) સંમૂર્ચ્છિમ । જિન વનસ્પતિયોંકા વીજ આગે રહતા હૈ એસી કોરુટક આદિ વનસ્પતિયોં અગ્રવીજ કહલાતી હૈ । પર્વ (પોર-સંધિભાગ) મેં જિનકા વીજ હો, યા પર્વ હી જિનકા વીજ હો ઉન્હેં પર્વવીજ કહતે હૈ, જૈસે-ઈંસ, બાંસ, બેંત આદિ । સ્કન્ધ જિનકા વીજ હો એસી અરણિ, શલ્લકી, સ્તુહી (થુહર) વગૈરહ સ્કન્ધવીજ કહલાતી હૈ । શાલી, ગેહૂં, જૌ, મક્કી, બાજરી વગૈરહ વીજ સે ઉગને વાલી વનસ્પતિ કો વીજરુહ કહતે હૈ । વીજ કે વિના મી, જલી હુર્દે જમીન આદિ મેં મી પૃથ્વી ઓર જલ કે સંયોગમાત્ર સે ઉત્પન્ન હોને વાલી વનસ્પતિ સંમૂર્ચ્છિમ કહલાતી હૈ ।

બાદર વનસ્પતિ સંક્ષેપમાં છ પ્રકારની છે—(૧) અગ્રબીજ, (૨) મૂળબીજ, (૩) પર્વબીજ, (૪) સ્કન્ધબીજ, (૫) બીજરુહ, (૬) સંમૂર્ચ્છિમ. જે વનસ્પતિઓનું બીજ આગળ રહે છે એવી કોરુટક આદિ વનસ્પતિઓ અગ્રબીજ કહેવાય છે. મૂળ એજ જેનું બીજ હોય એવી કદળી આદિ વનસ્પતિઓ મૂળબીજ છે.—(પોર-સંધિભાગ)માં જેનું બીજ હોય તેને પર્વબીજ કહે છે, જેમકે:—શેલડી, વાંસ, નેતર આદિ. સ્કન્ધ જેનું બીજ હોય તે અરણી શલ્ય, સ્તુહી (થોર) વગેરે સ્કન્ધબીજ કહેવાય છે. શાલી, ઘઉં, જવ, મકાઈ, બાજરી વગેરે બીજથી ઉગવા વાળી વનસ્પતિને બીજરુહ કહે છે. બીજ વિના પણ બીજી ગએલી જમીન આદિમાં પણ પૃથ્વી અને જલના સંયોગમાત્રથી ઉત્પન્ન થવા વાળી વનસ્પતિ તે સંમૂર્ચ્છિમ કહેવાય છે.

આકારતઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિરૂપેણ દૃશ્યમાના અપિ વનસ્પતયોઽનન્તજીવાઃ સન્તિ ।  
તેષાં લક્ષણમુચ્યતે—

યસ્મિન્ મૂળે ભગ્ને સતિ સમશ્ચક્રાકારો ભક્નો ભવતિ, તત્ર નિયમતોઽનન્તા  
જીવા ભવન્તિ । તથા યસ્મિન્ સ્કન્દે ભગ્ને સંતિ સમશ્ચક્રાકારો ભક્નોદૃશ્યતે તત્રાપ્ય  
નન્તા જીવાઃ । एवं शेषेषु स्कन्ध-त्वक्-शाखा-प्रवाल-पत्र-पुष्प-फल-बीजेष्वपि  
विज्ञेयम् । ईदृशश्च भङ्गः प्रायेणापरिकावस्थायां भवति ।

તથા—યસ્ય વનસ્પતેર્મધ્યગતસારભૂતકાષ્ઠાપેક્ષયા વહુલતરા સ્થૂલા ત્વગ્ ભવતિ  
સા ત્વગનન્તજીવસ્વરૂપા ।

આકાર સે પ્રત્યેકવનસ્પતિ કે સમાન દિશાઈ દેને વાલી વનસ્પતિયોં મી અનન્ત જીવ  
વાલી હોતી હૈં । ઉનકા લક્ષણ યહ હૈ—

જિસકા મૂલભાગ તોડને પર સમાન ચક્રાકાર મંગ હોતા હૈ, ઉસમેં નિયમ સે  
અનન્ત જીવ હોતે હૈં । ઇસી પ્રકાર જિસકા કન્દ મૉગને પર સમાન ચક્રાકાર મંગ દિશાઈ દે  
ઉસમેં મી અનન્ત જીવ હોતે હૈં । યહી વાત સ્કંધ, ત્વચા, શાખા, પ્રવાલ, પત્ર, પુષ્પ, ફલ  
ઔર બીજોં કે વિષય મેં મી સમજની ચાહિયે । ઇસ પ્રકાર કે મંગ પ્રાયઃ સવ હોતે હૈં જવ  
વનસ્પતિ કચ્ચી હોતી હૈ ।

ઇસકે અતિરિક્ત જિસ વનસ્પતિ કે બીચ કે સારભાગ કી અપેક્ષા છાલ વહુત મોટી  
હોતી હૈ વહ છાલ મી અનન્ત જીવ વાલી હોતી હૈ ।

આકારથી પ્રત્યેક વનસ્પતિના સમાન-સરખી-દેખાવાવાળી વનસ્પતિ પણ અનન્ત  
જીવવાળી હોય છે. તેનું લક્ષણ એ છે. કે-જેનાં મૂળભાગને તોડવાથી સમાન ચક્રાકાર  
ભંગ થાય છે, તેમાં નિયમથી અનન્ત જીવ હોય છે. એ પ્રમાણે જેનો કન્દ ભાંગવાથી  
સમાન ચક્રાકાર ભંગ થયેા દેખાઈ આવે તેમાં પણ અનન્ત જીવ હોય છે. એજ  
વાત સ્કંધ, ત્વચા, શાખા, પ્રવાલ, પત્ર-પાંદડાં, પુષ્પ, ફલ અને બીજોના વિષયમાં  
પણ સમજવી જોઈએ. આ પ્રકારનો ભંગ પ્રાયઃ કયારે થાય છે કે જ્યારે વનસ્પતિ  
કાચી હોય છે ત્યારે થાય છે.

જેના સિવાય જે વનસ્પતિના વચ્ચમાં સારભાગની અપેક્ષા છાલ ઘણી જ મોટી  
હોય છે, તે છાલ પણ અનન્તજીવવાળી હોય છે.

તથા—કિસલયરૂપે પત્રાકુરે ઉદ્ભવ્યમાને નિયમતોઽનન્તા જીવા ભવન્તિ । ઉક્તઞ્ચ પ્રજ્ઞાપનાયાં પ્રથમપદે ।

“ સન્વોઽવિ કિસલઓ સ્વલુ, ઉગ્ગમમાણો અણંતઓ મણિઓ. ” इत्यादि ।

છાયા—સર્વોઽપિ કિસલયઃ સ્વલુ ઉદ્ગચ્છન્ અનન્ત મણિતઃ इत्यादि ।

વનસ્પતિર્ભિન્નમાનઃ પૃથિવીસદૃશેન ભેદેન ભિદ્યતે, સોઽપ્યનન્તજીવસ્વરૂપઃ । અન્યચ્ચ—

“ ગૂઢસિરાગં પત્તં, સચ્છીરં જં ચ દ્વોઽનિચ્છીરં ।

જંપિ ય પદ્મણસંધિ, અણંતજીવં વિયાણાદિ ॥ ૧ ॥ ” इति । (પ્રજ્ઞા૦)

છાયા—ગૂઢશિરાકં પત્રં, સક્ષીરં યચ્ચ ભવતિ નિઃક્ષીરમ્ ।

યદપિ ચ પ્રણષ્ટસન્ધિ, અનન્તજીવ વિજાનીહિ ॥ ૧ ॥ इति ।

તથા—કૌંપલ જવ ઉત્પન્ન होती है तो उसमें भी अनंत जीव होते हैं । प्रज्ञापना के पहले पदमें कहा है—

“ उगते हुए सभी किसलय अनंतकाय कहे गये हैं । ”

जिस वनस्पति की प्रंथि या पोर, तोड़नेपर रज से भरी हो, या जो वनस्पति, टूटने पर पृथ्वी के समान भेदों से टूटे, वह भी अनंतजीववाली होती है ।

और भी कहा है:—

“ जिस के तंतु साफ दिखाई न देते हों, तथा जिसकी संधि बिल्कुल दिखाई न देती हो ऐसा पत्ता, अगर दूधवाला हो या उसमें दूध उत्पन्न न हो, उसे भी अनंतजीववाला समझना चाहिए ” ।

તથા—કુંપળ જ્યારે ઉત્પન્ન થાય છે ત્યારે તેમાં પણ અનંત જીવ હોય છે. પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના પ્રથમ પદમાં કહ્યું છે કે:—

“ ઉગતાં હોય તે સર્વ કિસલય (પદ્મવ તાબાં કુમળા પાનનો સમૂહ) અનન્તકાય કહ્યાં છે. ”

જે વનસ્પતિની પ્રંથિ—ગાંઠ અથવા પોર, તોડવાથી રજથી ભરેલી, હોય અથવા જે વનસ્પતિ, તૂટવાથી પૃથ્વીના સમાન ભેદોથી તૂટે તે પણ અનંત જીવવાળી હોય છે. બીજું પણ કહ્યું છે કે:—

“ જેનાં તંતુઓ ચોખ્ખાં દેખાતાં ન હોય, તથા જેની સંધિ (સાંધો) બીલકુલ દેખાતી હોય નહિ, એવાં પાંદડાં દૂધવાળાં હોય અથવા એમાં દૂધ ઉત્પન્ન હોય નહિ, તેને પણ અનંત—જીવ વાળા સમજવા જોઈએ. ”



ગૂઢશિરાકમિતિ=ગૂઢાઃ=અલક્ષ્યમાણાઃ શિરા=નાડીજાલં તન્તુજાલમિતિ વા  
યસ્ય તત્ । પ્રણટસંધીતિ-પ્રણટઃ=સર્વથાડનુપલક્ષ્યમાણઃ, સન્ધિઃ=પત્રદ્વયસંયોગરૂપો  
ભાગો યસ્ય તત્ । એતાદૃશં પત્રં સક્ષીરં=સદુગ્ધમ્, નિઃક્ષીરમ્=અનુત્પન્નદુગ્ધં વા તદનન્ત-  
જીવં વિજાનીહીત્યર્થઃ ।

એવમન્યેડપ્યનેકવિધાઃ શૈવાલાદયોડનન્તજીવાઃ સ્વબુદ્ધ્યા ગુરુગમેન વા  
પરિભાવનીયાઃ । વિસ્તરતસ્તુ જિજ્ઞાસુભિઃ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રં વિલોકનીયમ્ ।

સૂક્ષ્મનિગોદાસ્તુ ભગવદ્વચનાવગમ્યા એવ, અનન્તશરીરસંઘાતે સત્યપ્યતિસૂક્ષ્મ-  
ત્વાન્નાસ્માકં ચક્ષુઃપથેડવતરન્તિ । “આણાગિજ્ઞા એવ ચક્ષુષ્કાસં ન તે ઇતિ”  
ઇતિ વચનાત્ । ઉક્તઞ્ચ પ્રજ્ઞાપનાયાં સદૃષ્ટાન્તં નિગોદજીવસ્વરૂપં, યથા—

હસી પ્રકાર સેવાર આદિ અન્યાન્ય વનસ્પતિયોં કો મી અપની બુદ્ધિ સે યા ગુરુગમ સે  
અનંતજીવવાલી સમજ લેની યાહિએ । જિન્હે વિસ્તારપૂર્વક જાનના હો ઉન્હે પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર  
દેસના યાહિએ ।

સૂક્ષ્મ નિગોદ ભગવાન્ કે વચન સે હી સમજે જા સકતે હૈં । એક શરીર મેં  
અનંત જીવોં કા પિંડ હોને પર મી વે જીવ ઇતને સૂક્ષ્મ હોતે હૈં કિ હમ અપને નેત્રોં સે  
(આગમ) ઉન્હેં નહીં દેસ સકતે । કહા મી હૈ—“યે જીવ સર્વજ્ઞકી આજ્ઞા સે હી પ્રહ્ણ કિયે  
(જાને) જાતે હૈં । આંખે ઉન્હેં નહીં દેસ સકતી” । પ્રજ્ઞાપના સૂત્ર મેં ઉદાહરણ કે સાથ નિગોદ  
કા સ્વરૂપ ઇસ પ્રકાર બતલાયા હૈ—

એ પ્રમાણે સેવાળ આદિ બૂદ્ધી-બૂદ્ધી વનસ્પતિઓને પણ પોતાની બુદ્ધિથી  
અથવા ગુરુગમથી અનંતજીવવાળી સમજ દેવી બેધએ, જેને વિસ્તારપૂર્વક બાણવાની  
ધૃષ્ટિ હોય તેઓએ પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર બેધ દેવું બેધએ.

સૂક્ષ્મનિગોદ ભગવાનના વચનથી જ સમજ શકાય છે (બાણી શકાય છે).  
એક શરીરમાં અનંત જીવોના પિંડ હોવા છતાં પણ તે જીવ એટલા સૂક્ષ્મ હોય  
છે કે આપણે આપણા નેત્રથી તેને બેધ શકતા નથી. કહ્યું પણ છે કે:—“તે જીવ  
સર્વજ્ઞની આજ્ઞા (આગમ)થી જ થકણ કરવામાં આવે છે-બાણવામાં આવે છે, નેત્રથી તે  
બેધ શકાતા નથી.” પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રમાં ઉદાહરણની સાથે નિગોદનું સ્વરૂપ આ  
પ્રમાણે બતાવ્યું છે—

“ જહ અયગોલો ધંતો, જાઓ તત્તવણિજ્ઞસંકાસો ।  
સર્વો અગણિપરિણઓ, નિગોઝીવે તદા જાણ ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

હાયા—યથાઽયોગોલો ધ્માતો, જાતસ્તપ્તપનીયસંકાશઃ ।  
સર્વોઽગ્નિપરિણતો, નિગોઝીવાન્ તથા જાનીહિ ॥ ૧ ॥

યથા—અયોગોલોઽગ્નિના ધ્માતઃ તપ્તસુવર્ણસદૃશઃ સર્વાંશતોઽગ્નિપરિણતોઽગ્નિ-  
રૂપ એવ ભવતિ હે શિષ્ય ! તથૈવ નિગોદઝીવાન્ જાનીહિ । નિગોદઝીવાનાં પરિમાણ-  
સ્વરૂપમેવ વિજ્ઞેયમ્—

અયં લોકશ્ચતુર્દશરજ્જુપરિમિતોઽસ્તિ । એકો રજ્જુરસંખ્યાતયોજનાત્મકઃ, યોજનં  
સંખ્યાતાઙ્ગુલપરિમિતમ્, એકમઙ્ગુલમસંખ્યાતાકાશપ્રદેશાત્મકં ભવતિ । તસ્યાઙ્ગુ-  
જસ્યૈકૈકાકાશપ્રદેશે નિગોદાનામસંખ્યાતા ગોલકાઃ, એકૈકસ્મિન્ ગોલકે નિગોદાનામ-  
સંખ્યાતાનિ શરીરાણિ, એકૈકસ્મિન્ શરીરેઽનન્તા જીવા નિવસન્તિ । ઉક્તશ્ચ—

“જैसे અગ્નિ મેં તપાયા હુઆ લોહે કા ગોલા તપે સોને કે સમાન પૂર્ણતયા અગ્નિરૂપ  
હી હો જાતા હૈ; હે શિષ્ય ! उसी प्रकार निगोद के जीव समझो ” । નિગોદ જીવોં કા પરિમાણ  
इस प्रकार समझना चाहिए—

લોકાકાશ ચૌદહ રાજૂ કા હૈ । એક રાજૂ મેં અસંખ્યાત યોજન હોતે હૈં ઓર  
સંખ્યાત અંગુલ કા એક યોજન હોતા હૈ । આકાશ કે અસંખ્યાત પ્રદેશ—પરિમિત એક અંગુલ  
હોતા હૈ । इस अंगुल के एक-एक आकाश प्रदेश में निगोद जीवों के असंख्यात गोले होते  
हैं । एक-एक गोलक में असंख्यात शरीर होते हैं और एक-एक शरीर में अनन्त जीवों का  
निवास है । कहा भी है—

“એમ અગ્નિમાં તપાવેલો લોહનો ગોળો તપેલા સોના-પ્રમાણે પૂર્ણપણે  
અગ્નિરૂપ જ થઈ બન્ય છે, હે શિષ્ય ! એ પ્રમાણે નિગોદના જીવ સમજો.” નિગોદના  
જીવોનું પરિમાણ—એ પ્રમાણે સમજવું બેઠું એ—

લોકાકાશ ચૌદ રાજૂનો છે. એક રાજૂમાં અસંખ્યાત યોજન થાય છે, અને  
સંખ્યાત અંગુલનો એક યોજન થાય છે. આકાશના અસંખ્યાત પ્રદેશ—પરિમિત એક  
અંગુલ હોય છે. એ અંગુલના એક-એક આકાશપ્રદેશમાં નિગોદ જીવોના અસંખ્ય  
ગોળા હોય છે. એક-એક ગોલકમાં અસંખ્યાત શરીર હોય છે અને એક-એક શરીરમાં  
અનન્ત જીવોનો નિવાસ છે. કહ્યું પણ છે—

“गोला य असंखिज्जा, हुंति निगोया असंखया गोले ।

एक्केको य निगोओ अणंतजीवो मुणेयव्वो” ॥ १ ॥

छाया-गोलाश्च असंख्येयाः, भवन्ति निगोदा असंख्येया गोले ।

एकैकश्च निगोदः, अनन्त जीवो ज्ञातव्यः ॥ १ ॥ इति ।

तत्रस्थप्रत्येकजीवस्य तैजसकर्मणे द्वे द्वे शरीरे पृथक् पृथक् स्तः । तदेकैकं शरीरमनन्तज्ञानावरणीयादियावदनन्तान्तरायकर्मणां वर्गणाभिः संयुक्तं वर्तते । सा चैकैका वर्गणाऽनन्तसूक्ष्मपरमाणुमयी भवतीति सूक्ष्मत्वं निगोदजीवानां सिद्धम् ।

ये च शरीरत्रयाङ्गुलासंख्येयभागशरीरादिभेदाः पृथिवीकायोद्देशेऽभिहितास्ते वनस्पतिकायानामपि बोध्याः, केवलमनित्यस्थम्=अनियताकारं शरीरसंस्था-

“अंगुल के एक आकाशप्रदेश में असंख्यात गोले, एक गोले में असंख्यात निगोद-शरीर और एक-एक निगोदशरीर में अनन्त जीव जानने चाहिए” ॥१॥

निगोद में रहने वाले हरेक जीव के अलग-अलग तैजस और कर्मण शरीर होते हैं, और प्रत्येक शरीर अनन्त ज्ञानावरणीय आदि तथा अनन्त अन्तराय कर्मों की वर्गणाओं से संयुक्त है, वह एक वर्गणा अनन्तसूक्ष्मपरमाणुरूप होती है । इस कथन से निगोदिया जीवों की सूक्ष्मता सिद्ध होती है ।

पृथिवीकाय के उद्देश में तीन शरीर तथा अंगुल के असंख्यातवें भाग की अवगाहना आदि का कथन किया है, वह वनस्पतिकाय के लिए भी समझना चाहिए । यहाँ विशेष बात यह है कि वनस्पति जीवों के शरीर का आकार अनियत होता है ।

“अंगुलना ऐक आकाशप्रदेशमां असंख्यात गोणा, ऐक गोणामां असंख्यात निगोद-शरीर अने ऐक-ऐक निगोद शरीरमां अनन्तल्लव जल्लुवा जेधंअ.” ॥१॥

निगोदमां रखेवा वाणा हरेक लवने अलग-अलग तैजस अने कर्मण शरीर होय छे, अने प्रत्येक शरीर अनन्त ज्ञानावरणीय आदि तथा अनन्त अन्तराय कर्मोनी वर्गणाओथी संयुक्त छे. ते ऐक वर्गणा अनन्तसूक्ष्मपरमाणुरूप होय छे. आ वचनथी निगोदना लवोनी सूक्ष्मता सिद्ध थाय छे.

पृथ्वीकायना उद्देशमां त्रल्ल शरीर तथा अंगुलना असंख्यातमा भागनी अवगाहना आदितुं निऽपल्ल कथुं छे. ते वनस्पतिकाय माटे पल्ल समल्ल लेवुं जेधंअ. आदि विशेष बात अे छे के:-वनस्पतिना लवोना आकार अनियत (नियमवगरेना) होय छे.



નમેષામ્, શેષમન્યત્ સમાનમ્ । एषां स्थानं घनोदधिवातवलयोदि । संख्यामङ्गीकृत्या-  
नन्ताः सर्वे वनस्पतयः ।

एवं वनस्पतीनां वृक्षादिभेदैः प्रत्येकसाधारणभेदैः, तथा—वर्णगन्धरसस्पर्शभेदैश्च  
सहस्रशो भेदा भवन्ति । योन्यादिभेदैः पुनर्लक्षशो भेदा जायन्ते ।

वनस्पतेर्यોनिः संवृता भवति । तस्याः सचित्ताचित्तमिश्रभेदेन त्रयो भेदाः,  
तथा शीतोष्णमिश्रभेदेन त्रयो भेदाः । एवं गणनया प्रत्येकवनस्पतियोनीनां दशलक्ष-  
संख्यका भेदा भवन्ति । साधारणवनस्पतीनां चतुर्दशलक्षसंख्यका भेदा जायन्ते ।

શેષ સબ પૂર્વવત્ છે । ઇન કા સ્થાન ઘનોદધિવાતવલય આદિ હૈ । સંખ્યા કી અપેક્ષા પૂર્વોક્ત  
સબ પ્રકાર કી વનસ્પતિ—સંખ્યા અનન્ત છે ।

વૃક્ષ આદિ કે ભેદો કી અપેક્ષા, પ્રત્યેક—સાધારણ કી અપેક્ષા તથા વર્ણ, રસ ગંધ ઔર  
સ્પર્શ કે ભેદ કી અપેક્ષા વનસ્પતિ કે હજારો ભેદ હોતે હૈ । યોનિ આદિ કે ભેદો કી અપેક્ષા  
વિચાર ક્રિયા જાય તો લાખો ભેદ હો જાતે હૈ ।

વનસ્પતિ કી યોનિ સંવૃત છે । સંવૃતયોનિ સચિત્ત, અચિત્ત, ઔર મિશ્ર કે ભેદ સે  
ત્રીન પ્રકાર કી હોતી છે । શીત, ઉષ્ણ તથા મિશ્ર કે ભેદ સે મી ત્રીન પ્રકાર કી છે । ઇસ  
પ્રકાર ગણના કરને સે પ્રત્યેકવનસ્પતિ કી દસ લાખ યોનિયાં છે । સાધારણવનસ્પતિ કી  
યોનિયાં ચૌદહ લાખ હૈ ।

બાકી તમામ પૂર્વ પ્રમાણે છે. એનું સ્થાન ઘનોદધિવાતવલય આદિ છે. સંખ્યાની  
અપેક્ષા પૂર્વોક્ત સર્વ પ્રકારની વનસ્પતિ—સંખ્યા અનન્ત છે.

વૃક્ષ આદિના ભેદોની અપેક્ષાએ, પ્રત્યેક—સાધારણ અપેક્ષાએ તથા વર્ણ, રસ,  
ગંધ અને સ્પર્શના ભેદની અપેક્ષાએ વનસ્પતિના હજારો ભેદ થાય છે. યોનિ  
આદિના ભેદોની અપેક્ષાએ વિચાર કરવામાં આવે તો લાખો ભેદ થઈ જાય છે.  
વનસ્પતિની યોનિ સંવૃત છે. સંવૃતયોનિ સચિત્ત, અચિત્ત અને મિશ્રના ભેદથી ત્રણ  
પ્રકારની હોય છે અને શીત ઉષ્ણ તથા મિશ્રના ભેદથી ત્રણ પ્રકારની છે. આ  
પ્રમાણે ગણના કરવાથી પ્રત્યેકવનસ્પતિની દસ લાખ યોનિઓ છે, અને સાધારણ-  
વનસ્પતિની યોનિઓ ચૌદ લાખ છે.

**પરિમાણદ્વારમ્—**

ઉક્તં પ્રરૂપણાદ્વારમ્ । પરિમાણદ્વારમુચ્યતે—પર્યાપ્તવાદરાઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિ-જીવાઃ પિષ્ઠીભૂત-ચતુષ્કોણીકૃત-લોકશ્રેણ્યસંખ્યેયભાગવર્ત્યાકાશપ્રદેશરાશિપ્રમાણાઃ, વાદરપર્યાપ્તતેજસ્કાયજીવરાશેશ્વાસંખ્યાતગુણાઃ સન્તિ ।

અપર્યાપ્તવાદરાઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિજીવાસ્તુ અસંખ્યાતાનાં લોકાનાં યાવન્તઃ પ્રદેશા-સ્તાવન્તઃ સન્તિ । ઇમેઽપ્યપર્યાપ્તવાદરતેજસ્કાયજીવરાશિતશ્ચાઽસંખ્યાતગુણાઃ । પ્રત્યેક-વનસ્પતયઃ સૂક્ષ્મા ન સન્તિ, શાસ્ત્રેઽનુપાદાનાત્ ।

સાધારણવનસ્પતિજીવાઃ—સૂક્ષ્મવાદરપર્યાપ્તભેદૈશ્વર્યવિધા અપિ પૃથક્ પૃથગન-ન્તાનાં લોકાનાં યાવન્તઃ પ્રદેશાસ્તાવન્ત ઇતિ । અત્રાયં વિશેષઃ—

**પરિમાણદ્વાર—**

પ્રરૂપણાદ્વાર હુઆ । અવ પરિમાણદ્વાર કહેતે હૈં—પર્યાપ્તવાદર—પ્રત્યેકવનસ્પતિ જીવ ચૌકોન કી હુઈ લોકશ્રેણી કે અસંખ્યાતવેં ભાગવર્તી આકાશપ્રદેશોં કી રાશિ કે બરાબર હૈં, ઓર વાદરપર્યાપ્તતેજસ્કાય કે જીવોં સે અસંખ્યાતગુણે હૈં । અસંખ્યાત લોકકાશોં કે પ્રદેશોં કી બરાબર અપર્યાપ્ત વાદર પ્રત્યેકવનસ્પતિકાય કે જીવ હૈં, ઓર યે ભી અપર્યાપ્તવાદર-તેજસ્કાય કે જીવોં સે અસંખ્યાત ગુણે હૈં । પ્રત્યેક વનસ્પતિ મેં સૂક્ષ્મ જીવ નહીં હોતે, કયોં કિ શાસ્ત્ર મેં કહીં ઉનકા ઉલ્લેખ નહીં હૈ ।

સાધારણ વનસ્પતિ કે જીવ સૂક્ષ્મ, વાદર, પર્યાપ્ત ઓર અપર્યાપ્ત કે ભેદ સે ચાર પ્રકાર કે હૈં । इन चारों राशियों में से प्रत्येकजीवराशि की संख्या अनन्त लोकाकाश के प्रदेशों के बराबर है । इसमें इतनी विशेषता समझ लेनी चाहिए—

**પરિમાણુ દ્વાર—**

પ્રરૂપણાદ્વાર થયું. હવે પરિમાણુદ્વાર કહે છે—પર્યાપ્તબાહરપ્રત્યેકવનસ્પતિ જીવ, ચતુષ્કોણુ કરેલી લોકશ્રેણીના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી આકાશપ્રદેશોની રાશિ-દગલાના બરાબર છે અને બાહરપર્યાપ્તતેજસ્કાયના જીવોથી અસંખ્યાતગણા છે, અસંખ્યાત લોકાકાશોના પ્રદેશોની બરાબર અપર્યાપ્તબાહર પ્રત્યેકવનસ્પતિકાયના જીવ છે. અને તે પણ અપર્યાપ્તબાહર તેજસ્કાયના જીવોથી અસંખ્યાતગણા છે. પ્રત્યેક વનસ્પતિમાં સૂક્ષ્મજીવ નથી, કેમકે—તેનો શાસ્ત્રમાં કોઈ સ્થાને ઉલ્લેખ નથી.

સાધારણ વનસ્પતિના જીવ સૂક્ષ્મ, બાહર, પર્યાપ્ત અને અપર્યાપ્તના ભેદથી ચાર પ્રકારના છે. આ ચારેય રાશિઓમાંથી પ્રત્યેકજીવરાશિની સંખ્યા અનન્ત લોકાકાશના પ્રદેશોની બરાબર છે. તેમાં એટલી વિશેષતા સમજ લેવી જોઈએ—

સાધારણવાદરપર્યાપ્તકેભ્યઃ સૂક્ષ્મા અપર્યાપ્તા અસંખ્યાતગુણાઃ । તેભ્યોઽપિ સૂક્ષ્મપર્યાપ્તકા અસંખ્યાતગુણા વિજ્ઞેયા इति ।

સૂક્ષ્માનન્તજીવાનાં પરિમાણં કિયદિતિ સદૃશાન્તમુચ્યતે-યથા-કશ્ચિત્ પ્રસ્થા-દિમાપકવસ્તુના ધાન્યરાશિં પરિમાપ્યાઽન્યત્ર નિશ્ચિપતિ, તથા યદિ સાધારણસૂક્ષ્મ-જીવરાશિં લોકરૂપપ્રસ્થેન માપયેત્ લોકા સંભૂતા ભવેયુઃ ।

પર્યાપ્તવાદરનિગોદપરિમાણં ચ યથા—

ઘનીભૂતચતુરસ્રીકૃતસકલલોકપ્રતરસ્યાસંખ્યેયભાગવર્તિપ્રદેશરાશિપ્રમાણાઃ પર્યા-પ્તકવાદરનિગોદાઃ સન્તિ, તે પ્રત્યેકશરીર-વાદરવનસ્પતિ-પર્યાપ્તકેભ્યો-

સાધારણવાદરપર્યાપ્ત જીવોં કી અપેક્ષા વાદર-અપર્યાપ્ત અસંખ્યાતગુણા હૈં । વાદરપર્યાપ્ત કી અપેક્ષા સૂક્ષ્મ-અપર્યાપ્ત અસંખ્યાતગુણા હૈં ઓર સૂક્ષ્મ-અપર્યાપ્ત ઉનસે મી અસંખ્યાતગુણા હૈં ।

સૂક્ષ્મ અનન્ત જીવોં કા પરિમાણ કિતના હૈ, યહ વાત દૃશાન્ત દેકર સમજાતે હૈ— જૈસે કોઈ પુરુષ પ્રસ્થ (સેર) આદિ બાંટોં સે ધાન્ય તોલકર દૂસરી જગહ રખ દેસ્વા હૈ, ડસી પ્રકાર યદિ સાધારણસૂક્ષ્મજીવરાશિ કો લોકરૂપી પ્રસ્થ સે નાપા જાય તો અનંત લોક ભર જાઈ ।

પર્યાપ્ત વાદર નિગોદ જીવોં કા પરિમાણ ઇસ પ્રકાર કા હૈ—

ચૌકોર (ચતુષ્કોણ) ઘન કિયે હુઈ સમ્પૂર્ણ લોકપ્રતર કે અસંખ્યાતવેં ભાગવર્તી પ્રદેશોં કે વરાબર પર્યાપ્તવાદરનિગોદ જીવ હૈં । વે પ્રત્યેકશરીર-વાદરવનસ્પતિ

સાધારણપર્યાપ્ત જીવોંની અપેક્ષા વાદરઅપર્યાપ્ત અસંખ્યાતગુણા છે. વાદર-પર્યાપ્તની અપેક્ષા સૂક્ષ્મ-અપર્યાપ્ત અસંખ્યાતગુણા છે અને સૂક્ષ્મ-અપર્યાપ્ત તેનાથી પણ અસંખ્યાતગુણા છે.

સૂક્ષ્મ અનન્ત જીવોંનું પરિમાણ કેટલું છે. એ વાત દૃશાન્ત આપીને સમજાવે છે—જેમ કોઈ પુરુષ પ્રસ્થ (તોળવાનું વજન ૧ શેર) આદિ તોળવાના બાંટ-વજનથી. ધાન્ય તોળીને બીજી જગ્યાએ રાખી દે છે તે પ્રમાણે જો સાધારણ સૂક્ષ્મ જીવરાશિને લોકરૂપી પ્રસ્થથી તોળવામાં આવે તો અનંત લોક ભરાઈ જાય.

પર્યાપ્તવાદરનિગોદ જીવોંનું પરિમાણ આ પ્રકારે છે—ચતુષ્કોણ ઘન કરેલા સમ્પૂર્ણ લોકપ્રતરના અસંખ્યાતમા-ભાગવર્તી પ્રદેશોંની બરાબર પર્યાપ્તવાદરનિગોદ જીવ છે.



અસંખ્યેયગુણાઃ । શેષાસ્ત્રયઃ-અપર્યાપ્તવાદરનિગોદાઃ, અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મનિગોદાઃ, પર્યાપ્ત-સૂક્ષ્મનિગોદાશ્ચ પ્રત્યેકમસંખ્યેયલોકાકાશપ્રદેશપરિમાણાઃ ક્રમશઃ વહુતરકાઃ સન્તિ । સાધારણજીવાશ્ચૈતેભ્યો નિગોદપરિમાણેભ્યોઽનન્તગુણાઃ સન્તીતિ બોધ્યમ્ ।

યદિ લોકાકાશસ્યૈકૈકસ્મિન્ પ્રદેશે એકૈકઃ પ્રત્યેકવનસ્પતિજીવઃ સ્થાપ્યતે, તર્હિ અસંખ્યાતા લોકા ધ્રિયન્તે । યદિ તુ લોકાકાશસ્યૈકૈકસ્મિન્ પ્રદેશે એકૈકો નિગોદજીવઃ સ્થાપ્યતે, તર્હિ અનન્તા લોકા ધ્રિયન્તે ।

ઉક્તશ્ચ પ્રજ્ઞાપનાયામ્-૧ પદે ।

“લોગાગાસપણ્સે, પરિત્તજીવં ઠવેહિ એકકેકં ।

એવં ઠવેજ્જમાણા, હવંતિ લોગા અસંખિજ્જા ” ॥ ૧ ॥

પર્યાપ્ત જીવોં સે અસંખ્યાતગુણા હૈં । શેષ ત્રીન અર્થાત્ અપર્યાપ્તવાદરનિગોદ, અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મનિગોદ ઓર પર્યાપ્ત સૂક્ષ્મનિગોદ અસંખ્યાત લોકાકાશ પ્રદેશોં કે બરાબર હૈં, ઓર ક્રમશઃ અધિક-અધિક સંખ્યા મેં હૈં । સાધારણ જીવ ઇન સે અનન્તગુણા હૈં ।

યદિ લોકાકાશ કે એક-એક પ્રદેશ મેં એક-એક પ્રત્યેકવનસ્પતિ કે જીવ સ્થાપિત ક્રિયે જાયૈં તો અસંખ્યાત લોક ભર જાઈ, ઓર યદિ લોકાકાશ કે એક-એક પ્રદેશ મેં એક-એક નિગોદિયા જીવ રાખે જાયૈં તો અનન્ત લોકાકાશ ભર જાઈ । પ્રજ્ઞાપનાસૂત્ર કે પ્રથમ પદમેં કહા હૈ—

“લોકાકાશ કે એક-એક પ્રદેશમેં અગર પ્રત્યેકવનસ્પતિ કે એક-એક જીવ રાખ દિયે જાયૈં તો અસંખ્યાત લોક ભર જાણ ॥ ૧ ॥

તે પ્રત્યેકશરીર-આદરવનસ્પતિ પર્યાપ્ત ઊવેાથી અસંખ્યાત ગણા છે. બાકીના ત્રણ અર્થાત્-અપર્યાપ્તવાદરનિગોદ, અપર્યાપ્તસૂક્ષ્મનિગોદ અને પર્યાપ્તસૂક્ષ્મનિગોદ અસંખ્યાત-લોકાકાશ પ્રદેશોના બરાબર છે, અને ક્રમશઃ અધિક-અધિક સંખ્યામાં છે. સાધારણ ઊવ એનાથી અનન્ત ગણા છે.

જે લોકાકાશના એક-એક પ્રદેશોમાં એક-એક પ્રત્યેક વનસ્પતિના ઊવને સ્થાપિત કરવામાં આવે તો અસંખ્યાત લોક ભરાઈ જાય, અને જે લોકાકાશના એક-એક પ્રદેશમાં એક-એક નિગોદિયા ઊવને રાખવામાં આવે તો અનન્ત લોકાકાશ ભરાઈ જાય.

પ્રજ્ઞાપનાસૂત્રના પ્રથમ પદમાં કહ્યું છે કે:-

“લોકાકાશના એક-એક પ્રદેશમાં જે પ્રત્યેક વનસ્પતિના એક-એક ઊવ રાખવામાં આવે તો અસંખ્યાત લોક ભરાઈ જાય.” ॥ ૧ ॥

લોગાગાસપાસે નિગોયજીવં ઠવેદિ એકકેકં ।

એવં ઠવેજ્જમાણા, હવંતિ લોગા અનન્તાઓ ॥ ૧ ॥ ” ઇતિ ।

છાયા-લોકાકાશપ્રદેશે, પ્રત્યેકજીવં સ્થાપય એકેકમ્ ।

એવં સ્થાપ્યમાના ભવન્તિ લોકા અસંખ્યેયાઃ ॥ ૧ ॥

લોકાકાશપ્રદેશે નિગોદજીવં સ્થાપય એકેકમ્ ।

એવં સ્થાપ્યમાનાઃ ભવન્તિ લોકા અનન્તાઃ ॥ ૧ ॥

ઇતિ પરિમાણદ્વારમ્ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

શબ્દાદિવિષયાસત્તયા વનસ્પતિકાયાપમર્દનપરાઃ પુનઃ પુનર્ભવસિન્ધૌ નિપત-  
ન્તીત્યાશયેનાહ-‘ જે ગુણે. ’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

જે ગુણે સે આવટ્ટે । જે આવટ્ટે સે ગુણે ॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—

યો ગુણઃ સ આવર્તઃ । ય આવર્તઃ સ ગુણઃ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

લોકાકાશ કે એક-એક પ્રદેશ મેં એક-એક નિગોદ જીવ રખ દિયે જાયેં તો આ પ્રકાર રચને સે અનન્ત લોક હો જાઈ ” । ઇતિ પરિમાણદ્વાર ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ઇન્દ્રિયોં કે શબ્દ આદિ વિષયોં મેં આસક્ત હોકર જો વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરતે હેં વે વારંવાર ભવસાગર મેં ઢૂબતે હેં । આ અભિપ્રાય સે શાસ્ત્રકાર કહતે હેં—  
‘ જે ગુણે ’. ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—જો ગુણ હૈ સો આવર્ત હૈ । જો આવર્ત હૈ સો ગુણ હૈ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

“ લોકાકાશના એક-એક પ્રદેશમાં એક-એક નિગોદ જીવ રાખવામાં આવે તો આ પ્રકારે રાખવાથી અનન્ત લોક થઈ જાય. ” ઇતિ પરિમાણદ્વાર. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ઇન્દ્રિયોના શબ્દ આદિ વિષયોમાં આસક્ત થઈને જે વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે, તે વારંવાર ભવ-સાગરમાં ડૂબી જાય છે, એ અભિપ્રાયથી શાસ્ત્રકાર કહે છે—  
‘ જે ગુણે ’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—જે ગુણ છે તે આવર્ત છે, જે આવર્ત છે તે ગુણ છે. ॥ ૨ ॥

ટીકા—

યો ગુણઃ=શબ્દાદિકઃ, સ આવર્તઃ=આવર્તન્તે=પરિભ્રામ્યન્તિ જીવા યત્ર સ  
—આવર્તઃ=જન્મજરાધિવ્યાધિનાનાવિધક્લેશસંપાતસ્વરૂપઃ સંસારઃ । કારણે કાર્યો-  
પચારાત્ સંસારકારણીભૂતસ્ય શબ્દાદિગુણસ્ય સંસારત્વેન વ્યપદેશઃ । ગુણસેવનાત્  
સંસારં પ્રાપ્નોતીતિ ભાવઃ । ઉક્તમર્થ દઢીકર્તુમુક્તવાક્યં પરાવર્તયન્નાહ-ય આવર્ત ઇતિ ।  
યશ્ચાવર્તઃ=સંસારઃ, સ ગુણઃ=શબ્દાદિઃ । રાગદ્વેષવશગઃ સંસારી નૈવ શબ્દાદિગુણતો  
વિરજ્યતે, ન ચ મોક્ષમાર્ગ પ્રાપ્નોતીત્યર્થઃ ।

યદ્વા-‘ગુણે’ ‘આવર્તે’ ઇતિ સપ્તમ્યન્તમ્ । યઃ ગુણે=શબ્દાદૌ વર્તતે,

ટીકાર્થ—શબ્દ આદિ જો ગુણ અર્થાત્ વિષય હૈ વહી આવર્ત હૈ । જિસમેં  
આવર્તન અર્થાત્ ભ્રમણ ક્રિયા જાય ઉસે આવર્ત કહતે હૈ । જન્મ-જરા, આધિ-વ્યાધિ  
આદિ નાના પ્રકાર કે ક્લેશોં સે પરિપૂર્ણ યહ સંસાર હી આવર્ત હૈ । શબ્દ આદિ વિષય  
સંસાર કે કારણ હૈ, સ્વયં સંસાર નહીં હૈ, કિન્તુ યહાં કારણ મેં કાર્ય કા ઉપચાર કરકે  
શબ્દાદિ વિષયોં કો હી સંસાર કહા હૈ । આશય યહ હૈ કિ-इन વિષયોં કા સેવન કરને  
સે સંસાર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ । હસી અભિપ્રાય કો દઢ કરને કે ઉદ્દેશ્ય સે વાક્ય કો  
પલટ કર શાસ્ત્રકાર કહતે હૈ-‘જો આવર્ત હૈ વહી ગુણ હૈ’ । રાગ-દ્વેષ આદિ કે અધીન  
રહને વાલા સંસારી જીવ શબ્દ આદિ ગુણોં સે વિરક્ત નહીં હોતા ઓર ન મોક્ષમાર્ગ  
પ્રાપ્ત કરતા હૈ ।

અથવા—મૂલ મેં જો ‘ગુણે’ ઓર ‘આવર્તે’ પદ આયે હૈ । વે સપ્તમીવિભક્તિ  
મેં હૈ, હસકા અર્થ યહ હુઆ કિ-જો પુરુષ શબ્દાદિ ગુણોં મેં વર્તતા હૈ વહ આવર્ત

ટીકાર્થ—શબ્દ આદિ જે ગુણ છે, અર્થાત્ વિષય છે તેજ આવર્ત છે. જેમાં  
આવર્તન અર્થાત્ ભ્રમણ કરવામાં આવે તેને આવર્ત કહે છે. જન્મ, જરા, આધિ, વ્યાધિ  
આદિ નાના પ્રકારના ક્લેશોથી પરિપૂર્ણ આ સંસારજ આવર્ત છે. શબ્દ આદિ વિષય  
સંસારના કારણ છે. સ્વયં સંસાર નથી, પરન્તુ અહીં કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને  
શબ્દાદિ વિષયોને જ સંસાર કહ્યો છે. આશય એ છે કે-વિષયોનું સેવન કરવાથી  
સંસારની પ્રાપ્તિ થાય છે. તે અભિપ્રાયને દઢ કરવાના ઉદ્દેશ્યથી વાક્યને બદલીને શાસ્ત્રકાર  
કહે છે-‘જે આવર્ત છે તે ગુણ છે.’ રાગદ્વેષ આદિના આધીન રહેવાવાળા સંસારી  
જીવ શબ્દ આદિ ગુણોથી વિરક્ત રહેતા નથી અને મોક્ષમાર્ગને પ્રાપ્ત કરતા નથી.

અથવા—મૂલમાં જે ‘ગુણે’ અને ‘આવર્તે’ પદ આપ્યાં છે. તે સાતમી વિભક્તિમાં  
છે. એનો અર્થ એ થયો કે-જે પુરુષ શબ્દાદિ ગુણોમાં વર્તે છે તે આવર્ત અર્થાત્-



સ આવર્તે=સંસારે વર્તે. યશ્ચાવર્તે, સ ગુણે વર્તે. ।

નનુ 'યો ગુણે વર્તે, સ આવર્તે વર્તે' ઇતિ યદુક્તં તત્ સમ્યગેવ, પરન્તુ ય આવર્તે વર્તે, ન ત્વસૌ નિયમેન ગુણે વર્તે. યતસ્તીર્થઙ્કરા ભાવિતાત્માનો મુનયઃ પ્રતિમાધારિશ્રાવકાશ્ચાવર્તે વર્તન્તે ન તુ શબ્દાદિગુણેષુ, તદેતત્ કથમુપપદ્યતે—'યશ્ચાવર્તે વર્તે સ ગુણે વર્તે' ઇતિ ? ।

અનુકૂલશબ્દાદિષુ રાગઃ, પ્રતિકૂલશબ્દાદિષુ દ્રેષઃ સમુદ્ભવતીતિ રાગદ્રેષપૂર્વકં ગુણેષુ શબ્દાદિષુ યા પ્રવૃત્તિસ્તસ્યા ઇવાત્રાધિકારઃ । એવં ચાસ્ય વાક્યસ્ય તીર્થઙ્કરાદિ-વિષયકત્વાભાવાન્નાસ્ત્યુક્તશઙ્કાવસર ઇતિ ।

અર્થાત્ સંસાર મેં વર્તતા હૈ, ઓર જો સંસાર મેં વર્તતા હૈ વહ શબ્દ આદિ મેં વર્તતા હૈ ।

શઙ્કા—જો શબ્દાદિ ગુણોં મેં વર્તતા હૈ વહ સંસાર મેં વર્તતા હૈ, યહ કથન તો ઠીક હૈ, પરન્તુ જો સંસાર મેં વર્તતા હૈ વહ નિયમ સે શબ્દાદિ વિષયોં મેં નહીં વર્તતા ! ભગવાન્ તીર્થંકર, ભાવિતાત્મા મુનિ ઓર પ્રતિમાધારી શ્રાવક સંસાર મેં તો વર્તે હૈં મગર શબ્દ આદિ વિષયોં મેં નહીં વર્તે. અતઃ એવ યહ કથન કિસ પ્રકાર બન સકતા હૈ કિ જો આવર્ત મેં વર્તતા હૈ વહ શબ્દ આદિ મેં વર્તતા હૈ ?

સમાધાન—અનુકૂલ શબ્દ આદિ મેં રાગ ઉત્પન્ન હોતા હૈ ઓર પ્રતિકૂલ શબ્દ આદિ મેં દ્રેષ હોતા હૈ. ઇસ પ્રકાર રાગદ્રેષપૂર્વક વિષયોં મેં પ્રવૃત્તિ કરને કા હી યહાં પ્રકરણ હૈ. તીર્થંકર આદિ રાગ-દ્રેષપૂર્વક વિષયોં મેં પ્રવૃત્તિ નહીં કરતે, અતઃ યહ વાક્ય તીર્થંકર યા ભાવિતાત્મા મુનિ આદિ કે લિએ લાગૂ નહીં હોતા. ઇસ પ્રકાર ઉક્ત શંકા કા યહાં સ્થાન નહીં હૈ. ।

સંસારમાં વર્તે છે, અને જે સંસારમાં વર્તે છે તે શબ્દ આદિમાં વર્તે છે.

શંકા—જે શબ્દાદિ ગુણોમાં વર્તે છે, તે સંસારમાં વર્તે છે. આ કથન-તો ઠીક છે, પરન્તુ જે સંસારમાં વર્તે છે તે નિયમથી શબ્દાદિ વિષયોમાં વર્તતા નથી. ભગવાન તીર્થંકર ભાવિતાત્મા મુનિ અને પ્રતિમાધારી શ્રાવક સંસારમાં તો વર્તે છે, પરન્તુ શબ્દાદિ વિષયોમાં વર્તતા નથી. એ માટે આ કથન કેવી રીતે બની શકે છે, કે—'જે આવર્તમાં વર્તે છે તે શબ્દ આદિમાં વર્તે છે.'

સમાધાન—અનુકૂલ શબ્દ આદિમાં રાગ ઉત્પન્ન થાય છે અને પ્રતિકૂલ શબ્દ આદિમાં દ્રેષ થાય છે. આ પ્રમાણે રાગ-દ્રેષપૂર્વક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ કરવી તેનું જ અહીં પ્રકરણ છે. તીર્થંકર આદિ રાગ-દ્રેષપૂર્વક વિષયોમાં પ્રવૃત્તિ કરતા નથી, માટે આ વાક્ય તીર્થંકર અથવા ભાવિતાત્મા મુનિ આદિના માટે લાગુ થતું નથી. આ પ્રમાણે પૂર્વે જે શંકા કરી છે તે શંકાને અહીં સ્થાન નથી.

ગત્યાગતિરૂપ આવર્તોઽપિ ન તેષાં દુઃસ્વજનકો ભવતિ । સામાન્યતઃ સંસાર-  
વર્તિત્વં સામાન્યશબ્દાદિગુણોપલબ્ધિશ્ચ સર્વેષાં સંસારિણાં સંભવત્યેવ, તસ્માદ્ ગુણોપ-  
લબ્ધિર્ન પ્રતિષિધ્યતે । કિન્તુ યસ્તન્ન રાગદ્વેષપરિણામઃ સ એવ પરિવર્જનીયત્વેન પ્રતિ-  
બોધ્યતે, અત એવોક્તં ભગવતા—

“કળ્પસોક્ષ્ણેહિં સદેહિં પેમ્મં નાભિનિવેસણ” ઇત્યાદિ । કિન્ન—

“ન શક્યં રૂપમદ્રષ્ટું, ચક્ષુર્ગોચરમાગતમ્ ।

રાગદ્વેષૌ તુ યૌ તન્ન, તૌ બુધઃ પરિવર્જયેત્ ॥”

ઇદમન્ન તત્ત્વમ્—શબ્દાદિવિષયાસક્તાઃ સ્વલુ વનસ્પતિજીવાન્ બહુશો

ગતિ-આગતિરૂપ આવર્ત ભી અનેકે લિખે દુઃસ્વજનક નહીં હૈ । સામાન્ય સંસારવર્તીપન  
ઑર વિષયોં કી સામાન્ય ઉપલબ્ધિ સમી સંસારી જીવોં મેં હોતી હૈ, અતઃ વિષયોં કી ઉપલબ્ધિ  
કા નિષેધ નહીં કિયા જા સકતા । હાં વિષયોં મેં જો રાગ-દ્વેષરૂપ પરિણામ હૈ વહી ત્યાજ્ય હૈ ।  
અતઃ ભગવાન્ ને કહા હૈ—

“કળ્પસોક્ષ્ણેહિં સદેહિં પેમ્મં નાભિનિવેસણ” ઇત્યાદિ ।

“કાનોં કો સુખ દેને વાલે શબ્દોં પર અનુરાગ નહીં કરના ચાહિણ” । તથા—  
ઑંઑલોંકે ઑગે ઑયા હુઑા રૂપ અનદેશ નહીં કિયા જા સકતા, વહ તો દીશ  
હી જાતા હૈ, મગર ઉશ સે કોઈ હાનિ નહીં હોતી । અલબત્તા ઉશ રૂપ પર રાગ યા દ્વેષ કરને  
સે હાનિ હોતી હૈ । અતઃ વિવેકી પુરુષ રાગ ઑર દ્વેષ કા ત્યાગ કરે ।

ઑશય યહ હૈ—શબ્દ ઑદિ વિષયોં મેં ઑસક્ત પુરુષ વનસ્પતિકાય કે જીવોં કી

ગતિ-ઑગતિરૂપ ઑવર્ત પશુ તેઑને માટે દુઃખરૂપ નથી. સામાન્ય સંસાર-  
વર્તીપણુ અને વિષયોની સામાન્ય ઉપલબ્ધિ, સર્વ સંસારી જીવોમાં હોય છે. ઑથી  
વિષયોની ઉપલબ્ધિને નિષેધ કરી શકાતો નથી. હા; વિષયોમાં જે રાગ-દ્વેષરૂપ  
પરિણામ છે, તેજ ત્યાજ્ય-ત્યજ દેવા યોગ્ય છે. ઑટલે ભગવાને કહ્યું છે—

“કળ્પસોક્ષ્ણેહિં સદેહિં પેમ્મં નાભિનિવેસણ” અર્થાત્ કાનોને સુખ દેવાવાળા  
શબ્દો પર પ્રીતિ નહિ કરવી જોઈઑ. તથા નેત્રોની સામે ઑવેલા રૂપ, ન દીઑા-  
અદીઑ કરી શકાતા નથી. તે તો દેખવામાં ઑવેજ છે, પરન્તુ તેમાં કોઈ હાનિ  
થતી નથી. અલબત્ત ઑ રૂપ પર રાગ અથવા દ્વેષ કરવાથી હાનિ થાય છે. ઑ માટે  
વિવેકી પુરુષ રાગ અને દ્વેષને ત્યાગ કરે.

ઑશય ઑ છે કેઃ—શબ્દ ઑદિ વિષયોમાં ઑસક્ત પુરુષ વનસ્પતિકાયના જીવોની

વિહિંસન્તિ । તથા હિ-અનુકૂલશબ્દશ્રવણાર્થી વેણુવીળાપટહાદિવાધ્યાનિ નિર્માતું બહુ-  
વિધાન્ વનસ્પતીન્ વિનિહન્તિ । પ્રિયરૂપવિલોકનાર્થી કાષ્ઠમયયુવતિપ્રતિમા-ગૃહ-  
તોરણ-વેદિકા-સ્તમ્ભાદિસ્થયિતું કતિચન વનસ્પતીન્ વિનિકૃન્તતિ । એવં ગ્રાણસુસ્વાર્થી  
કર્પૂર-કેતકી-પાટલ-લવઙ્ગ-સરસચન્દના-ગુરુ-કેસર-જાતીફલ-જાતીપત્રિકાદીન્ પરિ-  
ગ્રહીતું વિવિધાન્ વનસ્પતીન્ વિહિન્સન્તિ । રસાસ્વાદસુસ્વાર્થી મૂલકન્દાદિગતાનસંખ્યા-  
તાનનન્તાન્ વા જીવાનુપમર્દયતિ । એવં સ્પર્શસુખાભિલાષી ચ કમલદલમૃણાલકદલી-  
દલવલ્કલાનુકૂલદુકૂલતૂલાદીન્ પરિગ્રહીતું નાનાવિધવનસ્પતીનાં ગ્રાણવ્યપરોપણં  
પ્રકરોતિ ।

બહુત હિંસા કરતે હૈં । જૈસે-અનુકૂલ શબ્દ સુને કા અભિલાષી પુરુષ વેણુ, વીળા,  
પટહ (ઢોલ) આદિ વાદ્ય બનાવે કલે નાના પ્રકાર કલે વનસ્પતિકાય કલે જીવો કી  
હિંસા કરતા હૈ । પ્રિયરૂપ દેઝને કા ઇચ્છુક યુવતી કી કાષ્ઠમય પ્રતિમા, ગૃહ, તોરણ,  
વેદિકા, ઓર સ્તંભ બનાવે કલે વનસ્પતિ કો કાટતા હૈ । ઇસી પ્રકાર ગ્રાણેન્દ્રિય કલે  
સુરુકા લોહુપ કપૂર, કેતકી, પાટલ, (ગુલાબ) લોગ, સરસ ચન્દન અગર, કેસર,  
જાયફલ, જાયપત્રી આદિ કલે ઉદેશ્ય સે વિવિધ પ્રકાર કલે વનસ્પતિકાયિક જીવો કી હિંસા  
કરતા હૈ । રસાસ્વાદ કા અનુરાગી મૂલ આદિ કન્દો મેં રહેને વાલે અસંખ્યાત ઓર અનન્ત  
જીવો કી હિંસા કરતા હૈ । ઇસી પ્રકાર સ્પર્શ-સુખ કા અભિલાષી કમલ કલે પત્તે, કમલ કી  
ઢંડી, કેલે કલે, પત્તે છાલ ઓર અનુકૂલ વસ્ત્ર તથા રૂઢે પ્રાપ્ત કરને કલે નાના પ્રકાર કલે  
વનસ્પતિ જીવો કા પ્રાણ લેતા હૈ ।

ઘણીજ હિંસા કરે છે. જેમ-અનુકૂલ શબ્દ સાંભળવાના અભિલાષી પુરુષ વેણુ-વીણા,  
ઢોલ આદિ વાદ્ય-વાજિત્ર બનાવવા માટે નાના પ્રકારના વનસ્પતિકાયના જીવોની હિંસા  
કરે છે. પ્રિયરૂપ જોવાના ઇચ્છુક યુવતીની કાષ્ઠમય પ્રતિમા, ગૃહ, તોરણ, વેદિકા  
અને સ્તંભ બનાવવા માટે વનસ્પતિને કાપે છે. એ પ્રમાણે ગ્રાણેન્દ્રિય (નાસિકા)ના  
સુખના લોહુપ-લાલચુ કપૂર, કેતકી ગુલાબ, લવીંગ, સરસચંદન, અગર કેસર,  
જાયફળ, જાયત્રી આદિ જોવાવાના ઉદેશ્યથી વિવિધ પ્રકારના વનસ્પતિકાયિક જીવોની  
હિંસા કરે છે. રસાસ્વાદના અનુરાગી જીવ મૂળ આદિ કન્દોમાં રહેવાવાળા અસંખ્યાત  
અને અનન્ત જીવોની હિંસા કરે છે. એ પ્રમાણે સ્પર્શસુખના અભિલાષી જીવ કમલ-  
પત્તાં, કમલકાકડી, કેવળનાં પત્તાં, છાલ અને અનુકૂલ વસ્ત્ર તથા રૂ પ્રાપ્ત કરવા  
માટે નાના પ્રકારના વનસ્પતિ જીવોના પ્રાણ લે છે.



આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧ ઉ. ૫ સૂ. ૨ વનસ્પતિજીવોપઘાત દુષ્કલમ્ ૬૧૭

एवं च वनस्पतिनिष्पन्नेषु शब्दादिगुणेषु वर्तमानः संसारं प्राप्नोति, स च संसारी रागद्वेषमलिनात्मकतया पुनः शब्दादिगुणेषु वर्तमानश्चतुर्गतिकसंसारतो न कदाचिद् बहिर्यातीत्यर्थः ॥ सू० २ ॥

શબ્દાદિગુણોપલબ્ધિમાત્રં ન સંસારાન્તઃપતનસ્ય કારણં, કિન્તુ તત્ર મૂર્છેવેત્યાહ -‘ઉદ્ઘં’. ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

उद्दं अहं तिरियं पाईणं पासमाणे रुवाइं पासइ, सुणमाणे सदाइं सुणेइ ।  
उद्दं अहं तिरियं पाईणं मुच्छमाणे रुवेसु मुच्छइ सदेसु यावि । एस लोए  
वियाहिए ॥ सू० ३ ॥

છાયા—

उर्ध्वम् अधः तिर्यक् प्राचीनं पश्यन् रूपाणि पश्यति, शृण्वन् शब्दान् शृणोति,  
ऊर्ध्वम् अधः तिर्यक् प्राचीनं मूर्च्छन् रूपेषु मूर्च्छति, शब्देषु चापि । एष लोकः व्या-  
ख्यातः ॥ सू० ३ ॥

इस प्रकार वनस्पति से तैयार होने वाले इन्द्रिय-विषयों में वर्तमान जीव संसार प्राप्त करता है । संसारी जीव राग-द्वेष से मलिन होता है, अतः फिर विषयों में प्रवृत्त होता है । इस प्रकार वह कभी संसार से बाहर नहीं निकल पाता ॥सू० २॥

શબ્દ આદિ વિષયોં કો પ્રહણ કરને માત્ર સે સંસાર મેં પતન નહીં હોતા પરન્તુ ઁન મેં મૂર્છાં (ગૃહ્ણિ) હોના હી પતન કા કારણ હૈ, યહ કહતે હૈ—‘ઉદ્ઘં.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ઁપર, નીચે, ઁર સામને તિરછી દિશા મેં દષ્ટિ ઢાલતા હુઁા રૂપોં કો દેસતા હૈ, સુનતા હુઁા શબ્દ સુનતા હૈ । ઁપર, નીચે ઁર સામને તિરછી દિશા મેં રૂપોંમેં મૂર્છિત હોતા હૈ ઁર શબ્દોં મેં મી । યહ લોક કહા ગયા હૈ ॥ સૂં ૩ ॥

એ પ્રમાણે વનસ્પતિથી તૈયાર થવાવાળા ઇન્દ્રિય વિષયોમાં વર્તમાન જીવ સંસારને પ્રાપ્ત કરે છે. સંસારી રાગદ્વેષથી મલિન થાય છે, તેથી ફરીને વિષયોમાં પ્રવૃત્ત થાય છે. આ પ્રમાણે તે કોઈ દિવસ સંસારથી બહાર નીકળી શકતા નથી (સૂ. ૨)

શબ્દ આદિ વિષયોને શ્રવણ કરવા માત્રથી સંસારમાં પતન થતું નથી. પરન્તુ તેમાં મૂર્છા (ગૃહ્ણિ) થવાથીજ પતન થાય છે. તે કહે છે—‘ઉદ્ઘં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ઁપર, નીચે ઁને સામે તિરછી દિશામાં દષ્ટિ નાંખીને રૂપોને જુવે છે, સાંભળતા થકા શબ્દ સાંભળે છે, ઁપર નીચે ઁને સામે તિરછી દિશામાં રૂપોમાં ઁને શબ્દોમાં પણ મૂર્છિત થાય છે. આ લોક કહેવાય છે. ॥ ૩ ॥

ટીકા—

પ્રજ્ઞાપકદિશાપેક્ષયા ઉર્ધ્વમ્=ઉર્ધ્વદિશ્યવસ્થિતં પર્વતશિખરપ્રાસાદહમ્યાંધુપરિ-  
ભાગસ્થમ્, અધઃ=અધોદિશ્યવસ્થિતં ભૂમિગૃહાદિકં, તિર્યક્=પ્રાચ્યાદિદિક્ષ્વસ્થિતં  
વિદિક્ષ્વસ્થિતં ચ ગૃહભિત્તિપ્રાસાદહમ્યાંદિકં, પ્રાચીનં=તિર્યક્પદસ્ય વિવરણમેતત્,  
પ્રાચ્યાં દિશિ વિદ્યમાનં પદાર્થજાતમ્, એતત્ત્રોપલક્ષણમ્-અન્યા અપિ તિર્યગ્દિશો  
વિજ્ઞેયાઃ । યદ્વા-પ્રાચીનમિતિ-ઊર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્દિગન્વયિ, તેનોર્ધ્વાધસ્તિર્યગ્દિક્ષ્વ-  
સ્થિતં, પ્રાચીનં=પુરાતનમ્-આધુનિકશિલ્પિદુષ્કરતયાઽઽશ્ચર્યકારિ પદાર્થજાતં, પશ્યન્=  
ચક્ષુર્વ્યાપારયન્, રૂપાણિ=ચક્ષુર્ગ્રાહ્યતયા પરિણતાનિ રૂપવદ્રવ્યાણિ શાલભઙ્ગિકાદીનિ  
સ્વ્યાદિરૂપાણિ વા પશ્યન્તિ ।

ટીકાર્થ—પ્રજ્ઞાપક-(દેખને વાલે કી) દિશા કી અપેક્ષા ઉર્ધ્વ દિશા મેં-પર્વત કે શિખર  
પર તથા પ્રાસાદ યા મહલ આદિ કે ઊપરી ભાગ મેં સ્થિત, ભૌંહરા આદિ અધોદિશા મેં સ્થિત,  
પૂર્વ આદિ તિરછી દિશાઓ મેં સ્થિત તથા વિદિશાઓ મેં સ્થિત દીવાર, હવેલી ઓર મહલ  
આદિ કો દેખતા હૈ । મૂલ મેં આયે હુપ ‘પાઈજં’ અર્થાત્ ‘પ્રાચીન’ શબ્દ કો તિરછી દિશા કા  
વિવરણરૂપ સમજના ચાહિયે । અથવા ‘પ્રાચીન’ પદ ઉર્ધ્વ, અધઃ ઓર તિર્યક્ સમી દિશાઓ કે  
સાથ સંબંધ રખતા હૈ । તાત્પર્ય યહ નિકલ કિ-ઉર્ધ્વ દિશા મેં સ્થિત અધોદિશા મેં સ્થિત  
તથા તિરછી દિશામેં સ્થિત પ્રાચીન અર્થાત્ આધુનિક શિલ્પકારોં કે લિયે દુષ્કર હોને સે  
આશ્ચર્ય ઉત્પન્ન કરને વાલે પુરાને પદાર્થોં કી ઓર નજર કરતા હુઆ સુન્દર પુતલિયોં વગૈરહ  
કો તથા સ્ત્રી આદિ કે રૂપ કો દેખતા હૈ ।

ટીકાર્થ—પ્રજ્ઞાપક-(જેનારની) દિશાની અપેક્ષા ઉર્ધ્વ દિશામાં-પર્વતના શિખર  
પર તથા પ્રાસાદ અથવા મહેલ આદિના ઉપર ભાગમાં, સ્થિત, ભોંયરા આદિ  
અધોદિશામાં સ્થિત, પૂર્વ આદિ તિરછી દિશાઓમાં સ્થિત, તથા વિદિશાઓમાં સ્થિત  
ભીંત, હવેલી અને મહેલ આદિને દેખે છે. મૂલમાં આવેલો ‘પાઈજં’ અર્થાત્ પ્રાચીન  
શબ્દને તિરછી દિશાના વિવરણરૂપ સમજવો જોઈએ, અથવા પ્રાચીન પદ ઉર્ધ્વ,  
અધઃ અને તિર્યક્ સર્વ દિશાઓની સાથે સંબંધ રાખે છે. તાત્પર્ય એ નિકળે છે કે-  
ઉર્ધ્વ દિશામાં સ્થિત, અધોદિશામાં સ્થિત, તથા તિરછી દિશામાં સ્થિત પ્રાચીન અર્થાત્  
આધુનિક શિલ્પકારો માટે દુષ્કર હોવાથી આશ્ચર્ય ઉત્પન્ન કરવાવાળા પુરાણ પદાર્થોની  
તરફ નજર કરતા થકા સુન્દર પુતળીઓ વગેરેને તથા સ્ત્રીઆદિના રૂપને દેખે છે.

तथा-एतासु दिक्षु च शृण्वन्=श्रोत्रोपयोगयुक्तः सन् शब्दान् वेणुवीणादि-  
समुत्थान् गीतनादादिकान् वा शृणोति । श्रोत्रोपयोगाभावे तु न शृणोतीत्यर्थः ।  
उपलक्षणमेतत्-जिघ्रन् गन्धान् जिघ्रति, रसयन् रसान् रसयति, स्पृशन्  
स्पर्शान् स्पृशति ।

इह दर्शनश्रवणाभ्यां रूपादिगुणोपलब्धिमात्रं प्रदर्शितम् । ऊर्ध्वाधस्तिर्यक्पदोपा-  
दानेन च रूपादिगुणानां सर्वदिग्व्यापित्वेन तदुपयोगो दुष्परिहरोऽस्तीति प्रतिबोधितम् ।  
रूपादिगुणोपयोगमात्रेण संसारगतावर्तसंपातो न भवति, किन्तु रूपादिगुणेषु मूर्च्छयेति  
बोधयितुमाह-‘उड्डं.’ इत्यादि ।

इसी प्रकार पूर्वोक्त दिशाओं में श्रोत्रेन्द्रिय का उपयोग लगा कर वेणु वीणा  
आदि वाद्यों का, तथा गीत आदि का शब्द सुनता है । श्रोत्र का उपयोग न हो तो  
नहीं भी सुनता है । यह कथन उपलक्षण है, इस से यह भी समझ लेना चाहिए कि  
घ्राण, रसना और स्पर्श इन्द्रिय का उपयोग लगाकर सूंघता है, चखता है और स्पर्श  
करता है ।

यहाँ देखने और सुनने से रूप आदि गुणों की उपलब्धिमात्र सूचित  
की है । ऊर्ध्व, अधः तथा तिर्यक् पद देकर यह प्रकट किया है कि-इन्द्रियों के विषय-  
रूप आदि, सभी दिशाओं में भरे पड़े हैं । ऐसी स्थिति में उनकी ओर ध्यान न जाने  
देना तो बड़ा ही कठिन कार्य है । मगर रूप आदि गुणों की ओर उपयोग जाने  
मात्र से संसार के गड्ढे में पतन नहीं होता । पतन तब होता है जब उनमें  
मूर्च्छा या राग-द्वेष हो, यह बात प्रकट करने के लिए कहा है-‘उड्डं.’ इत्यादि ।

એજ પ્રમાણે પૂર્વોક્ત દિશાઓમાં શ્રોત્રેન્દ્રિયનો ઉપયોગ લગાવીને વેણુ-વીણા  
આદિ વાજીત્રોના તથા ગીત આદિના શબ્દો સાંભળે છે. શ્રોત્રનો ઉપયોગ ન હોત  
તો સાંભળત નહિ. આ કથન ઉપલક્ષણ છે, એથી એમ સમજી લેવું જોઈએ કે, ઘ્રાણ,  
રસના અને સ્પર્શન ઇન્દ્રિયનો ઉપયોગ લગાવીને સૂંઘે છે, ચાખે છે, અને સ્પર્શ કરે છે.

અહીં દેખવા અને સાંભળવાથી રૂપ આદિ ગુણોની ઉપલબ્ધિ માત્ર સૂચિત કરી છે.  
ઉર્ધ્વ, અધઃ તથા તિર્યક્ પદ આપીને એ સૂચિત કર્યું છે કે-ઇન્દ્રિયોના વિષય  
રૂપ આદિ, સર્વ દિશાઓમાં ભર્યા પડ્યાં છે. એવી સ્થિતિમાં તેની તરફ ધ્યાન નહિ જવા  
દેવું તે તો ભારે કઠિન કામ છે. પરંતુ રૂપ આદિ ગુણોની તરફ ઉપયોગ જવા માત્રથી  
સંસારના ખાડામાં પડવાનું થતું નથી, પતન-પડવાનું તો ભારે થાય છે કે જ્યારે. તેમાં  
મૂર્છા-અથવા રાગ-દ્વેષ થાય. આ વાત પ્રગટ કરવા માટે કહ્યું છે:-‘ઉડ્ડં.’ ઇત્યાદિ.



પુનરુર્ધ્વાદેરુચ્ચારણં કસ્યાશ્ચિદેકસ્યામપિ દિશિ રૂપાદિષુ મૂર્છયા સંસારં પ્રાપ્નો-  
તીતિ બોધનાર્થમ્ ।

ઊર્ધ્વાદિદિક્ષ્વચસ્થિતં રૂપગુણં પ્રતિ મૂર્છન્=રાગાદિપરિણામં કુર્વન્ સદસદ્વિ-  
વેકશૂન્યો ભવન્ વા રૂપેષુ=મનોહરેષુ રૂપવદ્રવ્યેષુ સ્ત્ર્યાદિરૂપેષુ વા મૂર્છતિ=લોલુપો  
ભવતિ । एवं शब्देषु च मूर्च्छति । अपिग्रहणाद् गन्धरसस्पर्शेषु मूर्च्छति=गृध्नुर्भवति ।  
एषः=मूर्च्छाविषयीभूतो रूपादिगुणः, लोकः=संसारः, कारणे कार्योपचारात् मूर्च्छाविष-  
यीभूतरूपादिगुणात्मको लोक इति व्याख्यातः=भगवता कथितः । ॥ सू० ३ ॥

સંયમે ગૃહીતેઽપિ પ્રમાદવશેન રૂપાદિગુણેષુ મૂર્છામુપગતઃ સન્ પુનરગારિત્વ-  
માપદ્યતે-ઈતિ દર્શયતિ-'एत्थ अगुत्ते.' इत्यादि ।

દોવારા ઊર્ધ્વ આદિ દિશાઓં કા કથન કરકે યહ વતલાયા હૈ કિ-કિસી મી ઇક  
દિશામૈં સ્થિતિ રૂપાદિ મૈં મૂર્છા હોને પર મી સંસાર કી પ્રાપ્તિ હોતી હૈ ।

ઊર્ધ્વ આદિ દિશાઓં મૈં સ્થિત રૂપ આદિ વિષયોં મૈં રાગ-દ્વેષરૂપ પરિણામ કરતા  
હુઆ, સત્-અસત્ કે વિવેક સે શૂન્ય હોકર મનોહર રૂપોં મૈં યા મનોહર રૂપવાલી સ્ત્રી  
આદિ કે રૂપોં મૈં પુરુષ લોલુપ હો જાતા હૈ । ઇસી પ્રકાર શબ્દોં મૈં મૂર્છિત હો જાતા હૈ ।  
ગંધ, રસ, તથા સ્પર્શ મૈં મી મૂર્છિત હો જાતા હૈ । મૂર્છા કા વિષયભૂત યહ રૂપ આદિ હી,  
કારણ મૈં કાર્ય કા ઉપચાર કરને સે સંસાર કહલાતા હૈ । ઇસા ભગવાન્ ને  
ફરમાયા હૈ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

સંયમ ગ્રહણ કર લેને કે પશ્ચાત્ મી પ્રમાદ કે વશ મૈં હોકર રૂપ આદિ ગુણોં મૈં મૂર્છા કો  
પ્રાપ્ત હોનેવાલા ફિર ગૃહસ્થ બન જાતા હૈ, યહ વાત વતલાયે હૈ:-'एत्थ अगुत्ते.' इत्यादि ।

એવાર ઉર્ધ્વ આદિ દિશાઓ કથન કરીને એ બતાવ્યું છે કે-કોઈ પણ એક દિશામાં  
સ્થિત રૂપાદિમાં મૂર્છા થતાં પણ સંસારની પ્રાપ્ત થાય છે. ઉર્ધ્વ આદિ દિશાઓમાં સ્થિત  
રૂપ આદિ વિષયોમાં રાગ-દ્વેષરૂપ પરિણામ કરતા થકા સત્-અસત્ના વિવેકમાં શૂન્ય  
થઈને મનોહર રૂપોમાં અથવા તો મનોહર રૂપવાળી સ્ત્રી આદિના રૂપોમાં પુરુષ લોલુપ  
થઈ જાય છે. એ પ્રમાણે શબ્દોમાં મૂર્છિત થઈ જાય છે. ગંધ, રસ તથા સ્પર્શમાં પણ  
મૂર્છિત થઈ જાય છે. મૂર્છાના વિષયભૂત (મૂર્છા થવાનું કારણ) આ રૂપ આદિજ, કારણમાં  
કાર્યને ઉપચાર કરવાથી, સંસાર કહેવાય છે. એ પ્રમાણે ભગવાને ફરમાવ્યું છે. (સૂ. ૩)

સંયમ ગ્રહણ કરી લીધા પછી પણ પ્રમાદવશ થઈને રૂપ આદિ ગુણોમાં મૂર્છા  
પામવાવાળા ફરીને ગૃહસ્થ બની જાય છે. એ વાત બતાવે છે:-'एत्थ अगुत्ते.' इत्यादि.

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય૦ ૧ ઉ.૫ સૂ.૪ રૂપાદિમૂર્ચ્છિતસ્ય પુનરગારવાસઃ ૬૨૧

**મૂલમ્—**

एत्थ अगुत्ते अणाणाए, पुणो पुणो गुणासाए, वंकसमायारे पमत्ते अगारमावसे  
॥ सू० ४ ॥

**છાયા—**

अत्र अगुप्तः अनाज्ञायां पुनःपुनर्गुणास्वादः, वक्रसमाचारः प्रमत्तः अगारमाव-  
सति ॥ सू० ४ ॥

**ટીકા—**

अत्र=अस्मिन् रूपादिगुणे, अगुप्तः=मनोवाक्कायगुप्तिरहितः मनसा-  
रूपादिषु रज्यते, वचसा प्रार्थयति, कायेन तदभिमुखं प्रवर्तते, स चागुप्तः अनाज्ञायाम्=  
अनाचारे वर्तमानः भगवदाज्ञाबहिर्वर्ती, अत एव पुनःपुनर्गुणास्वादः=असकृद्  
विषयसुखानुभवरसिकः, अत एव वक्रसमाचारः-वक्रः=कुटिलः समाचारः=

**મૂળાર્થ—**રૂપાદિ વિષયોં મેં મન વચન કાયકા વ્યાપાર ન રોકને વાલા ભગવાન્કી  
આજ્ઞા સે બાહર હૈ, બાર-બાર વિષયોંકા આસ્વાદન કરને વાલા કુટિલાચારી, પ્રમાદી (સાધુ)  
ફિર ગૃહસ્થ બન જાતા હૈ ॥ સૂ૦ ૪ ॥

**ટીકા—**રૂપ આદિ વિષયોં મેં મન, વચન ઔર કાય કી ગુપ્તિ સે રહિત  
અર્થાત્ મન સે રાગ કરને વાલા, વચન સે વિષયોં કી પ્રાર્થના કરને વાલા ઔર કાય  
સે ઊનમેં પ્રવૃત્તિ કરનેવાલા એસા અનાચારી સાધુ ભગવાન કી આજ્ઞા સે બાહર હો  
જાતા હૈ । વહ બારંબાર વિષયસુખોં કે ભોગ મેં રસિક હોકર કુટિલ આચારવાલા

**મૂળાર્થ—**રૂપાદિ વિષયોંમાં મન, વચન અને કાયનાં વ્યાપારને નહિ રોકવા  
વાળા, તે ભગવાનની આજ્ઞાથી બહાર છે. વારંવાર વિષયોંનું આસ્વાદન કરવાવાળા,  
કુટિલાચારી-પ્રમાદી (સાધુ) પાછા ગૃહસ્થ બની જાય છે.

**ટીકાર્થ—**રૂપ આદિ વિષયોંમાં મન, વચન અને કાયની ગુપ્તિથી રહિત  
અર્થાત્ મનથી રાગ કરવાવાળા, વચનથી વિષયોંની પ્રાર્થના કરવાવાળા અને કાયથી  
તેમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા, એવા અનાચારી સાધુ ભગવાનની આજ્ઞાથી બહાર થઈ જાય છે.  
તે વારંવાર વિષયસુખોંના ભોગમાં રસિક થઈને કુટિલ આચારવાળા-અર્થાત્ અસંયમનું

આચારો यस्य स वक्रसमाचारः—असंयमानुष्ठायी, नरकादिगतिजनकत्वादसंयमस्य वक्रतया व्यपदेशः । इत्थम्भूतः स प्रमत्तः=प्रमादवशाद् विषयेषु मूर्च्छितः, अगारं=गृहम् आवसति । गृहीतसंयमोऽपि प्रमादवशाद् विषयासक्तः सन् पुनर्गृहस्थो भवतीत्यर्थः ॥ सू० ४ ॥

अथ शस्त्रद्वारम्—

अथ सर्वथा वनस्पतिशस्त्रसमारम्भपरित्यागिनोऽनगारान्, तथाऽग्निशस्त्रसमारम्भप्रवृत्तान् द्रव्यलिङ्गिन्श्च विविच्य प्रतिबोधयितुमाह—‘लज्जमाणा’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

લજ્જમાણા પુઠો પાસ, અનગારા મો—તિ એને પવયમાણા, જમિણં

अर्थात् असंयम का सेवन करने वाला प्रमादी फिर घर—वास में आजाता है । वह संयम धारण करने के पश्चात् भी प्रमाद के वश होकर विषयों में आसक्त होने के कारण फिर गृहस्थ बन जाता है ॥ सू० ४ ॥

શસ્ત્રદ્વાર—

वनस्पतिशस्त्र के आरंभ का सर्वथा त्याग करने वाले अनगारों का तथा अग्निशस्त्र के आरंभ में प्रवृत्त द्रव्यलिङ्गियोंका विवेचन करके उपदेश देते हैं—‘लज्जमाणा.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—વનસ્પતિકાય કે આરંભ મેં સંકોચ કરને વાલે સાધુઓં કો અલગ દેલો । તથા ‘હમ અનગાર હૈં’ ઇસ પ્રકાર કહને વાલે નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રોસે

સેવન કરવાવાળા પ્રમાદી ફરી ઘરવાસમાં આવી જાય છે. તે સંયમ ધારણ કર્યા પછી પણ પ્રમાદને વશ થઈને વિષયોમાં આસક્ત થવાના કારણે ફરી ગૃહસ્થ બની જાય છે. (સૂ. ૪)

શસ્ત્રદ્વાર—

वनस्पतिशस्त्रना आरंभना सर्वथा त्याग करवावाला अणुगारोनुं तथा अग्नि-शस्त्रना आरंभमां प्रवृत्त द्रव्यलिङ्गीओनुं विवेचन करीने उपदेश आये छे—‘लज्जमाणा.’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—વનસ્પતિકાયના આરંભમાં સંકોચ કરવાવાળા સાધુઓને જુદા જાણેા. તથા ‘અમે અણુગાર છીએ’ આ પ્રમાણે કહેવાવાળા, નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી વનસ્પતિ-



आचारचिन्तामणि-टीका अध्या. १३. ५ सू. ५ वनस्पतिसमारम्भेण विविधप्राणिघातः ६२३

विरूपरूपेहि सत्थेहि वणस्सइकम्मसमारम्भेणं वणस्सइसत्थ समारम्भमाणा अण्णे  
अणेगरूपे पाणे विहिंसन्ति ॥ सू० ५ ॥

छाया—

लज्जमानाः पृथक् पश्य, अनगाराः स्म इति एके प्रवदमानाः, यद्विमं विरूप-  
रूपैः शस्त्रैः वनस्पतिकर्मसमारम्भेण वनस्पतिशस्त्रं समारम्भमाणा अन्यान् अनेकरूपान्  
प्राणान् विहिंसन्ति ॥ सू० ५ ॥

टीका—

लज्जमानाः=परमकरुणयार्द्रहृदयतया वनस्पतिकायसमारम्भे परोक्षमुखाः,  
वनस्पतिशस्त्रसमारम्भपरित्यागिनोऽनगारा इत्यर्थः । पृथक्=विभिन्नाः=केचित् प्रत्यक्ष-  
ज्ञानिनोऽवधिमनःपर्ययकेवलिनः, केचित् परोक्षज्ञानिनो भावितात्मानः सन्तीति  
पश्य ।

यद्वा-पृथक्=द्रव्यलिङ्गिभ्यः पृथग्भावेन सन्तीति पश्य । इमे-सूक्ष्मवादर-  
वनस्पतिकायसमारम्भकरणे भीतास्त्रस्ता उद्विग्नास्त्रिकरणत्रियोगैर्वनस्पतिकायसमार-  
म्भपरित्यागिनो विद्यन्ते इति विलोकयेत्यर्थः ।

वनस्पतिकाय का आरंभ करने वाले, वनस्पतिशस्त्र का आरंभ करते हुए अन्य अनेक प्रकार  
के प्राणियों की हिंसा करते हैं ॥ सू० ५ ॥

टीकार्थ—अत्यन्त करुणा से आर्द्र हृदयवाले मुनि वनस्पतिकाय के आरंभ से विमुख  
रहते हैं । ऐसे मुनि कोई अवधिज्ञानी, मनःपर्यायज्ञानी, और केवलज्ञानी होते हैं, और कोई—  
कोई परोक्षज्ञानी ( मति-श्रुत ज्ञान के धारक ) भावितात्मा होते हैं उन्हें देखो ।

अथवा इन्हें द्रव्यलिङ्गियों से अलग ही समझना चाहिए । यह अनगार सूक्ष्म और  
बादर वनस्पति का आरंभ करने में भीत, त्रस्त, उद्विग्न हैं । तीन करण, तीन योग से  
वनस्पतिकाय के आरंभ के त्यागी हैं ।

कायने आरंभ करवावाणा, वनस्पति शस्त्रने आरंभ करता थका अन्य अनेक  
प्रकारना प्राणीओनी हिंसा करे छे. ॥ ५ ॥

टीकार्थ—अत्यन्त करुणाशी आर्द्र हृदयवाणा मुनि वनस्पतिकायना आरंभशी  
विरुद्ध रहेंछे. ओवा मुनि कोध-कोध अवधिज्ञानी, मनःपर्यायज्ञानी अने केवलज्ञानी, होय  
छे. अने कोध-कोध परोक्षज्ञानी ( मति-श्रुतज्ञानना धारक ) भावितात्मा होय छे. तेने ज्ञुओ.

अथवा तेने द्रव्यलिङ्गिओशी जूहाज समजवा जेधओ. ते अणुगार सूक्ष्म अने  
बादर वनस्पतिकायने आरंभ करवाभां भीओला-लथवाणा, त्रस्त, उद्विग्न छे. त्रणु  
करण त्रणु योगशी वनस्पतिकायना आरंभना त्यागी छे.

एके पुनरन्ये तु 'वयमनगाराः स्मः' इति साभिमानं प्रवदमानाः='वयमेव वनस्पतिजीवरक्षणपराः महाव्रतधारिणः' इति प्रलपन्तो द्रव्यलिङ्गिनः सन्ति, तान् पृथक् पश्य ।

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्तन्ते, नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्तीति दर्शयति—'यदिमम्.' इत्यादि ।

यद्=यस्माद् विरूपरूपैः=विभिन्नस्वरूपैः शस्त्रैः=वनस्पतिकायशस्त्रैः, शस्त्रं हि वनस्पतिकायस्य द्रव्यभावभेदाद् द्विविधम् । तत्र द्रव्यशस्त्रं=स्वकाय-परकायोभयकायभेदात् त्रिविधम् । तत्र स्वकायशस्त्रं दण्डलकुटादयः । परकाय-शस्त्रं=कर्तरी-पाषाण-हस्त-पाद-मुख-वह्म्यादयः । उभयकायशस्त्रं=वासी-दात्र-

इनसे विपरीत कोई-कोई 'हम अनगार हैं' ऐसा अभिमानपूर्वक कहते हैं—'हम ही वनस्पति जीवों की रक्षा करने में तत्पर और महाव्रतधारी हैं,' इस प्रकार प्रलाप करते हुए द्रव्यलिङ्गी साधुओं को अलग समझो ।

अनगार होने का अभिमान करने वाले ये द्रव्यलिङ्गी अनगार के गुणों में तनिक भी प्रवृत्ति नहीं करते । ये गृहस्थ के किसी भी कामका त्याग नहीं करते हैं, यह बात आगे बतलाते हैं—'यदिमम्.' इत्यादि ।

નાના પ્રકાર કે વનસ્પતિકાય કે શસ્ત્રોદ્વારા વનસ્પતિકાય કા આરંભ કરકે વનસ્પતિકાયકી હિંસા કરતે હૈં । વનસ્પતિશસ્ત્ર દો પ્રકારકા હૈ—દ્રવ્યશસ્ત્ર ઓર ભાવશસ્ત્ર । દ્રવ્યશસ્ત્ર કે ત્રીન ભેદ હૈ—(૧) સ્વકાયશસ્ત્ર (૨) પરકાયશસ્ત્ર (૩) ઉભયકાયશસ્ત્ર । ડંડા લકડી વગેરે સ્વકાયશસ્ત્ર હૈ । કૈંચી, પથર, હાથ, પૈર, મુઝ ઓર આગ આદિ

તેનાથી વિપરીત—વિઝ્ઞ કોઈ-કોઈ 'અમે અણુગાર છીએ' આ પ્રમાણે અભિમાન પૂર્વક કહે છે—'અમેજ વનસ્પતિ જીવોની રક્ષા કરવામાં તત્પર અને મહાવ્રતધારી છીએ' આ પ્રમાણે પ્રલાપ-(અકવાટ) કરનારા દ્રવ્યલિંગી સાધુઓને જુદા સમજો.

અણુગાર હોવાનું અભિમાન કરનારા એ દ્રવ્યલિંગી સાચા અણુગારના ગુણો માટે જરા પણ પ્રવૃત્તિ કરતા નથી. તે ગૃહસ્થોનાં કોઈ પણ કામનો ત્યાગ કરતા નથી. એ બતાવે છે. 'યદિમ્.' ઇત્યાદિ.

નાના પ્રકારના વનસ્પતિકાયનાં શસ્ત્રો વડે વનસ્પતિકાયનો આરંભ કરીને વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે. વનસ્પતિશસ્ત્ર એ પ્રકારનાં છે—દ્રવ્યશસ્ત્ર અને ભાવશસ્ત્ર. દ્રવ્યશસ્ત્રનાં ત્રણ ભેદ છે—(૧) સ્વકાયશસ્ત્ર, (૨) પરકાયશસ્ત્ર, અને (૩) ઉભયકાયશસ્ત્ર. ડંડા, લાકડી વગેરે સ્વકાયશસ્ત્ર છે, કેંચી-(કાતર, સાંણસો) પથર, હાથ, પગ,

કુઠારાદયઃ । ભાવશસ્ત્રં તુ વનસ્પતિં પ્રતિ મનોવાક્કાયાનાં દુષ્પ્રણિધાનમ્ । વનસ્પતિ-  
કર્મસારમ્ભેન=કર્મણાં સમારમ્ભઃ કર્મસમારમ્ભઃ=વનસ્પતિં નિમિત્તીકૃત્ય જ્ઞાનાવરણી-  
યાદિકર્મબન્ધજનકસાવધવ્યાપારસ્તેન, इमं वनस्पतिकायं विहिंसन्ति ।

વનસ્પતિકાયહિંસાયાં પ્રવૃત્તાઃ સ્વલુષ્ઠજીવનિકાયરૂપં લોકં સર્વમેવ વિહિંસન્તી-  
ત્યાહ-‘વનસ્પતિશસ્ત્ર’-મિત્યાદિ । વનસ્પતિશસ્ત્રં=વનસ્પતિજીવોપમર્દકં શસ્ત્રં પૂર્વોક્ત-  
પ્રકારં, સમારમ્ભમાણાઃ=વનસ્પતિં પ્રતિ પ્રયુઝ્જાનાઃ, અન્યાન્=વનસ્પતિકાયભિચાન્,  
અનેકરૂપાન્, પૃથ્વીકાયાદીન્, દ્વીન્દ્રિયાદીન્ ત્રસાંશ્ચ તદાશ્રિતાન્ પ્રાણાન્=પ્રાણિનઃ  
હિંસન્તિ ।

इह बहुविधा द्रव्यलिङ्गिनो विद्यन्ते । तत्र शाक्यादयः कन्द-मूल-पत्र-

પરકાયશસ્ત્ર હૈં । વસૂલા, દાંતી, કુઠાર આદિ ઉભયકાયશસ્ત્ર હૈં । વનસ્પતિકાય કે પ્રતિ મન,  
વચન ઔર કાય કા અસત્ પ્રયોગ કરના ભાવશસ્ત્ર હૈ । इन शस्त्रोंद्वारा वनस्पतिकायका  
આરંભ કરકે જ્ઞાનાવરણ આદિ આઠપ્રકાર કે કર્મોં કો ઉત્પન્ન કરને વાલા સાવધ વ્યાપાર  
કરકે વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરતે હૈં ।

જો વનસ્પતિકાય કી હિંસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ વહ છહોં જીવનિકાયરૂપ સમસ્ત લોક  
કી હિંસા કરતા હૈ, યહ બતલાતે હૈં, ‘વનસ્પતિશસ્ત્રમ્’. इत्यादि ।

વનસ્પતિકાય કી હિંસાજનક પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા આરંભ કરનેવાલે લોગ વનસ્પતિકાય કે  
અતિરિક્ત પૃથ્વીકાય આદિ અન્ય સ્થાવરોં કી તથા વનસ્પતિ-આશ્રિત દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવો  
કી ભી હિંસા કરતે હૈં ।

संसार में अनेक प्रकार के द्रव्यलिङ्गी हैं । उन में से शाक्य आदि कंद, मूल,

મુખ અને અગ્નિ આદિ પરકાયશસ્ત્ર છે. વસૂલા દાંતી-દાંતરડું, કુઠાર-કુડાડો આદિ  
ઉભયકાયશસ્ત્ર છે. વનસ્પતિકાય પ્રતિ મન, વચન અને કાયનો અસત્-પ્રયોગ કરવો  
તે ભાવશસ્ત્ર છે. એ શસ્ત્રોંદ્વારા વનસ્પતિકાયનો આરંભ કરીને-જ્ઞાનાવરણીય આદિ આઠ  
પ્રકારના કર્મોને ઉત્પન્ન કરવાવાળા સાવધ વ્યાપાર કરીને વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે.

એ વનસ્પતિકાયની હિંસામાં પ્રવૃત્ત થાય છે. તે છજીવનિકાયરૂપ સમસ્ત  
લોકની હિંસા કરે છે. એ બતાવે છે-‘વનસ્પતિશસ્ત્રમ્.’ इत्यादि.

વનસ્પતિકાયના હિંસાજનક પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા આરંભ કરવાવાળા લોક વનસ્પતિ-  
કાયના અતિરિક્ત પૃથ્વીકાય, આદિ અન્ય સ્થાવરોંની તથા વનસ્પતિ આશ્રિત દ્વીન્દ્રિય-  
એ ઇન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની પણ હિંસા કરે છે.

संसारમાં अनेक प्रकारના द्रव्यलिङ्गी છે. તેમાંથી શાક્ય આદિ કંદ, મૂલ, પત્તા,



પુષ્પફલાદિભોજનાર્થં વનસ્પતિકર્મસમારમ્ભં કુર્વન્તિ, કારયન્તિ, કુર્વન્તોઽનુમોદયન્તિ ચ, તેન ષડ્જીવનિકાયવિરાધકા ભવન્તિ । દણ્ડિનોઽપિ “વયં પશ્ચમહાવ્રતધારિણો જિનાજ્ઞારાધકા અનગારાઃ સ્મઃ” ઇત્યાદિ પ્રવદમાનાઃ સાધ્વાભાસાઃ સાવધસુપદિશન્તિ, શાસ્ત્રપ્રતિષિદ્ધમપિ વનસ્પતિકર્મસમારમ્ભં કારયન્તિ ।

તે હિ વ્યાખ્યાનમણ્ડપાદૌ ચાશોકવૃક્ષપત્રાદિભિર્વન્દનમાલાદિકં બન્ધયન્તિ, નાનાવિધપુષ્પપત્રફલૈઃ પશ્ચોપચારાદિપૂજાસુ પ્રવર્તયન્તિ । તથાહિ—

“કાલે સુઙ્ગમૂર્ણં, વિસિદ્ધપુષ્પાદિર્હિ વિહિણા ઊ ।

સારથુઙ્ગોત્તગરુડૈ, જિણપૂયા હોઢ કાયવ્વા ॥ ૧ ॥” (પશ્ચાશકવૃત્તિઃ)

છાયા—કાલે શુચીભૂતેન, વિશિષ્ટપુષ્પાદિકૈર્વિધિના તુ ।

સારસ્તુતિ સ્તોત્રકરુચિના, જિનપૂજા ભવતિ કર્તવ્યા ॥ ૧ ॥

પત્તા, ફૂલ આદિ સ્નાને કે લિપે વનસ્પતિ કા આરંભ કરતે હૈં, કરાતે હૈં ઓર કરને વાલે કી અનુમોદના કરતે હૈં । ઁસા કરકે વે ષડ્જીવનિકાય કી વિરાધના કે ભાગી હોતે હૈં । “હમ પંચમહાવ્રતધારી, જિન ભગવાન કી આજ્ઞા કે આરાધક અનગાર હૈં” ઁસા કહને વાલે દંડી છૂટે સાધુ ભી સાવધ કા ઉપદેશ દેતે હૈં ઓર શાસ્ત્ર મેં નિષિદ્ધ કિયે હુપ વનસ્પતિકાય કે આરંભ કા ઉપદેશ દેતે હૈં ।

વે વ્યાખ્યાનમંડપ આદિ મેં અશોક વૃક્ષ કે પત્તો સે વન્દનવાર આદિ બંધવાતે હૈં, નાના પ્રકાર કે ફલ ફૂલ પત્તો સે પંચોપચાર આદિ પૂજાઓ મેં (શ્રાવકો) કો પ્રવૃત્ત કરતે હૈં । જૈસે—

“ઉચિત સમય પર, વિધિપૂર્વક વિશિષ્ટ પુષ્પ આદિ કે દ્વારા સુન્દર સ્તોત્ર—સ્તુતિપૂર્વક જિન ભગવાનકી પૂજા કરની ઇાહિપ ” ।

ફૂલ આદિ ખાવા માટે વનસ્પતિનો આરંભ કરે છે, અને કરાવે છે, અને કરવા-વાળાને અનુમોદન આપે છે. એ પ્રમાણે કરીને તે ષડ્જીવનિકાયની વિરાધના લાગીદાર થાય છે. ‘અમે પંચ મહાવ્રતધારી, જિન ભગવાનની આજ્ઞાના આરાધક અશ્વગાર છીએ.’ આ પ્રમાણે કહેવાવાળા દંડી શુદ્ધ સાધુ પણ સાવધનો ઉપદેશ આપે છે, અને શાસ્ત્રમાં નિષેધ કરવામાં આવેલો વનસ્પતિકાયના આરંભનો ઉપદેશ આપે છે.

તે વ્યાખ્યાન-મંડપ આદિમાં અશોકવૃક્ષનાં પાંદડાંથી તોરણ આદિ બંધાવે છે. નાના પ્રકારના ફૂલ-ફૂલ અને પાંદડાંથી પંચોપચાર આદિ પૂજાઓમાં (શ્રાવકોને) પ્રવૃત્ત કરે છે-જેઠે છે. જેમ-“ઉચિત સમય-યોગ્ય સમય પર વિધિપૂર્વક વિશિષ્ટ-ઉત્તમ પુષ્પ આદિ દ્વારા સુન્દર સ્તોત્ર, સ્તુતિપૂર્વક જિન ભગવાનની પૂજા કરવી જોઈએ.”

અપરશ્ચ-ઉમાસ્વાતિવાચકકૃતપ્રકરણે—

‘મધ્યાહ્ન કુસુમૈઃ પૂજા’ ઇતિ । ‘ગન્ધવાસાક્ષતૈઃ સ્પર્શિભિઃ’ ઇતિ ।

‘પ્રધાનૈશ્ચ ફલૈઃ પૂજા’ ઇત્યાદિ । કિશ્ચ—

“ ન શુષ્કૈઃ પૂજયેદેવં, કુસુમૈર્ન મહીગતૈઃ ।

ન વિશીર્ણદલૈઃ સ્પૃષ્ટૈઃ, નાશુભૈર્નાવિકાસિભિઃ ” ॥ ૧ ॥

‘ ન શુષ્કૈઃ પૂજયેદેવં કુસુમૈર્ન મહીગતૈઃ ’—ઇત્યનેન ‘ આર્દ્રૈ સ્ત્રોટિ તૈશ્ચ કુસુમૈ-  
ર્દેવં પૂજયેત્ ’—ઇત્યર્થોઽવગમ્યતે । અહો ! કીદૃશો મહાસાવધોપદેશસ્તેષામ્ ।

एवं देवमन्दिरादौ कदलीस्तम्भादिरोपणेन, अशोकादिवृक्षपत्रैर्वन्दन—

પન્ચાશકવૃત્તિ ઉમાસ્વાતિકૃત પ્રકરણ મેં કહા છે—

“મધ્યાહ્ન મેં ફૂલોં સે પૂજા કી જાતી છે । ” “ગંધ, વાસ ઓર અક્ષત સે તથા માળાઓં સે પૂજા હોતી છે । ” ઉત્તમ ફળોં સે પૂજા કી જાતી છે ” ઇત્યાદિ । ઓર મી કહા છે—

“સૂએ, જમીન પર ગિરે હુએ, ટૂટી પંચુડીવાલે, છુએ હુએ, સરાબ ઓર વિના સ્થિલે ફૂલોં સે પૂજા નહીં કરની યાહિએ ” ।

‘સૂએ ઓર જમીન પર ગિરે હુએ ફૂલોં સે પૂજા નહીં કરની યાહિએ’ ઇસકા અભિપ્રાય યહ હુઆ કિ તાજે ઓર તોડે હુએ ફૂલોં સે પૂજા કરની યાહિએ અરેરે ! ઉનકા વહ કૈસા સાવધ ઉપદેશ છે ।

इस प्रकार देवमंदिर आदि में कदलीस्तम्भ खड़ा करके, अशोक वृक्ष के पत्तों से

પન્ચાશકવૃત્તિ ઉમાસ્વાતિકૃત પ્રકરણમાં કહ્યું છે—

‘મધ્યાહ્નમાં ફૂલોંવડે પૂજા કરવામાં આવે છે.’ ‘ગંધ, વાસ અને અક્ષતથી તથા માળાઓથી પૂજા થાય છે.’ ‘ઉત્તમ ફળોથી પૂજા કરવામાં આવે છે.’ ઇત્યાદિ. બીજું પણ કહ્યું છે કે:—

“સૂકાં, જમીન પર ખરી પડેલાં, જેની પાંખડી તુટી ગઈ હોય, સ્પર્શ કરાએલાં, ખરાબ અને ખિલ્યા વિનાનાં ફૂલોથી પૂજા નહિ કરવી જોઈએ.”

‘સૂકાં અને જમીન પર ખરી પડેલાં ફૂલો વડે પૂજા ન કરવી જોઈએ’ આનો અભિપ્રાય એ થયો કે લીલાં અને તાજાં તોડેલાં ફૂલોથી પૂજા કરવી જોઈએ. અરેરે ! તેઓનો આ સાવધ ઉપદેશ કેવો છે ?

આ પ્રમાણે દેવમંદિર આદિમાં કેળાના સ્થંભ ઉભા કરીને અશોકવૃક્ષનાં પાંદડાંથી

मालिकादिवन्धनेन, प्रतिमोपरि सचित्तपत्रपुष्पादिक्षेपणेन सचित्तनालिकेरदाडिमर-  
सालफलादिनैवेद्योपचारेण च वनस्पतिर्हिंसां कारयन्तस्ते तदाश्रिताननेकविधान्  
त्रसस्थावरान् प्राणिनो घातयन्ति । नहि-वीतरागाणां सावद्या सपर्यां समुचिता,  
'एस खलु गंधे' इत्यादिवचनेन सर्वारम्भाणामस्मिन्नेवागमे तैः साक्षात् प्रतिषिद्धत्वात् ।  
नहि तत्तत्त्यागिभ्यस्तत्तत्त्यक्तद्रव्यसमर्पणं तुष्टिकरं भवतीति । नहि लोके मद्यमांस-  
त्यागिभ्यो मद्यमांससमर्पणं तत्परितोषाय जायते । अलं बहुना ! हरितकन्दमूलादि-  
त्यागिनः श्रावका अपि न हरितकन्दमूलादिसमर्पणेन संतुष्यन्तीति विचारयन्तु  
मनीषिणः ॥ सू० ५ ॥

अथ सुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामिनं जगाद—'तत्थ.' इत्यादि ।

वन्दनवार बाँधकर, प्रतिमा पर सचित्त पत्ते, फूल आदि चढाकर, सचित्त नारियल, दाडिम,  
आम आदि नैवेद्य के उपचार से वनस्पति को हिंसा करते हुए वे वनस्पति-आश्रित अनेक  
प्रकार के त्रस-स्थावर जीवों का घात करवाते हैं । वीतराग देव की पूजा सावद्य होना  
उचित नहीं है । 'एस खलु गंधे.' इत्यादि कथन द्वारा इसी आगम में समस्त आरंभों का  
वीतराग भगवान् ने साक्षात् निषेध किया है । जो पुरुष जिस वस्तु का त्यागी है, उसकी तुष्टि  
उस वस्तु को अर्पित करने से नहीं हो सकती । लोक में मद्य-मांस का त्याग करने वालों  
को मद्य-मांस की भेंट संतोषजनक नहीं होती । अधिक क्या कहें ! हरित कंद मूल के  
त्यागी श्रावक भी हरित कन्द मूल की भेंट से प्रसन्न नहीं होते हैं । बुद्धिमान् पुरुष स्वयं  
विचार करें ॥ सू० ५ ॥

सुधर्मा स्वामी जम्बूस्वामी से कहते हैं—'तत्थ.' इत्यादि ।

वन्दनवार बांधीने, प्रतिमा उपर सचित्त पांढडा, फूल आदि चढावीने, सचित्त नाजियेर,  
दाडिम, आम आदि नैवेद्यना उपचारथी वनस्पतिनी हिंसा करीने ते वनस्पति-आश्रित  
अनेक प्रकारना त्रस-स्थावर जीवोनो घात करावे छे. वीतरागदेवनी पूजा सावद्य होय  
ते योग्य नथी. 'एस खलु गंधे.' इत्यादि कथन द्वारा आ आगममां तमाभ समा-  
रंभोनो वीतराग भगवाने साक्षात् निषेध कथ्यो छे. जे पुरुष जे वस्तुना त्यागी छे,  
तेनी प्रसन्नता ते वस्तुने अर्पण करवाथी थछ शकती नथी. लोकमां मद्य-मांसना  
त्यागी-त्याग करवावाणाने मद्य-मांसनी लेट संतोष उत्पन्न करती नथी, अधिक शुं  
कहीअे ! बीवा कंदमूलना त्यागी श्रावक पणु बीवा कंदमूलनी लेटथी प्रसन्न थता  
नथी तो बुद्धिमान पुरुष पोते विचार करी बीअे. ॥ सू० ५ ॥

सुधर्मा स्वामी जम्बू स्वामीने कहे छे—'तत्थ.' इत्यादि.



મૂલમ્—

તત્થ સ્વલુ ભગવયા પરિણા પવેइया । इमस्स चैव जीवियस्स परिवंदण-  
माणण-पूयणाए, जाइमरणमोयणाए, दुःस्वपडिघायहेउं, से सयमेव वणस्सइसत्थं  
समारंभइ, अण्णेहिं वा वणस्सइसत्थं समारंभावेइ, अण्णे वणस्सइसत्थं समारंभमाणे  
समणुजाणइ, तं से अहियाए, तं से अबोहीए ॥ सू० ६ ॥

છાયા—

તત્ર સ્વલુ ભગવતા પરિજ્ઞા પ્રવેદિતા । अस्य चैव जीवितस्य परिवन्दन-मानन  
-पूजनाय, जातिमरणमोचनाय, दुःखप्रतिघातहेतुं, स स्वयमेव वनस्पतिशस्त्रं समार-  
भते, अन्यैर्वा वनस्पतिशस्त्रं समारम्भयति, अन्यान् वा वनस्पतिशस्त्रं समारभमाणान्  
समनुजानाति, तत् तस्याहिताय, तत् तस्याबोधये ॥ सू० ६ ॥

ટીકા—

તત્ર=વનસ્પતિકાયસમારંભે, ભગવતા=શ્રીમહાવીરેણ, પરિજ્ઞા=સમ્યગ્-  
બોધઃ સ્વલુ=નિશ્ચયેન પ્રવેદિતા=પ્રતિબોધિતા-કર્મબંધસમુચ્છેદાર્થે જીવેન પરિ-

મૂલાર્થ—વનસ્પતિકાય કે આરંભ કે સંબંધ મેં ભગવાન્ ને સમ્યક્ બોધ દિયા હૈ ।  
इस जीवन के वन्दन, मानन और पूजन के लिए, जन्म-मरण से छुटकारा पाने के लिए तथा  
दुःखों का विनाश करने के लिए स्वयं वनस्पतिकायशस्त्र का आरंभ करता है, दूसरों से  
आरंभ करता और आरंभ करने वाले दूसरों का अनुमोदन करता है । वह आरंभ उस के  
अहित के लिए, उसकी अबोधि के लिए होता है ॥ सू० ६ ॥

ટીકાર્થ—વનસ્પતિકાય કે આરંભ કે વિષય મેં ભગવાન્ શ્રી મહાવીર સ્વામીને  
સમ્યક્ ઉપદેશ દિયા હૈ । અર્થાત્ ભગવાન ને બતલાયા હૈ કિ-કર્મબંધ કો નષ્ટ કરને કે

મૂલાર્થ—વનસ્પતિકાયના આરંભના સમ્બંધમાં ભગવાને સમ્યક્ બોધ આપ્યો  
છે. આ જીવનના વંદન, માનન, અને પૂજન માટે, જન્મ-મરણથી છુટવાને માટે  
તથા દુઃખોનો વિનાશ કરવા માટે સ્વયં વનસ્પતિકાયશસ્ત્રનો આરંભ કરે છે, બીજા  
પાસે આરંભ કરાવે છે, અને આરંભ કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન આપે છે. તે  
આરંભ તેના અહિત માટે તેમજ તેની અબોધિ માટે હોય છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

ટીકાર્થ—વનસ્પતિકાયના આરંભના વિષયમાં ભગવાન શ્રી મહાવીર સ્વામીએ  
સમ્યક્ ઉપદેશ આપ્યો છે. અર્થાત્ ભગવાને બતાવ્યું છે કે-કર્મબંધને નષ્ટ કરવા માટે

જ્ઞાઽવશ્યં શરણીકરણીયેતિ ભગવતા પ્રતિબોધિતમિતિ ભાવઃ ।

ઉપભોગદ્વારમ્—

લોકઃ કસ્મૈ પ્રયોજનાય વનસ્પતિકાયમુપદયતી ? ત્યાહ—‘ અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્યે ’-ત્યાદિ । અસ્યૈવ નશ્વરસ્ય જીવિતસ્ય=જીવનસ્ય સુખાર્થમ્= આહાર-વસ્ત્ર-પાત્ર-માલ્ય-ગન્ધ-ચૂર્ણ-તાલવૃન્તા-ઝગલા-સ્વટ્વા-પલ્યઙ્ક-શિબિકા-શકટ-હલ-મુસલ-પીઠ-ફલક-સિંહાસન-દણ્ડ-લકુટ-કપાટ-વીણા-શાલભઙ્ગિકા-નિર્માણ-તાપન-પ્રતાપન-પ્રકાશને-ન્ધન-તૈલાદ્યર્થમિત્યર્થઃ । તથા-પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય, પરિવન્દન=પ્રશંસા, તદર્થ, યથા-કશ્ચિત્ સ્વપ્રશંસાર્થમ્ ઉપવનાદૌ પત્રાદિકર્તનકલાકૌશલેન વૃક્ષલતાદીનાં પત્રાદીનિ તથા હેદયતિ યથા તત્કર્તનેન લિખ્ય જીવ કો પરિજ્ઞા (ઉપદેશ) અવશ્ય સ્વીકાર કરના ચાહિયે ।

ઉપભોગદ્વાર—

લોગ કિસ પ્રયોજન સે વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરતે હૈં ? યહ બતલાતે હૈં— ઇસી નાશશીલ જીવન કે સુખ કે લિખ અર્થાત્ આહાર, વસ્ત્ર, પાત્ર, માલા ગંધ, ચૂર્ણ, તાલવૃન્ત (પંચા), આગલ, સ્વાટ, પલંગ, પાલકી, ગાડી, હલ, મૂસલ, પીઠા, (વાજોટ) ફલકો (પાટ), સિંહાસન, ડંડા, લકડી, કિવાડ, વીણા, પુતલી આદિ બનવાને કે લિખ, તપાના, વિશેષ તપાના, પ્રકાશન, ઈંધન, ઓર તૈલ આદિ કે પ્રયોજન સે વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરતે હૈં । તથા પ્રશંસા કે લિખ બી વનસ્પતિ કી હિંસા કરતે હૈં, જૈસે—કોઈ પુરુષ અપની પ્રશંસા કે લિખ બગીચા આદિ મેં પત્તા વગૈરહ કાટને કી કલા મેં કુશલતા પ્રકટ કરને કે અભિપ્રાય સે વૃક્ષ લતા વગૈરહ કો ઇસ પ્રકાર કાટતા હૈ જિસસે ડસમેં

જીવને પરિજ્ઞા (ઉપદેશ)ને અવશ્ય સ્વીકાર કરવો જોઈએ.

ઉપભોગદ્વાર—

લોક શું પ્રયોજનથી વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે ? તે બતાવે છે—આ નાશ પામવાવાળા જીવના સુખ માટે, અર્થાત્—આહાર, વસ્ત્ર, પાત્ર, માલા, ગંધ, ચૂર્ણ, પંખા આગરિયો, ખાટ, પલંગ, પાલખી, ગાડી, હલ, મૂસલ, ખાલેક, પાટ, સિંહાસન, ડંડા, લાકડી, કમાડ, વીણા, પુતલી વગેરે બનાવવા માટે, તપાવવું વિશેષ તપાવવું, પ્રકાશન, ઈન્ધન—(બાળવાના લાકડા) અને તૈલ આદિના પ્રયોજનથી વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે. તથા પ્રશંસા માટે પણ વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે, જેમકે—કોઈ પુરુષ પોતાની પ્રશંસા માટે બગીચા આદિમાં પાંદડા વગેરે કાપવાની કલામાં કુશળતા બતાવવાના અભિપ્રાયથી

ગજાશ્વમૃગવ્યાગ્રસિંહાદીનાં સ્વરૂપં દધાના વૃક્ષાદયસ્તસ્યોપવનાદેર્વિશિષ્ટશોભાં  
જનયન્તિ ।

માનનં=જનસત્કારસ્તદર્થ, યથા-સ એવ પત્રાદિકર્તનકલાકુશલો  
માલાકારઃ સ્વમાનનાર્થ કર્તરીશ્વજ્ઞેણ વૃક્ષલતાદીનાં પત્રાદિકં કૃન્તતિ । પૂજનં=  
વસ્ત્રરત્નાદિલાભસ્તદર્થમ્, યથા-દેવપ્રતિમાદર્થ પત્રપુષ્પફલાદીનાં ત્રોટને । તથા-  
જાતિમરણમોચનાય=જન્મમરણબન્ધમોચનાર્થ, યથા-મુક્તિકામન પૂજાયાં  
પુષ્પપત્રાદિસમુચ્છેદને, તથા-દુઃસ્વપ્રતિઘાતહેતું=વ્યાધિશમનાદર્થમ્-ઓષધિ-  
વૃક્ષલતાદીનાં મૂલકન્દશાખાપત્રપુષ્પફલાદિભેદને, સ જીવનસુખાદ્યર્થી સ્વયમેવ

હાથી, ઘોડા, હિરન, વાઘ, સિંહ આદિ કા આકાર બન જાતા હૈ ઓર ઇસસે ડસ વગીચે કી  
સુન્દરતા વઢતી હૈ, ઇસા જાનકર કરતા હૈ ।

જનસત્કાર કે લિખે મી વનસ્પતિ કી હિંસા કી જાતી હૈ, જૈસે-પત્તા વગૈરહ કાટને  
મેં કુશલ વહી પૂર્વોક્ત માલી કૈંચી સે વૃક્ષોં યા લતાઓં કે પત્તા આદિ કાટતા હૈ । તથા પૂજન  
કે લિખે અર્થાત્ વસ્ત્રોં ઓર રત્નોં કે લિખે મી વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરતે હૈ । જૈસે-દેવ  
પ્રતિમા આદિ કે લિખે પત્ર, ફૂલ, ફલ તોડને મેં ।

જન્મ મરણ સે છુટકારા પાને સે લિખે મી ઉક્ત હિંસા કી જાતી હૈ । જૈસે-મુક્તિ કી  
ઈચ્છા સે પૂજા કે લિખે ફૂલ-ફલ તોડને મેં । દુઃસ્વોં કા પ્રતીકાર કરને કે લિખે મી યહ હિંસા  
કી જાતી હૈ । જૈસે-રોગ મિટાને કે લિખે ઓષધિ, વૃક્ષ, લતા, મૂલ, કન્દ, શાખા, પત્ર, ફૂલ  
આદિ તોડને મેં હિંસા કી જાતી હૈ ।

વૃક્ષ લતા વગેરેને એવા પ્રકારે કાપે છે કે તેમાં હાથી, ઘોડા, હરણ, વાઘ, સિંહ આદિનો  
આકાર બની જાય છે, અને તેથી એ બગીચાની સુંદરતા વધે છે. એવું સમજીનેજ કરે છે.

જન-સત્કાર માટે પણ વનસ્પતિની હિંસા કરવામાં આવે છે, જેમ-પાંદડાં  
વગેરેને કાપવામાં કુશલ આગળ કહેલો તેજ માળી કૈંચી (કાતર)થી વૃક્ષો અથવા  
લતાઓનાં પત્તાં આદિ કાપે છે. તથા પૂજન માટે અર્થાત્ વસ્ત્રો અને રત્નોને માટે  
પણ વનસ્પતિકાયની હિંસા કરે છે, જેમ-દેવપ્રતિમા આદિ માટે પત્ર ફૂલ ફલ તોડવામાં.

જન્મ-મરણથી છુટવા માટે પણ પૂર્વ કહેલી હિંસા કરવામાં આવે છે, જેમકે-  
મુક્તિની ઇચ્છાથી પૂજા માટે ફૂલ ફૂલ તોડવામાં.

દુઃખોનો પ્રતિકાર કરવા માટે પણ એ હિંસા કરવામાં આવે છે. જેમકે-રોગનિવારણ  
કરવા માટે ઔષધી, વૃક્ષ, લતા, મૂલ, કન્દ, શાખા, પત્ર, ફૂલ આદિ તોડવામાં હિંસા કર-  
વામાં આવે છે.



वनस्पतिशस्त्रं=वनस्पतिकायोपमर्दकं द्रव्यभावशस्त्रं समारम्भते=व्यापारयति । अन्यैर्वा वनस्पतिशस्त्रं समारम्भयति । अन्यान् वा वनस्पतिशस्त्रं समारम्भमाणान् समनुजानाति=अनुमोदयति ।

तत्=वनस्पतिकायसमारम्भ, तस्य वनस्पतिसमारम्भ कुर्वतः कारयितुः अनुमोदयितुश्च अहिताय भवति । तथा-तत् तस्य अबोधये=सम्यक्त्वालाभाय भवति । ॥ सू० ६ ॥

येन तु तीर्थङ्करादिसमीपे वनस्पतिकायस्वरूपं परिज्ञातं, स एवं विभावयतीत्याह—‘से तं.’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

સે તં સંબુઝ્ઝમાણે આયાણીયં સમુદ્ઘાય સોચા સ્વલ્ભ મગવઓ અણ-

इस प्रकार जीवन को सुखी बनाने का अभिलाषी वह पुरुष वनस्पतिकाय की हिंसा करनेवाले द्रव्य और भावशस्त्र का स्वयं उपयोग करता है, दूसरों से उपयोग कराता है और वनस्पतिशस्त्र का उपयोग करने वाले दूसरों का अनुमोदन करता है ।

वनस्पतिकाय का वह आरंभ, आरंभ करने वाले, कराने वाले और अनुमोदन करने वाले के अहित के लिए होता है और सम्यक्त्व की अप्राप्ति का कारण बनता है ॥ सू० ६ ॥

तीर्थंकर आदि के निकट वनस्पतिकाय का स्वरूप जिसने जान लिया है, वह इस प्रकार विचार करता है—‘से तं.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—વહ પુરુષ મગવાન્ યા અનગારો સે સુનકર સમજ્ઞ-બૂઝકર સંયમ

એ પ્રમાણે જીવનને સુખી બનાવવાના અભિલાષી તે પુરુષ વનસ્પતિકાયની હિંસા કરવાવાળા દ્રવ્ય અને ભાવ શસ્ત્રનો સ્વયં ઉપયોગ કરે છે, બીજા પાસે ઉપયોગ કરાવે છે અને વનસ્પતિશસ્ત્રનો ઉપયોગ કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન આપે છે.

વનસ્પતિકાયનો આ આરંભ, આરંભ કરવાવાળાને, કરાવવાવાળાને અને અનુમોદન કરવાવાળાને અહિત માટે છે અને સમ્યક્ત્વની અપ્રાપ્તિનું કારણ બને છે. ॥ સૂ. ૬ ॥

તીર્થંકર આદિના સમીપે વનસ્પતિકાયનું સ્વરૂપ જોણે બાણી લીધું છે. તે આ પ્રમાણે વિચાર કરે છે—‘સે તં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—તે પુરુષ લગવાન અથવા અણુગારો પાસેથી સાંભળી-સમજ-બુઝીને

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય૦ ૧ ઉ. ૫ સૂ. ૬ વનસ્પતિવિરાધનાદુષ્કલમ્ ૬૩૩

ગારાણં વા અંતિએ ઇહમેગેસિં ણાયં ભવઈ-એસ સ્વલુ ગંથે, એસ સ્વલુ મોહે, એસ સ્વલુ મારે, એસ સ્વલુ નરણે । ઇચ્છત્થં ગઢિએ લોએ, જમિણં વિરૂવરૂવેહિં સત્થેહિં વણસ્સઈ-કમ્મસમારંભેણં વણસ્સઈસત્થં સમારંભમાણે અણે અણેગરૂવે પાણે વિહિંસઈ ॥સૂ૦ ૭॥

છાયા—

સ તત્ સંબુદ્ધમાન આદાનીયં સમુત્થાય શ્રુત્વા સ્વલુ ભગવતઃ અનગારાણાં વા અન્તિકે, ઇહૈકેષાં જ્ઞાતં ભવતિ-એસ સ્વલુ ગ્રન્થઃ, એસ સ્વલુ મોહઃ, એસ સ્વલુ મારઃ, એસ સ્વલુ નરકઃ । ઇત્યર્થં ગૃહ્ણો લોકઃ, યદિમં વિરૂપરૂપૈઃ શસ્ત્રઃ વનસ્પતિકર્મસમારમ્ભેણ વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારભગાણઃ અન્યાન્ અનેકરૂપાન્ પ્રાણાન્ વિહિનસ્તિ ॥ સૂ૦ ૭ ॥

ટીકા—યઃ સ્વલુ ભગવતઃ=તીર્થંકરસ્ય, અનગારાણાં=તદીયશ્રમણનિર્ગ્રન્થાનાં વા અન્તિકે શ્રુત્વા, આદાનીયમ્=ઉપાદેયસર્વસાવધયોગવિરતિરૂપં ચારિત્રં, સમુત્થાય=અઙ્ગીકૃત્ય વિહરતિ, સ તત્=વનસ્પતિકાયસમારમ્ભણં સંબુદ્ધમાનઃ=અહિતાબોધિજનકત્વેન વિજ્ઞાતા સન્ એવં વિભાવયતિ—‘એવં સ્વલુ૦’ ઇત્યાદિ-।

પ્રહણ કરકે વિચરતા હૈ । વહ ઇસ પ્રકાર સમજતા હૈ—વનસ્પતિકાય કા આરંભ ગ્રંથ હૈ, યહ મોહ હૈ, યહ માર હૈ, યહ નરક હૈ । ગૃહ્ણ લોક ઇસકે લિએ નાના પ્રકાર કૈ શસ્ત્રો સૈ વનસ્પતિકાય કા આરંભ કરકે, શસ્ત્ર કા પ્રયોગ કરતે હુએ, ઓર મી અનેક પ્રાણિયો કા ઘાત કરતે હૈ ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકાર્થ—જો પુરુષ તીર્થંકર સૈ યા અનેક શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો સૈ સર્વસાવધ ત્યાગ રૂપ સંયમ સ્વરૂપ સમજકર ઓર ઉસે અંગીકાર કરકે વિચરતા હૈ વહ વનસ્પતિકાય કૈ આરંભ કો અહિતકર ઓર અબોધિજનક સમજકર ઇસ પ્રકાર વિચાર કરતા હૈ:—‘એવં સ્વલુ૦’ ઇત્યાદિ ।

સંયમ અહણુ કરીને વિચરે છે. તે આ પ્રમાણે સમજે છે—વનસ્પતિકાયનો આરંભ ગ્રંથ છે, એ મોહ છે, એ માર છે, એ નરક છે. ગૃહ્ણ લોક એ માટે નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી વનસ્પતિકાયનો આરંભ કરીને શસ્ત્રનો પ્રયોગ કરતા થકા બીજાં પણ અનેક પ્રાણીઓનો ઘાત કરે છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

ટીકાર્થ—જો પુરુષ તીર્થંકરથી અથવા તેમના શ્રમણ નિર્ગ્રન્થો પાસેથી સર્વ-સાવધ (કર્મના) ત્યાગરૂપ સંયમના સ્વરૂપને સમજી ને અને તેને અંગીકાર કરીને વિચરે છે, તે વનસ્પતિકાયના આરંભને અહિતકર અને અબોધિજનક સમજી આ પ્રમાણે વિચાર કરે છે—‘એવં સ્વલુ૦’ ઇત્યાદિ.

इह=मनुष्यलोके एकेषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेशसंज्ञातसम्यग्बोधवैराग्याणामा-  
त्मार्थिनामेवं ज्ञातं=विदितं भवति । किं ज्ञातं भवतीत्याकाङ्क्षायामाह—‘एष खलु०’  
इत्यादि ।

एषः=वनस्पतिशस्त्रसमारम्भः खलु=निश्चयेन ग्रन्थः=कर्मबन्धः, कारणे कार्यो-  
पचारात् कारणभूतो वनस्पतिशस्त्रसमारम्भ एव कर्मबन्धरूपो ग्रन्थ इत्युच्यते ।  
एवमग्रेऽपि बोध्यम् । तथा-एषः वनस्पतिशस्त्रसमारम्भः मोहः=विपर्यासः-  
अज्ञानम् । तथा-एष एव मारः=मरणं-निगोदादिमरणरूपः । तथा-एष एव नरकः=  
नारकजीवानां दशविधयातनास्थानम् ।

इस मनुष्य लोक में जिन्हें श्रमण निर्ग्रन्थों के उपदेश से सम्यग्ज्ञान और वैराग्य उत्पन्न हो गया है, उन्हीं को यह विदित होता है । क्या विदित होता है ? इस शंका का समाधान करने के लिए आगे कहते हैं—‘ एष खलु ग्रन्थ० ’ इत्यादि ।

वनस्पतिकाय का आरंभ निश्चय से ग्रन्थ अर्थात् कर्मबंधरूप है । कारण में कार्य का उपचार करके आरंभ को कर्मबंध कहा है । वस्तुतः वह कर्मबंध का कारण है । इसी प्रकार आगे भी समझ लेना चाहिए ।

वनस्पतिकाय का समारंभ मोह अर्थात् अज्ञान है—अज्ञानजनक है । यह मार है अर्थात् निगोद आदि में मृत्यु का कारण है । यह नरक है अर्थात् नारकी जीवों को दश प्रकार की यातना का कारण है ।

આ મનુષ્યલોકમાં જેને નિર્ગ્રન્થોના ઉપદેશથી સમ્યગ્જ્ઞાન, અને વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થઈ ગયો છે. તેઓ આ જાણે છે. શું જાણે છે ? એ શંકાનું સમાધાન કરવા માટે આગળ કહે છે, ‘ એષ ખલુ ગ્રન્થ૦ ’-ઇત્યાદિ.

વનસ્પતિકાયનો આરંભ નિશ્ચય ગ્રંથ છે—અર્થાત્ કર્મબંધરૂપ છે, કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને આરંભને કર્મબંધ કહે છે, વસ્તુતઃ તે કર્મબંધનું કારણ છે. એ પ્રમાણે આગળ પણ સમજી લેવું જોઈએ.

વનસ્પતિકાયનો સમારંભ મોહ અર્થાત્ અજ્ઞાન છે—અજ્ઞાનજનક છે, તે માર છે, અર્થાત્ નિગોદ આદિમાં મૃત્યુનું કારણ છે. તે નરક છે, અર્થાત્ નારકી જીવોને દસ પ્રકારની યાતનાઓનું કારણ છે.



इत्यर्थम्=एतदर्थं, कर्मबन्ध-मोह-मरण-नरकरूपं घोरदुःखफलं प्राप्यापि पुनः पुनरेतदर्थमेव लोकः=अज्ञानवशवर्ती जीवः, गृह्यः=लिप्सुरस्ति । यद्वा-गृह्यः=भोगाभिलाषी, लोकः=संसारि जीवः, इत्यर्थम्=एतदर्थमेव=ग्रन्थ-मोह-मरणनरकार्थमेव प्रवर्तत इति शेषः ।

लोकः पुनः पुनः कर्मबन्धाद्यर्थमेव प्रवर्तत इति यदुक्तं, तत् कथं ज्ञायते ? इति जिज्ञासायामाह—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद्, विरूपरूपैः=नानाविधैः शस्त्रैः पूर्वोक्तप्रकारैः, वनस्पतिकर्मसमारम्भेण=वनस्पतिकायोपमर्दनरूपसावध्यव्यापारेण, इमं=वनस्पतिकायं विहिनस्ति । तथा वनस्पतिशस्त्रं समारभमाणः=व्यापारयन् अन्यान्=पृथिवीकायादीन् अनेकरूपान्=त्रसान् स्थावरांश्च तदाश्रितान् प्राणान्=प्राणिनः विहिनस्ति=उपमर्दयति ॥सू० ७॥

અજ્ઞાની જીવ કર્મબંધ, મોહ, મરણ ઓર નરક રૂપ ઇન ફલોં કો પ્રાપ્ત કરકે મો વાર-વાર ઇસી મેં ગૃહ્ય હોતે હૈં । અથવા ભોગ કે અભિલાષી પુરુષ ઇસી ગ્રંથ, મોહ, મરણ ઓર નરક કે લિખે હી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં ।

લોગ પુન-પુનઃ કર્મબંધ આદિ કે લિખે હી પ્રવૃત્તિ કરતે હૈં’ યહ જો કથન કિયા હૈ સો કૈસે જ્ઞાત હુઆ ? ઇસ જિજ્ઞાસા કે હોને પર કહતે હૈં—‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ ।

કયોં કિ નાના પ્રકાર કે પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં દ્વારા વનસ્પતિકાય કી હિંસા કરને વાલે લોગ સાવધ વ્યાપાર :સે વનસ્પતિકાય કા ઘાત કરતે હૈં । તથા વનસ્પતિકાય કા આરંભ કરતે હુએ અન્ય પૃથ્વીકાય આદિ અનેક પ્રકાર કે તદાશ્રિત ત્રસ ઓર સ્થાવર જીવોં કી ઘાત કરતે હૈં ॥ સૂ. ૭ ॥

અજ્ઞાની જીવ કર્મબંધ, મોહ, મરણ અને નરકરૂપ એ ફળોને પ્રાપ્ત કરીને પણ વાર-વાર એમાં ગૃહ્ય થાય છે. અથવા ભોગના અભિલાષી પુરુષ આ ગ્રંથ, મોહ, મરણ અને નરક માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે.

લોક પુનઃ પુનઃ (ફરી-ફરી) કર્મબંધ વગેરે માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે; એ કથન જે કયું છે, તે કેવી રીતે બાણવામાં આવ્યું ? એ જિજ્ઞાસા થવાથી કહે છે. ‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ.

કેમકે નાના પ્રકારનાં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રો દ્વારા વનસ્પતિ કાયની હિંસા કરવાવાળા લોક સાવધ વ્યાપારથી વનસ્પતિકાયનો ઘાત કરે છે, તથા વનસ્પતિકાયનો આરંભ કરતા થકા, અન્ય પૃથ્વીકાય આદિ અનેક પ્રકારના તદાશ્રિત ત્રસ અને સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરે છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

વનસ્પતિકર્મસમારમ્ભફલપ્રદર્શનપુરસ્સરં વનસ્પતિસમારમ્ભેડનેકત્રસસ્થાવરજીવ-  
હિંસાડવશ્યમ્ભાવિનીતિ પ્રદર્શિતમ્, સંપ્રતિ વનસ્પતેઃ સચેતનત્વશઙ્કાયાં તસ્ય મનુષ્ય-  
શરીરવત્ સચેતનત્વમસ્તીતિ પ્રદર્શયતિ—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

યદ્વા—યથા મનુષ્યશરીરે ચૈતન્યં સુગમં, તથા વનસ્પતિકાયેડપિ, તસ્માદ્  
વનસ્પતેર્મનુષ્યશરીરસાદૃશ્યં દર્શયતિ સૂત્રકારઃ—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

સે બેમિ—ઇમંપિ જાદ્ધમ્મયં એયંપિ જાદ્ધમ્મયં, ઇમંપિ બુદ્ધિધમ્મયં એયંપિ  
બુદ્ધિધમ્મયં, ઇમંપિ ચિત્તમંતયં એયંપિ ચિત્તમંતયં, ઇમંપિ છિણ્ણં મિલાહ એયંપિ

વનસ્પતિકાય કે આરંભ કા ફલ પ્રગટ કરકે યહ મી પ્રદર્શિત કર દિયા ગયા હૈ  
કિ—વનસ્પતિકાય કા આરંભ કરને સે અન્ય ત્રસ ઓર સ્થાવર જીવોં કી હિંસા મી અવશ્ય  
હોતી હૈ । અબ વનસ્પતિકાય કે સચેતન હોને મેં શંકા હોને પર ઉસકી મનુષ્ય શરીર કે સમાન  
સચેતનતા સૂત્રકાર પ્રકટ કરતે હૈ—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

અથવા—જૈસે મનુષ્યશરીર મેં ચૈતન્ય કો સમજના સુગમ હૈં ઉસી પ્રકાર  
વનસ્પતિકાય મેં મી । અત એવ વનસ્પતિ મનુષ્યશરીર કે સમાન હૈ, યહ બાત સૂત્રકાર કહતે  
હૈ—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—વહ મૈં કહતા હૂં—યહ (મનુષ્યશરીર) જન્મશીલ હૈ, વહ (વનસ્પતિશરીર) મી  
જન્મશીલ હૈ । યહ વૃદ્ધિશીલ હૈ, વહ મી વૃદ્ધિશીલ હૈ । યહ સચિત્ત હૈ વહ મી  
સચિત્ત હૈ । છેદને પર યહ મુરજ્ઞા જાતા હૈ, વહ મી છેદને પર મુરજ્ઞા જાતા હૈ ।

વનસ્પતિકાયના આરંભનું ફળ પ્રગટ કરીને એ પણ પ્રદર્શિત કરી આપ્યું છે કે—  
વનસ્પતિકાયનો આરંભ કરવાથી અન્ય ત્રસ અને સ્થાવર જીવોની હિંસા પણ અવશ્ય  
થાય છે. હવે વનસ્પતિકાયની સચેતનતા હોવામાં શંકા હોવાથી તેની સચેતનતા  
મનુષ્યશરીરની સચેતનતા સમાન સૂત્રકાર પ્રગટ કરે છે—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ.

અથવા—જેમ મનુષ્ય શરીરમાં ચૈતન્યને સમજવામાં સુગમતા છે, તે પ્રમાણે  
વનસ્પતિકાયમાં પણ સુગમતા છે. એ માટે વનસ્પતિ મનુષ્યશરીરના સમાન છે. એ વાત  
સૂત્રકાર કહે છે—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—તે હું કહું છું—આ (મનુષ્ય શરીર) જન્મશીલ છે તે (વનસ્પતિ-  
શરીર) પણ જન્મશીલ છે, આ વૃદ્ધિશીલ છે; તે પણ વૃદ્ધિશીલ છે, આ સચિત્ત છે—  
છેદવાથી તે સૂકાઈ જાય છે, તે પણ છેદવાથી સૂકાઈ જાય છે. આ પણ આ હારક છે, તે

આચારચિન્તામણિ-ટીકાઅધ્ય. ૧૩. ૫ સૂ. ૮ મનુષ્યશરીરવનસ્પતિશરીરયોઃ સામ્યમ્ ૬૩૭

છિન્નં મિલાઈ, ઇમંપિ આહારગં, એયંપિ આહારગં, ઇમંપિ અણિચયં એયંપિ અણિચયં,  
ઇમંપિ અસાસયં એયંપિ અસાસયં, ઇમંપિ ચઓવચઇયં એયંપિ ચઓવચઇયં, ઇમંપિ વિપ-  
રિણામધમ્મયં એયંપિ વિપરિણામધમ્મયં ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—

સ બ્રવીમિ-ઇદમપિ જાતિધર્મકમ્ એતદપિ જાતિધર્મકમ્, ઇદમપિ વૃદ્ધિધર્મકમ્  
એતદપિ વૃદ્ધિધર્મકમ્, ઇદમપિ ચિત્તવત્ એતદપિ ચિત્તવત્, ઇદમપિ છિન્નં મ્લાયતિ  
એતદપિ છિન્નં મ્લાયતિ, ઇદમપિ આહારકમ્ એતદપિ આહારકમ્, ઇદમપિ અનિત્યકમ્  
એતદપિ અનિત્યકમ્, ઇદમપિ અશાશ્વતમ્ એતદપિ અશાશ્વતમ્, ઇદમપિ ચયોપચયિકમ્  
એતદપિ ચયોપચયિકમ્, ઇદમપિ વિપરિણામધર્મકમ્ એતદપિ વિપરિણામધર્મકમ્  
॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકા--

येन साक्षाद्भगवनन्मुखाद् वनस्पतेः सचेतनत्वं श्रुतं सोऽहं ब्रवीमि=  
यथा भगवता कथितं, तथा कथयामीत्यर्थः । प्रतिज्ञातमर्थं प्रदर्शयति-इदमपीत्यादि ।

यह भी आहारक है, वह भी आहारक है । यह भी अनित्य है, वह भी अनित्य है । यह भी  
अशाश्वत है, वह भी अशाश्वत है । यह भी चय-उपचय वाला है, वह भी चय-उपचय  
वाला है । यह भी विविध प्रकार से परिणमनशील है और वह भी विविध प्रकार से  
परिणमनशील है ॥ सू. ८ ॥

टीકાર્થ—જિસને સાક્ષાત્ ભગવાન્ કે મુખ સે વનસ્પતિકાય કી સચેતનતા  
સુની હૈ વહી મૈં કહતા હૂં—જૈસા ભગવાન્ ને કહા હૈ વૈસા હી મૈં કહતા હૂં । યહી વાત કહતે  
હૈ—‘ઇદમપિ૦’ ઇત્યાદિ ।

પણ આહારક છે. આ પણ અનિત્ય છે. તે પણ અનિત્ય છે. આ પણ અશાશ્વત છે, તે  
પણ અશાશ્વત છે. આ પણ ચય-ઉપચયવાળા છે, તે પણ ચય-ઉપચયવાળા છે. આ પણ  
વિવિધ પ્રકારથી પરિણમનશીલ છે, અને તે પણ વિવિધ પ્રકારથી પરિણમન શીલ છે. ॥સૂ. ૮॥

ટીકાર્થ—જેણે સાક્ષાત્ ભગવાનના મુખથી વનસ્પતિકાયની સચેતનતા સાંભળી છે. તેજ  
હું કહું છું—જેવું ભગવાને કહ્યું છે, તેવું જ હું કહું છું, એ વાત કહે છે—‘ઇદમપિ.’ ઇત્યાદિ.



इह पुरुषस्योपदेशयोग्यतया सामर्थ्येन संनिहितत्वात्तच्छरीरं संनिकृष्टवा-  
चिनेदमशब्देन परामृश्यते । इदमपि मनुष्यशरीरं, यद्वा-सामान्यरूपेण त्रसकाये  
चैतन्यस्य सुज्ञेयत्वात् इदं=त्रसशरीरं, जातिधर्मकं-जातिः-जननं, तद्धर्मकं-जन-  
नस्वभावं, एतदपि=वनस्पतिशरीरमपि जातिधर्मकं=मनुष्यशरीरवद् वनस्पति-  
शरीरमपि जननस्वभावकमस्तीत्यर्थः । तथा इदमपि मनुष्यशरीरं वृद्धिधर्मकं=  
बालकौमाराद्यवस्थामाश्रित्य वर्धनस्वभावम्, एतदपि वनस्पतिशरीरं अङ्कुरकिसलय-  
पत्रस्कन्धशाखाप्रशाखादिना वर्धनशीलम् । इदमपि मनुष्यशरीरं चित्तवत्=चेतना-

‘इदम्’ શબ્દ કા પ્રયોગ સમીપવર્તી વસ્તુ કે લીધે કીયા જાતા હૈ । મનુષ્ય હી ઉપદેશ કા પાત્ર હૈ ઓર ઉસકા શરીર મી અત્યન્ત સમીપ હૈ અતઃ મનુષ્ય કે શરીર કો ‘इदम्’ શબ્દદ્વારા નિર્દિષ્ટ કીયા ગયા હૈ । અથવા ત્રસ જીવ કે શરીર મેં ચૈતન્ય કો સમજના સુગમ હૈ, ઇસ કારણ ‘इदम्’ કા અર્થ મનુષ્યશરીર કે બજાય ત્રસ જીવ કા શરીર સમજ લેના ઇહીયે ।

यह मनुष्यशरीर या त्रस जीव का शरीर उत्पन्न होने का स्वभाव वाला है, उसी प्रकार वनस्पति का शरीर भी उत्पन्न होने का स्वभाव वाला है । तथा मनुष्य शरीर वृद्धिशील है—बाल, कुमार आदि अवस्थाओं में बढ़ता जाता है उसी प्रकार वनस्पति—शरीर भी अंकुर, किसलय, पत्र, स्कंध, शाखा और प्रशाखा आदि रूप से बढ़ता जाता है । मनुष्यशरीर चेतनावान् है उसी प्रकार वनस्पति का शरीर भी चेतनावान् है,

‘इदम्’ શબ્દનેા પ્રયોગ સમીપવર્તી વસ્તુ માટે કરવામાં આવે છે. મનુષ્યજ ઉપદેશને પાત્ર છે, અને તેનું શરીર અત્યન્ત સમીપ છે. એ કારણથી મનુષ્યના શરીરને ‘इदम्’ શબ્દદ્વારા નિર્દિષ્ટ કર્યું છે. અથવા ત્રસ જીવના શરીરમાં ચૈતન્યને સમજવું સુગમ છે. એ કારણથી ‘इदम्’નેા અર્થ મનુષ્ય શરીરના બદલે ત્રસ જીવનું શરીર સમજ લેવું જોઈ એ.

આ મનુષ્યશરીર અથવા ત્રસજીવનું શરીર ઉત્પન્ન થવાના સ્વભાવવાળું છે, તે પ્રમાણે વનસ્પતિનું શરીર પણ ઉત્પન્ન થવાના સ્વભાવવાળું છે. તથા મનુષ્યશરીર વૃદ્ધિ-શીલ છે—બાલકુમાર, આદિ અવસ્થાઓમાં વધતું જાય છે, તે પ્રમાણે વનસ્પતિશરીર પણ અંકુર, કિસલય—કુમળાં, પાન, પત્ર, સ્કંધ, શાખા અને પ્રશાખા આદિરૂપથી વધે જાય છે, મનુષ્યશરીર ચેતનાવાન છે, તે પ્રમાણે વનસ્પતિનું શરીર પણ ચેતનાવાન છે.

**આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧૩. ૫ સુ. ૮ મનુષ્યશરીરવનસ્પતિશરીરયોઃસામ્યમ્ ૬૩૯**

યુક્તમ્, એતદપિ=વનસ્પતિશરીરં ચિત્તવત્=ચેતનાવત્, લજ્જાલુધાત્ર્યાદીનાં સંકોચ-વિકાસ-સ્વાપા-વબોધદર્શનાત્ । इदमपि=मनुष्यशरीरं हस्तादि छिन्नं सत् म्लायति=भुष्यति, એતદપિ=વનસ્પતિશરીરમપિ પલ્લવફલપુષ્પાદિ છિન્નં સત્ મ્લાયતિ=શુષ્કં ભવતિ । इदमपि आहारकम्=क्षीरौदनाद्याहारकरणशीलं, तथैव एतदपि=वनस्पतिशरीरं भूजलाद्याहारभोजि, न चैतदाहारकत्वमचेतनानां दृष्टम् ।

તથા इदमपि=मनुष्यशरीरम् अनित्यकं= न सर्वदाऽवस्थायि, एतदपि वनस्पतिशरीरम् अनित्यकम् आयुषोऽवधिसन्वात्, वनस्पतिशरीरस्य हि उत्कृष्ट-मायुर्दशवर्षसहस्राणि । तथा-इदमपि=मनुष्यशरीरम् अशाश्वतं=प्रतिक्षणमावीचीमर-

વયોં કિ લજ્જાવંતી ધાત્રી આદિ વનસ્પતિયોં મેં સંકોચ, વિકાસ, સ્વાપ (નિદ્રા) ઔર અવબોધ (જાગના) દેસ્વા જાતા હૈ । हाथ आदि मनुष्यशरीर छेदने पर सुरक्षा जाता है उसी प्रकार पत्ता, फूल, फल आदिरूप वनस्पतिशरीर भी छेदने पर सुरक्षा जाता है । यह मनुष्यशरीर दूध और ओदन आदि का आहार करता है और वनस्पति शरीर भी पृथ्वी, जल आदि का आहार करता है । आहार करने कि क्रिया अचेतन में नहीं देखी जाती ।

મનુષ્યશરીર અનિત્ય હૈ-સદા ઠહરને વાલા નહીં હૈ, इसी प्रकार वनस्पतिशरीर भी अनित्य है, वयों कि उसकी आयु की सीमा है । वनस्पतिशरीर की उत्कृष्ट आयु दस हजार वर्ष की है ।

મનુષ્ય શરીર અશાશ્વત હૈ-આવીચિમરણ પ્રતિક્ષણ હોતા રહતા હૈ, और वनस्पति

કેમકે લજ્જાવંતી-(રીસામણી), ધાત્રી આદિ વનસ્પતિઓમાં સંકોચાણું, વિકાસ, નિદ્રા અને જાગણું જોવામાં આવે છે.

હાથ-આદિ મનુષ્યશરીર છેદવાથી સૂકાઈ જાય છે. તે પ્રમાણે પાંદડા, ફલ, ફૂલ આદિ રૂપ વનસ્પતિશરીર પણ છેદવાથી સૂકાઈ જાય છે. આ મનુષ્યશરીર દૂધ અને ભાત વગેરેનો આહાર કરે છે, તેમ વનસ્પતિશરીર પણ પૃથ્વી, જલ આદિનો આહાર કરે છે, આહાર કરવાની ક્રિયા અચેતનમાં જોવામાં આવતી નથી.

મનુષ્ય શરીર અનિત્ય છે. હમેશાં સ્થિર રહેવાવાળું નથી, એ પ્રમાણે વનસ્પતિ-શરીર પણ અનિત્ય છે. કેમકે-તેની આયુષ્યની સીમા છે. વનસ્પતિશરીરની ઉત્કૃષ્ટ આયુ દસ હજાર વર્ષની છે.

મનુષ્યશરીર અશાશ્વત છે-આવીચિમરણ પ્રતિક્ષણ થતું રહે છે, તેમ

णेन मरणात्, एतदपि=वनस्पतिशरीरम् अशाश्वतं=प्रतिक्षणमरणशीलम् । यथा-  
इदमपि=मनुष्यशरीरं चयापचयिकम्=इष्टानिष्टाहारादिकं प्राप्य वृद्धिहासशीलम्,  
तथा-एतदपि=वनस्पतिशरीरं चयापचयिकम्=अनुकूल-प्रतिकूलजलवातादिना  
वृद्धिहासस्वभावम् । यथा-इदमपि मनुष्यशरीरं विपरिणामधर्मकं=विविधपरिणाम-  
शीलम्, तत्तद्व्याधिवशाद् उदरवृद्धिपाण्डुकृशत्वादिरूपं, रसायनस्नेहाद्युपचार-  
वशाद् विशिष्टरूपबलोपचयादिरूपं वा विविधपरिणामं प्राप्नोति तथा-एतदपि=  
वनस्पतिशरीरं विपरिणामधर्मकं=व्याधिवशात् पत्रपुष्पफलादीनां वर्णादिष्वन्यथा-  
भावदर्शनात्, विशिष्टदोहदप्रदानेन कदाचित्तेषामुपचयदर्शनाद् विविधपरिणाम-  
शीलम् । यथा जननस्वभावादिधर्माणां समुदायः सचेतने मनुष्यशरीरे

શરીર મી અશાશ્વત હૈ—ઉસકા મી પ્રતિક્ષણ મરણ હોતા હૈ । મનુષ્યશરીર ઇષ્ટાનિષ્ટ આહાર  
આદિ કો પાકર બઢતા—ઘટતા રહતા હૈ, ઉસી પ્રકાર વનસ્પતિ કા શરીર મી અનુકૂલ  
જલ—વાયુ સે બઢતા ઔર પ્રતિકૂલ જલ—વાયુ સે ઘટતા હૈ । જૈસે મનુષ્યશરીર મેં નાના  
પ્રકાર કે પરિણમન હોતે હૈ—વિવિધ બીમારિયોં સે ઉદર કા બઢના, પાણ્ડુ, કૃશતા આદિ,  
તથા રસાયન ઔર ઘૃત આદિ કે સેવન સે વિશિષ્ટરૂપ ઔર બલ કી વૃદ્ધિ હોતી હૈ,  
ઉસી પ્રકાર વનસ્પતિ કા શરીર મી વિવિધ પ્રકાર કે પરિણમનવાળા હૈ—રોગ હોને પર  
વનસ્પતિ કે પત્તે, ફૂલ, ફલ આદિ ઔર હી તરહ કે દેખે જાતે હૈ, વિશેષ પ્રકાર કા દોહદ  
દેને સે કમી—કમી ઉન મેં ઉપચય મી હોતા હૈ । ઇસ પ્રકાર વનસ્પતિ કા શરીર મી વિવિધ  
પરિણમન વાળા હૈ । જનનસ્વભાવ આદિ ધર્મોં કા સમૂહ સચેતન મનુષ્ય શરીર મેં યા ત્રસ

વનસ્પતિશરીર પણ અશાશ્વત છે—તેનું પણ પ્રતિક્ષણ મરણ થતું રહે છે. મનુષ્ય શરીર  
ઈષ્ટાનિષ્ટ આહાર આદિથી વધતું ઘટતું રહે છે તે પ્રમાણે વનસ્પતિનું શરીર પણ  
અનુકૂલ જલ—વાયુથી વધે છે અને પ્રતિકૂળ જલવાયુથી ઘટે છે. જેમ મનુષ્યશરીરમાં  
નાના પ્રકારનું પરિણમન થાય છે, વિવિધ બિમારીઓથી પેટનું વધવું, પાંડુરોગ,  
કૃશતા ( ડુબલાપણું ) આદિ, તથા રસાયન અને ઘૃતઆદિના સેવનથી વિશિષ્ટરૂપ  
અને બલવૃદ્ધિ થાય છે, તે પ્રમાણે વનસ્પતિનું શરીર પણ વિવિધ પ્રકારના પરિણમન-  
વાળું છે, રોગ થતાં વનસ્પતિના પાંદડાં, ફૂલ, ફલ આદિ જૂદીજ નીતનાં દેખાય  
છે, વિશિષ્ટ પ્રકારના દોહદ દેવાથી કોઈ—કોઈ વખત તેમાં ઉપચય થાય છે, એ પ્રમાણે  
વનસ્પતિનું શરીર પણ વિવિધ પરિણમનવાળું છે. જનનસ્વભાવ આદિ ધર્મોના સમૂહ  
સચેતન મનુષ્યશરીરમાં અથવા ત્રસણવના શરીરમાં જેવામાં આવે છે, તેજ પ્રમાણે



त्रसशरीरे वा वर्तते, तथा-वनस्पतिशरीरेऽपि, तस्माद् वनस्पतिकायः सचेतन इति निःसंशयं जानीहीति भावः ॥ सू० ८ ॥

एवं वनस्पतिकायस्य सचित्त्वं विदित्वा मुनित्वप्राप्तये त्रिकरणत्रियोगैस्त-  
त्समारम्भो वर्जनीय इत्याशयेनाह—‘ एत्थ सत्थं.’ इत्यादि ।

**मूलम्—**

एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिणाय भवन्ति, एत्थ  
सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिणाय भवन्ति, तं परिणाय मेहावी णेव  
सयं वणस्सइसत्थं समारंभेज्जा, णेवण्णेहिं वणस्सइसत्थं समारंभावेज्जा, णेवण्णे

जीव के शरीर में पाया जाता है, उसी प्रकार वनस्पति के शरीर में भी पाया जाता है । अतः  
एव वनस्पतिकाय सचेतन है, यह बात निःसंशय समझ लेना चाहिए ॥ सू० ८ ॥

इस प्रकार वनस्पतिकाय की सचित्ता जानकर साधुता प्राप्त करने के लिए तीन  
करण और तीन योग से वनस्पतिकाय का समारंभ त्यागना चाहिए । इस अभिप्राय से कहते  
हैं:—‘ एत्थ सत्थं.’ इत्यादि ।

**मूलार्थ—**वनस्पतिकाय में शस्त्र का आरंभ करने वाले को ये आरंभ ज्ञात  
नहीं होते । वनस्पतिकाय में शस्त्र का आरंभ न करने वाले को ये आरंभ ज्ञात होते हैं ।  
इन्हें जानकर बुद्धिमान् पुरुष न स्वयं वनस्पतिशस्त्र का आरंभ करे, न दूसरों से वनस्पति-  
शस्त्र का आरंभ करावे और न वनस्पतिशस्त्र का आरंभ करने वाले दूसरों का अनुमोदन

वनस्पतिना शरीरमां पणु लेवामां आवे छे. એજ માટે વનસ્પતિકાય સચેતન છે, એ  
વાત સંદેહરહિત સમજી લેવી જોઈએ. ॥ ८ ॥

એ પ્રમાણે વનસ્પતિકાયની સચિત્તા જાણીને સાધુતા પ્રાપ્ત કરવા માટે  
ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી વનસ્પતિકાયનો સમારંભ ત્યજવો જોઈએ. એ  
અભિપ્રાયથી કહે છે:—‘ એત્થ સત્થં.’ ઇત્યાદિ.

**મૂલાર્થ—**વનસ્પતિકાયમાં શસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળાને આ આરંભ જાણવામાં  
નથી. (અને) વનસ્પતિકાયમાં શસ્ત્રનો આરંભ નહિ કરવાવાળાને આ આરંભ જાણવામાં  
છે. તેને જાણીને બુદ્ધિમાન્ પુરુષ પોતે વનસ્પતિશસ્ત્રનો આરંભ કરતા નથી.  
બીજાની પાસે વનસ્પતિનો આરંભ કરાવતા નથી. અને વનસ્પતિશસ્ત્રનો આરંભ  
કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન કરતા નથી. જે વનસ્પતિશસ્ત્રના સમારંભના જાણકાર

વળસ્સઇસત્થં સમારંભંતે સમણુજાણેજ્જા । જસ્સેતે વળસ્સઇસત્થસમારંભા પરિણાયા  
ભવંતિ, સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મે-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

છાયા-અત્ર શસ્ત્રં સમારંભમાણસ્ય इत्येते આરમ્ભાઃ અપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ । અત્ર  
શસ્ત્રમસમારંભમાણસ્ય इत्येते આરમ્ભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિઃ તત્ પરિજ્ઞાય મેધાવી નૈવ  
સ્વયં વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારંભેત, નૈવાન્યૈર્વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારંભયેત્, વનસ્પતિશસ્ત્રં  
સમારંભમાણાન્ અન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્ । યસ્યૈતે વનસ્પતિશસ્ત્રસમારંભાઃ પરિજ્ઞાતા  
ભવન્તિ, સ સ્વલુ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા, इति વ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકા-અત્ર=અસ્મિન્ વનસ્પતિકાયે, શસ્ત્રં=પૂર્વોક્તપ્રકારં, સમારંભમાણસ્ય=  
વ્યાપારયતઃ, इत्येते=પૂર્વોક્તાઃ ત્રિકરણ-ત્રિયોગૈઃ આરમ્ભાઃ=વનસ્પતિકાયોપમર્દનરૂપાઃ  
સાવધવ્યાપારાઃ અપરિજ્ઞાતાઃ=કર્મવન્ધકારણત્વેનાનવગતા ભવન્તિ । અત્ર=અસ્મિન્નેવ  
વનસ્પતિકાયે શસ્ત્રં=પ્રાગુક્તપ્રકારમ્ અસમારંભમાણસ્ય=અપ્રયુઠ્ઠજ્ઞાનસ્ય इत्यેતે=પૂર્વોક્તા  
આરમ્ભાઃ=સાવધવ્યાપારાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ, પ્રત્યા-  
હ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જિતા ભવન્તીત્યર્થઃ ।

જ્ઞપરિજ્ઞાપૂર્વિકા પ્રત્યાહ્યાનપરિજ્ઞા યથા ભવતિ તં પ્રકારં દર્શયતિ-

કરે । જો વનસ્પતિશસ્ત્ર કે સમારંભ કા જ્ઞાતા હૈ વહી મુનિ હૈ, વહી પરિજ્ઞાતકર્મા હૈ । એસા  
મૈં કહતા હૂં ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકાર્થ—વનસ્પતિકાય કે વિષય મેં પૂર્વોક્ત પ્રકાર સે શસ્ત્ર કા ઉપયોગ કરને  
વાલે કો પૂર્વોક્ત-ત્રીન કરણ ત્રીન યોગ સે હોને વાલે વનસ્પતિ કી હિંસારૂપ સાવધ  
વ્યાપાર-અજ્ઞાત હોતે હૈ, અર્થાત્ વહ નહીં જાનતા કિ-ઇન વ્યાપારોં સે કર્મ કા બંધ હોતા હૈ ।  
જો વનસ્પતિકાય કે વિષય મેં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા પ્રયોગ નહીં કરતા વહ પૂર્વોક્ત સાવધ વ્યાપારોં  
કા જ્ઞાતા હોતા હૈ । વહ જ્ઞપરિજ્ઞા સે ઇન્હેં જાનતા હૈ ઓર પ્રત્યાહ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગ  
દેતા હૈ । જ્ઞપરિજ્ઞા કે પશ્ચાત્ હી પ્રત્યાહ્યાનપરિજ્ઞા કિસ પ્રકાર હોતી હૈ સો દિશ્વલતે હૈ-

છે, તેજ મુનિ છે, તેજ પરિજ્ઞાતકર્મા છે. એ પ્રમાણે હું કહું છું. ॥ સૂ૦ ૯ ॥

ટીકાર્થ—વનસ્પતિકાયના વિષયમાં પૂર્વોક્ત પ્રકારથી શસ્ત્રને ઉપયોગ કરવાવાળાને  
પૂર્વોક્ત (આગળ કહેલા) ત્રણ કરણ-ત્રણ યોગથી થવાવાળી વનસ્પતિની હિંસારૂપ સાવધ  
વ્યાપાર અજ્ઞાત હોય છે, અર્થાત્ તેને જાણવામાં નથી કે આ વ્યાપારોથી કર્મનો બંધ થાય છે.

જે વનસ્પતિકાયના વિષયમાં પૂર્વોક્ત સાવધ વ્યાપારોના જ્ઞાતા હોય છે. તે  
જ્ઞપરિજ્ઞાથી તેને જાણે છે. અને પ્રત્યાહ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યાગ કરી દે છે.

જ્ઞપરિજ્ઞાની પછીજ પ્રત્યાહ્યાનપરિજ્ઞા કેવા પ્રકારે હોય છે. તે બતાવે છે-

‘તત્ પરિજ્ઞાયે’ ત્યાદિ । તદ્=વનસ્પતિકાયામરમ્ભણં, પરિજ્ઞાય=કર્મબંધનસ્ય કારણં  
ભવતીત્યવગત્ય, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, નૈવ સ્વયં વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારમ્ભેત્=  
વ્યાપારયેત્, અન્યૈર્વા નૈવ વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારમ્ભયેત્, વનસ્પતિશસ્ત્રં સમારમ્ભણાન્ ન  
સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ । શેષં સુગમમ્ ।

યસ્યૈતે વનસ્પતિકર્મસમારમ્ભાઃ=વનસ્પતિ નિમિત્તીકૃત્ય કર્મકારણીભૂતાઃ  
સાવધવ્યાપારાઃ પરિજ્ઞાતાઃ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બંધકારણત્વેન વિદિતાઃ, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા  
ચ પરિહૃતા ભવન્તિ, સ એવ પરિજ્ઞાતકર્મા=ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિવર્જિતસકલસાવધ-  
વ્યાપારઃ, મુનિર્ભવતિ । ‘ઈતિ બ્રવીમિ’=ઈતિ=એતત્સર્વમ્, બ્રવીમિ=ભગવતઃ સમીપે  
યથા શ્રુતં તથા કથયામીત્યર્થઃ ॥ સૂ. ૯ ॥

॥ ઇત્યાચારાઙ્ગસૂત્રસ્યાચારચિન્તામણિટીકાયાં પ્રથમાધ્યયને પશ્ચમોદ્દેશકઃ સંપૂર્ણઃ ॥

વનસ્પતિકાય કે આરંભ કો કર્મબંધ કા કારણ જાનકર હેય-ઉપાદેય કા વિવેક રચનેવાલા  
બુદ્ધિમાન્ પુરુષ સ્વયં વનસ્પતિકાય કા આરંભ ન કરે, દૂસરો સે આરંભ ન કરાવે ઔર આરંભ  
કરને વાલો કા અનુમોદન ન કરે । શેષ સબ સુગમ હૈ । વનસ્પતિકાય કે આરંભ કે નિમિત્ત  
સે હોને વાલે સાવધ વ્યાપારો કો જિસને જ્ઞપરિજ્ઞા સે કર્મબંધ કા કારણ જાન લિયા હૈ ઔર  
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગ દિયા હૈ, વહ ત્રીન કરણ ત્રીન યોગ સે સમસ્ત સાવધો કા ત્યાગી  
હી મુનિ હોતા હૈ । સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈ-હે જમ્બૂ ! જૈસા ભગવાન્ કે સમીપ  
મૈને સુના હૈ, વૈસા હી યહ સબ મૈ કહતા હૂં ॥ સૂ. ૯ ॥

॥ શ્રી આચારાઙ્ગસૂત્રકી ‘આચારચિન્તામણિ’ ટીકાકે હિન્દી અનુવાદ મેં

પ્રથમ અધ્યયનકા પાંચવો ઉદ્દેશ સમાપ્ત ॥ ૧-૫ ॥

વનસ્પતિકાયના આરંભને કર્મબંધનું કારણ બાણીને હેય-ઉપાદેયને વિવેક રાખવા-  
વાળા બુદ્ધિમાન્ પુરુષ પોતે વનસ્પતિકાયને આરંભ કરતા નથી. બીજા પાસે આરંભ કરાવતા  
નથી, અને આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપતા નથી. શેષ-બાકી સર્વ સુગમ છે.

વનસ્પતિકાયના આરંભના નિમિત્તથી થવાવાળા સાવધ વ્યાપારને જેણે જ્ઞપરિજ્ઞાથી  
કર્મબંધનું કારણ બાણી લીધું છે અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યજી આપ્યા છે તે ત્રણ કરણ  
ત્રણ યોગથી સમસ્ત સાવધોના ત્યાગીજ મુનિ હોય છે. સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે-  
હે જમ્બૂ ! જેવું ભગવાનની સમીપ મેં સાંભળ્યું છે; તેવુંજ આ સર્વ હું કહું છું. ॥સૂ. ૬॥

શ્રી આચારાંગસૂત્રની ‘આચારચિન્તામણિ’ ટીકાના ગુજરાતી  
અનુવાદમાં પ્રથમ અધ્યયનનો પાંચમો ઉદ્દેશક સમાપ્ત. ॥૧-૫॥



॥ અથ ષષ્ઠોદ્દેશઃ ॥

અનન્તરપશ્ચમોદ્દેશકે વનસ્પતિકાયસ્વરૂપં નિરૂપિતમ્ । અધુના ક્રમપ્રાપ્ત-  
ત્રસકાયસ્વરૂપપ્રતિબોધનાર્થમયં ષષ્ઠ ઉદ્દેશકઃ પ્રસ્તૂયતે । इयं हि शैली भगवद्देशनायाः,  
यद्-वनस्पतिकायानन्तरं त्रसकायप्रतिबोधनम्, सर्वस्मिन्नागमे तथैव भगवद्देशनायाः  
सच्चात् । एतत् समीचीनमपि, मनुष्यशरीरदृष्टान्तोपन्यासेन वनस्पतेः सचेतनत्वं  
साध्यते, तत्र वनस्पतिकायस्वरूपविज्ञानानन्तरं मनुष्यस्वरूपं जिज्ञासमानस्य शिष्यस्य  
प्रतिबोधनाय तस्य त्रसकायान्तर्गतत्वेन त्रसकायोद्देशकथनस्यौचित्यात् । त्रसकाय-  
स्वरूपं वक्तुमनाः श्री सुधर्मास्वामी कथयति—‘से बेमि.’ इत्यादि ।

### છઠાઉદ્દેશ

પિછલે પૌંચવેં ઉદ્દેશ મેં વનસ્પતિકાય કા સ્વરૂપ નિરૂપણ કિયા ગયા હૈ અવ ક્રમ સે  
પ્રાપ્ત ત્રસકાય કા સ્વરૂપ બતલાને કે લિખે છઠા ઉદ્દેશ કહતે હૈં ।

ભગવાન્ કે ઉપદેશ કી યહી શૈલી હૈં કિ વનસ્પતિકાય કે અનન્તર ત્રસકાય કા  
સ્વરૂપ સમજાયા જાતા હૈ । તબ આગમોં મેં ભગવાન્ કો ઉપદેશ હી પ્રકાર હૈ । યહ ઠીક  
ભી હૈ, ક્યોં કિ મનુષ્ય કે શરીર કા દૃષ્ટાન્ત દેકર વનસ્પતિ કી સચિત્તા સિદ્ધ કી હૈ તો  
વનસ્પતિકાય કે સ્વરૂપ કે પશ્ચાત્ મનુષ્ય કા સ્વરૂપ જાનને કીં ઇચ્છા રખને વાલે શિષ્ય કે  
પ્રતિબોધ કે લિખે ત્રસકાય કા સ્વરૂપ સમજના ચાહિએ, ક્યોં કિ મનુષ્ય ભી ત્રસકાય કે  
અન્તર્ગત હૈ । ત્રસકાય કા સ્વરૂપ કહને કી ઇચ્છા રખને વાલે શ્રી સુધર્મા સ્વામી અલગ સૂત્ર  
કહતે હૈ:—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

### છઠ્ઠો ઉદ્દેશ—

પાછળના પાંચમા ઉદ્દેશમાં વનસ્પતિકાયના સ્વરૂપનું નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું  
છે. હવે કેમથી પ્રાપ્ત ત્રસકાયના સ્વરૂપને બતાવવા માટે છઠ્ઠા ઉદ્દેશને કહે છે.

ભગવાનના ઉપદેશની એજ શૈલી છે કે:—વનસ્પતિકાયની પછી ત્રસકાયનું સ્વરૂપ  
સમજાવવામાં આવે છે. સર્વ આગમોમાં ભગવાનનો ઉપદેશ આ પ્રમાણે છે, અને તે  
ઠીક પણ છે, કેમકે મનુષ્યના શરીરનું દૃષ્ટાન્ત આપીને વનસ્પતિની સચિત્તા સિદ્ધ  
કરી છે, તો વનસ્પતિકાયના સ્વરૂપ પછી મનુષ્યસ્વરૂપ જાણવાની ઇચ્છા રાખવાવાળા  
શિષ્યના પ્રતિબોધ માટે ત્રસકાયનું સ્વરૂપ સમજાવવું જોઈએ, કારણકે મનુષ્ય પણ  
ત્રસકાયની અન્તર્ગત છે. ત્રસકાયના સ્વરૂપને કહેવાની ઇચ્છા રાખવાવાળા શ્રી સુધર્મા  
સ્વામી આગળનું સૂત્ર કહે છે:—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—

से वेमि संतिमे तसा पाणा, तंजहा-अंडया, पोयया, जराउया, रसया, संसेयया, संमूर्च्छिमा, उब्भियया, उववाइया, एस संसारेत्ति पवुच्चइ मंदस्स अवियाणओ ॥ सू० १ ॥

छाया—

स ब्रवीमि, सन्तीमे त्रसाः प्राणाः, तद्यथा-अण्डजाः, पोतजाः, जरायुजाः, रसजा, संस्वेदजाः, संमूर्च्छिमाः (संमूर्च्छनजाः) उद्भिज्जाः, औपपातिकाः (उपपातजाः) । एष संसार इति प्रोच्यते मन्दस्य अविजानतः ॥ सू० १ ॥

टीका—

येन भगवद्ब्रदनारविन्दिर्गतसकलार्थाः सम्यगवधारिताः, सोऽहं ब्रवीमि= यथा भगवन्मुखाच्छ्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ।

त्रसाः प्राणा इमे सन्तीत्यन्वयः । त्रसाः-त्रस्यन्ति-त्रसनामकर्मोदयात् तापाऽऽद्युपतप्ताच्छायाऽऽदिकं प्रत्यभिसर्पन्तीति त्रसाः=द्वीन्द्रियादिपञ्चेन्द्रियपर्यन्ताः ।

मूलार्थ—वह मैं कहता हूँ—ये त्रस प्राणी हैं, जैसे—अण्डज, पोतज, जरायुज, रसज, संस्वेदज, संमूर्च्छित, उद्भिज और औपपातिक (उपपातज) । मंद एवं अज्ञानी के लिए यह संसार कहा गया है ॥ सू० १ ॥

टीकाथ—जिसने भगवान् के मुखकमल से निकले हुए समस्त जीवादि स्वरूपों को भली भाँति समझ लिया है ऐसा मैं कहता हूँ, अर्थात् हे जम्बू ! भगवान् के मुख से जैसा मैंने सुना है वैसा तुझे कहता हूँ ।

त्रसनामकर्म के उदय से ताप आदि से पीड़ित होकर छाया वगैरह की ओर जाने वाले द्वीन्द्रिय से पचेन्द्रिय तक के जीव त्रस कहलाते हैं । इन में द्वीन्द्रिय जीव के स्पर्शन

मूलार्थ—ते हुं कहुं छुं—ये त्रस प्राणी छे. जेभ-अंडज, पोतज, जरायुज, रसज, संस्वेदज, संमूर्च्छिम, उद्भिज आने औपपातिक ( उपपातज ) मंद आने अज्ञानीओ भाटे आ संसार कहेवाभां आओ छे. ॥सू० १॥

टीकाथ—जेणे भगवानना मुण्डमलथी नीकजेला समस्त अवादि स्वरूपोना अर्थने इडी रीते समज लीधा छे, ओवो हुं कहुं छुं, अर्थात् हे जम्बू ! भगवानना मुण्डथी जेपुं मे सांलओ छे तेपुं तने कहुं छुं.

त्रसनामकर्मना उदयथी ताप वगेरेथी पीडा पाभीने छाया विगेरेनी पासे जवावाणा द्वीन्द्रिय, ( जे धन्द्रिय ) अवथी लधने पांच धन्द्रियवाणा ओवो सुधी सर्व त्रस

તત્ર દ્વીન્દ્રિયાણાં સ્પર્શનરસનરૂપે દ્વેન્દ્રિયે, ત્રીન્દ્રિયાણાં સ્પર્શનરસનગ્રાણરૂપાણિ ત્રીણીન્દ્રિયાણિ, ચતુરિન્દ્રિયાણાં સ્પર્શનરસનગ્રાણચક્ષુરૂપાણિ ચત્વારોન્દ્રિયાણિ, પન્ચેન્દ્રિયાણાં સ્પર્શનરસનગ્રાણચક્ષુઃશ્રોત્રરૂપાણિ પન્ચેન્દ્રિયાણિ સન્તિ ।

યદ્યપિ-ત્રસ્યન્તિ=અભિસન્ધિપૂર્વકમનભિસન્ધિપૂર્વકં વા ડર્ધ્વમધસ્તિર્યક્ષુ ચલન્તોતિ વ્યુત્પન્નયા દ્વીન્દ્રિયાદયસ્તથાઽગ્નિકાયા વાયુકાયા અપિ ત્રસા ઉચ્યન્તે । ત્રસાનાં હિ દ્વૌ ભેદૌ મુખ્યતઃ સ્તઃ-ગતિતો લઙ્ઘિતશ્ચ । તત્ર ગતિઃ=ક્રિયા ચલનં, દેશાન્તરપ્રાપ્તિઃ, સ્વભાવતોઽનભિસન્ધિપૂર્વક-તદ્યોગાદગ્નિકાયા વાયુકાયાશ્ચ ત્રસા ભવન્તીતિ ગતિત્રસા ઉચ્યન્તે । લઙ્ઘિસ્તુ ત્રસનામકર્મોદયે સતિ ભવતિ,

ઔર રસના યે દો ઇન્દ્રિયાં હોતી હૈં । તીનઈન્દ્રિયવાલોં કે સ્પર્શન, રસના ઔર ગ્રાણ, યે તીન ઇન્દ્રિયાં હોતી હૈં । ચતુરિન્દ્રિય જીવોંકે સ્પર્શન, રસના, ગ્રાણ ઔર ચક્ષુ, યે ચાર ઇન્દ્રિયાં હોતી હૈં । પંચેન્દ્રિય જીવોં કે સ્પર્શન, રસના ગ્રાણ, ચક્ષુ ઔર શ્રોત્રરૂપ પાંચ ઇન્દ્રિયાં હોતી હૈં ।

જો જીવ ઇરાદાપૂર્વક યા વિના હી ઇરાદે કે, ડપર નીચે યા તિરછે ચલતે હૈં વે ત્રસ જીવ હૈં । ઇસ વ્યુત્પત્તિ કે અનુસાર દ્વીન્દ્રિય આદિ તથા અગ્નિકાય ઔર વાયુ મી ત્રસ કહલાતે હૈં । મુખ્યરૂપ સે ત્રસ જીવોં કે દો ભેદ હૈં-(૧) ગતિત્રસ ઔર (૨) લઙ્ઘિત્રસ । ગતિ કહિણ અથવા ક્રિયા, ચલના અથવા ઁક દેશ સે દૂસરે દેશ મેં પહુંચના કહિણ । વિના ઇરાદે કે યહ ગતિક્રિયા મૌજૂદ હોને કે કારણ અગ્નિકાય ઔર વાયુકાય મી ત્રસ હૈં । ડન્હેં ગતિત્રસ કહતે હૈં । ત્રસનાકર્મ કા ડદય હોને પર લઙ્ઘિ-

કહેવાય છે. દ્વીન્દ્રિય જીવોને સ્પર્શન (આમડી) અને રસના (જીભ) આ બે ઇન્દ્રિયો હોય છે. ત્રીન્દ્રિયોને આમડી, જીભ અને નાસિકા રૂપ ત્રણ ઇન્દ્રિયો હોય છે ચતુરિન્દ્રિય જીવોને આમડી, જીભ, નાસિકા અને નેત્ર, આ ચાર ઇન્દ્રિયો હોય છે. પંચેન્દ્રિય જીવોને આમડી, જીભ, નાસિકા, નેત્ર અને શ્રોત્ર-કાન રૂપ પાંચ ઇન્દ્રિયો હોય છે.

બે જીવ ઇચ્છાપૂર્વક અથવા ઇચ્છા વિના ડપર, નીચે અથવા તિરછા ચાલે છે તે ત્રસ જીવ છે. આ વ્યુત્પત્તિ અનુસાર દ્વીન્દ્રિય આદિ તથા અગ્નિકાય અને વાયુકાય ત્રણ ત્રસ કહેવાય છે. મુખ્યરૂપથી ત્રસ જીવોના બે ભેદ છે-(૧) ગતિત્રસ (૨) લઙ્ઘિત્રસ. ગતિ કહેા અથવા ક્રિયા કહેા તે એકજ છે. ચાલવું અથવા એક દેશથી બીજા દેશમાં પહોંચવું કહેા. વિના ઇચ્છાથી આ ગતિ કરવાની ક્રિયા હાજર હોવાથી અગ્નિકાય અને વાયુકાય ત્રણ ત્રસ છે. તેને ગતિત્રસ કહે છે. ત્રસનામકર્મને ઉદય હોવાથી લઙ્ઘિત્રસતા



તદ્યોગાદભિસન્ધિપૂર્વકદેશાન્તરપ્રાપ્તિલક્ષણક્રિયાયુક્તત્વાદ્ દ્વીન્દ્રિયાદય એવ લબ્ધિ-  
ત્રસા ઉચ્યન્તે । તેજોવાયવઃ કિલ ન ત્રસનામકર્મોદયનિર્વૃત્તાઃ, કિન્તુ સ્થાવરનામ-  
કર્મોદયનિર્વૃત્તત્વાલ્લબ્ધિતઃ સ્થાવરા એવ; તથાપ્યત્ર દ્વીન્દ્રિયાદયો લબ્ધિત્રસા એવ  
પરિગૃહ્યન્તે, ન તુ ગતિત્રસાઃ, અગ્નિકાયાનાં પ્રાગેવ ચતુર્થોદેશે પ્રતિબોધિતત્વાત્,  
વાયુકાયાનામગ્રે વક્ષ્યમાણત્વાચ્ચ ।

યત્તુ “લબ્ધ્યા તેજોવાયુ ત્રસૌ, લબ્ધિસ્તચ્છક્તિમાત્રં લબ્ધિત્રસાનામિ-  
હાધિકારો નાસ્તિ, તેજસોઽભિહિતત્વાદ્ વાયોશ્ચાભિધાસ્યમાનત્વાદ્, અતઃ  
સામર્થ્યાત્ ગતિત્રસા એવાધિક્રિયન્તે ” ઇતિ કૈશ્ચિદુક્તં, તત્ પ્રામાદિકમ્,

ત્રસતા પ્રાપ્ત હોતી હૈ । ઇસ લબ્ધિ સે ઇરાદાપૂર્વક ગતિક્રિયા દ્વીન્દ્રિય આદિ મેં હી પાઈ  
જાતી હૈ, અત એવ ઉન્હેં લબ્ધિત્રસ કહતે હૈ । તેજસ્કાય ઓર વાયુકાય મેં ત્રસનામ-  
કર્મ કા ઉદય નહીં હોતા । ઊન મેં સ્થાવરનામકર્મ કા ઉદય હૈ, અતઃ લબ્ધિ કી અપેક્ષા યે  
દોનોં સ્થાવર હી હૈ । ફિર મી યહાં દ્વીન્દ્રિય આદિ લબ્ધિત્રસ જીવોં કા પ્રહણ કરના ચાહિએ,  
ગતિત્રસ જીવોં કા નહીં, ક્યોં કિ અગ્નિકાયિક જીવોં કા ચૌથે ઉદેશ મેં પહલે હી વર્ણન ક્રિયા  
જા ચુકા હૈ ઓર વાયુકાય કા આગે વર્ણન ક્રિયા જાયગા ।

કિસી ને કહા હૈ—“લબ્ધિ કી અપેક્ષા તેજસ્કાય ઓર વાયુકાય ત્રસ હૈ । લબ્ધિ  
સિર્ફ શક્તિ કો હી કહતે હૈ । યહાં લબ્ધિત્રસ જીવોં કા પ્રકરણ નહી હૈ, ક્યોં કિ  
અગ્નિકાય કા કથન ક્રિયા જા ચુકા હૈ ઓર વાયુકાય કા કથન આગે ક્રિયા જાયગા,  
અતઃ સામર્થ્ય સે ગતિત્રસ હી યહાં પ્રહણ કરને યોગ્ય હૈ ” । યહ કથન પ્રમાદપૂર્ણ હૈ;

પ્રાપ્ત છે. એ લબ્ધિથી ઇચ્છાપૂર્વક ગતિ કરવાની ક્રિયા દ્વીન્દ્રિયાદિમાંજ જોવામાં આવે  
છે, એટલા માટે તેને લબ્ધિત્રસ કહે છે. તેજસ્કાય અને વાયુકાયમાં ત્રસનામકર્મનો  
ઉદય નથી; તેનામાં સ્થાવરનામકર્મનો ઉદય છે. તેથી લબ્ધિની અપેક્ષાએ એ બન્ને  
સ્થાવર જ છે. ફરીને પણ અહિં દ્વીન્દ્રિય આદિ લબ્ધિત્રસ જોવાનું જ પ્રહણ કરવું  
જોઈએ, ગતિત્રસ જોવાનું નહિ. કારણકે અગ્નિકાયિક જોવાનું ચોથા ઉદેશકમાં પ્રથમ  
વર્ણન કરવામાં આવી ગયું છે, અને વાયુકાયનું આગળ ઉપર વર્ણન કરવામાં આવશે.

કોઈએ કહ્યું કે—“લબ્ધિની અપેક્ષા તેજસ્કાય અને વાયુકાય ત્રસ છે;—લબ્ધિ,  
માત્ર શક્તિનેજ કહે છે. અહિં લબ્ધિત્રસ જોવાનું પ્રકરણ નથી. કારણકે અગ્નિકાયનું  
વિવેચન તો કરી દેવામાં આવ્યું છે, અને વાયુકાયનું વિવેચન આગળ કરવામાં આવશે.  
તેથી સામર્થ્યથી ગતિત્રસનું જ અહિં પ્રહણ કરવું યોગ્ય છે.” આ કથન પ્રમાદપૂર્ણ છે.

લબ્ધિત્રસાનાં ગતિત્રસત્વેનાઙ્ગીકારાત્ । ગતિત્રસાનાં લબ્ધિત્રસત્વાભાવાત્, દ્વીન્દ્રિયાદીનાં ગતિત્રસત્વેન શાસ્ત્રેઽનઙ્ગીકારાચ્ચ ।

પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ, ઇમે=પ્રત્યક્ષતોઽવગમ્યાઃ, યદ્વા-વક્ષ્યમાણપ્રકારકાઃ સન્તિ । તે યથા-(૧) અણ્ડજાઃ=અણ્ડાજ્જાતાઃ-પક્ષિગૃહકોકિલાદયઃ, (૨) પોતજાઃ=પોતા એવ જાયન્ત ઇતિ પોતજાઃ-હસ્તિવલ્ગુલીચર્મજલ્કાદયઃ, (૩) જરાયુજાઃ=જરાયુર્ગર્ભવેષ્ટનચર્મ, તત્ર જાતાઃ-ગોમહિષ્યજા, વિક્રમનુષ્યાદયઃ, (૪) રસજાઃ=વિકૃતરસાજ્જાતાઃ, (૫) સંસ્વેદજાઃ=સંસ્વેદાજ્જાતાઃ-મત્કુળયૂકાદયઃ, (૬) સંમૂર્છિમાઃ=સંમૂર્છનજાઃ મક્ષિકાપિપીલિકાશલભાદયઃ, (૭) ઉદ્ભિજ્જાઃ=ઉદ્ભેદનમ્-ઉદ્ભિત્, તસ્માજ્જાતાઃ-પતન્નજ્જરીટાદયઃ, (૮) ઔપપાતિકાઃ=ઉપપાતે ભવાઃ દેવાનાર-

વ્યોં કિ લબ્ધિત્રસોં કો ગતિત્રસરૂપ મેં અંગીકાર કિયા ગયા હૈ । મગર ગતિત્રસ લબ્ધિત્રસ નહીં હો સકતે । દ્વીન્દ્રિય આદિ મેં ગતિ કા સદ્ભાવ હૈ અતઃ શાસ્ત્ર મેં ઇસા અંગીકાર નહીં કિયા ગયા ।

ત્રસ પ્રાણી ઇસ પ્રકાર હૈ—(૧) અણ્ડજ—અંડોં સે ઉત્પન્ન હોને વાલે પક્ષી, ગૃહકોકિલા આદિ । (૨) પોતજ—પોતરૂપ પૈદા હોને વાલે હાથી, વલ્ગુલી, ચર્મજલ્ક આદિ । (૩) જરાયુજ—ગર્ભ જિસ સે લિપટા રહતા હૈ વહ પતલી ચમડી જરાયુ કહલાતી હૈ, ડસ સે ઉત્પન્ન હોને વાલે ગાય, મૈસ, બકરી, મનુષ્ય આદિ જરાયુજ કહલાતે હૈ । (૪) રસજ—નિવૃત્ત રસ મેં પૈદા હો જાને વાલે, (૫) સંસ્વેદજ—પસીને સે પૈદા હોને વાલે સ્વટ્મલ, જૂં આદિ । (૬) સંમૂર્છિમ—મક્ષી, કીડી, શલમ આદિ । (૭) ઉદ્ભિજ—ઉદ્ભેદન સે ઉત્પન્ન હોને વાલે પતંગ, સ્વંજરીટ આદિ । (૮) ઔપપાતિક—દેવ ઓર નારકી ।

કારણુ કે લબ્ધિત્રસોને ગતિત્રસનાં રૂપમાં અંગીકાર કરવામાં આવ્યો છે, પરન્તુ ગતિત્રસ લબ્ધિત્રસ થઈ શકતા નથી. દ્વીન્દ્રિય આદિમાં ગતિનો સદ્ભાવ છે, તેથી શાસ્ત્રમાં એ પ્રમાણે અંગીકાર કરવામાં આવ્યો નથી.

ત્રસ પ્રાણી આ પ્રમાણે છે—(૧) અંડજ—ઈંડાથી ઉત્પન્ન થવાવાળાં પક્ષી, ગૃહ-કોકિલા (ગરોળી) આદિ. (૨) પોતજ—પોતરૂપ પૈદા થવાવાળા હાથી, વલ્ગુલી, ચર્મ-જલ્ક (જળો) આદિ. (૩) જરાયુજ—ગર્ભ જેનાથી વિંટાએલું રહે તે પાતળી ચામડી જરાયુ કહેવાય છે. તેમાં ઉત્પન્ન થવાવાળા ગાય, ભેંસ, બકરી, મનુષ્ય આદિ જરાયુજ કહેવાય છે. (૪) રસજ—વિકૃતરસમાં પૈદા થવાવાળા. (૫) સંસ્વેદજ—પરસેવાથી પૈદા થવાવાળા માકડ, બૂં આદિ. (૬) સંમૂર્છિમ—માખી, કીડી, તીડ આદિ. (૭) ઉદ્ભિજ—ઉદ્ભેદનથી ઉત્પન્ન થવાવાળા પતંગ, ખંજરીટ આદિ. (૮) ઔપપાતિક—દેવ અને નારકી.

इह सर्वेषां त्रसजीवानामष्टविधं जन्म प्रतिबोधितम् एतदेव समूच्छन्नगर्भोपपातेषु समावेश्य त्रिविधं जन्मेत्यपि शास्त्रेऽभिहितम् । सन्तीत्यनेन त्रसानामप्यस्तित्वं त्रिकालवर्तीति बोध्यते । मन्दस्य=कुशास्त्रवासनायुक्तस्य, अत एव-अविजानतः=हिताहितविवेकरहितस्य, एषः=अण्डजादिसमुदायः संसारः प्रोच्यते, अष्टविधत्रसकाये कुशास्त्रवासनावतः पुनः पुनरुत्पत्तिरूपं संसरणं भवतीति स एषः संसारो निगद्यत इत्यर्थः ।

अथ त्रसकायस्य सम्यग्ज्ञानार्थं लक्षणाद्यष्टद्वाराणि निरूपणीयानि । तत्र लक्षण-प्ररूपणा-परिमाण-शस्त्रो-पभोग-वेदना-द्वाराणि यथाक्रमं प्रदर्श्यन्ते, अव-शिष्ट-वध-निवृत्ति-द्वारद्वयं पृथ्वीकायोद्देशे यथाऽभिहितं तथैवावगन्तव्यम् ।

यहाँ सभी त्रस जीवों का आठ प्रकार का जन्म बतलाया गया है । इसे समूच्छन्न, गर्भ और उपपात में समाविष्ट कर देने से तीन प्रकार का जन्म शास्त्र में बतलाया है । 'संति' इस पद द्वारा त्रस जीवों का त्रिकालवर्ती अस्तित्व सूचित किया गया है । मन्द अर्थात् मिथ्याशास्त्रों के संस्कार से प्रभावित, अत एव हित-अहित के विवेक से शून्य पुरुष के लिए अण्डज आदि का समूहरूप संसार कहा गया है । आठ प्रकार के त्रसकाय में मिथ्याशास्त्रों के संस्कार वाले का पुनः पुनः जन्म-मरणरूप संसरण होता है । वही संसरण संसार कहलाता है !

त्रसकाय का समीचीन ज्ञान प्राप्त करने के लिए लक्षण आदि आठ द्वारों का निरूपण करना चाहिए । उन में से लक्षण, प्ररूपणा, परिमाण, शस्त्र उपभोग और वेदना द्वार क्रम से बतलाते हैं । वध और निवृत्ति द्वार जैसे पृथ्वीकाय के उद्देश में कहे हैं वैसे ही यहाँ समझ लेने चाहिए ।

અહીં સર્વ ત્રસ જીવોનો આઠ પ્રકારનો જન્મ બતાવ્યો છે. તેને સંમૂચ્છન્ન, ગર્ભ અને ઉપપાતમાં સમાવેશ કરી દેવાથી ત્રણ પ્રકારનો જન્મ શાસ્ત્રમાં બતાવ્યો છે. 'સંતિ' આ પદ દ્વારા ત્રસ જીવોનું ત્રિકાલવર્તી અસ્તિત્વ સૂચિત કરવામાં આવ્યું છે. મંદ અર્થાત્ મિથ્યાશાસ્ત્રોના સંસ્કારથી પ્રભાવિત, એવું હિત અહિતના વિવેકથી શૂન્ય પુરુષ માટે અંડજ આદિના સમૂહરૂપ સંસાર કહેવામાં આવ્યો છે. આઠ પ્રકારના ત્રસકાયમાં મિથ્યાશાસ્ત્રોના સંસ્કારવાળાઓનું પુનઃ પુનઃ જન્મ-મરણ રૂપ સંસરણ થાય છે. એજ સંસરણ તે સંસાર કહેવાય છે.

ત્રસકાયનું સાચું જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે લક્ષણ આદિ આઠ દ્વારોનું નિરૂપણ કરવું જોઈએ, તેમાંથી લક્ષણ, પ્રરૂપણ, પરિમાણ, શસ્ત્ર, ઉપભોગ અને વેદના દ્વાર ક્રમથી બતાવે છે, વધ અને નિવૃત્તિ દ્વાર જેવી રીતે પૃથ્વીકાયના ઉદ્દેશમાં કહ્યાં છે તેવી રીતેજ અહીં સમજ લેવા જોઈએ.



## લક્ષણદ્વારમ્—

સુખદુઃખેચ્છાદ્વેષાદિકં ચેતનલક્ષણં ત્રસકાયે પરિસ્પષ્ટમસ્તિ । અસ્ય સચેતનત્વે વિવાદા નાસ્તિ કેષાશ્ચિત્ અસ્ય વ્યક્તોચ્છ્વાસાદિલક્ષણપ્રાણયોગાત્ । અપરશ્ચ—

ત્રસકાયસ્ય લક્ષણં શાસ્ત્રે નવવિધં પ્રજ્ઞપ્તમ્ યથા—(૧) અભિક્રમણમ્, (૨) પ્રતિક્રમણમ્, (૩) સંકોચનમ્, (૪) પ્રસારણમ્, (૫) રુતમ્, (૬) ભ્રમણમ્, (૭) ત્રસનમ્, (૮) પલાયનમ્, (૯) આગતિગતિચિજ્ઞાનમ્, ઇતિ ॥

અભિક્રમણં=પ્રજ્ઞાપકં પ્રત્યભિમુખં ક્રમણમ્, પ્રતિક્રમણં=પ્રજ્ઞાપકાત્ પ્રતિકૂલં ક્રમણમ્ । સંકોચનમ્=ગાત્રસંકોચકરણમ્, પ્રસારણં=ગાત્રવિતતકરણમ્,

## લક્ષણદ્વાર—

સુખ, દુઃખ, ઇચ્છા ઓર દ્વેષ આદિ ચેતના કે લક્ષણ ત્રસકાય મેં સ્પષ્ટ માલુમ હોતે હૈ । ઇસ કી સચેતનતા મેં કિસી કો ભી વિવાદ નહીં હૈ । પ્રકટ ઉચ્છ્વાસ આદિ પ્રાણ હોને કે કારણ ત્રસ જીવ પ્રાણી હૈ ।

શાસ્ત્ર મેં ત્રસકાય કા લક્ષણ નવ પ્રકાર સે બતલાયા ગયા હૈ । જૈસે—(૧) અભિક્રમણ (૨) પ્રતિક્રમણ (૩) સંકોચન (૪) પ્રસારણ (૫) રુત (૬) ભ્રમણ (૭) ત્રસન—ત્રાસ પાના (૮) પલાયન—ભાગના ઓર (૯) ગતિ—આગતિ કા જ્ઞાન । પ્રજ્ઞાપક કી અપેક્ષા સે સામને જાના અભિક્રમણ હૈ । પ્રજ્ઞાપક કી અપેક્ષા સે પ્રતિકૂલ જાના—પીછે લૌટના પ્રતિક્રમણ હૈ । શરીર કો સિકોડના સંકોચન હૈ । શરીર કો ફેલાના

## લક્ષણદ્વાર—

સુખ, દુઃખ, ઇચ્છા અને દ્વેષ આદિ ચેતનાતું લક્ષણ ત્રસકાયમાં સ્પષ્ટ માલુમ પડે છે, તેની ચેતનતામાં કોઈને પણ વિવાદ-વાંધો નથી. પ્રકટ ઉચ્છ્વાસ આદિ પ્રાણ હોવાના કારણથી ત્રસ જીવ પ્રાણી છે.

શાસ્ત્રમાં ત્રસકાયના લક્ષણો અનેક પ્રકારે બતાવવામાં આવ્યાં છે. જેમકે—(૧) અભિક્રમણ, (૨) પ્રતિક્રમણ, (૩) સંકોચન, (૪) પ્રસારણ, (૫) રુત, (૬) ભ્રમણ, (૭) ત્રસન—ત્રાસ પામવો, (૮) પલાયન—ભાગવું અને (૯) ગતિ—આગતિનું જ્ઞાન. પ્રજ્ઞાપકની અપેક્ષાથી સામે જવું તે અભિક્રમણ છે. પ્રજ્ઞાપકની અપેક્ષાથી પ્રતિકૂલ જવું—પાછા ફરવું તે પ્રતિક્રમણ છે. શરીરને સંકોડવું તે સંકોચન છે. શરીરને ફેલાવવું તે પ્રસારણ છે.

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય૦ ૧ ઉ. ૬ સૂ. ૧ ત્રસજીવલક્ષણ-પ્રરૂપણા ૬૫૧

રુત્ત્વ=શબ્દકરણમ્, આનન્તમ્=ઇત્થેતથ્ચ ગમનમ્, ત્રસનમ્=દુઃસ્વાદુદ્વેજનમ્, પલાયિતમ્=પલાયનમ્, આગતેઃ કુતશ્ચિત્કચિત્, ગતેશ્ચ કુતશ્ચિત્ કચિદેવ ચ વિજ્ઞાનમ્ ।  
ઉક્તઞ્ચૈતદ્ભગવતા દશૈકાલિકસૂત્રે -

“ જેસિં કેસિંચિ પાણાણં અભિકંતં પડિક્કંતં સંકુચિયં પસારિયં રુયં મંતં તસિયં પલાઇયં આગહ્ગહ્વિણ્ણાયા ” ॥ ૧ ॥ ઇતિ ।

પ્રરૂપણાદ્વારમ્—

ત્રસકાયાશ્ચતુર્વિધાઃ—દ્વીન્દ્રિય - ત્રીન્દ્રિય - ચતુરિન્દ્રિય-પંચેન્દ્રિયભેદાત્ ।  
ઈહૈવ પ્રથમાંદેશકે લોકવાદિપ્રકરણે ત્રસાનાં ભેદપ્રભેદાઃ પ્રરૂપિતાઃ । વિસ્તરતો

પ્રસારણ હૈ । બોલના રુત કહલાતા હૈ । ઇધર-ઉધર જાના ભ્રમણ હૈ । દુઃસ્વ સે ઉદ્વેગ પાના ત્રસન હૈ । ભાગને કો પલાયન કહતે હૈ । એક જગહ સે દૂસરી જગહ આને-જાને કા વિજ્ઞાન આગતિગતિવિજ્ઞાન કહલાતા હૈ ।

ભગવાન્ ને દશૈકાલિક સૂત્ર મેં કહા હૈ:—

“ જિન કિન્હોં પ્રાણિયોં મેં અભિકમણ, સંકોચન, પ્રસારણ, રુત, ભ્રમણ, ત્રસન, પલાયન ઓર આગતિગતિકા વિજ્ઞાન ( પાયા જાતા હૈ વે સબ ત્રસ જીવ હૈ ) ”

પ્રરૂપણાદ્વાર—

ત્રસકાય કે ચાર ભેદ હૈ—દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય ઓર પંચેન્દ્રિય ।  
ઈસી શ્લોક કે પહેલે ઉદ્દેશ કે અન્દર લોકવાદી પ્રકરણ મેં ત્રસ જીવોં કે ભેદ-પ્રભેદ કહે હૈ । વિસ્તાર સે જાનને કે ઇચ્છુક વહીં સે જાન લેવે । ઇસ સૂત્ર મેં ભગવાન્ ને

બોલવું તે રૂત કહેવાય છે. અહીં-તહીં જવું તે ભ્રમણ છે. દુઃખથી ઉદ્વેગ પામવું તે ત્રસન છે. ભાગવું તેને પલાયન કહે છે. એક જગ્યાથી બીજી જગ્યાએ આવવા-જવાવું વિજ્ઞાન તે આગતિગતિવિજ્ઞાન કહેવાય છે.

ભગવાને દશૈકાલિક સૂત્રમાં કહ્યું છે:—

“ જે કોઈ પ્રાણીઓમાં અભિકમણ, પ્રતિકમણ, સંકોચન, પ્રસારણ, રુત, ભ્રમણ, ત્રસન, પલાયન અને આગતિ-ગતિનું વિજ્ઞાન (જોવામાં આવે છે તે સર્વ ત્રસ જીવ છે.) ”

પ્રરૂપણાદ્વાર—

ત્રસ કાયના ચાર ભેદ છે:—દ્વીન્દ્રિય, ત્રીન્દ્રિય, ચતુરિન્દ્રિય અને પંચેન્દ્રિય. આજ શાસ્ત્રના પ્રથમના ઉદ્દેશમાં લોકવાદીપ્રકરણમાં ત્રસજીવોના ભેદ-પ્રભેદ બતાવ્યા છે, વિસ્તારથી

જિજ્ઞાસુમિસ્તત એવાવગન્તવ્યાઃ । અસ્મિન્ સૂત્રેઽપિ ભગવતા-અણ્ડજપોતજાદિભેદાઃ પ્રદર્શિતાસ્તેઽપિ તત્રૈવ સમાવિષ્ટાઃ ॥

### પરિમાણદ્વારમ્ —

ક્ષેત્રતઃ સંવર્તિતલોકપ્રતરાસંખ્યેયભાગવર્તિપ્રદેશરાશિપ્રમાણાઃ ત્રસકાયપર્યાપ્તકાઃ । એતે ચ વાદરતેજસ્કાયપર્યાપ્તકેભ્યોઽસંખ્યેયગુણાઃ, ત્રસકાયપર્યાપ્તકેભ્યસ્ત્રસકાયિકાઽપર્યાપ્તકાઃ અસંખ્યેયગુણાઃ ।

તથા કાલતઃ પ્રત્યુત્પન્નત્રસકાયિકાઃ સાગરોપમલક્ષપૃથક્ત્વસમયરાશિપરિમાણા જઘન્યપદે, ઉત્કૃષ્ટપ્રદેઽપિ સાગરોપમલક્ષપૃથક્ત્વપરિમાણા એવેતિ । તથા આગમઃ—

અંડજ ઓર પોતજ આદિ જો ભેદ વતલાયે હૈં, યે સબ મી ઉન્હીં મેં અન્તર્ગત હો જાતે હૈં ।

### પરિમાણદ્વાર—

ત્રસકાય કે પર્યાપ્ત જીવ ક્ષેત્ર કી અપેક્ષા સંવર્તિત લોકપ્રતર કે અસંખ્યાતવેં ભાગવર્તી પ્રદેશોં કી રાશિ કે બરાબર હૈં । યે વાદર તેજસ્કાય પર્યાપ્ત જીવોં સે અસંખ્યાતગુણા હૈં । પર્યાપ્ત ત્રસકાયિક જીવોં કી અપેક્ષા અપર્યાપ્ત ત્રસ જીવ અસંખ્યાતગુણા હૈં । કાલ કી અપેક્ષા જઘન્યપદ મેં પ્રત્યુત્પન્ન ત્રસ જીવ એક લાખ સે નૌ લાખ તક કે સાગરોપમ કીં સમય-રાશિ કે બરાબર હૈં ઓર ઉત્કૃષ્ટ પદ મેં મી એક લાખ સે નૌ લાખ તક કે સાગરોપમ કી સમયરાશિ કે બરાબર હીં હૈં । આગમ મેં મી કહા હૈ—

બાણુવાની ઇચ્છાવાળા ત્યાંથી બાણી લે. આ સૂત્રમાં ભગવાને-અંડજ અને પોતજ આદિના જે લેહ બતાવ્યા છે, તે સર્વનો તેમાં સમાવેશ થઈ જાય છે.

### પરિમાણદ્વાર—

ત્રસકાયના પર્યાપ્તજીવ ક્ષેત્રની અપેક્ષા સંવર્તિત લોકપ્રતરના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી પ્રદેશોની રાશિના બરાબર છે. તે બાદર તેજસ્કાય પર્યાપ્ત જીવોથી અસંખ્યાત ગણા છે. પર્યાપ્ત ત્રસકાયિક જીવોની અપેક્ષા અપર્યાપ્ત ત્રસજીવ અસંખ્યાત ગણા છે.

કાલની અપેક્ષા જઘન્યપદમાં પ્રત્યુત્પન્ન ત્રસજીવ એકલાખ થી નવલાખ સુધીના સાગરોપમની સમય-રાશિના બરાબર છે. અને ઉત્કૃષ્ટ પદમાં પણ એક લાખથી નવલાખ સુધીના સાગરોપમની સમય-રાશિના બરાબર જ છે. આગમમાં પણ કહ્યું છે:—



“પટુપ્પન્ના તસકાઝ્યા કેવહકાલસ્સ નિલ્લેવા સિયા ? ગોયમા ! જહનપ્પ સાગરોવમસયસહસ્સપુહત્તસ્સ, ઉક્કોસતંપિ સાગરોવમસયસહસ્સપુહત્તસ્સ” ॥ ઇતિ ।

વિરહાપેક્ષયા ત્રસાનાં નિષ્ક્રમણમુપપાતશ્ચ જઘન્યત ઇકો દ્વૌ ત્રયો વા ભવન્તિ, ઉત્કૃષ્ટતસ્તુ પ્રતરસ્યાસંખ્યેયભાગપ્રદેશપરિમાણાઃ । વસેષુ જીવાનાં નૈરન્તર્યેણોત્પત્તિનિષ્ક્રમો વા જઘન્યેનૈકં સમયં દ્વૌ સમયૌ ત્રીન્ વા સમયાન્ ભવતિ । ઉત્કૃષ્ટતસ્ત્વાવલિકાયા અસંખ્યેયભાગપરિમિતં કાલં સતતમેવોત્પત્તિનિષ્ક્રમો વા ભવતિ । નૈરન્તર્યેણૈકજીવસ્યાવસ્થાનં તુ જઘન્યતોઽન્તર્મુદ્ધૂર્તે ત્રસકાયે ભવતિ, તદનુ સ પૃથિવ્યાદ્યેકેન્દ્રિયેષુ સમુત્પદ્યતે । ઉત્કૃષ્ટતઃ સાતિરેકં સાગરોપમસહસ્રદ્વયં સતતં નૈરન્તર્યેણ ત્રસકાયે તિષ્ઠતિ । તતઃ

“પત્યુત્પન્ન ત્રસકાયિક જીવ કિતને કાલ કે વરાવર હૈં ? ગૌતમ ! જઘન્ય પદ મેં એક લાખ સે નૌ લાખ તક કે સાગરોપમ કે વરાવર ઓર ઉત્કૃષ્ટ પદ મેં મી ઇતને હી હૈ” ।

વિરહ કી અપેક્ષા ત્રસ જીવોં કા નિષ્ક્રમણ ઓર ઉપપાત જઘન્ય એક, દો યા ત્રીન હૈં, ઓર ઉત્કૃષ્ટ પ્રતર કે અસંખ્યાતવેં ભાગવર્તી પ્રદેશોં કે વરાવર હૈ । ત્રસકાય મેં જીવોં કી નિરન્તર ઉત્પત્તિ યા વ્યવન જઘન્ય એક સમય, દો સમય, ત્રીન સમયતક હૈ । ઉત્કૃષ્ટ આવલિકા કે અસંખ્યાતવેં ભાગ પરિમિત કાલ તક નિરન્તર ઉત્પત્તિ ઓર વ્યવન હોતા રહતા હૈ । નિરન્તર એક જીવ કી સ્થિતિ જઘન્ય અન્તર્મુદ્ધૂર્ત તક ત્રસકાય મેં હોતી હૈ ઓર ઉસકે બાદ વહ પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિય મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ । ઉત્કૃષ્ટ કુછ અધિક દો હજાર સાગરોપમતક નિરન્તર ત્રસકાય મેં ઠહર સકતા હૈ । તત્પશ્ચાત્

“પત્યુત્પન્ન ત્રસકાયિક ઇવ કેટલા કાલની બરાબર છે ? ગૌતમ ! જઘન્ય પદમાં એક લાખથી નવલાખ સુધીના સાગરોપમની બરાબર અને ઉત્કૃષ્ટ પદમાં, પણ એટલાં જ છે.”

વિરહની અપેક્ષા ત્રસ જીવોંનું નિષ્ક્રમણ અને ઉપપાત જઘન્ય એક, બે અથવા ત્રણ છે. અને ઉત્કૃષ્ટ પ્રતરના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી પ્રદેશોની બરાબર છે. ત્રસકાયમાં જીવોની નિરંતર ઉત્પત્તિ અથવા નિષ્ક્રમણ (વ્યવન) જઘન્ય એક સમય, બે સમય અથવા ત્રણ સમય સુધી છે. ઉત્કૃષ્ટ આવલિકાના અસંખ્યાતમા ભાગ પરિમિત કાલ સુધી નિરંતર ઉત્પત્તિ અને નિષ્ક્રમણ (નિકળવું) થતું રહે છે. નિરંતર એક જીવની સ્થિતિ જઘન્ય અન્તર્મુદ્ધૂર્ત સુધી ત્રસકાયમાં હોય છે. અને તે પછી તે પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિયમાં ઉત્પન્ન થાય છે. ઉત્કૃષ્ટ કાર્થિક અધિક બે હજાર સાગરોપમ સુધી

પૃથિવ્યાદિષ્ટપદ્યતે । ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ત્રસજીવાનાં સુખં દુઃખં વા યથા ભવતિ તદાહ—‘ નિજ્ઞાઈતા.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

નિજ્ઞાઈતા પડિલેહિતા પત્તયં પરિનિવ્વાણં સર્વેસિં પાણાણં સર્વેસિં ભૂયાણં  
સર્વેસિં જીવાણં સર્વેસિં સત્તાણં અસાયં અપરિનિવ્વાણં મહત્ત્વમયં દુઃખં—તિ વેમિ  
॥ સૂ૦ ૨ ॥

છાયા—

નિધ્યાય પ્રતિલેખ્ય પ્રત્યેકં પરિનિર્વાણં સર્વેષાં પ્રાણાનાં સર્વેષાં ભૂતાનાં  
સર્વેષાં જીવાનાં સર્વેષાં સત્ત્વાનામ્ અસાતમ્ અપરિનિર્વાણં મહાભયં દુઃખમિતિ  
બ્રવીમિ ॥ સૂ૦ ૨ ॥

પ્રકરણસમ્બન્ધાત્ ત્રસજીવસ્વરૂપં પૃથિવ્યાદિસકલજીવસ્વરૂપં વા

પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોં મેં ઉત્પન્ન હોતા હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ત્રસજીવોં કો સુખ-દુઃખ જિસ પ્રકાર હોતા હૈ સો કહતે હૈ—‘ નિજ્ઞાઈતા.’  
ઈત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—વિચાર કરકે ઓર અચ્છી તરહ દેખકર કહતા હૂં કિ—સમી  
પ્રાણિયોં કા, સમી ભૂતોં કા, સમી જીવોં કા, ઓર સમી સર્વોં કા પરિનિર્વાણ અર્થાત્  
સુખ પૃથક્-પૃથક્ હૈ । તથા અસાતારૂપ, અપરિનિર્વાણરૂપ મહાભયરૂપ દુઃખ મી પૃથક્-  
પૃથક્ હૈ । ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકાર્થ—ત્રસ જીવોં કા પ્રકરણ હોને કે કારણ ‘વિચાર કરને’ કા  
આશય યહ હૈ કિ ત્રસજીવોં કા સ્વરૂપ, અથવા પૃથ્વીકાય આદિ સમસ્ત જીવોં કા  
નિરંતર ત્રસકાયમાં રહી શકે છે, તે પછી પૃથ્વીકાય આદિ સ્થાવરોંમાં ઉત્પન્ન થાય  
છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ત્રસ જીવોંને સુખ-દુઃખ જે પ્રકારે થાય છે, તે કહે છે—‘નિજ્ઞાઈતા.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—વિચાર કરીને સારી રીતે જોઈને કહું છું કે—સર્વ પ્રાણીઓ સર્વ-  
ભૂતો, સર્વ જીવો અને સર્વ સત્ત્વોનું પરિનિર્વાણ અર્થાત્ સુખ પૃથક્-પૃથક્-જૂદાં-જૂદાં  
છે, તથા અસાતારૂપ અપરિનિર્વાણરૂપ મહાભયરૂપ દુઃખ પણ જૂદાં-જૂદાં છે. ॥ સૂ૦ ૨ ॥

ટીકાર્થ—ત્રસજીવોંનું પ્રકરણ હોવાના કારણે ત્રસજીવોંનું સ્વરૂપ અથવા પૃથ્વીકાય

निध्याय=मनसा समालोच्य, प्रतिलेख्य=विलोक्य सम्यग् विज्ञायेत्यर्थः, ब्रवीमि=कथयामि-सर्वेषां प्राणानां=प्राणाः सन्ति येषां ते प्राणाः=प्रणिनस्तेषां, सर्वेषां भूतानाम्=उत्पत्तिशीलानाम्, सर्वेषां जीवानां=कालत्रये जीवनाद् चैतन्यस्वरूपाणामित्यर्थः, सर्वेषां सत्त्वानां=सर्वदाऽस्तित्ववताम्, त्रसजीवानाम्, यद्वा-सर्वेषामित्यस्य पुनः पुनरुपादानेन स्थावरा अपि गृह्यन्ते, तेन त्रसानां स्थावराणां च जीवानामित्यर्थः। परिनिर्वाणं=सुखं, प्रत्येकम्=एकैकं पृथक् पृथगस्ति।

शब्दव्युत्पत्त्या विभिन्नार्थबोधकत्वात् प्राणभूतादिशब्दानामुच्चारणं न पुनरुक्तिदोषः। 'निज्ज्ञाइत्ता' 'पडिलेहिता' इति पदद्वयेन जीवानां पुनः पुनरनुसन्धानं प्रतिलेखनं च सूचितम्, तदेव पुनः पुनर्विधेयतया प्रतिबोधनार्थ-

स्वरूप मन से विचार करके तथा सम्यक् प्रकार से जानकर कहता हूँ। सभी प्राणियों का सभी भूतों अर्थात् उत्पत्तिशील जीवों का, सभी जीवों (त्रिकाल में जीवित रहने वालों) का और सभी सत्त्वों (सर्वदा अस्तित्व वाले त्रस जीवों) का, अथवा बार-बार 'सर्वेसि' पदका प्रयोग करने के कारण यह अर्थ लेना चाहिए कि-सभी त्रस और स्थावर जीवों का सुख पृथक्-पृथक् है।

शब्दशास्त्र की दृष्टि से भिन्न-भिन्न अर्थ के बोधक प्राण, भूत आदि शब्दों का उच्चारण करने पर भी पुनरुक्ति दोष नहीं है। अथवा प्राण भूत आदि शब्दों को एक ही अर्थ का वाचक मान लिया जाय तों भी पुनरुक्तिदोष नहीं है। 'निज्ज्ञाइत्ता' 'पडिलेहिता' इन दो पदों द्वारा जीवों का पुनः पुनः विचार एवं प्रतिलेखन सूचित किया है। उसी को पुनः पुनः विधेयरूप से समझाने के लिए

आदि समस्त ज्ञेयानुं स्वल्प मनशी विचार करीने तथा सम्यक् प्रकारे ज्ञाणीने कहुं छुं-सर्व प्राणीज्ज्ञेयानुं, सर्वभूतानुं अर्थात् उत्पत्तिशील ज्ञेयानुं, सर्व ज्ञेय (त्रस काल ज्ञेयित रहैवावाणा)नुं, अने सर्व सत्त्वो-(सर्वदा अस्तित्ववाणा त्रस ज्ञेय)नुं, अथवा बार-बार 'सर्वेसि' पदने प्रयोग करवाना कारणे ये अर्थ लेवे जेधये के-सर्व त्रस अने स्थावर ज्ञेयानुं सुख पृथक्-पृथक् छे।

शब्दशास्त्रनी दृष्टिथी भिन्न-भिन्न अर्थना बोधक प्राण-भूत आदि शब्दोनुं उच्चारण करवाथी पण पुनरुक्ति दोष आवतो नथी अथवा प्राणभूत आदि शब्दोने ऐक्य अर्थना वाचक मानी लेवामां आवे तो पण पुनरुक्तिदोष नथी। 'निज्ज्ञाइत्ता' 'पडिलेहिता' आ जे पदो द्वारा ज्ञेयानो पुनः पुनः विचार अर्थात् प्रतिबोधन सूचित कथुं छे। तेने पुनः पुनः



મનેકપર્યાયશબ્દૈસ્તેષામુપાદાનાત્ ।

તથા સર્વેષાં દુઃખં પ્રત્યેકં પૃથક્ પૃથગસ્તિ । કથમ્ભૂતં દુઃખમિત્યાહ—  
'અસાત'—મિત્યાદિ । અસાતમ્ અસાતવેદનીયકર્મફલભૂતમ્, તથા—અપરિનિર્વાણમ્=  
સર્વથા શરીરમનઃ પીડાકરમ્, તથા—મહાભયમ્=દુઃખાદધિકં ભયમન્યન્નાસ્તિ, યતઃ  
સર્વેઽપિ પ્રાણિનઃ શારીરાન્માનસાદપિ દુઃખાદુદ્વિજન્તે, તસ્માન્મહાભયસ્વરૂપમિત્યર્થઃ  
॥ સૂ. ૨ ॥

एतच्च ब्रवीमीत्याह 'तसंति पाणा.' इत्यादि ।

मूलम्—

तसंति पाणा पदिसो दिसासु य । तत्थ पुढो पास आतुरा, पस्तिवंति,  
संति पाणा पुढो सिया ॥ सू. ३ ॥

अनेक पर्यायवाची शब्दों का प्रयोग किया गया है ।

इसी प्रकार सब जीवों का दुःख भी पृथक्-पृथक् है । दुःख किस प्रकार का है ?  
सो कहते हैं—वह असातावेदनीय कर्म का फल है, शरीर और मन को पूरी तरह पीडा  
उत्पन्न करता है और महाभयंकर है—दुःख से बढ़कर और कोई भय नहीं है, क्यों  
कि सभी प्राणी शारीरिक और मानसिक दुःख से घबराते हैं, अतः वह महाभयकारी  
है ॥ सू. २ ॥

और मैं यह कहता हूँ—'तसंति पाणा.' इत्यादि ।

मूलार्थ—प्राणी विदिशाओ में और दिशाओ में उद्वेग पाते हैं । अलग—  
अलग प्रयोजनो के लोलुप लोग उन्हें संताप पहुंचाते हैं । वे त्रस प्राणी पृथ्वी आदि विभिन्न  
आश्रयो पर आश्रित हैं ॥ सू. ३ ॥

વિધેયરૂપથી સમજાવવા માટે અનેક પર્યાયવાચી શબ્દોનો પ્રયોગ કરવામાં આવ્યો છે.

આ પ્રમાણે સર્વજીવોના દુઃખ પણ જૂઠા-જૂઠા છે. દુઃખ કયા પ્રકારના છે ?  
તે કહે છે—તે આ અસાતાવેદનીય કર્મનું ફળ છે; શરીર અને મનને પૂરી રીતે પીડા  
ઉત્પન્ન કરે છે. અને મહા ભયંકર છે. દુઃખથી વધારે કેઈ પણ ભય નથી. કારણકે સર્વ  
પ્રાણી-શારીરિક અને માનસિક દુઃખથી ગભરાય છે. તેથી તે મહાભયકારી છે. ॥સૂ. ૨॥

અને હું એ પણ કહું છું—'તસંતિ પાણા.' ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—પ્રાણી વિદિશાઓમાં અને દિશાઓમાં ઉદ્વેગ પામે છે. અલગ-અલગ  
પ્રયોજનોથી લોલુપ લોક તેને સંતાપ પહોંચાડે છે. તે ત્રસ પ્રાણી પૃથ્વી આદિ વિભિન્ન  
આશ્રયો પર આશ્રિત છે. ॥સૂ. ૩॥

છાયા—

ત્રસ્યન્તિ પ્રાણાઃ પ્રદિશઃ દિશાસુ ચ । તત્ર તત્ર પૃથક્ પશ્ય, આતુરાઃ પરિતાપ-  
યન્તિ, સન્તિ પ્રાણાઃ પૃથક્ શ્રિતાઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

ટીકા—

પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ પ્રકરણસમ્બન્ધાત્ ત્રસજીવાઃ પ્રદિશઃ=પ્રગતા દિક્ પ્રદિક્  
વિદિગિત્યર્થઃ, તતઃ પ્રદિશઃ, તથા-દિશાસુ પ્રાચ્યાદિદિક્ષુ ચ સમાગન્તુકેભ્યો દુઃખેભ્ય,  
ત્રસ્યન્તિ=વિભ્યતિ । સર્વદિગ્વિદિક્ષુ ત્રસાઃ સન્તિ, તે ચ સર્વદિગ્વિદિગ્મ્યઃ સમાગન્તુ-  
કેભ્યો દુઃખેભ્યસ્ત્રસ્યન્તીત્યર્થઃ ।

કુતસ્તેષાં દુઃખસંભવઃ ? इति जिज्ञासायामाह-‘तत्र-तत्रे’ त्यादि । तत्रतत्र=  
तेषु-तेषु, पृथक्=विभिन्नेषु प्रयोजनेषु, आतुराः=अर्चाचर्ममांसदिगृध्नवः त्रसान्  
परितापयन्ति=परिपीडयन्ति । विविधवेदनोत्पादनेन प्राणव्यपरोपणेन च सर्वथा दुःखं  
जनयन्तीत्यर्थः । कीदृशास्ते त्रसाः, यानातुराः परितापयन्ति ? इति जिज्ञासाया-

ટીકાર્થ—ત્રસ કા પ્રકરણ હોને સે ‘પ્રાણ’ શબ્દ કા અર્થ યહાં ત્રસજીવ સમજના  
ચાહિયે । ત્રસ પ્રાણી વિદિશાઓ મેં આગન્તુક દુઃખો સે ત્રસ્ત હૈં । તાત્પર્યે યહ હૈ કિ-સમી  
વિદિશાઓ મેં ઓર સમી દિશાઓ મેં ત્રસજીવ વિદ્યમાન હૈં ઓર સમી વિદિશાઓ ઓર  
દિશાઓ સે આને વાલે દુઃખો સે વે પીડિત હોતે હૈં ।

उन्हें दुःख क्यों होता है ? इसका उत्तर यह है-विभिन्न प्रयोजनों से  
आतुर लोग अर्थात् अर्चा (शरीर), चर्म, मांस, आदि के लोलुप पुरुष त्रस जीवों को पीडा  
पहुँचाते हैं । उन्हें भैंति-भैंति की वेदना उत्पन्न करके उनके प्राणों का व्यपरोपण  
करते हैं और सब प्रकार से दुःख उत्पन्न करते हैं । वे त्रसजीव पृथिवी आदि के

ટીકાર્થ—ત્રસનું પ્રકરણ હોવાથી ‘પ્રાણ’ શબ્દનો અર્થ ત્રસજીવ સમજવો.  
જોઈએ ત્રસ પ્રાણી વિદિશાઓમાં તથા દિશાઓમાં આગન્તુક દુઃખોથી ત્રસ પામે છે.  
તાત્પર્ય એ છે કે-સર્વ વિદિશાઓમાં અને સર્વ દિશાઓમાં ત્રસ જીવ વિદ્યમાન છે,  
અને સર્વ વિદિશાઓ તથા દિશાઓથી આવવાવાળા દુઃખોથી તે પીડા પામે છે.

तेने दुःख शा माटे थाय छे ? तेने उत्तर ये छे के-जूहा-जूहा प्रयोजनोथी आतुर  
लोक अर्थात् अर्चा (शरीर), चर्म, मांस वगैरेना लोलुप पुरुष त्रस जीवोने पीडा पहुँचाउ  
छे, तेने जूही-जूही जतनी वेदना उत्पन्न करे छे. ते त्रस जिव पृथ्वी आदिना आश्रये

માહ-‘ સન્તિ’ ઇત્યાદિ । શ્રિતાઃ=પૃથિવ્યાદીન્ સમાશ્રિત્યાવસ્થિતાઃ, પૃથક્=વિભિન્નાઃ દ્વીન્દ્રિયાદયઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સન્તિ ।

યદ્યપિ સર્વદિગ્વિદિગ્મ્ય આગામિનો દુઃસ્વાદ્ વિમ્બ્યન્તસ્ત્વસજીવાઃ સ્વાત્મરક્ષાર્થં પૃથિવ્યાદીન્ સમાશ્રિત્વ વર્તન્તે તથાપિ માંસચર્માદિલુબ્ધા આતુરાસ્તાન્ બન્ધનતાડનાદિના શાવકાદ્યપહારેણ પ્રાણાદ્યપહારેણ ચ પરિપીડયન્તિ, તતઃ સંસારં પ્રાપ્નુવન્તિ । તસ્માદેતત્ પરિજ્ઞાય સકલસાવધવ્યાપારપરિહારેણ સંયમાનુષ્ઠાને પ્રવર્તિતવ્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

અથ સર્વથા ત્રસકાયસમારમ્ભપરિત્યાગિનોઽનગારાન્, તથા ત્રસકાય-સમારમ્ભપ્રવૃત્તાન્ દ્રવ્યલિઙ્ગિનશ્ચ વિવિચ્ય પ્રતિબોધયિતુમાહ-‘ લજ્જમાણા. ’ ઇત્યાદિ ।

સહારે અલગ-અલગ રહે હુણે હૈં ।

યદ્યપિ સર્વ દિશાઓ ઓર વિદિશાઓ સે આનેવાલે દુઃસ્વો સે હરને વાલે ત્રસ જીવ અપની રક્ષા કે લિણ પૃથ્વી આદિ કે સહારે ટિકે રહેતે હૈં ફિર મી માંસ ઓર ચર્મ આદિ કે લોમી લોગ ઉન્હેં બંધન ંવ તાડન દ્વારા, ઉનકે બચ્ચોકા અપહરણ કરકે તથા ઉનકે પ્રાણો કા હનન કરકે ઉન્હેં પીડા પહુંચાતે હૈં ઓર ઇસ કારણ વે હિંસક, સંસાર કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । આશય યહ હૈં કિ-યહ સર્વ જાનકર સમ્પૂર્ણ સાવધ વ્યાપાર કા ત્યાગ કરકે સંયમ કી સાધના મેં પ્રવૃત્ત હોના ચાહિણ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

અવ પૂર્ણરૂપ સે ત્રસકાય કે આરંભ કા ત્યાગ કરને વાલે અનગારોં કા તથા ત્રસકાય કે આરંભ મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલે દ્રવ્યલિંગિયોં કા વિવેચન કરકે સમજાતે હુણ કહતે હૈં-‘ લજ્જમાણા. ’ ઇત્યાદિ ।

અલગ-અલગ રહેલો છે.

જો કે સર્વ દિશાઓ અને વિદિશાઓથી આવનારા દુઃખોથી હરવાવાળા ત્રસજીવ પોતાની રક્ષા માટે પૃથ્વી આદિના આશ્રયે ટકી રહે છે. ફરી પણ માંસ અને ચામડા આદિના લોભી લોક તેને બંધન એ પ્રમાણે તાડનદ્વારા, તેના બચ્ચાંઓનું અપહરણ કરીને (ચીરી બંધને) તથા તેના પ્રાણોનું હનન-નાશ કરીને તેને પીડા પહોંચાડે છે. અને આ કારણથી તે હિંસક-સંસારને પ્રાપ્ત થાય છે. આશય એ છે કે-એ સર્વ બાણી કરીને સંપૂર્ણ સાવધ વ્યાપારનો ત્યાગ કરીને સંયમની સાધનામાં પ્રવૃત્ત થવું જોઈએ. ॥૩॥

હવે પૂર્ણરૂપથી ત્રસકાયનાં આરંભનો ત્યાગ કરવાવાળા અણુગારોનું તથા ત્રસકાયના આરંભમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા દ્રવ્યલિંગિઓનું વિવેચન કરીને સમબલતા થકા કહે છે-‘ લજ્જમાણા. ’ ઇત્યાદિ.



મૂલમ્—

લજ્જમાણા પુઠો પાસ, અનગારા મોત્તિ એગે પવયમાણા, જમિણં, વિરુવરુવેહિં સત્થેહિં તસકાયસમારંભેણં, તસકાયસત્થં સમારંભમાણા અણ્ણે અણેગરુવે પાણે વિહિંસંતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

છાયા—

લજ્જમાનાઃ પૃથક્ પશ્ય, અનગારાઃ સ્મઃ, ઇતિ એકે પ્રવદમાનાઃ, યદિમં વિરુપરુપૈઃ શસ્ત્રૈઃ ત્રસકાયસમારંભેણ, ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારંભમાણા અન્યાન્ અનેકરૂપાન્ પ્રાણાન્ વિહિંસન્તિ ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકા—

લજ્જમાનાઃ=પરમકરુણયાઽઽદ્રહદયતયા ત્રસકાયસમારંભે પરાઙ્મુશ્વાઃ ત્રસકાયસમારંભપરિત્યાગિનોઽનાગારા ઇત્યર્થઃ । પૃથક્=વિભિન્નાઃ, કેચિત્-પ્રત્યક્ષજ્ઞાનિનોઽવધિમનઃપર્યયકેવલિનઃ, કેચિત્-પરોક્ષજ્ઞાનિનો ભાવિતાત્માનઃ, સન્તીતિ પશ્ય । યદ્વા-પૃથક્=દ્રવ્યલિઙ્ગિભ્યઃ પૃથગ્ભાવેન સન્તીતિ પશ્ય । ઇમે ત્રસ-

મૂલાર્થ—ત્રસકાય કે આરંભ મેં સંકોચ કરને વાલે (અનગારો કો) અલગ સમજો । ‘હમ અનગાર હૈં’ એસા કહને વાલે કોઈ-કોઈ (દ્રવ્યલિંગી) નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રો કા પ્રયોગ કરતે હુએ ઓર મી અનેક પ્રકાર કે પ્રાણિયોં કી હિંસા કરતે હૈં ઉનકો અલગ દેલો ॥ સૂ. ૪ ॥

ટીકાર્થ—પરમ કરુણા સે ‘જિનકા હૃદય દ્રવિત હૈ એસે અનગાર ત્રસકાય કે આરંભ સે સર્વથા વિમુક્ષ રહતે હૈં । યે અનગાર અલગ-અલગ હૈં । કોઈ અવધિજ્ઞાની, કોઈ મનઃપર્યયજ્ઞાની ઓર કોઈ કેવલજ્ઞાની હૈં । કોઈ-કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની ભાવિમાત્મા હૈં,

મૂલાર્થ—ત્રસકાયના આરંભમાં સંકોચ કરવાવાળા અણુગારોને અલગ-બુદ્ધા-સમજો, ‘અમે અણુગાર છીએ’ એ પ્રમાણે કહેવાવાળા કોઈ-કોઈ દ્રવ્યલિંગી, નાના પ્રકારનાં શસ્ત્રોથી ત્રસકાયનો આરંભ કરીને, ત્રસકાયનાં શસ્ત્રોનો પ્રયોગ કરતા થકા બીજા પણ અનેક પ્રકારના પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે. તેને અલગ બુદ્ધો. ॥સૂ. ૪॥

ટીકાર્થ—પરમ કરુણાથી જેનું હૃદય દ્રવિત છે એવા અણુગાર ત્રસકાયના આરંભથી સર્વથા વિમુક્ષ રહે છે-દૂર રહે છે. તે અણુગાર અલગ-અલગ છે. કોઈ અવધિજ્ઞાની, કોઈ મનઃપર્યયજ્ઞાની, અને કોઈ કેવલજ્ઞાની છે. કોઈ-કોઈ પરોક્ષજ્ઞાની

કાયસમારમ્ભકરણે ભીતાસ્ત્તા ઉદ્વિગ્નાસ્ત્રિકરણત્રિયોગૈસ્વસકાયસમારમ્ભપરિત્યાગિનો વિદ્યન્તે, ઇતિ વિલોકયેત્યર્થઃ ।

એકે પુનરન્તે તુ ‘વયમનગારાઃ સ્મઃ’ ઇતિ સાભિમાનં પ્રવદમાનાઃ ‘વયમેવ ત્રસકાયરક્ષણપરા મહાવ્રતધારિણઃ’ ઇતિ પ્રલપન્તો દ્રવ્યલિજ્ઞિનઃ સન્તિ, તાન્ પૃથક્ પશ્ય ।

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्तन्ते, नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्तीति दर्शयति—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद् ; विरूपरूपैः=विभिन्नस्वरूपैः शस्त्रैः, शस्त्रं हि द्रव्यभावभेदाद्

इन्हें देखो । अथवा इन्हें द्रव्यलिङ्गियों से अलग समझना चाहिए । ये त्रसकाय का आरंभ करते हुए डरते हैं, त्रस्त होते हैं, उद्विग्न होते हैं—तीन करण, तीन योग से त्रसकाय के आरंभ के त्यागी हैं, यह देखो ।

और कोई-कोई ‘हम अनगार हैं’ इस प्रकार अभिमानपूर्वक कहते हुए तथा ‘हम ही त्रसकाय के रक्षक और महाव्रतधारी हैं’ इस तरह प्रलाप करते हुए कई द्रव्यलिङ्गी हैं, उन्हें अनगारों से अलग समझो ।

अनगार होने का अभिमान करने वाले ये द्रव्यलिङ्गी अनगार के गुणों में तनिक भी प्रवृत्त नहीं होते और न गृहस्थ के किसी काम का त्याग करते हैं । यह बात आगे बतलाते हैं:—‘यदिमम्’ इत्यादि ।

द्रव्य और भाव के भेद से शस्त्र दो प्रकार का है । द्रव्यशस्त्र के तीन

ભાવિતાત્મા છે. આને જુઓ. અથવા એને દ્રવ્યલિંગીઓથી અલગ સમજવા બેધએ. જે ત્રસકાયનો આરંભ કરતાં ડરે છે, ત્રસ્ત થાય છે, ઉદ્વિગ્ન થાય છે—ત્રણ કરણ, ત્રણ યોગથી ત્રસકાયના આરંભના ત્યાગી છે એ જુઓ.

આને કોઈ-કોઈ ‘અમે અણુગાર છીએ’ એ પ્રમાણે અભિમાનપૂર્વક કહેતા થકા તથા ‘અમેજ ત્રસકાયના રક્ષક અને મહાવ્રતધારી છીએ’ એ પ્રમાણે પ્રલાપ-બકવાદ કરનારા કેટલાક દ્રવ્યલિંગી છે. તેને અણુગારોથી જૂદા સમજો.

અણુગાર હોવાનું અભિમાન કરવાવાળા એ દ્રવ્યલિંગી અણુગારના ગુણોમાં જરાપણ પ્રવૃત્ત નથી અને ગૃહસ્થના કોઈ પણ કામનો તેઓએ ત્યાગ કર્યો નથી. તે વાત આગળ બતાવે છે—‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ.

દ્રવ્ય અને ભાવના ભેદથી શસ્ત્ર બે પ્રકારનાં છે. દ્રવ્યશસ્ત્રના ત્રણ ભેદ છે. સ્વકાય,

द्विविधम्, तत्र-द्रव्यशस्त्रं-स्वकाय-परकायो-भयकायभेदात् त्रिविधम् । तत्रस्वकाय-  
शस्त्रेऽसकायस्य त्रसकायः, यथा-मृगादीनां व्याधकुक्कुरादयः, मनुष्यादीनां मनुष्यादयः ।  
परकायशस्त्रम्-पाषाणजलाग्निलगुडखट्वतोमरलुरिकादयः । उभयकायशस्त्रम्-लगुडखट्वा-  
दिधारिणो मनुष्यादयः । भावशस्त्रं तु त्रसकायं प्रति मनोवाक्कायानां दुष्प्रणिधानम् ।  
त्रसकायसमारम्भेण, त्रसः=त्रसनशीलः कायः=शरीरं यस्य स त्रसकायस्तस्य  
समारम्भः=पीडाकरः सावद्यव्यापारस्तेन, इमं=त्रसकायं विहिंसन्ति ।

त्रसकायहिंसायां प्रवृत्ताः खलु षड्जीवनिकायरूपं लोकं सर्वमेव  
विहिंसन्तीत्याह-‘त्रसकायशस्त्रम्.’ इत्यादि । त्रसकायशस्त्रं=त्रसजीवोपमर्दकं शस्त्रं  
पूर्वोक्तप्रकारं, समारम्भमाणाः=त्रसकायं प्रति प्रयुञ्जानाः अन्यान्=त्रसकायभिन्नान्

भेद हैं-स्वकाय, परकाय, और उभयकाय । त्रसकाय का त्रसकाय स्वकायशस्त्र है,  
जैसे मृग आदि के लिए व्याध, कुत्ता आदि, मनुष्य के लिए मनुष्य आदि । परकायशस्त्र जैसे  
पथर, जल, अग्नि, लकड़ी, तलवार, तोमर, शरी आदि । उभयकायशस्त्र जैसे लाठी, तलवार  
आदि कारण करने वाला मनुष्य आदि । त्रसकाय के प्रति मन, वचन, और कायका अप्रशस्त  
व्यापार होना भावशस्त्र है । इन नाना प्रकार के शस्त्रों से त्रसकाय का समारंभ करके लोग  
त्रसकाय को पीडा पहुँचाते हैं ।

त्रसकाय की हिंसा में प्रवृत्ति करने वाले छह प्रकार के जीवनिकायरूप सम्पूर्ण  
लोक की हिंसा करते हैं, यह बात कहते हैं-त्रसकाय में, त्रसकाय की हिंसा करने वाले  
शस्त्रों का जो प्रयोग करते हैं वे त्रसकाय के अतिरिक्त अनेक प्रकार के पृथ्वीकाय आदि

परकाय अने उभयकाय, त्रसकायनुं त्रसकाय ते स्वकायशस्त्र छे, जेम मृग आदिने  
भाटे वाध-कुत्तरा आदि, मनुष्यने भाटे मनुष्य आदि. परकायशस्त्र, जेमके पथर,  
जल, अग्नि, लाकड़ी, तलवार, लातुं, छरी आदि. उभयकायशस्त्र, जेमके-लाकड़ी,  
तलवार आदि धारण करवावाणा मनुष्य आदि. त्रसकायना प्रति मन, वचन अने  
कायने अप्रशस्त व्यापार थेवे ते भावशस्त्र छे. ते नाना प्रकारनां शस्त्रोथी त्रसकायने  
समारंभ करीने लोक त्रसकायने पीडा पहुँचाउ छे.

त्रसकायनी हिंसाभां प्रवृत्ति करवावाणा छ प्रकारना जीवनिकायरूप सम्पूर्ण  
लोकनी हिंसा करे छे. ये बात कहे छे-त्रसकायभां, त्रसकायनी हिंसा करवावाणा-शस्त्रोने  
जे प्रयोग करे छे, ते त्रसकायथी जूहा अनेक प्रकारना पृथ्वीकाय आदि पांच स्थान



અનેકયરૂપાન્ પૃથિવીકાયાદીન્ પશ્ચસ્થાવરાન્, પ્રાણાન્=પ્રાણિનઃ, વિહિંસન્તિ ।

इह बहुविधा द्रव्यलिङ्गिनो विद्यन्ते । तत्र शाक्यादयः कन्दमूलपत्र-  
पुष्पफलादि भोक्तुं तदाश्रितत्रसजीवसमारम्भेण पृथिव्यादिस्थावरसमारम्भेण च  
त्रसजीवान्, पृथिव्यादीन् स्थावरांश्च ध्नन्ति घातयन्ति हिंसतोऽनुमोदयन्ति च ।  
दण्डिनोऽपि—

“ वयं पञ्चमहाव्रतधारिणो जिनाज्ञाराधका अनगाराः स्मः ” इत्यादि  
प्रवदमानाः साध्वाभासाः सावद्यमुपदिशन्ति शास्त्रप्रतिषिद्धमपि षड्जीवनिकाय-  
समारम्भं कारयन्ति । प्रतिमामन्दिरादिनिर्माणार्थं गर्तकरणे, पाषाणादीनां  
खण्डशः करणे, तेषामूर्ध्वतो निपतने च मनुष्यादीन् तथा—बहुतरवृक्षच्छेदने

પાંચ સ્થાવર પ્રાણિયોં કી મોં હિંસા કરતે હૈં ।

સંસાર મેં બહુત પ્રકાર કે દ્રવ્યલિંગી હૈં । ઉન મેં સે શાક્ય આદિ કન્દ, મૂલ,  
પત્ર, પુષ્પ, ફલ આદિ ભોગને કે લિયે ઉન પર રહે હુએ ત્રસજીવોં કા સમારંભ કરકે ત્રસ ઔર  
સ્થાવર જીવોં કી ઘાત કરતે હૈં, કરાતે હૈં ઔર ઘાત કરને વાલે કી અનુમોદના કરતે  
હૈં । દણ્ડી મી—

‘ હમ પંચમહાવ્રતધારી, જિનાજ્ઞા કે આરાધક અનગાર હૈં ’ એસા  
કહને વાલે ઢૂઠે સાધુ સાવધ કા ઉપદેશ દેતે હૈં ઔર શાસ્ત્ર મેં નિષિદ્ધ ષડ્જીવનિકાય કા  
સમારંભ કરાતે હૈં । પ્રતિમા, મંદિર, આદિ કા નિર્માણ કરને કે લિયે—ખડ્ડે ખોદને મેં,  
પથ્થરોં કે ટુકડે કરને મેં, ઉન્હેં ડપર સે પટકને મેં મનુષ્ય આદિ કા ઘાત કરાતા હૈં ।  
બહુત—સે વૃક્ષોં કો છેદને મેં વૃક્ષાશ્રિત અણ્ડજોં કે પંચેન્દ્રિય બચ્ચોં કા ઘાત કરાતે હૈં ।

પ્રાણીઓની પણ હિંસા કરે છે.

સંસારમાં ઘણાં પ્રકારનાં દ્રવ્યલિંગી છે. એમાંથી શાક્ય આદિ કન્દ, મૂળ, પત્ર,  
પુષ્પ, ફલ આદિ ભોગવવા માટે—ઉપયોગ કરવા માટે, તેના પર રહેલા ત્રસ જીવોનો  
સમારંભ કરીને અને પૃથ્વી આદિ સ્થાવર જીવોનો સમારંભ કરીને ત્રસ અને  
સ્થાવર જીવોનો ઘાત કરે છે. કરાવે છે, અને ઘાત કરવાવાળાને અનુમોદન આપે  
છે. દંડી પણ “ અમે પંચમહાવ્રતધારી, જિનાજ્ઞાના આરાધક અણુગાર છીએ.” એ  
પ્રમાણે કહેવાવાળા જુઠા સાધુ સાવધનો ઉપદેશ આપે છે. અને શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ  
ષડ્જીવનિકાયનો સમારંભ કરાવે છે.

પ્રતિમા, મંદિર વગેરેનું નિર્માણ કરવા માટે ખાડા ખોદવા, પથ્થરોના ટુકડા કરાવવા,  
તેને ઉપરથી પછાડવામાં મનુષ્ય આદિનો ઘાત કરાવે છે. ઘણાંજ વૃક્ષોને કાપવાથી વૃક્ષોના

તદાશ્રિતાન્ અણ્ડજશાવકાદીન્, પશ્ચેન્દ્રિયાન્ પિપીલિકાપતન્નાદિબહુવિધવિકલેન્દ્રિયાન્, પ્રતિમાપૂજનાર્થે પુષ્પવાટિકાકરણે પુષ્પપત્રફલાદિત્રોટનેઽપિ ચ ષડ્જીવનિકાયાન્ ઘાતયન્તિ ॥ સૂ. ૪ ॥

અથ સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનં કથયતિ—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

તત્થ સ્વલુ ભગવયા પરિણા પવેહ્યા, ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ પરિવંદન—માણણ—પૂયણાજાઈમરણમોયણાજ દુઃસ્વપડિવાયહેઉં સે સયમેવ તસકાયસત્થં સમારંભહ, અણ્ણેહિં વા તસકાયસત્થં સમારંભાવેહ, અણ્ણે વા તસકાયસત્થં સમારંભમાણે સમણ્ણજાણહ, તં સે અહિયાજ, તં સે અબોહીજ ॥ સૂ. ૫ ॥

કીડી પતંગ આદિ વહુત પ્રકાર કે વિકલેન્દ્રિય જીવોં કા ઘાત કરાતે હૈં । પ્રતિમાપૂજન કે લિજ ફૂલોંકા બગીચા બનાને મેં, ફૂલ, પત્તા ઓર ફલ આદિ તોડને મેં મી ષટ્કાય કે જીવોં કી ઘાત કરાતે હૈં ॥ સૂ. ૪ ॥

અવ સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈં:—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ત્રસકાય કે આરંભ કે વિષય મેં ભગવાન્ને ઉપદેશ દિયા હૈ । હસી જીવન કે વંદન, માનન, ઓર પૂજન કે લિજ, તથા જન્મ—મરણ સે છૂટને કે લિજ ઓર દુઃખ કા વિનાશ કરને કે લિજ વહ સ્વયં ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા સમારંભ કરતા હૈ, દૂસરોં દ્વારા ત્રસકાય કા સમારંભ કરતા હૈ ઓર ત્રસકાય કા સમારંભ કરને વાલે અન્ય લોગોં કા અનુમોદન કરતા હૈ । યહ ઉસકે અહિત કે લિજ હૈ, ઉસકી અંબોધિ કે લિજ હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

આશ્રયે રહેલા અંડજ જીવોના પાંચેન્દ્રિય અગ્નિઓનો ઘાત કરાવે છે. કીડી પતંગ આદિ ઘણાજ પ્રકારના વિકલેન્દ્રિય જીવોનો ઘાત કરાવે છે. પ્રતિમાપૂજન માટે ફૂલોના બગીચા બનાવવામાં ફૂલ, પત્તાં (પાંદડા) અને ફળ આદિ તોડવામાં ષષ્ટકાયના જીવોનો ઘાત કરે છે. ॥ ૪ ॥

હવે સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામીને કહે છે:—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ત્રસકાયના આરંભના વિષયમાં ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો છે. આ જીવનના વંદન, માન, અને પૂજનને માટે તથા જન્મ—મરણથી છૂટવા માટે અને દુઃખનો નાશ કરવા માટે તે પોતે ત્રસકાયના શસ્ત્રનો સમારંભ કરે છે, બીજા પાસે ત્રસકાયનો આરંભ કરાવે છે. અને ત્રસકાયનો સમારંભ કરવાવાળા અન્ય લોકોને અનુમોદન આપે છે, તે એમના અહિત માટે છે, એમની અંબોધિ માટે છે. ॥સૂ. ૫॥

છાયા—

તત્ર સ્વલુ ભગવતા પરિજ્ઞા પ્રવેદિતા । અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્ય પરિવન્દનમાનન-  
પૂજનાય જાતિમરણમોચનાય દુઃસ્વપ્રતિઘાતહેતું, સ સ્વયમેવ ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારભતે,  
અન્યૈર્વા ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારમ્ભયતિ, અન્યાન્ વા ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારભમાણાન્  
સમનુજાનાતિ, તત્તસ્યાહિતાય, તત્તસ્યાબોધયે ॥ સૂ. ૫ ॥

ટીકા—

તત્ર=ત્રસકાયસમારમ્ભે ભગવતા=શ્રીમહાવીરેણ પરિજ્ઞા=જ્ઞ-પ્રત્યાખ્યાનમેદાદ્  
દ્વિવિધા, સ્વલુ નિશ્ચયેન પ્રવેદિતઃ=પ્રતિબોધિતા । કર્મરજઃપરિહરણાર્થં જીવેન પરિજ્ઞાઽ-  
વશ્યં શરણીકરણીયેતિ ભગવતા પ્રતિબોધિતમિતિ ભાવઃ ।

ઉપભોગદ્વાર—

લોકઃ કસ્મૈ પ્રયોજનાય ત્રસકાયમુપમર્દયતીત્યાહ—‘અસ્ય ચૈવ  
જીવિતસ્ય’ ઇત્યાદિ । અસ્યૈવ=અચિરસ્થાયિનઃ, જીવિતસ્ય=જીવનસ્ય સુસ્વાર્થમ્—  
માંસચર્માદ્યર્થમ્, તથા—પરિવન્દન—માનન—પૂજનાય, પરિવન્દન=પ્રશંસા, તદર્થમ્, યથા-  
વ્યાઘ્રાદિમૃગયાદૌ, માનન=જનસત્કારસ્તદર્થમ્, યથા—રાજાઃ સકાશાત્ પદકાદિ

ટીકાર્થ—ત્રસકાય કે સમારંભ કે સંબંધ મેં શ્રી મહાવીરને જ્ઞપરિજ્ઞા ઓર પ્રત્યાખ્યાન-  
પરિજ્ઞા કા ઉપદેશ દિયા હૈ । અર્થાત્ ભગવાન્ને કહા હૈં કિ—કર્મરજ કો હટાને કે લિખ જીવ  
કો પરિજ્ઞા અવશ્ય સ્વીકાર કરની યાહિખ ।

ઉપભોગદ્વાર—

લોગ—કિસ પ્રયોજન સે ત્રસકાય કી હિંસા કરતે હૈં ? સો કહતે હૈં—ઈસી  
અસ્થાયી જીવન કે સુખ કે લિખ, માંસ ઓર ચમડી કે લિખ, તથા પ્રશંસા કે લિખ, જૈસે  
વ્યાઘ્ર આદિ કા શિકાર કરને મેં, માનન કે લિખ, જૈસે રાજા સે પદવી પાને કે ઉદેશ્ય સે

ટીકાર્થ—ત્રસકાયના સમારંભના સંબંધમાં શ્રી મહાવીરે જ્ઞપરિજ્ઞા અને  
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાને ઉપદેશ આપ્યો છે. અર્થાત્ ભગવાને કહ્યું છે કે—કર્મ રજને દૂર  
કરવા માટે જીવે પરિજ્ઞા અવશ્ય સ્વીકારવી જોઈએ.

ઉપભોગ દ્વાર—

લોક શું પ્રયોજનથી ત્રસકાયની હિંસા કરે છે ? તે કહે છે—આ અસ્થિર જીવનના  
સુખ માટે, માંસ અને ચામડીના માટે, તથા પ્રશંસા માટે. જેમ કે—વાઘ આદિને  
શિકાર કરવામાં. માન માટે, જેમ કે—રાજા પાસેથી પદવી મેળવવાના ઉદ્દેશ્યથી જીવતા



લબ્ધું સજીવસદૃશવ્યાધ્રાદિમૃતકલેવરનિર્માણાદૌ, તથા-પૂજન=વસ્ત્રરત્નાદિલાભસ્ત-  
ર્થમ્, યથા-દેવીપૂજાર્થં બલિદાનાદૌ,

તથા-જાતિમરણમોચનાર્થમ્ = જન્મમરણબન્ધપરિહારાર્થં=યથા મોક્ષકા-  
મનયા યાગાદૌ, યથા-વાતાદિવ્યાધિપ્રતીકારાય તૈલાદૌ, સઃ-જીવનસુખાદ્યર્થી  
સ્વયમેવ ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારમ્ભતે=વ્યાપારયતિ, અન્યૈર્વા ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારમ્ભયતિ=  
પ્રયોજયતિ, અન્યાન્ વા ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણાન્ સમનુજાનાતિ=અનુમોદયતિ,  
તત્=ત્રસકાયસમારમ્ભમ્, તસ્ય=ત્રસકાય સમારમ્ભં કુર્વતઃ, કારયિતુઃ,  
અનુમોદયિતુશ્ચ, અહિતાય ભવતિ । તથા તત્-તસ્ય અવાધયે=સમ્યક્ત્વાલાભાય  
ભવતિ ।

જીવિત વ્યાગ્ર આદિ કે સમાન વ્યાગ્ર આદિ કા કલેવર બનાને મેં, ઔર પૂજક કે લિખ જૈસે  
વસ્ત્ર રત્ન આદિ કી પ્રાપ્તિ કે લિખ, તથા-દેવીકી પૂજા કરને કે લિખ પ્રયોજન સે બલિદાન  
આદિ કરને મેં હિંસા કરતે હૈં ।

તથા-જન્મ-મરણ-બંધ આદિ સે છુટકારા પાને કે લિખ, જૈસે-મોક્ષ કી કામના સે  
યજ્ઞ આદિ કરને મેં, વાત આદિ કે રોગોં કા પ્રતીકાર કરને કે લિખ તૈલ આદિ તૈયાર  
કરને મેં, જીવન કે સુખ કા અર્થી સ્વયં હી ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા સમારંભ કરતા  
હૈ, દૂસરોં સે ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા સમારંભ કરાતા હૈ ઔર ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા સમારંભ કરને  
વાલોં કા અનુમોદન કરતા હૈ । યહ ત્રસકાય કા આરંભ ડસ આરંભકર્તા કે લિખ અહિતકર  
ઔર અબોધિજનક હોતા હૈ ।

વાધના સમાન વાધ આદિનું કલેવર બનાવવામાં અને પૂજન માટે જેમકે-વસ્ત્ર, રત્ન  
આદિ પ્રાપ્તિ માટે. તથા દેવીની પૂજા કરવાના પ્રયોજનથી બલિદાન આદિ કરવામાં  
હિંસા કરે છે.

તથા-જન્મ, મરણ, બંધ આદિથી છુટવા માટે. જેમકે-મોક્ષની કામનાથી યજ્ઞ  
આદિ કરવામાં, વાત આદિ રોગનો પ્રતિકાર કરવા માટે (રોગની દવા કરવા માટે)  
જીવનના સુખના અર્થી સ્વયં-પોતેજ ત્રસકાયના શસ્ત્રનો સમારંભ કરે છે. બીજા  
પાસે ત્રસકાયના શસ્ત્રનો સમારંભ કરાવે છે. અને ત્રસકાયના શસ્ત્રનો સમારંભ  
કરવાવાળાને અનુમોદન આપે છે. તે ત્રસકાયનો આરંભ એ આરંભ કરનારને માટે  
અહિતકર્તા અને અબોધિ ઉત્પન્ન કરનાર છે.

## વેદનાદ્વારમ્—

અત્ર પ્રસજ્જતરૂસકાયસ્ય વેદનોચ્યતે-વેદનાં યથાસંભવં દ્વિવિધા-કા ચિકી, માનસી ચ । શ્લેષમૂચ્યાદિવેધાજ્ઞાતા, જ્વરાતિસારકાસાદિવ્યાધિજનિતા વા કાયિકી, પ્રિયવિયોગાદકૃતા માનસી ॥ સૂ. ૫ ॥

येन तु तीर्थङ्करादिसमीपे त्रसकायस्वरूपं परिज्ञातं स एवं विभावयतीत्याह—  
'से तं.' इत्यादि ।

## મૂલમ્—

से तं संबुच्छमाणे आयाणीयं समुद्राय सोच्चा भगवन् अनगाराणं वा अतिष्ठ इहमेगेसि गाय भवद्, एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु

## વેદનાદ્વાર—

પ્રસંગ પાકર ત્રસકાય કી વેદના કા નિરૂપણ કિયા જાતા હૈ-યથાસંભવ વેદના દો પ્રકાર કી હૈ-કાયિક ઓર માનસિક । કાંટ, સુઈ આદિ ચુમને સે અથવા જ્વર, અતિસાર, શાંસી આદિ રોગો સે ઉપ્તન્ન હોને વાલી વેદના કાયિક કહલાતી હૈ । પ્રિય વસ્તુ કે વિયોગ આદિ કારણો સે હોને વાલી વેદના માનસિક વેદના હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

जिसने तीर्थंकर आदि के समीप त्रसकायका स्वरूप समझ लिया है, वह इस प्रकार विचारता है:—‘से तं.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—ભગવાન્ અથવા અનગારો કે સમીપ સુનકર વહ ત્રસકાય કા જ્ઞાતા ત્રસકાય કો જાનતા હુઆ સંયમ ધારણ કરકે હસ પ્રકાર જાનતા હૈ-યહ ત્રસકાય કા આરંભ

## વેદનાદ્વાર—

પ્રસંગ હોવાથી ત્રસકાયની વેદનાનું નિરૂપણ કરવામાં આવે છે-સાધારણ રીતે વેદના બે પ્રકારની છે-કાયિક અને માનસિક કાંટા, સોય આદિ વાગવાથી, અથવા જ્વર-તાવ, અતિસાર-ઝાડા, શાંસી આદિ રોગોથી ઉત્પન્ન થવાવાળી વેદના કાયિક કહેવાય છે. પ્રિય વસ્તુના વિયોગ વગેરેના કારણોથી થનારી વેદના માનસિક-વેદના છે. ॥સૂ. ૫॥

જેણે તીર્થંકર આદિના સમીપમાં ત્રસકાયનું સ્વરૂપ સમજ લીધું છે, તે આ પ્રમાણે વિચારે છે—‘સે તં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાન અથવા અણગારના સમીપ સાંભળીને તે ત્રસકાયના જ્ઞાતા ત્રસકાયને જાણતા થકા સંયમ ધારણ કરીને આ પ્રમાણે જાણે છે-આ ત્રસકાયનો આરંભ

आचारचिन्तामणि-टीका अध्य० १ उ. ६ सू. ६ त्रसहिंसाया ग्रन्थादिता ६६७

मारे, एस खलु णरण, इच्चत्थं गढिए लोए, जमिणं विरुवरूवेहिं सत्थेहिं  
तसकायसमारंभेण, तसकायसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरूवे पाणे  
विहिंसइ ॥ सू० ६ ॥

छाया—

स तत् संबुध्यमान आदानीयं समुत्थाय श्रुत्वा भगवतोऽनगाराणां वा  
अन्तिके, इहैकेषां ज्ञातं भवति-एष खलु ग्रन्थः एष खलु मोहः, एष खलु  
मारः, एष खलु नरकः । इत्यर्थं गृद्धो लोकः, यदिमं विरूपरूपैः शस्त्रैः  
त्रसकायसमारम्भेण त्रसकायशस्त्रं समारंभमाणोऽन्यान् अनेकरूपान् प्राणान्  
विहिनस्ति ॥ सू० ६ ॥

टीका—

यः खलु भगवतः तीर्थङ्करस्य, अनगाराणां=तदीयश्रमणनिर्ग्रन्थानां वा अन्तिके  
श्रुत्वा, आदानीयम्=उपादेयं सर्वसावधयोगविरतिरूपं चारित्रं, समुत्थाय=अङ्गीकृत्य,  
विरहति, स तत्=त्रसकायसमारम्भणं संबुध्यमानः=अहिताबोधिजनकत्वेन विज्ञाता  
सन् एवं विभावयति—

ग्रन्थ है, यह मोह है, यह मार है, यह नरक है । लोलुप लोग नाना प्रकार के शस्त्रों द्वारा  
त्रसकायका आरंभ करके, त्रसकायका आरंभ करते हुए अनेक प्रकारके अन्य प्राणियोंका  
( भी ) विराधाता करते हैं ॥ सू० ६ ॥

टीकार्थ—जो पुरुष भगवान् तीर्थंकर के मुख से अथवा उनके अनुयायी निर्ग्रन्थ  
श्रमणों के मुख से सुनकर सर्व सावध के त्यागरूप चारित्र को अंगीकार करके विचरता है,  
वह त्रसकाय के समारंभ को अहितकर और अबोधिजनक समझता है । वह इस प्रकार  
सोचता है—

ग्रन्थ छे, आ मोह छे, आ मार छे; आ नरक छे, लोलुप लोक नाना प्रकारना  
शस्त्रोद्वारा त्रसकायना आरंभ करीने, त्रसकायना आरंभ करता थका अनेक प्रकारना  
अन्य प्राणीओना पणु घात करे छे ॥ सू० ६ ॥

टीकार्थ—जे पुरुष भगवान तीर्थंकरना मुअथी अथवा तेमना अनुयायी  
निर्ग्रन्थ श्रमणोना मुअथी सांलणीने सर्व सावध त्यागरूप चारित्रने अंगीकार करीने  
विचरे छे ते त्रसकायना समारंभने अहितकर अने अबोधिजनक-अबोधि उत्पन्न  
करना समझे छे, ते आ प्रमाणे विचार करे छे—



इह=मनुष्यलोके, एकेषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेशसंज्ञातसम्यग्बोधवैराग्याणा-  
मात्मार्थिनामेव ज्ञातं भवति । किं ज्ञातं भवती ?-त्याकाङ्क्षायामाह—‘ एस खलु  
ग्रन्थः. ’ इत्यादि ।

एष=त्रसकायसमारम्भः, खलु=निश्चयेन, ग्रन्थः=कर्मबन्धः, कारणे  
कार्योपचारात्, एवमग्रेऽपि बोध्यम् । तथा एषः=त्रसकायसमारम्भः मोहः=  
विपर्यासः-अज्ञानम् । तथा-एष एव मारः=मरणं निगोदादिमरणरूपः । तथा-एष  
एव नरकः=नारकजीवानां दशविधयातनास्थानम् ।

इत्यर्थम्=एतदर्थं=ग्रन्थ-मोह-मरण-नरकरूपं घोरदुःखफलं प्राप्यापि  
पुनः पुनरेतदर्थमेव लोकः=अज्ञानवशवर्ती जीवः, गृद्धः=लिप्सुरस्ति । यद्वा-गृद्धः=  
भोगामिलापी, लोकः=संसारी जीवः, इत्यर्थम्=एतदर्थमेव=ग्रन्थमोहमरणनरकार्थ-  
मेव प्रवर्तते ।

इस मनुष्य लोक में श्रवण निर्ग्रन्थों के उपदेश से सम्यग् ज्ञान और वैराग्य प्राप्त कर लेने वाले ही यह जान लेते हैं कि-त्रसकाय का समारंभ निश्चय ही कर्मबंध है । यहाँ कारण में कार्यका उपचार करके कर्मबंध के कारण को कर्मबंध कहा है । आगे भी इसी प्रकार समझना चाहिए । यह त्रसकाय का समारंभ मोह अर्थात् अज्ञान है । वह मार अर्थात् निगोद आदि में मृत्यु का कारण है । यह समारंभ नरक है अर्थात् दस प्रकार की नारकीय यातना का स्थान है ।

ग्रंथ, मोह, मरण और नरकरूप घोर दुःखमय फल प्राप्त करके भी अज्ञानी लोग बार-बार इसी के इच्छुक होते हैं । अथवा भोगों की अभिलाषा करने वाले संसारी लोग इस ग्रंथ, मोह, मार और नरक के लिए ही प्रवृत्ति करते हैं ।

આ મનુષ્ય લોકમાં નિર્ગ્રન્થોના ઉપદેશથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત કરી-  
લેવાવાળાજ એમ બાણી શકે છે કે-ત્રસકાયનો સમારંભ નિશ્ચયજ્ઞ ગ્રંથ-કર્મબંધ છે.  
અહિં કારણમાં કાર્યનો ઉપચાર કરીને કર્મબંધના કારણને કર્મબંધ કહ્યો છે. આગળ  
પણ આ પ્રમાણે સમજવું જોઈએ.

આ ત્રસકાયનો સમારંભ મોહ અર્થાત્ અજ્ઞાન છે. આ માર અર્થાત્ નિગોદ આદિમાં  
મૃત્યુનું કારણ છે. આ સમારંભ નરક છે. અર્થાત્ દસ પ્રકારની નારકીય યાતનાનું સ્થાન છે.

ગ્રંથ, મોહ, મરણ અને નરકરૂપ ઘોર દુઃખમય ફલ પ્રાપ્ત કરીને પણ અજ્ઞાની  
લોક વારંવાર તેની ઇચ્છાવાળા થાય છે. અથવા ભોગોની અભિલાષા કરવાવાળા  
સંસારી લોક આ ગ્રંથ, મોહ, માર અને નરક માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે.

‘લોકઃ પુનઃ પુનઃગ્રન્થાદ્યર્થમેવ પ્રવર્તેતે’ इति यदुक्तं, तत् कथं ज्ञायते ? इति जिज्ञासायामाह—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद्, विरूपरूपैः=नानाविधैः शस्त्रैः=पूर्वोक्तप्रकारैः त्रसकायसमारम्भेण=त्रसकायोपमर्दनरूपसावद्यव्यापारेण, इमं=त्रसकायं विहिनस्ति । तथा त्रसकाय-शस्त्रं समारम्भमाणः=व्यापारयन् अन्यान् पृथ्वीकायादीन् स्थावरान्, प्राणान्=प्राणिनः, विहिनस्ति=उपमर्दयति ॥ सू० ६ ॥

यस्मै પ્રયોજનાય ત્રસકાયો હન્યતે, તત્ પ્રયોજનં યદ્યપિ-‘ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ.’ इत्यादिनाऽभिहितम्, तथापि विशिष्य तत्तत्प्रयोजनं पुनः प्रदर्शयितुमाह-‘से बेमि.’ इत्यादि ।

लोग बारम्बार ग्रंथ आदि के लिए ही प्रवृत्ति करते हैं, यह बात कैसे मालूम हुई ? इस का समाधान के लिए कहते हैं-‘यदिमम्’ इत्यादि ।

ક્યોં કિ વે નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રો દ્વારા ત્રસકાય કા સમારંભ કરકે ત્રસકાય કો હિંસા કરતે હૈં ઓર ત્રસકાય કા સમારંભ કરતે હુણ પૃથ્વીકાય આદિ અન્ય સ્થાવર પ્રાણિયોં કા ભી વિરાધના કરતે હૈં ॥ સૂ૦ ૬ ॥

जिस प्रयोजन से त्रसकाय की हिंसा की जाती है वह योजन ‘इस जीवन के सुख के लिए’ इत्यादि कथन द्वारा बतलाया जा चुका है, फिर भी विशेष रूप से उस हिंसाका प्रयोजन बतलाने के लिए श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं-‘से बेमि.’ इत्यादि ।

લોક વારંવાર ગ્રંથ આદિના માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે. એ વાત કેવી રીતે માલુમ પડી ? એનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે:-‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ.

કેમ કે નાના પ્રકારના શસ્ત્રોદ્વારા ત્રસકાયનો સમારંભ કરીને ત્રસકાયની હિંસા કરે છે, અને ત્રસકાયનો સમારંભ કરતા થકા પૃથ્વીકાય આદિ અન્ય સ્થાવર પ્રાણી-ઓનો પણ ઘાત કરે છે. ॥ સૂ૦ ૬ ॥

જે પ્રયોજનથી ત્રસકાયની હિંસા કરવામાં આવે છે. તે પ્રયોજન “આ જીવનના સુખ માટે” ઇત્યાદિ વિવેચનદ્વારા બતાવ્યું છે. (બતાવી ચૂક્યા છીએ.) ફરી પણ વિશેષરૂપથી એ હિંસાનું પ્રયોજન બતાવવા માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે:- ‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ.

मूलम्—

से बेमि-अप्पेगे अच्छाए हणंति, अप्पेगे अजिगाए वहंति, अप्पेगे मंसाए वहंति, अप्पेगे साणियाए वहंति, एवं हिययाए, पित्ताए, वसाए, पिच्छाए, पुच्छाए, वालाए, सिगाए, विसाणाए, दंताए, दाढाए, णहाए, ण्हारूणीए, अट्टीय, अट्टिमिजाए, अट्टाए, अणट्टाए, अप्पेगे 'हिंसिसु मे' त्ति वा वहंति, अप्पेगे 'हिंसंति मे' त्ति वा वहंति, अप्पेगे 'हिंसिस्संति मे' त्ति वा वहंति ॥ सू० ७ ॥

छाया—

तद् ब्रवीमि-अप्येके अर्चायै धनन्ति, अप्येके अजिनाय धनन्ति, अप्येके मांसाय धनन्ति, अप्येके शोणिताय धनन्ति एवं हृदयाय, पित्ताय, वसायै, पिच्छाय, पुच्छाय वालाय, शृङ्गाय, विषाणाय, दन्ताय, दंष्ट्रायै, नखाय, स्नायवे, अस्थने, अस्थिमज्जायै, अर्थाय, अनर्थाय, अप्येके 'अवधीषुरस्मा'-निति वा धनन्ति, अप्येके 'हिसन्त्यस्मा' निति वा धनन्ति, अप्येके 'हनिष्यन्त्यस्मा'-निति वा धनन्ति ॥ सू० ७ ॥

मूलार्थ—मैं वह (प्रयोजन) कहता हूँ—कोई अर्चा शरीर के लिए त्रसकाय का विराधना करते हैं, कोई चर्म-चमडे के लिए घात करते हैं, कोई मांस के लिए घात करते हैं, कोई रक्त के लिए घात करते हैं, कोई हृदय के लिए, पित के लिए, चर्बी के लिए पंख के लिए, पूँछ के लिए, बाल के लिए, सींग के लिए, विषाण (सुअर का दांत) के लिए, दांत (हाथीदांत) के लिए, दाढ़ों के लिए, नख के लिए, स्नायु के लिए, हड्डी के लिए, मज्जा के लिए, अर्थ के लिए, अनर्थ के लिए—(निरर्थक) कोई 'हमें मारा था' इस भावना से, कोई 'हमें मारता है' इस भावना से, और कोई 'हमें मारेगा' इस भावना से त्रसकाय का घात करते हैं ॥ सू० ७ ॥

मूलार्थ—हुं कहुं छुं:—कोई अर्चा (शरीर) भाटे त्रसकायनो घात करे छे. कोर्ध आभडी भाटे घात करे छे. कोर्ध भांस भाटे घात करे छे. कोर्ध रक्त-लोही भाटे घात करे छे. कोर्ध हृदय भाटे, पित्त भाटे, अरणी भाटे, पांप्पो भाटे, पूंछडा भाटे, त्राण भाटे, शींगडा भाटे, विषाणु (सूवरना दांत) भाटे, डाथी दांत भाटे, दाढो भाटे, नख भाटे, स्नायु भाटे, डाडकां भाटे, मज्जा भाटे, अर्थ भाटे, अनर्थ—(निरर्थक). कोर्ध 'अभने भाया डता' अे लावनाथी, कोर्ध 'अभने भारे छे' अे लावनाथी, अभने कोर्ध 'अभने भारे' आ लावनाथी त्रसकायनो घात करे छे. ॥ सू० ७ ॥



टीका—

यदर्थं त्रसजीवा हन्यन्ते, तद् ब्रवीमि-अप्येके=केचिच्च, अत्रापि-  
शब्दः वक्ष्यमाणापेक्षया समुच्चयार्थः, अर्चयि-अर्च्यते=पूज्यते-इत्यर्चा=शरीरं,  
तदर्थं धनन्ति=हिंसन्ति, यथा सुलक्षणं पुरुषं व्यापाद्य तच्छरीरेण विद्यामन्त्रं,  
साधयन्ति, यद्वा-स्वर्णपुरुषनिर्माणार्थं द्वात्रिंशलक्षणं पुरुषं प्रतप्ततैले निक्षिप्य  
निघ्नन्ति । तथा अप्येके=केचन अजिनाय=चर्मार्थं मृगव्याघ्रदीन् घ्नन्ति ।  
तथा अप्येके=केचन मांसाय छागादीन् घ्नन्ति । अप्येके=केचन शोणिताय=  
त्रिशूलालेखकरणादौ शोणितं ग्रहीतुं घ्नन्ति । एवं हृदयाय=हृदयं गृहीत्वा  
साधका मथन्ति, तदर्थं घ्नन्ति । पित्ताय मयूरादीन्, वसाय व्याघ्रादीन्,  
पिच्छाय मयूरादीन्, पुच्छाय रोज्ञादीन्, वालाय चमर्यादीन्, शृङ्गाय मृगादीन्,

टीकार्थ—हे जम्बू जिस प्रयोजन से त्रसकाय की हिंसा होती है, वह कहता हूँ ।  
कोई-कोई अर्चा अर्थात् शरीर के लिए विराधाना करते हैं, जैसे किसी पुरुष को अच्छे  
लक्षण वाला समझकर उसे मार डालते हैं, और उसके शरीर से विद्या तथा मंत्र का  
साधन करते हैं । अथवा स्वर्णपुरुष के निर्माण के लिए बत्तीस लक्षण वाले पुरुष को  
तपे हुए तेल में डालकर मारते हैं । कोई चर्म के लिए मृग और वाघ आदि का घात  
करते हैं । कोई मांस के लिए बकरा आदि को मारते हैं । कोई त्रिशूल का चिह्न बनाने  
आदि के लिए तथा रक्त पीने के उद्देश्य से घात करते हैं । इसी प्रकार हृदय के लिए घात  
करते हैं-घातक लोग हृदय लेकर मथते हैं । इसी तरह पित्त के लिए मयूरों को चर्बक  
लिए वाघ आदि को, पंखों के लिए मयूरों को, पूँछ के लिए रोज्ञ आदि को, बाल के

टीकार्थ—जे प्रयोजनથી ત્રસજીવોની હિંસા થાય છે; તે કહું છું. કેઈ-કેઈ  
અર્ચા અર્થાત્ શરીરના માટે ઘાત કરે છે. જેમકે-કેઈ પુરુષને સારા લક્ષણવાળો સમજીને  
તેમ મારી નાંખે છે, અને તેના શરીરથી વિદ્યા તથા મંત્રની સાધના કરે છે અથવા-  
સ્વર્ણ પુરુષના નિર્માણ માટે બત્રીસ લક્ષણવાળા પુરુષને તપાવેલા તેલમાં નાંખીને  
મારે છે. કેઈ ચામડા માટે મૃગ અને વાઘ વગેરેનો ઘાત કરે છે. કેઈ માંસ માટે  
બકરા વગેરેને મારે છે. કેઈ ત્રિશૂલનું ચિહ્ન બનાવવા વગેરે માટે લોહી પ્રાપ્ત કરવાના  
ઉદ્દેશ્યથી ઘાત કરે છે, એ પ્રમાણે કેઈ હૃદય માટે ઘાત કરે છે-ઘાતકી લોક હૃદય લઈને  
મથે છે. એ પ્રમાણે પિત્ત માટે મોરને, ચરખી માટે વાઘ આદિને વાળ માટે  
ચમરી-ગાય આદિને, શીંગ માટે મૃગ આદિને મારે છે. વિષાણુ-શબ્દ જો કે હાથી

વિષાણાય, વિષાણશબ્દો ગજદન્તે રૂઢસ્તથાપીહ સૂકરદન્તો ગ્રાહ્યઃ, તદર્થં સૂકરમ્, દન્તાય હસ્ત્યાદીન્, દંષ્ટ્રાયૈ વરાહાદીન્, નસ્વાય વ્યાઘ્રાદીન્, સ્નાયવે ગવાદીન્, અસ્થને શ્લ્હાદીન્, અસ્થિમજ્જાયૈ-અસ્થિમજ્જા=અસ્થિગતરસઃ, તદર્થં, મઘીષાદીન્, ધ્નન્તિ । इत्थम्-अर्थाय=प्रयोजनवशात् केचिद् ध्नन्ति । तथा- अनर्थाय=विनाऽपि प्रयोजनं केचिद् ध्नन्ति । अप्येके=केचिच्च, “इमे व्याघ्रसर्प-सूकरादयः शत्रवो वा अस्मान् अपीडयन्, अस्मदीयान् वाऽवघिषुः” इति द्वेषवासनया ध्नन्ति । अप्येके=केचिच्च, “इमे व्याघ्रादयः शत्रवो वा वर्तमानकालेऽस्मान्, अस्मदीयान् वा हिंसन्ति.” इति मत्वा ध्नन्ति ।

लिए चमरी गाय आदि को, सींग के लिए मृग आदि को मारते हैं । विषाण शब्द यद्यपि हाथीदांत के अर्थ में रूढ है तथापि यहाँ ‘सुअर का दांत’ अर्थ लेना चाहिए । सुअर के दांत के लिए सुअर का घात किया जाता है । दांत के लिए हाथी आदि को, दाढ़ों के लिए शूकर वगैरह को, नख के लिए वाघ आदि को, स्नायु के लिए गाय आदि को, हड्डी के लिए शंख आदि को, अस्थिमज्जा अर्थात् हड्डियों में रहने वाले एक प्रकार के रस के लिए भैंसा वगैरह का घात करते हैं । इस प्रकार कोई-कोई प्रयोजन के लिए त्रसजीवों की हिंसा करते हैं और कोई-कोई विना प्रयोजन ही हिंसा करते हैं । कोई-कोई ‘इस वाघ, सर्प और शूकरने तथा शत्रुओंने हमें पीडा पहुँचाई है, अथवा हमारे आत्मीयजन का वध किया है’ इस प्रकार की द्वेष-वासना से इनका घात करते हैं । कोई लोग यह सोचकर कि-‘ये व्याघ्र आदि अथवा शत्रु वर्तमान कालमें हमें या हमारे लोगोंको मारते हैं’ उनका घात करते हैं । कोई लोग यह विचार करके कि-‘यह

દાંતના અર્થમાં રૂઢ છે. તો પણ અહિં ‘સૂઅરનાં દાંત’ એવો અર્થ લેવો ભેદ છે. સૂઅરના દાંત માટે સૂઅરનો ઘાત કરવામાં આવે છે. દાંત માટે હાથી આદિનો, દાઢાને માટે શૂકર-ભૂંડ વગેરેનો, નખ વગેરે માટે વાઘ આદિનો, સ્નાયુને માટે ગાય આદિનો, હાડકાં વગેરે માટે શંખ આદિનો, અસ્થિમજ્જા અર્થાત્, હાડકાંમાં રહેનારા એક પ્રકાર રસ માટે ભેંસા-પાડા વગેરેનો ઘાત કરે છે, આ પ્રમાણે કોઈ-કોઈ પ્રયોજન માટે ત્રસ જીવોની હિંસા કરે છે. અને કોઈ-કોઈ પ્રયોજન વિનાજ હિંસા કરે છે. કોઈ-કોઈ ‘આ વાઘ સર્પ અને શૂકર-ભૂંડે તથા શત્રુઓએ અમને પીડા પહોંચાડી હતી. અથવા અમારા આત્મીય-જનનો (તેણે) વધ કર્યો હતો.’ આ પ્રકારે દ્વેષ-વાસનાથી તેનો ઘાત કરે છે. કોઈ માણસ એવો વિચાર કરીને કે-‘આ વાઘ આદિ, અથવા શત્રુ વર્તમાન કાલમાં મને અથવા

अप्येके=केचिच्च, 'अस्मान् अस्मदीयान् वा इमे व्याघ्रादयः शत्रवो वा हनिष्यन्ति' इति हेतोस्त्रसकायान् घ्नन्ति ॥ सू० ७ ॥

एवं त्रसकायसमारम्भं विदित्वा मुनित्वलाभाय तत्समारम्भः सर्वथा परिहर्तव्यः, इत्याशयेनोद्देशकार्थमुपसंहरन्नाह—“एत्थ सत्थं.” इत्यादि ।

मूलम्—

एत्थ सत्थं समारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णाया भवंति । एत्थ सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णाया भवंति, तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं तसकायसत्थं समारंभेज्जा, णेवऽण्णेहिं तसकायसत्थं समारंभावेज्जा, णेवऽण्णे तसकायसत्थं समारंभंते समणुजाणेज्जा । जस्सेते तसकायसमा-

व्याघ्र आदि अथवा यह शत्रु हमें या हमारों को मारे'गे' उन्हें मार डालते हैं । इस प्रकार लोग त्रसकाय की हिंसा करते हैं ॥ सू० ७ ॥

इस प्रकार त्रसकाय के समारंभ को जानकर साधुता प्राप्त करने के लिए त्रसकाय का आरंभ सर्वथा त्याग देना चाहिए । इस आशय से इस उद्देश का उपसंहार करते हुए कहते हैं—‘एत्थ सत्थं’. इत्यादि ।

मूलार्थ—त्रसकाय में शस्त्र का समारंभ करने वाले को यह आरंभ अपरिज्ञात होते है । त्रसकाय में शस्त्र का समारंभ नहीं करने वाले को यह आरंभ परिज्ञात होते हैं । मेघावी पुरुष उन्हें जानकर स्वयं त्रसकाय में शस्त्र का समारंभ न करे, दूसरों से त्रसकाय के शस्त्र का समारंभ न करावे, और त्रसकाय में शस्त्र का समारंभ करने वाले का अनु-

अभाराने भारे छे' तेथी तेनो धात करे छे. कोर्धो दोक 'आ वाध आदि अथवा आ शत्रु भने अथवा अभाराने भारशे.' ओवुं विचारिने तेने भारी नांछे छे. आ प्रमाणे दोक त्रसकायनी हिंसा करे छे. ॥ सू० ७ ॥

आ प्रमाणे त्रसकायना समारंभने जाणीने साधुता प्राप्त करवा भाटे त्रसकायने आरंभ सर्वथा त्यागी देवे जेधये-त्यल देवे जेधये. ओ आशयथी आ उद्देशको उपासंहार करता थका कडे छे—‘एत्थ सत्थं’. इत्यादि.

मूलार्थ—त्रसकायने विषे शस्त्रने समारंभ करवावाणाने आ आरंभ अपरिज्ञात होय छे. त्रसकायने विषे शस्त्रने समारंभ नहिं करवावाणाने आ आरंभ परिज्ञात छे. (जाणुवाभां छे). बुद्धिमान पुरुष तेने जाणीने पोते त्रसकायभां शस्त्रने समारंभ करे नहिं भीन पोसे त्रसकायना शस्त्रने समारंभ करावे नहिं अने त्रसकायभां शस्त्रने समारंभ



રંભા પરિણાયા ભવંતિ, સે હુ મુળી પરિણાય કમ્મે-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ. ૮ ॥

છઠ્ઠો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૬ ॥

છાયા—અત્ર શસ્ત્રં સમારંભમાણસ્યિત્યેતે આરંભા અપરિજ્ઞાતા ભવન્તિ । અત્ર શસ્ત્રસમારંભમાણસ્યિત્યેતે આરંભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ, તં પરિજ્ઞાય મેધાવી નૈવ સ્વયં ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારંભેત, નૈવાન્યૈશ્વસકાયશસ્ત્રં સમારંભયેત્, ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારંભમાણાન્ અન્યાન્ ન સમનુજાનીયાત્ । યસ્યૈતે ત્રસકાયશસ્ત્રસમારંભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ, સ સ્વલ્લ મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૮ ॥

॥ ષષ્ઠોદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૬ ॥

ટીકા—અત્ર=અસ્મિન્ ત્રસકાયે, શસ્ત્રં=પૂર્વાક્તપ્રકારં, સમારંભમાણસ્ય=વ્યાપારયતઃ, ઇત્યેતે=પૂર્વોક્તાઃ ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ આરંભાઃ=વનસ્પતિકાયોપમર્દનરૂપાઃ સાવધવ્યાપારાઃ, અપરિજ્ઞાતાઃ=કર્મબંધકારણત્વેનાનવગતા ભવન્તિ ।

અત્ર=અસ્મિન્નેવત્રસકાયે, શસ્ત્રં=પ્રાગુક્તપ્રકારમ્, અસમારંભમાણસ્ય=અપ્રયુઙ્ગજાનસ્ય, ઇત્યેતે=પૂર્વોક્તાઃ, આરંભાઃ=સાવધવ્યાપારાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ=જ્ઞપરિજ્ઞયા બંધકારણત્વેન વિજ્ઞાતા ભવન્તિ, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જિતા ભવન્તીત્યર્થઃ ।

મોદન ન કરે । જો ત્રસકાય કે સમારંભો કા જ્ઞાતા હૈ વહી મુનિ હૈ, પરિજ્ઞાતકર્મા હૈ ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકાર્થ—ત્રસકાય કે વિષય મેં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા વ્યાપાર કરને વાલે કો ‘ત્રીન કરણ ઓર ત્રીન યોગ સે હોને વાલે સાવધ વ્યાપાર કર્મબંધ કે કારણ હૈ’ એસા જ્ઞાત નહીં હોતા ।

ઓર ત્રસકાય મેં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા વ્યાપાર ન કરને વાલા પૂર્વોક્ત સાવધ વ્યાપારોં કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે કર્મબંધ કા કારણ સમજતા હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ઉનકા ત્યાગ કર દેતા હૈ ।

કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ, જે ત્રસકાયના સમારંભને બાણુ છે. તેજ મુનિ છે. પરિજ્ઞાતકર્મા છે. ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકાર્થ—ત્રસકાયના વિષયમાં પૂર્વોક્ત ( આગળ કહેલાં ) શસ્ત્રોંનો વ્યાપાર કરવાવાળા ‘ત્રણ કરણ અને ત્રણ યોગથી થવાવાળો સાવધ વ્યાપાર કર્મબંધનું કારણુ છે.’ એ પ્રમાણુ બાણુતા નથી. અને ત્રસકાયમાં પૂર્વોક્ત ( આગળ કહેલાં ) શસ્ત્રોંનો વ્યાપાર નહિં કરવાવાળા પૂર્વોક્ત ( આગળ કહેલા ) સાવધ વ્યાપારોંને જ્ઞપરિજ્ઞાથી કર્મબંધનું કારણુ સમજે છે, અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેનો ત્યાગ કરી દે છે.

જપરિજ્ઞાપૂર્વિકા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા યથા ભવતિ તં પ્રકારં દર્શયતિ-‘તત્ પરિજ્ઞાયે’-ત્યાદિ । તદ્=ત્રસકાયારમ્ભણમ્, પરિજ્ઞાય=કર્મબંધસ્ય કારણં ભવતી-ત્યવબુદ્ધ્ય, મેધાવો=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, નૈવ સ્વયં ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારભેત=વ્યાપારયેત્, અન્યૈર્વા નૈવ ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારમ્ભયેત્, ત્રસકાયશસ્ત્રં સમારભામાણાન્ અન્યાન્ વા ન સમનુજાનીયાત્=નાનુમોદયેત્ ।

યસ્યૈતે ત્રસકાયસમારમ્ભાઃ=ત્રસકાયોપમર્દકસાવધવ્યાપારાઃ, પરિજ્ઞાતાઃ=જપરિજ્ઞયા બંધકારણત્વેન વિદિતાઃ, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા ચ પરિહૃતા ભવન્તિ, સ એવ પરિજ્ઞાતકર્મા=ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિવર્જિતસકલસાવધવ્યાપારાઃ, મુનિર્ભવતિ । ‘ઈતિ બ્રવોમિ’ ઇતિ । અસ્ય વ્યાખ્યાનં પૂર્વવત્ ॥ સૂ૦ ૮ ॥  
॥ ઇત્યાચારાઙ્ગમૂત્રસ્યાચારચિન્તામણિટીકાયાં પ્રથમાધ્યયનેષ્ઠ ઉદ્દેશકઃ સંપૂર્ણઃ ॥

જપરિજ્ઞાપૂર્વક હોને વાલી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા કા સ્વરૂપ શાબ્દકાર દિશ્વલાતે હૈં ત્રસકાય કે આરંભ કો કર્મબંધ કા કારણ જ્ઞાનકર બુદ્ધિમાન્ અર્થાત્ હેય-ઉપાદેય કા વિવેકી પુરુષ સ્વયં ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા ઉપયોગ ન કરે, દૂસરો સે ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા ઉપયોગ ન કરાવે ઓર ત્રસકાય કે શસ્ત્ર કા ઉપયોગ કરનેવાલે કા અનુમોદન ન કરે ।

જિસને ત્રસકાય કા ઘાત કરને વાલે સાવધ વ્યાપારો કો જપરિજ્ઞા સે બંધ કા કારણ સમજ્ઞ લિયા હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગ દિયા હૈ વહી ત્રીન કરણ ત્રીન યોગ સે સર્વ સાવધ વ્યાપારો કા જ્ઞાતા પુરુષ મુનિ હોતા હૈ । ‘ત્તિ વેત્તિ’ પદકી વ્યાખ્યા પહેલે કે સમાન સમજ્ઞની ચાહિય ॥ સૂ૦ ૮ ॥

શ્રી આચારાઙ્ગમૂત્રકે પ્રથમ અધ્યયન કા છઠા ઉદ્દેશ સમાપ્ત ૧-૬ ॥

જપરિજ્ઞાપૂર્વક થવાવાળી પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાનું સ્વરૂપ શાસ્ત્રકાર બતાવે છે-ત્રસકાયના આરંભને કર્મબંધનું કારણ બાણીને બુદ્ધિમાન અર્થાત્ હેય-ઉપાદેયનો વિવેકી પુરુષ પોતે ત્રસકાયના શસ્ત્રનો ઉપયોગ કરે નહિ, બીજા પાસે ત્રસકાયના શસ્ત્રનો ઉપયોગ કરાવે નહિ, અને ત્રસકાયના શસ્ત્રનો ઉપયોગ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ.

જેણે ત્રસકાયનો ઘાત કરવાવાળા સાવધ વ્યાપારોને જપરિજ્ઞાથી બંધનું કારણ સમજી લીધું છે, અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યજી લીધું છે. તે ત્રણ કરણ, ત્રણ યોગથી સર્વસાવધવ્યાપારોના જ્ઞાતા-બાણકાર પુરુષ મુનિ હોય છે. ‘ત્તિ વેત્તિ’ પદની વ્યાખ્યા પહેલાં પ્રમાણે સમજી લેવી જોઈએ. ॥સૂ૦ ૮॥

॥ શ્રી આચારાંગમૂત્રના પ્રથમ અધ્યયનનો છઠો ઉદ્દેશ સમાપ્ત. ॥ ૧ । ૬ ॥

। અથ સમમોદેશકઃ ।

વાયુકાયસ્ય ચાક્ષુષપ્રત્યક્ષવિષયત્વાભાવાત્ તસ્ય સચિત્તત્વે સ્વતઃ શ્રદ્ધા નોત્પદ્યતે, કિન્તુ પૃથિવ્યાદ્યેકેન્દ્રિયાણાં, દ્વીન્દ્રિયાદેહસકાયસ્ય ચ સ્વરૂપં વિદિત્વા જાતશ્રદ્ધો વાયુકાયં સુતરાં વિજાનાતીત્યાશયેન તદ્વિષયકશ્રમઃ સમમોડ્યમુદેશકઃ પ્રારમ્ભ્યતે ।

યથા વાયુકાયોપમર્દનનિવૃત્ત્યા મુનિત્વં પ્રાપ્યતે, તં પ્રકારં પ્રદર્શયિતુમાહ—  
'પહૂ એજસ્સ.' ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

પહૂ એજસ્સ દુગુંછળાણે આયંકદંસો અહિયં—તિ નચ્ચા । જે અજ્ઞત્યં

સાતઘાં ઉદેશ—

વાયુકાય કે જીવ ચક્ષુ કે ગોચર નહીં હોતે, અત એવ વાયુ કી સચિત્તા તમે સ્વતઃ શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન નહીં હોતી । કિન્તુ પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિયોં કા, તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોં કા સ્વરૂપ સમજ લેને સે જિસે શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન હોગઈ હૈ વહ વાયુકાય કો સ્વયં હી જાન લેતા હૈ । હસ આશય સે વાયુકાયસંબંધી યહ અંતિમ સાતઘાં ઉદેશ આરંભ ક્રિયા જાતા હૈ ।

વાયુકાય કી હિંસા ત્યાગને સે હી સાધુપન પ્રાપ્ત હોતા હૈ, યહ વાત આગે પ્રદર્શિત કરતે હૈ:—'પહૂ એજસ્સ.' ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—દુઃસ્વદર્શી પુરુષ (વાયુકાય કે આરંભ કો) અહિતકર જાનકરકે વાયુકાય કે આરંભ કો ત્યાગને મેં સમર્થ હોતા હૈ । જો અધ્યાત્મ કો જાનતા હૈ વહ

સાતઘાં ઉદેશ—

વાયુકાયના એવ નેત્રથી જોવામાં આવતા નથી, એ કારણથી વાયુની સચિત્તામાં સ્વતઃ શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થતી નથી. પરન્તુ પૃથ્વીકાય આદિ એકેન્દ્રિયોના તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોના સ્વરૂપને સમજ લેવાથી જેને શ્રદ્ધા ઉત્પન્ન થઈ ગઈ છે, તે વાયુકાયને પોતેજ જાણી લે છે. એ આશયથી વાયુકાયસંબંધી આ અંતિમ—એકલા સાતઘાં ઉદેશનો આરંભ કરવામાં આવે છે.

વાયુકાયની હિંસા ત્યાગવાથી સાધુતા પ્રાપ્ત થાય છે. એ વાત આગળ બતાવે છે—'પહૂ એજસ્સ.' ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—દુઃખદર્શી પુરુષ (વાયુકાયના આરંભને) અહિતકર જાણીને વાયુકાયના આરંભને ત્યજી દેવામાં સમર્થ હોય છે, જે અધ્યાત્મને જાણે છે. તે બહારને જાણે છે,



જાણઈ, સે વહિયા જાણઈ, જે વહિયા જાણઈ, સે અજ્ઞત્યં જાણઈ । પયં તુલ્યમન્નેસિ ।  
 इह संतिगया दविया णावकंखंति जीचिउं ॥ सू० १ ॥

છાયા—

પ્રમુઃ એજસ્ય જુગુપ્સાયામ્ આતઙ્કદર્શી અહિત-મિતિ જ્ઞાત્વા । યઃ અધ્યાત્મં  
 जानाति, स वहिर्जानाति । यः वहिर्जानाति स अध्यात्मं जानाति । एतत् तुल्य-  
 मन्येषाम् । इह शान्तिगताः द्रविकाः नावकाश्चान्ति जीवितुम् ॥ सू० १ ॥

ટીકા—

યઃ આતઙ્કઃ=કુચ્છજીવનં, દુઃખં, તત્ત્વ શારીરમાનસભેદાદ્ દ્વિવિધમ્, તત્ર  
 कण्टकशस्त्रादिजनितं शारीरम्, प्रियवियोगाप्रियसंयोगाभिलषितालभदारिद्र्यादि-  
 कृतं मानसम् । एतद् द्विविधदुःखरूपमातङ्कं पश्यति तच्छीलश्चेत्यातङ्कदर्शी, यद्वा-  
 षड्जीवकायसमारम्भेण वायुकायसमारम्भेण वा यद्दुःखं स आतङ्कः, तं

बाह्य को जानता है, जो बाह्य को जानता है वह अध्यात्म को जानता है । यह (सुख-दुःख)  
 दूसरों का भी अपने समान है । उपशम को प्राप्त और राग-द्वेष से रहित संयमी पुरुष, पर  
 की हिंसा करके अपने जीवन की इच्छा नहीं करते ॥ सू० १ ॥

ટીકાર્થ—કષ્ટમય જીવન યા દુઃખ કો આતંક કહેતે હૈં । શારીરિક ઓર  
 मानसिक भेद से दुःख दो प्रकार का है । कंटक एवं शस्त्र आदि से होने वाला दुःख  
 शारीरिक कहलाता है । प्रियवियोग और अप्रियसंयोग, इस की अप्राप्ति और दरिद्रता  
 आदि से होने वाला दुःख मानसिक कहलाता है, इन दोनों प्रकार के दुःखरूप आतंक को  
 देखने वाला आतंकदर्शी कहलाता है । अथवा षड्जीवनिकाय या वायुकाय के समारम्भ से  
 होने वाला दुःख आतंक कहलाका है, और उसे देखने वाला अतंकदर्शी है । वह

જે બહારને જાણે છે તે અધ્યાત્મને જાણે છે. આ (સુખ-દુઃખ) બીજાઓને પણ  
 આપણા સમાન છે.

ઉપશમને પ્રાપ્ત અને રાગ-દ્વેષથી રહિત સંયમી પુરુષ પરની-બીજાની હિંસા  
 કરીને પોતાના જીવનની ઇચ્છા કરતા નથી. ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ટીકાર્થ—કષ્ટમય જીવન અથવા દુઃખને આતંક કહે છે. શારીરિક અને  
 मानसिक ભेदથી दुःख दो प्रकारनां છે. कंटक अर्थात् शस्त्र आदिથી થવાવાળાં દુઃખ  
 शारीरिक કહેવાય છે. प्रियवियोग અને અપ્રિયસંયોગ, ઇષ્ટની અપ્રાપ્તિ અને દરિદ્રતા  
 આદિથી થનારા દુઃખો તે માનસિક કહેવાય છે. આ બંને પ્રકારનાં દુઃખરૂપ આતંકને  
 જોવાવાળા આતંકદર્શી કહેવાય છે. અથવા ષડ્જીવનિકાય અથવા વાયુકાયના સમારંભથી

પશ્યતીત્યાતઙ્કદર્શી ભવતિ, સ હિતાહિતવિવેકકુશલત્વાદ્ અહિતમ્=અશુભકરં વાયુ-  
કાયસમારમ્ભગમસ્તીતિ જ્ઞાત્વા, એજસ્ય=એજતીત્યેજઃ કમ્પનશીલત્વાદ્ વાયુઃ,  
તસ્ય, જુગુપ્સાયાં=નિન્દાયાં, સેવનપરિવર્જને સમારમ્ભનિવૃત્તૌ, ઇતિ યાવત્ ,

પશુઃ=સમર્થો ભવતિ । જુગુપ્સા, સંયમના, અકરણા, વર્જના, વ્યાવર્તના,  
નિવૃત્તિરિત્યેકાર્થાઃ ।

અયમાશયઃ—વાયુકાયસમારમ્ભકરણે શારીરં માનસં ચ સર્વમેવ દુઃખં મયિ  
સમાપદ્યેત, તસ્માદિદમાતઙ્કજનકત્વાદહિતમિતિ વિજ્ઞાતા, તત્સેવનલક્ષણસમારમ્ભ-  
પરિહરણે સમર્થો ભવતીતિ ।

યઃ અધ્યાત્મમ્=આત્મનીતિ અધ્યાત્મમ્ સ્વાત્મગતં સુખં દુઃખં વેત્યર્થઃ,

હિત—અહિત કે વિવેક મેં કુશલ હોને સે વાયુકાય સે આરમ્ભ કો અહિતકર સમજકર વાયુ  
કે આરમ્ભ કા ત્યાગ કરને મેં સમર્થ હોતા હૈ । મૂલ મેં આયે હુપ જુગુપ્સા (દુગુંછા) શબ્દ  
કે કહી અર્થ હોતે હૈ । જૈસે—સંયમન, અકરણ (ન કરના), વર્જન (ત્યાગના), વ્યાવર્તન  
(હટના) ઔર નિવૃત્તિ (ત્યાગ) ।

આશય યહ હૈ—‘વાયુકાય કા આરમ્ભ કરને સે મુક્તે શારીરિક ઔર માનસિક સમી  
દુઃખ પ્રાપ્ત હોંગે અતઃ યહ આરમ્ભ અતંકજનક હોને કે કારણ અહિતકર હૈ’ । એસા જાનને  
વાલા ઉસકે સેવનરૂપ આરમ્ભ કે ત્યાગ મેં સમર્થ હોતા હૈ ।

જો અધ્યાત્મ કો અર્થાત્ અપને આત્મા મેં સ્થિત સુખ—દુઃખ કો જાનતા હૈ

થનાઈં દુઃખ આંતક કહેવાય છે, અને એને જોવાવાળા આતંકદર્શી છે. તે હિત-  
અહિતના વિવેકમાં કુશળ હોવાના કારણથી વાયુકાયના આરંભને અહિતકર સમજીને  
વાયુના આરંભને ત્યાગ કરવામાં સમર્થ હોય છે. મૂલમાં આવેલા ‘દુગુંછણા-જુગુપ્સા’  
શબ્દના કેટલાય અર્થ થાય છે. જેમકે:—સંયમન, અકરણ (નહિ કરવું) વર્જન,  
(ત્યાગવું) વ્યાવર્તન, (હટવું) અને નિવૃત્તિ (ત્યાગ).

આશય એ છે કે—‘વાયુકાયનો આરંભ કરવાથી મને શારીરિક અને માનસિક  
સર્વ દુઃખ પ્રાપ્ત થશે; એ માટે એ આરંભ આતંકજનક હોવાના કારણે અહિતકર  
છે.’ એ પ્રમાણે જાણવાવાળા એના સેવનરૂપ આરંભના ત્યાગમાં સમર્થ હોય છે.

જે અધ્યાત્મને અર્થાત્ પોતાના આત્મામાં સ્થિત સુખ—દુઃખને જાણે છે, તે બાહ્ય

જાનાતિ સ વહિઃ=પરકીયં સુખં દુઃખં વા જાનાતિ । મમાત્મનિ દુઃખમસાતવેદનીય-  
કર્મોદયાત્ સમાપત્તિતં, સુખમપિ સાતવેદનીયકર્મોદયાત્ સ્વાનુભવસિદ્ધમ્, एवं  
સ્વાત્મગતસુખદુઃખપ્રત્યક્ષેણ પરકીયસુખદુઃખાનુમાનં વર્તુ શક્નોતીત્યર્થઃ । ઉક્તમર્થ  
દઢીકર્તુ પુનસ્તમેવ પરાવર્તયન્નાહ--‘યઃ વહિર્જાનાતિ’ । इत्यादि ।

યઃ, વહિઃ=પરાત્મગતં સુખં દુઃખં વા જાનાતિ, સ અધ્યાત્મ=સ્વાત્મગતં  
સુખં દુઃખં વા જાનાતિ । પરેષાં સ્વસ્ય ચ સુખદુઃખયોરનુકૂલપ્રતિકૂલવેદનીયરૂપે  
સ્વરૂપે સામ્યાદિતિ ભાવઃ ।

યદ્વા-પરવિરાધનાપરિહારેણ તત્ફલભૂતં સ્વાત્મનઃ સુખં, તથા  
પરપીડનેન તત્ફલભૂતં સ્વાત્મનો દુઃખં ભવતિ, एवं પરકીયમેવ સુખં દુઃખં વા

વહ વાહ્ય અર્થાત્ દૂસરે કે સુખ-દુઃખ કો જાનતા હૈ । મૈરે આત્મા મેં અસાતાવેદનીય કર્મ કે  
ઉદય સે દુઃખ આયા હૈ ઓર સાતાવેદનીય કર્મ કે ઉદય સે સુખ સ્વાનુભવ સિદ્ધ હૈ । ઇસ  
પ્રકાર અપને આત્મા કા સુખ ઓર દુઃખ જો પ્રત્યક્ષ સે જાનતા હૈ, વહ દૂસરોં કે સુખ-દુઃખ  
કા અનુમાન કર સકતા હૈ । ઇસી અભિપ્રાય કો પુષ્ટ કરને કે લિખ્ યહી વાત પલટકર કહતે  
હૈ-જો વાહ્ય કો જાનતા હૈ વહ અધ્યાત્મ કો જાનતા હૈ ।

અર્થાત્-જો પરાયે સુખ-દુઃખ કો જાનતા હૈ વહ અપને આત્મા કે સુખ દુઃખ કો  
જાનતા હૈ । પરાયે ઓર અપને સુખ-દુઃખ કા અનુકૂલ વેદન ઓર પ્રતિકૂલ વેદન રૂપ  
સ્વરૂપ સમાન હૈ ।

અથવા-પરકો પીડા પહુંચાને કા ત્યાગ કરને સે સુખરૂપ ફલ પ્રાપ્ત  
હોતા હૈ ઓર પીડા પહુંચાને સે દુઃખ મિલતા હૈ । ઇસ પ્રકાર પરાયા સુખ ઓર દુઃખ

અર્થાત્ બીજાના સુખ-દુઃખને જાણે છે. મારા આત્માને વિષે અસાતાવેદનીય કર્મના  
ઉદયથી દુઃખ આવ્યું છે, અને સાતાવેદનીય કર્મના ઉદયથી સુખ સ્વાનુભવસિદ્ધ છે.  
આ પ્રમાણે પોતાનાં આત્માનાં સુખ-દુઃખનું અનુમાન કરી શકે છે. એ અભિપ્રાયને પુષ્ટ  
કરવા માટે એજ વાત પલટાવીને કહે છે:-જે બાહ્યને જાણે છે તે અધ્યાત્મને જાણે છે.

અર્થાત્-જે પરાયા સુખ-દુઃખને જાણે છે, તે પોતાના આત્માના સુખ-દુઃખને  
જાણે છે. પરાયા-બીજાના અને પોતાના સુખ-દુઃખનું અનુકૂલ વેદન અને પ્રતિકૂલ  
વેદનરૂપ સ્વરૂપ સમાન છે.

અથવા-બીજાને પીડા પહોંચાડવાના ત્યાગ કરવાથી સુખરૂપ ફલ પ્રાપ્ત થાય  
છે. અને પીડા પહોંચાડવાથી દુઃખ મળે છે.



સ્વાત્મનઃ સુખરૂપેણ દુઃખરૂપેણ વા પરિણમ્યતે । એવં તયોઃ કાર્યકારણભાવં યો વિજાનાતિ, સ એવ સ્વાત્મગતસુખદુઃખવિજ્ઞાતેતિ ભાવઃ ।

પરકીયસુખદુઃખવિજ્ઞાતા સ્વાત્મનઃ સુખં દુઃખં વા જાનાતીત્યુક્તાર્થે હેતું પ્રદર્શયન્નાહ— ‘એયં તુલ્લમન્નેસિ’ इति । एतत्=सुखं दुःखं वा, तुल्यं=सदृशमेव, अन्येषाम्=परेषां जीवानां स्वस्व चेत्यर्थः ।

“ કટ્ટેણ કંટણ્ણ વ, પાણ વિદ્વસ્સ વેયણદ્વમ્મ ।

જા હોઈ અણિવ્વાણી, ણાયવ્યા સવ્વજીવાણં ॥

જહ મમ ણ પ્રિયં દુક્ખં, જાણિય એમેવ જીવાણં ” ॥

છાયા-- કાષ્ઠેન કણ્ઠકેન વા પાદે વિદ્વસ્ય વેદનાર્તસ્ય ।

યા ભવતિ અનિર્વાણિ-જ્ઞાતવ્યા સર્વજીવાનામ્ ॥

યથા મમ ન પ્રિયં દુઃખં જ્ઞાત્વા એવમેવ સર્વજીવાનામ્ । ” इति ।

હી અપને સુખ-દુઃખ કે રૂપ મેં પરિણત હો જાતા હૈ । ઇસ પ્રકાર જો અનેક કાર્યકારણ ભાવ કો જાનતા હૈ વહી અપને આત્મા કે સુખ-દુઃખ કા જ્ઞાતા હોતા હૈ ।

દૂસરો કે સુખ-દુઃખ કા જ્ઞાતા હી અપને સુખ-દુઃખ કો જાનતા હૈ, ઇસ કથન મેં હેતુ દિશલાતે હુણ કહતે હૈ--‘યહ સુખ ઔર દુઃખ દૂસરોં કે ઔર અપને સમાન હી હૈ’ । કહા મી હૈ:—

લકડી સે યા કંટક સે પૈર મેં વિંધ જાને કી વેદના સે પીડિત પુરુષ કો જો અસંતોષ હોતા હૈ, વહી સવ જીવોં કો હોતા હૈ ।

જૈસે મુક્કે દુઃખ પ્રિય નહીં હૈ, ઊસી પ્રકાર અન્ય અન્ય પ્રાણિયોં કો મી દુઃખ પ્રિય નહીં હૈ ” ।

આ પ્રમાણે ખીજના સુખ અને દુઃખ જોતાના સુખ-દુઃખના રૂપમાં પરિણત થઈ જાય છે. આ પ્રમાણે જે તેના કાર્ય-કારણ ભાવને જાણે છે, તે જોતાના આત્માનાં સુખ-દુઃખના જ્ઞાતા હોય છે.

ખીજનાં સુખ-દુઃખનાં જ્ઞાતા જ જોતાના સુખ-દુઃખને જાણે છે. આ કથનમાં હેતુ બતાવતા થકા કહે છે કે:—

“ આ સુખ અને દુઃખ ખીજનાં અને આપણાં સમાન છે. ” કહ્યું છે કે:—

“ લાકડીથી અથવા કાંટાથી પગમાં વિંધાઈ જવાની વેદનાથી પીડિત પુરુષને જે અંતવેદના થાય છે, તેવી જ સર્વ જીવોને (વેદના) થાય છે. ”

“ જેમ મને દુઃખ પ્રિય નથી, તે પ્રમાણે ખીજ પ્રાણીઓને પણ દુઃખ પ્રિય નથી. ”

અન્યત્ર ચ—“ મતેવ્યમિતિ યદ્દુઃ, પુરુષસ્યોપજાયતે ।

શ્વયસ્તેનાનુમાનેન, પરોઽપિ પરિરક્ષતુમ્ ” ॥૧॥ ઇતિ ।

સ્વપર-સુખદુઃસ્વ્યાસ્તુલ્યત્વવેદિનો ન વાયુકાયં વિરાધયન્તીત્યાહ—  
‘ઇહ શાન્તિગતાઃ’ ઇત્યાદિ । ઇહ=જિનપ્રવચને, શાન્તિગતાઃ=સ્વપરસુખદુઃસ્વયોઃ  
સમત્વવિજ્ઞાનાદ્ ઔપશમિકભાવં પ્રાપ્તાઃ સમ્યક્તિવન ઇત્યર્થઃ યદ્વા=શાન્તિઃ=  
સાવધવ્યાપારપરિહારઃ, તામુપગતાઃ દ્રવિકાઃ=રાગદ્વેષરહિતાઃ, યદ્વા-દ્રવઃ=  
સંયમઃ કર્મદ્રવણકારિત્વાત્, સ વિદ્યતે યેષાં તે દ્રવિકાઃ= કર્મનિવારણશીલાઃ  
સંયમિનઃ જીવિતમ્=વ્યજનાદિના વાયુકાયસ્ય સમારમ્ભેણ પ્રાણાન્ પરિરક્ષિતું  
નાવકાઙ્ક્ષન્તિ=નેચ્છન્તિ ।

દૂસરી જગહ કહા હૈ—

“તેરા મરના હી અચ્છા હૈ, એસા વાક્ય સુનને માત્ર સે પુરુષ કો જો દુઃખ હોતા હૈ,  
હસી મેં અંદાજ લગાકર દૂસરોં કી રક્ષા કરની યાહિય ” । ૧ ।

જો પુરુષ સ્વ-પર સુખ-દુઃખ કો સમાન સમજતે હૈં વે વાયુકાય કી વિરાધના  
નહીં કરતે, યહી વાત કહતે હૈં:—

જિનશાસન મેં અપને ઔર પરાયે સુખ-દુઃખ કો સમાન સમજકર જો ઉપશમ  
ભાવકો પ્રાપ્ત હુય હૈં અર્થાત્ સમ્યગ્દષ્ટિ હૈં, અથવા પાપમય વ્યાપારોં કે ત્યાગી હૈં, તથા  
રાગ-દ્વેષ સે રહિત હૈં, અથવા કર્મોં કો નિવારણ કરનેવાલે સંયમ સે વિમૂષિત હૈં, વે  
પંખા આદિ સે વાયુકાય કા સમારમ્ભ કરકે અપને પ્રાણોં કી રક્ષા કરને કી ઇચ્છા  
નહીં કરતે ।

ખીજી જગ્યાએ પણ કહ્યું છે કે:-

“ તારે મરવું જ સાડું છે.” એ પ્રમાણે સાંભળવાથી પુરુષને જે દુઃખ થાય  
છે. તે અનુમાનથી ખીબની રક્ષા કરવી જોઈએ. ॥ ૧ ॥

જે પુરુષ સ્વ-પરના (પોતાનાં અને પારકાનાં) સુખ-દુઃખને સમાન સમજે છે,  
તે વાયુકાયની વિરાધના કરતા નથી. તે વાત કહે છે—

જિન શાસનમાં પોતાનાં અને ખીબનાં સુખ-દુઃખને સમાન સમજીને જે ઉપશમ  
ભાવને પ્રાપ્ત થયા છે, અર્થાત્ સમ્યગ્દષ્ટિ છે, અથવા પાપમય વ્યાપારોના ત્યાગી છે.  
તથા રાગ-દ્વેષથી રહિત છે, અથવા કર્મોનું નિવારણ કરવાવાળા સંયમથી વિમૂષિત છે તે  
પંખા આદિથી વાયુકાયનો સમારંભ કરીને પોતાના પ્રાણોની રક્ષા કરવાની ઇચ્છા કરતા નથી.

જિનપ્રવચનોક્તચરણકરણસેવિનઃ સ્વપ્રાણરક્ષણાર્થમપિ પરજીવોપમર્દનં નેચ્છન્તિ, તે હિ અચાક્ષુષવાયુજીવવિરાધનાવિનિવૃત્તાઃ કથમન્યચાક્ષુષપૃથિવ્યાદિજીવોપમર્દને પ્રવર્તેત, ન કથમપીતિ ભાવઃ ।

અથ વાયુકાયસ્ય સમ્યગ્જ્ઞાનાર્થં લક્ષણાદ્યષ્ટ દ્વારાણિ નિરૂપણીયાનિ । તત્ર લક્ષણપ્રરૂપણાપરિમાણશસ્ત્રોપભોગદ્વારાણિ યથાક્રમં નિરૂપ્યન્તે । અવ-શિષ્ટ-વધવેદનાનિવૃત્તિ દ્વારાણિ પૃથિવીકાયોદેશે યથા કથિતાનિ તથૈવાવગન્તવ્યાનિ ।

જિનાગમ મેં કથિત ચરણ-કરણ કા સેવન કરને વાલે અપને પ્રાણોં કી રક્ષા કરને કે લિખે મી દૂસરે જીવ કી હિંસા કરને કી અભિલાષા નહીં કરતે । વે ચક્ષુ સે ન દિરખાઈ દેને વાલે વાયુકાય કે જીવોં કી વિરાધના સે મી નિવૃત્ત હોતે હૈં તો ચક્ષુ-ગોચર અન્ય પૃથ્વીકાય આદિ કે જીવોં કી વિરાધના મેં કૈસે પ્રવૃત્ત હો સકતે હૈં-કિસી પ્રકાર મી નહીં ।

વાયુકાય કા સમ્યગ્જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરને કે લિખે લક્ષણ આદિ આઠ દ્વારોં કા નિરૂપણ કરના ચાહિખે । ઊનમેં સે લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, શસ્ત્ર ઓર ઉપભોગ દ્વારોં કા ક્રમ સે નિરૂપણ કરતે હૈં । શેષ વધ, વેદના ઓર નિવૃત્તિ દ્વાર જૈસે પૃથ્વીકાય કે ઉદેશ મેં કહે હૈં વૈસે હી યહાં સમજ લેને ચાહિખે ।

જિનાગમમાં કહેલા ચરણ-કરણનું સેવન કરવાવાળા પોતાના પ્રાણોની રક્ષા કરવા માટે પણ બીજા જીવોની હિંસા કરવાની અભિલાષા કરતા નથી. તે નેત્રથી નહિ દેખાતા વાયુકાયના જીવોની વિરાધનાથી પણ નિવૃત્ત હોય છે, તો પછી નેત્રથી જોઈ શકાય તેવા બીજા પૃથ્વીકાય આદિના જીવોની વિરાધનામાં કેવી રીતે પ્રવૃત્ત થઈ શકે છે ? કોઈ પ્રકારે પણ થઈ શકતા નથી.

વાયુકાયનું સમ્યગ્જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવા માટે લક્ષણ આદિ આઠ દ્વારોનું નિરૂપણ કરવું જોઈએ. તેમાંથી લક્ષણ, પ્રરૂપણા, પરિમાણ, શસ્ત્ર અને ઉપભોગ દ્વારોનું ક્રમથી નિરૂપણ કરે છે, શેષ-(બાકી) વધ, વેદના અને નિવૃત્તિ દ્વાર જેવી રીતે પૃથ્વીકાયના ઉદેશમાં કદા છે, તેવીજ રીતે અહિં સમજાવેલું જોઈએ.



લક્ષણદ્વારમ્—

નનુ કથમિદં જ્ઞાયતે વાયુઃ સચિત્ત ઇતિ?, અત્રોચ્યતે—ગૃહ્યતાં તાવદનુ-  
માનં પ્રમાણમ્, વાયુશ્ચેતનાવાન્ અનન્યપ્રેરિતાઽનિયતતિર્યગ્મનવચ્ચાત્,  
હરિણગવયાદિવદિતિ । અનિયતવિશેષણોપાદાનાત્ પરમાણૌ અપરપ્રેરિત-  
તિર્યગ્ગતિસત્ત્વેઽપિ નાનૈકાન્તિકત્વમ્, તસ્ય હિ પરપ્રયોગનિરપેક્ષસ્ય સ્વા-  
ભાવિકી ગતિરનુશ્રેણિર્ભવતિ તસ્માત્ સા નિયતૈવ । આગમોઽપિ પ્રમાણં, યથા-  
દશવૈકાલિકસૂત્રે—“વાઽ ચિત્તમંતમક્ષવાયા અણેગજીવા પુદોસત્તા અન્નત્થ  
સત્થપરિણણં” । ઇતિ,

વાયુશ્ચિત્તવાનારૂપાતોઽનેકજીવઃ પૃથક્સત્ત્વઃ અન્યત્ર શસ્ત્રપરિણતાત્ ।  
ઇતિ છાયા,

લક્ષણદ્વાર—

શંકા—વાયુ સચિત્ત છે, યહ વાત કિસ પ્રકાર જાની જાય ?

સમાધાન—પહેલે અનુમાન પ્રમાણ હી લીજિણ:—વાયુ ચેતનાયુક્ત છે, ક્યો કિ વહ  
દૂસરો કી પ્રેરણા વિના અનિયત રૂપ સે તિરછી ગતિ કરતી છે, જૈસે હિરન, રોહા આદિ । હેતુ  
મેં ‘અનિયત’ વિશેષણ લગા દેને સે પ્રેરણા કા અભાવ ઓર તિરછી ગતિ હોને પર મી પરમાણુ  
વ્યભિચાર નહીં હોતા । પરમાણુ દૂસરે કી પ્રેરણા કે વિના જો ગતિ કરતા હૈ વહ ગતિ શ્રેણી  
કે અનુસાર નિયત હી હોતી હૈ—અનિયત નહીં । ઇસ વિષય મેં આગમ મી પ્રમાણ હૈ ।  
દશવૈકાલિક સૂત્ર મેં કહા હૈ—

“વાયુ સચિત્ત કહી ગઈ હૈ । વહ અનેક જીવોંવાલી હૈ, ઓર ઉન જીવોં કા  
અસ્તિત્વ પૃથક્-પૃથક્ હૈ । સિર્ફ શસ્ત્રપરિણત વાયુ સચિત્ત નહીં હૈ ” ।

લક્ષણદ્વાર—

શંકા—વાયુ સચિત્ત છે એ વાત કેવી રીતે જાણી શકાય ?

સમાધાન—પ્રથમ અનુમાનપ્રમાણ લઈએ—વાયુ ચેતનાયુક્ત છે, કેમકે તે  
ખીબની પ્રેરણા વિના અનિયતરૂપથી તિરછી ગતિ કરે છે, જેમ—હરણ, રોહા આદિ.  
હેતુમાં ‘અનિયત’ વિશેષણ લગાવી દેવાથી પરપ્રેરણાનો અભાવ અને તિરછી ગતિ  
હોવા છતાંય પણ પરમાણુથી વ્યભિચાર થતો નથી, પરમાણુ ખીબની પ્રેરણા વિના  
જે ગતિ કરે છે, તે ગતિ શ્રેણી—અનુસાર નિયતજ હોય છે, અનિયત નહિં.

આ વિષયમાં આગમ પણ પ્રમાણ છે. દશવૈકાલિક સૂત્રમાં કહ્યું છે—

“વાયુ સચિત્ત કહેવામાં આવ્યો છે. તે અનેક જીવવાળો છે અને તે જીવોનું  
અસ્તિત્વ પૃથક્-પૃથક્ (જુદું-જુદું) છે, માત્ર શસ્ત્રપરિણત વાયુ સચિત્ત નથી.”

## પ્રરૂપણાદ્વારમ્—

વાયુકાય દ્વિવિધાઃ—સૂક્ષ્મા વાદરાશ્ચેતિ । તત્ર સૂક્ષ્માઃ સકલલોકવ્યાપિનઃ, વાદરાસ્તુ લોકૈકદેશે સન્તિ । વાદરાઃ પશ્ચવિધાઃ—ઉત્કલિકાવાતઃ, મળ્ડલિકાવાતઃ, ગુઝાવાતઃ, ઘનવાતઃ, શુદ્ધવાતશ્ચેતિ । યે તુ તે પૌરસ્ત્યાદિભેદા લોકવાદિપ્રકરણે પ્રાગભિહિતાસ્તેઽપ્યત્રૈવાન્તર્ભૂતાઃ । યઃ સ્થિત્વા સ્થિત્વા ઉત્કલિકાભિર્વાતિ સ ઉત્કલિકાવાતઃ, વાતોલીરૂપો મળ્ડલિકાવાતઃ, યો ગુઝન્ વાતિ સ ગુઝાવાતઃ, પૃથિવ્યાદીનામાધારતયા વ્યવસ્થિતો હિમપટલકલ્પોઽતિઘનીભૂતો ઘનવાતઃ, મન્દ-સ્તિમિતઃ શીતકાલાદિષુ શુદ્ધવાતઃ ।

સંક્ષેપેણ વાયુકાયાન્નિવિધાઃ—સચિતા અચિતા મિશ્રાશ્ચ । ઉત્કલિકાવાતાદયઃ

## પ્રરૂપણાદ્વાર—

વાયુકાય દો પ્રકાર કા હૈ—સૂક્ષ્મ ઓર વાદર । સૂક્ષ્મ જીવ સમસ્ત લોક મેં રહતે હૈ । વાદર પાંચ પ્રકાર કે હૈ—(૧) ઉત્કલિકાવાત (૨) મળ્ડલિકાવાત (૩) ગુઝાવાત (૪) ઘનવાત ઓર (૫) શુદ્ધવાત । પૌરસ્ત્ય આદિ જો ભેદ લોકવાદી કે પ્રકરણ મેં પહેલે બતલાયે હૈ વે સબ મી ઇન્હીં ભેદોં મેં અન્તર્ગત હો જાતે હૈ । ઠહર-ઠહર કર ઉત્કલિકારૂપ સે બહનેવાલી વાયુ ઉત્કલિકાવાત હૈ । વાતોલીરૂપ વાયુ કો મળ્ડલિકાવાત કહતે હૈ । ગૂંજ-ગૂંજ કર બહને વાલી વાયુ કો ગુઝાવાત કહતે હૈ । પૃથ્વી આદિ કે આધાર પર સ્થિત હિમપટલ કે સમાન અત્યન્ત સઘન વાયુ કો ઘનવાત કહતે હૈ । શીતકાલ આદિ મેં ધીમે-ધીમે ચલને વાલી વાયુ શુદ્ધવાત હૈ ।

સંક્ષેપ સે વાયુકાય કે ત્રીન ભેદ હૈ—(૧) સચિત (૨) અચિત ઓર

## પ્રરૂપણાદ્વાર—

વાયુકાય જો પ્રકારના છે. (૧) સૂક્ષ્મ અને (૨) વાદર. સૂક્ષ્મ જીવ સમસ્ત લોકમાં વ્યાપ્ત છે. અને વાદર, લોકના એક-દેશમાં રહે છે. વાદર પાંચ પ્રકારના છે. (૧) ઉત્કલિકાવાત, (૨) મળ્ડલિકાવાત, (૩) ગુઝાવાત, (૪) ઘનવાત અને (૫) શુદ્ધવાત.

પૌરસ્ત્ય આદિ જે ભેદ લોકવાદીના પ્રકરણમાં પહેલાં બતાવ્યાં છે, તે સર્વે આ ભેદોમાં અન્તર્ગત થઈ જાય છે. જરા-રહી-રહીને ઉત્કલિકારૂપમાં વહેવાવાળો વાયુ તે ઉત્કલિકાવાત છે. વાતોલીરૂપ વાયુને મળ્ડલિકાવાત કહે છે. ગૂંજ-ગૂંજ ને વહેવાવાળી હવાને ગુઝાવાત કહે છે. પૃથ્વીઆદિના આધારપર સ્થિત હિમપટલ સમાન અત્યન્ત સઘન વાયુને ઘનવાત કહે છે. શીતકાલ આદિમાં ધીમે-ધીમે વહેતો વાયુ તે શુદ્ધવાયુ છે.

સંક્ષેપથી વાયુકાયના ત્રણ ભેદ છે. (૧) સચિત (૨) અચિત અને (૩) મિશ્ર.

સચિત્તાઃ, ઉદ્ગારોચ્છ્વાસાદયોઽચિત્તાઃ સચિત્તાચિત્તયોઃ સંમિશ્રણેન મિશ્રાઃ ।

પરિમાણદ્વારમ્—

એ વાદરપર્યાપ્તકા વાયુકાયાસ્તે સંવર્તિતલોકપ્રતરાસંખ્યેયભાગવર્તિ-  
પ્રદેશરાશિપરિમાણાઃ, શેષાસ્ત્રયોઽપિ રાશયઃ પૃથગસંખ્યેયલોકાકાશપ્રદેશ-  
પરિમાણા ભવન્તિ, વિશેષશ્ચાયમત્રાવગન્તવ્યઃ—વાદરાપ્કાયપર્યાપ્તકેભ્યો વાદરવાયુ-  
પર્યાપ્તકા અસંખ્યેયગુણાઃ, વાદરાપ્કાયાઽપર્યાપ્તકેભ્યો વાદરવાયુકાયાઽ-  
પર્યાપ્તકા અસંખ્યેયગુણાઃ । સૂક્ષ્માપ્કાયાઽપર્યાપ્તકેભ્યઃ સૂક્ષ્મવાયુકાયાઽપર્યાપ્તકા  
વિશેષાધિકાઃ, સૂક્ષ્માપ્કાયપર્યાપ્તકેભ્યઃ સૂક્ષ્મવાયુકાયપર્યાપ્તકા  
વિશેષાધિકાઃ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

(૩) મિશ્ર । ઉત્કાલિકાવાત આદિ સચિત્ત હૈં, ઉદગાર ઓર ઉચ્છ્વાસ આદિ અચિત્ત હૈં, ઓર મિલી હુઈ—સચિત્ત—અચિત્ત વાયુ મિશ્ર હૈ ।

પરિમાણદ્વાર—

વાદરપર્યાપ્તવાયુકાય કે જીવ સંવર્તિત લોકપ્રતર કે અસંખ્યાતવે ભાગવર્તી પ્રદેશો કે  
બરાબર હૈ । શેષ ત્રીનો પ્રત્યેક રાશિયૌ અસંખ્યાત લોકાકાશ કે પ્રદેશો કે બરાબર હૈ ।  
યહૌ હતની વિશેષતા સમજની યાદિ—વાદર અપ્કાય કે પર્યાપ્ત જીવોં કી અપેક્ષા વાયુકાય  
કે વાદર પર્યાપ્ત અસંખ્યાત ગુણા હૈ । અપ્કાય કે અપર્યાપ્ત વાદર જીવોં સે વાયુકાય કે  
અપર્યાપ્ત વાદર અસંખ્યાત ગુણા હૈ । અપ્કાય કે સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત જીવોં સે સૂક્ષ્મ વાયુકાય કે  
અપર્યાપ્ત વિશેષ અધિક હૈ । અપ્કાય કે સૂક્ષ્મ પર્યાપ્ત જીવોં સે સૂક્ષ્મ વાયુકાય કે પર્યાપ્ત  
વિશેષાધિક હૈ ॥ સૂ૦ ૧ ॥

ઉત્કાલિકાવાત આદિ સચિત્ત છે. ઉદગાર અને ઉચ્છ્વાસ આદિ અચિત્ત છે. અને સચિત્ત  
તથા અચિત્ત એ બંને એક સાથે મળેલા હોય તે વાયુ મિશ્ર છે.

પરિમાણદ્વાર—

વાદરપર્યાપ્તવાયુકાયના જીવ સંવર્તિત લોક પ્રતરના અસંખ્યાતમા ભાગવર્તી  
પ્રદેશોના બરાબર છે. બાકી ત્રણ પ્રત્યેક રાશીઓ અસંખ્યાત લોકાકાશના પ્રદેશોની  
બરાબર છે. અહિં એટલી વિશેષતા સમજવી જોઈએ—વાદર અપ્કાયના પર્યાપ્ત જીવોની  
અપેક્ષા વાયુકાયના વાદર પર્યાપ્ત અસંખ્યાત ગણા છે. અપ્કાયના અપર્યાપ્ત વાદર  
જીવોથી વાયુકાયના અપર્યાપ્ત વાદર અસંખ્યાત ગણા છે. અપ્કાયના સૂક્ષ્મ અપર્યાપ્ત  
જીવોથી સૂક્ષ્મ વાયુકાયના અપર્યાપ્ત વિશેષ અધિક છે. અપ્કાયના સૂક્ષ્મપર્યાપ્ત  
જીવોથી, સૂક્ષ્મ વાયુકાયના પર્યાપ્ત વિશેષાધિક છે. ॥ સૂ૦ ૧ ॥



अथ सर्वथा वायुकायसमारम्भपरित्यागिनोऽनगारान्, तथा वायुकाय-  
समारम्भप्रवृत्तान् द्रव्यलिङ्गिनश्च विविच्य प्रतिबोधयितुमाह—‘लज्जमाणा.’  
इत्यादि ।

अथ शस्त्रद्वारम्—

मूलम्—

लज्जमाणा पुढो पास । अणगारा सो—त्ति एगे पवयमाणा जमिणं विरूवरूवेहिं  
सत्थेहिं वाउकम्मसमारंभेणं, वाउसत्थं समारंभमाणा अण्णे अणेगरूवे पाणे  
विहिंसन्ति ॥ सू० २ ॥

छाया—

लज्जमानाः पृथक् पश्य । अनगाराः स्म इति एके प्रवदमानाः, यदिमं  
विरूपरूपैः शस्त्रैः वायुकायसमारम्भेण, वायुकायशस्त्रं समारभमाणा अन्यान् अनेक-  
रूपान् प्राणान् विहिंसन्ति ॥ सू० २ ॥

वायुकाय के समारंभ का सर्वथा त्याग करने वाले मुनियों को और वायुकाय के  
समारम्भ में प्रवृत्ति करने वाले द्रव्यलिङ्गियों को अलग—अलग बतलाने के लिए कहते हैं—  
‘लज्जमाणा.’ इत्यादि ।

शस्त्रद्वार—

मूलार्थ—वायुकाय का समारम्भ करने में संकोच करने वाले अनगारों को अलग  
देखो, और कोई—कोई ‘हम अनगार हैं’ ऐसा कहते हुए नाना प्रकार के शस्त्रों से वायुकाय  
का समारम्भ करके, वायुकाय का समारम्भ करते हुए अन्य अनेक प्रकार के प्राणियों की  
हिंसा करते हैं उनको अलग देखो ॥ सू० २ ॥

वायुकायना समारंभना सर्वथा त्याग करवावाणा मुनियेने अने वायुकायना  
समारंभमां प्रवृत्ति करवावाणा द्रव्यलिङ्गियेने जूहा—जूहा अताववा भाटे कडे छेः—  
‘लज्जमाणा.’ इत्यादि.

शस्त्रद्वार—

मूलार्थ—वायुकायना समारंभमां संकोच करवावाणा अणुगारेने जूहा जण्णे,  
अने कोर्ध—कोर्ध ‘अमे अणुगार छीये’ એવું કહેનારા અને નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી  
વાયુકાયના સમારંભ કરીને, વાયુકાયના સમારંભ કરતા થકા બીજા અનેક પ્રકારના  
પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે. તેને પણ જૂહા—જૂહા જણાવે. ॥ सू० २ ॥

टीका—

लज्जमानाः=परमकरुणयाऽऽर्द्रचित्तया वायुकायसमारम्भे पराङ्मुखाः,  
वायुकायसमारम्भपरित्यागिनोऽनागाराः, पृथक्=विभिन्नाः, केचन प्रत्यक्ष-  
ज्ञानिनोऽवधिमनःपर्ययकेवलिनः, केचित् परोक्षज्ञानिनो भावितात्मानः सन्तीति  
पश्य । यद्वा-पृथक्=द्रव्यलिङ्गिभ्यः पृथग्भावेन सन्तीति पश्य । इमे वायुकायसमार-  
म्भकरणे भीतास्तस्मा उद्विग्नास्त्रिकरणत्रियोगैर्वायुकायसमारम्भपरित्यागिनो विद्यन्ते  
इति विलोकयेत्यर्थः ।

एके पुनरन्येतु 'वयमनगाराः स्मः' इति साभिमानं प्रवदमानाः 'वयमेव  
वायुकायरक्षणपराः महाव्रतधारिणः' इति प्रलपन्तो द्रव्यलिङ्गिनः सन्ति, तान्  
पृथक् पश्य ।

टीकार्थ—परम करुणा से आर्द्र-चित्त होने के कारण वायुकाय के समारम्भ से  
विमुख, वायुकाय के समारम्भ का सर्वथा त्याग करने वाले अनगार भिन्न हैं—कोई अवधि-  
ज्ञानी कोई मनःपर्ययज्ञानी और कोई केवलज्ञानी हैं, और कोई मतिश्रुतज्ञान के धारक  
भावितात्मा साधु हैं, उन्हें देखो । अथवा उन्हें द्रव्यलिङ्गियों से भिन्न समझो । ये अनगार  
वायुकाय का समारम्भ करने में भीत हैं, त्रस्त हैं, उद्विग्न हैं तथा तीन करण तीन योग से  
वायुकाय का समारम्भ करने के त्यागी हैं ।

और कोई-कोई 'हम अनगार हैं' इस प्रकार अभिमानपूर्वक कहते हुए, 'हम ही  
वायुकाय की रक्षा करने वाले पंचमहाव्रतधारी हैं' ऐसा प्रलाप करने वाले द्रव्यलिङ्गी  
हैं, उन्हें अनगारों से अलग समझो ।

टीकार्थ—परम करुणाથી आर्द्र-चित्त होवाना કારણે વાયુકાયના સમારંભથી  
વિમુખ, વાયુકાયના સમારંભનો સર્વથા ત્યાગ કરવાવાળા અણુગાર બૂદ્ધ છે—કોઈ  
અવધિજ્ઞાની, કોઈ મનઃપર્યયજ્ઞાની અને કોઈ કેવલજ્ઞાની છે, અને કોઈ મતિ-શ્રુત  
જ્ઞાનના ધારક ભાવિતાત્મા સાધુ છે, તેને જુઓ. અથવા તેને દ્રવ્યલિંગિઓથી બૂદ્ધ  
બાણો, તે અણુગાર વાયુકાયનો સમારંભ કરવામાં ભીત (ભીવા વાળા) છે, ત્રસ્ત છે,  
ઉદ્વિગ્ન છે. તથા ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી વાયુકાયનો સમારંભ કરવાના ત્યાગી છે.

અને કોઈ-કોઈ 'અમે અણુગાર છીએ' આ પ્રમાણે અભિમાનપૂર્વક કહે છે.  
કે 'અમેજ વાયુકાયની રક્ષા કરવાવાળા પંચમહાવ્રતધારી છીએ.' એવો બકવાદ  
કરનારા દ્રવ્યલિંગી છે. તેને અણુગારોથી બૂદ્ધ બાણો.

इमे खल्वनगाराभिमानिनो द्रव्यलिङ्गिनो मनागप्यनगारगुणेषु न प्रवर्तन्ते, नापि गृहस्थकृत्यं किञ्चित् परित्यजन्तीति दर्शयति—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद्, विरूपरूपैः=विभिन्नस्वरूपैः, शस्त्रैः. शस्त्रं हि द्रव्यभावभेदाद् द्विविधम्, तत्र द्रव्यशस्त्रं-स्वकायपरकायोभयकायभेदात् त्रिविधम् । तत्र स्वकायशस्त्रं-शीतवायोरुष्णवायुः, उष्णवायोश्च शीतवायुः पूर्वदिगादिवायोः पश्चिम-दिगादिवायुः स्वकायशस्त्रम् । व्यजन-तालवृन्त-शूर्प-चामर-पत्र-वेलकर्णाभिधार-णादयः, घर्मांतो यद् बहिरवतिष्ठते वातागमनमार्गे साऽभिधारणा,

तथा-चन्दनोशीरादीनां गन्धाः, अग्निज्वालाप्रतापश्च, तथा मुशलादिना

અનગાર હોને કા અભિમાન કરને વાલે યે દ્રવ્યલિંગી અનગાર કે ગુણો મેં તનિક મી પ્રવૃત્તિ નહીં કરતે ઓર ગૃહસ્થોં કે કિસી કૃત્ય કા ત્યાગ નહીં કરતે હૈં । યહ આગે કહતે હૈં:—

द्रव्यशस्त्र और भावशस्त्र के भेद से शस्त्र दो प्रकार का है । द्रव्यशस्त्र के तीन भेद हैं—( १ ) स्वकाय ( २ ) परकाय और ( ३ ) उभयकायशस्त्र । उष्णवायु, शीतवायु का और शीतवायु, उष्णवायु का, तथा पूर्वादिदिशाओंका वायु, पश्चिमादिदिशाओं के वायु का स्वकायशस्त्र है, पंखा, तालवृन्त, शूर्प, चामर, पत्र, कपडा और अभिधारणा आदि, धूप से पीड़ित पुरुष हवा आने के रास्ते में ठहरता है उसको अभिधारणा कहते हैं ।

तथा-चन्दन, खसखस आदि की गंध, आगकी ज्वाला, ताप आदि परकायशस्त्र है ।

અણુગાર હોવાનું અભિમાન કરવાવાળાઓ દ્રવ્યલિંગી (સાચા) અણુગારના ગુણોમાં જરા પણ પ્રવૃત્તિ કરતા નથી, અને ગૃહસ્થોના કોઈ પણ કાર્યનો ત્યાગ કરતા નથી તે આગળ કહે છે.

द्रव्यशस्त्र અને ભાવશસ્ત્રના ભેદથી શસ્ત્ર બે પ્રકારના છે, દ્રવ્યશસ્ત્રના ત્રણ ભેદ છે. (૧) સ્વકાય, (૨) પરકાય, (૩) ઉભયકાય-શસ્ત્ર, ઉષ્ણવાયુ, શીતવાયુનો અને શીતવાયુ, ઉષ્ણવાયુનો તથા પૂર્વોદિ દિશાઓના વાયુનો પશ્ચિમ આદિ દિશાઓના વાયુ સ્વકાયશસ્ત્ર છે. વાંસનો બનાવેલો તથા તાલપત્રનો બનાવેલો પંખો, શૂપડા, ચામર, પત્ર, વસ્ત્રખંડ અને અભિધારણા આદિ, તાપથી પીડિત પુરુષ હવા આવવાના રસ્તામાં થોભી જાય છે, તેને અભિધારણા કહે છે.

તથા-ચન્દન, ખસખસ, આદિની ગંધ, અગ્નિ, અગ્નિની જ્વાલા, તાપ આદિ તથા



કણ્ડનં, તુષાદ્યપસારણાર્થં શૂર્પાસ્ફાલનં, વસ્ત્રાદિગતરજઃપ્રમૃતિવારણાય વસ્ત્રાદીના-  
માઞ્છોટનમાસ્ફોટનં પ્રસ્ફોટનં ચ, તથા શીઘ્રગમનં વાયુકાયસ્ય વિરાધકં પરકાય-  
શસ્ત્રમ્ । ઉભયકાયશસ્ત્રમ્-અનાદૃતપુલ્હેન ભાષણમ્, એતત્સર્વં દ્રવ્યશસ્ત્રમ્ । ભાવશસ્ત્રં  
તુ મનોવાક્કાયાનાં દુષ્પ્રણિધાનમ્ । એવંવિધૈઃ શસ્ત્રૈઃ, વાયુકાયસમારમ્ભેણ=વાયુકાયો-  
પમર્દકસાવધવ્યાપારેણ, ઇમં વાયુકાયં વિહિસન્તિ ।

વાયુકાયાર્હસાયાં પ્રવૃત્તાઃ સ્વલુ ષટ્કાયવનિકાયરૂપં લોકં સર્વમેવ  
વિહિસન્તીત્યાહ—‘વાયુકાયશસ્ત્રમ્.’ ઇત્યાદિ । વાયુકાયશસ્ત્રં=વાયુકાયોપમર્દકં  
દ્રવ્યભાવશસ્ત્રં પૂર્વોક્તપ્રકારં, સમારમ્ભાણાઃ=વાયુકાયં પ્રતિ પ્રયુજ્ઞાનાઃ અન્યાન્=વાયુ-  
કાયભિન્નાન્ અનેકરૂપાન્ પૃથિવીકાયાદીન્ સ્થાવરાન્ દ્વીન્દ્રિયાદીન્ત્રસાંશ્ચ પ્રાણાન્=  
પ્રાણિનઃ, વિહિસન્તિ ।

મૂસલ સે કૂટના, છિલકે હટાને કે લિખે સૂપ સે ફટકના, ધૂળ-રેત આદિ જાડને કે લિખે  
વજ્ર આદિ કો ફટકારના-ફટકના તથા જલ્દી ચલના મો વાયુકાય કા વિરાધક પરકાય  
શસ્ત્ર હૈ સુલે મુલ સે બોલના ઉભયકાયશસ્ત્ર । મન, વચન, ઔર કાયકા અપ્રશસ્ત વ્યાપાર  
ભાવશસ્ત્ર હૈ । ઇન નાના પ્રકાર કે શસ્ત્રો સે દ્રવ્યલિંગી વાયુકાય કી હિસા કરને વાલે સાવધ  
વ્યાપાર કરકે વાયુકાય કી હિસા કરતે હૈ ।

જો વાયુકાય કી હિસા મેં પ્રવૃત્ત હોતા હૈ વહ ષટ્કાયરૂપ સમસ્ત લોક કી  
હિસા કરતા હૈ, યહ કહતે હૈ-વાયુકાય કી વિરાધના કરને વાલે પૂર્વોક્ત દ્રવ્ય ઔર ભાવશસ્ત્રો  
કા વાયુકાય કે પ્રતિ પ્રયોગ કરને વાલે વાયુકાય સે ભિન્ન અનેક પ્રકાર કે પૃથ્વીકાય આદિ  
સ્થાવરો કી તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસજીવો કી મી હિસા કરતા હૈ ।

મૂસળથી ફટકું, છાલ કાઢવા માટે, સૂપડાથી ઝાટકવું, ધૂળ-રેતી વગેરેને ખાંખેરવા  
માટે વજ્ર વગેરેને ઝાટકવું-પછાડવું, તથા જલદી-જલદી ચાલવું તે પણ વાયુકાયનું  
વિરાધક પરકાય શસ્ત્ર છે. ઉઘાડા-ખૂદવા માટે બોલવું તે ઉભયકાયશસ્ત્ર છે. આ સર્વ  
વાયુકાયનાં દ્રવ્યશસ્ત્ર છે, મન, વચન અને કાયાનો અપ્રશસ્ત (વખાણવા લાયક નહિ તે)  
વ્યાપાર તે ભાવશસ્ત્ર છે. આ નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી દ્રવ્યલિંગી વાયુકાયની હિસા  
કરવાવાળાઓ સાવધ વ્યાપાર કરીને વાયુકાયની હિસા કરે છે.

જે વાયુકાયની હિસામાં પ્રવૃત્ત થાય છે તે ષટ્કાયરૂપ સમસ્ત લોકની હિસા  
કરે છે. એ કહે છે:-વાયુકાયની વિરાધના કરવાવાળા પૂર્વોક્ત દ્રવ્ય અને ભાવશસ્ત્રનો  
વાયુકાયના પ્રતિ પ્રયોગ કરવાવાળા વાયુકાયથી ભિન્ન અનેક પ્રકારના પૃથ્વીકાય આદિ  
સ્થાવરોની, તથા દ્વીન્દ્રિય આદિ ત્રસ જીવોની પણ હિસા કરે છે.

इह बहुविधद्रव्यलिङ्गिनो विद्यन्ते, तत्र शाक्यादयो व्यजनादिशस्त्रैर्वायुकाय-  
समारम्भं कुर्वन्ति, कारयन्ति, कुर्वतोऽनुमोदयन्ति, तथा च संपातिमादीनां हिंसनेन  
षट्जीवनिकायविराधका भवन्ति । दण्डिनोपि—“वयं प्रञ्चमहाव्रतधारिणो जिना-  
ज्ञाराधका अनगाराः स्मः” इत्यादि प्रचदमानाः साध्वाभासाः सावध्यमुपदिशन्ति,  
शास्त्रप्रतिषिद्धमपि वायुकायसमारम्भं कुर्वन्ति, कारयन्ति च । ते हि अनावृतमुखेन  
वदन्ति गायन्ति च । तथा अग्रपूजादौ विविधवाद्यनृत्यादिकं कारयन्ति, एतत्सर्वं  
मिथ्यादर्शनशल्याभिधं पापमाचरन्ति ।

उक्तञ्च—“गंधव्वनट्टवाइय-लवणजलारत्तिआइदीवाई ।

જં કિચ્ચં તં સવ્વં-પિ ઓઅરહ અગ્ગપૂયાણ ” ॥ ૧ ॥

સંસાર મેં તરહ-તરહ કે દ્રવ્યલિંગી હૈં, ઊન મેં સે શાક્ય આદિ પંચા વગૈરહ સે  
વાયુકાય કા આરંભ કરતે હૈં, કરાતે હૈં ઔર આરંભ કરને વાલે કી અનુમોદના કરતે હૈં,  
ઔર સંપાતિમ ( ઊડકર અચાનક આજાને વાલે ) આદિ જીવોં કી હિંસા કરકે ષટ્કાય કે  
વિરાધક બનતે હૈં । ઘૂઠે સાધુ દણ્ડી મી ‘હમ પંચમહાવ્રતધારી તથા જિન ભગવાન કી  
આજ્ઞા કે આરાધક અનગાર હૈં’ ઇસ પ્રકાર કહતે હુણ સાવધ્ય કા ઉપદેશ દેતે હૈં । શાસ્ત્ર  
મેં નિષિદ્ધ વાયુકાય કા સમારંભ કરતે હૈં ઔર કરાતે હૈં । વે સુલે મુખ સે બોલતે ઔર ગાતે  
હૈં, તથા અગ્રપૂજા આદિ મેં વિવિધ પ્રકાર સે વાદ્ય ઇવં નૃત્ય આદિ કરાતે હૈં । યહ સવ  
મિથ્યાદર્શનશલ્યનામક પાપ હૈ । વે ઇસકા આચરણ કરતે હૈં । જૈસે કહા હૈ—

સંસારમાં તરેહ-તરેહના દ્રવ્યલિંગી છે, તેમાંથી શાક્ય આદિ પંચા વગેરેથી  
વાયુકાયનો આરંભ કરે છે, કરાવે છે, અને આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે  
છે, અને સંપાતિમ ( ઊડીને અચાનક આવવાવાળા ) આદિ જીવોની હિંસા કરીને  
ષટ્કાયના વિરાધક બને છે. દંડી પણ ‘અમે પંચમહાવ્રતધારી તથા જિન ભગવાનની  
આજ્ઞાના આરાધક અણુગાર છીએ.’ આ પ્રમાણે કહેતા થકા સાવધનો ઉપદેશ આપે  
છે. શાસ્ત્રમાં નિષિદ્ધ મનાએલા વાયુકાયનો સમારંભ કરે છે અને કરાવે છે. તે ખુદા  
મુખથી-ઉઘાડા મોઢે-બોલે છે અને ગાય છે, તથા અગ્રપૂજા વગેરેમાં વિવિધ પ્રકારથી  
વાદ્ય અને નૃત્ય આદિ કરાવે છે. આ સર્વે મિથ્યાદર્શનશલ્ય નામનું પાપ છે. તે એનું  
આચરણ કરે છે. જેમ કહ્યું છે—

छाया—गन्धर्वनृत्यवादित्र—लवणजलारात्रिकादिदीपादयः ।

यत्किञ्चित्कृत्यं तत्सर्वमप्यवतरत्यग्रपूजायाम् ॥ १ ॥ इति ।

किञ्च—सप्तदशभेदिपूजाविधावपि गीतनृत्यवाद्यानि कर्त्तव्यतयोपदिशन्ति ।

किञ्चैकविंशतिविधपूजायामपि नृत्यगीतवादित्रैश्चामरवीजनैश्च वायुकायसमारम्भं कारयन्ति ।

उक्तञ्च—“स्नानं विलेपनविभूषणपुष्पवास—

धूपप्रदीपफलतन्दुलपत्रपूरैः ।

नैवेद्यवारिवसनैश्चमरातपत्र,—

वादित्रगीतनटनस्तुतिकोशवृद्ध्या ॥ १ ॥

इत्येकविंशतिविधा जिनराजपूजा ” इत्यादि ।

“गाना, नाचना, वजाना, लवण—जल, आरती करना, दीपक जलाना आदि जितने कार्य हैं, वे सब अग्रपूजा में किये जाते हैं ” ॥१॥

तथा वे द्रव्यलिङ्गी दण्डी ‘सत्तरहप्रकार की पूजा में भी गीत, नृत्य और वाद्य आदि क्रियाएँ करनी चाहिए’ ऐसा अपदेश देते हैं ।

तथा इक्कीसभेदी पूजा में भी नृत्य, गीत, वादित्र तथा चामर और पंखा आदि के द्वारा वायुकाय का समारंभ कराते हैं । जैसा कहा है:—

“स्नान, विलेपन, आभूषण, पुष्प, वास, धूप, दीप, फल, चावल पत्र, सुपारी, नैवेद्य जल, वस्त्र, चामर, छत्र, वादित्र, गीत, नाटक, स्तुति और कौशवृद्धि, इस तरह इक्कीस प्रकार की जिन भगवान् की पूजा होती है ” ॥१॥

“गावुं, नाचवुं, બજવું, મીઠું, જલ, આરતી કરવી, દીપક-દીવો બાળવો આદિ જેટલાં કાર્ય છે, તે સર્વ અથપૂજામાં કરવામાં આવે છે.” ॥ ૧ ॥

તથા તે દ્રવ્યલિંગી-દંડી ‘સત્તરપ્રકારની પૂજામાં પણ હમેશાં નૃત્ય અને વાદ્ય-વાજાં ત્ર આદિ ક્રિયાઓ કરવી જોઈએ.’ એવો ઉપદેશ આપે છે.

તથા એકવીસભેદી પૂજામાં પણ નૃત્ય, ગીત, વાજાં ત્ર તથા ચામર અને પંખા આદિ દ્વારા વાયુકાયનો સમારંભ કરાવે છે. જેમ કહ્યું પણ છે—

“સ્નાન, વિલેપન, આભૂષણ, પુષ્પ, વાસ, ધૂપ, દીપ, ફલ, ચોખા, પત્ર, સોપારી, નૈવેદ્ય, જલ, વસ્ત્ર, ચામર, છત્ર, વાજાં ત્ર, ગીત, નાટક, સ્તુતિ અને કૌશવૃદ્ધિ ( ધર્મોદ્દાતા નામે નાણાં—ધન—નીવૃદ્ધિ ) આ પ્રમાણે એકવીસ પ્રકારની જિનભગવાનની પૂજા થાય છે.” ॥૧॥



અલમધિકેન-એવમપિ તે પ્રલપન્તિ-યદિ જિનમત્તયુદ્ધેકેણ સાધુરપિ નૃત્યેત્તદા નાસ્તિ દોષ ઇતિ ॥ સૂ. ૨ ॥

અથ સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂસ્વામિનં પ્રાહ—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

તત્થ સ્વલુ ભગવયા પરિણા પવેહ્યા । ઇમસ્સ ચેવ જીવિયસ્સ પરિવંદનમાણણ-પૂયણાણ જાહમરણમોયણાણ દુક્કલ્પપટિધાયહેઉં સે સયમેવ વાડસત્થં સમારંભઇ, અણ્ણેહિં વા વાડસત્થં સમારંભાવેહ, અણ્ણે વાડસત્થં સમારંમંતે સમણુજાણઇ, તં સે અહિયાણ, તં સે અબોહીણ ॥ સૂ. ૩ ॥

છાયા—

તત્ર સ્વલુ ભગવતા પરિજ્ઞા પ્રવેદિતા । અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્ય પરિ-

જ્યાદા ક્યા કહે ! વે યહાં તક મી વકતે હૈં કિ—જિનરાજ કી મક્તિ મેં મસ્ત હોકર અગર સાધુ મી નાચને લગે તો મી કોઈ દોષ નહીં હૈ અર્થાત્ વહ આરાધક હૈ ॥ સૂ. ૨ ॥

સુધર્મા સ્વામી જમ્બૂ સ્વામી સે કહતે હૈં—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—ભગવાન્ ને વાયુકાય કે આરંભ કે વિષય મેં ઉપદેશ દિયા હૈ । હસી જીવન કે પરિવન્દન, માનન, ઔર પૂજન કે લિષ, જન્મ-મરણ સે છુટકારા પાનેકે લિષ, દુઃસ્ર કા નાશ કરને કે લિષ લોગ સ્વયં વાયુકાયશસ્ત્ર કા આરંભ કરતા હૈ, દૂસરોં સે વાયુકાયશસ્ત્ર કા આરંભ કરાતા હૈ ઔર વાયુકાયશસ્ત્ર કા આરંભ કરને વાલે દૂસરોં કી અનુમોદના કરતા હૈ । યહ ઉસકે અહિત કે લિષ ઔર ઉસકી અબોધિ કે લિષ હૈ ॥ સૂ. ૩ ॥

વિશેષ શું કહીએ, તે એટલે સુધી પણ કહે છે કે—જિનરાજની ભક્તિમાં મસ્ત થઇને અગર સાધુ પણ નાચ કરવા લાગે તો પણ કોઇ દોષ નથી અર્થાત્ તે આરાધક છે. ॥૨॥

સુધર્માસ્વામી જમ્બૂસ્વામીને કહે છે—‘તત્થ સ્વલુ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—ભગવાને વાયુકાયના આરંભના વિષયમાં ઉપદેશ આપ્યો છે. આ જીવનના પરિવંદન, માનન અને પૂજા માટે, જન્મ, મરણથી છુટવા માટે, દુઃખનો નાશ કરવા માટે. લોક સ્વયં—પોતે વાયુકાયશસ્ત્રનો આરંભ કરે છે, બીજા પાસે વાયુકાયશસ્ત્રનો આરંભ કરાવે છે. અને વાયુકાયશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન આપે છે. તે એના ( પોતાના ) અહિત માટે અને તેમની અબોધિને માટે છે. ॥ ૩ ॥

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧ ઉ. ૭ સૂ. ૩ વાયુવિરાધનાપ્રયોજનાનિ. ૬૯૩

વન્દનમાનનપૂજનાય, જાતિમરણમોચનાય, દુઃખપ્રતિઘાતહેતું સ સ્વયમેવ વાયુશસ્ત્રં સમારમ્ભતે, અન્યૈર્વા વાયુશસ્ત્રં સમારમ્ભયતિ, અન્યાન્ વાયુશસ્ત્રં સમારમ્ભાણાન્ સમનુ-જાનાતિ, તત્ તસ્યાહિતાય, તત્ તસ્યાબોધયે ॥ સૂ. ૩ ॥

ટીકા—

તત્ર=વાયુકાયસમારમ્ભે, ભગવતા=શ્રીમહાવીરેણ, પરિજ્ઞા-જ્ઞ-પ્રત્યાખ્યાન-મેદાદ્ દ્વિવિધા, સ્વહુ=નિશ્ચયેન, પ્રવેદિતા=પ્રતિબોધિતા । કર્મરજઃ-પરિહરણાર્થ ભવ્ય-જીવેન પરિજ્ઞાન્વયં શરણોક્ષરણીયેતિ ભગવતા પ્રતિબોધિતમિતિ ભાવઃ ।

ઉપભોગદ્વાર—

લોકઃ કસ્મૈ પ્રયોજનાય વાયુકાયમુપમર્દયતીત્યાહ—‘અસ્ય ચૈવ જીવિતસ્ય’ ઇત્યાદિ । અસ્યૈવ=અલ્પકાલાવસ્થાયિનઃ, જીવિતસ્ય=જીવનસ્ય સુખાર્થમ્ વ્યજન-તાલવૃન્ત-મત્ત-ધ્માત-ફૂત્કારા-ચ્છ્વીસાદિભિશ્ચ, શીતોષ્ણવાયુ-

ટીકાર્થ—વાયુકાય કે સમારંભ કે વિષય મેં શ્રી મહાવીરને જ્ઞપરિજ્ઞા તથા પ્રત્યા-ખ્યાનપરિજ્ઞા બતલાઈ છે । તાત્પર્યેં યહ છે કે—કર્મરૂપી રજકો હટાને કે લિખે ભવ્ય જીવ કો પરિજ્ઞા અવશ્ય સ્વીકાર કરના ચાહિએ, એસા ઉપદેશ ભગવાનને દિયા છે ।

ઉપભોગદ્વાર—

લોક કિસ પ્રયોજન સે વાયુકાય કી વિરાધના કરતે હૈં? યહ બતલાતે હૈં—હસ અલ્પકાલીન જીવન કે સુખ કે લિખે પંખા, તાડપંખા હિલાના, ધૂંકની કા ધૂંકના, ફૂંક મારના, શ્વાસ લેના આદિ ક્રિયાઓ દ્વારા, તથા શીત ઓર ઉષ્ણ વાયુકા સેવન દ્વારા વાયુકાય કી હિંસા કરતે હૈં ।

ટીકાર્થ—વાયુકાયના સમારંભના વિષયમાં શ્રીમહાવીરે જ્ઞપરિજ્ઞા તથા પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞા બતાવી છે. તાત્પર્યેં એ છે કે—કર્મરૂપી રજકો દૂર કરવા માટે ભવ્ય જીવોએ પરિજ્ઞાનો અવશ્ય સ્વીકાર કરી લેવો જોઈએ. આ પ્રમાણે ભગવાને ઉપદેશ આપ્યો છે.

ઉપભોગદ્વાર—

લોક કયા પ્રયોજનથી વાયુકાયની વિરાધના કરે છે? એ બતાવે છે. આ અલ્પ-કાળના જીવનના સુખ માટે પંખા, તાડપંખા હલાવવા, ધમણ ધમવી-ફૂંક મારવી, શ્વાસ લેવો, આદિ ક્રિયાઓ દ્વારા તથા શીત અને ઉષ્ણ (ઠંડા અને ગરમ) વાયુના સેવન દ્વારા

સેવનૈશ્વ, તથા પરિવન્દન-માનન-પૂજનાય, પરિવન્દન=પ્રશંસા, તદર્થ-દૃતિવાદ્યવેણુ-  
પ્રમૃતિવાદનાદૌ, માનન=જનસત્કારસ્તદર્થ, વ્યજનયન્ત્રાદિપ્રચાલનાદૌ,  
પૂજન=વસ્ત્રરત્નાદિલાભસ્તદર્થ વાયુયાન-વાયુયન્ત્રાદિનિર્માણાદૌ, તથા જાતિ-  
મરણમોચનાર્થ=દેવપ્રતિમાભિમુખં નૃત્યગીતવાદિત્રપ્રયોગે, વ્યજનચામરાદિવીજને ચ,  
તથા દુઃસ્વપ્રતિઘાતહેતું=વ્યાધિપ્રતીકારાર્થ નવીનવૈજ્ઞાનિકોદ્ઘાતિવાયુ-  
ચિકિત્સાયાં, તથા-તાલવૃન્તાદિના વાયુકાયોદ્ભાવને સ=જીવનસુખાદ્યર્થી,  
સ્વયમેવ વાયુશસ્ત્રં=વાયુકાયોપમર્દકં-શસ્ત્રં સમારંભતે=વ્યાપારયતિ, અન્યૈર્વા વાયુ-  
કાયશસ્ત્રં સમારંભયતિ=પ્રયોજયતિ, અન્યાન્ વાયુશસ્ત્રં સમારંભમાણાન્ સમનુ-

તથા પરિવન્દન અર્થાત્ પ્રશંસા પાને કે લિપ્, મશકવાદ્ય ઓર વાંસુરી વજાકર, માનન અર્થાત્  
જનસત્કાર કે લિપ્ વ્યજનયંત્ર (વીજલી કા પંચા) ગાનયંત્ર (રેડિયો, ગ્રામોફોન આદિ) વજાકર,  
પૂજન અર્થાત્ વસ્ત્રોં ંવં રત્નો આદિ કે લાભ કે લિપ્ વાયુયાન (પ્રોપેલેને) વાયુયંત્ર આદિ કે  
વનાને મેં, તથા જન્મ-મરણ સે છુટકારા પાને કે લિપ્, જૈસે-જિનપ્રતિમા કે આગે નૃત્ય, ગીત  
ઓર વાદિત્ર કા પ્રયોગ કરને મેં, ચામર પંચા આદિ ડુલારને મેં; તથા દુઃસ્વ કા નાશ કરને કે  
લિપ્, જૈસે-વ્યાધિ મિટાને કે લિપ્ આધુનિક વૈજ્ઞાનિકો દ્વારા નિકાલી હુઈ વાયુચિકિત્સા  
મેં તથા તાડપંચા આદિ દ્વારા વાયુકાય કી ઉદોરણા કરને મેં વાયુકાય કી હિંસા કરતે  
હેં । હિસ પ્રકાર હિસ જીવન કે સુસ્વ કે અર્થોં સ્વયં વાયુકાય કે ઘાતક શસ્ત્રોં કા સમારંભ  
કરતે હેં, દૂસરોં સે કરાતે હેં ઓર વાયુકાય કા સમારંભ કરને વાલે દૂસરોં કા અનુમોદન

તથા પરિવન્દન, અર્થાત્ પ્રશંસા મેળવવા માટે મશકવાદ્ય અને વાંસળી વગેરે  
બજાવીને, વ્યજનયંત્ર તથા ગાનયંત્ર (વિજળીથી ચાલતા પંખા અને રેડીઓ  
તથા ગ્રામોફોન) વગેરે બજાવીને, પૂજન અર્થાત્-વસ્ત્રોં ંવં રત્નો આદિના લાભ  
માટે વાયુયાન (પ્રોપેલેન) અને વાયુયંત્ર આદિ બનાવવામાં. તથા જન્મ-મરણથી  
છુટવા માટે. જેમકે:-દેવપ્રતિમાની પાસે નૃત્ય-ગીત અને વાદ્યોનો પ્રયોગ કરવામાં,  
ચામર, પંખા આદિ હલાવવામાં, તથા દુઃખનો નાશ કરવા માટે, જેમકે-વ્યાધિ મટાડવા  
માટે આજકાલના વૈજ્ઞાનિકદ્વારા શોધ કરાએલી વાયુચિકિત્સામાં, તથા તાડપંચાના  
પંખાદ્વારા વાયુકાયની ઉદોરણામાં વાયુકાયની હિંસા કરે છે. એ પ્રમાણે આ જીવનના  
સુખના અર્થો પોતે વાયુકાયના ઘાતક શસ્ત્રોનો સમારંભ કરે છે, બીજાની પાસે કરાવે છે.  
અને વાયુકાયનો સમારંભ કરવાવાળા બીજાને અનુમોદન આપે છે. વાયુકાયનો એ



જાનાતિ=અનુમોદયતિ । તદ્=વાયુકાયસમારંભણં, તસ્ય=વાયુકાયસમારંભણં-  
કુર્વતઃ કારયિતુઃ અનુમોદયિતુશ્ચ અહિતાય ભવતિ । તથા-તત્ તસ્ય અબોધયે=  
સમ્યક્તવાલાભાય ભવતિ ॥ સૂ૦ ૩ ॥

येन तु तीर्थङ्करादिसमीपे वायुकायस्वरूपं परिज्ञातं स एवं विभावयतीत्याह—  
'से तं.' इत्यादि ।

મૂલમ્—

से तं संबुज्जमाणे आयाणीयं समुद्राय सोच्चा खलु भगवओ अणगाराणां वा  
अंतिए, इहमेगेसि णायं भवइ-एस खलु गंथे, एस खलु मोहे, एस खलु मारे, एस  
खलु णरए । इच्चत्थं गट्ठिए लोए, जमिणं विरुवरुवेहिं सत्थेहिं वाउकम्मसमारंभेणं,  
वाउसत्थं समारंभमाणे अण्णे अणेगरुवे पाणे बिहिंसइ ॥ सू० ४ ॥

करते हैं । वायुकाय का यह आरंभ करने वाले, कराने वाले और उसकी अनुमोदना करने  
वाले को अहितकर होता है तथा अबोधिजनक होता है ॥ सू० ३ ॥

तीर्थंकर आदि के निकट जिसने वायुकाय का स्वरूप समझ लिया है, वह इस प्रकार  
विचार करता है:-'से तं.' इत्यादि ।

मूलार्थ—भगवान् से या उनके अनगारों से सुनकर-समझकर जिसने संयम धारण  
किया है वह जानता है कि-यह वायुकाय का समारंभ ही ग्रंथ है, यही मोह है, यही मार  
है, यही नरक है । इसी में लोग गृद्ध हो रहे हैं, क्यों कि नाना प्रकार के शखों से वायुकाय  
के समारंभद्वारा वायुशस्त्र का आरंभ करते हुए अन्य अनेक प्रकार के प्राणियों की हिंसा  
करते हैं ॥ सू० ४ ॥

આરંભ, આરંભ કરવાવાળાને, કરાવનારને અને તેની અનુમોદના આપવાવાળાને  
અહિતકર થાય છે, તથા અબોધિજનક થાય છે. ॥ સૂ૦ ૩ ॥

तीर्थंकर आदिना समीपमां जेषु वायुकायानुं स्वरूपं समञ्च वीधुं छे, ते आ  
प्रभाषे विचार करे छे:-'से तं.' इत्यादि.

મૂલાર્થ—ભગવાન પાસેથી અથવા તેમના અણગારે પાસેથી સાંભળી-સમજી  
ને જેણે સંયમ ધારણ કર્યું છે તે જાણે છે કે:-આ વાયુકાયનો સમારંભજ ગ્રંથ છે.  
એજ મોહ છે. એજ માર છે. એજ નરક છે, એમાં લોકો ગૃદ્ધ થઈ રહ્યા છે, કેમકે  
નાના પ્રકારના શસ્ત્રોથી વાયુકાયના સમારંભદ્વારા વાયુશસ્ત્રનો આરંભ કરતા થકા  
અન્ય અનેક પ્રકારનાં પ્રાણીઓની હિંસા કરે છે. ॥સૂ૦ ૪॥

છાયા—

સ તત્ સંબુધ્યમાન આદાનીયં સમુત્થાય શ્રુત્વા યત્ન ભગવતઃ અનગારાણાં વા અન્તિકે ઇદૈકેષાં જ્ઞાતં ભવતિ—એષ યત્નઃ, એષ યત્ન મોહઃ, એષ યત્ન મારઃ, એષ યત્ન નરકઃ, इत्यर्थं गृद्धो लोकः, यदिमं विरूपरूपैः शस्त्रैः वायुकर्मसमारम्भेण वायुशस्त्रं समारम्भमाणः अन्यान् अनेकरूपान् प्राणान् चिहिनस्ति ॥ सू० ४ ॥

ટીકા—

યઃ યત્ન ભગવતઃ=તીર્થંકરસ્ય, અનગારાણાં=તદીયશ્રમણનિર્ગ્રંથાનાં વા અન્તિકે શ્રુત્વા આદાનીયમ્=ઉપાદેયં સર્વસાવધયોગવિરતિરૂપં ચારિત્રં સમુત્થાય=અજ્ઞીકૃત્ય, વિહરતિ, સ તત્=વાયુકાય સમારમ્ભણં સંબુધ્યમાનઃ=અહિતાબોધિજનકત્વેન વિજ્ઞાતા સન્નેવં વિભાવયતિ—

इह=मनुष्यलोके, एकैषां=श्रमणनिर्ग्रन्थोपदेशसंज्ञातसम्यग्बोधवैराग्याणामात्मार्थिनामेव, ज्ञातं=विदितं भवति । किं ज्ञातं भवतीत्याकाङ्क्षायामाह—‘एष यतः’ इत्यादि ।

એષઃ વાયુશસ્ત્રસમારમ્ભઃ યત્ન=નિશ્ચયેન ગ્રન્થઃ=કર્મબંધઃ, કારણે

ટીકાર્થ—જિસ પુરુષને તીર્થંકર ભગવાન્ યા અનેકે અનુયાયી શ્રમણ નિર્ગ્રંથો કે મુક્તારવિન્દ સે સુનકર સર્વ સાવધન કા ત્યાગરૂપ સંયમ અંગીકર કિયા હૈ વહ વાયુકાય કે સમારંભ કો અહિતકર ઔર અબોધિજનક સમજતા હુઆ હિસ પ્રકાર વિચારતા હૈ—

હિસ લોક મેં શ્રમણ નિર્ગ્રંથો કે ઉપદેશ સે સમ્યગ્જ્ઞાન ઔર વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત કરને વાલે આત્માર્થી જનો કો હી યહ વિદિત હોતા હૈ કિ—

વાયુશસ્ત્ર કા યહ સમારંભ નિશ્ચિતરૂપ સે કર્મબંધ કા કારણ હૈ । કારણ મેં

ટીકાર્થ—જે પુરુષે તીર્થંકર લગવાન અથવા તેમના અનુયાયી શ્રમણ-નિર્ગ્રંથોના મુખારવિન્દથી સાંભળીને સર્વ સાવધન ત્યાગરૂપ સંયમ અંગીકર કર્યો છે, તે વાયુકાયના સમારંભને અહિતકર અને અબોધિજનક સમજતા થકા આ પ્રમાણે વિચારે છે—

આ લોકમાં શ્રમણ નિર્ગ્રંથોના ઉપદેશથી સમ્યગ્જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય પ્રાપ્ત કરવા-વાળા આત્માર્થી જીવોનેજ એ જાણવામાં છે કે:-

વાયુશસ્ત્ર આને સમારંભ નિશ્ચિતરૂપથી કર્મબંધનું કારણ છે. કારણમાં

आचारचिन्तामणि-टीका अध्या० १ उ. ७ सू. ४ वायुकायविराधनादोषः ६९७

कार्योपचारात् । एवमग्रेऽपि बोध्यम् । तथा-एषः वायुशस्त्रसमारम्भः, मोहः=विपर्यासः  
=अज्ञानम् । तथा एष एव मारः=मरणं निगोदादिमरणरूपः । तथा एष एव नरकः=  
नारकजीवानां दशविधयातनास्थानम् ।

इत्यञ्ज=एतदर्थं ग्रन्थमोहमरणनरकरूपं घोरदुःखफलं प्राप्यापि पुनः पुनरेतदर्थ-  
मेव, लोकः=अज्ञानवशवर्ती जीवः गृद्धः=लिप्सुरस्ति । यद्वा गृद्धः=भोगाभिलाषी,  
लोकः=संसारी जीवः, इत्यर्थ-एतदर्थमेव=ग्रन्थमोहमरणनरकार्थमेव प्रवर्तत इति शेषः ।

लोकः पुनः पुनः कर्मबन्धाद्यर्थमेव प्रवर्तत इति यदुक्तं, तत् कथं ज्ञायते ? इति  
जिज्ञासायामाह—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

यद्=यस्माद् विरूपरूपैः=नानाविधैः शस्त्रैः पूर्वोक्तप्रकारैः वायुकर्म-

कार्य का उपचार करके कर्मबंध के कारण को मूल में कर्मबंध कहा है । आगे भी इसी  
प्रकार समझ लेना चाहिए । तथा यह वायुकाय का समारंभ अज्ञानरूप है, यह निगोद  
आदि में मृत्यु का कारण है, और नरक है अर्थात् नारकीय यातनाओं का स्थान है ।

ग्रन्थ, मोह मरण और नरकरूप घोर दुःखमय फल पाकर भी अज्ञानी जीव बार-बार  
इसी की लालसा करते हैं । अथवा भोगों के अभिलाषी संसारी जीव इस ग्रन्थ, मोह, मरण  
और नरकरूप फल के लिए ही प्रवृत्ति करते हैं ।

लोक कर्मबंध के लिए ही पुनः-पुनः प्रवृत्ति करते हैं, यह जो कहा है सो किस प्रकार  
जाना जाय ? ऐसी जिज्ञासा होने पर कहते हैं—‘यदिमम्.’ इत्यादि ।

क्यों कि नाना प्रकार के, वायुकाय की विराधना करने वाले सावध व्यापार

कार्यને ઉપચાર કરીને કર્મબંધનાં કારણને મૂલમાં કર્મબંધ કહેલ છે. આગળ પણ  
આ પ્રકારે સમજ લેવું જોઈએ. તથા એ વાયુકાયને સમારંભ અજ્ઞાનરૂપ છે. એ  
નિગોદ આદિમાં મૃત્યુનું કારણ છે (અર્થાત્ નિગોદમાં લઈ જવાવાળો છે.) અને નરક  
છે. અર્થાત્ નારકીય યાતનાઓનું સ્થાન છે.

ગ્રંથ, મોહ, મરણ અને નરકરૂપ ઘોર દુઃખમય ફલ પ્રાપ્ત કરીને પણ અજ્ઞાની  
જીવ વારંવાર એની લાલસા કરે છે, અથવા ભોગોના અભિલાષી સંસારી જીવ આ  
ગ્રંથ, મોહ, મરણ અને નરકરૂપ ફલ માટેજ પ્રવૃત્તિ કરે છે.

લોક કર્મબંધ માટેજ પુનઃ પુનઃ પ્રવૃત્તિ કરે છે. એ પ્રમાણે જે કહ્યું છે તે  
કેવી રીતે બાણી શકાય ? એવી જિજ્ઞાસા થતાં કહે છે—‘યદિમમ્.’ ઇત્યાદિ.

કેમકે નાના પ્રકારથી વાયુકાયની વિરાધના કરવાવાળા સાવધવ્યાપારદ્વારા તે



સમારમ્ભેણ=વાયુકાયોપમર્દનરૂપસાવધવ્યાપારેણ, ઇમં=વાયુકાયં વિહિનસ્તિ । તથા-  
વાયુશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણઃ-વ્યાપારયન્, અન્યાન્=પૃથિવીકાયાદીન્, અનેકરૂપાન્  
સ્થાવરાંસ્ત્રસાંશ્ચ, પ્રાણાન્=પ્રાણિનઃ વિહિનસ્તિ=ઉપમર્દયતિ ॥ સૂ. ૪ ॥

વાયુશસ્ત્રં સમારમ્ભમાણા અનેકવિધાન્ જીવાન્ કથં વિહિંસન્તિ, તત્ ચ પ્રતિ-  
બોધયિતું શ્રીસુધર્મા સ્વામી પ્રાહ—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

સે બેમિ-સંતિ સંપાદમા પાણા આહચ્ચ સંપયંતિ ય, ફરિસં ચ ચ્વલુ પુઢા ઇગે  
સંઘાયમાવજ્જંતિ । જે તત્થ સંઘાયમાવજ્જંતિ, તે તત્થ પરિયાવજ્જંતિ । જે તત્થ  
પરિયાવજ્જંતિ તે તત્થ ઉદ્ધાયંતિ ॥ સૂ. ૫ ॥

છાયા—

તદ્ બ્રવીમિ-સંતિ સંપાતિમાઃ પ્રાણાઃ, આહત્ય સંપતન્તિ ચ, સ્પર્શં ચ ચ્વલુ  
સ્પૃષ્ટા એકે સંઘાતમાપદ્યન્તે । યે તત્ર સંઘાતમાપદ્યન્તે, તે તત્ર પર્યાપદ્યન્તે । યે તત્ર  
પર્યાપદ્યન્તે તે તત્રાપદ્માવન્તિ ॥ ૫ ॥

દ્વારા વે વાયુકાય કા ઘાત કરતે હૈં । તથા વાયુકાય કે શસ્ત્રોં કા પ્રયોગ કરતે હુએ પૃથ્વીકાય  
આદિ અનેક પ્રકાર કે સ્થાવરોં કા, તથા ત્રસ જીવોં કા ઉપમર્દન કરતે હૈં ॥ સૂ. ૪ ॥

વાયુકાય કે શસ્ત્રોં કા પ્રયોગ કરને વાલે નાના પ્રકાર કે જીવોં કી હિંસા કૈસે કરતે  
હૈં ? યહ બતલને કે લિએ શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહતે હૈં:—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—વહ મૈં કહતા હૂં—એકાએક ઉડકર પડને વાલે જીવ હૈં જો અચાનક  
આપડતે હૈં, ઔર વાયુકાય સે સ્પૃષ્ટ હોકર કોઈ-કોઈ સંઘાત કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં । જો  
સંઘાત કો પ્રાપ્ત હોતે હૈં ઉનકા શરીર સિકુડ જાતા હૈ, મૂર્છિત હો જાતે હૈં, વે મર મી  
જાતે હૈં ॥ સૂ. ૫ ॥

વાયુકાયનો ઘાત કરે છે. તથા વાયુકાયના શસ્ત્રોનો પ્રયોગ કરતા થકા પૃથ્વીકાય  
આદિ અનેક પ્રકારના સ્થાવરો તથા ત્રસજીવોનું ઉપમર્દન (નાશ) કરે છે. ॥ સૂ. ૪ ॥

વાયુકાયના શસ્ત્રોનો પ્રયોગ કરવાવાળા નાના પ્રકારના જીવોની હિંસા કેવી રીતે  
કરે છે ? એ બતાવવા માટે શ્રી સુધર્મા સ્વામી કહે છે:—‘સે બેમિ.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—હું તે કહું છું—એકાએક (એકાએક) ઉડીને પડવાવાળા જીવ છે.  
તે અચાનક આવી પડે છે, અને વાયુકાયથી સ્પૃષ્ટ થઈને કોઈ-કોઈ જગ્યાએ થાય  
છે. જે સંઘાત-સંઘાત-જગ્યાએ પ્રાપ્ત થાય છે, તેનું શરીર સંકોચાઈ જાય છે,  
મૂર્છિત થઈ જાય છે, અને તે મરી પણ જાય છે. ॥ સૂ. ૫ ॥

ટીકા--

તદ્ બ્રવીમિ=વાયુકાયહિંસયા યથા બહુવિધાઃ પ્રાણિનઃ પ્રણશ્યન્તિ, તત્ કથયામિ-સંપાતિમાઃ=ઉત્પત્યોત્પત્યપતનશીલાઃ, પ્રાણાઃ=પ્રાણિનઃ સન્તિ=વાયુ-કાયમાશ્રિત્વ વિદ્યન્તે । એતે સંપાતિમાઃ આહત્ય=વ્યજનતાલઘ્નત્વસ્ત્રાદિભિઃ પ્રોદ્ધા-વિતવાયુકાયાદાઘાતં પ્રાપ્ય, સંપતન્તિ=વાયુવેગસમાકૃષ્ટાઃ પ્રાણાપગમાયોદ્વિગ્નાસ્તત્રૈવ વાયુકાયે સંવિશન્તિ, સંશ્લિષ્યન્તીત્યર્થઃ ।

સ્પર્શ ચેતિ । સ્પર્શોઽસ્યાસ્તીતિ સ્પર્શઃ=સ્પર્શવાન્, તં સ્પર્શ=વાયુકાયં, સ્પૃષ્ટાઃ=સ્પર્શકર્તારઃ, આર્ષત્વાત્ કર્તરિ ક્તઃ । એકે=વાયુવેગસમાહતાઃ પ્રાણિનઃ, સંઘાતમાપ-દ્યન્તે=પરસ્પરસંઘર્ષેણ ગાત્રસંકોચં પ્રાપ્નુવન્તિ ।

યે તત્ર=વાયુકાયે સંપતિતાઃ સંઘાતમાપદ્યન્તે, તે તત્ર=વાયુકાયે

ટીકાર્થ—વાયુ કી હિંસા સે અનેક પ્રકાર કે પ્રાણિયો કા ઘાત કિસ પ્રકાર હોતા હૈ સો કહતા હૈ । સંપાતિમ અર્થાત્ ડહ-ઝડકર પડને વાલે અનેક જીવ વાયુકાય કે આશ્રિત રહતે હૈ । યે સંપાતિમ જીવ પંચા, તાલઘ્નત-પંચા કિ એક જાતિ, વજ્ર આદિ સે ઝડીરણા કી હુઈ વાયુકાયદ્વારા આઘાત પાકર ગિર પડતે હૈ, અર્થાત્ વાયુ કે વેગ સે ઝિંચકર ઘવરાયે હુઈ વાયુકાય કે સાથ હો જુડ-સે જાતે હૈ ।

યહાં સ્પર્શ કા અર્થ હૈ સ્પર્શવાન્ અર્થાત્ વાયુ । કોઈ-કોઈ વાયુ કે વેગ સે આહત હુઈ જીવ સંઘાત કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ અર્થાત્ પરસ્પર રગડ સ્વાકર સિકુડ જાતે હૈ ।

વાયુકાય મેં પડે હુઈ જો જીવ સિકુડ જાતે હૈ વે વાયુકાય કે આઘાત સે

ટીકાર્થ—વાયુકાયની હિંસાથી અનેક પ્રકારનાં પ્રાણીઓનો ઘાત કેવી રીતે થાય છે. તે હું કહું છું:-સંપાતિમ-ઉડી-ઉડીને પડવાવાળા અનેક જીવ વાયુકાયના આશ્રયે રહે છે. તે સંપાતિમ જીવ, પંખા, તાડપત્ર, વજ્ર આદિથી ઉડીરણા કરાએલા વાયુકાયદ્વારા આઘાત પામીને પડી જાય છે. અર્થાત્ વાયુના વેગથી ખેંચાઈને ગભરાએલા વાયુકાયની સાથે જ ભેડાઈ જાય છે.

અહીં સ્પર્શનો અર્થ છે-સ્પર્શવાન્-અર્થાત્ વાયુ કોઈ-કોઈ વાયુના વેગથી આહત-તાડન કરાએલા જીવ સંઘાત-જથાપણાને પ્રાપ્ત થાય છે. અર્થાત્ પરસ્પર ભેડાઈને સંકોચાઈ જાય છે.

વાયુકાયમાં પડેલા જે જીવો સંકોચાઈ જાય છે તે વાયુકાયના આઘાતથી મૂર્છિત

સંશ્લિષ્ટા પર્યાપદ્યન્તે=વાયુકાયાઘાતેન મૂર્છાપ્રાપ્નુવન્તિ-પ્રણટ્ટચેતના ભવન્તીત્યર્થઃ ।  
યે તત્ર=પર્યાપદ્યન્તે, તે તત્ર=વાયુકાયા, અપદ્રાવન્તિ=પ્રાણૈર્વિયુજ્યન્તે ।

વાયુશસ્ત્રસમારમ્ભેણ ન કેવલં વાયુજીવવિરાધના જાયતે, કિન્તુ સર્વદિક્-  
સંચારિણાં સંપાતિમજીવાનામન્યેષાં ચ बहुविधानां हिंसाऽपि दुर्निवारा भवतीति  
ભાવઃ ॥ સૂ. ૫ ॥

एवं वायुकायस्य सचित्तत्वं विदित्वा मुनिवत्प्राप्तये त्रिकरण-त्रियोगैस्तत्समा-  
रम्भो वर्जनीय इत्याशयेनाह—‘ एत्थ सत्थं. ’ इत्यादि ।

મૂલમ્—

एत्थ सत्थं समारम्भमाणस्स इच्चेते आरंभा अपरिण्णायाम् भवन्ति ।

મૂર્છિત હો જાતે હૈં—उनकी चेतना नष्ट हो जाती है, और जो मूर्छित हो जाते हैं वे प्राणों से  
રહિત હો જાતે હૈં અર્થાત્ મર જાતે હૈં ।

વાયુકાય કે શસ્ત્ર કા આરમ્ભ કરને સે અકેલે વાયુકાય કી હી વિરાધના નહીં હોતી  
वरन् समी दिशाओ में फिरने वाले संपातिम जीवों की तथा अन्य अनेक प्रकार के जीवों की  
હિંસા હોના મી અનિવાર્ય હૈ ॥ સૂ. ૫ ॥

इस प्रकार वायुकाय की सचित्ता समझकर साधुता प्राप्त करने के लिए तीन करण  
तीन योग से वायुकाय का समारम्भ त्यागने योग्य है । इस आशय से सूत्रकार कहते हैं—  
‘एत्थ सत्थं.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—વાયુકાય કે વિષય મેં શસ્ત્ર કા વ્યાપાર કરને વાલા इन व्यापारों

થઈ જાય છે—તેની ચેતના નાશ પામી જાય છે. અને જે મૂર્છિત થઈ જાય છે તે  
પ્રાણેથી રહિત પણ થઈ જાય છે અર્થાત્ મરણ પામે છે.

વાયુકાયના શસ્ત્રનો આરંભ કરવાથી, એકલા વાયુકાયના જીવોની જ વિરાધના  
થાય છે એટલું જ નહિ પરંતુ સર્વ દિશાઓમાં ફરવાવાળા સંપાતિમ જીવોની તથા  
અન્ય અનેક પ્રકારના જીવોની ઘાત થવી તે પણ અનિવાર્ય છે. ॥સૂ. ૫॥

આ પ્રમાણે વાયુકાયની સચિત્તા સમજીને સાધુતા પ્રાપ્ત કરવા માટે ત્રણ  
કરણ ત્રણ યોગથી વાયુકાયનો સમારંભ ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે. એ આશયથી  
સૂત્રકાર કહે છે:—‘एत्थ सत्थं.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ:—વાયુકાયના વિષયમાં શસ્ત્રનો વ્યાપાર કરવાવાળાઓ એ વ્યાપારોને



एत्थं सत्थं असमारंभमाणस्स इच्चेते आरंभा परिण्णया भवन्ति । तं परिण्णाय मेहावी णेव सयं वाउसत्थं समारंभेज्जा, णेवऽण्णेहि वाउसत्थं समारंभावेज्जा, णेवऽण्णे वाउसत्थं समारंभते समणुजाणेज्जा, जस्सेते वाउसत्थसमारंभा परिण्णया भवन्ति, से हु मुणी परिण्णायकम्मे-त्ति वेमि ॥ सू० ६ ॥

છાયા—

अत्र शस्त्रं समारंभमाणस्य इत्येते आरम्भाः अपरिज्ञाता भवन्ति । अत्र शस्त्रमसारंभमाणस्य इत्येते आरम्भाः परिज्ञाता भवन्ति । तं परिज्ञाय मेधावी नैव स्वयं वायुशस्त्रं समारंभेत, नैवान्यैर्वायुशस्त्रं समारंभयेत्, नैवान्यान् वायुशस्त्रं समारंभमाणान् समनुजानीयात् । यस्येते वायुशस्त्रसमारम्भाः परिज्ञाता भवन्ति, स खलु मुनिः परिज्ञातकर्मा, इति ब्रवीमि ॥ सू० ६ ॥

ટીકા—

अत्र=अस्मिन् वायुकाये, शस्त्रं=पूर्वोक्तप्रकारं समारंभणास्य=व्यापारयतः, इत्येते=पूर्वोक्ताः त्रिकरणत्रियोगैः कृता आरम्भाः=वायुकायोपमर्दनरूपाः

को कर्मबंध का कारण नहीं समझता । वायुकाय में शस्त्रों का व्यापार न करने वाला इन व्यापारों को कर्मबंध का कारण समझता है । उसे जानकर विवेकी पुरुष स्वयं वायु शस्त्र का आरम्भ न करे, दूसरों से वायुशस्त्र का आरम्भ न करावे और वायुशस्त्र का आरम्भ करने वालों का अनुमोदन न करे । जो वायुकाय के शस्त्रों के व्यापार को जानता है वही मुनि है, वही सावध व्यापार का त्यागी है । ऐसा मैं कहता हूँ ॥ सू० ६ ॥

टीકાર્થ—વાયુકાય કે વિષય મેં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોં કા ઉપયોગ કરને વાલા ત્રીન કરણ ત્રીન યોગ સે ક્રિયે જાને વાલે ઔર વાયુકાય કે ઘાતક સાવધ વ્યાપારોં કો કર્મબંધ

કર્મબંધનું કારણ સમજતા નથી, વાયુકાયમાં શસ્ત્રોના વ્યાપાર નહિ કરવાવાળા તે વ્યાપારને કર્મબંધનું કારણ સમજે છે. તેને જાણીને વિવેકી પુરુષ પોતે વાયુશસ્ત્રનો આરંભ કરે નહિ, બીજા પાસે વાયુશસ્ત્રનો આરંભ કરાવે નહિ, અને વાયુશસ્ત્રનો આરંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ. જે વાયુકાયના શસ્ત્રોના વ્યાપારને જાણે છે તેજ મુનિ છે. તેજ સાવધ વ્યાપારના ત્યાગી છે. આતું-(આ પ્રમાણે) હું કહું છું. ॥ સૂ. ૬ ॥

ટીકાર્થ—વાયુકાયના વિષયમાં પૂર્વોક્ત શસ્ત્રોના ઉપયોગ કરવાવાળા, ત્રણ કરણ ત્રણ યોગથી કરવામાં આવતા અને વાયુકાયના ઘાતક સાવધ વ્યાપારોને કર્મબંધનું કારણ

સાવધવ્યાપારાઃ, અપરિજ્ઞાતાઃ=કર્મબંધકારણત્વેનાનવગતાઃ ભવન્તિ ।

અત્ર=અસ્મિન્નેવ વાયુકાયે, શસ્ત્રં=પ્રાગુક્તપ્રકારમ્, અસમારભમાણસ્ય=અપ્રયુ-  
ઝજ્ઞાનસ્ય, इत्येते=पूर्वोक्ताः, આરમ્ભાઃ=સાવધવ્યાપારાઃ, પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ=જ્ઞપરિ-  
જ્ઞયા પરિજ્ઞાતાઃ, પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞયા પરિવર્જિતા ભવન્તીત્યર્થઃ ।

જ્ઞપરિજ્ઞાપૂર્વિકા પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા યથા ભવતિ, તં પ્રકારં દર્શયતિ-‘તત્  
પરિજ્ઞાય’ इत्यादि । तद्=वायुकायारम्भणं, परिज्ञाय=‘કર્મબંધસ્ય કારણં ભવતી’  
ત્યવગત્ય, મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ સ્વયં વાયુશસ્ત્રં નૈવ સમારભેત=નૈવ  
વ્યાપારયેત્, અન્યૈર્વાયુશસ્ત્રં નૈવ સમારમ્ભયેત્, વાયુશસ્ત્રં સમારભમાણાન્ અન્યાન્  
નૈવ સમનુજાનીયાત્=નૈવાનુમોદયેત્ ।

यस्यैते

वायुशस्त्रसमारम्भाः=वायुकायमुद्दिश्य

शस्त्रैस्तदुपमर्दनरूपाः

કા કારણ નહીં સમજતા । અર્થાત્ ઉસે યહ જ્ઞાન નહીં હોતા કિ-‘इन पाप-कृत्यों से मुझे  
કર્મ કા બંધ હોગા ’

લેકિન ઇસી વાયુકાય કે વિષય મેં શસ્ત્રોં કા આરંભ ન કરને વાલા સાવધ વ્યાપારો  
કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે જાનતા હૈ ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગ દેતા હૈ ।

જ્ઞપરિજ્ઞાપૂર્વક પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા જિસ પ્રકાર હોતી હૈ સો દિશ્વલતે હૈ-વાયુકાય કે  
આરંભ કો કર્મબંધ કા કારણ જાનકર હેયોપાદેય કા વિવેક રચને વાલા પુરુષ સ્વયં વાયુશસ્ત્ર  
કા આરંભ ન કરે, દૂસરોં સે વાયુશસ્ત્ર કા આરંભ ન કરાવે ઓર વાયુશસ્ત્ર કા આરંભ કરનેવાલોં  
કા અનુમોદન ન કરે ।

जिसने वायुकायसंबंधी इन आरंभों को अर्थात् सावध व्यापारों को ज्ञपरिज्ञा से

સમજતા નથી. અર્થાત્ તેમને એ જ્ઞાન થયું નથી કે-‘આ પાપકૃત્યોથી મને કર્મનો  
બંધ થશે.’ પરંતુ આ વાયુકાયના વિષયમાં શસ્ત્રોનો આરંભ નહિ કરવાવાળા સાવધ  
વ્યાપારોને જ્ઞપરિજ્ઞાથી જાણે છે, અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી ત્યજે છે. જ્ઞપરિજ્ઞાપૂર્વક  
પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા જે પ્રમાણે હોય છે. તે બતાવે છે-વાયુકાયના આરંભને કર્મબંધનું  
કારણ જાણીને હેય-ઉપાદેયનો વિવેક રાખવાવાળા પુરુષ પોતેજ વાયુશસ્ત્રનો આરંભ  
કરે નહિ. બીજા પાસે વાયુશસ્ત્રનો આરંભ કરાવે નહિ. અને વાયુશસ્ત્રનો આરંભ  
કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ.

જે વાયુકાયસંબંધી એ આરંભોને અર્થાત્ સાવધ વ્યાપારોને જ્ઞપરિજ્ઞાથી ‘કર્મ-

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય૦ ૧ ઉ. ૭ સુ. ૬ વાયુવિરાધનાપરિહારઃ ૭૦૩

સાવધવ્યાપારાઃ, પરિજ્ઞાતાઃ=જ્ઞ-પરિજ્ઞયા બન્ધકારણતયા વિદિતાઃ, પ્રત્યાખ્યાન-પરિજ્ઞયા ચ પરિવર્જિતા ભવન્તિ, સ એવ પરિજ્ઞાતકર્મા=ત્રિકરણત્રિયોગૈઃ પરિવર્જિત-સકલસાવધવ્યાપારાઃ, મુનિર્ભવતિ ।

નનુ ત્રિકરણત્રિયોગૈર્વાયુકાયવિરાધનાપરિહારેણ યસ્તુ પરિજ્ઞાતકર્મા સ એવ મુનિર્ભવતીત્યુક્તં તત્કથમુપપદ્યતે ? યતો હિ ગચ્છતા તિષ્ઠતા આસીનેન સ્વપતા શુઝાનેન ભાષમાણેન વાયુકાયવિરાધના દુષ્પરિહારા કથં તર્હિ મુનિશ્ચરેત્ તિષ્ઠેત્ આસીત શયીત શુઝીત ભાષેત ? ઇતિ । અત્રોચ્યતે-મુનિનાં સર્વં સ્વકર્તવ્યં યતનયૈવ સંપાદનીયમ્, અત એવોક્તં ભગવતા—

કર્મબંધ કા કારણ જાન લિયા ઓર પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞા સે ત્યાગ દિયા હૈ વહી ત્રીન કરણ ઓર ત્રીન યોગ સે ત્યાગ કરને વાલા મુનિ હોતા હૈ ।

શંકા—‘ત્રીન કરણ ઓર ત્રીન યોગ સે વાયુકાય કી વિરાધના કા ત્યાગ કરને વાલે હી મુનિ હોતે હૈ’ યહ કથન કિસ પ્રકાર સહી હો સકતા હૈ ? ચલને, ઠહરને, બૈઠને, સોને, આહાર કરને ઓર ભાષણ કરને મેં વાયુકાય કી વિરાધના સે બચ નહીં સકતે । એસી દશા મેં મુનિ કૈસે ચલે, કૈસે ઠહરે કૈસે બૈઠે, કૈસે સોણે, કૈસે ભોજન કરે ઓર કૈસે બોલે ?

સમાધાન—મુનિ કો અપની સર્વ ક્રિયાઈ યતનાપૂર્વક હી કરની યાહિઈ । ભગવાનને કહા હૈ:—

બન્ધનું કારણ છે’ એમ જાણી લીધું છે અને પ્રત્યાખ્યાનપરિજ્ઞાથી તેને ત્યજી દીધા છે, તે ત્રણ કરણ અને ત્રણયોગથી ત્યાગ કરવાવાળા મુનિ હોય છે.

શંકા—‘ત્રણ કરણ અને ત્રણયોગથી વાયુકાયની વિરાધનાનો ત્યાગ કરવાવાળા જ મુનિ હોય છે.’ આ વચન કેવી રીતે સાચું હોઈ શકે છે ? ચાલતાં, બેસતાં, શોકાતાં, સુતાં, ભોજન કરતાં અને ભાષણ કરતાં વાયુકાયની વિરાધનાથી બચી શકાતું નથી. એવી દશામાં મુનિ કેવી રીતે ચાલે, કેવી રીતે બેસે, કેવી રીતે શોકાય, કેવી રીતે સુવે, કેવી રીતે ભોજન કરે અને કેવી રીતે બોલે ?

સમાધાન—મુનિએ પોતાની સર્વ ક્રિયાઓ યતનાપૂર્વક કરવી જોઈએ, ભગવાને કહ્યું છે—



“ જયં ચરે જયં ચિદ્વે, જયમાસે જયં સપ્ ।

જયં ઝુંજંતો ભાસંતો, પાવકમ્મં ન બંધઈ ” ॥ ૧ ॥

નનુ ગમનાગમનાદૌ યતનાયાઃ સુસંપાદ્યત્વેઽપિ ભાષણયતના કથં વિધેયા ? કથમપિ ભાષણે હિ વાયુકાયવિરાધના પરિહર્તું ન શક્યતે, કથં મુનિર્યતનયા ભાષેત ? ભાષણે વાયુકાયવિરાધનયા સાર્દ્ધં સૂક્ષ્મવ્યાપિસંપાતિમજીવાનામપિ વિરાધના-ઽવશ્યમ્ભાવિની, તેષાં વાયુવેગસમાક્રુષ્ટાનામાહત્ય સંપત્તેન, વાયુસંસ્પર્શેન ચ સંઘાત પર્યાપ્ત્ય-પદ્રાવણાન્તં ભવતીત્યત્રૈવોદેશેઽભિહિતત્વાત ? इति चेदुच्यते—

मुखवस्त्रिकाबंधनं भाषणयतना भगवता प्रतिबोधिता, एष वायुकाय-

“યતનાપૂર્વક ચલે, યતનાપૂર્વક સ્થડા રહે, યતનાપૂર્વક બેઠે, યતનાપૂર્વક સોણે, યતનાપૂર્વક ભોજન કરે ઔર યતનાપૂર્વક બોલે તો (સાધુ) પાપકર્મ કા બંધ નહીં કરતા હૈ ” ॥૧॥

શંકા—જાને-આને મેં યતના સરલતા સે હો સકતી હૈ મગર બોલને કી યતના કિસ પ્રકાર કરની યાહિય ? બોલને મેં વાયુકાય કી વિરાધના કીસી મી પ્રકાર નહીં ટલ સકતી તો મુનિ કિસ પ્રકાર ભાષણ કરે ? ભાષણ કરને મેં વાયુકાય કી વિરાધના કે સાથે સર્વત્ર વ્યાપ્ત છોટે-છોટે સંપાતિમ જીવો કી વિરાધના મી અવશ્ય હોતી હૈ । ઇસી ઉદેશ મેં બતલાયા ગયા હૈ કિ-સંપાતિમ જીવ વાયુ કે વેગ સે યિચકર આ પડતે હૈ ઔર વાયુ કે સ્પર્શ સે સંઘાત કો પ્રાપ્ત હોતે હૈ, મૂર્છિત્ત હો જાતે હૈ ઔર મર મી જાતે હૈ ।

સમાધાન—મગવાન ને મુખવસ્ત્રિકા બાંધના ભાષણી કી યતના બતલાઈ હૈ ।

‘યતનાપૂર્વક ચાલે, યતનાપૂર્વક બેસે, યતનાપૂર્વક ચાલે; યતનાપૂર્વક સુવે, યતનાપૂર્વ ભોજન કરે, અને યતનાપૂર્વક બોલે તો (સાધુ) પાપ કર્મનો બંધ કરતા નથી. ॥૧॥

શંકા—જવા આવવામાં યતના સરલતાપૂર્વક થઈ શકે છે, પરંતુ બોલવાની યતના કેવી રીતે કરવી જોઈએ ? બોલવામાં વાયુકાયની વિરાધના કોઈ પણ પ્રકારથી ટળી શકતી નથી, તો મુનિ કેવી રીતે ભાષણ કરે ? ભાષણ કરવામાં વાયુકાયની વિરાધનાની સાથે સર્વત્ર વ્યાપ્ત નાના-નાના સંપાતિમ જીવોની વિરાધના પણ અવશ્ય થાય છે. આ ઉદ્દેશમાં બતાવવામાં આવ્યું છે કે-સંપાતિમ જીવ વાયુના વેગથી ખેંચાઈને આવી પડે છે; અને વાયુના સ્પર્શથી સંઘાત-(સમુદાય)ને પામે છે, મૂર્છિત થઈ જાય છે. અને મરણ પણ પામે છે.

સમાધાન—મગવાને મુખવસ્ત્રિકા બાંધવી તે ભાષણની યતના બતાવી છે. આ વાયુકાયનો

સમારંભઃ ગ્રન્થમોહમારનરકરૂપસ્તસ્માદહિતોઽયમિતિ મત્વા વાયુકાયવિરાધનયા શાન્તિમાર્ગાવલમ્બિનઃ સંયમિનઃ પ્રાણાન્ ધારયિતુમપિ નાવકાઙ્ક્ષન્તીત્યત્રૈવોદેશે સમુપદિશતા ભગવતા ભાષણયતનારૂપં મુખવસ્ત્રિકાબન્ધનમિતિ સૂચિતમ્ । ઉક્તશ્ચ સમુત્થાનસૂત્રે—

“.....તઓ પચ્છા ગોયમા ! સર્લિંગે મુહપત્તિ મુહેણ સર્લિં બંધે ॥ ૧ ॥

મુહપત્તીઃ ણં મંતે ! કિંપમાણા ? ગોયમા ! મુહપ્પમાણા મુહપત્તી । મુહપત્તી ણં મંતે ! કસ્સ વત્થસ્સ કહે ? ગોયમા ! એગસ્સવિ સેયવત્થસ્સ ણં અટ્ટપુડલાણ મુહપત્તિ કરેહ ॥ ૨ ॥

કસ્સટ્ટ મુહપત્તીણ ણં અટ્ટ પુડલાઈ ? ગોયમા ! અટ્ટકમ્મદહણટ્ટં ॥

મુહપત્તી ણં મંતે ?, કહં બંધે ?, ગોયમા ! એગકન્નેણ દુચ્ચકન્નપ્પમાણેણ દોરેણ સર્લિં મુહે બંધેહ । મુહપત્તીણં મંતે ! કે અટ્ટે ?, ગોયમા ? જણં મુહઅંતે સહ વટ્ટતિ સે તેણટ્ટેણ મુહપત્તી । કસ્સટ્ટમંતે ! મુહપત્તિ મુહેણસર્લિં બંધે ?, ગોયમા ! સર્લિંગવાઝ-જીવરક્ષણટ્ટં ॥ ૩ ॥

જહ ણં મંતે ! મુહપત્તી વાઝજીવરક્ષણટ્ટાણ તો કિં સુહમવાઝકાયજીવરક્ષણ-ટ્ટાણ વા વાયરવાઝકાયજીવરક્ષણટ્ટાણ વા ? ગોયમા ! ણોતિ સુહમવાઝકાયજીવ-રક્ષણટ્ટાણ વાયરવાઝકાયજીવરક્ષણટ્ટાણ । નો-તિ અવિસેસં, એવં તે સવ્વેવિ અરિહંતા પવુચ્ચંતિ ॥ ૪ ॥” ઇતિ ।

યહ વાયુકાય કા સમારંભ ગ્રન્થ હૈ, મોહ હૈ, માર હૈ, નરક હૈ ઓર હસ કારણ અહિતકારી હૈ, અત એવ શાન્તિ-મોક્ષમાર્ગ કા અવલમ્બન કરવાવાળા સંયમી વાયુકાય કી વિરાધના કરકે અપને પ્રાણો કી મી ઇચ્છા નહીં કરતે । હસી ઉદેશ મેં ભગવાન્ ને ઉપદેશ દેતે હુણ ભાષા યતનારૂપ મુખવસ્ત્રિકા કા બાંધના સૂચિત કિયા હૈ । સમુત્થાન સૂત્ર મેં કહા મી હૈ:-

સમારંભ ગ્રંથ છે, મોહ છે, માર છે, નરક છે, અને તે કારણે અહિતકારી છે. એટલા માટે શાન્તિ-મોક્ષ માર્ગનું અવલમ્બન કરવાવાળા સંયમી વાયુકાયની વિરાધના કરીને પોતાના પ્રાણની પણ ઇચ્છા કરતા નથી. આ ઉદ્દેશમાં ભગવાને ઉપદેશ આપતા થકા ભાષા યતનારૂપ મુખવસ્ત્રિકા બાંધવાની સૂચના કરી છે.

સમુત્થાનસૂત્રમાં કહ્યું પણ છે:-

છાયા—

“....તતઃ પશ્ચાત્ ગૌતમ ! સલિજ્ઞો મુખપત્રીં મુખેન સાર્દ્ધં વધ્નીયાત્ ।  
મુખપત્રીં ચલુ ભદન્ત ! કિંપ્રમાણા ? , ગૌતમ ! મુખપ્રમાણા મુખપત્રી । મુખપત્રી  
ચલુ ભદન્ત ! કેન વસ્ત્રેણ કૃતા ? , ગૌતમ ! એકસ્યાપિ શ્વેતવસ્ત્રસ્યાષ્ટપુટકાં મુખપત્રીં  
કુર્યાત્ ॥ ૨ ॥

કસ્મૈ અર્થાય ભદન્ત ! મુખપત્રી ચલુ અષ્ટપુટકા ? , ગૌતમ ! અષ્ટકર્મ-  
દહનાર્થમ્ । મુખપત્રીં ભદન્ત ! કથં વધ્નીયાત્ ? , ગૌતમ ? એકકર્મેન દ્વિતીયકર્મ-

“....ગૌતમ ! તત્પશ્ચાત્ સ્વલિંગી સાધુ મુખ કે સાથ મુખપત્તી બાંધે ॥૧॥

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી કા કયા પ્રમાણ હૈ ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! મુંહ કે બરાબર મુંહપત્તી હોતી હૈ ।

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી કિસ વસ્ત્ર કી હોતી હૈ ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક સફેદ વસ્ત્ર કી આઠ પુટકી મુંહપત્તી હોતી હૈ ॥૨॥

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી આઠ પુટકી ક્યો હોની चाहिए ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! આઠ કર્મોં કો ભસ્મ કરને કે લિષ ।

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી કિસ તરહ બાંધની चाहिये ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક કાન સે દૂસરે કાન તક લમ્બે ડોરે કે સાથ મુંહપત્તી મુખ  
પર બાંધની चाहिए ।

“....ગૌતમ ! તત્પશ્ચાત્ સ્વલિંગી સાધુ મુખ સાથે મુખપત્તિ બાંધે. (૧)

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તીનું શું પ્રમાણ છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! મુખની બરાબર મુંહપત્તી હોય છે.

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી કયા વસ્ત્રની બને છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક સફેદ વસ્ત્રની આઠ પડની મુંહપત્તી હોય છે. (૨)

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી આઠ પડની શા માટે હોવી જોઈએ ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! આઠ કર્મોને ભસ્મ કરવા માટે.

પ્રશ્ન—ભગવાન્ ! મુંહપત્તી કેવી રીતે બાંધવી જોઈએ ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! એક કાનથી બીજા કાન સુધી લાંબા દોરાની સાથે મુંહપત્તી  
મુખ પર બાંધવી જોઈએ.



प्रमाणदवरकेण सद्धं मुखे बध्नीयात् मुखपत्र्या भदन्त ! कोऽर्थः ?, गौतम ! यत्खलु  
मुखान्ते सदा वर्तते तेनार्थेन मुखपत्री । कस्मै अर्थाय भदन्त ! मुखपत्रीं मुखेन सार्द्धं  
बध्नीयात् ?, गौतम ! स्वलिङ्गवायुजीवरक्षणार्थम् ॥ ३ ॥

यदि खलु भदन्त ! मुखपत्री वायुजीवरक्षणार्थाय तत्किं सूक्ष्मवायुकायजीव-  
रक्षणार्थाय वा बादरवायुकायजीवरक्षणार्थाय ? गौतम ! नो इति सूक्ष्मवायुकाय-  
जीवरक्षणार्थाय, (किन्तु) बादरवायुकायजीवरक्षणार्थाय, नो इति अविशेषम्, एवं  
ते सर्वेऽपि अर्हन्तः ब्रुवन्ति ॥ ४ ॥ इति ।

संप्रति केचिन्मुनिम्मन्या मुखवस्त्रिकाबन्धनं प्रतिषेधयन्ति तेषामाचार्यास्तु

प्रश्न—भगवान् ! मुँहपत्ती का अर्थ क्या है ?

उत्तर—वह सदैव मुँह पर बंधी रहती है इस लिए वह मुँहपत्ती कहलाती है ।

प्रश्न—किस प्रयोजन से मुँहपत्ती मुख पर बाँधनी चाहिए ?

उत्तर—मुँहपत्ती बाँधना साधु का स्वर्णिग है इस लिए, तथा वायुकाय के जीवों की  
रक्षा के लिए मुँहपत्ती बाँधी जाती है ॥३॥

प्रश्न—भगवान् अगर वायुकाय की रक्षा के लिए मुँहपत्ती है तो सूक्ष्म वायुकाय की  
रक्षा के लिए है या बादर वायुकाय की रक्षा के लिए ?

उत्तर—सूक्ष्म वायुकाय की रक्षा के लिए नहीं किन्तु बादर वायुकाय के जीवों की  
रक्षा के लिए है । सभी अर्हन्त ऐसा ही कहते हैं ” ॥४॥

आजकल अपने को मुनि मानने वाले कोई-कोई मुखवस्त्रिका के बाँधने का

प्रश्न—भगवन् ! मुँहपत्तीનો अर्थ શું છે ?

ઉત્તર—ગૌતમ ! તે હમેશાં મુખપર બાંધી રહે છે. તેથી તે મુંહપત્તી કહેવાય છે.

પ્રશ્ન—શું પ્રયોજનથી મુંહપત્તી મુખપર બાંધવી જોઈએ ?

ઉત્તર—મુંહપત્તી બાંધવી તે સાધુનું સ્વર્ણિગ છે એ માટે, તથા વાયુકાયના  
જીવોની રક્ષા માટે મુંહપત્તી બાંધે. (૩)

પ્રશ્ન—ભગવન્ ! અગર વાયુકાયની રક્ષા માટે, મુંહપત્તી છે. તો શું સૂક્ષ્મ  
વાયુકાયની રક્ષા માટે છે. અથવા બાદર વાયુકાયની રક્ષા માટે છે ?

ઉત્તર—સૂક્ષ્મ વાયુકાયની રક્ષા માટે નહિ પરંતુ બાદર વાયુકાયના જીવોની  
રક્ષા માટે છે. સર્વ અર્હન્ત એ પ્રમાણેજ કહે છે. (૪)

આજ કાલ પોતાને મુનિ માનવાવાળા કોઈ-કોઈ મુખવસ્ત્રિકા બાંધવાનો નિષેધ

મુખવસ્ત્રિકાબંધનં સ્વીકુર્વન્ત્યેવ । ઉક્તઞ્ચ જિનપ્રતિશિષ્યપૂર્ણભદ્રગણિકૃતાતિમુક્તક-  
ચરિત્રે ( શ્લોકેષુ ૮૦-૮૧-૮૨ )—

“અથાનન્યમુખસ્તિષ્ઠન્, પુરતો નિશ્ચલાસનઃ ।

પ્રાઞ્જલિર્વદનદ્વારે, દધાનો મુખવસ્ત્રિકામ્ ॥ ૮૦ ॥

इत्यादि यावत्—

શ્રુત્વાસૌ શ્રુતસ્યાર્થ,—મતિમુક્તમુનિર્મુદા ” ॥ ૨ ॥ इति

વિક્રમસંવત્સરે દ્વચશીત્યધિકદ્વાદશશત (૧૨૮૨) પરિમિતે પૂર્ણભદ્રગણિના  
વિરચિતોડયમતિમુક્તકચરિત્રનાધેયો ગ્રન્થઃ, યસ્યાસ્મિન્ વિક્રમસંવત્સરે દ્વચધિકદ્વિ-  
સહસ્ર (૨૦૦૨) પરિમિતે વિંશત્યધિકસપ્તશત (૭૨૦) વર્ષાણિ વ્યતીતાનિ, ઇતશ્ચ  
સ્ફુટમેતદવગમ્યતે મુખવસ્ત્રિકાબંધનં—સાદર પરિગૃહીતં તેષામાચાર્યૈસ્તદનુયાયિભિશ્ચ ।

નિષેધ કરતે હૈં । પરન્તુ અનેકે આચાર્ય મુખવસ્ત્રિકા બાંધના સ્વીકાર કરતે હૈં । જિનપતિ કે  
શિષ્યપૂર્ણભદ્રગણિવિરચિત ‘અતિમુક્તકચરિત્ર’ ( શ્લોક ૮૦-૮૧-૮૨ ). મેં કહા હૈં—

“પર—પદાર્થો મેં સુખ ન માનને વાલા, નિશ્ચલ આસન સે સામને હાથ જોડકર મુખ  
પર મુંહપતી ધારણ કિયે હુઅ અતિમુક્તક મુનિને શ્રુતકા અર્થ સુના ॥૮૦-૮૨॥

વિક્રમ સંવત ૧૨૮૨ મેં પૂર્ણભદ્ર ગણિને યહ અતિમુક્તકચરિત્ર નામક ગ્રંથ  
લિખા હૈ । હસ સંવત્ ૨૦૦૨ તક હસે ૭૨૦ વર્ષ હો ચુકે હૈં । હસ સે સ્પષ્ટ જ્ઞાત હોતા  
હૈ કિ હનકે આચાર્યોને ઔર હનકે અનુયાયિયોને મુખવસ્ત્રિકા કા બાંધના આદરપૂર્વક  
અંગીકાર કિયા હૈ ।

કરે છે. પરન્તુ તેમના આચાર્ય મુખવસ્ત્રિકા બાંધવાનું સ્વીકાર કરે છે. જિનપતિના શિષ્ય  
પૂર્ણભદ્રગણિ-વિરચિત ‘અતિમુક્તકચરિત્ર’માં શ્લોક ૮૦-૮૧-૮૨માં કહ્યું છે:—

પર પદાર્થોમાં સુખ નહિ માનવાવાળા નિશ્ચલ આસનથી સામે હાથ બેડીને  
મુખપર મુંહપતી ધારણ કરેલા ‘અતિમુક્તક’ મુનિએ શ્રુતનો અર્થ સાંભળ્યો. ॥૮૦-૮૨॥

વિક્રમ સંવત ૧૨૮૨માં પૂર્ણભદ્ર ગણિએ આ અતિમુક્તકચરિત્ર નામનો ગ્રંથ  
લખ્યો છે. આ સંવત્ ૨૦૦૨ સુધીમાં તેને ૭૨૦ વર્ષ વ્યતીત થઈ ચૂક્યાં છે. એથી સ્પષ્ટ  
બાણમાં આવે છે કે—તેમના આચાર્યોએ અને તેમના અનુયાયિયોએ મુખવસ્ત્રિકા  
બાંધવાનું આદરપૂર્વક અંગીકાર કર્યું છે.

अपरञ्च जिनपतिशिष्य लव विरचिते सनत्कुमारचरित्रे सनत्कुमार-तृतीय-पूर्व-भवि-  
क—‘विक्रमयशो’-नृपवर्णनेऽभिहितम्—

“मुखेन्दुराजन्मुखवस्त्रिकश्च,  
कथामु लेभे विरजा द्विजौघैः ।

निषेवितः प्रान्तनिविष्टराज,—

हंसीव विभ्राजि सरः श्रियं यः ॥ १ ॥ ”

सनत्कुमारः, तृतीयपूर्वजन्मनि विक्रमयशो नाम नृपोऽभवद् । स च परिषदि  
धर्मकथाश्रवणार्थं यथोपविष्टस्तद्वर्णनं कुर्वन्नाह—

“मुखेन्दुराजन्मुखवस्त्रिकश्च ” इत्यादि । व्याख्या—इन्दुरिव मुखं मुखेन्दुः,  
मुखेन्दौ राजन्ती मुखवस्त्रिका यस्य स मुखेन्दुराजन्मुखवस्त्रिकः, मुखोपरिनिब-  
द्धातिशुक्लवस्त्रविनिर्मितदेदीप्यमानमुखवस्त्रिकः । विरजाः=निर्मलान्तः करणः,

इसके अतिरिक्त जिनपति के शिष्य लवद्वारा रचित सनत्कुमारचरित्र में सनत्कुमार के  
तीसरे पूर्वभववर्ती विक्रमयश नामक राजा का वर्णन करते हुए कहा है—

सनत्कुमार अपने तृतीय पूर्वभव में विक्रमयश नामक राजा था । वह परिषद् में  
धर्मकथा सुनने के लिए जिस प्रकार बैठा था उसका वर्णन करते हुए कहते हैं—‘मुखेन्दु.’  
इत्यादि । इसकी व्याख्या इस प्रकार हैः—

जिसके मुखचन्द्र पर मुखवस्त्रिका सुशोभित थी अर्थात् मुख के ऊपर बँधी  
हुई, सफेद वस्त्र की बनी हुई मुखवस्त्रिका से जिसका मुख शोभायमान हो रहा था,  
जिसका अन्तःकरण निर्मल था और जो द्विजों के समूह से सेवित था ऐसा विक्रमयश—

એ સિવાય જિનપતિનાશિષ્ય લવદ્વારા રચિત સનત્કુમારચરિત્રમાં સનત્કુમારના  
ત્રીજા પૂર્વભવવર્તી ‘વિક્રમયશ’ નામના રાજાનું વર્ણન કરતા થકા કહે છે કે—

સનત્કુમાર પોતાના ત્રીજા પૂર્વભવમાં ‘વિક્રમયશ’ નામના રાજા હતા, તે પરિષદમાં  
(સલામાં) ધર્મકથા સાંભળવા માટે જે પ્રમાણે બેઠા હતા તેનું વર્ણન કરતા થકા કહે  
છે કે—‘મુખેન્દુ.’ ઇત્યાદિ. એની વ્યાખ્યા આ પ્રમાણે છે—

જેના મુખચન્દ્ર પર મુખવસ્ત્રિકા સુશોભિત હતી, અર્થાત મુખ ઉપર બાંધેલી  
સફેદ વસ્ત્રની બનેલી મુખવસ્ત્રિકાથી જેનું મુખ શોભાયમાન થઈ રહ્યું હતું, જેનું અન્તઃકરણ  
નિર્મલ હતું, અને જે દ્વિજોના સમૂહથી સેવિત હતા, એવા વિક્રમયશ નામના રાજા



દ્વિજૈઘૈઃ=દ્વિજસમૂહૈર્નિષેવિતઃ, યઃ=વિક્રમયશો નૃપઃ કથાસુ=ધર્મકથાપરિષત્સુ શ્રિયં=શોભાં લેભે=પ્રાપ્તવાન્ । કિમિવ ? પ્રાન્તે નિવિષ્ટા રાજહંસી યસ્ય તત્ પ્રાન્ત-નિવિષ્ટરાજહંસિ, વિભ્રાજિ=દેદીપ્યમાનં સર ઇવ ।

યથા પ્રાન્તનિવિષ્ટયા રાજહંસ્યા વિભ્રાજમાનં સરઃ શ્રિયં લભતે તથા મુખો-પરિનિબદ્ધદેદીપ્યમાનમુખવલ્લિકયા વિક્રમયશો નૃપઃ સદસિ શ્રિયં લબ્ધવાનિત્યર્થઃ ।

કરેણ મુખવલ્લિકાધારણે તુ કરતલાવૃત્તમુખવલ્લિકાયા દીપ્તિઃ સમાચ્છાદિતા સ્યાત્, કથં તર્હિ '....રાજન્મુખવલ્લિકઃ'—ઇત્યત્ર 'રાજન્'—પદપ્રયોગસંસૂચિતમુખ-વલ્લિકાગતપ્રમાયાઃ પ્રકાશમાનતા તિરોહિતા ભવેત્, તર્હિ રાજહંસીપ્રમાયા 'વિભ્રાજી'—તિ સરોવિશેષણેન સામ્યમપિ ન સિદ્ધયેત્ ।

નામક રાજા ધર્મકથા કી પરિષદ્ મેં શોમા કો પ્રાપ્ત હુઆ । કૈસી શોમા કો પ્રાપ્ત હુઆ ? જૈસે જિસકે કિનારે રાજહંસી બૈઠી હો વહ તાલાવ સુશોભિત હોતા હૈ ।

જિસકે કિનારે રાજહંસી બૈઠી હો વહ તાલાવ જૈસે શોભિત હોતા હૈ ઉસી પ્રકાર મુખ પર બંધી હુઈં ઓર દેદીપ્યમાન મુખવલ્લિકા સે વિક્રમયશ રાજા વ્યાખ્યાનપરિષદ્ મેં શોભિત હુઆ ।

અગર હાથ સે મુખવલ્લિકા પકડી હોતી તો મુખવલ્લિકા કી દીપ્તિ હથેલી સે છિપ જાતી । એસી સ્થિતિ મેં '....રાજન્મુખવલ્લિકઃ' ઇસ પદ મેં 'રાજન્' શબ્દ કે પ્રયોગ સે મુખવલ્લિકા કી જો પ્રમા સૂચિત કી હૈ વહ પ્રકાશમાન કૈસી હોતી ? ફિર તો વહ છિપી હુઈં પ્રમા રહજાતી ! ઓર ફિર સરોવર કે કિનારે બૈઠી હુઈં રાજહંસિની કી ડામી માં ઠીક નહીં બેઠ સકતી ।

ધર્મકથાની સભામાં શોભાને પામ્યા છે. કેવી શોભાને પામ્યા છે ? જેમકે:—જેના કિનારે રાજહંસી બેઠાં હોય તે તળાવ સુશોભિત થાય છે.

જેના કિનારે રાજહંસી બેઠાં હોય તે તળાવ જેવી રીતે સુશોભિત હોય છે તે પ્રમાણે મુખ પર બાંધેલી અને અગમગાટ શોભાયમાન મુખવલ્લિકાથી વિક્રમયશ રાજા વ્યાખ્યાનપરિષદ્—(સભા)માં શોભતા હતા.

અથવા હાથથી મુખવલ્લિકા પકડી હોતે તો તે મુખવલ્લિકાની દીપ્તિ—પ્રકાશ હથેલીથી ઢંકાઈ જાત. એવી સ્થિતિમાં 'રાજન્મુખવલ્લિકઃ' આ પદમાં 'રાજન્' શબ્દના પ્રયોગથી મુખવલ્લિકાની જે પ્રભા—(પ્રકાશ) સૂચિત કરી છે, તે પ્રકાશમાન કેવી રીતે થાત ? પછી તો તે ઢંકાએલી જેવી પ્રભા રહી જાત અને પછી સરોવરના કિનારે બેઠેલાં રાજહંસીની ઉપમા અરાબર ઘટી શકત નહિ.

अपरश्च सरसि राजहंसी यथा सर्वथाऽनावृता सती सरःशोभां जनयति तथा मुखवस्त्रिका नृपस्य श्रियं करोतीति तात्पर्यं करतलेन मुखवस्त्रिकाधारणे कथमपि नोपपद्यते ।

तस्मादेतत्सन्तकुमारचरित्रपद्यं विक्रमयशानृपस्य सदोरकमुखवस्त्रिकाबन्धन-मासीदिति सुस्पष्टमावेदयति ।

अहो ! महीयान् मोहमहिमा यत्स्वकीयगुरुवराणां संग्रदायवाक्यमपिसमुल्लङ्घयन्तो नवीना न कथश्चित्पन्ते ।

विस्तरतस्तु जिज्ञासुभिर्दशवैकालिकसूत्रस्य मत्कृताचारमणिमञ्जूषाटीकायां प्रथमाध्ययने विलोकनीयम् ।

इसके अतिरिक्त—जैसे राजहंसिनी बिलकुल उछाड़ी होकर ही सरोवर की शोभा बढ़ाती है उसी प्रकार मुखवस्त्रिका राजा की शोभा बढ़ाती थी । यह तात्पर्य हाथ से मुख-वस्त्रिका धारण करने में किसी भी प्रकार नहीं घट सकता ।

अतः सन्तकुमारचरित्र का यह पद्य स्पष्टरूप से प्रकट करता है कि—विक्रम यश राजा के मुख पर डोरासहित मुखवस्त्रिका बंधी थी ।

अहो ! मोह की महिमा महान है, जिस के प्रभाव से आधुनिक लोग अपने गुरुओं के परम्परा वाक्य का उल्लंघन करते हुए भी लज्जित नहीं होते ।

विस्तार से समझने की इच्छा रखने वाले मेरी रची हुई दशवैकालिक सूत्र की 'आचारमणिमञ्जूषा'—टीका के अन्दर पहले अध्ययन में देख सकते हैं ।

એ સિવાય-જેવી રીતે રાજહંસિની એકદમ ઉઘાડી થઈનેજ સરોવરની શોભા વધારે છે, તેવીજ રીતે મુખવસ્ત્રિકા રાજાની શોભા વધારતી હતી. આ તાત્પર્ય હાથથી મુખવસ્ત્રિકા ધારણ કરે તો—અથવા કરવાથી કોઈ પણ પ્રકારે બની શકે નહિ.

એ કારણથી સનત્કુમારચરિત્રનું એ પદ સ્પષ્ટરૂપથી બતાવી આપે છે કે:- વિક્રમયશ રાજાના મુખપર ડોરાસહિત મુખવસ્ત્રિકા બાંધી હતી.

અહો ! મોહનો મહિમા મહાન છે, જેના પ્રભાવથી આધુનિક લોક પોતાના ગુરુઓના પરમ્પરા વાક્યનું ઉલ્લંઘન કરતા પણ શરમાતા નથી.

વિસ્તારથી સમજવાની ઇચ્છા રાખવાવાળા, મારી રચેલી દશવૈકાલિકસૂત્રની 'આચારમણિમંજૂષા'—ટીકાની અંદર પહેલા અધ્યયનમાં જોઈ શકે છે.

इति ब्रवीमि, इति=एतत्सर्वं ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथा श्रुतं तथा कथयामीत्यर्थः ॥ सू० ६ ॥

अथ षड्जीवनिकायारम्भकरणेन कर्मबन्धो भवतीत्याह—‘एत्थंपि. इत्यादि ।

मूलम्—

एत्थंपि जाण उवादीयमाणा, जे आयारे ण रमंति, आरंभमाणाविणयं वयंति, छन्दोवणीया अज्झोववण्ण आरंभसत्ता पकरंति संगं ॥ सू० ७ ॥

छाया—

अवापि जानीहि उपादीयमानाः, ये आचारो न रमन्ते, आत्ममाणा विनयं वदन्ति, छन्दोपनीता अध्युपपन्नाः, आरम्भसक्ताः प्रकुर्वन्ति सङ्गम् ॥ सू० ७ ॥

સુધર્મા સ્વામી કહેતે હૈં—યહ સબ ભગવાન્ કે સમીપ જૈસા સુના હૈ વૈસા કહતા હૈ ॥ સૂ० ૩ ॥

અવ યહ કહેતે હૈં કિ—ષડ્જીવનિકાય કા આરંભ કરને સે કર્મબંધ હોતા હૈ—‘एत्थंपि.’ इत्यादि ।

મૂલાર્થ—વાયુકાય કે વિષય મેં મી આરંભ કરને વાલે, કર્મો સે વદ્ધ હોતે હૈં, એસા સમજો । જો આચાર મેં રમણ નહીં કરતે આરંભ કરતે હુણ મી અપને કો વિનય (ચારિત્ર) વાલે માનતે હૈ, ઇચ્છાનુસાર ચલતે હૈ, ગૃહ્ધ હૈં ઓર આરંભ મેં આસક્ત હૈં વે કર્મો ઉપાર્જન કરતે હૈં ॥ સૂ० ૭ ॥

સુધર્મા સ્વામી કહે છે—આ સર્વ ભગવાનની સમીપમાં જેવું સાંભળ્યું છે તેવું કહું છું. ॥ ૬ ॥

હવે એ કહે છે કે—ષડ્જીવનિકાયનો આરંભ કરવાથી કર્મબંધ થાય છે—‘एत्थंपि.’ इत्यादि.

મૂલાર્થ—વાયુકાયના વિષયમાં પણ આરંભ કરવાવાળા, કર્મોથી બદ્ધ થાય છે એ પ્રમાણે સમજો. જે આચારમાં સ્મરણ કરતા નથી, આરંભ કરતા થકા પણ પોતાને વિનય (ચારિત્ર) વાળા માને છે, ઇચ્છાનુસાર ચાલે છે, ગૃહ્ધ છે, અને આરંભમાં આસક્ત છે, તે કર્મોનું ઉપાર્જન કરે છે. ॥ સૂ० ૭ ॥



ટીકા—

અત્રાપિ=અતરિમન્ વાયુકાયેઽપિ, અપિશબ્દાત્ અવશિષ્ટે પૃથિવ્યાદિચતુષ્કે સ્થાવરે ત્રસકાયે ચ યે ભોગલોલુપાઃ સ્વાર્થવશગાઃ આરમ્ભં કુર્વન્તિ, તે ઉપાદીયમાનાઃ =જ્ઞાનાવરણીયાદિકર્મભિર્બદ્ધમાના ભવન્તીત્યેવં જાનીહિ ।

અકજીવારમ્ભપ્રવૃત્તઃ શેષજીવનિકાચારમ્ભજનિતકર્મભિર્બદ્ધો ભવતીત્યેવં વિદ્ધી-ત્યર્થઃ । કે પુનઃ પૃથિવ્યાદ્યારમ્ભકરણેન શેષજીવારમ્ભજન્યકર્મભિરપિ બદ્ધમાના ભવન્તીતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—‘યે આચારે ન રમન્તે’ ઇતિ ।

યે આચારે=જ્ઞાનદર્શનાદિપઠ્ઠચવિધાચારે ન રમન્તે=ન ધૃતિં કુર્વન્તિ, તાન્ કર્મભિર્બદ્ધમાનાન્ જાનીહિ । કે પુનરાચારે ન રમન્તે ? દણ્ડિશાક્યાદયઃ ।

કથમેતદ્વિજ્ઞાયતે ? ઇતિ જિજ્ઞાસાયમાહ—‘આરમ્ભમાણા વિનયં વદન્તિ’

ટીકાર્થ—ઈસ વાયુકાય કે વિષય મેં મી—(અપિ) શબ્દ સે પૃથ્વી આદિ અન્ય સ્થાવરોં મેં તથા ત્રસકાય મેં જો ભોગોં કે લોલુપ ઔર સ્વાર્થપરાયણ હોકર આરમ્ભ કરતે હૈં, વે જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોં સે બદ્ધ હોતે હૈં, એસા સમજો ।

તાત્પર્ય યહ હૈ કિ—અક જીવ કે આરમ્ભ મેં પ્રવૃત્તિ કરને વાલા શેષ જીવનિકાયોં કે આરમ્ભ સે ઉત્પન્ન હોને વાલે કર્મોં સે મી બદ્ધ હોતા હૈ ।

એસે કૌન હૈં જો પૃથ્વી આદિ અક કાયકા આરમ્ભ કરકે શેષ જીવનિકાયોં કે આરમ્ભ સે હોને વાલે કર્મોંદ્વારા બદ્ધ હોતે હૈં ? ઇસ કા સમાધાન કરને કે લિખ્ કહતે હૈ—

જો જ્ઞાનાચાર દર્શનાચાર આદિ પાંચ આચારોં મેં સ્થિર નહીં હોતે ઉન્હેં કર્મબંધ હોતા હૈ, એસા જાનો । આચાર મેં કૌન સ્થિર નહીં હોતે ? દણ્ડી તથા શાક્ય આદિ ।

યહ કૈસે જ્ઞાત હુઆ ? ઇસકે ઉત્તર મેં કહતે હૈં—વે પૃથ્વીકાય આદિ કી વિરાધના

ટીકાર્થ—આ વાયુકાયના વિષયમાં પણ ‘અપિ’ શબ્દથી પૃથ્વી આદિ અન્ય સ્થાવરોમાં તથા ત્રસકાયમાં જે ભોગોના લાલચુ અને સ્વાર્થપરાયણ થઈને આરંભ કરે છે. તે જ્ઞાનાવરણ આદિ કર્મોથી બદ્ધ થાય છે. એ પ્રમાણે સમજો.

તાત્પર્ય એ છે કે—એક જીવના આરંભમાં પ્રવૃત્તિ કરવાવાળા બાકીના જીવ-નિકાયોના આરંભથી ઉત્પન્ન થવાવાળા કર્મોથી પણ બદ્ધ થાય છે.

એવા કેાણ છે કે જે પૃથ્વી આદિ એક કાયનો આરંભ કરીને બાકીના જીવ-નિકાયોના આરંભથી થનારા કર્મોદ્વારા થાય છે ? તેનું સમાધાન કરવા માટે કહે છે—

જે જ્ઞાનાચાર—દર્શનાચાર આદિ પાંચ આચારોમાં સ્થિર નથી થતા તેને કર્મ-બંધ થાય છે, એ પ્રમાણે જાણો.

આચારમાં કેાણ સ્થિર નથી રહેતા ? દંડી અને શાક્ય આદિ.

એ કેવી રીતે જાણ્યું ? તેના ઉત્તરમાં કહે છે—તે પૃથ્વીકાય આદિની વિરાધના

इति । आरम्भमाणाः, पृथिव्यादीन् पीडयन्तोऽपि विनयं=कर्मणां विनयाद् विनयः संयमस्तं, वदन्ति=‘वयमेव संयमिसेवनपराः’ इति निश्शङ्कं निगदन्तीत्यर्थः ।

ननु स्वात्मानं संयमिनं मन्यमानास्ते कस्मात्पृथिव्यादिजीवहिंसनपराः ? इति जिज्ञासायां हेतुगर्भविशेषणपदद्वयमाह—‘छन्दोपनीताः’ ‘अध्युपपन्नाः’ इति । ‘छन्दोपनीताः’=छन्दः=स्वाभिप्रायः, तेनोपनीताः स्वतन्त्राः शास्त्रविरुद्धविचारशीला इत्यर्थः ।

यद्वा छन्दः-अभिप्रायः=इच्छा, विषयाभिलाषस्तेनोपनीताः, तथा ‘अध्युपपन्नाः,’ अधि=अधिकम् अतिशयेन उपपन्नाः=तद्गतचित्ताः विषयसंनि-  
विष्टचित्ताः विषयभोगार्थमातुरा इत्यर्थः । यतश्छन्दोपनीता अध्युपपन्नाश्च तस्मात्ते पृथिव्यादीन् विहिंसन्तीति भावः । एवं पृथिव्यादिहिंसनेन पुनः कर्मबन्धं प्राप्नोतीत्याह—‘आरम्भसक्ताः’ । इत्यादि । आरम्भः=सावद्यव्यापारः,

करते हुए भी अपने आपको निश्शंक होकर संयमी कहते हैं । वे यह मानते हैं कि हम ही संयम का सेवन करने में तत्पर हैं ।

वे लोग अपने आपको संयमी मानते हुए भी पृथ्वीकाय आदि के जीवों की हिंसा में तत्पर क्यों होते हैं ? ऐसी जिज्ञासा होने पर दो विशेषण कहते हैं, जिन में हेतु छिपा है—‘छन्दोपनीत’ और ‘अध्युपपन्न’

छन्द का अर्थ है—अपना अभिप्राय, उससे स्वतंत्र अर्थात् शास्त्र से विरुद्ध विचार करने वाले । अथवा छन्द का अर्थ इच्छा है । कहाँ विषयभोगों की अभिलाषा को छन्द कहा है, उस में जो स्वतंत्र हो । तथा अध्युपपन्न अर्थात् विषयों में अत्यन्त आसक्त—विषयभोगों के लिए आतुर । तात्पर्य यह है कि—छन्दोपनीत और अध्युपपन्न होने के कारण वे पृथ्वी आदि की हिंसा करते हैं और कर्मों का बंध करते हैं । आरम्भ

કરવા છતાંય પણ પોતે-પોતાને નિઃશંક થઈને સંયમી કહે છે. તે એવું માને છે કે:-અમે પણ સંયમનું સેવન કરવામાં તત્પર છીએ.

તે હોક પોતે-પોતાને સંયમી માનતા થકા પણ પૃથ્વીકાય આદિના જીવોની હિંસામાં તત્પર શા માટે હોય છે ? એવી જિજ્ઞાસા થતાં બે વિશેષણ કહે છે જેમાં હેતુ છુપાએલો છે ‘છન્દોપનીત’ અને ‘અધ્યુપપન્ન’ ‘છન્દ’નો અર્થ છે પોતાનો અભિપ્રાય તેનાથી સ્વતંત્ર અર્થાત્ શાસ્ત્રથી વિરુદ્ધ વિચાર કરવાવાળા. અથવા છન્દનો અર્થ ઇચ્છા છે. અહિં વિષયભોગોની અભિલાષાને છન્દ કહેલ છે. તેમાં જે સ્વતંત્ર હોય. તથા અધ્યુપપન્ન અર્થાત્ વિષયોમાં અત્યન્ત આસક્ત-વિષયભોગો માટે આતુર. તાત્પર્ય એ છે કે છન્દોપનીત અને અધ્યુપપન્ન હોવાના કારણે તે પૃથ્વી આદિની હિંસા કરે છે અને કર્મોનો બંધ કરે છે. આરંભ અર્થાત્-સાવધ વ્યાપારમાં પ્રવૃત્ત પુરુષ જ્ઞાનાવરણીય

આચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧ ઉ. ૭ સૂ. ૭ ષડ્જીવનિકાયારમ્ભદોષઃ ૭૧૫

તત્ર સક્તાઃ=પ્રવૃત્તાઃ, સક્તઃ=સજ્યન્તે=શ્લિષ્યન્તે જીવા અનેતેતિ સક્તઃ=જ્ઞાનાવરણી-  
યાદિકં કર્મ, તં સક્તંપ્રકુર્વન્તિ=સમુત્પાદયન્તિ ।

એવં ષડ્જીવનિકાયારમ્ભકારિણઃ સ્વલુ કર્મબન્ધનપરાધીનતાં સમુપેત્ય જન્મ-  
જરામરણેષ્ટવિયોગાનિષ્ટસંયોગેષ્પિતાઽસિદ્ધિવિવિધવ્યાધિજનિતદુઃસ્વ સંકુલેઘોરતર-  
સંસારદાવાનલે પુનઃ પુનઃ સ્વાત્માનમિન્ધનીકુર્વન્તીતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૭ ॥

અથ યસ્તુ પૃથિવ્યાદિષડ્જીવનિકાયારમ્ભકરણાદિનિવૃત્તઃ સ એવ મુનિર્ભવતી-  
ત્યુદેશાર્થમુપસંહરન્નાહ—‘સે વસુમં.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

સે વસુમં સબ્ધસમણાગયપણાણેણં અપ્પાણેણં અકરણિજ્ઞં પાવં કમ્મં ણો  
અણેસિ ॥ સૂ. ૮ ॥

છાયા—

સ વસુમાન્ સર્વસમન્વાગતપ્રજ્ઞાનેન આત્મના અકરણીયં પાપં કર્મ નો અન્વેષયેત્  
॥ સૂ. ૮ ॥

અર્થાત્ સાવચ વ્યાપાર મેં પ્રવૃત્ત જ્ઞાનાવરણીય આદિ કર્મોં કો ઊપાર્જન કરતે હૈં ।

ઇસ પ્રકાર ષડ્જીવનિકાય કા આરમ્ભ કરને વાલે કર્મબન્ધન કે અધીન હોકર  
જન્મ મરણ, ઇષ્ટવિયોગ, અનિષ્ટસંયોગ, ઇષ્ટ કી અસિદ્ધિ તથા વિવિધ પ્રકાર કી વ્યાધિયોં સે  
ઉત્પન્ન હોને વાલે દુઃસ્વોં સે વ્યાપ્ત, ઘોરતરસંસારરૂપી દાવાનલ મેં અપને આત્મા કો ઈધન  
વનાતે હૈં ॥ સૂ. ૭ ॥

જો પૃથ્વી આદિ ષડ્જીવનિકાય કે આરમ્ભ સે નિવૃત્ત હૈ વહી મુનિ હોતા હૈ; ઇસ ઉદેશ  
કે અર્થ કા ઉપસંહાર કરતે હુણ શાસ્ત્રકાર કહતે હૈ:—‘સે વસુમં.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલાર્થ—વહી વસુમાન્ હૈ (સમ્યક્ત્વ-ચારિત્રવાન્-સમ્યગ્દષ્ટિ હૈ) જો યથાર્થ પદાર્થોં કો  
જાનનેવાલે જ્ઞાનાત્મા સે પાપ કો અકરણીય સમજકર નહીં કરતા હૈ ॥ સૂ. ૮ ॥

આદિ કમોંનું ઉપાર્જન કરે છે.

આ પ્રમાણે ષડ્જીવનિકાયનો આરંભ કરવાવાળા કર્મબન્ધને આધીન થઇને  
જન્મ, જરા, મરણ, ઇષ્ટવિયોગ, અનિષ્ટસંયોગ, ઇચ્છેલી વસ્તુની અપ્રાપ્તિ, તથા  
વિવિધ પ્રકારની વ્યાધિઓથી ઉત્પન્ન થનારાં દુઃખોથી વ્યાપ્ત, ઘોરતર સંસારરૂપી  
દાવાનલમાં પોતાના આત્માને ઇધન-(બળતણરૂપ) બનાવે છે. ॥ સૂ. ૭ ॥

જે પૃથ્વી આદિ ષડ્જીવનિકાયના આરંભથી નિવૃત્ત છે તેજ મુનિ હોય છે,  
આ ઉદ્દેશના અર્થનો ઉપસંહાર કરીને શાસ્ત્રકાર કહે છે:—‘સે વસુમં.’ ઇત્યાદિ.

મૂલાર્થ—તેજ વસુમાન્ છે (સમ્યક્ત્વ-ચારિત્રવાન્ સમ્યગ્દષ્ટિ છે) જે યથાર્થ  
પદાર્થોંને જાણવાવાળા જ્ઞાનાત્માથી પાપને અકરણીય (કરવા યોગ્ય નથી એવું)  
સમજીને કરતા નથી. ॥ સૂ. ૮ ॥



ટીકા—

યસ્તુ ષડ્જીવનિકાયારમ્ભનિવૃત્ત્યા સંયમપાલનપરાયણઃ, સ વસુમાન્, દ્વિવિધાનિ હિ વસુનિ સન્તિ દ્રવ્યભાવભેદાત્, તત્ર દ્રવ્યવસુનિ-સુવર્ણાદીનિ, ભાવવસુનિ-સમ્યક્ત્વાદીનિ, અત્ર ભાવવસુતાત્પર્યકો વસુશબ્દઃ, તાનિ વસુનિ યસ્ય યસ્મિન્ વા સન્તિ સ વસુમાનિત્યર્થઃ, સર્વસમન્વાગતપ્રજ્ઞાનેન=સર્વાણિ સમન્વાગતાનિ પ્રજ્ઞાનાનિ યસ્યાત્મનઃ સ સર્વસમન્વાગતપ્રજ્ઞાનઃ=યથાવસ્થિતવિષય-ગ્રાહિસર્વવિષયકજ્ઞાનવાન્, તેન ।

યદ્વા-સર્વેષુ દ્રવ્યપર્યાયેષુ સમન્વાગતં=સમ્યક્પ્રાપ્તં તત્તદ્વિષયમાકલમ્ય સર્વ-દ્રવ્યપર્યાયગતં પ્રજ્ઞાનં યસ્ય સ સર્વસમન્વાગતપ્રજ્ઞાનઃ, તેન, આત્મના, અકરણીયમ્=અકર્તવ્યમ્, ऐहिकपारलौकिकसुखविघातकत्वादनाचरणीयम्, इति मत्वा, पापं कर्म=प्राणातिपात-मृषावादा-दत्तादान-मैथुन-परिग्रह-क्रोध-मान-माया-लोभ-राग-द्वेष

ટીકાર્થ—જો પુરુષ ષડ્જીવનિકાયસંબંધી આરમ્ભ કા ત્યાગ કરકે સંયમ કે પાલન મેં તત્પર હોતા હૈ વહી વસુમાન્ હૈ । વસુ કે દો ભેદ હૈ—(૧) દ્રવ્યવસુ ઓર (૨) ભાવવસુ । સ્વર્ણ આદિ ધન દ્રવ્યવસુ કહલાતા હૈ, ઓર તપ સંયમાદિરૂપ ઋદ્ધિ કો ભાવવસુ કહતે હૈ । યહાં ‘વસુ’ શબ્દ સે ભાવવસુ હી સમજના ચાહિૅ । વસુ જિસે પ્રાપ્ત હો વહ વસુમાન્ હૈ, અર્થાત્ સમ્યક્ત્વ આદિ સે યુક્ત પુરુષ વસુમાન્ કહલાતા હૈ ।

જો વસ્તુ જૈસી હૈં ઉસે ઉસી રૂપ મેં જાનને વાલા સર્વગ્રાહી જ્ઞાન ‘સર્વસમન્વાગત પ્રજ્ઞાન’ કહલાતા હૈ । અથવા સમસ્ત દ્રવ્યો ઓર પર્યાયો કો યથાર્થરૂપ સે જાનને વાલા જ્ઞાન ‘સર્વસમન્વાગત પ્રજ્ઞાન’ કહલાતા હૈ । ઇસે જ્ઞાનરૂપ આત્મા સે પાપ કો ઇસ લોક તથા પરલોકસંબંધી સુખો કા ઘાતક હોને સે અકર્તવ્ય સમજકર (૧) પ્રાણાતિપાત (૨) મૃષાવાદ (૩) અદત્તાદાન (૪) મૈથુન । (૫) પરિગ્રહ (૬) ક્રોધ, (૭) માન (૮) માયા (૯) લોભ

ટીકાર્થ—જે પુરુષ ષડ્જીવનિકાયસંબંધી આરંભને ત્યાગ કરીને સંયમના પાલનમાં તત્પર થાય છે. તેજ વસુમાન્ (સમ્યગ્દષ્ટિ) છે. વસુના બે ભેદ છે. (૧) દ્રવ્ય-વસુ અને (૨) ભાવવસુ, સુવર્ણ આદિ ધન દ્રવ્યવસુ કહેવાય છે. અને સમ્યક્ત્વ આદિ રૂપ ઋદ્ધિને ભાવવસુ કહે છે. અહિં ‘વસુ’ શબ્દથી ભાવવસુ જ સમજવું જોઈએ. વસુ જેને પ્રાપ્ત હોય તે વસુમાન્ છે. અર્થાત્ સમ્યક્ત્વ આદિથી યુક્ત પુરુષ વસુમાન્ કહેવાય છે.

જે વસ્તુ જેવી છે તેને તેવા રૂપમાં જાણવાવાળા સર્વગ્રાહી જ્ઞાન ‘સર્વસમન્વાગત પ્રજ્ઞાન’, કહેવાય છે. અથવા સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને યથાર્થ રૂપથી જાણવા-વાળું જ્ઞાન ‘સર્વસમન્વાગત પ્રજ્ઞાન’ કહેવાય છે. એવા જ્ઞાનરૂપ આત્માથી પાપને આ લોક તથા પરલોક-સંબંધી સુખોનું ઘાતક હોવાથી અકર્તવ્ય સમજીને (૧) પ્રાણાતિપાત, (૨) મૃષાવાદ, (૩) અદત્તાદાન, (૪) મૈથુન, (૫) પરિગ્રહ, (૬) ક્રોધ, (૭) માન,

ઓંચારચિન્તામણિ-ટીકા અધ્ય. ૧ ઉ. ૭ સૂ. ૮ વાયુવિરાધનાપરિહાર: ૭૧૭

-કલહાઽધ્યાખ્યાન-પૈશુન્ય-પરપરિવાદ-રત્યરતિ-માયામૃષા-મિથ્યા-દર્શનશલ્યા-  
મિધાનમષ્ટાદશપ્રકારં નાન્વેષયેત્=ન સ્વયં કુર્યાત્, ન ચાન્યૈઃ કારયેત્, ન ચાન્યં  
કુર્વાણમનુમોદયેદિત્યર્થઃ ।

યોડ્યમાત્મા સ્વકીયપ્રજ્ઞાનેન સર્વદ્રવ્યપર્યાયસમાકલનયોગ્યતાં ધારયતિ, યેન  
ચ મોક્ષમાર્ગાવલમ્બનતઃ શિવપદમપિ શક્યતે ગન્તુમ્, તસ્યાત્મનઃ પુનરધઃપતન-  
કારિત્વાત્ પાપં કર્મ સર્વથા પરિત્યાજ્યમિતિ વિભાવ્ય ષડ્જીવનિકાયાસ્મકરણા-  
ત્સર્વથા વિનિવર્તિતવ્યમિતિ ભાવઃ ॥ સૂ. ૮ ॥

ષડ્જીવનિકાયાસ્મકસ્ય સર્વથા પરિહાર એવ મુનિત્વં પ્રાપયતીત્યાહ—‘તં  
પરિણાય.’ ઇત્યાદિ ।

મૂલમ્—

તં પરિણાય મેહાવી ણેવ સયં છજ્જીવનિકાયસત્થં સમારંભેજ્જા  
ણેવડ્ડણેહિં છજ્જીવનિકાયસત્થં સમારંભાવેજ્જા, ણેવડ્ડણે છજ્જીવનિકાયસત્થં  
(૧૦) રાગ (૧૧) દ્રેષ (૧૨) કલહ (૧૩) અધ્યાખ્યાન (૧૪) પૈશુન્ય (૧૫) પરપરિવાદ  
(૧૬) રતિ-અરતિ (૧૭) માયા-મૃષા ઓર (૧૮) મિથ્યાદર્શનરૂપ અઠારહ પ્રકાર કા પાપ  
જો સ્વયં નહીં કરતા હૈ, દૂસરોં સે નહીં કરાતા હૈ ઓર દૂસરે કરને વાલે કા અનુમોદન નહીં  
કરતા હૈ વહી પુરુષ વસુમાન્ હૈ ।

તાત્પર્યં યહ હૈ કિ-જો આત્મા અપને પ્રજ્ઞાન સે સમસ્ત દ્રવ્યોં ઓર પર્યાયોં કો  
મહી મૌતિ જાનને કી યોગ્યતા ધારણ કરતા હૈ ઓર જો મોક્ષ-માર્ગ કા આશ્રય લેકર  
મુક્તિપદ મી પ્રાપ્ત કર સકતા હૈ ડસકો ‘આત્મા કા અધઃપતન કરને વાલે પાપકૃત્ય સર્વથા  
ત્યાજ્ય હૈ’ એસા વિચાર કરકે ષડ્જીવનિકાય કે આરંભ સે વિરત હો જાના ચાહિણ ॥સૂ. ૮॥

ષટ્કાય કે આરંભ કા ત્યાગ હી સાધુતા પ્રાપ્ત કરાતા હૈ, યહ વાત આગે કહતે  
હૈ:—‘તં પરિણાય.’ ઇત્યાદિ ।

(૮) માયા, (૯) લોભ, (૧૦) રાગ, (૧૧) દ્રેષ, (૧૨) કલહ, (૧૩) અધ્યાખ્યાન,  
(૧૪) પૈશુન્ય, (૧૫) પરપરિવાદ, (૧૬) રતિ-અરતિ, (૧૭) માયા-મૃષા અને (૧૮)  
મિથ્યાદર્શનરૂપ અઠાર પ્રકારનાં જે પાપ તેને પોતે કરતા નથી, બીજા પાસે કરાવતા  
નથી, અને બીજા કરવાવાળાને અનુમોદન આપતા નથી. તેજ પુરુષ વસુમાન્ છે.

તાત્પર્યં એ છે કે:-જે આત્મા પોતાના પ્રજ્ઞાનથી સમસ્ત દ્રવ્યો અને પર્યાયોને  
રૂડી રીતે જાણવાની યોગ્યતા ધારણ કરે છે, અને જે મોક્ષમાર્ગનો આશ્રય લઈને મુક્તિપદ  
પણ પ્રાપ્ત કરી શકે છે, તેને, ‘આત્માનું અધઃપતન કરનારાં પાપકૃત્ય સર્વથા ત્યાજ્ય છે.’  
એવો વિચાર કરીને ષડ્જીવનિકાયના આરંભથી નિવૃત્ત થઈ જવું જોઈએ. ॥સૂ. ૮॥

ષટ્કાયના આરંભનો ત્યાગજ સાધુતા પ્રાપ્ત કરાવે છે. એ વાત આગળ કહે છે:-  
‘તં પરિણાય.’ ઇત્યાદિ.

સમારંભંતે સમણુજાણેજ્જા । જસ્સેતે છજ્જીવનિકાયસત્થસમારંભા પરિણાયા ભવંતિ,  
સે હુ મુણી પરિણાયકમ્મે-ત્તિ વેમિ ॥ સૂ. ૯ ॥

॥ સત્તમો ઉદ્દેસો સમત્તો ॥ ૧ । ૭ ॥

॥ આચારસૂત્રે પદમજ્જયણં સમત્તં ॥ ૧ ॥

છાયા—

તત્ પરિજ્ઞાય મેધાવી નૈવ સ્વયં ષડ્જીવનિકાયશસ્ત્રં સમારંભેત, નૈવાન્યૈઃ  
ષડ્જીવનિકાયશસ્ત્રં સમારંભયેત્, નૈવાન્યાન્ ષડ્જીવનિકાયશસ્ત્રં સમારંભમાણાન્  
સમણુજાનીયાત્ । યસ્યૈતે ષડ્જીવનિકાયશસ્ત્રસમારંભાઃ પરિજ્ઞાતા ભવન્તિ સ સ્વહ  
મુનિઃ પરિજ્ઞાતકર્મા, ઇતિ બ્રવીમિ ॥ સૂ. ૯ ॥

॥ સત્પમ ઉદ્દેશઃ સમાપ્તઃ ॥ ૧૭ ॥

॥ આચારસૂત્રે પ્રથમાધ્યયનં સમાપ્તમ્ ॥

ટીકા—

તત્=ષડ્જીવનિકાયારંભણં, પરિજ્ઞાય=જ્ઞપરિજ્ઞયા ‘કર્મબંધસ્ય  
કારણં ભવતી’તિ બુદ્ધ્વા મેધાવી=હેયોપાદેયવિવેકનિપુણઃ, નૈવ સ્વયં ષડ્જીવનિકાય-  
શસ્ત્રં સમારંભેત । અન્યૈર્નૈવ સમારંભયેત્=નૈવ પ્રયોજયેત્ । અન્યાન્ ષડ્જીવનિકાય-  
શસ્ત્રં સમારંભમાણાન્ નૈવ સમણુજાનીયાત્=નૈવાનુમોદયેત્ ।

યસ્યૈતે ષડ્જીવનિકાયશસ્ત્રસમારંભાઃ-ષડ્જીવનિકાયનાં શસ્ત્રૈઃ=

મૂલાર્થ—યહ વાત જાનકર બુદ્ધિમાન્ પુરુષ ષડ્જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્ર કા  
સમારંભ ન કરે, દૂસરો સે ષડ્જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્ર કા સમારંભ ન કરાવે, ઔર ષડ્-  
જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્ર કા સમારંભ કરને વાલો કા અનુમોદન ન કરે । ષડ્જીવનિકાય-  
સંબંધી આરંભ કો જો બંધ કા કારણ જાન લેતા હૈ, વહી મુનિ હૈ ઔર વહી પરિજ્ઞાતકર્મા હૈ ।  
એસા મૈ કહતા હૂં ॥સૂ. ૮॥

ટીકાર્થ—ષડ્જીવનિકાય કે આરંભ કો જ્ઞપરિજ્ઞા સે કર્મબંધ કા કારણ જાનકર  
હેય-ઉપાદેય કા વિવેક રાખને વાલા પુરુષ ષડ્જીવનિકાય કે શસ્ત્ર કા સ્વયં આરંભ ન કરે,  
દૂસરો સે ન કરાવે ઔર આરંભ કરને વાલો કો અનુમોદના ન કરે ।

ષડ્જીવનિકાયસંબંધી જો શસ્ત્ર પહેલે બતલાયે જા ચુકે હૈં અનેક દ્વારા ષડ્જીવનિકાય કો

મૂલાર્થ—એ વાત જાણીને બુદ્ધિમાન્ પુરુષ ષડ્જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્રનો  
સમારંભ કરે નહિ, બીજા પાસે ષડ્જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્રનો સમારંભ કરાવે નહિ, અને  
ષડ્જીવનિકાયસંબંધી શસ્ત્રનો સમારંભ કરવાવાળાને અનુમોદન આપે નહિ.  
ષડ્જીવનિકાયસંબંધી આરંભને જે બંધનું કારણ જાણી લે છે. તેજ મુનિ છે, અને  
તેજ પરિજ્ઞાતકર્મા છે. એવું હું કહું છું. ॥ સૂ. ૮ ॥

ટીકાર્થ—ષડ્જીવનિકાયના આરંભને જ્ઞપરિજ્ઞાથી કર્મબંધનું કારણ જાણીને હેય-  
ઉપાદેયનો વિવેક રાખવાવાળા પુરુષ ષડ્જીવનિકાયના શસ્ત્રનો પોતે આરંભ કરે નહિ,  
બીજા પાસે કરાવે નહિ, અને આરંભ કરનારને અનુમોદન આપે નહિ.

ષડ્જીવનિકાયસંબંધી જે શસ્ત્ર પ્રથમ બતાવી આપ્યાં છે. તેના દ્વારા ષડ્જીવનિકાયને



स्वस्वशस्त्रैः समारम्भाः=पीडाकरसावधव्यापाराः परिज्ञाताः=ज्ञपरिज्ञया बन्धकारण-  
त्वेन विदिताः, प्रत्याख्यानपरिज्ञया च परिहृता भवन्ति स एव परिज्ञातकर्मा=  
त्रिकरणत्रियोगैः परिवर्जितसकलसावधव्यापारः, मुनिर्भवति । इति=एतत् सर्वम्,  
ब्रवीमि=भगवतः समीपे यथा श्रुतं तथा कथयामि ॥ सू० ९ ॥

॥ इत्याचाराङ्गसूत्रे आचारचिन्तामणिटीकायां शास्त्रपरिज्ञाख्ये  
प्रथमाध्ययने सप्तमोद्देशः सम्पूर्णः ॥ १-७ ॥

पीडा पहुँचाने वाले सावध व्यापारों को ज्ञपरिज्ञा से कर्मबंध का कारण जानकर  
प्रत्याख्यानपरिज्ञा से त्याग देता है वही पुरुष तीन करण और तीन योग से सावध व्यापारों  
का त्यागी मुनि होता है । यह सब भगवान् के मुखारविन्द से जैसा मैंने साक्षात् सुना है  
वैसाही कहता हूँ ॥ सू० ९ ॥

॥ इति श्री आचाराङ्गसूत्रकी आचारचिन्तामणिटीका के हिन्दी-अनुवादमें  
प्रथम अध्ययनका सातवाँ उद्देश सम्पूर्ण ॥ १ ॥

पीडा पहुँचाववाला सावध व्यापारोने जे ज्ञपरिज्ञाथी कर्मबंधनुं कारण जानीने  
प्रत्याख्यान परिज्ञाथी त्यज दे छे, ते पुरुष त्रिषु करणु अने त्रिषु योगथी सावध  
व्यापारोने त्यागी मुनि होय छे. आ सर्वे भगवानना मुखारविंदथी जेवु मे साक्षात्  
सांबध्युं छे, तेवुं कहुं छुं. ॥ सू० ९ ॥

इति श्रीआचारंगसूत्रनी 'आचारचिन्तामणि' टीकाना गुजराती अनुवादभां  
प्रथम अध्ययननो सातमो उद्देश सम्पूर्ण. ॥ १-७ ॥

आद्ये चाध्ययने प्ररूपितमिदं संसारचक्रेऽनिशं,  
 भ्राम्यन् दिक्षु विदिक्षु गच्छति ततश्चात्मा समागच्छति ।  
 इत्येवं कथितं मही-जल-शिखि-प्राण-द्रुमाणां तथा,  
 जीवत्वं त्रस-कार्यिकस्य च तदारम्भे परिज्ञाऽपि च ॥ १ ॥

इति श्री-विश्वविख्यात-जगद्गुरु-प्रसिद्धवाचक-पञ्चदशभाषाकलित-  
 ललितकलापालापक-प्रविशुद्धगद्यपद्यनैकग्रन्थनिर्मायक-वादिमानमर्दक-  
 श्रीशाहूछत्रपति-कोल्हापुरराजप्रदत्त-‘जैनशास्त्राचार्य’ पदभूषित-  
 कोल्हापुरराजगुरु-बालब्रह्मचारि-जैनाचार्य-जैनधर्मदिवाकर-पूज्यश्री-  
 घासीलालव्रति विरचितायाम् आचाराङ्गसूत्रस्याऽऽचारचिन्ता  
 मणिटीकायां शस्त्रपरिज्ञाख्यं प्रथममध्ययनं संपूर्णम् ॥ १ ॥

प्रथम अध्ययन में यह निरूपण किया गया है कि-आत्मा संसार चक्र में पड़कर  
 नाना दिशाओं में और नाना विदिशाओं में निरन्तर भ्रमण करता रहता है । साथ ही पृथ्वी,  
 अप, तेज, वायु वनस्पति और, त्रस की सचित्तता भी सिद्ध की गई है, और उनका  
 आरम्भ करने में परिज्ञा भी प्रदर्शित की गई है ॥ १ ॥

॥ इति श्री-आचाराङ्गसूत्रकी ‘आचारचिन्तामणि’ टीका के  
 हिन्दी अनुवाद में ‘शस्त्रपरिज्ञा’ नामक प्रथम अध्ययन  
 सम्पूर्ण ॥ १ ॥

प्रथम अध्ययनમાં એ નિરૂપણ કરવામાં આવ્યું છે કે:-આત્મા સંસારચક્રમાં  
 પડીને અનેક દિશાઓમાં અને અનેક વિદિશાઓમાં નિરન્તર ભ્રમણ કરતો રહે છે.  
 સાથેજ પૃથ્વી, અપ, તેજ, વાયુ, વનસ્પતિ અને ત્રસની સચિત્તતા પણ સિદ્ધ કરી  
 છે. અને તેનો આરંભ કરવામાં પરિજ્ઞા-વિવેક પણ પ્રદર્શિત કરેલ છે. ॥ ૧ ॥

॥ ઇતિ શ્રી આચારાંગસૂત્રની ‘આચારચિન્તામણિ’ ટીકાના ગુજરાતી  
 અનુવાદમાં ‘શસ્ત્રપરિજ્ઞા’ નામનું પ્રથમ અધ્યયન સમ્પૂર્ણ. ॥ ૧ ॥

# દાતાઓની નામાવલી

આદ્ય મુરખીશ્રી, મુરખીશ્રી, સહાયક મેમ્બરો

તથા

મેમ્બરોની યાદી

ગામવાર કક્કાવારી લીધે

તા. ૧૮-૧૦-૪૪ થી તા. ૨૮-૨-૫૮ સુધીમાં  
દાખલ થયેલ મેમ્બરો.

(૨૫૦ થી ઓછી રકમો આ યાદીમાં સામેલ કરી નથી.)

શ્રી અખિલ ભારત શ્વે.સ્થા. જૈન શાસ્ત્રોદ્ધાર સમિતિ

ગરેડીઆ કુવા રોડ - ગ્રીન લોન્ગ પાસે

રાજકોટ.



## આદ્યમુરખીશ્રીઓ-૪

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

નંબર	નામ	ગામ	રૂપિયા
૧	શેઠ શાન્તીલાલ મંગળદાસભાઈ બાણીતા મીલમાલીક અમદાવાદ		૧૦૦૦૦
૨	શેઠ હરખચંદ કાલીદાસભાઈ વારીયા. હા. શેઠ લાલચંદભાઈ, જેયંદભાઈ નગીનભાઈ, વૃજલાલભાઈ, તથા વલ્લભદાસભાઈ ભાણુવડ		૬૦૦૦
૩	કોઠારી જેયંદભાઈ અજરામર હા. હરગોવીંદભાઈ જેયંદભાઈ	રાજકોટ	૫૨૫૧
૪	શેઠ ધારશીભાઈ જીવનભાઈ	સોલાપુર	૫૦૦૧

## મુરખીશ્રીઓ-૨૨

(ઓછામાં ઓછી રૂ. ૧૦૦૦ ની રકમ આપનાર)

૧	વકીલ જીવરાજભાઈ વર્ધમાન કોઠારી હા. કહાનદાસભાઈ તથા વેણીલાલભાઈ	જેતપુર	૩૬૦૫
૨	દોશી પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ	રાજકોટ	૩૬૦૪
૩	મહેતા ગુલાબચંદ પાનાચંદ	,,	૩૨૮૯૧૧-૧૧
૪	સ્વ. પિતાશ્રી છગનલાલ શામળદાસના સ્મરણાર્થે હા. ભાવસાર ભોગીલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૩૨૫૧
૫	મહેતા માણેકલાલ અમુલખરાય	ઘાટકોપર	૩૨૫૦
૬	સંઘવી પીતામ્બરદાસ ગુલાબચંદ	બામનગર	૩૧૦૧
૭	શેઠ શામજીભાઈ વેલજીભાઈ વીરાણી	રાજકોટ	૨૫૦૦
૮	નામદાર ઠાકોર સાહેબ લખધીરસિંહજી બહાદુર	મોરબી	૨૦૦૦
૯	શેઠ દહેરચંદ કુંવરજી હા. શેઠ ન્યાલચંદ દહેરચંદ	સિદ્ધપુર	૨૦૦૦
૧૦	શાહ છગનલાલ હેમચંદ વસા હા. મોહનલાલભાઈ તથા મોતીલાલભાઈ	મુંબઈ	૨૦૦૦
૧૧	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ	મોરબી	૧૯૬૩
૧૨	મહેતા સોમચંદ તુલસીદાસ તથા તેમનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. મણીગૌરી મગનલાલ	રતલામ	૧૫૦૦
૧૩	મહેતા પોપટલાલ માવજીભાઈ	બામજોધપુર	૧૩૦૧
૧૪	દોશી કપુરચંદ અમરશી હા. દલપતરામભાઈ	,,	૧૦૦૨
૧૫	બગડીઆ જગજીવનદાસ રતનશી	દામનગર	૧૦૦૨

૧૬	શેઠ આત્મારામ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૧૦૦૧
૧૭	શેઠ માણેકલાલ ભાણુજીભાઈ	પોરબંદર	૧૦૦૧
૧૮	શ્રીમાન ચંદ્રસિંહજી મહેતા ( રેલ્વે મેનેજર સાહેબ )	કલકત્તા	૧૦૦૧
૧૯	મહેતા સોમચંદ નેણુસીભાઈ ( કરાંચીવાલા )	મોરબી	૧૦૦૧
૨૦	શાહ હરીલાલ અનોપચંદભાઈ	ખંભાત	૧૦૦૧
૨૧	કોઠારી છબીલદાસ હરખચંદભાઈ	મુંબઈ	૧૦૦૦
૨૨	કોઠારી રંગીલદાસ હરખચંદભાઈ	સિહોર	૧૦૦૦

### સહાયક મેમ્બરો-૩૬

( ઓછામાં ઓછી રૂ. ૫૦૦ ની રકમ આપનાર )

૧	શાહ રંગજીભાઈ મોહનલાલ	અમદાવાદ	૭૫૧
૨	મોદી કેશવલાલ હરીચંદ્ર	સાબરમતી	૭૫૦
૩	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ		
	હા. શેઠ ઝુંઝાભાઈ વેલસીભાઈ	વઢવાણ શહેર	૭૫૦
૪	શેઠ નરોત્તમદાસ ઓઘડભાઈ	જોરાવરનગર	૭૦૦
૫	શેઠ રતનશી હીરજીભાઈ હા. ગોરધનદાસભાઈ	બ્રમજોધપુર	૫૫૫
૬	ભાટવીયા ગીરધર પ્રભાણંદ હા. અમીચંદભાઈ	ખાખીભાળીયા	૫૨૭
૭	મોરબીવાળા સંઘની દેવચંદ નેણુસીભાઈ તથા તેમના ધર્મપત્નિ અ. સૌ. મણીબાઈ તરફથી		
	હા. મુળચંદ દેવચંદ ( કરાંચીવાળા )	મલાડ	૫૧૧
૮	વોરા મણીલાલ પોપટલાલ	અમદાવાદ	૫૦૨
૯	ગોસળીયા હરીલાલ લાલચંદ તથા અ. સૌ. ચંપાબેન ગોસળીયા	અમદાવાદ	૫૦૨
૧૦	શેઠ પ્રેમચંદ માણેકચંદ તથા અ. સૌ. સમરતબેન		
	( રાજસીતાપુરવાળા )	અમદાવાદ	૫૦૨
૧૧	શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૨	શેઠ ચંદુલાલ છગનલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૩	શાહ શાન્તીલાલ માણેકલાલ	અમદાવાદ	૫૦૧
૧૪	શેઠ શીવલાલ ડમરભાઈ ( કરાંચીવાળા )	લીંબડી	૫૦૧
૧૫	કામદાર તારાચંદ પોપટલાલ ધોરાજીવાળા	રાજકોટ	૫૦૦
૧૬	મહેતા મોહનલાલ કપુરચંદ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૭	શેઠ ગોવીંદજી પોપટભાઈ	રાજકોટ	૫૦૦
૧૮	શેઠ રામજીભાઈ શામજી વીરાણી	રાજકોટ	૫૦૧

૧૯	સ્વ. પિતાશ્રી નંદાજીના સ્મરણાર્થે હા. વેણીચંદ શાન્તીલાલ ( જાણુઆવાળા )	મેઘનગર	૫૦૧
૨૦	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ ઠાકરશી કરસનજી થાનગઢ		૫૦૦
૨૧	શેઠ તારાચંદજી પુખરાજજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
૨૨	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ ૧૫૦ શેઠ શેષમજી જીવરાજજી ૧૨૫ „ અનરાજજી લાલચંદજી ૧૨૫ ધુકડચંદજી રૂપચંદજી ૧૦૦ દગડુમલજી ચાંદમલજી	ઔરંગાબાદ	૫૦૦
	૫૦૦		
૨૩	મહેતા મૂળચંદ રાઘવજી હા. મગનલાલભાઈ તથા દુર્લભજીભાઈ દ્રાક્ષા		૫૦૦
૨૪	શેઠ હરખચંદ પુરેષોત્તમ હા. ઇન્દુકુમારભાઈ	ચોરવાડ	૫૦૧
૨૫	શેઠ કેસરીમલજી વસતીમલજી ગુગલીયા	રાણાવાસ	૫૦૧
૨૬	સ્થા. જૈનસંઘ હા. બાટવીયા અમીચંદ ગીરધરભાઈ ખાખીજાળીયા		૫૦૧
૨૭	શેઠ ખીમજીભાઈ બાવાભાઈ હા. કુલચંદભાઈ, નાગરદાસભાઈ તથા જમનાદાસભાઈ મુંબઈ		૫૦૧
૨૮	શેઠ મણીલાલ મોહનલાલ ડગલી હા. મુળજીભાઈ મણીલાલ મુંબઈ		૫૦૧
૨૯	સ્વ. કાંતીલાલભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાલચંદ સાકરચંદ મુંબઈ		૫૦૧
૩૦	કામદાર રતીલાલ દુર્લભજી ( જેતપુરવાળા )	મુંબઈ	૫૦૧
૩૧	શાહ જયંતીલાલ અમૃતલાલ	શીવ	૫૦૧
૩૨	વોરા મણીલાલ લક્ષ્મીચંદ	શીવ	૫૦૧
૩૩	શેઠ ગુલાબચંદ જીવરભાઈ	ખારરોડ	૫૦૧
૩૪	મહાન ત્યાગી જેન ધીરજકુંવર ચુનીલાલ મહેતા	ભાણુવડ	૫૦૧
૩૫	શ્રી સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ	દ્રાક્ષા	૫૦૧
૩૬	શ્રી મગનલાલ છગનલાલ શેઠ	રાજકોટ	૫૦૧

\*

### ૩૧૬ મેમ્બરોનું ગામવાર લીસ્ટ

#### અમદાવાદ તથા પરાંઓ

૧	શેઠ ગીરધરલાલ કરમચંદ	૨૫૧
૨	શેઠ છોટાલાલ વખતચંદ હસ્તે ફકીરચંદભાઈ	૨૫૧
૩	શાહ કાન્તીલાલ ત્રિલોચનદાસ	૨૫૧
૪	શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૫	શાહ પોપટલાલ મોહનલાલ	૨૫૧



૬	શેઠ પ્રેમચંદ સાકરચંદ	૨૫૦
૭	શાહ રતીલાલ વાડીલાલ	૨૫૧
૮	શેઠ લાલભાઈ મંગળદાસ	૨૫૧
૯	સ્વ. અમૃતલાલ વર્ધમાનના સ્મરણાર્થે હસ્તે કાનજીભાઈ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૧૦	ભાવસાર ભોગીલાલ જમનાદાસ (પાટણવાળા)	૨૫૧
૧૧	શાહ નટવરલાલ ચંડુલાલ	૨૫૧
૧૨	શાહ નરસિંહદાસ ત્રીભોવનદાસ	૨૫૧
૧૩	શ્રી શાહપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. વહીવટકર્તા શેઠ ઈશ્વરલાલ પુરૂષોત્તમદાસ	૨૫૧
૧૪	શ્રી છીપાપોળ દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. ચંડુલાલ અમૃતલાલ	૨૫૧
૧૫	શાહ ચીનુભાઈ બાલાભાઈ C/o શાહ બાલાભાઈ મહાસુખરામ	૨૫૧
૧૬	શાહ ભાઈલાલ ઉજ્જમશી	૨૫૧
૧૭	શ્રી સુખલાલ ડી. શેઠ હા. ડૉ. કુ. સરસ્વતીબેન શેઠ	૨૫૧
૧૮	શ્રી સૌરાષ્ટ્ર સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ કાન્તીલાલ જીવણલાલ	૨૫૧
૧૯	મોદી નાથલાલ મહાદેવદાસ	૨૫૧
૨૦	શાહ મોહનલાલ ત્રીકમદાસ	૨૫૧
૨૧	શ્રી છકોટી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ પોચાલાલ પીતામ્બરદાસ	૨૫૧
૨૨	શેઠ પોપટલાલ હંસરાજના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ બાબુલાલ પોપટલાલ	૨૫૧
૨૩	દેશાઈ અમૃતલાલ વર્ધમાન આપોદરાવાળા હા. ભાઈલાલ અમૃતલાલ દેશાઈ	૨૫૧
૨૪	શાહ નવનીતલાલ અમુલખરાય	૨૫૧
૨૫	શાહ મણીલાલ આશારામ	૨૫૧
૨૬	શાહ ચીનુભાઈ સાકરચંદ	૨૫૧
૨૭	શાહ વરજીવનદાસ ઉમેદચંદ	૨૫૧
૨૮	શાહ રજનીકાન્ત કસ્તુરચંદ	૨૫૧
૨૯	સંઘવી જીવણલાલ જગનલાલ ( સ્થા. જૈન )	૨૫૧
૩૦	શાહ શાંતિલાલ મોહનલાલ ધાંગધ્રાવાળા	૨૫૧
૩૧	અ. સૌ. બેન રતનબાઈ નાદેચા હા. શાહ ધુલાજી ચંપાલાલજી	૨૫૧
૩૨	શાહ હરિલાલ જેઠાલાલ ભાડલાવાળા	૨૫૧
૩૩	શ્રી સરસપુર દરીયાપુરી આઠકોટી સ્થા. જૈન ઉપાશ્રય હા. ભાવસાર ભોગીલાલ જગનલાલ	૨૫૧
૩૪	શેઠ પુખરાજજી સમતીરામજી સાદડીવાળા	૨૫૧
૩૫	શેઠ લાલચંદ મીશ્રીલાલ	૨૫૧

- ૩૬ સ્વ. પિતાશ્રી જવાહીરલાલજી તથા પૂજ્ય આચાર્ય હંમરીમલજી  
બરડીયાના સ્મરણાર્થે હા. મૂળચંદ જવાહરલાલ ૨૫૧
- ૩૭ સ્વ. ભાવસાર બખાભાઈ (મંગળદાસ) પાનાચંદના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમના ધર્મપત્નિ પુરીબેન ૨૫૧
- ૩૮ સ્વ. પિતાશ્રી રવજીભાઈ તથા સ્વ. માતૃશ્રી મૂળીબાઈના  
સ્મરણાર્થે હા. કકલભાઈ કોઠારી ૩૦૧
- ૩૯ ભાવસાર કેશવલાલ મગનલાલ ૨૫૧
- ૪૦ શાહ કેશવલાલ નાનચંદ બખડાવાળા હા. પાર્વતીબેન ૨૫૧
- ૪૧ શાહ જીતેન્દ્રકુમાર વાડીલાલ માણેકચંદ રાજસીતાપુરવાળા  
( સાબરમતી ) ૨૫૧
- ૪૨ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ ( સાબરમતી ) ૨૫૦
- ૪૩ બીપીનચંદ્ર તથા ઉમાકાંત ચુનીલાલ ગોપાણી ( રાણપુરવાળા ) ૩૦૧

## અમલનેર

- ૧ શાહ નાગરદાસ વાઘજીભાઈ ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ ગાંડાલાલ ભીખાલાલ ૨૫૧

## આણંદ

- ૧ રમણીકલાલ એ. કપાસી હા. મનસુખલાલભાઈ ૨૫૧

## આસનસોલ

- ૧ બાવીસી મણીલાલ ચત્રભુજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ  
મણીબાઈ તરફથી હા. રસીકલાલ, અનીલકાંત, વિનોદરાય. ૨૫૧

## આટકોટ

- ૧ શાહ ચુનીલાલ નારણજી ૩૦૧

## ઉદેપુર

- ૧ શેઠ મોતીલાલજી રણજીતલાલજી હીંગડ ૨૫૧
- ૨ શેઠ મગનલાલજી બાગરેયા ૨૫૧
- ૩ અ. સો. જ્ઞેન ચંદ્રાવતી તે શ્રીમાન બહોતલાલજી નાહરનાં  
ધર્મપત્નિ હા. શેઠ રણજીતલાલજી હીંગડ ૨૫૧
- ૪ સ્વ. શેઠ કાળુલાલજી લોઠાના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ દોલતસિંહજી લોઠા ૨૫૧
- ૫ સ્વ. શેઠ પ્રતાપમલજી સાંખલાના સ્મરણાર્થે  
હા. પ્રાણુલાલ હીરાલાલ સાંખલા ૨૫૧

- ૬ પૂજ્ય પિતાશ્રી મોતીલાલજી મહેતાના સ્મરણાર્થે  
હ. રણજીતલાલજી મોતીલાલજી મહેતા ૨૫૧
- ૭ ઇગનલાલજી બાગરેયા ૨૫૧

### ઉમરગાવરોડ

- ૧ શાહ મોહનલાલ પોપટલાલ પાનેલીવાળા ૨૫૧

### ઉપલેટા

- ૧ શેઠ જેઠાલાલ ગોરધનદાસ ૨૫૧
- ૨ સ્વ. બેન સંતોકબેન કચરા હા. ઓતમચંદભાઈ, છોટાલાલભાઈ  
તથા અમૃતલાલભાઈ વાલજી (કલ્યાણવાળા) ૨૫૧
- ૩ શેઠ બુશાલચંદ કાનજીભાઈ હા. શેઠ પ્રતાપભાઈ ૨૫૧
- ૪ સંઘાણી મૂળશંકર હરજીવનભાઈના સ્મરણાર્થે  
હ. તેમના પુત્રો જયંતીલાલભાઈ તથા રમણીકલાલ ૨૫૧

### એડન કેમ્પ

- ૧ શાહ ગોકળદાસ શામજી ઉદાણી ૨૫૧

### કલોલ

- ૧ શેઠ મોહનલાલ જેઠાભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. શેઠ આત્મારામ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૨ ડો. મયાચંદ મગનલાલ શેઠ હા. ડો. રતનચંદ મયાચંદ ૨૫૧
- ૩ સ્વ. નાથાલાલ ઉમેદચંદના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રતીલાલ નાથાલાલ ૨૫૧
- ૪ શાહ મણીલાલ તલકચંદના સ્મરણાર્થે  
હા. મારફતીયા ચંદુલાલ મણીલાલ ૨૫૧

### કડી

- ૧ શ્રી સ્થા. દરીયાપુરી જૈનસંઘ હા. ભાવસાર દામોદરદાસ ઇશ્વરભાઈ ૨૫૧

### કોલકી

- ૧ પટેલ ગોવીંદલાલ ભગવાનજી ૨૫૧
- ૨ પટેલ ખીમજી જેઠાભાઈ વાઘાણી (તેમના સ્વ. સુપુત્ર  
રામજીભાઈના સ્મરણાર્થે) ૩૦૨

### ખીચન

- ૧ શેઠ કીશનલાલ પૃથ્વીરાજ ૨૫૧

### ખંભાત

- ૧ શેઠ માણેકલાલ ભગવાનદાસ ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હા. પટેલ કાન્તીલાલ અંબાલાલ ૨૫૧
- ૩ શાહ સાકરચંદ મોહનલાલ ૨૫૧
- ૪ શાહ ચંદુલાલ હરીલાલ ૨૫૧



## ગુંદા

- ૧ સ્વ. મહેતા પુનમચંદ બવાનભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપતિ દીવાળીએન લીલાધર ૨૫૧

## ગોંડલ

- ૧ સ્વ. બાબડ વચ્છરાજ તુલસીદાસનાં ધર્મપતિ કમળભાઈ તરફથી  
હા. માણેકચંદભાઈ તથા કપુરચંદભાઈ ૨૫૧
- ૨ પીપળીઆ લીલાધર દામોદર તરફથી તેમનાં ધર્મપતિ અ. સૌ.  
લીલાવતી સાકરચંદ કોઠારીના બીજ વરસીતપની ખુશાલીમાં ૩૦૧
- ૩ કામદાર બુઠાલાલ કેશવજીના સ્મરણાર્થે હા. હરીલાલ બુઠાભાઈ ૩૦૧

## ગોધરા

- ૧ શાહ ત્રીલોવનદાસ છગનલાલ ૩૦૧

## ઘટકણુ

- ૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧

## ઘોલવાડ (થાણા)

- ૧ મહેતા ગુલાબચંદ ગંભીરમલજી ૩૦૦

## ચુડા (ઝાલાવાડ)

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ હ. સ્તીલાલ ગાંધી પ્રમુખ ૨૫૧

## જલેસર (ખાલાસોર)

- ૧ સંઘવી નાનચંદ પોપટભાઈ ચાનગઢવાળા ૨૫૧

## જામજેઘપુર

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈનસંઘ ૩૮૭
- ૨ શાહ ત્રીલોવનદાસ ભગવાનજી પાનેલીવાળા ૨૫૧

## જામનગર

- ૧ શેઠ છોટાલાલ કેશવજી ૨૫૧
- ૨ શેઠ ચતુરદાસ ઠાકરશી ૨૫૧
- ૩ વોરા ચીમનલાલ દેવજીભાઈ ૨૫૧

## જામખંભાળીઆ

- ૧ શેઠ વસનજી નારજી ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થા. જૈન. સંઘ હા. મહેતા રણછોડદાસ પરમાણુદ ૨૫૧
- ૩ સંઘવી પ્રાણુલાલ લવજીભાઈ ૨૫૧

## જુનાગઢ

- ૧ શાહ મણીલાલ ત્રીકાભઈ હા. હરીલાલભાઈ (હાટીના માળીઆવાળા) ૨૫૧

## જુનારદેવ (મધ્યપ્રાંત)

- ૧ ઘેલાણી ત્રીકમજી લાઘાભાઈ ૨૫૧

## જેતપુર

- ૧ શેઠ અમૃતલાલ હીરજીભાઈ હા. નરભોરામભાઈ (જસાપુરવાળા) ૨૫૧  
 ૨ દોશી છોટાલાલ વનેચંદ ૨૫૧  
 ૩ કેઠારી ડોલરકુમાર વેણીલાલ ૨૫૧

## જેતલસર

- ૧ શાહ લક્ષ્મીચંદ કપુરચંદ ૨૫૧  
 ૨ કામદાર લીલાધર જીવરાજના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જબકબેન તરફથી હા. શાન્તીલાલભાઈ ગોંડલવાળા ૨૫૧

## ડભાસ

- ૧ સ્વ. તુરખીઆ લહેરચંદ માણેકચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ જીવતીબાઈ તરફથી હા. જયંતીભાઈ ૨૫૧

## ડોંડાઇચા

- ૧ શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ હા. શેઠ ચંપાલાલ મારવે ૨૫૦

## થાનગઢ

- ૧ શાહ ઠાકરશીભાઈ કરસનજી ૨૫૧  
 ૨ શેઠ જેઠાલાલ ત્રીભોવનદાસ ૨૫૧  
 ૩ શાહ ધારશી પાશવીર હા. સુખલાલભાઈ ૨૫૧

## દહાણુ રોડ (થાણા)

- ૧ શાહ હરજીવનદાસ ઓઘડ ખંધાર (કરાંચીવાળા) ૨૫૧

## દિલ્હી

- ૧ લાલા પૂર્ણચંદજી જૈન (સિન્દ્રલ બેંકવાળા) ૩૫૧

## ધાર (મધ્યપ્રાંત)

- ૧ શેઠ સાગરમલજી પનાલાલજી ૨૫૧

## ધાંગધા

- |   |   |     |
|---|---|-----|
| ૧ | શ્રી સ્થા. જૈન મોટા સંઘ હા. શેઠ માવજીભાઈ જીવરાજ | ૨૫૧ |
| ૨ | સંઘવી નારણદાસ વખતચંદ                            | ૩૦૧ |
| ૩ | ઠક્કર નારણદાસ હરગોવીંદદાસ                       | ૨૫૧ |

## ધોરાજી

- |   |   |     |
|---|---|-----|
| ૧ | મહેતા પ્રભુદાસ મૂળજીભાઈ   | ૩૫૧ |
| ૨ | સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી કચરાભાઈ સ્મરણાર્થે<br>હા. પટેલ દલીચંદ ભગવાનજી | ૨૫૧ |
| ૩ | અ. સૌ. ખચીબેન ખાખુભાઈ   | ૨૫૧ |
| ૪ | ધી નવ સૌરાષ્ટ્ર બોધલિ મીલ પ્રા. લીમીટેડ                             | ૨૫૧ |
| ૫ | સ્વ. રાયચંદ પાનાચંદ શાહના સ્મરણાર્થે હા. ચીમનલાલ રાયચંદ             | ૩૦૧ |
| ૬ | ગાંધી પોપટલાલ જેચંદ   | ૨૫૦ |

## ધંધુકા

- |   |   |     |
|---|---|-----|
| ૧ | ભાવસાર જોડીદાસ ગણેશભાઈ                                | ૨૫૧ |
| ૨ | શેઠ પોપટલાલ ધારશી                                     | ૨૫૧ |
| ૩ | સ્વ. ગુલાબચંદભાઈના સ્મરણાર્થે હા. વોરા પોપટલાલ નાનચંદ | ૨૫૧ |
| ૪ | વસાણી ચત્રભુજ વાઘજીભાઈ                                | ૨૫૧ |

## નંદુરબાર

- |   |  |     |
|---|--|-----|
| ૧ | શ્રી સ્થાનવાસી જૈન સંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ ભગવાનલાલ | ૨૫૦ |
|---|--|-----|

## પાણસણા

- |   |                         |     |
|---|-------------------------|-----|
| ૧ | શ્રી સ્થાનકવાસી જૈન સંઘ | ૨૫૧ |
|---|-------------------------|-----|

## પાલણપુર

- |   |   |     |
|---|---|-----|
| ૧ | લક્ષ્મીબેન હા. મહેતા હરીલાલ પીતામ્બરદાસ | ૨૫૧ |
| ૨ | શ્રી લોકાગચ્છ સ્થા. જૈન પુસ્તકાલય       | ૨૫૧ |

## પાલેજ

- |   |  |     |
|---|--|-----|
| ૧ | સ્વ. મનસુખલાલ મોહનલાલ સંઘવીના સ્મરણાર્થે<br>હા. ભાઈ ધીરજલાલ મનસુખલાલ | ૩૦૧ |
|---|--|-----|

## ખરવાળા (ઘેલાશા)

- |   |   |     |
|---|---|-----|
| ૧ | સ્વ. મોહનલાલ નરસીદાસના સ્મરણાર્થે<br>હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ સુરજબેન મોરારજી | ૨૫૧ |
|---|---|-----|



## બગસરા (ભાયાણી)

- ૧ સ્વ. પૂજ્ય માતુશ્રી જકલબાઈના સ્મરણાર્થે  
હ. દેશાઈ વ્રજલાલ કાળીદાસ ૨૫૧
- ૨ શેઠ પોપટલાલ રાઘવજી રાયડીવાળા હા. શેઠ માનસંગ પ્રેમચંદ ૨૫૧

## ઘેરાળા (કમ્બ)

- ૧ શેઠ ગાંગજી કેશવજી (જ્ઞાનભંડાર માટે) ૨૫૧

## ઘોટાદ

- ૧ સ્વ. વસાણી હરગોવીંદલાસ છગનલાલના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ છબલબેન ૨૫૧
- ૨ શ્રી સ્થાનવાસી જૈનસંઘ (૨૫૦ બાકી) ૨૫૧

## ઘોડેલી

- ૧ શાહ પ્રવીણચંદ્ર નરસિંહદાસ (સાણુંદવાળા) ૨૫૧
- ૨ શાહ ગીરધરલાલ સાકરચંદ ૨૫૧

## ભાણુવડ

- ૧ શેઠ જ્યેંદભાઈ માણેકચંદ ૩૦૧
- ૨ સંઘવી માણેકચંદ માધવજી ૨૫૧
- ૩ શેઠ લાલજીભાઈ માણેકચંદ (લાલપુરવાળા) ૨૫૧
- ૪ શેઠ રામજી જીણાભાઈ ૨૫૧
- ૫ શેઠ પદ્મશી લીમજી ફેફરીઆ ૨૫૧
- ૬ ફેફરીઆ ગાંડાલાલ કાનજીભાઈ હા. અ. સૌ. શાંતાબેન વસનજી ૨૫૧

## મદ્રાસ

- ૧ શેઠ મેઘરાજજી દેવીચંદજી ૨૫૧

## મનોર (થાણા)

- ૧ શાહ શેરમલજી દેવીચંદજી જસવંતગઢવાળા  
હ. પૂનમચંદજી શેરમલજી બોલ્યા ૨૫૧

## માનકુવા (કમ્બ)

- ૧ સ્વ. મહેતા કુંવરજી નાથાલાલના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ કુંવરબાઈ હરખચંદ ૨૫૧
- (માનકુવા સ્થાનકવાસી જૈનસંઘ માટે)

## મુંબઈ તથા પરાંઓ

૧	શેઠ છગનલાલ નાનજીભાઈ	૨૫૧
૨	શાહ હરજીવન કેશવજી	૨૫૧
૩	ઘેલાણી પ્રભુલાલ ત્રીકમજી (ભોરીવલી)	૨૫૨
૪	શેઠ છોટુભાઈ હરગોવિંદદાસ કટોરીવાલા	૨૫૧
૫	શ્રીવર્ધમાન સ્થા. જૈનસંઘ હા. કેસરીમલજી અનોપચંદજી ગુગળીયા (મલાડ)	૨૫૧
૬	શેઠ કુંગરશી હંસરાજ વીસરીયા	૨૫૧
૭	શાહ રમણીકલાલ કાળીદાસ તથા અ. સૌ. કાન્તાબેન રમણીકલાલ	૨૫૧
૮	શાહ હિંમતલાલ હરજીવનદાસ	૨૫૧
૯	શાહ રતનશી મોણુશીની કુંપની	૨૫૧
૧૦	શાહ શીવજી માણેક કચ્છ (બિરાબવાળા)	૨૫૧
૧૧	વોરા પાનાચંદ સંઘજીના સ્મરણાર્થે હા. ત્રંબકલાલ પાનાચંદ વોરા બ્રધર્સ	૨૫૧
૧૨	સ્વ. પૂ. પિતાશ્રી વીરચંદ જેસીંગભાઈ લખતરવાળાના સ્મરણાર્થે હા. કેશવલાલ વીરચંદ શેઠ	૨૫૧
૧૩	શાહ કુંવરજી હંસરાજ	૨૫૧
૧૪	સ્વ. માતુશ્રી માણેકબેનના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ વલ્લભદાસ નાનજી (યોરબંદરવાળા)	૩૦૧
૧૫	શેઠ દેવરાજજી જીતમલજી પૂનમીયા સાદડીવાળા	૨૫૧
૧૬	એક સફળસ્થ હા. શેઠ સુંદરલાલ માણેકચંદ	૨૫૧
૧૭	અ. સૌ. પાનખાઈ હા. શેઠ પદમશી નરસિંહભાઈ (મલાડ)	૨૫૧
૧૮	શ્રી અમૃતલાલ વર્ધમાન બાપોદરાવાળા હા. દલીચંદ અમૃતલાલ	૨૫૧
૧૯	સ્વ. શાહ નાગશી સેજપાળ ગુંદાળાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. રામજી નાગશી (મલાડ)	૩૦૧
૨૦	શાહ રામજી કરશનજી થાનગઢવાળા	૨૫૧
૨૧	શાહ નગીનદાસ કલ્યાણજી વેરાવળવાળા	૨૫૧
૨૨	શીવલાલ ગુલાબચંદ શેઠ મેવાવાળા	૨૫૧
૨૩	સ્વ. જટાશંકર દેવજી દોશીના સ્મરણાર્થે હા. રણજોડદાસ (બાબુલાલ) જટાશંકર દોશી	૩૦૧
૨૪	સ્વ. ગોડા વણારશી ત્રીલોવન સરસઈવાળાના સ્મરણાર્થે હા. જગજીવન વણારશી ગોડા (મલાડ)	૨૫૧
૨૫	સ્વ. ત્રીલોવનદાસ વ્રજપાળ વીંછીયાવાળાના સ્મરણાર્થે હા. હરગોવિંદદાસ ત્રીલોવનદાસ સજમેરા	૨૫૧

- ૨૬ સ્વ. કાનજી મૂળજીના સ્મરણાર્થે તથા માતૃશ્રી દિવાળીબાઈના ૧૬  
ઉપવાસના પારણા પ્રસંગે હા. જયંતીલાલ કાનજી કાળાવડવાળા (મલાડ) ૨૫૧
- ૨૭ શેઠ ખુશાલભાઈ ખેંગારભાઈ ૨૫૦
- ૨૮ શાહ પ્રેમજી માલશી ગંગર (મલાડ) ૨૫૧
- ૨૯ સ્વ. પિતાશ્રી પતુભાઈ મોનાભાઈના સ્મરણાર્થે હા. કાનજી પતુભાઈ ૨૫૧
- ૩૦ શાહ વેલજી જેશીંગભાઈ છાસરાવાળા તરફથી તેમનાં  
ધર્મપત્નિ અ. સૌ. સ્વ. નાનબાઈના સ્મરણાર્થે ૩૦૧
- ૩૧ સ્વ. પિતાશ્રી રામશી વેલજીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ દામજી રામશી (મલાડ) ૩૦૧
- ૩૨ શેઠ ત્રંબકલાલ કસ્તુરચંદ લીંબડીવાળા તરફથી  
શ્રી અજરામર શાસ્ત્ર ભંડાર લીંબડી માટે (માટુંગા) ૨૫૧
- ૩૩ સ્વ. પિતાશ્રી ભીમશી કોરશી તથા માતૃશ્રી પાલાબાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. શાહ ઉજમશીભાઈ ભીમશીભાઈ કચ્છપતરીવાળા (મલાડ) ૩૦૧
- ૩૪ શેઠ ચુનીલાલ નરભેરામ વેકરીવાળા ૨૫૧
- ૩૫ શાહ વૃન્નંગભાઈ શીવજી (મલાડ) ૨૫૧
- ૩૬ રતીલાલ ભાઈચંદ મહેતા ૨૫૧
- ૩૭ શાહ ખીમજી મૂળજી પૂંજ (મલાડ) ૨૫૧
- ૩૮ મેસર્સ સવાણી ટ્રાન્સપોર્ટ કંપની હા. શેઠ માણેકલાલ વાડીલાલ ૨૫૧
- ૩૯ વેલાણી વલ્લભજી નરભેરામ હા. નરશીભાઈ વલ્લભજી ૨૫૧
- ૪૦ અ. સૌ. સમતાબેન શાન્તીલાલ C/o શાન્તીલાલ ઉજમશી શાહ (મલાડ) ૨૫૧
- ૪૧ તેજાણી કુબેરદાસ પાનાચંદ ૨૫૧
- ૪૨ કપાસી મોહનલાલ શીવલાલ ૨૫૧
- ૪૩ સ્વ. પિતાશ્રી કેશવલાલ વછરાજ કોઠારીના સ્મરણાર્થે  
સુરજબેન તરફથી હા. તનસુખલાલભાઈ (મલાડ) ૨૫૧
- ૪૪ દડીયા અમૃતલાલ મોતીચંદ (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૪૫ શેઠ સરદારમલજી દેવીચંદજી કાવેડીયા (સાદડીવાળા) ૨૫૧
- ૪૬ દોશી ચત્રભુજ સુંદરજી (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૪૭ દોશી જીગલકીશોર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૪૮ દોશી પ્રવીણચંદ્ર ચત્રભુજ (ઘાટકોપર) ૨૫૧
- ૪૯ શાહ ત્રીલોવનદાસ માનસિંગ દોડીવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. શાહ હરખચંદ ત્રીલોવનદાસ ૨૫૧
- ૫૦ શાહ જેઠાલાલ ડામરશી પ્રાંગમ્નાવાળા હા. શાહ વાડીલાલ જેઠાલાલ ૨૫૦
- ૫૧ શાહ ચંદુલાલ કેશવલાલ ૨૫૧



૫૨ સ્વ. પિતાશ્રી શામળજી કલ્યાણજી ગોંડલવાળાના સ્મરણાર્થે	
તેમના પુત્રો તરફથી હા. વૃજલાલ શામળજી બાવીશી	૩૦૧
૫૩ શાહ પ્રેમજી હીરજી ગાલા	૨૫૧
૫૪ સ્વ. પિતાશ્રી ભગવાનજી હીરાચંદ જસાણીના સ્મરણાર્થે	
હા. લક્ષ્મીચંદ તથા કેશવલાલભાઈ	૩૦૧
૫૫ સ્વ. પિતાશ્રી હંસરાજ હીરાના સ્મરણાર્થે	
હા. દેવશી હંસરાજ કચ્છ બીડાલાવાળા (મલાડ)	૨૫૧
૫૬ સ્વ. માતૃશ્રી ગોમતીબાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ પોપટલાલ પાનાચંદ	૨૫૧
૫૭ શેઠ નેમચંદ સ્વરૂપચંદ ખંભાતવાળા હા. ભાઈ જેઠલાલ નેમચંદ	૨૫૧
૫૮ સ્વ. પિતાશ્રી શાહ અંબાલાલ પરસોતમ પાણુશણવાળાના	
સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી હા. આપાલાલભાઈ	૨૫૧
૫૯ બેન કેસરબાઈ ચંદુલાલ જેસીંગલાલ શાહ	૨૫૧
૬૦ દડીયા જેસીંગલાલ ત્રીકમજી	૨૫૧
૬૧ શાહ કાન્તીલાલ મગનલાલ (ઘાટકોપર)	૨૫૧
૬૨ કેઠારી સુખલાલજી પૂનમચંદજી (ખાર)	૨૫૧
૬૩ સ્વ. માતૃશ્રી કડવી બાઈના સ્મરણાર્થે હા. તેમના પૌત્ર	
હકમીચંદ તારાચંદ દોશી (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૬૪ શેઠ સારાભાઈ ચીમનલાલ	૨૫૧
૬૫ શાહ કોરશીભાઈ હીમજીભાઈ	૩૦૧
૬૬ પિતાશ્રી કુંદનમલજી મોતીલાલજીના સ્મરણાર્થે	
હા. મોતીલાલ બુખરમલ (અહમદનગરવાળા)	૨૫૧
૬૭ શ્રી વર્ધમાન શ્વેતામ્બર સ્થા. જૈનસંઘ	
હા. શેઠ રૂપચંદ શીવલાલ કામદાર (અંધેરી)	૨૫૧
૬૮ અ. સૌ. કમળાબેન કામદાર હા. રૂપચંદ શીવલાલ (અંધેરી)	૨૫૧
૬૯ ધી મરીના મોડર્ન હાઈસ્કૂલ ટ્રસ્ટ ફંડ હા. શાહ મણીલાલ ઠાકરસી	૨૫૧
૭૦ સ્વ. માતૃશ્રી જીવીબાઈના સ્મરણાર્થે	
હા. શામજી શીવજી કચ્છ ગુંદાળાવાળા (ગોરેગાંવ)	૨૫૧
૭૧ શાહ રવજીભાઈ તથા ભાઈલાલભાઈની કંપની (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૭૨ અ. સૌ. લાકુબેન હા. રવજી શામજી (કાંઠીવલી)	૨૫૧
૭૩ અ. સૌ. બેન કુંદનગૌરી મનહરલાલ સંઘવી (ખારરોડ)	૨૫૧
૭૪ શાહ કરશનભાઈ લઘુભાઈ (દાદર)	૩૦૧
૭૫ અ. સૌ. રંજનગૌરી ચંદુલાલ શાહ C/O ચંદુલાલ લક્ષ્મીચંદ (માટુંગા)	૨૫૧
૭૬ મહેતા મોટર સ્ટોર્સ હા. અનોપચંદ ડી. મહેતા (મુંબઈ)	૨૫૧

## માંડવી (કચ્છ)

- ૧ શ્રી. સ્થા. છ કેટી જૈન સંઘ હા. મહેતા ચુનીલાલ વેલણ ૨૭૭

## મેસાણા

- ૧ શાહ પદમશી સુરચંદના સ્મરણાર્થે હા. શીવલાલ પદમશી વીરમગામવાળા ૨૫૧

## મોમ્બાસા

- ૧ શાહ દેવરાજ પેથરાજ ૨૫૦  
૨ શ્રીચુત નાથાલાલ ડી. મહેતા ૨૫૧

## યાદગીરી

- ૧ શેઠ બાદમલજી સૂરજમલજી બેન્કર્સ ૨૫૦

## રાણપુર (ઝાલાવાડ)

- ૧ શ્રીમતી માતુશ્રી અમૃતબાઈના સ્મરણાર્થે હા. ડૉ. નરોત્તમદાસ ચુનીલાલ ૨૫૧

## રાણાવાસ (મારવાડ)

- ૧ શેઠ જવાનમલજી નેમીચંદજી હા. બાળુરીબખચંદજી ૩૦૧

## રાજકોટ

- ૧ ધી વાડીલાલ હાઈગિ એન્ડ પ્રિન્ટીંગ વર્ક્સ ૪૦૦  
૨ શેઠ રતીલાલ ન્યાલચંદ ૨૫૧  
૩ બાળુ પરશુરામ છગનલાલ શેઠ (ઉદ્દેપુરવાળા) ૨૫૦  
૪ શેઠ મનુભાઈ મુળચંદ (એન્જનીઅર સાહેબ) ૨૫૧  
૫ શેઠ શાન્તીલાલ પ્રેમચંદ તેમનાં ધર્મપત્નિના વરસીતપ પ્રસંગે ૨૫૧  
૬ ઉદ્દાણી ન્યાલચંદ હાકેમચંદ વકીલ ૨૫૧  
૭ શેઠ પ્રજારામ વીકુલજી ૨૫૧  
૮ શેઠ હકમીચંદ દીપચંદ (ગોંડલવાળા) સ્ટેશનમાસ્તર ૨૫૧  
૯ ખડેન સુર્યબાળા નૌતમલાલ જસાણી (વરસીતપની ખુસાલી) ૨૫૧  
૧૦ મોદી સૌભાગ્યચંદ મોતીચંદ ૨૫૧  
૧૧ બદાણી ભીમજી વેલજી તરફથી તેમનાં ધર્મપત્નિ  
અ. સૌ. સમરતબેનના વરસીતપની ખુસાલી ૨૫૧  
૧૨ દોશી મોતીચંદ ધારશીભાઈ (રીટાયર્ડ) ઇનજનીયર સાહેબ ૨૫૧  
૧૩ કામદાર ચંદુલાલ જીવરાજ ૨૫૦  
૧૪ હેમાણી ઘેલુભાઈ સવચંદ ૨૫૧

## રંગુન

- ૧ કામદાર ગોરધનદાસ મગનલાલનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. કમળાબેન ૨૫૧  
લાખતર

- ૧ શાહ રાયચંદ ઠાકરશીના સ્મરણાર્થે હા. શાહ. શાન્તિલાલ રાયચંદ ૨૫૧  
૨ ભાવસાર હરજીવનદાસ પ્રભુદાસના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ ત્રીલોવનદાસ હરજીવનદાસ ૨૫૧  
૩ શાહ તલકશી હીરાચંદના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ અમૃતલાલ તલકશી ૨૫૧  
૪ શાહ ચુનીલાલ માણેકચંદ ૨૫૧  
૫ શાહ બદવજી ઓઘડભાઈ સદાદવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈ શાન્તીલાલ બદવજી ૨૫૧  
૬ દોશી ઠાકરશી ગુલાબચંદના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ સમરતબેન  
મજલાલ તરફથી હા. જયંતીલાલ ઠાકરશી ૨૫૧

## લાલપુર

- ૧ શેઠ નેમચંદ સવજીભાઈ મોદી હા. મગનલાલભાઈ ૨૫૧  
૨ શેઠ મૂળચંદ પોપટલાલ હા. મણીલાલભાઈ તથા જેસીંગલાલભાઈ ૨૫૧

## લાખેરી (રાજસ્થાન)

- ૧ માસ્તર જેઠાલાલ મોનજીભાઈ હા. મહેતા અમૃતલાલ જેઠાલાલ  
(સીવીલ એન્જનીઅર સાહેબ) ૨૫૧

## લીમડી (પંચમહાલ)

- ૧ શાહ કુંવરજી ગુલાબચંદ ૨૫૧  
૨ છાજેડ ઘાસીરામ, ગુલાબચંદ ૨૫૧

## લોનાવલા

- ૧ શેઠ ઘનરાજજી મૂળચંદજી મૂથા ૨૫૧

## વઢવાણ શહેર

- ૧ શાહ દીલીપકુમાર સવાઈલાલ હા. સવાઈલાલ ત્રંબકલાલ શાહ ૨૫૧  
૨ શાહ મગનલાલ ગોકળદાસ હા. રતીલાલ મગનલાલ કામદાર ૨૫૧  
૩ સંઘવી મૂળચંદ બેચરભાઈ હા. જીવણલાલ ગફલદાસ ૨૫૧  
૪ શેઠ વૃજલાલ સુખલાલ ૨૫૧  
૫ શેઠ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૨૫૧



૬	વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	૨૫૧
૭	સંઘવી શીવલાલ હીમજીભાઈ	૨૫૧
૮	શાહ દેવશી દેવકરજી	૨૫૧
૯	વોરા ડોસાભાઈલાલચંદ સ્થા. જૈન સંઘ હા. વોરા નાનચંદ શીવલાલ	૨૫૧
૧૦	વોરા ધનજીભાઈ લાલચંદ સ્થા. જૈનસંઘ હા. વોરા પાનાચંદ ગોખરદાસ	૨૫૧
૧૧	દોશી વીરચંદ સુરચંદ હા. દોશી નાનચંદ ઉજમશી	૨૫૧
૧૨	સ્વ. વોરા મણીલાલ મગનલાલ હા. વોરા ચત્રભુજ મગનલાલ	૨૫૧

### વટામણુ

૧	શ્રી વટામણુ સ્થા. જૈનસંઘ હા. શ્રી ડાહ્યાભાઈ હલુભાઈ પટેલ	૨૫૧
---	---	-----

### વલસાડ

૧	શાહ ખીમચંદ મૂળજીભાઈ	૨૫૧
---	---------------------	-----

### વણી

૧	મહેતા નાનાલાલ છગનલાલનાં ધર્મપત્નિ સ્વ. ચંચળબેન તથા પુરીબેનના સ્મરણાર્થે હા. ભાઈ મનહરલાલ નાનાલાલ	૨૫૧
---	---	-----

### વડોદરા

૧	કામદાર કેશવલાલ હિંમતરામ પ્રેક્ષર સાહેબ (ગોંડલવાળા)	૨૫૧
૨	વકીલ મણીલાલ કેશવલાલ શાહ	૨૫૧
૩	સ્વ. પિતાશ્રી શાહ ફકીરચંદ પુબ્બભાઈના સ્મરણાર્થે હા. શાહ રમણલાલ ફકીરચંદ	૨૫૧

### વડીયા

૧	પંચમીયા ભવાનભાઈ કાળાભાઈ (જેતપુરવાળા)	૨૫૧
---	--------------------------------------	-----

### વાંકાનેર

૧	માસ્તર કાન્તીલાલ ત્રંબકલાલ ખંઢેરીયા	૨૫૧
૨	શ્રી સ્થા. જૈન સંઘ (રૂ. ૨૫૦ બાકી)	૨૫૧
૩	હફતરી ચુનીલાલ પોપટભાઈ મોરખીવાળા હા. પ્રાણુલાલ ચુનીલાલ	૨૫૧

### વીંછીયા

૧	શ્રી. સ્થા. જૈન સંઘ હા. અબ્બેસરા રામચંદ મજપાળા	૨૫૧
---	--	-----

## વીરમગામ

- ૧ શાહ વાડીલાલ નેમચંદ વડીલ ૨૫૦
- ૨ શાહ વિકૃલભાઈ મોદી માસ્તર ૨૫૧
- ૩ શાહ નાગરદાસ માણેકચંદ ૨૫૧
- ૪ શાહ મણીલાલ જીવણલાલ (શાહપુરવાળા) ૨૫૧
- ૫ શાહ અમુખલ (અચુભાઈ) નાગરદાસનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ. બેન લીલા-  
વતીના વરસીતપના પારણાની ખુશાલીમાં હા. ભાઈ કાન્તીલાલ નાગરદાસ ૩૦૦
- ૬ સ્વ. શેઠ ઉજમશી નાનચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી  
હા. શેઠ ચુનીલાલ નાનચંદ ૨૫૧
- ૭ સ્વ. મણીલાલ લક્ષ્મીચંદના સ્મરણાર્થે તેમના પુત્રો તરફથી  
હા. ખીમચંદભાઈ ( ખારાઘોડાવાળા ) ૨૫૧
- ૮ સ્વ. શેઠ હરીલાલ પ્રજુદાસના સ્મરણાર્થે હા. શેઠ અનુભાઈ હરીલાલ ૨૫૧
- ૯ સંઘવી જ્યેષ્ઠભાઈ નારણદાસ ૨૫૧
- ૧૦ સ્વ. શાહવેલશીભાઈ સાંકરચંદભાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. ચીમનલાલ વેલશી (કત્રાસવાળા) ૨૫૧
- ૧૧ પારેખ મણીલાલ ટેકરશી લાતીવાળા તરફથી (મોટીબેનના સ્મરણાર્થે) ૨૫૧
- ૧૨ શાહ નારણદાસ નાનજીભાઈના સુપુત્ર વાડીલાલભાઈનાં ધર્મપત્નિ અ. સૌ.  
નારંગીબેનના વરસીતપ નીમિત્તે હા. શાન્તીભાઈ ૨૫૧
- ૧૩ સ્વ. છબીલદાસ ગોકળદાસના સ્મરણાર્થે તેમનાં ધર્મપત્નિ  
કમળાબેન તરફથી હા. મંજુલાકુમારી ૨૫૧
- ૧૪ શ્રી સ્થા. જૈન શ્રાવિકાસંઘ હા. પ્રમુખ અ. સૌ. રંભાબેન વાડીલાલ ૨૫૧
- ૧૫ સ્વ. ત્રીલોખનદાસ દેવચંદ તથા સ્વ. અ. સૌ. ચંચળબેનના  
સ્મરણાર્થે હા. ડોકટર હિમતલાલ સુખલાલ ૨૫૧
- ૧૬ શાહ મૂળચંદ કાનજીભાઈ તરફથી હા. શાહ નાગરદાસ ઓઘડભાઈ ૨૫૧
- ૧૭ શેઠ મોહનલાલ પીતાંબરદાસ હા. ભાઈ કેશવલાલ તથા મનસુખલાલ ૨૫૧
- ૧૮ શ્રીમતી હીરાબેન નથુભાઈના વરસીતપ નીમિત્તે  
હા. નથુભાઈ નાનચંદ શાહ ૩૦૧
- ૧૯ સ્વ. મણીયાર પરસોત્તમ સુંદરજીના સ્મરણાર્થે  
હા. શેઠ સાકરચંદ પરસોત્તમદાસ ૨૫૧
- ૨૦ શેઠ મણીલાલ શીવલાલ ૨૫૧

## વેરાવળ

- ૧ શાહ કેશવલાલ જ્યેષ્ઠભાઈ ૨૫૧
- ૨ શાહ ખીમચંદ સૌભાગ્યચંદ વસનજી ૨૫૧

## સતારા

- ૧ સ્વ. મદનલાલજી કુંદનલાલજી કોઠારીના સ્મરણાર્થે  
હા. તેમનાં ધર્મપત્નિ રાજકુંવરબાઈ મદનલાલજી ૨૫૧

## સાલબની (બંગાળ)

- ૧ દોશી ચુનીલાલ કુલચંદ મોરબીવાળા ૨૫૦

## સાણુંદ

- ૧ શાહ હીરાચંદ છગનલાલ હા. શાહ ચીમનલાલ હીરાચંદ ૩૦૧  
૨ અ. સૌ. ચંપાબેન હા. દોશી જીવરાજ લાલચંદ ૨૫૧  
૩ પટેલ મહાસુખલાલ ડોસાભાઈ ૨૫૧  
૪ શાહ સાંકરચંદ કાનજીભાઈ ૨૫૧  
૫ પુરીબેન ચીમનલાલ કલ્યાણજી સંઘવી લીંબડીવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. વાડીલાલ મોહનલાલ કોઠારી ૨૫૧  
૬ પારેખ નેમચંદ મોતીચંદ મૂળીવાળાના સ્મરણાર્થે  
હા. પારેખ ભીખાલાલ નેમચંદ ૨૫૧  
૭ સંઘવી નારણદાસ ધરમશીના સ્મરણાર્થે હા. જયંતીલાલ નારણદાસ ૨૫૧

## સુરત

- ૧ શ્રી. સ્થા. જૈનસંઘ હા. શાહ છોટુભાઈ અભેચંદ ૨૫૧

## સુવધ (કચ્છ)

- ૧ સાવળા શામજી હીરજી તરફથી સદાનંદી જૈન મુનીશ્રી છોટાલાલજી  
મહારાજના ઉપદેશથી સુવધ સ્થા. જૈનસંઘ જ્ઞાનભંડારને ભેટ ૨૫૧

## સુરેન્દ્રનગર

- ૧ શેઠ ચાંપશીભાઈ સુખલાલ ૨૫૧  
૨ ભાવસાર ચુનીલાલ પ્રેમચંદ ૨૫૧  
૩ સ્વ. કેશવલાલ મૂળજીભાઈનાં ધર્મપત્નિ અમૃતબાઈના સ્મરણાર્થે  
હા. ભાઈલાલ કેશવલાલ (યાનગઢવાળા) ૨૫૧  
૪ શાહ ન્યાલચંદ હરખચંદ ૨૫૧



## સંજેલી (પંચમહાલ)

- ૧ શાહ હુણી ગુલાબચંદ ૨૫૧  
૨ શ્રી. સ્થા. જૈનસંઘ હા. શેઠ પ્રેમચંદ હલીચંદ ૨૫૧

## હાટીનામાળીયા

- ૧ શેઠ ગોપાલભાઈ મીઠાભાઈ ૨૫૦

## હારીજ

- ૧ શાહ અમુલખભાઈ મૂળભાઈ હા. પ્રકાશચંદ અમુલખ ૩૦૧  
૨ સ્વ. બેન ચંદ્રકાન્તાનાં સ્મરણાર્થે હા. અમુલખ મૂળભાઈ ૩૦૧

## હુબલી

- ૧ શેઠ હીરાચંદ વનેચંદભાઈ કટારીઆ ૨૫૧

## કુદલ મેમ્બરોની સંખ્યા તા. ૨૮-૨-૫૮ સુધી

૪ આદ્ય મુરખીશ્રીઓ	૩૧૬ પ્રથમ વર્ગના મેમ્બરો
૨૨ મુરખીશ્રીઓ	૮૩ બીજા વર્ગના મેમ્બરો
૩૬ સહાયક મેમ્બરો	૪૬૧ કુદલ મેમ્બરો

(બીજા વર્ગને સહંતર બંધ કરવામાં આવેલ છે.)

રાજકોટ, તા. ૧-૩-૫૮

સાંકરચંદ ભાઈચંદ શેઠ

મંત્રી,

શ્રી અ. ભા. ઝવે. સ્થા. જૈન શા. સ.

નોટ:-તા. ૨૩-૧૨-૫૭ ના દિને સુબંધ મુકામે ધી યુનિયન બેંક ઓફ ઇન્ડિયા લી. માં રૂા. ૨૫૧-૦-૦ એક સફળરૂપે ભરેલા છે. જેનું નામ તે ભરનાર ભાઈ તરફથી મળેલ નથી તેમજ બેંક તરફથી વધુ વિગત મળી નથી તેા તે રૂા. ૨૫૧ ડીપોઝીટ તરીકે હાલ જમા પડ્યા છે જેનું નામ અમોને મળતાં લીસ્ટમાં લેવામાં આવશે.

